October To December 2017
E-Journal, Volume IV, Issue XX
U.G.C. Journal no. 64728

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 4.710 (2016)

Naveen Shodh Sansar

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)
(U.G.C. Approved Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. “Shree Shyam Bhawan”, 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 02
02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 13/14
03. Referee Board 15
04. Disaster Management In India (Mamta Jaisiyan) 17
05. Sports Emotional Intelligence Profile of Female Hockey Players (Nikhil Dutta, Dr. B. John) 19
06. भारतीय मेला संस्कृति (डॉ. इस्माईल अली बेग) 21
07. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव एवं तनाव का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. महेश कुमार मुछाल, सतीश चन्द) 23
08. सिद्धार्थ गौतम के सिद्धान्त एवं उसकी प्रासंगिकता (डॉ. बुद्धरतन राजौरिया) 27
09. कुचबदिया समाज का बदलता स्वरूप : एक शैक्षिक एवं भौगोलिक अध्ययन(डॉ. हीरालाल चौधरी) 30
10. आंचलिक उपन्यासकार के रुप में फणीश्वर नाथ रेणु जी का योगदान (अजीत प्रसाद नोनियॉ, डॉ. श्रद्धा मेश्राम) 33
11. भारतीय इतिहास में धर्म की अवधारणा (डॉ. मनोरमा सिंह) 36
12. Dynamics Of Human Resource Management (With Special Reference To Small Scale Industries) (Dr. Minakshi Kar) 38
13. पहाड़ी चित्रकला में शारीरिक भाषा और उसके आकार-प्रकार की विविधता का प्रयोग (डॉ. सचिन सैनी) 41
14. भारत में महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका (मनोज जैन) 44
15. Historical account of Jabalpur's name (Dr. Nilesh Sharma) 46
16. पौराणिक साहित्य में पर्यावरण चेतना (ममता चौहान) 48
17. लोक संस्कृति एवं मृण्मूर्तिकला का ऐतिहासिक अध्ययन (ईश्वर लाल चौहान) 50
18. एसबीआई द्वारा अपने कर्मचरीयों के लिए चलाई जा रही योजनाओं का अध्ययन (कामरान अहमद खान) 52
19. बैंकिंग कारोबार, अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी में तालमेल, उसकी चुनौतियाँ और निहित जोखिम का अध्ययन (विशेष भारतीय स्टेट बैंक के संदर्भ में)(वरूणेन्द्र मिश्रा) 55
20. कुंभ महापर्व धार्मिक पर्यटन केन्द्र उज्जैन (रीता टेटवाल) 58
21. वर्तमान में योग की प्रासंगिकता (मंजू तिवारी) 60
22. 'रघुवंशम्'- महाकाव्य में निहित गायन के तत्व (डॉ. वेद प्रकाश मिश्र, टिकेश्वर प्रसाद जायसवाल) 63
23. Physical Variables of Obesity in student (Dr. Avinash Verma) 66
24. म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की पुर्नभुगतान प्रवृत्ति का अध्ययन (डॉ. चन्द्रप्रकाश पँवार) 68
25. To examine the existing structure of the financial system and its various components and to make suggestions in reference to India (Pooja Yadav) 72
26. The Views Of Vivekananda Related To Indian Education System (Dr. Yogesh Chandra Joshi) 75
27. The Goddess Of Faith : Mata Tripura Sundari (Dr. Yogesh Chandra Joshi) 77
28. A Comprative Study Of Physical Fitness Components Of High Altitude And Sea Level College Students (Dr Ramneek Jain) 80
29. आर्थिक सुधारों का आर्थिक सामाजिक प्रभाव (डॉ. पी.डी. ज्ञाननी) 83
30. बालमनोरमा एवं लक्ष्मी टीका के संज्ञा प्रकरण का अध्ययन (डॉ. वेद प्रकाश मिश्र, नित्यानंद दास अधिकारी) 85
31. भारतीय साहित्य में नायक-नायिका एवं प्रणय स्वरूप : मुग़ल चित्रकला के संदर्भ में (प्रो.डॉ.रश्मि जोशी, रिंकी साहू) 88
32. कृषि उपज मण्डी समिति में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के जनप्रतिनिधियों की भूमिका (बड़वानी जिले के विशेष सन्दर्भ में)(सुनीता बेले, डॉ. कान्ता अलावा) 90
33. लोक कला का व्यापक प्रचार प्रसार (प्रो.डॉ.रश्मि जोशी, ममता सिन्हा) 92
34. मुण्डा आदिवासियों का जीवन, काफी परिश्रमी (रामजय नाईक) 95

35. संत रविदास के मानवीय मूल्य का समाज पर प्रभाव (प्रदीप कुमार साकेत) 97
36. मध्यप्रदेश में राष्ट्रीय सम-विकास योजना द्वारा किये गये विकास कार्यो का संक्षिप्त अध्ययन (डॉ. अजय वाघे) 99
37. NAM And The Role Of India : An Analysis (Dr. Varsha Upadhyay) 101
38. जगनी लक्ष्य: विश्व अखण्डता (डॉ. मनीषा दुबे) 104
39. Internet Casinos Gambling : Working and Impacts (Dr. Neetu Agarwal, Dr. Sanjay Chaudhary) 108
40. A Comparative Study of the Adjustment Attitude Among Tribal And Non-Tribal Adolescents Students Of Udaipur Zone (Smt. Shweta Vaishnav, Dr. Premlata Gandhi) 111
41. Role Of Small Scale Industries In Entrepreneurship Development (With Special Reference To Indore) (Dr. Prashansa Malpani) 114
42. नृत्य और संगीत में रायगढ़ रियासत का योगदान (अमित कुमार, डॉ. रामरतन साहू) 117
43. कुँड़ुख भाषा और उनकी विशेषताएँ (आरती कुमारी) 119
44. छोटानागपुर के आदिवासी (इंदिरा कोनगाड़ी) 123
45. सारदा प्रसाद किस्कूवाक् आसोल जिनिस आर ओऩा रेयाक् पाछनाव (ज्योत्सना टुडू) 124
46. मंडला जिले में आदिवासियों की आर्थिक स्थिति पर योजनाओं का प्रभाव (डॉ. श्रीमति शुभांगी धगट, श्रीमति अनामिका तिवारी) 126
47. बस्तर : 'नक्सली हिंसा एवं प्रतिरोध की चेतना, पूर्वाग्रह एवं विश्लेषण' (डॉ. अंजू तिवारी, अमित कुमार, डॉ. रामरतन साहू) 129
48. Women's Representation in Indian Politics (Dr. Kaniya Meda) 131
49. नृत्य एवं योग का सहसम्बन्ध (डॉ. स्वाती तेलंग) 134
50. किशोरावस्था के विद्यार्थियों के मानसिक विकास में जीन पियाजे के संज्ञानात्मक विकास सिद्वान्त का योगदान (डॉ. वनिता त्रिवेदी) .. 135
51. उज्जैन जिले के आर्थिक विकास में बाधक तत्व (जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा संचालित स्वरोजगार योजनाओं के संदर्भ में) (डॉ. नीतिन बिल्लौरे) 137
52. उत्तराखंड के विशेष संदर्भ में प्राकृतिक रंग नील पत्रों (शाकिना) द्वारा भीमल धागों की रंगाई (गुँजा सोनी) 139
53. Night of the scorpion is the mirror of Ezekiel's Indian sensitivity (Dr. Ram Gopal Dangi) 141
54. Glimpses Of Indianness In Nissim Ezekiel Poems (Dr. Ram Gopal Dangi) 142
55. जनजातियों में सामाजिक गतिशीलता बिलासपुर संभाग के विशेष संदर्भ में : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. रीना तिवारी) 143
56. जल प्रबन्धन में जल संवर्धन कार्यक्रम का प्रभाव एवं विकास (समनापुर विकासखण्ड, डिण्डौरी जिले के सन्दर्भ में) (प्रसन्न वदन मरकाम, डॉ. भूवनेश्वर टेम्भरे) 146
57. मध्यप्रदेश में कृषि के घटते स्वरूप का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव एक चुनौती (सत्यनारायण मालवीय) 150
58. हो लोक परंपरा और लोक साहित्य (डॉ. इन्दिरा विरुवा) 152
59. A Study on the Youth Attitudes towards Green FMCG in Gwalior District (Usha Sharma, Dr. Deepak Singh) 154
60. कृषि के बढ़ते उत्पादन से कृषक जीवन पर प्रभाव (नरसिंहपुर जिला के सन्दर्भ में) (ब्रजेश कुमार डेहरिया, डॉ. भुनेश्वर टेम्भरे) 157
61. भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का योगदान (अजय प्रताप सिंह) 160
62. A Study on International Monetary Fund in Developing Countries (Dr. Suresh T. Silawat, Dr. Anoop Vyas, Chanda Parmar) 163
63. Impact Of Telecommunication Sector On Socio-Economic Development (Dr. Ganpat Joshi) 167
64. विश्व एवं भारत में सूचना के अधिकार का इतिहास : एक क्रान्तिकारी आन्दोलन (डॉ. ओम प्रकाश परमार) 170

65. छायावादी साहित्य में सौन्दर्यनुभूति (गायत्री मेहरा) 172
66. Customer Satisfaction In Online Banking Services - A Study Of Public Sector Banks In Udaipur 174
(Suman Gunjetia, Dr. Payal Sachdev)
67. Quality Concern in Special Education (Dr. Bhavna Singh) 178
68. Role Of Science And Information Communication Technology (ICT) For Educational 182
Development (Dr. Monisha Mishra, Mr. Yashwant Sharma)
69. मध्यप्रदेश में जनजातीयों की वन नीति का भौगोलिक अध्ययन (सन्दीप कुमार सिंह, डॉ. सुमन सिंह) 184
70. इस्लाम में मानवाधिकार तथा मुस्लिम महिलाएँ (डॉ. पूजा तिवारी) 186
71. Limnological Status And Aquatic Planktonic Biodiversity Of River Tapti At 188
District Burhanpur, Madhya Pradesh, India (Prof. Iftekhar A.Siddiqui, Dr. Suchi Modi)
72. डॉ. रघुवीरसिंह का मालवा के क्षैत्रीय इतिहास लेखन में योगदान (शांता मण्डलोई) 197
73. खरगोन जिले के आदिवासी-गैर आदिवासी किशोरों के पारिवारिक सम्बन्धों का तुलनात्मक अध्ययन 199
(डॉ. मंजु पाटनी, दीपिका सेठे)
74. आत्मछवि : अर्थ, प्रकार, कारक एवं उपाय (डॉ. उषा भटनागर, रश्मि सक्सेना) 202
75. Introduction to Brecht’s Verfremdungseffekt Devices (Dr. Uttam.B. Parekar) 204
76. प्राचीन साहित्य में उज्जयिनी (इंदिरा चौहान) 206
77. Architecture of Ruined Avantiswamin temple, Avantipura 209
(Sabeen Ahmad Sofi, Dr. Vasundhara Sharma)
78. Old Age Problems and Challenges (Nisar Ahmad Nengroo, Dr. Sulekha Mishra) 211
79. Perspectives of Elderly People in India (Aijaz Ahmad Khan, Dr. Sulekha Mishra) 213
80. India's Membership to the Nuclear Suppliers Group 216
(Dr. Pravesh Kumar Pandey, Mohd Ashraf)
81. Role of Bureaucracy in Development (Dr. Pravesh Kumar Pandey, Ajaz Ahmad Dar) 219
82. An Assessment of the Role of Information and Communication Technology 221
in Agriculture Development of Madhya Pradesh (Touseef Ahmad Dar, Ishfaq Ahmad Ganie)
83. An Analytical study of Non Performing assets in ICICI Bank Ltd. 224
(Amrita Soni, Dr. Ashish Pathak)
84. Productivity Based Performance Analysis of Pre and Post-Merger of SBI & Associate Bank 227
(with Special Reference to State Bank of Saurashtra to Merge with State Bank of India)
(Dr. Mahesh Gupta, Prof. JaikishanSahu)
85. शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता का अध्ययन (जीतेन्द्र बैरागी, डॉ. महेश कुमार तिवारी) 231
86. बारामासी फाग की विलुप्त परम्परा (धनीराम अहिरवार) 235
87. भारतीय ग्रामीण समाज पर विज्ञान एवं प्रौधोगिकी का प्रभाव (डबरा तहसील के विशेष संदर्भ में)(करन सिंह) ... 238
88. Financial Restructuring in Banks (Dr. Priyanka Srivastava) 240
89. ब्रह्मा सृष्टि की उत्पत्ति (ब्रह्मपुराण के अनुसार) (संध्या दावरे) 242
90. ‘नीला अम्बर काले बदल’ क्हानी संग्रैह् च चित्तरित समाजिक कदरां (शिव कुमार खजूरिया) 244
91. राजा मंडलीक दी वार च नारी जीवन दी अभिव्यक्ति (डॉ. प्रीति रचना) 245
92. माध्यमिक स्तर पर सी.बी.एस.ई. व आर.बी.एस.ई. विद्यालयों में मूल्यांकन की वस्तुस्थिति का अध्ययन 248
(डॉ. सुगन शर्मा, मोनिका भादविया)
93. ग्लोबल गॉव के देवता उपन्यास में आदिवासी विमर्श (अखिलेश कुमार) 250
94. माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की व्यावसायिक सन्तुष्टि का अध्ययन (लीला चतुर्वेदी, डॉ. पूजा गुप्ता, डॉ. एम.के. तिवारी)252
95. इस्लाम धर्म के उपासना के तरीके और उनका समाज में योगदान (बेनज़ीर पटेल) 256
96. व्यापार पर जीएसटी का प्रभाव (डॉ. राकेश कुमार) 258

97. Process And Importance Of E-Learning And E-Resources (Dr. Rakesh Kumar Sharma) 260
98. Study of Secondary School Teachers' Classroom Verbal Behaviour in Relation to Their Mental Health (Amit Kumar Tyagi, Sangita Sirohi) 264
99. नागपुरी साहित्य के संरक्षण - संवर्द्धन में मीडिया का योगदान (कोरनेलियुस मिंज) 266
100. मुण्डारी गद्य साहित्य का इतिहास (इंदिरा कोनगाड़ी) 268
101. खड़िया जनजीवन की पारम्परिक शासन-व्यवस्था (चन्द्र किशोर केरकेट्टा) 270
102. Problems of Population Education in India and their Remedies (Prof. Krishna Kant Sharma) 273
103. कृषि में उन्नत बीजों के उपयोग का एक अध्ययन (जबलपुर जिले के संदर्भ में) (डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा, सपना पाण्डे)276
104. नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक में वित्तीय परिचालन (गोपाल कुरील, डॉ. सुनील मोरे) 280
105. मानवाधिकार और भारतीय संविधान : एक विश्लेषण (डॉ. नीना प्यासी) 281
106. Cashless Transaction in Indian Scenario : A Critical Study (Dr. Manish Jain) 283
107. विद्यालयीन पर्यावरण एवं विद्यार्थियों की निष्पत्ति (किरण पवार, डॉ. साधना देवेश वर्मा) 286
108. अम्बेडकर की सामाजिक-न्याय की अवधारणा (महेश कुमार रचियता) 288
109. Tagore's Chokher Bali : Quest for Love and Completeness (Sunita Ahuja) 297
110. उत्तराखण्ड की थारू एवं बोक्सा जनजाति में परम्परागत चिकित्सा (तन्त्र-मन्त्र) व्यवस्था: एक अध्ययन (डॉ. नीलम सोनी) 301
111. Demonetization: Bane or Boon (Dr. P.K. Sirothia) 304
112. नव्य वेदान्त में मानवीय मूल्यों की अवधारणा (देवदास साकेत) 307
113. भारतीय अर्थव्यवस्था में स्वयं सहायता समूह का योगदान (डॉ. आर.एस. वाघेला, प्रो. हरीश दुबे) 310
114. Horticulture Sector of Jammu and Kashmir: A source of Foreign Exchange Earning (Rather Tajamul Islam) 312
115. Fish Diversity Of Narmada River At Hoshangabad, Madhya Pradesh (Sunil Kumar Kakodiya, Sudhir Mehra) 317
116. सोलंकी कालिन वास्तुकला जैन मंदिरों के विशेष संदर्भ में (डॉ. मनोज दाधीच, कल्पेश कुमार पी. चौधरी)...... 321
117. हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति : मध्यप्रदेश के उज्जैन जिले के विशेष सन्दर्भ में (शुभम ओझा, डॉ. बी. एल. जोशी) 324
118. झाबुआ राज्य के ठिकानेदारों द्वारा किए गए विकास कार्य का ऐतिहासिक विश्लेषण (निर्मला बिलवाल, डॉ. रविद्र सिंह) 327
119. जनजाति क्षेत्रों में गैर सरकारी संगठनों द्वारा क्रियान्वित मद्यपान निषेध कार्यक्रमों का अध्ययन (जिला अलिराजपुर के विशेष संदर्भ में) (लखनलाल गांगले) 329
120. एच.आई.वी. एड्स से ग्रसित व्यक्तियों की मनोसामाजिक स्थिति का अध्ययन (मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में) (मुकेश अजनार) .. 332
121. बालकों की शालापूर्व शिक्षा में आँगनवाड़ी केन्द्र एवं प्ले स्कूलों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. बी. के. गुप्ता) 334
122. Promotion of Culinary Tourism as a Destination Attraction in Nainital district - Uttrakhand region (Sundeep Singh Takuli, Dr. Yashwant Singh Rawal) 337
123. Drug Proving (Dr. Rajinder Girdhar, Dr. Parveen Kumar) 340
124. National Implementation of Human Rights (Dr. Gurpreet Singh, Dr. B. K. Yadav) 342
125. Currency alternatives to manage somewhat risk against foreign currency exchange (Manish Jain) 345
126. श्रवण हास के कारण बालिको की बुद्धि - लब्धि स्तर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (रीवा जिले के संदर्भ में) (जयलक्ष्मी मौंपाची, डॉ. आभा गोयल) 347

127. Detection of Residues of Pollutants in Vegetables grow near PandarolNalain Burhanpur City (M.P.) (Sheetal Patel) 350
128. आधुनिक भारत में सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में डॉ.केशवराव बलिराम हेडगेवार का योगदान (विजिया जायसवाल, डॉ. रविन्द्र सिंह) 352
129. Cryptography (Technology used for Secure Online Data Sharing) (Syed Asif Ali) 354
130. प्राणायाम योग के पथ की अमूल्य निधि (डॉ. दिनेश कुमार कौशल) 358
131. रामायण काल में परिणय संस्कार (डॉ पंकज कुमार सिंह) 360
132. Effects Of Brainstorming & Simulation Teaching Method On Academic Achievement In Schools (Lokesh Jain) 363
133. English For Specific Purposes : Overcoming Problems Faced By Engineering And Hotel Management Students In Teaching English In National Capital Region (Dr. Omprakash Upadhyay) 366
134. बैगा विशेष अधिकारों से पिछड़ी एवं बिछड़ी जनजाति अपने कानूनी अधिकरों से अज्ञान दास्ता (डॉ. एस.पी. पाण्डेय, बैजनाथ) 369
135. बिलासपुर संभाग में परिवहन तंत्र के विकास का विश्लेषण (डॉ. काजल मोइत्रा, सृष्टि शर्मा) 372
136. Environmental Policies in India: An assessment (Dr. Suman Lata Pandey) 374
137. Analysis of Estoppels under Indian Evidence act and its relevance in Present Scenario (Narender Kumar Dhaka) 377
138. Conceptual Analysis Of Public Intresrt Litigation Concerned With The Environmental Degradation And Role Of Judiciary (Dr. Suneeta Bhadoo) 380
139. Measuring Level Of Managerial Satisfaction With Inventory Management As Working Capital Components In Steel Companies Of India (Dr. Yadu Rao and Dr. Abha Jaroli) 383
140. उद्यमी महिलाओं की समस्याएं एवं सफल उद्यमी बनाने के मूल मंत्र (सतना जिले के विशेष संदर्भ में) (नन्दना शिल्पकार, डॉ. ए.के. पाण्डेय) 388
141. हिन्दी साहित्य में महात्मा गाँधी और महिलायें : योग और विचार-दर्शन के सन्दर्भ में (डॉ. अभयवीर) 391
142. Modernisation of the Princely State of Bikaner By Maharaja Ganga Singh (Girdhari Singh) 394
143. भारत में महिला उद्यमिता : उपलब्ध अनुकुलताएं एवं चुनौतियां (डॉ. सविता अग्रवाल, डॉ. वीनस शाह) 397
144. Inter Relationship between Women Empowerment & Economic Development in Rajasthan (Dr. Meenaskshi Panchal, Heena Shekhawat) 400
145. A Study on Quality of Work Life among Employees in their Sector (Dr. Rajendra Singh Waghela, Viranchi Vyas) 404
146. पीड़ा को आनंदित करते बच्चन के मधुकाव्य (डॉ. सत्येन्द्र कुमार मिश्रा) 406
147. भारत में प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण-एक रिपोर्ट (यतीन्द्र कुमार झा) 408
148. डॉ. अम्बेडकर की जल नीति तथा जल प्रदूषण समस्या और उसके निदान (ज्योति सौलंकी) 412
149. An Application of Fuzzy Mathematics in Fault Detection (Shilpi Singh) 415
150. अकबर युगीन धार्मिक समन्वय की पृष्ठभूमि : एक अध्ययन (प्रताप कुमार पाण्डेय, डॉ. रामरतन साहू) 418
151. गुलाबीपोश अपराध एवं व्यवहार विचलन के कारण(गुंजन पारिख) 422
152. Doctrines Of Gandhi : Acceptance And Peractices (Dr. Rahul V. Bavge) 425
153. Challenges and Strategies in Services Marketing in India (Dr. D.N. Khadse) 429
154. भारतीय दण्ड विधियों में महिलाओं के अधिकारों का समीक्षात्मक अध्ययन (डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल) 433
155. अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों में अंसगठित क्षेत्र के श्रमिकों के अधिकार - एक अध्ययन (रवि प्रकाश चौधरी) 436
156. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार का एक अध्ययन (शहद के विशेष संदर्भ में) (राकेश कुमार गुप्ता, डॉ. के.के.शर्मा) 438

157. हिन्दी भाषा के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सरोकार (प्रो. मुकेश भार्गव) 441
158. कन्नौज जनपद का इत्र उद्योग: स्वरूप, समस्या और समाधान (प्रो. डी. एस. नेगी, नागेन्द्र सिंह) 443
159. An Evaluation of Collection and Trade of MFP in Chhattisgarh State (Dr. Niket Shukla)............ 445
160. A comparative Study of Soft drink and Fruit juices (Dr. Suresh Shrawan Patil) 449
161. सरकारी निगमों में बजट एवं बजट नियंत्रण तंत्र की एक व्यवस्थित समीक्षा 453
(सुनील कुमार विश्वकर्मा, डॉ. विकास सराफ)
162. Print Media And The Challenges Of Social Media (Anil Malviya, Dr. Vijay Jain) 458
163. Astudy Of Problems And Expectations Of Teacher Tarining Programme (Dr. Dinesh Kumar)...... 462
164. An Study On Resistance To Change (Sangita Pankaj Hadge) 464
165. आर्थिक विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों का मूल्यांकन (माया पिण्डोलिया) 467
166. विमुद्रीकरण का भारत पर प्रभाव (डॉ. स्वाति शर्मा) 469
167. Share Buybacks: Benefit for Investors (Reliance Industries Ltd.) (Arpita Trivedi) 471
168. Comparative Analysis Of Indian Housing Finance Companies Based On Camel Approach 473
(Dr. Khushbu Jain)
169. Explosive Urbnisation: A by Product of Globalisation (Rachna Mathur) 479
170. A Descriptive Study of Various Financial Inclusion Schemes of Narmada Jhabua 482
Gramin Bank From Year 2014 To 2017 (Dr. Vijay Grewal, Prof. Deepali Gupta)
171. भारतीय कूटनीति का बदलता स्वरूप : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में (डॉ. रमा सिंह) 488
172. Migration and Urbanization in the City of Saharsa (Dr. Birendra Prasad Yadav)............ 490
173. पर्यावरण सुरक्षा : हमारा दायित्व(डॉ. सन्ध्या श्रीवास्तव)............ 494
174. ललित कलाओं द्वारा तनाव प्रबन्धन (डॉ. इभा सिरोठिया) 497
175. छन्द एवं ताल (डॉ. इला मालवीय)............ 499
176. वर्तमान उच्च शिक्षा स्तर में गुणात्मक सुधार की आवश्यकता (डॉ. मधुरिमा वर्मा) 501
177. Internet Usage in Rural Madhya Pradesh (Dr. Krishnakant Sharma) 504
178. Multimedia in Different Disciplines (Shweta Warring, Dr. Rakesh Katara) 510
179. छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन (राकेश कुमार गिरि)....... 512
180. पंचायती राज एवं 73 वां संविधान संशोधन (डॉ. तहसीलदार तमोली) 516
181. भारतीय लोकतन्त्र का वर्त्तमान परिदृश्य (डॉ. विनोद कुमार सिंह)............ 518
182. भारत में रोजगार सृजन के रूप में लघु उद्योगों की भूमिका (जुनेद नागौरी)............ 521
183. अनुसूचित जाति के चर्मकारो की स्थिति एवं परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तनशीलता की प्रवृत्ति का अध्ययन - .. 524
छत्तीसगढ़ विशेष संदर्भ में (डॉ. के. एल. टाण्डेकर, डॉ.आर.आर. कोचे)
184. The Effect of Education System on Spiritual Intelligence and Psychological Well-being of......... 527
music Students: A comparative study of Gurukul and Government School (Dr. Sunita Shrimali)
185. भारतेन्दु की भाष्य दृष्टि (संजीव मिश्र) 532
186. ग्रामीण विकास में 'नवा अंजोर' परियोजना - एक अध्ययन (छत्तीसगढ़ राज्य के विशेष संदर्भ में) 534
(डॉ.ई.व्ही.रेवती, डॉ.के.एल.टाण्डेकर)
187. मानवाधिकार की अवधारणा : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में (डॉ. हनुमान प्रसाद मीना) 536
188. चालुक्य वंश की उत्पत्ति एवं उनका मूल निवास स्थान (डॉ. सुनीता मीना) 540
189. ईश्वर का स्वरूप एक दार्शनिक चिन्तन (राकेश कवचे) 543
190. Integrated Impact of Land Use and Transport System on Environment of Indore Metropolis...... 545
(Hemant Mandloi)

191. गरीबी को बेचने वाले सौदागरों की कथा नरक मसीहा (संदीप कुमार यादव) 548
192. The Relevance of Human Rights in the Indian Constitution 550
(Mr. Bijay Kumar Yadav, Dr. Gurpreet Singh)
193. डिण्डौरी जिले में भौतिक पर्यावरण : एक भौगोलिक अध्ययन (किशोर कुमार श्याम) 552
194. साक्षरता का अभियान एवं उसका प्रबंधन (डॉ. मनोज कुमार मिश्रा) 554
195. ग्रामीण विकास आधुनिक सन्दर्भ में एक नीतिगत तत्व (डॉ. सुरेन्द्र कुमार, डॉ. अजय कुमार) 558
196. Human Resource Accounting Practices in Indian Industries (Dr. Sanjeev Kumar Bansal) 561
197. माध्यमिक स्तर पर (ALM) शिक्षण प्रविधि तथा परंपरागत शिक्षण द्वारा कक्षा के वातावरण, विद्यार्थियों की 566
सहभागिता तथा छात्रों की उपलब्धि पर पडने वाले प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन (श्रीमती धर्मिष्ठा शेरवाल)
198. आधुनिक कविता और धर्मवीर भारती का अंधायुग एक विवेचन (डॉ. सूर्यप्रकाश नापित)............................ 569
199. ''कवि की प्रेयसी'' उपन्यास का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण (डॉ. विनीता कौशिक).................................... 574
200. गैर सरकारी संगठन एवं मानव अधिकार (डॉ.सुनीता शर्मा) 576
201. Impact of Performance Appraisal System on Employees Competencies of an Organization 578
(Aditya Kothari, Dr. Pallavi Pattan)
202. अच्छी आदतों के निर्माण में शैक्षिक अभिप्रेरणा का महत्व (राजेश कुमार बंशीवाल, डॉ. मीनू अग्रवाल) 580
203. अहमदाबाद नगर में जनसंख्या वितरण एवं घनत्व का स्थानिक-सामयिक विश्लेषण (डॉ.पुष्पेंद्र कुमार कलाल) ...582
204. मानवाधिकार और वैश्वीकरण (श्रीमती पूनम दत्ता, डॉ. संजीव कुमार बंसल) 586
205. हिन्दी व्याकरण में निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण की उपादेयता....................................... 589
(राजेश कुमार फुलवारिया, डॉ. संध्या शर्मा)
206. नवम् राजस्थान विधानसभा में सामाजीकरण की प्रक्रिया का विश्लेषण (गोपाल सिंह) 592
207. Human Resource Management in Indian Defence Services (Saurabh Dubey) 596
208. Estimation of Breeding Value of the Sires in White Leghorn Strain 'B' Flock (Bhagat Singh) 598
209. **Analysis of the Third Question Paper of Education Subject of UGC-NET on the Basis of 600
Certain Selected Criteria (Sandesh Acharya)**
210. Comparison Between Two Methods (SI And BLUP) Of Sire Evaluation In 'B' Strain Of 604
White Leghron (Bhagat Singh)
211. साहित्य मीमांसा के तत्त्व (डॉ. रचना बिमल) 607
212. तबला वादन प्रस्तुतीकरण में प्रौद्योगिकी (उस्ताद ज़ाकिर हुसैन के संदर्भ में) (ज्योति)............................ 610
213. Goat Milk : Nutritional and Medicinal Value (Dr. Sumitra Meena) 612
214. Study Attenuation Coefficients of Leaves (Ficus religiosa) (M. D. Sharma) 614
215. छत्तीसगढ़ प्रदेश के राजनांदगांव जिले की ऐतिहासिक, पुरातात्विक संपदा (धरोहर) के संरक्षण संवर्धन 616
में जिला पुरातत्व संघ की भूमिका - एक अध्ययन (डॉ. के. एल. टाण्डेकर, डॉ. श्रीमती आशा चौधरी)
216. Assessment on Video Display Terminal and Its Impact on Health on Users (Jyoti Wadhwa) 620
217. मुरादाबाद मण्डल में प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा की स्थिति: एक अध्ययन (डॉ. अनुराग यादव) 622
218. नेहरू और कृषि (डॉ. जोगेन्द्र सिंह) 626
219. Growth of Decentralized Powerloom Sector in India (Yasmeen Bano, Dr. Arvind Prakash).......... 628
220. सामाजिक विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका (डॉ. हरिचरण मीना)... 632
221. कोयला श्रमिकों की श्रम कल्याण का अध्ययन (कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में).................................... 636
(डॉ. कृष्णकुमार शर्मा, राकेश कुमार गुप्ता)
222. यौद्धिक अर्थव्यवस्था व सुरक्षा - परस्पर निर्भरता (डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा).. 638

223. ग्वालियर जिले का भौगोलिक पर्यावरण (डॉ. कौशलेन्द्र सिंह) 640
224. रासायनिक युद्ध ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में (डॉ. गिरीश शर्मा, डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा) 642
225. भारत में एकीकृत शिक्षा नीतियाँ और कार्यान्वयन (डॉ. अशोक कुमार त्यागी) 645
226. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कार्यशील महिलाओं की दोहरी भूमिका : एक अध्ययन (मोनिका आमारे) 650
227. उत्तर आधुनिकता का मानव जीवन पर प्रभाव (डॉ. अशोक कुमार त्यागी) 652
228. धार्मिक नगरी उज्जैन में स्थित मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम की होटल क्षिप्रा रेसिडेन्सी के आय - व्यय का तुलनात्मक अध्ययन (वर्ष 2010-11 से 2012-13 तक) (टीना यादव, डॉ. कृष्णकांत शर्मा) 655
229. उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि का अध्ययन (श्रीमती विजय पाराशर) 659
230. लोकगीत : संरक्षण व नवीन प्रयोग (एक विवेचनात्मक अध्ययन) (लीना प्रकाश शाक्या, डॉ. रश्मि श्रीवास्तव)... 661
231. ग्रामीण आर्थिक विकास में खादी ग्रामोद्योग की भूमिका का अध्ययन (छ.ग. के राजनांदगांव जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. के.एल. टाण्डेकर, डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा, सुश्री ममता देवांगन) 663
232. उज्जैन तहसील की ग्रामीण बस्तियों में नियोजन एवं प्रबन्धन (रविराज सिंह गोरास्या) 666
233. मेवाड़ राज्य का भोगोलिक-ऐतिहासिक परिचय (डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत) 668
234. वर्ष 2010-11 से 2014-15 तक उज्जैन जिले में महिला एवं बाल विकास द्वारा संचालित लाडली लक्ष्मी योजना द्वारा महिला आर्थिक विकास में योगदान : एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. हेमलता ललावत) 672
235. उज्जैन जिले में भारतीय जीवन बीमा निगम के पेंशन प्लान के व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन - वर्ष (2010-11से 2014-15) (डॉ. राजेन्द्र ललावत) 674
236. A Study on Indore's Housing Development by Financial Management of Chief Minister Rural Housing Mission (Pawan Tiwari) 676
237. राष्ट्रीय सुरक्षा की बदलती अवधारणा (डॉ. रितेश सिंगारे) 678
238. Recent Trends in Training and Developments in India (Dr. Sanjay Patni) 680
239. A Study of Academic Leadership Styles at Private Management Institutions (Dr. Nilesh Gnagwal) 684
240. A Study on Quality of Worklife Among Women Employees in Private Sector Banks (Kuldeep Agnihotri) 690

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. N.S. Rao - Director, Janardhanrai Nagar Raj. Vidhyapeeth University, Udiapur (Raj.) India
8. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
9. Prof. Dr. P.P. Pandey - HOD, Commerce(Dean), Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
10. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
11. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
12. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
13. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
14. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
16. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
17. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
18. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
19. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
20. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
21. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
22. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
23. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
24. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
25. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
26. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
27. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
28. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
29. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
31. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
32. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
33. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
34. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
35. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
36. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
37. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. Prof. Dr. Narendra Shrivastav - Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2. Prof. Dr. Aditya Lunawat - Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3. Prof. Dr. Sanjay Jain - Former Controller, Madhya Pradesh Professional Examination Board Bhopal (M.P.) India
4. Prof. Dr S.K. Joshi - Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5. Prof. Dr. J.P.N. Pandey - Fr. Principal, Govt. Auto.Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
6. Prof. Dr. Sumitra Waskel - Principal, Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7. Prof. Dr. P.R. Chandelkar - Principal, Govt. Girls PG College, Chhindwara (M.P.) India
8. Prof. Dr. Mangal Mishra - Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9. Prof. Dr. R.K. Bhatt - Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10. Prof. Dr. Ashok Verma - Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11. Prof. Dr. Rakesh Dhand - HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12. Prof. Dr. Anil Shivani - HOD, Commerce /Management Deptt. Shri Atal Bihari Vajpai Hindi University, Bhopal (M.P.) India
13. Prof. Dr. PadamSingh Patel - HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14. Prof. Dr. Manju Dubey - HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. A.K. Choudhary - Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16. Prof. Dr. T. M. Khan - Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17. Prof. Dr. Pradeep Singh Rao - Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18. Prof. Dr. K.K. Shrivastava - Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls PG College, Gwalior (M.P.) India
19. Prof. Dr. Kanta Alawa - Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. PG College, Badwani (M.P.) India
20. Prof. Dr. S.K. Jain - Professor, Commerce, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
21. Prof. Dr. Kishan Yadav - Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22. Prof. Dr. B.R. Nalwaya - Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23. Prof. Dr. Purshottam Gautam - Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24. Prof. Dr. Natwarlal Gupta - HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25. Prof. Dr. S.C. Mehta - Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh PG College, Jaora (M.P.) India
26. Prof. Dr. Tapan Chore - HOD,Economics, Vikram University, Ujjain (M.P.) India

****

Referee Board

Maths - (1) Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics - (1) Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science - (1) Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry - (1) Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany - (1) Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)
(2) Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
Life Science - (1) Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
- (2) Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics - (1) Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science - (1) Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology - (1) Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology - (1) Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science - (1) Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci. - (1) Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)

***** Commerce *****

Commerece - (1) Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
(3) Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)

***** Management *****

Management - (1) Prof. Dr. Rameshwar Soni, HOD, Research Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources - (1) Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Administration - (1) Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)

***** Law *****

Law - (1) Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)

***** Arts *****

Economics - (1) Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls PG College, Neemuch (M.P.)
(2) Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
(3) Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
Political Science - (1) Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
(3) Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy - (1) Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology - (1) Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
(2) Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. PG College, Dhar (M.P.)
(3) Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
Hindi - (1) Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)

(2) Prof. Dr. Chanda Talera Jain, HOD Research Centre, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
(3) Prof. Dr. Jaya Priyadarshini Shukla, Vansthali Vidyapeeth (Raj.)
(4) Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)

English - (1) Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
(2) Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)

Sanskrit - (1) Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls PG College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. PG College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)

History - (1) Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.)

Geography - (1) Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)

Psychology - (1) Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls PG College, Chhindwara (M.P.)
(2) Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)

Drawing - (1) Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls PG College, Bhopal (M.P.)
(3) Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)

Music/Dance - (1) Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
(2) Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science - (1) Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
(3) Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)

Human Development - (1) Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
(2) Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)

Family Resource Management - (1) Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education - (1) Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
(2) Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
(3) Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
(4) Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)

***** Architecture *****

Architecture - (1) Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education - (1) Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science - (1) Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

****

Disaster Management In India

Mamta Jaisiyan*

Introduction - Disaster is defined as 'Catastrophic Situation in which the normal pattern of life or ecosystem has been distrupted and extra ordinary emergency interventions are required to save and preserve lives and as the environment (Ministry of home affairs , 2011). The Disaster Management Act has included man-made disasters also and define disaster as 'A Catastrophe, mishap, calamity are grave occurrence in any area, arising from natural as man made causes by accident or negligence which result in substantial loss of life or human suffering or damage to, and destruction of property or damage to, or degradation of environment and is of such a nature or magnitude as to be beyond the coping capacity of the community of an affected area."

India's Disaster Profile!

India is a country highly vulnerable to natural disasters. The Indian subcontinent is among the world's most disaster prone areas. Almost 85 % of India's are is vulnerable to one or multiple hazard. Out of total sates & union territories, 22 are disaster prone.

It is vulnerable to wind storms, spawned in the Bay of Bengal and the Arabian sea. Earth quakes caused by within crustal movement in the Himalayan mountain , flood brought by monsoon, and droughts in the countries arid and semi arid area.

Almost 57 % of the land is vulnerable to earthquake, 68 % to drought, 8 % to cyclone and 12 % to flood. India has also become much more vulnerable to tsunamis since the 2004 Indian ocean tsunami.

Earthquake - OF the earthquake prone area, 12 % is prone to very severe earthquake 18 % to severe earthquake and 25 % to damageable earthquake. The biggest quake ocean in the Andaman and Nicobar- Island kutch, Himachal & North East. The Himalayan region are particularly prone to earthquake The last two major earthquakes shook Gujarat in Jan. 2001 and Jammu and Kashmir in October 2005. Many smaller –scale quake occurred in other parts of India in 2006. All 7 north east states of India, Andman & Nicobar Island: Ad parts of 6 other state in the North/ North West (Jammu & Kashmir, Uttarkhand, and Bihar) and west (Gujarat) are in service Zone V.

Floods - About 30 million people are offered annually. Floods in the Indo-Gangatic- Brahmaputra Plain are an annual feature on an average, a few hundred live are lost, million are rendered homeless and several heaters of group are damaged every year.

Nearly 75 % of the total rainfall occurs over a short Mansoon season (June-September) 40 million hectares, or 12 % of Indian land, 15 considered prone to floods. Floods are a perennial phenomenon in at least 5 state- Assam, Bihar, Orissa, U.P. and Bengal.

Droughts - About 50 million people are offered annually by drought of approximately 90 million hectares of rain fed area, about 40 million hectares are prone to scanty or no rain Rainfall is poor in nine meteorological subdivision out of 36 subdivision (each meteorological sub division covers a geographic area of more than ten revenue districts in India) In India annually 33 % area receive rainfall less than 750 mm (low rainfall area) and 35 % area receive between 750 to 1125 mm rainfall medium rainfall) and only 32 % falls in the high rainfall (> 1126 mm) zone.

Cyclones - About 8 % of land is vulnerable to cyclones of which coasted area experience two or three tropical cyclone of varifying entensity each year. Cyclonic activities on the east coast are more severe than on the west coast.

The Indian continent is considered to be the worst cyclone offered part of the world, as a result of low depth ocean bed topography and coastal configuration. The principal threat from a cyclone are in the form of gales and strong winds. Most casualties are caused due to coasted inundation by tidal waves and storm surges cyclone typically strike the east coast of India, along the bay of Bengal.

Land Slide - Occur in the hilly region such as the Himalayan, North-East Indian, the Nilgris and eastern and western Ghats, Landslide –prone areas largely correspond to earthquake-prone areas, i.e. north-west and north-east where the incidence of landslides is the highest.

Cold Waves - Cold waves are recurrent phenomenon in north India. Hundred if not thousand of people die of cold and related diseases every year, most of them from poor urban area in northern parts of the country. Accordingly to India Twenty five year plan. Natural disaster have affected nearly 6 % of the population and 24 % of death in Asia caused by disaster have occurred in India.

Between 1996 add 2001, 2 % of national GDP won lost because of natural disaster, and nearly 12 % of government revenue was spent on relief, revalidation and reconstruction during the same period. As per a world bank study in 2003, natural disaster pose a major impediment on the path of

***Associate Professor (Commerce) D.J. College, Baraut (Baghpat) (U.P.) INDIA**

economics development in India.

Classification of Disasters: The Classification of disaster differ as per the criterion of classification however, a high powered committee constituted in Aug. 1999. by the Govt. of India, under the chairmanship of J.C. Pant adopted origin as the criterion for the classification of disaster. The fundamental task of the committee was to prepare comprehensive model plan for disaster mang. at district, state and national level. The committee has identified 30 disasters and categories them in the following five groups.

1. **Water and climate disaster:** Such the flood, cyclone, hail storm cloudburst, heat and cold waves, snow avalanches, drought, soil erosion, thunder lighting.
2. **Geological Disaster:** Such as land slide and much flows, earthquake, mine free, dam failures and general fires.
3. **Biological Disasters:** Such as epidemic, pest attack, cattle, epidemic and food poisoning.
4. **Nuclear and Industrial Disaster:** Such as chemical and industrial disaster and nuclear accidents.
5. **Accident Disaster:** Such as urban and forest free, oil spill, mine flooding incident, collapse of huge building structures bomb blast, air, road and soul mishap, boat capsizing and stumpage during congregation.

At central level, on administrative ministry has been identified as nodal agency for each disaster to coordinate the activities of disaster among operative at different levels.

National Disaster Management System in India - Indeed, concurrent to these occurrences, the govt. at various levels too, has responded by taking appropriate measures for prevention and mitigation of the effects of disaster. While long term preventive and preparedness measure have been taken up, the unprecedented nature of the disaster has called in for a nationwide response mechanism wherein those is a pre-set assignment of rate and functional to various institutions at the central, state and the district level.

The Administrative Response - In the federal setup of India, the responsibility to formulate the govt. response to a natural calamity is essentially that of the concerned state govt. however , the central govt., with its resource, physical and financial does provide the needed help and assistance to buttress relief efforts in the wake of major natural disasters. The dimension of the response at the level of central govt. are determined in accordance with the existing policy of finance the relief expenditure and keeping in view the feature like:

1. the gravity of a natural calamity.
2. the scale of the relief operation necessary, and
3. the requirement- of central assistance for augmenting the financial resources at he disposal of the state govt.

The division of disaster management of ministry of home affair, govt of India is the nodal ministry for all matter concerning disasters at the centre except the drought. The draught management is looked after by the ministry of Agriculture. The central govt. only supplements the efforts of the state govt. State govt. are autonomous in organizing relief operations in the event of natural disaster. states are further divided into district, each headed by a district collector. It is the district collector who is the focal at the district level for directing, supervising and monitoring relief measures for disaster and for preparation of district level plans.

Non Governmental Organization - Many different types of non government organization (NGOs) are already working at advocacy level as well a grass roots level, in typical disaster situations they can be of help in preparedness, relief and rescue, rehabilitation and reconstruction and also in monitoring and feed back.

National Disaster Management Act 2005 - The parliament of India has exacted the national disaster management act in Nov. 2005, which brings about a paradigm shift in India's approach to disaster management. The centre of gravity stands visibly shifted to preparedness, prevention and planning from earlier response and relief centric approach. The act provides for establishment of :

1. National Disaster Management Authority (NDMA)
2. State Disaster Management Authority (SDMA)
3. District Disaster Management Authority (DDMA)

The Act also Provides for

4. Constitution of Disaster Response Fund and Disaster Mitigation Fund at National, State and District Levels.
5. Establishment of NIDM and NDRF.
6. Provides Penalties for obstruction, False claims, misappropriation etc.
7. It state that these shall be no discrimination on the ground of sex, caste, community, descent or religion in providing compensation and relief.

References :-

1. Govt. of India 2005, Disaster Management States Report 2005, Ministry of Home Affair, Govt. of India, New Delhi.
2. Ravindra K. Pande Participation in Practice and Disaster Management Experience of Uttranchal (India) Disaster Prevention and Management Vol. 14, 3, 2006.

****

Sports Emotional Intelligence Profile of Female Hockey Players

Nikhil Dutta *   Dr. B. John **

Abstract - The present study was conducted to prepare sports emotional intelligence profile of female hockey players. 40 national female hockey players (Ave. age 23.12 yrs.) were selected as sample. To assess sports emotional intelligence, five dimensional sports emotional intelligence test prepared by Agashe and Helode (2008) was used. Result reveal that majority i.e. 70% selected national female hockey players possesses high degree of sports emotional intelligence whereas 22.5% exhibited moderate level of sports emotional intelligence and lastly only 7.5% showed inferior sports emotional intelligence. It was concluded that majority of national female hockey players possess superior magnitude of sports emotional intelligence
Keywords - Sports emotional intelligence, Female hockey.

Introduction - Sport psychology is defined as the application of the knowledge and scientific methods of psychology to the study of people in sport & exercise settings. The word psychology refers to the study of human behavior, and sport psychology denotes a sub category of psychology that deals with the behavior of athletes and teams engaged in competitive sports. Performance in sport is no longer dependent on physiological well-being of the athlete. It is well established by now that there are numerous psychological factors which effect and improve the physical performance. The psychological factors are individual differences among the athletes, personality, intelligence, attitude of the player, motivation, aggression, arousal and activation, anxiety, attention and concentration, mental imagery and group dynamics. Success in sport is often associated with vigour and anger. Importantly, emotionally intelligent people can get themselves into the appropriate emotional states for the demands of the situation. If the situation requires high arousal, emotionally intelligent people are good at getting themselves psyched up and prepared. Equally, if the situation requires calmness, emotionally intelligent people are good at relaxing themselves. Athletes that perform in the zone effective regulate their emotions. Research looking at the nature of emotional intelligence has found that emotionally intelligent people use psychological skills such as imagery; goal setting and positive self-talk more often than their less emotionally intelligent counterparts. It was found that emotionally intelligent people are mentally tough and also that they find exercise enjoyable. Although emotional intelligence is still a relatively new term in sport, it is certainly not a new concept. For years we have marvelled at how the great athletes are able to "switch themselves on" to create amazing performances with incredible consistency. According to Goleman (1998), there are five components of EI important for leaders: (a) self-awareness, (b) self-regulation, (c) motivation, (d) empathy, and (e) social skill. In a sport like field hockey the role of emotional intelligence can not be ruled out. Being high velocity team sport with flaring emotions it is worthwhile to assess how elite female field hockey players manage their and others emotions. Surprisingly researchers like Bal and Singh (2014), Rohit (2014), Night (2015), Vimal Kishore (2016) studied emotional intelligence in sportsperson but none preparing profile of female hockey players hence the present study was planned.

Objective - The objective of the present study was to prepare sports emotional intelligence profile of national female hockey players.

Hypothesis - It was hypothesized that majority of national female hockey players will possess significantly superior magnitude of sports emotional intelligence.

Methodology - **T**he following methodological steps were taken in order to conduct the present study.

Sample - For the present study 40 national level female hockey players (Av. age 24.23 years) were selected. The selected national level female hockey players were part of medal winners teams. Purposive sampling was employed in the present study.

Tools:

Sports Emotional Intelligence Test - To measure emotional intelligence, five dimensional sports emotional intelligence test prepared by Agashe and Helode (2008) will be adopted. The test-retest reliability coefficient of this

*M.Phil. Student, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Assistant Professor (Physical Education) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

inventory is 0.71, which is statistically significant and denotes very high level of reliability of the inventory scores through "stability" indices. This Hindi Inventory comprises of in all 15 items in which 3 items each for tapping self-awareness, self-regulation, self-motivation, empathy and socials skills respectively.

Procedure - After establishing a good rapport with the subjects they were assured that their responses and their identities will be kept under strict confidence and will not be disclosed anywhere. Thus, they are free to give their answers comfortably and honestly whatever they felt. In this way, subjects was encouraged to give their proper co-operation during the testing. Sports emotional intelligence test prepared by Agashe and Helode (2008) was administered to each subject. After this, the scoring was completed according to the scoring system prescribed by the authors of the scale. After scoring, the data was tabulated according to their groups. To compare data, independent sample 't' test was used. The statistical results are depicted in table no. 1.

Result & Discussion

Table 1 : Distribution of Female Hockey Players on the Basis of Various Categories of Sports Emotional Intelligence

Categories of Sports Emotional Intelligence	Frequency	Percen tage (%)	X^2
High(More than 225)	28	70	X^2 = 25.5 (p<.05)
Moderate (Between 181-225)	09	22.5	
Low (Less than 181)	03	7.5	
Total	40	100.0	

X^2 (df=2) = 5.99 at .05 level and 9.21 at .01 level

Results presented in table 3 indicate that majority i.e. 70% selected national female hockey players possesses high degree of sports emotional intelligence whereas 22.5% exhibited moderate level of sports emotional intelligence and lastly only 7.5% showed inferior sports emotional intelligence. The calculated X^2 = 25.5 which is statistically significant at .01 level confirms the above finding that majority of national female hockey players possesses significantly superior sports emotional intelligence.

Results are consistent with previous findings. Mohammad (2015) and Vimal Kishore (2016) also found that elite players possesses higher magnitude of emotional intelligence as compared to sub-elite players. Hence findings are also applicable in female hockey also.

Conclusion - It was concluded that superior degree of sports emotional intelligence is markedly high in national female hockey players as compared to intercollegiate female hockey players.

References :-

1. Bal, B.S. and Singh, D. (2014). Emotional intelligence in basketball players: a predictor of sport performance. Education Practice and Innovation, Vol. 1, Number 2, 1-9.
2. Goleman, D. (1995). Emotional intelligence, New York: Bantam Books.
3. Goleman, D. (1998). Working with emotional intelligence. New York: Bantam Books, 1998.
4. Mohammad, A. amd Hasan, M. (2015). Aggression of Indian Female Field Hockey Players at Different Levels of Competitions. International Journal of Sports and Physical Education (IJSPE), Volume 1, Issue 1, June 2015, PP 9-13.
5. Night, J.R.S. (2015).Analysis of Emotional Intelligence among Hockey Players in Relation to their Positional Play. Research Journal of Physical Education Sciences, Vol. 3(7), 8-11.
6. Rohit (2014) A study of emotional intelligence in kabaddi and kho-kho players of Haryana. International Journal of Research in Social Sciences and Humanities (IJRSSH), Vol. 1 No. 3, Issue No. I, 5-8.
7. Vimal Kishore. Emotional intelligence: A best predictor of performance in sports, International Journal of Physiology, Nutrition and Physical Education, 1(2): 155-156.

****

भारतीय मेला संस्कृति

डॉ. इस्माईल अली बेग *

प्रस्तावना - मेला संस्कृति का इतिहास - मानवीय सभ्यता का प्रारम्भिक काल मनुष्य की यायावरी अवस्था में उसकी दिनचर्या के समान ही अस्थिर और अनिश्चित सा था। सभ्यता के पाषाणयुगीन काल के बाद जब वह बस्तियाँ बसाकर रहने लगा तो उसकी घुमंतू जीवन शैली स्थिर हो गई, उसमें सामाजिकता भाव विकसित होने लगा। इसी दौरान उसकी बौद्धिक-चेतना और वाक शक्ति ने कला, इतिहास, संस्कृति, बोली-भाषा के विकास के मार्ग प्रशस्त किये। विकास का यह कार्यक्रम शनै-शनै एक व्यवस्थित मानवीय सभ्यता की विकास गाथा का लम्बा काल था। इसी दौरान 'आदि मानव' का यह संगठित इतिहास बाद में विकास के साथ विभाजन और बिखराव का इतिहास बना। जिसे महाद्विपों, देशों, जातियों और शासकों के कालक्रम और भूगोल में बाँटकर लिखा और पढ़ा गया। लेकिन वक्त के साथ बदलती परिस्थितियों ने अपनी-अपनी संस्कृति के स्वीकार और परिवर्तन को सहेजने के अवसर भी हमें प्रदान किये।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में भी संस्कृति के बदलाव का समय, संस्कृति की समृद्धि का समय रहा। धीरे-धीरे नदियों के किनारे विकसित सभ्यता ने विस्तार पाया, बस्तियाँ गांवों में बदली और गांव कस्बों में। कालान्तर में भौतिक सुविधाओं में वृद्धि व विज्ञान की प्रगति के दौर में महानगर विकसित हो गये। यह विकास केवल भौतिक व वैज्ञानिक विकास बनकर नहीं रह गया। यह काल संस्कृति के विकास का भी साक्षी बना। हमारी आवश्यकताएँ बढ़ी तो चीजें खोज ली गई। बाद में अविष्कारों का दौर आया, यह हमारी निजी पसंद, तीज-त्योहार, उत्सव, बोली-भाषा, पहनावे, रहन-सहन का साक्षी बना। इसी काल में मेले-उत्सव तथा बाजार भी अस्तित्व में आये।

हमारी संस्कृति में रामायण-महाभारत काल में मेले लगते आए है। जैसे रामायण में राम-भरत मिलन चित्रकुट में तथा वनवास के बाद राम के अयोध्या आगमन पर भी सम्पूर्ण अयोध्या में मानों मेला हो गया था, वैसे ही महाभारत में वरणावृत मेले का वर्णन आता है, जहाँ पर पाँचों पाण्डव अपनी माता कुंती के साथ आते हैं। मेले हमारी प्राचीन संस्कृति एवं जीवनदायिनी सभ्यता के परिचायक है।

वास्तव में उत्सव, त्योहार और मेलों ने प्रत्येक देश के सामाजिक व जातिय जीवन को संस्कारित एवं विकसित करने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया है। प्रत्येक संस्कृति की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति उस स्थान में देखी जा सकती है। किसी भी समाज और जाति की सजीवता, समृद्धि और उसके सुखी जीवन का ठीक-ठाक अनुमान उसके उत्सव-त्योहार और मेलों से ही लगाया जा सकता है। जो समाज जितना ही उत्सव प्रिय होगा, वह उतना ही अधिक सुखी-समृद्ध समझा जाता है। लोकोत्सव व मेले का मुख्य उद्देश्य जनता में स्फूर्ति का संचार करना होता हैं। प्रत्येक लोकोत्सव के साथ कोई न कोई धार्मिक, ऐतिहासिक अथवा सामाजिक विचारधारा जुड़ी होती है। प्रत्येक लोकोत्सव की उत्पत्ति किसी अवसर विशेष पर जन समूह द्वारा प्रकट हुए आह्लादोल्लास से हुई होती है। ऐसो आह्लादोल्लास किसी महापुरूष के जन्म, विवाह, विजय, नई फसल के पकने, ऋतु परिवर्तन, विशेष घटना आदि के कारण होते है।

मेले हमारी 'उत्सव प्रियता' के साथ-साथ उपभोक्ता संस्कृति के प्रतीक भी कहे जाते सकते है। इस प्रकार उत्सव और मेलों का सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान होता है। साथ ही देश व समाज की संस्कृति का भी इन मेलों के साथ घनिष्ट सम्बन्ध होता है। प्राय: इन आयोजनों के पीछे कुछ न कुछ कारण विद्यमान होते है और उनके साथ कथाएँ जुड़ी होती है।

वास्तव में यदि हम गम्भीरता से विचार करे तो पाऐंगे कि उत्सव व मेलों का उद्देश्य मूलत: हमारे जीवन में नवीनता लाना हैं। जो समाज जितने उत्साह से अपने त्योहारों को मनाती है, वह उतनी ही प्राणवान और सशक्त मानी जाती है। जीवंतता का पुट इन्हीं मेलों व उत्सवों से प्रकट होता है। 'मेला' शब्द की व्युत्पत्ति मिल धातु में टाप प्रत्यय के संयोग से हुई है, जिसका अर्थ है मिलना, समागम, सभा या समाज। इस प्रकार उत्सव त्योहार आदि के समय होने वाला बहुत से लोगों का जमावड़ा या जमा होना 'मेला' कहलाता है। मेले में 'मेल मिलाप' का भाव प्रतिध्वनित होता है। व्यपाक स्तर पर 'मेल मिलाप' के सामूहिक प्रयोजन मेला का स्वरूप या चरित्र निर्धारित करते है। यह प्रयोजन धार्मिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक, एतिहासिक, अध्यात्मिक या विशिष्ट प्रकृति के प्रचारात्मक हो सकते है।

मेलों का आयोजन अधिकांशत: प्रकृति की गोद में, पर्वतों पर, वृक्ष पूजन हेतु बाग-बगीचों में, तालाब कुंद या नदी किनारे होता है। इस प्रकार प्रकृति और पर्यावरण से मेलों का घनिष्ट सम्बन्ध होता है। मेले पर्यावरण रक्षा, स्वच्छता तथा पर्यावरण के प्रति जागरूकता के माध्यम बन जाते है। मेलों में प्राय: लोग (जनमानस) समूह बनाकर जाते है जिससे उनमें सामूहिकता का भाव, पारस्परिक सौहार्द, सहयोग, स्नेह तथा आपसी सूझबूझ का विकास होता है।

एक प्रश्न उठता है कि मेलों की परम्परा कब और किस प्रकार प्रारम्भ हुई होगी? उनका उद्देश्य क्या रहा होगा? भारत कृषि प्रधान देश है, निमाड़ क्षेत्र भी आदिवासी बाहुल्यता के कारण कृषि प्रधान क्षेत्र है। इसकी अधिकांश जनता ग्रामों में निवास करती है। प्राचीन काल में जब आवागमन तथा संचार के साधन नहीं थे, इसी सीमित दायरे में लोक 'कूप मण्डूक' की तरह थे। वर्तमान में भी बाहर जाने, जुड़ने या बाहर रहने वाले प्रियजनों से मिलने तथा कुछ खरीद या बिक्री का माध्यम प्राय: यह ग्रामीण मेले ही होते है।

यह मेले धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक संरचना के आधार होते है। केवल एक कारण से नहीं, अनेक समस्याओं के सामाधान के लिये मेले बहुउद्देश्यीय रूप में आयोजित होते है। हमारे प्राचीन मनीषियों ने 'मेला' की अवधारणा को इसी रूप में प्रस्तुत तथा विकसित किया कि वह बहुउद्देश्यीय बनकर सभी पक्षों को सबल बनाए। सामाजिक समग्रता को समझने के लिए 'मेला'

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला बड़वानी (म. प्र.) भारत

सबसे अच्छा उदाहरण है जो कि एक ओर धार्मिक और आध्यात्मिकता में विश्वास करने वालों के लिये श्रृद्धा का अवसर है तो सामाजिकता और सौहार्द बढ़ाने के लिये मिला-भेटी या मिलन भेट का माध्यम। पंचायती व्यवस्था में विश्वास करने वालों के लिए खास समान या पंचायत से जुड़ने का अवसर है तो कला-शिल्प के कलाकारों को अपनी कलात्मक वस्तुयें दिखाने और बेचने का, दैनिक उपभोग की वस्तुयें उत्पादित करने वालों को बाजार ढूंढने का तो ग्राहकों को खरीदारी का। चुहुलबाजी करने और नजारा देखने वालों को बन-ठन कर जाने और अनुकूल अवसर ढूंढने का। सभी को अपनी रूचि का कुछ न कुछ मेले में मिल ही जाता है लेकिन इन सबसे ऊपर मेला का महत्वपूर्ण पक्ष है 'समाजार्थिक संरचना।'

यदि हम मेलों की परम्परा के विकास की कल्पना करें तो आसानी से विश्वास किया जा सकता है कि ग्रामीण तथा वन क्षेत्र में नगरीय विकास के साथ व्यक्तिगत तथा सामाजिक आवश्कताओं की पूर्ति के लिये 'आदान-प्रदान' की परम्परा प्रारम्भ हुई होगी। अपनी आवश्यकता पूरी होने के बाद लोगों ने स्व-उत्पादित वस्तुओं को लोगों को सुलभ कराया होगा। मुद्रा का पर्याप्त प्रसार न होने के दिनों में वस्तुओं के विनिमय से खरीद फरोख्त होनी थी। लोग अनाज के बदले में उभोक्ता सामान खरीद लेते थे। गाँवों में बाजार संतृप्त होने के बाद अपने पशुओं या पशु चलित वाहनों (बैलगाड़ी) से लोग पड़ोस के गांवों से 'बंजी' करने जाने लगे, फिर किसी धार्मिक या तिथि त्योहार के बहाने वहाँ एकत्र होने लगे। इस तरह इकट्ठा होने का विकसित व व्यवस्थित रूप 'मेला' हो गया।

खपत और मांग अधिक होने से श्रमिकों या उत्पादकों को अपनी दक्षता-विकास का अवसर मिला। इससे कुछ खास स्थानों पर बनी वस्तुओं की दक्षता जनचर्चा में आ गई। कुछ लोग कहने लगे, भाई गुड़ लेना हो तो अमुक मेले से लेना, ढोलक लेना हो तो अमुक मेले में से लेना, घी लेना हो तो उस मेले में, चुनरी लेना हो तो उस मेले से लेना। यानि कुछ विशेष वस्तु की दक्षता व गुणवत्ता से उस वस्तु का किसी खास मेले में बाजार बन जाता है। इसी तरह जानवरों के विपणन के लिये भी साप्ताहिक हाटों से हुई शुरूआत पशु मेले में हुई। कालान्तर में पशुओं की श्रेणीयों के लिये अलग-अलग मेले प्रसिद्ध हो गये यथा बेलों, गधों, बन्दरों, बकरों आदि का बाजार लगने लगा।

लोकांचलों में राष्ट्रीय स्तर पर मान्य देवी-देवताओं के अतिरिक्त लोक देवता, ग्राम देवता की भी बड़ी मान्यता होती है जिन व्यक्तियों में अपने शौर्य, सदाचार या चमत्कारित कृतित्व से लोक का विश्वास ओर उनकी श्रृद्धा अर्जित की वह 'लोक देवता' के रूप में मान्य है।

मेले भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग बने हुए हैं या हम यू कहें कि भारतीय संस्कृति अपने ह्रदय के माधुर्य को त्योहार और मेलों में व्यक्त करती है, तो अधिक सार्थक होगा। भारतीय संस्कृति-प्रेम, सौहार्द, करूणा, मैत्री, श्रृद्धा, आस्था, उदारता तथा दया जैसे मानवीय गुणों से परिपूर्ण है। यह उल्लास, उत्साह और विकास को एक साथ समेटे हुए है। आनन्द के माधुर्य तो जैसे इसके गुण है। यह हर कार्य आनन्द के साथ शुरू होता है और माधुर्य के साथ सम्पन्न होता है।

यह हमारी धार्मिक आस्थाओं, सामाजिक परम्पराओं और आर्थिक आवश्यकताओं की त्रिवेणी है, जिनमें समूचा जनमानस भाव विभोर होकर गोते लगाता है। यही कारण है कि जितने त्योहार और मेले हमारे देश में मनाए जाते है विश्व के किसी अन्य देश में नहीं। इस दृष्टि से भारत को यदि त्योहार और मेलों का देश कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। यहाँ पूरे वर्ष अनवरत यह परम्परा चलती रहती है।

देश में मेलों की संगणना 1961 की जनसंख्या के साथ कराई गई थी। इसके अनुसार मध्य प्रदेश में अनुमानता चौदह सौ मेले भरते है। संभागवार मेलों की संख्या इस प्रकार थी- इंदौर 203, उज्जैन 227, ग्वालियर 161, चम्बल 95, जबलपुर 124, बिलासपुर 79, भोपाल 129, रायपुर 78, रीवा 121, सागर 165, होशंगाबाद 13 कुल योग 1395। (संदर्भ : तालिका क्रमांक 69, 1 फेअर्स एण्ड फैस्टिवल्स, के.सी. दुबे एवं एम.जी. मोहरिल, सेन्सस ऑफ इन्डिया वोल्यूम-8, म.प्र. मैनेजर ऑफ पब्लिकेशंस, दिल्ली-8, 1965 सपठित-मध्य प्रदेश संदर्भ 2003)

मध्य प्रदेश में मेलों का परिदृष्य अत्यन्त व्यापक है। यहाँ सभी प्रकार के मेले भरते है जिनमें यहां का सांस्कृतिक वैभव प्रतिबिम्बित होता है। मध्य प्रदेश के इन्दौर संभाग में स्थित अंचल 'निमाड़' क्षेत्र प्राचीनतम सभ्यता एवं संस्कृति का केन्द्र बिन्दु रहा है। निमाड़ अंचल दो भागों में 'पूर्वी निमाड़' एवं पश्चिमी निमाड़ के रूप में प्रशासनिक आधार पर विभाजित किया गया। पूर्वी निमाड़ में खण्डवा एवं बुरहानपुर दो जिले है तथा 'पश्चिम निमाड़' में खरगोन एवं बड़वानी दो जिले है।

पश्चिम निमाड़ अपने त्योहारों, उत्सवों व मेलों के लिये प्रसिद्ध है। इस अंचल की भूमि सदा ही संस्कृति प्रधान रही है। कहते है कि मध्य प्रदेश की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का यह क्षेत्र केन्द्र स्थल रहा है। इसे 'नर्मदा स्थलीय सभ्यता' का केन्द्र भी कहा जाता है।

ये क्षेत्र भी अपने पर्व, उत्सव, त्योहार एवं मेलों के लिए प्रसिद्ध रहा है। इस क्षेत्र में चालीस से अधिक मेले आयोजित होते है। यहाँ मेलों को (निमाड़ी में) 'जत्रा' या 'जतरा' कहते है। प्रारम्भिक दौर में इन मेलों में बैलगाड़ियों से ही पहुंचा जाता था, इसलिये बैलगाड़ियों की यह 'यात्रा' अपभ्रंश में 'जत्रा' हो गई। पश्चिम निमाड़ भी 'मेलों की भूमि' रहा है, यहाँ विभिन्न नगरों व नदी के किराने, पहाड़ों व घाटियों के निकट ऐतिहासिक, धार्मिक, पुरातात्विक, पौराणिक आधार पर विभिन्न तिथियों को मेलों का आयोजन होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पश्चिमी निमाड़, जिला गजेटियर विभाग, म. प्र., भोपाल,
2. उपाध्याय, रामनारायण : निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास
3. उपाध्याय, रामनारायण : लोक साहित्य समग्र, हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन, वाराणसी
4. निरगुणे, वसन्त : निमाड़ी संस्कृति और साहित्य, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् का प्रकाशन, भोपाल
5. निरगुणे, वसन्त : जिरोती, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् का प्रकाशन, भोपाल

****

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव एवं तनाव का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. महेश कुमार मुछाल * सतीश चन्द **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य उ0प्र0 के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्य दबाव एवं तनाव का तुलनात्मक अध्ययन करना था। इस अध्ययन हेतु प्रतिदर्श के रूप में पश्चिम उ0प्र0 के बागपत जनपद के 208 स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों का साधारण यादृच्छिक न्यादर्शन विधि के आधार पर चयन किया गया। चयनित न्यादर्श पर डॉ0 ऐ0के0 श्रीवास्तव एवं डॉ0 के0पी0 सिंह द्वारा निर्मित कार्य दबाव मापनी तथा स्वनिर्मित तनाव मापनी का प्रशासन कर उसके फलांको के आधार पर शिक्षकों के तनाव एवं कार्यदबाव के मध्य अन्तर की सार्थकता को देखा गया है। प्राप्त परिणामों के द्वारा ज्ञात हुआ कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्य दबाव एवं तनाव में सार्थक अन्तर है तथा स्थायी शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षामित्रों में कार्यदबाव एवं तनाव अधिक पाया गया। प्राप्त परिणामों के विश्लेषण से यह भी ज्ञात हुआ कि यौन भिन्नता के परिपेक्ष्य में स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव एवं कार्य दबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है।

प्रस्तावना – तनाव व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक दशा है जिसमें व्यक्ति असामान्य रूप से व्यवहार करने लगता हैं। यदि व्यक्ति की आवश्यकताएं तुरन्त और स्वत: ही पूरी हो जाएं तो जीवन इतना सरल हो जायेगा कि फिर उसके प्रति आकर्षण एवं आनन्द की अनुभूति ही समाप्त हो जायेगी इसीलिए प्रकृति में आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधाओं को उत्पन्न करते रहना मानव जीवन के सुख के लिए अनिवार्य सा प्रतीत होता है। यदि बिना बाधाओं के आवश्यकताएं पूरी हो जायेगी तो जीने के लिए कुछ नहीं रह जायेगा, ये बाधायें ही जीवन के संग्राम में समय-समय पर उत्पन्न होती रहती है जो व्यक्ति में एक विशेष प्रकार का दबाव बनाये रखती हैं यही तनाव के रूप में जाना जाता है।

क्रो एवं क्रो के अनुसार– 'तनाव उस समय उत्पन्न होते हैं जब एक व्यक्ति को पर्यावरण की उन शक्तियों का सामना करना पड़ता है जो उसकी स्वयं की रूचियों और इच्छाओं के विपरीत कार्य करती है।'

तनाव की भांति कार्यदबाव भी शिक्षकों में पायी जाने वाली एक सामान्य मनोदशा है। जिसके निर्धारण के कारक वातावरण में मौजूद होते है। कार्यदबाव के परिणामस्वरूप कार्यकारी व्यक्ति अपनी क्षमता को पूर्णरूप से प्रदर्शित नहीं कर पाता। किसी भी कारण से शिक्षक तनाव एवं कार्यदबाव में है तो वह स्वयं असफल होने के साथ-साथ शिक्षण उद्देश्यों को भी प्रभावित कर सकता है। शिक्षक की सफलता उसकी स्वतन्त्र अभिव्यक्ति पर निर्भर करती है। जो अध्यापक तनावग्रस्त रहते हैं उनका अध्यापन कार्य भी निम्न स्तर का होता है। प्रश्न यह उठता है कि आखिर अध्यापकों के तनाव ग्रस्त होने के क्या कारण हैं? सामान्य तौर पर इसके एक नही अनेक कारणों को गिनाया जा सकता है यथा-छात्रों का अध्यापकों के साथ शिष्टाचारपूर्ण व्यवहार न करना, सहकर्मियों का सहयोगात्मक दृष्टिकोण न होना, सत्र अवधि अधिक होना, पाठ्यक्रम व्यापक होना, अस्पष्ट पाठ्यक्रम सुविधाओं की कमी होना, अपने व्यवसाय से सन्तुष्ट न होना, अत्यधिक कार्यभार आदि। कार्यदबाव एवं तनाव के कारण शिक्षक के उत्साह में कमी पायी जाती है। वह ऊर्जा के ह्ास का अनुभव करता है तथा उसमें निराशा व निरर्थकता के भाव उत्पन्न होने लगते है। कार्य दबाव एवं तनाव व्यक्ति में भावशून्यता तथा निराशावाद की और संकेत करता है। व्यक्ति में सिरदर्द, थकान, सावेंगिक प्रथकता, आशा का अभाव, निषेधात्मक भाव, आत्म विश्वास का अभाव सामाजिक अयोग्यता आदि मनो शारीरिक लक्षणों के कारण व्यक्ति में अनेक प्रकार की विकृतियॉ उत्पन्न हो जाती है। जिससे उसकी शिक्षण दक्षता व कार्य क्षमता भी प्रभावित होती है।

अध्ययन की प्रासंगिकता – प्राथमिक शिक्षा को पटरी पर लाने के लिए सरकार ने सर्व शिक्षा अभियान को वर्ष 2002 से सशक्त रूप से लागू किया जिसके तहत प्राथमिक विद्यालयों में स्थायी अध्यापकों की शिक्षण में सहायता करने हेतु, शिक्षामित्रों को रखने की व्यवस्था की गयी। प्रारम्भ में इण्टरमीडिएट पास व्यक्तियों को रुपये 1750/- के मासिक मानदेय पर 11 महीने हेतु ग्राम शिक्षा समिति की संस्तुति पर जिलाधिकारी द्वारा शिक्षामित्रों के रूप में नियुक्त किया जाता था जिन्हें प्रत्येक वर्ष नवीनीकरण की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। वर्तमान में इनका मानदेय बढ़ाकर रुपये 3000/- प्रतिमाह कर दिया गया है किन्तु इनके साथ इतनी सारी समस्याएं जुड़ी है कि ये अपना कार्य न तो पूरी क्षमता से कर सकते हैं और न ही पूरी लगन एवं निष्ठा पूर्वक। शिक्षामित्रों के साथ-साथ स्थायी अध्यापक/ अध्यापिका भी तनाव एवं कार्यदबाव से वंचित नहीं हैं उनके सामने भी अनेकानेक समस्याएं महिषासुर की भांति मुंह बायें खड़ी है। इन स्थायी अध्यापकों का वेतनमान काफी कम है, तथा समय पर नही मिलता है, प्राथमिक विद्यालयों में प्राथमिक सुविधाये उपलब्ध नहीं है, इन्हें शिक्षण कार्य के अलावा भी अनेक सरकारी कार्यो को करना पड़ता हैं तो ऐसी परिस्थितियों में स्थायी अध्यापक/ अध्यापिकाएं तनाव एवं कार्यदबाव से कैसे वंचित रह सकते है?

अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं में व्याप्त कार्यदबाव एवं तनाव के संदर्भ में अनुसंधानकर्ताओं द्वारा जो प्रयास किया गया है उनके परिणाम भी इस अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट करते है।

* एसोसिएट प्रोफेसर , शिक्षक शिक्षा विभाग, दिगम्बर जैन (पी.जी.) कॉलेज, बडौत (बागपत) (उ. प्र.) भारत
** शोधछात्र, शिक्षक शिक्षा विभाग, दिगम्बर जैन (पी.जी.) कॉलेज, बडौत (बागपत) (उ. प्र.) भारत

प्रकाश जी.पी. (1990) – का अध्ययन परिणाम यह दर्शाता है कि तनाव व कार्यदबाव के मध्य धनात्मक सह–सम्बन्ध तथा तनाव एवं कार्यदबाव का कार्य निपटाने की प्रकृति के मध्य नकारात्मक सह–सम्बन्ध पाया गया।

जगदीश व श्रीवास्तव (1982) का अध्ययन परिणाम यह दर्शाता है कि कर्मचारियों की कार्य सन्तुष्टि कार्य करते हुए प्राप्त हुई व कार्य के पश्चात के तत्व उनके द्वारा अनुभव किये गये तनाव से सार्थक रूप से प्रभावित पाये गये।

भट्ट डी.जी. (1997)– के अध्ययन परिणाम यह दर्शाते हैं कि प्राथमिक अध्यापकों में कार्य तनाव उनके कार्य संलग्नता एवं कार्य संतुष्टि से सार्थक रूप से उच्च धनात्मक सह–सम्बन्धित है।

तनाव व कार्यदबाव के सम्बन्ध में हुए एक अन्य शोध **(डॉ0 टी.सी. ज्ञानानी 1988)** के परिणाम दर्शाते हैं कि उच्च शिक्षा में संलग्न अध्यापकों के कार्य पर तनाव व कार्यदबाव का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में कह सकते है कि तनाव से ग्रसित कोई भी अध्यापक अपना शिक्षण सुचारू पूर्ण ढंग से नहीं कर सकता है चाहे वह स्थायी शिक्षक/शिक्षिका हो अथवा शिक्षामित्र। इसी को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थी ने प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव एवं तनाव का तुलनात्मक अध्ययन किया है।

यदि वर्तमान शोध अध्ययन के परिणामस्वरूप यह पाया गया कि स्थायी शिक्षकों व शिक्षामित्रों के कार्यदबाव व तनाव में अन्तर है तथा स्थायी शिक्षकों की तुलना में शिक्षामित्रों में यह प्रतिशत मात्रा अधिक है तो इस वर्ग की समस्याओं के कारणों को ज्ञात कर इन्हें दूर करने का प्रयास किये जा सकते है जिससे अध्यापकों के तनाव व कार्यदबाव का प्रभाव उनकी शिक्षण दक्षता पर न पड़े।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. यौन भिन्नता के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. यौन भिन्नता के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं

1. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है।
2. यौन भिन्नता के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है।
3. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है।
4. यौन भिन्नता के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन में समकों के संकलन हेतु **वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि** का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या – प्रस्तुत अध्ययन की जनसंख्या के रूप में उ.प्र. के बागपत जनपद के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत समस्त स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों को लिया गया है।

न्यादर्श एवं न्यादर्शन – प्रस्तुत अध्ययन के सन्दर्भ में शोधार्थी ने उपलब्ध जनसंख्या में से 208 प्रतिदर्शो का चयन साधारण यादृच्छिक न्यादर्शन के आधार पर किया है।

प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन में शोधार्थी ने स्वनिर्मित तनाव मापनी तथा डॉ0 ए0के0 श्रीवास्तव एवं के0पी0 सिंह द्वारा निर्मित एवं मानकीकृत कार्यदबाव मापनी का प्रयोग किया है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ– समंक संकलन से प्राप्त सूचनाओं को अर्थयुक्त बनाने एवं परिणामों की व्याख्या हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात (उठ) आदि सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया है।

सीमांकन – प्रस्तुत अध्ययन केवल पश्चिमी उ0प्र0 के बागपत जनपद के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव एवं कार्यदबाव तक ही सीमित है।

परिणाम एवं विवेचना – शोध समस्या से सम्बन्धित आकंडो तथ्यों एव सूचनाओं आदि के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर परिणामों को प्राप्त किया गया है। प्रस्तुत शोध समस्या के उद्देश्यों पर आधारित परिकल्पनाओं के सम्बन्ध में निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए है।

1. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिमित्रों के तनाव का तुलनात्मक अध्ययन।

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव में अन्तर की सार्थकता को ज्ञात करने हेतु क्रान्तिक अनुपात की गणना की गई है जिसका विवरण तालिका नं0 1 में दिया गया है।

तालिका नं0 1

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात (CR)	सार्थकता स्तर	परिणाम
स्थायी शिक्षक	86	52.46	16.15	5.22	0.01	H_0 निरस्त
शिक्षामित्र	122	64.30	17.02			

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव में सार्थक अन्तर है। अतः शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव में सार्थक अन्तर नही है निरस्त की जाती है। स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव सम्बन्धी प्राप्तांकों के मध्यमानों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि स्थायी शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षामित्रों में तनाव अधिक पाया जाता है। इसका कारण यह हो सकता है कि स्थायी शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षामित्रों का वेतन बहुत कम होता है और ये लोग स्थायी भी नही होते है तथा इन पर कार्यदबाव भी अधिक होता है।

2. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के तनाव का तुलनात्मक अध्ययन – प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के तनाव में अन्तर की सार्थकता ज्ञात करने हेतु क्रान्तिक अनुपात की गणना की गई है जिसका विवरण तालिका नं0 2 में दिया गया है।

तालिका नं0 2

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात (CR)	सार्थकता स्तर	परिणाम
स्थायी शिक्षक	54	51.52	13.51	0.64	असार्थक	H_0 स्वीकृत
स्थायी शिक्षिकाएं	32	55.62	15.20			

तालिका नं0 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के तनाव में सार्थक अन्तर नही है अत: शून्य परिकल्पना की 'स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के तनाव में सार्थक अन्तर नही है' स्वीकृत की जाती है। सम्बन्धित समूहों के तनाव सम्बन्धी प्राप्तांकों के मध्यमानों में जो अन्तर परिलक्षित हो रहा है वह किसी अन्य कारण से हो सकता है जो सार्थक नही है। इसका प्रमुख कारण यह है कि दोनों ही स्थायी अध्यापक है दोनो एक जैसी परिस्थितियां वहन करते है।

3. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के तनाव का तुलनात्मक अध्ययन – प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के तनाव में अन्तर की सार्थकता देखने हेतु क्रान्तिक अनुपात की गणना की गई है जिसका विवरण तालिका नं0 3 में दिया गया है।

तालिका नं0 3

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात (CR)	सार्थकता स्तर	परिणाम
पुरूष शिक्षा मित्र	40	65.60	13.51	0.87	असार्थक	H_0 स्वीकृत
महिला शिक्षा मित्र	82	63.20	15.60			

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से विदित होता है कि प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रो एवं महिला शिक्षामित्रो के तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है। अत: शून्य परिकल्पना 'प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही है' स्वीकृत की जाती है। सम्बन्धित समूहों के मध्यमानों में जो अन्तर परिलक्षित हो रहा है वह प्रतिदर्शजन्य विचलनों के फलस्वरूप हो सकता है। अत: हम कह सकते है कि पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों में तनाव एक समान पाया जाता है । इसका कारण भी यह हो सकता है कि दोनो समूहों के शिक्षकों को एक जैसी समस्याओं का सामना करना पडता है।

4. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव का तुलनात्मक अध्ययन – प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में अन्तर की सार्थकता को जानने हेतु क्रान्तिक अनुपात की गणना की गई है जिसका विवरण तालिका नं0 4 में दिया गया है।

तालिका नं0 4

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात (CR)	सार्थकता स्तर	परिणाम
स्थायी शिक्षक	86	112.70	28.10	2.81	0.01	H_0 निरस्त
शिक्षामित्रो	122	126.20	42.20			

तालिका नं0 2 में प्रदर्शित स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव सम्बन्धी प्राप्तांको के मध्यमान मूल्यों, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात मान के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में सार्थक रूप से अधिक पाया जाता है। इसलिए शून्य परिकल्पना कि 'स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों में कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है' निरस्त की जाती है। सम्बन्धित समूहों के मध्यमानों से स्पष्ट हो रहा है कि स्थायी शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षामित्रों कार्यदबाव अधिक पाया जाता है। इसका कारण यह हो सकता है कि स्थायी अध्यापक शिक्षामित्रों से ज्यादा काम लेते है जबकि स्वयं वह ज्यादा काम नही करते है।

5. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के कार्यदबाव का तुलनात्मक अध्ययन –प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के कार्यदबाव में अन्तर की सार्थकता हेतु क्रान्तिक अनुपात की गणना की गई है जिसका विवरण तालिका नं0 5 में दिया गया है।

तालिका नं0 5

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात (CR)	सार्थकता स्तर	परिणाम
स्थायी शिक्षक	.54	117.14	33.10	1.11	असार्थक	H_0 स्वीकृत
स्थायी शिक्षिकाएं	32	11056	21.80			

तालिका नं0 5 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है। अत: शून्य परिकल्पना कि स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है स्वीकृत की जाती है। सम्बन्धित समूहों के मध्यमानों पर दृष्टिगत करने से कार्यदबाव में अन्तर परिलक्षित हो रहा है लेकिन यह अन्तर सार्थक नही है यह अन्तर किन्ही अन्य कारणों से हो सकता है। अत: निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के कार्य दबाव में सार्थक अन्तर नही है। इसका कारण यह हो सकता है दोनों समूहों के शिक्षकों के लिए परिस्थितियॉ एक समान होती है।

6. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के कार्यदबाव का तुलनात्मक अध्ययन – प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में अन्तर की सार्थकता हेतु क्रान्तिक अनुपात की गणना की गयी है जिसका विवरण तालिका नं0 6 में दिया गया है।

तालिका नं0 6

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर	परिणाम
पुरूष शिक्षामित्र	40	113.20	25.08	1.87	असार्थक	H_0 स्वीकृत
महिला शिक्षामित्र	82	125.24	45.9			

तालिका नं0 6 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है। अत: शून्य परिकल्पना कि 'प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही है' स्वीकृत की जाती है। सम्बन्धित समूहों के मध्यमानों के अवलोकन से इन समूहों के कार्यदबाव में अन्तर परिलक्षित हो रहा है लेकिन यह अन्तर वास्तविक न होकर सयोंगवश है अर्थात सार्थक नही है। इससे स्पष्ट होता है कि पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों में कार्यदबाव एक समान पाया जाता है। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि दोनों समूहों के सामने एक जैसी परिस्थितियॉ होती है तथा दोनो को एक जैसी समस्याओं का सामना करना पडता है।

निष्कर्ष– प्रस्तुत अध्ययन द्वारा निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए है।

1. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के तनाव में सार्थक अन्तर पाया जाता है। स्थायी शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षामित्रों में तनाव अधिक पाया जाता है।
2. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है।
3. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के तनाव में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है। अर्थात पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों में तनाव एक समान पाया जाता है।
4. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में सार्थक अन्तर पाया जाता है। स्थायी शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षामित्रों में कार्यदबाव अधिक पाया जाता है।
5. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है।
6. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों के कार्यदबाव में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है। अर्थात पुरूष शिक्षामित्रों एवं महिला शिक्षामित्रों में कार्यदबाव एक समान पाया जाता है।

शैक्षिक निहितार्थ– प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि स्थायी शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के तनाव एवं कार्यदबाव में अन्तर पाया जाता है। प्रस्तुत अनुसंधान द्वारा प्राप्त परिणामों का शासन द्वारा शैक्षिक उपयोग किया जा सकता है। प्राथमिक विद्यालयी शिक्षा में शिक्षकों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। शिक्षा बालक का चहुमुखी विकास करने में सहायक होती है अत: प्राथमिक स्तर पर तो शिक्षकों की जिम्मेदारियां और भी बढ जाती है क्योंकि इसी स्तर पर बालकों के भविष्य की इमारत की नीवं रखी जाती है। अत: इस स्तर पर शिक्षकों का ध्यान तनाव व कार्यदबाव की तरफ न रहकर बालकों का विकास करने की तरफ होना चाहिए। अत: शिक्षामित्रों में कार्यदबाव एवं तनाव को कम करने हेतु सरकार द्वारा ऐसी नीतिया बनायी जानी चाहिए जिनसे उनका शोषण रोका जा सकें। जैसे शिक्षामित्रों का मानदेय बढाना चाहिए, 12 माह का मानदेय देना चाहिए, उनके नवीनीकरण की प्रक्रिया को सरल बनाना चाहिए, महिला शिक्षामित्रों के लिए पर्याप्त प्रसूति अवकाश तथा अविवाहित महिला शिक्षामित्रों को वैवाहिक स्थल पर अपने पद की प्राप्ति की सुविधा मिलनी चाहिए साथ ही साथ उनके भविष्य के सम्बन्ध में भी विचार किया जाना चाहिए कि आज का शिक्षामित्रो कल का बेरोजगार न हो जाए। इस प्रकार की नीतियों द्वारा हम शिक्षामित्रो के तनाव एवं कार्यदबाव को कम कर सकते है। जिससे शिक्षामित्रों की शिक्षण दक्षता को बढाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **श्रीवास्तव, डी0 एन0 (1982) :** 'आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ संख्या 82–92।
2. **जगदीश व श्रीवास्तव ए0के0 (1983) :** 'परसीब्ड रॉल स्ट्रैस एण्ड जॉब सटिसफेक्शन' पर्सपिक्टिव इन साइकोलॉजिकल रिसर्चस वाल्यूम 8, नं0–2, पृष्ठ संख्या 101–103।
3. **भट्ट, डी0 जी0 (1887) :** 'जॉब स्ट्रैस, जॉब इनवाल्वमेन्ट एण्ड सैटिसफेक्शन ऑफ टीचर्स' 'इण्डियन जनरल्स ऑफ साइकोलॉजी एण्ड एजूकेशन', वाल्यूम नं0–28 पेज 87–94।
4. **प्रकाश, जी0पी0 (1990) :** 'आक्यूपेशनल स्ट्रैस एण्ड कापिंग इन यूनिवर्सिटी फैकल्टी मैम्बर्स' जनरल आफ साइकोलॉजी, पृष्ठ संख्या 37–43।
5. **श्रीवास्तव, बीना (1996) :** 'स्ट्रैस एमांग इन सर्विस एण्ड स्टूडेन्ट टीचर्स', पर्सपिक्टिव इन साइकोलाजी रिसर्चस, वाल्यूम 19 एवं 20।
6. **अग्रवाल, कृष्ण (1998) :** 'जॉब सैटिसफैक्शन एण्ड आक्यूपेशनल स्ट्रैस इन रिलेशन टू फैक्ट प्रोक्सिमिटी विद् टॉप मैनेजमेन्ट', इण्डियन जनरल ऑफ साइकोलॉजी एण्ड एजूकेशन, वाल्यूम नं0–29, नं0–2, पृष्ठ संख्या 113–114।
7. **आनन्द, वर्षा (1998) :** 'टीचर्स आक्यूपेशन स्ट्रैस एण्ड सेल्फ स्टीम पर्सपेक्टिव इन साइकोलॉजिकल रिसर्चस', वाल्यूम 21, पृष्ठ संख्या 105–109।
8. **ज्ञानानी, टी0सी0 (1998) :** 'स्ट्रैस एण्ड स्ट्रैन एमांग, टीचर्स वर्किंग इन हायर एजूकेशन इन्स्टीट्यूट ऑफ डिफरेन्ट ऑरगेनाइजेशनल क्लाइमेट', इण्डियन जनरल ऑफ साइकोमैट्री एण्ड एजूकेशन, वाल्यूम–29, नं0–1, पृष्ठ संख्या 53–59।
9. **कपिल, एच0के0 (1999) :** 'सांख्यिकी के मूल तत्व', पंचम संस्करण विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा पृष्ठ संख्या 627–642।
10. **सैनी अंजलि व दास, इरा (2001) :** 'इफैक्ट ऑफ स्टूडेन्टस एटीट्यूड टुवर्ड्स टीचर्स अपॉन फीमेल स्कूल टीचर्स' इन जनरल्स ऑफ साइकोलाजी एण्ड एजूकेशन, वाल्यूम 32, नं0 2, पृष्ठ संख्या 101–104

****

सिद्धार्थ गौतम के सिद्धान्त एवं उसकी प्रासंगिकता

डॉ. बुद्धरतन राजौरिया *

प्रस्तावना – जब सिद्धार्थ गौतम ने यह देखा कि संसार में कष्ट और दुख है यह एक ऐसा यथार्थ सत्य है जिससे इनकार नहीं किया जा सकता है। लेकिन गौतम इस बात का पता लगाने चाहते थे कि दुख को कैसे दूर किया जाये साख्य दर्शन के पास इस प्रश्न का उत्तर नहीं था इसलिये अपना सारा ध्यान इसी प्रश्न को हल करने ये लगाया था कि संसार के कष्टों और दुखों को कैसे दूर किया जाये। स्वभाविक तोर पर पहला प्रश्न जो अपने आप से पूछा वह यही था कि वे कौन से कारण है वे कौन से हेतु हे जिसकी वजह से एक व्यक्ति कष्ट उठाता है दूसरा सुख भोगता है उसका दूसरा प्रश्न था दुख का नाश कैसे किया जाये इन दोनों प्रश्नों का उत्तर सही सही मिल गया यही समयक सम्बोधि कहलाता है इसी तरह सिद्धार्थ गौतम को पीपल के वृक्ष के नीचे बोधि ज्ञान प्राप्त किया और वे बुद्ध कहलाये भगवान बुद्ध के बताये सिद्धान्त इस तरह से है।

भगवान बुद्ध के सिद्धान्त

चार आर्य सत्य – 'आर्य सत्य' इन सामासिक पदों में आर्य शब्द का अर्थ है ज्येष्ठ या श्रेष्ठ। अत: आर्य सत्य अर्थात् श्रेष्ठ सत्य है।

चतुरार्य सत्य बौद्ध धर्म दर्शन के मुख्य अंग हैं। यह उसके हृदय के समान है। अन्य सिद्धान्त इन्हीं से विकसित हुये हैं। इन चार आर्य सत्यों का परवर्ती भारतीय दर्शन पर गंभीर प्रभाव पड़ा है।

(1) दुख आर्य सत्य – जन्म, बुढ़ापा, मृत्यु, रोना, शोक करना, पीड़ित होना, चिंतित होना, परेशान होना यह सब दुख है।

इच्छित वस्तु का न मिलना दुख है। अप्रिय व्यक्ति का समागम और प्रिय व्यक्ति का वियोग दुख है। संक्षेप में पाँच उपादान स्कन्ध ही दुख हैं। इन पाँच उपादान स्कन्धों का संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है–

(i) रूप उपादान स्कन्ध – रूप उपादान स्कन्ध के अन्तर्गत पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि चार महाभूत और इन चारों महाभूतों से निर्मित जो भी सूक्ष्म या स्थूल, बाह्य या आभ्यन्तर दूर या निकट और भूत, भविष्य, वर्तमान का प्रिय या अप्रिय रूप जो भी रूप है वह सभी समाहित है।

(ii) वेदना उपादान स्कन्ध – किसी भी वस्तु से उत्पन्न होने वाली सुखात्मक, दुखात्मक अथवा असुखादुखात्मक अनुभूतियाँ वेदना उपादान स्कन्ध के अंतर्गत आती हैं।

(iii) संज्ञा उपादान स्कन्ध – पूर्व अंकित संस्कारों द्वारा परिचय या पहचान की यह वही व्यक्ति है यह संज्ञा है।

(iv) संस्कार उपादान स्कन्ध – संस्कार रूप, वेदना एवं संज्ञा की दिमाग पर पड़ा रहने वाला संस्कार जिसकी सहायता से पहचाना जाता है यह वही व्यक्ति है संस्कार है।

(v) विज्ञान उपादान स्कन्ध – चेतना या मन की संज्ञा है विज्ञान। ये पाँचों स्कन्ध जब तृष्णा के हेतु बनते हैं तो उन्हें उपादान स्कन्ध कहा जाता है। तृष्णा आश्रित होने के कारण ही ये पाँचों उपादान दुख रूप कहे गये हैं।[2]

(2) दुखसमुदाय आर्य सत्य – दुख का कारण उसका हेतु राग द्वेष युक्त तृष्णा है। तृष्णा तीन प्रकार की है– काम तृष्णा, भव तृष्णा एवं विभव तृष्णा। यह तृष्णा ही दुख के समुदय के संबंध में आर्य सत्य है काम (भोगों की) तृष्णा के कारण राजा राज से, माता पुत्र से, पिता पुत्र से, भाई–भाई से, बहन भाई से, मित्र–मित्र से लड़ते हैं। कभी आपस में एक दूसरे की हत्या भी कर देते हैं। यही दुख समुदाय आर्य सत्य है। विषय भोगों को भोगने की इच्छा से बार–बार जन्म लेने की तृष्णा को भव तृष्णा कहा जाता है।

विभव तृष्णा दूसरों का अहित करती है। बैर और दुश्मनी के मूल में यही तृष्णा होती है और यही महायुद्धों का कारण बनती है। विभव तृष्णा विनाश की कामना है।

भगवान बुद्ध ने कहा है समय आता है जब महासमुन्द्र सूख जाता है किन्तु अविधा एवं तृष्णा से संचालित संसार चक्र में घूमने वाले प्राणियों के दुख का अन्त नहीं होता।

यह महापृथ्वी जल जाती है नहीं रहती परन्तु प्राणियों की तृष्णाओं का कोई अन्त नहीं है।

3. दुख निरोध आर्य सत्य – तृष्णा के समपूर्ण वैराग्य निरोध एवं त्याग से वेदना संज्ञा संस्कार एवं विज्ञान स्कन्धों का अवशेष निरोध हो जाता है तथा निरूद्ध हो जाता है। जरामरण रूपी चक्र का अविराम चक्र वर्तन यही दुख निरोध आर्य सत्य कहलाता है।

4. दुख निरोध गामिनी प्रतिपदा आर्य सत्य – इसी को आर्य अष्टांगिक मार्ग भी कहा जाता है क्योंकि इसके आठ अंग है। बुद्ध से प्रारम्भ करके सम्पूर्ण बौद्ध परम्परा में आर्य अष्टांगिक मार्ग का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है और साधक मात्र के लिये यह निर्वाण साधना का सहज, सुगम, सुबोध व निश्चित मार्ग है।

इसी को चतुरार्य सत्य कहा गया है वस्तु मात्र के प्रति मध्यम दृष्टिकोण इस कार्य का अष्टांगिक मार्ग का प्रतिपाद्ध है और यही बौद्ध दर्शन की केन्द्रीभूत दृष्टि है। भगवान ने जीवन के दोनों अन्तों अतिवादिताओं का त्याग अर्थात् काम भोगों में लिप्त होना और न कठोर आत्मकलेश जप्पत करना, ऐसे मध्यम मार्ग पर चलकर निर्वाण प्राप्ति का सन्देश दिया है जिस प्रकार चार पदों में चतुरार्य सत्य है श्रेष्ठ है धर्मो में वेराग्य तथा द्विपद प्राणियों में चक्षुमान को श्रेष्ठ बताया गया है उसी प्रकार मार्गो में आर्य अष्टांगिक मार्ग को श्रेष्ठ बताया गया है। दृष्टि की विशुद्धि के लिये इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है।

अष्टांगिक मार्ग – इस आर्य अष्टांगिक मार्ग के आठ अंग हैं, जो शील, समाधि एवं प्रज्ञा में विभक्त है–

(क) प्रज्ञा– 1. सम्यक दृष्टि

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) जी.एल.एस. कॉलेज बानमोर, मुरैना (म.प्र.) भारत

2. सम्यक संकल्प
(ख) शील– 3. सम्यक वाचा
4. सम्यक कर्मान्त
5. सम्यक आजीविका
(ग) समाधि– 6. सम्यक व्यायाम
7. सम्यक स्मृति
8. सम्यक समाधि

1. सम्यक दृष्टि – विभग में दुख, दुख के कारण, दुख के निरोध एवं दुख निरोधगामी मार्ग के ज्ञान को सम्यक दृष्टि कहा गया है। जिस समय साधक लोकोन्तर ध्यान की भावना करके काम रहित प्रथम ध्यान भूमि में प्रवेश कर दुखगामी मूढ़ता का नाश करता है उस समय मूढ़ता रहित सम्यक दृष्टि जो धर्म विचय नामक बौध्याग का मार्गपात्र भी है उसी को सम्यक दृष्टि कहा गया है।

मज्झिम निकाय के अनुसार दुराचरण एवं उसके कारणों को सम्यक रूप से पहचानना, सदाचरण तथा उसके मूल कारण को जाना सभी सम्यक दृष्टि कहा गया है।

इसी प्रकार इस धर्म में श्रद्धा रखने को भी सम्यक दृष्टि कहा जाता है। विद्धानों ने इसके कई अर्थ किये हैं जैसे ठीक दृष्टिकोण विश्वास दर्शन श्रृद्धा अथवा विचार। प्रज्ञा पारमिता शहस्त्रिका के अनुसार बुद्ध, धर्म, सेध में श्रृद्धा रखना सम्यक दृष्टि है। महायान सुत्रालंकर इसे वस्तुओं के वास्तविक यथाभूत ज्ञान को समयक दृष्टि कहता है।

धम्मचक्र सुत्त में चार आर्य सत्यो को ठीक ज्ञान को सम्यक दृष्टि कहा गया है।

सम्यक दृष्टि का आशय सम्पूर्ण चराचर सृष्टि एवं वस्तुजात मात्र के प्रति अनित्य है दुख एवं अनात्मक दृष्टिकोण रखना है जो बौद्ध साधना का प्रमुख्य स्तम्भ है।

भगवान ने वादो में न पड़कर भूत, भविष्य ओर वर्तमान दुख एवं दुख के कारणों के प्रति सम्यक दृष्टिकोण अपनाकर उसे समाप्त करने का मार्ग बताया है। सभी अकुशल (पाप बुरे कर्म) के मूल हेतु लोभ, मोह, द्धेष और इनके मूल अविधा को पहचाना तथा पहचानकर इन अकुशल मूलों का प्रहाण करना भी सम्यक दृष्टि का लक्षण है।

2. सम्यक संकल्प – अविधा मूलक संस्कारों को प्रहाण करने हेतु प्रज्ञा युक्त संकल्प का नाम ही सम्यक संकल्प है।

सम्यक संकल्प के विषय में भगवान ने कहा है कि नेष्क्रम्य, अव्यापाद एवं अविहिंसा का संकल्प सम्यक संकल्प है।

सम्यक संकल्प का आशय है कि सभी प्रकार के तर्क, वितर्क, विचार व क्रियाओं में एकाग्रतपापूर्वक चित में किसी प्रकार के अविधा, मूलक सकल्पनो की कल्पना न होने देना तथा आर्य अष्टांगिक मार्ग पर चित को आरूढ़ करना सम्यक संकल्प है। दीर्घ निकाय में छ: प्रकार के संकल्प बताये गये है। तीन कुशल एवं तीन अकुशल संकल्प है। काम संकल्प, व्यापाद संकल्प एवं विहिंसा सकल्प। यह तीन अकुष संकल्प है। तथा नेष्क्रम संकल्प, अव्यापाद संकल्प, एवं संकल्प ये तीन कुषल संकल्प है।

3. सम्यक वाचा (वाणी) – सम्यक वाचा का अर्थ इस प्रकार है कि आदमी (i) सत्य ही बोले, (ii) आदमी असत्य न बोले, (iii) आदमी दूसरों की बुराई न करता फिरे, (iv) आदमी दूसरों के बारे में झूठी बातें न फैलाते फिरे, (v) आदमी किसी के प्रति गाली–गलौच का व कठोर वचनों का व्यवहार न करे, (vi) आदमी सभी के साथ विनम्र वाणी का व्यवहार करे, (vii) आदमी व्यर्थ की बेमतलब मूर्खतापूर्ण बातें न करता रहे बल्कि उसकी वाणी बुद्धिसंगत हो सार्थक हो और सोद्धेश्य पूर्ण हो।

सम्यक वाणी का व्यवहार न किसी के भय की अपेक्षा रखता है और न किसी के पक्षपात की। इसका इससे कोई भी संबंध नहीं होना चाहिये कि कोई बड़ा आदमी उसके बारे में क्या सोचने लगेगा अथवा सम्यक वाणी के व्यवहार से उसकी क्या हानि हो सकती है।

सम्यक वाणी का मापदण्ड न किसी ऊपर के आदमी की आज्ञा है और न किसी व्यक्ति को हो सकने वाला व्यक्तिगत है।

4. सम्यक कर्मान्त – सम्यक कर्मान्त योग्य व्यवहार की शिक्षा देता है। हमारा हर कार्य ऐसा हो जिसे करते समय हम दूसरों की भावनाओं और अधिकारों का ख्याल रख सकें। सम्यक कर्मान्त का मापदण्ड यह है कि हमारे कार्य जीवन के जो मुख्य नियम हैं उनसे अधिक से अधिक समन्वय रखता हो।

सम्यक कर्मान्त का यह आशय है कि मनुष्य को प्राणी हिंसा से विरत रहना चाहिये, बिना दिये वस्तु नहीं लेना चाहिये। काम भोगों के मिथ्याचार (व्यभिचार दुराचार) से विरत रहना चाहिये। मादक पदार्थों का सेवन नहीं, चोरी नहीं करना आदि यही मनुष्य के सम्यक कर्मान्त हैं।

एक आदमी जीव हिंसा नहीं करता वह दण्ड का प्रयोग नहीं करता, शस्त्र का उपयोग नहीं करता, लज्जावान, दयाशील एवं सभी प्राणियों पर अनुकम्पा करता है क्योंकि सभी प्राणी दण्ड से त्रस्त हैं। अपने समान सभी को समझकर किसी को भी दण्डित नहीं करना चाहिये। यही सब बातें सम्यक कर्मान्त के अन्तर्गत आती हैं।

5. सम्यक आजीविका – प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जीविका कमानी ही हाती है लेकिन जीविका कमाने के ढंग और ढंगों में अन्तर हो। कुछ बुरे हैं, कुछ भले हैं। बुरे ढंग वे हैं जिनसे किसी को हानि होती है अथवा किसी के प्रति अन्याय होता है।

अच्छे ढंग वे हैं जिनसे आदमी बिना किसी को हानि पहुँचाये अथवा बिना किसी के साथ अन्याय किये बिना अपनी जीविका कमा सकता है यही सम्यक आजीविका है।

सम्यक आजीविका के लिए निम्न प्रकार के व्यापारों का निशेद्य किया गया है। शस्त्र व्यापार, पशु व्यापार, मांस व्यापार, मादक पदार्थ व्यापार, विश व्यापार आदि।

व्यक्ति से समाज बनता है। वह समाज का घटक होने से उसके कार्यो का समाज पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति का जीवन सम्यक आजीविका द्धारा शुद्ध रहेगा तो समाज में किसी प्रकार का आपसी संघर्ष और विद्धेष उत्पन्न नहीं होगा।

6. सम्यक व्यायाम – इन्द्रियों पर संयम, बुरी भावनाओं को रोकना, अकुशल धर्म अर्थात् पाप उत्पन्न न होने देने के लिए निश्चय करना, परिश्रम करना, उद्योग करना, चित को पकड़ना और रोकना कुशल धर्म अर्थात् सत्कर्म की उत्पत्ति स्थिति के लिए निश्चय करना, बुरी भावनाओं को रोकना, अच्छी भावना को उत्पन्न करना, बुरी भावना को निकाल देना, अच्छी भावना की रक्षा करना यह सम्यक व्यायाम है।

सम्यक व्यायाम अविधा को नष्ट करने की प्रथम सीढ़ी है। इस दुखद कारागार के द्धार तक पहुँचने का रास्ता ताकि उसे खोला जा सके। सम्यक व्यायाम के चार उद्धेश्य हैं–

1. एक है अष्टांगिक मार्ग विरोधी चित–प्रवृत्तियों की उत्पति को रोकना।
2. दूसरा है ऐसी चित–प्रवृत्तियों को दबाना जो उत्पन्न हो गई हैं।

3. तीसरा है ऐसी चित-प्रवृत्तियों को उत्पन्न करना जो अष्टांगिक मार्ग की आवश्यकता की पूर्ति में सहायक हों।
4. चौथा है ऐसी उत्पन्न चित-प्रवृत्तियों में और भी अधिक वृद्धि करना तथा उनका विकास करना है।

7. सम्यक स्मृति – होश जागरूकता, काया, वेदना, चित और मन के धर्मो की ठीक स्थितियाँ, चलते-फिरते, बैठते-सोते उनके मलिन क्षण विर्ध्वास आदि होने का, मैं क्या कर रहा हूँ क्या करना चाहिये इसका सदा स्मरण रखना। मन में जो अकुशल विचार उठते हैं उनकी चौकीदारी करना सम्यक स्मृति है।

बुद्धत्व प्राप्ति के पूर्व बोधिसत्व स्मृति प्रस्थानों का अभ्यास कर उनका विकास करते हैं। स्मृति प्रस्थानों को बोधिसत्व चर्या का प्रथम सोपान मानना चाहिये।

भगवान बुद्ध ने ज्ञान लाभ से पूर्व स्मृति का सतत् अभ्यास किया था। उन्होंने कई स्थलों पर कहा है। मैंने न बदने वाला वीर्य आरम्भ किया था, उस समय मेरी स्मृति अमुषित एवं जाग्रत थी जहाँ भी ध्यान भावना की बात आती है और ध्यान भावना करने वाला भिक्षु का जिक्र आता है वहाँ अनिवार्यतः यह कहा जाता है कि यहाँ एक भिक्षु अरण्य में वृक्ष के नीचे एकान्त में आसन मानकर शरीर को सीधा रखकर स्मृति को सामने उपस्थित रखकर ध्यान करता है।

8. सम्यक समाधि – समाधि का मतलब है चित की एकाग्रता। इसमें संदेह नहीं है कि इससे ध्यानों को प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन ध्यान की अवस्थायें अस्थायी हैं इसलिये संयोजन या बंधन भी अस्थायी तौर पर ही स्थगित रहते हैं। आवश्यकता है चित में स्थायी परिवर्तन लाने की इस प्रकार का स्थायी परिवर्तन सम्यक समाधि के द्वारा ही लाया जा सकता है।

खाली समाधि एक नकारात्मक स्थिति है क्योंकि यह इतना ही तो करती है कि संयोजनों को अस्थायी तौर पर स्थगित रखें इसमें मन का स्थायी परिवर्तन निहित नहीं है। सम्यक समाधि एक भावात्मक वस्तु है। यह मन को कशुल कर्मो को एकाग्रता के साथ चिन्तन करने का अभ्यास डालती है और मन की संयोजनोत्पन्न अकुशल-कर्मो की ओर आकर्शित होने की प्रवृत्ति को ही समाप्त कर देती है।

सम्यक समाधि को कुशल और हमेशा कुशल ही कुशल (भलाई ही भलाई) सोचने की आदत डाल देती है, सम्यक समाधि मन को वह अपेक्षित शक्ति देती है जिससे आदमी कल्याणरत रह सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पालिवाड़ मय वोधिसत्व सिद्धान्त - भदन्त सांवगी मेघकर
2. भगवान बुद्ध उनका धर्म - भदन्त आनन्द कोसल्यापन
3. वोधिसत्व सिद्धान्त - भदन्त सांवगी मेघकर
4. भगवान गौतम बुद्ध - भदन्त बोधानंद

****

कुचबदिया समाज का बदलता स्वरूप : एक शैक्षिक एवं भौगोलिक अध्ययन

डॉ. हीरालाल चौधरी *

शोध सारांश – आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व यह समाज ब्लाक अमरपाटन जिला सतना में आगमन हुआ। कहा जाता है कि घाघरा नदीं उत्तरप्रदेश में अचानक नदीं में उफान आ गया। जिससे इनका निजी निवास ग्राम देवरिया जिला गोरखपुर उ.प्र. भी बाढ़ की चपेट में आ गया। जिससे पूरी वस्ती किनारे वसे होने के कारण प्रभावित हो गई और जो भी इनके पास था। वह भी वह गया। इसके साथ–साथ जन–धन की हानि हुई ये व्यक्ति खाने कमाने के हिसाब से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भीख माँगकर जीवन यापन करते यहाँ तक पहुँच गये।

कुचबधिया समाज के केवल दस व्यक्ति एक साथ समूह में आये थे। उस जमाने में ब्लाक अमरपाटन के श्रीगिलई ताम्रकार चेयरमैन थे। इन्होंने इनकी दीनदशा को देखकर इन पर दया कर तहसील के पीछे शहर से दूर वीरान स्थान पर जिगधरा तलाब के पास इनकी झोपड़ी बनबाई। और उनकों स्थाई स्थान दिया गया। इससे पहले इस समाज के लोग व्यक्ति अपनी अजीविका के लिए एक गाँव से दूसरे गाँव में भीख मागने शाम (रात्रि) को विश्राम उसी गाँव में करते जहाँ रात्रि हो जाती थी। इनके साथ महिला–पुरूष बच्चे भी रहते थे। किन्तु पुरूष वर्ग शिकार करते हुए चलते थें। तो इनके साथ कम–से–कम एक टोली में दस व्यक्ति दस कुत्तों के साथ चलते थे। गाँव में इनके आने की खबर गाँव के कुत्तों को हो जाती है।

कहा जाता है कि ये समाज एक खानाबदोस की ही एक शाखा हैं। जो कि एक घुमक्कड़ जाति होती है। ये इस समुदाय से है जो अपना स्थान बदलते रहते थें। खाना बदोस, बंजारा, कुचबदियाँ समाज से काफी समानता पाई जाती है। कहाँ जाता है कि इस समाज का अमरपाटन क्षेत्र में आगमन हुआ तो केवल 10 व्यक्ति ही थे। जिसमें 6 पुरूष 4 महिलाऐं सामिल थी। आज वर्तमान समय में कुचबदिया वस्ती अमरपाटन वार्ड 15 में इनकी परिवार संख्या 30 घर वोटर 250 तथा वस्ती की कुल जनसंख्या लगभग 600 से ऊपर (0 से 60 वर्ष के ऊपर) तक के व्यक्ति निवास करते हैं। इसका क्षेत्रफल लगभग 70×1000 मीटर तक फैला है। इनमें सबसे पहले व्यक्ति का नाम बुलाकी कुचबदिया था।

शोध प्रविधि – इस शोध शीर्षक **कुचबधिया समाज का बदलता स्वरूप : एक शैक्षिक एवं भौगोलिक अध्ययन में** प्राथमिक तथ्यों के साक्षात्कार के माध्यमों द्वारा अध्ययन किया गया है। यहाँ तक सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनीतिक तथ्यों का अध्ययन भी समाहित है। तथ्यों की पुष्टि हेतु कुचबदिया वस्ती वार्ड क्रमांक 15 के सदस्यों द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य :

1. सामाजिक स्तर
2. आर्थिक स्तर
3. सांस्कृतिक रहन–सहन, खान–पान
4. धार्मिक
5. लोक नृत्य गायन, तीज त्यौहार

समस्याऐं :

कुचबधियाँ समाज का सामाजिक स्तर – सामाजिक स्थिति शरीर मैला, हाथ – पैर नग्न, बाल रूखे, बिन तेल कंघी के शरीर से बदबू, फटे, पुराने कपड़े, साफ–सफाई से दूर नग्न बच्चे बिना कमीच नग्न बदन बाले। इस समाज की महिला और पुरूष दोनों ही घूमफिर कर अपना जीवन यापन करने वाली जाति है।

आवास – आवास घास–पूस के बने होते हैं। एवं मिट्ठी की दीवार एवं उसके ऊपर टीन चद्र आदि का क्षत होता है।

भोजन – अपने भोजन में अधिकतर माँस–मछली, अण्ड़ा, शिकार एवं रोटी चावाल।

नशा – बीड़ी, तम्बकू, शराब आदि का नशा करते हैं।

विवाह की रीति–रिवाज – हिन्दी रीति–रिवाज से करते ही कपड़ा (कोश मूसा) इनके कपड़ों में अधिकत्तर देशी लहगाँ सर्ट, कमीज, फरिया होती थी। किन्तु आज समय के अनुसार अपने पहनावे को बदलकर सभी की तरह कपड़े पहनना शुरू कर दिये हैं।

आर्थिक स्थिति – व्यवसाय घुम्मकड़ जाति, बंजारा, खाना बदोस, कुचबदिया समाज के व्यक्ति अधिकत्तर भीख माँगकर गुजारा कर अपना जीवन यापन करते थें। भीख माँगने के लिए ये अपने रूप को इतना डरावना बना लेते हैं कि गाँव के व्यक्ति इन्हें देखकर अपने घर के दरबाजे बन्द कर लेते हैं। इन्हें अपने हाव भाव के कारण लोग इन्हें हेय दृष्टि से देखते थें। ये अपनी हट के कारण ये लोग घरों में डटे रहकर उनसे जबरदस्ती भीख लेते थें। यदि उनके द्वारा भीख न दी जाये तो ये लोग टोने जादू का भी डर दिखाते थें। यदि इसी बीच किसी व्यक्ति की तबयत खराब हो जाती थी। तो कुचबधियाँ समाज का नाम लगता था। कि वे ही टोना जादू कर दिया है। इसके अलाबा जंगलों या खेतों में काम करते थें।

सामाजिक स्थिति – रहन–सहन हमारी सामाजिक संरचना खुद इस प्रकार है इनमें जातिय चक्र में अनुसूचित जाति अधिनियम 1976 के अन्तर्गत सूची में अनुक्रमांक 34 पर अंकित है। अनुसूचित जाति में आते हैं। इनकी अपनी भाषा गिहार है। ये जब आपस में बात करते हैं उसी अपनी स्वयं की भाषा का प्रयोग करते हैं। जो काम व्यक्ति के सामने से परे हैं। अर्थात् अनभिज्ञ हैं। इसके अलावा हिन्दी एवं शैलीय भाषा (क्षेत्रीय भाषा) का ज्ञान रखते एवं बोलते हैं। गिहार भाषा के उपयोग करने के कारण ही इन्हें गिहार समाज भी

* अतिथि विद्वान (भूगोल) यूनिक कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी, अमरपाटन, जिला सतना (म.प्र.) भारत

कहा जाता है। उनकी नातेदारी-रिस्तेदारी, अमरपाटन, बेला, देवेन्द्रनगर, दमोह, सागर, कटनी, विदिशा, जबलपुर, रीवा, (रानी तलाब) देवरिया जिला गोरखपुर, कोण्डाघाट, जिला अलिराजपुर उत्तरप्रदेश आदि का बर्चस्व है। ये इन्हीं स्थानों पर शादी विवाह एवं नातेदारी करते हैं। इस समाज के व्यक्ति चूँकि वस्ती गाँव शहर से दूर निवास होने के कारण ये नैतिक ज्ञान, सामाजिक ज्ञान, संस्कार आदि से वंचित होने के कारण इस समाज का विकास किसी प्रकार का नहीं हो सका था। चूँकि आज के वर्तमान समय में बदलते वातावरण का प्रभाव इस समाज पर भी पड़ा है।

समाधान – इसके पहले इस समाज समुदाय का जीवन स्तर बहुत दयनीय, दु:खद व निर्धनता में बीतता था। इस समाज के व्यक्ति के पास ऐसा कुछ साधन नहीं था। न ही शिक्षित था कि अपने से कुछ व्यवसाय कर ले और अपना भरण पोषण कर ले। अत: उनकी जिन्दगी बद से वदतर थी। जो भीख में मिलता उसी से अपने परिवार का भोजन उपलब्ध कराया जाता था।

उनके कपड़े फटे-पुराने, कमीज, पैजामा, धोती, चोली, घाघरा, लहगाँ आदि होते थें। जो अपनी दिनचार्या में काम आते थें। महिलाऐं लहगाँ पहनकर गाँव में भीख मागने के लिए एक हाथ में सिलवर का कटोरा, एवं एक हाथ में पतली छोटी से डंडी, लाठी लेकर चलती एवं सिर पर भीख से मिला अनाज कि पोटली होती थी। उनके गाँव में प्रवेश करते ही गाँव के बच्चे देखने के लिए भीड़ लग जाती थी। एवं गाँव के आवारा कुत्तो भोकते हुए उनके पीछे-पीछे तब तक रहते। जब तक ये औरते गाँव से बाहर नहीं जाती है। भीख मागते समय में औरते अपने शरीर और कपड़ों को ऐसा बनवाती जिससे लोगों को भय हो वे अपने घर से अनाज और खाना-पीना दान दे सके। उसके अलावा लहँगा चोली में औरते डायन का रूप धारण कर घरों में भीख मागती। एवं टोने जादू का डर-भय पैदा करती। जिससे कुछ लोग दया वस, कुछ लोग डर-भय वस एवं कुछ लोग नफरत वश घरों से इन्हें भीख देते। और भला बुरा कहती हैं कि ये काम नहीं करती है। भीख मागने चली आती है। कभी-कभी ये औरते डायन का रूप धारण किये हुए होती थी। इनकी वेश-भूसा इनके मृत्यु का कारण होता था। क्योंकि जब ये अकेली होती थी तब गाँव के लोग इन्हें पत्थरों और डंडों से मार देते थें। क्योंकि उन पर टोने-जादू करती हैं। इस डर के कारण लोग इनकी हत्या कर देते हैं। इनके पीछे और कई कारण हैं। लोगों और समाज में ज्ञान की कमी अज्ञानतावश ही ऐसी हत्या करते हैं जिसमें कितने मासूम बेवजह औरतों की जान चली जाती है। इस समुदाय के स्त्री-पुरूष स्वभाव से शान्त एवं विपरीत परिस्थितियों में सहास के साथ उग्र रूप धारण कर हमला भी कर देते हैं। इस समुदाय के छोटे-बड़े बच्चों, ये शकाहारी अधिकांशत: माँसाहारी होते हैं। पुरूष वर्ग का विशेष रूप शिकार करने की होती है। ये जंगलों में जाकर जगली जानवरों का शिकार करते थें। इसमें से मुख्यत: छोटे जीव-जन्तु जैसे खरगोश, शियार, सर्प, लोखड़ी, गोह, बिल्ली, हिरण, इस प्रकार शिकार कर भोजन के रूप में तथा उसका चमड़ा निकालकर बाजार में बेचते तथा उससे प्राप्त पैसा एवं जन्तुओं से निकलने वाला तेल आदि को अपने शरीर में एवं खाने में उपयोग करते थें। पुरूष वर्ग एक साथ समूह में शिकार करने के लिए लोहें एवं लकड़ी से बनी बल्लम, भाला एवं 10 से 12 कुत्तो भी अपने साथ भी लेकर चलते थें। ये कुत्तो शिकार पकड़ने में उनकी मदद करते थें। उनकी मदद भी करते थे। इसीलिए सभी स्थानों में अपने साथ कुत्तों को भी लेकर चलते थें।

उनके रहने का स्थान चूँकि कम धन, पूँजी के अभाव के कारण इनका आवास अधिकांशता घास-पूस, झोपड़ी, अध कच्चा, अध पक्का चार दिवारों में ईट पन्नी की कारीगरी की होती है। आज यह समाज अपनी दीन-दु:खी जीवन यापन करने में मजबूर है।

इस समुदाय के कुछ पुरूष वर्ग अपने गाँव से एवं शहर से दूर-दराज इलाके में छोटा-मोटा व्यवसाय भी करने लगा है। इनमें मुख्य व्यवसाय निम्न है जैसे-छोहारा, बदाम, दाख, काजू, किशमिश बाजार से लाकर उन्हें विक्रय करते हैं। इनका दूसरा व्यवसाय आटो-रिक्सा, पल्लेदारी, बेलदारी रवी की कटाई, खरीफ की कटाई एवं ऐसे व्यवसाय की ओर इनका ध्यान आकर्षित हो रहा है। जिसमें इनका परिवार भीख न माँगे नहीं कोई गलत काम करें।

इसके पहले की बात करू कि इसे समाज के व्यक्ति न तो कभी नहाते न कभी कपड़े धोते न कभी शौच करतें (पत्थर का शौच के लिए प्रयोग करतें) इनके शरीर से बदबू आती। लोग इनके आस-पास पर भी नहीं जाते थें। न किसी प्रकार से सम्पर्क करते थें। लोग इन्हें हेय दृष्टि से देखते थे। इनके किसी भी माहौल में लोग सामिल नहीं होते थें। जिस कारण यह समाज सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनैतिक आदि में सभी में पीछे ही रह जाता है। कारण अज्ञानता को माना जा सकता है। इस समुदाय के देवी देवता भी होते हैं। जो इस प्रकार से हैं -फत्ता-सूपता, धर्मा, माता, काली, परमल (परमल देवता को शुअर की बलि दी जाती थी) इसके कारण सभी व्यक्ति एकत्र होकर उसी के माँस को बनाने के बाद माँस का प्रसाद दिया जाता था। जिससे सभी छोटे-बडे, स्त्री-पुरूष सामिल होते हैं। इसके साथ-साथ शराब का भी सेवन करते हैं।

आज से 40 वर्ष पहले इस समुदाय का जीवन स्तर बहुत ही अन्धकारमय था। इस समुदाय के लोगों के पास अपना जीवन चलाने के लिए भीख माँगने या शिकार करना इनके पास कोई दूसरा रास्ता नहीं था। इनकी सामाजिक स्थिति दायनीय और नरकीय जिन्दगी जीने में मजबूर थे। इनके सामने समाज के (शिक्षित समाज, गाँव) लोगों के पास में जाने में बहुत बड़ी चुनौती रही आती थी। इसका मूल कारण गरीबी माना जा सकता है।

गरीबी के कारण इनके शरीर से इनके घरों से दुर्गन्ध आती थी। लोग न इनके पास आते थे और न आने देते थे। माँस मछली अण्डा, पक्षी, जानवर आदि का भरण-पोषण करते थें। ये व्यक्ति आदत से बहुत ही गम्भीर होते थें। बिना वजह से किसी से न बात करेगें और न ही किसी से लड़ाई झगड़ा करेगें। यदि किसी कारणवश इस समूह के किसी व्यक्ति से बातचीत या लड़ाई हो गई हो तो यह समस्त समुदाय टूट पड़ता है। और ये उग्र स्वभाव अपना लेते हैं।

यह समाज अपना अलग समुदाय व्यवस्थिति होकर रहना पसन्द करते हैं। उनके गरीबी के कारण काला बदन शरीर धूप में जला हुआ। नग्न बदन रूखे बाल हाथ पैर में परतधार चमड़ी बिना तेल कन्घी के, बदबूदार शरीर में धारण कपड़ा, कमीज, लहगाँ, चुनरी, घाघरा ये सब वस्त्र बिना धोये हुए पहनकर गाँव में जाकर भीख माँगना लोगों का एक व्यवसाय बन गया है। ग्रामीण/शहरी व्यक्तियों को इनका चाल-चलन अच्छा नहीं लगता था। इनकी आदत स्वभाव के कारण लोग अपने घरों तक नहीं आने देते थें। अपने शरीर का आकार-प्रकार या तो इसके लिए अपने स्वभाव को अधिक उग्र बनाने के लिए महिला शरीर में गुदना गुदवाती थी। बजह यह थी की यदि समुदाय के व्यक्ति अकेले आये तो भीख मागती थी। यदि भीख न दी जाये तो अपने भयंकर रूप से महिलाऐं लोगों में भय डर पैदा कर देती थी। एवं इनके बातचीत से लोगों में भय बना रहता था। उन लोगों में बात करके जादू टोना न कर दें। भीख माँगते समय इन महिलाओं में एक विशेष आदत

यह भी थी यदि कोई भीख नहीं दे पाता था तो वे उसके घर में जादू-टोना भी करती थी। लोगों में खौफ था कि यदि उनकों भीख न देगें तो वहीं पर कुछ टोटके करके चली जाती थी। इसके बाद उस घर के प्राणी जीव-जानवर बीमार हो जाते थें। इसके साथ-साथ लम्बें समय में मर जाते। तभी लोगों का विश्वास और मजबूत हो जाता। यही लोग हमारे घर में कुछ ऐसा कर दिया है। जिससे यह समस्या उत्पन्न हो गई है। ये भिखारी महिलाएँ गाँव में जाकर जबरदस्ती भीख माग लेती। नहीं तो जादू-टोना का खौफ दिखाती हैं। इसकों जो भीख मागते से समय पहनावा हुआ करता था। वे लाला हेम (देह) में लहगाँ, सार्ट माथें में काला टीका, गोदना शरीर के कई हिस्सों में बालों में बिना तेल के रूखे बाल, गन्दा शरीर आजीव बात करने का तरीका एवं हाथ में सिल्वर का कटोरा, हाथ में लकड़ी, सिर पर पोटली, नग्गे पैर आदि इसकी विशेषता थी। स्वयं बिमार होने की स्थिति में देवी-देवता झाड़-फूक, जड़ी-बूटी, टोने जादू एवं वनस्पतियों पर निर्भर होते थें।

सुझाव – किसी भी समाज या व्यक्ति से सुदृढ़ विकास आवश्यक है कि इनकी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक स्थिति मजबूत हो। अत: इस समाज को भी विकास की मुख्य धारा से जोड़ा जाय। ताकि बढ़ते अपराध पर अंकुश लगाया जाए। अशिक्षा के चलते व्यक्ति न तो अपना और न ही देश के विकास में अपना योगदान दे पाता है।

- कुचबदिया समाज के लिए विकास की अलग से योजना चलाई जानी चाहिए।
- इनका बसाहट स्थायी किया जाए।
- इनके लिए अलग से आर्थिक नीति का क्रियान्वयन किया जाये, जिससे इनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हो सके।
- इनके लिए स्वास्थ्य संबंधी नीति बनाई जाय, ताकि ये साफ-सफाई से अपना रहन-सहन पूर्ण जीवन व्यतीत कर सके।
- इन्हीं प्रयासों से इस समुदाय को समाज की मुख्य धारा में लाया जा सकता है। एक मानव को मानव की तरह जीने का अधिकार प्रदान होना चाहिए। यदि प्रशासन की निगाह इन पर जाती है तब ये निश्चय ही विकास की दिशा में अग्रसर होकर प्रशासन की सहायता में भी यह समाज हिस्सेदारी निभा सकता है।

निष्कर्षत: हमारे गिहार समाज का पहनावा लहगाँ और चोली है। उनके पूर्वजों खाना-बदोस के कबीले के थे। और वे सभी हर शहर और राज्य में खुले रूपों में घूमते थें। किसी नगर तीन दिन तक और किसी नगर में एक सप्ताह रहकर अपना जीवन यापन किया करते थे। वे जंगली जानवरों का शिकार करते थे। उन्हीं जानवरों के माँस को खाते थें। उनमें से कई लोग भीख माँगकर अपना जीवन गुजर-बसर कर दिया करते थें। ये समुदाय में चार सुअर का बलि चढ़ाई जाती थी। उनके देवताओं का नाम माता परमाल, गजेड़ी देवता, बावड़ो देवता, चन्दन देवता, धरामा देवता, और ऐसे करके बीस-से बाईस देवता थे। जिनकी पूजा करते थे। इनकी शादी करने की रीति सात दिनों तक लड़की को हल्दी लगाया जाता था। लड़के बालों से दहेज लिया जाता था। न कि लड़की बालों से शादी का पूरा खर्चा लड़के बाले ही उठाते हैं। और उनमें एकता है कि यदि किसी को कुछ करें तो सभी लोग एक-दूसरे की मदत किया करते हैं। अभी काफी परिवर्तन आ गया है। खान-पान, रहन-सहन, विवाह अब इनका निवास स्थान हो गया है। अब ये यहाँ निजी निवास हो गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुचबदिया वस्ती वार्ड क्र. 15 ब्लाक अमरपाटन, जिला सतना जिला मध्यप्रदेश के साक्षात्कार द्वारा सन्दर्भित शोध पत्र हैं।
2. बसंत कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, प्रकाशन मोतीलाल बनारसीदास, 2001, पृष्ठ 212
3. गोविन्द प्रसाद शर्मा, प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक एवं विचारधाराएँ, प्रकाशन हिन्दी ग्रान्थ अकादमी, 2009, पृष्ठ 385
4. विनोद कुमार तिवारी, दर्शन पुन्ज एक गहन दृष्टि, प्रयाग पुस्तक सदन, इलाहाबाद, 1996 पृष्ठ 67

****

आंचलिक उपन्यासकार के रुप में फणीश्वर नाथ रेणु जी का योगदान

अजीत प्रसाद नोनियॉ* डॉ. श्रद्धा मेश्राम**

शोध सारांश – हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल की सर्वाधिक शाक्तिशाली एवं लोक प्रिय विधा उपन्यास है। इसको आधुनिक युग का महाकाव्य भी कहा जाता है। समय के साथ–साथ इस विधा में विषयगत एवं शिल्पगत प्रयोग हुआ है। आंचलिक, उपन्यास, आधुनिक युग में विकसित उपन्यास की एक लोकप्रिय विधा या प्रकार है। आंचलिक उपन्यासों में, लेखक किसी विशेष से अन्तरंग परिचय प्राप्त कर भौगोलिक दृष्टि से एक समिति क्षेत्र के जन–जीवन को उसकी अपनी दृष्टि को केंद्रित करके उस अंचल विषेष के जीवन–यथार्थ को निकटता एवं गहराई से समझता है तत्पष्चात् उन्हें व्यक्त करता है। आंचलिक उपन्यासों में क्षेत्रीय संस्कृति का चित्रण होता है। आंचलिक उपन्यासों में क्षेत्र विशेष से सम्बंधित जनजीवन का सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत किया जाता है तथा स्थानीय वातावरण उपस्थित करने के लिए क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग भी किया जाता है। आंचलिक उपन्यास के प्रारम्भ से लेकर अंत तक बना रहता है। देश, काल तथा वातावरण की विशिष्टता ही आंचलिक उपन्यास को उपन्यास के अन्य कोटियों से अलग करती है। आंचलिक वातावरण के प्रस्तुतीकरण में न केवल भौगोलिक अवस्थिति और प्राकृतिक बनावट आती है, वरन स्थानीय गतिविधियों, रहन–सहन, सांस्कृतिक धारा, परंपरागत जीवन विधान, बातचीत, प्रचलित उक्तियों, कलात्मक अभिरूचियों आदि का भी समावेष होता है।

आंचलिक उपन्यासकार के रुप में फणीश्वर नाथ रेणु जी का योगदान– फणीश्वर नाथ 'रेणु' (4 मार्च 1921 औराही हिंगना, फॉरबिसगंज– 11 अप्रैल 1977) एक हिन्दु भाषा के साहित्यकार थे। इनके पहले उपन्यास मैला आंचल को बहुत ख्याति मिली थी जिसके लिए उन्हें पदम् श्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

जीवनी– फणीश्वर नाथ 'रेणु' का जन्म 4 मार्च 1921 को बिहार के अररिया जिले में फॉरबिसगंज के पास औराही हिंगना गांव में हुआ था। उस समय यह पूर्णिया जिले में था। उनकी शिक्षा भारत और नेपाल में हुई। प्रारंभिक शिक्षा फॉरबिसगंज तथा अररिया में पूरी करने के बाद रेणु ने मैट्रिक नेपाल के विराटनगर के विराटनगर आदर्श विद्यालय से कोईराला परिवार में रहकर की। इन्होने इन्टरमीडिएट काशी हिन्दु विश्वविद्यालय से 1942 में की जिसके बाद वे स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। बाद में 1950 में उन्होने नेपाली क्रांतिकारी आन्दोलन में भी हिस्सा लियाजिसके परिणामस्वरूप नेपाल में जनतंत्र की स्थापना हुई। 1952–53 के समय वे भीषण रूप से रोगग्रस्त रहे थे जिसके बाद लेखन की ओर उनका झुकाव हुआ। उनके इस काल की झलक उनकी कहानी तबे एकला चलों रे में मिलती है। उन्होने हिन्दी में आंचलिक कथा की नींव रखी। सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय, एक समकालीन कवि, उनके परम मित्र थे। इनकी कई रचनाओं में कटिहार के रेलवे स्टेशन का उल्लेख मिलता है।

लेखन–शैली – इनकी लेखन–शैली वर्णणात्मक थी जिसमें पात्र के प्रत्येक मनोवैज्ञानिक सोच का विवरण लुभावने तरीके से किया हाता था। पात्रों का चरित्र–निर्माण काफी तेजी से होता था क्योंकि पात्र एक सामान्य –सरल मानव मन (प्राय:) के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता था। इनकी लगभग हर कहानी में पात्रों की सोच घटनाओं से प्रधान होती थी। एक आदिम रात्रि की महक इसका एक सुंदर उदाहरण है।

रेणु की कहानियों और उपन्यासों में उन्होंने आंचलिक जीवन के हर धुन, हर गंध, हर लय, हर ताल, हर सुर, हर सुंदरता और हर कुरूपता को शब्दों में बांधने की सफल कोषिष की है। उनकी भाषा–शैली में एक जादुई सा असर है जो पाठकों को अपने साथ बांध कर रखता है। रेणु एक अद्भुत किस्सागो थे और उनकी रचनाएँ पढ़ते हुए लगता है मानों कोई कहानी सुना रहा हो। ग्राम्य जीवन के लोकगीतों का उन्होंने अपने कथा साहित्य में बड़ा ही सर्जनात्मक प्रयोग किया है।

इनका लेखन प्रेमचंद की सामाजिक यथार्थवादी परंपरा को आगे बढ़ाता है और इन्हें आजादी के बाद का प्रेमचंद की संज्ञा भी दी जाती है। अपनी कृतियों में उन्होंने आंचलिक पदों का बहुत प्रयोग किया है।

उपन्यास – रेणु को जितनी ख्याति हिंदी साहित्य में अपने उपन्यास मैला आँचल से मिली, उसकी मिसाल मिलना दुर्लभ है। इस उपन्यास के प्रकाशन में उन्हें रातों–रात हिन्दी के एक बड़े कथाकार के रूप में प्रसिद्ध कर दिया। कुछ आलोचकों ने इसे गोदान के बाद इसे हिंदी का दूसरा सर्वश्रेष्ठ उपन्यास घोषित करने में भी देर नहीं की। हालांकि विवाद भी कम नहीं खड़े किये उनकी प्रसिद्धि से जलनेवालों ने, इस सतीनाथ भादुरी के बंगला उपन्यास 'धोधाई चरित मानस' की नकल बताने की कोशिश की गयी। पर समय के साथ इस तरह के झूठे आरोप ठन्डे पड़ते गए।

रेणु के उपन्यास लेखन में मैला आँचल और परती परिकथा तक लेखन का ग्राफ ऊपर की और जाता है पर इसके बाद के उपन्यासों में वो बात नहीं दिखी।

- मैला आंचल
- परती परिकथा
- जूलूस
- दीर्घतपा
- कितने चौराहे

*शोधार्थी, एम. फिल्. (हिन्दी) डॉ.सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ.सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

- पलटू बाबू रोड

कथा-संग्रह

- एक आदिम रात्रि की महक
- ठुमरी
- अग्निखोर
- अच्छे आदमी

रिपोर्ताज

- ऋणजल-धनजल
- नेपाली क्रांतिकथा
- वनतुलसी की गंध
- श्रुत अश्रुत पूर्वे

प्रसिद्ध कहानियाँ

- मारे गये गुलफाम (तीसरी कसम)
- एक आदिम रात्रि की महक
- लाल पान की बेगम
- पंचलाइट
- तबे एकला चलो रे
- ठेस
- संवदिया

तीसरी कसम पर इसी नाम से राजकपूर और वहीदा रहमन की मुख्य भूमिका में प्रसिद्ध फिल्म बनी जिसे बासु भट्टाचार्य ने निर्देशित किया और सुप्रसिद्ध गीतकार शैलेन्द्र इसके निर्माता थे। यह फिल्म हिंदी सिनेमा में मील का पत्थर मानी जाती है। हीरामन और हीराबाई की इस प्रेम कथा ने प्रेम का एक अद्भुत महाकाव्यात्मक पर दुखांत कसक से भरा आख्यान सा रचा जो आज भी पाठकों और दर्शकों को लुभाता है।

डॉ0 शषि भूषण सिंहल के अनुसार- 'आंचलिक उपन्यास समाज के क्षेत्र विशेष के सांस्कृतक जीवन की झलक मिलती है, किन्तु आंचलिक उपन्यास प्रमुख सांस्कृतिक धारा में स्थित द्वीप सरीखे स्थिर प्रायः स्वप्न पूर्ण अंचलों की लोक संस्कृति को अपना लक्ष्य बनाते हैं। डॉ0 कैलाश चन्द्र भटिया के अनुसार-'जिस कथा कृति में किसी क्षेत्रीय या जनपदीय संस्कृति का वहां के निवासियों की भाषा-लोक भाषा में समग्र चित्रण हो। साथ ही लोक गीत, लोक-नृत्य या लोक संस्कारों के वर्णन द्वारा उस विशिष्ट संस्कृति का चित्र अंकित किया गया हो, तो वह उपन्यास आंचलिक होता है। डॉ0 रामदरश मिश्र ने समग्र अंचल के जनजीवन की कथा से जनपद की कथा को जोड़ते हुए आंचलिक उपन्यासों को परिभाषित किया है - 'आंचलिक उपन्यास तो अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास है उसका संबंध जनपद से होता है। ऐसा नहीं, वह जनपद की कथा है।' श्री प्रकाश बाजपेयी के अनुसार - 'सीमित अंचल या क्षेत्र के सर्वांगीण जीवन को वस्तुन्मुखी दृष्टि से प्रस्तुत करने का उपक्रम आंचलिक उपन्यासकी एक उपयुक्त परिभाषा हो सकती है।' डॉ0 विश्वम्बर नाथ उपाध्याय का भी मत बाजपेयी जी के तथ्यों को पुष्ट करता है। डॉ0 मदन लाल शर्मा आंचलिक उपन्यासों की परिभाषा बताते हुए समग्र जीवन के साथ परम्परा को जोड़ते है तो डॉ0 रामगोपाल चौहान जनपद के लोक-जीवन के धारावाही समग्र चित्रण को प्रधानता देते हैं। राधेश्याम कौशिक जी आंचलिक उपन्यासें में संस्कृति का आँखों देखा चित्रण आवश्यक मानते हैं। शिवप्रसाद सिंह जी सामाजिक, धार्मिक सांस्कृतिक दृष्टि से अपनी अलग विशेषताएँ रखने वाले भूखंड के चित्रण को आंचलिक उपन्यास कहते हैं।

डॉ0 लक्ष्मीकांत सिन्हा भी शिव प्रसाद सिंह जी से मिलती जुलती परिभाषा प्रस्तुत करते हैं। डॉ0 सुमित्रा त्यागी जी38 लोक-जीवन और संस्कृति के द्वारा अंचल के जीवन दर्शन को चित्रित करने वाले उपन्यास को आंचलिक उपन्यास कहती हैं। धनंजय वर्मा जी आंचलिक उपन्यासों के लोकरंग के चित्रण को प्रमुखता देते हैं। डॉ0 देवराज उपाध्याय जी विशिष्ट प्रदेश में अज्ञात एवं रूढ़ि परम्परा में जीवन-यापन करने वाले समाज को परिचित करने वाले उपन्यास को आंचलिक उपन्यास कहते हैं। डॉ0 सत्यपाल चुघ जी41 आंचलिक उपन्यासों को देश प्रधान उपन्यास मानते हैं तो जैनेन्द्र जी अंचल को नायक मानते हैं। डॉ0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय के अनुसार-'जब उपन्यासकार किसी अंचल, गाँव, कस्बे या मोहल्ले को परिवेश बनाता है, वहाँ के लोगों के आचार, व्यवहार जीवन पद्दति, संस्कृति, लोकभाषा, धर्म एवं दृष्टिकोण का सूक्ष्म वर्णन करता है तो वह आंचलिक उपन्यास होता है।' धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार 'आंचलिक रचनाओं में कोई विशिष्ट अंचल व क्षेत्र या उसका कोई एक भाग व गाँव ही प्रतिपाद्य व विवेच्य होता है। आंचलिकता की सिद्धि के लिए स्थानीय दृष्यों, प्रकृति, जलवायु, त्यौहार, लोकगीत, बातचीत का विशिष्ट ढंग, मुहावरे-लोकोक्तियाँ भाषा और उच्चारण की विकृतियाँ लोगों की स्वभावगत व व्यवहारगत विशेषताएँ, उनका अपना रोमांस, नैति मान्यताएँ आदि का समावेश बड़ी सतर्कता और सावधानी से किया जाना अपेक्षित है।' डॉ0 उषा डोंगरा आंचलिक उपन्यास को परिभाषित करते हुए लिखा है कि -'जन्म से लेकर मृत्यु तक के आचार विचार शिष्टाचार, चरित्रगत आदत मनोरंजन के साधन कलाएँ, भोजनपान, जादूटोना विश्वास तथा अन्य मान्यताएँ शिक्षा-दीक्षा, जीवन दर्शन, सामाजिक उत्सव और समारोह आदि के अतिरिक्त उस अंचल विशेष की भौगोलिक स्थिति, राजनीतिक महत्व, नदियाँ, जंगलों, पेड़-पौधों, भूमि की बनावट और परिवर्त्तन फसलें और उनसे वहां के जन जीवन का संबंध बदलते हुए सामाजिक मूल्यों आदि का विश्लेषण रहता है। आंचलिक उपन्यासों में अंचल की विशिष्टताओं के साथ खेती-बाड़ी का समावेश तथा जीवन एवं प्रकृति से गहरा सम्बंध होता है। इनके कथानकों में प्यार, दुलार सौहार्द, सरलता और जीवन बलिदान की भावना छिपी रहती है। डॉ0 कड़वे ह0 के0 के अनुसार, 'मानस शास्त्रीय एवं मानव शास्त्रीय विवेचना के आधार पर जीवन की परम्पराओं, रीति-रिवाजों, त्योहारों विश्वास आदि की कलात्मक अभिव्यक्तिउसमें अभिप्रेत है।' अर्थात आंचलिक उपन्यासों में गाँव, परिवार, लोक-संस्कृति, खेती-बाड़ी, लोकरूढ़ि और मानव निर्मित चीजों का समावेश रहता है। बच्चन सिंह के अनुसार 'आंचलिक उपन्यासों में अंचल विशेष के माटी की सोंधी महक, प्रकृति के निर्बंध प्रसार, लोक संस्कृति के छनद तथा लोकभाषा की ताजगी की मोहक छवियों को कथा बिंबो में इस ढंग से उभारा जाता है कि पूरा अंचल अपनी समग्रता में चित्रित हो उठता है। अमूर्तत अंचल क सभिप्राय संमूर्तन इसकी विशेषता है।' नन्द दुलारे बाजपेयी ने अंचल की अपरिचितता एवं अज्ञानता को आंचलिक उपन्यासों की आवश्यक शर्त मानते हैं-'आंचलिक उपन्यास हम उसे कह सकते हैं, जिसमें अपरिचित भूमियों और अज्ञात जातियों के जीवन का वैविध्य पूर्ण चित्रण हो। आंचलिक उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता अपरिचित और किसी हक तक आदिम जातियों के चित्रण में पाई जाती है। यह उसका ऐतिहासिक पक्ष है।' डॉ0 शिवप्रसाद सिंह के आंचलिकता की परिभाषा से आंचलिक उपन्यास की परिभाषा स्पष्ट होती है- 'यह भाव-संज्ञा (आंचलिकता) किसी क्षेत्र या अंचल से सम्बद्ध है। क्षेत्र या अंचल उस भौगोलिक खंड को कहते है, जो सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से सुगठित और विशिष्ट एक ऐसी इकाई को, उसके

निवासियों के रहन-सहन, प्रथाएँ, उत्सव आदि, आदर्श और आस्थाएँ, मौलिक मान्यताएँ तथा मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ परस्पर समान और दूसरे क्षेत्र के निवासियों से इतनी भिन्न हों कि उनके आधार पर यह क्षेत्र या अंचल-विशेष इसी प्रकार के दूसरे क्षेत्रों से एकदम अलग प्रतीत हो। इस प्रकार के अंचल या क्षेत्र के जीवन को अभिव्यक्ति करने वाली रचना को हम आंचलिक कह सकते है। डॉ0 गोबिंद त्रिगुणायत ने स्थान विशेष एवं उसकी विशेषताओं से युक्त रचना को आंचलिक उपन्यास मानते है, 'जिन उपन्यासों में स्थान-विशेष के सम्पूर्ण वातावरण का सांग, संश्लिष्ट रूप से स्थानीय विशेषताओं के साथ चित्रण प्रस्तुत किया जाये, उन्हें आंचलिक उपन्यास कहेंगे। 'आंचलिकता' शब्द 'अंचल' से बना है। आंचलिकता का अर्थ है वृहद प्रामाणिक हिन्दी कोश के अनुसार, 'किसी अंचल की विशिष्ट या विशिष्टताओं का समाहार एवं क्षेत्रियता है।' अर्थात आंचलिकता का सम्बंध 'अंचल' या क्षेत्र से है। डॉ0 बसन्त सुर्वे के अनुसार, 'इसमें (आंचलिकता में) अंचल विशेष के जीवन में गहनता में प्रवेश कर आंतरिक संवेदना, स्पंदन और यथार्थ को उद्घाटित किया जाता है। आंचलिकता के जरिये अंचल विशेष के सांस्कृतिक जीवन के सामायिक पहलू पर प्रकाश डाला जाता है', किसी अंचल के वातावरण एवं उसके निवासियों के व्यक्तित्व के अन्योन्याश्रित सम्बंध में आंचलिकता कहते है। किसी भी अंचल के मिट्टी की अपनी अलग पहचान होती है। बोली, भाषा, आमोद-प्रमोद के साधन, उत्सव त्योहान, लोकगीत, लोक कथाएँ, किवदंतियाँ एवं जीवन व्यवस्था सब अंचल के अपने होते हैं तथा अपनी एक अलग पहचान रखते हैं। इस प्रकार माटी की महक और मन: स्थिति का सजीव चित्रण ही आंचलिकता का सच्चा स्परूप होता है। राजेन्द्र अवस्थी के अनुसार, -'जिस कथा कृति में किसी विशिष्ट जनपद या क्षेत्र के जन-जीवन का समग्र चित्रण वहां की भाषा, वेष भूषा, धर्म जीवन, समाज, संस्कृति और आर्थिक तथा राजनैनिक जागरण के प्रश्न एक साथ उभरकर आये, वह आंचलिक कृति होती है।' आंचलिकता विशिष्ट स्थान और काल के दबाव से उत्पन्न होती है। आधुनिक युग के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक सरोकार जो कि एक सीमित अंचल से या किसी विशिष्ट क्षेत्र से सम्बंधित होते है आंचलिकता के द्वारा पुष्ट होते हैं, क्योंकि आंचलिकता के निर्माण में देश, काल और वातावरण अत्यधिक विशिष्ट हो जाते हैं। जब किसी विशेष अंचल में देश और काल के वैशिष्ट्य के कारण भौगोलिक स्थान तथा ऐतिहासिक काल के दबाव के कारण कोई विशिष्ट विचारधारा पनपने लगती है तो आंचलिकता के रूप में पुष्ट होती है। आंचलिक उपन्यास का आधार और पृष्ठभूमि कोई अंचल विशेष होता है तथा यह अंचल या क्षेत्र विशेष न केवल भौगोलिक और प्राकृतिक दृष्टि से अपने आस-पास के विस्तृत क्षेत्र से भिन्न और विशिष्ट होता है बल्कि इसकी सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक परिवेश आर्थिक समस्याएँ तथा निवासियों के रहन-सहन एवं उनकी मानसिकता भी सामान्य रूप से भिन्न और विशिष्ट होती है। आंचलिक उपन्यासों में किसी अंचल का जन जीवन, रहन-सहन, खान-पान, उत्सव त्यौहार आचार विचार तथा सम्पूर्ण जीवन पद्धति एक विशिष्टता लिए हुए रहती है। आंचलिक उपन्यासों का कथानक, किसी व्यक्ति विशेष के बारे ने नहीं बल्कि उस अंचल की ही कहानी होती है। आंचलिक उपन्यासों में विशिष्ट जीवन के चित्रण के लिए एक विशिष्ट शिल्प का प्रयोग किया जाता है। जो परंपरागत औपचारिक शिल्प से भिन्न होता है अर्थात इसमें आवश्यकतानुसार लोककथा, लोकोक्तियाँ, लोकगीत आवश्यकतानुसार प्रयुक्त होते है आंचलिक उपन्यासों में सबसे अधिक महत्व परिवेश को दिया जाता है। आंचलिक उपन्यासों में अंचल विशेष को समग्रता के साथ चित्रित किया जाता है। उसकी पद्धति खंड़ों में जोड़कर पूर्ण बनाने की होती है पूर्ण को खंडित कर विश्लेषण करने की नहीं। आंचलिक उपन्यासों में कथा नायक होने पर भी अंचल का विशिष्ट स्थान होता है अर्थात किसी चरित्र विशेष के स्थान पर आंचलिक उपन्यास में सम्पूर्ण अंचल का चरित्र उजागर होता है। आंचलिक उपन्यास के कथानक की समग्रता, बिखराव, शिथिलता, यथार्थता तथा सत्यता आदि विशेषताएँ होती है।आंचलिक उपन्यास में सम्पूर्ण अंचल को उभारने के लिए अनेक कथाओं का समायोजन किया जाता है तथा किसी केंद्रीय कथा का अभाव होता है अत: इन्ही सभी तथ्यों का समावेश फणीश्वर नाथ रेणु जी के रचनाओं में द्रष्ट्व्य है जो उन्हें हिन्दी साहित्य में आंचलिक उपन्यासकार के रुप चित्रित करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक परिदृश्य और आंचलिकता - विद्या सिन्हा।
2. आंचलिकता और आधुनिक परिदृश्य - श्री शिव प्रसाद सिंहा।
3. हिन्दी आंचलिकता उपन्यास और उनकी शिल्पविधि - डॉ. आदर्श सक्सेना।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

भारतीय इतिहास में धर्म की अवधारणा

डॉ. मनोरमा सिंह *

शोध सारांश – भारतीय इतिहास में धर्म की अवधारणा महत्वपूर्ण रही है। जिसका परिणाम समस्त विश्व की व्यवस्था को स्थापित करने का आधार धर्म है। प्राचीन समय से भी धर्म की व्यवस्था का अनुसरण मानव करता आ रहा है। धर्म नीति, सत्य, यथार्थ की नीव पर टिका हुआ है। धर्म वास्तव में आचरण और व्यवहार के रूप में सृष्टि का निर्माण होता है। सृष्टि के साथ मानव में धर्म की स्थिति का तात्तिवक स्थान स्पष्ट होता हैं। यही कारण है कि 'अमृत पुत्र' मानव के मूल स्वरूपों में धर्म की ओर परिवर्तित होती है। भारतीय इतिहास में धर्म पुरूषार्थ व्यवस्था पर टिका हुआ है। जहाँ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार तत्वों पर ऐतिहासिक विशेषताओं का निरूपण होता है। इसी कारण धर्म को बहुआयामी कहा जाता है। धर्म जीवन के प्रतिक्षण निश्चय की ओर ले जाता है।

प्रस्तावना – धर्मादर्थश्च कामश्च स धर्म: किन्न सेव्यते।[1]

महाभारत में इन संवेदनात्मक परम्पराओं को सभी हिन्दू जातियों ने सभ्यता के एक युग को ही समेट लिया है। व्यक्ति के सामाजिक जीवन में न जाने कितने परिवर्तन आते हैं। उसी प्रकार परिवर्तन होने वाले भाग्य के विवर्तन के रूप में एक संघर्षत्मक व्यवस्था सामने खड़ी हो जाती है। यह महाभारत में वर्णित भारतीय जन समुदाय की परम्पराओं का निरूपण निश्चित् होता है। जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष यह मानवीय जीवन का एक आधार है। धर्म वही है जो धारण करने योग्य हो, अर्थ वहीं है जिसमें सत्य के मूल्य छिपे हों। काम वहीं है जहाँ यथार्थ मल्यों के द्वार कामनाओं की पूर्ति हो (मानव की अपनी आवश्यकता की पूर्ति हो) यह आवश्यकता आन्तरिक और ब्राह्य दोनों हो सकती है। इसके साथ मोक्ष तो कर्म प्रधान है। कर्म के आधार पर मोक्ष की प्राप्ति सुनिश्चत हैं जबकि ऐसा माना जाता है कि धर्म, अर्थ, काम तीनों तत्वों की पूर्ति मूल्य परक है। वहीं मोक्ष की अवस्था हैं। अन्यथा सब कुछ नर्क है।

प्रविधि – प्रस्तावित शोध-पत्र की प्रवृत्ति सैद्धान्तिक रूपों में निरूपित होती है। इस शोध पत्र के अनुसार तथ्यों का संकलन किया गया है। जहाँ मानवीय जीवन का आधार द्वितीयक शोध सामाग्री है। इस प्रकार की मूल-भूत आवश्यकताओं की मौलिक अवधारणाओं के लिए धार्मिक, वैदिक ग्रन्थों को अध्ययन का आधार बनाया गया है। इसके साथ-साथ विद्वानों का मर्गदर्शन भी समाहित करते हुए पत्र-पत्रिकाओं को भी सन्दर्भित करने में सहायता ली गई है।

उद्देश्य :

- धर्म की परम्पराओं के मूल्यों का अध्ययन।
- पुरूषार्थ व्यवस्था का अध्ययन।
- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में मानवीय मूल्यों का अध्ययन।
- धर्म की परम्परओं में भारतीय संस्कृति का अध्ययन।

समस्यायें :-

- मानवीय मूल्यों की समस्या।
- सामाजिक मूल्यों की समस्या।
- राजनीतिक मूल्यों की समस्या।
- भारतीय संस्कृति के क्षरण की समस्या।

समाधान :

स्त्रीरूप समवस्थाय रूद्रमाराधयत्पुरा।
आद्ये कृतयुगे तस्मिन्सामानामयुतनृपा।।[2]

स्कान्द पुराण के रेवाखण्ड में भगवान शिव की उमादेवी की प्रसन्नता का वर्णन मिलता है। जहाँ मानवीय जीवन की अनेक घटनाओं का परिणाम ही मानवीय जीवन का आधार मूल्य ही हैं। उस सरिता से इच्छित फलों की कामनाओं की पूर्ति होती है। इसमें भगवान शिव ने धर्म की अवधारणा का मूल्य मानव जीवन को सफल बनाने के लिए किया गया है।

शैव धर्म की उत्पत्ति का इतिहास अधिक पुराना हैं। जहाँ पौराणिक कथाओं और वैदिक काल की परम्पराओं की पूजा पद्धति धार्मिक क्रिया-कलापों का आधार पर पशुपति नाथ जी का उल्लेख मिलता है। शैव पुराण में शिव के रूप में लोकातीत अर्न्तयामी के रूप में विभूषित किया गया है।[3]

आसीदस्ति भविष्यतीह स जनो धन्यो धनी धार्मिको।
य: श्रीकेशववत् करिष्यति पुन: श्रीमत्कुड्ड गेरवरम्।।
हेलान्दोलित-हंस-सारसकुल-क्रेड़कार-सम्मूर्च्छितै।
रित्याघोषयतीव तन्नवनदी यच्चेष्टितं वीचिभि:।।[4]

गंगा, पयस्विनी, महासुर, सरयु, कौशिकी, महानदी आदि अनेक नदियों की व्याख्या अवन्तीखण्ड में हुई है। इसके अतिरिक्त मंदाकिन नदी राजजनार्दन मन्दिर होकर बहती है। जिसका उद्देश्य काव्यमीमांसा की दृष्ट से एक गद्य का स्वरूप एकत्रित करता है। ऐसी मन्यताओं से भरा भारतीय संस्कृति और समाज का मूल्यों में विद्यमान है।

भारतीय परम्पराऐं धर्म की द्योतक है। जिसमें मानवीय जीवन के मूल्यों का निरूपण होता हैं। प्रत्येक पुरूष का यह प्रकृति के अनुकूल स्वभाव होता है कि वह अपनी वर्तमान परिस्थिति से लडता रहता है। इन सद्गुणों के अभाव में असत्य का अनुभव करता है। इन परिस्थिति से लड़ने के लिए मनुष्य में आकांक्षा और अभिलाषा का होना आवश्यक है।[5] जिन धार्मिक परिवर्तनों के अनुसार मानवीय जीवन की धारणाओं का परिणाम मानव मूल्य है। इसकी उन्नति का परिणाम जीवन के अनेक घटकों का परिणाम मानव की अभिलषित और उन्नति का साधन है वहीं धर्म की मानवीय अवधारणा पुण्य आत्मिय होती है। इसी कारण मानव की बुद्धि इसमें प्रवृतियों के कारण मानवीय संवेदना का परिणाम मूल्य ही होना चाहिए। है। इसके बिना मानव की

* इतिहास विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

आत्मभाव का सुद्धत्व नहीं होता है। जिसके कारण धर्म की मार्मिकता का परिणाम मानव मूल्यों से रहित हो जाता है। ऐसी मान्यताऐं मानव के लिए अति सघन शील हो जाती है।[6] इन विसंगतियों का परिणाम मानव की संवेदना ही होती है। जिसका परिणाम मानव का मूल्य होगा। धर्म केवल उचित और न्याय का साथ देता है। जहाँ अधर्म का बोलबाला होता है। वहाँ अन्धकार की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जब अच्छाई के अर्थों का मूल्य आता है। वहाँ मानवीय जीवन की ललक का परिणाम ही मानवीय जीवन की आधारशिला रही है। इन्हीं कारणा के निवरण में धर्म का रूप ही शिव है। जहाँ स्वयं की परिकल्पनाओं का परिणाम मानव धर्म की स्थापना है।

धर्म के तात्विक चिन्तन की परम्पराओं का परिणाम ही मानवीय जीवन का मूल्य है। इसके बीच में व्यवधान होने पर धर्म की प्रधानता का परिणाम ही मानवीय जीवन का आधार ही मूल्यों पर आधारित है। जहाँ मानव को धर्म का अन्तर्ज्ञान प्राप्त होता है लेकिन उस पर कर्म की प्रधानता निहित होती जाती है। जहाँ मूल्यों का परिणाम मानव जीवन की धार्मिक प्रवृत्ति ही होती है। वहाँ मानवीय जीवन का धर्म और संसार के परिणामों का मनोभाव ही उत्पन्न होता है। धर्म के सार-तत्वों का परिणाम ही मानवीय जीवन का आधार उन तत्वों की की आकांक्षा ही धर्म के मूल्यों का आधार बनी है। यही मानव प्राणियों की एक विशेषता है।[7]

धर्म के यथार्थ में यह आवश्यक नहीं होता की व्यक्ति की मानसिक चेतना रूढ़िवादी ही हो, लेकिन उसके लिए बौद्धिक कार्यों की आवश्यकता महत्वपूर्ण होती है। इसका परिणाम मानव के मूल्यों में ही निहित है। जिसका परिणाम मानव की रक्षा और परिणाम है।

धर्म व्यक्ति की बौद्धिकता पर आधारित है। यह मानव की आकांक्षाओं के मानवीय जीवन के विश्लेषण पूर्ण जीवन शैली पर निरूपित है। जहाँ भारतीय संस्कृति और मानव मूल्यों का समागम विद्यमान है। इन्हीं विश्लेषणों के आधार पर मानव का संस्कृति और धर्म से प्रगाढ़ सम्बन्ध है।[8] मानव की प्रकृति निरन्तर रहने का प्रयास करता है। मानव जीवन के लक्ष्य उसके ज्ञान और अभिरूचि पर सम्मिलित होते है। मानव की जागरूकता, और बौद्धिक ज्ञान का समन्वय आत्मचेतना और रूचि के संघर्षों में विद्यमान रहता है। इन्हीं संघर्षो में धर्म के सद्गुण सम्पूर्ण जगत् और सृष्टि के लिए महत्वपूर्ण है। जिसका परिणाम नैतिकता के आधार पर निर्धारित करते है। यही जगरूकता धार्मिक चेतना और मानव के धर्म के आधार है।[9]

निष्कर्ष -सर्वप्रथम इतिहास की दृष्टि से हम धर्म के मूल्यों को आदिम समाज के मूल्यों और समाज से सीखा हैं। इसका सम्बन्ध मानव की मानवीय शक्ति का परिणाम मानव हित और संरक्षण है। जहाँ व्यक्ति की विचारशीलता और प्रभावशीलता दोनों में अत्यधिक अंतर पाया जाता है। यहाँ पर धर्म का मूल तत्व यर्थाथ वर्णन से किया गया है। जहाँ वैचारिक संघर्ष की उत्पत्ति का कारण बन जाता है। उन परिस्थितियों का दास नहीं होना चाहिए। जहाँ व्यक्ति धर्म के दास परम्परा में आ घिरता है। वहाँ उसका असतित्व समाप्त हो जाता है। धर्म के प्रारम्भ के विषय में धर्म न तो भौतिक पदार्थ है और न ही उसके आदिम स्वरूप को समझने की असीम शक्ति है। जहाँ वेदों, पुराणों और ऋचाओं पर उल्लेखित धर्म मानव की रक्षा के मार्ग बताते है। यह धर्म के पालन में मदद करते है। ऐसी भारतीय संस्कृति और इतिहास का मूल मन्तव्य स्थापित करते हैं। जहाँ अरबो-खरबों वर्ष पुराना इतिहास धर्म के मूल्यों को आज भी जिन्दा कर रखा है। ऐसी भारतीय संस्कृति की शक्ति में ही निहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. देवराज, ***भारतीय संस्कृति,*** उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2010, पृष्ठ 78
2. पं. श्रीराम जी शर्मा आचार्य, ***स्कन्दपुराण,*** द्वितीय खण्ड, संस्कृति संस्थान, अध्याय 83, श्लोक 18
3. डॉ. सुस्मिता पाण्डे, ***समान आर्थिक व्यवस्था एवं धर्म,*** म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ 112
4. ***अवन्तिका खण्ड,*** अध्याय, 37, पृष्ठ 700
5. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा , ***धर्म दर्शन की रूपरेखा,*** मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 1994, पृष्ठ 20
6. डॉ. राम नाराणण व्यास, ***धर्म दर्शन,*** मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1988, पृष्ठ 10
7. गुप्ता एण्ड शर्मा, ***समाजशास्त्र,*** साहित्य भवन पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ 11
8. स्वामी लोकेश्वरानन्द, ***सबके स्वामी जी,*** रामकृष्ण मिशन इनस्टिटिउट अब कल्चर गोल पार्क, कलकत्ता, 2011, पृष्ठ 45
9. डॉ. राज्यश्री अग्रवाल, ***दर्शन मानव और समाज,*** मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 1998, पृष्ठ 25

****

Dynamics Of Human Resource Management (With Special Reference To Small Scale Industries)

Dr. Minakshi Kar *

Abstract - The dynamics of Human Resource management in an organisation are vital sub-activities of the employment tasks. In fact, employment practice begins with human resource administration. However it never ends with a single task only. It passes through a number of activities under the process of human resource management. These include identification of potential human resource, attracting them for the workplace, finding out their suitability to the job and organizational requirements and finally taking steps to place those human resources as part of the organization. Human Resource management is for production planning, economic planning and marketing planning that should be a unified, comprehensive and integrated part of the organisation. The present study tried to correlate the human demography with management dynamics in small scale industries.

Key words - Employee, Human resource management, Small scale industries.

Introduction - Every person is very important in this world; we are living in transitional period where everything is changing in world naturally or by the effort of man like technology is undergoing change in every moment. Man made change is easy to maintain but maintaining human as resource or management is complicated one. As we know management is the method of articulating and maintaining an environment in which individuals working together in groups competently for accomplishing selected goals. Management is used in all kind of organization. The basic aim of manager is to generate additional resource.

Thus the dynamics of Human Resource Management is concerned with the management of human at work place. People doing work are the essential elements in every organization. The way in which people are employed, developed and utilized by management largely determines whether the organization will achieve its objective. Therefore, the human resource is available to management for the organization to run.

Thus based on the above conceptual understanding researcher has undertaken the present research study in a small scale industries in which it was tried to correlate human demography with management dynamics.

Table 1 (See in next page)

The study reveals that majority (38.2 per cent) employees are having length of service 1-5 years and drawing less than Rs. 15,000. The employees having length of service in between 5-10 years are drawing either less than Rs. 15, 000 or up to Rs 30,000 and their percentage is nearly 10 per cent. The employees having length of service 10-15 years are earning nearby Rs 30,000. This concludes that in small scale industries mainstream are having length of service till 5 years and earning less than Rs 15,000. The study also found that there is no association between Length of Service and Monthly Income of Respondent.

Table 2:Total number of working hours per day

Working hours	Frequency	Percent
8 hr. - 10 hr.	3	5.5
10 hr. - 12 hr.	51	92.7
Above 12 hr.	1	1.8
Total	**55**	**100.0**

The study in table 2 is showing the distribution of total number of working hours per day worked by the employees in small scale industries. The research study is showing that majority (92.7 per cent) are working for 10 hr. – 12 hrs.

Table 3: Designation of Employee and Source of Recruitment

Designation of Respondent	Source of Recruitment		Total
	Internal Source	External Source	
Manager	11 20.0%	8 14.5%	19 34.5%
Executives	11 20.0%	18 32.7%	29 52.7%
Office Assistant	3 5.5%	4 7.3%	7 12.7%
Total	25 45.5%	30 54.5%	55 100.0%

The table 3 finds that in the manager cadre majority (20 per cent) are recruited through internal sources But it is reverse in the case of Executives as majority (32.7 per cent) are recruited through external sources. This concludes that through external sources mostly executives are recruited. With that it also reveals that there is no association found between Designation of Respondent and Source of

*Asst. Professor, Indore School of Social Work, Indore (M.P.) INDIA

Recruitment.

Table 4: Length of Service and Employees' Experiences form Recruitment & Selection Process

Length of Service	Employees' Experiences from Recruitment and Selection Process			Total
	Good	Bad	Moderate	
1 yr. - 5 yr.	18 32.7%	2 3.6%	19 34.5%	39 70.9%
5 yr. - 10yr.	7 12.7%	1 1.8%	6 10.9%	14 25.5%
10 yr. – 15 yr.	1 1.8%	0 0.0%	1 1.8%	2 3.6%
Total	**26 47.3%**	**3 5.5%**	**26 47.3%**	**55 100.0%**

The study in table 4 reveals that majority of respondent (34.5) are having less than five year of experience and they are satisfied from employee's recruitment & selection process of organization. With that it also represents 25 per cent employees completed his/her five year of service but not completed ten year of service had similar experience on recruitment process of organization as previous category of employees had, only few people are having bad experience in recruitment process of organization. There is no association found between Length of service and Employee experience from recruitment and selection process.

Table 5 (See in next page)

The table 5 is showing that the induction programme in Head office and their duration of induction programme is 2 days that is representing 27.3 per cent. The place of induction programme is "branch itself" and the duration of induction programme is organized as per the needs of employees that responded by 10.9 per cent. However, very few employees had off-the-job training and their duration of Induction programme depended on the needs of employees. There is no association between Place of Induction Programme and Duration of Induction Programme.

Table 6 (See in next page)

The study in table 6 finds that the mainstream (43.6 per cent) of employees' belonging to General Caste and they are satisfied from organizational promotion and transfer policy. The employees belonging to other backward class are not satisfied from organizational policies and represented by 10.9 percent. The schedule caste & schedule tribes represent similar kind of picture and represented by 3.6 per cent. There is no association generate between Caste of Respondent and Employees Satisfaction from Promotion and Transfer Policy of Organization.

Suggestions :

1. Management should try to give equal employment opportunity to each gender so that gender equality could be promoted in the society.
2. The organization should recruit professional and technical employees for development and advancement of organization. Professionally qualified employees are effective strategic planner for achieving the organizational goals & objective.
3. Organization should provide employment to all castes of society on the basis of their knowledge, skills and professional qualification for the fulfilment of his social responsibility.

Conclusion - If an organization is to achieve its goals, it needs inputs: financial resources (such as money and credit), physically resources (such as building and equipment), and people. Too often, managers forget about how important that third factor, the people variable, is to the success of an organization. Many managers have failed because they have taken their human resource for granted.

References :-

1. Rao p. Subba, 2006, Personnel and Human Resource Management, Himalaya Publishing House, Delhi.
2. Ghanekar Anjali, 2006, Human Resource Management (Managing Personnel the HRD way.
3. Chhabra T. N., 2005, Human Resource Management (Concept and issues), Dhanpat Rai & Co. (P) Ltd., New Delhi

Table 1: Length of Service & Monthly Income of employee

Length of Service	Monthly Income of Respondents			Total
	Less than Rs.15,000	Rs.15,000 to Rs. 30,000	More than Rs. 30,000	
Less than 5 yrs.	21 38.2%	15 27.3%	3 5.5%	39 70.9%
5 yrs. - 10 yrs.	6 10.9%	5 9.1%	3 5.5%	14 25.5%
More than 10 yrs.	0 0.0%	1 1.8%	1 1.8%	2 3.6%
Total	**27 49.1%**	**21 38.2%**	**7 12.7%**	**55 100.0%**

Table 5: Place of Induction Programme & Duration of Induction Programme

Place of Induction Programme	**Duration of Induction Programme**				**Total**
	1 Day	**2 Day**	**1 Weak**	**As Per Needs**	
Branch Itself	2 3.6%	5 9.1%	1 1.8%	6 10.9%	14 25.5%
Head Office	3 5.5%	15 27.3%	13 23.6%	8 14.5%	39 70.9%
Off the Job Training	0 0.0%	0 0.0%	0 0.0%	2 3.6%	2 3.6%
Total	**5 9.1%**	**20 36.4%**	**14 25.5%**	**16 29.1%**	**55 100.0%**

Table 6 : Caste of Respondent & Satisfied From Transfer & Promotion Policy of Organization

Caste of Respondent	**Satisfied From Promotion & Transfer Policy of Organization**				**Total**
	Not Satisfied	**Satisfied**	**Highly Satisfied**	**Not Applicable**	
Schedule Caste	1 1.8%	0 0.0%	0 0.0%	1 1.8%	2 3.6%
Schedule Tribes	1 1.8%	1 1.8%	0 0.0%	0 0.0%	2 3.6%
Other Backward Class	6 10.9%	4 7.3%	0 0.0%	0 0.0%	10 18.2%
General	11 20.0%	24 43.6%	2 3.6%	4 7.3%	41 74.5%
Total	**19 34.5%**	**29 52.7%**	**2 3.6%**	**5 9.1%**	**55 100.0%**

****

पहाड़ी चित्रकला में शारीरिक भाषा और उसके आकार-प्रकार की विविधता का प्रयोग

डॉ. सचिन सैनी *

प्रस्तावना - पहाड़ी चित्रकला का भी भारतीय चित्रकला में महत्वपूर्ण योगदान है। भारत का भक्ति आंदोलन पूरे देश में जिस युग में फैला उस काल में यह पहाड़ी चित्रकला का विषय बन गया। इस विषय में यह माना गया है कि- 'वैष्णव धर्म राजस्थान तथा उत्तारी भारत के मैदानी क्षेत्र तक ही सीमित न रहा बल्कि पहाड़ी क्षेत्रों में भी पहुँच गया और पहाड़ी चित्रकार की प्रेरणा का मुख्य आधार बना। बसोली शैली के चित्रों में वैष्णव धर्म की विचारधारा और भक्ति भावना दिखाई पड़ती है। इस शैली में विष्णु तथा उनके दस अवतारों के चित्र प्राप्त हैं।'[1]

बसोली चित्रकार ने समकालीन इतिहास को अमर बनाने का कार्य इस प्रकार किया कि- 'यह चित्रकार प्राय: दरबार का एक सदस्य होता था इस कारण उसका प्रमुख उद्देश्य राजाओं, दरबारियों तथा दरबार के अन्य सम्मानित सदस्यों जैसे विद्धानों, संगीतज्ञों, संतों आदि के चित्र बनाना था। इस प्रकार बसोली में चित्रकार ने समसामयिक इतिहास को अमर बना दिया है।'[2]

मानवेतर प्राणियों विशेषकर कृष्ण से जुड़ी गायों आदि का चित्रण करते हुए 'शारीरिक भाषा' और उसके आकार-प्रकार की विविधता का प्रयोग बसोली चित्रकला में मिलता है। - 'बसोली शैली के चित्रों में ढोरों का अंकन निजी ढंग से किया गया है। बसोली के चित्रों में पशुओं को दुबला, पतला, भूखा, पिचके पेट वाला तथा लम्बे कान और मुड़े हुए सींगों वाला बनाया गया है। यह पशु जम्मू की स्थानीय जाति या बूंदाबन की गौ जाति के प्रतीक हैं, परन्तु कांगड़ा शैली के चित्रों में ढोरों को हृष्ट-पुष्ट और मोटा-ताजा बनाकर हरियाणा जाति के पशुओं का ही अंकन किया गया है।'[3] मुखाकृतियों के मामले में भी पहाड़ी व बसोली चित्रकला में किये गए प्रयोग अनूठे हैं। - 'बसोली के चित्रकारों ने रंग का मौलिक और सजीव प्रयोग ही नहीं किया है अपितु स्त्री तथा पुरुष मुखाकृति को नवीन रूप प्रदान किया है। बसोली शैली के चित्रों में मानव आकृतियों के चेहरों की बनावट विशेष प्रकार की है, जिसमें ढलवा माथा तथा ऊँची नाक को एक ही प्रवाहपूर्ण, अटूट रेखा से बनाया गया है। नेत्रों को कमलाकर रूप प्रदान किया गया है और नेत्रों की विशालता मनमोहक तथा अबोधतापूर्ण है। बादामी वर्ण के शरीर वाली नायिका बसोहली के चित्रकार को प्रिय थी। स्त्रियों को सुकोमल और सुंदर अंग-भंगिमाओं में अंकित किया गया है जिससे उनके रूप और लावण्य की शोभा और भी मनोहारी हो गई है।'[4] इस समबन्ध में श्री मुल्कराज आनंद लिखते हैं कि- "The essence of Basohli style is what may by called its expression-the enactment of dramatic episodes in paint"[5]

बसोली चित्रकला की प्रमुख विशेषतायें समीक्ष्य दृष्टि से से विवेच्य हैं। इस चित्रकाला में रेखाओं में अप्रत्याशित ओज, उन्मुक्तता व गति देखने को मिलती है। - 'स्त्री-पुरुषों की आँखें बड़ी-बड़ी किन्तु रसपूरित बनी हैं। मुख मन्डल में ललाट पीछे की ओर जाता हुआ, लम्बी नाक, पहले अधर व उभरे गाल हैं। प्राय: मुगलिया वेषभूषा ही यहाँ प्रचलित रही है।........बसोहली चित्र-कलम के विकास के सम्बन्ध में डॉ एम. एस. रन्धावा के विचार बड़े सराहनीय हैं- "Basohali style arose as a result of the marriage of the folk art of hills with Mughal technique…They lack subtlety, delicacy and refinement of Kangra style, they have vigour and the quality of simplicity."[6]

चित्र- गोपियां कृष्ण को ढूंढते हुए भगवत पुराण कांगड़ा शैली, कागज पर टेंपरा स्वर्ण के साथ ए 1780

इसी क्रम में चम्बा की मानवाकृतियां और मुद्रायें नाटकीय और विशिष्ट हैं- 'चम्बा की चित्रकारी में स्त्री तथा पुरुष का सौन्दर्य विशिष्ट है। चम्बा में मानवकृतियाँ लम्बी और हृष्ट-पुष्ट बनायी गई है। सामान्यत: मानवकृतियाँ खड़ी हुई मुद्रा में बनायी गई हैं। चम्बा के चित्रकार ने भावभिव्यक्ति के लिए हस्तमुद्राओं तथा अंग-भंगिमाओं को नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया है। मानवकृतियों के माथे ऊँचे तथा चिबुक बड़ी और भारी बनायी गई, जिससे चम्बा शैली की आकृतियाँ अन्य शैलियों की मानवकृतियों से पृथकत्व प्राप्त कर लेती हैं। स्त्रियों के नेत्र बड़े और प्राय: कर्णस्पर्शी बनाये गए हैं, परन्तु ग्रीवा सुडौल और लम्बी है।'[7]

गुलेर शैली के चित्रांकन ने रेखाओं की बारीकियों के जरिये शारीरिक सौन्दर्य को आकार दिया है- 'इन चित्रों में भंगिमाएँ तथा मुद्राएँ सुंदर हैं। प्रत्येक आकृति की कुछ अपनी व्यक्तिगत विशेषता और छवि है। इन चित्रों

* स्कॉलर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (नई दिल्ली) भारत

में रेखा बहुत ही कोमल, महीन (बारीक) और प्रवाहपूर्ण है। इन चित्रों में प्रकृति की यथार्थ छटा बिखरी हुई है, परन्तु बसोली शैली में बने चित्रों की सीमा रेखाएँ शिथिल, सुनिश्चित आलंकारिक व योजनाबद्ध हैं तथा सपाट लाल धरातल का अधिक प्रयोग है। इन चित्रों में स्त्रियों के चित्रण में भौतिकवादी दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है और चित्रकार ने स्त्रियों के छन्दमय शारीरिक सौन्दर्य तथा यौन-प्रतीकों का स्वतंत्रता से प्रयोग किया है, जिनमें काव्यात्मकता और परिमार्जन दृष्टिगोचर होता है।'[8]

इसी तारतम्य में कांगड़ा शैली भी मानव आकृतियों की बनावट की दृष्टि से उत्ताम है- 'इन चित्रों में हल्की गोलाई का आकृतियों में प्रयोग किया गया है, जिससे मानव आकृतियों का सौन्दर्य निखर आया है। अधिकांश चित्रों में पशु-पक्षियों, नदियों, वृक्षों, लताओं तथा पुष्पों का प्रयोग भी प्रेमियों के मनोवेगों के उद्दीपन हेतु किया गया है। आनंद कुमारस्वामी के शब्दों में- ययह शैली एक ऐसी कला है जिसमें भावना का पूर्ण त्याग भौतिक तथ्य के संसर्ग पर आधारित है।"(The complete avoidance of sentimentality is founded on the constant reference to the physical fact.)"[9]

ऐसा माना गया है कि कांगड़ा और गुलेर चित्रांकन में नायिकाओं आदि की भाव-भंगिमाओं में अंतर की स्थापना ही इनके विभेद का कारण बनी हैं इससे विविध शैलियों में 'शारीरिक भाषा' के प्रयोगान्तर के महत्व का आभास सहज ही हो जाता है- 'गुलेर शैली में स्त्रियों के चेहरे के चित्रण की तीन शैलियाँ प्रचलित थीं, जिनमें से दो समाप्त हो गईं और तीसरी शैली को कांगड़ा में उच्चस्तर प्राप्त हुआ। कांगड़ा शैली में स्त्रियों की मुद्राओं में भी विशेष अंतर आया। गुलेर शैली में बैठी हुई या खड़ी हुई नायिकाएँ बनायी गई थीं, परन्तु कांगड़ा की नायिकाएँ सुकोमल, सौन्दर्यपूर्ण, गतिवान, खड़ी मुद्रा में, लज्जा में लतिका के समान नत मस्तक अपने पटों को फहराती अंकित की गई हैं।'[10]

चित्र- नहाती हुई स्त्री और दासियां, कांगड़ा शैली

रूप और आकर की दृष्टि से अंगों की गोलाई, डील-डौल की अपने विशिष्टता के साथ कांगड़ा शैली खड़ी है- 'कांगड़ा शैली के चित्रों में वक्रीय आकारों को अपनाया गया है और स्त्री तथा पुरुष दोनों के ही अंगों में यथोचित गोलाई तथा सुडौलता है। स्त्रियों के चेहरे, अंग-भंगिमाओं तथा हस्त-मुद्राओं के बनाने में चित्रकार ने कमाल कर दिया है। स्मृति, कल्पना तथा नियमों की जकड़ के रहते हुए भी यथार्थ ढंग से अंकित किये हैं प्राय: मानवाकृतियों के नेत्रों को कमलाकार बनाया गया है और चिबुक गोल, पतले, गुलाबी अधर तथा लम्बी-सीधी नासिका बनायी गई है। चेहरे में गोलाई लाने के लिए परदन के पास तथा आँख के पास सुकोमल छाया का प्रयोग किया गया है। कांगड़ा के चित्रकारों ने नेत्रों को भावपूर्ण और उल्लापूर्ण बनाया है जिससे जीवन की सजीवता परिलक्षित होती है। स्त्रियों के सुकोमल, लहराते हुए श्याम केश कन्धों पर नागिन के समान लहराते पारदर्शी दुपट्टों में चमकते हुए दिखाये गए हैं। अधिकांश चित्रों के चेहरों को एकचश्म बनाया गया है तथापि डेढ़ चश्म चेहरों का प्रयोग भी किया गया है परन्तु उनमें रेखांकन की कुशलता और परिमार्जन नहीं है।'[11] कांगड़ा चित्र शैली की विशेषताओं के सम्बन्ध में डॉ. आनन्द कुमार स्वामी का अभिमत इस प्रकार है- "The figures are now more animated, the line more fervor and fluent; the research of physical charm is deliberate, women are willowy and slender, their eyes very ling and curved and deep dyed, fingers are delicate and tapering."[12]

कुल्लू शैली में नायिका के शारीरिक गठन पर चित्रकार ने विशेष ध्यान दिया है। स्त्री और पुरुष के शारीरिक रूपाकार की स्वतंत्र विशेषतायें अंकित करने में सफलता पाई है। कुल्लू शैली के चित्रों की आकृतियों का भारी चेहरा और पुष्ट या भारी चिबुक, विशाल नेत्र तथा आकृतियों में अबोधता की भावना के कारण ये चित्र सरलता से पहचाने जा सकते हैं। इन चित्रों में स्त्रियों की चोली कमर तक बनायी गई हैं। इस चोली में झालर का भी प्रयोग है और आगे की ओर कोणाकार झालर बनायी गई है। स्त्रियों की वक्षस्थली (उरस्थली या छाती) सपाट और भारी बनायी गई हैं। पुरुषों के धड़ सिर की तुलना में बड़े और अत्यधिक हृष्ट-पुष्ट बनाये गए हैं।[13] इसी इलाके की गढ़वाल शैली के चित्रों की भावाभिव्यंजक मुद्रायें और आकृतियों की विशेषतायें उल्लेखनीय बन पड़ती हैं-'गढ़वाल शैली के चित्रों में आकृतियों को कांगड़ा शैली की अपेक्षा सरल और सपाट बनाया गया है और रेखा भी उतनी कोमल, गोलाईयुक्त और डौलपूर्ण नहीं है। गढ़वाल शैली के चित्रों में रेखा अधिक बलवती और प्रवाहपूर्ण है। गढ़वाल शैली की आकृतियों में अधिकांश वक्रीय आकृतियों को अपनाया गया है। स्त्रियों को सुंदर और भावपूर्ण मुद्रा में बनाया गया है। बड़े-बड़े कमल नत्रे, लम्बी सीधी, नाक, गोल चिबुक, भावाभिव्यंजक हस्तमुद्राएँ तथा अंग-भंगिमाएँ गढ़वाल शैली की स्त्री-आकृतियों की विशिष्टता हैं। कुछ चित्रों में काली स्याही से चित्र की आकृतियों की खुलाई की गई है जो रुहेला प्रभाव है।'[14]

समीक्ष्य विषय की ओर अग्रसर होते हुए भारतीय चित्रकला के इतिहास व विकास पर दृष्टिपात अपरिहार्य मानते हुए हमने आधुनिक काल की पूर्वपीठिका पर एक विहंगम दृष्टिपात किया है। इस दृष्टिपथ से से एक ओर प्रागैतिहासिक काल से मुगलकाल तक की समयावधि पर विचार किया गया एवं विशेषज्ञ अभिमतों का समीक्ष्य विषय में उपयोग किया गया, वहीं दूसरी ओर विभिन्न शैलियों पर भी 'शारीरिक भाषा' के प्रयोग के दृष्टिकोंण से अवलोकन किया गया। सारांश के रूप में हम पाते हैं कि आधुनिक काल की जिस चित्रकला में हम शारीरिक भाषा, भाव-भंगिमा के विश्लेषण का विवेच्य लक्ष्य रखते हैं उसकी पूर्वपीठिका के कालक्रम में से शारीरिक भाषा विविध तरीकों से चित्रांकन में उपस्थित रही है। चित्रकला अपने आदिम रूप से ही समाज, संस्कृति, मनोभाव, संदेशप्रियता, प्रकृति और प्राणि व अप्राणितत्वों को देखने और समझने के चित्रकार के दृष्टिकोंण की परिचायक रही है। गुहाओं के भित्तिचित्रों में यह शारीरिक भाषा अपने आरंभिक लेकिन

चमत्कृत कर देने वाले रूपों के साथ विद्यमान है। गुहावासी मानव स्वयं की अनुभूतियों को इन चित्रांकनों में अभिव्यक्त हाव-भावों के माध्यम से प्रकट करने चेष्टा करता रहा है।

बौद्धकाल की विषयवस्तु से अजंता के माध्यम से चित्रकला को एक और आयाम मिला। भावमयी मनुष्य-आकृतियां मानव के चिंतन-स्तर की परिचायक बनी हैं। धर्मप्रचार का माध्यम होने पर भी यह कला हमें एक व्यापक उपजीव्य सामग्री देती है। मध्यकालीन विभिन्न शैलियों ने अपनी विशिष्टता शारीरिक रूपाकारों के सम्बन्ध में निर्धारित की है। जैन शैली, पाल शैली,, अपभ्रंश शैली, बादामी शैली, सित्तनवासल, आदि ने रेखाओं, उभार, गठन, भावों के अनुरूप आकृतियां आदि प्रस्तुत करके अपनी अपनी मौलिकता अर्जित की है। राजस्थीन चित्रकला में भी स्त्री-पुरुष के चित्रण, अंग-प्रत्यंगों का अभिनव व विशेष आकार के साथ प्रकाशन आदि कारणों से पहचान पाई है। इसके किशनगढ़, जयपुर, बुंदेली आदि शैलियों में हाव-भाव व भंगिमाओं के खास रूप देखने को मिलते हैं। मुगलकाल भले ही राज्याश्रय और व्यक्तिचित्र केन्द्रित रहा हो परन्तु चित्रकार की अपनी विशेषताओं से इस काल का व्यक्ति-निरूपण विशिष्ट बन गया है। अकबर, जहांगीर, शाहजहां आदि के काल तक यद्यपि ये निरूपण बदलाव पाते गये किंतु शारीरिक संरचना की अभिव्यक्ति का मूल बरकरार रहा। जो मानव और मानवेतर दोनों प्राणियों के चित्रण में देखने को मिलता है।

समीक्ष्य विषय की ओर अग्रसर होते हुए हम पाते हैं कि पहाड़ी चित्रकला, बसोली, चम्बा, गुलेर, कांगड़ा और कुल्लू व गढ़वाली शैलियों में मानवाकृतियों का अनूठा चित्रण इसकी ओर संकेत करता है कि आधुनिक काल तक आते आते चित्रकला की मूर्तता, शारीरिकता और भौतिक रूप से हाव-भावों को प्रकट करने का आकृतिमूलक आधार मजबूत होता दिखाई देता है। इस दौरान विभिन्न शैलियों और युग के थपेड़ों में समय-समय पर भले ही इसमे प्रकारांतर पैदा कर दिये हों परन्तु चित्रकला की इस यात्रा में आधुनिक काल की पूर्वपीठिका तक हमें शारीरिक भाषा का पर्याप्त आधार प्राप्त होता है जो विद्वानों के अभिमतों से प्रमाणित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर व अन्य, भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृष्ठ-219-220, 11वां संस्करण, बरेली, प्रकाश बुक डिपो, वर्ष-2006
2. वही, पृष्ठ-220
3. वही, पृष्ठ-222
4. वही,
5. अग्रवाल, आर. ए., कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-153, मेरठ, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1984
6. अग्रवाल, आर. ए., कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-156, मेरठ, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1984
7. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर, भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृष्ठ-226, 11वां सं, बरेली, प्रकाश बुक डिपो, 2006,
8. वही, पृष्ठ-229
9. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर, भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृष्ठ-232, 11वां सं, बरेली, प्रकाश बुक डिपो, 2006,
10. वही, पृष्ठ-132
11. वही, पृष्ठ-241
12. अग्रवाल, आर. ए., कला विलास-भारतीय चित्रकला का विकास, पृष्ठ-153, मेरठ, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1984
13. वर्मा, डॉ. अविनाश बहादुर व अन्य, भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृष्ठ-246, 11वां संस्करण, बरेली, प्रकाश बुक डिपो, वर्ष-2006,
14. वही, पृष्ठ-257

****

भारत में महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका

मनोज जैन *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र भारत में महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका से है। वर्तमान समय में भारत विकासशील देशों की श्रेणी की ओर अग्रसर है। जिसमें महिलाओं के सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका भी रही है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार साक्षरता की दर 70.04 प्रतिशत पर पहुंच गई है। इसमें पुरूषों की साक्षरता दर 82.14 प्रतिशत है और महिलाओं की साक्षरता दर 65.46 प्रतिशत थी वर्तमान में पुरूषों की आबादी का 3/4 भाग और महिला आबादी का आधे से अधिक हिस्सा साक्षर है। पिछले दशक के दौरान महिला साक्षरता की दर में अधिक वृद्धि हुई जबकि पुरूषों के प्रति बढते कदम से सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में महिलाओं की साझेदारी हुई है।

प्रस्तावना – मनुष्य की मानसिक शक्ति के विकास हेतु शिक्षा एक अनिवार्य प्रक्रिया है। स्त्री हो या पुरूष किसी को शिक्षा से वंचित रखना उसकी मानसिक क्षमता विकसित होने से रोक देना है। भारत की लगभग आधी आबादी महिलाओं की है जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में काफी पिछड़ी हुई है। यदि हम जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का सूक्ष्म अवलोकन करें तो हमें विदित होगा कि महिलाओं को लगभग प्रत्येक क्षेत्र में भेदभाव, पूर्वाग्रह एवं असमानता का सामना करना पड़ता है। शिक्षा के क्षेत्र में वे अभी बहुत पिछड़ी हुई है विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएं अभी भी या तो अशिक्षित है या बहुत कम शिक्षित हैं। कुछ मामलों में तो महिलाओं ने प्रगति की है तो कुछ हमारी चिंता बढाने वाली है। महिलाओं की स्थिति कुछ कदम आगे को कुछ कदम पीछे दिख रही है। साक्षरता दर पिछली जनगणना में जहाँ 64 फीसदी थी वहीं इस बार 74 फीसदी आंकी गई है। जिससे पुरूषों में जहाँ 6.88 फीसदी बढ़ी वहीं महिलाओं में 11.79 फीसदी बढी है जो कि महिला शिक्षा की सामाजिक स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन है। इन सभी तथ्यों के फलस्वरूप स्वतंत्र भारत में महिलाओं ने समाज में विकास किया है। उसने अपने वास्तविक महत्व को जाना है और पहचानना प्रारंभ कर दिया है तथा वह अपनी दशा के प्रति सचेत हुई है। यही कारण है कि स्वतंत्र भारत महिला जागरण का युग बन गया है। अब स्त्रियों ने अपनी अखिल भारतीय संस्थाएँ स्थापित कर सभी क्षेत्रों में पुरूष के भांति समान अधिकार प्राप्त कर लिया है। अब उनका कार्यक्षेत्र घर की चार दीवारी तक सीमित न रहकर पुरूष की भांति

महिला सशक्तिकरण – महिला सशक्तिकरण एक व्यापक शब्द है जो मुख्यत: आधुनिकीकरण, सामाजिक एवं आर्थिक विकास से सम्बन्धित है। यह एक व्यवस्थित, वैश्विक, चरणबद्ध, निरन्तर दीर्घकाल तक चलने वाली परिवर्तनशील प्रक्रिया है। जिसमें जीवन की गुणवत्ता होती है। इस प्रकार महिला सशक्तिकरण का सामान्य अर्थ है– महिलाओं को शक्ति सम्पन्न बनाना परन्तु व्यापकता में इसका अर्थ सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक क्षेत्रों में महिलाओं की साझेदारी है। आत्मनिर्भरता एवं निर्णय लेने की क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक है।

भारत में महिला साक्षरता – साक्षरता का अगर ऐतिहासिक परिपेक्ष्य में विश्लेषण करें तो स्पष्ट होता है कि प्राचीनकाल में भारत की साक्षरता सर्वव्यापक रही होगी। क्योंकि उस समय जाति व्यवस्था कठोर नहीं थी और समाज में महिलाओं का स्थान भी ऊँचा था। पश्चातवर्ती वर्षों में विशेष रूप से मध्यकाल के आरंभ से विदेशी आक्रमणों, पर्दा प्रथा के प्रचलन, जातिगत व्यवसायों की प्रथा के प्रचार के साथ साक्षरता का मार्ग अवरूद्ध सा हो गया। ब्रिटिशकाल में शिक्षा मुख्य सरकारी नौकरियों से जुड़ गई और इसकी सुविधा कुछ विशिष्ट वर्ग तक सीमित होकर रह गयी तथा अधिसंख्य निम्न वर्ग को शिक्षा से दूर रहने के प्रयास किये जाते रहे। कालान्तर में भारत में विभिन्न सामाजिक आन्दोलनों के प्रणेताओं जैसे राजाराम मोहनराय, ईश्वरचन्द विद्यासागर ने महिलाओं की शिक्षा पर जोर दिया। महात्मा ज्योतिबा फुले, पेरियार एवं बाबा साहेब अम्बेडकर ने निम्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हुए महिलाओं की शिक्षा हेतु भी कई अग्रगामी कदम उठाये भी किन्तु स्वाधीनता उपरान्त ही भारत सरकार के प्रयासों से महिला साक्षरता की दिशा में उत्साहवर्धक संकेत परिलक्षित हुए।

भारत में स्त्री शिक्षा की स्थिति :–

भारत में 1901 से 2013 तक साक्षरता वृद्धि के आंकड़ों में महिलाओं की स्थिति

वर्ष	कुल वृद्धि	पुरूष	स्त्री	वृद्धि दर में अन्तर
1901	5.35	9.83	0.60	9.27
1911	5.92	10.56	1.05	9.57
1921	7.16	12.21	1.81	10.40
1931	9.51	15.59	2.93	12.60
1941	16.10	24.90	7.30	17.60
1951	18.33	27.16	8.86	18.30
1961	28.30	40.40	15.35	25.05
1971	34.45	45.96	21.97	23.98
1981	43.56	56.38	29.76	26.62
1991	52.21	64.13	3929	24.84
2001	64.8	75.26	53.67	21.59
2011	74.04	82.14	65.46	16.68

स्त्रोत: भारत की जनगणना 2011

सन् 1901 में हमारे देश में स्त्री साक्षरता मात्र 0.6 प्रतिशत थी जो स्वतंत्रता के उपरान्त 1951 में बढ़कर 8.9 प्रतिशत हो गयी। स्वतंत्र भारत के संविधान में 14 वर्ष तक की आयु के सभी लड़के –लड़कियों के लिये अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा की बात कही गई थी। यह हमारा दुर्भाग्य है कि नई शताब्दी में प्रवेश करने के उपरान्त भी हम इस लक्ष्य को आज तक भी नहीं प्राप्त कर पाये। जनगणना 2011 की अंतिम रिपोर्ट से पता चलता है कि

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

भारत ने 2001 की जनगणना के बाद के दशक के दौरान साक्षरता के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। 2011 की जनगणना में साक्षरता की दर 74.04 प्रतिशत दर्शायी गई है जो 2001 में 64.84 प्रतिशत थी। इसी दौरान स्त्री साक्षरता की दर में 11.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। 2001 में यह 53.7 प्रतिशत थी जो बढकर 2011 में 65.5 प्रतिशत हो गई। 2001- 2011 अवधि के दौरान स्त्री साक्षरता दर में 11.79 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि पुरूष साक्षरता दर में 6.88 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

अत: साक्षरता और नामांकन से सम्बन्धित विभिन्न आंकड़ों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शिक्षा के क्षेत्र में लिंग पर आधारित भेदभाव धीरे-धीरे कम हो रहे हैं।

निष्कर्ष - प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका अहंम होती है तथा देश का सर्वागींण विकास तभी संभव है जबकि महिला शक्ति सशक्त हो शिक्षा वास्तविक अर्थो में सत्य की खोज है। यह ज्ञान एवं प्रकाश की अंतहीन यात्रा है। ऐसी यात्रा महिला सशक्तिकरण के विकास के रास्ते खोलती है। शिक्षा के नये रास्तों एवं प्रगति की मंजिल को महिलाएँ समझ ले तो महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्तर पर सशक्त बनकर देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। शोध अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि आज भारतीय संदर्भ में महिलाओं की समग्र स्थिति-परिस्थिति पर व्यापक दृष्टि से स्वस्थ नजरिये के साथ पुन: चिंतन एवं मनन करने की आवश्यकता है। इसके साथ ही महिलाओं को सशक्त बनाने के लिये शिक्षा का उचित विकास एवं प्रयोग कर महिला शक्ति को पूर्णत: सशक्त बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नीरज कुमार, 'महिला शक्ति कुछ कोशिशें', कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
2. व्होरा आशारानी, 'भारतीय नारी दशा एवं दिशा', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
3. डॉ. शर्मा ऋषभ देव, 'स्त्री सशक्तिकरण के विविध आयाम', गीता प्रकाशन, रामकोट हैदराबाद।
4. यादव, दयाशंकर सिंह, 'भारत में शैक्षिक नीतियों एवं कार्यक्रम में महिला सशक्तिकरण' योजना-2016, सूचना भवन, नई दिल्ली।

****

Historical account of Jabalpur's name

Dr. Nilesh Sharma *

Introduction - The study of names of places adds to a significant place in historical studies and research. How a place got its name has to do a lot with the history of the region. There are lots of stories and a series of events that gives a city or town its name. However its not always easy to reach to the roots of the nomenclature of a certain place. A name may have an immense background in its existence. Studying place's names are important in a lot of aspects. By studying it, we get know about the traditions and facts related to that place.

The geographical features also has a contribution in naming the place. For example, on delving deeper into the history of names of places located in areas surrounded by forests, we discover that names are related to the names of trees found in abundance in that region. Such as Peepal (or Pipar), Bargad (or badh), Jamun, Imli, Bel, Mahua etc. The names of some villages or towns such as Pipariya, Jamuniya , Imaliya, Belkheda, Amahra, Amgawan, Barkheda, Simariya, Hardua etc. are all inspired by the names of these trees. Some places have their names influenced by a nearby lake or ponds. Sometimes, the names could just be a combination of both lakes and trees. The examples of such places are Sagar and Belsara.

The trend of naming places after the animals has also been known. Such as Richhai, Baghauli, Bhaisdehi, Hathiyagadh etc. places are also named after the names of deities and rulers like Rampur, Ramnagar, Narayanpur, Vijayraghavgarh, Surajpur etc. In the similar way the name of Jabalpur also has a historic significance. A specimen of social harmony is also reflected through the evolution of this name. We will discuss this evolution in detail.

The Arabic word "Jabal" as a proposed source - This theory is mentioned in the book "Bhaugolic Namarth-Parichay" written by Raibahadur Dr. Hiralal and Jabalpur Gazetteer. This theory is related to the geographic features of Jabalpur. According to this, Jabalpur city is surrounded by hills. That is why it was named after the Arabic word "Jabal" which means hill and the word "Pur" is taken from Sanskrit. This theory was rejected by Raibahadur Dr. Hiralal. He states that Muslims came to Jabalpur long after the place was first settled by people. This is why it is not likely to have an Arabic source for its name. Recently Prof. Vishwabhar Sharan Pathak have rejected this theory and approved of Dr. Hiralal's conclusions.

Theory of naming after sage Jabali - An important theory on naming Jabalpur was proposed by Raibahadur Hiralal. According to him, a place called tripuri which is about 15 kilometers from Jabalpur was the capital of Kalchuri Kings. In the scriptures written by these kings, the name "Jabalipatan" or "Jauli Patta"is mentioned. This is believed to be the ancient name of Jabalpur and Jabali was an eminent sage. His ideals were in contrast to the prevalent religion because of which sage Jabali and his disciples were expelled from Tripuri and so they travelled some distance away from Tripuri settled in nearby hills. They named this place "Jabalipattan".

This proposition made by Dr. Hiralal was validated by many scholars as it is and it also got a public approval. Prof. Vishwambhar Sharan Pathak disagreed to the proposition made by Dr. Hiralal. According to Prof. Pathak, during the time of sage Jabali, towns were named after him which is mentioned as "Jabalipur" in a scripture which is located at present day Jalor district of Rajasthan. It was the capital of Songir which was a state of Chahman dynasty. The rock edict obtained from here mentions the kumara vihar in Jabalipur built by Kumarapal Solanki. Prof. Pathak suggests that considering the nature of linguistics, Jalor can be derived from Jabalipur, but derivation of Jaoli or Jabal from Jabali is not in line with the scientific approach of naming. The chapter of the manuscript is also "Jaoulipattala"and not "Jabalipattan".

The word "pattala"was used as a unit of area in Kalchuri scriptures. This cannot be compared to the word "pattan" which means city. No literary or any other source proves that any place was related to Jabali which later was called to be Jabalpur. Also the fact that sage Jabali had to leave the place for having contrary opinions to the prevalent faith is an unreliable statement because Jabali was renowned for his philosophies and accomplishments in vedic literature. The Kalchuri kings of Tripuri also provided conservation to Shaiv and Pashupath communities. They cannot be considered to be dissenter of Vedic ideology.

Naming after the Hun word "Jaoul" or "Jaouli" - Dr. Budhprakash In his book 'Aspects of Indian History and Culture' suggested that Jaouli pattala is used for the present day Jabalpur which is also the site where those manuscripts where obtained. The word Jaoul correlates to the name Jabul assumed by the Huns. It seems like due to external pressure some of the huns settled here and established a city and this was the center of their settlements in Madhya

*Guest Faculty (History) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

Pradesh region. In the similar way a modified form of Jaoul, Jaouli is also considered as the source word for the name of Jabalpur.

The word Jaouli is mentioned in three Kalchuri manuscripts in the form of Pattala. In Yashkarna's Jabalpur manuscript, Jaoulipattala is mentioned along with the word 'samavasita' which may refer to foundation of a new town at this place and approval of a new Pattala was given by the King. In this way, Jaoulipattala was established at around 1084 AD. Jaoulipattala is also mentioned in the Bhedaghat manuscript of Kalchuri king Narsimha during 1155 AD. It says about the donations given by mother of Narsimha to build Baidhnath temple at Namundi village which was under the Jaoulipattala constituency and at Makarpatak which was located on the right bank of river Narmada. Makarpatak is identified as Magarmuha village at present to the right of Bhedaghat whereas Namundi could not be identified.

In another manuscript of Kalchuri ruler Vijay Singh, Jaoulipattala is mentioned. In this way Jaoulipattala consisted of nearby places of Jabalpur. In post medieval period, The huns were not so powerful but they had their influence in various parts of the country. In Karanbel manuscript, the presence of Huns in royal court of Lakshmikarna is mentioned. Through the scripts and currencies discovered, it is indicated that Kalchuris were under the Huns. In Yaskarna's manuscript, it is said that Lakshmikarna was evolved out of the greater Hun dynasty. The part of the script which says about the lineage, there is no general description of the queens, considering which, the Kalchuri inspite of being related to Huns, have a rather significant status of Aavalladevi.

Lakshmi Karna renunciated his throne and coronated his son Yash Karna. This is because he wanted his son to be coronated by the Hun royal priest. So he did this while he was alive so that no one could oppose it. In this way the word 'Jaouli' is somewhat related to the Hun queen. This suggests that Lakshmi Karna established a pattala by the name Jaouli for his royal priest which gave Jabalpur half of its name to which 'pur' was added later. After the Kalchuri's this pattala got smaller in area and was confined to only a city as it is at present.

Conclusion - The above postulates are based on various historical sources in the form of manuscripts, coins and the scientific fundaments of linguistics which plays an important role in the evolution of names of places. It seems to be that Jaouli Pattala rather than being a name of town was a Hun territorial unit. How this unit got converted into a name of city could not be sufficiently supported by historic facts. The source of Jabalpur's name is still under research. There has not been a common conclusion achieved yet regarding the actual sources and various opinions are being presented and argued upon by many scholars. However the above theories do provide a lot of evidences and paves way for further studies in this direction.

References :-

1. Krishnan, V.S., "Madhya Pradesh District Gazetteer: Jabalpur", Government Central Press, Bhopal, 1994, Pg. 40-44.
2. Bhattacharya, P.K., "Historical Geography of Madhya Pradesh: From Early Records", Motilal Banarsidass Publishers, Delhi, 1977, Pg. 127-129.
3. Ibid, Pg. 246-248.
4. Verma, Rajiv Kumar, "Feudal Social Formation in Early Medieval India: A Study of Kalachuris of Tripuri", Anamika Publishers, New Delhi, 2002, Pg. 57-62.
5. Ibid, Pg. 130.
6. Hira lal (Raibahadur), "Inscriptions in Central Provinces and Berar", Govenrment Print C.P., Nagpur, 1932, Pg. 25-27.
7. Ibid, Pg. 42-43.
8. Prakash, Buddha, "Aspects of Indian History and Civilization", Shiva Lal Agarwala, Agra, 1965, Pg. 175-178.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

पौराणिक साहित्य में पर्यावरण चेतना

ममता चौहान *

शोध सारांश – मानव तथा पृथ्वी के अन्य जीवधारियों के जीवन का उनके चतुर्दिक विद्यमान पर्यावरण के साथ अन्योन्याश्रितता का सम्बन्ध रहा है। पृथ्वी ग्रह पर प्राणियों का अस्तित्व एवं विकास आसपास के पर्यावरण से नियंत्रित एवं निर्धारित होता रहा है। भौतिक तथा जैविक पर्यावरण के अवयव एक-दूसरे के पूरक हैं तथा एक-दूसरे के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए आवश्यक है।

जीवन का अस्तित्व मुख्य रूप से पर्यावरण पर निर्भर है। जीव तथा पर्यावरण प्रकृति के एक तन्त्र के रूप में सह-सन्तुलन कायम करते हैं। प्रकृति एक निश्चित नियमबद्धता से कार्य करती है। यदि उसके किसी अवयव या श्रंखला के साथ मनुष्यों द्धारा छेड़छाड़ की जाती है तो परिस्थितिक सन्तुलन बिगड़ जाने के कारण प्राणी जगत् को हानिकारक परिणाम भुगतने पड़ेत हैं।

मानव का पादपों से आदिकाल से ही सम्बन्ध रहा है। आदिम मानव ने विभिन्न पौधों को भोजन, औषधि एवं वस्त्रों के लिये उपयोग में लिया। धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन से भी हमें ज्ञात होता है कि मनुष्य पेड़-पौधों का प्रेमी रहा है। हिन्दू धर्म में भी तुलसी, नीम, आँवला, बरगद, पीपल, हरसिंगार, धतूरा बिल्वपत्र, आम, पलाश, नारियल, चन्दन आदि पौधों को किसी न किसी रूप में पूजना एक धार्मिक कृत्य माना जाता है, परन्तु इसके पीछे भी नहीं पौधों के संरक्षण एवं संवर्धन की प्रवृत्ति छिपी है। इसी कारण प्रकृतिक सन्तुलन बना रहता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र विषय पौराणिक साहित्य में पर्यावरण चेतना, में द्धितीय सामाग्री के द्धारा अध्ययन करन सन्दर्भित किया गया है। इसके साथ वैदिक धर्म ग्रन्थों के मूल स्त्रोंत को भी अध्ययन का आधार बनाया गया है।

समस्या :

1. पर्यावरण के सरक्षण की समस्या।
2. अनियंत्रित पौधों की कटाई से पर्यावरण असन्तुलन की समस्या।
3. मानवीय मूल्यों की समस्या।

उद्देश्य – महायोगी भगवान शिव से लेकर इस सृष्टि के छोटे-छोटे जीवों तक अगर अध्ययन करें तो हम पायेंगे कि हरीतिआ से सभी जीव-अजीव जुड़े हुए हैं, फिर चाहे वह बोधि वृक्ष हो या पानी में जमी हुई काई हो, धतूरे के बीज हो या कमल पत्र हो, भारतीय संस्कृति का कोई भी अंश इन बेल-पत्रों एवं कुसुम-लताओं एवं विभिन्न फल-फूलों से आच्छादित है।

भारतीय दर्शन के प्राण वेदों में पर्यावरण चेतना के लिए हिन्दूओं की ब्रह्मण्ड व प्रकृति के साथ सुस्वरात्मकता का सन्देश देने वाली एवं सभी के कल्याण की भावना एक सनातन सत्य के रूप में विद्यमान है। स्वर्गलोग, अन्तरिक्ष लोक तथा पृथ्वी लोग हमें शान्ति प्रदान करें। जल शान्ति प्रदायक हो औषधियाँ तथा वनस्पतियाँ शान्ति करने वाली हों। सभी देवगण शान्ति प्रदान करें। सर्वव्यापी परमात्मा संपूर्ण जगत् में शान्ति स्थापित करें। शांति भी हमें परम शान्ति प्रदान करें।

ॐ द्यौ शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथ्वी शान्तिरायः,
शान्तिशेषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः,
शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः, सर्वंशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः
सा मा-शान्तिरेधि।। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

यजुर्वेद 36-17

विवाह के समय द्धार पर बांधे गये आम के वन्दनवार हो या ग्रीष्म में घर को सजाने के लिये अशोक वृक्ष के पत्तो हो चाहे मिट्टी के बने हुए छोटे-छोटे रंगीन दिये हो, लोक-कला के माण्डने हो या फिर विभिन्न त्यौहारों में बनाये गये दीवारों पर कथाचित्र, ये सभी वानस्पतिक रंग ही कहलाते थे। कालान्तर में तकनीकी विकास के साथ इनमें कृत्रिमता आ गई है, परन्तु रंगों की छटा तो हम प्रकृति के दृश्यों से ही प्राप्त करते हैं।

श्रीमद्भगद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं-

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदाः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलों मुनिः।।

अर्थात् हे अर्जुन ! वृक्षों में मैं पीपल (अश्वत्यः) का वृक्ष हूँ। ज्ञानी और भक्तजन इसी कारा पीपल के वृक्ष की सेवा कर, पूजाकर सहस्त्रों पुण्यों का फल अर्जित करते हैं। हिन्दू धर्म में 'प्रकृति' तथा जीव धारियों व पौधों में पारस्परिक सम्बन्ध मानते हैं। अनेक पशु-पक्षी हमारें देवी-देवताओं के वाहन हैं और उनमें से कुछ में देवताओं का वास भी मानते हैं। पौधों तथा वृक्षों का सम्बन्ध देवी-देवताओं से मानते हैं। उन्हीं वृक्षों में देवी-देवताओं का वास मानकर उनकी पूजा भी करते हैं। उन्हें नित्य-प्रति जल भी चढ़ाते हैं। कुछ पेड़-पौधें तो ऐसे भी होते हैं, जिनमें हमें औषधि प्राप्त होती हैं साथ ही साथ पूजा की सामग्री के रूप में प्रयोग में आते हैं।

समाधान – हमारे पौराणिक साहित्य में इस बात का उल्लेख है कि वैदिक युग में मनुष्य पर्यावरण संरक्षण के लिये हर तरह से संभव प्रयास करता था। प्राकृतिक पर्यावरण के तत्वों व घटकों के प्रति श्रृद्धा एवं विश्वास पैदा करने के लिये उन्हें धार्मिक कर्म-काण्डों, हवन, यज्ञों आदि से जोड़ा गया। धर्म को जीवन से जोड़कर शिक्षा देना पौराणिक काल में प्रभावशाली विधि रही है।

हमारा शरीर पर्यावरण के पंचतत्तवों से मिलकर बना है। इस पर्यावरणा एवं मानव शरीर के समन्वय को स्पष्ट करते हुए तुलसीदासजी ने लिखा है।

'छिति-जल पावक' गगन समीरा।
पंच रचित यह अधम शरीरा।।

(किष्किन्धाकाण्ड, रामचरितमानस)

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

वृक्ष की महिमा महर्षि वेदव्यास की दृष्टि में सबसे महत्वपूर्ण है। मत्स्यपुराण में लिखा है–

दशनकूप समा वापी दशवासीसमोहद:।
दशहृदसमो पुत्र: दशपुत्रोसमो द्रुम:।।

अर्थात् दस कुओं के बराबर एक बावड़ी इस बावड़ियों के बराबर एक तालाब तथा दस तालाबों के बराबर एक पुत्र और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है।

अर्थर्ववेद कहता है कि जिस भूमि में वृक्ष तथा वनस्पतियों सदाखड़ी रहती है, वह भूमि विश्व के समस्त जनों का भरण–पोषण करने में समर्थ होती हैं–

'यस्यां वृक्षा वनस्पत्या ध्रुवास्ण्ठिन्ति विश्वहा।
पृथिवीं विश्वधायसं धृतामच्छावदामसि।।'

यजुर्वेद में 'वृक्षाणां पतये नम:' कहकर वृक्षों की रक्षा करने वालों के लिये सत्कार प्रदर्शित किया गया है। अथर्ववेद में अनेक सूक्त वनस्पतियों को समर्पित हैं। आयुर्वेद में रोग–निवारण के लिये प्रयोग में आने वाली वनस्पतियों में रोग–निवारण के लिए प्रयोग में आने वाली वनस्पति कब, कैसे, किसके द्वारा उखाड़ी जाए, इसकी भी चर्चा की गई है, जिससे कोई अयोग्य पुरूष उस वनस्पति का वंश ही नष्ट न कर दे। ऋग्वेद का 'अरण्यानी' सूक्त वनों की रक्षा के लिये प्रेरणादायक है। इन अरण्यों के बल पर ही हमारी संस्कृति पल्लवित और पुष्पित होती रही है। जहाँ आज भी पीपल, बरगद, बेल और तुलसी जैसे वृक्षों का पूजन इस देश में होता हो, उससे अधिक पौधों के महत्व को कौन जान सकता है।

पर्यावरण को संरक्षित रखने के लिये प्रकृति तथा मानव का उचित समीकरण नितान्त जरूरी है। यदि मूक प्रकृति मानव द्वारा बिना याचना किए उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये हर पल तत्पर है तो बुद्धि तथा वाणी से युक्त प्राणी अर्थात् मनुष्य द्वारा भी उसके संरक्षण का ध्यान रखना परम आवश्यक है। यह मानव का सबसे पहला कर्तव्य हैं। ईशोपनिषद् का यह बहुचर्चित मंत्र इसी ओर संकेत करता हैं–

ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिध्यतें।।

अर्थात् मनुष्य अपनी ईच्छाओं को वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण करें कि उसकी पूर्णता को क्षति न पहुँचे। इस प्रकार पर्यावरण के प्रति जागरूकता के प्रमाण प्राचीन भारत वर्ष के संस्कृति में सदियों पहले से मिलते हैं। ईश उपनिषद् में वर्णित एकमंत्र में इसकी क्षलक मिलती है।

ईशावास्यमिदं सर्व यत्किंचित्जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा: मा गृथ: कस्यस्विद्धनम्।।

इसका अर्थ यह है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड तथा इसके सभी प्राणी प्रकृति की सम्पत्ति है। अर्थात् कोई प्राणी दूसरे से श्रेष्ठ नहीं है। मानव का प्रकृति पर एक छत्र अधिकार नहीं है। बल्कि समस्त प्राणियों का समान अधिकार है। अत: सभी को लालच त्यागकर प्रकृति की उदारता का उपभोग करना चाहिये।

स्कन्द पुराण में पीपल को भगवान विष्णु के समान बताया गया है। किन्तु उसमें यह विश्वास भी व्यक्त किया गया है कि परमात्मा भिन्न–भिन्न स्वरूपों में प्राय: सभी वृक्षों में विद्यमान है :–

'पार्वती विल्वृक्षस्थां लक्ष्मी च तुलसीगताम्।
आदौ सर्ववृक्षमयं पूर्व विश्वमजायत।।' इति

अर्थात् 'सृष्टि के समय में मैं (ईश्वर) समस्त पेड़ पौधों में विद्यमान रहा हूँ किन्तु देवी पार्वती बिल्व में तथा देवी लक्ष्मी तुलसी में निवास करती है।' वराहपुराण में भी वन महोत्सव या वृक्षारोपण समारोह का वर्णन है–

'अश्वत्थमेकं पिचुमिन्दमेकं न्यग्रोधमेकं दशपुष्पजाती:।
द्वे द्वे तथा दाडिममातुलुंगे पंचाम्ररोपी नरके ना याति।।'

अर्थात् जो कोई एक पीपल, एक नीम, एक बड़, दस फूलों के पौधे या लतायें दो अनार, दो नारंगी, और पाँच आम के वृक्ष लगता है। वह नरक में नहीं जाता।

चाणक्य नीति में कहा गया है कि केवल एक फलों–फूलों वाला वृक्ष लगाना पर्यावरण को ऐसा आनन्दमय और सुगंधित बना देता है।

जैसा एक सुपुत्र किसी कुटुम्ब को बना देता हैं –

एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगान्धिना।
वाखितं स्वद् वन सर्वें संपुत्रेण कुलं यथा।।

श्रीमद्भागवत् में वृक्षों के महत्व का वर्णन करते हुए भगवान कृष्ण ने कहा –

पश्यतैनान महाभागान् परार्थेकान्त जीवितान्।
बातवर्षातप हिमान सहन्ते वारयन्ति न:।।

अर्थात् देखों कितने बड़ भाग हैं इन वृक्षों के जो केवल इसलिये जीते हैं कि दूसरों का भला हो। किसी महानता है। उनकी कि ने आंधी, वर्षा और धूप की प्रखरता सहते हुए हमारी रक्षा करते हैं।

निष्कर्ष – अन्त में निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि वेद पर्यावरण में किसी प्रकार के प्रदूषण का स्वागत नहीं करते। यह पृथ्वी सुन्दर रूप वाली, बहुत जलों वाली, ईच्छाओं को पूर्ण करने वाली स्तुतीयोग्य तथा कल्याणमयी है। पृथ्वी का संरक्षण मानव का कर्त्तव्य है और वह तब ही संभव है जब वह प्रतिबद्ध होकर पृथ्वी के रक्षार्थ करणीय कार्यो यथा आरोग्यता बलि, यज्ञ आदि पूर्णतया धारण करें। मनुष्य को कर्त्तव्य है कि वह धुलोक तथा भूलोक का संरक्षण करें क्योंकि वह पुत्र है तथा माता –पिता का संरक्षण करना उसका कर्त्तव्य है।(माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:, अथर्ववेद 12.1.12)।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऋग्वेद (मूल)
2. यजुर्वेद (मूल)
3. अथर्ववेद (मूल)
4. वैदिक धर्म एवं दर्शन, ए.बी. कीथ
5. वैदिक साहित्य और संस्कृति, बलदेव उपाध्याय
6. पर्यावरण प्रदूषण एक चुनौती, नायब सालेह मुहम्मद
7. वैदिक सूक्त सकलेन, डॉ. उमेशचन्द्र पाण्डेय
8. ऋग्वेद 10,29, 3.8, 9.6, 1–91–22, 4.57.3
9. अथर्ववेद 3.3.1
10. छान्दोग्य उपनिषद् 6.11.1.2
11. मुण्डकोपनिषद 2.1.9
12. महाभारत मोक्षधर्म पर्व, 14.8–10.4
13. स्कन्द पुराण–15.21, 20,83
14. बराहपुराण, 172,39
15. चाणक्यनीति दर्पण, 3.14
16. विक्रमचरितम्, भामिनीविलास

****

लोक संस्कृति एवं मृण्मूर्तिकला का ऐतिहासिक अध्ययन

ईश्वर लाल चौहान *

शोध सारांश – लोक संस्कृति का प्रादुर्भव मानव विकास के प्रारम्भिक काल से ही मृण्मूर्ति कला के विकास का पता चलता है। प्राचीन काल में मानव ने मिट्टी के बर्तन में खाना पकाना प्रारम्भ किया है। अनाज भंण्डार हेतु मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग आज भी किया जा रहा है। कला और संस्कृति के विकास ने मानव की प्रगति का इतिहास मृण्मूर्तिकला से निरूपित करते हैं। मानव के प्रारंभिक प्रयास प्राकृतिक और कृत्रिम उत्पादनों द्वारा स्वयं को सजाने-संवारने तक सीमित नहीं था। बल्कि सभ्यता के विकास के साथ मानव की कलात्मक अभिव्यक्ति की जिज्ञासा भी बढ़ी है। जहाँ कला के निर्माण में आज व्यक्ति तरक्की कर रहा है। देशों-विदेशों में कला प्रदर्शन कर पुरस्कार प्राप्त कर रहा है। जबकि मिट्टी के खिलौने, मिट्टी की मूर्तियाँ आदि का निर्माण सदियों से होता रहा हैं। भारतीय लोक संस्कृति और कला में अलग-अलग भागों की अनेक प्रकार की विशेषताऐं पाई जाती है। उसी प्रकार मिट्टी के बर्तन मध्यप्रदेश में भी अनेक प्रकार के प्राप्त होते हैं। 'सबसे प्रथम उज्जैन की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन प्राप्त हुए हैं उन पर विचार करें। इनमें उज्जैन जिले के नागदा की खोदाई में प्राप्त बरतनों को तीन काल में विभाजित किया गया है।'[1]

प्रविधि – इस शोध पत्र में **लोक संस्कृति एवं मृण्मूर्तिकला का ऐतिहासिक अध्ययन** प्राथमिक एवं द्वितीय स्त्रोंतों के आधार पर ऐतिहासिक अध्ययन किया गया है। इसके लिए साक्षात्कार पद्धति का भी अनुसरण लिया गया है। ऐसी अनेक मान्याताओं और प्रथाओं को सन्दर्भित करने का एक प्रयास है। द्वितीयक सामाग्री के रूप में पत्र-पत्रिकाओं, शोध पत्रों आदि का सन्दर्भ हेतु अध्ययन किया गया है। इन्हीं अनुशीलनों के द्वारा तथ्यों की पुष्टि का इतिहास की प्रमाणिकता को सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।

समस्या :

1. मिट्टी की समस्या।
2. पानी की समस्या।
3. मृण्मूर्तियों की बाजारकरण की समस्या।
4. मृण्मूर्तियों के उत्पादन मूल्यों की समस्या।

उद्देश्य :

1. मृण्मूर्तियों से लोक संस्कृति को उन्नत करने का अध्ययन।
2. मृण्मूर्तियों से राज्य प्रतियोंगिताओं में सौन्दर्य के महत्व का अध्ययन।
3. मृदा की उच्च गुणवत्ता से उच्च गुणवत्ता युक्त मूर्ति का अध्ययन।
4. मृण्मूर्तियों से सामाजिक तथ्यों का अध्ययन।

समाधान – इसका ऐतिहासिक प्रमाण चम्बल के पूर्वी भागों में स्थित ढूहें के नीचले स्तर पर मखनियाँ के कुछ पात्र मिलते हैं। जिनमें बाहरी भागों में काले रंगों से चित्रांकन किया गया है। इनका आकार प्रकार भी अलग-अलग है। इन पात्रों को विभिन्न रंगों से चित्रकारी करके सौन्दर्यपूर्ण बनाने का प्रयास किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि बारहसिंहा की सिगों आदि का इन मिट्टी के बर्तनों में अंकन मिलता है। प्रत्येक पात्रों में भिन्न-भिन्न तरह के चित्रों का अंकन है। किसी में सूर्य, तो किसी में नदियों की सौन्दर्य लहरों का चित्रण किया गया है। कुछ में मोर का चित्रांकन पाया जाता है। वर्तमान में मोर की प्रतिमा का उल्लेख मिलाने से लगता है कि आज भी मोर की संख्या उज्जैन में पायी जाती है। इसलिए ऐसी चित्रकारी होना भी स्वभाविक है। ईंटों के आकार को भी बनाकर छोड़ा गया है। मिट्टी के बर्तन, जैसे लोटा, थाली, गगरी, कटोरा, अथरी, उथले, कसोरे आदि के बर्तन मिलते हैं। इनका चित्र मखनियाँ और काला पाया जाता है। यहाँ की मिट्टी काली होने के कारण बर्तनों में कलाकारी का स्पष्ट रूप दिखाई देता है। यहाँ पर अनगढ़ बर्तन भी प्राप्त हुऐ हैं। जिसका मूल प्रमाण मानव की सुरक्षात्मक और भविष्य की ओर देखकर उस समय के चित्रकारों ने अनाज भण्डारण हेतु अनेक प्रकार के छोटे-बड़े मिट्टी के बर्तनों का अविष्कार करते थें।

सिलेटी प्रकार का भी बर्तन प्राप्त हुए हैं। जबकि काले रंग के बर्तनों की संख्या बहुत कम है लेकिन इनकी चित्रकारी भी काले रंगों से की गई है। यहाँ तक छिछले कोटोरों की अधिकता पाई जाती है।

भारतीय संस्कृति एवं कला के निर्माण में अत्यन्त महत्वपूर्ण बर्तन मिले हैं। जबकि 'उज्जैन के गढ़कालका के ढूहें की खोदाई से जो स्तर प्राप्त हुए हैं। उनमें सबसे नीचे के स्थल से लाल-काले बरतन, लाल बरतन जिनपर दुबारा काला लेप चढ़ाया गया है।'[2]

जिन मिट्टी के बर्तनों में काली पट्टिकाऐं और लाल लेप चढ़े बर्तन जिनकी मिट्टी और कंकड़ियों से निर्मित रहे उन्हें फफोलेदार मृण्डभाण्ड कहें गयें। दो-चार मिट्टी के बर्तन सिलेटीदार और कई टुकड़ों में विभक्त भी प्राप्त हुए हैं।

इनमें से अधिक-से-अधिक बर्तन चाक द्वारा निर्मित है। कुछ बर्तन फफोलेदार है। काला और लाल बर्तनों में से अधिक मात्रा में थाली और कटोरें हैं। फफोलेदार बर्तन में कन्धा निकली हुई, हाँड़ियाँ ही मिली है। इनमें लाल रंग का लेप लगा हुआ है। इसके अरिक्त लाल और काला रंगों से निर्मित लेप बाले कटोरे ही है। उज्जैन में प्राप्त होने वाले बर्तन लगभग प्राय: ईसा पूर्व 500 वर्ष पहले के है। यह बर्तन मालवा और अन्य कई जगहों में प्राप्त हुऐ हैं।

वराह प्रतिमा मध्यप्रदेश के उदयगिरि विदिशा में अधिक सुन्दर रूपों में पाई जाती हैं। जिनका शारीरिक सौन्दर्य अति विशाल है। 'यह प्रतिमा उदयगिरि की गुफा के बाहर भित्ति पर उकेरी हुई हैं। इसे भू वराह या आदि वराह कहते हैं।'[3] इस प्रतिमा में मानव शरीर के साथ-साथ वराहमुख का अंकन भी सम्मिलित है। इन मूर्ति में वराह की भुजाओं का भी अंकन है। दाहिना हाथ दाहिने कुल्हे पर स्थित है। बाया हाथ जंघा पर रखा हुआ है। वराह की मूर्ति में ऐसा प्रतीत होता है कि शेषनाग की फण ऊपर किये हुए दिखाई देते हैं। इन मूर्तियों में लोक संस्कृति की स्पष्ट झलक दिखाई देती है।

* शोधार्थी, प्रा.भा.इ.सं एवं पुरातत्व अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

ऐसे अनेकों उदाहरण मध्यप्रदेश में पाये जाते हैं।

उज्जैन में प्राप्त होने वाले इन बर्तनों की लाल लेप के साथ-साथ काले रंगों का लेप तिर्छी, आड़ी और खड़ी रेखाओं और पत्तियों के साथ बारहसिंहा का चित्रण आदि मिलता है।[4] इसके साथ-साथ महेश्वर आदि में भी मृण्डमूर्ति का उल्लेख मिलता है। माहेश्वर का प्रमाण डॉ. सांखलिया ने वर्णन किया है। जिसका मूल प्रस्तर युग के करीब का बताते हुए वर्णन करते हैं। जहाँ माहिषमती नगरी नर्मदा के तट पर स्थिति थी। ऐसा लोगों का अनुमान है। उसी का वर्णन डॉ. सांखलिया उत्तारी काली चमकने बाले मिट्टी के बर्तनों का जिक्र पूर्व काल के रूप में करते हैं।[5] यह लोक संस्कृति की विरासत के रूप में आज भी सुरक्षित हैं। इनका सौन्दर्य स्वरूप अधिक स्वर्णिम लगता है। इस प्रकार से शैलाश्रयों के निर्माण में उत्पन्न हुई। मिट्टी के मूर्तियों और बर्तनों में शैलाश्रयों जैसे रंग-बिरंगे चित्रों का चित्रांकन किये। इस प्रकार से अनेकों उदाहरण धीरे-धीरे प्रकाश में आ रहे है। मिट्टी को भी मानव ने अपनी कला अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। मानव जीवन रक्षक पानी को ठंडा करने वाला घड़ा सबसें बड़ा मिट्टी के बर्तन का उदाहरण प्रस्तुत करता है। जिसकी उपयोगिता का मूल आज भी विद्यमान है। मिट्टी से निर्मित पात्र, मूर्तियाँ और खिलौने आदि के लिए उल्लेखनीय है। पके हुए मिट्टी के बर्तन मृण्मूर्त्तियाँ के साथ-साथ खिलौने लंबे समय तक सुरक्षित रहते है। आज भी तत्कालीन कला को कलाकारों ने उजागर समाज में अपना नाम कमाया है। इसका आर्थिक महत्व भी जीवन के लिए उपयोगी साबित होता जा रहा है। मानव की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों को नियोजित करने के लिए मानवीय संवेदना का होना भी अत्यआवश्य है। जिससे किसी व्यक्ति का रोजगार जुड़ा हुआ है।

भारत वर्ष में लोक संस्कृति और मृण्मूर्तियों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यही मृण्मूर्तियाँ हमारी संस्कृति की द्योतक है। इन मृण्मूर्तियों के विषय में अनेक पुरातात्विक साक्ष्य भी प्राप्त होते हैं। जिस प्रकार महाभारत और उत्तरकालीन साहित्य में मृणमूर्तियोर के उल्लेख पाये जाते हैं। जिस प्रकार से द्रोणाचार्य के शिष्य एकलव्य ने अपने गुरू की मिट्टी की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा की। भद्रसाल जातक में लिखा है कि राजकुमार को ननिहाल की ओर से हाथी-घोड़े और अन्य खिलौने खेलने के लिए दिये जाते थे। मार्कण्डेय पुराण में दुर्गा की महिमयी या मिट्टी की मूर्ति का उल्लेख है है जैसी अभी तक नवरात्र के समय बनाई जाती है।

निष्कर्ष – किसी भी राष्ट्र की संस्कृति और कला दोनों से पहचान सुनिश्चित होती है। जिस प्रकार से मध्यप्रदेश में मृण्मूर्तिकला एक अद्धितीय पहचान के रूप में जाना पहचाना जाता है। मध्यप्रदेश की लोक कला भी यहाँ के सौन्दर्य का मार्ग दिखा रहे हैं। ऐसी विचारधाराओं के परिणाम स्वरूप मानव की युगयुगीन जीवन पद्धति का मूल गुण सामाजिक, आर्थिक साधन रहा है। धर्म तथा दर्शन, अर्थ तथा काम, सौन्दर्य तथा कुरूपता, बौद्धिकता एवं सहृदयता, मानव-प्रकृति की दृश्यता का प्राकृतिक वर्णन इतिहास में मिलता है। प्रकृति, राजा और प्रजा युद्ध एवं शान्ति, जड़ और एवं चेतन, श्रमजीवी-बुद्धिजीवी के जीवन की अनेक दिशाओं को बड़ी गम्भीरता से विद्धानों ने लिया है। पुरातात्विक प्रमाणों में अति प्राचीन मृद्भाण्ड को उत्खनन के दौरान पाया जाना। दूसरी बात इन मिट्टी के खिलौने का निर्माण लगभग 3500 ई.पू. सिंधु की सभ्यता में भी पाए गये है। जो हाथों से निर्मित किये गये है। सिन्धु घाटी सभ्यता से धातु एवं मिट्टी की बनी प्राचीन मूर्तियों पाई गई है। मध्यप्रदेश क्षेत्र भारत के उन प्राचीन क्षेत्रों में आता है। जहाँ मृण्मय कला और संस्कृति के महत्वपूर्ण विवरण प्राप्त होते हैं। सभ्यता व संस्कृति का यह पुरातन नगर भारत वर्ष के हृदयस्थल में से एक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. राय गोविन्दचन्द, ***प्राचीन भारतीय मिट्टी के बर्तन,*** पुरातत्त्व, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1960, पृष्ठ 98
2. डॉ. राय गोविन्दचन्द, ***प्राचीन भारतीय मिट्टी के बर्तन,*** पुरातत्त्व, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1960, पृष्ठ 100
3. डॉ. श्रीभगवान सिंह, ***गुप्तकालीन हिन्दू देव-प्रतिमाएँ,*** प्रथम खण्ड, रामानन्द विद्या भवन, दिल्ली, 1982, पृष्ठ 61
4. वी. बी. लाल-***प्रोटो हिस्टारिक इनवेस्टिगेशन एनशण्ट इंडिया,*** नम्बर, 9 पृष्ठ 99
5. वी.डी., कृष्णस्वामी, ***प्राग्रेस इन प्रीहिस्ट्री एनशण्ट इण्डिया,*** नम्बर 1, पृष्ठ 68

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

एसबीआई द्वारा अपने कर्मचरीयों के लिए चलाई जा रही योजनाओं का अध्ययन

कामरान अहमद खान *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के द्वारा अपने कर्मचारीयों के लिए चलाई जा रही विभिन्ना योजनाओं का अध्ययन किया गया है। इस शोध पत्र में यह जानने का प्रयास किया गया है, कि कैसे अपनी एचआर नीति के कारण एसबीआई अपने कर्मचारीयों को सश्क्त बनाकर अपने व्यवसाय लक्ष्य को प्राप्त करता है। इस अध्ययन में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अपने कर्मचारीयों के लिए चलाया जा रहा करीयर डेवल्पमेंट सिस्टम (सी.डी.एस.) बैंक के कर्मचारीयों के लिए सफल रहा। इस शोध पत्र में 2016-17 के दौरान कितने कर्मचारीयों की नई भर्ती हुई उसका भी अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र स्टेट बैंक में वर्तमान में पुरूष और महिला का अनुपात और बैंक में कुल कर्मचारीयों में अनुसूचित जाती/जनजाती/अशक्त व्याक्तियों का प्रतिनिधित्व समझने का प्रयास किया गया है। बैंकिंग व्यवसाय में आने वाली नई-नई टेक्नोलोजीज़ के लिए स्टेट बैंक अपने कर्मचारीयों को कैसे प्रशिक्षत करती है, और इस शोध पत्र में बैंक को हो रही प्रति कर्मचारी आए पर भी प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तावना – स्टेट बैंक ऑफ इंडिया – 2 जून 1806 को कलकत्ता में बैंक ऑफ कलकत्ता की स्थापना हुई थी। तीन वर्षो के पश्चात इसको चार्टर मिला तथा इसका पुनर्गठन बैंक ऑफ बंगाल के रूप में 2 जनवरी 1809 को हुआ। यह बैंक ब्रिटिश इंडिया तथा बंगाल सरकार द्वारा चलाया जाता था। बैंक ऑफ बॉम्बे तथा बैंक ऑफ मद्रास की शुरुआत बाद में हुई। बाद में 28 जनवरी 1921 को इन तीनो बैंकों का विलय करके एक नए बैंक इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया की शुरुआत की गई। वर्ष 1951 में जब प्रथम पंचवर्षीय योजना लागू हुई तो इसमें ग्रामीण क्षेत्र के विकास को इसमें सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। उस समय तक इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया सहित देश के वाणिज्यिक बैंको का कार्य-क्षेत्र शहरी क्षेत्र तक ही सीमित था तथा वे ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक पुन:निर्माण की भावी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पूरी तरह तैयार नहीं थे। 1 जनवरी 1935 को रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के साथ ही 'बैंकिंग नियमन अधिनियम' पारित किया गया, जिसके द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक को वाणिज्यिक बैंकों पर नियंत्रण रखने का विस्तृत अधिकार प्राप्त हो गया। यद्यपि ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति इम्पीरियल बैंक के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में नहीं थी, पर अखिल भारतीय साख समिति ने इम्पीरियल बैंक के साथ कुछ राज्य-सम्बद्ध बैंकों को मिलाकर 'स्टेट बैंक ऑफ इंडिया' की स्थापना की संस्तुति की। फलस्वरूप 1 जुलाई, 1955 से इम्पीरियल बैंक की सभी सम्पत्तियों तशथा देनदारियों को अधिग्रहण करके स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने अपना कार्य करना प्रारंभ किया।

कार्यप्रणाली – अध्ययन देश के सबसे महत्वपूर्ण बैंक स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अपने कर्मचारीयों के लिए चलाई जा रही विभिन्ना योजनाओं के संदर्भ में है। अध्ययन में स्टेट बैक ऑफ इंडिया कि एचआर नीति और 2016-17 के दौरान हुई नई भरतीयां और कर्मचारीयों के बीच विभिन्ना आरक्षण अनुपातपर भी प्रकाश डाला गया है। अध्ययन के दौरान सूचना का संकलन द्वितीयक समकों के द्वारा किया गया है।

उद्देश्य :

1. स्टेट बैंक की एचआर नीति का अध्ययन करना।
2. अपने कर्मचारीयों के लिए बैंक द्वारा चलाई जा रही विभिन्ना याजनाओं का अध्ययन करना।
3. प्रति कर्मचारी स्टेट बैंक को होने वाले लाभ का अध्ययन करना।

सीमाएं – संबंधित अध्ययन का क्षेत्र और सीमा सीमित है। अध्ययन के लिए चयनित अवधि सीमित है।

मानव अत्यंत मूल्यवान संसाधन – अनेक प्रतिभावान एवं परिश्रमी कर्मचारियों के कारण भारतीय स्टेट बैंक का निष्पादन प्रभावशाली हो पाया है, जो लगातार अपने ग्राहक अपनी और अपने कर्मचारीयों की प्रगती के बारे में सोचता है। किसी भी बैंक या व्यवसाय के लिए सबसे महत्वपूर्ण है उसके कर्मचारीयों की सुनिश्चित्ता। कोई भी उद्योग सबसे पहले अपने कर्मयारियों को वहां के वतावरण से सुनिश्चित्त करवाने का प्रयास करता है ताकि उसके कर्मचारी बिना किसी दिक्कत के अपने काम को अच्छी तरह से कर सकें और उसके व्यवसाय को आगे तक ले जा सकें। ऐसा ही कुछ भारतीय स्टेट बैंक करने का प्रयास कर रहा है। वह समय-समय पर अपने कर्मचारीयों के लिए नई-नई योजनाएं लाता है और उनको प्रोतसाहित कर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। इतना ही नही वह अपने कर्मचारीयों को बैंकिंग इंडस्ट्री में आने वाली नई-नई तकनीकियों के बारे और उनको उपयोग करने के लिए प्रशिक्षत भी करता है। भारतीय स्टेट बैंक के पास 2,09,572 कर्मचारियों की विशाल टीम हैं जिनमें से 3400 कर्मचारी प्रतिदिन प्रशिक्षण लेते हैं। भारतीय स्टेट बैंक को वर्ष 2015-16 में प्रति कर्मचारी लाभ 4,70,000 रूपय कुआ था, वहीं वर्ष 2016-17 में यह लाभ बढ़कर प्रति कर्मचारी 5,11,000 रूपय हो गया।

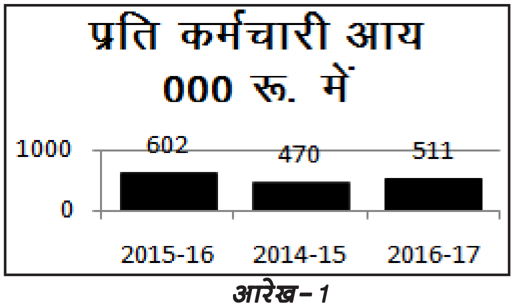

आरेख-1

*शोधार्थी (वाणिज्य) शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

बैंक कीएचआर प्रोफाइल निम्नानुसार है – सफलता हासिल करने हेतु, बड़ी संख्या में शाखाओं और विविध भूमिकाओं वाले एक बैंक के लिए विशेषप्रकार कि निपुणताएं बहुत महत्वपूर्ण हो जाती हैं। स्टेट बैंक ने विशेषज्ञता को प्रोत्साहन देने और गहरी समझ को सुनिश्यित करने के लिए स्केल II-V के अपने अधिकारियों के लिए करिअर पाथ योजना के साथ-साथ सात प्रमुख विभाग बनाए हैं, अर्थात ऋण एवं जोखिम, विक्रय, विपणन एवं परिचालन, एचआर, वित्त एवं लेखा, राजकोषीय एवं विदेशी मुद्रा, आईटी एवं विश्लेषण। अधिकारी की रूचि और विशेषज्ञता के आधार पर उन्हें विशेषज्ञता प्रदान की जाती है। कार्य-अनुभव और यसही कार्य के लिए सही व्यक्ति सुनिश्चित करने के लिए, भारतीय स्टेट बैंक जल्द ही अपना स्वचलित टूल `PROSPER' का उपयोग करके एक व्यवस्थित नियुक्ति आबंटन प्रक्रिया लागू करने वाला है।

वित्त 2016-17 में, भारतीय स्टेट बैंक ने 13,097 युवा टेक सेवी और ग्राहक अनुकूल कर्मचारियों को भर्ती किया था। नए कर्मचारियों की इस सूची में 2000 से अधिक प्रोबेशनरी अधिकारी, 160 मैनेजमेंट ट्रेनीज, 100 से अधिक वैल्थ मैनेजमेंट विशेषज्ञ और डिजिटल व ई-कॉमर्स विशेषज्ञ और लिपिकीय कर्मचारी शमिल थे।जैसा की हम ***तालिका-1*** में देख सकतें हैं कि भारतीय स्टेट बैंक के स्टाफ में जहां वित्त वर्ष 2015-16 में अधिकारीयों की संख्या 80,818 थी, वहीं यह बढ़कर वित्त वर्ष 2016-17 में 81,041 हो गई, ऐसे ही सहयोगी व अधीनस्थ स्टाफ की संख्या वित्त वर्ष 2015-16 में क्रमश: 88,606 व 38,315 थी वह वित्त वित्त वर्ष 2016-17 में क्रमश: 92,979 व 35,547 हो गई।

तालिका-1 : बैंक की कुल स्टाफ संख्या निम्नानुसार है

श्रेणी	**31 मार्च 2016**	**31 मार्च 2017**
अधिकारी	80,818	81,041
सहयोगी	88,606	92,979
अधीनस्थ स्टाफ व अन्य	38,315	35,547
कुल	**2,07,739**	**2,09,567**

भातीय स्टेट बैंक द्वारा अपने कर्मचारीयों के चलाए जा रहे सर्टिफिकेशन प्रोग्राम

कार्यनीतिक प्रशिक्षण इकाई – निरंतर बेहतर प्रतिफल देने वाला ब्रांड रहने के उद्देश्य से और कार्य के लिए एक उत्कृष्ट स्थान बनाने के लिए, भारतीय स्टेट बैंक व्यक्गित विकास एवं संगडनात्मक प्रभावकारिता के लिए एक सुनियोजित, कार्यक्षम और प्रशिक्षण प्रक्रिया को जारी रखे हुए है। वैश्विक स्तर पर नियमित आधार पर नई प्रौद्योगिकियों और कार्य-प्रणालियों को हासिल करके लागू किया गया है जिससे ज्ञान देने/ज्ञान प्रात करने का कार्य जारी रहे, प्रशिक्षण की गुणवत्ता को बढाया जा सके और कर्माचारियों के रूप में रूपांतरित किया जा सके ताकि वे ग्राहक संतुष्टि के बैंक प्रयासों को आगे बढाया जा सके। बैंक प्रशिक्षण व्यवस्था एसटीयू के समग्र पर्यवेक्षण और मार्गदर्शन में कार्य करती है तथा बैंक प्रशिक्षण तंत्र में शीर्ष प्रशिक्षण संस्थान और 43 स्टेट बैंक ज्ञानर्जन केन्द्र खोले हैं। भारतीय स्टेट बैंक ने संगठन के अंदर ही एक वर्चुअल नॉलेज फार्म का सृजन किया है, जहां एक दिन में बैंकिंग, अर्थव्यवस्था, नेतृत्व, क्षमता, नैतिकता, विपणन, प्रशासन और अन्य कौशलों का प्रशिक्षण 3400 कर्मचारियों को दिया जाता है। यह लिंक जोड़ कर पड़ोसी और मिडिल ईस्ट के देशों को प्रशिक्षण सहायता उपलब्ध करवाई जा रही है।

1. ऋण पर सर्टिफिकेशन प्रोग्राम – पर्याप्त ऋण निपुणयताओं का विकास करने और अधिकारियों को हर समय अद्यतन बनाए रखने के लिए यह कार्यक्रम शुरू किया गया है। इसमें आग्रिमों के सम्पूर्ण ऋण के जीवनचक्र का प्रबंध करने हेतु आवश्यक वाणिज्यिक ऋण निपुणताओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है।

2. शाखा प्रबंधकों के लिए सर्टिफिकेशन प्रोग्राम (सीपीबीएम) – यह प्रोग्राम परिचालन एवं विपणन में पदस्थ अधिकारियों और मुख्य रूप से पहली बार बने/भविष्य में शाखा प्रबंधक बनने वाले अधिकारियों के लिए तैयार किया गया है।

3. बाहरी संस्थाओं को प्रशिक्षण – भारतीय स्टेट बैंक के प्रशिक्षण संस्थान को समावेशी एवं वैश्विक हो रहे हैं। आपके बैंक ने अपनी प्रशिक्षण व्यवस्था को सरकारी एवं निजी क्षेत्र के बैंक अधिकारियों तथा अन्य सरकारी विभागों एवं अन्य बाहरी संस्थानों के लिए खोल दिया है।

4. राष्ट्र निर्माण में योगदान – भारतीय स्टेट बैंक की प्रशिक्षण व्यवस्था अनेक प्रकार से राष्ट्र में योगदान देती है। स्टेट बैंक ज्ञानार्जन केन्द्रों ने विभिन्न स्कूलों/इंजीनियरिंग कॉलेजों में और गांवों में क्लासेस आयोजित करके वित्तीय साक्षरता/वित्तीय समावेशन में व्यापक रूप से योगदान दिया है। विमुद्रीकरण अवधि के दौरान, आपके बैंक ने डिजिटल लेनदेनों पर जन-समूहों के लिए अनेक ऑनसाइट/ऑफसाइट जागरूकता वर्कशॉप/सेमिनार आयोजित किए हैं। आपके बैंक ने भी विभिन्न पेमेंट बैंकों के कार्मिकों को प्रशिक्षित किया है, जो हाल ही में भारत के वित्तीय क्षेत्र से जुड़े हैं।

स्मावेशन सेंटर – दिव्यांग कर्मचारियों के लिए इस उद्देश्य के साथ एक समावेशन केन्द्र परिचालन में हैं जिससे विशिष क्षमता वाले कर्मचारियों को व्यवस्थितढंग से वित्तीय समावेशन, प्रशिक्षण, सशक्तिकरण किया जा सके और उनकी निपुणताओं में वृद्धि की जा सके। आपके बैंक द्वारा शुरू किए गए कुछ कार्यकलापों/पहलों का नीचे उल्लेख किया गया है।

1. दिव्यांग कर्मचारियों के लिए विशेष रूप से तैयार कार्यक्रम संचालित किए गए हैं, जैसे बैंक के दृष्टिबाधित एवं श्रवण बादित कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण।
2. प्रशिक्षण पश्चात क्षेत्र कार्यान्वयन के दौरान विशिष्ट क्षमता वाले कर्मचारियों के समावेशन एवं मुख्य धारा में शामिल करने के लिए कर्मचारियों को संवेदनशील बनाया गया है।
3. विशिष्ट क्षमता वाले कर्मचारियों की शिकायत का कार्य कॉरपोरेट केन्द्र में स्थित समावेशन केन्द्र को सौंपा गया है।
4. दृष्टिबाधित कर्मचारियों को टॉकिंग सॉफटवेयर और ओसीआर रीडर/स्कैनर उपलब्ध कराए गए हैं।
5. एसबीआई एस्पीरेंशंस में विशिष्ट क्षमता वाले कर्मचारियों के लिए तीन विशेष समूह बनाए गए हैं (दृष्बिाधित/श्रवणबादित/चलने-फिरने में अशक्त व्यक्ति)।
6. दिव्यांग व्यक्तियों के लिए पूर्ण तथा अवरोधमुक्त सुलभता बढ़ाने हेतु प्रायोगिक आधार पर चार एसबीएलसी का चयन किया गया है।

विलय पश्चात प्रशिक्षण में चुनौतीयां – भारतीय स्टेट बैंक के उत्पादों एवं प्रक्रियाओं के संबंध में पांच सहयोगी बैंक और भारतीय महिला बैंक के कर्मचारियों को कम से कम समय में प्रशिक्षित करने की कड़ी चुनौती को देखते हुए, भारतीय स्टेट बैंक ने विभिन्न विशेष रूप से बनाए गए और निर्धारित किए गए कार्यक्रमों के साथ प्रशिक्षण तंत्र को तैयार किया है। इसके अतिरिक्त, भारतीय स्टेट बैंक में इन कर्मचारियों के आसान रूपांतरण को ध्यान में रखते हुए, पी-खण्ड, एसएमई खण्ड, कृषि खण्ड, आरईएचएण्डएचडी और प्रौद्योगिक

(टेक) उत्पादों के प्रसिद्ध आस्ति उत्पादों की एक सूची संवितरित की गई। विलय के दिन से ही सहयोगी बैंको के बारह प्रशिक्षण संस्थान बैंक के नियंत्रण में आ गए हैं।

भारतीय स्टेट बैंक अपनी एचआर नीति के लिए पुरस्कृत

गोल्डन पीकॉक नैशनल ट्रेनिंग अवार्ड – भारतीय स्टेट बैंक को अपने कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के क्षेत्र में उत्कृष्ट निष्पादन के लिए वित्तीय सेवा क्षेत्र (बैंकिंग) में 2016–17 के लिए गोल्डन पीकॉक नैशनल ट्रेनिंग अवार्ड का विजेता घोषित किया गया।

नैशनल अवार्ड 2016 – भारत सरकार, सामाजिक न्याय एवं सशक्तिकरण मंत्रालय द्वारा दिव्यांग सशक्तिकरण उप श्रेणी में वर्ष 2016 के लिए सर्वश्रेष्ठ नियोक्ता का पुरस्कार दिया गया है।

हेलन केलन अवार्ड 2016 – यह अवार्ड 'नेशनल सेटर फॉर प्रोविजन ऑफ इम्प्लॉयमेंट विद डिसएबिलिटीज (एनसीपीईडीपी)' द्वारा दिव्यांगजनों को रोजगार समान अवसर देने में प्रतिबद्धता के लिए कंपनी/गैर–सरकारी संगठन/संस्थान श्रेणी में सर्वश्रेष्ठ रहने पर दिया गया है।

आईएसओ प्रमाणन – भारतीय स्टेट बैंक अपने ज्ञानार्जन केन्द्रों के लिए प्रशिक्षण संसाधनों, आधारिक संराचना और अकादमिक कार्यकलापों में गुणवत्ता मानदंड हासिल करने का निरंतर प्रयास कर रहा है। सभी पांचों शीर्षस्थ प्रशिक्षण संस्थानों (एटीआई) और 43 में से 40 एसबीएलसी को यह प्रमाणन प्राप्त हो चुका है, जिसमें से 13 एसबीएलसी को वर्ष 2016–17 के दौरान यह प्रमाणन प्राप्त हुआ है।

निष्कर्ष – भारतीय स्टेट बैंक की सफलता के पीछे एक सुदृढ़ एवं उत्कृष्ट नेतृत्व टीम के साथ–साथ एकप्रेरित एवं उत्साहित युवा प्रतिभा टीम का भी प्रमुख योगदान रहा है।भारतीय स्टेट बैंक द्वारा विकास प्रक्रियाओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है जिससे देश की श्रेष्ठतम प्रतिभाओं को आकर्षित किया जा सके। श्रेष्ठ प्रतिभाओं को आकर्षित करने के लिए भारतीय स्टेट बैंक ने भर्ती प्रक्रिया में सुधार किया है और एक सुदृढ़ कर्मचारी मूल्यांकन योजना तैयार की है। सम्पूर्ण बैंक स्तर पर समान विजन, साझा मूल्यों द्वारा नियंत्रित होने और सत्यनिष्ठा एवं अभिशासन के उच्च मानाकों का पालन करने से ऐसा संभव हो पाया है। अनेक प्रतिभावान एवं परिश्रमी कर्मचारियों के कारण भारतीय स्टेट बैंक का निष्पादन प्रभावशाली रहा है, जो लगातार बैंक की प्रगति के बारे में सोचते रहते हैं। भारतीय स्टेट बैंक की एचआर नीति को समकालीन बनाया जा रहा है जिससे व्यवसाय लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके और कर्मचारियों को ज्यादा सशक्त किया जा सके। भारतीय स्टेट बैंक एक सहायक कार्यस्थल उपलब्ध कराने, कर्मचारी कल्याण सुनिश्चित करने और विकास एवं संवृद्धि के लिए अवसर प्रदान करने के कार्य पर अग्रसर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय स्टेट बैंक वार्षिक बजट 2015–16 और 2016–17
2. डॉ. जे. सेथुरमन, 'रिटेल बैंकिंग – मॉडल, रणनीतियाँ, प्रदीर्शन और भविष्य – भारतीय परिदृश्य'
3. 'भारतीय स्टेट बैंक का इतिहास'–हिंदी हिस्ट्री
4. Reserve Bank of India, A Study of Budgets, Reserve Bank of India, Mumbai
5. The IIS University Journal of Commerce and Management, (2013,vol.2)
6. https://bank.sbi/
7. https://www.sbi.co.in/
8. *https://www.rbi.org.in/*
9. www.en.wikipedia.org
10. www.google.com

****

बैंकिंग कारोबार, अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी में तालमेल, उसकी चुनौतियाँ और निहित जोखिम का अध्ययन (विशेष भारतीय स्टेट बैंक के संदर्भ में)

वरूणेन्द्र मिश्रा *

शोध सारांश – बैंकिंग प्रणाली न केवल किसी भी देश की अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण रीढ़ की हड्डी होती है अपितु यह मानव जीवन के कार्यकलापों को भी एक अभिन्न अंग बन चुकी है। सशक्त बैंकिंग प्रणाली वह प्रणाली है जिसकी संजीवन से अर्थव्यवस्था गतिशील व जीवंत रहती है। समसामयिक परिवेश तथा निरंतर होने वाले परिवर्तनों से जुड़े बिना कोई भी जीवंत नहीं रह सकता है। बैंकिंग प्रणाली भी इसका अपवाद नहीं है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में इसकी उपादेयता से बैंकिंग कारोबार को समन्वित किए बिना सशक्त व गतिशील बैंकिंग प्रणाली की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। समय के अनुसार विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे परिवर्तन को असर हर तरफ देखने को मिलता है जैसे कि अर्थव्यवस्था का दोहरा प्रभाव जहां एक तरफ किसानों पर तो इसका असर देखने को मिलता ही मिलता है वही इसकी दूसरी भूमिका में इसका असर बैंकिंग अर्थव्यवस्था से भी अछूता नहीं रह जाता है। चूंकि हम जानते है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहां कि 70 प्रतिशत आबादी आज भी गाँवों में निवासरत है। किसी भी देश की अर्थव्यवस्था उसकी खाद्यान्न, कच्चा माल आदि पर निर्भर करती है एवं इसमें बढ़ोत्तरी के लिए प्रौद्योगिकी की आवश्यकता होती है। विगत कुछ वर्षो से बैंकिंग क्षेत्र में अभूतपूर्ण व व्यापक परिवर्तन हो रहे है। 1990-91 ई. से भारतीय अर्थव्यवस्था में उदारीकरण एवं वैश्वीकरण का युग आरंभ हुआ है। जिसका बैंकिंग व्यवसाय पर व्यापक असर देखने को मिला है। वस्तुत: बैंकिंग प्रणाली में प्रौद्योगिकी के प्रवेष के पश्चात् कारोबार एवं प्रौद्योगिकी के समन्वय एवं तालमेल की प्रक्रिया आरंभ हुई। बैंक में कारोबार एवं प्रौद्योगिकी के तालमेल का आशय मोटे तौर पर बैंकिंग कारोबार के व्यापक लक्ष्य की सिद्धी के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग एवं प्रौद्योगिकी की प्रेरक शक्ति से संचालित कारोबारों को अंगीकर स्वीकार करना है।

प्रस्तावना – बैंकिंग वर्ग बैंकिंग से जन बैंकिंग की ओर उन्मुख हुई। 'ब्रिक बैंकिंग' 'क्लिक बैंकिंग' की ओर अग्रसर है। अब यह बैंकिंग व्यवसाय न केवल शाखाओं व निर्धारित समय तक सीमित नहीं रहा, अपितु 'कहीं भी तथ कभी भी बैंकिंग' की अवधारणा विकसित हुई है। ग्राहक बैंक की शाखा पर निर्भर नहीं रहा। भविष्य में ग्राहकों को अपने बैंकिंग संबंधी कार्यो के लिए किसी शाखा विशेष पर निर्भर होकर नहीं रहना पड़ेगा। आज के बदलते हुए परिवेश में बैंकिंग कारोबार का अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकीके तालमेल को लेकर चलना एक चुनौती भरा कार्य होगा। बैंकिंग प्रणाली में सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी का भी तीव्र गति से प्रवेश हुआ। बैंकिंग प्रणाली ने समायानुयप अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति, दिन-प्रतिदिन की बढ़ती प्रतिस्पर्धा में अपने अस्तित्व की रक्षा तथा इसमें अपना स्थान अव्वल रखने के लिए तथा सर्वोपरि ग्राहकों की संतुष्टि एवं प्रसन्नता के उच्चतम स्तर को प्राप्त करने के लिए अपने चिंतन, दर्शन व कार्यान्वयन प्रणाली में सूचना व संचार प्रौद्योगिकी को अंगीकर किया। आज बैंकिंग संव्यवहारों का प्रत्येक पहलू जिसमें प्रबंध सूचना पद्धति, बैंकिंग परिचालन, ग्राहक सेवा, बैंकिंग उत्पादों को स्वरूप, प्रकृति, विपणन तथा संचालन सम्मिलित है, सूचना प्रौद्योगिकी से सर्वाधिक प्रभावित हो रहा है। वस्तुत: सम्पूर्ण बैंकिंग परिचालनों को सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी ने एक नया रूप, कलेवर, शैली और पहचान दी है, हमारा देश, हमारी बैंकिंग व्यवस्था भी इस मामले में अब विकसित देशों के समकक्ष अपने आपकों प्रस्तुत करने की क्षमता रखता है।

बैंकिंग कारोबार एवं प्रौद्योगिकी – बदलते हुए आर्थिक परिदृष्य में बैंकिंग क्षेत्र की जिम्मेदारी अधिक बढ़ गई है, 1990 मे आए उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के नए दौर में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपने आप को सक्षम साबित करने का समय आ गया। आई.टी. के विकास में मानो बैंकिंग क्षेत्र के विकास के लिए संजीवनी मिल गई है, अगर यह कहा जाए कि वर्तमान में बैंकिंग क्षेत्र तथा आई.टी. एक दूसरे के पूरक है तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

आई.टी. के युग में सफलता की परिभाषा ही बदल गई है। ग्राहकों को आधुनिक सेवा देकर इन्हें संतुष्ट करने का एक अच्छा अवसर आई.टी. के माध्यम से प्राप्त हुआ है। यंत्रीकरण और इलेक्ट्रानिकीकरण के कारण भारत में बैंकिंग के इस माहौल में अनेक परिवर्तन देखे जा सकते है।

अध्ययन – बैंकिंग व्यवसाय व प्रौद्योगिकी के तालमेल व अंत:संबध के फलस्वरूप बैंकिंग का उद्देश्य व लक्ष्य व्यावसायिकता व लाभार्जन की ओर अधिक उन्मुख हुआ। बढ़ती प्रतिस्पर्धा एंव प्रौद्योगिकी के संस्थापन तथा परिचालन में होने वाली लागतों की भरपाई हेतु बैंकिंग व्यवसास के केन्द्रों में लाभप्रदता का तत्व स्थापित हुआ। इस अध्ययन में बैंकिंग करोबार, अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी में तालमेल, उसकी चुनौतियाँ एवं उसमें निहित जोखिम का अध्ययम मुख्य उद्देश्य है कि वर्तमान समय में होने वाली किस प्रकार बैंकिंग कार्यप्रणाली अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी के ढ़ांचे को क्या नींव प्रदान कर रही है। इस अध्ययन के दौरान डाटा का संकलन द्वितीय समंकों के आधार पर किया गया है।

उद्देश्य :

1. बैंकिंग प्रणाली में अपनाई गई पद्धतियों के बारे में अध्ययन करना एवं यह कि वह अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी के लिए कितनी सार्थक है, का अध्ययन करना।
2. भारतीय स्टेट बैंक की बैंकिंग प्रणाली में अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी की आवश्यकता के अनुरूप पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

* शोधार्थी (वाणिज्य) शा. हमीदिया कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)भारत

3. बैंकिंग प्रणाली में अर्थव्यवस्था एंव प्रौद्योगिकी की चुनौतियां उनमें निहित जोखिम एवं भावी संभावनाओं का अध्ययन करना।

सीमाएं – संबंधित अध्ययन का क्षेत्र और अध्ययन के लिए चयनित अवधि सीमा सीमित है।

सामान्य परिदृष्य –वर्तमान में बैंकिंग सेवाएं बहुमुखी सेवाओं में बदल गई है और यह अब परंपरागत बैंकिंग नहीं रह गई है, सूचना प्रौद्योगिकी में आई क्रांति से 'बैंक आपके द्वारा' का नारा बुलंद हो गया है। ई–वाणिज्य के विभिन्न लेन–देन, ई–सरकार, ई–कंपनी रजिस्ट्रार के क्रम में ई–बैंकिंग ने भी अपना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। अभी हाल ही के वर्षों में भारतीय बैंकिंग, अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी ने उदारीकरण तथा नवोन्मेशी विचारों व सुविधाओं ने नाटकीय परिर्वतन किया है, बैंकों को भी यह प्रयास करना होगा कि वे अपने ग्राहकों के साथ–साथ देश की अर्थव्यवस्था तथा प्रौद्योगिकी को नये आयाम तक पहुंचाने में अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करें। यह सच है कि सूचना प्रौद्योगिकी एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा बैंकिंग उद्योग में आमूल–चूल परिर्वतन आ सकते है तथा बैंकिंग कारोबार में प्रगति हो सकती है साथ ही जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी को नये आयाम प्राप्त हो सकते है।

आज बैंकिंग संव्यवहारों का प्रत्येक पहलू जिसमें प्रबंध सूचना पद्धति, बैंकिंग परिचालन, ग्राहक–सेवा, बैंकिंग उत्पादों का स्वरूप, प्रकृति विपणन तथा संचालन सम्मिलित है, सूचना प्रौद्योगिकी से सर्वाधिक प्रभावित हो रहा है।, वस्तुत: सम्पूर्ण बैंकिंग परिचालनों को सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी से एक नया रूप, कलेवर, शैली और पहचान दी है, हमारा देश, हमारी बैंकिंग व्यवस्था भी इस मामले में अब विकसित देशों के समकक्ष अपने आपको प्रस्तुत करने की क्षमता रखता है।

आर्थिक क्षेत्र में उदारीकरण और विश्वव्यापीकरण ने जहां बैंकिंग के स्वरूप और उसकी संकल्पना तथा प्रक्रियागत स्वरूप को अभिनव रूप प्रदान किया है वही सूचना और प्रौद्योगिकी ने इस युग ने बैंकिंग की मूलभूत अवधारणा उसकी परंपरागत सोच और उसकी प्रक्रियाविधि में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिये है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण ने 'वर्ग बैंकिंग' को 'जन बैंकिंग' में बदल दिया परंतु उसकी प्रक्रियाविधि लगभग वैसी ही बनी रही, जबकि अंतर्राष्ट्रीय जगत में बैंकिंग बड़ी तेजी से बदल रही थी। लेकिन भारत उस बदलाव से लगभग अछूता ही रह गया। लेकिन दूसरी नरसिंह समिति (1998) के सिफारिश के बाद देश में इलेक्ट्रानिक माध्यम से बैंकिंग के प्रचार प्रसार के काफी प्रयास किये गये।

अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी का बैंकिंग कारोबार में योगदान – बदलते हुए आर्थिक परिदृष्य में बैंकिंग क्षेत्र की जिम्मेदारी अधिक बढ़ गई है। 1990 में आए उदारीकरण, निजीकरण और वैवीकरण के नए दौर में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पेर अपने आप को सक्षम साबित करने का समय आ गया। आई.टी. के विकास से मानों बैंकिंग क्षेत्र के विकास के लिए संजीवनी मिल गई है अगर कहा जाए कि वर्तमान में बैंकिंग क्षेत्र अर्थव्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी (आई.टी.) एक दूसरे के पूरक है तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगी।

ग्राहक सेवा में सुधार – बैंकिंग जगत के लिए कंपनी जगत की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करना अब उसकी योजना के केंद्र में रह कर आम जनता या आम ग्राहक या उपभोक्ता उसकी केंद्र बिंदु हो गया है, ग्राहक नेट बैंकिंग, मोबाईल बैंकिंग या एटीएम , क्रेडिट और डेबिट कार्ड के जरिये अपनी बैंकिंग संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है और इससे उसका समय, श्रम और खर्च भी बचता है। बैंक की सेवाएं अपने घर या कार्यलय पर ही इंटरनेट बैंकिंग के द्वारा भी ले सकता है।

कोर बैंकिंग सुविधा का विस्तार तथा उन्नयन संभव – कोर बैंकिंग सुविधा ने अपने ग्राहकों को अपने खातों के लेन–देन को दायरा बढ़ा दिया है। अब वह अपनी बैंक की देश–विदेश की किसी भी शाखा से कही भी लेन–देन कर सकता है या अपने खातों की जनकारी आसानी से प्राप्त कर सकता है।

भुगतान तथा निपटान प्रणाली का विकास – प्रौद्योगिकी (आई.टी.) के माध्यम से अब भुगतान एंव निपटान प्रणाली को अधिक गतिमान बनाने का प्रयास हो रहा है साथ ही इस माध्यम से लागत में मितव्ययिता भी संभव होगी। एटीएम, क्रेडिट और डेबिट कार्ड के द्वारा लेन–देन करने से चेकों की लागत उसके भेजने की लागत तथा समाशोधन की लागत भी कम हो गई है। साथ ही बाहरी चेकों के समाषोधन या विदेशों के साथ भुगतान और निपटान को भी गति मिल गयी है।

सामाजिक क्रांति – अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी द्वारा प्रदत्त विभिन्न सुविधाएं जैसे इलेक्ट्रानिक बैंकिंग, क्रेडिट–डेबिट तथा स्मार्ट कार्ड, सेल बैंकिंग, इंटरनेट बैंकिंग आदि केवल महानगरों तक ही सीमित नहीं है वे अब देश के दूरदराज के गांवों तक पहुंच गयी है। इससे गांव के व्यक्ति शिक्षित तो हो ही रहे है साथ ही देश की अर्थव्यवस्था में भी उनका पूर्ण योगदान प्राप्त हो रहा है। बैंकिंग सेवाओं के विस्तार के साथ उनका जीवन स्तर भी उपर उठने में मदद मिली है। सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से यह सामाजिक क्रांति अल्पसमय में संभव हो सकी है।

नवोन्मेषी बैंकिंग उत्पाद एंव सेवाएं – बदलते हुए घोर प्रतिस्पर्धी परिवेश में अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी की क्रांति के फलस्वरूप बैंकिंग उत्पादों एवं सेवाओं में नित्य बदलाव आ रहा है। नवोन्मेशों की एक श्रृंखला सी प्रत्येक क्षेत्र में परिलक्षित हो रही है। आज बैंकों के पास परंपरागत उत्पाद जमा, निकासी एवं ऋण के अलावा अन्य भी विविध उत्पाद हैं। आज बैंकिंग व्यवसा में बीम, निवेश, म्युचुअल फंड, पेंशन, करो का भुगतान आदि शामिल होने की वजह से इसका स्वरूप सार्वभौमिक हो गया है। जिससे एक ही छत के नीचे सभी प्रकार के वित्तीय उत्पाद व सेवाएं प्राप्त करना सुलभ हो गया है।

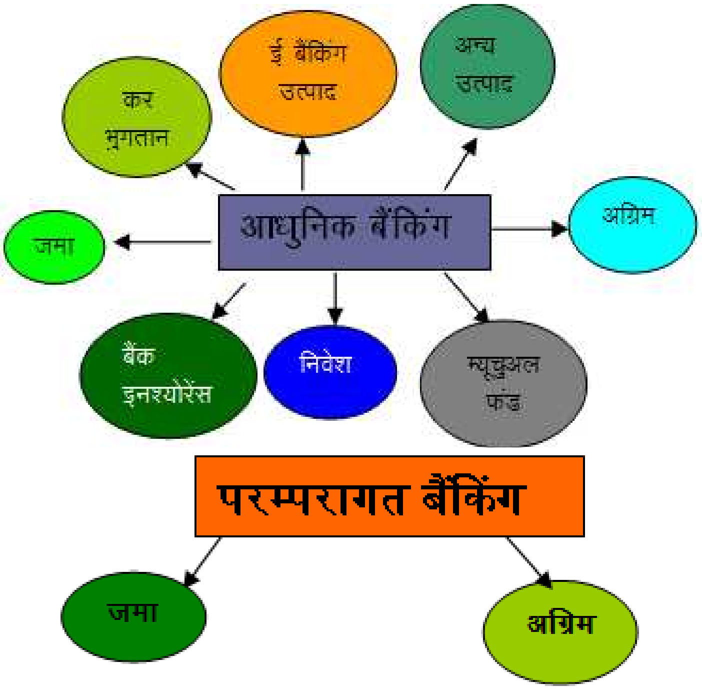

चुनौतियां,निहित जोखिम एवं निष्कर्ष, प्रणालीगत दोष से निपटने की चुनौती – यह अक्सर देखने व सुनने को मिलता है कि नेटवर्क फेल होने के कारण बैंकिंग व्यवसास ठप्प है। विशेषत: ऐसे बैंकिंग लेन–देन, जो नेटवर्क पर आधारित है। प्रणालीदोष से बैंकिंग कारोबार काफी अधिक प्रभावित होता हैं ऐसी परिस्थिति से निपटने के लिए वैकल्पिक तरीके के रूप में हाथ से कार्य करने की प्रणाली को जारी रखा जाना चाहिए। किंतु दोनों स्वरूप के साथ–साथ परिचालन पद्धति में बैंकिंग व्यवसास के जटिल व खर्चीले होने का खतरा बना रहता है।

प्रौद्योगिकीगत चुनौती – नित्य नये–नये अविष्कार के फलस्वरूप कोई भी प्रौद्योगिकी बहुत अधिक दिनों तक टिक नहीं पाती है। ऐसा देखा जाता है कि किसी प्रौद्योगिकी के प्रतिष्ठापन एवं परिचालन के कुछ समय के बाद ही नई प्रौद्योगिकी सामने आ जाती है। पुरानी प्रौद्योगिकी अप्रचलित हो जाती है। कम समय में नई प्रौद्योगिकी के आ जाने के कारण पुरानी पद्धति एवं उपकरण आदि व्यर्थ हो जाते है बैंकों पर भारी प्रभावित होती है।

आमजन तक पहुंच सुनिश्चित करने संबंधी चुनौती – इसमें कोई दो राय नहीं है कि प्रौद्योगिकी के परिणामस्वरूप बैंकिंग व्यवसाय आम जनता की ओर उन्मुख हुआ है, किंतु अभी भी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग उपेक्षित व अशिक्षित है, जो सामान्य बैकिंग गतिविधियों एवं सुविधाओं से भी वंचित है। वित्तीय समावेशन का लक्ष्य प्राप्त करना ही अभी शेष हैं, अभी भी प्रौद्योगिकी आधारित इंटरनेट, आरजीटीएस आदि अत्याधुनिक बैंकिंग सुविधाओं का लाभ शहरी पढ़े लिखे वर्ग तक ही सीमित है। ग्रामीण इलाकों में तथा आम जनता तक प्रौद्योगिकी आधारित बैंकिंग सुविधाओं को वहनीय एंव अल्प लागत पर पहुँचाने की चुनौती है। इसके लिए वित्तीय व तकनीकी साक्षरता की भी आवश्यकता होगी तथा इस चुनौती से निपटने में किफायती व सरल प्रौद्योगिकी कारगार है।

सारत: यह कहा जा सकता है कि बैंकों में कारोबार तथा प्रौद्योगिकी का तालमेल समय की मांग हो गई है। समय के अनुकूल बैंकिंग व्यवसास में तकनीकि जगत में हो रहे परिवर्तनों को अपनाना ही होगा। इसके सम्मुख जो चुनौतियां तथा जोखिम है, उसका सामना करना पड़ेगा तथा विभिन्न उपायों से हर स्तर पर सुरक्षा प्रणाली को मजबूत करना होगा ताकि जोखिम को कम किया जा सके। ऐसा होने पर ही बैंकिंग की अविरल यात्रा आमजन के कल्याणार्थ करोबार के विविध रंग व प्रौद्योगिकी में परिवर्तनों के संग जारी रह सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Annual Reports of State Bank of India 2015-16-17
2. www.livemint.com › Industry › Financial Services
3. https://en.wikipedia.org
4. https://www.rbi.org.in/
5. https://economictimes.indiatimes.com › Industry › Banking/Finance › Banking/internet banking
6. https://www.sbi.co.in
7. www.google.com
8. hhttp://www.thehindubusinessline.com/money-and-banking/merger-of-associate-banks-with-sbi-may-not-be-seamless-for-customers/article9604979.ece
9. Banking seminar of reserve bank of india (150512)

****

कुंभ महापर्व धार्मिक पर्यटन केन्द्र उज्जैन

रीता टेटवाल *

शोध सारांश – मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र का उज्जेन संभाग जो प्राचीन काल में अवन्ती क्षेत्र के नाम से जाना जाता था। इस जनपद की श्रेय यदुवंश की हैहय वंश की शाखा को जाता है। इस प्रकार उज्जैन अवन्ती जनपद की राजधानी के रूप में सामने आया।[1] भारत में सोलह जनपदों में अवन्ती का बड़ा महत्व था। उज्जैन नगर क्षिप्रा नदी के तट पर बसा है। भगवान महाकालेश्वर के कारण भारत का प्राचीन व प्रसिद्ध नगर है।[2]

प्रस्तावना – सुप्रसिद्ध 12 ज्योर्तिलिंगों में से एक महाकालेश्वर यही विराजमान है। शिव व अधंक के बीच युद्ध अवन्ती नगरी के समीप महाकाल वन में हुआ था। यहाँ महाकाल वन नाम का घनघोर जंगल था। शिवजी इस वन की प्राकृतिक शोभा देखकर प्रसन्न हो गए व महाकाल के रूप में सदा के लिए यहाँ बस गए। शिवजी को महाकाल रूप में विराजमान देख ब्रह्माजी आदि देवता ने इस नगरी को बसाया।[3]

उज्जैन विक्रमादित्य की राजधानी थी। विक्रमादित्य ने सिदिमन लोगों को भगाकर सम्पूर्ण उत्तरी भाग पर राज किया। विक्रमादित्य का जन्म भगवान शिव के वरदान से हुआ था।

शोध प्रविधि – इस शोध प्रविधि में विषय **कुंभ महापर्व धार्मिक पर्यटन केन्द्र उज्जैन** कुम्भ की धार्मिक पर्यटन के रूप में पहचान हेतु द्वितीयक शोध सामाग्री और साक्षात्कार द्वारा अध्ययन किया गया है। इन परम्पराओं और मूल्यों को समझने के लिए धार्मिक पुस्तकों और धार्मिक ग्रन्थों के साथ-साथ विद्वानों का मार्गदर्शन भी लिया गया है। इस हेतु शोध पत्र में सन्दर्भ हेतु पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा सन्दर्भित किया गया है।

उद्देश्य :

1. कुम्भ के धार्मिक पर्यटन के महत्व का अध्ययन।
2. कुम्भ पर्व में पर्यटन के दार्शनिक मूल्यों का अध्ययन।
3. कुम्भ महापर्व में धार्मिक मूल्यों का अध्ययन।
4. कुम्भ महापर्व उज्जैन के धार्मिक पर्यटन का अध्ययन।

समस्या :

1. कुम्भ परम्पराओं में ब्राह्य सामग्री की समस्या।
2. कुम्भ महापर्व में पर्यटकों को ठहरने की समस्या।
3. उत्तम जल की समस्या।
4. कुम्भ महापर्व में पर्यटन में पार्किगं की समस्या।

पर्यटकीय स्थल – भारत में प्राचीन काल से पर्यटन का महत्व रहा है। शारीरिक और मानसिक विश्राम के लिए पर्यटन अधिक आवश्यक बन गया तथा आर्थिक आय का महत्वपूर्ण संसाधन बन गया है। प्राचीन भारत की सात विशिष्ट नगरियों में प्रमुख नगरों में उज्जयिनी अपनी गौरवशाली सांस्कृतिक परम्परा, मंदिरों व पुण्य शिप्रा के कारण विश्वविख्यात है।

समाधान – उज्जयिनी में कुंभ परम्परा अवंतिका नगरी अर्थात् उज्जैन में वैशाख मास की शुक्ल पक्ष में सिंह राशि में गुरु, मेष राशि में सूर्य, तुला राशि में चन्द्र, स्वाति नक्षत्र तथा पूर्णिमा व व्यतिपात योग सोमवार आदि दस पुण्यपद योग होने पर ही सिंहस्थ पर्व मनाया जाता है। ब्रहस्पति सदैव बारह वर्षों में ही चक्र भ्रमण पूर्ण नही करता है बल्कि चौरासी वर्ष में एक बार ग्यारह वर्ष के अंतर से ही चक्र आरम्भ में जाता है। इस तरह बारह वर्षो के अंतर से सिंहस्थ पर्व मनाया जाता है। उज्जयिनी में होने वाला कुंभ (सिंहस्थ) पर्व वैशाख मास की चैत्र पूर्णिमा से वैशाख पूर्णिमा तक रहता है।[4]

श्रद्धा, आस्था और विश्वास का पर्व 'सिंहस्थ' पावन नगरी उज्जैन का पर्याय बन चुका है। भूतभावन महाकाल की इस पवित्र धरा पर बारह वर्षो में धर्मध्वजा को धारण करते हुए जनसमूह उमड़ता है तथा अमृत पान की चाह एिं सम्पूर्ण भारत व देश विदेश से श्रद्धावान यहाँ आते है।

सिंहस्थ उज्जैन का महान स्नान पर्व है। पुराणों के अनुसार देव-दानवों के सहयोग से समुद्र मंथन सम्पन्न हुआ जिससे 14 रत्नों की प्राप्ति हुई तथा अमृत कुंभ भी निकला था। देवगण दानवों को अमृत नही देना चाहते थे। इसलिए देवगण इन्द्र के आदेश से उनका पुत्र जयंत अमृत कलश लेकर भागने की चेष्टा कर रहा था तब अमृत कलश में अमृत की कुछ बुंदे चार स्थानों पर गिरी वह स्थान प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन है। इन स्थानों की पवित्र नदियों में अमृत की बुंदे गिरने से यहाँ कुंभ महापर्व का आयोजन किया जाता है।

क्षिप्रा नदीं के किनारे स्थित घाट – रामघाट को श्रीरामघाट के नाम से भी जाना जाता है। यह हरसिद्धि मंदिर के समीप स्थित है।

त्रिवेणी घाट – त्रिवेणी घाट का नवग्रह मंदिर तीर्थ यात्रियों के लिए आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। इस घाट पर क्षिप्रा-स्नान का संगम है।

मंगलनाथ घाट – यह तीन घाट मंगलनाथ मंदिर के पुल के पास क्षिप्रा के दाये और बाये किनारे पर स्थित है।

दत्ता अखाड़ा घाट – यह घाट उज्जैन बड़नगर मार्ग पर क्षिप्रा के बाँयी तरफ बाये किनारे पर स्थित है। यह घाट जल संसाधन विभाग द्वारा सिंहस्थ स्नान के लिए निर्मित किया गया है।

नरसिंह घाट – यह घाट प्रसिद्ध भूखी माता मंदिर के सामने कर्कराज मंदिर के दायी तरफ स्थित है। यह कर्कराज मंदिर उज्जैन से निकलने वाली कर्क रेखा पर स्थित है।

धार्मिक स्थल – मोदायिनी क्षिप्रा के तट पर स्थित उज्जैन प्राचीनकाल से ही धर्म, दर्शन संस्कृति व आस्था का केन्द्र रहा है। उज्जैन के प्राचीन मंदिर एवं पूजा स्थल जहाँ एकता और पुरातत्व शास्त्र की बहुमूल्य धरोहर है। वहीं दूसरी ओर ये हमारी आस्था और विश्वास का केन्द्र बिन्दु है।

महाकालेश्वर मंदिर – भगवान महाकाल की बारह ज्योर्तिलिंगों में गणना होती है। उज्जैन के महाराजा और शाश्वत शासक महाराजाधिराज श्री

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

महाकाल ही है। इसलिए उज्जैन को महाकाल की नगरी कहा जाता है। ये कालचक्र के प्रवर्तक है तथा भक्तों की मनोकामनाऐं पूर्ण करने वाले बाबा महाकालेश्वर के दर्शन मात्र से ही मनुष्य की अकाल मृत्यु से होती है।

श्री बड़े गणपति मंदिर – महाकालेश्वर मंदिर के पीछे प्रवचन हाल के सामने गणेश जी की विशाल मूर्ति प्रतिस्थापित है। इस मंदिर में हनुमान जी की अत्यन्त आकर्षक मूर्ति प्रतिस्थाति है। जो पर्यटन केन्द्र के रूप में सुशोभित होती है।

हरसिद्धि देवी मंदिर – स्कन्द पुराण के अनुसार शिवजी के कहने पर माँ भगवती ने दुष्ट दानवों का वध किया था तब से उनका नाम हरसिद्धि नाम से प्रसिद्ध हुआ। शिवपुराण के अनुसार सती की कोहनी यही पर गिरी थी तब से इसे सिद्ध पीठ की संज्ञा दी जाती है।

गोपाल मंदिर – इस मंदिर का निर्माण दोलतराव सिंधिया की महारानी बायजाबाई द्वारा कराया गया था।

सिंहस्थ परिक्षेत्र और मोक्षदायिनी माँ शिप्रा – सिंहस्थ स्नानपर्व का क्षिप्रा परिक्षेत्र तथा तटवर्ती उज्जयिनी से निकट का संबंध है। इस स्नान पर्व को कुम्भ पर्व की संज्ञा दी गई है। क्षिप्रा मानव के जीवन का पर्याय है। यह किसी पर्वत के गौमुख से नहीं बल्कि धरा के गर्भ के धरातल पर बहती है। स्कन्दपुराण के अनुसार क्षिप्रा उत्तरगामी है और उत्तर में बहते हुए ही चंबल में जा मिलती है। शिप्रा का उल्लेख यजुर्वेद में भी मिलता है। एक रोचक कथा के अनुसार एक बार जब महाकालेश्वर को भूख लगी तो उन्होंने भिक्षा मांगने का निश्चय किया जब वे भगवान विष्णु के सामने भिक्षा लेने गये तो विष्णु जी ने उन्हें अपनी तर्जनी दिखा दी इस पर महाकाल ने क्रोधित हो उनकी तर्जनी को त्रिशूल से भेद दिया। तब विष्णु जी का रक्त से शिवजी का कपाल भर गया और वह नीचे प्रवाहित होने लगा। उसी से शिप्रा का जन्म हुआ तथा इसी शिप्रा नदी में अमृत की बूंदे गिरने से सिंहस्थ का पर्व मनाया जाता है।[5]

निष्कर्ष – उज्जैन मानव सभ्यता के प्रारम्भ से भारत के महान तीर्थ स्थल के रूप में विकसित हुआ। पुण्य सलिला क्षिप्रा के दाहिने तट पर बसे इस नगर को भारत की मोक्षदायक सप्तपुरियों में एक माना गया है। संसार में संभवत: कोई भी तीर्थ स्थान ऐसा नही होगा जिसे तीर्थो का तीर्थ कहा जा सके। स्कन्दपुराण के अवन्ति खण्ड में चौरासी महादेव का अपना अलग ही महात्म्य है। महाकाल की इस नगरी का महत्तव यहाँ पर एक ही स्थान पर विराजमान वस्तु–श्मशान, उरवर, हरसिद्ध पीठ तथा वन है जो अत्यन्त ही दुर्लभ है। उज्जयिनी स्थित सुप्रसिद्ध पूरावन शिप्रा केन्द्र में चारों वेदों, वेदांगों, उपनिषदों आदि का सांगोपांग अध्यापन होता था। उज्जैन के गढ़ क्षेत्र से हुई खुदाई में आद्यैतिहासिक एवं प्रारम्भिक लोहयुगीन सामग्री प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **महापुराण श्रीशिवमहापुराणाङ्कब** कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 165
2. डॉ. ददन उपाध्याय, **भर्तृहरिशतकत्रयम् नीति–श्रृंगार–वैराग्य,** चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी, 2013, पृष्ठ 32
3. प्रो. महावीर, **वेदों में आर्थिक चिंतन,** प्रगतिशील प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 70
4. **महापुराण श्रीशिवमहापुराणाङ्कब** कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 163
5. **कल्याण, उपनिषद्–अंक,** गीताप्रस, गोरखपुर, सं0 2064 आठवाँ पुनर्मुद्रण तेईसवें वर्ष का विशेषांक, पृष्ठ 25

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

वर्तमान में योग की प्रासंगिकता

मंजू तिवारी *

प्रस्तावना – संसार में किसी को भी शांति नहीं है। यहाँ तक कि मनुष्य के साथ-साथ जीव-जन्तु और प्रकृति भी सभी अशांत है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के वशीभूत इंसान हिंसक होता जा रहा है। धैर्य, दया, करुणा, क्षमा, सदाचार आदि बातें भुलाकर व्यक्ति में हिंसा, चौरी, डकैती, हेरा-फेरी व्यभिचार आम बात हो गई है। अब वर्तमान मे मनुष्य शांति की खोज में भटक रहा है। इसकी शांति का मार्ग 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओतप्रोत भारतीय संस्कृति ही दे सकती है। इस विषम परिस्थितियों में भारत का 'योग-ज्ञान' संचार को शांति और सद्भाव प्रदान करने की शक्ति रखता है।

वर्तमान में योग की प्रासंगिता इसकी चर्चा पूरे विश्व में हो रही है। योग भारत की ही देन है पर भारतीयों ने योग को जब समझा। उस समय योग अमेरिका, यूरोप आदि देशों से होकर योग, योगा बनकर भारत वापस आ गया। विशेष तौर पर अमेरिका और यूरोप में योग को आसन प्राणायाम एवं शारीरिक व्यायाम तक ही सीमित कर दिया गया है। योग भारतीय 'षडदर्शन' जो कि वेदों के अंग कहे गये हैं। उनमें से योग दर्शन भी एक अंग है। योग दर्शन के अतिरिक्त अन्य पाँच वेदांग है। सांख्य, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा एवं उत्तर मीमांसा इन दर्शनों पर ही मूल भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता आधारित है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र **वर्तमान में योग की प्रासंगिकता** में द्वितीयक शोध सामाग्री के संकलन के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ धार्मिक ग्रन्थों और विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है।

समस्या –

1. वर्तमान समय में मूल्यों की समस्या।
2. योग के असंयमित व्यायाम से शरीर पर प्रतिकूल समस्या।
3. रोग ग्रसित शरीर की समस्या।
4. काम, क्रोध, लोभ, अहंकार की समस्या।

उद्देश्य :

1. योग में मानवीय मूल्यों के संरक्षण का अध्ययन।
2. योग की साधना पद्धति से काम, क्रोध, लोभ और अहंकार से निदान का अध्ययन।
3. समाज में योग के लिए जागरूकता का अध्ययन।
4. योग से शारीरिक लाभ से जागरूकता का अध्ययन।

योग का शाब्दिक अर्थ है-जोड़ना-योग शरीर मन एवं आत्मा को जोड़ता है। यह जुड़ाव चित्त की वृत्तियों के निरोध से संभव है। '**योगश्चित्वृत्तिनिरोध:'** अर्थात चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है।[1] चित्त की पाँच अवस्थायें होती है-क्षिप्त, मूढ, विक्षिप्त, एकाग्र, निरुद्ध।

समाधान – इस प्रकार चित्त की वृत्तियों का निरोध करके हम मन शरीर एवं आत्मा का एकीकरण कर लेते हैं, जो योग कहलाता है। चित्त की वृत्तिओं का निरोध किस प्रकार किया जाये इसके लिये महर्षि पातंजलि ने आठ पदों की व्याख्या की हैं-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि इन अष्टांग योग का प्रतिपादन किया है। योग जीवन पद्धति इतनी प्रभावी है कि योग को कितना भी कम गंभीरता से अपनाये इसके परिणाम धीरे-धीरे अपने आप आने लगते हैं।

अष्टांग योग की पहली सीढ़ी यम और दूसरी सीढ़ी नियम इन दोनों का पालन करना अति आवश्यक है। इसके बाद हम आसन, प्राणायाम, आदि आगे के साधन कर पायेंगें। आसन प्राणायाम तो हमारे चौबीस घंटे के साथी है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी आसन पर सदैव बैठते हैं। जिसके अनुसार प्राण संचारित होकर एक विशिष्ट आयाम को प्राप्त करता है। व्यक्ति का कोई भी कार्य ध्यान के बगैर सम्पन्न नहीं हो सकता। इस प्रकार सम्पूर्ण योग मानव की दिनचर्या में शामिल है। यही सम्पूर्ण दिनचर्या का सिद्धान्त है।[2] इन सिद्धान्तों के प्रतिबद्ध होकर ही अपनी दिनचर्या को कुशलतापूर्वक संचालित करना चाहिए। वर्तमान में जितने भी रोग कायम हैं जैसे-मधुमेह, गठिया, रक्तचाप, हृदयरोग, फेफड़ा, किडनी, स्टोन, लकवा कुछ एलर्जी इत्यादि सभी योग दिन चर्चा का पालन न करने के कारण होते हैं। मन का इलाज योग के बिना कही नहीं है। आधुनिक योग से ही संभव है। योग में आहार-विहार, आचार-विचार का महत्वपूर्ण स्थान है।

आहार हमारे शरीर चित्त एवं वृत्तियों पर सीधा प्रभाव डालते हैं। इसीलिए कहा गया है कि जैसा खाओ अन्न वैसा होगा मन सात्विक भोजन सात्विक विचार उत्पन्न होते है। माँसाहारी भोजन, तामसी विचारों को प्रकट करता है। जब व्यक्ति का तामसी विचार हो उसका जीवन क्लेश युक्त होता है। तामसिक भोजन के कारण व्यक्ति कष्ट दु:ख पीड़ा असुरक्षा आदि भोग रहा है। इसका कारण योग जीवन पद्धति से भटकना है।

योग को अपनाये बगैर मनुष्य जीवन के कष्टों का निवारण नहीं किया जा सकता है। इसीकारण चित्तवृत्तियों में परिवर्तन होता है। क्योंकि वह अपने को लोभ, लालच, ईर्ष्या, क्रोध, मोह, अहंकार आदि मनोंविकारो से धीरे-धीरे दूर हो जाता है। इसीलिये विश्व आज योग के इसी आयाम को समझ कर इसे अपनाने को तैयार है। आज वर्तमान में आधुनिकता के कारण हमारी जीवन शैली ने अनेक मानसिक शारीरिक विकार उत्पन्न किये है। जिनका कोई सफल उपचार आधुनिक विज्ञान खोज नहीं पाया है।[3]

योग के 'यम और नियम' को अपनाकर इन मनोविकारों से मुक्ति मिल सकती है। इस प्रकार योग एवं उसकी अनुषांगिक क्रियाओं द्वारा व्यक्ति की समग्र चेतना एवं उर्जा का विकास होता है। योग के साथ ध्यान आवश्यक है। ध्यान के साथ मन और जाप करने से चेतना के स्तरों में अतिशीघ्र वृद्धि होती है। मन्त्र ऊर्जा चक्रों को सक्रिय करने का साधन है।

योग एक जीवन पद्धति है जिसका सम्बन्ध किसी धर्म, सम्प्रदाय एवं

*शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

मत से न होकर सम्पूर्ण मानवता से है। मनुष्य के कष्टों का निवारण एवं कल्याण केवल और केवल योग जीवन पद्धति के अपनाने से ही सम्भव है। योग को आज भारत सहित सम्पूर्ण विश्व '21 जून' को योग दिवस के रुप में मनाता है।[4]

भारत की प्राचीन विद्या योग अब धीरे-धीरे पुन: विश्व भर में विस्तारित एवं प्रभावी होने लगी है। भारत को योग का प्रमुख केंद्र, योग का विश्वगुरु बनाने की ओर अग्रसर है। योग चूँकि प्रत्येक मानव के लिए शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक तथा सांसारिक रूप से लाभदायक है। इसलिए इसका विस्तार सबके हित में है। योग वास्तव में किसी धर्म संप्रदाय की चीज नहीं, बल्कि शुद्ध रूप से एक विश्व विज्ञान की तरह मानव विज्ञान है। खासकर पतंजलि योग पूरी तरह वैज्ञानिक प्रक्रिया पर आधारित है। जो हजारों साल से विज्ञान की तरह प्रमाणित होने के कारण इसे आज भी प्रमाणित करके देखा जा सकता है। इसलिए यह मानव के लिए बहुउपयोगी सिद्ध हो रहा है।[5]

योग के आठ चरण- यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि है। जिसमें से यम, नियम, आसन, प्राणायाम मानव को शारीरिक रूप से स्वस्थ सबल बनाता है। जिससे अब सभी परिचित होने लगे हैं, और इसके साथ प्रत्याहार, धारणा, ध्यान का उपयोग मानव विद्यार्थियों को मानसिक रूप से स्वस्थ, सबल बनाने की प्रक्रिया है। इसके साथ ध्यान तथा समाधि आध्यात्मिक उपलब्धि का हिस्सा है। जिससे आत्मा (चेतना), परमात्म (परम चेतना), अस्तित्व के सत्य का ज्ञान अनुभव से होता है।

योग के पाँचवे, छठवें, सातवें चरण को प्रत्याहार-धारणा-ध्यान कहा जाता है। यह मनुष्य के मन-मस्तिष्क की शांत, निर्विचार अवस्था है। विज्ञान की भाषा में यह मस्तिष्क की अल्फा तरंग की अवस्था है। जो मानव मन-मस्तिष्क से सीधे सम्बंधित होने के कारण शिक्षा के क्षेत्र में बहुत उपयोगी है। यह योग के प्रथम चरण से प्रारंभ कर धीरे-धीरे अभ्यास करते हुए सातवें चरण तक पहुँच कर ध्यान अनुभव किया जा सकता है। ध्यान सीधे भी किया जा सकता है। देश-दुनिया में इसकी अनेक प्रक्रियाऐं उपलब्ध है। लेकिन अच्छे परिणाम के लिए यम नियम का पालन करते हुए क्रमश: आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान का उपयोग सहयोगी होता है।[6]

आधुनिक मनुष्य के लिए योग-ध्यान बहुत ही जरूरी हो गया है। आज के आधुनिक दुनिया और जटिल जिंदगी में यदि आप मानसिक तनाव मुक्त जीवन के साथ ही शारीरिक रूप से स्वस्थ रहना चाहते हैं। ऐसी दशा में योग-ध्यान को अपनाने की बहुत आवश्यकता है।

आधुनिक युग में प्राय: हर आदमी जिंदगी की व्यस्तताओं, जटिलताओं, पर्यावरण प्रदूषण, शोरगुल तथा विभिन्न आधुनिक मशीनों से निकलने वाले सूक्ष्म तरंगों के प्रभाव से शारीरिक, मानसिक तनाव तथा थकान अनुभव करता है। योग-ध्यान से इसके दुष्प्रभाव से बचाता है। निरंतर योग-ध्यान करते रहने से शरीर-मस्तिष्क में नई सकारात्मक उर्जा का संचार होता है। जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों की सफलता में सहयोगी है।

योग-ध्यान करने से शरीर की प्रत्येक कोशिकाओं के भीतर प्राण शक्ति, जीवन्तता का संचार होता है। जिससे शरीर स्वस्थ, सबल महसूस होता है। शरीर में प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है।

योग-ध्यान से भरपूर लाभ प्राप्त करने के लिए नियमित अभ्यास करना आवश्यक है। योग में ध्यान का स्थान बहुत ऊँचा है। ध्यान के अनेक प्रकार की विधि है। ध्यान करने के लिए सबसे सरल विधि है- किसी साफ-स्वच्छ, हवादार, शांत वातावरण में योग प्राणायाम करने के पश्चात आंखें बंद करके बैठ जाएं या शवासन की मुद्रा में शांत लेटे रहें। पांच-दस मिनट तक बंद आंखों के सामने के अंधेरे या प्रकट होते विभिन्न रंगों या प्रकाश को देखते रहें और आनंदित महसूस करें, शरीर में उर्जा का संचार अनुभव करें अथवा किसी सुंदर प्राकृतिक वातावरण में अपने आप को बैठा हुआ या टहलता हुआ अनुभव करें। फिर धीरे से आँख खोलकर उठ जाएं। इससे शारीरिक मानसिक स्वस्थता तथा ताजगी का एहसास होता है। एक और प्राचीन ध्यान विधि है, जिसमें अपने आने-और जाने वाली श्वास क्रिया को 5 -10 मिनट शांत चित्त से देखते रहें। इसे ही विपस्सना ध्यान कहा जाता है अथवा शांत होकर सौ से एक तक उलटी गिनती प्रारंभ करें और अपने आप को रिलैक्स और आनंदित महसूस करे। इससे मानव के जीवन में आनन्द का अनुभव होगा।[7]

इसके अतिरिक्त भी ध्यान की अनेक विधियाँ हैं। जो लोगों के अलग-अलग व्यक्तित्व के हिसाब से उपयोगी होता है। यह प्रत्येक मनुष्य एवं विद्यार्थियों के भीतर प्राकृतिक रूप से छिपी अपार मन-मस्तिष्क क्षमता को भी प्रकट करने की क्षमता का विकास होता है। इस प्रकार की सक्रिय करने और सक्रिय कर बहुमुखी प्रतिभावान बनाने में सहयोगी है।

आज विज्ञान ने मनुष्य को व्यावहारिक जीवन में अनेक तरह की सुख-सुविधाएं प्रदान की हैं। जिससे आज मनुष्य सुविधा भोगी होने से निष्क्रिय और आलसी बनता जा रहा है। परिणामस्वरूप मनुष्य की जीवन-शैली अप्राकृतिक होने से वह प्रकृति से बहुत दूर चला गया है। इस कारण वह अनेक तरह के कष्टों, दु:खों, कठिनाईयों से घिरता जा रहा है। इन शारीरिक व्याधियों के अलावा वह मानसिक और आत्मिक रूप से भी रूग्ण होता जा रहा है। उसे शांति नहीं प्राप्त हो रही है। अत्यन्त अशांति एवं तनाव में रहने के कारण वह मानसिक रूप से कमजोर होता जा रहा है। कमोवेश यह स्थिति युवाओं और वृद्धों की ही नहीं बल्कि बच्चों की भी है। बच्चों के ऊपर टेलीविजन और कम्प्यूटर, मोबाईल आदि इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का जबरदस्त प्रभाव है। इस कारण मुख्य रूप से उनकी दृष्टि प्रभावित होने से अनेक तरह के आंखों की व्याधियों से बच्चे ग्रस्त होते जा रहे हैं।

मनुष्य कितना ही महत्वाकांक्षी क्यों न हो मगर स्वस्थ मन व शरीर के अभाव में कुछ भी नहीं कर सकता। चाहे खेल का मैदान हो या नौकरी में तरक्की, कुछ कर दिखाने के लिए स्वस्थ रहना पहली प्राथमिकता है। सिद्ध योगियों ने इसका अनुभव किया और आसनों के महत्व पर प्रकाश डाला। पूर्व के मानव मस्तिष्क तथा आधुनिक मानव मस्तिष्क में भले ही थोड़ा-बहुत अंतर क्यों न हो। लेकिन आसन आज भी उतने ही उपयोगी है। जबकि हजारों वर्ष पूर्व से ध्यान योग की पद्धति विद्यमान है। उसका परिणाम मिल रहा है कि मानव में आज योग के प्रति जागृति उत्पन्न हो रही है क्योंकि थोड़े ही समय में आधुनिक मस्तिष्क भी अपने आधुनिक उपकरणों के प्रयोग को असफल होते देखा जा सकता है। योग को शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए उचित माध्यम बन गया है।

योग का मुख्य लक्ष्य हमें परम चेतन मार्ग पर ले जाना है। जिससे हमें अपने अस्तिस्व का ज्ञान हो सके। यदि शरीर रोग ग्रस्त है तो हमें परम चेतना की ओर जाने की इच्छा भी नहीं होगी, क्योंकि शरीर रोग होने से मन पर असर पड़ता है। शरीर में खुजली-दर्द हो तो बेचैन शरीर से मन पकड़ में नहीं आता इसलिए योग द्वारा शरीर को रोग मुक्त करना अत्यन्त आवश्यक है। भारत में योग दर्शन के द्वारा शारीरिक और मानसिक रोगों का निदान बताया गया है। इसमें शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए योग दर्शन को अपनाने पर अधिक बल प्रदान किया गया है। योग दर्शन दैहिक,

मानसिक और आत्मिक दु:खों को दूर कर मनुष्य को अरोग्यता प्रदान करता है। सच्चे अर्थ में योगशास्त्र को देह, मन तथा आत्मा का चिकित्साशास्त्र कहा जाना अधिक उपयुक्त होगा क्योंकि इसके माध्यम से व्यक्ति अपने समस्त दु:खों पर विजय पा सकता है।[8]

प्राय: देखा गया है कि बहुत हिम्मत वाले व्यक्ति भी रोगग्रस्त होने पर हिम्मत हार जाते हैं, क्योंकि शारीरिक स्वास्थ्य की गिरावट से मन कमजोर हो जाता है। लेकिन वही व्यक्ति स्वास्थ्य प्राप्त करने पर पुन: मजबूत बन जाता है। योग शरीर को चुस्त, स्वस्थ रखने का सबसे आसान माध्यम है। शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक रूपों में योगासनों का इतिहास समय की अनंत गहराईयों में छिपा है। मानव जाति के प्राचीनतम साहित्य वेदों में इनका उल्लेख मिलता है। वेद आध्यात्मिक ज्ञान के भंडार हैं। उनके रचयिता उस समय के महान आध्यात्मिक व्यक्ति थे। कुछ लोगों का ऐसा भी विश्वास है कि योग विज्ञान वेदों से भी प्राचीन हैं।

निष्कर्ष – आधुनिक युग में योग सारे संसार में जिस तीव्र गति से फैल रहा है। वह प्रशंसनीय व स्वागत योग्य है। योग का ज्ञान हर एक की संपत्ति बनता जा रहा है। आज डॉक्टर और वैज्ञानिक भी योग के माध्यम से स्वस्थ रहने की सलाह दे रहे हैं। यही कारण है कि भारत ही नहीं, अपितु दुनिया भर के लोग यह अनुभव कर रहे हैं, कि स्वस्थ जीवन और निरोग रहने के लिए योग सर्वोत्तम माध्यम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **डॉ. नन्द किशोर देवराज,** *भारतीय दर्शन,* उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2002, पृष्ठ 407
2. **सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव**, *पातञ्जलयोगदर्शनम्,* चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011, पृष्ठ 168
3. **डॉ. नन्द किशोर देवराज**, *भारतीय दर्शन,* उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2002, पृष्ठ 434
4. **डॉ. भीखन लाल आत्रेय**, *भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास,* हिन्दी समिति सूचना विभाग, उ.प्र. लखनऊ संस्करण 1964 पृष्ठ 50
5. **चन्द्रधन शर्मा,** *भारतीय दर्शन, आलोचना और अनुशीलन,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1995, पृष्ठ 162
6. **सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव,** *पातञ्जलयोगदर्शनम्,* चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011, पृष्ठ 55
7. **प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा,** *भारतीय दर्शन की रूपरेखा,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2002, पृष्ठ 275
8. **डॉ. एस.एन. दासगुप्त,** *भारतीय दर्शन का इतिहास,* राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 2011, पृष्ठ 271

'रघुवंशम्' - महाकाव्य में निहित गायन के तत्व

डॉ. वेद प्रकाश मिश्र * टिकेश्वर प्रसाद जायसवाल **

शोध सारांश – संस्कृत साहित्य के महाकवियों में कालिदास का स्थान उपमा के लिए सर्वोपरि है।[1] आदि कवि वाल्मीकि से कविकुलगुरु कालिदास पर्यन्त संस्कृत साहित्य के काव्यगंगा में सहज, सरस एवं अलौकिक सौन्दर्य का प्रवाह सहृद्यों के हृद्यों को आह्लादित करता रहा। छठीं शताब्दी में कालिदास का अधिकृत उल्लेख प्राप्त होता है।[2]

महाकाव्य मानवता की पुष्टि के लिए सुमधुर रसायन है।[3] संस्कृति का सम्पूर्ण स्वरूप महाकाव्यों में दिखाई देता है। यही कारण है कि लोक संस्कृति का सम्पूर्ण भाग महाकाव्यों में दिया जाता है। संस्कृति के स्वरूप में कला का विशेष स्थान है,जो महाकाव्यों में महाकवियों के द्वारा उकेरा जाता हुआ, लोक जीवन को प्रभावित करता है। कलाओं में भी ललित कला तथा ललित कला में संगीत की कला लोक जीवन को आनंदित एवं प्रभावित करने में विशेष स्थान रखती है। संगीत कला में गायन का प्रथम स्थान है।

अत: इस शोध-पत्र के माध्यम से कविकुलगुरु कालिदास रचित विश्व प्रसिद्ध महाकाव्य 'रघुवंशम्' में निहित गायन के तत्वों का समीक्षण अभिप्रेत है।

गायन के तत्व – संगीत की परिभाषा देते हुए संगीत रत्नाकर के रचयिता ने लिखा है-**'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते।'**[4] अर्थात गीत, वाद्य एवं नृत्य के समन्वित रूप को संगीत कहा जाता है। संगीत में गीत का स्थान वाद्य एवं नृत्य से पूर्व है, अत: गीत का निरूपण किया जा रहा है।

संगीत शास्त्रों के अनुसार गीत के अंश के रूप में नाद, श्रुति, स्वर, तान, राग आदि का वर्णन मिलता है। गीत भी लोक और शास्त्र के आधार पर लोकगीत और शास्त्रीय गीत कहलाते हैं। किंतु कहीं-कहीं महाकाव्य में स्तुतिगान का उल्लेख मिलता है जो न तो पूर्णत: शास्त्रीय है और न ही लोकगीत है अत: संगीत में गायन का एक अलग ही अंग के रूप में स्तुतिगान का उल्लेख करना उचित प्रतीत होता है। रघुवंश महाकाव्य में गीत के अंश और अंग अनेकत्र द्रष्टव्य है-

स्निग्धगम्भीरनिर्घोषमेकं स्यन्दनमास्थितौ।
प्रावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदैरावताविव।।' [5]

पुत्र प्राप्ति की कामना के साथ गुरु वसिष्ठ के आश्रम की ओर गमन कर रहे सुदक्षिणा और राजा दिलीप का वर्णन करते हुए कालिदास लिखते हैं कि मधुर और गंभीर शब्द करने वाले वर्षाकाल के मेघ बिजली के साथ आकाश में ऊपर गमन करते हैं, ठीक उसी प्रकार एक ही रथ में राजा दिलीप और सुदक्षिणा बिजली और ऐरावत हाथी की तरह चले। प्रस्तुत श्लोक में '**स्निग्ध गम्भीर निर्घोषम्**' से नाद की सुकोमलता प्रतिबिम्बित होती है। चूँकि संगीतशास्त्रानुसार '**संगीतोपयोगी ध्वनि: नाद:**'। नाद मधुर एवं कर्ण प्रिय होते हैं। इसी प्रकार विवेच्य महाकाव्य में नाद एवं अनुनाद की सुन्दरता निम्न श्लोक से भी आभासित होता है-

एतावदुक्तवा विरते मृगेन्द्रे प्रतिस्वनेनास्य गुहागतेन।
शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चै: प्रीत्यातमेवार्थमभाषतेव।।[6]

अर्थात् गुरु वसिष्ठ द्वारा दी गई नन्दिनी गौ की रक्षा कर रहे दिलीप की नन्दिनी गाय पर सिंह का आक्रमण और सिंह के कुछ कहकर शांत हो जाने पर जो ध्वनि सुनाई पड़ी उसका वर्णन उक्त श्लोक में मिलता है जिसमें कहा गया कि सिंह के द्वारा इतना कह कर चुप हो जाने पर गुफा में पहुँची हुई इसकी प्रतिध्वनि से पर्वत भी मानो प्रेमपूर्वक उसी बात को राजा दिलीप से जोर से कहने लगा।'

यहाँ पर '**प्रतिस्वनेन**' शब्द के उल्लेख से नाद एवं अनुनाद का प्रतिबिम्ब द्रष्टव्य होता है। साथ ही '**प्रीत्या शिलोच्चयो**' कहकर उसे संगीतोपयोगी नाद होना सिद्ध किया गया है। इसी प्रकार रघुवंश महाकाव्य के अनेक श्लोकों से नाद की अनुभूति अनुश्रुत है। संगीत का प्रथमांश गीत में प्रयुक्त होने वाली श्रुति का सुन्दर सादृश्य अधस्तन श्लोक में दिख पड़ता है-

श्रोताभिरामध्वनिना रथेन स धर्मपत्नीसहित: सहिष्णु:।
ययावनुद्घातसुखेन मार्गस्वेनेव पूर्णेन मनोरथेन।।[7]

यहाँ पर नन्दिनी गाय के द्वारा ली गई परीक्षा में सफल होकर आशीष प्राप्त कर जब राजा दिलीप सुदक्षिणा सहित मार्ग को अवलम्बन करते हैं, तो उन्हे कानों को सुख देने वाली रथ के पहियों की आवाज ठीक उसी प्रकार आनन्द से भर रही है, जिस प्रकार उन्होने अपनी सफल हुए मनोरथ से आनंदित हैं।श्रुति के संबंध मे यह कहा गया है कि जो ध्वनि श्रवण योग्य हो और आघात होने के साथ ही सुनाई दे वह श्रुति है।[8] इस आधार पर श्लोक में '**श्रोताभिरामध्वनिना रथेन**' में श्रुति की सन्निधि स्वयं सिद्ध ही है। रघुवंशम् महाकाव्य में गीत के प्रमुख आधार स्वर का पशु-पक्षियों, भ्रमरों, हाथियों आदि के ध्वनि का उदाहरण देकर कालिदास जी ने अनेकत्र चित्रांकन किया है-

मनोऽभिरामा: शृण्वन्तौ रथनेमिस्वनोन्मुखै:।
शड्जसंवादिनी: केकाद्विधा भिन्ना: शिखण्डिभि:।।[9]

इस पद्य में '**शड्जसंवादिनी**' से स्पष्ट है कि यहाँ पर संगीत में प्रयुक्त षड्ज स्वर का उल्लेख हुआ है।

इसी तरह कोयल, मयूर आदि के स्वरों का स्निग्ध वर्णन इस महाकाव्य में स्थान-स्थान पर परिलक्षित है, जो स्वर के होने की पुष्टि करता है। यथा-

दृश्टापि सा ह्रीविजिता न साक्षाद् वाग्भि: सखीनां प्रियमभ्यनन्दत्।

* प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष (संस्कृत) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय , करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी (संस्कृत) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

स्थलीनवाम्भ:पृशताभिवृष्टा मयूरकेकाभिरिवाभ्रवृन्दम्।।[10]

इस पद्य में अज की पत्नी इन्दुमती, के शृगांरिता का वर्णन करते हुए कवि लिखते हैं कि रानी इन्दुमती राजा अज के पराक्रम से प्रसन्न होकर बिना जुती हुई भूमि वर्षा के नये जल बून्दों को प्राप्त कर मेघ समूह का अभिनन्दन स्वयं न करके मयूरों की केका से करती है, उसी प्रकार इन्दुमती स्वयं अपने वचनों से राजा अज का अभिनन्दन न करके, सखियों के मधुर वचनों से अभिनन्दन की।

यहाँ पर मयूरों की केका का सुन्दर वर्णन प्राप्त है, जिसमें स्वर का संयोजन संगीत– रत्नाकर के निम्न श्लोक के आधार पर स्पष्ट है–

मयूरचातकच्छागक्रौञ्चकोकिलदर्दुरा:।
गजश्च सप्त शड्जादीन् क्रमादुच्चारयन्त्यमी।।[11]

अर्थात् मयूर, चातक, छाग, क्रौञ्च, कोकिल, मण्डूक , एवं गज क्रमश: षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत तथा निषाद इन सप्त स्वरों का उच्चारण करते हैं।

कोकिल के पंचम स्वर की उत्पत्ति उक्त श्लोक में उल्लेखित है तथा निम्न पद्य में कोयल के मधुर कुहुक का वर्णन राजा दशरथ के स्वागतार्थ वसन्त ऋतु में किया गया है–

प्रथममन्यभृताभिरुदीरिता: प्रविरलाइव मुग्धवधूकथा:।
सुरभिगन्धिशु भुश्रुविरेगिर: कुसुमितासुमिता वनराजिशु।।[12]

इस पद्य में कोयलों के द्वारा कही गयी परिमित वचन कुहुकना से पंचम स्वर का उल्लेख स्पष्ट है। इसी प्रकार अन्य पद्यों में भी कोयल, मयूरादि के शब्दों से संगीत–स्वरों का सोल्लेख सहज ही दिखाई पड़ता है।

इस महाकाव्य में अनेक जगह गान, गीत, गायन इत्यादि के पर्याय से गीत की चर्चा मिलती है। हिमालय पर्वत पर रघु के सेना और मलेच्छ जाति के लोगों के साथ युद्ध के पश्चात्रघु के यशोगान का वर्णन निम्न पद्य में किया गया है–

भारैरुत्सवसड्.केतान् स कृत्वा विरतोत्सवान्।
जयोदाहरणं बाह्वोर्गापयामास किन्नरान्।।[13]

इस श्लोक में किन्नरो के द्वारा रघु के भुज बल के यशोगान का उल्लेख मिलता है। 'गान' शब्द गै धातु से निष्पन्न है। जिसका संबंध संगीत के गीत से है। इसी प्रकार प्रात:कालीन राजाओं को जगाने के लिए बन्दी आदि के द्वारा स्तुति गान की चर्चा भी महाकाव्य में मिलती है। राजा रघु के कुशल राजशासन करने पर सरस्वती माता ने बन्दियों के द्वारा स्तुति की प्रस्तुति करवाकर उनका अलौकिक स्वागत किया है–

परिकल्पितसान्निध्या काले काले च बन्दिशु।
स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती।।[14]

इस पद्य में बन्दियों द्वारा महाराज रघु के स्तुति का वर्णन है। स्तुति भी गीत के माध्यम से ही किया जाता है, अत: इस पद्य में संगीत सापेक्ष है। इसी प्रकार अनेकत्र स्तुति आदि से गीत , और गीत में संगीत का विद्यमान होना काव्य में दृष्टिगोचर होता है। गायन का शास्त्रीय उदाहरण भी कई श्लोंको से अभिव्यक्त होता है। 'पंचदश' सर्ग के निम्न श्लोक शास्त्रीय गायन के अच्छे उदाहरण है–

साड्.गं च वेदमध्याप्य किञ्चिदुत्क्रान्त शैशवौ।
स्वकृतिं गापयामास कवि प्रथम पद्धतिम्।।
रामस्य मधुरं वृत्तं गायन्तौ मातुरग्रत:।
तद्वियोगव्यथां किञ्चिच्छिथिलीचक्रतु: सुतौ।।[15]

उक्त श्लोकद्वय में लव और कुश की साड्.गीतिक शिक्षा का वर्णन करते हुए महाकवि कालिदास ने लिखा है कि उनके बचपन के कुछ बीत जाने पर छ: अंग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, ज्योतिष और छन्द) के सहित वेद को पढ़ाकर कवियों का सर्वप्रथम कविता बीजभूत रचना को वाल्मीकि ने उन दोनो से (लव और कुश) गान कराया।

माता (सीता) के आगे राम की मधुर कथा को गाते हुए उन दोनो पुत्रों ने उन (राम) के वियोग के दु:ख को कुछ कम किया। राम के विरह से उत्पन्न सीता में व्याप्त अपार दु:ख लव और कुश के मधुरगान से कुछ कम हुआ।

यहाँ पर लव और कुश के द्वारा गाया हुआ रामायण और उनकी संगीत की शिक्षा, शास्त्रीयता को व्यक्त करता है। चूँकि संगीत की शिक्षा जहाँ पर गुरू से शास्त्रसममत लिया जाता है वहाँ शास्त्रीय संगीत का ही बोध होता है। यहाँ लव और कुश को महर्षि वाल्मीकि द्वारा संगीत सिखाया गया। तत्पश्चात रामायण को गेय रूप में उन्हे कण्ठस्थ कराया गया। अत: यहाँ शास्त्रीयता का होना स्पष्ट होता है। इसी प्रकार 'रघुवंशम्' महाकाव्य में लव और कुश के गायन के अनेक उदाहरण मिलते हैं जो शास्त्रीय गायन को अभिव्यक्त करते हैं।

रघुवंशम् के कुछ श्लोको में लोक गायन की भी प्रतीती होती है। निम्न श्लोक में लोक गायन या लोक संगीत का स्वच्छ अनुभव संभाव्य है–

स कीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रै: कूजद्भिरापादित वंश कृत्यम्।
शुश्राव कुञ्जेशु यश: स्वमुच्चैरुद्गीयमानं वनदेवताभि:।।[16]

इस पद्य में नन्दिनी गाय की सेवा में संलग्न राजा दिलीप के स्वागत में वन– देवियों के गीत का वर्णन करते हुए कवि कुल गुरू कालिदास लिखते हैं कि वायु से भरे हुए छिद्रयुक्त कीचक नाम वाले बाँसो से बाँसुरी का कार्य सम्पादन के साथ लतागृहों में वन की पूज्यवरा देवियों से ऊँचे स्वरों में गाए जाते हुए राजा दिलीप ने अपने यश को सुना।

यहाँ पर वन में बाँसुरी का वादन एवं वन की देवियों का गायन लोक संगीत को व्यक्त करता है। चूँकि लोक संगीत के विषय में कहा गया है कि 'यह प्रकृति के समस्त घटकों नदी, पहाड़, सागर, खेत–खलिहान, पेंड़–पौधे, पशु–पक्षी, प्राणी, हवा इत्यादि में लोक संगीत का दर्शनसहज रूप में होता है।'[17] विवेच्य महाकाव्य में लोक संगीत काविशिष्ट स्वरूप एक अन्य श्लोक में भी दिखाई पडता है–

इक्षुच्छायनिषादिन्यस्तस्य गोप्तुर्गुणोदयम्।
आकुमार कथोद्धातं शालिगोप्यो जगुर्यश:।।[18]

इस पद्य में महाराज रघु के यशोगान का वर्णन ग्राम्य कृषक पत्नियों के द्वारा किया गया है। ईख (गन्ना) की छाया में बैठी हुयी साठी आदि धान की रखवाली करने वाली किसानों की स्त्रियों ने रक्षा करने वाले उन रघु महाराज के शूरता, उदारता, आदि गुणों से युक्त यश का गान किया।

यहाँ पर गाँव की सरल एवं साधारण सुकुमारियों (कोमलांगियो) के गायन से लोक संगीत का ही दृश्य हृद्य दर्पण पर दर्शित होता है।

लोक–संगीत को सरल एवं साधारण लोगों का संगीत कहा गया है। संगीतकार प्यारेलाल श्रीमाल ने इस विषय पर कहा है कि 'जब कोई धुन रंजक, सुगेय और स्वाभाविक बन जाती है तथा जनमानस का आहार बन जाता है, तब वह लोक संगीत का रूप धारण कर लेती है।'[19]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि रघुवंश महाकाव्य में अनेकत्र गीत के तत्व एवं उसके प्रकार द्रष्टव्य होते हैं। जिससे तत्कालीन संगीत की प्रतीति होती है। उस काल की लोक रुचि, लोक संस्कृति, सामाजिक प्रथाएँ,

रीति-रीवाज एवं संगीत प्रेम आदि को समझा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्। दण्डिन:पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणा: ।।वामन शिवराम आप्टे संस्कृत हिन्दी-कोश पृ.-790
2. वामन शिवराम आप्टे संस्कृत हिन्दी-कोश पृ. 1199
3. भारवि साहित्य में अनुस्वनित संगीत का समीक्षण- प्रो. कामता प्रसाद त्रिपाठी 'पीयूष', कला सौरभ (11वाँ अंक 2006) पृ. 24
4. संगीतरत्नाकर 1/21 पृ. 13
5. रघुवंश- 1/36
6. रघुवंश- 2/51
7. रघुवंश- 2/72
8. संगीतरत्नाकर भाग 1, सुभद्रा चौधरी पृ. 60
9. रघुवंश- 1/39
10. रघुवंश- 7/69
11. संगीतरत्नाकर 3/46
12. रघुवंश- 9/34
13. रघुवंश- 4/78
14. रघुवंश- 4/06
15. रघुवंश- 15/33,34
16. रघुवंश- 2/12
17. शरीफ मोहम्मद-मध्यप्रदेश का लोक संगीत पृ. 01
18. रघुवंश- 4/20
19. शरीफ मोहम्मद-मध्यप्रदेश का लोक संगीत पृ. 02

****

Physical Variables of Obesity in student

Dr. Avinash Verma *

Introduction - An unvarnished tale states, 'Most peoples become of obese because of physical immobility', Such is true for teenagers as well as adults. A study in California reveled that 14% of high school senior boys and girls were obese. The need of physical activity or some type of yogic practices in elementary, junior and senior high schools can be sustained on the verity alone.

Obesity is related to the number of diseases including diabetes, coronary heart diseases, psychological disturbances, kidney diseases, hypertension strokes, liver ailments and biomechanical ailments (particularly back foot problem). As a consequence life expectancy is significantly reduced among the obese population. Excessive obesity may results in as high as 100% increase in mortality over that which might be expected.

Obesity is difficult to express in quantitative terms. Obesity refers to the above average amount of fat contained in the body; this is turned being dependent on the lipid content of each fat cell number and size in expensive clinical procedures that also does not tell the entire story.

An evaluation of obesity includes measures of body composition, dietary quality, energy expenditure, risk factors, status and body image. The main reason behind obesity is physical inactivity and eating habits, today peoples are to much attract towards the fast food or junk food. The percentages of fat in these foods are in very large amount. The culture of eating was changed in world wide, so the problem of obesity is common in the whole world. It is recommended to do proper physical work, do proper yogic exercise and awareness about eating habits to deal with such kind of problem.

Obesity means an excess amount of body fat. No universal agreement exists. In this present fast growing world of science and technology, the human element is treated as ever before. Its are in distinct and unsatisfying. The mechanism of modern living, the force restriction of physical activity leading to a sensatory life, an increase amount of leisure time these entire factor has resulted in a tremendous increase of pubic and professional interest in physical activity and health. People seem to be 'turning on' to the idea that one looks and feel better and stays healthier by being more physically active.

Obesity in Student - Obesity means an excess amount of body fat. No universal agreement exists on the definition of obesity in children. Most professionals use published guidelines based on the body mass index (BMI), or a modified BMI for age, to measure obesity in children. Other define obesity in children as body weight at least 20% higher then a healthy weight for a child of that height, or a body fat percentage above 25% in boys or above 32% in girls.

Although rare in the past, obesity is now among the most widespread medical problems affecting children and adolescents living in the United States and other developed countries. About 15% of adolescents (aged 12-19 years) and children (aged 6-11 years) are obese in the United States according to the American Obesity Association. The numbers are expected to continue increasing. Childhood obesity represent one of our greatest health challenges.

Obesity has a deep effect on a child's life. Obesity amplifies the child's risk of numerous health problems, and it also can create emotional and social problems. Obese children are also more likely to be obese as adults, increasing their risk of serious health problems such as heart disease and stroke.

1. If infancy, breastfeeding and delaying introduction of solid foods may help prevent obesity.
2. In early childhood, children should be given healthful, low-fat snacks and take part in vigorous physical activity every day. Their television viewing should be limited to no more than seven hours per week (which includes video games and the Internet).
3. Older children can be taught to select healthy, nutritious food and to develop good exercise habits. Their time spent watching television and playing with computer or video games should be limited to no more than seven hours each week. Avoid snacking or eating meals while watching TV, movies and videos etc.

Obesity in Student 'Causes' - Children who regularly consume more calories than they use will gain weight. If this is not reversed, the child will become obese over time. Consumption of just 100 calories (the equivalent of 8 ounces of a soft drink) above daily requirement will typically result in a 10-pound weight gain over one year. Many different factors contribute to this imbalance between calorie intake and consumption.

1. Obesity tends to run in families.
2. A child with an obese parent, brother, or sister is more likely to become obese.

***Asst. Prof. (Physical Education) Sendhwa Physical Education Institute, Sendhwa, Distt. Barwani (M.P.) INDIA**

3. Genetics alone does not cause obesity, will occur only when a child eats more calories than he or uses.
4. Children's dietary habits have shifted away from healthy foods (such as fruits, vegetable and whole grains) to a much greater reliance on fast food, processed snack foods and sugary drinks.
5. These foods tend to be high in fat and or calories and low in many other nutrients.
6. Patterns associated with obesity are eating when not hungry and eating while watching TV or doing homework.
7. Low family incomes and having nonworking parents are associated with greater calorie intake for activity level.
8. The popularity of television, computers, and video games translates into an increasingly sedentary (inactive) lifestyle for many children in the United States.
9. Children in the India spend an average of over three hours per day watching television. Not only does this use little energy (calories), it also encourages snacking.
10. Only one third of children in the India have daily physical education at school.
11. Parent's busy schedules and fears about safety prevent many children from taking part in after-school sports programs.

Certain medical conditions can cause obesity, but these are very rare. They include hormone or other chemical imbalances and inherited disorders of metabolism. Certain medications can weight gain by altering how the body processes food or stores fat.

Obesity in teenagers is a growing problem that has become worse in recent times and the rates are growing every year. The America is a top leader in obesity in teenagers. Some report indicated that as many as 33 % of teenagers are now obese. It is believed that more than 25% of schoolchildren are overweigh and in fact, obese, and nearly a fourth of them are at risk of getting heart disease, disease, diabetes, stroke as well as possibly early death. The worse thing is that according to research study conducted on obesity in teenagers, it was found that teenagers aged from ten to thirteen would have an 80% chance of becoming obese adults.

References :-

1. www.aacap.org
2. Merie L. Foss & Keteyen, Physiological Basis for Exercise & Sports (Boston : Mc Graw Hill International publishes, 1998)
3. Ibid
4. www.ezinearpical.com

****

म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की पुर्नभुगतान प्रवृत्ति का अध्ययन

डॉ. चन्द्रप्रकाश पँवार *

प्रस्तावना - लोक-ऋण अथवा सार्वजनिक ऋण (Public Debts) लोकतांत्रिक सरकारों के बजट का एक महत्वपूर्ण अंग है। प्राय: सरकारें असाधारण उद्देश्यों की पूर्ति के लिये आम जनता अथवा वित्तीय संस्थानों से जो असाधारण वित्त प्राप्त करती है उसे लोक-ऋण कहते है। इसे सरकारी ऋण (Govt. Debts) अथवा राष्ट्रीय ऋण (National Debts) भी कहते है। विकासशील अर्थव्यवस्था में नियोजन के लक्ष्यों को ध्यान में रखकर सरकारें लोक-ऋणों की प्राप्ति, उसका अनुप्रयोग तथा उसके पुर्नभुगतान का प्रबंधन करती है। सरकारें लोक-ऋणों का भुगतान शोधन कोष के द्वारा, ऋणों के परिर्वतन द्वारा, खुले बाजारों से ऋण-पत्रों के क्रय आदि द्वारा करती है। कुशल ऋण प्रबंधन नीति इस प्रकार की होनी चाहिए जिसमें ऋण सेवा की लागत न्यूनतम हो तथा ऋणों की वापसी में आर्थिक दबाव कम से कम हो। ऋण उस समय समस्या बन जाता है जब राजस्व प्राप्तियों में हुई वृद्धि ब्याज का भुगतान करने मे असमर्थ हो जाती है और सरकारें ऋण जाल में फंस जाती है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. सरकार के द्वारा विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त किये गये लोक-ऋण व उनके ब्याज की अदायगी की प्रवृत्ति का अध्ययन विभिन्न मापदण्डों के आधार पर किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य - प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित तीन उद्देश्य रहे।

1. म.प्र. सरकार की कुल प्राप्तियों से लोक ऋण तथा उसके ब्याज की भुगतान की वर्षवार प्रवृत्ति ज्ञात करना।
2. म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों से ब्याज भुगतान की वर्षवार तुलनात्मक स्थिति जानना।
3. म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की प्राप्तियाँ और भुगतान की वर्षवार स्थिति जानना।

अध्ययन अवधि - शोध पत्र की अध्ययन अवधि वर्ष 2006-07 से 2015-16 तक 10 वर्ष की रही।

प्रयुक्त चल - राजस्व प्राप्तियाँ, कुल प्राप्तियाँ, लोक ऋण, ब्याज का भुगतान आदि।

समंक संग्रहण - प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. शासन के संबंधित वर्षो के बजट प्रतिवेदन में उपलब्ध द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है।

म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की पुर्नभुगतान की प्रवृत्ति का अध्ययन - म.प्र. सरकार के द्वारा विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त किये गये लोक-ऋण व उनके ब्याज की अदायगी की प्रवृत्ति का अध्ययन तीन मापदण्डों यथा कुल प्राप्तियाँ/ऋण सेवा अनुपात, राजस्व प्राप्तियाँ/ब्याज भुगतान अनुपात तथा लोक-ऋणों की प्राप्तियाँ/भुगतान अनुपात के आधार पर किया गया है। अध्ययन व विश्लेषण तालिका क्रं. 1 एवं 2 तथा ग्राफ 1 से 4 तक में भी प्रदर्शित किया गया है।

1. ऋण सेवा अनुपात - ऋण सेवा अनुपात के अंतर्गत कुल प्राप्तियों (राजस्व एवं पूंजी प्राप्तियाँ) से ऋण सेवा (ब्याज + ऋण पुर्नभुगतान) के प्रतिशत को प्रदर्शित किया गया है। राज्य के द्वारा राजकोषीय घाटे को सीमित रखने तथा ऋण के पोर्टफालियों के समुचित चयन से ब्याज भुगतान की वृद्धि नियंत्रित रहती है। इसी प्रकार ऋणों की समय पर अदायगी ऋणो को बोझ बनने से वंचित रखती है।

तालिका 1 के अनुसार वर्ष 2006-07 में ऋण सेवा अनुपात कुल प्राप्तियों का 20.5 प्रतिशत था जिसमें निरन्तर गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज होकर वर्ष 2015-16 में यह अनुपात कुल प्राप्तियो का 10.55 प्रतिशत रहा। उक्त अनुपात में अध्ययनकाल में लगभग 50 प्रतिशत की गिरावट दर्ज हुई। इस गिरावट का कारण कुल प्राप्तियों में ऋण सेवा की अपेक्षा अधिक वृद्धि होना रहा। कुल प्राप्तियों में अध्ययनकाल के दौरान 471 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई जबकि ऋण सेवा भुगतान में यह वृद्धि 247 प्रतिशत तक थी इसका व्युत्क्रम प्रभाव यह हुआ कि ऋण सेवा अनुपात में लगभग 50 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। बेहतर ऋण प्रबंधन के परिणामस्वरुप ऋण सेवा अनुपात में निरन्तर कमी हुई। यह अनुपात जितना कम हो उतना बेहतर माना जाता है। इस अनुपात की स्थिति को ग्राफ 1 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है।

ग्राफ : 1 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

2. राजस्व प्राप्तियाँ/ब्याज भुगतान अनुपात - राजकोषीय संवहनीयता की दृष्टि से यह अनुपात राजकोषीय नीति में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। राजकोषीय नीति तथा राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं प्रबंधन अधिनियम में इस अनुपात की संवहनीयता सीमा (Fiscal viability Limit) तय की जाती है। वर्ष 2015-16 के लिये इस अनुपात की लक्षित सीमा 10 प्रतिशत थी। तालिका 1 के अनुसार वर्ष 2006-07 में ब्याज भुगतान राजस्व प्राप्तियों का 15.68 प्रतिशत था। अध्ययनकाल में इस प्रतिशत में निरन्तर गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज होकर वर्ष 2015-16 में 7.73 प्रतिशत तक सीमित रही। अर्थात ब्याज भुगतान में 50 प्रतिशत की स्पष्ट कमी परिलक्षित हुई। ब्याज भुगतान में इस गिरावट का कारण राजस्व प्राप्तियों की उच्च वृद्धि दर रही जो अध्ययन काल में 433 प्रतिशत तक थी। इसके मुकाबले ब्याज भुगतान की वृद्धि दर 263 प्रतिशत ही रही। परिणामस्वरुप सरकार के ब्याज दायित्व भार में 50 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। यह स्थिति सरकार के बेहतर ऋण प्रबन्धन का परिणाम रही। राज्य के द्वारा ब्याज भुगतान व्ययों को नियंत्रित रखने का एक प्रमुख कारण ऋण पोर्टफालियों का समुचित चयन भी रहा। बारहवें वित्त आयोग की अनुषंसानुसार अध्ययन के वर्षो में ऊंची लागत वाले ऋणों का कम लागत वाले ऋणों में अंतरण भी ब्याज भुगतान की वृद्धि

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

नियंत्रित करने में एक महत्वपूर्ण कारण रहा। सरकार की ऋण नीति का मूल उद्देश्य ऋणों की लागत व्यय को कम करना होता है। इस दृष्टि से यह अनुपात संतोषजनक स्थिति को प्रकट करता है। उक्त अनुपात की स्थिति को ग्राफ 2 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 1 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

ग्राफ : 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

3. लोक-ऋणों की प्राप्तियां एवं भुगतान अनुपात - सरकार की बजट नीति अथवा राजकोषीय नीति का मूलभूत कार्य राजकोषीय सम्पोषणीयता (Fiscal sustainability) का संरक्षण करना होता है, जिसके अनुसार सरकार उसके द्वारा लिये गये ऋणों के भुगतान के प्रति सुदृढ़ होनी चाहिये। सरकार को अपने द्वारा लिये गये सार्वजनिक ऋणों का निर्धारित समय में न केवल भुगतान करना पड़ता है वरन् ब्याज भी चुकाना होता है। समय पर भुगतान न होने पर बढ़ता हुआ सार्वजनिक ऋण व उसका ब्याज वित्तीय संकट का कारण बनता है। अत: ऋण उत्पादकीय कार्यो के लिये ही लिया जाना चाहिये तथा प्रतिवर्ष इसका एक निर्धारित हिस्सा नियमित भुगतान करते रहना चाहिये।

तालिका 2 तथा ग्राफ 3 एवं 4 लोक-ऋणों की प्राप्तियों एवं भुगतान की स्थिति को प्रदर्शित करते है। तालिका 2 के अनुसार वर्ष 2006-07 में लोक-ऋणों की प्राप्तियां - भुगतान का अनुपात 37.62 प्रतिशत था जिसमें उतार-चढ़ाव के साथ अंतिम तीन वर्षो में गिरावट की प्रवृत्ति रही। ऋणों के भुगतान का सर्वाधिक 49.35 प्रतिशत अनुपात वर्ष 2007-08 में रहा, जहां लोक-ऋणों की मात्रा न्यून रही। सबसे कम अनुपात 23.40 प्रतिशत वर्ष 2015-16 में रहा जिसका प्रमुख कारण वर्ष 2015-16 में लोक-ऋणों की प्राप्तियों में पिछले वर्ष की तुलना में 50 प्रतिशत की वृद्धि रही। जबकि भुगतान प्रवृत्ति में 9.4 प्रतिशत की गिरावट रही। ऋणों की अदायगी की दृष्टि से अंतिम दो वर्ष की स्थिति को छोड़कर शेष वर्षो में भुगतान की स्थिति संतोषजनक रही जैसा कि ग्राफ 3 में भुगतान की सीधी रेखा प्रदर्शित करती है कि सरकार द्वारा ऋणों का नियमित भुगतान किया जा रहा है। किंतु अंतिम वर्षो में ऋणों की प्राप्तियों के अनुपात में भुगतान की प्रवृत्ति में अपेक्षाकृत वृद्धि परिलक्षित नहीं होना सरकार के कमजोर रोकड़ प्रबंधन का संकेत है। इसी प्रकार ग्राफ 4 लोक ऋणों के भुगतान अनुपात में गिरावट की प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है जो वित्तीय संकट का संकेत है।

तालिका : 2 - म.प्र सरकार के लोक-ऋणों की प्राप्तियाँ एवं भुगतान की तुलनात्मक स्थिति

वर्ष	लोक-ऋण		
	प्राप्तियां	पुर्नभुगतान	प्रतिशत
2006-07	4602.97	1731.53	37.62
2007-08	3370.95	1677	49.75
2008-09	6552.97	1961.02	29.93
2009-10	8602.5	2394.03	27.83
2010-11	7457.92	2529.22	33.91
2011-12	6750.25	3149.79	46.66
2012-13	8791.16	3583.94	40.77
2013-14	9540.81	4004.63	41.97
2014-15	15068.7	4920.5	32.65
2015-16	23005.71	5383.17	23.40

ग्राफ : 3-4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

अध्ययन के निष्कर्ष :

1. राज्यों के राजकोषीय घाटे को सीमित रखने तथा ऋण पोर्टफोलियों के समुचित चयन से ब्याज भुगतान में वृद्धि नियंत्रित रहती है तथा ऋणों की समय पर अदायगी ऋणों को बोझ बनने से रोकती है। इस दृष्टि से ऋण सेवा अनुपात का अध्ययन किया गया है। ऋण सेवा अनुपात के अंतर्गत कुल प्राप्तियों से ऋण सेवा (ब्याज + ऋणों का पुर्नभुगतान) को प्रतिशत में प्रदर्शित किया गया है। वर्ष 2006-07 में यह अनुपात 20.5 प्रतिशत था जिसमें निरन्तर गिरावट दर्ज होकर 10.55 प्रतिशत रहा। इस प्रकार इस अनुपात में 50 प्रतिशत की गिरावट दर्ज हुई। इस गिरावट का कारण कुल प्राप्तियों में 471 प्रतिशत वृद्धि तथा ऋण सेवा भुगतान में यह वृद्धि 247 प्रतिशत होना रही।
2. राजकोषीय संवहनीयता की दृष्टि से राजस्व प्राप्तियाँ/ब्याज भुगतान अनुपात महत्वपूर्ण है। वर्ष 2006-07 में ब्याज भुगतान कुल राजस्व प्राप्तियों का 15.68 प्रतिशत था जिसमें निरन्तर गिरावट दर्ज होकर 7.73 प्रतिशत तक सीमित रहा अर्थात ब्याज भुगतान में लगभग 50 प्रतिशत की स्पष्ट कमी परिलक्षित हुई जो कि राज्य के बेहतर ऋण प्रबंधों का परिणाम है।
3. म.प्र. सरकार के लोक ऋणों के भुगतान की एक समान प्रवृत्ति ऋणो के नियमित भुगतान को दर्शाती हैं अंतिम वर्ष में ब्याज भुगतान की प्रवृत्ति लोक ऋणों की वृद्धि की तुलना में कम रही। इस दृष्टि से वर्ष 2015-16 को छोड़ते हुए यह अनुपात संतोषजनक स्थिति में रहा।

महत्वपूर्ण सुझाव :

1. राजकोषीय घाटे के निर्धारित लक्ष्यो से विचलन कम करने के लिए एक राजकोषीय समानीकरण कोष (Fiscal Equalisation Fund) के निर्माण का सुझाव दिया जाता है जिसमे सरकार राजस्व आय का एक निश्चित प्रतिशत इस कोष में जमा करे तथा कोष की राशि को पुन: तरल प्रतिभूतियों में निवेशित किया जाये ताकि संकट के समय इस राशि का प्रयोग किया जा सके।
2. सरकार को विकासात्मक कार्यो के वित्तीयन के लिये पृथक से पूंजीबजट निर्मित करना चाहिये जिसमें प्राथमिकता के आधार पर वित्तीय संसाधनो का आबंटन सुनिश्चित हो साथ ही ऋण साधनों से वित्त पोषण का अनुपात भी पूर्व निर्धारित हो।
3. अनिश्चित वैश्विक माहौल में विकास की गति बनाये रखने हेतु साख बनाये रखना और ऋण पर नियत्रंण रखना आवश्यक है। अत: सरकार को अपने बजट संसाधनो की कार्य कुशलता में सुधार करके अथवा गैर कर राजस्व के नये स्त्रोतो की खोज करके अपनी राजकोषीय गुंजाइश को बढ़ाना चाहिए।
4. केंद्रीय सरकार की वित्तीय शक्ति एवं साख क्षमता अधिक होने से वह राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजारों से आवश्यकतानुसार कम लागत पर ऋण जुटा सकती है किंतु राज्य सरकारें अपनी सीमित वित्तीय क्षमताओं तथा सीमित साख सीमाओं के कारण पर्याप्त मात्रा में ऋण नहीं प्राप्त कर सकती है। अत: राज्य सरकारों को विदेशों से विकास कार्यो के लिये दीर्घकालिक ऋण लेने की सांविधिक अनुमति दी जानी चाहिए ताकि ऋणों की वापसी आसान हो तथा ऋण लागतें भी न्यूनतम की जा सकें।

5. देश में विभिन्न स्तरों पर ब्याज दरों में असमानता का सामना भी राज्य सरकारों को करना पड़ता है। अत: इस प्रकार की विसंगती को दूर करने के लिये केंद्र एवं राज्य सरकारों के बीच उधार प्रक्रिया में समन्वय स्थापित करके एक स्वतंत्र ऋण प्रबंधन एजेंसी की स्थापना की जाना चाहिये।
6. राज्यों को अपने ऋणो की समय पर अदायगी के लिये एक ऋण शोधन कोष स्थापित करना चाहिये तथा इस कोष की राशि का निवेष भी कर दिया जाना चाहिये। बारहवें वित्त आयोग ने राज्यों को ऋणों के भुगतान हेतु इस प्रकार का कोष स्थापित करने की सिफारिश की है।

संदर्भ सूची –

1. म.प्र. सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2006-07 से 2015-16
2. भारतीय लोक वित्त सांख्यिकी, 2014-15, 2015-16
3. तेरहवे वित्त आयोग की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
4. चौदहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
5. वार्ष्णेय, जे.सी., राजस्व, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2005
6. पंत, जे.सी., लोक अर्थशास्त्र, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 2014

ग्राफ : 1 – ऋण सेवा अनुपात की तुलनात्मक स्थिति

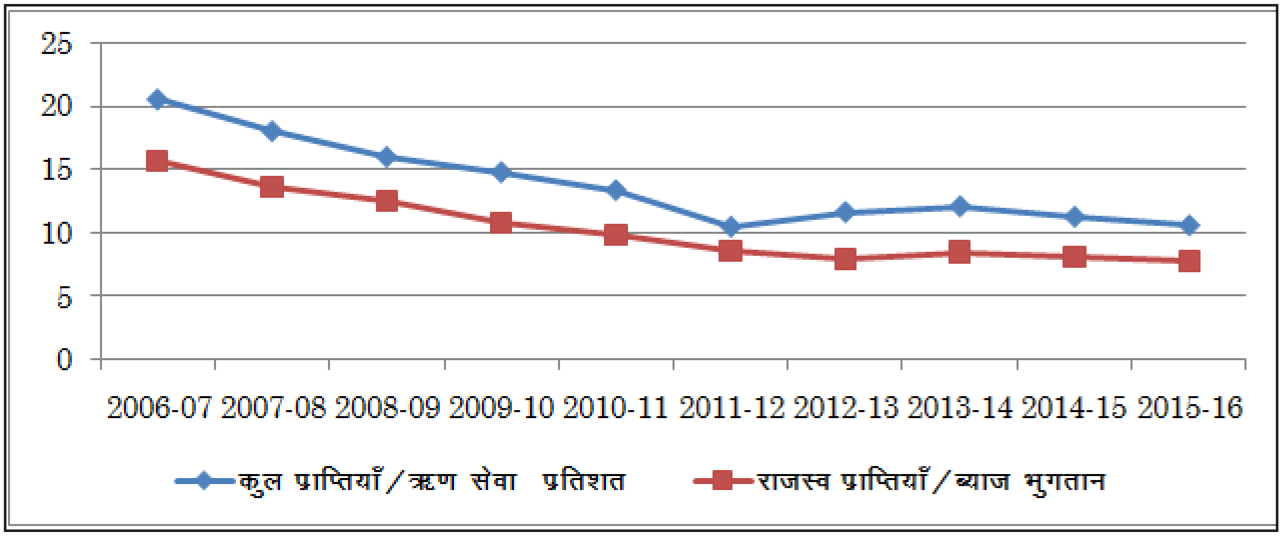

तालिका : 1 – ऋण सेवा अनुपात की स्थिति

(करोड़ रु.)

प्रवर्ग/वर्ष	2006 -07	2007 -08	2008 -09	2009 -10	2010 -11	2011 -12	2012 -13	2013 -14	2014 -15	2015 -16
कुल प्राप्तियाँ	28102.94	32621.37	38552.1	46438.58	56863.84	80913.6	78962.72	86198.05	106813.2	132413.4
राजस्व प्राप्तियाँ	25694.28	30688.73	33577.21	41394.7	51854.19	62604.08	70427.28	75749.24	88640.79	111130.7
ऋण सेवा भुगतान (A+B)	5760.48	5867.77	6153	6848.35	7578.18	8449.56	9157.68	10395.96	11991.77	13975.12
A. ब्याज भुगतान	4028.95	4190.77	4191.99	4454.3	5048.95	5299.77	5573.74	6391.32	7071.25	8591.95
B. ऋणोंका भुगतान	1731.53	1677	1961.01	2394.05	2529.23	3149.79	3583.94	4004.64	4920.52	5383.17
1. कुल प्राप्तियाँ/ ऋण सेवा भुगतान (प्रतिशत में)	20.50	17.99	15.96	14.75	13.33	10.44	11.60	12.06	11.23	10.55
2. राजस्व प्राप्तियाँ /ब्याज भुगतान (प्रतिशत में)	13.66	12.48	10.76	9.74	8.47	7.91	8.44	7.98	7.73	15.68

(करोड़ रु.) ग्राफ : 2 – राजस्व प्राप्तियां– ब्याज भुगतान की तुलनात्मक स्थिति

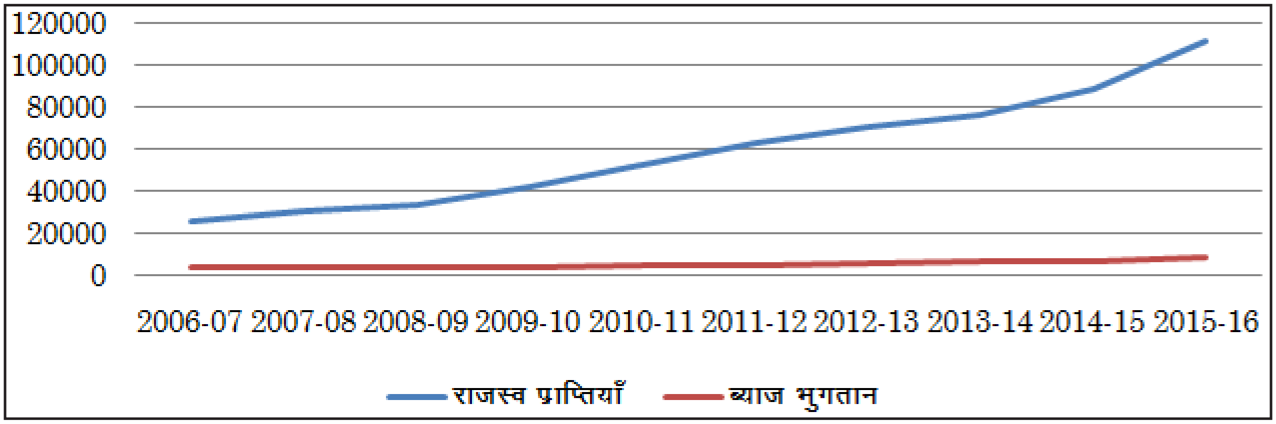

(करोड़ रु.) ग्राफ : 3 – म.प्र. सरकार के लोक–ऋणों के प्राप्तियों एवं भुगतान की तुलनात्मक प्रवृति

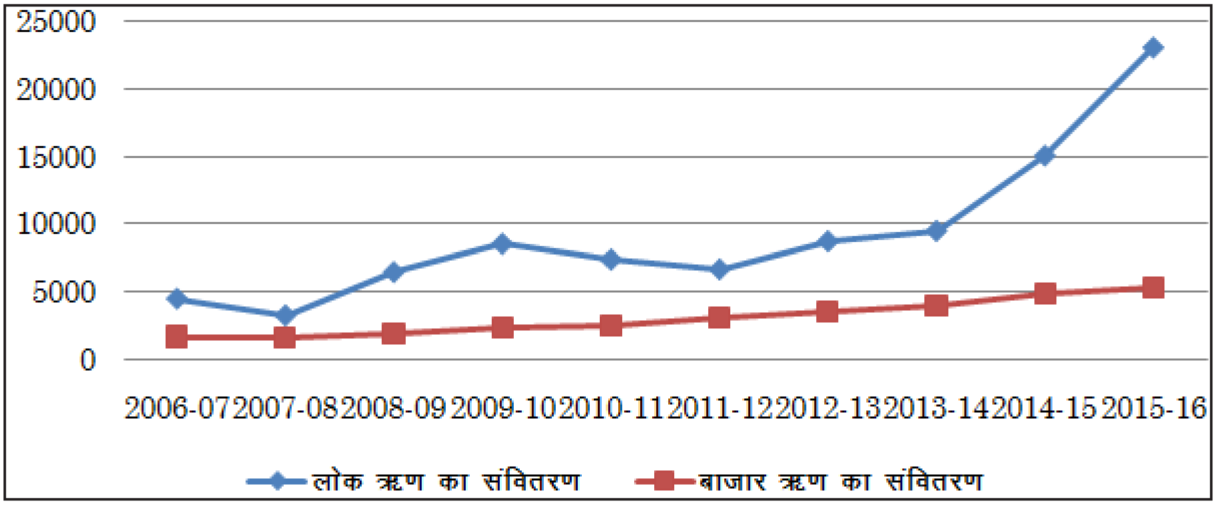

(प्रतिशत) ग्राफ : 4 – म.प्र. सरकार के लोक–ऋणों के भुगतान अनुपात की प्रवृति

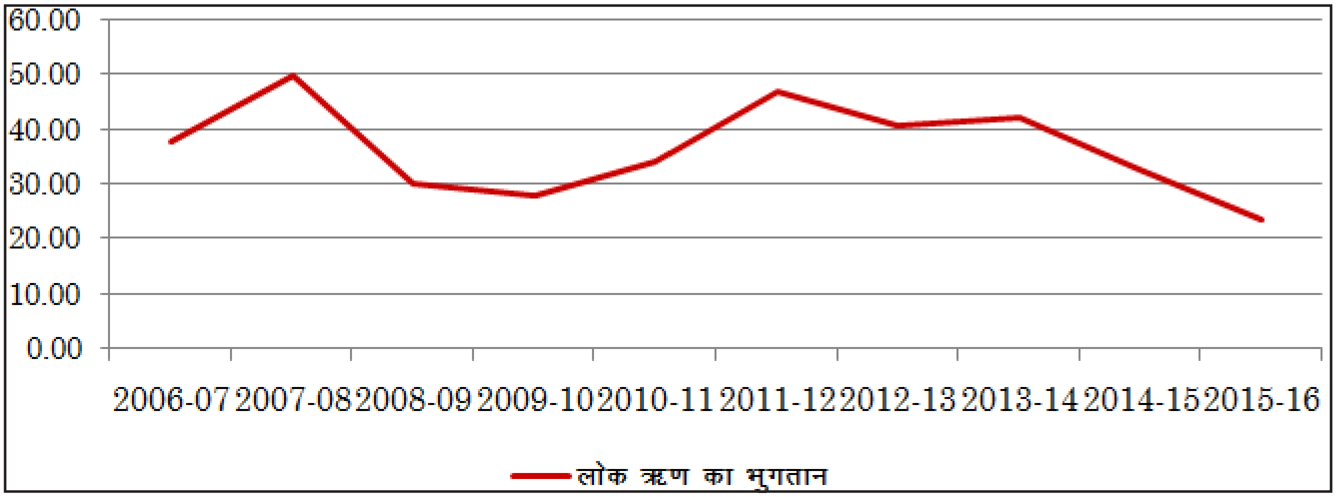

****

To examine the existing structure of the financial system and its various components and to make suggestions in reference to India

Pooja Yadav *

Introduction - The economic scene in the post independence period has seen a change; the end result being that the economy has made enormous progress in diverse fields. There has been a quantitative expansion as well as diversification of economic activities. After 1980s it has led to the conclusion that to obtain all the benefits of greater dependence on voluntary, market-based decision-making, Nation needs efficient financial systems.

The financial system is probably the most vital institutional & functional component for economic transformation. It is a bridge linking the present & the future & whether the mobilization of savings or their efficient, effective & equitable allocation for investment, it is the success with which the financial system performs its functions that sets the pace for the achievement of broader national objectives.

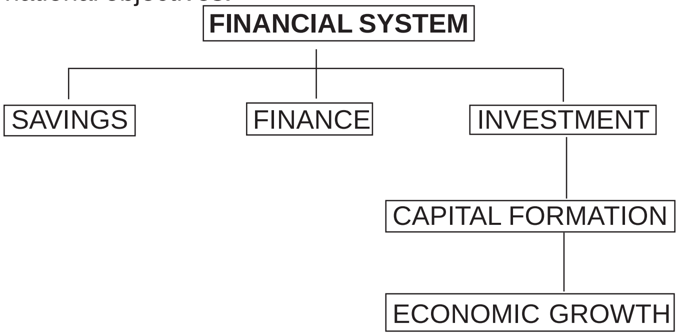

The Concept of the Financial System - The process of savings, finance and investment involves financial institutions, markets, instruments and services. Above all, supervision control and regulation are equally significant. Thus, financial management is an integral part of the financial system. On the basis of the empirical evidence, Goldsmith said that "... a case for the hypothesis that the separation of the functions of savings and investment which is made possible by the introduction of financial instruments as well as enlargement of the range of financial assets which follows from the creation of financial institutions increase the efficiency of investments and raise the ratio of capital formation to national production and financial activities and through these two channels increase the rate of growth".

The Organisation of the Financial System in India - The Indian financial system is broadly classified into two broad groups:

(i) Organised sector and
(ii) Unorganised sector.

"The financial system is also divided into users of financial services and providers. Financial institutions sell their services to households, businesses and government. They are the users of the financial services. The boundaries between these sectors are not always clear cut.

In the case of providers of financial services, although financial systems differ from country to country, there are many similarities.

(i) Central bank
(ii) Banks
(iii) Financial institutions
(iv) Money and capital markets and
(v) Informal financial enterprises.

i) Organised Indian Financial System - The organised financial system comprises of an impressive network of banks, other financial and investment institutions and a range of financial instruments, which together function in fairly developed capital and money markets. Short-term funds are mainly provided by the commercial and cooperative banking structure. Nine-tenth of such banking business is managed by twenty-eight leading banks which are in the public sector. In addition to commercial banks, there is the network of cooperative banks and land development banks at state, district and block levels. With around two-third share in the total assets in the financial system, banks play an important role. Of late, Indian banks have also diversified into areas such as merchant banking, mutual funds, leasing and factoring.

The organised financial system comprises the following sub-systems:

1. Banking system
2. Cooperative system
3. Development Banking system
(i) Public sector
(ii) Private sector
4. Money markets and
5. Financial companies/institutions.

Over the years, the structure of financial institutions in India has developed and become broad based. The system has developed in three areas - state, cooperative and private. Rural and urban areas are well served by the

*Ressearch Scholar (Management) Swami Vivekanand University, Sagar (M.P.) INDIA

cooperative sector as well as by corporate bodies with national status. There are more than 4,58,782 institutions channelizing credit into the various areas of the economy.

ii) Unorganized Financial System - On the other hand, the unorganised financial system comprises of relatively less controlled moneylenders, indigenous bankers, lending pawn brokers, landlords, traders etc. This part of the financial system is not directly amenable to control by the Reserve Bank of India (RBI). There are a host of financial companies, investment companies, chit funds etc., which are also not regulated by the RBI or the government in a systematic manner.

However, they are also governed by rules and regulations and are, therefore within the orbit of the monetary authorities.

Components Of Investment Performance - The risk adjusted performance measures of Sharpe, Treynor and Jenson help in the overall assessment. All the three measures yield similar performance rankings of a fund.

Framework of performance Analysis - Eugene Fama has provided an analytical framework that elaborates the three risk-adjusted return methods, to allow a more detailed analysis of the performance of a fund. This incremental return is known as the Return to Selectivity.

Stock Selection - The overall performance of the fund in terms of superior or inferior stock selection and the normal return, associated with a given level of risk can be assessed with this framework: 1

Total excess return = Selectivity +risk.

Market Timing - Fund managers can also generate superior performance by timing the market correctly, that is by assessing correctly the direction of the market, either bull or bear and positioning the portfolio accordingly. If a market decline is expected, the cash percentage of the portfolio may be increased or decrease the beta of the equity portion of the portfolio.. If the market is expected to rise, the cash position may be reduced or increase the beta of the equity portion of the portfolio. The portfolio management may be assessed by comparing fund return to the market index over the relevant period. If the fund does not engage in market timings but concentrated only on stock selection , the average beta of the portfolio would be constant and a plotting of the fund return against market return would show a linear relationship.

Money Market Mutual Funds (MMMF) - After the remarkable success of the mutual funds set up by the banks and financial institutions in India, the Reserve Bank of India (RBI) permitted the establishment of the Money Market Mutual Funds (MMMF) in the year 1992. The basic idea is the development of mutual funds surplus funds in the money market.

Table 1 (see in next page)

In recognition of the critical role of the financial sector, structural reforms in the financial system were introduced in India in the early 1990s. In the post-reform period, the focus of the regulatory and supervisory policies of the Reserve Bank of India (RBI) was to strengthen the Indian banking system in terms of capital adequacy, asset quality and risk management practices. The development of financial markets and gradual and calibrated introduction of new financial products also received significant attention under RBI's regulatory policies. A notable feature was that RBI had prescribed sound liquidity regulations along with capital regulations and had extensively used countercyclical prudential policies. At the time of crisis, the banking system was well capitalised and did not have significant exposure to toxic assets or the shadow banking system.

Results & Conclusion

1. The bank's shareholders will lose lot of money as banks themselves will find it tough to survive in the market.
2. Low range of funds from the security market damage overall demand of economy, which leads to worse growth rates & of course higher inflation as of the higher cost of capital. Such trend may continue in a vicious circle & deepen the crisis. Total NPAs have touched figures close to the size of UP budget. NPA was improved, how well it can augur for the Indian economy.
3. As the NPA of the banks will rise, it will bring a scarcity of funds in the Indian security markets. Few banks will be willing to lend if they are not sure of the recovery of their money.
4. This will lead to a crisis of confidence in the market. The price of loans, i.e. the interest rates will shoot up badly. Interest rates will straightforwardly impact the investors who wish to take loans for setting up infrastructural, industrial projects etc. It will also impact the retail consumers like us, who will have to shell out a higher interest rate for a loan.
5. All of this will lead to a situation of low off take of funds from the security market. This will hurt the overall demand in the Indian economy. And, finally it will lead to lower growth rates and of course higher inflation because of the higher cost of capital. This trend may continue in a vicious circle and deepen the crisis. Total NPAs have touched figures close to the size of UP budget. Imagine if all the NPA was recovered, how well it can augur for the Indian economy.

One of best the indicator to assess the soundness of banking sector is NPAs, which adversely impact the banks by reducing their profits in the form of interests & provisions, reducing their lending capacity & making them more risk averse, which in turn impacts the economy.

1. Firstly, banks inability to recover and realize such assets result in write offs which leads to a decrease in their net profits.
2. Secondly, impacts on banking morale and credit worthiness of the people resulting in defaults by even the honest borrowers.
3. Fourthly, results in the lowering of the deposit interest rates by the banks to recover the bank loss from the depositors. On the contrary, the lending rates are increased by the banks discourages the genuine borrowers from seeking loans & thereby affecting the economic productivity. Even more, the domestic businesses cannot survive in an environment where

they pay higher interest for their borrowings while their global competitors are furnishing the loans at low rates. This outcome in negative balance of trade and large unemployment and social unrest.

Data analysis & interpretation conducted in chapter five, some findings have been established. Following the liberalization period of 1991, the functioning of DFI has been seriously affected. The reason behind this is the inherent policies of the government embedded in the liberalization policy of 1991. Govt. of Narsimharao under the economic leadership of the finance minister came out with economic reforms measures which were aimed to make Indian economy globally competitive. Liberalization, Privatization & Globalization was the popular words of the economic reforms process.

However, new changes in the economic milieu of India were made with a view to make the DFI competitive against regular banks & foreign financial institutions so that playing field among financial institutions could be leveled, all this led to a bad impact on the working of DFI. Now they have to face stiff competition from the regular banks which could easily raise finance at cheaper rates than the DFI by virtue of their large customer base. The DFI were not actually prepared for this changed economic environment. The government at the same time asked the DFI to transform & work on commercial lines just like the other banks which were not in line with their objectives. Some DFI tried & became successful like the IDBI Bank. IDBI, the first DFI transformed itself successfully into a bank. It was also in better position to raise money from the capital as well as the domestic market. But for the other DFI, situation remained dismal.

The functioning of DFI difficult is the high cost of funds in comparison to the banks, which has decreased the profitability of DFI. Industry is moving to banks for long term finance at cheaper rates than the DFI. The study finds that the DFIs have lost their relevance and have given way to banks for long term finance.

References :-

1. Cecchetti, S G (2010): "Strengthening the financial system: comparing costs and benefit" – remarks prepared for the Korean-FSB Financial Conference, 3rd September.
2. M.Y.Khan**,** Indian financial system, Fourth Edition, Tata mcgraw Hill.
3. Mohan, Rakesh (2011): *Growth with financial stability: central banking in an emerging market*. New Delhi. Oxford University Press.
4. Basel Committee on Banking Supervision (2010): *Basel III: a global regulatory framework for more resilient banks and banking systems*. December (revised June 2011).
5. Subbarao, Duvvuri (2011b): "Financial regulation for growth, equity and stability in the post-crisis world". Speech at the inaugural CAFRAL conference, Mumbai, 15–16 November.

Table 1

Countercyclical prudential regulation: variation in risk weights and provisioning

	Capital market		Housing		Other retail		Commercial real estate		Non-deposit taking systemically important non-financial companies	
Date	Risk weight	Provisions (%)	Risk weight	Provisions (%)	Risk weight	Provisions (%)	Risk weight	Provisions (%)	Risk weight	Provisions (%)
Dec 04	100	0.25	75	0.25	125	0.25	100	0.25	100	0.25
July 05	125	0.25	75	0.25	125	0.25	125	0.25	100	0.25
Nov 05	125	0.40	75	0.40	125	0.40	125	0.40	100	0.40
May 06	125	1.00	75	1.00	125	1.00	150	1.00	100	0.40
Jan 07	125	2.00	75	1.00	125	2.00	150	2.00	125	2.00
May 07	125	2.00	50–75	1.00	125	2.00	150	2.00	125	2.00
May 08	125	2.00	50–100	1.00	125	2.00	150	2.00	125	2.00
Nov 08	125	0.40	50–100	0.40	125	0.40	100	0.40	100	0.40
Nov 09	125	0.40	50–100	0.40	125	0.40	100	1.00	100	0.40
Dec 10	125	0.40	50–125[1]	0.40–2.00[2]	125	0.40	100	1.00	100	0.40

[1] The provisioning requirement for housing loans with teaser interest rates was increased to 2.0% in December 2010. It remains at 2% till one year after reset of the interest rate to a higher rate and thereafter is 0.4%. For other housing loans the provisioning requirement remains at 0.4%. [2] The risk weights for housing loans vary according to the amount of the loan and the loan-to-value (LTV) ratio as below.

The Views Of Vivekananda Related To Indian Education System

Dr. Yogesh Chandra Joshi *

Abstract - In the Neo-Vedanta humanistic tradition of contemporary Indian thought, Vivekananda presented a philosophy of education for man making. Among the contemporary Indian philosophers of education. He is one of those who revolted against the imposition of British system of education in India. To quote Vivekananda again "All knowledge that bathe infinite library of the suggestion, the occasion , which sets you to study your mind. The falling of the apple gave .He rearranged all the precious link among them which we call the law of Gravitation". The best means of education, according to Vivekananda is love. Education , should be based upon love. Love is best inspiration in character building. the child should be taught through love. Vivekananda elaborately discussed the teaching methods in physical, moral and religious education. In his philosophy of education Vivekananda synthesized spiritual and material values. He felt that India needed a system of education based on the ancient Vedanta but at the same time worthy of making individual earn his livelihood so that the country may progress. He asked the educator to reach every village and every hutment so that the country may awake from ignorance.

Introduction - In the Neo-Vedanta humanistic tradition of contemporary Indian thought, Vivekananda presented a philosophy of education for man making. Among the contemporary Indian philosophers of education. He is one of those who revolted against the imposition of British system of education in India. He was severely critical of the Pattern of education introduced by the British in India. He felt that the current system of education did not confirm to India's culture. He pointed out that such an education only brings about an external change without any profound inner force.

Aim Of Education According To Vivekananda :

1. Self – Development - In contrast to contemporary system of education Vivekananda advocated education for self- development. He said, "By education do not mean the present system, but something in the line of positive teaching. Mere books learning won`t do. We want that education by which character is formed, strength of mind is increased, the intellect is expanded and by which one can science coupled with Vedanta, `Brahmachaaarya` as the guiding motto, and also `Shraddha``and faith in one's own self. These words by Vivekananda represent the characteristic Indian definition of education. Education according to most of the Western educationists aim at man`s adjustment with the environment. To quote Vivekananda again "All knowledge that bathe infinite library of the suggestion, the occasion , which sets you to study your mind. The falling of the apple gave .He rearranged all the precious link among them which we call the law of Gravitation" A person's education is not judged by the number of books he has read but by the thinness of the cover of ignorance. As the light of knowledge by his guidance. His guidance makes the mind active and the educand himself unveils the knowledge lying within him.

2. Freedom of Growth - Thus Vivekananda is against any type of external pressure upon the child. He is a staunch champion of freedom in education. Freedom is the first requirement for self- development. The child should be given freedom to grow a plant All you can do is on the negative side –you can only help. You can tack away the obstacles, but knowledge comes out of its own nature. Loosen the soil a little it. See that it may cannot do anything and there your work stops. You cannot do anything else. The rest is a manifestation from within its own nature"

3. Character Formation - Character is the solid foundation for self- development. The aim of education as self development, therefore, leads to the aim of education for character .Defining character, Vivekananda said," The character of any man is but the aggregate of his tendencies, the sum total of the bent of his mind.AS pleasure and pain pass before his soul, they leave upon it different pictures and the result of these combined impressions is what is called a man's character".

Mens Of Education According To Vivekananda :

1. Love - The best means of education, according to Vivekananda is love. Education , should be based upon love. Love is best inspiration in character building. the child should be taught through love. This is love for men, for human beings. The only motive in imparting education should be love for the educand, for the man in him.

* Asst. Professor (Education) Madhav University, Pindwara (Sirohi) (Raj.) INDIA

2.Help - The task of educator is to help the educand in manifesting and help the individual to recognize his cultural heritage and to use it in his struggle of life. The educator can guide the educand because he himself has the experience of teaching on this path and knows how to face its difficulties.

3.Guidance - The skilled teacher guides the pupil through these most of our problems are psychological in nature. The teacher should teach the educand to concentrate his attention, 'only then can the problems be solved. The greater the attention, the more is the effort effective.

4.CONENTRATION - Concentration according to ancient Indian thought, is the key to true knowledge. therefore, Vivekananda has placed much emphasis upon focusing of attention. It is only after years of concentration that a man becomes a scholar and a great scientist. the educand should be distinguished according to their abilities, every one of them has to develop concentration.

5. BRAHMACHARYA - Again according to ancient Indian thinkers, Brahmacharya or abstinence is the first means of achieving concentration. It gives mental and spiritual powers of the highest kind .Vivekananda therefore strongly emphasized the need for the students to observe brahmacharya. This leads to both the mental and physical advantages. Firstly, it takes effective care of all distractions. Secondly, it improves the body and then mind so they may become effective means of knowledge.

Medium Of Education :

1. **Mother tongue -** In teaching language Vivekananda laid particular stress upon teaching through the mother tongue. Here all other contemporary Indian philosophers of education supports him.
2. **Comman Language -** Besides mother tongue ,there should be 11 common languages, which is necessary to keep the country united.
3. **Sanskrit -** The teaching of Sanskrit forms an important part of the curriculum envisaged by Vivekananda. Sanskrit is the source of all Indian language and a repository of all inherited knowledge.

Types Of Education - Vivekananda elaborately discussed the teaching methods in physical, moral and religious education .This discussion gives an idea of types of education as methods of teaching.

1. Physical Education - " Vivekananda laid particular stress on the value of physical education in curriculum." One must know the secret of making the body strong through physical education , for a complete education it is necessary to develop both mind and the body."

2. Moral and Religious Education - Laying emphasis upon religious education Vivekananda said," Religion is the innermost core of education. I do not mean my own or anyone else's opinion about religion. Religion is as the rice and everything else, like the curries. Taking only curries cause indigestion and so is the case with taking rice alone".

3. Education for weaker Section of society - Vivekananda respected human individuality everywhere and pleaded for freedom for everyone. "Each soul" according to him, " is potentially divine . The goal is to manifest external and internal. This is the whole of religion. Doctrines or dogmas, or rituals or books, temples or forms are secondary details"." Thus Vivekananda favored education for different section of society, rich and poor , young and old 'male and female".

4. Education for Women - In the education for women Vivekananda laid particular stress on chastity and fearlessness. He conceived an ideal institution for women known as math where literature and religion may be taught."The regeneration of Indian women, according to him, depends upon proper education .women's education should be in the hands of women.

Conclusion - In his philosophy of education Vivekananda synthesized spiritual and material values. He felt that India needed a system of education based on the ancient Vedanta but at the same time worthy of making individual earn his livelihood so that the country may progress. He maintained that no profession is bad provided it is done with a sense of service and self sacrifice. It is the absence of this dignity of labour, which is responsible for the degraded condition of this country. He asked young men to change the situation. He pleaded for universal, compulsory and free education. He asked the educator to reach every village and every hutment so that the country may awake from ignorance.

References :-

1. Amiya sen(2003).Swami Vivekanand, New Delhi: Oxford University press.
2. Banhatti G.S.(1995). Life and Philosophy of Swami Vivekanand, Atlantic Publisher.
3. Estern and Western Disciples(july2006). Life of Swami Vivekanand.(six adition) Adwait ashram.
4. Prabhananda Swami(june2003). Profile of famous educators swami vivekanand.
5. Vivekanand Swami(2001). Complete works of swami vivekanand,9 volume, mayavati memorial edition.

****

The Goddess Of Faith : Mata Tripura Sundari

Dr. Yogesh Chandra Joshi *

Abstract - Tripura Sundari is a goddess and one of the ten Mahavidyas. She is best known as the Devi lauded in the Lalita Sahasranama and as the subject of the Lalitopakhyana in Hinduism.

As per the Srikula convention in Shaktism, Tripurasundari is the first of the Mahavidyas and the most noteworthy part of Goddess Adi Parashakti. The Tripura Upanishad puts her as a definitive Shakti (vitality, control) of the universe. She is depicted as the preeminent awareness, above Brahma, Vishnu and Shiva. Tripurasundari is said to sit on Shiva's lap in his frame as Kâmeúvara, the "master of desire". Due to this, she is likewise thought to be a symbol of Shiva's better half, Parvati. Tripurasundari is additionally the essential goddess related with the Shakta Tantric custom, known as Sri Vidya.

The Sanskrit word 'Tripura' is a blend of two sanskrit words; "Tri" signifying "tráyas (three)" and "pura" which means a city or stronghold, yet in addition comprehended as alluding to three urban communities or bastions "worked of gold, silver, and iron, in the sky, air, and earth, by Maya for the Asuras, and consumed by Úiva" alluding to the legend of the three urban areas annihilated by Shiva. Be that as it may, "Tripura" can likewise signify "Úiva Úaktir (Shiva Shakti)" while "sundarî" signifies "an excellent woman".

Introduction - Tripura Sundari is a goddess and one of the ten Mahavidyas. She is best known as the Devi lauded in the Lalita Sahasranama and as the subject of the Lalitopakhyana in Hinduism.

As per the Srikula convention in Shaktism, Tripurasundari is the first of the Mahavidyas and the most noteworthy part of Goddess Adi Parashakti. The Tripura Upanishad puts her as a definitive Shakti (vitality, control) of the universe. She is depicted as the preeminent awareness, above Brahma, Vishnu and Shiva. Tripurasundari is said to sit on Shiva's lap in his frame as Kâmeúvara, the "master of desire". Due to this, she is likewise thought to be a symbol of Shiva's better half, Parvati. Tripurasundari is additionally the essential goddess related with the Shakta Tantric custom, known as Sri Vidya.

Historical background - The Sanskrit word 'Tripura' is a blend of two sanskrit words; "Tri" signifying "tráyas (three)" and "pura" which means a city or stronghold, yet in addition comprehended as alluding to three urban communities or bastions "worked of gold, silver, and iron, in the sky, air, and earth, by Maya for the Asuras, and consumed by Úiva" alluding to the legend of the three urban areas annihilated by Shiva. Be that as it may, "Tripura" can likewise signify "Úiva Úaktir (Shiva Shakti)" while "sundarî" signifies "an excellent woman".

Consequently, "Tripura Sundarî" actually signifies "She who is excellent in the three worlds".

She is called Tripura, on the grounds that she is indistinguishable with the triangle (trikona) that symbolizes the yoni and that structures her chakra (see underneath). She is called Tripura additionally in light of the fact that her mantra has three bunches of syllables. Here Tripura is related to the letter set, from which all sounds and words continue and which is frequently comprehended to involve a primordial place in tantric cosmology. She is three-overlap, besides, on the grounds that she conveys what needs be in Brahma, Visnu, and Siva in her parts as maker, maintainer, and destroyer of the universe. She is triple additionally on the grounds that she speaks to the subject (batter), instrument (mina), and protest (meya) for goodness' sake. Here again she is related to reality communicated as far as discourse, which includes a speaker, what is stated, and protests which the words allude. Tripura Sundari is additionally referred to by names as bo aúî ("She who is the sixteenth"), Lalitâ, Kâmeúvarî, Úrîvidyâ and Râja-râjeúvarî. The Shodashi Tantra alludes to Shodashi as the "Magnificence of the Three Cities," or Tripurasundari. She is Tripura in light of the fact that she is past the three gunas. She abides in the three universes of manas, buddhi, and chitta. She is the Mother of the three divine beings Brahma, Vishnu, and Shiva, so she is Trayi, the bound together mix of the three. She is otherwise called Lalita (the effortless one) and Kameshwari (the want guideline of the Supreme).

Iconography - Subtle elements of her appearance are found in the acclaimed song in her acclaim, the Lalita Sahasranama, where she is said to be, situated on a royal position like a ruler (names 2 and 3), to wear gems (names

* Asst. Professor (Education) Madhav University, Pindwara (Sirohi) (Raj.) INDIA

13 and 14), to have the favorable signs of a wedded lady (names 16-25), and to have substantial bosoms and a thin midriff (name 36); the sickle moon decorates her brow, and her grin overpowers Siva, himself the master of want (Kama) (name 28). She has as her seat the carcasses of Brahma, Visnu, Siva, and Rudra (name 249) and is gone to by Brahma, Visnu, Siva, Laksmi, and Sarasvati (name 614). She is regularly delineated iconographically as situated on a lotus that lays on the recumbent assortment of Siva, which thus lies on a royal position whose legs are the divine beings Brahma, Visnu, Siva, and Rudra. Now and again the lotus is becoming out of Siva's navel. In different cases it is developing from the Sri Chakra, the yantra.

The Vamakeshvara trantra says that Tripura-sundari harps on the pinnacles of the Himalayas; is worshiped by sages and great fairies; has a body like unadulterated gem; wears a tiger skin, a snake as a laurel around her neck, and her hair tied in a jata; holds a trident and drum; is embellished with gems, blossoms, and cinders; and has a vast bull as a vehicle.

The Saundaryalahari and the Tantrasara depict her in detail from her hair to her feet. The Tantrasara dhyna mantra says that she is lit up by the gems of the crowns of Brahma and Visnu, which fell at her feet when they bowed down to adore her.

Legends - Shiva is one of the three divine beings who together constitute the Trimurti, the Hindu trinity. Shiva wedded Sati, the little girl of Daksha. Daksha and Shiva did not get along and thus Daksha did not welcome Shiva for one of the colossal fire forfeits that he directed. Nonetheless, Sati went to go to that capacity regardless of Shiva's dissent. Daksha offended Shiva in Sati's prescence, so Sati commited suicide by hopping into the fire to end her mortification. Thusly, Shiva beheaded Daksha, however after Shiva's outrage had been diminished he enabled Daksha to be revived with a goat's head. This occurrence, i.e. demise of his better half, resentful Shiva and he went into profound reflection. Sati resurrected as Parvati, the little girl of the mountain ruler Himavat and his significant other the apsara Mena. This was conceivable because of an aid given to them by Adi Parashakti (un-showed type of Lalita Tripura Sundari or Nirguna Brahman). Normally, Pârvatî looked for and got Shiva as her husband.The devas confronted an adversary in Tarakasura, who had a help that he could be murdered just by a child of Shiva and Parvati. So for the reason for bringing forth a child from Shiva and Parvati, the devas deputed Manmatha, the divine force of adoration. Manmatha shot his blossom bolts to Shiva and Parvati keeping in mind the end goal to actuate extreme sexual emotions in them. In outrage for being deceived, Shiva opened his third eye which lessened the divine force of adoration to powder. The devas and Rathi Devi, the spouse of Manmatha, asked for Shiva to offer life to Manmatha. Noticing their demand, Shiva gazed at the powder of Manmatha. From the powder came Bhandasura, who made all the world barren and ruled from the city called Shonitha pura, after which he began alarming the devas. The devas at that point looked for the exhortation of Sage Narada and the Trimurti, who instructed them to look for the assistance with respect to Nirguna Brahman, a definitive god head which is unmanifested i.e. Sat-Chit-Ananada (Truth-Consciousness-Bliss). Nirguna Brahman separated itself into the male Maha Sambhu and the female Adi Parasakthi (who were unmanifested and past the show Brahmanda) and showed up before them. Maha Sambhu and Adi Parasakthi consented to take the types of Maha Kameswara and Lalita Tripura Sundari individually, for the advantage of the universe. For this a maha yajna (extraordinary forfeit) was made, where the whole creation, i.e. show universe, was offered as the oblation, and from the fire rose Lalita Tripura Sundari and Maha Kameswara. Tripura Sundari and Kameswara re-made the whole universe as it was some time recently. They re-made Brahma and Saraswati, Vishnu and Lakshmi, Shiva and Parvati, and the various devas. In this way Vishnu came to be known as the sibling of Parvati.

Home - Her home, called Sri Nagara(city) had 25 avenues circumnavigating it, made of iron, steel, copper, and lead. A combination made of five metals, silver, gold, the white Pushpa raga stone, the red Padmaraga stone, onyx, jewel, Vaidoorya, Indra neela ([Blue Sapphire]), pearl, Marakatha, coral, nine diamonds and a blend of pearls and valuable stones. In the eighth road was a woods of Kadambas. This is directed by Syamala. In the fifteenth road experienced the Ashta Dik palakas. In the sixteenth lived Varahi assumed name Dandini who was her president. Here Syamala likewise had a house. In the seventeenth road experienced the distinctive Yoginis. In the eighteenth road lived Maha Vishnu. In the nineteenth road lived Esana, in the twentieth Thara Devi, twenty first Varuni, the twenty second Kurukulla who manages the fortification of pride, twenty third Marthanda Bhairawa, twenty fourth the moon and twenty fifth Manmathapresiding over the woodland of adoration.

Focal point of city - In the focal point of Nagara is the Maha Padma Vana (the considerable lotus woods) and inside it the Chintamani Griha (The place of heavenly idea), in the north east is the Chid agni kunda and on the two sides of its eastern door are the places of Manthrini and Dhandini. On its four entryways stand the Chaduramnaya divine beings for watch and ward. Inside it is the chakra. In the focal point of the Chakra on the position of authority of Pancha brahmas on the Bindu Peeta (speck board) called sarvanandamaya (general satisfaction) sits Maha Tripura Sundari. In the chakra are the accompanying enhancements viz., the square called Trilokya mohanam (most wonderful in the three universes), The sixteen petaled lotus called Sarvasa paripoorakam (fulfiller of all wants), the eight petaled lotus called Sarvasamksopanam (the all chemical), the fourteen cornered figure called Sarva sowbagyam (all good fortune), the outer ten cornered figure called Sarvartha sadhakam (provider of all benefits), the

inner ten cornered figure called Sarva raksha karam (All defender), the eight cornered figure called Sarva roga haram (cure of all maladies), the triangle called Sarva siddhi pradam (supplier of all forces) and the dab called Sarvananda mayam (all delights).

Bhandasura - The devas implored her to execute Bhandasura. When she began for the war with Bandasura, she was joined by the forces called anima, mahima, Brahmi, Kaumari, Vaishnavi, Varahi, Mahendri, Chamundi, Maha Lakshmi, Nitya Devaths and Avarna Devathas who possess the chakra. While Sampatkari was the chief of the elephant regiment, Aswarooda was the commander of the mounted force. The armed force was summoned by Dhandini riding on the chariot called Giri Chakra helped by Manthrini riding on the chariot called Geya Chakra. Jwala malini secured the armed force by making a fire ring around it. Lalitha maha Tripura Sundari rode in the middle on the chariot of Chakra. Nithya pulverized a substantial piece of Bandasura's armed forces, Bala slaughtered the child of Bandasura, and Manthrini and Dhandini executed his siblings called Vishanga and Vishukra. At the point when

References :-

1. Kinsley, David (1998). Tantric Visions of the Divine Feminine: The Ten Mahâvidyâs. Motilal Banarsidass Publ. p. 112.
2. West Bengal (India) (1994). West Bengal District Gazetteers: Nadîa. State editor, West Bengal District Gazetteers.
3. Mahadevan 1975, pp. 235.
4. Brooks 1990, pp. 155–156.
5. Kinsley, David (1998). Tantric Visions of the Divine Feminine: The Ten Mahâvidyâs. Motilal Banarsidass Publ. p. 113.
6. Williams, Monier. "Monier-Williams Sanskrit-English Dictionary". faculty.washington.edu. trí m. tráyas
7. Williams, Monier. "Monier-Williams Sanskrit-English Dictionary". faculty.washington.edu. Ë%purá n. sg. id. (built of gold, silver, and iron, in the sky, air, and earth, by Maya for the Asuras, and burnt by Œiva MBh. &c • TS. vi, 2, 3, 1)
8. Williams, Monier. "Monier-Williams Sanskrit-English Dictionary". faculty.washington.edu. tripurá: m. Œiva Œaktir
9. Williams, Monier. "Monier-Williams Sanskrit-English Dictionary". faculty.washington.edu. sundarî f. a beautiful woman, any woman
10. Kinsley, David (1998). Tantric Visions of the Divine Feminine: The Ten Mahâvidyâs. Motilal Banarsidass Publ. p. 120.

****

A Comprative Study Of Physical Fitness Components Of High Altitude And Sea Level College Students

Dr. Ramneek Jain *

Abstract - This investigation was undertaken to compare the selected physical fitness components of high altitude and sea level college students. It had the purpose of comparing and analyzing the data collected from each variable between subjects from high altitude and sea level regions. For the purpose of the study, twenty male students were selected as subjects. The ten subjects were selected from Government College, Shimla (High altitude region) and ten subjects were from Government College, Kolkata (Sea Level). The selected variables for the study were Agility, Speed and Muscular Endurance. The test administrated to assess the agility; speed and muscular endurance were shuttle run, 50m Das and One minute Sit-up respectively. The experimental design was double group The result of the study supported the hypothesis that there would be significant difference in the agility of subjects among high altitude region and sea level regions hence the hypothesis was accepted since it was indicated that t-ratio obtained from scores of the both group was 5.207. This value was significant as it was greater than the t-value of 2.101 require for the significance at 0.05 level. The result of the study is also supported that the hypothesis that there would be significant difference in muscular endurance among the subjects from high altitude and sea level regions. The hypothesis is accepted since it was indicated that the t-ratio obtained from the scores of both group was 2.679. This value was significant as it was greater than the t-value of 2.101 required for the significance at 0.05 levels. The hypothesis was rejected in comparison of Speed among the subjects of high altitude and sea level region. The t-ratio obtained for the speed was 0.776, and it was lower than the t-value of 2.101 required for the significance at 0.05 levels.

Introduction - Concept of physical fitness is as old as humankind. Throughout the history of mankind physical fitness has been considered as essential element of everyday life. The ancient people were mainly dependent upon their individual strength, vigour and vitality for physical survival. This involved mastery of some basic skill like strength, speed endurance, agility for running, jumping climbing and other skills employed in hunting for their livings. A comprehensive fitness program tailored to an individual will probably focus on one or more specific skill and on age or health related needs such as bone health. Many sources also cite mental, social and emotional health as an important part of overall fitness. This is often presented in textbooks as a triangle made up of three points, which represent physical, emotional and mental fitness. Physical fitness can also prevent or treat many chronic health conditions brought on by unhealthy lifestyle or aging. Working out can also help people sleep better. To stay healthy it is important to engage in physical activity "Physical activity," "exercise," and "physical fitness" are terms that describe different concepts. However, they are often confused with one another,and the terms are sometimes used interchangeably. This paper proposes definitions to distinguish them. Physical activity is defined as any bodily movement produced by skeletal muscles that result in energy expenditure. The energy expenditure can be measured in kilocalories. Physical activity in daily life can be categorized into occupational, sports, conditioning, household, or other activities. Exercise is a subset of physical activity that is planned, structured, and repetitive and has as a final or an intermediate objective the improvement or maintenance of physical fitness. Physical fitness is a set of attributes that are either health- or skill-related. The degree to which people have these attributes can be measured with specific tests. These definitions are offered as an interpretational framework for comparing studies that relate physical activity, exercise, and physical fitness to health.

High Altitude - Altitude or height (sometimes known as depth) is defined based on the context in which it is used (aviation, geometry, geographical survey, sport, and more). As a general definition, altitude is a distance measurement, usually in the vertical or "up" direction, between a reference datum and a point or object. The reference datum also often varies according to the context. Although the term altitude is commonly used to mean the height above sea level of a location, in geography the term elevation is often preferred for this usage.

Altitude is defined on the following scale:

- High altitude: 8,000 - 12,000 feet (2,438 - 3,658 meters);

*Assistant Professor, Deptt. of Physical Education, Madhav University, Abu Road (Raj.) INDIA

Sea Level - Sea level is generally used to refer to mean sea level (MSL), an average level for the surface of one or more of Earth's oceans from which heights such as elevations may be measured. Mean sea level is a type of vertical datum – a standardized geodetic reference point – that is used, for example, as a chart datum in cartography and marine navigation, or, in aviation, as the standard sea level at which atmospheric pressure is measured in order to calibrate altitude and, consequently, aircraft flight levels. A common and relatively straightforward mean sea-level standard is the midpoint between a mean low and mean high tide at a particular location. Sea levels can be affected by many factors and are known to have varied greatly over geological time scales. The careful measurement of variations in mean sea levels can offer information about climate change and has been interpreted as evidence supporting the view that the current rise in sea levels is an indicator of global warming. Sea level may vary with changes in climate. During past ice ages, sea level was much lower because the climate was colder and more water was frozen in glaciers and ice sheets. At the peak of the most recent ice age, about 18,000 years ago, sea level was perhaps 100 meters (300 feet) lower than it is today.

Delimitation

1. 18 to 25 year College level 30 students was selected from this study(15 student for High Altitude & 15 students for sea level)
2. The variables selected for study were muscular endurance, speed and agility.

Hypothesis - There would be significant difference in selected fitness components among high altitude and sea level college students.

Significance Of The Study

1. The study may help to know the selected fitness components and high altitude and sea level.
2. The study may help to design new training pattern including high altitude training and sea level training.
3. Study help for the talent identification and selected of sports events according to geographical region.

Methodology - In the methodology and procedure adopted for the selection of the subjects, selection of variables, orientation of the subjects, administration of test, collection of data and statistical techniques employed for the analysis of data.

Subjects - For the purpose of the study, twenty male students of 18 to 55 years old were selected as subjects for the investigation. These subjects were college students from high altitude and sea level.

Variables - Agility, Muscular Endurance, Speed

Test Bettery - Selected variables of AAHPER YOUTH PHYSICAL FITNESS TEST ITEMS were used for assessing the selected fitness level of high altitude and sea level college male students.

1. Agility - Shuttle Run
2. Muscular Endurance - Sit-ups
3. Speed - 50 yard Dash

Statistical Technique - In order to find the significance of difference among the two groups on selected variables, the mean, SD & t-ratio was applied. To compare the significance of difference the level of significance was kept at 0.05 at level.

Results - The selected variables for the study were agility, speed and muscular endurance. The test item used to assess the agility, speed and muscular endurance were Shuttle run, 50m dash and one minute sit-up respectively. The test was about the comparative study of selected physical fitness components among high altitude and sea level college students. To find out the significance of difference between two selected groups, the t-ratio was employed.

Findings - In this study fifteen male students were selected randomly from Government College, Shimla and fifteen students from Government College Kolkata. During data collection standard procedure were followed. Further descriptive statistics and Independent't' test were employed to find the fat physical fitness between high altitude and sea level college students.

Table I: Descriptive analysis agility of high altitude and sea-level college students

Levels	N	Mean	Min	Max.	Range	SD	't'	df
High Altitude	15	10	10.4	11.5	0.81	0.14	5.207	18
Sea Level	15	11	11.1	13.2	1.51			

*Significant at .05 level t .05 (18) = 2.101

An observation of table II indicates that t-ratio obtained from the scores of the shuttle run to assess the agility of subjects among sea level and high altitude region was 5.207. This value was significant as it was greater than the t-value of 2.101 that required for the significance at 0.05 level.

Table II: Descriptive analysis muscular endurance of high altitude and sea- level college students

Levels	N	Mean	Min	Max.	Range	SD	't'	df
High Altitude	15	33	22	40	13	2.529	2.679	18
Sea Level	15	26	15	35	15			

*Significant at .05 level t .05 (18) = 2.101

An observation of table 4.3 and table IV indicates that t-ratio obtained from the scores of the sit-ups for one minute to assess the muscular endurance of subjects among sea level and high altitude region was 2.679. This value was significant as it was greater than the t-value of 2.101 that required for the significance at 0.05 levels. The result pertaining to the analysis of the findings of the variable muscular endurance are presented in the table II.

Table III: Descriptive analysis speed of high altitude and sea- level college students

Levels	N	Mean	Min	Max.	Range	SD	't'	df
High Altitude	15	7.2	6.3	8.3	2	0.248	0.776	18
Sea Level	15	7.4	6.80	8.04	1.22			

*Significant at .05 level t .05 (18) = 2.10

An observation of table III indicates that t-ratio obtained from the scores of the 50m dash to assess the speed of subjects among sea level and high altitude region was 0.776. This value was not significant as it was lesser than the t-value of 2.101 that required for the significance at 0.05 levels. The result pertaining to the analysis of the findings of the variable agility are presented in the table III.

Discussion Of Findings - This study was undertaken to compare the selected physical fitness components of high altitude and sea level college students. It had the purpose of comparing and analyzing the data collected from each variable between subjects from high altitude and sea level regions. During data collection standard procedure were followed. In this study the results shows that there were a significant difference in Agility and Muscular endurance among high altitude and sea level college students. The scores that obtained from the 50m dash to assess the speed of subjects reveal that there was no significant difference among high altitude and sea level college students in their speed. There were a significant difference in Agility and Muscular Endurance among high altitude and sea level but their asses to speed remains almost same because of the reason that the students of high altitude region acclimatize with the lesser oxygen consumption during their work out, compared to the students of sea level.

Discussion Of Hypothesis - There would be a significant difference in speed agility and muscular endurance among high altitude and sea level college students. On the basis of findings of the study the hypothesis that there would be significant difference in the agility and muscular endurance among high altitude and sea level college students may be accepted. The hypothesis that there would be significant difference in speed of selected subjects may be rejected since the findings of the analysis failed to show the significant difference.

Conclusion - With the limitations and delimitations of this, the following conclusions were drawn:

1. There was a significant difference in agility and muscular endurance among students of high altitude region and sea level.
2. There was no significant difference in assessing the speed among the students.

References :-

1. Jovanovic M, et.al. (2011) Effects of speed, agility, quickness training method on power performance in elite soccer players, IJSPP,pp25.
2. Kohli Keshav, et.al.(2014); A Comparative Study of Physical Fitness Variables of male Volleyball Players and Football Players,RJPES, Pp2(1) 5-7.
3. Singh Sahajad(2011) Comparative study of physical fitness components of Rural and Urban female students of Delhi university Delh,TJPE.pp23-29.
4. Lars Schlenker, et.al. (2015); A Comparative Study of Physical Fitness among Egyptian and German Children Aged Between 6 and 10 Years, SPP, pp5,7-17.
5. Ningombam Amitrasen Singh (201);"Comparison of Selected Physical Fitness and Physiological Parameters of Footballers belonging to North-East and Other States"IJIMS,pp158- 160.

****

आर्थिक सुधारों का आर्थिक सामाजिक प्रभाव

डॉ. पी.डी. ज्ञानानी *

प्रस्तावना – वर्ष 1991 में जब भारत में आर्थिक सुधारों को लागू करने की प्रक्रिया आरंभ की गई तो चारों तरफ विभिन्न प्रकार की आशाएँ, सम्भावनाएँ एवं आशंकाएँ व्यक्त की गई थी। अब लगभग दो दशक बाद इन्हीं नीतियों के सहारे भारतीय अर्थव्यवस्था संसार के सर्वाधिक गतिमान अर्थव्यवस्थाओं में अपना स्थान बना चुकी है इसी आधार पर भारत को दो दशक बाद की महाशक्ति माना जाने लगा है उदारीकरण की नीतियों के सहारे ही भारत में अथाह विदेश मुद्रा भंडार, असामान्य प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, सूचना प्रौद्योगिकी की विश्व स्तरीय स्थिति, आउट सोर्सिंग की हितपरक सामर्थ्य, विदेशी व्यापार की तीव्रतर गति, खाद्यान्न में निश्चित आत्मनिर्भरता, बचत दर में विकसित देशो की बराबरी, उपभोक्ता वस्तु बाजार के असामान्य विस्तार और दस प्रतिशत विकास दर को छूने की परिस्थितियों पैदा हो सकी है। दूसरे ओर इन्हीं नीतियों के बावजूद भारत की गरीबी, बेरोजगारी,निरक्षरता, शोषण, असमानता जैसी मूल समस्याओं में कोई आधारभूत कमी नहीं आ पाई हैं।

ऐसे में उदारीकरण के सन्दर्भ में भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताओं, क्षेत्र विशेष की समस्याओं, इस अवधि में आये विशेष परिवर्तनों, उत्पन्न जन अपेक्षाओं, भविष्य की संभावनाओं, विश्व स्तरीय दबाओं, उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों को समझना आवश्यक हो गया है। विकास दर में वृद्धि या सकल उत्पाद में बढ़ोतरी के आँकड़े किसी राष्ट्र की समृद्धि के वास्तविक संकेत नहीं होते। किसी देश की वास्तविक समृद्धि तो तभी मानी जाएगी, जब समूची जनता के लिए रोजगार, भोजन, चिकित्सा, शिक्षा, आवास और सामाजिक सुरक्षा पर्याप्त प्रबंधन कर लिया जाए। ऐसे विकास का कोई अर्थ नहीं जहाँ गोदाम तो अनाज से भरे हों, लेकिन उसे खरीदने की क्षमता गरीब जनता में न हो। भारत की अर्थव्यवस्था की विकास दर 8 प्रतिशत से अधिक रहने तथा कम्प्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी क्षैत्र में विश्व में अपना अलग स्थान बनाने के बावजूद शिक्षा, स्वास्थ्य, लिंग समानता, बच्चों की अकाल मृत्यु दर और पेयजल की उपलब्धता जैसे बुनियादी क्षेत्रों में भारत पड़ोसी, देशों तक से पिछड़ता जा रहा है। इसका अर्थ है कि विकास रिपोर्ट के अनुसार भारत मानवीय विकास के पैमाने पर पिछले साल की तरह विश्व के देशो में 127वीं पायदान पर ही अटका हुआ है। इस वास्तविकता के उजागर होने के बाद यह सवाल खड़ा होता है कि क्या इस समृद्धि व उन्नति को देश के मुट्ठीभर लोगों के बीच सिमटने का संकेत मान लिया जाए? किसी देश का समग्र विकास तभी संभव है, जब आम जनता को भी बुनियादी सुविधाओं का पूरा लाभ मिलने लगे। आर्थिक सुधारों के नाम पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का वर्चस्व कायम करने वालों को समझना चाहिए कि पश्चिम की पूँजीवादी ताकतें दुनिया में जहाँ भी जाती हैं, थोड़े से लोगों के लिए भोगवाद का स्वर्ग बनाती हैं, मगर बाकी अधिकांश जनता को बेरोजगारी, अभाव और अशांति में जीने को विवश करती है। एक तथ्य जो सामने आया है वह भी इसी पुष्टि करता है कि भारत में करोड़पति रईसों की संख्या में वृद्धि हुई है किन्तु गरीबी अभी भी कम नहीं हुई है।कथित आर्थिक सुधारों के लिए दो दशक बाद भी हमारे देश की अधिकतर जनता बदहाली में जी रही है आसैर गरीबी रेखा से नीचे जीवन बिताने वाले लोगों की संख्या महत्वपूर्ण रूप से घट रही है। संयुक्त राष्ट्र की ताजा रिपोर्ट में चौंकाने वाला तथ्य यह भी उभरकर आया है कि देश के राज्यों में लिंग समानता व बच्चों की अकाल मृत्यु दर को लेकर भी भारी असमानता है। पूरे देश में होने वाले बच्चों की अकाल मृत्यु की आधे से अधिक घटनाएँ केबल बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश व राजस्थान में ही होती है। इन्हीं राज्यों में लिंग असमानता का आँकड़ा भी काफी ऊँचा हैं। देश के जिन दक्षिणी राज्यों में पिछले कुछ वर्षो में सूचना प्रौद्योगिकी की क्रांति ने परचम लहराया है, उन्हीं राज्यों में महिलाओं के कुपोषण, पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी के कारण मृत्यु दर में लगातार वृद्धि हुई है। देश के उत्तरी राज्यों में ग्रामीण क्षेत्रों में घोर गरीबी का साम्राज्य है। महिलाओं की लगभग आधी आबादी आज भी निरक्षर है। समाज की धुरी माने जाने वाली महिलाओं के निरक्षर रहने से भला समग्र विकास की कल्पना भी कैसे की जा सकती है।

वैश्वीकरण की नीतियों के चलते जहाँ भारत में कार्यरत विदेशी कम्पनियाँ भारी मुनाफा कमाकर अपने देशों को ले जा रही हैं, वहीं देश के घरेलु उद्योग धंधें हाशिए पर जा रहे है। खासकर लघु उद्योगों की हालत काफी खस्ता है। सरकार एक तरफ तो निर्यात वृद्धि के लक्ष्य बढ़-चढ़कर तय करती है, पर दूसरी ओर लघु, पारम्परिक और कुटीर उद्योगों को हतोउत्साहित किया जा रहा है जबकि भारत के निर्यात में 60 प्रतिशत योगदान इन छोटी ईकाईयों के उत्पादों का है। रोजगार के अवसरों का केन्द्रीयकरण भी शहरों में होता जा रहा है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारों की भीड़ बढ़ती जा रही है। किसानों, मजदूरों, छोटे व्यापारियों, कारीगरों, दस्तकारों लघु उद्योगों और मध्यम वर्ग के हितों का ध्यान रखा जाना जरुरी है।

भारत में ऐसे गरीबों की संख्या करोड़ों में है जिनके तन पर वस्त्र नहीं, पेट भरने को अनाज नहीं और रोगो के उपचार के लिये डाक्टरी सुविधा और दवाईयाँ नहीं है। लोग बेरोजगार है और भविष्य की अनिश्चितता से पीड़ित है। इन लोगों को बाजार के भरोसे छोड़कर कोई भी सरकार या समाज अपनी सुरक्षा नहीं कर सकता है। 60 प्रतिशत से अधिक लोग कृषि पर निर्भर है फिर भी सकल घरेलु उत्पाद में कृषि का हिस्सा लगातार घटता जा रहा है जो वर्तमान में एक चौथाई से भी नीचे पहुँच गया है। इसलिये अन्य क्षेत्रों में कार्यरत लोगों के मुकाबले गरीब होते जा रहे है तथा 40 प्रतिशत से अधिक

*प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

लोग इस क्षेत्र को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में एवं व्यवसायों में जाना चाहते है। मानसून पर निर्भरता और बाजार के उतार चढ़ाव से वे त्रस्त है। किसानों द्वारा हजारों की संख्या में आत्महत्या इस तथ्य को ही उजागर कर रही है। 40 प्रतिशत लोग अभी भी निरक्षर है सामाजिक दृष्टि से गरीबों, बीमारों, निरक्षर लोगों और भूखों की जमात में महिलाबों, आदिवासियों और अनुसूचित जाति वालों की संख्या सबसे अधिक है। इन पर आर्थिक और सामाजिक दोनों दिशाओं से मार पड़ रही है। नौकरियों में आरक्षण तथा अन्य विशेष प्रावधानों के कारण इनकी दशा सुधार करने की कोशिशें आंशिक रुप से ही सफल रही है लेकिन जब से आर्थिक सुधार कार्यक्रम आरंभ हुए है तब से ऐसे प्रावधान निरर्थक हो रहे है। सरकारी नौकरियाँ घट रही है, सार्वजनिक उपक्रमों के विस्तार की बात तो दूर रही, विनिवेश केकारण उतने रोजगार के अवसर कम होते जा रहे है। रोजगार के जो नये अवसर वैश्वीकरण के परिणामस्वरुप आ रहे है उनके लिये विशेष प्रकार के कौशल की जरुरत है, जिनकों प्राप्त करने की स्थिति में वर्तमान गरीब नहीं है इस प्रकार समाज में आर्थिक विषमता बढ़ती जा रही है तथा दो संसार बनते जा रहे है जिन्हें इण्डिया एवं भारत के नामों से जाना जाता है।

यह यथार्थ है कि एक ओर देश के गोदाम अन्न से ठसाठस भरे है और उसका बहुत ही सस्ते मूल्य पर निर्यात कर विदेशी मुद्रा अर्जित की जा रही है वहीं भूखें रहने वालों की तादाद निरन्तर बढ़ रही है लगभग एक तिहाई आबादी को भरपेट भोजन नहीं मिलता और प्रतिवर्ष 50 लाख बच्चे भूख से मर जाते है और 53 फीसदी कुपोषण से पीड़ित है। पहले यह अनुमान लगाया था कि वर्ष 2020 तक भारत गरीबी और कुपोषण से मुक्त हो जाएगा और पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित हो जायेगा लेकिन विश्व बैंक की रिपोर्ट अनुसार भारत 2015 तक भी गरीबी दूर करने में समर्थ नहीं हो सकेगा जब तक कि वह अपनी आर्थिक सामाजिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार नहीं लाता लो कि संभव नहीं लगता है क्योंकि इस समय देश में 221 मिलियन लोग अल्प पोषित है और 360 मिलियन से अधिक लोग गरीबी रेखा से नीचे रह रहे है। पिछले 5 साल में भारत में भूखमरी के शिकार लोगों की संख्या में 1.8 करोड़ की वृद्धि हुई है।

मुम्बई का शेयर बाजार अपने 100 साल से भी ज्यादा केइतिहास की सारी ऊँचाईयों को वर्ष 2008 में पार कर गया था जिन लोगों का शेयर बाजार में लेन-दने है उनके हजारों करोड़ों के वारे न्यारे हो गये है। शेयर बाजार की यह तेजी देश के अमीरों के लिये कई और कीर्तिमान स्थापित कर रही है। राष्ट्र संघ की मानव विकाय की रिपोर्ट के अनुसार 177 देशों में से भारत का नंबर 127वाँ है। हम पडौसी देश श्रीलंका से भी पिछड़े हुए है। सारे विश्व में भ्रष्टाचार की रेटिंग करने वाली संस्था ट्रांसपेरेन्सी इन्टरनेशनल ने 106 राष्ट्रों का अध्ययन करने के बाद पाया कि भारत दुनिया का 55वाँ सबसे भ्रष्ट देश है। देश के अखबार खबरों से भरे है किस प्रकार बेरोजगार और कर्जो की मार खाये लोग और परिवार आत्महत्या कर रहे है।

1990 के दशक में भारत में नई आर्थिक नीतियों को लागू किया गया था उस समय यह माना गया था कि यह भारत को आर्थिक समस्याओं से मुक्ति दिलाएगी। लेकिन इन नीतियों के परिणामस्वरुप मजदूरों की बड़े पैमाने पर छंटनी हो रही है, नई भर्तीयों पर रोक लगी हुई है। लाखो की संख्या में छोटे उद्योग बंद हो गये है। सरकार द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य, भोजन पर दी जाने वाली सब्सिडी में कटौती के कारण मिट्टी का तेल, गैस, दवाईयाँ आदि महँगी हो गई है। ग्रामीण ईलाकों में स्थिति और भी बुरी है। रासायनिक खादों, कीटनाशकों और अन्य दवाईयों पर खेती की निर्भरता के चलते किसान बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के शिंकजों में जकड़े हुए है और उनकी मेहनत विदेशी कम्पनियों व नवमहाजनों के आगे गिरवी पड़ी है। एक ओर सरकारें 'विशेष आर्थिक जोन' बनाकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और पूँजीपतियों को बड़ी बड़ी छूटें व तरह-तरह से कर में राहत दे रही है तो दूसरी ओर आम आदमी से रोटी का निवाला भी छीना जा रहा है, सरकारों का सारा जोर आर्थिक विकास दर को बढ़ाने पर है, हालांकि इसकेअनुपात में रोजगार के अवसर नहीं बढ़ रहे है जिसके कारण बेरोजगारी आज भी एक बड़ी समस्या बनी हुई है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के 'ग्लोबल एम्प्लॉयमेंट ट्रेन्ड्स फार यूथ' रिपोर्ट में विश्व स्तर पर बेरोजगारी की विस्फोटक जानकारी दी है। आई.एल.ओ. की रपट के अनुसार भारत में 25 वर्ष की आयु तक के कुल 54 प्रतिशत जनसंख्या है इसका सीधा अर्थ है रोजगार चाहने वालों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है, युवाओं में बेरोजगारी, अर्द्धबेरोजगारी और मामूली वेतन पर काम कर रहे लोगों की संख्या ने सभी रिकार्ड तोड़ दिये है। बेरोजगारी के मोर्चे पर स्थिति 20 वर्ष पहले से अधिक विस्फोटक है। पिछले 6 वर्षो से 6 करोड़ नवरोजगार मात्र सुनहरा सपना रहा। गुजरे वर्षो में रोजगार के अवसरों में तेजी से कटौत्री हुई, लक्ष्यों के विपरीत नौकरियाँ बढ़ने की जगह तेजी से घट रही है।

कुल मिलाकर निष्कर्ष यह निकलता है कि उदारीकरण की नीतियों के कारण कुल विकास की वार्षिक दर चाहें बढ़ी हो, राष्ट्रीय आय में वृद्धि हुई हो, करोड़पति भारतीयों की संख्या में वृद्धि हुई है, लेकिन उसी के साथ आर्थिक-सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में विषमताओं का भी विस्तार हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यावसायिक अर्थशास्त्र - पी.सी. अग्रवाल, एम.डी. अग्रवाल, रमेश बुक डिपो जयपुर
2. भारतीय अर्थव्यवस्था - डॉ. अनुपमगोयल - शिवलाल अग्रवाल एंड कम्पनी इन्दौर
3. मुद्रा एवं वित्तीय प्रणालियाँ - जे.पी. मिल, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा
4. नाबार्ड की प्रकाशित रिपोर्ट
5. कृषि की उच्चस्तरीय रिपोर्ट
6. अंतर्राष्ट्रीय रिसर्च एंड रिव्यूह
7. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया ऑफ मुम्बई 2002-03 सर्वे

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

बालमनोरमा एवं लक्ष्मी टीका के संज्ञा प्रकरण का अध्ययन

डॉ.वेद प्रकाश मिश्र * नित्यानंद दास अधिकारी **

शोध सारांश – संस्कृत में व्याकरण की परम्परा बहुत प्राचीन है। संस्कृत भाषा को शुद्ध रूप में जानने के लिए व्याकरण शास्त्र का अध्ययन किया जाता है। पाणिनीय शिक्षा में व्याकरण को मुख कहा गया है – 'मुखं व्याकरणं स्मृतम् '। व्याकरण की परम्परा अत्यंत समृद्ध है। संस्कृत व्याकरण वैदिक काल में ही स्वतंत्र विषय बन चुका था। नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात – ये चार आधारभूत तथ्य यास्क (ई. पू. लगभग 700) के पूर्व ही व्याकरण में स्थान पा चुके थे। पाणिनि (ई. पू. लगभग 500) के पहले कई व्याकरण लिखे जा चुके थे जिनमें केवल आपिशलि और काशकृत्स्न के कुछ सूत्र आज उपलब्ध है। किन्तु संस्कृत व्याकरण का क्रमबद्ध इतिहास पाणिनि से आरंभ होता है। सिद्धान्तकौमुदी के मूलभाग को जानने के लिए सबसे सरल टीका बालमनोरमा एवं लक्ष्मीटीका है।

संज्ञा प्रकरण का अध्ययन – महर्षि पाणिनि ने व्याकरण को स्मृतिगम्य बनाने के लिए सूत्र शैली की सहायता ली है। पाणिनि ने अपने पूर्ववर्ती वैयाकरणों से प्राप्त उपकरणों के साथ-साथ स्वयं भी अनेक उपकरणों का प्रयोग किया है। जिनमें **शिवसूत्र** या **माहेश्वर** सूत्र सबसे महत्वपूर्ण है। माहेश्वर सूत्रों की उत्पत्ति भगवान नटराज(शिव) के द्वारा किये गये ताण्डव नृत्य से मानी गयी है।

नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपंचवारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धान् एतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्॥[2]

प्रसिद्ध है कि महर्षि पाणिनि ने इन सूत्रों को देवाधिदेव शिव के आशीर्वाद से प्राप्त किया जो कि,पाणिनीय संस्कृत व्याकरण का आधार बना। अष्टाध्यायी पर महामुनि कात्यायन का विस्तृत वार्तिक ग्रन्थ है और सूत्र तथा वार्तिकों पर पर भगवान पतञ्जलि का विशद विवरणात्मक ग्रन्थ महाभाष्य है।संक्षेप में सूत्र वार्तिक एवं महाभाष्य तीनों सम्मिलित रूप में 'पाणिनीय व्याकरण' कहलाता है और सूत्रकार पाणिनी वार्तिककार कात्यायन एवं भाष्यकार पतंजलि – तीनों व्याकरण के 'त्रिमुनि' कहलाते है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का परिचय – व्याकरण गंगा की और काशिका आदि की धारा बहुत समय तक बहती रहीं किन्तु कुछ आचार्यो ने इस पक्ष में छात्रों के लिए कुछ कठिनता की अनुभूति की। यथा रामचन्द्रादि आचार्यो ने प्रकिया शैली को प्रारंभ किया। इस द्वितीय धारा का ग्रन्थ है प्रक्रिया कौमुदी आदि। इस धारा को वैज्ञानिक एवं सुस्पष्ट बनाने का महत्वपूर्ण का कार्य किया भट्टोजीदीक्षित ने। इन्होंने पाणिनी जी के सभी सूत्र एवं कात्यायन जी की कतिपय वार्तिकों की लेकर वैयाकरणसिद्धांत कौमुदी रचना की।

बालमनोरमा टीका का परिचय – इसका रचनाकार वासुदेव वाजपेयी जो अठारहवीं शताब्दी के आस पास माने जाते है। आचार्यगण विद्यार्थियों को इसी व्याख्या के द्वारा पढ़ाते एवं सिखाते है। और छात्रगण आसनी से समझ भी जाते है। सरल शब्दों को प्रयोग करके कौमुदी के मूलभाग सम्यक् परिशीलन इस टीका में किया गया है। यदि सिद्धान्तकौमुदी की सभी टीकाओं को छात्रों को दृष्टि से तोला जाए तो सर्वपेक्षया अधिकोपयोगी व सरल टीका रूप में बालमनोरमा ही सर्वश्रेष्ठता का स्थान प्राप्त करेगी।

लक्ष्मीटीका का परिचय – वैयाकरणकेशरी पण्डितश्रीसभापतिशर्मपाध्याय विरचित लक्ष्मी ब्याख्या का तात्पर्य महत्वपूर्ण है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की बहुविध व्याख्या के मध्य पण्डित जी ने लक्ष्मीव्याख्या ने सरलभाषा पूर्वक अल्पवातो के द्वारा व्याकरणानुरागी पाठकों में उन्होंने यथोचित स्थान प्राप्त कर लिया। श्रीसभापतिर्शर्मापाध्याय ने अतिदुरूह विषय को उदाहरण और प्रयोग के द्वारा अनेक सिद्धान्त की खण्डन करके उसका समाधान किया है। श्रीशर्मा जी 1837 ई में उदयपरा नामक ग्राम में आविर्भूत हुए थे। इन्होंने बहुत से ग्रन्थों की रचना की, जिनमें 'प्रभा' व्याख्या 'वैदिकधर्मरहस्य' लक्ष्मी व्याख्या प्रसिद्ध है।

हलन्त्यम् 1।3।3। बालमनोरमाकारस्य मतम्– वाक्यार्थज्ञान में पदार्थ ज्ञान कारण होते है। कही भी वाक्य अर्थोवोध होने के लिए उस वाक्य के हर पद की अर्थवोध होना जरूरी है। हल्पदार्थ ज्ञान 'आदिरन्त्येन संहेता' इस सूत्र की अधीन, क्योंकि 'आदिरन्त्येन सहेता'[3] इस सूत्र के अर्थबोधः होने बाद ही हलन्त्यम् इस सूत्र की अर्थबोधः होती है। परन्तु आदिरन्त्येन सहेता इस सूत्रों में वाक्यार्थ ज्ञाने इत्पद की अर्थ ज्ञान भी जरूरी है। वह हलन्त्यम् य इस सुत्राधीन है। इसी कारण में 'हलन्त्यम्' एवं आदिरन्त्येन सहेता इस दोंनो सूत्रों परसापेक्षत्वेन अन्योन्याश्रयदोष इतरेतराश्रयदोष वा परस्पराश्रयदोष[4] हो गये है।

लक्ष्मीटीकाकार सभापतिशर्मोपाध्याय – इस सभी का प्रतिपादन करने के बाद कुछ विशेष भी संयुक्त किए है – 'यदि तु हलन्त्यम् इत्यपहाय' व्यञ्जनमन्त्यम्' इति न्यस्यते तंदा नान्योन्याश्रयदोषः, तु न गोरवम्। व्यञ्जनपदस्य स्वरेतरवर्णेषु शक्तेर्लोकसिद्धत्वात्।

आदिरन्त्येन सहेता 1।1।71। सूत्र आदि का अर्थ आदिभूत अवयव और अन्त्य का अर्थ अन्त्यभूत अवयव। आदि और अन्त्य द्वो शब्द सापेक्ष होते है। 'स्वंरूपंश्ब्दस्त्राशब्दसंज्ञा'[5] इस सूत्र से स्वं पद कि अनुवृत्ति होती है। वह 'सहयुक्तेऽप्रधाने'[6] (कारकसूत्र) अप्रधान अर्थ में हुयी है। इति ही वालमनोरमाकारस्य मतम्।

* विभागाध्यक्ष (संस्कृत) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (संस्कृत) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

लक्ष्मीटीकाकार यह सभी व्याख्या करने के वाद आदि एवं अन्त्य पदों में सदृश्य लक्षण स्वीकार किए है। यदि पदत्रय मध्ये सादृष्य नही होते है तो कही भी प्रत्याहार सिद्धि नही होते है। अथ च स्वसादृश्ये[7] लक्षणा स्वीकार कीये है। च-कारादि अनुयोगिक सादृश्य प्रतियोगिकत्वेन विवक्षित इत् संज्ञक च-कारान्तस्य स्वाद्यकारादि अनुयोगिकः सादृश्यः प्रतियोगित्वेन विवक्षितः वर्णः समान्मायादिस्थः आ-कारदि अवयकस्य संज्ञा इत्यर्थ्यकेन आदिरन्त्येन इति सूत्रेणअच्हल् इत्यादि सकल प्रत्याहार सिद्धि होते है।

उपदेशेऽजनुनासिक इत् 1|3|2| यहाँ सरवर्ण उपदेश की अन्तर्गत एवं अनुनासिक अर्थाति नासिका से उच्चारित उसकी इत् संज्ञा होती है। उपदेशे अच् अनुनासिकः। अच् तस्य इत् संज्ञा भवित। तेन लक्षणसूत्रस्थ अकारस्य सति र प्रत्याहार सिद्ध्यति। परन्तु उद्द्योते नागेश 'मुनि अतोऽलान्त्यस्य' सूत्र कि द्वरा मतान्तर किये है। सूत्रे ज-कारस्य कुत्वाभावविषये उभयो (लक्ष्मी और वाल्मनोरमा की) मतभेदः अस्ति यहाँ बालमनोरमकार ज-कारस्य कुत्वाभावः आर्षत्वात्। च वृत्तौ 'अजित्संज्ञ' स्यादितिविवरणे कुत्वस्याभावः असंदेहार्थ इति।

अत्र सभापतिशर्मोपाध्यायः कुत्वभावः निपातात् तच्च श्रूयमाणः खरादिर्यः। सुप तद्धिन्न प्रत्ययनिमित्तकापदत्वस्थले एव। अत एव 'अचोऽक्षु' इति भाष्यप्रयोगः संगच्छते। आज् य इत्यत्र खरादिसुनिमित्तकपदत्वेऽपि सौ श्रूयमाणख्रदिसूब्भिन्नत्वसत्वेन कुत्वाभावनिपातनं सिद्धयति। 'तत् च श्रूयमाणः खरादिर्यः'[8]

समाहारः स्वरितः 1|2|31| सम् आङ्पूर्वकात् हृञ् धातोः अधिकरणे[9] घङि निष्पन्नः समाहारशब्दः। पूर्वात्राभ्यां[10] 'उदात्तानुदात्त' इति च अनुवर्तते। अनुवृत्ति पें 'उदात्तानुदात्त' पद में धर्मप्रधाने षष्ठ्यन्ततया च विपरिणम्यते।अथ सूत्रस्य सारार्थः, उदात्तानुदत्तत्वे वर्णधर्मौ समाह्यिते यस्मिन सोऽच् स्वरितसंज्ञः स्यात् इति।

लक्ष्मीटीकाकार- एतद् अतिरिक्तं सूत्रस्य प्रयोजनविषये उक्तवानः उद्दात्त और अनुद्दात्त की संज्ञा विधायक प्रदर्शन जरूरी नही है। यथोक्तं भाष्ये 'व्याकारणामेयमुत्तराविद्या'[11] उत्तरा इत्यनेन वेदाध्ययनान्तं पठनीया इत्यवगम्यते। अग्रे लिखति अद्यत्वे न तथा अद्यत्वे तु वेदाध्ययनात् प्रागेव व्याकरणमधीयते। तस्मात् उदत्तादिसंज्ञाशास्त्रं सार्थकमेव। यद्यपि मुले उदात्तादयसत्रय एव स्वरा उक्तास्तथापि चतुर्थ एकश्रुतिस्वरोऽपि विज्ञेयः तथा च सूत्रम् 'एकश्रुतिदुरास्तम्बुद्धौ'[12] (1|2|33|) इति।

मुकनासुकावचनोऽनुनासिकः 1|1|8|| मुखसहिता नासिका मुखनासिका, शाकपर्थिवादित्वात् सहितपदस्य लोप। उच्यते उच्चार्यते इति वचनः 'कर्मणि ल्युट'[13] मुखनासिकयावचन इति 'कर्तृकरणे कृता बहुलम्'[14] इति तृतीयसमासः। मुखनासिकेत्यत्र द्वन्द्वसू न शड्क्यः, तथा सति 'द्वन्द्वश्च'[15] प्रतितुर्यसेनाङ्गानामित्येनेन समाहार द्वन्द्वनियमात् 'स नपुंसकं'[16] इति नपुंसकत्वेः 'हृस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य' इत्यनेन हृस्वत्वे मुखनासिकवचनेत्यापत्तेः।

पुर्वात्रासिद्धम् 8|2|1|| अत्र बालमनोरमाकारः - यदि सुत्रमिंद स्वन्त्र विधि स्यात् तर्हि 'सपादसप्ताध्यायी प्रति त्रिपाद्यसिद्धा' इते लभ्यते। न तु त्रिपाद्यामपि पूर्व प्रति परशास्त्रमसिद्धं स्यादिति तथा सति किमु + उक्तम् = किम्वुक्तम् मोऽनुस्वारः[17] इति पुर्वत्रैपादिकं शास्त्रं प्रति परत्रैपादिकं शास्त्रं 'मया उओ वो वा' इति सूत्रे पुर्वात्रासिद्धामित्यनुवर्तते। पूर्वात्रासिद्धम् को अधिकारसूत्र मानने से त्रिपादी परत्रिपादी शस्त्र असिद्ध होत है, इतना अर्थ अधिक बन सकता है। परन्तु स्वतन्त्रविधि सूत्र मानने पर तो ऐसा अर्थ न बन पता और अनेक दोष आते। जैसे कि मोऽनुस्वारः[18] और 'मय उञो वो वा'[19]।

अत्र लक्ष्मीटाकायाम् अधिकारत्वस्विकारे हेतुत्वेन उदाहरनान्तरं 'गोधुङ्मान्' शब्द कि उथ्थापन किये है एवं वालमनोरमा कि मत स्वीकार किये हैं इस में कोहि भी विशेष नार्हीं है। अग्रे सिधत्वविषये उक्तवानः कर्यासिद्धत्वस्वीकारे अमु अमी इस पद सिद्ध होता है,अद अ औ,अद अ इ इत्यवस्थायाम्। 'अदसो सेः'[20]।

नाऽऽज्झलौ 1|1|10|| तुल्यसत्रात्सवर्णमित्युनुवर्तते। तच्च पुँल्लिङ्गद्वि-वचनान्ततया विरिणम्यते। तेन प्रतिषेधेन। आदिना सवर्णादीर्घसंग्रहः। 'नाज्झलौ' इति सावर्ण्यनिषेधः वर्णसामाम्नायिकानामेव अर्थात् हृस्वाकारइकारादीनामेव तथापि हकारस्य आकारेण सह न सवर्णसंज्ञा तत्रैव आकारस्यापि प्रश्लिष्टत्वात्। अन्यथा विश्वपाभिः इत्यत्र 'होढ़'[21] इत्यनेन ढ़त्वापत्तिः इति। आकास्य प्रश्लेषे प्रमाणं तु 'कासमयवेलासुतुमुन'[22] इति पणिनेः सुत्रमेव। अन्यथ 'वेलासु' इत्यत्र आकारस्य ढ़त्वस्म्योगान्तलोपने च आकारो न श्रूयते। वलमनोमाकारस्य मतम् इति।

लक्ष्मीटीकाकार ने कहा है -प्राप्तनिष्टं सावर्ण प्रतिपेधति 'नाज्झलौ' इति - न आज्झलौ इति च्छेदः। तत्र आ 2 श्च औ। दीर्घप्लुतयोर्दीर्घे 'आ' इति प्रातिपदिकादौविभक्तौ वृद्धौ 'औ' इति रूपम्। आभ्यां सहितः इत्यर्थे 'कर्तृकरणे' इति समासे 'आसहित' इति।

अनुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः 1|11|11| चकारात् स्वरूपमित्यतः स्वमित्यतः स्वमित्यतनुवर्तत तच्च षष्ठयन्ततया विपरिणम्यते तथा च सूत्रस्य सारार्थः अण् प्रत्याहारः उदित च सवर्णस्य ग्राहकः भवतिस्वस्य च रूपस्यं विधीयमानं वर्जयित्वा इति तेन 'सनाशंसभिक्ष'[23] इदम्[24] इश् 'आर्धधातुकास्येड्वलादेः'[25] दत्यदौ विधेये न सवर्णग्रहणम् इत्येतावत्। एऔच् सुत्रस्य विषये वालमनोरमाकरस्य मतम् - यदि ऐऔच् सूत्र न होता तो अच्, इच्, एच, ऐच् आदि प्रत्याहार भी न बन पाते और 'इको यणचि' में अचि के स्थान पर अडि पढना पढ़ता। वृद्धिरादैच में ऐच की जगह एड् पढ़ना पड़ता और आ, ए, ओ, की जगह एड् पढ़ना पड़ता और उसे ऐकार और औकार बनानेके लिये कोई दूसरी युक्ति अपनानी पड़ती। ऐसी बहुत जगहों पर असंगति आ जाती।

लक्ष्मीटीकायां एतद्व्यातिरिक्तं यदुक्तं तदित्थम् उदच्चेत्यें शे अप्रत्ययेत्यंशो न सम्बद्धयते। तेन विधीयमानोकिविधीयमानो सर्वोप्युदित् सवर्णोग्राहको भवति। तथा सति जगादेत्यादि सिद्धयति इति।

वृद्धिरादैचे 1|1|1|| वृद्धिः आदैच् इति विच्छेदः। आच्च ऐच्चेति समहार्द्वन्द्वः। अत्र केचित् शड्कते 'द्वन्द्वाच्चुहान्तात्'[26] इति समासान्तटच् कथं न ? इति चेत न अतएव निदेशात् समासान्तविधेरनित्यवात्। आच्च ऐच्चेतीतरेतरयोग द्वन्द्वो वा, तथा सति सौत्रत्वादेकवचनम्। आचार्यपारम्पोर्पदेशसिद्ध संज्ञाधिकारात् संज्ञेति लभ्यते। तथा च सारार्थः - आ ऐ औ इत्येतेषां वर्णानां वृद्धिसंज्ञा भवतीति। अष्टाध्याय्याः प्रथमंसूत्रमिदं परञ्च भट्टजीदिक्षिततेन नेदं प्रथमतयोपन्यस्तं। तत्र 'वृद्धिरादैच'सूत्रे तपरकरणत्वं प्रत्याहार गर्भितत्वञ्च। ग्रहणकशास्त्रनियमार्थम्। अतो तदनन्तरमेव 'वृद्धिरादैच' इत्यस्नयासः उचितः। 'चोः कुः[27] इत्यनने पदान्ते विहितं कुत्वं कंथं न? 'अयस्मयादीनिच्छन्दसि'[28]भात्वात् पदान्तत्वाभावात् कुत्वं न। अष्टाध्याय्याःसंहितापाठपक्षे तु 'वृद्धिरादैजदेड्गुणः' इत्यत्र झलांजशेऽन्तेय' इति पदान्ते विहितं जश्त्वं तु भवत्येव 'उभयसञ्ज्ञान्यपि ''छन्दसि दृश्यन्तेय' इति वचनात् 'छन्दोवत्सुत्राणि भवन्ति'[29] इति छान्दसविधीनां सूत्रेष्वपि प्रवृत्तेः। ननु एवमपि पदत्वात् कुत्वं भत्वात् एतद सर्वं बालमनोरमायां। अत्र 'वृद्धि;' 'आत्' ऐच'इति पदत्रयं न तु 'आदैच्' इति समाहार द्वन्द्वेन

पदद्वयम्, 'द्वन्द्वाच्चुदषहान्तात्समाहारे'[30] टजापत्तेः । न चेतरेतरद्वन्द्वः द्विवचनापत्ते । 'वृद्धिरादैच्' (1।1।1।) इति न च वृद्धिसंज्ञायां प्रत्याहारसूत्रस्य ग्राहप्रपञ्चस्य चापेपेक्शितत्वेऽष्टाध्याय्यामपि प्रथमं प्रत्याहारप्रञ्चं चाभिधाय 'वृद्धिरादैच्' इति सूत्रं कुतो नोक्तमिति वाच्यम्, 'मङ्गलार्थमादितो'[31] वृद्धिशब्दं प्रयुङ्क्तेय इति भाष्येणैवसमहित्वात्। 'ऐच्' इत्यत्र कुत्वन्तु न, 'छेन्दोवत्सुत्रानि भवन्ति' इत्यत्रत्यसुत्रभष्येण सुत्रेसु – छन्दस्त्वातिदेशेन 'अयस्मयादीनि छन्दसि'[32] इत्यनेन भत्वात्।

भुवादयो धातवः 1।3।1।। भूप्रभृतयो वासदृशाश्च ये तेधातुसंज्ञकाः इत्यर्थः । 'वा' धातुसादृश्यं चात्र। क्रियावाचित्वेन विवक्षितः। तस्मात् वृत्तौ दीक्षितेन लिखितम्– क्रियावाचिनो भ्वादयो धातुसंज्ञकाः स्युरिति। तद्यथा– पठति, गच्छति, भतित्यादिः। क्रियावचिनः किमिति प्रशने विकल्पार्थकवाशब्दस्य धातुसंज्ञा निवृत्यर्थम।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाणिनीयशिक्षायां व्याकरणं वेदपुरूषस्य मुखरूपेण स्वीकृत। आचार्य गोबिंद च शर्मा लक्ष्मी, बैयाकरणसिद्धान्त कौमुदी, चौखम्बा, सुरभारती प्रकाशन, बाराणसी 2017 पृ. vi।
2. भट्टाचार्य तपन शङ्कर लघु सिद्धान्तकौमुदी, संस्कृत बुक् डिपो,कलकाता, प्रःसः 2002, पृ.1।
3. अष्टा 1।1।71
4. हलन्त्यम् आदिरन्त्येनसहेता इत्यनयोः परस्परापेक्षत्वेनाःऽन्यो श्रयाल्लकारे इत्संज्ञमबोधयोत्वा बोधनं पानिनेरयुक्तम्। लघु शब्देन्दुशेखरे हलन्त्यमिति सूत्रे।
5. अष्टा 1।1।68
6. अष्टा 2।3।19
7. लक्ष्मीटीकायाम् अत्रैव सूत्रे।
8. अत्रैव सूत्रे लक्ष्मीटीकायाम्।
9. धञि च भावकारणयोः 6।4।27।
10. अष्टा 1।2।29 एवं 1।2।30
11. म. भाष्ये तस्यादितउदात्तमधह्श्वमितिसुत्रे
12. अष्टा 1।2।33
13. कृत्यल्यूटो बहुलम अष्टा 3।3।113
14. अष्टा 2।1।32
15. अष्टा 2।4।2
16. अष्टा 2।4।17
17. अष्टा 8।3।23
18. अष्टा 8।03।23
19. अष्टा 8।3।23
20. अष्टा 8।2।80
21. अष्टा 8।2।31
22. अष्टा 3।3।167
23. अष्टा 3।3।167
24. अष्टा 5।3।3
25. अष्टा 5।3।3
26. अष्टा 5।3।3
27. अष्टा 8।2।30
28. अष्टा 1।4।20
29. भाष्य बार्तिक अत्रैव सूत्रे भाष्ये
30. अष्टा 5।4।106
31. एतेदेकमार्चास्य मङ्ग्लार्थं मृश्यताम्। मांगलिक आचार्य महतः शास्त्रैघस्य मंगलार्थ बृद्धिशब्दमादितः प्रयुडकते मंगलादीनिहि शस्त्राणि प्रथन्ते बिरपुरूषाणि च भवन्ति आयुष्मतपुरूषाणि च अध्येतारश्च बृद्धियुक्ता यथा स्युः
32. अष्टा 1।4।20
33. बैयाकरणभूषणसारे–ब्यापरस्तुभाबनाऽमिधा साध्यत्वेनऽभिधीयमाना क्रियाक्रियान्तराऽकांखानुत्थापकताबच्छेदकरूपं सध्यत्मवम्।

****

भारतीय साहित्य में नायक-नायिका एवं प्रणय स्वरूप : मुग़ल चित्रकला के संदर्भ में

प्रो.डॉ.रश्मि जोशी * रिंकी साहू **

प्रस्तावना – मुग़ल चित्रकारों के भारतीय साहित्य के आधार पर अनेक प्रेम चित्र चित्रित किये गए हैं परन्तु इन प्रेम चित्रों का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि मुग़ल कलाकारों ने प्रेम का लौकिक पक्ष ही प्रस्तुत किया है। ऐसी परिस्थिति में मुग़ल चित्रकला में प्रणय अंकन का जो स्वरूप विकसित हुआ उसको इस अध्याय में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

संयोग पक्ष – संसार का मूल ही प्रणय में सन्निहित है इसी प्रणय के वशीभूत होकर प्रभु को सृष्टि का नियम बदलने तक की बात कह डाली है। 'प्रबल प्रेम के पल्ले पड़कर, प्रभु को नियम बदलते देखा। प्रभु की मान भलैचलि जाए, भक्त की जान न जाने पाये'। इस प्रणय को विभिन्न विद्वानो ने भिन्न-भिन्न प्रकार से परिभाषित किया है। जिसे हम निम्नवत् समझ सकते हैं, साहित्य दर्पणकार आचार्य विश्वनाथ के अनुसार प्रिय वस्तु के प्रति हृदय की उत्कठ उन्मुक्तता (प्रेमार्द्रता) को रति या प्रणय कहते हैं।

आगे चलकर इन्होंने रति की छ: अवस्थाओं में से प्रणय को उसकी प्रथम अवस्था माना है जिसमें युवक-युवती समान रूप से एक दूसरे के प्रति अपनत्व के भाव में बंध जाते हैं।

श्रृंगार रस को आदि रस भी कहा जाता है क्योंकि दम्पत्ति के बीच पनपने वाला अनुराग या रति ही सृष्टि का मूल कारण है। श्रृंगार रस में रति स्थाई भाव प्रेमी-प्रमिका आलम्बन और आश्रय होते हैं। संयोग से श्रृंगार में आलम्बन की अनुकूल चेष्टाएँ आकर्षक व्यक्तित्व और आदर्श व्यवहार आदि चेष्टाएँ चेतन उद्दीपन तथा एकान्त स्थल प्राकृतिक रमणीय दृश्य नदी, सरोवर का तट, पुष्प वाटिका आदि ब्राह्य जड़ आलम्बन है। हंसना, लजाना, पुलकित होना, गाना, परस्पर आलिंगन, चुंबन परस्परिक प्रशंसा अनुभव है। हर्ष, चपलता, आहलाद, रोमांच आदि संचारी भाव हैं दूसरी ओर दिप्रलम्भ श्रृंगार में प्रिय का चित्र तथा उसकी प्रिय वस्तु उद्दीपन का कार्य करते हैं। रोना प्रिय के गुणों और कार्य व्यवहार का अनुकथन आदि अनुभाव है तथा विषाद स्मरण, जड़ता, उन्माद आदि संचारी भावों के संयोग से विप्रलम्भ श्रृंगार का परिपाक होता है।

वत्सल रस – पुत्र वात्सल्य रति में अलम्बन का कार्य करता है और माता इस का आश्रय होती है पुत्र का सुन्दर रूप और उसकी बाल क्रीडाएँ उद्दीपन का कार्य करती है। माता का गाना, पुत्र को उठाकर प्यार करना, उसको प्रसन्न करना अदि अनुभाव है हर्ष आहलाद, चपलता, आवेदश आदि संचारी भावों के सहयोग से वात्सल्य रति उस रूप को प्राप्त करती है।

श्रद्धा और प्रेम – प्रेम अधिकांश में अकारण या बाहय रूप पर आधारित होता है किन्तु दूसरे के गुण या श्रेष्ठ कार्य को देखकर उसके प्रति आकर्षित होना उसकी प्रशंसा करना या उसका अनुकरण करने का प्रयास करना श्रद्धा कहलाता है प्रेम नहीं। प्रेम में हम प्रेमी के साथ अधिक समय तक रहना चाहते हैं उस पर अपना अधिकार जतलाते हैं। उसको प्रसन्न करते हैं और यह इच्छा होती है कि हमारे अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति हमारे प्रेमी को चाहने वाला, सेवा करने वाला या प्रशंसा करने वाला हम दोनों के मध्य न आए, किन्तु श्रद्धा में हमारा ध्यान श्रद्धास्पद व्यक्ति की ओर नहीं बल्कि उसके श्रेष्ठ गुण और कर्मो के प्रति रहता है जिसके प्रति हमारी श्रद्धा और हमारे मन में सम्मान भाव है उसके प्रति दूसरे व्यक्ति वैसी ही श्रद्धा और सम्मान का भाव रखे, यह चाह और प्रयत्न हमारा बना रहता है। श्रद्धा में जिसके प्रति हमारा आदर भाव है, उससे हमारी भेंट भी हो जाए या सम्पर्क भी बना रहे, आवश्यक नहीं, किन्तु प्रेम में निकट सम्पर्क और साहचर्य के बिना प्रेम जन्म ही नहीं ले पाता। प्रेम में प्रेमियों में समानता का भाव रहता है किन्तु श्रद्धा में, श्रद्धा करने वाला छोटा शिष्य रूप और जिसके प्रति श्रद्धा होती है वह बड़ा और गुरू रूप होता है।

काम और प्रेम – प्रेम में साहचर्य, दो प्रेमियों का परस्पर मिलना, एक दूसरे को चाहना और एक दूसरे का सहयोग करना परम आवश्यक है। यदि दोनों प्रेमी सजातीय ही नहीं वरन् विपरीत लिंग के भी हो तो उनका मिलना एक दूसरे को चाहना और एक-दूसरे को सहयोग करना, एक दूसरे को प्रभावित करने और एक-दूसरे के काम भाव या विकास को जागृत करने का कार्य भी करता है। यह काम रति का जीवन साथी और दूसरे अर्थो में पति है। विपरीत लिंग के प्रेमियों में यह काम एक-दूसरे को समझने, एक-दूसरे का विश्वास जीतने और एक दूसरे की आवश्यकता पूर्ति करने के लिए अग्रसर होता है। काम से जुड़कर प्रेम में प्रगाढ़ता, निश्चिन्ता, तृप्ति तथा भविष्य के सुन्दर सपने सजोने की प्रेरणा का कार्य करता है। यह काम प्रेमियों के अन्दर प्रौढ़ता, गम्भीरता, आत्मविश्वास और उत्तरदायित्व का भाव उत्पन्न करता है। यह नर-नारी के रूप, गुण और सामर्थ्य को विकसित करता है और उन्हें समाज में काम सृजनशीलता के लिए प्रेरित करता है। काम प्रेम को स्थिरता और सक्रियता प्रदान करने के लिए आधार कर्मक्षेत्र प्रदान करता है अन्यथा प्रेम स्वयं में वायवीय और स्वप्नलोक व कल्पनालोक है जो कि प्रेमियों को संकीर्ण, पंगु तथा पलायनवादी बनाता है। इससे स्वयं तो प्रेमियों के गुणों और व्यक्तित्व विकास तो रूक ही जाता है किन्तु साथ ही सामाजिक उन्नति और विकास को भी क्षति पहुँचती है। प्रसाद जी के शब्दों में काम कोई बुरी

*विभागाध्यक्ष (चित्रकला) सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शिवाजी नगर, भोपाल(म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शिवाजी नगर, भोपाल (म.प्र.) भारत

चीज़ नहीं है वरन् एक कल्याणकारी व सृजनशील दिव्य भाव है :-

काम मंगल से मंडित श्रेय, सर्ग इच्छा का है परिणाम।
तिरस्कृत उसको तुम भूल, बनाते हो असफल भवधाम।।[1]

जब तक काम मर्यादा और आदर्श से पूर्ण है तब तक वह ग्राह्य और ईश्वर तुल्य है। इसीलिए गीता में श्रीकृष्ण ने अपने आप को शास्त्र के अविरूद्ध काम बतलाया है।म

नारी और प्रेम – यद्यपि नर और नारी दोनों का समान गुण है तथापि नारी प्रेम की सहज जन्मस्थली है। पुरूष प्रेम पर अधिकार पाना चाहता है। उसको अपने प्रभुत्व और अहम को खोने में कष्ट होता है। इसलिए वह नारी का प्रेम मार्ग में सहयोग तो दे सकता है किन्तु कुछ ही समय पश्चात् अधिकार के लिए मचल उठता है और अनेक बार प्रेम बंधन को तोड़ने के लिए व्याग्र दिखलाई पड़ता है जबकि नारी का स्वभाव ही प्रेम प्रधान है। त्याग, सेवा, दया, ममता, परोपकार, विश्वास, दूसरे के गणों की पूजा, दसरे का सम्मान, दूसरे की उन्नति के लिए प्रयत्न और सद्कामना, दूसरे की छत्रछाया में निश्चित होकर रहना, कष्ट सहते हुए भी दूसरे के लिए जीवन बिताना स्त्री के सहज धर्म हैं। नारी अपनी आँखों में आँसू भरकर उन्हें स्वयं पी जाती है, दूसरों तक प्रकट भी नहीं होने देती किन्तु दूसरे की आवश्यकता और पोषण के लिए अपने आँचल के दूध को मानवता के लिए समर्पित करती है। यही उसके प्रेम का सन्धिपत्र है।

वियोग पक्ष – यह सत्य है कि प्रेम में मिलन या संयोग सुष्पित्ति है तो निश्चय ही विरह जागृति है प्रेम की सच्च कसौटी तो विरह है। इस विरह की साहित्य में बड़ी मार्मिक चर्चा रही है। कृष्ण की गोतियों के विरह वर्णन को तो कवि अनेक रूपों में चित्रित करते रहे हैं, सूर की भ्रमर गीत, जगन्नाथ रत्नाकर की गोपी विरह वर्णन जायसी का नागमती विरह वर्णन हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि रहे हैं। निश्चय ही यह सत्य है, कि 'वियोगी होगा पहला कवि आह से उपजा होगा गान, गान उमड़कर नयनों से चुप-चाप वही होगी कविता अनजान'। व्यापकता एवं प्रभात की दृष्टि से विप्रलम्भ श्रृंगार निश्चय ही श्रृंगार रस का अत्यधिक महत्वपूर्ण निधि है। निर्विवाद रूप से सम्भोग श्रृंगार की अपेक्षा उसका अधिक महत्व है। सहित्यदर्पणकार का स्पष्ट मत है-

न बिना विहप्रलम्भन संयोग: पुष्टि मरनुते।
कषयिते हिवस्त्रादो मयानरागो विविर्धत: ।।[2]

अर्थात बिना वियोग के संयोग श्रृंगार परिपुष्ट नहीं होता कषापित वस्त्रादि पर ही अच्छा रंग चढ़ता है। रंग से पहिले अनार के छिलके के काडे में वस्त्र को भिगोना कषापित करना कहलाता है। प्रखर सूर्य की किरणों से तृप्त होने के बाद ही वृक्ष की शीलता छाया के वास्तविक मुख का अनुभव प्राप्त होता है। महाकवि सूरदास ने भी विरहिजी ब्रजागनाओं के मुख द्वारा उद्धव के सम्मुख इसी प्रकार की बात कही है।

उधौ, विरहौ प्रेम करै,

उयो विनुपुट पट गहै न रमहि, पुट गहि रसहि परै।
जो आवो घट दहत अनल तनु तै पुनि अमिय भरै।।[3]

विप्रलम्भ श्रृंगार पाँच कारणों से होता है अभिलाषा हेतुक, ईर्ष्या हेतुक, विरह हेतुक, समीप रहने पर भी गुरूजनों की लज्जा के कारण समागन नहीं, प्रवास हेतुक तथा शाप हेतु। तात्पर्य यह है कि मिलन के पूर्व मिलन के समय तथा मिलन के पश्चात् प्रत्येक अवस्था में एवं दशा में विरह श्रृंगार का हेतु होता है, यहाँ तक की संभोग समय भी पुष्टि हेतु प्रणयमान का सहारा लिया जाता है। यह प्रणयमान जैसा हम देख चुके हैं विप्रलम्भ श्रृंगार का ही एक उपभेद है।

साहित्य दर्पणकार ने प्रिय वियोगजनित एकादश दशाएँ मानी हैं-

1. अंगों में असांनोष्ठब, 2-सन्ताप, 3. पाडुता, 4. दुर्बलता, 5.अरूचि, 6. अधीरता, 7.अस्थिरता, 8. तन्मयता, 9. उन्माद, 10 मुर्च्छा, 11. मरण

वियोग जनित दस दशाएँ- हिन्दी कवियों ने वियोग जनित दस दशाओं का वर्णन किया है उनका संक्षिप्त परिचय है यहाँ दिया जाता है वे इस प्रकार है-

- **अभिलाषा-** वियोगावस्था में नायक-नायिका के परस्पर मिलने की इच्छा को अभिलाषा कहते हैं। यह अवस्था पूर्वानुराग में विशेषरूप से पाई जाती है।
- **चिन्ता-** प्रिय प्राप्ति अथवा चित्त शान्तिसाधन विचार को चिन्ता कहते हैं। अहितकारी तिचार या प्रिय पदार्थ के ध्यान को चिन्ता कहते है।
- **स्मरण-** वियोग समय में प्रिय के संयोग समय की पिछली बातों, चेष्टाओं और समागम सुखों को याद करने को स्मरण कहते हैं।
- **गुण कथन-** वियोग काल में प्रिय के गुणों का वर्णन करना गुण कथन कहलाता है।
- **उद्धेग-** प्रिय वियोग से व्याकुल होकर किसी विषय में चित्त न लगने का नाम उद्धेग कहते हैं।
- **प्रलाप-** वियोग से अत्यधिक व्यथित होकर प्रिय की अनुपस्थिति में भी उसे उपस्थित मानकर अनर्गल किम्बा निरर्थक वार्तालाप एवं चेष्ठा करने को प्रलाप कहते हैं।
- **उन्माद-** वियोग जनित व्यथा के कारण बुद्धि विपर्यय हो जाने से विरही द्वारा वृथा व्यापार करने, जड चेतन विवेक रहित होने और व्यर्थ हॅसने, रोने आदि को उन्माद कहते हैं।
- **जड़ता-** वियोग जनित दु:खतिरेक के कारण शरीर के स्तब्ध हो जाने का नाम जड़ता है इसमें व्यक्ति सुधबुध भूलकर निस्तब्ध और निश्चेष्ट ही हो जाता है। अंगों तथा मन के चेष्टा शून्य होने और इन्द्रियों के गति के अवरोध को जड़ता कहते हैं।
- **मरण-** प्राण परित्याग का नाम मरण है परन्तु साहित्य में वियोगावस्था जनित नैराश्य की पराकाष्ठा को ही मरण कहते हैं। इसलिए कविगण मरण का स्पष्ट वर्णन न करके उसके स्थान पर मूर्च्छा अथवा मृत व्यक्ति के सुयश, वीरता आदि गुणों का वर्णन करते हैं।

भारतीय चित्रकला में नायक-नायिका के संयोगावस्था से संबंधित प्रसंगों का चित्रण जितनी कुशलता से हुआ है उतना विरहजन्य स्थलों का नहीं। इसका एकमात्र कारण चित्रकला की अपनी व्यक्त करने की सीमा है जिसमें 'आनन्द' से इतर कुछ भी नहीं है। फिर तत्कालीन समाज की रूचि भी विप्रलम्भ श्रृंगार की ओर कम ही रही। यही कारण है कि चित्रकला की विवधि शैलियों में संयोग चित्रों की अपेक्षा विप्रलम्भ के चित्र बहुत कम मिलते हैं लेकिन विप्रलम्भ के जो भी चित्र प्राप्त होते हैं उनका अंकन बड़ी कुशलता एवं सूक्ष्मता से किया गया है, जो अपने-आप में बड़े भाव एवं उत्कृष्ट हैं। इन चित्रों को देखकर काव्यगत विरह भावना का अध्ययन सूक्ष्मता से किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कामायनी श्रद्धा पृ. सं. -24
2. गीता अध्याय 10/28
3. डॉ. राजेश्वर प्रसाद, रीतिकालीन कविता एवं श्रृंगार-रस का विवचन पृ. सं. -37
4. टंडन, आर.ए. - भारतीय चित्रकला की रूपरेखा,
5. अग्रवाल, आर.ए. - कला विलास,
6. बाबरनामा भाग- एक

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

कृषि उपज मण्डी समिति में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के जनप्रतिनिधियों की भूमिका (बड़वानी जिले के विशेष सन्दर्भ में)

सुनीता बेले * डॉ. कान्ता अलावा **

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश के पश्चिम् निमाड़ क्षेत्र में स्थित बड़वानी जिला भारतवर्ष के हृदय प्रदेश अर्थात् मध्यप्रदेश का एक आदिवासी बहुल जिला है। 25 मई 1998 को राज्य सरकार द्वारा जिलों पुनर्गठन किया गया और इसी पुनर्गठन में पश्चिम निमाड़ जिले का विभाजन कर खरगोन व बड़वानी जिलें बनाए गए और यह बड़वानी जिला अस्तित्व में आया। यह जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम भाग में स्थित है। सन् 1998 के पूर्व तक यह खरगोन जिले में तहसील के रुप में सम्मिलित था।

बड़वानी जिला अमृतसरिता नर्मदा किनारे स्थित है। जिले का क्षेत्रफल 5422 वर्ग किलोमीटर तथा जनसख्या 13,85,881 व्यक्ति है, जो कि मध्यप्रदेश की जनसंख्या का 1.9 प्रतिशत है। यहां का भौगोलिक परिदृष्य अनूठा और मनोरम है, एक ओर सतपुडा तो दूसरी ओर विंध्यांचल पर्वत श्रृंखला स्थित है। यहां अधिकांश गहरी काली मिट्टी होने से इस क्षेत्र में कपास की फसल बहुतायात में होती हैं। यह क्षेत्र मिर्ची के उत्पादन में प्रदेश में प्रथम स्थान पर है। जिले में चावल अनुसंधान केन्द्र भी स्थापित किया गया है।बड़वानी को **'निमाड़ का पेरिस'** भी कहा जाता है।

बड़वानी जिलें का राजनैतिक स्थिति – आजादी के पश्चात् पश्चिम निमाड़ मुख्य रुप से कांग्रेस व जनसंघी नेतृत्व के अधीन रहा। जिले की एक मात्र बड़ी रियासत बड़वानी के महाराजा रणजीत सिंह व उनके उत्तराधिकारियों ने सक्रिय राजनीति में रुचि नहीं ली। संवैधानिक व्यवस्था के अनुरुप जिले की अनुसूचित जनजातीय बहुलता के कारण राजनीतिक पदों पर आरक्षण दिया गया। जिले की सभी विधानसभा सीटें अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित की गई हैं। यहां मुख्यत: खरगोन, सेंधवा व बड़वानी ने ही राजनीतिक नेतृत्व प्रदान किया है। खरगोन जिले के कसरावद क्षेत्र के कांग्रेसी राजनेता श्री सुभाष यादव ने तीन बार संसदीय क्षेत्र का नेतृत्व किया। साथ ही प्रदेश के उपमुख्यमंत्री के रुप में भी जिले को पहचान दी, एवं सहकारिता के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए।

जनसंघ के नेतृत्वकर्त्ता समाजसेवक व समाज सुधारक सेंधवा निवासी श्री रामचन्द्र बडे साहब ने जिले को दिशा दी। जनसंघ के बाद भाजपा के रामेश्वर पाटीदार ने भी संसदीय क्षेत्र से निर्वाचित होकर जिले की सेवा की है।

कृषि उपज मण्डी समिति – कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलाना एक समस्या थी। कृषक की उपज जो अनेकों मध्यस्थों के हाथों से होकर गुजरती थी। उपर्युक्त परिस्थितियों से तथा मध्यस्थों की बढ़ती हुई भूमिका ने कृषि उपज विपणन हेतु मण्डी समितियों की आवश्यकता महसूस की। इसी के तहत् सन् 1887 से निरन्तर सन् 1927 तक कृषकों के हित में अनेक एक्ट सरकार द्वारा पारित किए गये। इसी क्रम में सन् 1939 में इसके लिए एक विधान बनाया गया जो **'कृषि उत्पादन विपणन अधिनियम'** के नाम से विख्यात है।

बड़वानी जिलें में कृषि उपज मण्डियाँ – जिले में सन् 1947 तक जहां मण्डियों की संख्या नगण्य थी, वहीं वर्तमान समय में मण्डियों की संख्या पाँच हो गयी हैं और उपमण्डियों की संख्या सात है। सरकार ने कृषि विपणन में उत्पन्न समस्याओं के समाधान के लिए वर्तमान में मण्डी नियंत्रण अधिनियम क्रियाशील किया हैं। इस अधिनियम के माध्यम से कृषि विपणन के दोषों को दूर किया जा रहा है। वर्तमान में कृषि उपज क्रय-विक्रय हेतु स्थापित मण्डी समितियां देश की प्रगतिशील स्वायत्त संस्था है। मध्यप्रदेश में कृषि उपज अधिनियम 1972 के द्वारा मण्डियों को नियंत्रित तथा नियमित किया जाता है। बड़वानी जिले की मण्डियों और उपमण्डियों को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रमांक 01 : बड़वानी जिले की मण्डियाँ

क्र.	मुख्य मण्डी	उप-मण्डियाँ
1	बड़वानी	-
2	सेंधवा	निवाली
3	खेतिया	पानसेमल
4	बलवाडी	धवली
5	अंजड़	पलसुद, राजपुर, ओझर, बरुफाटक

स्त्रोत : कृषि उपज मण्डी समिति कार्यालय, बड़वानी

कृषि उपज मण्डी समिति, बड़वानी की कोई भी उपमण्डी नहीं है, जबकि अन्य कृषि उपज मण्डी समिति, खेतिया, बलवाडी व सेंधवा की एक-एक उपमण्डियाँ है और अंजड़ मण्डी समिति की चार उपमण्डियां है।

यहां के अधिकांश कृषक अशिक्षित व ऋणग्रस्त है। उनकी इस मजबुरी का लाभ साहुकार उठाते हैं। अत: कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता था। कृषकों के लिए कृषि उपज मण्डियों की आवश्यकता उत्पन्न हुई। मण्डियों की स्थापना हो जाने से ऋणग्रस्त एवं आश्रित किसानों को भी उनकी उपज का सही मूल्य प्राप्त होने लगा है, साथ ही साहुकारों की मध्यस्थता से भी छुटकारा मिल रहा है। बड़वानी जिलें की मण्डियों की स्थापना सन् 1953 से 1970 के बीच के दो दशकों में ही की गई हैं, जिसे निम्न तालिका में स्पष्ट किया गया है-

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म. प्र.) भारत
** प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,बड़वानी (म. प्र.) भारत

तालिका क्र. 02 : बड़वानी जिले में मण्ड़ियों की स्थापना

क्र.	मण्ड़ी का नाम	स्थापना वर्ष
1	सेंधवा	1953
2	अंजड़	1955
3	खेतिया	1956
4	बड़वानी	1969
5	बलवाड़ी	1970

स्त्रोत-कृषि उपज मण्डी समिति कार्यालय, सेंधवा

बड़वानी जिले की समस्त कृषि उपज मण्ड़ियों में सबसे पुरानी कृषि उपज मण्ड़ी सेंधवा हैं, जिसकी स्थापना 1953 में हुई और बलवाडी नवगठित मण्ड़ी हैं, जिसकी स्थापना सन् 1970 में हुई। बड़वानी जिले की मण्ड़ियों में केवल सेंधवा मण्ड़ी एकमात्र मण्ड़ी है जो 'अ' श्रेणी में आती हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि सेंधवा में कपास का व्यापार बड़े पैमाने पर होता है। सेंधवा मण्ड़ी की केवल एक उपमण्ड़ी हैं जो निवाली में स्थित हैं, जिसकी स्थापना 1981 में की गई। इस मण्डी के कार्यक्षेत्र में 18 गाँव सम्मिलित हैं।

बड़वानी जिले की मण्ड़ियों में सेंधवा मण्ड़ी के अतिरिक्त शेष चार मण्ड़ियाँ 'स' एवं 'ड' श्रेणी में आती हैं। 'स' श्रेणी में आने वाली मण्ड़ियों में अंजड कृषि उपज मण्ड़ी है। इसकी चार उपमण्ड़ियाँ है, जो राजपुर, पलसूद, ओझर और बरुफाटक में संचालित की जाती हैं। इनकी स्थापना क्रमशः 1987, 1989, 1969 तथा 1984 में की गई थीं। बड़वानी जिले की दूसरी 'स' श्रेणी की मण्ड़ी खेतिया मण्ड़ी हैं। इस मण्ड़ी की एक उपमण्ड़ी पानसेमल हैं, जिसकी स्थापना 1960 में हुई।

बड़वानी जिले की कुल जनसंख्या का 6.3 प्रतिशत भाग अनुसूचित जाति के लोगों का है। जिलें की अनुसूचित जाति के कृषकों में मुख्यत: बलाई, कोली, मेहतर, चर्मकार तथा अहिरवार उपजाति के लोग शामिल है। जिले में अनुसूचित जाति के अधिकांश परिवार पारम्परिक व्यवसाय में ही कार्यरत् है। इनके पास कृषि योग्य भूमि नहीं है। आजिविका के लिए पारम्परिक व्यवसाय, कृषि व अन्य व्यावसायिक क्षेत्र में मजदूरी कर रहे हैं।

अनुसूचित जाति के जनप्रतिनिधियों में बड़वानी जिलें की मण्डी समिति, बड़वानी में श्री नानुराम अरोरा ही एक मात्र सदस्य है जो जिले की मण्डी समितियों के सर्वोच्च पद पर अध्यक्ष निर्वाचित हुए हैं। अनुसूचित जाति के अन्य जनप्रतिनिधियों की भूमिका भी सीमित रही हैं।

बड़वानी जिले में अनुसूचित जनजाति वर्ग के 70 प्रतिशत से अधिक लोग निवास कर रहे हैं। जिले के सर्वेक्षित अनुसूचित जनजाति के कृषक सदस्य भील, भीलाला, पटेल और बारेला उपजाति समुदाय से है। खेतिया, पानसेमल, सेंधवा, बलवाड़ी, धवली, चाचरिया, धनोरा क्षेत्र के अधिकांश बारेला समुदाय में कृषक सदस्य है। बड़वानी, अंजड़, राजपुर, ठीकरी, पाटी, सिलावद क्षेत्र में भील, भीलाला और पटेल समुदाय के कृषकों की संख्या अधिक है। जिले के लगभग 95 प्रतिशत जनजाति सदस्यों के पास रोजगार का एकमात्र स्त्रोत कृषि है। शेष सदस्य मजदूरी करते हैं। नाममात्र के जनजाति लोगों को सरकारी नौकरी का लाभ मिल सका है। जिलें में खरगोन-बड़वानी संयुक्त लोकसभा सदस्य का पद अनुसूचित जनजाति वर्ग के लिए आरक्षित है एवं साथ ही बड़वानी क्षेत्र की सभी चारों विधानसभा भी अनुसूचित जनजाति वर्ग के लिए आरक्षित है।

बड़वानी जिलें के अनुसूचित जनजाति वर्ग के सेंधवा के जनप्रतिनिधि श्री अंतरसिंह आर्य मध्यप्रदेश सरकार में पशुपालन मंत्री है। सांसद श्री सुभाष पटेल राजपुर क्षेत्र के निवासी है। दूसरी ओर जिलें में अनुसूचित जनजाति वर्ग के श्री सुखलाल परमार लगभग पांच वर्षो से कांग्रेस जिलाध्यक्ष के पद पर सुशोभित है। जिलें के अन्य अनुसूचित जनजाति वर्ग के राजनेताओं में सबसे प्रमुख नाम राजपुर विधायक श्री बालाबच्चन का है जो पूर्व में मंत्री भी रहे हैं। श्री मकनसिंह सोलंकी पूर्व सांसद, श्री प्रेमसिंह पटेल पूर्व विधायक बड़वानी, श्री दीवानसिंह पटेल, विधायक पानसेमल, श्री ग्यारसीलाल रावत पूर्व विधायक आदि शामिल है। इसके अतिरिक्त श्री धन्नालाल पटेल और श्री संजय पटेल अंजड़ मण्डी अध्यक्ष रहे हैं। अनुसूचित जनजाति वर्ग के बड़े पदों पर स्थापित जनप्रतिनिधियों के संरक्षण एवं सहयोग के बाद भी इस वर्ग के कृषक सदस्यों के हितों की रक्षा वास्तविक रुप से करने में असमर्थ प्रतीत हो रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972, भोपाल
2. राधामोहन, श्रीवास्तव : भारतीय कृषि की समस्याएं, सहकारिता एवं विपणन, म. प्र. भोपाल
3. कार्यालय कृषि उपज मण्डी समिति, बड़वानी, अंजड़, सेंधवा, बलवाडी व खेतिया से प्राप्त जानकारी
4. व्यक्तिगत साक्षात्कार पर आधारित।

****

लोक कला का व्यापक प्रचार प्रसार

प्रो.डॉ.रश्मि जोशी * ममता सिन्हा **

प्रस्तावना – लोक कला लोक मानस से प्रेरणा और पोषण पाती रही है, एवम् उसी को प्रतिबिम्बित करती है तथा जन साधारण का जीवन अति दुष्कर होते हुए भी सहज व सुखमय बनाती है तथा जीवन को खुशियों से भरपूर करते हुए उस महान देविक शक्ति के आगे नतमस्तक हो जाता है जिससे कोई पार नहीं जा सकता जो अनन्त, अजर तथा अमर है। अर्थात् इसी बहाने मनुष्य थोड़ी सी राहत की साँस लेता है तो फिर ये तीज-त्यौहार, पर्व, मेले-ठेले, अनुष्ठान आदि कैसे भुलाए जा सकते हैं? शायद इनका भविष्य और अधिक उज्जवल, आशापूर्ण व उत्साहजनक ही होगा, परन्तु यह अत्यन्त दुख का विषय है कि नगरों में जैसे-जैसे शिक्षा का प्रभाव बढ़ रहा है- लोक गीत, लोक चित्रकला, लोक कथाओं का भी लोप होता जा रहा है। प्राचीन मान्यताओं को भूल कर आज का शिक्षित वर्ग अपनी मान-प्रतिष्ठा के लिए धीरे-धीरे अपनी प्राचीन सभ्यता, रीतिरिवाजों को अनदेखा करता जा रहा है। आज की शिक्षित नारी तीज, त्यौहार, मेंहदी, महावर, अल्पना, बिन्दी, सिन्दूर लगाना ढकोसलेबाजी और अंध विश्वास मानती हैं तथा तीज-त्यौहार मनाना समय व्यर्थ गवाना मानती हैं। जिस श्रद्धा व विश्वास से गाँव की स्त्रियाँ लोक चित्रों का अंकन करती है, वो भावना शिक्षित स्त्रियों में लुप्त होती जा रही है। दीवारों पर चित्रांकन उनके लिए दीवारों को गंदा करना मात्र है। तस्वीर रखकर या बाजार से बनी-बनाई (छपी) तस्वीर लाकर पूजा कर लेना फैशन हो गया है। सड़कों पर कुंआ पूजने जाते समय गीत गाते चलना अच्छा नहीं समझा जाता है। पुराने श्रृंगार समाप्त होते जा रहे हैं, उनके स्थान पर 'ब्यूटी पार्लर' खुल गए हैं जहाँ रोज सौ पचास रूपये खर्च करना उनकी प्रतिष्ठा का सवाल बन गया है।

समय की तेज रफ्तार में जहाँ दुनियाँ की परिस्थितियाँ बदली हैं, वहीं लोगों की रूचि और रूझान भी बदले हैं ऐसे में इस कला के प्रति भी सन् 1984 ई. से दुनिया भर के लोगों के रूझान कम हुए हैं। अपने देश में भी इसके बाजार खत्म हो रहे हैं, हालाँकि सरकारी एवं संस्थागत स्तर पर इसके अस्तित्व को बरकरार रखने का प्रयास जारी है और इसके लिए अनेक स्वैच्छिक संस्थाएँ काम कर रही हैं। इसी कारण से अब मधुबनी गाँव की स्त्रियाँ मधुबनी आकारों में छपाई व ठप्पे का काम कर रही हैं। यह काम कपड़ों पर भी हो रहा है। यह बड़ी-बड़ी स्क्रीन पर अपने आप मधुबनी स्त्रियों को बनाकर कपड़ों पर उतारती हैं तथा लकड़ी के ठप्पों जैसे- चिड़िया, तोता, मोर हाथी, मछली आदि आलंकारिक नमूनों को बनवाकर कपड़ों पर बनाती हैं जिससे ये खोई हुई परम्परा को आगे ला रही हैं। चित्रों आजकल कम खरीदा जा रहा है। ये साड़ी, बेडशीट, पिलो एवं कुशन कव्हर आदि पर काम करके इस शैली को बढ़ा रही हैं तथा अत्याधिक लोग पसन्द भी कर रहे हैं। हाथ से बनी साड़ी को कलाकार मंहगी बेचते हैं तथा वही साड़ी बडे़-बड़े उद्योगों द्धारा मशीनों से स्क्रीनिंग कर सस्ते में मिल जाती है। आजकल बहुत से फैशन डिजाइनिंग स्कूलों, टेक्सटाइल आदि में इन नमूनों को देखा जा सकता है। वहाँ के शिक्षक इन नमूनों को बनवाकर इस कला को सबके आगे लाना चाहते हैं।

लेकिन विदेशी बाजार के खुलने के साथ ही, स्थानीय कलाकार का शोषण होने लगा, इन गरीब चित्रकारों को सरकार से मदद नहीं मिली बल्कि बहुत सस्ते में चित्र बेचने पड़ते थे, मिट्टी के बर्तनों पर कुछ समय पहले तक उत्तार बिहार (मिथिला) की लोक कला व शिल्प की विविधता व अच्छाई के विषय में कम ही ज्ञान था। दरभंगा जिले के गजेटियर में यह गलत ही लिखा था, कि इस क्षेत्र में कोई शिल्प कला नहीं है, इस गलत धारणा के कारण भी अनोखे हैं। हमें बताया जाता है, कि उत्तरी बिहार में शिल्पियों के लिए मुगलों ने कोई कारखाने नहीं खोले क्योंकि उनकी सेना व सेनापति इस उजाड़, बीहड़ व अविकसित प्रदेश में रहना नहीं चाहते थे, इस प्रकार इस क्षेत्र के निवासियों की कल्पना शक्ति को प्रबल बनाने में कई चीजों का योगदान रहा है। इसमें इन लोगों को शिल्पकारी की परम्परा व श्रेष्ठ सौन्दर्य बोध विकसित करने में सहायता की। इन लोगों ने अपने को सुन्दर व रंगीन वस्तुओं से घेरे रखने की इच्छा जागृत की, फिर चाहे ये वस्तुएँ जंगली बरसाती घास, सादी लाल मिट्टी या भड़कीले रंगीन टुकड़ों से बनी हो।

प्राचीन स्वावलम्बी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में हस्तशिल्पी का अस्तित्व रीति-रिवाज, परम्परा व उयोगिता के कारण हमेशा सुरक्षित रहा। शिल्पकार (नारी व पुरूष) की एक प्रतिष्ठा होती थी, व उसके प्रति समाज अपना दायित्व कभी नहीं भूलता था। इस प्रकार यह कला पिता से पुत्र, पुत्र से पुत्र को मिलती थी। इसी तरह माँ से पुत्री को, व पुत्री से पुत्री को। गाँव की हस्तकला में राजा महलों में पनपने वाली परिष्कृत कला में कोई अन्तर नहीं होता था। अन्तर था तो केवल परिपक्कता, कौशल व नए-नए प्रयोग करने का। इन हस्तकलाओं में हमें नक्काशीदार (खुदाई) लकड़ी की वस्तुएँ, पकी-मिट्टी के खिलौने, चाँदी के बने कोमल पर बारीक चित्र आदि मिलते है। बिना किसी संशय के हम कह सकते हैं कि इन कलाकृतियों में इन लोगों का जन्मजात सौन्दर्य, आकार, रंग व हस्तकलाएँ इनके जीवन का अभिन्न अंग थी। इसी कारण इन लोगों ने अपनी प्राचीन व अद्वितीय कलाओं को सुरक्षित करके रखा व इन्हें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को सौंपते गए। आज भी ये इन कृतियो को साधारण उपकरणों जैसे सुई, निबुआ, तकुआ, छैनी आदि से बनाते हैं। इन हस्तकालाओं को लम्बे समय से विश्वभर में मान्यता मिल चुकी है, और आज भी ये अपने सौन्दर्य व उपयोगिता के कारण कला प्रेमियों का ध्यान

*विभागाध्यक्ष (चित्रकला) सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शिवाजी नगर, भोपाल(म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शिवाजी नगर, भोपाल (म.प्र.) भारत

आकर्षित करते हैं।

अवसरो पर मनाए जाने वाले सामाजिक उत्सवों व धार्मिक पर्वो पर ये मिट्टे के खिलौने (आकार) बनाए समस्त हस्तकलाओं में से मिट्टी के खिलौने बनाने की कला सबसे प्राचीनतम कला है। यह कला, जो ग्रामीण लोगों में सबसे ज्यादा प्रचलित है, जो उनके सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालती है। ये मिट्टी के खिलौने युगों पुरानी गौरवशाली परम्परा का जीवंत नमूना हैं जो आज तक किसी न किसी रूप में जीवित हैं। ये हमें समयकालीन धार्मिक धारणाओं, मनोरंजन, पहनावे व आभूषणों व सभी के अध्ययन के लिए बहुमूल्य सामग्री देता है। वैशाली व मिथिला की और क्षेत्र पाए जाने वाले मिट्टी के खिलौने आम आदमी की इस अनोखी कला का एक प्रमाण है जिसका अस्तित्व समाज के उच्च व परिष्कृत वर्ग की अवहेलना व प्रोत्साहन की कमी के कारण कभी-कभी खतरे में पड़ गया।

कुछ अन्य घरेलू हस्तकलाएँ भी हैं, जो बिहार के गाँवों में गृहणियों द्वारा बनाई जाती हैं इसके अतिरिक्त सजावटी खिलौने व अन्य वस्तुएँ जो विभिन्न रंग के कपड़ों व धागों से तैयार की जाती हैं। पंखे, कढ़ाई, सिक्की, मूंज व बाँस से बनी टोकरियाँ भी बिहार की ग्रामीण महिलाओं द्वारा बनाई जाती हैं।

मिट्टी के बर्तन व खिलौनों में प्रयुक्त प्रतिभाशाली नमूने हर ग्रामीण क्षेत्र में प्रचलित थे। लोक परम्परा की पुष्टता, पूरे बिहार में आज भी बनने वाले मिट्टी के बर्तन व खिलौनों के आकार से दिखाई देता है।म वस्तुत: प्रत्येक क्षेत्र व प्रत्येक गाँव की बर्तन बनाने व खिलौने बनाने व सजाने की अपनी अलग शैली है। इन संस्कारों से जुड़े मिट्टी के खिलौने (आकार) उतने ही उत्ताम हैं जितने की उत्खनन जाते हैं यह परम्परा उन स्थानों में भी कायम है जो अभी भी खेती बाड़ी से संबंधित कस्बे हैं। किसी भी गाँव में प्रवेश करने से पहले हमें ग्राम देवता दिखाई पड़ते हैं जो गाँव के रक्षक माने जाते हैं। कभी ये वृक्ष के नीचे रख दिए जाते हैं व कभी इन्हीं के लिए बनाए गए बाँस के ओसारे में। मिट्टी की कृतियों की सबसे श्रेष्ठ परम्परा मिथिला में पाई जाती है। यहाँ के कुम्हार परिवार विवाह के लिए हाथी, बाह्य स्थान के लिए घुड़सवार, उत्सवों व समारोहों के लिए विशेष सजावट के बर्तन और कलश, छोटे बच्चे के लिए खिलौने जिन्हें वे मेले से खरीद सकते थे बनाते आए हैं।

कुछ अन्य घरेलू हस्तकलाएँ भी हैं, जो बिहार के गाँवों में गृहणियों द्वारा बनाई जाती हैं इसके अतिरिक्त सजावटी खिलौने व अन्य वस्तुएँ जो विभिन्न रंग के कपड़ों व धागों से तैयार की जाती हैं। पंखे, कढ़ाई, सिक्की, मूंज व बाँस से बनी टोकरियाँ भी बिहार की ग्रामीण महिलाओं द्वारा बनाई जाती हैं।

इसी प्रकार सिक्की, मूंज व कपड़ों के टुकड़ों से बनी अन्य सजावटी व दैनिक उपयोगी वस्तुओं जैसे सिक्की की बनी मिथिला की पौती (पिटारी), सिंदूरदान में रंग, आकार व बनाने के तरीके में एक स्पष्ट समानता दिखाई पड़ती है।

यही विशेषता हमें पीतल के पॉलिश किए बर्तन व लकड़ी के छोटे डिब्बों (जिनका ढक्कन गोल झोपडी या मंदिर के आकार का होता है) में देखने को मिलता है। यह डिब्बा विवाह संस्कार से जुड़ा है। इसे हमारे यहाँ पदकीतवजंद्ध सिन्धरोटा कहा जाता है और इसका आकार वही मन्दिर या गोल झोपड़ी के समान होता है। इस लकड़ी के डिब्बे का रंग हमेशा लाला होता है। कभी-कभी इस पर रूचिकर सुन्दर आकृतियाँ जैसे मोर व मछली बने होते नन्हे मिट्टी के खिलौने चाहे वे पके हो चाहे कच्चे उस समय के लोगों की सम्पूर्ण सोच (दृष्टिकोण) की झलक देते हैं। कई मायनों में ये कृतियाँ, अपने समकालीन, सहित्यिक व दार्शनिक ग्रन्थों के मुकाबले में इन लोगों के विचारों व आकांक्षाओं का ज्यादा सटीक लेखा-जोखा देने में सक्षम हैं यह सच है कि हमें इन मिट्टी की आकृतियों से लोक जीवन का पूर्ण ज्ञान नहीं होता, लेकिन इनमें हमें कुछ सदियों पुराने आकार भी मिलते हैं जो आज भी बनाए जाते हैं।

कश्मीर का कशीदाकारी का काम है उसी तरह बिहार के कशीदाकारी का काम भी बहुत प्रसिद्ध है, यह अधिकतर रोजमर्रा के प्रयोग होने वाले कपड़ों पर की जाती है जैसे- साड़ी, ब्लाउज, टोपी, स्कार्फ, ताना, औढ़नी, बच्चों की टोपी और घर के वस्त्र, मेज के लिए लिनन के कपड़े पर, तकिए के खोल, कुशन खोल, रजाई, बिस्तर पर बिछाने वाली चादरें आदि पर की जाती है यद्यपि लोक कला का काम कश्मीर में आदमी करते हैं उसी प्रकार बिहार में औरतें करती हैं।

दूसरी प्रकार की कढ़ाई भारत है जो पंजाब के बाघ से मिलती जुलती है। भारत कढ़ाई का काम ताने और बाने की दिशा में समानान्तर बुनाई से भरा है पृष्ठभूमि प्राय: लाल है जिस पर कढ़ाई में सफेद, हरे या पीले से काम हुआ है किसी समय सफेद पृष्ठभूमि पर भारत काम में काला, नीला या ग्रे रंग हुआ होगा। नमूने में ज्यामितीय आकार, लहरदार, हीरा, वर्ग के अन्दर साधारण फूलों को लपेटते हुए, बाघ शैली के साथ किनारे-किनारे पुष्प संबंधी आकारों को भी नियुक्त कर शामिल किया गया है।

हाथ से बने हुए कागज, जो 'बसहा' कागज के नाम से मशहूर हैं, पर ये चित्र बनाए जाते थे जो अधिकांशत: पड़ोसी देश नेपाल से आता था, पर अब कारखानों में बने हुए कागज का प्रयोग होने लगा है। ये चित्र अर्थोपार्जन का अच्छा खासा साधन बन गए हैं, जब से इनकी माँग विदेशों में होने लगी है, अमेरिका आदि में क्रिसमस और नए वर्ष शुभकामनाओं के कार्डो पर ये काफी संख्या में उद्धत होने लगे हैं। इनकी माँग इतनी अधिक बढ़ गई है कि 'केन्द्रीय हेंडीक्राफ्ट एण्ड हैन्डलूम प्रामोशन बोर्ड' उन्हें पूरा करने में असमर्थ हो रहा है। गैर सरकारी व्यापारी भी गाँव की इन महिला चित्रकारों को बाजारू कागज, रंग आदि देकर काफी बड़ी संख्या में बनवा कर विदेश में भेजने लगे हैं, पर इन सबका परिणाम यह हुआ कि यह अपना प्राचीन व्यक्तित्व, प्राण, खोकर बाजारू बनती जा रही है, इससे जो एक ग्रामीण ताजगी थी वह अंतर्हित प्राय है। अर्थदृष्टि से यह भले ही वाँछनीय हो, पर कलात्मक दृष्टि से अवश्य ही नहीं है।

मधुबनी पेन्टिंग (चित्र) मंदिरों में ही नहीं लटकाए गए बल्कि वे अब आराम करने वाले कमरों व पाँच सितारा होटलों को सजाने के लिए भी प्रयोग हो रहे हैं क्योंकि वे भारत की महाकाव्य ओर पौराणिक गाथाओं का वर्णन करते हैं जो धार्मिक महान साहित्य, काव्यों व परम्पराओं को शामिल कर चुकी है।

सामाजिक और धार्मिक मूल्यों की पृथकता जो कि लोक कला को जीवित रखने में चारों और से तैयार थी पुपुल जयकर के प्रयत्नों ने आने वाले साठ वर्षों में अकाल की स्थिति में उनकी भावनाओं के विचार को देखा और स्त्री मुक्ति की पहचान और आर्थिक स्थिति में योगदान दिया। जब बिहार क्षेत्र की मैथिली स्त्रियों को अपने सदस्यों के साथ गाँव की झोपड़ियों की चार दीवारों के पीछे और पेपर पर चित्रित करने के लिए प्रोत्साहित किया था। स्त्रियों की शुरू से अनुभवी कला आर्थिक मुक्ति के मार्ग पर दूरवर्ती गाँवों में साधारण लोगों को जीवित रखती थी लेकिन ये कुछ समारोह में बाहर लाई गई है सीता देवी, गंगा देवी, मह सामाजिक और धार्मिक मूल्यों की पृथकता जो कि लोक कला को जीवित रखने में चारों और से तैयार थी पुपुल जयकर

के प्रयत्नों ने आने वाले साठ वर्षो में अकाल की स्थिति में उनकी भावनाओं के विचार को देखा और स्त्री मुक्ति की पहचान और आर्थिक स्थिति में योगदान दिया। जब बिहार क्षेत्र की मैथिली स्त्रियों को अपने सदस्यों के साथ गाँव की झोपड़ियों की चार दीवारों के पीछे और पेपर पर चित्रित करने के लिए प्रोत्साहित किया था। स्त्रियों की शुरू से अनुभवी कला आर्थिक मुक्ति के मार्ग पर दूरवर्ती गाँवों में साधारण लोगों को जीवित रखती थी लेकिन ये कुछ समारोह में बाहर लाई गई है सीता देवी, गंगा देवी, महासुंदरी देवी चित्रकार हैं । ।सुंदरी देव वर्तमान में मिथिला के कलाकारों द्धारा बनाए गए चित्रित वस्त्र, मूर्तियाँ, पात्रों को जनसमाज बहुत अधिक पसन्द करता है। इस कलाकारी से प्रभावित एवं आकर्षित होकर अनेक व्यवसाईयों ने इसे अपने व्यवसाय के लिए पसन्द किया और उससे अधिक से अधिक धनोपार्जन कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिथिला की लोक चित्रकला सफलताएँ व असफलताए, अवधेश अमन पेज-64
2. मधुबनी पेंटिंग, उपेन्द्र ठाकर पेज -91
3. मिथिला की लोक चित्रकला सफलताएँ व असफलताए, अवधेश अमन पेज-61
4. मधुबनी पेंटिंग, उपेन्द्र ठाकर पेज -5
5. फोक आर्ट ऑफ नार्थ ईस्टर्न उत्तरप्रदेश, माथुर के.एन. पेज -92

****

मुण्डा आदिवासियों का जीवन, काफी परिश्रमी

रामजय नाईक *

प्रस्तावना – आदिवासी, आदिकाल से ही इस धरती माता की गोद में जीवन–व्यतीत करते आ रहे हैं। उनके लिए धरती पर जंगल –झाड, पहाड – पर्वत, पेड़–पौधे, नदी–नाला, पोखर–तालाब एवं बहती नदियाँ बिलकुल अपनी सी लगती है। धरती के इन सारी चीजों के बदौलत से ही इस समुदाय का जीवन सुखी और मंगलमय रहा है। इस प्राकृतिक उपहारों को प्रकृति के पुजारी (आदिवासी) बिसार नहीं पाते हैं। साथ ही इस समुदाय का जीतन काफि परिश्रमी रहा है। आज इस झारखण्ड राज्य में देखा जाय तो 32 प्रकार के जनजातियों का निवास स्थान है। सभी जनजाति अपने इस मातृभूमि के प्रति विशेष लगाव रखते हैं। सभी का इस भूमि पर अटूट विश्वास है। जिसमें मुण्डा जनजाति, जो आदिकाल से प्रकृति के उपासक हैं। ये प्रकृति को संरक्षण करने में, पौधा रोपन और रक्षा करने में सदियों से जाने जाते हैं। ये भारतवर्ष की एक अति प्राचीन जाति है। प्राचीन काल में ये सिन्धु घाटी में रहा करते थे। वहाँ से ये कालिबोंगा उतरप्रदेश की मण्डी होते हुए वर्तमान झारखण्ड राज्य में आ बसे। संख्या की दृष्टि से मुण्डा झारखण्ड प्रदेश में सबसे अधिक उसके बाद उड़ीसा के उतरी भाग में सबसे अधिक पाये जाते हैं। उसके बाद असम, मध्यप्रदेश, बंगाल, अण्डमान, बंगलादेश में भी ये लोग रहते हैं। मुण्डा अपने आप को होड़ो अर्थात ईन्सान कहते हैं। कुछ लोग कहते हैं मुण्डा शब्द का अर्थ सम्पन्न व्यक्ति। कुछ लोगों का कहना है कि मुण्डा नाम आर्य लोगों के द्वारा दिया गया है। मुण्डा नाम आर्य लोग इन्हें मुण्ड कहकर पुकारते थे जिसका अर्थ होता है मस्तिष्क, अर्थात जिनका मस्तिश्क है। कुछ लोग सोचते हैं मुण्डा शब्द मुहुन्ड शब्द से आया है जिसका अर्थ है –पहला अर्थात पहला निवासी या मूल निवासी।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार शोध पत्र को तैयार किया गया है। इसके साथ–साथ पत्र–पत्रिकाओं और जर्नल के माध्यम से भी सन्दिर्भित करने का प्रयास किया गया है। तथा विद्वानों का मार्गदर्शन भी सामाहित है।

उद्देश्य :

मुण्डा जनजाति का सामाजिक वर्गीकरण :

क. गाँव

ख. समाज

ग. सांस्कृतिक, पर्व –त्यौहार

घ. कृषि –कार्य

ड. अन्य

क. गाँव – मुण्डा जाति जन्म से ही प्रकृति के उपासक हैं। प्रकृति में इनका रहना, खाना, पीना, सोना और इसी तरह कृषि से संबंधित अन्न उगाना इनका दिनचार्या है। इसी तरह इनके गाँव भी पहाड़ियों की चोट्यिों पर बसे होते हैं। ये हमेशा पहाड़ियों के क्षेत्र में रहना पसन्द करते हैं। क्योंकि, उन पहाडियों से तुरन्त में उन्हें लकड़ी, पानी और कृषि हो सके। जिसे अपना जीवन यापन कर सके। इनका एक छोटी सी परिवार के लिए मकान होते हैं जो काफि लम्बे –चौड़े हुआ करते हैं। इन मकानों के बीच में एक चबूतरा होता है।

ख. समाज – मुण्डा जाति का समाज बहुत ही समृद्ध है। ये अपने समाज में संगठित हैं। वहीं कोई भी सामाजिक कार्य हो तो सभी मिल के किया करते हैं। समाज में ये सुशान्ति व्यवस्था बनाए रखते हैं। इसी के संबंध में डॉ. सुभाश चन्द्र मुण्डा लिखते हैं कि –'मुण्डा लोगों का समाज अत्यंत ही सुसंगठित है। यह समाज पितृसतात्मक है जिसमें पिता की प्रधानता होती है। पिता की सम्पति पर बेटों का अधिकार होता है। बेटी कुंवारी रहने तक ही बाप की सम्पति का उपभोग कर सकती हैं।' परिवार, मुण्डा जनजाति का एक महत्वपूर्ण भाग है। इस जनजाति में मुख्यत: दो तरह के परिवार पाये जाते हैं :–

एकाकी परिवार

संयुक्त परिवार

एकाकी परिवार में माता –पिता और उनके बच्चे होते हैं जबकि, **संयुक्त परिवार** में माता –पिता और बच्चों के अलावे चाचा –चाची और उनके बच्चे भी शामिल रहते हैं। आज कल प्राय: शादी के बाद स्वत: लडके अलग हो जाते हैं। [1]

समस्याऐं :

1. पूँजीपतियों द्वारा समय पर मजदूरी नहीं देना यह एक विकट समस्या है।
2. आदिवासियों के साथ भेदभाव अधिक होता है।
3. शिक्षा से आज भी वंचित है यह सबसे बड़ी समस्या है।

समाधान – इस प्रकार से मुण्डा जनजाति अपने समाज के नियम को कठोरता के साथ नियम का पालन करते हैं। ये कोई भी सामाजिक कार्य को अपने सामाज के पूछे बगैर नहीं कर सकते। गलत कार्य करने पर समाज उसे दंडित भी कर सकता है ऐसा लोगों का मानना है। अमरदीप होरो के अनुसार – 'गणराज्य ही मुण्डा समाज की प्रशासनिक ढाँचा है। मुण्डाओं की प्रशासन एक जीवन्त एवं व्यावहारिक लोकतंत्र का आदर्श नमूना है। मुण्डा आदिवासियों ने ऐसा एक जीवंत लोकतंत्र का विकास किया है या जिसे लोकतंत्र से भी अधिक लोकतंत्र माने जाते हैं। मुण्डाओं की समाज व्यवस्था गणराज्य होने पर भी प्रत्येक राज्य अपने आप में प्रभुत्व सम्पन्न है एवं पूर्ण स्वतंत्र रूप से काम कर सकता है। प्रत्येक राज्य की अस्तित्व के लिए दूसरों राज्यों का अस्तित्व रहना ही होगा, ऐसा कोई नियम नहीं है।'[2]

* सहायक प्रध्यापक (नागपुरी) जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग कार्तिक उराँव महाविद्यालय, गुमला (झारखण्ड) भारत

ग. सांस्कृतिक एवं पर्व –त्यौहार – पर्व –त्यौहार हमारे जीवन का एक प्रमुख आधार माना जाता है। यह मनुष्यों के बीच खुशी और उमंग का संचार करता है। यह पर्व को लेकर लोगों में काफि दिनों से उमंग देखने को मिलता है। यह दु:ख को हर लेता है और सुख बरसाता है। पर्व –त्यौहार हमारे मन की शीतलता को उजागर करता है जिसे हम खुशी से झूमने के लिए मजबूर हो जाते हैं। साथ ही झारखण्ड राज्य में विभिन्न जनजातियाँ होने के नाते सभी अलग –अलग नियमों से मन की अशान्ति को मिटाते हैं। जिसमें मुण्डा जाति, जिनका प्रमुख पर्व सरहुल, करमा, जितिया, देवठान, सोहराय अन्य हैं। ये पर्व में कोई प्रकृति से जुड़ा हुआ है तो कोई घरेलू पशुओं से। डॉ. बिमला शरण शर्मा के मतानुसार –'मुण्डा के मुख्य पर्व सरहुल, करमा, सोहराई, माघे, फागु, नवाखानी, जीतिया, अनौबा आदि हैं। अधिकांश पर्व कृषि और प्रकृति से जुड़े हैं। सरहुल मुख्य और महत्वपूर्ण पर्व है जिसे 'बा' पर्व कहते हैं। यह पर्व बसंत ऋतु (मार्च –अप्रैल) में मनाया जाता है। यह फूलों का पर्व है। सखुआ फूल को सरना में रखकर पूजा की जाती है। गाँव का पाहन सभी मुण्डा देवताओं की अभ्यर्थना करता है। यह पर्व कई दिनों तक चलता है। अखड़ा में धूम – धाम से नाच –गान होता है। लोग अपने घरों में पूजा करते हैं।'[3]

घ. कृषि – कार्य – भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ पर अनेक प्रकार की फसलों से संबंधित खेती – बारी की जाती है। जिनमें प्रमुख फसल धान है। यह फसल को उगाने के लिए कई दिनो से लोगों को काफी मेहनत करनी पड़ती है। इस फसल को उपजाने में आज हमारे मुण्डा आदिवासी, जो आदिकाल से काफी परिश्रमी रहे हैं। इन लोगों का सारी मेहनत –जल, जंगल और जमीन से जुडा हुआ है। गर्मी के चिलचिलाती धूप में दिनभर हल चलाते, वहीं बरसात में मिट्टी से लतपथ होते और बसन्त ऋतु में तो कहना ही नहीं है। बसन्त ऋतु में वे घर, गाँव, परिवार और देश की सेवा करते हैं। इतना ही नहीं मुण्डा आदिवासीयों का जंगल बचाने में भी महत्वपूर्ण हाथ है। क्योंकि, इन लोगों का प्रकृति के साथ अटूट रिश्ता है। वे प्रकृति से हमेशा से प्रेम करते आये हैं। धरती माँ, जो विभिन्न प्रकार के अन्न उपजाने में मदद करती है। वे अपने संतान प्रकृति के पुजारी (आदिवासी) को हमेशा रक्षा प्रदान करती है। मुण्डा, परिश्रमी तो होते ही हैं इनके अलावे वे सच्चाई, इमानदारी के साथ –साथ दयालु भी होते हैं। इनलोगों का कहना है कि मेहनत ही हमारा कर्म और इमानदारी, सच्चाई हमारा धर्म है। आदिवासी गाँवों में एक कहावत है – मुण्डा जब तक हँस रहे हैं समझो ठीक है, लेकिन उनकी चुप्पी जब निराशा बनकर उभरने लगती है तो समझो पहाड दहकने वाला है। इनका मानना है कि दूसरों को मदद करना अच्छाई दर्शाता है लेकिन खुद का या अपने समाज का नुकसान करना या अपने लिए आवाज न उठाना अवगुण है।

निश्कर्श :– प्रस्तुत लेख से यह ज्ञात होता है कि मनुश्य को हमेशा परिश्रम करते रहना चाहिए बल्कि, परिश्रम से उन्हें पीछे नहीं हटना चाहिए। परिश्रम ही मनुष्य के सफलता की कुंजी है। यह कुंजी को पाने के लिए मनुष्य काफी कठिनाईयों को सहन करते हुए आगे बढ़ता है। और जो व्यक्ति अपने –आप में यह सहन को महसुस करता है उसका मंजिल काफी करीब आने लगता है। मनुष्य को कोई भी कार्य एक बार नहीं बल्कि सौ बार प्रयास करनी चाहिए। फिर देखिए वह कार्य आसान एवं पूर्ण रूप से सफल हो जाएगा। इसी के संबंध में कवि लिखते हैं कि –

करत –करत अभ्यास, जड़मत हो सुजान।
रसरी आवत जात की, सिल पर परत निशान।।

प्रस्तुत पंक्ति में कहा गया है कि कोई भी कार्य हो, उसे बार –बार अभ्यास करने से वह कार्य आसानी से सफल हो जाता है, अर्थात एक मुलायम रस्सी जो कुएँ में पानी भरने के उपरान्त आने –जाने के क्रम में वह कठोर पत्थर को गढ्ढा कर देता है। इसी तरह मनुष्य को भी एक रस्सी की भाँति होनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुण्डा डॉ. सुभाष चन्द्र (पंच परगाना के मुण्डाओं पर हिन्दु धर्म का प्रभाव, पृ. संख्या 23 – 24 तक)
2. होरो अमरदीप (मुण्डा आदिवासियों का समाज संस्कति और इतिहास, पृ. संख्या 11 से)
3. मुण्डा डॉ. सुभाष चन्द्र (पंच परगाना के मुण्डाओं पर हिन्दु धर्म का प्रभाव पृ. संख्या 45 से)

****

संत रविदास के मानवीय मूल्य का समाज पर प्रभाव

प्रदीप कुमार साकेत *

प्रस्तावना – मानवीय मूल्यों के सन्दर्भ में वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक धर्मग्रन्थों, साहित्यों की यात्रा से रंगे संत रविदास के जीवन मूल्यों के द्वारा सामाजिक मूल्यों को लेकर होता रहा है। जहाँ पर समाज के प्रबुद्धिजीवी संत रविदास ने मानव मन की भावनाओं का प्रयास किया है। वहाँ जीवन की अनेक घटनाओं का वर्णन मिलता है। इस अथक प्रयास के द्वारा मानव समाज का अतिसय सामाजिक विवसता का परिणाम मानव समाज का परिणाम ही रहा है। ऐसी विसंगतियों के परिणाम स्वरूप मानव की विवसता का मूल्य ही है। जहाँ धर्म युग की कल्पना की जा सकनी महत्वपूर्ण है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में द्वितीयक शोध सामाग्री का प्रयोग कर शोध पत्र को तैयार कियास गया है। इस हेतु विषय शीर्षक **संत रविदास के मानवीय मूल्य का समाज पर प्रभाव इस शोध पत्र को सन्दर्भित करने के लिए** संत रविदास के साहित्य का अध्ययन कर शोध पत्र को तैयार किया गया है।

उद्देश्य :

1. संत रविदास के सामाजिक चिन्तन का अध्ययन करना।
2. संत रविदास ने मानवीय मूल्यों को सर्वोपरि माना।
3. संत रविदास ने समाज के मूल्यों को एक ऐतिहासिक परिदृष्य प्रदान किया।
4. मूल्य शास्वत सत् है।
5. मूल्य हमेंशा जीवन संरक्षक रहे हैं।

समस्या :

1. मूल्यों के क्षरण से समाज में विसंगतियाँ आ रही हैं।
2. मूल्यों के बिना मानव समाज में पशुवत् व्यवहार दिखाई देता है।
3. मूल्यों के विघटन का कारण आधुनिकीकरण की गलत धारणा है।
4. विघटित मूल्यों ने मानव को झूठ बोलने के लिए प्रेरित कर दिया है।
5. आधुनिक यंत्र झूठ का साधन बन गया है।
6. मोबाईल फोन से घर बैठे व्यक्ति अन्य जगहों का आगाज करा देता है।

समाधान – मूल्यों को संत रविदास ने सजाया और सवारा है। मूल्यों के अर्थ में समाज में मानव का जीवन एक बहुआयामी है। जीवन के अनेक क्षेत्रों में मानवीय मूल्य का शब्द अनेक अर्थो में उपयोग किया जाता है। एक तो अर्थ की दृष्टि से पैसे को भी मूल्य शब्द से सम्बोधित किया गया है। दूसरा मानवीय जीवन में मूल्य को सामाजिक व्यवहार की के रूप में किया गया है। जिस प्रकार से भारतीय समाज में वृद्धों की सेवा करना पुण्य समझा जाता है। उसे प्रकार प्यासे को पानी पिलाना भी एक पुण्य का काम है। इसे मानवीय मूल्यों का घोतक कहा जाता है। व्यक्ति को अपने जीवन के प्रति जितना प्रेम है उसी प्रकार दूसरे के जीवन से भी प्यार करना चाहिए। चाहे जीव हो या जगत् हम उतना ही प्रेम मूल्यों के रूप में कर सकते हैं।

हिन्दी में मूल्य शब्द संस्कृत की मूल धातु से उदघृत किया गया है। जिससे यत् प्रत्यय के लगाने से जिसका अर्थ मजदूर, किराया भाड़ा या कीमत होती है।[1]

अंग्रजी में मूल्य शब्द का अर्थ वैल्यू हैं। मूल्य और वैल्यू परस्पर पर्यावाची शब्द रहे हैं। मूल्य की तरह वैल्यू भी अनेक जगहों पर प्रयुक्त होता है। जिस प्रकार वैल्यूस ऑफ लाइफ, ह्यूमन वैल्यूज इस तरह मूल्य का प्रयोग किया जाता है। रैण्डम महोदय का मानना है कि 'वैल्यू का अर्थ उपयोगी से लिया गया है जबकि वर्थ का अर्थ मस्तिष्क और चरित्र के आध्यात्मिक गुणों से माना गया है।'[2] इसी प्रकार संत रविदास ने जीवन के अनेक पहलू को ईश्वरीय शिक्षा के जगत् को जोड़ दिया है। इसी में मानवीय मूल्यों का खजाना उत्पन्न होता है। मानवीय मूल्य मानव के उत्कृष्ट विचार और चरित्र को कहा जाता है। किसी व्यक्ति ने मेरी जान बचाई यह एक मानवीय मूल्यों की श्रेणी में आते हैं। जिसमें सामाजिक प्रक्रिया का मूल उन प्रवृत्तियों का मिलना है। जिससे मनुष्य को संतुष्टि प्राप्त होती है। जिस प्रकार से बघेलखण्ड की महिला कथाकारों ने भी सामाजिक और मानवीय मूल्यों की ओर सजगता का परिदृष्य दिखाया है। इस मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को मानवीय संवेदना से जोड़ना अधिक औचित्य होगा। क्योंकि मन और बुद्धि एक सिक्के के दो पहलू है। जहाँ बुरे विचार आते हैं उसके पहले एक बार अच्छे विचार भी मनस पटल पर आता है। किन्तु व्यक्ति की कुसंगति बुरे कार्यो की ओर आकर्शित कराती है। जिस प्रकार से 'पुलिस से नागरिकों की रक्षा की अपेक्षा की जाती है। यह उसके कर्तव्य का हिस्सा है मगर ड्यूटी पर शराब पीकर नशे में धुत्त हो जाना, बलात्कार करना, अक्षम्य अपराध है।'[3] किन्तु व्यक्ति अपने कर्तव्य की गंभीरता को नहीं समझता है। ऐसी विचार धारा को प्रवाहित करने वाले संत रविदास ने जीवन के अनेक मूल्यों को खोज निकाला है। ऐसे आचरण को मानवीय मूल्यों का आचरण कहा जा सकता है। इससे साफ जाहिर होता है। कि योजना बद्ध तरीके से किया जाने वाला कार्य ही सफल हो सकता है अन्यथा सफल नहीं हो सकता है। इसके लिए व्यक्ति में प्रतिरोध की क्षमता का उत्पन्न होना भी स्वभाविक है। इसी कारण मानव की अपनी जिज्ञासा का परिणाम ही साफ दिखाई देता है। इन्हीं परिस्थितियों में संत रविदास ने स्वयं के जीवन में चर्म उद्योगों से संबंधित कार्य करते हुए कभी भी ईश्वर से अलग नहीं हो पाये क्योंकि उन्होंने अपने जीवन में मूल्यों को अपनाया है।

संत रविदास के जीवन की अनेक घटनाओं ने मानवीय मूल्यों को उजागर कर दिया है। इससे यह परिणाम दिखाई देता है। कोई भी कार्य मनुष्य को छोटा और नीचा नहीं बनाता है। उसके लिए कर्म की सजगता ही मानव

* शोधार्थी (हिन्दी साहित्य) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

की असली पूँजी हैं। इसमें मानवीय संवेदना के नैतिक चरित्र का उत्कृष्ट प्रदर्शन होता है। ऐसी समाज के सौन्दर्य हैं जिनका जीवन हमेशा पवित्र रहा है। किन्तु वर्तमान में मानवीय मूल्यों को समाज की दृष्टि में खो दिया है। व्यक्ति का समाज के प्रति व्यवहार बहुत ही घृणित नजर आ रहा है। ऐसी अनेकों विसंगतियों के कारण मानव-मानव में भेद नजर आ रहा है। ऐसी अनेकों घटनाओं के कारण मानव-मानव में भेद दिखाई दे रहा है। जिसकी आवश्यकता मानवीय मूल्यों को पहचानने के लिए होती है। ऐसे मूल्यों के सृजन में रामधारी सिंह दिनकर कहते हैं कि 'मूल्यों से ही मानव का व्यवहार संयत होता है। मूल्य वे मान्यताऐं हैं जिन्हें मार्गदर्शक मानकर सभ्यता चलती रही है और जिनकी उपेक्षा करने वालों को परम्परा अनैतिक, उच्छृंखल या बागी कहती है।'[4]

इन्हीं मूल्यों के औचित्य को समझाने के लिए डॉ. हुकुमचन्द्र राजपाल के विचारों में मानवीय मूल्यों की एक औचित्य का पैदा कर देते हैं जो इस प्रकार है। 'धर्म, अर्थ, काम और मोझ भारतीय जीवन के प्राचीनतम मूल्य है और एक उच्चत्तम नैतिक जीवन और नैतिक ज्ञान को अभिव्यक्त करते हैं। मूलत: ये पुरूषार्थ साधन भी है और साध्य भी, जीवन की सर्वागीणता इन्हीं में समाहित है।'[5] जबकि मूल्यों एक स्वतंत्र तथ्य है। इसकी समालोचना ही मानव के साहित्य को जिन्दा करती है। इस प्रकार मानव का स्वभाव मूल्यों को छू लेता है। जिनके भाग्य और अभाग्य को मूल्य ही सबारता है। जहाँ मनुष्य स्वयं के भाग्य का निर्माणकर्त्ता नहीं बन पता है। इस तथ्य की व्याख्या में संत रविदास ने मानवीय मूल्यों का पुरोध ईश्वर की पराकाष्ठा को कहा है।[6] इन मूल्यों को ही सामाजिक मूल्यों के औचित्य का परिणाम ही माना जा सकता है। इस प्राकर सामाजिक परम्पराओं के बंधन ही प्रवल रूपों में देखे जा सकते हैं। ऐसी मान्यताओं को संत रविदास ने स्वयं के जीवन में एक राजधर्म जैसा निर्वहन करते हैं।[7] मूल्य हमेशा अकाट्य तथा सर्वमान्य स्वीकार किये जाते थे। उसी प्रकार सभी सामाजिक और वैचारिक विसंगतियों का परिणसाम ही ऐसे तथ्यों की परीक्षा करता है। जहाँ मूल्यों का औचित्य दिखाई देता है। इस प्रकार का मूल्य मानवीय मूल्यों की श्रेणी में आते हैं। जिस प्रकार से मानवीय संवेदना का शिकार कोई भी व्यक्ति समाज और औचित्य का परिणाम ही ढूढ़ता है। जहाँ समाज और संस्कार का परिणाम ही सामाजिक व्यवस्था का परिणाम मानवीय जीवन की संभावनाओं पर जीता है। इन्हीं सन्दर्भों के परिणाम स्वरूप मानवीय संवेदना का औचित्य दिखाई देता है।[8] 'मनुष्य अपना कर्ताधर्ता स्वयं है। वहीं मूल्यों का निर्णायक भी है।'[9] मानव एक भौतिकवादी जीवन जीना प्रारम्भ कर दिया है। इस युग में मानवीय जीवन के सद्गुणों का औचित्य ही दिखाई देता है। वहाँ जीवन और जगत् की संभावनाऐं सामाप्त होती दिखाई दे रही है। इसी युग में मानवीय चिन्तन पेट भरने के लिए युद्ध हत्या लूट चोरी आदि कर रहा है।

निष्कर्ष – भारत प्राचीन काल से ही मूल्यों से भरा स्मृद्धशाली राष्ट्र था। जहाँ नारी-पूज्य और देवता मानने की प्रथा विद्यमान थी। ऐसी अनेक घटनाओं का उल्लेख मिलता है। आदि काल से आने वाली प्रथाओं का भारतीय संस्कृति और समाज आज भी निभा रहा है। इसी परम्परा के कारण आज भी आधुनिकता का परिणसाम विचारों पर दिखाई देता है। वहाँ साहित्य और समाज की विचार ज्योति का परिणाम रहा है। वहाँ समाज और साहित्य दोनों जिम्मेदार है। जहाँ साहित्यकारों की रचना ने समाज को जाग्रत करने का कार्य किया है। वहाँ मानव समाज का एक विचित्र चेहरा भी सामने आने लगता है। उन प्रक्रियाओं के परिणाम स्वरूप मानव की जीवन यात्रा का विशाल परिदृश्य दिखाई देता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2016, पृ.812
2. The Random House of Dictionary of the English language, P. 1101
3. मीनाक्षी स्वामी, भूभल, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 131
4. रामधारी सिंह दिनकर, आधुनिक बोध, पृ.12
5. डॉ.हुकुमचन्द राजपाल, आधुनिक काव्य में नवीन जीवन-मूल्य, पृ. 19
6. डॉ. धर्मपाल सिंहल एवं डॉ. बलदेव सिंह 'बाछन', ब्रह्मर्षि रविदास, मानसी पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2014 पृष्ठ 61
7. भगवती प्रसाद निदारिया, संत कवि रैदास, इन्द्रप्रथ इटरनेशनल, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 21
8. डॉ. अरूण कुमार भगत, संत रविदास की रामकहानी दृष्टि और मूल्यांकन, संदर्भ प्रकाशन, दिल्ली, 2016, पृष्ठ 26-27
9. डॉ.देवराज उपाध्याय, साहित्य का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, पृ.179

****

मध्यप्रदेश में राष्ट्रीय सम-विकास योजना द्वारा किये गये विकास कार्यों का संक्षिप्त अध्ययन

डॉ. अजय वाघे *

मध्यप्रदेश में राष्ट्रीय समविकास योजना का परिचय - केन्द्र सरकार द्वारा योजना आयोग के माध्यम से देश के पिछड़े हुए राज्यों में कई विकास योजनाएँ क्रियान्वित कर उन क्षेत्रों का आर्थिक भौगोलिक विकास करने का प्रयास किया गया, परन्तु देश के कई क्षेत्रों में क्षेत्रीय असंतुलन की स्थिति पाई गई जिससे कुछ राज्यों का विकास हुआ तथा कुछ राज्य अविकसति रहे। अत: इस क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करने व पिछड़े हुए राज्यों का विकास कर उन्हें विकसित करते हुए देश में राष्ट्रीय समविकास योजना लागु की गई है।

(1) राष्ट्रीय समविकास योजना केन्द्र एवं राज्य सरकार के संयुक्त प्रयासों से देश के 27 राज्यों के लगभग 147 पिछड़े जिलों में वर्ष 2003-04 में लागू की थी।
(2) मध्यप्रदेश में यह योजना वर्ष 2004 के अप्रैल माह में प्रारंभ की गयी तथा इस योजना की अवधि तीन वर्षीय थी।
(3) मध्यप्रदेश में समविकास योजना 10 पिछड़े हुए जिलों क्रमश: खरगोन, बड़वानी, सीधी, सिवनी, मण्डला, बालाघाट, उमरिया, सतना, डिण्डोरी और शहडोल में लागू की गयी थी।
(4) योजना हेतु म.प्र. में 10 जिलों में प्रत्येक जिले को 15 करोड़ रूपये प्रतिवर्ष की दर से 3 वर्षो में 45 करोड़ रूपयें उपलब्ध कराये गयें।

राष्ट्रीय समविकास योजना में चयनित क्षेत्रों का आधार :
(1) ऐसे क्षेत्र जिनकी आबादी 1500 से कम है।
(2) ऐसे सूखा ग्रस्त क्षेत्र, जहाँ 5 प्रतिशत से कम क्षेत्र में सिंचाई होती है।
(3) ऐसे क्षेत्र जहाँ औसत से अधिक मातृत्व एवं शिशु मृत्यु दर हो।
(4) पेयजल समस्याग्रस्त क्षेत्र।
(5) ऐसे क्षेत्र जहाँ कृषि मज़दूरों की संख्या अधिक व उनकी मज़दूरी कम हो।
(6) ऐसे क्षेत्र जहाँ अनुसूचित जाति एवं जनजाति जनसंख्या का प्रतिशत अधिक है।

शोध-अध्ययन का उद्देश्य :
(1) गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रहे परिवारों की आर्थिक स्थिति का पता लगाना।
(2) भूमिहिन या सीमांत कृषक परिवारों का अध्ययन करना।
(3) योजना का लाभ ग्रामीण क्षेत्रों के परिवारों को मिला है, इसका अध्ययन करना।
(4) योजना हेतु पात्र हितग्राहियों का वास्तविक पिछड़ेपन के आधार पर चयन हुआ है, अध्ययन करना तथा जिले के वास्तविक पिछड़े क्षेत्रों का चयन हुआ है अथवा नहीं?
(5) मध्यप्रदेश के सम्पूर्ण हितग्राही क्षेत्रों को योजना का लाभ प्राप्त हुआ है, इसका अध्ययन करना।
(6) चयनित क्षेत्रों पर बजट अनुसार व्यय हुआ हैं, इसका अध्ययन करना।
(7) योजना के कार्य स्तरीय हैं, इसका अध्ययन करना।
(8) ग्रामीणों की जीवन शैली में वृद्धि हुई है, इसका अध्ययन करना।
(9) ग्रामों में कृषि कार्यों में विकास हुआ है, इसका अध्ययन करना।
(10)ग्रामीणों का आर्थिक उत्थान योजनानुसार हुआ है, इसका अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ :
(1) योजना का लाभ ग्रामीण व पिछड़े हुए क्षेत्रों को प्राप्त हुआ है?
(2) शासन द्वारा स्वीकृत राशि इस योजना पर पूर्ण रूप से यय की गई है?
(3) इस योजना से स्वरोजगार को बढ़ावा मिला है?
(4) ग्रामीणों के जीवनस्तर में वृद्धि हुई है?
(5) म.प्र. के पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का लाभ दिया गया है?
(6) सिंचाई के साधनों में योजना अनुसार वृद्धि हुई है?
(7) कृषि कार्यों को बढ़ावा मिला है।

योजना में संचालित गतिविधियां :
(1) कृषि आधारित गतिविधियाँ।
(2) वन आधारित गतिविधियाँ।
(3) मूलभूत सामाजिक अधोसंरचना का विकास गतिविधियाँ।
(4) आर्थिक अधोसंरचना के विकास की गतिविधियाँ।

योजना में संचालित गतिविधियों से प्राप्त लाभ की गुणवत्ता तथा औचित्य - राष्ट्रीय समविकास योजना के अंतर्गत प्रत्येक जिले को समान राशि का प्रस्ताव रहा है, जिससे निम्न कृषि उत्पादकता बेरोजगारी की समस्याओं का समाधान करने तथा अवस्थापन में कमी करने का प्रयास किया गया है। प्रत्येक जिले के लिये 3 वर्षीय कार्य योजना तैयार की गई है, जिससे उस क्षेत्र में विभिन्न योजनाओं से निधियों के प्रवाह का मूल्यांकन किया जा सके। विभिन्न पदों पर किये गये व्ययों का वर्णन निम्न है-
(1) स्वास्थ्य एवं पोषण -
(2) कृषि संबंधी कार्य योजना -
(3) शिक्षा एवं दक्षता विकास -
(4) सड़क विकास -
(5) विद्युत सुविधा -
(6) सिंचाई सुविधा -

* प्रभारी प्राचार्य व सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) विद्योदय महाविद्यालय, मनावर, जिला - धार (म.प्र.) भारत

स्वास्थ एवं पोषण : मध्यप्रदेश में स्वास्थ्य संबंधी कार्य की स्थिति

जिला	कार्य की संख्या	व्यय (लाख रू.)	औसत (प्रति कार्य लाख रू.)
मण्डला	230	413.11	1.80
बड़वानी	127	381.50	3.00
खरगोन	197	621.50	3.15
शहडोल	229	601.45	2.63
सीधी	79	178.54	2.26
उमरिया	159	374.00	2.35
डिंडोरी	390	585.50	1.50
बालाघाट	67	339.00	5.60
सिवनी	45	176.00	3.91
सतना	-	-	-

(स्त्रोत :- म.प्र. संचालनालय भोपाल व जिला पंचायते म.प्र.)

कृषि संबंधी कार्य योजना : मध्यप्रदेश में कृषि संबंधी कार्य की स्थिति

जिला	कार्य की संख्या	व्यय (लाख रू.)	औसत (प्रति कार्य लाख रू.)
मण्डला	112	556.31	4.97
बड़वानी	268	1055.8	3.94
खरगोन	201	1395.89	6.94
शहडोल	132	692.00	5.24
सीधी	147	992.86	6.75
उमरिया	163	854.15	5.24
डिंडोरी	20	124.87	6.24
बालाघाट	-	-	-
सिवनी	-	-	-
सतना	-	-	-

(स्त्रोत :- म.प्र. संचालनालय भोपाल व जिला पंचायते म.प्र.)

शिक्षा एवं दक्षता विकास : मध्यप्रदेश में शिक्षा संबंधी कार्य की स्थिति

जिला	कार्य की संख्या	व्यय (लाख रू.)	औसत (प्रति कार्य लाख रू.)
मण्डला	15	132.38	8.83
बड़वानी	12	112.29	9.36
खरगोन	48	422.36	8.80
शहडोल	51	451.81	8.86
सीधी	49	431.24	8.80
उमरिया	39	299.50	7.68
डिंडोरी	24	177.00	7.638
बालाघाट	40	384.00	9.63
सिवनी	125	835.73	6.69
सतना	35	281.38	8.04

(स्त्रोत :- म.प्र. संचालनालय भोपाल व जिला पंचायते म.प्र.)

सड़क विकास : मध्यप्रदेश में ग्रामीण सड़क कार्य की स्थिति

जिला	कार्य की संख्या	व्यय (लाख रू.)	औसत (प्रति कार्य लाख रू.)
मण्डला	33	714.55	21.65
बड़वानी	05	106.36	21.27
खरगोन	04	92.23	23.06
शहडोल	06	175.91	29.32
सीधी	20	338.17	16.91
उमरिया	27	333.26	12.34
डिंडोरी	40	309.72	7.74
बालाघाट	12	542.00	45.18
सिवनी	04	143.00	35.75
सतना	10	431.79	43.18

(स्त्रोत :- म.प्र. संचालनालय भोपाल व जिला पंचायते म.प्र.)

विद्युत सुविधा : मध्यप्रदेश में विद्युतिकरण कार्य की स्थिति

जिला	कार्य की संख्या	व्यय (लाख रू.)	औसत (प्रति कार्य लाख रू.)
मण्डला	55	165.40	3.01
बड़वानी	05	28.06	5.61
खरगोन	12	75.92	6.33
शहडोल	04	15.00	3.75
सीधी	15	64.88	4.33
उमरिया	08	36.29	4.54
डिंडोरी	07	44.59	8.37
बालाघाट	05	29.32	5.86
सिवनी	73	126.88	1.74
सतना	62	196.18	3.16

(स्त्रोत :- म.प्र. संचालनालय भोपाल व जिला पंचायते म.प्र.)

सिंचाई सुविधा : मध्यप्रदेश में सिंचाई संबंधी कार्य की स्थिति

जिला	कार्य की संख्या	व्यय (लाख रू.)	औसत (प्रति कार्य लाख रू.)
मण्डला	17	253.07	14.89
बड़वानी	12	501.57	41.80
खरगोन	42	445.02	10.60
शहडोल	71	1545.20	21.76
सीधी	10	413.05	41.31
उमरिया	13	226.04	17.39
डिंडोरी	79	629.03	7.96
बालाघाट	18	176.78	9.82
सिवनी	47	542.26	11.54
सतना	53	598.30	11.29

(स्त्रोत :- म.प्र. संचालनालय भोपाल व जिला पंचायते म.प्र.)

निष्कर्ष - उपरोक्त वर्णित तालिकाओं के आधार पर स्पष्ट है कि योजना द्वारा सभी आवष्यक मूलभूत गतिविधियों को शामील कर एक संतुलित विकास करने का प्रयास किया गया है, जिसमें स्वास्थ्य, कृषि, शिक्षा, सड़क, विद्युत व सिंचाई जैसी महत्वपूर्ण मदो पर कार्य कर प्रदेश के पिछड़े हुए 10 चयनित जिलों का विकास कर उन्हें मुख्य धारा से जोड़ा गया है, फलस्वरूप स्वरोजगार को बढ़ावा मिला है, साथ ही प्रतिव्यक्ति आय में भी वृद्धि दर अधिक रही है। बालाघाट, सिधी तथा मण्डला जिलों में कृषि संबंधित तथा सतना जिले में स्वास्थ्य संबंधित कार्य संख्या शुन्य रही है, अत: अत्यंत पिछड़े जिलों का आंशिक विकास हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

NAM And The Role Of India : An Analysis

Dr. Varsha Upadhyay*

Introduction - The Non-aligned Movement has greatly helped the cause of peace and Disarmament. The historic role of the Non-aligned nations in U.N.O. for peace and disarmament is a fascinating subject for study. The Non-aligned movement is the voice of the people of the world who aspire for global peace and Disarmament. The policy and the movement of Non-alignment were responsible for easing international tensions and spreading the idea of Disarmament. Disarmament is the only hope of mankind today in the existing rivalry of super powers. If Disarmament comes true, then the part of the resources utilized for the manufacture of armaments can be diverted for economic development of the under developed countries. This will motivate mutual trust and friendship between the countries and people .The United Nations Organization and Non-aligned Movement are two distinct structures serving the two different requirements of the global aspirations of human beings were established sixteen years apart-the me in i 945 and the other in 1961 . The maintenance of peace and security has been and continues to be the major pre occupation of the United Nations Organization since its inception.

The Non-Aligned Movement (NAM) was created and founded during the collapse of the colonial system and the independence struggles of the peoples of Africa, Asia, Latin America and other regions of the world and at the height of the Cold War. During the early days of the Movement, its actions were a key factor in the decolonization process, which led later to the attainment of freedom and independence by many countries and peoples and to the founding of tens of new sovereign States.[1]

The Ten Principles Of Bandung

1. Respect of fundamental human rights and of the objectives and principles of the Charter of the United Nations.
2. Respect of the sovereignty and territorial integrity of all nations.
3. Recognition of the equality among all races and of the equality among all nations, both large and small.[2]
4. Non-intervention or non-interference into the internal affairs of another -country.
5. Respect of the right of every nation to defend itself, either individually or collectively, in conformity with the Charter of the United Nations.
6. A. Non-use of collective defense pacts
B. Non-use of pressures by any country against other countries.
7. Refraining from carrying out or threatening to carry out aggression, or from using force against the territorial integrity or political independence of any country.
8. Peaceful solution of all international conflicts in conformity with the Charter of the United Nations.
9. Promotion of mutual interests and of cooperation.
10. Respect of justice and of international obligations.[3]

NAM At A Glance

1947 – NEHRU'S NON-ALIGNMENT - Since mid-1920s, the Indian National Congress, under Nehru's leadership, had resolved to support colonised peoples in struggle against imperialism.

1. Following independence, this anti-imperialist and anti-racist stance forms pretext for Nehru's "Non-Alignment" policy, entailing diplomacy independent of both former colonial overlords and increasingly entrenched Cold War blocs.
2. Non-Alignment based Panchsheel (the Five Principles of Peaceful Coexistence) signed in 1954 with China, and later with Burma, Laos, Nepal, Vietnam, Yugoslavia, and Cambodia.
3. Transformation of Non-Alignment from a concept to movement at 1955 Bandung Conference – a 10-point "declaration on the promotion of world peace and co-operation" incorporating Nehru's Five Principles is unanimously adopted[4]

Post-Nehru pragmatism :

1. Shift toward pragmatic diplomacy and discarding of idealistic pacifism gains pace following Nehru's death in 1964.
2. Defence spending surges, and a military modernisationprogramme to create a one million strong army begins, reflecting an increasingly "self-help" approach to foreign policy.
3. No formal abandonment of Non-Alignment, and this rhetoric continued despite Indian behaviour assuming more realist orientation[5]

1980'S Increased International Presence :

1. India continues to play preeminent role in regional af-

*Asst. Professor, Indore Institute Of Law, Indore (M.P.) INDIA

fairs, increasing its involvement in the UN peacekeeping operations.

2. 1985: Formation of South Asian Association for Regional Cooperation (SAARC) in an effort to forge regional integration.
3. 1987: India-Sri Lanka accord signed with the intention to end the Sri Lankan civil war. Per terms of the agreement, India sends peacekeeping forces to Sri Lanka
4. 1989: Outbreak of an armed insurgency in Kashmir Valley leads to violence, migration of Kashmiri Pandits and sets the stage for a long phase of militant violence

Deepening of Indo-U.S. Relations :

1. India shifts her focus to developing relations with the U.S., the only major remaining superpower in the world on the basis of shared democratic values
2. Aim of India's foreign policy is twofold – to maintain regional position while working towards a long-term goal of becoming a global superpower, which it feels the U.S. can help it accomplish[6]

Increased Engagement with ASEAN, BRICS and other Multilateralorganisations;a Trend Initiated by UPA and Continued by NDA

1. UPA government signs FTAs with South Korea (2010), Malaysia (2010), ASEAN (2010), and Japan (2011).
2. 2009: Emergence of the BRIC nations as rising economic powers.
3. 2014: Election of Modi government heralds increased international engagement, especially with Asian and ASEAN countries in the form of Act East Policy.
4. Modi government continues engagement with BRICS nations including the establishment of BRICS NDB.
5. India and other G4 nations pitch to become permanent members of the UN Security Council.[7]

India's Role In NAM - The term ''non-alignment'' owes its origin to India, ''It should be understood in the foreground of the ways of thinking of the Indian people who have been expressing a whole lot of positive and constructive ideas through negative expressions such as Ahimsa and truth''. The basic idea of Non-alignment was also communicate non-violent and peaceful co-existence with other power. India used non-violent as a Gandhian method of peacefully conflict-resolution. 8 The paramount concern of India at the time of independence was to consolidate its freedom, to keep intact its option open, to be able take decisions according to their own interests not because of other choice. India often used NAM values to deal other countries in the world politics. The Indian concept of NAM is value-based and dynamic in contemporary global scenario. Non-alignment has been the bedrock of India's foreign policy since its inception. In the demise of Cold War, when the world is no longer divided between two power blocs, the NAM has a renewed role to play in the new world order.

Implications Of NAM In Post-Cold War Era - Finally Non-alignment has often compared with isolationism (Monroe Doctrine) a policy had been adopting by the US to deals its Latin American neighbours. The Monroe Doctrine was adopted by the US President Monroe in 1823. US used Monroe Doctrine as an instrument of its neighbourhood policy to counter domination of European countries. The US feared European intervention in Latin American region. The US criticized and rebuked European countries to intervention in Latin American region. Latin American region was important for US security and its global aspiration.[8] The US introduced rules and regulations towards Latin American regional non-alignment strategy. The US approached indirectly regional non-alignment policy vis-à-vis to Latin America. After the demise of Cold War, some expertise of international relations raised the questions of relevance of NAM in changing world order. The real fact is that the NAM has formulated broader area and scope. Due to USSR collapse, the political bitterness in the relationship between the two blocs was end, but the Russia and China are more active against US and its western partner. That is why; we can say that the end of Cold War did not distress its relevance and scope. There is not denying the fact that after the demise of Cold War, the US is trying to align with the NAM countries. Many NAM countries are trying to deepen bilateral relationship with US. The US hegemony is affected the sovereignty and independency of Non-align countries. Recent Developments India's foreign policy has finally ridden itself of Cold War power politics trappings in favor of a comprehensive rendezvous with super powers. Several reasons can adduce India's budge from non-alignment to multi-alignment foreign policy especially after the cold war. Undeniably, policies adopted by India since the beginning of this century had helped generate a climate of trust across the gamut of warring nations and long-time antagonists. A spirit of accommodation and productive solutions to major regional and international challenges had also made India more acceptable to most nations.

The NAM countries engaged in some recent developments;

a) Criticism of US Policy & Hegemony
b) South-South Cooperation
c) Reforms in international organizations like, UN, IMF and WTO
d) Anti-Zionism
e) Cultural Diversity and Human Rights
f) International Terrorism
g) Climate Change
h) Sustainable Development
i) Platform of Developing & Third World Countries

Relevance Of NAM In Present Context - ''Non-alignment has been responsible to ever changing international relations and that it has been permissive of diversity and multiplicity of approaches consistent with a hard-core unity on same irreducible, minimum principles.''[9]

Since the end of the Cold War and the formal end of colonialism, the Non-aligned Movement has been forced to redefine itself and reinvent its purpose in the current world order. A major question has been whether many of its foundational ideologies, principles can be applied to the contemporary issues. The NAM has emphasized its

principles of multilateralism, equality and mutual understanding in attempting to become a stronger voice of developing and third world countries as well as an instrument that can be utilized and promote the needs of member countries. The concern of NAM since the beginning has been with the world peace in view of the nuclear arms race and the dangers of nuclear war, instead of solving problem, it has been mostly aggravated them. In the initial years, concern for international peace so overshadowed their politics, that their other efforts for development were virtually ignored. The NAM had always opposed the disarmament and nuclear expansion. We cannot ignore the role of NAM in recent time. They represent nearly two third of the UN members and comprise 55% of the world [10]population. Many of US and USSR former ally partner are became a members of NAM. All these factors indicated the importance and relevance of NAM in post Cold War era. The NAM is an international platform of developing and under developing countries. The NAM produce a platform as 'dialogue table' for developing world and it has done lot of for united these countries.

The Way Ahead - The Nonalignment platform could play a meaningful role for developing countries. This platform is the common voice of third world countries. It is considered as a positive and constructive movement in across the world. Therefore, we can say that Non-aligned agenda has immense important for future.

Conclusion And Suggestions - The termination of cold war doesn't mean that an end of world power domination/ hegemony. The NAM is too relevant in present context because the third world countries are being subjected to supremacy and exploitation on all kind of issues from economic to political and cultural. The aspirations of these countries are being crux down. Economic relations having become more essential in these days and the inner contradictions in G-8 groups, the NAM as a grouping can create a space for itself. The NAM would be proved a platform of developing countries in bargaining with the developed countries. There is not denying the fact that India considered NAM as a powerful force to reform the international system. India should try to utilize NAM as a voice of developing world. The NAM countries should adopt a constructive approach to combat Islamic radicalism across the world. India should play a positive role to strengthening the NAM as a global movement. India needs to utilize NAM forum as a 'collective consciousness' of developing and third world countries. The current unstable international security architecture posed a big challenge for NAM countries. The NAM plat forum can fulfill the aspirations of developing and third world countries. The NAM countries should not join any military alliance and must be abiding the agenda of NAM. The NAM countries should have pro-active vis-à-vis to global challenges. The NAM countries should tackle problems with coordinative approach. That is why; we can say that the importance and relevance of NAM is growing day to day. We should not have undermined the expansion of NAM as a global movement.

References :-

1. O. Suryanarayanan," Role of the non-aligned nations in U.N.O. for peace and disarmament 1960 - 1987 available at http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/50774/6/06_introduction.pdf last accessed on 7/25/2018 at 7.30 pm
2. http://namvenezuela.org/?us_portfolio=creative-project-image last accesed on 7/27/2018 at 3.30 pm
3. http://namvenezuela.org/?us_portfolio=creative-project-image last accesed on 7/27/2018 at 3.30 pm
4. https://www.gatewayhouse.in/wp-content/.../GH_History-of-Indias-Foreign-Policy.pdf last accesseed on 7/26/2018 at 6.30 pm
5. Supra note 5
6. Supra note 5
7. ibid
8. Supra note 9
9. ibid
10. Supra note 9

****

जगनी लक्ष्य: विश्व अखण्डता

डॉ. मनीषा दुबे *

प्रस्तावना – 'ए नेक कह्या मैं करने अखण्ड ए संसार'

भाषा विज्ञान के अनुसार एवं अध्यात्म शास्त्र के आधार पर सिद्ध है कि शब्द-तत्व की विलक्षण शक्ति होती है। इस विलक्षण शक्ति के अनुसार प्रत्येक शब्द अपने मूल अर्थ अथवा वाच्यार्थ के मूल गुण से सर्वाधिक शक्तिमान हो जाता है। जिस प्रकार वर्तमान युग में गाँधी शब्द अपने मूल अर्थ किसी जाति विशेष के व्यक्ति मोहनदास करम चन्द गांधी के विश्व वन्ध व्यक्तिव से व्यापक रूप से सार्वजनिक और सार्वभौमिक सबल सिद्ध हो गया। इसी प्रकार परमधाम से अवतरित ब्रह्मवाणी श्रीकुलजम स्वरूप मे ऐसे बहुत से लोकोत्तर दिव्य गुणों से अनन्त शक्ति सम्पन्न शब्द है, जो तारतमंत्र की दिव्य तरंगों से तरंगित आविष्ठ हैं, जैसे-सुन्दरसाथ 'प्रणाम' बीतक, और जागनी आदि, ये ऐसे दिव्य शब्द तत्व है, जो अपने शब्दार्थ के सर्वोपरि दिव्य गुणों से परमधाम के गौरव और गरिमा के अनुरूप अनन्त शक्तिशाली एवं विश्व-कल्याण प्रद है, उदाहरणार्थ तारतम सार जागनी विचार कहने को तो जागनी तीन अक्षरों का छोआ सा शब्द है, जेकिन इसतें परमधाम के ऐसे गुन रहस्य छिपे है, जिसे अपने आपकी वास्तविक पहचान होती है, अपने प्राण प्रियतम परमात्मा के साक्षात्कार का सच्चा सरल मार्ग मिलता है, अर्थात सफल जीवन जीनेकी सम्पूर्ण कला सीखने की एवं व्यवहार लाने की प्रेरणा मिलती है, साथ ही महामति श्री प्राणनाथ क्षरा निर्धारित विश्व अखण्डता के महा दायित्व को निभाने की अदभुत क्षमता पात्रता एवं जागनी के दुर्गम मार्ग पर चलने की अपूर्व और अनन्त शक्ति प्राप्त होती है। विश्व जागनी के इस इलैक्ट्रोनिक एवं सूचना प्रौधोगिकी के नवीन क्रान्तिकारी युग ने मानव को बौद्धिक विकास के चरम उत्कर्ष पर पहुंचा दिया है। वह अपने बौद्धिक विकास की अनन्त अद्‌भुत शक्तियों के सहारे जमीन, जल और आकाश पर आधिपत्य स्थापित करके सभी भौतिक एवं क्षणिक परवर्तनशील सुख-सुविधाओं को प्राप्त करने की ढौड में प्राण-प्रण से लगा है। उसके इस बौद्धिक चेतना के विकास ने तर्क एवं विज्ञान के विश्लेषण द्धारा उसे तोड-फोड तथा खण्ड-खण्ड करने की क्षमता तो दे ढी है और जिसके परिणाम स्वरूप उसने इस सुन्दर सुष्टि प्यारी पृवी को राजनैतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक, जातीय एवं स्थीनीय स्वार्थपूर्ण संकीर्णताओं संकीर्णताओं एवं क्षुद्रताओ के आधार पर अनेकानेक विनाशकारी खंडों में विभाजित कर दिया है। ऐसी विषम स्थिति में मानव का आन्तरिक हिस्सा यहृदय उपेक्षित होनके से रेगिस्तान हो चुका है, जहां साहिष्णुता, सहानुभूति सद्‌भाव करूणा, प्रेम और संश्लेषण के अक्षर भंडार है।

वर्तमान इलैक्ट्रोनिक युग की इस कोरी बोद्धिक विकास की भंयकर विषम स्थिति में हमारी यह प्यारी पृथ्वी अधिक दिनों तक इस प्रकार के विनाशकारी खंडों में विभाजित रहना सहन नहीं कर सकेगी।

महामति श्री प्राणनाथ जी की परमोज्जवल भविष्यवाणी के अनुसार यह सुन्दर मंगलमय संसार अन्तत: अवश्य अखण्ड होगा।

सारों मिने सिरोमन, हसेसी अखण्ड ए संसार।
आगे बडा होसी विस्तार, अखंड सब होसी संसार।
अनेक आगे होयसी, इन वानी को विस्तार।
ए नेक कह्या मैं करने, अखण्ड ए संसार।

इस प्रकार महामति श्री प्राणनाथ जी ने विश्व ब्रह्माण्ड की अखण्डता का पूर्णत: दावा व वादा इसी शर्त पर स्वीकार किया है कि उनके अनन्त भक्त सच्चे सुन्दरसाथ हम सब इसे सकारात्मक ढंग से और रचानात्मक रूप से सत्य सिद्ध करने के लिए अवश्य कटिबद्ध होंगे।

यथार्थ में परोक्ष रूप से देखा जाय, तो आज हममें से अधिकांश लोग स्वयं खण्डित है। शरीर, मन और बुद्धि के यद्धन्द्ध इस विखंडन का मूल कारण है। पहले हमें स्वयंअपनी बौद्धिक खण्डता से आध्यात्मिक अखण्डता में रूपान्तरित होना है।

भावार्थ है – बौद्धिक मानव का जागृत आत्मा में रूपान्तरित होना। आज मानव की बौद्धिक चेतना को पूर्णस्वस्थ-आत्मजागृति में रूपान्तरित कर सकती है। मानव-मस्तिष्क की यह द्वन्द्धात्मक बौद्धिक स्थिति 'तारतमद्दष्टि' से ही समाप्त हो सकती है। तात्पर्य यह कि सबसे पहले हम स्वयं आत्म-जागृत अर्थात अपनी स्वयं की जागनी द्धारा अखण्ड हो, तब दूसरे को अखण्ड करने या जगाने की बात मन में लायें। कहा भी है पहले योग्य पात्र बनिये, उसके बाद अकांक्षा जताइए। जो स्वयं लोभी सहकारी, क्रोधी, घमंडी और अज्ञानी है, उसे दूसरों को जगाने या अखण्ड करने का क्या अधिकार है? ऐसी स्थिति में उसके उपदेश का कोई स्थाई प्रभाव सामने वाले पर कभी नहीं पड सकता है।

नि:संदेह विश्व जागनी का मार्ग बडङ्ग ही दुर्गम एवं कठिन है। जागनी के इस महामहिमामय मार्ग पर ऐसे लोग कढािपि पैर न रखें, जिन्हे अपना यह विश्वास न हो गया हो कि हम स्वयं अन्तरात्मा से जागृत हैं, सुपात्र और सुयोग्य अधिकारी है, सक्षम है तथा यह हमारे अन्तरात्मा की पुकार है-

'ऐह बात नीके विचारियो, जो तुम्हें साख देवे आतम:-'

आत्मजागृत, तत्वज्ञानी एवं विनम्र-नि:स्वार्थी धर्मोपदेशक सुन्दर ही जागनी के इस दुर्गम मार्ग पर अन्त तक चल सकने में समर्थ हो सकते है। सुन्दर संस्कृति परमधाम की ऐसी आध्यात्मिक परम्परा है जिसका महालक्ष्य वैयक्तिक जागनी के साथ ही विश्व जागनी है। यह संस्कृति पूर्णत: अपने प्रियतम परमात्मा पर आश्रित होने के कारण किसी मानवीय या भौतिक साधन पर ही केवल विश्वास नहीं करती है वरन् अपने प्रियतम प्राणनाथ की कृपा का ही स्मरण एवं आह्‌वान करती है।

महामति श्री प्राणनाथ जी की ब्रह्मवाणी-'श्री कुलजम सरूपय' सभी धर्मो के परम गुह्म रहस्यों को खोलने में समर्थ एवं हम सबको जागनी के उच्च

* दीनदयाल धाम कॉलोनी, रीवा (म.प्र.) भारत

शिखर विश्व अखण्डता तक पहुंचाने मे पूर्ण रूपेण प्र्यास्त है। जो भी जिज्ञासु सुन्दरसाथ अपनी आत्म जागृति के द्वरा विश्व जागनी के दुर्गम मार्ग का अनुसरण करने के लिए पूर्णत: तत्पर है, उन्हें श्री तारतमवाणी के अध्ययन में अपना ध्यान सच्चे मनोभाव से एकाग्र करना सबसे पहले जान लेना चाहिए।

यथार्थ के इस अपूर्व आध्यात्मिक महाग्रंथ में वे सब मूल तत्व विस्तार एवं स्पष्ट रूप से निहित हैं, जो आत्म-जागृति द्वारा विश्व अखण्डता के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी हैं। इस परमपूज्य धर्मग्रन्थ में जागृत जीवन जीने के की सर्वोत्तम कला विधिवत समाहित है। इस ब्रह्मवाणी का दिव्य संदेश शालीनता, करूणा और विनम्रता से परिपूर्ण है।

सच कहा जाय तो इसके समान सम्पूर्ण विश्व में क्षर,अक्षर और परमधाम के परम गापेनीय रहस्यों को उद्घाटित करने वाला तथा विश्व अखण्डता के व्यावहारिक, रचानात्मक एवं सकारात्मक रूप को इस वर्तमान अशान्त, पीडित एवं दुखी पृथ्वी पर परमधाम की अनुकृति रूपान्तरित करने के उपाय बताने वाला अन्य धर्मग्रन्थ नहीं है। इस ब्रह्मवाणी श्री कुलजम सरूप में परमधाम का सटीक, प्रत्यक्ष एवं आंखो देखा वर्णन है। अनन्य भक्ति भाव से एवं अन्त:प्रेरणा से इसका नित्य पाठ-पारायण निष्ठा बन्ध किया जाये, तो केवल इसका प्रणाम पूर्ण पूजा-पाठ ही परमधाम प्राप्ति एवं प्रियतम साक्षात्कार का पथ-प्रदर्शक है। वास्तव में इसकी अनन्य भाव से पारायण जागनी की दिव्य ज्योति आत्मा में प्रज्जवलित कर देती है। जिससे परस्पर सब में आध्यात्मिक समता और परस्पर प्रेम की नित्य उपलब्धि होती है। विश्व जागनी की प्रत्येक विधा का इस धर्मग्रन्थ श्री कुलजम सरूप में विसतार से उललेख किया गया है। साथ ही इसमे प्रेम, प्रणाम, प्रार्थना, परिक्रमा, पूज, करूणा एवं विनम्रता आदि के रहस्यों का भी समावेश है। निश्चय ही यदि कोई मुमुक्षु परमभक्त सुन्दरसाथ सच्चाई से श्री तारतमवाणी आधारित उपदेशों, शिक्षाओं एवं आदर्शो का अनुसरण करते हैं, तो वे अन्नत: ब्रह्ममुनि-परमहंस स्वरूप होकर परमधाम में स्थिति होने के अधिकारी होते है।

श्री तारतमवाणी का प्रत्येक शब्द, प्रत्येक चरण व चौपाई ऐसा आविष्ठ मंत्ररूप हैं, जो परब्रह्म परमात्मा की सर्वोपरि सत्ता- चिद्धन शक्ति से पूर्णत: आविष्ठ है।

विश्व अखण्डता की समस्त परमोज्जवल भविष्यवाणी-वह सब जो अब निकट भविष्य में होने जा रही है-अलौकिक एवं परोक्ष ढंग से इसमें वर्णित है। महामति श्री प्राणनाथ जी ने इसमें अपने प्राण प्यारे सुन्दरसाथ को विश्व अखण्डता के जागनी मार्ग को ढूंढ निकालने के लिए तारतम मंत्र की सकल कुंजी सौंप दी है, ताकि वे स्वयं तो जागे विश्व के अज्ञानान्धकार को दूर करके विश्वात्मा को भी जगा सके और विश्व अखण्ड करके यहां परमधाम का प्रेमराज्य स्थापित कर सके।

वास्तव में यह ब्रह्मवाणी यश्रीकुलजम स्वरूपय विश्व जागनी अभियान की बीतक भी है, जिसके मंगलाचरण के रूप में महामति श्री प्राणनाथ जी ने आज से 300 वर्ष पूर्व अपने सहस्त्रों ब्रह्ममुनि सुन्दरसाथ सहित देश विदेश की लगभग 25 वर्ष तक जल थल की दुर्गम उपदेश यात्रा करके सन् 1683 में परना धाम प्रवेश किया था, जहां उन्होनें ग्यारह वर्ष पर्यन्त परमधाम की अनंतानंत दिव्य लीलाएं की। उस समय उनकी यह जागनी यात्रा अद्भुत एवं अभूतपूर्व साहसिक कदम पर कदम मिलाकर चलने का ययतीमी, फकरी भेष मे संयुक्त अभियान था।

इस दुरूह जागनी अभियान में ब्रह्ममुनि धामी सुन्दरसाथ ने महामति श्री प्राणनाथ जी के साथ जो यात्रा की, अनेक असह्म कठिनाईयों, यातनाओं और मुसीबतों को सहन किया- यहां तक कि मृत्यु के समीप रहकर बीहड वनों, दुर्गम पर्वतों और निर्जन प्रदेशों तथा भयंकार तूफानों में वर्षो तक निरंतर पैदल घूमते हुए भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी और वर्षा आदि सबकी अदम्य साहस के साथ सामना ही किया। सुख सीतल करूं संसार के लक्ष्य को लेकर व विश्व अखण्डता के मूल उद्देश्य को स्वीकार कर उन्होनें अनेक सांसारिक क्लेश सहन करते हुए उन सभी प्रान्तों गुजरात, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश आदि को पार कया और देहस्तर पर उन्होनें जो असह्म कष्ट अदम्य साहस पूर्वक सहन किये, आज के वैज्ञानिक युग में कोई कल्पना भी नहीं कर सकता ।

विश्व जागनी के इतिहास में आज तक किसी ने भी उनकी तरह अभियान में अदम्य साहसिक कदम नहीं उठाये और न ऐसे असह्म शारीरिक कष्ट भी सहन किये हैं। उन धर्मवीर धामी सुन्दरसाथ ने शारीरिक एवं मानसिक कष्टों को इसलिए सहा, ताकि वे महामति श्री प्राणनाथ जी की इच्छानुकूल विश्व अखण्डता के वादे व दावे पूर्ण करने के लिए सुप्त भूली भटकी आत्माओं को जागृत कर सकें और विश्व में परमधाम का प्रेम राज्य स्थापित सकें। श्री बीतक साहित्य में यह एक अभूतपूर्व, अद्वितीय, अतुलनीय तथा स्मरणीय और अनुकरणी उदाहरण है।

आज हम एक ऐसे महान क्रान्तिकारी विश्व जागनी के इलैक्ट्रोनिक युग मे जी रहे हैं, जिसमें विश्व की विभिन्न संस्कृतियाखा, सभ्यताएं एवं धार्मिक दर्शन एक साथ उठ बैठकर एक विश्व परविार की तरह रह रहे हैं, फिर भी आज हमस ब पृथ्वी के निवासी मानव पृथककरण, अहगाववाद, उग्रवाद और अतंकवाद के ऐसे भयंकर कीचड में फंसे है कि हिंसा, प्रतिस्पर्धा, और बौद्धिक संकीर्णता के नरक से मुक्त होकर बचना एक टेढी खीर हो गया हैं। ऐसी विषम स्थिति में तीसरे विश्व युद्ध का महाभयंकर वातावरण तैयार होता जा रहा है, जिसमें मानव मात्र का अथवा सम्पूर्ण पृथ्वी का अस्तित्व ही खतरे में है।

ऐसे सर्व विनाशकारी वातावरण में आज के आवागमन, विचार-विनिमय तथा प्रचार प्रसार के द्रुतगामी तेज सार्मावान साधनों के बीच कया महामति प्राणनाथ यात्रा तथा साथ ही संसार भर में उसकी अभिव्यक्ति को पहुंचाने मे बैलगाडी-युग की मंद गति को अपनाना शोभनीय हे ? आज जबकि महामति की अहर्निश सक्रिय अद्दश्य क्रिया- शक्ति आर्थिक क्षेत्र से लेकर जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों का क्रमश: भूमण्डलीकरण करती जा रही है, तब कया हमें भी स्वयं के भीतर कार्यरत अहंमूलक, इच्छाओं भावनाओं को भूमण्डलीकरण करने (सबके सुख मं ही अपना सुख मानने) की आत्म-साधना में शीघ्रगामी नहीं होना चाहिये, जिससे कि जगत में चींटी के मरते समय उगे पंखो की भांति फैली विषमताएं, संघष तथा कष्टों का शीघ्र संहार श्रीजी की पराप्रेम रस्मों क्षरा संपादित होने में हमारी यंत्रवत्ताा द्वारा हो सके ?

सृष्टि के आदि काल से मानव मन स्वयं के सुख की ओर तो तत्पर रहा है : इसके साथ-साथ उसने संपूर्ण मानवता के कलयाण की मंगलकमाना भी की है। वैदिक मंत्र 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:' से लेकर संयुक्त राष्ट्रसंघ की विश्व शान्ति के प्रमुख लक्ष्य तक यही प्रयास चल रहा है। गीता के इस वचन 'संभावामि युगे युगे' के अनुसार समय-समय पर विश्व शान्ति की दिव्य विभूतियों का अविर्भाव होता रहा है। महामति श्री प्राणनाथ जी का प्रादुर्भाव ही सब प्रकार के झगडों को समाप्त कर विश्व अखण्डता और मानव एकता की संस्थापनार्थ हुआ:-

धनी आए इन जिमी, कारज करने तीन।

रबका झगडा मेटहीं, या दुनिया दीन।।

महामति श्री प्राणनाथ द्धारा विश्व अखण्डता, मानव एकता एवं विश्वात्म कल्याण के लिए तारतम वाणी का विश्व जागनी संदेश जो प्रदान किया गया है, वह आज के संकटकालीन युग में सर्वाधिक उपयोगी, प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण है।

आज संसार के भविष्य के बारे में जितनी अटकलवाजी लगाई जाती है उतनी ही पहले कभी नहीं लगाई गई। क्या गरीबी और अज्ञानता से मानव जाति का कभी छुटकारा होगा। क्या विश्व संहार होकर रहेगा? क्या विश्व का अस्तित्व खतरे में हैं? इस प्रकार के अनेक प्रश्नों का समाधान पाने को मानव तीव्रता से आतुर है। महामति श्री प्राणनाथ जी ने इनके उत्तर में और संसार के भविष्य के संबंध में कहा है कि 'सम्पूर्ण संसार' विश्व जागनी के माध्यम से अपने अहंकार पूर्ण वैरभाव छोडकर परस्पर प्रेमपूर्वक एक होगा चारों ओर शान्ति, अमन और चैन के सिवा कुछ न रहेगा।

सुख शीतल करूं संसार।
'छोड के बैर मिले सब प्यार सो,
भया सकल में जै जै कार।।'

महामति श्री प्राणनाथ जी ने मानव जाति की एकता प्रतिपादित कर तत्कालीन हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्यता प्रबल विरोध कर सभी मानव को एक ही परिवार का बताया हैं:-

'ब्राह्मण कहें हम उत्ताम, मुसलमान कहें हम पाक।
दोऊ मुठ्ठी एक ठौर की, एक राख दूजी खाक।।'

श्री महामति जी की तारतम दृष्टि में एक चाण्डाल जिसका हृदय पवित्र तथा सदाचारी है, उस ब्राह्मण से कहीं अच्छा है, जो केवल शारीरिक स्वच्छता एवं बाह्याडम्बरों मं ही फंसा रहता है-

'एक भेष जो विप्र का, दूजा भेष चण्डाल।
जके छुये छूत लागे, ताके संग कौन हवाल।।
चण्डाल हिरदे निरमल, खेले संग भगवान।
दिखलावे नहीं काहू को, गोप राखे नाम।।
अब कहो काके छुए, अंग लागे छोत।
अधम तम विप्र अंग, चाण्डाल अंग उद्योत।।'

इस तरह श्री महामति ने छुआछूत एवं अस्पृश्यता का सैद्धान्तिक खण्डन करके समस्त मानव समाज में सरमरसता की पवित्र धारा प्रवाहित की। इसी मानव एकता के सिद्धान्त को कालान्तर में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने प्रभावशाली शब्दों में समर्थन किया। उनके शब्दों में 'अस्पृश्यता हमारे राष्ट्र का अभिशाप है' अगर मानव मात्र की आत्मा एक है ओर सबका परमात्मा एक है - सोई खुदा सोई ब्रह्म, तो फिर अछुत और अस्पृश्य कोई कहीं हो नहीं सकता।

स्त्रियों के समान अधिकरों एवं उचित सम्मान के प्रति भी महामति श्री प्राणनाथ जी ने 'जागनी अभियान' के दौरान एवं साथ एक सा व्यवहार करने का समर्थन किया है। उस मसय भारत मे स्त्रियों की हालत चिन्तनीय थी, लेकिन सुन्दरसाथ समाज में पुरूषों की भांति उनको भी समान अधिकार एवं स्थान प्राप्त था। जागनी यात्रा मे सहस्त्रों पर नारी समान रूप से भाग लेते थे। जन जागृति आन्दोलन में सब एक साथ कदम से कदम मिलाकर चलते थे, वे प्रेम, साहचर्यख सहयोग और मानव सेव के जागनी संदेश वाहके थे।

महामति श्री प्राणनाथ जी ने जिस मानव एकता एवं विश्व अखण्डता के लिए 'विश्व जागनी' के रूपमें ऐसा सार्वजनिक सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक सार्वकल्याणकारी 'सुन्दरसाथ' कम्यून संस्थापित किया है, वह वास्तव में वर्तमान विवटित विश्व मानवता को संगठित कर एक सूत्र में बांधने में सक्षम है।

भारत एक प्राचीन राष्ट्र है। इसकी अपनी प्रकृति संस्कृति, सभ्यता और आत्मा है। महामति श्री प्राणनाथ ने भारतीय समाज अथवा राष्ट्र को व्यक्तियों का राजनैतिक संगठन मात्र नहीं अपितु आत्मजत जीवन्त शक्ति माना है। उन्होनें राष्ट्र में व्यक्ति एवं समष्टि की महत्ता को समान स्वीकार किया है। अत: उनके अनुसार व्यक्ति और समाज में संघर्ष रहित राष्ट्र का स्वस्थ उन्होनें सुन्दरसाथ में देखा था।

'धन धंन खण्ड भरत का, धंन धंन नरनार।'

उन्होनें सम्पूर्ण भारत की पैदल यात्रा करके इस राष्ट्रीय अवधारणा का शंखनाद किया और राष्ट्र के प्रति जन-मानस और आत्मीयता की आध्यात्मिक भावना को जागृत किया।

उस समय उन्होनें गुगल सम्राट औरंगजैब के धार्मिक कट्टरतापूर्ण अमानुशिकअत्याचारों के विरूद्ध स्वतंत्र भारत की योजना तैयार की। इसके लिए उनका यह सिंहनाद इतिहास के बादलों को चीरता हुआ स्पष्ट सुनाई देता हैं:-

'राजा ने मलो राणे राय तणों'

अर्थात 'हे राजाओं' हे राणा हे राय जागो। 'हे वीर योद्धाओं खडें हो जाओ। अपने आलस्य का त्याग कर राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए सावधानी के साथ तैयार हो जाओय'। इस प्रकार महामति श्री प्राणनाथ राष्ट्रीय एकता के प्रणेता के रूप में प्रकट हुये। उनकी यह राष्ट्रीयता असीमित एवं व्यापक थी। जिसमें उन्हें भारत की अखण्डता पर पूरा विश्वास था। उन्होनें सम्पूर्ण विश्व की अखण्डता का मार्गदर्शन करने का सामर्थ्य भारत में प्रत्यक्ष देखा था:-

'धनं धंन खंड भरत का, जहां आई निधि नेहेचल।'

उस समय उन्होनें यह भी देखा कि विभिन्न भाषा भाषियों की संकीर्णता के कारण भारतीय संस्कृति दिनों दिन संकुचित एवं सीमित होती जा रही है। इसके लिए उन्होनें अनुभव किया कि सम्पूर्ण राष्ट्र की चेतना को जागृत करने के लिए एक राष्ट्रीय भाषा की आवश्यकता है। अत: उन्होनें सबके लिए सुगम और सरल भाषा के रूप में 'हिन्दी' भाषा को स्वीकार किया-

'बडी भाषा ए ही भली, जो सब में जाहेर।
करने पाक सबन को, अन्तर माहें बाहेर।।'

श्री महामति के विश्व अखण्डता एवं मानव एकता के प्रमुख साधन थे- 'प्रेम तथा सत्य' जिनके आधार पर उन्होनें औरंगजेब के संकीर्ण हृदय को विशाल हृदय में बदलने का साहसपूर्ण संकल्प एवं प्रयास भी किया। इस प्रयास से आशाजनक परिणाम प्राप्त न होने पर उन्होनें सम्पूर्ण देश में जागनी अभियान के द्धारा भ्रमण करके सशस्त्र प्रतिरोध हेतु वीरों का आह्वान भी किया।

उनके पथ-प्रदर्शन एवं संरक्षण में ही महाराजा छत्रसाल ने औरंगजेब को नाकों चने बिनवाकर विशाल बुन्देलखण्ड में यतारतमवाणी आधारित समता, न्याय और एकात्म मूलक राज्य शासन का सफल प्रयोग किया। यहां शंका की जाती है कि 'प्रेम' में हिंसा और युद्ध का स्थान कहां है। इस प्रश्न का उत्तर है कि क्या आपरेशन टेबिल पर पडे मरीज का चीरफाड करने में डॉक्टर के हृदय में मरीज के प्रति प्रेम और हित चिन्तन मात्र ही नहीं रहता है।

महामति श्री प्राणनाथ जी विश्व-अखण्डता के उपदेशक मात्र नहीं थे, मानव एकता की व्यावहारिक भूमिका पर उन्होनें -सुन्दरसाथ का एक ऐसा संघटन किया है, जो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सनातन सिद्धान्त को चरितार्थ करता हुआ आध्यात्मिक समाजवाद का दर्पणवत् है। मानव एकता की

विरोधिनी शक्तियों को समाप्त करने हेतु किया गया श्री महामति जी का देशाटन देश विदेश का जागनी अभियान, राजा महाराजाओं एवं जनता जनार्दन को उदबोधन दिये गये जागनी संदेश से उनका राष्ट्र प्रेम तथा भारत निवासी सभी जातियों तथा धर्मालम्बियों की सामाजिक एवं आध्यात्मिक एकता की उनकी द्रढ़ आस्था प्रगट होती है।

वास्तव में वर्तमान असामंजस्य पूर्ण आतंकवादी एवं उग्रवादी परिस्थितियों से उत्पन्न सम्पूर्ण समस्याओं का स्थाई समाधान तथा आणविक संहार की भयानक विभीषिका से संत्रस्त मानवता की सुरक्षा के लिए मानव एकता तथा विश्व अखण्डता उपलब्ध करने का लक्ष्य ही वह केन्द्र विन्दु है, जिसके चारों ओर महामति श्री प्राणनाथ जी की तारतमवाणी का मूलस्वर जागनी अपना स्वरूप ग्रहण करती है।

अनन्त स्वलीलाद्धैत सिद्धान्त के आधार पर अनेकता में एकता और एकता में अनेकता को विश्व अखण्डता और मानव एकता के मूल मंत्र के रूपा में घोषित करना श्री महामति जी की अमूल्य देन है, जो आज 'विश्व राज्य' एवं विश्व परिवार के निर्माण की नीव तथा उसके संविधान का प्रमुख नीति निर्देशक बन सकता है।

इस विश्व अखण्डता सुख, शान्ति और समृद्धि का मुख्य आधार है – 'प्रेमपूर्ण मानव एकता' इस 'प्रेमपूर्ण एकत्व' से ग्रहों उपग्रहों के बीच हमारा यह संसार प्रमुख एवं शोभापूर्ण होगा।

'सारों मिने सिरोमनि, होसी अखण्ड ए संसारा।।'

उन्होनें विश्व मानव को 'सुन्दरसाथ' कम्यून के रूप में सुसंगठित कर एक विश्व सरकार, विश्व समाज और विश्वधर्म अर्थात् विश्व अखण्डता का प्रत्यक्ष स्वरूप देखा था, यद्यपि विश्व अखण्डता का यह स्वरूप बहुतों को वर्तमान युग में असम्भव सा प्रतीत हो सकता है, किन्तु विश्व जागनी के आधार पर इस विश्व अखण्डता का आविर्भाव ऐसे ही तब होगा, जब मानव समाज अपने जीवन मे स्वतंत्रता, समानता, सहिष्णुता, सह–अस्तित्व और सामन्जस्य की एकात्मानुभूति कर लेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Internet Casinos Gambling : Working and Impacts

Dr. Neetu Agarwal * Dr. Sanjay Chaudhary**

Abstract - Online gambling or Internet gambling includes poker, casinos and sports betting. The first online casino was in 1994. It is played using a computer or mobile device and an internet connection can be referred to as online gambling. With the expansive growth of the gambling industry and the evolution of technology, it is no surprise that the new wave in gambling is occurring on the World Wide Web. Although, Many countries restrict or ban online gambling, but it is legal in some provinces in Canada, most countries of the European Union and several nations in the Caribbean. It must use in legal manner otherwise it generates harmful effects for a whole nation.
Keywords - Online gambling, internet gambling, casino, poker, sports betting etc.

Introduction - Internet gambling is use of the internet to place bets on casino games, sports games, etc. Bets are usually placed through credit card accounts and wins or losses are paid or collected accordingly. In simple terms when betting is done with the help of Internet then it is called Internet Gambling.

Most casino games and other gambling activities can by visiting various Internet casinos.

Types of Online Gambling/Casinos

There are generally 3 types of online casinos:

1) **Downloaded Games: -** In these types of online casinos users have to download a program which is free of cost. These casinos are usually the most fun to play; users have to the program on their hard drive. This means users have to wait for the application to download from the Internet and then install it on their computer. Once installed, these programs typically offer great graphics, sound and animation.

2) **Java-based: -** This second type uses JAVA (a programming language) instead of a downloaded program. These JAVA applets (a small program which runs on Internet) run through user's Web Browser. Some of these casinos offer sound and animation, and all of them offer some attractive good graphics.

3) **HTML-based: -** This third type of Internet casino uses all HTML and does not require any download time. Although these Casinos do not offer the sound and animation of the other Online Casinos, they provide good speed of game play.

According to Janower (1996), the world's first virtual online casino, Internet Casinos, Inc. (ICI) opened on August 18, 1995 with 18 different casino games and online access to the National Indian Lottery. The governments of Antigua and Liechtenstein were among the very first to operate online gambling (Janower, 1996). Finally, Janower notes that by 1996, according to Rolling Good Times Online gambling magazine, there were 452 gambling-related sites on the net. By January 2, 2004, a casual Sherlock search of the Internet identified more than 377,000 web sites related to "Internet gambling." On-line gambling, however, occurred when the bet was placed on-line and the gambling event was generated on-line by a random number generator (Orford et al., 2003).

Internet gambling offers many benefits over land-based casinos, such as convenience. Internet gambling offers viewers the opportunity of gamble from the comforts of their own home, without having to worry about traveling to a city or state that contains real, legalized casinos. Internet gambling also provides user with real casino environment, including style, real games and rules to real casino games. Multi-player games are now available also to include gambling with others through the use of the Internet. The popularity of Internet gambling is growing fastly and will continue to do so as online casinos begin offering more and more real-life games and winnings.

Working of Internet Casinos - Internet casinos are basically web sites that provide a route to a specific location where bets can be made or placed. The customer first arrives at an Internet casino, which provides them with a

***Assistant Professor, Pacific College of Basic and Applied Sciences, Udaipur (Raj.) INDIA**
**** Professor, Deptt. of CSE, Madhav University, Sirohi (Raj.) INDIA**

list of games and options to gamble on. Then that site takes them to a page designed to facilitate the opening of an account and depositing currency. The opening of an account usually requires that the user provides basic information concerning their name and mailing address. Funds are then deposited by using a credit card, certified check, electronic check, money order, or through a wired media. Customers are then free to use the site to place bets and gamble at their caution. Choosing from casino type games, to multi-player games, to sports bets, all depending on what the particular site has to offer. Wins and/or losses are calculated electronically. Losses will be deducted from the players account. In winning situations, the player requests to 'cash out' and the Internet casino then issues a check for the winnings paid, and is sent to the users home address.

Casino Games

Roulette: - The typical House edge (Casinos make money because every casino game has a built in profit on every bet) for this game is 5.26% for the double zero game. This percentage is figured in the following manner: In the game, there are 36 numbers plus the 0 and 00. The odds of user winning are one in 38 or 1/38.

If user win, the casino pays user $35 for each dollar user bet. User keeps the original dollar, and is paid $35 for a total of $36. The difference is $2 (38 minus 36). Divide the $2 by 38, which is the true odds, and user come up with the house edge of 5.26%. What this means is that user could actually cover all the numbers on the layout and still lose money. These numbers are great odds for the house, but not for user.

Games like Roulette, Craps, Big Six a have a fixed percentage because one roll or spin will never change the outcome. There will always be 38 numbers on a roulette layout and 12 numbers on a pair of dice.

Blackjack: - As we've previously mentioned, this game is different from the fixed odds games because every time a card comes out of the shoe, it changes the makeup of the cards remaining. Thus, the advantage can shift from player to house depending on which cards have been played and the Skill in which user play their cards.

Video Poker: - It is another game that is based on skill. If user plays the perfect strategy, there are actually some games that have a positive return based on their pay table.

As above mentioned we can see that Internet Gambling is good for elder people in big countries and communities but for teenagers or children it can harmful and shows some serious effects. Gambling addiction can result to harmful results like suicides or suicide attempts. It makes someone feel a step away from solving financial problems yet it may mean digging for a person into a hole so deep that one imagines that there is no way to come out. But Everything has its positive and negative effects; If a person has no control over his spending on bets, or if he is always catching his loses than it shows the negative impacts of online gambling but gambling has its positive impact also, not only to people but to an economy as well.

Impact of Internet Gambling

Positive Effects of Gambling

1) Job opportunities: - In most states in the U.S. and also in other countries, some gambling activities have been legalized for casinos, cock fighting arenas, race tracks, etc. This step has brought more jobs for the people in those communities. Also, people working in casinos get paid well, including the tips they get from customers.

2) Payment for charities and government: - If the popularity of gambling is increasing then it is the way for the establishment of hotels. Some gambling companies often make charitable donations in their areas. Thus, the government collects added revenues through taxes collected from gambling establishments.

3) Use as a Therapy: - Gambling also has positive effects to people. For example elderly, finds gambling to be form of therapy. It is a place for them to interact with fellow elders and socialized. It helps to remove their loneliness or feeling of uselessness brought by their age.

4) For the Relaxation: - If a tired person is relaxed, he is able to think and do well. So for the working class, gambling can make them relax from a hard day's work. For couples, it is an alternative way to bond together without the kids. It can take their mind off the pressures that they have.

Everything has its own good, as long as it is done in fair manner. It is not bad to gamble or go to casinos. If it can do you good, but always remember to have discipline and control. Always set limitations in everything that you do.

Negative Effects of Gambling

1) Criminal activity :– With the online gambling there can be so many criminal activities like in a country three of online poker's biggest sites with bank fraud, illegal gambling and laundering billions of currency was caught. Unregulated gambling provides network hackers with opportunities to gain an easy access to the confidential information of network users. Internet gambling involves online fund transfers requiring the exchange of credit card details over the Internet. Hackers can easily access such user details from online gambling websites.

According to a news channel Bets worth $200 million (about Rs 1,300 crore) are placed every time the Indian team plays an ODI. Every IPL match draws in as much as $100 million (about Rs 530 crore) to the domestic illegal betting pool. The scale is equally big. Cities such as Mumbai, Delhi and Kolkata have as many as 2,500 main bookies, supported by several punters or collection agents (who take bets on behalf of the main bookie). To be sure, the government can augment its revenues by levying tax on winnings. To draw a comparison, 'winnings' from horse-racing bets are charged at 30% in India.

2) Gambling addiction: – Gambling addiction is something when a person loved one cannot control and when it begins to affect a person's financial, social, familial, recreational, educational, or occupational functioning. Gambling addiction or addiction problem is thus a serious social problem and can have dangerous effects especially if

persons with problems hide it and do not seek treatment before it is too late.

There are some negative effects of gambling addiction like:-

1. They may have addiction problems to deal with alcohol or drugs.
2. They may also suffer depression or anxiety.
3. They can be a part of a reserved group of people.
4. Additionally those who suffer gambling addiction may not admit to their problem. They like hiding it from family and friends in shame.
5. They try to solve all their problems their own way.

3) Underage internet gambling – The internet cannot verify anyone's legal identification. So a huge public concern is the availability and easy access for teenagers to access the online gambling. The underage person can sign up for accounts, state they are of legal age, provide a credit card, and they are on their way to winning the World Series Poker event.

Conclusion - Internet Gambling is played using a computer or mobile device and an internet connection can be referred to as online gambling. In this paper working and examples of online casinos is discussed. Each and every thing has its pros and cons. If it is used in limitation then it can very helpful for a person as well as a nation. Like Internet gambling has so many advantages which has discussed in this paper but it can very harmful if is is used in another manner. All effects discussed in this paper may used to society.

References :-

1. American Psychiatric Association. (2013). *Diagnostic and Statistical Manual of Mental Disorders* (5th ed.). Arlington, VA: American Psychiatric Publishing.
2. Cynthia R. Janower, Gambling on the Internet, Journal of Computer Mediated Communication, Vol. 2, Issue 2, September 1996.
3. economictimes.indiatimes.com/articleshow/50631879.cms?utm_source=contentofinterest&utm_medium=text&utm_campaign=cppst
4. http://www.casinogoto.com/positive-effects-of-gambling.html
5. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC4753073/
6. https://www.psychology.org.au/Assets/Files/APS-Gambling-Paper-2010.pdf
7. Orford, J., Templeton, L., Velleman, R. and Copello, A. (2003). Family members of relatives with alcohol, drug and gambling problems: a set of standardized questionnaires for assessing stress, coping and strain. Addiction, 100, 1611-1624.

****

A Comparative Study of the Adjustment Attitude Among Tribal And Non-Tribal Adolescents Students Of Udaipur Zone

Smt. Shweta Vaishnav * Dr. Premlata Gandhi **

Abstract - India is native land to a number of tribal communities with varied eco-cultural, socio-economic and geographical backgrounds. The people in the tribal areas are still following their ancient traditions and are far away from modernization. In some of the remote areas practice of education is increasing, people are becoming aware and migrating towards the cities. But in cities the students are facing problems like adjustment with new situations. The present paper is an attempt to analyze the adjustment attitude between tribal and non tribal adolescents of Udaipur, Rajasthan. For the study the researcher used survey research design and selected 700 students as sample. To analyze and interpret the data, the investigator used t-test. By analysis it was conclude that there is a significant difference between tribal boys and tribal girls as well as also significantly differ between tribal and non-tribal students, regarding adjustment attitude.

Key Words - Adjustment, Tribal and Non-tribal Students, Boys and Girls.

Introduction - India is a place where the huge variety of local people are residing. India has the largest concentration of tribal population in the world. The Constitution of India has assigned special status to the Scheduled Tribes. Scheduled Tribes represent about 8% of the total Indian population. In India there are about 573 Scheduled Tribes categories living in different areas of the country, and they have their own languages, customs and traditions vary from area to area. There are more than 270 such languages in India. According to census 2011, the population of tribal people in India is about 10,42,81,034. With this population, the Scheduled Tribe population represents one of the most economically and socially backward and marginalized groups in India. Also India is native land to a number of tribal communities with varied eco-cultural, socio-economic and geographical backgrounds (Haseena & Mohammad, 2014).

Adjustment according to Shafter (1968) is a process by which a living organism maintains balance between its need and the circumstances that influence the satisfaction of these needs. Thus a person's adjustment depends upon the following grounds - harmony in a person's desires, goals, ideals, motives etc. and in their ways to satisfaction, - the extent of satisfaction of desires, wishes and motives, - similarly of aspirations, wishes, desires and motives with the norms and ideals of the society. There are many areas of adjustment such as home adjustment, educational adjustment, health adjustment, emotional adjustment and social adjustment. Educational adjustment is one of the important for all round development of the child. Every individual from the time he or she steps out of the family to the world makes a long series of adjustments in his/her environment. Adjustment is totally based on the pattern established by earlier adjustment (Devi, 2015).

Education is considered as most important tool to the tribal communities because it is essential for all round development of communities and is helpful to build confidence among the tribal people to deal with persons of other modern societies. The tribal communities are still lagging behind in terms of education and their economic development. The people in the tribal areas are still following their ancient traditions and are far away from modernization. In some of the remote areas practice of education is increasing, people are becoming aware and migrating towards the cities. But in cities the students are facing problems like adjustment with new situations.

Generally Higher Secondary level students belong to adolescence stage. In this stage of development boys and girls enter into adolescence stage from the stage of infancy. As this stage physical, mental, emotional change invites various problems to their life, they fail to adjust properly with their family, society and school environment. If the needs of the adolescence are not fulfilled properly they suffer from various problems- mental complexity, conflicts and anxiety.

Education among Tribes - Education among tribes is given

*Research Scholar, Deptt. of Education, Janardan Rai Nagar Vidyapeeth (Deemed-to-be University), Pratap Nagar, Udaipur (Raj.) INDIA
**Supervisor, Assistant Prof., LMTT (C.T.E.) BEd. College, Dabok, Udaipur (Raj.)INDIA

priority for the simple reason that it is the key to social and economic development of the tribes. Education enables them to perform their role to be useful citizen in democracy. Development of the state associated with the development of the educationally and socially backward people who are economically disadvantaged.

Scheduled Tribes are the most deprived and marginalized groups especially with respect to education, a lot of programs and measures were initiated during the Independence. Elementary education is a priority area of Tribal sub-plans from the 5th Five Year Plan. Education of ST children is considered important, not only because of the Constitutional duty but also as a vital input for the total development of tribal communities. In the present paper an attempt has been made to analyze the adjustment attitude between tribal and non tribal adolescents of Udaipur, Rajasthan.

Review of related literature - Yellalah (2012) investigated on a study of Adjustment on Academic Achievement of high school students. The study concluded that adjustment and academic achievement cause significance difference between male and female students, Government and Private school students and Rural and Urban school students did not cause any significant difference between Adjustment and Academic Achievement. It was found that there was a low positive relationship between Adjustment and Academic Achievement and also female students have (31.3%) good adjustment level than male (7.3%) students.

Mansingbhai, T. and **Patel, Y.H. (2014)** had investigated on Adjustment and Academic Achievement of Higher Secondary School Student. The findings of the study revealed that male adolescent differ significantly on health, social and emotional adjustment as compare to female adolescent. Significant difference was also existed between male and female adolescent on academic achievement.

Devi, C.B. (2015) studied on School Adjustment and Academic Achievement among Tribal Adolescents in Manipur. The findings revealed that a low positive correlation between school adjustment and academic achievement in Imphal and Ukhrul both the districts. It was also revealed that high academic achievers had better adaptability in school than that of low academic achievers

Objectives :

1. To compare the adjustment attitude of tribal boys and girls of study area.
2. To compare the adjustment attitude of tribal and non tribal adolescents students of study area.

Null Hypotheses:

Ho1: There is no significant difference between tribal boys and girls regarding adjustment.

Ho2: There is no significant difference between tribal and non-tribal students regarding adjustment.

Methodology

Research Design - For the study the researcher used survey research design of descriptive research.

Population and Sample - All class IX to XII students studying in Higher Secondary schools of Udaipur district are treated as population of the study. For sample, the purposive random sampling technique was used for the study. Total 700 students were selected as sample. Among selected sample, 350 students are tribal (175 boys & 175 girls) and 350 students are non-tribal (175 boys & 175 girls) of seven Tehsils (Salumber, Jadhol, Kotda, Kherwada, Dhariyawad, Girwa and Sarada) of Udaipur zone.

Instrument - Self prepared questionnaire is used for the study. Test-retest method was used to measure the reliability of the instrument and reliability coefficient was found quite high. In this self structured questionnaire 60 items was considered in the light of the description of the variable. Though the inventory has no time limit but usually a subject had taken 30 – 45 minutes to fill it up. 60 items were followed by Likert scale on five point responses.

Statistical techniques - To analyze and interpret the data, the investigator used t-test.

Findings:

HO1: There is no significant difference between tribal boys and girls regarding adjustment.

Table 1: Adjustment attitude among tribal boys and tribal girls

	Tribal Boys	Tribal Girls
Mean	57.93	55.92
Std. Deviation	7.604	9.790
N	175	175
Mean Difference	2.006	
df	173	
't' Value	2.140	
Significance	Significant at 0.05 level	

Table 1 shows that tribal boys have more adjustment attitude than tribal girls. And significantly differ at 0.05 level. So Ho1 is rejected and conclude that there is a significant difference between tribal boys and tribal girls regarding adjustment attitude.

Ho2: There is no significant difference between tribal and non-tribal students regarding adjustment.

Table 1: Adjustment attitude among tribal and non tribal students

	Tribal students	Non-Tribal students
Mean	78.95	56.92
Std. Deviation	7.418	8.810
N	350	350
Mean Difference	22.023	
df	348	
't' Value	35.772	
Significance	Significant at 0.01 level	

Table 2 shows that tribal students have more adjustment attitude than non-tribal students. And significantly differ at 0.01 level. So Ho2 is also rejected and conclude that there is a significant difference between tribal students and tribal students regarding adjustment attitude.

Conclusion - Adjustment process is a way in which the individual attempts to deal with stress, tension, conflicts etc., and meet his/her needs. In this process, the individual

also makes effort to maintain harmonious relationships with the environment. Every child is born in family, then gradually he/she grows up and enters into simplified, purified, better balanced society. The more a student can adjust with the environment the more he becomes mentally healthy. It has a positive effect on the students. The guardian and teachers should fulfil the needs of adolescence students properly and thus help them achieve all round development.

Major Delimitations:

1. The study was limited to only Udaipur districts of Rajasthan.
2. The study was limited to 700 secondary level students.

References :-

1. Census of India, 2011 (Published by Government of Rajasthan.)
2. Devi, C.B. (2015). School Adjustment and Academic Achievement among Tribal Adolescents in Manipur. International Journal of Scientific & Technology Research, Volume 4, Issue 12, December 2015. ISSN 2277-8616 319. www.ijstr.org
3. Mansingbhai, T. and Patel, Y.H. (2014). Adjustment and academic achievement of higher secondary school student. Journal of Information, Knowledge and Research in Humanities and Social Sciences, ISSN: 0975 – 6701, Nov 13 To Oct 14, Volume 3, Issue 1, p128-130
4. Shaffer, L.F. (1968). The Psychology of Adjustment, Boston, Houghton, Mifflin.
5. V.A. Haseena & Mohammad Ajims P. (2014). Scope of education and dropout among tribal students in Kerala -A study of Scheduled tribes in Attappady. International Journal of Scientific and Research Publications, Volume 4, Issue 1, January 2014 1 ISSN 2250-3153.
6. Yellalah (2012). A Study of Adjustment on Academic Achievement of High School Students. International Journal of Social Sciences & Interdisciplinary Research. Vol.1 No.5, May 2012, ISSN 2277 3630.

****

Role Of Small Scale Industries In Entrepreneurship Development (With Special Reference To Indore)

Dr. Prashansa Malpani *

Abstract - The micro small & medium scale enterprises play a very significant role in the overall growth of indian economy owing to their contribution to production, exports, & employment. msme can easily be setup for self-employment. entrepreneur chooses an activity depending their interest & suitability not only to become self-employed but also to generate employment for others.

Entrepreneurship development is the process of improving the skills knowledge of entrepreneurs through various training & development programs. the whole point is that to increase the number of entrepreneurs in entrepreneurship development. in india there are various edp's (entrepreneurship development programs) conducted regularly in the last decades. in this program the main object to develop the entrepreneurial abilities among the people. in other words, it refers to inoculation development & polishing of entrepreneurial skills in to a person needed to establish & successfully run his /her enterprise. thus, the concept of entrepreneurship development program involves equipping a person with the name required skills & knowledge needed for starting & running the enterprise.
Keywords – Entrepreneurship Development, Training& Development, Entrepreneur, Employment, Micro Small & Medium Scale Enterpriseetc.

Introduction - Indore is known as a commercial capital of madhya pradesh. the name indore is due to its deity indreshwar. indore is one of the richest cities in central india and also known as "mini mumbai" among native people of indore, due to its lifestyle similarities with mumbai. indore is administered by the indore municipal corporation. some of the regions surrounding the city are administered by the indore development authority (ida). indore is the only city of india with both an indian institute of management (iim) and an indian institute of technology (iit).the main institution involved in planning and development in indore is ida. the principal responsibility of ida is to ensure a holistic development of the indore agglomeration covering an area of 19.718 km2 as per master plans.

The state has a agrarian economy. the major crops of m.p.arewheat, soya bean, rice, maize, cotton, mustard& arhar. the state has the largest resources of diamond & copper in india. other major minerals reserves include those of coal methane manganese & dolomite. the state tourism industryis growing. some of the most prominent industries in state are readymade garment unit's .poultry, electricalgoods, and saw mills food clothing industries relating to limestone product. building material, glassware, furniture, steel structure work retail business & tobacco business & food processing industry.

The earlier concept of industries has been changed to enterprises. enterprises engaged in providing rendering of services.

Details Of Manufacturing Enterprises

Investment in plant &machinery (excluding land &building)& further classified into

Micro Enterprises- Investment upto25 lacks &up to 5 crores

Medium-investment above 5 crore to 10 crore

Service Enterprise-have been defined in term of their investment equipments (excluding land &building) &further classifieds are-

Micro Enterprises – Investment up to 10 lacs

Small Enterprises - Investment above rs 10 lacs up to 2 crore

Medium Enterprises - Investment above 2 crore up to 5 crore

It is not necessary to engage in manufacturing activity for self employment. one can setup service enterprises as well.

The main purpose of edp's is to widen the base of entrepreneurship by development achievement motivation & entrepreneurial skills among the less privileged sections of the society.

According to N.P. Singh (1985)……………

"Entrepreneurship development programme is designed to help an individual in strengthening his entrepreneurial motive & in accruing skills & capabilities necessary for playing his entrepreneurial role effectively.

*Asst. Prof. (Commerce Deptt.) Ilva Commerce & Science College, Indore (M.P.) INDIA

entrepreneurs are the potential future designers of any economy.

In other words it is a study of the various traits of an entrepreneur who has to continuously supply better prospects for the industrial economic development.

This paper is based on the contribution of indore (m.p.) in the entrepreneurship development & industrial awakening. in this paper various problems & their remedial measures about the industries of madhya pradesh has been discussed.

Any person who runs a business, is an entrepreneur but more precisely, the person who initiates, takes the risk to make his/her own ideas turned into an reality can be a better entrepreneur.

Objectives of the study - The main objectives of this study are………

1. To analyse the concept of entrepreneurship
2. To study the industrial development in Madhya Pradesh (Indore)
3. To identify the role of small scale industries in entrepreneurship development.

Methodology - The study is based on the secondary data gathered from the official websites of various departments of govt. of india & madhya pradesh, annual reports of sisis, research reports, magazines, & newspapers.

Analysis - Madhya Pradesh economy largely depends on agriculture, industries & minerals. about 70% of the total workforce of the state depends directly or indirectly on agriculture. mine & industries play an important role in economic development of the state. Indore is known as commercial capital of madhya pradesh. indore is one of the richest cities in central india & also known as 'mini mumbai' especially in indore because of commercial city, most of its trade coming from small mid & large scale manufacturing & service industries. These industries range from automobiles to pharmaceuticals & from software to retail & from textile trading to estate. Major industrial areas surrounding the city include the pithampur special economic zone & the sanwer industrial belt. indore is not only known as commercial city although now it is known as industrial hub. Currently in last decades investment summits are conducted in indore .It is very useful for the entrepreneurs who want to establish a new enterprise or to setup their business. For the nation's economic & overall growth government provide facilities to entrepreneurs under the entrepreneurship development program to run a business/ enterprise. Government of madhya pradesh has formulated an industrial promotion policy 2004 which is liberal enough for investment. The objectives of the new industrial promotion policy are to create industry friendly administration to maximise employment opportunities to tackle industrial sickness rationalize rates of commercial taxes & to enlist participation of private sector in the efforts of industrialisation. For the growth of the industries & setup to industries various types of financial assistance is available like nationalised banks, small industries development bank of india, regional rural bank national industries corporation etc. the msme sector is contributing 11% consistency every year to the g.d.p. of the country. Over the years the small scale sector in india has progressed day by day. Though there are many beneficial schemes & programmes available for the existing & upcoming entrepreneurs. About 80 % of the industries in the region are small scale ones & most of them enjoy excise exemption under the current tax structure.

Scenario of small scale sector changed with industrial policy of july 1991 which for the first time in india's development history spoke of liberalisation. This reflects the growth of SSI against the total industrial sector from 1991 -1999.however the total growth rate is increased due to industrial policy 1991.

Small industries service institute indore along with its two branch sisis at rewa& gwalior & one field testing station at bhopal is working as an extension /promotional agency for the development of small scale industries& catering to the needs of small scale entrepreneurs covering the whole of madhya pradesh with 45 district.

Entrepreneur chooses an activity depending their interest & suitability not only to become self employed but also to generate employment for others. The workshop attached to sisi rewa& gwalior provided common facility services to the industries. During the year 2000-01 the workshops executed 623 job orders benefiting 564 small scale units. The revenue earned out of the job work was rs. 588264.during the year 2000-01 the sisi,indore& its branch office have provided assistance & consultancy to 7062 prospective new entrepreneurs.sisi indore has conducted 33 one month edps. There were 383 candidates who underwent training under the general edp which comprised 95 sc, 15 st 53 obc 32 women. The institute earned rs. 1, 57,450 revenue during the year on conducting these programmes. The institute provide export training courses, modernisation programs also for the overall growth of the nation.

Table 1 : Year Wise Trend Of Units Registered

Year	No. Of Regis -tered Units	Employment	Investm- ents (Lac)
2000-01	226	1218	1254.67
2001-02	120	1224	922.94
2002-03	111	846	685.88
2003-04	707	1846	649.13
2004-05	659	1845	846.6
2005-06	610	1446	906.14
2006-07	603	2122	1366.03
2007-08	752	2266	3168.08
2008-09	789	2587	1488.4
2009-10	803	1720	1275.2
2010-11	806	2068	11990.06
2011-12	844	1900	3383.07
Total	**14075**	**56601**	**37931.2**

Table 2 (see in below)

Findings:

General issues raised by industry association during the course of meeting

1.finance :- Industry required that loan to msme should be provided at reduced rate of interest as higher interest rate results in higher cost thus makes product loosing edge in the competitive market.

2.infrastructure:- Infrastructure facilities like roads, electricity water, etc. Should be improved for healthier industrial environment for faster growth.

3.market support: - Ancillarisation should be given priority through better linkage with large scale industries for healthy growth and fast industrialization

4.lack of awareness - Entrepreneurs are not getting fully benefits from those schemes & programs due to the lack of awareness. They don't know what theregovernments doing for them.

Suggestions - Entrepreneur can make business profitable. Profitability includes hard work, passion patience & calculated risk is involve that will pay interest of profit. So entrepreneur has to choose wisely according to interest & current scenario make a balance of both. It is very necessary to aware the entrepreneurs for getting the benefits of policies ,banking & finance procedure ,to start-up business process ,market competition, awareness training programmes, skill development programmes, entrepreneurial training & development programmes etc..

Conclusion - MSME sector plays an important role in the economic growth of almost all the countries globally. In india the role of micro, small & medium enterprises (MSMEs) in the economic & social development of the country is well established. Msmes contribution towards GDP was 22% in the year 2011-12 & rose to 37.54% in year 2012-13 with an increase of approximately 48%in 2013-14.showing a consistencyof 11%(approx) growth rate every year.m.p. the second largest indian state covering 9.5 %of the countries area is bestowed with rich natural resources, a gifted climate & fertile agro climate conditions. Constantly indore is growing &becoming a software & industrial hub. Indore has grown many folds & has more business potential to offer than any other cities of similar status in the country.

References :-

1. Sources – websites
2. District trade & industries centre indore
3. Ministry of micro small & medium enterprises.
4. Audhoyogik kendra vikas nigam
5. Export promotion council
6. Akvn/dtic
7. Cidmap

Table 2 : Details Of Existing Micro & Small Enterprises & Artisan Units In The District

Nic Code No.	Type Of Industry	Number Of Units	Investment (Lakh Rs.)	Employment
20	Agro Based	370	163.24	1110
22	Soda Water	-	-	-
23	Cotton Textile	44	792.20	2640
24	Woolen, Silk & Artificial Thread Based Clothes	79	43.45	158
25	Jute & Jute Based	35	15.75	70
26	Ready-Made Garments & Embroidery	634	158.50	4438
27	Wood/Wooden Based Furniture	30	10.50	120
28	Paper & Paper Products	177	531	1062
29	Leather Based	431	21.55	862
31	Chemical/Chemical Based	179	1432	716
30	Rubber, Plastic & Petro Based	265	927.50	795
32	Mineral Based	27	270	162
33	Metal Based (Steel Fab.)	430	193.50	1290
35	Engineering Units	101	55.55	404
36	Electrical Machinery And Transport Equipment	106	42.4	318
97	Repairing & Servicing	920	230	1840
01	Others	67	10.05	201

****

नृत्य और संगीत में रायगढ़ रियासत का योगदान

अमित कुमार * डॉ. रामरतन साहू**

शोध सारांश – साहित्य, संस्कृति, क्रीड़ा की नगरी रायगढ़ में ऐसे नर्तक, गायक और संगीतकार हुए, जिन्होंने अपनी प्रतिभा से सबको चमत्कृत कर दिया। नृत्य और संगीत को उसके मूल संस्कार और नये स्वरुप में जोड़कर उसे पुन: प्रस्तुत करने में रायगढ़ रियासत का प्रमुख योगदान रहा है।

प्रस्तावना – अन्य दरबारों में कत्थक को संरक्षण तो मिला, परंतु उसका पूर्ण विकास रायगढ़ रियासत में हुआ। राजा चक्रधर सिंह ने उसके चार अंगों गायन, वादन, नर्तन और भाव प्रदर्शन को स्वीकार किये। राजा चक्रधर सिंह स्वयं एक प्रतिभा सम्पन्न कवि, रंगकर्मी, नाट्य लेखक, श्रेष्ठ तबला वादक, और जन्मजात नर्तक थे, अर्थात वे एक सम्पूर्ण कलाकार थे। प्रयोराधर्मी होते हुए भी वह कत्थक की जमीन से नहीं हटे, बल्कि उसे मध्यकालीन कुहासे से निकालकर उसके मूल संस्कार लौटायें। तब जाकर कही कत्थक आज इतने गौरव का अधिकारी बन सका है। रायगढ़ रियासत के कत्थक ने जो ऊचें आयाम कायम किये वे नृत्य जगत के इतिहास में सदैव जीवित रहेगें।

रायगढ़ कत्थक घराने में लोकनृत्य का लालित्य, उद्भ्रम, आवेग व जीवन का निश्चल स्पंदन है, बोल ध्वनात्मक व चित्रात्मक है, जिनमें काव्यानंद की अनुभूति निहित है। राजा साहब ने गतभाव व लयकारी में चमत्कारिक परिवर्तन कर नृत्य प्रस्तुति में अनूठे प्रयोग किये। यहॉ की विशिष्टतायें निम्न है–कठिन चकरदार बोल एवं परन सप्तस्वरों की गतियॉ, अनेक मुद्राओं की गतियॉ, शिव ताण्डव स्त्रोत तथा अमृता ध्वनि, किरिट, पखवज व ताण्डव के बोल, कड़क बिजली परण, दल बादल, गजपरण, किलकिना परण, दुर्गा काली लास्य, शुभ्रभानू इत्यादि।

रायगढ़ घराने के बोल ध्वन्यात्मक है। इसे वढऋने के साथ ही अर्थ खुलने लगते है और भाव प्रदर्शन के साथ ही रस निष्पंदित होने लगती है। भावों की प्रधानता और अभिनेयता इसके सहायक तत्व है। कलाओं की अस्मिता के प्रति सजग एवं जागरुक राजा चक्रधर सिंह के आश्रय में संगीत और नृत्य को नये रुपों में अभिव्यक्त होने के मुक्त अवसर मिले।

कलाधानी रायगढ़ ने अपनी माटी से एक ऐसे रत्न को जन्म दिया जिसने पूरे भारत को अपनी कला ज्योति से आलोकित कर दिया। स्व.ठाकुर जगदीष सिंह दीन ने ठा0 लक्ष्मण सिंह से गायन, तबला व सितार की विधिवत शिक्षा ली। ठाकुर साहब ने दरबार के बाबा ठाकुरदास से परवाज, बांदा के मुहम्मद खां से गायन, इनायत खां से सितार, कोयंबदूर के पं0 शोभाराम से घॅटवाद्य की शिक्षा ली। सन् 1940 में रायगढ़ में संपूर्ण देश के परखावज वादकों की प्रतियोगिता हुई जिसमें ठाकुर साहब ने निरंतर 4 घंटे वादन कर अद्धितीय प्रदर्शन किया इस हेतु उन्हें 'मृदंगार्जुन' के नाम से विभूषित किया गया।

इन्हें भारतेंदु साहित्य समिति बिलासपुर द्धारा बाघ विभूषण, संगीत कार्यालय हाथरस से संगीत रत्न की उपाधि भी मिली। ये सादा जीवन व उच्च विचार के व्यक्ति थे। इन्होनें लक्ष्मण संगीत विद्यालय की स्थापना की। ये संगीत शास्त्र में गहन अध्येयता थे। इनके अनेक शिष्य हुये जो उनका नाम आज भी रौशन करते है।

वेदमणिजी तबला के विलक्षण कलाकार तो हैं ही ये बीए, बीएड, एम म्यूजिक तबला, गायन एवं सितार में बी.म्यू. भी है. इन्हें तबले की तालीम अपने पिता श्री जगदीश से प्राप्त हुई, इसके अलावा पं0 भूषण महराज एवं पागलदास से भी इन्होने शिक्षा प्राप्त की। इलाहाबाद, दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, भुवनेश्वर, नागपुर जैसे शहरों में संगीत यात्रा कर इन्होनें अपनी विलक्षण कला से लोगों को चमत्कृत किया. ये ताल बंदिशों में भी माहिर है, तीनताल, मृदंगार्जुन ताल, विलासताल खेती ताल आदि की रचना भी इन्होनें की है। इन्हें भावनगर में महाराष्ट्र मण्डल द्धारा 'संगीत सम्राट' की उपाधि जबकि वैष्णव संगीत विद्यालय रायगढ़ ने 'चक्रधर सम्मान' से नवाजा है। ये 'बेदम' नाम से गजल भी लिखते है। इनके प्रमुख शिष्यों में महेन्द्र सिंह ठाकुर, निमाई चरण पंडा, शुकमणि गुप्ता, नारायण लाल देवांगन, मोहन अग्रवाल, अलका आठले, जगदीश मेहर, मनहर सिंह ठाकुर, केशव, आनंद शर्मा, सुरेश दुबे, देवलाल, चंद्रकला देवांगन, टेकचंद चौहान, आलोक बनर्जी, गरीबदास महंत, आशीष देवांगन तथा प्रियंका पटेल प्रमुख हैं।

रायगढ़ में न केवल तबला, पखावज व मृदंग के बड़े बड़े उस्ताद हुए है बल्कि अनेक गायक और संगीतकार भी हुए है। डॉ0 गोविंद प्रसाद शर्मा, शंकर सिंह ठाकुर, राजाराम गुरू, नत्थू राम गुप्ता, राधेलाल गजभिए, ठाकुर लक्ष्मण सिंह शेखावत (रूद्रवीणा वाद) परूराम विश्वकर्मा (वायलीन) ढोबले गुरूजी (संतूर) के अद्धितीय कलाकार रहे है। जगदीश मेहर अपने मृदुभाषी स्वभाव एवं विनयशीलता के कारण सर्वाधिक लोकप्रिय कलाकार है। मन से उच्च कलाकार और तन से महान दानी श्री मेहर सभी कलाकारों की योग्यता के अनुरूप संगत कर लेते है। ठाकुर मनहरण सिंह एंव जगदीश मेहर एक दूसरे के पूरक है. चक्रधर संगीत विद्यालय इन्हीं की देन है जिसे श्रीमती चंद्रकला देवांगन बखूबी संचालन कर रही है।

लोक गायक फूलचंद लाला छत्तीसगढ़ के सर्वाधिक लोकप्रिय गायक थे। वे शास्त्रीय संगीत मे निपुण तो थे ही उन्हे छत्तीसगढ़ी लोकगीतों की प्राय: सभी धुनें याद थी। उन्होनें लोक कला के क्षेत्र में अद्धितीय साधना कर लोकगीतों के सरताज के रूप में अपने को प्रतिष्ठित किया। फूलचंद लाला ने 'काली माटी' नाट्य मंडली के लिये कथा और गीत लिखे। सन् 1958 में

*एम.फिल. शोध छात्र (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

छत्तीसगढ़ के लोक नर्तकों का दल लेकर जननायक पं0 जवाहर लाल नेहरू एवं राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद के समक्ष 'नाचा' का नेतृत्व किया और सम्मानित भी हुए। महात्मा गॉधी की मृत्यु पर उनके द्वारा रचित छत्तीसगढ़ी मार्मिक गीत उनकी कला दक्षता का साक्षात् प्रमाण है। 'अहो भगवान हमला काबर बनाये जी किसान' उनके अमूल्य कृत्यों का एक नगीना है। 'हमर कतक सुंदर गांव जैसे लक्ष्मीजी के पांव' वाली रचना एवं गीत उन्हें अमरत्व प्रदान करने में सक्षम है। बहुगुणी प्रतिभा के धनी स्व. लाला फूलचंद श्रीवास्तव में एक साथ कवि, संगीतज्ञ एवं कलाकार के जन्मजात गुण विद्यमान थे। रायगढ़ नरेश राजा चक्रधर सिंह के दरबार में वे नवरत्नों मे से एक थे। उनके गीतों में देशप्रेम वीर रस श्रृगांर रस एवं करूण रस की भावना निहित थी। लालाजी ने छत्तीसगढ़ के लोक नृत्य सुआ, डंडा, करमा, भोजली आदि की लोक छंदो में अनूठी रचनाएं की जो बहुत मार्मिक है। कदाचित लाला फूलचंद अपने समय के सबसे प्रतिभावान छत्तीसगढ़ी रचनाकार एवं गायक थे।

रायगढ़ विरासत के कलाकारों, संगीतज्ञों और नर्तकों द्वारा रायगढ़ रियासत के सन्निकट रहकर अपनी कलाओं को समाज के समक्ष प्रस्तुत करनें में अह्म भूमिका निभायें है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजा चक्रधर सिंह, ताल तयोनिधि।
2. जनकर्म, दैनिक समाचार पत्र।
3. कमल किशोर, रायगढ़ दर्शन।
4. नवभारत दैनिक समाचार पत्र।
5. ठाकुर जगदीश सिंह का जीवन वृत।
6. अतुल कुमार, कला और साहित्य की नगरी रायगढ़।
7. डॉ बलदेव प्रसाद, रायगढ़ का सास्कृतिक वैभव।

****

कुँड़ुख भाषा और उनकी विशेषताएँ

आरती कुमारी *

शोध सारांश – झारखण्ड में रहने वाली अनेक जनजातियों में कुँडुख जनजाति का एक विशेष स्थान है। यह जनजाति झारखण्ड की दूसरी सबसे बड़ी जनजाति है यह जनजाति द्रविड़ भाषा परिवार के अन्तर्गत आता है। इनकी भाषा कुँडुख है। इस भाषा को देश का प्राचीन भाषा माना जाता है।

प्रो0 महेश भगत अपनी पुस्तक 'कुँडुख भाषा व्याकरण एवं साहित्य' में लिखा है कि 'कुँडुख भाषा इस देश का बहुत ही प्राचीन भाषा है।' भाषा वैज्ञानिक का भी कहना है कि 'कुँडुख' द्रविड़ भाषा परिवार भारत देश का सबसे पुरानी भाषा है। इसलिए हमारे बुद्धिजीवियों ने भी कहा है कि 'कुँडुख भाषा का महत्त्व और विशेषताएँ' 'अलग एवं थलग ही है।'

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री का चयन करके शोध विषय 'कुँडुख भाषा और उनकी विशेषताएँ' का अध्ययन किया गया हैं। इसके हेतु पुस्तकालय एवं पत्र-पत्रिकाओं के साथ-साथ विद्धानों का भी मार्गदर्शन लिया गया है।

उद्देश्य – भाषा का प्रयोग मानव ही नहीं बल्कि हर पशु-पक्षी अपने बोली या भाषा के माध्यम से प्रकट करता है। इसी प्रकार कुँडुख जनजाति की भी अपनी मातृभाषा कुँडुख है। कुँडुख जनजाति को उराँव नाम से भी जाना जाता है। परन्तु कुँडुख शब्द एक भाषा है, साथ ही एक जाति भी। लेकिन उरांव शब्द केवल जाति के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं।

समस्या – भाषा के प्रोत्सहन हेतु राज्य सरकार ध्यान नहीं देती है। इस स्थिति में भाषा अधिक दुरूह मानव विकास से दूर होती जा रही है। कुँडुख भाषा को प्रोत्सहन करना राज्य सरकार का दायित्व है।

कुँडुख भाषा झारखण्ड के अलावे अन्य राज्यों बिहार, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल आदि क्षेत्रों में पायी जाती है। भारत देश के अलावे नेपाल, भूटान, बांग्लादेश एवं रोम इत्यादि देशों में बोली जाती है। कुँडुख भाषा का क्षेत्र वृहद् रुप में विस्तृत हुई है। इसके संबंध में **प्रो0 महेश भगत** अपनी पुस्तक में लिखे हैं 'हिन्दी अयंग राजी नू कुँडुख कच्छनखरुउर गहि गन 50 लुडिम ती हूँ बग्गे र ई। कुँडुखर झारखण्ड ती बहरी बिहार, पश्चिम बंगाल, असम, निकोबार, मध्यप्रदेश, दिल्ली, बम्बई, चेन्नई गुट्हि नु हूँ र:नर। हिन्द अयंग राजी ती बहरी नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, यू0एस0ए0, रोम, स्वीडन अरा अमेरिका गुट्हि राजी नु र:नर।'

अर्थात् भारत देश में कुँडुख जनजाति द्वारा बोली जाने वाली जनसंख्या 50 लाख से भी ज्यादा है। कुँडुख जनजाति झारखण्ड राज्य से बाहर बिहार, पश्चिम बंगाल, असम, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, अंडमान निकोबार, मध्यप्रदेश, दिल्ली मुंबई, चेन्नई आदि राज्यों में पाये जाते हैं। भारत देश के अलावा रोम, स्वीडेन और अमेरिका आदि देशों में भी पाये जाते हैं।

समाधान – उपर्युक्त कथन से प्रमाणित हो जाता है कि कुँडुख भाषा क्षेत्र अत्यंत विशाल है। जिन जातियों की अपनी भाषा हो, उसका भाषा, साहित्य, संस्कृति एवं इतिहास गौरवपूर्ण, प्रेरणास्पद तथा सम्माननीय होता है। बुद्धिजीवियों का कहना है कि कुँडुख जनजाति की उत्पत्ति जब से जाना जाता है, तब से ही उनकी भाषा अत्यंत समृद्ध एवं विकसित थी और पूरे विश्व में बिखरा पड़ा था। कई विद्धानों के अनुसार कुँडुख का उद्गम 'कोंकण से होता हुआ, नर्मदा, किनारे-किनारे सिन्धु सभ्यता को इंगित करता है।' परन्तु इनका अभी भी किसी ठोस एवं सार्थक निष्कर्ष नहीं मिल पाया है।

जीतू उराँव अपनी पुस्तक में लिखते हैं 'ऐतिहासिक तथ्य, पुरातात्विक अवशेष तथा वैज्ञानिक शोध से यह स्पष्ट हो रहा है कि कुँडुखर के पूर्वजों का जन्म स्थल अफ्रीकी है और वैज्ञानिक इस बात को प्रमाणित करते हैं कि झारखड के आदिवासियों की डी0एन0ए0 संरचना और अफ्रीकी मूल के आदिवासियों की डी0एन0ए0 संरचना में समानता है तथा इस ओर आज भी वैज्ञानिकों का शोध सतत् रुप से जारी है, जैसे - न्यूयार्क (वार्ता)। मानव की अनुवांशिको परत दर परत खोलने में जुटे जीव वैज्ञानिकों का दावा है कि धरती पर मानव जाति की उत्पत्ति अफ्रीका से हुई थी।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट हो जाता है कि आदि मानव आदिवासी था। हो सकता है कुँडुखों का पूर्वज ही आदि पुरुष हो। आदिवासी स्वभाव से ही प्रकृति प्रेमी रहे हैं। आदिकाल से लेकर वर्त्तमान तक इनका आर्थिक जीवनचर्या प्रकृति पर ही निर्भर रहा है। इनके पूर्वजों द्वारा बनाया गया खेत, जंगल, पहाड़, नदी, पर्वत आदि को काटकर एवं साफ कर अपने रहने लायक जमीन बनाया।

बाहरी लोगों का आक्रमण या अन्य प्रकृति आपदा के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित होते रहने के कारण इनकी भाषा थोड़ी गिरावट की स्थिति में आई है, लेकिन इनकी भाषा अभी भी समृद्ध एवं विस्तृत रुप में पाया जाता है

सभी भाषाओं की अपनी-अपनी विशेषताएँ होती है, उसी प्रकार कुँडुख भाषा की भी अपनी अनोखी विशेषताएँ पायी जाती है –

1. कुँडुख भाषा में पुरुष जाति और धरमेस को छोड़कर दुनिया की सभी चीजों को चाहे वह सजीव हो या निर्जीव सभी को स्त्रीलिंग जाति में रखा जाता है, जैसे –

अड्डो अम्म ओन्ना लगी (स्त्री0)	बैल पानी पी रहा है।
मन्न परदा लगी (स्त्री0)	पेड़ बढ़ रहा है।
चन्दो मुनखा लगी (स्त्री0)	चाँद डूब रहा है।
एड़पा दव रई (स्त्री0)	घर अच्छा है।
आलस बरआ लगदस (पु0)	आदमी आ रहा है।
धरमेस होरमारिन एऱा लगदस	भगवान सबको देख रहा है।

* शोधार्थी, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग (कुँडुख) राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

इस प्रकार इन वाक्यों में देखा जाय तो बैल, पेड़ आदि पुलिंग है, लेकिन कुँडुख भाषा में इसे स्त्रीलिंग रुप में प्रयोग किया जाता है। पुरुष जाति और भगवान को शब्द को पुलिंग रुप में प्रयोग करते हैं।

2. कुँडुख भाषा की एक अन्य विशेषता है कि स्त्री-स्त्री के साथ बातचीत करने पर स्त्रीलिंग रुप का ही प्रयोग करते हैं, लेकिन स्त्री यदि पुरुष से बातचीत करे तो पुलिंग रुप में बात करती है, जैसे -

	हिन्दी	**कुँडुख**
स्त्री के साथ बातचीत	मैं जाती हूँ।	एऩ कएना। (स्त्री0)
पुरुष के साथ बातचीत	मैं जाती हूँ।	एऩ कादना। (पु0)
पु0-स्त्री0 में, पु0-पु0 में बातचीत	मैं जाता हूँ।	एऩ कादना। (पु0)

3. कुँडुख भाषा में सबसे पहले जाति, बाद में लिंग को प्रस्तुत किया जाता है, जैसे -

अड्डो बरआ लगी (बैल आ रहा है)।

अडडो घासी मोखा लगी (बैल घास खा रहा है)।

इस प्रकार कुँडुख भाषा में सबसे पहले जाति को प्रस्तुत किया जाता है, यहाँ 'बैल' एक जाति का नाम है।

4. कुँडुख भाषा के व्याकरणिक विशेषता के अनुसार पुलिंग में 'ने चिन्ह को दिखाने के लिए नाम के अन्त में 'स' जोड़ा जाता है, जैसे -

सोमरा ने - सोमरस।

सोहन ने - सोहनस।

5. स्त्रीलिंग में 'ने' चिन्ह को दिखाने के लिए नाम के अन्त में 'द' और 'न' जोड़ा जाता है, जैसे -

	कुँडुख	**हिन्दी**
सीता ने - सीतद	सीतद बाचा	सीता ने बोली
सीमा ने - सीमद	सीमादिम नंज्जां	सीमा ने ही किया।

उसमें कर्म के 'को' चिन्ह दर्शाने के लिए नाम के साथ अन्त में 'न' जुड़ता है, जैसे -

	कुँडुख	**हिन्दी**
सीता ने - सीतन	सीतन बाचअन	सीता को बोले।
सीमा ने - सीमन	ए-न सीमन बआ लगेन	मैं सीमा को बोल रही हूँ।

यहाँ नाम के अंत में जुड़ा अक्षर 'स', 'द' और 'न' कर्त्ता के 'ने' चिन्ह तथा कर्म के 'को' चिन्ह को दर्शाता है।

6. कुँडुख भाषा में पुलिंग शब्दों के अन्त में 'स' के स्थान पर 'र' लगाकर बहुवचन बनाया जाता है, जैसे -

आलस - आलर

कुक्कोस - कुक्कोर

7. 'बगर' एवं 'गुद्दियर' शब्द जोड़कर भी क्रमश: पुलिंग एवं स्त्रीलिंग शब्दों को बहुवचन बनाते हैं, जैसे -

एंग ददा बगर बरचर। (मेरे भैया सब आये)।

निंग्गियो गुद्दियर बरचर। (तुम्हारी माँ सब आयी)।

मण्डी गुद्दी खटआ लगी। (खाना सब पका रही है।)

8. कुँडुख भाषा में 'श' और 'ष' का प्रयोग नहीं होता बल्कि इसके स्थान पर केवल 'स' का ही प्रयोग होता है।

9. कुँडुख भाषा में ऋ, ङ,ञ , ण और व से किसी शब्द का शुरुआत नहीं होता है।

10. कुँडुख भाषा में 'ङ' का उच्चारण स्वतंत्र तथा संयुक्त दोनों प्रकार से होता है, जैसे -

अयंङ - माँ, माता

तंङगड़ी - उसकी बहन।

11. कुँडुख भाषा में ै, ौ का प्रयोग नहीं होता बल्कि इसके स्थान पर अय, अए और अव का प्रयोग किया जाता है, जैसे -

अय - नम्हय, तम्हय, एम्हय।

अए - अएना, चएना, कएन।

अव - अँवगे, अउड़का, अउला।

12. कुँडुख भाषा में तीन लिंग और दो वचन है। लिंग बोध के लिए आवश्यकता के अनुसार संज्ञा के साथ पुरुष और स्त्री वाचक शब्द जुटता है।

13. मूर्धन्य ध्वनियों का बाहुल्य है। विद्वानों का मत है कि संस्कृत में मूर्धन्य ध्वनियों का समावेश इसी भाषा के सम्पर्क से हुआ है।

14. कुँडुख भाषा में अनेक शब्द ऐसे हैं, जो एक ही शब्द के विभिन्न अर्थ तथा भाव दशाओं को दर्शाते हैं, जैसे -

काटना -

ख़ेरस्स खोयना (धान काटना)

अमखी मो-चना (सब्जी काटना)

मन्न खंडना (पेड़ काटना)

खोऱ एड़बना (मुर्गा काटना)

ए-ड़ा खोस्सना (खस्सी काटना)

तोड़ना -

पूँप तोक्खना (फूल तोड़ना)

कडिरका एसना (दतवन तोड़ना)

अड़खा तोक्खना (साग तोड़ना)

लड़ंगन खच्चना (लता तोड़ना)

पहनना -

किचरी कूरना (साड़ी पहनना)

धूती चोअना (धोती पहनना)

जूता अत्तना (जूता पहनना)

टूपी खपरना (टोपी पहनना)

पकाना -

मण्डी बितना (खाना पकाना)

अमखी इरतना (सब्जी पकाना)

असमा मेक्खना (रोटी पकाना)

15. कुँडुख में 'ख' वर्ण का उच्चारण दो प्रकार से होता है। प्रथम 'ख' वर्ण का उच्चारण अन्य भाषाओं के समान ही होता है। दूसरे प्रकार के 'ख' से थोड़ा में नीचे नुक्ता (.) चिन्ह दिया जाता है। अत: 'ख़' का उच्चारण साधारण 'ख' से थोड़ा भिन्न होता है। इसमें कोमल तालू और कंठ आपस में नहीं सटते हैं और दोनों के बीच हल्का सा स्थान रहने से अन्दर से निकलने वाली हवा के घर्षण से इस प्रकार की ध्वनि उत्पन्न होती है।

इस प्रकार कुँडुख भाषा की अपनी अलग ही विशेषता पायी जाती है। विद्वानों के अनुसार कुँडुख भाषा में क्ष, ज्ञ का प्रयोग अन्य भाषाओं के शब्दों से आये हैं। ये दोनों ही वर्ण कुँडुख भाषा में नहीं आते हैं। व्याकरणविद् श्री पी0सी0 बेक ने कुँडुख भाषा के वर्ण में 'ख़' को बहुत महत्वपूर्ण माना है। इसका उच्चारण विशेष प्रकार से गले से जोर लगाकर किया जाता है, जैसे - ख़ेऱ (मुर्गी), ख़ाख़ा (कौआ), ख़ेब़दा (कान), ख़ेख़ेल (धरती), ख़ंजपा (फल) इत्यादि।

निष्कर्ष :- जिस प्रकार हर चीज की अपनी खास विशेषताएँ होती है और उन्हीं विशेषताओं के कारण उसका अपना अलग स्थान बनता है, उसी प्रकार कुँडुख भाषा की भी अपनी खास विशेषताएँ पायी जाती है। भाषा के उच्चारणों में ट, ड, द की बहुलता है। साथ ही संयुक्ताक्षरों जैसे ड्ड, क्क, म्म, च्च, च्छ, क्ख की भी बहुलता पाया जाता है। साथ ही इस भाषा में क्रिया की काफी ज्यादा बहुलता पायी जाती है

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रो0 महेश भगत, कुँडुख भाषा व्याकरण एवं साहित्य, 2016, पृ0-1.
2. प्रो0 महेश भगत, कुँडुख कत्था - कत्थपंडी गहि कुन्दुरना अरा परदना (कुँडुख भाषा-साहित्य का उद्‌भव और विकास), 2017, पृ0-1.
3. जीतू उराँव, सिन्धु घाटी कुँडुख सभ्यता और जनजातीय भूमिका, 2010, पृ0-8.
4. कुँडुख लिटरेसी सोसाईटी ऑफ इंडिया, कुँडुख डहरे पत्रिका, 2008, पृ0-31.
5. कुँडुख लिटरेसी सोसाईटी ऑफ इंडिया, सँवसे खे़खे़ल ता कुँडुख कत्था, विश्व पटल पर कुँडुख भाषा, पत्रिका, पृ0-25-26.
6. झारखण्ड एन्साइक्लोपीडिया, खंड-4, संपादक-रणेन्द्र, 2008, पृ0-202.

****

छोटानागपुर के आदिवासी

इंदिरा कोनगाड़ी *

शोध सारांश – हम कहते आए हैं कि छोटानागपुर के वनों में सदियों से वन-जातियाँ पलती आ रही है। इन्हें आदिवासी शब्द से आज पुकारा जाता है। ये जातियाँ यहाँ आर्यो के आगमन के पूर्व से रह रही हैं या पीछे इनका आगमन हुआ या कहना जरा मुश्किल है।

असूर– इतना तो निश्चित है कि प्राचीन ग्रंथों में कोल, शबर, किरात, असूर ये नाम वन-जाति के मनुष्यों के लिए आते हैं। अभी भी जहाँ-तहाँ वनों में असुर नाम की जाति मिलती हैं। वे लाग लोहा गलाने और लोहे के सामान बनाने में लगे रहते हैं। हो सकता है कि आदिवासियों में सबसे प्राचीन और आदिम निवासी ये असुर जाति के ही लोग हों। इनकी भाषा भी दूसरी जातियों की भाषा से भिन्न है। ये छोटानागपुर के पश्चिम भूभाग में रहते हैं। इनकी संख्या बहुत कम है।

मुण्डा– इनके बाद आनेवाली दूसरी वन-जाति मुण्डा की है। मुण्डा लोग जब छोटानागपुर में आए तो उनकी भेंट असुर नाम की जाति से हुई। किन्तु प्रश्न उठता है कि मुण्डा लोग कौन थे? यों आए? यह सब प्रश्न कौतूहल पूर्ण हो जाते हैं। इनके विशय में कई विद्वानों के अपने-अपने मत है। कुछ विद्वान् कहते हैं कि मुण्डा लोग पूरब की ओर से आए और कुछ लोग कहते हैं कि पश्चिम की ओर सें। परन्तु इतना निश्चय हो चुका है कि जब आर्य भारत में आए तो वे मध्यभारत में आकर रहने लगे। उस समय वहाँ विन्ध्याचल पर्वत से लेकर दक्षिण के वन भागों मे जो जाति निवास करती थी उसकी उन लोगों ने भगा दिया। वे लोग अपनी जीविका की खोज में इघर-इघर जाकर बस गये। दक्षिण में गए हुए लोग अनार्य कहलाए और पूरब की ओर भागने वाली यह जाति मुण्डा कहलाई। इन लोगों में छोटानागपुर के पहाड़ी और जंगली इलाको को अत्यन्त सुरक्षित पाकर और जीविका का अच्छा साधन देखकर अपन निवास-स्थान बनाया।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र प्राथमिक और द्वितीय स्त्रोतों के द्वारा अध्ययन किया गया। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं और विद्वानों का मार्गदर्शन के द्वारा अध्ययन किया गया है।

उधेश्य :-

मुण्डा जाति की शाखाएँ– पता चलता है कि मुण्डा जाति की भी दूसरी जातियों की तरह कई शाखाएँ हैं। इनके तीन भाग हैं- (1) खास मुण्डा (2) हो मुण्डा (3) संथाल।

इन तीन शाखाओं के लोग साथ ही छोटानागपुर की ओर आए। कुछ सोन नदी को पार करके पलामू और हजारीबाग के जिले में पहुँचे। संथालियों का दल दामोदर नदी को पारकर संथाल परगना तथा धनबाद जिले में जाकर बस गया। अब रह गए मुण्डा और हो जाति के लोग। यह दल उनका साथ न दे सका। ये दामोदर नदी के दक्षिण की ओर बढ़े। इन लोगों ने उमेडंडा घाटी पार कर राँची जिले में प्रवेश किया। राँची सदर के मांडर, मुड़मा कोराम्बे, सुतियाम्बे ये गाँव मुण्डा लोगों के ही नाम पर बसे हुए हैं। जिसको जहाँ सुविधा मिलती गई वे वहाँ इस विशाल भूभाग में आकर बसते गए। कुछ लोग आगे बढ़कर सिहभूम जिले की ओर बस गए और कूछ लोग उड़ीसा के बामड़ा, बोनाय, केओंझा, मयूरभंज आदि राज्यों में रहकर जीविका चलाने लगे। इनके अलावे कुछ लोग बाँकुड़ा और पूरूलिया आदि जिले में बंगाल तक पहुँच गए।

उराँव– उराँव भी पनाह पाने के लिए बाहर से ही यहाँ आए। इनका आना मुण्डा लोगों के बाद हुआ। परन्तु इनका मेल मुंडा लोगों से इतना घनिष्ट हो गया कि ये ऐसे मालूम होते हैं कि दोनों एक साथ ही आये हों।

समस्या – उराँव कहाँ से आए इस पर बहुत विवाद है। कुछ विद्वान् कहते हैं कि उराँव लोगों की भाषा द्राविड़ भाषा से मिलती है इसलिए ये शायद दक्षिण से आए हों। परन्तु यह निश्चित-सा हो चुका है कि उराँव लोगों का जमाव बिहार ही के शाहाबाद जिले के ससराम सबडिविजन के दक्षिण-पश्चिम पहाड़ी इलाकों में था। इनका अपना साम्राज्य था। ये स्त्री-पुरूष बड़े बलिष्ठ ओर साहसी होते थें। इसको छेड़नेवाला कभी बच कर नहीं लौट सकता था।

समाधान – धीरे-धीरे मुसलमानों का राज्य जब उत्तरी भारत में फैल गया तो उन लोगों ने इन पहाड़ी इलाकों में भी हमला किया। उनका सामना करने के लिए उराँव वीर तैयार हो गएं डट कर लड़ाई हुई। इन वीरों के सामने मुसलमान नहीं टिक सके। बहुत से मुसलमान मारे गएं मुसलमान इनको अपना प्रबल शत्रु.समझने लगे। रोहतास का किला जो इन लोगों के कब्जे में था उसको पाने के लिए मुसलमानों ने जी-जान से कोशिश की। जब वे सामना-सामनी इनका मुकाबला नहीं कर सके तो एक दिन 'सरहुल' पर्व के दिन (जिस दिन उराँव लोग खूब शराब पीकर बेसुध थे) मुसलमानों ने इन पर जोरों का धवा बोल दिया। बेचारे उराँव जो अपने शरीर तक को सम्हालने में असमर्थ थे उनके सामने यूद्ध कैसे कर सकते थे? फिर भी कुछ स्त्रियाँ अपना दल बनाकर मुसलमानों के सामने डट गई। उनकी वीरता देखकर मुसलमान लोग दाँपों तले अगुली दबाने लगे। किन्तु ये वीराङनाएँ उन बाढ़-सी खूँखार सेना के सामने कब तक टिकी रहती? सबों ने अपना-अपना सामान लेकर वनों में भागना शुरू कर दिया। पीछे सभी उराँव उस स्थान को छोड़कर दक्षिण-पूरब की ओर चले गए। उनके मन में अपने रोहतास किले का हाथ से निकल जाने का बड़ा अफसोस रह गया। ऐ बार एक वीराङगना 'सिनगीदई' से बहुत-सी स्त्रियों के साथ फिर मोर्चा लिया परन्तु कामायाबी हासिल न हुई। अब ये सदा के लिए रोहतास को भुलाकर रहने लगे। किन्तु मुसलमानों ने सोचा कि ये उराँव जब तक आसपास में रहेंगें कभी न कभी हमला कर ही बैठेंगे। इसलिए उनको दौड़ा-दौड़ा कर उन्होंने मारना शुरू किया। अब निहत्थे बन कर ये उराँव पनाह पाने के लिए वनों में भाग निकले और छोटानागपुर के वनों में आकर अपना निवास बनाया। दूसरा दल गंगा

* शोधार्थी, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

नदी के किनारे-किनारे चलकर राजमहल की पहाड़ियों में आ बसा।

उराँव मुण्डा संघर्ष- उराँव लोगों का आना मुण्डा लोगों की खटकने लगा। वे अपने को उराँव लोगों से कुलीन और पूज्य समझने का दावा करते थें। ये उराँव लोगों को अपने गाँव और घरों के पास रहने देना नहीं चाहते थं। बात यह थी कि मुण्डा लोग बहुत पहले से आकर जम चुके थे। उन्हें अपनी चीज में दुसरे को हिस्सा देना अच्छा नहीं लगता था। क्योंकि बड़ी मेहनत से उन लोगों ने जंगलों को काट कर खेती के योग्य भूमि बनाई थी। फिर भी हृदय के उदार और स्वभाव के अच्छे होने से मुण्डा लोगों ने उराँव लोगों को बसने दिया। उराँव लोगों ने भी मुण्डा लोगों कीी अपना पुरोहित निश्चित कियां। आज भी गाँवों में देखा जाता है कि जितने उराँव हैं उनका पाहन (पुरोहित) मुण्डा ही होता है।

इस तरह दिन पर दिन बीतने लगे; परन्तु उराँव जाति का अपना स्थान निश्चित नहीं हो पाया। अधिक दिनों तक मुण्डा लोगों की शरण में रह कर जीना उन्हें अच्छा नहीं लगा। इसलिए पंचायत के जारिये उन लोगों में समझौता हुआ। उराँव लोग छोटानागपुर के उत्तरी-पश्चिमी भु-भाग में बस गये और मुण्डा लोगों को छोटानागपुर को दक्षिणी-पूर्वी भाग मिला। उत्तर-पश्चिम में लोहरदगा, मांडर, बरवे से लेकर सुरगुजा, यशपुर तक उराँव लोगों का निवास हैं। इधर दक्षिणी-पूर्वी क्षेत्र बुण्डू, तमाड़, खूँटी, सिंहभूम, बसिया आदि में मुण्डा जाति की अधिकता है।

खड़िया जाति- आदिवासियों की यह खड़िया जाति भी छोटानागपुर में जहाँ-तहाँ बसी हुई मिलती हैं। परन्तु इसका पता लगाना कठिन है कि ये लोग किधर से आये-पूरब से, उत्तर से या पश्चिम से। दूसरी बात यह है हिक ये उराँव से पहले आये या बाद में। इन विशयों पर कई तरह के विचार उठते हैं कुछ लोग कहते हैं कि प्राचीन काल में शबर जाति विन्ध्य और कैमूर के पहाड़ी प्रंदेशों में रहा करती थी। प्राचीन ग्रन्थों में भी शबर के नाम मिलते हैं। वे ही बाद में खड़िया के नाम से कहे जाने लगे। दूसरे लोगों का यह कहना है कि जब आर्यो ने इस देश मे आकर अपना पर फैलाना शुरू किया तो यहाँ के रहने वाले असभ्य जाति के लोगों को मार भगाया।ये खड़िया जाति के लोग भी मुंगेर जिले के खड़गपुर इलाके के पहाड़ों में जाकर रहने लगे, किन्तु आस-पास कहीं जगह न मिलने से ये छोटानागपुर क वनों में आकर बस गयें। खड़िया लोगों में भी यह बात फैली इुई है कि उनके पूर्वज पटन की ओर से आयें। उनके पूर्वजों का मशहूर स्थान रूईदास (पटना) है। अधिक सम्भव है कि ऊपर की मुंगेर वाली बात ही अधिक निश्चित हो।

खड़िया जाति के तीन भेद हैं (1)पहाड़ीया एरंगा खड़िया (2) ढेलकी खड़िया (3) दूध खड़िया।

पहाड़ी खड़िया अधिक असभ्य जाति है। वे जानवरों का शिकार करके खाते हैं। ये ज्वार, मकई, गुन्दली आदि उपजा कर साग-पात खाकर प्राय: नंगे रहकर जीवन व्यतीत करते हैं। इनका क्षेत्र धालभूम, बड़ाभूम से लेकर उड़ीसा में योझर और बाकनाई के पहाड़ी भागों में है।

ढेलकी खड़िया जब छोटानागपुर में आये तो शंख नदी के किनारे जा बसे। वहाँ से भैंवर पहाड़ और बीरू, तपकरा की ओर तो बसे ही साथ ही उड़ीसा के गांगपुर ओर मध्य प्रदेश के यशपुर के इलाकों में भी जा बसे। ढेलकी खड़िया पहाड़ी खड़िया से कुछ सभ्य हैं। ये तरीके से खेती-बारी करते हैं, मवेशी पालते हैं और घर बना कर रहते हैं।

ढेलकी खड़िया के बाद दुध खड़िया जाति के लोग आए। इनका क्षेत्र शंख, कोयल और कारो नदी के किनारे है। इन्होंने ढेलकी खड़िया को खदेड़ कर गुमला, पालकोट और सिमडेगा के इलाके में अपना अऔ जमाया। 'ढेलकी खड़िक्या से कुछ अधिक सभ्य हे। यों तो खड़िया जाति एक स्थान पर अधिक दिनों तक रहना नहीं पसन्द करती हैं वह बराबर यहाँ से वहाँ घुमती ही रहती है फिर भी ढेलकी और दूध खड़िया में यह बात नहीं है। आज भी ये शंख और कोयल नदियों के किनारे-किनारे गुमला और सिमडेगा सबडिविजनों में तथा संबलपुर और गांगपुर तक फैले हुए हैं।

खड़िया लोगों के विशय में यह कहा जाता है कि शायद ये मुण्डा लोगों से भी पहले से बसे हों और जब मुण्डा आये तो उन स्थानों को छोड़कर दूसरी जगह चले गये हों। क्योंकि आज भी खड़िया जाति की अपनी भाशा और संस्कृति की छाप जहाँ-तहाँ मिलती है। बरवे, छेछारी, तोरपा, तपकरा, मूड़हू इन गाँवों के नाम खड़िया भाषा के हा हैं। परन्तु आज वहाँ खड़िया लोग नहीं मिलते। इससे यह निश्चय होता है कि मुण्डों के पहले से इन इलाकों में खड़िया जाति निवास करती थी।

निष्कर्ष - इनकी भाशा, चाल-चलन रीति-रिवाज, गोत्र-विभाजन आदि सभी मुण्डा जाति के समान ही है। खड़िया की विशेशता यह है कि यह दूर-दूर के प्रान्तों में भी फैली हुई जाति है। छोटानागपुर के राँची, सिंहभूम, धनबाद के जिलों के अतिरिक्त पश्चिम बंगाल के मिदनापुर, बाँकुड़ा जिले में; मध्य प्रदेश के विलासपुर के जिले में तथा रायगढ़ के जिले में भी यह जाति बसी हुई है।

इन जातियों के अतिरिक्त असूर, जोआंग, संताल, हो, बिरहोर, कोकडू गदाबा आदि जातियाँ भी हैं जो जंगल पहाड़ में बसी हुई है। परन्तु इनकी संख्या कम है। संथाल, असूर, हो, बिरहोर ये जातियाँ छोटानागपुर तथा संथाल परगना में पाई जाती है। जोआंग क्योंझर में, कोकडू और गदाबा जाति मध्य भारत में पाई जाती है। ये सभी जंगल और पहाड़ ही पसन्द करने वाली जातियाँ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एस.एल.दोषी : समकालीन मानवशास्त्र, प्रकाशक रावत पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, संस्करण 2009 पृष्ठ 425
2. राजेन्द्र कसवा : भारत बनाम इण्डिया, प्रकाशक बाजिया बुक कम्पनी, जयपुर संस्करण, 2011 पृष्ठ 15
3. स्टवी आव हिस्ट्री के खण्ड, 9, पृष्ठ 756
4. राम आहूजा, भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2007 पृष्ठ 64
5. वैद्य नरेश कुमार, जनजातीय विकास मिथक एवं यथार्थ, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली (2003)
6. पाटिल डॉ.अशोक डी, भील जनजीवन और संस्ंति, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल (1998)
7. श्रीवास्तव, एआरएन, जनजातीय विकास के पाँच दशक, ज्ञानदीन प्रकाशन, पटना, राँची, इलाहाबाद (2000)

****

सारदा प्रसाद किस्कूवाक् आसोल जिनिस आर ओऩा रेयाक् पाछनाव

ज्योत्सना टुडू *

प्रस्तावना - होर तेय पारोव़रेमित्टाड. सोन्दहाड़ बाहा रेयाक् सोय तेम आँदकाव गोढ़ोक् आ, ओऩा वाहा दो सेतोङ तेहों वाङ गोसोक् आ आर ओऩा रेयाक् सोन्दहाड़ नाम तिस हों वाङ चावाक् आ, नोवा धारतिरे जाहाँ तिन दिन सानताड़ होपोन जिवात् बोन ताहेंना, उनदिन ओना बाहा रेयाक् सेबेल रासा चेपेत् काते मोने जिवबो राड़ेजा।

चेत्, बाडाय सानायेत पेया बाहा रेयाक् ञुतुम ? हापे तोबेञ लाइ आपे रेगे। बाहा रेयाक् ञुतुम ढ़ो टोटको मोलोङ। आढ़ोमको ढो पातांग सुराइ ञुतुम तेहों को बाडाय गेया। मेन आपे नाहाक् नोंका हों ताम ञुतुम! होय, नोंका ञुतुम ताहें ढाड़ेयाक् गेया। बानारगे ओको ञुतुम। आसोल ञुतुम ढ़ो सारदा व्रसाद किस्कु।

ओनोंड़हिंया सारदा प्रसाद किसकु ढ़ो पोछिम बाङला रेयाक् पुरूलिया जिलारे मेनाक् दाँड़िकाड़ोबा आतोरे 1929 साल रेयाक् ढोशार फेरवरी हिलोक् ए जानाम लेना। सोर सोपोर होड़ दो भालुबासा आतोरेन सारदा प्रसाद किस्कु मेनते को बाडायेया। आसोलरे भालुबासा ढ़ो मित्टाङ हुडिञ हुडिञ डि काना। दाँड़िकाड़ोबा ढो मौजा काना आर ओना ञुतुम तेगे ओनोरोम ए एम आकत्ते दिशोम होड़ ढ़ो दाँड़िकाड़ोबा गेको बाड़ाया। आपात् ञुतुम ढ़ो चोरोन किसकु आर एँगात् ञुतुम खान धोनोमोनि (धुनि)।

चोरोन किसकु ढ़ो आडि रेंगेच् होड़। सोहराय साँमड़ाक् लेका ओत् हासा। आसुलोक् लागित् ढ़ोय बाछावान ताहें बानिज बेपार। मेताक् मे, सिम, मेरोम, भिडि बेबसा। इनका कातेगे चोरोन किसकु ढो मित् कोड़ा आर पोनया कुड़ि गिढराइ हारालेत् कोवा। उनि साधेर मित् कोड़ागे सारदा। आबोठेन ढ़ो उनियाक् ओपोरोमगे कोबि सारदा प्रसाद किसकु लेकाते।

सारदा प्रसाद किसकुवाक् गिदरा जियोन दो आडि हाहाड़ा। उन बिढ़ाल होड़ गिढार दो आडि कोम गेको पाड़हाक् कान ताहें। रेंगेच् ओरेच् होड़ मा बाङ लेकागे। आच् बाबा चोरोन किसकु दो ओलोक् पाड़हाव रेयाक्, मोरमोय बुजहाव लेत्ते ई 1938 सालरे जोरोबाड़ि निम्नो प्राथोमिक विद्यालय रेय हाते खोड़ि ओचो लेदेया। ओना तायोम आको सोर बोड़गोड़िया उच्चो प्राथोमिक विद्यालय खोन इं 1940 सालरे पाहिल दारजा (First Division) हामेट कातेय ओड़ोक लेना। इनाा तायोम बाँकुड़ा जिला रेयाक् राणीबाँध मिडिल इंगलिश इस्कुल रेको भोरत्ति कादेया। राणीबाँध आर दाँड़िकाड़ोबा दो आड़ि फाराक गेया। हेच् सेन काते दो बाय इस्कुल ढाड़ेयाक् आ। आच् बाबा रेन हातोम गोड़ोमाक् आतो तालगोड़ा खोनगे इं 1943 सालरे मेरिट स्कोलारशिप ए ञाम लेढा बिडाउरे दुडुप् खातिर आर ओना होतेच् तेगे चेतान सेच् पाड़हाक् रेयाक् आँत् होंय ञाम लेढा।

इस्कुल जियोनरे मानोतान किसकु दो आड़ि लासेर हाताङ ओलोक् गिढराय ताहेंकाना। राणीबाँध इस्कुल खोने पाश केत् खान खातड़ा हाइ इंगलिश इसकुल रेय भोरतियेना। खातड़ा रेढो, बोडिंग रेय ताहेंन कान ताहें। स्कोलारशिप ञाम लेत्ते बोडिंग खोरोच चावले आर इस्कुल रेयाक् बेतोन हों छाड़ ताहेंकान ताया। मानोतान किसकु ढो गिदरा, खोनगे इस्कुलरे पाहिल ठाँवे हामेट एत ताहेंनते मास्टार को हों आड़िको कुशियाय कान ताहें। आडि कोमे रोड़ा आर उढ़ार होड़ लेकाय ताहेंना। ई 1948 सालरे खातड़ा इस्कुल खोन First Division ते मेट्रिक ए पाश लेढा आर ओना तायोम Bishnupur Ramananda College रे I.Sc. रेय भोरति लेना। मेनखान होड़मो, जिवी बेश बाङते पाड़हाक् बागि काते ओड़ाक् ए हेच् एना। नोते खोरोच् रेयाक् टोन्टा हों ताहेंकानते आयाक् चेतान सेच् आक् पाड़हाक् रेयाक् कुकमु ढो नोण्डेगे मुचात् एना।

पाड़हाक् रेयाक् सानाम आँत् मुचात् एन खान इं 1950 रे बान्दोवान हिन्दी शिक्षोन केन्द्रोरे ट्रेनिंग ए एम केढा। ट्रेनिंग ए एम केढा। ट्रेनिंग ढो पे चाँढो रेयाक् ताहेंकाना। ओना तायोमगे जामतोड़िया सिनियार बेसिक इस्कुलरे चेचेत्इच् लेकातेय बोहाल लेना। इं 1961 सालरे बिधानसोभा रेयाक् भोट रेय तेंगोयेना, मेनखान बाय ढाड़े लेना। आढो, थोड़ा दिन ढ्डुप् ताहें काते आरहों, प्राइमारी इस्कुल रेन चेचेत् इच् रेयाक् कामि रेय बोहालेना आको आतो खोन तुरूइ माइल गान सागिञ सिंगराइडि आतोरे। ओण्डे बार सेरमा गान ताहें काते आयाक् ओड़ाक् सोर बोड़दाहि प्राइमारी इस्कुल रेय उचाड़ लेना आर ओण्डे खोनगे इं 1989 साल जानुवारी चाँढो चाकरि जियोन खोने जिराउ लेना।

होड़ सोमाजरे आयमागे माहाशोय मेनाक् कोवा मेनखान भाले चेचेत् इच् से माहाशोय लेकाते ढो सारदा प्रसाद किसकुगे मित् होड़ ओकोय ढो उनरेन दिशोम गोमके मानोतान भि. भि. गिरि याक् तीते इं 1973 सालरे राजधानी दिल्ली खोन शिरपाइ आताङ आकाढा।

सारदा प्रसाद किस्कू ढो कानाय मित् माराङ सोमाज सुसारिया। ओलाक् पाड़हाव बागि केत् तायोम पारशि आर साँवहेंत् लाड़चाड़ साँवते आदिवासी लाड़ावना रेहों किस्कु जी ढोय ढाड़ खाढले लेना। ओना बिढाल एनाडाक् मानभूम जिला आर निताक् पुरूलिया जिला रे आपनार जाहाँन गाँवता बाङ ताहेंकानते बाँकुड़ा आदिवासी महासभा रेय ढाड़ सोर लेना। बाडायोवआ, 1957 साल रे पुरूलिया जिलारे मित् टाङ गाँवता बेरेत् लागित् मित् माराङ टुपुडुप ए होहो लेढा। मेनखान आढोम होड़ जुढाते आदिवासी सानताड़ कोवाक् गाँवता बाङ को होय ओचो वात् ताहें। ओना खोन आडि दिन तायोम, पुरूलिया जिलारे सुसार गाँवता– ञुतुमते आडि केटेच् गाँवता को बेरेत् लेढा।

किस्कुजी ढो ओना रेन सभापति लेकातेय बाछाव लेना। उन जोखान

* शोधार्थी, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

सोमाज रेयाक् बाड़िच् आक् बिरोध रे आर एटाक् सोमाज रेन होड़ ठेन खोन हेतेल गेंजेल ओचोक् बिरो रे लाटु लाटु सामाजिया लाड़ावना रेहों किस्कुजीयाक् एमेम ताहें काना।

आतो दिशोमरे होर डाहार तेयार ञुय दाक् बोन्धेज लागित् कुञ, डाडि, इस्कुल, हासपाताल, लाइब्रेरी एयान बेरेत् सारदा प्रसाद आक् आयमा एनेम मेनाक् आकादा। उनी दो बिन हाप्राव ते दाड़े काते 18 सेरमा अंचल प्रधान–ए ताहें काना।

मेनखान तिनरे ङान पातयाउ बिरोध रे (1984) आँढ़ोड़–ए एहोप केदा, उन खोन गे आयमा लेका हेतेल गेंजेल साहाव होय एन ताया। साँवता रेन आदोम को बाहरि को तेंगोयेना। काथाच् सारदा दो डान भुत बाय पातयाउ आकोवा। सोमाजे हिरखावाक् काना। उनी सारदा दो बानुया – एमान काथा राकाप् एना। आसोल रे डान पातयाउ आर बाङ पातयाउ मुद रे एहोप् एना ठापाठोक्। एनहों सारदा प्रसाद दो रिडाच् रोड़ोच् आर आँधा पातायाउ बिरूध रे आडि दिन काजाक् लाड़ावनाय आयुराकादा। नोआ होतेच् ते उनि दो आयमा होड़ाक् एगेर हुही आर सानताव साहाव होय आकान ताया।

आदोम जोखान दो आयाक् होटोक् सोर ते कापि तारवाड़े हों, झाल झालाव पारोमाकाना। एन्ते रेहों सारदा प्रसाद दो आयाक् होर खोन नासे हों बाच पाच आकाना।

आँधा पातयाउ, रिड़ाच् रोडोच् चाबावाकाना से बाङ ओना दो तुलाजोखा रेयाक् काथा काना। मेनखान सारदा प्रसाद किस्कु आक् जियोन रे जाहाँ होय भाण्डो गुरलाव पारोमाकना, ओना रेयाक् आँझाट एलाङ ते 1986 साल रेयाक् 13 मार्च हिलोक् हाइपार–टेनशन–काम–पैरालिसिस आजार ते होड़मो, रेयाक् मित् काँड़ ञुरहा लेन ताया। एनहों साँवता लातिगत, लागचार लागित् साँवहेंत् किँसाड़ लागित् लेंगा तीते कोलोम माय साप् लेत् गे, बाइसि से सभा कोरे हों ठेंगा ते तिरूप् तिरूप् तेय सेटेरोक कान ताहें। रासका रेयाक् काथा, सारदा प्रसाद किस्कु दो दिशोम होड़ ठेन खोन सेबेल दुलाड़, मानोत् आर सारहाव होंय ञाम आकात् आ आयमा। ओनोडहिंया लेकाते 1960 साल रे आबोवाक् गाँवता खोम सारहाव साकाम, 1967 साल रे आदिवासी साँवता सेचेत् लाक्चार सेमलेत् पाहटा खोन मान साकाम, 1973 साल रे भारतीय साहित्य बाइसि, देवघर (बिहार) खोन आर 1981 साल रे महाराजनगर आदिवासी क्लाब, पुरूलिया खोम मान साकाम, 1982 साल रे बिक्रमशीला, हिन्दी विद्यापीठ खोन कविरत्न संताली राइटार्स रिसेप्शन कोमिटि, साँतारागाछी खोन हिहिड़ी पिपिड़ी शिरपा, बिहार सरकार राज भाषा विभाग खोन (1986–87) जनजातीय पुरस्कार, 1989 साल रे पोछिम पाङला सरकार पाहआ खोन गुणीजन ताम्रपत्र, भारत जाकात् सानताड़ी ओनोलिया गाँवता खोन सारहाव साकाम (1989), राय मंगल पाहटा खोन आदर्श शिक्षक, डाइनि बिरोधी आन्दोलन आर पारशि साँवहेंत् रे एनेम होतेच्ते 26.9.92 रे स्मारक प्रदान आर संताली साहित्य परिषद् कड़हड़बिल, दुमका खोन गुरू गमके सारहावे आताङ आकादा।

नोङकागे आर हों आयमा हुडिञ हाप्ड़ाक् गाँवता खोन सारहाव आर मान साकाम ए ञाम आकादा। नोङकान मित् सोन्दहाड़ बाहा 1996 साल रेयाक् 18 मार्च (1402, चात रेयाक् पोन माहाँ) हिलोक, आच् रेन ओड़ाक् गोमके सरस्वती, गोड़ोम कोड़ा, गोड़ोम कुड़ि आर होपोम एरा जास्तीमुनी आर उनी रेन बारया कुड़ि गिदरा साखी दोहों ओटो काते नोवा धुड़ि धारति खोन टुंगाव ञुर एना।

कोबि दो साहु रामचाँद मुरमु रेन चेला कानाय। कोबियाक् ओनोड़हें कोरे साधु रामचाँद मुरमुवाक् छोन्द ो गाबान रेनाक् चितार बोन ञेला। कोबि दो सानाम ओनोड़हेंगे छोन्दो गाबान तेय गाक् आकादा आर शबादको हों कोटाप् बाछाव काते बेवहार आकादाय। पाड़हावरे आडि आलगा आर मोज आटकारोक् आ। ओनाते जोतो उमेर रेन होड़कोगे आडि रासका को आटकारा।

कोबियाक् आडि गान सेरेञ ओनोड़हें मेनाक् आ जाहाँको पाड़हाव तेदो आडि आलगा गेया मेनखान ओनाको रेनाक् रासा से गाबे तेत् ञाम लागित् गाहिर उइहार रेनाक् लागति मेनाक् आ। गाहिर साँहिच् बाङ उइहार लेखान मोने होयोक् आ ओल दो आडि साधारोन मान रेयाक्। इञ आम आर सानाम कोगे नोंकानाक् ओलको दो बो ओल दाड़ेचाक् आ। जेलका –

आपे दोपे मेना
सोबोरनाका दाक् दो आरशियाना।
इञ दोञ आकात् सोबोरनाका दाक्,
आपे काथाते दोञ एड़े आ चाक्।

प्रेफेसार ड: सुनीति कुमार चट्टोपाध्याय लेकान होड़ हों कबियाक् ओलोक् दाड़े ञेल काते मेन आकादाय – साँवताल नोबो जागृति श्री सारदा प्रसाद किस्कु आधुनिक साँवतालीर सोबपिझा प्रतिष्ठा सोम्पोन्न कबि। डोमान साहु समीराक् काथा लेकाते – Upto Bottom कोबि कानाय। आर महाश्वेता देबी याक् काथा दो – 'सारदा प्रसाद मोस्तो मापेर मानुष, श्रद्धा कोरि ताँके।' नोवाको काथा खानबो बाडाय दाड़ेयाक् आ कोबि दो एटाक् सोमाज रेन होड़ को ठेन हों ओनोलिया कोठेन हों गुनमानाब ए ञाम आकादा।

तोरजोमा साहित्य रेहों कबियाक् दोखोल दो आडि चेतान थोक रेनाक् मेनतेगे लेखाक् आ। कबि रबीन्द्रनाथ ठाकुर आक् ओलोक् रादा ठिक साँहिच् दोहो काते उनियाक् आडि गोटाङ ओनोड़हे तोरजोमा आकदाय। जेलका –

ओलोक तेहेञ बाबोन चालक्
तेहेञ मा थो छुटि।
गोडा रेबोन उरामालाक्
बेनाव आबोन टुटि।।

कोबि आडि कोम काथाते आडि गाहिर भाब ए सोदोर आकादा। जेलका –

कुरूकुटुते देबो ओल
एटाक् भाषा खोन रोड़ ताबो देबो रोल।

एनेच् सेक्रेञ रूसिकाको ठेन हों कबियाक् सेरेञ रेनाक्, कोदोर दो आडिगे बाड़ति गेया। 1960 साल रेनाक्, लाहा तायोम ओकतेरे बाँकुड़ा, पुरूलिया जेला रेन सेक्रेञ रूसिका कोमा हें गे एटाक् जेला रेन रूसिका कोवाक् मोने रेहों कबियाक् सेरेञ आडिगे आँदोड़े सिरजाउ लाक्आ।

आडि गोटाङ नावा ओनोलियाको कबियाक् ओलको पाड़हाव काते आकोवाक्, आलोक् दाड़े बाड़ति रेयाक् दाड़ेको ञाम आकदा। मित् काथा तगबो मेन दाड़ेयाक् आ सानताड़ी साँवहेत् उत्नावरे कबि सारदावाक् ओलको पाड़ाहाव आर चोर्चा रेनाक् आडिगे लागति मेनाक् आ।

गोड़ो हाताव आकान पुथीको :–

1. किस्कु, सारदा प्रसाद: सारदा अनल माला, मार्च, 2005 सिदू कानहू फाउन्डेसान आसानसोल।
2. हेब्रम, परिमल, संताली साहित्येर इतिहास, 2007, कोलकाता, पश्चिम बंगाल।
3. बास्के, राबन, हड़ महल रेन ओकिलान को, जानबारी 2010, बाली, हाबड़ा।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

मंडला जिले में आदिवासियों की आर्थिक स्थिति पर योजनाओं का प्रभाव

डॉ. श्रीमति शुभांगी धगट* श्रीमति अनामिका तिवारी **

प्रस्तावना – देश में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति विकास करने में सक्षम और योग्य हो तथा विकास और खुशहाली में समान रूप से भागीदार है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति का भौतिक आर्थिक एवं सामाजिक रूप से सामान विकास हो ताकि कोई भी वर्ग शोषित या वंचित ना रह सके। समाज में सभी सुखी स्वस्थ्य सुरिक्षित शांतिपूर्ण सदाचारी एवं सम्पन्न हो। वास्तव में मानव समाज और राष्ट्र के विकास की यही अवधारणा है।किन्तु दुरभाग्य से हमारे समाज का एक बड़ा भाग जो जनजाति अदिवासी समुदाय कहलाता है। वह अभी तक राष्ट्र और समाज के विकास की मुख्य धारा में पूर्णरूपेण सहभागी नहीं हो पाया है जनजाति समुदाय अनेक प्रकार की समस्या से ग्रसित है। जिनके कारण उनके जीवन का स्वाभाविक विकास अवरूद्ध है तथा उनके समस्त प्रकार की प्रगति के पथ पर अनेक प्रकार की बाधायें उत्पत्र हो रही है।

असल में सदियों से जाति के नाम पर वचित रखे गये अनुसूचित जनजाति वर्ग के लोग या वनवासी जिसे हम आदिवासी कहते है प्रदेश के विकास की असल आधार भूमि है। वे ही विकासके संवाहक है और विकास के गतिमान बने रहने के महत्वपूर्ण अंग भी यह ऐसी जाति है जो सदियो से सुविधाओं से वचित है। और जिनका अर्थिक विकास उतना नहीं बढ़ा है जितना बढ़ना चाहिये था। यदि अर्थिक गतिविधियों का विश्लेषण करे तो सर्वागीण विकास का मतलब है कि जो अतिम छोर पर खडा है विकास की किरण ना की केवल उस तक पहुंचे बल्कि वह विकास की रफ्तार में आगे बढे।

एमपीरियल गजेटियर के अनूसार एक जनजाति परिवारो का संकलन है जिसका एक नाम होता है जो एक बोली बोलती है समान्य भूभाग में निवास करती है जो अन्तर विवाह नही करती।

मध्यप्रदेश अनुसूचित जनजाति की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण राज्य है यहां अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 2011 के अनुसार 15316784 ....है जो कुल जनसंख्या का 21.1 प्रतिशत है। मध्यप्रदेश शासन द्वारा इन जनजातियो के के लिए विभिन्न विकास योजनाएं सचालित की जा रही है और काफी हद तक इन योजनाओं का जाभ अदिवासी जनजाति को मिला है इसी परिप्रेक्ष्य शोधार्थी ने अपने अध्ययन का क्षेत्र मण्डला जिला चुना है। वस्तुत: किसी भी देश राज्य या जिले के विकास के संदर्भ में अर्थिक सामाजिक घटक अत्यन्त महत्वपूर्ण होते है। जिनका अध्ययन किये बिना विकास के अध्ययन की कल्पना व्यर्थ है। मण्डला जिला न केवल ग्रामीण जनसंख्या बाहुल्य जिला है अपितु ये जनजाति लोगों के संख्याा का अनुपात भी मध्यप्रदेश के जिलो में सर्वोच्य है जिले में अनुसूचित जनजाति अर्थात अदिवासी की कुल जनसंख्या का 58 प्रतिशत है अर्थात मण्डला अदिवासी जिला है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये सरकार ने इसे 1971 में वेधानीक रूप से आदिवासी अर्थात अनुसूचित जनजाति क्षेत्र घोषित कर दिया गया यहां तक की जिले की संसदीय एवं विधान सभा सीटे आदिवासी उम्मीदवारों के निर्वाचन हेतू सुरिक्षत कर दिया गया। तालिका क्रमाक 1. में विकासखण्डवार अनुसूचित जनजाति की जनसख्या दर्शायी गई है।

तालिका क्रमांक 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

प्रस्तुत शोध अध्ययन में अनुसुचित जनजाति के आर्थिक उन्नयन मध्यप्रदेश शासन की योजनाओ का क्या प्रभाव पड़ा है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. अनुसुचित जनजाति की आर्थिक सामाजिक पृष्ठ भूमि का अध्ययन करना।
2. जनजाति क्षेत्रो में संचालित विभिन्न शासकीय योजनाओं का आकलन।
3. जनजातियों के आर्थिक विकास मे शासकीय योजनाओ की भूमिका एवं प्रभाव का अध्ययन।

शोध अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यप्रदेश के आदिवासी वाहुल्य मंडला जिले का चयन किया गया है।

शोध अध्ययन की अवधि – अध्ययन के लिये सन् 2010-2011 से सन् 2014-2015 तक पांच वर्षो के समंक एवं आकड़े लियें गये है। उन्ही आंकडो पर विश्लेषण कार्य करके निष्कर्ष निकाला गया है।

शोध अध्ययन की प्रविधि

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन मे शोध प्रविधि के लिये प्राथमिक एवं द्वितीय समंको का संग्रहण किया गया है। प्राथमिक समंको हेतु प्रत्येक विकासखण्ड के चिन्हित गांवो में पच्चीस- पच्चीस परिवारों का न्यादर्श के आधार चिन्हांकन किया गया है। जिसमें सभी 9 विकासखण्डो के अनुसुचित जनजाति का वर्गवार अध्ययन किया गया है। जो कि तालिका क्रमांक 02 में दर्शाया गया है।
2. प्रस्तुत शोधकार्य में शोध उपकरण के रूप में स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है।
3. संकलित समंको विश्लेषण करने के लिये प्रतिशत एवं परिकल्पना की सार्थकता ज्ञात करने के लिये काई वर्ग परिक्षण किया गया है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाकौशल कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 02 : सर्वेक्षित परिवारो की संख्या

क्रं.	विकासखण्ड का नाम	कुल ग्राम की संख्या	परिवार संख्या
1	मोहगांव	20	57
2	मवई	7	39
3	घुघरी	6	31
4	बिछिया	10	67
5	बीजाडांडी	15	57
6	नारायणगंज	20	65
7	नैनपुर	12	58
8	बम्हनी	16	71
9	निवास	8	32
		114	477

शोध अध्ययन के परिणामों का विश्लेषण :

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षित परिवारो का उनकी आय के स्त्रोतो के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया जिसमें कुल प्रतिदर्श 477 आदिवासी परिवारो में से 39 प्रतिशत कृषि एवं पशुपालन में 17 प्रतिशत व्यवसाय मे 11 प्रतिशत नौकरी में 28 प्रतिशत मजदुरी और 5 प्रतिशत अन्य रोजगारो मे संलग्न पाया गये। जो कि तालिका में दर्शाया गया है।

सर्वेक्षित परिवारो के आय का स्त्रोत

क्रं.	विकासखण्ड का नाम	सर्वेक्षित परिवार	प्रतिशत
1	कृषि	186	39
2	मजदुरी	133	28
3	व्यवसाय	81	17
4	नौकरी	52	11
5	अन्य रोजगार	23	5
		477	100

क्रं.	प्राप्त अभिमत	सर्वेक्षित परिवारो की संख्या	योजनाओ की जानकारी प्रतिशत
1	हां	290	61
2	आंशिक	119	25
3	नही	68	14
4	योग	477	100

शासन की योजनाओ की जानकारी एवं लाभ का प्रतिशत

क्रं.	प्राप्त अभिमत	सर्वेक्षित परिवारो की संख्या	लाभ की स्थिति प्रतिशत
1	हां	271	57
2	आंशिक	104	22
3	नही	100	21
4	योग	477	100

तालिका से स्पष्ट है कि परिवारो को जानकारी होने के बाद भी योजनाओ का लाभ नही ले पा रहे है। ये अशिक्षा एवं ज्ञान के अभाव एवं शासकीय कर्मचारियो की अपने कार्य के प्रति उदासिनता का सुचक है।

आर्थिक उन्नयन में योजनाओ का प्रभाव

क्रं.	प्राप्त अभिमत	सर्वेक्षित परिवारो की संख्या	आर्थिक स्थिति मे सुधार कार्य प्रतिशत
1	हां	290	61
2	आंशिक	105	22
3	नही	81	17
	योग	477	100

क्रं.	प्राप्त अभिमत	सर्वेक्षित परिवारो की संख्या	शिक्षा का स्तर प्रतिशत
1	हां	319	67
2	आंशिक	105	22
3	नही	52	11
	योग	477	100

तलिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित परिवारो में मात्र 61 प्रतिशत परिवारों के आर्थिक विकास पर शासकीय योजनाओ का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। 22 प्रतिशत परिवार योजनाओ जानकारी होने के बाद भी योजनाओ का लाभ नही ले पा रहे है। एवं 17 प्रतिशत परिवारो को योजनाओ की कोई जानकारी नही है। आर्थिक विकास के दौड़ से वे बहुत दुर है।

सुझाव:

1. अनुसुचित जनजाति आदिवासी के विकास हेतु मध्यप्रदेश शासन द्वारा संचालि विभिन्न विकास कार्यक्रमों उच्च स्तर पर सतत जांच व निगरानी कर विकास कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियांवन किया जाना चाहिये। ताकि आदिवासीयो को योजनाओ का सही लाभ दिलाया जा सके। साथ ही विकास योजनाओ की सफलता के लिये आवश्यक है उनकी सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित किया जाये।
2. जनजाति वर्ग लोगो को उद्यमी बनाने तथा व्यवसायिक दृष्टिकोण अपनाने तथा उच्च जीवन स्तर जीने की महात्कांक्षा जाग्रत करने के आवश्यकता है। ताकि उनका स्वप्रेरित व स्वयं के प्रयासो से समग्र विकास हो सके।
3. आदिवासी मे प्रारंभिक शिक्षा के स्तर को बढाने का प्रयास होना आवश्यक है तभी आदिवासियों का आर्थिक एवं सामाजिक विकास संभव हो पाएगा। तथा शासन द्वारा संचालित योजनाओ का शत् प्रतिशत लाथ उन्हे मिल पाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. आदिमजाति कल्याण एवं विकास विभाग से प्राप्त आंकडे।
2. आदिवासी विकास की योजनाये।
3. कार्यालाय जिला मंडला से मंडला सांख्यिकि पुस्तिका वर्ष 2011-2012 से 2014-2015।
4. इंटरनेट द्वारा प्राप्त आंकड़े।
5. डब्लू टी.ग्रिसन-आदिवासी की समस्याऐं मंडला जिले के संदर्भ में।
6. गेविंद चंद्र रथ- भारत में आदिवासी विकास(सागा इंडिया)।

तालिका क्रमांक 01

क्रं.	विकासखण्ड का नाम	विकासखण्ड की जनसंख्या	अनुसूचित जनजाति	प्रतिशत	अनुसुचित जाति	प्रतिशत
1	मोहगांव	77733	48613	63.82	3186	4.1
2	मवई	98775	74131	43.27	1064	4.2
3	घुघरी	95090	70975	74.64	1617	1.7
4	बिछिया	149120	83320	71.62	9466	6.35
5	बीजाडांडी	75545	62217	82.36	781	1.03
6	नारायणगंज	85825	60226	70.17	1976	2.3
7	नैनपुर	127718	72609	56.85	9466	6.35
8	बम्हनी	151026	74407	61.21	6064	7.83
9	निवास	63884	42937	67.21	5001	7.13

****

बस्तर : 'नक्सली हिंसा एवं प्रतिरोध की चेतना, पूर्वाग्रह एवं विश्लेषण'

डॉ. अंजू तिवारी * अमित कुमार ** डॉ. रामरतन साहू *

शोध सारांश – नक्सलवाद कम्यूनिस्ट के क्रांतिकारियों के आंदोलन का औपचारिक नाम है जो भारतीय कम्यूनिस्ट आंदोलन के फलस्वरुप उत्पन्न हुआ। नक्सलबाड़ी से प्रारंभ इस आंदोलन को भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता चारु मजूमदार और कानू सन्याल ने सत्ता के खिलाफ एक आंदोलन का रुप दिया। ये लोग लेनिन और मार्क्स के सिद्धांतो से प्रभावित थे। आंदोलनकारियों का मानना था कि 'भूमि उसी का है जो उस पर खेती करें।' सामाजिक जागृति के इस आंदोलन पर कुछ वर्षो बाद राजनीति का प्रभाव बढ़नें लगा तथा यह आंदोंलन अपने मुद्दों से भटक गया।

प्रस्तावना – भारत का हृदय स्थल छत्तीसगढ़ और छत्तीसगढ़ का हृदय बस्तर। प्राकृतिक संपदा और वनों से आच्छादित यह क्षेत्र जहाँ अपनी खूबसूरती के लिए विख्यात है तो दूसरी ओर सभ्य दुनिया के लिए अबूझमाड़, चित्रकोट जलप्रपात, कुटुमसर गुफाओं, घोटुल, करमा नृत्य और कच्ची शराब पीकर उन्मत्त होते आदिवासी जीवन के लिए प्रचारित किया जाता है। महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश और उड़ीसा से सटे बस्तर के इलाको में तेलगू, मराठी और उड़िया नक्सलवादी नेतृत्व बेहतर संगठन क्षमता के आधार पर छत्तीसगढ़ में छा गए।

नक्सलवाद – नक्सलवाद शब्द की उत्पत्ति पश्चिम बंगाल के नक्सलबाड़ी गांव से हुई थी। भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता चारू मजूमदार और कानू सान्याल ने 1969 तात्कालिक सत्ता के खिलाफ एक सशस्त्र आन्दोलन शुरू किया। मजूमदार चीन के कम्प्यूनिस्ट नेता माओत्से तुंग के बड़े प्रशंसक थे। इसी कारण नक्सलवाद को 'माओवाद' भी कहा जाता है।

सामाजिक जागृति के लिए शुरू हुए इस आन्दोलन पर कुछ सालों के बाद राजनीति का वर्चस्व बढ़नें लगा और जल्द ही अपने मुद्दों और रास्तों से भटक गया। नक्सली आन्दोलन के प्रणेता कानू सान्याल ने आन्दोलन के राजनीति का शिकार होने के कारण और अपने मुद्दों से भटकनें के कारण तंग आकर 30 मार्च 2010 को आत्महत्या कर ली।

शोषण और भ्रष्टाचार से लिप्त हमारी पतित व्यवस्थाओं के विरोध स्वरूप उत्पन्न विद्रोह पूर्ण विचारधारा ने एक जन आन्दोलन के रूप में विकसित होते हुए आतंक का पर्याय बन सम्पूर्ण भारत में अपने पैर पसार लिए हैं। यह एक कटु सत्य है कि भ्रष्ट व्यवस्था और पतित नैतिक मूल्यों के प्रतिकार से अस्तित्व में आए नक्सलवाद को आज भी वास्तविक पोषण हमारी व्यवस्था द्वारा ही मिल रहा है। वह व्यवस्था जिसमें हम सबकी भागीदारी है................ सरकार की भी, और समाज की भी।

कई बार तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि हमारी व्यवस्था की रूचि नक्सलवाद को समाप्त करने के स्थान पर उसे बनाए रखनें में ही है। व्यवस्थाएं आंकड़ों में चल रही है और आंकड़े कागज पर होते हैं। लूटमार के इस विकृत आखेट पर हम सबने अपना नक्सलवाद विकसित कर लिया है। सालो से बस्तर में नक्सलियों की समानान्तर सरकारें चल रही है। यह अंत:सरकारें कबीलाई व्यवस्था का रूपांतर है। नक्सलियों ने अब माओवाद का नकाब ओढ़ लिया है। उन्हे सत्ता चाहिए वह भी हिंसा से।

अशिक्षा और विकास कार्य की उपेक्षा ने स्थानीय लोगों और नक्सलवादियों के बीच के गठबंधन को और भी मजबूत बना दिया है। नक्सली आंतरिक सुरक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती बन चुके हैं।

नक्सल वाद के कारण – छत्तीसगढ़ के हृदय स्थल अबूझमाड़ .... 4 हजार वर्ग कि0मी0 के क्षेत्र में बसे 260 गांवो की 27 हजार की मुख्यत: मारिया आदिवासियों की आबादी का यह इलाका महसूस ही नहीं कर पाया कि कहीं कोई सरकार भी होती है। संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार ने 2004 के घोषण पत्र में नक्सलियों से वार्ता करने का वादा किया था। वार्ता शुरू हुई और जल्द ही खत्म हो गई क्योंकि नक्सलवादी संभवत: वार्ता के प्रयोजन बिन्दुओं और परिणामों को लेकर आश्वस्त नहीं थे। कल्याणकारी योजनाओं की असफलता का ठीकरा गरीब किसानों पर फोड़ दिया जाता था।

'नक्सलवाद' वस्तुत: बस्तर जैसे जंगलों में नहीं है। इसका वायरस तो मंत्रियों और अफसरों के जेहन में पैदा होता है। छत्तीसगढ़ में खनिज पट्टों के नाम पर पूरे प्रदेश को खोदने की तैयारी सफेदपोशो के द्वारा शुरू कर दी गई। यदि कोई भी सरकार ऐसे अहिंसक कृत्यों का संज्ञान नहीं लेगी तो नक्सलवाद क्यों नहीं उभरेगा। सरकारें नक्सलवादियों से तो कहती है कि वे यदि हथियार रख दे तो उनसे वार्ता की जा सकती है। जिन्होने हथियार उठाए ही नहीं है उनमें और हथियार हीन नक्सलियों में क्या फर्क है।

छत्तीसगढ़ के सक्रिय और जागरूक पत्रकार रूचिर गर्ग नक्सलियों की मांद तक पहुंचकर सत्य को खोजने की कोशिश करते रहते है। इनके अनुसार शोषण के अर्धसामंती अवशेष, जीवन की आदिम युगीन परिस्थितियां, सांस्कृतिक पहचान का संकट, भाषा को दबाने की कोशिशें आदिवासियों की बुनियादी अधिकारों को नकारती और उन्हे उनके परिवेश से खदेड़ती सत्ता, उनके संसाधनों के दोहन में लगे देशी और विदेशी उद्योगपति, पुलिस से लेकर वन विभाग तक सरकारी अमले के अंतहीन अत्याचार, उनकी उपज पर मुनाफा बटोरते स्थानीय सेठ साहुकार, उन्हे निरक्षर रखनें की कोशिशे उन्हे बेइलाज मारता स्वास्थ्य विभाग, कुपोषित रखती सार्वजनिक वितरण प्रणाली, धर्मातरण इत्यादि सभी आदिवासी समस्याओं ने प्रतिरोध के रूप मे समयाकाल आन्दोलन का रूप ले लिया।

* सहायक प्राध्यापिका (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोध छात्र (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
*** विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

तेन्दूपता आन्दोलन दण्डकारण्य में 1982 में ही शुरू हो गया था। इसके बाद नक्सलवादियों के नेतृत्व में आदिवासी किसानों ने हजारो एकड़ वन्यभूमि पर कब्जा कर लिया। 1987-88 के भीषण सूखे के दौरान नक्सलियों ने आदिवासियों को संगठित कर एक आन्दोलन चलाया। जिससे जनता में जुझारूपन बढ़ गया।

बदलती विकट परिस्थितियों ने छत्तीसगढ़ को सघन नक्सली हिंसा का प्रदेश बना दिया। आंकड़ो के अनुसर बस्तर संभाग में ही लगभग 1.5 लाख से अधिक नक्सली हो गए है। यह वामपंथ का सबसे हिंसक उदाहरण है। आतंकवाद और नक्सलवाद हिंसा पुत्र होने के बावजूद सौतेले भाई है, सगे नहीं। देश की सीमाओं पर गुर्राता आतंकवाद संविधान को चुनौती देता है। यह देश के सार्वभौम हिस्से को अलग राष्ट्र में तब्दील होने की हिमायत और हिमाकत करता है। जबकि नक्सलवाद इसके विपरीत राज्य व्यवस्था की खमियों के सबसे प्रबल और हिंसक प्रतिरोध का मुखौदा लगाकर एक राजनीतिक आन्दोलन के रूप में इतिहास से अपनी पहचान मांगता है।

गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपनी अमर कविता 'अंधेरे में' मे आज की इसी भयावहता की कल्पना की थी। तो विनोद कुमार शुक्ल ने आदिवासियों की ठंडी कातरता का तीखा और मार्मिक बयान किया है। इन आदिवासियों को भी अपने घर और परिवेश में रहने का हक है। उनकी संस्कृति को नष्ट करना भारतीय संस्कृति को नष्ट करना अथवा हत्या करना जैसे अपराध है।

वैश्वीकरण तो भारत जैसे देश के लिए कैंसर से कम नहीं है। सारी विपरीत परिस्थितियों के बावजूद नक्सलवादी हिंसा का समर्थन करना भारत के संविधान के प्रति अविश्वास करना है। इस अर्धविकसित राज्य जहां की वन एवं खनिज संपदा पर्यावरण की दृष्टि से भविष्य की ताकत है, यदि यहां से नक्सलवादी समस्या का हल निकल जाए तो यह राज्य भविष्य की समृद्धि के राज्य होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बस्तर : लाल क्रांति बनाम ग्रीन हंट - कनक तिवारी
2. परिशिष्ट : आई.ए.पी.एल./पी.यू.सी.एल., छत्तीसगढ़
3. परिशिष्ट : लोहिया रचनावली-'नक्सलबाडी'-डॉ0 राम प्रकाश लोहिया
4. समग्र छत्तीसगढ़ : छत्तीसगढ़ शासन

****

Women's Representation in Indian Politics

Dr. Kaniya Meda*

Introduction - Women's political empowerment and equal access to leadership positions at all levels are fundamental to achieving the Sustainable Development Goals (SDGs) and a more equal world. With limited growth in women's representation, advancement of gender equality and the success of the SDGs are jeopardised.[1] It is globally acknowledged that 'gender equality and women's empowerment' are at the core of achieving development objectives, fundamental for the realisation of human rights, and key to effective and sustainable development outcomes. However, on the contrary, despite their "proven abilities as leaders and agents of change", from the local to the global level, women's leadership and political participation is restricted.

The 2011 UN General Assembly resolution on women's political participation reiterated that "women in every part of the world continue to be largely marginalized from the political sphere, often as a result of discriminatory laws, practices, attitudes and gender stereotypes, low levels of education, lack of access to health care, and the disproportionate effect of poverty on women." Therefore, to eliminate the multi-faceted problem like gender inequality, a multi-pronged approach must be adopted; and among the various initiatives, political empowerment of women could act as a catalyst. Political empowerment could lead to opening more opportunities for women and as a result, create a level playing field for them.

Globally, several international commitments have been made, for achieving gender equality and these have emphasized on enhancing women's representation in political sphere. While the Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against Women (1979) upheld women's right to participate in public life, the Beijing Platform for Action (1995) called for removing barriers to equal participation. The Millennium Development Goals (2000) also took into account women's representation in parliament to measure progress towards gender equality. Over the past two decades, gender gaps have narrowed in various areas, viz., education, health, employment, legal rights of women, participation in governance, and so on. But, despite the improvement, substantial inequalities, with varying degrees, still persist across all the areas across countries. It would be noteworthy to mention that India is a signatory to all the international commitments mentioned above. However, India is far behind in achieving gender equality, especially in terms of representation of women in political decision making, among others.[2]

In today's political landscape, motherhood is often deployed as a tool to highlight the 'sacred' nature of a subject, ranging from the *Gau Mata* to *Bharat mata* and *Ganga Mata*. At the same time, issues around women's rights and empowerment, varying from triple *talaq* to Beti Bachao Beti Padhao, are regular topics of conversation in political circles. But an important question remains: do the men in Indian politics only want to talk about women, or are they also willing to make an effort to share power with them?

Women representation in numbers

The figures on the representation of women in parliament reveal an appalling state of affairs. According to a study conducted by *Inter-Parliamentary Union,* India ranks 149th in a list of 193 countries in terms of women's representation in the lower or single house of parliament (Lok Sabah, in the case of India) as of July 1, 2017. The average percentage of women's representation globally stands at about 22%, whereas in case of India it is a mere 11.8%. Countries like Rwanda, Burundi, Zimbabwe, Iraq, Somalia, Saudi Arabia, Fiji and Ghana rank higher than India. In South Asia, Nepal (48), Afghanistan (54), Pakistan (90) and Bangladesh (92) rank much higher than India. Even in the Rajya Sabah, the representation of women stands at a meagre 11.1%. An empirical study of the members of legislative assemblies reveals how skewed the gender representation is in state legislatures. Out of 4,128 legislative constituencies, only 364 are represented by women legislators.

State/Union territory	Women MLAs / Total MLAs	Percentage
Mizoram	0/40	0
Nagaland	0/60	0
Karnataka	6/224	2.67
Arunachal Pradesh	2/60	3.33
Manipur	2/60	3.33
Jammu and Kashmir	3/89	3.37
Himachal Pradesh	3/68	4.41
Goa	2/40	5

* Lecturer, SOS in Political Science and Public Administration, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

Punjab	6/117	5.12
Kerala	8/140	5.71
Assam	8/126	6.34
Meghalaya	4/60	6.66
Maharashtra	20/288	6.94
Uttarakhand	5/70	7.14
Odisha	11/147	7.48
Telangana	9/120	7.5
Tripura	5/60	8.33
Delhi	6/70	8.5
Gujarat	16/182	8.79
Tamil Nadu	21/235	8.93
Sikkim	3/32	9.37
Jharkhand	8/81	9.87
Uttar Pradesh	42/403	10.42
Andhra Pradesh	19/176	10.79
Chhattisgarh	10/90	11.11
Bihar	28/243	11.5
Madhya Pradesh	30/230	13.04
Puducherry	4/30	13.33
Rajasthan	28/200	14
West Bengal	42/297	14.14
Haryana	13/90	14.44
Total	**364/4128**	**8.81**

In order to ensure adequate representation of women in local bodies, parliament passed the 73rd and 74th constitutional amendments in 1993, reserving one-third of the seats in all local bodies for women. In addition, some legislative bodies, like Bihar and Delhi, have reserved more than one-third of the total seats for women. Notwithstanding the object and purpose of the above-mentioned amendments, there has hardly been any improvement on the ground. This was reflected in the recently-held local body elections in Mumbai and Delhi.

In the BMC elections, only 15 out of 113 unreserved constituencies were won by women. Similarly, in Delhi's municipal corporation election, 138 out of 272 constituencies were reserved for women. Major political parties like AAP, Congress and BJP offered seven, six and two tickets respectively to women in unreserved constituencies. Ironically, most of the tickets given to women candidates in reserved constituencies were prompted not by their personal stature, but for their husbands or other male relatives. This dismal state of affairs is replicated even at the national and state levels, where there is no reservation for women candidates. During the 16th Lok Sabha elections, the largest party, the BJP, gave only 38 of 428 tickets to women candidates, while the Congress gave 60 tickets. Similarly, other national parties like the Bahujan Samaj Party fielded 21 women, Communist Party of India fielded six, Communist Party of India (Marxist) fielded 11 and Nationalist Congress Party fielded four. In the last legislative assembly elections in West Bengal, Mamata Banerjee's Trinamool Congress gave only 43 tickets to women out of a total of 293 seats; in UP, Mayawati's BSP gave 21 tickets to women out of 403; in Tamil Nadu, the AIADMK then led by J. Jayalalithaa gave 29 out of 234 seats to women. Given the centrality of political parties in Indian politics, it becomes immensely difficult for candidates to contest independently. None of the 206 women candidates who contested the 16th Lok Sabha elections independently were able to win their seats.[3]

Representation of women in executive government and parliament is extremely low in India, both in absolute numbers as well as globally. Only a miniscule progress is observed in the entire post-independence era. In the cabinet, formed after the general election in 2014, there were only 5 women ministers out of total 27 ministers. India's global rank is 88 in this regard as per the *'Women in Politics Map 2017'*, published by the Inter-Parliamentary Union (IPU) and UN Women.

Between the First Lok Sabha (1952) and the Sixteenth Lok Sabha (2014) women's representation has increased from 4.4 per cent to 11.9 per cent. Similar trend of low representation of women is also observed in the Rajya Sabha (Upper House) during the entire period of post-independence era. Women's representation in Rajya Sabha has increased from 6.9 per cent in 1952 to 11.4 per cent in 2014. Again, these figures are substantially lower compared to the global average of 22.9 per cent and Asian average of 16.3 per cent of women representatives in Upper House. Considering the share of women (49.5%) in the total population of India, their representation in Parliament represents a skewed statistic, which does not befit the world's largest democracy.

India's performance on female representation in parliament is also not satisfactory compared to the global average of 23.4 per cent and Asian average of 19.6 per cent of women's representation in parliament, as shown in the Women in Politics Map 2017. In this global mapping, India's 148th rank is very low; and even several Asian countries, viz., Nepal (48th), Afghanistan (54th), Pakistan (89th), Bangladesh (91st), United Arab Emirates (96th), and Saudi Arabia (98th), among others, have fared far better than India. Out of 47 Asian countries, India holds the 31st position. Among 8 SAARC countries, India's position is 5th and India holds the 4th rank among 5 BRICS countries. A relatively poor performance is evident, if India (11.9 per cent) is compared to the best performer Rwanda (61.3 per cent) in terms of women's representation in the parliament.

As per the situation on January 1, 2017, it was observed that in 12 countries (out of 193) women's representation in parliament was 40 per cent or more. Rwanda tops the list with 61.3 per cent women representation in the parliament. Thus, it is evident that despite our constitutional commitment and several global commitments, India's performance in political empowerment of women is dismal. However, since the early 1990's, the 73rd and 74th amendments, which entail 33 per cent reservation for women in rural and urban local bodies, facilitated the entry of lakhs of women in the political arena. During the next two decades, there has been a dramatic

change in women's representation in local administration. It is also a positive sign to note that many states, namely, Bihar, Uttarakhand, Himachal Pradesh, Chhattisgarh, Madhya Pradesh, Andhra Pradesh, Karnataka, Jharkhand, Kerala, Maharashtra, Odisha, Rajasthan and Tripura further raised the women's reservation level to 50 per cent. Resultantly, it has brought more than 1 million women as elected representatives, including many from socially disadvantaged groups and even illiterate, into the political decision making process.[4]

Constitutional and International Law Obligations - The obligation to provide a level playing field in terms of opportunities finds its place both in the constitution as well as in international law obligations. In addition to the aspirations expressed in the preamble of our constitution, Article 39A says the state must ensure that opportunities for securing justice are not denied to any citizen by reasons of economic or other disabilities. In addition to this, Article 46 imposes a duty on the state to protect weaker sections from social injustice and all forms of exploitation. Article 14, which established the right to equality as a fundamental right, inevitably mandates for equal opportunity, which is reflected in Article 15(3).

India is a signatory to the Convention for Elimination of Discrimination Against Women, which obliges states, under Article 7, to take appropriate measures to eliminate discrimination against women in political and public life and, in particular, to ensure that women are as eligible as men to contest elections to all public bodies, that they have the 'right to participate' in contributing to government policy and its implementation. Article 25 of the International Covenant on Civil and Political Rights, which is binding on signatory states including India, says that "every citizen shall have the right and *the opportunity*, without any of the distinctions mentioned in article 2 and without unreasonable restrictions [...] to vote and *to be elected* at genuine periodic elections which shall be by universal and equal suffrage and shall be held by secret ballot, guaranteeing the free expression of the will of the electors."

Given all of this, it is perplexing to witness the parochial and discriminatory approach of the political class on issues of representation. While on one hand they appear to uphold the banner of inclusive representation based on criteria like caste or region, on the other hand they display a conspicuous apathy to women's representation. This can be attributed, *inter alia*, to the understanding that women don't exist as an exclusive 'political class' or a 'unified vote bank'. There can be manifold reasons for women's underrepresentation in India, ranging from socio-historic reasons and the inherent masculinity of popular politics to institutional hurdles like family and marriage and the current socio-economic and political policies.

Taking a cue from global experiences, there are various mechanisms which can be adopted to ensure adequate representation of women after being adapted according to India's peculiar needs. For instance, nearly half of the top 50 countries in the IPU list have a 'voluntary party quotas' system. Voluntary party quotas have been applied in different ways. For example, in some European countries like Sweden, the 'zipper' system requires party candidate lists to alternate between one male and one female candidate, so that every three candidates must include one woman. The soft quota system is based on the rationale that gender parity will occur gradually over time, without the need for rules, and is used in democracies such as the US, Australia and New Zealand. Reserved seats are the most widespread gender quota system used in Sub-Saharan Africa, South Asia and in the Arab region. Legal candidate quotas are the preferred system in Latin America and the Balkans.[5]

Therefore, it is imperative that the government takes legislative and constitutional reforms to ensure women's fair access to political spheres, especially in the Lok Sabha (Lower House) and Rajya Sabha (Upper House). There is an urgent need to bring back to the table the Women's Reservation Bill guaranteeing reservation to women. An intense parliamentary discussion is necessary to bring the issue to the fore and greater political commitment is the prerequisite for achieving the objective of political empowerment of women.

Equal participation of men and women is not only a prerequisite for justice and democracy, it is an inevitable condition for harmonious human existence as well. Effective representation of women in decision-making structures will have a bearing on the policies, vision and structure of institutions. And that's something everyone should be fighting for.

References :-

1. Gopanjali Roy, "Women's representation in politics deteriorate in India", posted on March 01, 2017, Media India Group (www.mediaindia.eu)
2. Sakti Golder, "Women Representation in Political Decision Making: A Catalyst to achieving Gender Equality", posted on Sep, 12, 2017, Oxfam India (www.oxfamindia.org).
3. Haris Jamil and Anmolam, "Why Aren't We Dealing With the Lack of Women in Indian Politics?", posted on August 02, 2017, The Wire (www.thewire.in)
4. Sakti Golder, "Women Representation in Political Decision Making: A Catalyst to achieving Gender Equality", op. cit.
5. Haris Jamil and Anmolam, "Why Aren't We Dealing With the Lack of Women in Indian Politics?", op. cit.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

नृत्य एवं योग का सहसम्बन्ध

डॉ. स्वाती तेलंग *

प्रस्तावना – योग नृत्य की फितरत में शामिल एक सहज प्रक्रिया है। यह कत्थक की शास्त्रबद्ध अनिवार्यता नहीं, वरन् नृत्यरत देह की स्वत: स्फूर्त प्रक्रिया है। नृत्यदेह की रचना प्रारंभ से अंत तक योग विज्ञान का रहस्य समेटे हुए है। यही कारण है कि शायद नृत्य, देह को शारीरिक व मानसिक स्तर का समन्वित शक्तिशाली पुंज बना देती है और आध्यात्मिक स्तर की आत्मिक शक्ति प्रदान कर शिव से साक्षात्कार कराने में समर्थ है। क्योंकि योगी शिव नृत्य के भी प्रवर्तक माने गये हैं और सर्वप्रथम योग विद्या की खोज भी शिवजी ने ही की है।

कलाकार जितने समर्पित भाव से अपनी कला से जुड़ता है प्रस्तुति भी उतनी ही सुंदर होती है और योग भी इसी के साथ पूर्ण समर्पण भाव से जुड़ता चला जाता है। इस प्रक्रिया का शामिल हो जाना मानसिक व शारीरिक एकाग्रता में सहायक साबित होता है जो किसी भी रचना के जन्म लेने की अनिवार्य शर्त है। जिस प्रकार योगीजन अपने अष्टांग योग के द्वारा धीरे-धीरे अभ्यास से परम आनंद की प्राप्ति या ईश्वर प्राप्ति कर सकते हैं उसी प्रकार से एक नृत्य योगी बिना किसी मंत्र नियम के मात्र योग आदि के द्वारा केवल नृत्य कला के आधार पर ईश्वर से एकाकार हो परम आनंद को प्राप्त होते हैं।

नृत्य व योग ये दो कलाएँ अलग-अलग न होकर एक दूसरे से ही परिपूर्ण हैं। उत्तर भारत का कत्थक नृत्य पक्ष में तोड़े, टुकड़े, आदि के लिये हाथ, ऊंगलियों, कलाई, पैरों, एड़ी तथा पंजों का व्यायाम किया जाता है। गर्दन, दृष्टि संचालन भी किया जाता है तथा हस्त पाद संचालन के माध्यम से नृत्यदेह से जुड़ने की प्रक्रिया सम्पन्न होती है। योग आसन पूर्व सर्वप्रथम नमस्कार किया जाता है। यहाँ 'ऊँ' के उच्चारण के साथ शरीर के समस्त अंगों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए शरीर से तादाम्य स्थापित किया जाता है। वैसे ही नृत्य के प्रारंभ में की जाने वाली वंदना तन व मन को 'ऊँ' की उच्च भावना से जोड़ती है। संगीत के तीनों विभागों स्वर, लय, बोल व उनके संयोजन में ऐसे तत्व निहित है। जिनके द्वारा प्रत्येक रोग की चिकित्सा संभव है। नृत्य की हस्त मुद्राओं का भी चिकित्सा प्रणालियों में प्रचलन हो रहा है। इसके फायदे को देखते हुए इसे आजकल वैकल्पिक थैरपी के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। कैंसर जैसी बीमारियों से लड़ने में यह कारगर साबित हो रहा है। नृत्य करने से हमारे शरीर में कुछ ऐसे हार्मोंस प्रवाहित होते हैं जो हमें तनाव मुक्त और फुर्तीले रखते हैं। शरीर व दिमाग का तालमेल ही नृत्य चिकित्सा का आधार है। चिकित्सक मानते हैं कि नृत्य व योग करने से शरीर में शुद्ध रक्त बनता है और सांस से ज्यादा कार्बनडाइ आक्साईड निकलती है। इस थैरपी का लाभ हर उम्र के लोग उठा सकते हैं। इस थैरपी से आत्मविश्वास और काम करने की इच्छा शक्ति बढ़ती है।

राष्ट्रीय स्तर पर कई ऐसे बड़े संगठन हैं जो इस क्षेत्र में पहले से काम कर रहे हैं और अब भारत देश में भी योग व नृत्य के माध्यम से अच्छा स्वास्थ्य पाने के प्रति लोग प्रतिदिन जागरूक हो रहे हैं। अयुर योगा आश्रम, वर्ल्ड पीस योगा स्कूल ऋषिकेश आदि ऐसी संस्थाएँ हैं जो योग कला को जन-जन तक पहुंचाने के लिये उत्कृष्ट कार्य कर रही है। यही नहीं फिल्म जगत में नायक-नायिकाएँ भी योग व नृत्य के माध्यम से शारीरिक लाभ प्राप्त कर रहे है। इसके प्रति सजग होकर कई कलाकारों ने तो योगा क्लासेस भी शुरू की है। जिसमें प्रथम नाम शिल्पा शेट्टीजी का आता है। जो शिल्पा योगा नाम से अपनी कक्षाएं संचालित कर रही है। इस प्रकार नृत्य व योग ये दो कलाएं अलग-अलग न होकर एक दूसरे से परिपूर्ण हैं।

अत: यह सर्वविदित है कि दैहिक सौंदर्य योग द्वारा प्राप्त होने वाला प्रथम वरदान है। यह कला को कुदरती सौंदर्य की आभा प्रदान करता है। योग देह की ही नहीं बल्कि मन व आत्मा की भी दूरी नाप लेता है। शायद यही कारण है कि जब नृत्य अपने शास्त्रबद्ध सौंदर्य के द्वारा आत्मा का द्वार खटखटाता है तब योग की दस्तक भी शामिल रहती है। यह कला को कुदरती सौंदर्य की आभा प्रदान करता है। जिसे योगीजन हठयोग तथा ज्ञानयोग द्वारा प्राप्त करते हैं। योग व नृत्य के द्वारा जीवन के अंतिम सोपान तक पहुँचने की प्रथम सीढ़ी है, स्वास्थ्य जिसे ये मजबूत नींव प्रदान करता है।

किसी भी कलाकृति की पूर्णता कलाकार के पूर्णयोग योगी की दशा है। कला, धर्म, दर्शन आदि क्षेत्रों में अनेक हस्तियां हुई है जिन्होंने आगे वाली पीढ़ी के लिये मार्गदर्शक पथ तैयार किया है। जिसके उभरते नृत्य एवं योग के पद्चिन्हों ने हमारी संस्कृति को अमूल्य धरोहर दी व उसे समृद्ध किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* 87, महावीर बाग कालोनी, परमेश्वरी गार्डन के पीछे, इन्दौर रोड़, उज्जैन (म.प्र.) भारत

किशोरावस्था के विद्यार्थियों के मानसिक विकास में जीन पियाजे के संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त का योगदान

डॉ. वनिता त्रिवेदी *

प्रस्तावना - महात्मा गांधी के अनुसार :- *'शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक या मनुष्य के शरीर मस्तिष्क या आत्मा के सर्वांगीण विकास से है।'* इस आदर्श उद्देश्य के साथ ही व्यक्ति का शारीरिक मानसिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, संवेगात्मक, बौद्धिक व उच्च नागरिकता के विकास में सर्वांगीण विकास की पूर्णता निश्चित करती है।

मनुष्य का विकास का गर्भकाल से लेकर मृत्युपर्यन्त तक होता रहता है जिसकी कई अवस्था होती है । इसमें मानसिक विकास सबसे महत्वपूर्ण है जिससे व्यक्ति कई महत्वपूर्ण निर्णय ले सकता है। जीवन की प्रत्येक क्रिया चाहे वह किसी के विषय में चिन्तन हो या तर्क, स्मृति हो या अवधान, व्यक्ति अपनी बुद्धि और विवेक के आधार पर किसी कार्य के परिणाम तक पहुँचता है।

व्यक्ति को वातावरण का ज्ञान अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा होता है ।इस इन्द्रियजन ज्ञान को ही संज्ञान कहा जाता है यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें चिन्तन, स्मृति, निर्णयक्षमता, समस्या समाधान, कल्पना, प्रत्यक्षीकरण योजना आदि समाहित रहते हैं। इसके द्वारा ही व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति की संवेदनाओं एवं विचारों का समझ सकता है। यह प्रक्रियाप्रत्यक्षीकरण से प्रारम्भ होती है। हम प्राय: वातावरण में विभिन्न उद्दीपकों को देखते हैं और उनके प्रति प्राप्त सूचना को विश्लेषित करते हैं। इसके पश्चात सूचनाओं को सार्थक बनाते है।

संज्ञान मनोविज्ञान का वह पक्ष है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति के ज्ञानात्मक पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। संज्ञानात्मक विकास को यदि मानसिक विकास कहा जाये तो कोई गलत नहीं होगा क्योंकि संज्ञानात्मक विकास से अभिप्राय है बालक की मानसिक क्षमता का विकास, जिसमें बुद्धि, चेतना, विचार और समस्या समाधान की क्षमता सम्मिलित होती है। और इसका विकास शैशवावस्था से शुरू हो जाता है। संज्ञानात्मक विकास एक विकासात्मक प्रक्रिया है। जिसके द्वारा एक बच्चा बुद्धिमान व्यक्ति बनता है। वृद्धि के साथ-साथ ज्ञान अर्जित करता है। तथा चिन्तन अधिगम तक और अमूर्त योग्यता में सुधार करता है। शारीरिक वृद्धि के तहत पहले चार वर्षों में बालक का 80 प्रतिशत मानसिक विकास हो जाता है। 22-24 तक यह परिपक्कावस्था तक पहुँचता है।

बालक की उन सभी मानसिक क्षमताओं और योग्यताओं का विकास, जिसके परिणामस्वरूप वह अपने निरंतर बदलते वातावरण में ठीक प्रकार समायोजन करता है, और बड़ी-बड़ी कठिन तथा उलझनपूर्ण समस्याओं को सुलझाने में अपनी मानसिक शक्तियों को पूर्णरूप से समर्थ पाता है, मानसिक विकास या संज्ञानात्मक विकास कहलाता है।

वास्तव में संवदेना, प्रत्यक्षीकरण, स्मरण शक्ति, निरीक्षण, विचारशक्ति, कल्पना, तर्कशक्ति, भाषासम्बन्धी योग्यता, समस्या समाधान योग्यता और निर्णय लेने की क्षमता आदि सभी संज्ञानात्मक, मानसिक और बौद्धिक शक्तियाँ, योग्यताओं और क्षमताएँ, हमारी मानसिक वृद्धि और विकास की प्रक्रिया द्वारा नियंत्रित होती हैं। ये सभी शक्तियाँ परस्पर अत्यधिक सम्बन्धित हैं। इसमें से किसी का भी एकाकी, अथवा किसी दूसरों को प्रभावित किये बिना विकसित होना सम्भव नहीं इसलिए जब भी किसी स्तर पर बालक के मानसिक विकास की बात होती है तो तात्पर्य इन सभी शक्तियों का समन्वित विकास ही होता है। संज्ञानात्मक विकास एक विकासात्मक प्रक्रिया है। जिसके द्वारा एक बच्चा बुद्धिमान व्यक्ति बनता है। वृद्धि के साथ-साथ ज्ञान अर्जित करता है। तथा चिन्तन अधिगम तक और अमूर्त योग्यता में सुधार करता है। शारीरिक वृद्धि के तहत पहले चार वर्षों में बालक का 80 प्रतिशत मानसिक विकास हो जाता है। 22-24 तक यह परिपक्कावस्था तक पहुँचता है। बालक की उन सभी मानसिक क्षमताओं और योग्यताओं का विकास, जिसके परिणामस्वरूप वह अपने निरंतर बदलते वातावरण में ठीक प्रकार समायोजन करता है, और बड़ी-बड़ी कठिन तथा उलझनपूर्ण समस्याओं को सुलझाने में अपनी मानसिक शक्तियों को पूर्णरूप से समर्थ पाता है, मानसिक विकास या संज्ञानात्मक विकास कहलाता है।

वास्तव में संवदेना, प्रत्यक्षीकरण, स्मरण शक्ति, निरीक्षण, विचारशक्ति, कल्पना, तर्कषक्ति, भाषासम्बन्धी योग्यता, समस्या समाधान योग्यता और निर्णय लेने की क्षमता आदि सभी संज्ञानात्मक, मानसिक और बौद्धिक शक्तियाँ, योग्यताओं और क्षमताएँ, हमारी मानसिक वृद्धि और विकास की प्रक्रिया द्वारा नियंत्रित होती हैं। ये सभी शक्तियाँ परस्पर अत्यधिक सम्बन्धित हैं। इसमें से किसी का भी एकाकी, अथवा किसी दूसरों को प्रभावित किये बिना विकसित होना सम्भव नहीं इसलिए जब भी किसी स्तर पर बालक के मानसिक विकास की बात होती है तो तात्पर्य इन सभी शक्तियों का समन्वित विकास ही होता है। जिस सिद्धान्त पर संज्ञानात्मक विकास होता है उसे जीन पियाजे का संज्ञानात्मक सिद्धान्त कहा जाता है ।

संज्ञानात्मक सिद्धान्त की सम्प्रत्ययात्मक पृष्ठभूमि - इस सिद्धान्त का प्रतिपादन 1952 में जीन पियाजे ने किया इसके लिए उन्होंने स्वयं के बच्चों को अपनी खोज का आधार बनाया। बच्चे जैसे-जैसे बड़े होते गये, उनकी मानसिक विकास सम्बन्धी क्रियाओं का वे बड़ी बारीकी से अध्ययन करते रहे। पियाजे की संज्ञानात्मक विकास की सैद्धान्तिक अवधारणायें - संज्ञानात्मक संरचना,संज्ञानात्मक कार्यप्रणाली एवं संज्ञानात्मक संरचना आदि ।

* अम्बिका कॉलोनी, नक्षत्र मॉल के पीछे, बांसवाड़ा (राजस्थान) भारत

पियाजे के अनुसार इस तरह शिशु अपने संज्ञानात्मक विकास की यात्रा विभिन्न प्रकार के स्कीमाज से संरचित संज्ञानात्मक संरचना से शुरू करता है। इस प्रणाली की भूमिका समायोजन में अत्यधिक होती है। इस तरह की समायोजन सम्बन्धी कार्यप्रणाली को ठीक तरह से आगे बढ़ाने में पियाजे के अनुसार दो मुख्य प्रक्रियाओं आत्मसातीकरण तथा समायोजीकरण की प्रमुख भूमिका होती है। 'आत्मसातीकरण' प्रक्रिया में बालक से यह अपेक्षा करती है कि उसके पास पूर्व संज्ञानात्मक संरचना के रूप में जो कुछ भी है वह उसी से किसी नवीन परिस्थिति का सामना करे। समायोजीकरण में बालक नई परिस्थिति से निपटने के लिए नये ढंग से सोचने और व्यवहार करने हेतु अपने में उचित बदलाव लाने की कोशिश करता है।

अत: जहाँ आत्मसातीकरण प्रक्रिया में बालक अपने पूर्वज्ञान तथा अनुभवों के आधार पर ही अपनी अनुक्रिया व्यक्त कर प्रस्तुत परिस्थिति से निपट लेता है। वहीं समायोजीकरण में जब उसका काम पूर्व अनुभवों से नही चलता उसे अपनी वर्तमान संज्ञानात्मक संरचना में अनुकूल परिवर्तन लाकर सोचने तथा व्यवहार करने के नये तरीके अपनाने पड़ते है।

पियाजे की संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त की अवस्थायें – पियाजे के सिद्धान्त के अनुसार संज्ञानात्मक विकास चार सार्वभौमिक अवस्थाओं के क्रम में होता है। ये अवस्थाऐं हमेशा एक ही क्रम में होती हैं, तथा प्रत्येक अवस्था पूर्व अवस्था में सीखने पर आधारित होती है। ये अवस्थायें निम्नलिखित हैं –

1. संवेदीगामक अवस्था अर्थात जन्म से 2 वर्ष तक
2. पूर्व संक्रियात्मक अवस्था 2–7 वर्ष तक
3. मूर्त संक्रियात्मक अवस्था 7–12 औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था किशोरावस्था से 19/20 तक

संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त की विशेषताऐं:

1. पियाजे के अनुसार संज्ञानात्मक विकास चार भिन्न और सार्वभौमिक अवस्थाओं की श्रृंखला या क्रम में होता है। जिनमें विचारों का अमूर्त स्तर बढता जाता है। ये अवस्थायें सदैव एक ही क्रम में होती हैं। तथा प्रत्येक अवस्था पिछली अवस्था में सीखी वस्तुओं पर आधारित होती है।
2. संज्ञानात्मक विकास में आत्मसातीकरण और संयोजन में समन्वय बल दिया जाता है।
3. पियाजे ने बालक के ज्ञान को 'स्कीमा' से निर्मित माना हैं। स्कीमा ज्ञान की वह मूल ईकाई है जिसका प्रयोग पूर्व अनुभवों को संगठित करने के लिए किया जाता है। जो नये ज्ञान के लिए आधार का काम करती है।
4. संज्ञानात्मक विकास में मानसिक कल्पना, भाषा, चिन्तन, स्मृति–विकास, तर्कना, समस्या समाधान आदि समाहित होते हैं।
5. बालकों में चिंतन एवं खोज करने की शक्ति उनकी जैविक परिपक्वता अनुभव एवं इन दोनों की अन्त:क्रिया पर निर्भर है।

वर्तमान में प्रासंगिकता – प्रस्तुत आलेख के द्वारा यह जाना जा सकता है कि किस तरह से बालक के मानसिक विकास में जीन पियाजे द्वारा दिये सिद्धान्त का प्रयोग किया जा सकता है। साथ ही यह सिद्धान्त वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं में विद्यार्थियों की विशेषताओं को जानने में सहायक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मनोविज्ञान तथा मनोवैज्ञानिक प्रक्रियायें – डा. ऋचा चौधरी
2. जायसवाल, सीताराम, सर्वांगीण बाल विकास, नई दिल्ली: आर्य बुक डिपो 1996
3. बायती, डा. जमनलाल, उच्चत्तार शिक्षा मनोविज्ञान, जयपुर : रचना प्रकाशन 2006
4. सिंह, अरुण कुमार, उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, वाराणसी : मोतीलाल बनारसीदास, 2012
5. ओबराय, डा. ए. सी., शिक्षण एवं अधिगम का मनोविज्ञान नई दिल्ली : आर्य बुक डिपो 2013
6. अशरफ, अजीमुर्रहमान जावेद, मनोविज्ञान का संक्षिप्त इतिहास, वाराणसी : मोतीलाल बनारसीदास 2009
7. पाण्डेय, के. पी., नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन 2013
8. मंगल, एस. के., बाल अधिगम प्रक्रिया, नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो 2002
9. भारतीय शिक्षा मनोविज्ञानम् – सम्पादक – प्रो. प्रभादेवी चौधरी, डॉ0 नीलाभतिवारी, डा0 नितिन जैन, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, भोपाल परिसर।
10. Chauhan, S.S., Advance Education psychology, Noida Vikash Publishing House 2010
11. Piaget Theory of cognative Affective Devlopment – Jean Piaget
12. The psychology of the Child - Jean Piaget
13. Science of Education and The psychology of the Child - Jean Piaget

****

उज्जैन जिले के आर्थिक विकास में बाधक तत्व (जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा संचालित स्वरोजगार योजनाओं के संदर्भ में)

डॉ. नीतिन बिल्लौरे *

प्रस्तावना – शासन द्वारा समाज के सभी वर्गो के आर्थिक विकास के लिए समग्र प्रयास किये जा रहे है। स्वरोजगार योजनाओ के माध्यम से शिक्षित बेरोजगारो को ऋण सुविधा उपलब्ध करवाकर शासन के द्वारा युवाओ को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जा रहा है। संचालित योजनाओं में दीनदयाल स्वरोजगार योजना,रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति जनजाति स्वरोजगार योजना, प्रधानमंत्री रोजगार योजना आदि प्रमुख है। वर्तमान में कई योजनाओं को मिलाकर समग्र रुप से भी योजनाएं प्रारंभ की गई है। आर्थिक विकास मे अनेक बाधक तत्व है जो बाधा उत्पन्न कर रहे है इन तत्वों में प्रमुख रुप से प्रशासनिक व हितग्राहियों की समस्याएं प्रमुख है।

अध्ययन का औचित्य – उज्जैन शहर जो मध्यप्रदेश की सांस्कृतिक राजधानी है उज्जैन शहर अध्यात्मिक दृष्टि् से तो विकसित है किंतु औद्योगिक दृष्टि् से विकसित नही है अत: यहाँ पर बेरोजगारी एक विकराल रुप धारण किये हुए है अत: शासन के द्वारा बेरोजगारी को दूर करने के लिए स्वरोजगार योजनाओं के माध्यम से युवाओ को रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाने का प्रयास किया जा रहा है।

चूँकि मैं वाणिज्य का छात्र रहा हूँ मैने वाणिज्य में एम.फिल व पीएच.डी की है और मैने युवाओ में स्वरोजगार योजनाओं के प्रति नकारात्मकता और उदासीनता देखी है। कई शिक्षित युवा कठिन ऋण प्रक्रिया एवं प्रावधानो के कारण योजनाओं के प्रति नकारात्मकता का भाव रखते है। जो जिले के आर्थिक विकास में बाधक है।

परिकल्पनाएँ – प्रस्तुत शोध कार्य के लिए लक्ष्यों को तय किया गया और निम्नलिखित परिकल्पनाओ का परिक्षण एवं अध्ययन किया गया।

1. स्वरोजगार योजनाओं का जिले के आर्थिक विकास मे अप्रत्यक्ष योगदान है।
2. विभिन्न बैंको द्वारा स्वीकृत राशि व वितरित राशि में किसी प्रकार का संबध नही है।
3. स्वरोजगार योजनाओं के लक्ष्य प्रतिवर्ष बेरोजगारों की संख्या की तुलना में अत्याधिक कम है।
4. लक्ष्य से अधिक प्रकरण प्रेषित किए जाते है किंतु ऋण कम लोगो को ही प्राप्त होता है।

बाधक तत्व व उन्हे दूर करने के उपाय :

(1) अपर्याप्त अधिकार :– शासन के द्वारा बेरोजगारी का सामना कर रहे विभिन्न वर्गो के युवक व युवतियों के लिए विभिन्न स्वरोजगार योजनाएँ लागू की गई जो प्रत्येक जिले में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के माध्यम से सन्चालित होती है। किन्तु इन्हे सिर्फ उन योजनाओं के लिए आवेदन पत्र आमंत्रित करने एवं उन्हे वित्तीय संस्थाओ को अग्रेषित करने का अधिकार दिया है , स्वीकृत करने का नहीं। शासन को जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्रो को प्र्याप्त अधिकार प्रदान करना चाहिए जिससे योजनाओ सफलता पूर्वक लागू किया जा सके।

(2) ऋण की लम्बी प्रक्रिया :– योजनान्तर्गत हितग्राहियों को औसत रूप से आवेदन करने के 6 माह से लेकर 1 वर्ष तक का समय ऋण की प्राप्ति मे लगता है। ऋण प्रप्ति के पूर्व की प्रक्रिया इतनी लम्बी है कि बेरोजगार युवा ऋण प्राप्त होने के पूर्व ही हतोत्साहित हो जाते है। इसके साथ ही वर्तमान परिस्थतियों के संदर्भ में ऋण राशि की व्यवस्था करना चाहिए जिससे वे अपना स्वंय का व्यवसाय स्थापित कर सके साथ ही ऋण प्रक्रिया को सरल बनाना चाहिए।

(3) ऋण वापसी की समस्या :– विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं मे बैंको के द्वारा वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। हितग्राहियों के द्वारा ऋण तो प्राप्त कर लिया जाता है किंतु उसका पुन:भुगतान करने में वे असफल होते है जो विकास की राह मे बाधा उत्पन्न करते है। हितग्राहियो में सकारात्मक दृष्टि्कोण का विकास करना चाहिए और ऋण के दुरुपयोग को रोकना चाहिए जिससे ऋण वापसी की समस्या का निराकरण हो सके।

(4) तकनीकी समस्या :– जहाँ समस्त शासकीय कार्यालयों का कम्प्यूटरीकरण किया जा चुका है वहीं जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र जो कि विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं के संचालन का प्रमुख केन्द्र है, व्यवस्था से अभी तक वंचित है। इससे अधिकारियों और कर्मचारियों पर कार्यभार अधिक रहता है तथा वे योजनाओं का क्रियान्वयन यथा संभव नहीं कर पाते । शासन को जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्रो का भी कंप्यूटरीकरण करना चाहिए जिससे यह केंद्र अपना कार्य तेजी से कर सके और योजनाओं के संचालन में आने वाली तकनीकी समस्याओं का तुरंत समाधान कर सके।

(5) एक मुश्त सुविधा नही :– सरकार द्वारा संचालित विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं में एक मुश्त राशि देने का प्रावधान नही है जिससे ऋण सहायता प्राप्त करने के बाद भी हितग्राही योजनाओं का लाभ उठा नही पाता है। शासन द्वारा योजनाओ में ऋण परियोजना में प्रत्येक स्तर पर ऋण राशि प्रदान की जाती है जिससे वे रोजगार की स्थापना नही कर पाते है और उनका आर्थिक विकास नही हो पाता है अत: एक मुश्त राशि प्रदान करने की सुविधा प्रदान करना चाहिए।

(6) मार्जिन मनी की उपेक्षा :– शासन द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं के लिए हितग्राहियों को परियोजना का 5 प्रतिशत से 16.25 प्रतिशत मार्जिन मनी के रूप में स्वयं लगाना होता है । निर्धारित वार्षिक पारिवारिक आय

* सहायक प्राध्यापक, नवयुग महाविद्यालय, बडनगर (म.प्र.) भारत

वाले कम आय की वजह से राशि की व्यवस्था नही कर पाते है। युवा बेरोजगारों के लिए मार्जिन मनी का प्रबंध करना मुश्किल होता है। योजनान्तर्गत ऋण प्राप्त करने हेतु हितग्राहियों को इस गम्भीर समस्या से पार पाना ही पड़ता है।शासन को मार्जिन मनी के नियमों का सरलीकरण करना चाहिए। जिससे युवा अपना रोजगार स्थापित कर सके।

(7) असहयोगात्मक रवैया :- स्वरोजगार योजनाओं से जुडे विभिन्न अधिकारियों के मध्य आवश्यक सहयोग का अभाव रहता है। जिसके कारण हितग्राही को कठिनाईयो का सामना करना पडता है। अधिकारियों का असहोयगात्मक रवैया हितग्राही के मन मे स्वरोजगार योजनाओ के प्रति नकारात्मकता पैदा करता है। योजनाओं से संबधीत विभिन्न विभागो के अधिकारीयो को सहयोगात्मक रवैया अपनाना चाहिए जिससे हितग्राही स्वरोजगार योजनाओ में ऋण लेने को प्रोत्साहित हो सके।

(8) एक सदस्य को ऋण :- स्वरोजगार योजनाओं के अन्तर्गत यह प्रावधान है कि परिवार के किसी एक सदस्य को ही ऋण प्रदान किया जाता है। यदि लाभान्वित हितग्राही के परिवार का अन्य कोई सदस्य योजना का लाभ प्राप्त करना चाहे तो उसे योजना का लाभ नहीं मिलेगा। शिक्षित बेरोजगार स्वरोजगार योजना के लाभ से वंचित ही रहेगा। अतः इस प्रावधान पर पुर्नविचार करना चाहिए जिससे परिवार के कम से कम एक अतिरिक्त सदस्य को ऋण सुविधा प्राप्त हो सके।

(9) स्तरीय प्रशिक्षण का अभाव :- योजनाओं मे हितग्राहियों के लिए प्रशिक्षण लेना अनिवार्य है। किंतु उन्हे स्तरीय प्रशिक्षण उपलब्ध नही हो पाता है जिससे उनका विकास नही हो पाता है और वे योजना का लाभ नही उठा पाते है। अतः शासन को जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्र के द्वारा उपलब्ध प्रशिक्षण का स्तर उन्नत करना चाहिए जो वर्तमान व्यवस्था के समतुल्य हो।

(10) अधिक ब्याज दर :- प्राप्त ऋण पर हितग्राहियों को जो ब्याज देना होता है उसकी दर बहुत अधिक होती है। वर्तमान में ब्याज दर 12 से 13 प्रतिशत वार्षिक है। किश्त भुगतान में विलम्ब होने पर हितग्राहियों को चक्रवृद्धि ब्याज दर से भुगतान करना पड़ता है जिससे हितग्राहियों पर आर्थिक भार बढ़ जाता है। ऋणो पर ब्याज दर को तर्कसंगत बनाना चाहिए जिससे हितग्राही अपना व्यवसाय सुचारु रुप से संचालित कर सके और ऋण समय पर चुका सके।

निष्कर्ष - आर्थिक विकास में स्वरोजगार योजनाओं का अप्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रुप से योगदान होता है। स्वरोजगार योजनाओं मे प्रतिवर्ष एक निश्चित मात्रा में शिक्षित बेरोजगारों को शासन के माध्यम से स्वयं का रोजगार स्थापित करने के लिए ऋण सुविधा इन योजनाओं के माध्यम से उपलब्ध होती है। बेरोजगारों की संख्या की तुलना में बहुत कम होती है। सभी शिक्षित बेरोजगार योजनओं से लाभ नही ले पाते है। शासन के द्वारा इन योजनाओं का क्रियान्वयन जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र एवं जिले की लीड बैंक के माध्यम से किया जाता है। ऋण वितरित करना बैंक के अधिकार क्षेत्र में है। जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र समन्वयक की भूमिका निभाता है। शासन के अन्य विभाग भी इसमे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

समन्वय के अभाव में स्वरोजगार योजनाओं का क्रियान्वयन सफलतापूर्वक नही हो पाता है, जिससे ये योजनाएं अपने लक्ष्य मे सफल नही हो पाती है। अतः यह कह सकते है कि जिले के आर्थिक विकास में योगदान में वृद्धि करने के लिए स्वरोजगार योजनाओं मे वर्तमान समय के आधार पर सुधार किया जाए।

प्रतिवर्ष योजनाओं में लक्ष्य निर्धारण बेरोजगारों की संख्या के अनुपात में रखा जाए जिससे सभी शिक्षित बेरोजगारों को इन योजनाओं का लाभ प्राप्त हो सकें। योजना मे स्वीकृत ऋण राशि की मात्रा मे भी वृद्धि करना चाहिए। योजनाओ के सन्चालन सबन्धित नियमों को आसान बनाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जे.सी.पंत (2009) 'व्यावसायिक पर्यावरण' साहित्य भवन प्रकाशन,आगरा
2. राजेश सोनी 'व्यवसाय अध्ययन' जिज्ञासा प्रकाशन,रतलाम

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

उत्तराखंड के विशेष संदर्भ में प्राकृतिक रंग नील पत्रों (शाकिना) द्वारा भीमल धागों की रंगाई

गुँजा सोनी *

शोध सारांश – उत्तराखण्ड राज्य प्राकृतिक संसाधनों से धनी है। इसका सबसे बडा कारण इस राज्य का हिमालय क्षेत्र में होना है। इसे देवभूमि के नाम से भी जाना जाता है। हिमालय क्षेत्र में होने के कारण इसके 86 प्रतिशत भाग पर पहाड एवं 65 प्रतिशत भाग पर जंगल है यहां लोगों की जो जीवनशैली है वो यहां के भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरुप हो चुकी है। उत्तराखण्ड के निवासी अपने जीवन के छोटी से बडी जरुरतों को पूरा करने के लिए प्रकृति पर निर्भर है। यहां के प्राकृतिक संसाधनों से केवल जरुर के वस्तुएँ ही नहीं मिलती है बल्कि इन से आयुर्वेद दवाईयां और प्रकृति रंजक भी प्राप्त होते है और इन वृक्षों से प्राकृतिक रेशे भी प्राप्त किये जाते है जो कि यहां के भोटिया जनजातियों द्वारा पारम्परिक प्रयोग में लिया जाता रहा है और विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का निर्माण भी किया गया है जैसे रस्सी, टोकरी, कालिन आदि इन वस्तुओं को रंगाई के लिए प्राकृतिक रंगों का ही प्रयोग किया जाता है सबसे ज्यादा यह भोटिया लोग ऊन की रंगाई के लिए प्राकृतिक रंगों का प्रयोग करते रहे है एवं अन्य प्राकृतिक रेशों पर भी इन का प्रयोग होता रहा है। इस लेख के अंतर्गत उत्तराखण्ड के नील पत्तों (शाकिना) का प्रयोग रंग के रुप में भिन्न भिन्न रंग प्राप्त किये जा सकते है अलग–2 मोडेन्ट का प्रयोग कर के। इसके लिए दो मोडेन्ट का प्रयोग हुआ है ऐलम (फिटकरी) (फेरस सल्फर) (हरा कशिश) प्राकृतिक रंग का भीमल के धागों पर अच्छा प्रभाव होता है इसमें प्राकृतिक रंजकों का रंग स्थिरता अच्छी है।

प्रस्तावना – रंगों का प्रयोग प्राचीन समय से किया जाता रहा है रंगीन कपडों के तरफ मनुष्यों का आकर्षण सदा ही बना रहा है। पर जब 1987 में कृत्रिम रंग का अविष्कार हुआ तो ये एक क्रांति की तरह पूरे टेक्सटाईल इण्डस्ट्री में फैल गए हानिकारक होने के बाद भी इन का प्रयोग हो रहा है। प्रकृति रंगों की तरफ अब लोगों का रुझान फिर से बढ रहा है क्योकिं ये ना ही हानिकारक होते है और ये प्रकृति से प्राप्त होते है। ये हमारे शरीर को कोई भी नुकसान नहीं पहुंचाते है। अब प्राकृतिक रंगों में विभिन्न प्रकार के प्रयोग करके नए रंगों का निर्माण किया जाता है। रंगाई करने से पहले कपडे और धागे को रंगाई प्रक्रिया के लिए तैयार कर लेने चाहिए ताकि ये रंग को अच्छी प्रकार से ग्रहण कर सके और विभिन्न प्रकार के रंगों के शेटस बनाया जा सके इसमें विभिन्नता के लिए रंगाई की प्रक्रिया और विधि में बदलाव किया जा सकता है।

नील पत्ते (शाकिना)

(शाकिना) नील पत्ते वनस्पति का वर्णन – इनके पत्तों का प्रयोग रंगाई के प्रयोग के लिए ही किया जाता रहा है इसका वनस्पातिक नाम Indigogera tenctaria Linn सामान्य नाम शाकिना परिवार falraceae झाडी होते है इनके पत्तियों से नीला रंग प्राप्त किया जाता है। यह उत्तराखण्ड में पाए जाते है। स्टील के बर्तन में पानी डाल कर उसे उबालने पर या उसमें धागों को रंग करने पर ये नीला रंग प्रदान करता है और अगर इस प्रक्रिया के बाद हम इसमें विभिन्न प्रकार के मोडेन्ट डाले तो ये हमें विभिन्न रंग प्रदान करते है।

सामग्री एवं प्रणाली।

1.1– डाई के लिए सामग्री एकत्र करना – शाकिना (नील पत्ते) के झाडिया के पत्ते उत्तरकाशी से एकत्र किया गये जो कि उत्तराखण्ड के गढवाल रीजन के अंदर आते है।

1.2– रंगाई(डाई) से पहले भीमल धागों पर उपचार– धागों मे जो भी अशुद्धियां है एवं उसे सफेद करने के लिए ताकि इस पर रंगों का प्रभाव पूर्णरुप से धागों पर आये इसके लिए धागों के 500ग्राम लच्छीयों को

हाइड्रोजन पर आक्साईट – 10 प्रतिशत
सोडियम सिलिकेट – 3/4 gm/ L
तापमान – 85 डिग्री से 90 डिग्री तक
पानी – 10 लीटर
समय 2 घण्टे

उपचार के बाद प्राप्त किए गए धागे

* पी.एच.डी. शोधार्थी, वनस्थली विश्वविद्यालय, टोंक (राजस्थान) भारत

इस रेसिपि के अनुसार धागों पर प्रयोग करते है एवं प्रक्रिया पूरी होने पर धागों का सुखने रख देते है। सुखने के पश्चात् इन पर मोडेन्ट से उपचार करते है, फिटकरी और हरा कशिश से 20 मिनट के लिए।

फिटकरी से उपचार किया गए धागे हरा कशिश से उपचार किए गए धागे

रंगाई के विभिन्न चर का अनुकूलन – रंगाई करते समय हमें विभिन्न चरों का ध्यान रखना पडता है रंगाई सामग्री की मात्रा, समय, सामग्री की अनुपात बनाए रखना चाहिए तभी हम सही रंग और शेट्स प्राप्त कर पाएंगे।

शाकिना से रंजक की प्रक्रिया – सबसे पहले पत्तों को 24 घण्टे तक पानी में भीगों कर छोड देते है फिर इसे उबालते है 30 मिनट तक उबालने के बाद इस द्रव्य को धान कर फिर धागे के अनुपात में पानी डाल कर उबालते है और पानी का सही तापमान होने पर इसमें धागों से अलग–अलग मोडेन्ट के लिए अलग रंगाई की प्रक्रिया करते है। रंगाई का अनुपात है।

50 ग्राम धागे पर –

मोडेन्टिंग धागे – 5 ग्राम प्रति लीटर फिटकरी/2 ग्राम प्रति लीटर हरा कशिश

पानी – 1.5 लीटर

(शाकिना) रंग – 20/1L = 30g

समय – 1 घण्टा/80^{o}C

रंगाई के पश्चात् की प्रक्रिया – इस प्रक्रिया के अंतर्गत 60 मिनट तक मध्यम आंच पर उबलने के बाद ठंडा करके धागों को रंग के बर्तन से निकाल कर ठंडे पानी से धोते है धोने के बाद छाव में सुख दिया जाता है।

फिटकरी से उपचार किए धागो पर नील पत्तो से डाई

हरा कशिश से उपचार किए गए धागों पर नील पत्तों से डाई

परिणाम – इस डाई मे अगर सही समय और मात्रा का ध्यान रखे और डाई पेड़ से प्राप्त करने का समय सही हो तो रंगाई पूर्ण रुप से अच्छे तरह से होती है।

शाकिना डाई से हमें दो भिन्न रंग प्राप्त हुए ग्रे रंग के और बाकि प्राकृतिक रेशों के तुलना में भीमल पर इन डाई का प्रभाव और रंग दोनों ही अच्छे आए है।

निष्कर्ष – प्राकृतिक रंग आज बाजारों में कई प्रकार एवं रंगों में उपलब्ध है। अब लोगों को प्रकृति के तरफ रुझान बढता जा रहा है ये प्राकृतिक वस्तुओं का उपयोग करना चाहते है क्योकिं प्राकृतिक वस्तुएं हानिकारक नहीं होती है। शाकिना के पत्ते प्राकृतिक रंग का अच्छा स्रोत है ये हमें कई प्रकार के रंग प्रदान कर सकता है अगर हम इसके डाई में भिन्न–2 मोडेन्ट का प्रयोग करे। इन से भिन्न प्रकार के रंग प्राप्त हो सकते है। जब एक पेड से हम पृथक–2 प्रकार के रंग प्राप्त कर सकते है तो उत्तराखण्ड के गढवाल रीजन में कई पेड डाई प्रदान करने वाले है और इन प्राकृतिक रंगो को उत्तराखण्ड के निवासी यहां प्राप्त होने वाले प्राकृतिक रेशों भीमल पर प्रयोग कर सकते है प्राकृतिक रंगों से प्रकृति को कोई नुकसान नहीं पहुंचाता कई प्राकृतिक रंग तो पेड पौधों के सुखे छाल–गीरे हुए पत्ते सुखे पेडों के जडों से एवं फूल और फल से प्राप्त होते है इनका प्रयोग करने पर प्रकृति को कोई नुकसान नहीं होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुर्जर, शर्मिला 'वस्त्र रंगाई तकनीक', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ, अकादमी, जयपुर, प्र. सं., 2003
2. भार्गव, डॉ (श्रीमती) बेला, वस्त्र विज्ञान एवं धुलाई कला
3. Crook, Fackie, Natural Dyeing, Octopus Publications Group Ltd -2007 First Published in Great Britain in 2007
4. Dean, Jenny, The Natural Dyeing, Search Press Ltd.

****

Night of the scorpion is the mirror of Ezekiel's Indian sensitivity

Dr. Ram Gopal Dangi *

Introduction - Ezekiel calls his dwelling place , Bombay his island. To quote from "island" I can not leave he island. I was born here and belong" It is an island of slums and sky crapers. distorted ethos, dragon claming to be human, ignorance, yet he is not ready to leave it ."he loves the city despite its ugliness and wickedness" Ezekiel feels india and its problems in his nerves and though his poetry he has provided a voice to the 'haven' ts' of the society. He has keenly observed both; pleasant and unpleasant aspects of it and both of them are evident in his poetry'

After visiting England and realizing the pain of alienations he has decided to come back to his 'backward place' Bombay and to Israel is highly optimistic in his poetry. There is no atmosphere of dejection . Even though life is full of sorrows and problems one aspires to live a happy life.

Ezekiel portrays the lives of both the extremes in the society. The negative features of the lower strata as well as the elitist world of five–star hotels make contents for his poems. Night of the scorpion is one of Ezekiel's poems which is very favourite to the English world.

As it reinforces one of their comforting myths about india. it is about a typical incident in an Indian village. The speaker's mother is bitten by a scorpion . All the neighborhood rushes into help. They come in the rainy night with lantern's and try all kinds of remedies .When nothing helps. They resort to prayers for the lady. Fortunately. the pain decreases and she recovers after a day. The poet makes the incident sound real.

'the peasants came like swarms of flies
and buzzed the name of god a hundred times
to paralyse the evil one'

Ezekiel copies an incident in the poem which is practiced even today in several villages of india. Holy men performing rites and incantations as to care diseases are usual rights in many parts of the country. Majority of the villagers are superstitious and they believe that prayers and incantations are the only solution for diseases. The speaker's father in the poem is representative of a few educated people who are rationalists and skeptics.

In 'Night of the scorpion' the scorpion is identified with the evil one, and hence an impressive ritual is enacted to exercise this evil one.

'may he sit still , they said
May your suffering decrease
This misfortunes of your next
birth, they said
may the sum evil
Balanced in this unreal world
Against the sum of good
Become diminished by your pain.
May the poison purify your flesh
Of desire ,and your spirit of ambition.
They said and they sat around………

The mother's exclamation at the end Thank God ,The scorpion picked on me and my children has been duly singled out for praise as indicative of Ezekiel's " Indian sensibility ." what has sadly gone unnoticed is the image of india being doled out to the world , the note of patronization and condescension in this poem . No matter how much india has progressed : it need cause no flutter in the rest of the world . Ezekiel, the heading poet here gives out a conforting reassurance that it continues to be a land of superstition and foolish sentiments , as it patients are not taken to hospitals for scorpion bites , as if indian mothers do not thank doctors for relieving them of pain.

References :-

1. S K. "fourteen questions to Nissim ezekeil " in T R Sharma . ed. Essays on Nissim Ezekeil (meerut; shulabh prakashan,1994).P.44
2. . Ezekiel ,Nissim. collected poems1952-1988 Delhi : Oxford university press 1989
3. Patil, mallikarjun. "Nissim"ezekiel: The poet" Indian English Literature: A post colonial Response: Eds. Gajendra kumar and uday Shankar ojha. New Delhi: Sarup & sons publishers, 2005,169-183
4. Chindhade, shirish." Bathos as a strategy in Nissim Ezekiel's very Indian poems in Indian English:" pandey
5. Chindhade, shirish . five Indian poets.New Delhi: Atlantic ,2011

* Babaji Marg,Gyanganga Convent School, Khilchipur, Distt. Rajgarh (M.P.) INDIA

Glimpses Of Indianness In Nissim Ezekiel Poems

Dr. Ram Gopal Dangi *

Introduction - Ezekiel is not only a good poet in the post independence india , but also a cause of good poetry In others . he has opened a new era and trend in Indian English poetry . he is the pioneer and father of modernity in Indian English poetry . there are many contemporary Indian English poets who voyage along the path Ezekiel has opened. P. Lal and Dom moraes have admitted the fact that Nissim Ezekiel was their poetic father…..the other poets of the younger generation think Ezekiel is perhaps the first indian poet consistently to show indian readers that craftsmanship is as important to a poem as its subject matter …..

Ezekiel rarely writes explicitly about Indianness. But whether he is talking about public issues or personal encounters. whether he is writing in a philosophical or a comic vein wether he is responding to the urban world of Bombay or to other locations his poetry invariably conveys a sense of a very particular Indian identity . so although he was instrumental in introducing modernism into india . it underwent such a transformation in the process of shipping it to the subcontinent that it became a distinctly Indian discursive mode and ultimately his verse frustrates confinement in the modernist label.

Ezekiel's closely attachment to Indian situations and circumstances in well applied in his poems. This earnest and sincere desire to bring about possible improvement in the conditions of life of the countrymen can be seen in his works . many of his poems prove his desire to improve the conditions of the people of india.

his poem night of the scorpion is very favorite to the westerners .

The last stanza of ' Night of the scorpion ' is the very culmination of the sense of sacrifice and vicarious suffering of the mother for her children:

My mother only said
Thank god the scorpion picked one me
And spared my children.

These lines have rich cultural undertones typical of the orient and remotely typical of Hinduism.

Before and after independence india faced lot of hurdles, challenges, which belong to daily life . Ezekiel draws the picture many of them but the most significant aspect of Ezekiel that make him distinguished to others in the wanting to bring about certain improvement in depressing degrading and disguishing conditions of life in india.

References :-

1. S K. "fourteen questions to Nissim ezekeil " in T R Sharma . ed. Essays on Nissim Ezekeil (meerut; shulabh prakashan,1994).P.44
2. Ezekiel ,Nissim. collected poems1952-1988 Delhi : Oxford university press 1989
3. Patil, mallikarjun. "Nissim"ezekiel: The poet" Indian English Literature: A post colonial Response: Eds. Gajendra kumar and uday Shankar ojha. New Delhi: Sarup & sons publishers, 2005,169-183
4. Chindhade, shirish." Bathos as a strategy in Nissim Ezekiel's very Indian poems in Indian English:'' pandey
5. Chindhade, shirish . five Indian poets.New Delhi: Atlantic ,2011

* Babaji Marg,Gyanganga Convent School, Khilchipur, Distt. Rajgarh (M.P.) INDIA

जनजातियों में सामाजिक गतिशीलता बिलासपुर संभाग के विशेष संदर्भ में : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. रीना तिवारी *

शोध सारांश – स्वतन्त्रोपरान्त से लेकर अब तक अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक स्थिति में सुधार तथा उनके उन्नयन हेतु अनेकानेक शासकीय एवं अशासकीय प्रयास किये गए है, जिसके फलस्वरूप अनुसूचित जनजाति के जीवन स्तर, सामाजिक स्थिति, राजनैतिक स्थिति एवं उनका सांस्कृतिक जीवन प्रभावित हुआ है तथा उनमें विशिष्टता उनकी युवा पीढ़ी के विचार, जीवन-प्रतिमान, आदर्श मूल्य तथा सामाजिक दृष्टिकोण परिवर्तित हुए है।

प्रस्तावना – गतिशीलता एक सामाजिक तथ्य है सामाजिक गतिशीलता परिवर्तन का ही अंश है। सामाजिक परिवर्तन से हमारा तात्पर्य, सामाजिक संबंधो, सामाजिक संरचना एवं प्रकार्यों तथा संगठनों में होने वाले परिवर्तनों से है, जबकि गतिशीलता व्यक्ति का समूह की सामाजिक परिस्थिति या पद में परिवर्तन से है। सामाजिक गतिशीलता के सम्बन्ध में पी0 ए0 सोरोकिन अपने अध्ययन **Social and cultural mobility" The free press glencoe tillimois 1959** में सामाजिक गतिशीलता के स्वरूप, कारण, प्रकार, प्रभाव, परिवर्तन आदि को विभिन्न समाज के संदर्भ में स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

जनजाति समाज में परिवर्तनों को नगरीयकरण, औद्योगिकरण, आधुनिकीकरण, संस्कृतिकरण, पश्चिमीकरण आदि की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। परिवर्तन की प्रक्रिया में पश्चिमी संस्कृति, आर्थिक दशाओं के दबाव में प्रतिस्पर्धा के कारण जहाँ एक ओर नये प्रतिमानों को ग्रहण किया जा रहा है। वहीं दूसरी ओर परम्परागत प्रतिमानों में गतिशीलता की आवश्यकता के प्रति मानसिक दृष्टिकोण में तीव्र परिवर्तन देखा जा सकता है। आज समस्या उन्हें समीप लाने की नहीं रह गयी वे न तो पूर्णत: दूसरी संस्कृति में समावेशित हो सके है और ना ही अपनी संस्कृति को छोड़ सके हैं। यह संक्रमणकाल स्वयं जनजातियों की नई और पुरानी पीढ़ी के बीच संघर्ष को जन्म दे रहा है।

वर्तमान समाज की शक्ति उद्योग, तकनीकी विकास, प्रौद्योगिकी विकास, शिक्षा, संचार, औद्योगिकरण आदि के विकास के माध्यम से ही आज किसी भी समाज व देश की प्रगति को आंका जा सकता है। जनजाति समाज में गतिशीलता लाने में इन सभी कारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

जनजातिय समुदाय समकालीन परिवर्तन की नवीन शक्तियों एवं कारको से मुक्त नहीं है तथा जनजाति समुदाय में भी पुरातन एवं युवा पीढ़ी के बीच अपनी परम्परा संस्कृति और आधुनिकता के बीच द्वंद उत्पन्न हो गया है।

वर्तमान में पारिवारिक संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। परिवार के स्वरूप, संरचना, स्त्रियों की स्थिति, स्वतंत्रता अधिकार एवं दायित्वों में परिवर्तन आया है। परिवार के सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आधार प्रभावित हुए है। इन सभी परिवर्तनों के मूल में शिक्षा का प्रसार, बाह्य समाजों से संपर्क, कृषि व्यवस्था में बदलाव, औद्योगिकरण, नगरीयकरण, विकास संबंधी कार्यक्रम, जनचेतना, सांस्कृतिक संपर्क तथा अनुकरण की क्रिया आदि है।

आर्थिक स्तर पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि वर्तमान में अन्य जातियो की भाँति ही जनजातियो की आर्थिक व्यवस्था भी गतिमान हो रही है। अध्ययनरत् गोंड उराँव जनजातियो का मुख्य व्यवसाय कृषि तथा कंवर जनजातियो के लोग सैन्य कार्य के प्रति ज्यादा लगाव रखते है।

आर्थोपार्जन कार्य में महिलाएं भी सक्रिय तथा बराबर की भूमिका निभाती है। आर्थोपार्जन में महिलाओं की भूमिका के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष से ज्ञात हुआ कि वर्तमान में 63.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार में महिलाएं आर्थोपार्जन में भूमिका निभा रही है।

अध्ययनरत् जनजाति परिवारों की मुख्य संपत्ति कृषि, भूमि, पशुधन, मकान और जीवनोपयोगी वस्तुओं के रूप पाया गया जिनमें कृषि भूमि एवं पशुधन उत्पादक संपत्ति है तथा मकान और जीवनोपयोगी वस्तुएं अनुत्पादक संपत्ति इस प्रकार स्पष्ट है कि जनजाति उत्पादक संपत्ति को अधिक महत्व देती है।

कृषि कार्य हेतु सिंचाई के साधनों की उपलब्धता से उत्पादन प्रभावित होता है। वर्तमान समय में सिंचाई के साधन के रूप में ये लोग तालाब, कुआं, ट्रिबेल आदि का प्रयोग करने लगे है बहुत ही कम लोग ऐसे है जो केवल वर्षा के पानी पर निर्भर है शासन द्वारा कृषि कार्य के लिए प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है। जिससे अनेक कृषक प्रशिक्षण ले रहे है। इस प्रकार सिंचाई के साधनों की पर्याप्त उपलब्धता से इनकी आय अच्छी हो जाती है।

जनजातियों के विचारो में आधुनिकता आयी है। अब ये लोग केवल धर्म पर ही विश्वास नही करते बल्कि कर्म तथा धन का महत्व बड़ा बढ़ गया है। 81.7 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने इस बात को स्वीकार किया है कि वे धर्म एवं भाग्य के अपेक्षा कर्म एवं धन को अधिक महत्व देते है। इससे स्पष्ट होता है कि धर्म एवं भाग्य जैसे विचारो में कमी आई है और अध्ययनरत् जनजातियो के विचारो में आधुनिकता आयी है। जिसका कारण शिक्षा का प्रसार, संचार, साधन, आधुनिकीकरण आदि है।

तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट हुआ है कि अध्ययनरत् जनजाति में 1961 से साक्षरता में वृद्धि धीमी गति से हुई जिसके अनेको कारणों

* सहायक प्राध्यापिका (समाजशास्त्र) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

पारिवारिक आर्थिक विपन्नता, शिक्षा की विषय वस्तु व पाठ्यक्रम शैक्षणिक संस्थाओं की अपर्याप्तता स्कूलो तक सुगम यातायात की आभाव शिक्षण का माध्यम शिक्षा के प्रति उदासीनता एवं शिक्षा नीति शिक्षकों की अनुपस्थिति आदि रहे है।

उत्तरदाताओं में 27 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित है 37 प्रतिशत अध्ययनरत एवं 36 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षित है। इस प्रकार स्पष्ट है कि वर्तमान में जनजाति समाजों में शिक्षा का स्तर उच्च है।

राजनैतिक धार्मिक तथा नैतिक पृष्ठभूमि तथा विचारों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि राजनीति जागरूकता में सूचनादाताओं की वृद्धि हुई है। किन्तु पारिवारिक सदस्यों की राजनीति में विषेश भूमिका नहीं रही है किन्तु युवापीढ़ी की राजनीति में अभिरूचि दृष्टव्य है। साथ ही वे वर्तमान राजनीति के संबंध में जागरूक है। राजनीति में महिलाओं की स्थिति में भी परिवर्तन हुआ है वर्तमान समय में 81.14 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने राजनीति में महिलाओं की भागीदारी के पक्ष में अपना मत दिया है।

अधिकांश सूचनादाताओं के विचारों में स्त्रियों के संबंध में आधुनिकता स्पष्ट परिलक्षित हुई है, क्योकि अनुसूचित जनजातियों की युवापीढ़ी महिलाओं की कुशलता एवं योग्यता पूर्ण विश्वास रखती है। अधिकांश सूचनादाता इस तथ्य का समर्थन करते है कि पुरूषों के समान स्त्रियां भी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफल हो सकती है। वर्तमान में जनजाति वर्ग के लोगो की स्थिति अच्छी हुई है जिसका कारण है उच्च शिक्षा, तकनीकी विकास एवं औद्योगिकरण, वैश्वीकरण आदि।

शासकीय योजनाएं जो कि जनजातियों के संपूर्ण सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक जीवन के विकास का आधार कही जा सकती है, कि सफलता के लिए आवश्यक है कि स्वयं अनुसूचित जनजातियों को भी संवैधानिक व्यवस्थाओं का ज्ञान हो।

अध्ययनरत् जनजातियों के अनुसार शासकीय योजनाएं लक्ष्य पूर्ति में सफल हो रही है। उनके फलस्वरूप अनुसूचित जनजातियों के जीवन स्तर में उपेक्षाकृत सुधार हुआ है। सरकार द्वारा अनुसूचित जनजातियों के विकासोत्थान के लिए अनेकानेक कार्यक्रम क्रियान्वित किए है।

सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप अध्ययनरत् जनजाति को कुछ समस्याओं का सामना भी करना पड़ रहा है, जो निम्नवत है –

सामाजिक समस्या – अध्ययनरत् जनजाति परम्परागत पारिवारिक संरचना में परिवर्तन से संयुक्त परिवार व्यवस्था के स्वरूप में परिवर्तन आया है तथा इसका स्थान एकांकी परिवार ने ले लिया है। परिवार में मुखिया की स्थिति में भी परिवर्तन आया है अब जो ज्यादा धन अर्जित करता है उसी की सत्ता परिवार में होती है तथा सदस्यों के बीच आपसी संबंध अब ज्यादा घनिष्ठ न रहकर तनावपूर्ण होते जा रहे है। साथ ही पारिवारिक नियंत्रण में मुखिया की भूमिका समाप्त होती जा रही है।

अध्ययनरत् जनजातियों का हिन्दू एवं ईसाई धर्म के संपर्क में आने से धार्मिक समस्या उत्पन्न हुई है। इनमें अपने धर्म के प्रति उदासीनता का भाव तथा आस्था में कमी आयी है। इनके पूजा पाठ में भी परिवर्तन आया अब ये लोग हिन्दू के भांति पूजा पाठ करने लगे है जिससे इनकी धार्मिक एकता भी प्रभावित हुई है जो सामाजिक नियंत्रण का कार्य करता था, उनकी भिन्नता हो जाने से धार्मिक एकता और संगठन टूटने लगे है, तथा पारिवारिक तनाव, भेदभाव और अलगाव की प्रक्रिया प्रारंभ होने लगी है।

शिक्षा की समस्या भी जनजाति समाज में व्याप्त है जिन लोगों को यह ज्ञान है कि शिक्षा अनिवार्य है वे स्वयं अशिक्षित होते हुए भी अपने बच्चों को शिक्षित करना चाहते है। अशिक्षा के कारण आधुनिक ज्ञान से परिचित नहीं हो पाते फलत: आधुनिक वैज्ञानिक कृषि को अपनाने में उनकी पुरानी सोच बाधक के रूप में सामने आ जाती है। अशिक्षा के कारण बाहरी लोग इनका शोषण भी कर लेते है। और इनकी जमीन को भी हथिया लिया जाता है।

युवा पीढ़ी जो शिक्षित हो रहे है वे अपनी संस्कृति से दूर होने लगे है। वे दूसरी संस्कृति के संपर्क में आने के कारण उसका अंधानुकर करते है, परिणाम स्वरूप अपने परम्परागत संस्कृति से विमुख होते जा रहे है। अनेक बार ऐसा होता है शिक्षा के प्रसार एवं व्यवसाय परिवर्तन के कारण उनकी अपनी ही जाति में शिक्षित और अशिक्षित दो वर्ग बन जाते है। शिक्षित एवं प्रबुद्ध वर्ग शासकीय योजनाओं का लाभ उठाकर संपन्न होते जा रहे है फलत: समाज में आर्थिक रूप से संपन्न और निर्धन और जन सामान्य में विभाजन दिखाई देने लगा है। यह वर्ग अपनी ही मूल परंपराओं व मान्यताओं का समाप्त करते जा रहे है। इसका मुख्य कारण गैर जनजातिय समाज का उच्च तबका है।

बाहरी संपर्क के कारण इनके सांस्कृतिक स्वरूप में काफी परिवर्तन आया है। ये लोग अपनी संस्कृति की तुलना सभ्य संस्कृति से करना शुरू कर दिया और उन्हे अपनी संस्कृति निम्न व पिछड़ी लगने लगी है। और अपनी भाषा को भूलकर नयी भाषा को अपना रहे है। नई भाषा के प्रति उत्साह में वे अपनी भाषा की नजरअंदाज कर रहे है और नवीन भाषा को अपनाने के कारण परस्पर आदान-प्रदान में कठिनाई उत्पन्न होती है। अपनी भाषा के प्रयोग से सामुदायिक भावना बनी रहती है जो कि दूसरी भाषाओं को अपनाने में नही रहती और इससे सामाजिक संगठन में कमी आ रही है।

सुझाव – जनजातियों के पुनर्वास एवं विकास के प्रोग्राम रचनात्मक कल्पना के अभाव से ग्रसित हो रहे है जिसके परिणामस्वरूप बढ़ते हुए औद्योगीकरण तथा नए बाजार ने जनजातियों के जीवन को कष्टदायक बना दिया है, उनके शोषण के अवसर प्रदान कर दिए है, वे आधुनिक उद्योगो के षिकार हो गए है। इस परिस्थिति को बदलना होगा। उनके पुनर्वास की विवेकपूर्ण तैयारी के बिना किसी भी प्रकार के औद्योगीकरण की अनुमति प्रदान नहीं की जानी चाहिए। विभिन्न प्रकार के कुटीर उद्योगो खोलने हेतु सुविधाएं दी जाएं। आदिवासी क्षेत्रों में अधिकाधिक आवासीय विद्यालय खोले जाएं तथा शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार किया जाए। जनजाति के पास विपुल सांस्कृतिक विरासत है। जनजातिय समाज के सांस्कृतिक आधार की सुरक्षा अत्यंत आवश्यक है। अत: जनजाति के कला धर्म और संस्कृति को संरक्षण प्रदान किया जाए। जनजातियों से संबंधित योजनाओं को लागू करने का कार्य ऐसे व्यक्तियों को सौंपा जाये जो इन लोगो के विकास में रूचि रखते हो। जनजातियों के प्रति विचार और मनोवृत्ति को बदलने की आवश्यकता है। उनके लिये कार्य करने की अपेक्षा उनके साथ काम करना चाहिए।

इस प्रकार जनजातिय जीवन के विभिन्न पहलुओं में हो रहे परिवर्तनों को ध्यान में रखकर जनजातिय विकास हेतु प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

अत: निष्कर्ष स्पष्ट प्रमाणित होता है कि अनुसूचित जनजातिय वर्ग के शैक्षणिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक राजनैतिक, धार्मिक तथा नैतिक आदि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विचार, आदर्श एवं मूल्य तीव्रता से परिवर्तनोन्मुख है तथा विविध क्षेत्रो में आधुनिकता से ओत-प्रोत है। विभिन्न क्षेत्रों ने इनके जीवन प्रतिमान में बढ़ती हुई गतिशीलता भविष्य में उनके विकास और प्रगति की तथा समानता पर आधारित भावी समाज की नवीन आशाएं प्रदान कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अटल, योगेश (1965) 'आदिवासी भारत' राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
2. अग्रवाल, रामभरोस (1985) 'गोंड़ जाति का सामाजिक अध्ययन' गोंडी पब्लिक ट्र मण्डला।
3. अग्रवाल, डॉ. कृष्ण गोपाल (2000)'जनजातीय समाज का समाजशास्त्र' एस.बी.डी. पब्लिकेशन हाऊस, निकट तुलसी सिनेमा : आगरा।
4. अग्रवाल, डॉ. वासुदेव शरण (1949) 'पृथ्वीपुत्र' समता साहित्य मण्डल, दिल्ली।
5. डॉ. अग्रवाल कुष्ण कुमार एवं सैनी अभिलाषा (2000) भूमण्डली-यकरण का अनुसूचित जनजाति अर्थव्यवस्था पर प्रभाव।
6. आर्या, एस.पी.(1987) प्रारंभिक सामाजिक अनुसंधान, साहित्य भवन आगरा।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

जल प्रबन्धन में जल संवर्धन कार्यक्रम का प्रभाव एवं विकास (समनापुर विकासखण्ड, डिण्डौरी जिले के सन्दर्भ में)

प्रसन्न वदन मरकाम * डॉ. भूवनेश्वर टेम्भरे **

शोध सारांश – आज हम बिना सोचे-समझे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते जा रहे हैं। हम यह नहीं सोच रहे हैं कि उनका भण्डार सीमित है। अगर हम जल को देखें तो उसका उपयोग लगातार बढ़ता ही जा रहा है। विश्व की लगभग सॉंत अरब जनसंख्या उपयोग करने योग्य कुल जल में से वर्तमान में 54 प्रतिशत का उपयोग कर रही है। प्रति व्यक्ति जल की खपत अगर भविष्य में भी ऐसी ही बनी रही तो आगामी 20 वर्षों में सम्पूर्ण विश्व के सम्मुख भयानक जल संकट उत्पन्न होने ही सम्भावना से इंकार नही किया जा सकता है। ऐसे में स्थिति की गंभीरता को देखते हुए जल की खपत पर नियंत्रण और जल प्रबंधन की उचित नीति का होना अति आवष्यक है। जल ही जीवन है, जल को जीवन की संज्ञा दी गई है क्योंकि जल के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीव-जन्तु एवं वनस्पति का जीवन जल पर ही निर्भर है। जल का कोई विकल्प नहीं है। यह हमें प्रकृति से प्राप्त नि:शुल्क उपहार है जिसका कोई मोल नहीं है। जल का उपयोग केवल जीव-जन्तु एवं वनस्पत्ति के लिए ही नहीं बल्कि अन्य क्षेत्रों में जैसे वस्तुओं के उत्पादन हेतु उद्योगों में, विघुत उत्पादन में, भवन निर्माण में, सिंचाई के क्षेत्रों में, मानव द्धारा दैनिक कार्यक्रम में प्रमुखता से जिसका उपयोग विशेष तकनीक के बिना सम्भव ही नहीं है।

प्रस्तावना – जनसंख्या वृद्धि को देखते हुये एवं जिले की भूमि उबड़ खाबड़ एवं पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण यहाँ पर वर्षा का जल नहीं रूक पाता है। यहाँ के नल, नलकूप, कुऐं एव जलाश्यों का जल स्तर नीचे गिर जाता है। ग्रीष्म काल के समय में यहाँ जल की समस्या उत्पन्न हो जाती है। अधिकतर जिला मुख्यालय डिण्डौरी में मार्च माह से ही जल की कमी महसूस करने लगते हैं, जिला डिण्डौरी में मार्च से जून तक जल की कमी होने के कारण पूरे जिले में नगर पंचायत को टेंकरों के माध्यम से जल की पूर्ति करना पड़ता है, जिससे कृषि क्षेत्रों में भी इसका असर पड़ता है। जिला मुख्यालय के आस-पास के गाँवों में, संसाधन में सबसे महत्वपूर्ण संसाधन जल संसाधन है जल संसाधन के बिना उद्यान फसलों के उत्पादन में वृद्धि नहीं की जा सकती अत: भूमिगत जल का उपयोग होने के कारण कुओं, नलकूपों एवं खेत की संख्या में आंशिक वृद्धि हुई है। मेढ़ बंधान में तीव्र गति से वृद्धि होने से जल स्तर नीचे चले जाने से कई कुऐ सूख जाते हैं या उनमें पानी की इतनी मात्रा भी शेष नहीं रहती है जिससक सिंचाई कार्य का कार्य किया जा सकता है। यहाँ के जलष्यों में अधिकतर पक्के नहर नहीं बनाये गये हैं। बरसात में कच्ची नहरें टूट जाते हैं, जिससे पानी खेतों तक ले जाने में असूविधा होने के कारण सिंचाई की समस्या बढ़ जाती है।

वर्तमान का जिला डिण्डौरी 25 मई 1998 से पूर्व मण्डला जिले की तहसील बनी रही। जो 25 मई 1998 को जिले के रूप में गठित किया गया। वर्तमान में मध्यप्रदेश के 50 जिलों में जिला डिण्डौरी भी एक है। इस जिले का बहुत बड़ा भाग पहाड़ी व पठारी है। यहाँ पर दूर-दूर तक फैले पर्वत श्रेणियाँ हैं जहाँ पर आवागमन के साधनों का अभाव है।

स्थिति एवं विस्तार – भारत के हृदय स्थल मध्यप्रदेश के दक्षिण पूर्व में स्थित जिला डिण्डौरी का अक्षांशीय विस्तार भूमध्य रेखा से 22°00' से 23°22' उत्तरी अक्षांश तथा 80°85' से 80°58' पूर्वी देशांतर में स्थित है। जिला डिण्डौरी के चारों ओर क्रमश: उत्तर में उमरिया, उत्तर पश्चिम में जबलपुर, दक्षिण-पश्चिम में मण्डला तथा पूर्व में बिलासपुर कवर्धा तथा अनूपपुर जिले स्थित हैं। जिला डिण्डौरी का कुल क्षेत्रफल 6128 वर्ग किलोमीटर है। जिसमें समनापुर विकासखण्ड को दर्शाने का प्रयास किया गया है शोधार्थी द्धारा जिसकी अक्षांशीय विस्तार भू-मध्य रेखा से 22°00' से 23°22' उत्तरी अक्षांश तथा 81°50' से 80°55' पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। इसका क्षेत्रफल लगभग 806 वर्ग कि.मी. है जिसमें लगभग 86577 जनसंख्या निवास करती है। कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजातियों का प्रतिशत 80-85 प्रतिशत है। मेंहदवानी विकासखण्ड में अधिकांश भाग पहाड़ी, उबड़ खाबड पथरीली, मिट्टी से निर्मित है। कही-कही पर हल्की पीली दोमट मिट्टी पायी जाती है। समनापुर की पूर्वी सीमा नर्मदा व जोहिला नहीं के मध्य भाग से प्रारम्भ होती है, इसके उत्तर-पूर्व में मलधा, रानी दादर व राक्षों पहाड़ स्थित है पूर्व में देवडोंगर नामक पहाड़ी श्रख्ला है। दक्षिण-पूर्व में राई की पहाड़ीयाँ स्थित हैं मेंहदवानी की धरातल की ढ़लान दक्षिण की ओर है। यहाँ से निकलने वाली नदियों का प्रवाह दक्षिण की ओर है।

*शोधार्थी (भूगोल विभाग) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, रानी दुर्गावती शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मण्डला (म.प्र.) भारत

उद्देश्य :

1. जल प्रबन्धन में सरकारी योजनाओं का अध्ययन करना।
2. भू-जल संवर्धन में कार्यक्रमों की भूमिकाओं का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि - अध्ययन का समग्र :- समनापुर विकासखण्ड के जल संसाधनों का अध्ययन करना अध्ययन की इकाई:-

निदर्शन - अध्ययन का शोध प्रपत्र के लिए जनजातीय बहुल डिण्डौरी जिला के समनापुर विकासखण्ड का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि द्वारा किया गया है। चयनित मेंहदवानी विकासखण्ड में कुल गाँच हैं उनमें से अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये 10 गाँवों का चयन इस प्रकार किया गया है, जिनमें जल से सम्बन्धित योजनाएँ संचालित हैं एवं नहीं हैं। जिनमें से 5-5 गाँव बाँट दिया गया है। इस तरह से अध्ययन के लिये कुल 10 गाँवों का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि द्वारा किया गया है। चयनित गाँवों में जानकारी प्राप्त करने के लिये दैव निदर्शन विधि द्वारा चयन किया गया है।

आँकड़ों के स्रोत - अध्ययन हेतु संकलन के लिए विषय की आवश्यकता के अनुकूल विभिन्न पद्धतियों का प्रयोग किया गया है।

1. प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत अध्ययन से सम्बन्धित घटनाओं को देखकर व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा साक्षातकार, अवलोकन, प्रश्नावली एवं अनुसूची समूह चर्चा जैसे अनुसंधान उपकरणों का प्रयोग किया गया है।
2. द्वितीयक स्त्रोत:- द्वितीय समंकों के संकलन के लिये लिखित प्रलेखों, पत्रिकाओं, जिला गजेटियर, पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, जिला सांख्यकीय विभाग, जलसंसाधन विभाग व शासकीय कार्यालयों एवं इंटरनेट आदि का सहारा लिया गया है।

उपकल्पना :

1. समनापुर विकासखण्ड के जल संसाधनों का पता लगाना।
2. समनापुर विकासखण्ड के जल संसाधनों से सम्बन्धित योजनाऐं संचालित हो रहे हैं।
3. समनापुर विकासखण्ड में जल प्रबन्ध एवं सम्वर्धन का कार्य चल रहे हैं।

जल संसाधनों का विकास - महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MPNREGA) के अन्तर्गत जल संसाधन मंत्रालय एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा सयुक्त कन्वर्जेन्स प्लान के तहत जल भरण संरचनाओं के सुधार, पुनरूद्धार एवं पुनर्निर्माण के कार्य प्राथमिकता के आधार पर लिये जाने पर बल दिया है। जिसके तहत जल संसाधन सम्भाग डिण्डौरी द्वारा वर्ष 2009 से 2012 का मास्टर प्लान बनाकर जिला पंचायतों एवं विकासखण्डों के ग्राम पंचायतों में भेजा गया है। वर्तमान में पूर्ण एवं कुछ संचालित हैं।

सारणी क्रं.1

	जलाश्य	तालाब	कुए	नल
जिला डिण्डारी	64	926	5656	6209
विकासखण्ड समनापुर	09	123	673	1020

आरेख क्र.1

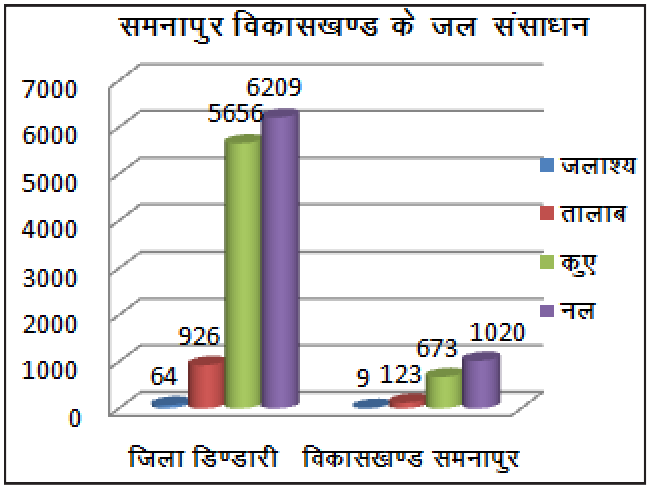

उपर्युक्त सारणी के अनुसार जिला डिण्डौरी में 2012 के स्थिति में जलायष्यों की संख्या जहाँ पर 64 है वहीं केवल एक विकासखण्ड समनापुर में 09 जलाश्यों का निर्माण किया गया है। तालाबों की संख्या जिला में 926 है परन्तु समनापुर में 123 हैं, कुओं की संख्या जिला में 5656 हैं जहाँ समनापुर विकासखण्ड में 673 हैं इसके बाद नलों की संख्या डिण्डौरी जिला में 6209 हैं जिसमें समनापुर विकासखण्ड में 1020 हैं।

यहाँ उपकल्पना 1 में सिद्ध होता है कि समनापुर में कुल 1825 जल संसाधन देखने को मिलता है जो अभी भी काफी कम है। इस क्षेत्र में सरकारी योजनाओं को और अधिक संचालित होना चाहिए जिससे यहाँ के बढ़ती जनसंख्या को जल की कमी न हो सके।

सारणी क्रं. 2. : समनापुर विकासखण्ड का जल सम्वर्धन

मिलीवाटर शेड का नाम	माईक्रो वाटर शेड	कुल क्षेत्र	उपचारित क्षेत्र
संजारी नाला	10	4998	2249
मचरार नाला	10	4936	1234
22 ग्राम	22	9724	5834
योग	**42**	**19658**	**9317**

आरेख क्र. 2

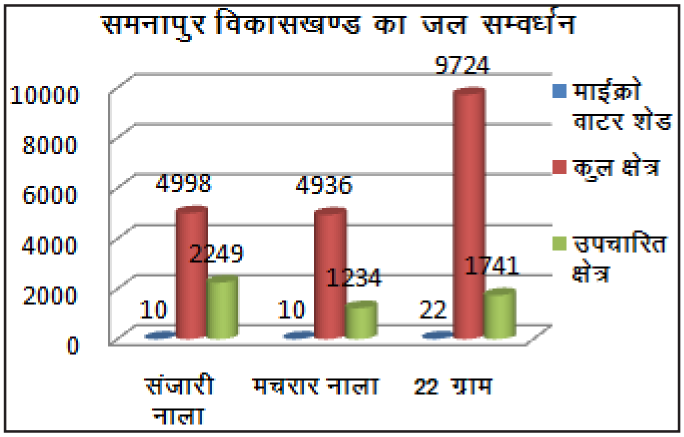

उपर्युक्त सारणी के अनुसार विकासखण्ड समनापुर में संजारी नाला में 10 माईक्रो वाटर शेड स्थापित किये गये हैं इसमें कुल क्षेत्र 4998 है। और उपचारित क्षेत्र 2249 हेक्टर है। मचरार नाला में 10 माईक्रो वाटर शेड स्थापित किये गये हैं इसमें कुल क्षेत्र 4936 है। और उपचारित क्षेत्र 1234 हेक्टर है। एवं 22 ग्रामों में 22 माईक्रो वाटर शेड स्थापित किये गये हैं इसमें कुल क्षेत्र 9724 है। और उपचारित क्षेत्र 5834 हेक्टर है। कुल समनापुर विकासखण्ड में 42 माईक्रो वाटर शेड स्थापित किये गये हैं इसमें कुल क्षेत्र 19658 हेक्टर है। और उपचारित क्षेत्र 9317 हेक्टर है।

इस तरह समनापुर विकासखण्ड में 42 माईक्रो वाटर शेड का कार्य पूर्ण हो चुका है जो जल प्रबंधन एवं जल सम्वर्धन का कार्य है।

यहाँ पर दूसरा एवं तीसरा उपकल्पना सिद्ध होता है कि समनापुर विकासखण्ड में भूमिगत जल को बढ़ाने के लिये योजनाएँ संचालित हैं और जल प्रबन्धन एवं जल सम्वर्धन का कार्य किया जा रहा है जिसको सारणी क्रं. 2 में एवं चित्र द्वारा दिखाया गया है

भूमिगत जल की प्रर्याप्त आपूर्ति बनाये रखने की समस्या बहुत विकट हो गई है। शुष्क क्षेत्रों में नहीं, अपितु आर्द क्षेत्रों में भी यह कठिन समस्या बन गई है। अत्यधिक पम्प सिंचाई के कारण अनेक क्षेत्रों के भूमिगत जल संसाधनों का ह्रास हो गया है। गंगा घाटी में ही अनेक खण्ड़ों में जल स्तर इतना नीचे गिर गया है कि प्रचुर भूमिगत जल संसाधनों वाले खण्ड अब ग्रे हो गये हैं। अतएव भूमिगत जल संसाधनों के उचित प्रबंधन की बहुत आवश्यकता है। इन सब समस्याओं को देखते हुए शोधार्थी ने 'जल प्रबन्धन में जल संवर्धन कार्यक्रम की भूमिका' के बारे में शोध करने का प्रयास कर रहा है। एवं डिण्डौरी जिला बहुत ही ऊबड़-खाबड़ एवं पहाड़ी क्षेत्र होने से वर्षा का जल नदियों के सहारे समुद्र में बह कर चला जाता है इस कारण से इस जिला में सात विकासखण्ड हैं जिनमें दो ही विकासखण्ड है जहाँ पर जल प्रबंध एवं जल सम्वर्धन के कार्यक्रम एवं योजनायें संचालित हैं। इन दो विकासखण्डों के नाम 1. मेंहदवानी एवं 2. समनापुर है। जिसमें शोधार्थी डिण्डौरी जिला के समनापुर विकासखण्ड को चुना है जिनके कुछ चित्र शोधार्थी द्वारा दिखाने का प्रयास किया गया है।

मेंहदवानी विकासखण्ड का जल प्रबंधन एवं सम्वर्धन

सारणी क्रं. 3 : समनापुर विकासखण्ड में जल स्त्रोत

समनापुर विकासखण्ड	नदियाँ	जलाश्य	तालाब	कुएँ	अन्य
हाँ	47	12	28	32	28
नहीं	13	38	16	07	12
निरूत्तर	00	10	16	21	20
कुल योग	60	60	60	60	60

आरेख क्रं. 3

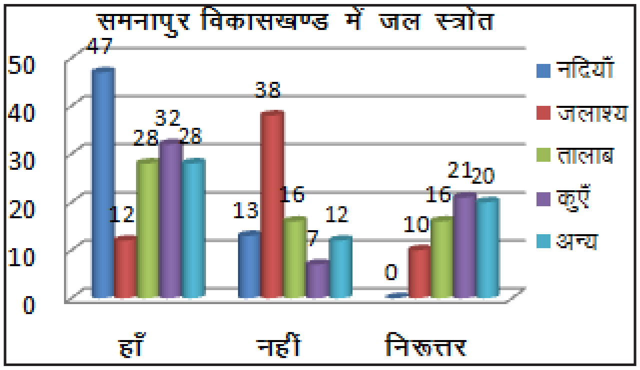

उपर्युक्त सारणी के अनुसार विकासखण्ड समनापुर के 60 गाँवों के उत्तरदाताओं के अनुसार समनापुर के गाँव अधिकतर नदियों के किनारे बसे हुए हैं जिसमें 47 उत्तरदाताओं ने हाँ कहा है एवं 13 उत्तरदाताओं ने नहीं कहा है। जलाश्यों के किनारे 12, तालाब के किनारे बसे हैं। और कुएँ 32 एवं अन्य जल स्त्रोत 28 हैं। जिससे पता लगता है। की जल के स्त्रोत समनापुर विकासखण्ड में है। जिसे जल संम्वर्धन एवं जल प्रबन्ध की आवश्यकता है। और सरकार की योजनाऐं संचालित हो रहे हैं। जिससे में समनापुर विकासखण्ड में जल की प्रतिपूर्ति होने की सम्भावनाएँ देखा जा सकता है आने वाले समय में।

समस्याएं :

1. जल से संबंधी योजना का अभाव।
2. योजनाओं के क्रियांवयन की कमी।
3. जानकारी तथा जागरूकता की कमी।
4. पहाड़ी क्षेत्र में लागत की कमी।

सुझाव :

1. समनापुर विकासखण्ड क्षेत्र में वर्षा जल को रोकने के उपाये कराना चाहिये। जो भी सरकारी योजनायें आते हैं जिला से उन योजनाओं को संचालित करना चाहिये।
2. समनापुर क्षेत्र में जितने भी नदी नाले हैं उनमें एनीकट बाँध बनाना चाहिये, जिससे वर्षा का जल बहने से रोका जा सके। पहाड़ी क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेती करना चाहिये।
3. जल से संबंधी योजनाओं को लोगों तक पहुँचाने का प्रयास।
4. सरकार द्वारा योजनाओं का सुचारू रूप से क्रियांवयन।

निष्कर्ष – डिण्डौरी जिले के समनापुर विकासखण्ड का क्षेत्र अति दुर्गम एवं ऊबड़ खाबड़ क्षेत्र में जनजाति परिवार अपनी आजीविका के लिए सिर्फ खरीफ के फसल ही उगाते थे वर्षा ऋतु में खेती करते थे तथा वर्ष के अन्य महीनों में काम की तलाश में बहार पलायन कर जाते थे, जिससे उनकी सामाजिक - आर्थिक स्थिति कमजोर बनी रहती थी।

शासन द्वारा विचार किया गया कि वर्षा जल का समुचित सग्रहण

वर्षा ऋतु में कर लिया जाये तो रवी के मौसम में कुछ ही फसलें ली जाती है जिससे जनजाति परिवारों के शहरों के तरफ जाते हैं रोजगार के लिए खेती को स्थायित्व देकर अपनी सामाजिक – आर्थिक स्थिति को मजबूत करेगें।

जिले में जल संसाधन एवं जल संग्रहण कार्यक्रमों के माध्यम से कितनी सफलताएँ मिली है? इस अध्ययन से यह जानने की कोशिश की गई है। इसके लिये डिण्डौरी जिले के समनापुर विकासखण्ड के 82 गाँव में 12 गाँवों का अध्ययन किया गया है जिससे पता चला है कि कुछ क्षेत्र में ये योजनाऐं संचालित हैं जिससे वहाँ के लोगों को राहत मिला है।

जल संकट से सिंचित भूमि हेतु जल स्त्रोत – जिन गाँवों में जलग्रहण योजना लागू है उन गाँवों में जल स्त्रोत के रूप में 1020 नल, 673 कुएँ, 123 तालाब एवं 09 जलाश्य जिसमें जलाश्यों की संख्या बहुत कम देखने को मिलता है।

सिंचाई के साधनों में सिंचाई स्त्रोतों से खेतों तक पानी पहुँचाने के लिए विभिन्न सिंचाई कि साधन जैसे डीजल पम्प, मोटर पम्प, नहर एवं नलों में नलकूप के द्वारा पानी पहुँचाया जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. गुर्जर राम कुमार, 'जल संसाधन भूगोल' रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर नई दिल्ली
2. जाट बी.सी. 'जल संसाधन भूगोल' रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर नई दिल्ली
3. 'भारत सरकार' केन्द्रीय जल आयोग गेज निस्सारण एवं वेतार केन्द्र जिला डिण्डौरी (म.प्र.)
4. कार्यालय कार्यपालन यंत्री लोक स्वास्थ्य यॉंत्रिकीय विभाग खण्ड– डिण्डौरी जिला डिण्डौरी मध्य प्रदेश शासन।
5. जैन डॉ. बी.एम., 'रिसर्च मैथ्डोलॉजी' साउथ एशियन स्टेगीज सेन्टर, राजस्थान वि.वि. जयपुर, रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर।
6. गौतम डॉ. नीरज कुमार, 'जल प्रबंधन वर्तमान सदी की आवश्यकता'
7. कुमार डॉ. प्रमीला, शर्मा डॉ श्री कमल, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
8. माजिद हुसैन एवं सिंह रमेश 'भारत का भूगोल' जामिया मिलिया इस्लामिया, (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली।
9. जिला पंचायत एवं जनपद पंचायत डिण्डौरी (म.प्र.)
10. मरकाम प्रसन्न वदन (2011–2012) 'जल संसाधन एवं सिचाई विकास परियोजनाओं का एक भौगोलिक अध्ययन' (जिला डिण्डौरी के संदर्भ में) अप्रकाशित लघु शोध प्रबन्ध, एम. फिल. हेतु निर्देशक डॉ. लोकेश श्रीवास्तव, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

मध्यप्रदेश में कृषि के घटते स्वरूप का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव एक चुनौती

सत्यनारायण मालवीय *

प्रस्तावना – भारत जैसे विकासशील देश में कृषि अर्थव्यवस्था का एक मात्र व सफल साधन है। म. प्र. भी कृषि प्रधान राज्य है। यहाँ की अर्थव्यवस्था पुर्णत: कृषि पर ही आधारित है। राज्य विकास की दौड़ में कृषि का अधुनिकीकरण करने पर तत्पर है, किन्तु इसके प्रतिदिन घटते आकार पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

वन सर्वेक्षण रिपोर्ट 2011 के अनुसार म.प्र. में भूमि का उपयोग निम्नप्रकार था –

कुल उपयोगी भूमि	30757	हेक्टेयर
जंगल	8696	हेक्टेयर
पड़त भूमि	1160	हेक्टेयर
बंजर भूमि	621	हेक्टेयर
कुल बुआई क्षेत्र	14941	हेक्टेयर

उपरोक्त आँकड़ों के आधार स्पष्ट है, कि राज्य की कुल भूमि के आधे से भी कम भू-भाग पर कृषि कि जा रही है। ये वर्ष 2016-17 के सन्दर्भ में और भी कम होती जा रही है। जिसके पिछे मुख्य कारण जनसंख्या वृद्धि, संयुक्त परिवार का बिखराव, शासन की योजनाएँ जैसे प्रधानमंत्री-मुख्यमंत्री सड़क योजना अन्य शासकीय भवन, डेम, तालाब....इत्यादि। इन कारणों से राज्य की कृषि आकारकिय दिनो-दिन घटती जा रही है।

कृषि का अर्थ – भारत के सन्दर्भ में कृषि एक साधन है उद्योग है। यहाँ के विकास का मुख्य साधन है। देश में कृषि ने केवल जीविकोपार्जन का साधन है। बल्कि यहाँ विकास का सम्पूर्ण साधन है। प्राचीन रूप में कृषि जमीन को जोत कर बीज अंकुरित करने से हैं। किन्तु आज कृषि का स्वरूप बदल गया है। विशेष कर भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए तो कृषि एक सम्पोषीय विकास का साधन है।

शोध प्रविधि :– इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार तथ्यों का संकलन किया गया है। इसके लिए शोध क्षेत्र से सम्बन्धित आकड़ों के लिए द्वितीयक शोध सामाग्री के रूप में आधिक कार्यगर साबित हो रहा है। इसके लिए पुस्तकालयों से पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं एवं इन्टरनेट आदि के द्वारा शोध पत्र का अध्ययन किया गया है।

आर्थिक सर्वेक्षण 2012-13 राज्य की जी.डी.पी. में कृषि क्षेत्र का योगदान 2132 रहा था। भारत में 60 कृषि निर्यात क्षेत्र है, जिसमें से मध्यप्रदेश में 6 निर्यात केन्द्र है। रिपोर्ट के अनुसार राज्य में खाद्यान फसल क्षेत्र 132 लाख हेटेयर था, फसल उत्पादन 230 लाख मैट्रिक टन इसमें गेहूँ का क्षेत्रफल 52.60 लाख हेटेयर, सोयाबीन का क्षेत्रफल 57.86 लाख हेटेयर था। सिंचाई की दृष्टि से नलकूप एवं कुएँ द्वारा 69.49 प्रतिशत एवं नहर, तालाब से 20.24 प्रतिशत सुविधा प्राप्त है। इसके अतिरिक्त वर्षा मुख्य साधन है।

मध्यप्रदेश के सफल घरेलु उत्पाद में विभिन्न क्षेत्रों का योगदान

सेवा	47.17 प्रतिशत
कृषि	23.45 प्रतिशत
उद्योग	29.38 प्रतिशत

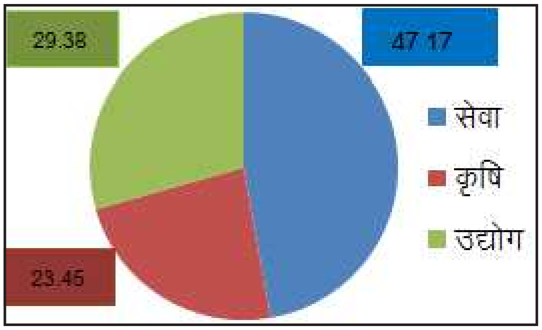

राज्य की अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का योग 2013-14 में 21.32 था। मध्यप्रदेश में कुल रकबा 307.55 लाख हेटेयर है। जिसमें कृषि क्षेत्र 231.14 लाख हेटेयर, जिसमें सिंचित क्षेत्र 78.80 लाख हेटेयर है।

मध्यप्रदेश में कृषि भूमि का उपयोग : 2011 के अनुसार

क्र.	क्षेत्र	हजार हेटेयर
1	ग्रामीण पत्रकों में प्रतिवेदित	23134
2	वनों के अन्तर्गत पड़त भूमि	9469
3	कुल पड़त भूमि	1155
4	काश्त उपयोगी पड़त भूमि	1108
5	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	15223
6	कुल बोया गया क्षेत्रफल	22149
7	द्वि-फसली क्षेत्रफल	6926
8	कुल सिंचित क्षेत्रफल	7421
9	शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल	7140

राज्य में कृषि आकारकिय को कम करने वाले प्रमुख कारक

1. **जनसंख्या –** जनसंख्या वृद्धि राज्य ही नहीं अपितु धरातल के किसी भी भू-भाग पर विकासात्मक समस्या का प्रमुख कारण है। बढ़ती जनसंख्या के कारण राज्य की भूमि आवास सड़क, जोत के प्रकार आदि रूपों में प्रभावित कर रही है। जिससे राज्य में कृषि आकारकिय दिन-प्रतिदिन घटती जा रही है।

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, देवास गेट, उज्जैन (म.प्र.) भारत

2. धार्मिक संस्थायें –राज्य में कई धार्मिक संस्थायें हैं। जो अनुमानित एक ब्लॉक में 2–3 सेन्टर संचालित करती है। आज ये सेन्टर जहाँ स्थित है किसी समय इन स्थानों पर कृषि की जाती थी जो सम्बन्धित क्षेत्र कि जमीन दाताओं द्वारा इन्हें दाल दी गई इनसे राज्य की कृषि आकारकिया कम होती जा रही है।

3. शासन की योजनायें – शासन की योजनाएं जैसे प्रधानमंत्री सड़क योजना, मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजनाएं आदि। सड़क किसी भी क्षेत्र के विकास को चरितार्थ करती है। कहा गया है, कि 'परिवहन किसी क्षेत्र की शिराएँ है, तो सड़क वहाँ की धमनीयाँ है। अत: सड़क किसी क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती है, किन्तु उस क्षेत्र की आकारकिया को निश्चित ही प्रभावित करती है। इसी प्रकार कई भवन मल्टी स्थापित की जाती है। और वे भूत बग्ले के रूप में खण्डहर हो जाती है।'

प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना में 50 हजार 770 किलोमीटर के लम्बाई की सड़क का निर्माण किया गया है। जिसका लाभ 10030 लम्बाई के ग्रामीण ईलाकों में सड़के बनाई गई है। जिन सड़कों को बारह महीनों चलने वाली सड़कों से जोड़ा गया है। इन सड़कों के निर्माण में लागत रूपये 11418 करोड़ की राशि से बनाई गई है। इसके साथ–साथ लोक निर्माण विभाग द्वारा 331 सेतु परियोजनाओं के रूप में 816.79 करोड़ रुपयें की लागत मूल्यों की बनाई गयी है। इन कार्यो को पूर्ण करने में 230.14 करोड़ रुपयें की धन राशि खर्च कर 188 कार्यो को पूर्ण किया गया है।

मध्यप्रदेश में वर्तमान की सड़कों का घनत्व 19 किलोमीटर प्रति 100 वर्ग किलोमीटर के रूप में कार्य किया गया है। यहाँ तक अखिल भारतीय कार्य प्रणाली का घनत्व 83 किलोमीटर के साथ–साथ प्रति 100 वर्ग किलोमीटर है। राष्ट्रीय स्तर पर कार्य को महत्वपूर्ण स्थानों तक पहुँचने के लिये विशेष सहायता हेतु माँग की गयी है।

4. संयुक्त परिवार का बिखराव –वर्तमान में एकल परिवार का चलन बढ़ता ही जा रहा है। संयुक्त परिवार में 10–12 लोग एक साथ एक घर एक कुआ एक बाडा के साथ निवासरत थे, जो आज अलग–अलग होने से अलग–अलग कुआ,बाडा, मकान होने से क्षेत्र की भूमि में कृषि भूमि की कटौती होती जा रही है

5. शहरीकरण – राज्य में शहरीकरण बढ़ता ही जा रहा है। इसके अन्तर्गत बिल्डर्स कृषि योग्य भूमि को कृषक से लुभावने दाम पर खरीद लेते है और उस पर कालोनी बनाकर विक्रय करते है। सम्पूर्ण कालोनी विकसित होने से 2 से 5 वर्ष लग जाते है। तब तक न तो मानव पूर्णत: निवासरत होते नहीं कृषि की जा सकती। इस प्रकार से शहरीय करण भी कृषि आकारकिय को कम करने में तत्पर है।

निदान/समाधान :–किसी भी समस्या का तुरन्त समाधान ढुढ़ना आसान नहीं है। किन्तु इसके एक कारक का प्रबंधकीय रूप से निदान करना सरल है। इसके लिए निम्न सुझाव हो सकेते है।

1. कृषि भूमि पर कालोनीय विक्रय हेतु रोकथाम।
2. कुऐ के स्थान पर ग्राउण्ड नहर सिंचाई का निर्माण।
3. आवश्यकता के अनुरूप ही शासकीय भवनों का निर्माण।
4. धार्मिक संस्थाओं का कृषियोग्य भूमि को दान देने पर रोंक।
5. धार्मिक संस्थान या संगठन को दि गई भूमि पर कृषि की अनिवार्यता जिसकी मॉनिटरिंग शासन की हो।
6. जनसंख्या नियंत्रण संस्थाओं का उचित प्रबंधन।
7. जनसंख्या बृद्धि पर पूणत: नियंत्रण।

निष्कर्ष –निष्कर्ष रूप से यह कहना अनुचित नहीं होगा की वर्तमान राज्य में कृषि योग्य भूमि का दिनों–प्रतिदिन ह्यस होता जा रहा है। उत्पादन बढ़ रहा है, किन्तु जनसंख्या बृद्धि के अनुरूप में व घटता कृषि स्वरूप के अनुपात में राज्य के आर्थिक विकास में कृषि का योगदान कम होना लगभग तय है। इन परिस्थितियों को नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता है। इसके दिये गये विभिन्न पहलु पर विशेष ध्यान देना आवश्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जनसंख्या एवं नगरीयकरण, बौद्धिक प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 2–3
2. मप्र.एक परिचय : पब्लिश बाय एम.सी.ग्रो. हील एजुकेशन, ग्रीन पार्क, न्यु दिल्ली, पृष्ठ 1.18, 1.19
3. उपकार यू.जी.सी. .नेट, आगरा प्रकाशन, उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 171
4. म.प्र. .मानचित्रावली, महावीर पब्लिशर्स, इन्दौर, पृष्ठ 34
5. ताज रावत, **प्राकृतिक पर्यटन विकास एवं बदलाव** आकाशदीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 34
6. ए.एन.अग्रवाल, ***भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन,*** New age International (P) Limited , Publishers, New Delhi, 2008ए पृष्ठ 155
7. राजेश गोयल, ***पर्यटन एवं परिवहन,*** वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 115

****

हो लोक परंपरा और लोक साहित्य

डॉ. इन्दिरा विरुवा *

शोध सारांश – किसी भी क्षेत्र में जाति या जनजाति के लोक साहित्य की मौखिक परंपरा अनादि काल से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्थानांतरित होती रही है। ज्ञातव्य है कि वेद कालीन कथाओं की एक लम्बी मौखिक परंपरा रही है। इसी कारण वेदों को श्रुति भी कहा गया हैं। जनजातीय जीवन में साहित्य की मौखिक परंपरा का विशेष महत्व रहा है। हो जनजाति में भी इस मौखिक परंपरा का प्रारम्भ हजारों वर्ष पूर्व हुआ होगा। साहित्य के मौखिक परंपरा का मुख्य कारण लिपि का अभाव रहा है। हो जनजाति का आदिकालीन निवास स्थान के रूप में सिंधु घाटी को चिन्हित किया गया है जहाँ चित्र लिपि के कुछ नमूने मिले हैं। परन्तु इस लिपि में हो साहित्य रचना का कोई प्रमाण नहीं मिलता है। फलस्वरूप उस क्षेत्र से पलायन के बाद हजारों वर्षों तक उनकी अपनी कोई लिपि संरक्षित नहीं रह पाई। फलस्वरूप उनका लोक साहित्य मौखिक परंपरा के रूप में ही जीवित रही। इस मौखिक परंपरा को जीवित रखने में बड़े बुर्जुगों द्वारा सुनाई जाने वाली दंत कथाएँ तथा कथक्कड़ों के माध्यम से लोक कथा के विविध रूप – मिथक, आख्यान, धार्मिक गाथा, कहावत आदि सुरक्षित रहा। किसी भी साहित्य के लिखित रूप के विकास के लिए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिरता आवश्यक है। यही कारण है कि कोल्हान क्षेत्र में आने के बाद काफी दिनों तक मौखिक रूप से ही उनका लोक साहित्य विकसित होता रहा। इस परंपरा में अनेकों मिथक, धर्मगाथा, परिकथा, मूर्ख कथा आदि प्रचलित रहे हैं। उदाहरण के लिए – ओते बईयन तेया जनागर (धरती बनने की कथा), सेंगेल गामा (अग्नि वर्षा), टुअर कोड़ा कसरा कोड़ा (अवतार कथा), आदि लोक कथाएँ मौखिक रूप से प्रचलित रही हैं। हो जनजाति के प्रवास काल में जिन पशु पक्षियों या प्राकृतिक तत्वों ने उनकी जीवन की रक्षा की तथा उनके भरण-पोषण के साधन बने, उनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए उनके नाम पर नवजात शिशुओं के गोत्र का निर्धारण किया गया, जैसे देवगम (पक्षी), सोय (मछली), कुदादा (जामुन), हेस्सा (पीपल वृक्ष) आदि इसके प्रमाण हैं। इसी प्रकार विभिन्न अवसरों पर गाए जाने वाले गीतों भजनों प्रार्थनाओं आदि की एक लम्बी और विशाल लोक परंपरा रही है। आज भी अनेक पर्व गीत विवाह गीत, श्रम गीत आदि मौखिक रूप से ही प्रचलित एवं लोकप्रिय है। पूजा पाठ और प्रेत बाधा दूर करने वाले मंत्र तो प्राय: गुप्त रखने के लिए मौखिक रूप से ही दिउरी, देवंआ आदि के द्वारा आवश्यकतानुसार प्रयुक्त किए जाते हैं। इस तरह हो साहित्य की मौखिक परंपरा काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि इस परंपरा में जीवित एवं विकसित साहित्य की विभिन्न विद्वानों द्वारा रोमन, अंग्रेजी और देवनागरी लिपि में संपन्न किया गया। तत्पश्चात् लाको बोदरा द्वारा प्रस्तुत की गई हो लिपि 'वारंग चिति' में भी हो साहित्य की कुछ रचनाएँ की गई।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक और द्वितीय स्त्रोतों के आधार पर तथ्यों का संकलन किया गया है। इसके साथ-साथ विद्वानों का मार्गदर्शन और जनजातीय परम्पराओं के निर्वहन करने वाले बुद्धजीवियों से भी साक्षात्कार के माध्यम से शोध पत्र तैयार किया गया है।

समस्या – हो गद्य साहित्य का इतिहास भी काफी समय तक मौखिक रूप में जीवित रहा है। गांव के बड़े उस समय समाज में प्रचलित सामुदायिक केन्द्र गिति ओड़ा में आने वाले युवक-युवतियों को विभिन्न प्रकार की उपदेशात्मक और मनोरंजक लोक कथाएँ सुनाया करते थे। इस प्रकार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक कहानियों का संरक्षण और विकास होता रहा। कहानी कहने वाले कथक्कड़ कहानी को मनोरंजक बनाने के लिए अपनी ओर से भी कुछ बातों को जोड़ दिया करते थे। लोक कथाओं का प्रसार पूरे समुदाय में तथा समुदाय के बाहर मौखिक परम्परा के रूप में होता रहा।

उद्देश्य – हो गद्य या कथा साहित्य का लेखन या प्रकाशन की उपलब्ध सामग्रियों से यह ज्ञात होता है कि वर्ष 1914 से विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से शुरू हुआ। विषयवस्तु की दृष्टि से हो गद्य साहित्य के अंतर्गत विभिन्न प्रकार की रचनाएँ, कहानियाँ, ललित निबंध, कहावत, मुहावरा आदि प्रकाशित हो चुके हैं। प्रारम्भ में कहानियों का लेखन एवं प्रकाशन अंग्रेजी और रोमन लिपि में किया गया। 1924 में सर्वप्रथम हो समाज में प्रचलित दुष्ट रानी की कथा से संबंधित एक रचना एस.सी. मिश्रा द्वारा 'जर्नल ऑफ बिहार एन्ड उड़ीसा रिसर्य सोसाइटी' में प्रकाशित हुई थी। इस रचना का शीर्षक था 'ऑन ए फोक टेल्स ऑफ द विकेट क्वीन टाइप'। उसके बाद बी. सुकुमार हलदर, डी. एन.मजुमदार, जी.एन. सरकार, सी.एच.बोम्पास, कान्हूराम देवगम आदि द्वारा हो लोक कथाओं का संग्रह विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में 1950 ई0 तक प्रकाशित किया गया। इस काल खण्ड को (1950 तक) हो गद्य साहित्य का आदिकाल माना जा सकता है।

समधान – हो कहानियों के विविध रूप इस प्रकार है :-

1. **मिथ या मिथक –** इसे धर्मगाथा भी कहते हैं। लोक कथा की यह विधा सत्य से अधिक प्रचलित लोक विश्वास या धार्मिक भावना पर आधारित होता है। श्री चन्द्र जैन ने अपनी पुस्तक 'लोक कथा विज्ञान' में अपने विचार इस तरह से व्यक्त किया है, – 'मिथ या धर्म गाथा की कथा उस हद तक सत्य मानी जाती है जो किसी युग में घटित हो कर किसी समाज, उसके देवी-देवताओं, वीरों, सांस्कृतिक विशेषताओं एवं धार्मिक विश्वासों आदि में अतिप्राकृतिक विशिष्टाताओं को सार्वभौतिक रूप में स्पष्ट करती है।'

किंबाल यंग ने अपनी पुस्तक 'सोशल साइकोलॉजी' में मिथक के बारे में लिखा है कि 'मिथ आख्यान विश्वास करने वाले व्यक्तियों द्वारा सत्य माने जाते हैं। हम अपने मिथों और आख्यानों का मनोरंजन के लिए गढ़ी गयी विचित्र या विदेशी कथाएँ नहीं वरन् वास्तविक घटनाओं और अभिप्रायों का विवरण मानते हैं।'

हो साहित्य में दो तरह के मिथ मिलते हैं – (क) तत्वशास्त्रीय मिथ (ख) सामाजिक मिथ।

* डी. लिट् शोधार्थी, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

(क)तत्वशास्त्रीय मिथ – इस वर्ग में ब्रह्माण्डीक मिथ जैसे – सूर्य, चन्द्रमा, तारा, आकाश, धरती की उत्पति कथाएँ तथा बोंगा एरा (देवता-देवी) आदि की कथाएँ आती हैं। ऐसी कथाओं को ही साहित्य में मुनु जगर भी कहते हैं। तत्वशास्त्रीय हो मिथों में कई प्रमुख मिथ धनुर सिंह पुरती की पुस्तक हो दिशुम हो होनकोय (भाग-7, पृ. 1-7) में संकलित है। इनमें 'ओते दिशुम बईयन तेया: जगर' (धरती बनने की कथा), 'ओते हसा रे दरू दुम्बु ओण्डो जीव को बईयन तेया: जगर' (धरती, पेड़-पौधों और जीव-जन्तु के सृजन की कथा), 'मनवा सृजोनयन जगर' (मनुष्य के सृजन की कथा) प्रमुख रूप से प्रस्तुत की गई है। इन मिथों में सिंगबोंगा द्वारा केंचुआ की मदद से धरती के निर्माण का कार्य तथा लुकु हड़म और तुकुमि बुढ़ी के माध्यम से मानव सृजन की कथा वर्णित हैं। सेंगेल गामा (अग्नि वर्षा) शीर्षक मिथक मं पाप को नष्ट करने तथा धर्म की स्थापना के लिए सिंगबोंगा द्वारा अग्निदेव की मदद से अग्नि वर्षा के आह्वान की कथा कही गयी है। जिससे सभी जीवधारी जल कर पत्थर बन गये थे। इसके बाद नगे एरा (जल देवी) की मदद से पुन: मानव सृष्टि एवं अन्य जीवधारियों का निर्माण हुआ।

कुछ मिथ आनुष्ठानिक मिथ कहे जाते हैं। ऐसे मिथ देवी-देवताओं, पर्व-त्योहारों आदि से संबंधित होते हैं। इस तरह के मिथों में मागे पर्व, होरो पर्व, जोनमना पर्व आदि की कथाएँ या मिथ शामिल है।

(ख)सामाजिक मिथ – इसके अंतर्गत वैसी कथाएँ आती है जिनके द्वारा सामाजिक संरचना संबंधी तथ्यों की व्याख्या की जाती है। श्री धनुर सिंह पुरती की पुस्तक 'हो दिशुम हो होनको' के सातवें भाग (पृ. 9-10) में 'जाति ओण्डो: पइटि हटिंग' (जाति एवं कर्म का बंटवारा) के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस मिथ में समाज में कर्म या काम के आधार पर महतो, गोप या गौंड़, कमार, तांती, महली आदि जातियों के उद्भव की कथा दिखलाई गई है।

इसी प्रकार हो समाज में प्रचलित 'गोंनोंग' (वधु मूल्य) की कथा, नरभक्षी की कथा, डोंड़ साँप की कथा आदि काफी लोकप्रिय है। इसी क्रम में गोत्र की उत्पति की कथाएँ भी आती है। जिनमें प्रकृति के विभिन्न तत्वों, जीवों, पेड़-पौधे आदि को गोत्र प्रतीक मान कर कथाएँ लिखी गयी है। इस प्रकार की कथाओं में देवगम गोत्र (पक्षी), हंसदा गोत्र (मिट्टी और पानी), लुगुन गोत्र (तसर का कोवा) कुदादा गोत्र (जामुन और पानी), लुगुन गोत्र (तसर का कोवा), कुदादा गोत्र (जामुन का रस) आदि प्रमुख है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हो मिथों में आदि काल में घटित घटनाओं और लोक विश्वासों के आधार पर प्रचलित अनेक कहानियाँ आज भी पवित्र मान कर विभिन्न अवसरों पर पढ़ी और सुनी जाती है।

2. आख्यात – यह इतिहास आधारित लोक कथा के रूप में प्रचलित है। डॉ0 दिनेश्वर प्रसाद ने अपनी पुस्तक 'लोक साहित्य एवं संस्कृति' में यह प्रस्तुत किया है कि 'आख्यान लोक कथा का एक भेद है और सत्य पर आधारित रहता है। आख्यान का आधार लोक साहित्य के अध्येताओं की दृष्टि में भी यह सत्य होता है।'

पाणिनी के अनुसार इतिहास आख्यायिका है और पुरानी कथा है। आख्यान को भी दो वर्गों में बांटा जासकता है। (क) सामान्य आख्यान और (ख) स्थानीय आख्यान।

(क)सामान्य आख्यान – हो साहित्य के सामान्य आख्यानों में 'असुर कोरेया: जनागर' (असुरो की कथा) और 'तुंग राजा और पोंचाइति' (तुंग राजा और पंचायत) जैसे आख्यान का वर्णन धनुर सिंह पुरती की पुस्तक हो दिशुम हो होनकोय के सातवें भाग में प्रस्तुत किया गया है। पहले आख्यान में असुरों के विनाश की कथा संकलित है तो दूसरे आख्यान में तुंग राजा को प्रजातंत्र के रूप में पीड़ पंचायत को प्रस्तुत करने वाला नायक माना गया है।

(ख)स्थानीय आख्यान – इसमें गाँव विशेष, व्यक्ति विशेष या स्थान विशेष से संबंधित आख्यान को रखा गया है। इस तरह का एक आख्यान 'रितुई गोंडाईया: जनागर' (गोंडाई की कथा) का प्रकाशन डी.एन. मजुमदार द्वारा लिखित पुस्तक 'द अफेयर्स ऑफ ए ट्राइब' में प्रकाशित हुई थी। इस कथा में राजतंत्र के अत्याचार का मार्मिक वर्णन किया गया है जिसमें राजा ने अपने अहम को संतुष्ट करने के लिए निर्दोष और आत्म स्वाभिमानी रितुई गोंडाई सिंकू नामक हो किसान को चोरी का झूठा इल्जाम लगा कर मौत की सजा दे दी गयी थी।

हो लोक कथाओं में अनेक लोक कहानियाँ प्रचलित है जो विभिन्न विषयों पर आधारित है। इन कथाओं को निम्नांकित वर्गों में बांटा जा सकता है जैसे – जाति कथा, पशु कथा, नीति कथा, धूर्त कथा, परिकथा, दैत्य कथा तथा हास्य कथा प्रमुख है। जाति कथा में प्रचलित कथाएँ पान द्वारा मच्छरों का शिकार, पान और गिरगिट आदि तांती (पें) की बेवकूफी और भिरूता (डरपोक) पर आधारित है।

हो लोक कथाओं में प्रचलित पशु कथा के पात्र लोमड़ी, भालू, सियार, बाघ, बन्दर, घड़ियाल, पण्डुक (पुतम) आदि शामिल हैं। ये पशु पात्र मनुष्यों की तरह बोलते हैं और व्यवहार करते हैं। बौद्ध साहित्य में प्रचलित जातक कथाओं की तरह ही हो साहित्य की पशु कथाएँ भी उपदेशात्मक मानी जाती हैं। परी कथाओं में मिसी होन (छोटी बहन), फूल की परी, एक संभर धात्री, दो बहनों की कथा आदि प्रमुख हैं। इस तरह की कथाओं में कल्पना का रंग अधिक भरा रहता है और उनको रोचक बनाने के लिए अनेक प्रकार की जादूई शक्ति आदि का प्रभाव दिखलाया जाता है। दैत्य कथाओं में भी राक्षसों के कार्यकलाप एवं उनकी तामसिक शक्ति का प्रयोग दिखलाया जाता है।

निष्कर्ष – हो गद्य साहित्य में श्री धनुर सिंह पुरती का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्हांने हो जाति के सम्पूर्ण जीवन वृत को सात खण्डों में 'हो दिशुम हो होनको' पुस्तक के रूप में प्रस्तुत किया है। पहलं भाग में 'जोनोम आँदि ओण्डो: गोनो:ए रेया दोस्तुर को' (जन्म, विवाह और वधु मूल्य का प्रचलन), दूसरे भाग में 'पोरोब को' (पर्व त्योहार), तीसरे भाग में 'कुपुल एम चेड् मान मनार्तिंग, पइटि पनाइटि को एमन' (मेहमानों का स्वागत आदि), चौथे भाग में 'सिंङबोंगा ओण्डो: बोंगा को' (परमेश्वर तथा अन्य देवता), पाँचवें भाग में 'हो होनको नेन जिड़िरे' (हो लोग और उनका जीवन), छठे भाग में 'संगर' (शिकार) तथा सातवें भाग में 'मनु जनागरको ओण्डो: बंकुड़िको' (पुरानी कथाएँ और कहावत) शामिल हैं। इस प्रकार उन्होंने हो गद्य साहित्य को काफी संपन्न बनाने का काम किया है। गद्य साहित्य के लेखन कार्य में लाको बोदरा का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। परंतु उनकी अधिकांश पुस्तकें वारंग चिति लिपि में लिखी गयी हैं जिनका अध्ययन सब के लिए संभव नहीं है। उनकी प्रमुख गद्य पुस्तकें हैं – हो हयम पहम पुति, बूढ़ा सुढ़ा सगेन, पोम्पो, बहा बुरू, बुरू, बोंगा, हलं हलपुंग, रघुवंश, होरा बारा आदि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'जनजातीय समाज का समाजशास्त्र' – डॉ0 कमलेश महाजन।
2. 'हो दिसुम, हो होनको' भाग-7, श्री धनुर सिंह पुरती।
3. 'हो लोक कथा : एक अनुशीलन' – डॉ0 आदित्य प्रसाद सिन्हा।
4. 'लोक साहित्य एवं संस्कृति' – डॉ0 दिनेश्वर प्रसाद।
5. 'मुण्डा लोक कथाएँ' – जगदीश त्रिगुणायत।
6. 'लोक कथा विज्ञान' – श्री जन्द जैन।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

A Study on the Youth Attitudes towards Green FMCG in Gwalior District

Usha Sharma * Dr. Deepak Singh **

Abstract - This study is on the Green Marketing but specially focused on youth attitudes towards Green FMCG. It has been serious problem that how we will protect our environment from the pollution. In the recent years, customer, companies and government take social responsibility to save our earth with the adoption of green product policy. They all understood the importance and vital role of green marketing. This information is based on review of literature. The objective of the study is to find out the youth attitudes towards Green fast moving consumer goods (FMCG). There are 2 independent variable i.e. health consciousness and social issues and one dependent variable intention to purchase. Primary and secondary data were collected and data analysed with the help of percentage method. Our findings showed that youth are health conscious and concerned about social issues. That means it have positive attitudes towards green FMCG.
Keywords - Green Product, Fast moving consumer goods, health consciousness, social issues, etc.

Introduction - The objective of this introduction is to give basic information about green and FMCG products. The Green development has been growing on the earth. With respect to consumers taking responsibilities and making the best things. As compared with developed countries consumers, the Indian buyer has less aware about global warming .The growth of the global economy, over consumption and utilization of natural resources has deteriorated the environment. The climate change which is caused by human-induced greenhouse gas emissions and fossil fuel combustion and is now occurring and it has presented a great challenge to everyone around the world. Climate change could produce severe negative outcomes such as higher temperatures, rising sea levels, increased air pollution, loss of animal and plant habitats, ocean circulation disruption and extreme weather conditions which severely impair output and productivity. This research paper carried out to identify the youth attitudes towards green FMCG. According to the Longman Dictionary of contemporary youth who is under a period of time and who is under teenager stage. This research will be targeted on youth, with age ranging from 17 to 25.

Green products are such products those not give negative impact on the environment and also don't detrimental on human being as compare to traditional products. Green products are formed with recycled materials, energy conservative less packaging supplied to the market and reduce carbon footprint. Green products are environmentally safe. Green products are conserving and preserve water and energy. It reduces air, water and Land pollution. It is a non toxic and organic products and due to organic ingredients and materials. It is grown with non toxic pesticides and herbicides. Green Products still affect on the environment, yet the effect is incredibly decreased when compared with expectedly produced items. Now and again, greens products may even have a positive advantage, depending upon how the company works together.

Green product is suppose to less harm on the environment, because of its making procedure, components and reusing systems which are less damage for the natural environment than those of conventional products. The green product market is more expanding. Now it can say that Eco friendly products means that its consumption does not have negative impact on the environment because it has made by healthy production process and with recycled materials.

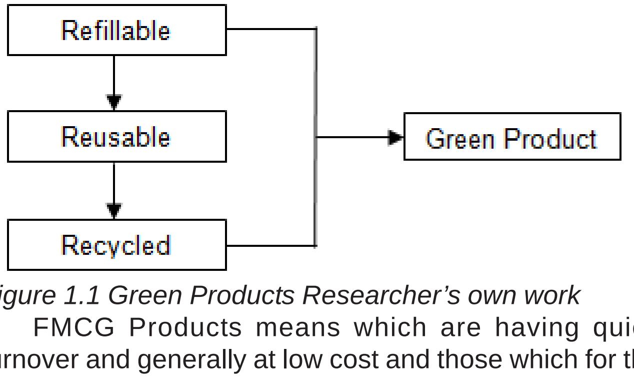

Figure 1.1 Green Products Researcher's own work

FMCG Products means which are having quick turnover and generally at low cost and those which for the most part get replaced within a year. For example of FMCG territories cleansers, cosmetic, personal care, oral care item

*Research Scholar, School of Commerce and Business Studies, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Principal, S.R.D. College, Morena (M.P.) INDIA

shaving products, packaged food products and digestive as well as other non durable for example bulbs, batteries, paper product, glassware and plastic goods.

Importance of the study - The intention of this research is to establish the purposes for identify the purchase intention of youth consumer towards green FMCG and also analyze whether and how the factors affect youths attitude and behaviour. Thus it is Important to further study in the youth attitudes to purchase green FMCG for unable to promote the green activities successfully.

Objectives of the study - The main objective of this study is to identify factors influencing youth's attitude towards purchasing green products. It seeks to examine and understand whether factors such as attitudes toward green FMCG, health consciousness, and attitudes toward the environment, and purchasing intention will influence youth's intention to Purchase green FMCG.

1. To find out the relationship between health consciousness toward green FMCG and intention to purchase green.
2. To find out the relationship between social issues and intention to purchase green FMCG.

Review of Literature - Intentions are assumed to capture the motivational factors that influence a behaviour; they indicate that how much of an effort people are planning to exercise or how hard people are willing to trying to perform the behavior. (Ajzen 1991). Zuhairah Hasan & Noor Azman Ali Conducted a research that the green innovation and green promotion, process and product put positive impact on performance of firm. In the 21st century, environment change and fast exhaustion of natural recourses and biodiversity is a portion of the challenges mankind must grasp. The subject of green marketing is vast, having important implication for business technique and open policy. Obviously, green marketing is an integral part of general corporate methodology. (Menon and Menon 1997). Product attributes play an important role in advancement in product because it influence buyer product purchase decision and they push marketers to satisfy consumer's needs, wants and demands. The researcher found that age has negative significant relationship with satisfaction but income and family size were not found significant relationship with consumers' satisfaction. Youth generations are highly concerned with environment and their consumers buying and consumption decision is based on eco labelling. Jayanti and Burns's (1998) defined health consciousness the degree to which health conscous are intergrated into a persons daily activity. Persons who are enjoy healthy foods such as white meat, dairy products, fruits & vegetables and they prefered daily walk and exercise. Some environmental scientist have referred to the attitude towards the normal condition as 'ecological concern'(Vining & Ebreo, 1992, Fransson & Graling, 1993; Dunlap & and Jones, 2002). As indicated by Schultz & Zelezny (2000) The nature of the environment depends fundamentally on the level of informations, attitude, qualities and practices of consumers (Mandalay & Abijoye,1998). Kilbourne and Pickett (2007), resulted that Connection between realism, ecological beliefs, environmental concern and natural practices. The examination utilized on irregular phone study on 337 grownups, utilising and easygoing displaying approach, the examination exhibited that realism negatively affects natural beliefs and these convictions decidedly influence ecological concerned and eco friendly concern behaviours. The article at that point gave implications of the outcomes to the buyer and natural strategy.

Research Methodology - This study is based on Primary and Secondary data. Primary data were collected with the help of a structured questionnaire, it consist 10 questions separated with 3 sections. The first part consist general information (Age) of youth respondents, the second part of the questionnaire has 5 questions were asked about the health consciousness of the consumers and last section of the questionnaire based on social issues, with the help of these questions we were know the social attitudes of the youth. The respondents were requested to answer in Yes or No.

Result & Analysis - The sample of the study was 100 youth consumers from the Gwalior District. The sample selection was based on convinced of the researcher. Many of the youth are health conscious and take social responsibility to save their city clean.

Age Group

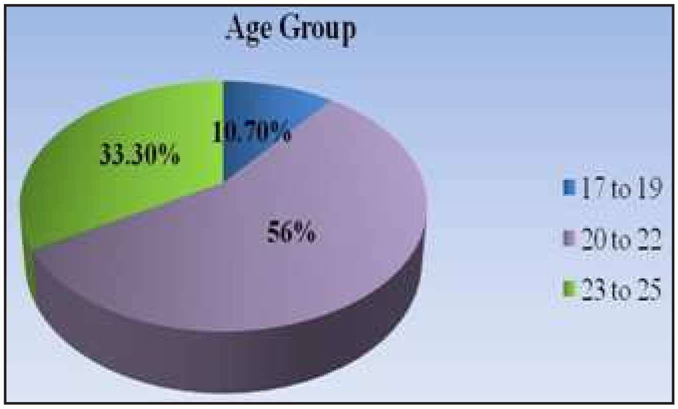

Based on the Figure, the majority of the respondents were aged 20 to 22 years old, representing 56%. It followed by 33% of the respondents were aged 23 to 25 years old, and only 10.7% were aged 17 to 19 years old.

Table 1- I am conscious about my health?

Yes	No
87	13

According to the table 87% respondents are conscious about their health and only 13% are not health conscious. So due to this reason they interested to purchase Green FMCG.

Table-2 -I am alert to changes in my health?

Yes	No
78	22

According to the table 78% respondents are noticed the changes in their health and 22% are not alert to changes.

Table-3- I feel healthy while using Green FMCG?

Yes	No
92	08

According to the above table 92% youth respondents are feel healthy while using Green FMCG. That means majority of respondents using Green FMCG.

Table 4- While purchasing Green FMCG I notice its side effects on the health?

Yes	No
84	16

According to the above table 84% youth respondents are noticed side effects on the health of Green FMCG and only 16% are not noticed it.

Table 5- While purchasing Green FMCG I read all the contents of the products?

Yes	No
74	26

According to the above table 74% youth respondents are read all the contents which mentioned on the product but 26% respondents are ignored it.

Table 6- I want my city to be clean and I contribute positively for the same?

Yes	No
96	4

According to the above table majority of respondents are want to be their city clean and they would be the contributed positively same. This resulted that youth are serious about clean India.

Table 7- I feel that it's our social responsibility to save our nation from pollution?

Yes	No
91	9

According to the table 91% respondents know about the social responsibilities that save our nation from pollution.

Table 8- It is essential to promote Green living in my country?

Yes	No
94	6

According to the above table 94% respondents are in favour of green living in our country so they promote green FMCG.

Table 9- I make best possible efforts to reduce the use of plastic bags?

Yes	No
98	2

According to the major respondents i.e. 98% they make best and every efforts to reduce the use of plastic bags. This result stated that youth are very serious about the pollution problem.

Table 10- I am aware about the global warming and its adverse effect on the environment?

Yes	No
69	31

According to above table only 69% respondents are aware about serious problem of global warming and its adverse effect on the environment but 31% respondents are not know about the global warming and its adverse effect on the environment.

Findings - Based on the study, result has shown that youth of Gwalior district are health conscious and it is important motive shaping attitudes towards green FMCG. Youth aware about their health, purchased mostly healthy food from the market, they alert to changes in their health, they read all contents on products and also check expiry date of the product. Youth prefer green products to satisfy their day to day needs and wants. Youth consumers think that green products as pure source of nutrients and less harmful, which is good for health. Green FMCG had made more care about their consumer's health. So it is resulted that health consciousness is the stronger factor for purchase Green FMCG.

According to the result youth has social attitudes towards Green FMCG. Youth want to be their cities clean, they would be the part of clean India, they want promote green living in our country and most important thing is that youth make every possible efforts to reduce the use of the plastic bags. Thus, social issues also take part to create attitudes towards intention purchase Green FMCG. Finally health consciousness and social issues are related with intention to purchase Green FMCG.

References :-

1. Randiwala Pradeep and Mihirani P.M.N. (2015). Buying behavior and attitudes towards Eco-friendly fast moving consumer goods- cosmetic & personal Care products. *Cambridge business & economics conference.* ISBN-9780974211428, July 2015.
2. Jain Aditi (2016). A study of the impact of green marketing on consumer purchasing and decision making in Telangana, India. National college of Ireland. August 2016.
3. Chitra B. A study on evaluation of green products and green marketing. *Quest journals of research in business and management.* ISSN: 2347-3002. Vol-3, Issue-5, Pp.35-38.
4. Hasan Zuhairah & Azman Noor Ali (2014). The impact of the Green Marketing strategies on the firm's performance in Malaysia. *Global conference on business and social science-2014*, *GCBSS-2014*. Kualalumpur. Pp. 463-470.
5. Purohit H.C. Consumer awareness, motivation and buying intention of Eco-friendly fast moving consumer Goods: An empirical study.
6. Sharma Dr. Meghna & Trivedi Prachi (2016). Various Green Marketing variables and their effects on consumers buying behaviour for Green products. Vol.5, issue-1, Jan.2016, ISSN-2278-2540.
7. Kraft F.B. & Goodell, P.W. (1993). Identifying the health conscious consumer. *Journal of health care Marketing*. Vol.13, issue 3, Pp. 18-25.

****

कृषि के बढ़ते उत्पादन से कृषक जीवन पर प्रभाव (नरसिंहपुर जिला के सन्दर्भ में)

ब्रजेश कुमार डेहरिया * डॉ. भुनेश्वर टेम्भरे **

प्रस्तावना – विकासशील प्राणी मानव अपने दैनिक आवश्यकताओं को निरन्तर बढ़ाते जा रहा है प्रति में केवल मानव ही एक ऐसा प्राणी है जो कभी सन्तुष्ट नही रहता है अपनी बढ़ती आवश्यक्ताओं के लिए संसाधनों को भी बढ़ना आवश्यक है कृषि के क्षेत्र में उत्पादन पूर्व की अपेक्षा बढ़ रहा जिससे कृषक जीवन पर प्रभाव पड़ रहा है उनके रहन सहन आर्थिक स्थिति एवं संस्कृति पर प्रभाव पड़ रहा है।

अध्ययनक्षेत्र नरसिंहपुर की मृदा एवं जलवायु कृषि के लिए अनुकूल है इसलिए यहॉ का मुख्य व्यवसाय कृषि है वर्ष 2011 की जनगणना अनुसार यहॉ की कुल जनसंख्या 1091854 है जिसमे से पुरूष कृषक 87433 है एवं महिला कृषक 14950 कुल 102383 कृषक है जिले में खेती हर मजदूर पुरूष 107426 एवं खेती हर मजदूर महिला 58019 कुल 165445 खेती हर मजदूर है यहॉ की प्रमुख फसलें गेंहू चावल ,तुअर, गन्ना, आदि है वर्ष 2014-15 में सीमान्त कृषक 54952, लघु कृषक 52942 अर्द्ध मध्यम कृषक 32494 बडे कृषक 5233 है यहॉ के कृषक कृषि के साथ साथ गाय, भैंस भी पालते है जिससे इन्हें अतिरिक्त आय भी प्राप्त होती है जिससे इनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हो रही है

भारतीय समाज अधिकांशत: कृषि कार्य पर निर्भर है इसलिए कृषि भारत की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाती है भारत में 64 प्रतिशत आय कृषि से होती है जैसे जैसे कृषि का उत्पादन बढता है उसी प्रकार कृषकों को अच्छी आमदानी प्राप्त होती है जिससे उनकी आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति मजबूत हो रही है

अध्ययनक्षेत्र की जलवायु कृषि के अनुकुल है यहॉ सभी मौसम में कृषि कार्य संभव है रवि की प्रमुख फसलें गेंहु ,चना, मटर है खरीफ मौसम की प्रमुख फसल चावल, तुअर आदि है जायद की फसलों मे सिंचाई द्वारा सब्जियां तरबूज,खरबूज , ककडी, कद्दू आदि की कृषि की जाती है इस प्रकार की खेती से कृषक की आय में वृद्धि होती है कृषक के जीवन स्तर में सुधार होता है।

शोध प्रविधि –प्रस्तुत शोध पत्र में प्राथमिक आंकडे अवलोकन एवं साक्षात्कार द्वारा आंकडे अर्जित किये गये है एवं द्वितीयक आंकडे को प्राप्त करने लिए नरसिंहपुर जिला की जिला सांख्यिकीय पुस्तिका जिला गजेटियर शोध पत्रों का अध्ययन किया गया है इस प्रकार अर्जित आंकडों को सारणीयन विष्लेषण एवं चित्रमय प्रस्तुत किया गया हैं।

अध्ययनके उद्देश्य – प्रस्तुत शोध के उद्देश्य निम्न है '

1. अध्ययनक्षेत्र नरसिंहपुर में कृषि उत्पादन का अध्ययन करना।
2. कृषकों के जीवन स्तर संस्कृति आय आदि का अध्ययन करना।
3. कृषि के उत्पादन को बढाने एवं कृषक आय में वृद्धि रहन-सहन सुधार हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

उपकल्पन – इस शोध पत्र की उपकल्पना इस प्रकार है :

1. नरसिंहपुर में कृषि उत्पादन बढ रहा है
2. कृषि के उत्पादन बढने से कृषक जीवन पर प्रभाव पड रहा है।

अध्ययन क्षेत्र – नरसिंहपुर जिला मध्यप्रदेश में स्थित जिसका आकार छोटा है। नरसिंहपुर जिला एक प्रकार से बहुत ही छोटा जिला है। किन्तु छोटा जिला होने पर भी नरसिंहपुर संसाधनों के रूप में सम्पन्न के लिए अग्रणी है। नरसिंहपुर जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 5133 वर्ग कि.मी. के लगभग है जो कि मध्यप्रदेश राज्य के कुल क्षेत्रफल का 1.15 प्रतिशत ही है। इस जिले की विभिन्न स्थानों की समुद्र सतह से ऊँचाई 380 मीटर पर स्थित है। जिला के चारों दिशाओं में फैले पूर्वी भाग से पश्चिमी भाग में 121 कि.मी. एवं उत्तर से दक्षिण में 64 कि.मी. तक फैला है। नरसिंहपुर जिला का अक्षांशीय और देशांतर विस्तार 22^{0} 45' उत्तरी अक्षांश से 23^{0} 15' उत्तरी अक्षांशीय रेखा में स्थित है। क्योंकि 78^{0} 38' पूर्वी देशांतर तक 79^{0} 38' पूर्वी देशांतर के मध्य में स्थित है। इस जिले की आकृती आयताकारनुमा से दिखाई देती है।

समाधान – नरसिंहपुर जिला: कृषि उत्पादन नरसिंहपुर जिला में प्रमुख फसलों के अंतर्गत क्षेत्र वर्ष 2014-15 अनुसार खाद्य फसलों का क्षेत्र 147960 हेक्टेयर एवं आखाद्य फसलों का क्षेत्र 68795 हेक्टेयर है जबकि रवि मौसम में खाद्य फसलों का क्षेत्र 401177 एवं अखाद्य फसलों का क्षेत्र 600 हेक्टेयर है । कुल क्षेत्र 467489 हेक्टेयर है यहॉ का प्रमुख फसलें गेंहु, चावल,गन्ना, तुअर , मक्का ,चना है उपरोक्त सारणी में इन फसलों के उत्पादन को दर्शाया गया है-

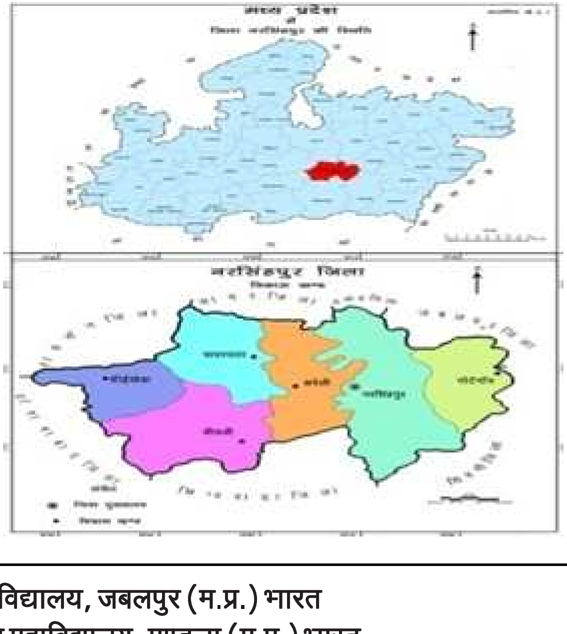

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, रानी दुर्गावती शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मण्डला (म.प्र.) भारत

साराणी क्रं. 01 (निचे देखे)

आरेख क्रं. 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि वर्ष 2007-08 में प्रति हेव. उपज चावल 2236 कि.ग्रा. गेंहु 2865 कि.ग्रा. ज्वार 1489 कि.ग्रा., मक्का 2153 कि.ग्राम., तुअर 1218 कि.ग्रा., मूँगफली 1268 कि.ग्रा., अलसी 565 कि.ग्रा. है। वर्ष 2008-09 में प्रति हेव. उपज चावल 2413 कि.ग्रा., गेंहु 2906 कि.ग्रा., ज्वार 1392 कि.ग्रा., मक्का 2142 कि.ग्राम., तुअर 1220 कि.ग्रा., मूँगफली 1270 कि.ग्रा., अलसी 571 कि.ग्रा. है। वर्ष 2009-10 में प्रति हेव. उपज चावल 2415 कि.ग्रा. गेंहु 2912 कि.ग्रा. ज्वार 1398 कि.ग्रा., मक्का 2150 कि.ग्राम., तुअर 1225 कि.ग्रा., मूँगफली 1275 कि.ग्रा., अलसी 582 कि.ग्रा. है। वर्ष 2010-11 में प्रति हेव. उपज चावल 3010 कि.ग्रा. गेंहु 3010 कि.ग्रा. ज्वार 1250 कि.ग्रा., मक्का 1500 कि.ग्राम., तुअर 1290 कि.ग्रा., मूँगफली 2180 कि.ग्रा., अलसी 840 कि.ग्रा. है। वर्ष 2011-12 में प्रति हेव. उपज चावल 1250 कि.ग्रा. गेंहु 3070 कि.ग्रा. ज्वार 1250 कि.ग्रा., मक्का 1700 कि.ग्राम., तुअर 1800 कि.ग्रा., मूँगफली 2180 कि.ग्रा., अलसी 840 कि.ग्रा. है। वर्ष 2012-13 में प्रति हेव. उपज चावल 2660 कि.ग्रा. गेंहु 4500 कि.ग्रा. ज्वार 1250 कि.ग्रा., मक्का 1700 कि.ग्राम., तुअर 1800 कि.ग्रा., मूँगफली 2180 कि.ग्रा., अलसी 910 कि.ग्रा. है। वर्ष 2013-14 में प्रति हेव. उपज चावल 3293 कि.ग्रा. गेंहु 3795 कि.ग्रा. ज्वार 1384 कि.ग्रा., मक्का 1475 कि.ग्राम., तुअर 1692 कि.ग्रा., मूँगफली 671 कि.ग्रा., अलसी 660 कि.ग्रा. है। वर्ष 2014-15 में सभी फसलों की प्रति हेव. उपज बड़कर चावल 3680 कि.ग्रा. गेंहु 3480 कि.ग्रा. ज्वार 2397 कि.ग्रा., मक्का 1353 कि.ग्राम., तुअर 1368 कि.ग्रा., मूँगफली 1467 कि.ग्रा., अलसी 660 कि.ग्रा. है।

साराणी क्रं. 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आरेख क्रं. 02 (देखे अगले पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 2 से स्पष्ट है कि वर्ष 2007-08 में चावल 23.12 मिलियन टन गेंहु 198. 32 मिलियन टन गन्ना 141.15 मिलियन टन तुअर 33.13 मिलियन टन, उडद 4.68 मिलियन टन, चना 126.37 मिलियन टन,सोयाबीन 102.12 मिलियन टन उत्पादन रहा। वर्ष 2008-09 में चावल 23.42 मिलियन टन ,गेंहु 198.14 मिलियन टन ,गन्ना 141.25 मिलियन टन, तुअर 33.20 मिलियन टन, उडद4.70 मिलियन टन ,चना 127.01 मिलियन टन, सोयाबीन 102.21 मिलियन टन रहा। वर्ष 2009-10 में सभी फसलों का उत्पादन बढकर चावल 23.45 मिलियन टन, गेंहु 199.17 मिलियन टन ,गन्ना 141.32 मिलियन टन, तुअर 33.27 मिलियन टन ,उडद 4.76 मिलियन टन ,चना 127.26 मिलियन टन, सोयाबीन 102.32 मिलियन टन रहा। वर्ष 2010-11 में चावल 37.76 मिलियन टन,गेंहु 207.24 मिलियन टन, गन्ना 134.30 मिलियन टन, तुअर 28.07 मिलियन टन, उडद 4.90 मिलियन टन,चना 125.35 मिलियन टन सोयाबीन 186.00 मिलियन टन रहा वर्ष 2011-12 में चावल 15.71 मिलियन टन ,गेंहु 235.02 मिलियन टन,गन्ना 104.60 मिलियन टन, तुअर 53.50 मिलियन टन उडद 3.85 मिलियन टन, चना125.09 मिलियन टन सोयाबीन 155.74 मिलियन टन।

निष्कर्ष – उत्पादन रहा जबकि वर्ष 2012-13 में चावल 34.35 मिलियन टन, गेंहु 368.99 मिलियन टन,गन्ना 197.40 मिलियन टन, तुअर 47.66 मिलियन टन, उडद 5.83 मिलियन टन, चना 133.84 मिलियन टन, सोयाबीन 160.29 मिलियन टन उत्पादन हुआ। वर्ष 2013-14 में चावल 56.6 मिलियन टन गेंहु 311.10 मिलियन टन, गन्ना 292.20 मिलियन टन, तुअर 59.60 मिलियन टन, उडद 1.20 मिलियन टन, चना 6.0मिलियन टन, सोयाबीन 35.20 मिलियन टन उत्पादन रहा। वर्ष 2014-15 में चावल 111.87 मिलियन टन, गेंहु 330.60 मिलियन टन गन्ना 320.61 मिलियन टन, तुअर 57.05 मिलियन टन उडद 5.86 मिलियन टन उत्पादन हुआ। चना 73.47 मिलियन टन, सोयाबीन 56. 75 मिलियन टन उत्पादन हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी, राकेश कुमार (1980-81) 'साईंखेड़ा ग्राम के कृषकों का सामाजिक-आर्थिक अध्ययन', अर्थशास्त्र स्नातकोत्तर एम.ए. उत्तार्द्ध उपाधि हेतु अप्रकाशित शोध लेख, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (मध्य प्रदेश)।
2. मिश्रा, दिनेश कुमार (2011) 'जनजातीय कृषि व्यवस्था का पर्यावरण पर प्रभाव ', पी-एच.डी. उपाधि हेतु अप्रकाशित शोध प्रबंध, भूगोल विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (मध्य प्रदेश)।
3. पटेल, राजेन्द्र कुमार, (2010) 'नरसिंहपुर जिले में 1857 का विद्रोह तथा स्वाधीनता आंदोलन', पी-एच.डी. उपाधि हेतु अप्रकाशित शोध प्रबंध, वाणिज्यिक विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (मध्य प्रदेश)।

सारणी क्रमांक-1 : नरसिंहपुर जिला प्रमुख फसलों की प्रति हेक्टेयर उपज

वर्ष	चावल	गेंहु	ज्वार	मक्का	तुअर	मूगफली	टलसी
2007-08	2236	2865	1489	2153	1218	1268	565
2008-09	2413	2906	1392	2142	1220	1270	571
2009-10	2415	2912	1398	2150	1225	1275	582
2010-11	3010	3010	1250	1500	1290	2180	840
2011-12	1250	3070	1250	1700	1800	2180	840
2012-13	2660	4500	1250	1700	1800	2180	910
2013-14	3293	3795	1384	1475	1692	671	660
2014-15	3680	3480	2397	1353	1368	1467	660

आरेख क्रं. 1

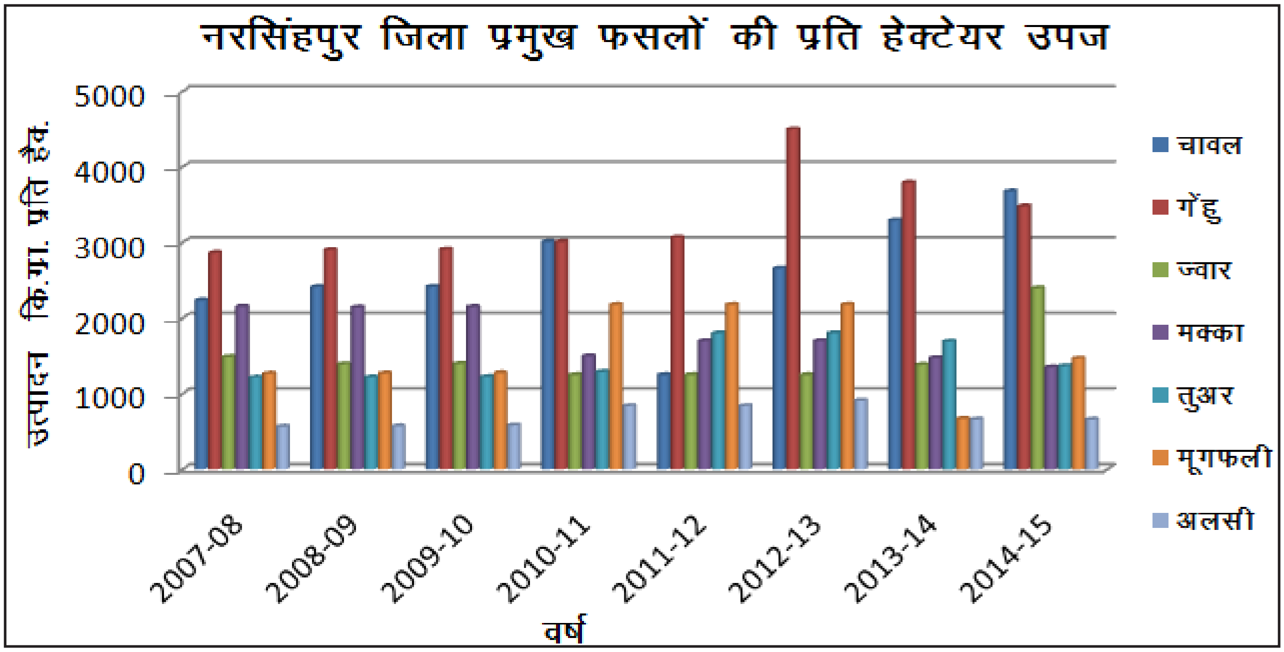

सारणी क्रमांक 2 : जिला नरसिंहपुर प्रमुख फसलों का उत्पादन

वर्ष	चावल	गेंहूँ	गन्ना	तुअर	उड़द	चना	सोयाबीन
2007-2008	23.12	198.32	141.15	33.13	4.68	126.37	102.12
2008-2009	23.42	198.14	111.25	33.20	4.70	127.01	102.21
2009-2010	23.45	199.17	141.32	33.27	4.76	127.26	102.32
2010-2011	37.76	207.24	134.30	28.07	4.90	125.35	186.00
2011-2012	15.71	235.02	104.60	53.50	3.85	125.90	155.74
2012-2013	34.35	368.99	197.40	47.66	5.83	133.84	160.29
2013-2014	56.6	311.10	292.20	59.60	1.20	84.60	35.20
2014-2015	111.87	330.60	320.61	57.05	5.86	73.47	56.75

आरेख क्रं. 2

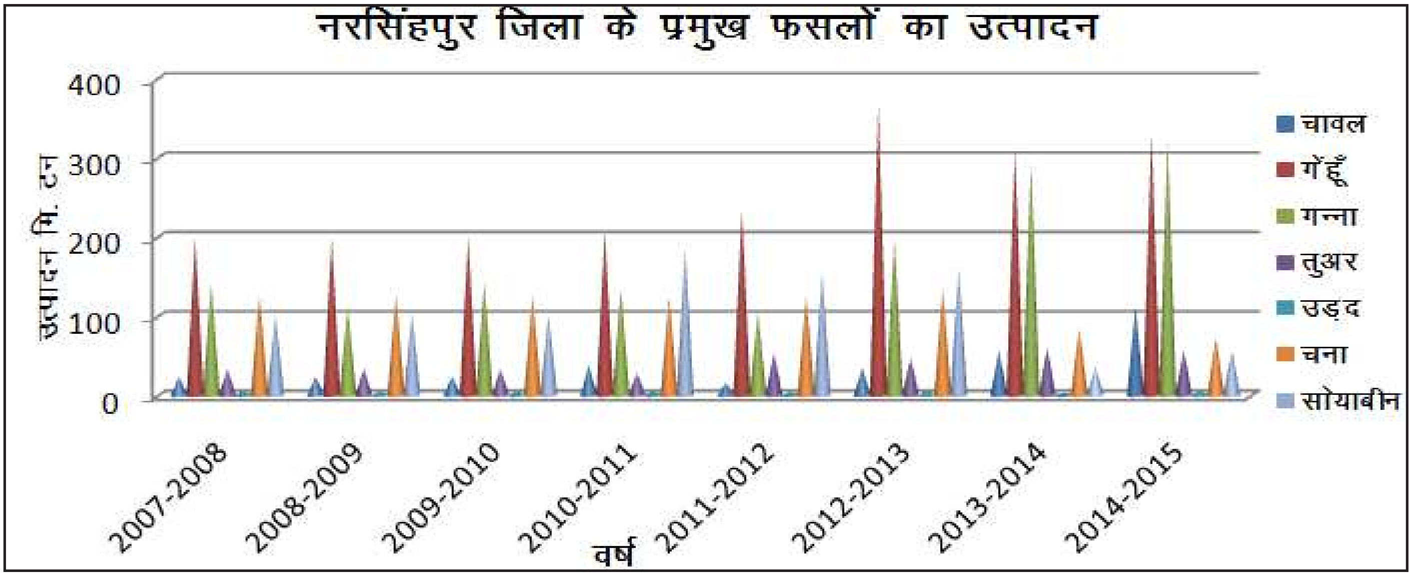

****

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का योगदान

अजय प्रताप सिंह *

प्रस्तावना – हमारे देश में परतंत्रता की बेडियों को काटने वाले उन वीर स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के रोमांचक और साहसपूर्ण कार्यो का स्मरण होते ही मन पुलकित हो उठता है। साथ ही साथ उनको दी जाने वाली अमानुशिक यातनाओं की सोंचे से ही आँखों से अश्रु भी छलक जाते हैं। स्वाधीनता संग्राम का युद्ध लड़ने वाले अमर वलिदानियों की वीर गाथाओं का अवलोकन करें तो हमारे दिलो दिमाग में देश भक्ति की भावनायें हिलारे मारने लगती हैं। शहीदों की निर्भिकता की गाथाओं पढ़ने व सुनने के बाद आज भी जहाँ प्रत्येक भारतवासी का सर गर्व से उठ जाता है। वहीं उनके अदम्य साहस निर्भीकत, सघर्ष करने के बुलंद इरादों से प्रेरणा भी मिलती है। उन्होंने अपने देश की स्वतंत्रता के खातिर कई अमानुशिक वेदनाओ को सहते हए अपने प्राणों की आहूति तक दे दी। परतंत्रता की श्रंखलाओं भारत देश को आजादी दिलाने का श्रेय किसी एक व्यक्ति विशेष या किसी एक संस्था को नहीं दिया जा सकता। बल्कि वे सभी दो या तीन पीढ़ियों वाले सारे देश भक्त जो किसी भी संस्था से ताल्लुकात रखते थे इस श्रेय के भागीदार हैं।

अपने भारत देश को अंग्रेजी दासता से मुक्त करवाने के लिये असंख्य जाने–अनजाने देश भक्तों ने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया और जीवन भर अनेकों यातनायें कष्ट व असहनीय यातनायें झेली देश में एसे असंख्य शूरवीर देशभक्तों ने वलिदानी दी जिनके अथक संघर्ष, अनन्त त्याग, अटूट निश्चय और अनूठे सौर्य की वदौलत स्वतन्त्रता का सूर्योदय संभव हो सका। ऐसे ही महान पराक्रमी, सच्चे देशभक्त और स्वतन्त्रता संग्राम के अमर सेनानी के रूप में सुभाष चन्द्र बोस का नाम इतिहास के पन्नों पर स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है।

उद्देश्य – भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के योगदान का वर्णन प्रस्तुत करना ही अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य है।

नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का प्रारम्भिक जीवन – सुभाष चन्द बोस को लोग भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के महानायक के रूप में जानते हैं। उनका जन्म 23 जनवरी 1897 को कटक में हुआ था। इनकी माता प्रभावती बड़ी ही नेक और धार्मिक प्रवृत्ति की स्त्री थी। सुभाष चन्द्र बोस का बाल्य काल सम्पन्नता से परिपूर्ण था। बोस के आवश्यकता के अनुरूप वह सब प्राप्त होता था जिसकी उन्हें जरूरत होती। अभाव था तो केवल माता–पिता की वात्सल्यता का क्योंकि उनके पिता पेशे में व्यस्त रहते थे वहीं उनकी माता भी बड़े परिवार के कामकाज में व्यस्त रहने की वजह से सुभाष को दुलार नहीं कर पाती थीं। जिसके कारण ये वाल्यावस्था से ही गम्भीर स्वभाव के हो गये थे। उनके पिता वहीं के सुप्रसिद्ध वकील थे। जिन्होंने वकालत से बहुत अधिक धन कमाया था उन्होंने कटक में बहुत की बड़ा भवन बनाया था। सुभाष शुरू से ही बुद्धिमान छात्र थे। सुभाष चन्द्र बोस की प्रारम्भिक शिक्षा कटक के मिशनरी स्कूल में हुई। 1902 में प्रोटेस्टेंट यूरोपियन स्कूल में इनका प्रवेश कराया गया। 1909 में इनकी मिशनरी स्कूल से प्राइमरी की शिक्षा पूर्ण होने के बाद उन्हें कालेजिएट में प्रवेश दिलाया गया। सुभाष चन्द्र बोस में यहां पर मानसिक और मनोवैज्ञानिक रूप से परिवर्तन आया। यह विद्यालय भारतीय माहौल से परिपूर्ण था। सुभाष बहुत ही कम उम्र यानि 15 वर्ष के ही थे तब उनपर महत्वपूर्ण प्रभाव स्वामी विवेकानन्द और उनके स्वामी रामकृष्ण परमहंस की शिक्षा का पड़ा, इन दोनों महापुरूषों की शिक्षाओं ने सुभाष के अन्दर आध्यात्मिक आन्दोलन उत्पन्न कर दिया था।

सोलह वर्ष की उम्र में 1913 में सुभाष ने कटक से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की और कलकत्ता विश्व विद्यालय में द्वितीय स्थान प्राप्त किया। 1915 में सुभाष चन्द बोस ने इण्टर की परीक्षा सम्मान सहित उत्तीर्ण की। उन्होंने 1919 में दर्शनशास्त्र के साथ बी0ए0 आनर्स की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। 10 जनवरी 1916 में सुभाष चन्द्र बोस के विद्यार्थी जीवन में एक घटना घटी हुआ यूँ कि प्राध्यापक ओटेन एक विद्यार्थी को भद्दी गालियां देकर धक्का मार दिया। सुभाष उसे लेकर प्रिंसिपल जेम्स के पास गये किन्तु प्रिंसिपल ने सुभाष व अन्य छात्रों को सन्तुष्ट नहीं कर पाया। विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी। एक दिन स्वयं ओटेन विद्यार्थी सभा में आये और कहा कि जो हुआ वो भूल जाओ विद्यालय विधिवत पूर्व की भांति चलने पुन: चलने लगा। लेकिन 15 दिनों के बाद ओटेन ने पुन: एक विद्यार्थी को पीट दिया विद्यार्थियों ने उन्हें वहीं घेर कर उनकी पिटाई कर दी। प्रिंसिपल से सुभाष चन्द्र बोस को कॉलेज से निस्कासित कर दिया। किन्तु सुभाष को रंचित मात्र दुख नहीं था। इस घटना ने इनके जीवन को पूरी तरह प्रभावित कर दिया था। उन्होंने अपने पिता की इच्छानुसार आई0सी0एस0 परीक्षा में भाग लेने का निर्णय लिया और 9 सितम्बर 1919 को इंग्लैण्ड के लिये समुद्री जहाज द्वारा प्रस्थान किया उन्होंने बहुत कम समय के अध्ययनसे ही आई0सी0एस0 की परीक्षा में चौथा स्थान पाया जो कि एक गौरवपूर्ण बात थी। लेकिन इस पद से वे सन्तुष्ट नहीं थे अन्ततोगत्वा उन्होंने आई0सी0एस0 पद का परित्याग कर दिया।

सुभाष चन्द्र बोस का राजनीतिक जीवन – सुभाष चन्द्र बोस 16 जुलाई 1921 को मुम्बई पहुँचे वहां उनकी भेंट महात्मा गांधी से हुई। यह उनकी गांधी से प्रथम भेंट थी। गांधी जी ने उन्हें चितरंजन दास से मिलने को कहा। उन्हीं के आदेशानुसार वे कलकत्ता पहुँचकर चितरंजनदास से मिले। देशबन्धु चितरंजनदास ने उन्हें राष्ट्रीय स्वयं सेवक दल का प्रमुख कार्यकर्ता घोषित किया। कुछ समय तक वे नेशनल कॉलेज के प्रिंसिपल भी रहे।

नवम्बर 1921 में ब्रिटिश हुकुमत के वारिश प्रिंस आफ वेल्स की भारत आने की घोषणा की गई तो सारे देश में जगह–जगह कांग्रेस के कार्यकर्ताओं

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

द्वारा हड़तालों और भारत बंद करने का ऐलान किया गया। जिससे ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस सरकार को ही गैर कानूनी घोषित कर दिया। प्रदेश की कांग्रेस समिति ने अध्यक्ष सी0आर0दास को समिति के सारे अधिकार सौंप दिये और सी0आर0दास ने सुभाष चन्द्र बोस को आन्दोलन का मुखिया बना दिया। 1921 में सुभाष चन्द्र बोस समेत कई नेताओं को कैद कर लिया गया। स्वतन्त्रता समर में यह बोस की प्रथम कैद थी। देशबन्धु दास 1924 में कलकत्ता के महापौर बने। सुभाष चन्द्र बोस को महानगर पालिका का कार्यकारी अधिकारी नियुक्ति किया गया। पालिका में बहुत ही अंग्रेज अधिकारी थे। उन अधिकारियों ने सोंचा कि सुभाष बहुत ही सीधा–साधा अनुभावहीन भारतीय है। इसे तो चाहे जब अपने बस में कर लिया जायेगा। दूसरे ही दिन इंजिनियर कोट्स सिगरिट पीते कार्यालय में आये। सुभाष ने उसे कड़ी फटकार लगाते हुये कहा कि क्या आप इसे शिष्टाचार मानते हैं क्या आपके कनिष्ठ आपके साथ यही व्यवहार करें। कोट्स ने उसी समय सुभाष से छमा याचना मांगी।

25 अक्टूबर 1924 को विशेष ऑर्डिनेन्स के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें माडले जेल में भेज दिया गया वहां वे बहुत अधिक बीमार पड़ गये। स्वास्थ्य खराब होने के कारण सरकार ने उन्हें 16 मई 1927 को छोड़ दिया। इसके बाद सुभाष ने पूर्ण स्वराज्य का प्रचार–प्रसार उत्कृष्ट रूप में किया।

नवम्बर 1928 का इंडिपेंडेंस ऑफ इण्डिया लीग का उद्घाटन हुआ जिसका नेतृत्व पं0 जवाहर लाल नेहरू एवं सुभाष चन्द्र बोस ने किया। कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने 26 जनवरी को स्वाधीनता दिवस मनाने की घोषणा कर दी तथा पूर्ण स्वराज्य की मांग भी रखी। 26 जनवरी 1930 को पहलीवार भारतवासियों ने स्वाधीनता दिवस के रूप में पूरे उत्साह के साथ मनाया। सुभाष चन्द्र बोस ने अपने सैन्य कार्यक्रमों को आगे बढ़ाते हुए कांग्रेस डेमोक्रेटिक पार्टी का गठन किया। 26 जनवरी 1931 को कलकत्ता में राष्ट्रीय ध्वज को फहराकर सुभाष एक विशाल मोर्चे का नेतृत्व कर रहे थे तभी उन पर अंग्रेजी सिपाहियों ने आक्रमण कर दिया और उन्हें घायल कर जेल भेज दिया गया। जब बोस जेल में थे तब गांधी जी की ब्रिटिश सरकार से वार्ता हुई और वार्ता में समझौता के अन्तर्गत सभी कैदियों को रिहा करवा दिया। लेकिन अंग्रेजी सरकार भगत सिंह जैसे क्रान्तिकारियों को किसी भी कीमत पर छोड़ने को तैयार नहीं थे। सुभाष चाहते थे कि गांधी जी अंग्रेज सरकार से किया गया समझौता तोड़ दे लेकिन महात्मा गांधी ये समझौता तोड़ने के लिये राजी नहीं थे। आखिर अंग्रेजी सरकार ने भगत सिंह व उनके अन्य साथियों को फांसी पर लटका दिया। इस घटना ने सुभाष को बहुत ही आहत किया।

सुभाष चन्द्र बोस का स्वास्थ्य खराब होने के कारण 13 फरवरी 1933 को यूरोप भेज दिया गया। वहां इनकी भेंट एक योग्य चिकित्सक से हई जिसके इलाज से वे बहुत कम समय में ही ठीक हो गये। स्वाधीनता मिशन को आगे बढ़ाने के लिये यूरोपीय राजनीति में ही सक्रियता बढ़ाने लगे। वियना में रहते हुए बोस ने 'आस्ट्रिया भारत संघ' की स्थापना की। सुभाष चन्द्र बोस ने 29 अप्रैल 1939 को कांग्रेस से स्तीफा देने के बाद 3 मई 1939 को फारवर्ड ब्लॉक के नाम से अपनी अलग पार्टी की स्थापना की। ये पार्टी लोगों को स्वाधीनता संग्राम के प्रति जागरूक करने के लिये नया साधन बनकर सामने आई। बोस ने इसी पार्टी के नाम एक सप्ताहि पत्रिका सम्पादित करते थे। जिसका उद्देश्य लोगों में जनचेतना का संचार करना था।

3 सितम्बर 1939 को सुभाष चन्द्र बोस को ब्रिटेन और जर्मनी में युद्ध छिड़ने की सूचना मिली उन्होंने कहा कि अब भारत के पास सुनहरा मौका है उसे बपनी मुक्ति के लिये अभियान तेज कर देना चाहिए। 8 सितम्बर 1939 को युद्ध के प्रति पार्टी का नजरिया तय करने के लिये सुभाष चन्द्र बोस को कांग्रेस कार्य समिति ने विशेष आमंत्रण पर बुलाया। उन्होंने अपनी सलाह के साथ यह संकल्प भी दोहराया कि अगर कांग्रेस ऐसा नहीं कर पाती है तो वह अपनी पार्टी के दम पर ही ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ युद्ध शुरू कर देगें। और उन्होंने अगले वर्ष जुलाई में ही हालवेट–स्तम्भ को रातो–रात मिट्टी में मिला दिया। सुभाष चन्द्र बोस ने अंग्रेजी हुकूमत को यह संदेश दिया कि जैसे उन्होंने यह स्तम्भ धूल में मिलाया वैसे ही हम ब्रिटिश हुकूत की भी ईंट से ईंट बजा देंगे। इसके फलस्वरूप अंग्रेज सरकार ने सुभाष सहित फारवर्ड ब्लॉक के सभी मुख्य नेताओं को कैद कर लिया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान सुभाष चन्द्र बोस जेल में निष्क्रिय नहीं रहना चाहते थे। सुभाष ने जेल में आमरण अनशन शुरू कर दिया। हालत खराब होते देख सरकार ने उन्हें रिहा कर दिया किन्तु अंग्रेज सरकार यह भी नहीं चाहती थी कि युद्ध के दौरान सुभाष मुक्त रहे।

सुभाष चन्द्र बोस को ब्रिटिश सरकार द्वारा नजरवन्द कर लिया गया था क्योंकि सुभाष उस समय ब्रिटिश शासन का विरोध कर रहे थें हालांकि सुभाष ने 1941 में गुप्त तरीके से देश छोड़ दिया था और अफगानिस्तान के माध्यम से पश्चिम की ओर यूरोप चले गये, जहां पर सुभाष ने रूस और जर्मन से अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध करने के लिये सहायता मांगी। सुभाष ने वर्ष 1943 में जापान का दौरा किया जहां शाही प्रशासन ने उनकी याचना पर मदद के लिये हामी भर दी। यही वह जगह थी जहां पर सुभाष ने भारतीय युद्ध में शामिल होने वाले कैदियों के साथ आजाद हिन्द फौज का गठन किया। जो ब्रिटिश भारतीय सेना के लिये काम करते थे। आजाद हिन्द फौज सबसे पहले राजा महेन्द्र प्रताप ने 29 अक्टूबर 1915 को अफगानिस्तान में बनाई थी। मूलत: यह आजाद हिन्द सरकार की सेना थी जो अंग्रेजों से लड़कर भारत को मुक्त कराने के लक्ष्य से ही बनाई गई थी। किन्तु इस लेख में जिसे आजाद हिन्द फौज कहा गया है। उससे इस सेना का कोई सम्बन्ध नहीं हैं। हाँ नाम और उद्देश्य दोनों के ही समान थे। रासविहारी बोस ने जापानियों के प्रभाव और सहायता से दक्षिण–पूर्वी एशिया से जापान द्वारा एकत्रित करीब 40000 भारतीय स्त्री पुरूषों की प्रशिक्षित सेना का गठन किया था और उसे भी यही नाम दिया अर्थात आजाद हिन्द फौज। बाद में उन्होंने नेता जी सुभाष चन्द बोस को आजाद हिन्द फौज का सर्वोच्च कमाण्डर नियुक्त करके उनके हाथों में इसकी कमान सौप दी। अक्टूबर 1943 में सुभाष ने एक अस्थाई सरकार का गठन किया जिसे द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान असीमित शक्तियों द्वारा स्वीकृत प्रदान की गई थी।

बोस के नेतृत्व में आजाद हिन्द फौज ने पूर्वोत्तर भारत के कुछ हिस्सों पर हमला किया और कुछ हिस्सों पर कब्जा करने में कामयाब रहे हालांकि अन्त में आजाद हिन्द फौज को खराब मौसम जापानी नीतियों के कारण आत्म समर्पण करने के लिये मजबूर किया गया था। सुभाष चन्द्र बोस उनमें से एक थे। जो आत्म समर्पण के लिये तैयार नहीं थे। सुभाष चन्द बोस वहां से किसी तरह भाग निकले और फिर से अपने उस संघर्ष की लड़ाई को दोहराने का प्रयास किया। सुभाष चन्द्र बोस ताई होकू हवाई अड्डे पर एक विमान से सुरक्षित बचकर भाग निकले लेकिन उनका भागना निरर्थक रहा ऐसा कहा जाता है कि सुभाष चन्द्र बोस का विमान फारमोसा जिले (अब ताईवान के रूप में जाना जाता है) में दुर्घटना ग्रस्त हो गया था उस समय ताइवान पर जापानियों द्वारा शासन किया जा रहा था। कहा जाता है कि इस दुर्घटना में

नेता जी गम्भीर रूप से जल गये थे। जिसके कारण कोमा में चले गये और कभी इससे बाहर नहीं आये। 18 अगस्त 1945 को सुभाष चन्द्र बोस की मृत्यु हो गई।

निष्कर्षत: सुभाष चन्द्र बोस बहुत दिनों तक क्रान्तिकारी चरमपंथी स्वतन्त्रता सेनानियों की तरह अलग होने की कोशिश करते रहे और भारत के महत्वपूर्ण अवधि में ज्वलनशील नेतृत्व की भावना को बनाये रखा और भी कई अन्य तरीकों से बोस ने अपनी मातृभूमि के लिये स्वतन्त्रता संग्राम में अपना विशिष्ट योगदान दिया। आजाद हिन्द फौज द्वारा किया गया हमला, चाहे वह कितने भी कम समय तक रहा हो, एक महत्वपूर्ण कारक बना। ब्रिटेन को विश्वास हो गया कि अब भारतीय सेना के बल पर भारत पर शासन नही किया जा सकता और भारत को स्वतन्त्र करने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं बचा। जिसने अन्तत: ब्रिटिश सरकार के कार्यों को रोकने और उन्हे अपने देश में वापस जाने के निर्णय में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

जहाँ स्वतन्त्रता के पूर्व विदेशी शासक नेता जी की ताकत से घबराते रहे वहीं स्वतन्त्रता के बाद सत्ताधारी जनमानस पर उनके व्यक्तित्व व कृतित्व के अमिट प्रभाव का असर रहा। स्वातन्त्र्यवीर सावरकर ने स्वतन्त्रता के बाद देश के क्रान्तिकारियों के एक सम्मेलन का आयोजन किया था और उसमें अध्यक्ष के आशन पर सुभाष चन्द्र बोस के तैलचित्र को आसीन किया था। यह एक क्रान्तिवीर द्वारा दूसरे क्रान्तिवीर को दी गई आभूतपूर्व सलामी ही थी।

नि:सन्देह नेता जी भारत की आजादी के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों में से एक हैं। सुभाष चन्द्र बोस ने स्वतन्त्रता संग्राम के अग्रणी नेता के रूप में ब्रिटिश शासन के चंगुल से अपने उचित तरीके से देश को स्वतन्त्रता दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। एक सक्रिय स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी के रूप में सुभाष चन्द्र बोस ने अपने जीवन के अंतिम दिनों में भी अंग्रेजों से लड़ने की अपनी भावना को वरकरार रखा। इनकी दृढ़ता और देश भक्ति का उत्साह ऐसा है कि इन्हे किसी अन्य की तुलना में अधिक सम्मानित किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. शरण गिरिराज, मैं सुभाष बोल रहा हूँ, प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली 2012 पृ0सं0 9
2. नेता जी सुभाष चन्द्र बोस, सुरूचि प्रकाशन, संकलित केशव कुंज झण्डे वाला, नई दिल्ली, जनवरी 2017
3. बोस, शिशिर कुमार, नेता जी सुभाषचन्द्र बोस नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया नई दिल्ली 2010
4. सुभाषचन्द्र बोस, बायोग्राफी एण्ड फेक्टस, 2 नवम्बर 2017
5. अय्यर एस0ए0, आजाद हिन्द फौज की कहानी, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नई दिल्ली 2011
6. एन.जी.जोग., इन फ्रीडम्स क्रेस्ट, ओरियण्ट लॉगमेन्स्फ 1969
7. सुभाषचन्द्र बोस, दि इण्डियन स्ट्रगल, (1920-1942) नेता जी रिसर्च ब्यूरो, कलकत्ता 1964
8. नेता जी सम्पूर्ण बाङ्य खण्ड 1 प्रकाशन विभाग भारत सरकार, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2009
9. शिशिर कुमार बोस, नेता जी (चित्रमय जीवनी), नेता जी रिसर्च ब्यूरो कलकत्ता
10. क्रान्त मदन लाल वर्मा, स्वाधीनता संग्राम के क्रान्तिकारी साहित्य का इतिहास 2 प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली
11. नेता जी सम्पूर्ण वाङ्य, खंड 12 प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, संस्करण 2011
12. डॉ0 रणजीत, आजादी के परवाने, साहित्य रत्नालय, गिलिस बाजार, कानपुर 2007
13. सुभाषचन्द्र बोस आजाद हिन्द रेडियो जर्मनी से प्रसारण 31 अगस्त 1942

****

A Study on International Monetary Fund in Developing Countries

Dr. Suresh T. Silawat * Dr. Anoop Vyas ** Chanda Parmar ***

Abstract - This article offers a high level view of economics. IMF is pass through number of policies and changes reforms. It plays vital role in front of developing countries.This study shows the working method of International Monetary Fund. This study may help to know about rules, regulations, facilities, and the working style of International Monetary Fund.The IMF is an organization related to intergovernmental system, which facilitates, and advise or assistance to its members. It was started after II[nd]world war 1944 July by Bretton Woods, with 45 members. Since its conception in July 1944, the International Monetary Fund (IMF) has been playing significant role of promoter of globalization by facilitating international market integration. Today the IMF sets strict conditions of economic transformation and liberalization in order to provide financial and technical assistance to member countries. IMF now acts like a global loan shark exerting, enormous leverage over the economics of more than 60 countries. India is also one of the member country in 189 countries of IMF. In this study, the researcher has tried to depict the role of IMF in developing countries in shaping its economy.

Keywords - Economy, Market Integration, Enormous Leverage, International Monetary Fund.

Introduction - The International Monetary Fund (IMF) is an international organization IMF promote international monetary cooperation, international payment system, facilitate international trade, faster kept up economic growth and make resources available to member experiencing balance of payments difficulties. It works to speeder global growth and economic stability by providing advice, policy, provide finance to members, reducing poverty and by working with developing countries to support them for achieve their macro-economic stability. IMF provides short term capital to aid balance of payments and provide fixed exchange rate agreement between the nations. This assistance was meant to stop the spread of international crises. IMF work for to promote international monetary co-operation, making resources available to members' countries in financial problems and to improve the economics of the member nations.

IMF is formed in 27[th] December 1945 in Washington D.C., United States. 189 countries are members of its and in present the Managing Director of it isMr. ChrestineLagarde. IMF also negotiates conditions, situations on lending and loans under conditions which was formed in 1950. Some of the facilities are their given by IMF is like:

1. Extended credit facility (ECF)
2. Standby credit facility (SCF)
3. The rapid credit facility (RCF)

which was not included interest rates. Some of the non-concessional loans, which included interest rates, are standby agreement (SBA), the flexible credit line (FCI), The precautionary and liquidity line (PLL) and also extended the fund facility. IMF also provides emergency assistance by Rapid Finance Instruments (RFI). It is for urgent balance of payments to financing the needy members.

The IMF monitor the economic policies and financial policies and provide help and facility to its member countries. IMF is created or mandated to oversee the financial and monetary system of international way. This is known as surveillance and facility.

In 1995 the international monetary fund began work on data. They start dissemination standard. Because of that the IMF member countries disseminate their economic and financial data to the public. So that the IMF and financial committee split it in two way.The General Data Dissemination System (GDDS) and the Special Data Dissemination Standard (SDDS). The main aim of GDDS is to improve data quantity, statistical capacity, improve timelines, transparency reliability, and accessibility.

The other one concept of conditionality was introduced in 1952 and incorporated it in to the article of agreement. Conditionality is basically used for enforcement mechanism for repayment. It is used for monetary approach to the balance of payments. Some of the structural adjustments are also include in it.

*Principal, Govt. Sanskrit College, Indore (M.P.) INDIA
** Prof. & Head (Commerce) Shree AtalBihari Vajpayee Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
*** Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

1. Austerity: Cutting expenditure or expenses
2. Resource extraction: Focused only on economic output on direct export
3. Devaluation of currencies
4. Trade liberalization: Lifting import and export restrictions
5. Increases investment stability
6. Balancing budgets
7. Price controls, increase foreign investors
8. Improving governance.

The member countries of IMF get assistance in banking technically, exchange matters support, financial help in payments problems and also increase opportunity for trade and investment issues. The qualification to become a member of international monetary fund is to apply. It is very easy process to be a part of international monetary fund.

The board of governors make only one governor and appoint also one alternative governor. The International Monetary Committee. All are advised to the Board of Governors. There are 24 Executive Directors who make up Executive Board. And all these directors represents 189 member countries on the basis of their geographical conditions. In International Monetary Fund the power of voting is generally based on a quota system. Basic votes and additional vote for each member of votes equal to 5.50% of the total votes and special Drawing Rights are of 1,00,000 of a member countries quota.

The International Monetary Fund is any one of many organizations. It focused only on developing countries. Because of that this organization make some reforms to support the developing nations. Some of the agencies are as follows: UNICEF, Food and Agriculture Organization (FAO), The United Nations Development Programme (UNDP).

According to the Jeffrey Sachs: “The end of the poverty that the IMF and the world bank have “the brightest economists and the lead in advising poor countries on how to break out of poverty, but the problem is development economics”.

Objectives of the Study - International Monetary Fund is a large organization to provide financial help, and facility. The study has following objectives:

1. To study about impact of International Monetary Fund.
2. To study about the assistance in the establishment of International payment system.
3. To know about short term credit facilities to the member countries.
4. To study about the International Monetary co-operation.
5. To study the exchange rate stability among the different countries.
6. To study about the facilities given by International Monetary Fund to foreign trade.

Literature of Review

Fritz Machlup (1966)revealed in his book about foreign reserves, growth, distribution and composition. He discussed about the difficulties of balance of payments, inadequacy of international reserves and the IMF system. He observed about economic growth, investment policy, employment policy, and counter cycling policy.

H. Robert Heller (1977) focused on international monetary fund as a facility provider, to the developing nations and promote, help and support them financially.Its objective to facilitate the foreign trade, balance of payment, balancing inflation and strengthen the economy.

Johnson & Sweeney (1997) observed that the role of international monetary fund is like a rescuer or a big supporter for those countries, which are financially weak. IMF make more aggressive policies for developing nations and help and promote them financially.

Bagci and Perraudin (1997) revealed that the IMF impacts on developing countries very positively. IMF promote, and rescue for developing nations. And they observe that the IMF performed positively and provide facility to the developing countries like balance of payment, inflation and stability.

Dics-Mireaux, Mecagni and Schadley (2000) studied found that International Monetary Fund is very beneficial for developing nations. It is very effective fund for developing nations. And the impact of international monetary fund is short term of long term may positive in present and future too.

Bordo and Schwartz (2000) focused on annual data of 13 countries. They analyzed from 1973-1998. They include 11 Latin American and 13 Asian countries in their Analysis. They observe the negative result; because they found that the performance of recipient countries was worse.

Evernsel (2002) observed that all the facilities and promotion effects positive and negative both given by International Monetary Fund. After involvement of developing countries in International Monetary Fund. They perform worse, so he criticized that program.

Atoyan and Conway (2015) focused on probability and performance of the country. They observed that selection of those countries which is needed. And focused also on the time limit and evaluate and suitability of this approach.

Dreher (2006)focused only on methodological approaches employed in IMF. This approach only compare between participate after and before economic performance. He also focused on endogenous choice.

Zwart (2007) stressed on positive and negative performance of IMFprogramme. He said that the IMF provide facilities, promotion, stability and liquidity to the developing countries and on the other hand the make conditions in front of these developing countries too. So he thought that International Monetary Fund is good as well as bad too.

Puah CH HabbiullahEA (2008) focused on long run monetary policy in South EastAsian Central Bank (SEACEN). The countries which are included in it are Malayasia, Myanmar, Philipins, South Korea, and Nepal. And the period of research is 1953 to 2000. He found that monetary growth rate is important for real economic performance. The study revealed that the achievement of pre-decided goal or achieve

the outcomes by self-enforcing conditions, strongly stimulate the economy of developing countries.

Research Design - IMF is the big supporter of developing countries. The institution is in United States of America and the Managing Director of IMF is CristineLegarde. This researcher is focused on the working style of International Monetary Fund. And the total number of member countries of IMF. India is on 8th place of the list of IMF. This study show the meaning, working style of IMF, Geographical conditions, financial conditions and the facilities are given by International Monetary Fund. It also includes the economic outlook of 2017. Hence, the study is descriptive.

Discussions - Today no challenges are more critical than making sure the IMF play the right role in developing countries. Too often role in playing the role now. The radical grown in this world of developing countries progressed by IMF. IMF doing much of work goes beyond macro-economic issues and crises prevention and management into deeper structural issues. And IMF is as a major provider of long term loan for development finance. It plays a very important role and do efforts to reduce poverty in developing countries.But according to survey of 2000, May we found that IMF has lack of experts in the wide ranging policy and institutional complexities of development and poverty reductions.

According to IMF survey 2015. The challenges facing the developing countries are more complex and multifaceted.Because of reducing poverty and supporting developing countries IMF made some of structural adjustments. IMF cutting expenditures, are known as austerity. Focused on economic output on direct export. IMF gives trade liberalization or lifting import and export restrictions. IMF balance the budgets, control price, and also improving governance and corruption.

The member countries of IMF have lots of information related to economic policies. Technical guidance and support, exchange matter, fiscal issues, and financial support. The IMF played a very vital role for developing countries, because IMF, push loans with high interest rates and short term repayment plan and sell it to developing countries or customers. The developing countries are not well represented in the interest of these institutions. The study also revealed their voting system, works which is irregularly lifted towards the rich countries on developed nations. The voting power is based on quota system. Unlike democratic system in which each member country would have an equal vote, rich nations dominate their decision making in the IMF, because voting power is determined by the amount of money that each country plays into the IMFs quota system.

As a result 2015 December, the United States Congress adopted a legislation authority of 2010 quota and governance reforms.The table below shows quota and voting shares for IMF members.

Table : 1 (See in next page)

With the help of table 1 we can know about the member countries of IMF. The study has only included 100 member countries. But actually it has 189 countries. BRICs nations are also included in it like Brazil, Russia, India and China. These are the four emerging market countries among the ten largest members of the IMF and other Top ten members are United States, Japan, Germany, France, the United Kingdom and Italy.

India to become on 8thy No. of emerging market countries group. Mr. ArunJeitley is the Governor of Indian country. With the help of above study we can understand that, this study has been found that international monetary fund, must focus to developing countries only. In top ten member countries of IMF, India is on 8th place. And the quota and voting shares of millions SDRs is 13,114,4 and quota percentage of total is 2.79%, No. of votes of India is 132,598 and the percentage out of total votes are 2.25%. According to the Managing Director of IMF Christine Lagarde, April 2017 was no exception "After several years of disappointing growth, the global economy began building momentum. Advanced emerging market, and some low income developing countries were buoyed by the cyclical upturn. Most importantly, employment growth return to many economics".

The objectives has found some conclusions are as follows:

(i) IMF is stimulating, facilitating and promoting the developing countries
(ii) Profitability of IMF is increasing day by day
(iii) Equal opportunities are available to developing countries
(iv) Promote International Monetary Corporation and facilitate International Trade
(v) Reduce the difficulties of balance of payments world-wide and IMF also make resources available to members
(vi) IMF works to increase the economies of its member countries or developing countries.

Table 2 : Indian Growth Rate Chart under IMF

Rank	Year	Growth Rate(%)	Increase (+)	Decrease (-)
1.	2008	6.9	0	0
2.	2009	8.5	+	0
3.	2010	10.3	+	0
4.	2011	6.6	0	-
5.	2012	5.5	0	-
6.	2013	6.4	+	0
7.	2014	7.5	+	0
8.	2015	8.0	+	0
9.	2016	8.1	+	0
10.	2017	6.7	+	0

With the help of above chart we can understood that the growth rate of India is assumed and it is in projection that in the year 2018 the growth rate was highly increased and still increase 2022.

According to IMF report released that the China slightly ahead of India in terms of growth rate for the year 2017. In October 2017 the IMF projected that the global economy is expected to grow to 3.6% in 2017 and it is increased by 1% in 2018 that becomes 3.7%.

Scope of Study - This study will aware those people, who

have no knowledge about International Monetary Fund, and the facilities provide by it. This study also helps to the peoples about the policies of IMF and facilities, agendas for developing countries. This research highlights the basic factors, which are to be considered that it improve the loan system, reduce difficulties of balance of payment and stimulates or provide finance and technological support to the developing nations. Apart from this study, we can also find some comprehensive information related to WTO (World Trade Organization) and globalization.

Limitations - The scope of this research is limited to study of International Monetary Fund. Only as the area of study is IMF only and developing nations too. Other related area like world trade organization, Developed countries, Board of Directors, Criticism and other area are not included in this study. So that the result cannot be generalized to macro level. In this study only developing or poor countries are included because IMF support only the developing countries.

Conclusion - International Monetary Fund is the Barometer of developing countries economic growth. After this study, it is concluded that because of human nature and emotions, a person wants to improve his view and problems too. International Monetary Fund is the biggest system of promoting, facilitating, stimulating, and supporting by financially and technically. The services provided. There are various factors which effect the International Monetary Fund. It plays a very important role for needy countries like: developing nations BRICS are also the member of International Monetary Fund. (Brazil, Russia, India and China). IMF give strong support to the developing or under privilege countries. Provide them loan facility with interest rate, technical support, financial help and provide many policies to the needy countries.

Now a days the competition in this world is increasing, rich countries become more rich or developed and poor countries or developing countries are also run in the competition to win the target. But still the services which can be started at lower scale may help developing countries, to face this competition. This means International Monetary Fund is excellent in itself. In which countries may growth smoothly, and easily and enjoy the facilities given by IMF and push to run into the line of developed nations. The global economy is increasing by 36% in 2017. IMF has a group of countries. IMF has only one aim to promote International Trade and Corporation.

References :-

Special Papers In International Economics

1. JagdishBhagwati, The Theory and Practice of Commercial Policy: Departures from Unified Exchange Rates. (Jan. 1968)
2. Marina von Neumann Whitman, Policies for Internal and External Balance. (Dec. 1970) 10. Richard E. Caves, International Trade, International Investment, and Imperfect Markets. (Nov. 1974)
3. Edward Tower and Thomas D. Willett, The Theory of Optimum Currency Areas and Exchange-Rate Flexibility. (May 1976)
4. Ronald W. Jones, “Two-ness” in Trade Theory: Costs and Benefits. (April 1977)

Reprints In International Finance

1. Peter B. Kenen, Floats, Glides and Indicators: A Comparison of Methods for Changing Exchange Rates. [Reprinted from Journal of International Economics, 5 (May 1975).] (June 1975)
2. Polly R. Allen and Peter B. Kenen, The Balance of Payments, Exchange Rates, and Economic Policy: A Survey and Synthesis of Recent Developments. [Reprinted from Center of Planning and Economic Research, Occasional Paper 33, Athens, Greece, 1978.] (April 1979)

Essays In International Finance

1. Robert Z. Aliber, National Preferences and the Scope for International Monetary Reform. (Nov. 1973) 102. Constantine Michalopoulos, Payments Arrangements for Less Developed Countries: The Role of Foreign Assistance. (Nov. 1973)
2. John H. Makin, Capital Flows and Exchange-Rate Flexibility in the PostBretton Woods Era. (Feb. 1974) 104. Helmut W. Mayer, The Anatomy of Official Exchange-Rate Intervention Systems. (May 1974)
3. F. Boyer de la Giroday, Myths and Reality in the Develop -ment of International Monetary Affairs. (June 1974)

Table 1: Quota and Voting shares

Rank	IMF Member Country	Quota Millions of SDRs	Quota % of the Total	Governor	No. of Votes	% out of Total Votes
1.	United States	82,994.2	17.68	Steven Mnuchin	831,396	16.73
2.	Japan	30,820.9	6.56	Taro	309,659	6.23
3.	China	30,482.9	6.49	Zhouxiaochoun	306,283	6.16
4.	Germany	26,634.4	5.67	Jensweidmann	267,798	5.39
5.	France	20,155.1	4.29	Bruno Le Maire	203,005	4.09
6.	United Kingdom	20,155.1	4.29	Philip Hammond	203,005	4.09
7.	Italy	15,070.0	3.21	Pier Carlo Padoan	152,154	3.06
8.	India	13,114.4	2.79	ArunJeitley	132,598	2.25
9.	Brazil	12,903.4	2.59	Henrique Mecrelles	111,874	2.25
10.	Canada	11,023.9	2.35	Bill Morneau	101,380	2.04

Impact Of Telecommunication Sector On Socio-Economic Development

Dr. Ganpat Joshi *

Abstract - Economic development policies in the industrial countries increasingly include telecommunications as an essential component of the economic infrastructure. The lesser developed countries must accelerate their application of telecommunications technology or fall further behind in economic competitiveness. The gap in telephone penetration between developed and developing countries is increasing. The challenges in reducing this gap are significant. This study tries to remove this gap by throwing light on the Telecom sector and comparative contribution of its major players like Airtel and BSNL role in socio-economic development of the Indian economy -with special reference to Rajasthan.
Keywords - Telecommunication, Socio-Economic development, Rajasthan.

Introduction - The world is rapidly moving toward an economic system based on the continuous and ubiquitous availability of information. Recent advances in telecommunications technology have been an important vehicle in permitting information exchange to develop as a valuable commodity. Countries and sectors equipped with the requisite telecommunications systems have been rapidly moving into post-industrial, information-based economy growth. For the developing world, a modern telecommunications infrastructure is not only essential for domestic economic growth, but a prerequisite for participation in increasingly competitive world markets and for attracting new investments. In the advanced industrial countries of Europe and North America, universal telecommunications services have penetrated every sector of society. In many developing countries the limited availability of service is constraining economic growth.

Economic development policies in the industrial countries increasingly include telecommunications as an essential component of the economic infrastructure. This realization has been initiated by industry's demand for advanced telecommunications equipment for competitive reasons. The lesser developed countries have begun to recognize that inadequate telecommunications services will be a disincentive to new investment and place existing industry at a competitive disadvantage. The primary economic benefit of improved telecommunications is improved efficiencies in other productive sectors. In all economic sectors— agriculture, manufacturing and services—advanced telecommunications systems are becoming an integral part of business operations. The lesser developed countries must accelerate their application of telecommunications technology or fall further behind in economic competitiveness. The gap in telephone penetration between developed and developing countries is increasing. The challenges in reducing this gap are significant.

Literature Review - Investment in infrastructure affects growth and broadband infrastructure is no exception to this rule. Aschauer (1990), Munell (1992) and Gramlich (1994) focus on the effects of infrastructure and its relationship to growth and provide evidence for its existence. Leff (1984) analyzes 'the welfare effects of investment in telecommunications facilities (primarily telephone) in developing countries' and used cross-section data on 47 developed and developing countries. The econometric results indicate that the relationship between telecommunications infrastructure and economic growth is positive and significant. Greenstein and Spiller (1995) study the impact of telecommunication infrastructure on a country's economic activity in two sectors: fire, insurance and real estate; and manufacturing. Savage (2000) points to the absence of investment data for many developing countries and questions the practice of using main telephone lines to measure the stock of telecommunications capital since the accuracy of this proxy has not been subject to careful statistical scrutiny. Savage (2000) develops a supply-side growth model which employs tele-density and the share of telecommunications investment in national income as telecommunications capital proxies.

As few empirical studies exist that investigate the socio-economic impact of telecommunication services specifically for Rajasthan**.** The analysis of the literature available on the subject reveals a kind of gap. Though the economic contribution from the Telecom sector and its major players-Airtel and BSNL in Indian economy-with special reference to Rajasthan state, had attracted some attention, but still a lot much needs to be revealed more about their economic contributions. And also not much light has been thrown on the social contributions done by the Telecom sector and its

***Assistant Professor, Deptt. of CSE, Madhav Univeristy, Abu Raod, Sirohi (Raj.) INDIA**

major players-Airtel and BSNL in Indian economy- with special reference to Rajasthan. Thus, the study tries to remove this gap by throwing light on the Telecom sector and comparative contribution of its major players-Airtel and BSNL role in socio-economic development of the Indian economy -with special reference to Rajasthan. Following hypothesis is formulated :

H1: Bharti Airtel and BSNL play a significant role in accelerating the process of economic growth in Rajasthan

Methodology

Approach: The present research use deductive research approach. In the deductive research approach the researchers generate hypothesis from theory.

Primary Data: questionnaire has been prepared, this was filled by the respondents who are using the telecomm services in selected geographical area of study i.e. Rajasthan.

Secondary Data: from the files, newspapers, reports, records, policies, government publications, magazines, company publications, journals, books, articles, websites, etc.

Sampling Technique: convenience sampling (using a cross-sectional design)

Sample Size: 400 mobile device users of BSNL and Airtel

Result - Following section describe the differences in perception between economic contribution made by Airtel and BSNL. Given hypothesis have been formulated to fulfil above mentioned objective.

Following tables demonstrate the statistical difference among various economic indicators, on which perception vary across Airtel and BSNL customers.

To test the difference perception between Airtel and BSNL customers, a independent sample 't' test is applied. Statistical test is adopted to evaluate two populations' means. For this, researcher set two hypotheses. The null hypothesis assumes that the mean of two samples (two telecomm providers) are equal and an alternative hypothesis assumes that the means of two samples are not equal.

Mathematically,

H_0: $\mu_{Airtel} = \mu_{BSNL}$

H_1: $\mu_{Airtel} \neq \mu_{BSNL}$

Where, μ_{Airtel} and μ_{BSNL} are the hypothesized mean for perception towards different economic indicators across two telecomm providers.

The data is gathered from a structured questionnaire and tested using Student's Independent sample 't' test at 95 percent confidence level. The data succeed certain assumptions that the dependent variable (customer perception) is measured on a continuous scale and the independent variable consists of two categorical independent groups.

1. Banking/financial inclusion

Table 1 (See in next page)

Result table 1 provided with Levene's test for Equality of Variances. This test has been used with assumptions that the variances for the two groups. If this null hypothesis is rejected at 5 percent significance level, then test statistics for 'no equal variance' is considered for interpretation.

It was found that there is a no significant perception gap between customer perceptions towards impact on banking and financial inclusion. The result connote customers similar rating to both Airtel and BSNL regarding their contribution in performing banking operation, fund transfer and accessing financial service into rural areas.

Conclusion - To test the difference perception between Airtel and BSNL customers, a independent sample 't' test is applied. The result connote customers similar rating to both Airtel and BSNL regarding their contribution in performing banking operation, fund transfer and accessing financial service into rural areas. Also both provider assist in getting full market information to get better market prices that help them reducing cost and increase in sales. It also saves time and money spent in travelling, improving work efficiency and help in bridging the digital divide. Customers also give similar rating to both Airtel and BSNL regarding their contribution in growth of GDP and fostering the growth of small- and medium-sized businesses in India.

Although difficult to quantify in monetary terms, social benefits constitute an important part of the overall value of telecomm investments. In the wider Asia–Pacific region, mobile operators have been very active in participating in this digitisation. Among the digital initiatives launched by major operators around the world, tracked by Analysis Mason's Digital Economy Readiness Index (DERI), the Asia–Pacific region stands second after Europe in terms of the number of reported initiatives, for example, with cloud-based services, mobile money (m-money) and mobile health (m-health) being key applications for mobile operators in the region.

In a competitive market, operators are increasingly incentivised to provide the best service to their customers to avoid loss of reputation leading to customer churn. Telecomm industry should focus on development of adequate infrastructure to support telecommunication to rural areas. Mobile companies should promote development in rural areas and help farmers to get information about crop management due to awareness and connectivity issues.

References :-

1. Aschauer, David Alan. "Is Public Expenditure Productive?" *Journal of Monetary Economics*, March 1989, 23(2), pp. 177-200.
2. Goswami, S. (2014). Understanding adoption of electronic G2C service: An extension to Technology Adoption Model. *Pacific Business Review*, *8*(6), 36-44.
3. Goswami, S. (2015). A Study on the Online Branding Strategies of Indian Fashion Retail Stores. *IUP Journal of Brand Management*, *12*(1), 45.
4. Goswami, S. (2016). Investigating impact of Electronic Word of Mouth on Consumer Purchase Intention. In *Capturing, Analyzing, and Managing Word-of-Mouth*

in the Digital Marketplace (pp. 213-229). IGI Global.

5. Goswami, S., & Chandra, B. (2013). Convergence Dynamics of Consumer Innovativeness Vis-à-Vis Technology Acceptance Propensity: An Empirical Study on Adoption of Mobile Devices. *IUP Journal of Marketing Management*, *12*(3), 63.
6. Goswami, S., & Khan, S. (2015). Impact of consumer decision-making styles on online apparel consumption in India. *Vision*, *19*(4), 303-311.
7. Gramlich Edward M. "Infrastructure Investment: A Review Essay" *Journal of Economic Literature*, Vol. 32, No. 3. (Sep., 1994), pp. 1176-1196.
8. Leff Nathaniel H, "Externalities, Information Costs and Social Benefit-Cost Analysis for Economic Development: An example from Telecommunications" *Economic Development and Cultural Change*, Vol. 32, No. 2 (Jan., 1984), pp. 255-276
9. Mathur, M., & Goswami, S. (2014). Store atmospheric factors driving customer purchase intention-an exploratory study. *Journal of Management Research*, *6*(2), 111-117.
10. Munnell Alicia H , "Policy Watch: Infrastructure Investment and Economic Growth" *The Journal of Economic Perspectives*, Vol. 6, No. 4. (Autumn, 1992), pp. 189-198.
11. Reed D. P. "Weapon of math destruction: A simple formula explains why the Internet is wreaking havoc on business models", *Context Magazine*, Spring 1999
12. Roeller Lars-Hendrik, Waverman Leonard, "Telecommunications Infrastructure and Economic Development: A Simultaneous Approach", *The American Economic Review*, Vol. 91, No. 4. (Sep., 2001), pp. 909-923.
13. Savage, "Telecommunications and economic Growth", *International Journal of Social Economics*, Volume 27, Number 78910, 2000 , pp. 893-906(14) , Emerald Group Publishing Limited.

Table 1 : independent sample 't' test – Banking/financial inclusion

Group Statistics

	Service	N	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean
Banking	Airtel	200	3.7050	.99646	.07046
	BSNL	200	3.8250	.96906	.06852
Fund	Airtel	200	3.6450	.93989	.06646
	BSNL	200	3.7600	.98858	.06990
Rural	Airtel	200	3.5550	.99596	.07042
	BSNL	200	3.6400	1.04684	.07402

Independent Samples Test

		Levene's Test for Equality of Variances		t-test for Equality of Means						
		F	Sig.	t	df	Sig. (2-tailed)	Mean Difference	Std. Error Difference	95% Confidence Interval of the Difference	
									Lower	Upper
Bank-ing	Equal variances assumed	.660	.417	-1.221	398	.223	-.12000	.09829	-.31322	.07322
	Equal variances not assumed			-1.221	397.691	.223	-.12000	.09829	-.31322	.07322
Fund	Equal variances assumed	.030	.863	-1.192	398	.234	-.11500	.09645	-.30462	.07462
	Equal variances not assumed			-1.192	396.989	.234	-.11500	.09645	-.30462	.07462
Rural	Equal variances assumed	.176	.675	-.832	398	.406	-.08500	.10217	-.28586	.11586
	Equal variances not assumed			-.832	397.016	.406	-.08500	.10217	-.28587	.11587

****

विश्व एवं भारत में सूचना के अधिकार का इतिहास : एक क्रान्तिकारी आन्दोलन

डॉ. ओम प्रकाश परमार *

प्रस्तावना – सूचना शक्ति का स्त्रोत होती है जो एक जागरूक नागरिक का किसी सरकार के विरूद्ध मजबूत हथियार है साथ ही एक अच्छी सरकार का श्रेष्ठ लक्षण भी है। वर्तमान समय सभ्य विकसित समाजों का है जहां लोकतन्त्र अपने चरम पर है। लोकतान्त्रिक सरकार वर्तमान दौर की सबसे उत्ताम सरकार मानी जाती है और पारदर्शिता एक अच्छी लोकतान्त्रिक सरकार की विशेषताएँ है। लोकतान्त्रिक सरकार की प्रतिष्ठा एक स्वच्छ कुशल व पारदर्शी प्रशासन तन्त्र पर निर्भर करती है और पारदर्शिता के लिए सूचना या जानने का अधिकार देना आवश्यक है क्योंकि जानने के अधिकार के बिना एक नागरिक की स्वतन्त्रता का कोई औचित्य नहीं होगा। यदि हम सुक्ष्म दृष्टि से अवलोकन करे तो वर्तमान युग में सूचना की लोकतन्त्र का प्राण है।

यद्धपि भारतीय संविधान देश के नागरिकों को भाषा एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता स्पष्ट देता है परन्तु जानने या सूचना का अधिकार स्पष्टत: नहीं देता तथापि उच्चतम न्यायालय ने बदलते समय के साथ अनु. 19.1 के स्वतन्त्रता के अधिकार में सूचना या जानने के अधिकार को समाहित मानकर निर्णय दिए है। वर्तमान समय अच्छी सरकार का समय है और एक अच्छी सरकार का यह दायित्व है कि वह प्रशासन तन्त्र में पारदर्शित बनाए रखे व जनता को विदेश नीति, रक्षा नीति एवं लोकहित से जुड़ी समस्त प्रकार की नीतियों से अवगत कराएं। स्वतन्त्रता के छ: दशक बाद इस अधिकार का मिलना आश्चर्य की बात है। परन्तु फिर भी यह सुखद भविष्य की नींव का पत्थर साबित होगा।

यह कटु सत्य है सूचना के अधिकार को नागरिकों को प्रदान करने से सरकार भयाकांत रहती है फिर चाहे लोकतन्त्र हो या राजतन्त्र। अत: स्वीडन के वर्षो बाद उसके पड़ोसी देश फिनलेंड को 1951 में यह अधिकार मिला, 1966 में अमेरिका तीसरा देश रहा जबकि ब्रिटेन के नागरिकों को भी यह अधिकार जनवरी 2005 में ही मिल पाया। विश्व स्तर पर सर्वप्रथम जानने के अधिकार को नागरिकों को देने की पहल लगभग 250 वर्ष पूर्व ही हो गई थी जब स्वीडिश संविधान में सूचना की स्वतन्त्रता नागरिकों की प्रदान की गई। इस लिहाज से सूचना की आजादी देने वाला दुनिया का सर्वाधिक प्राचीन संविधान है।

स्वीडन का सूचना तन्त्र इतना प्रभावी है कि बोफोर्स घोटाले की जानकारी सबसे पहले स्वीडिश रेडियो द्वारा दी गई थी। फिनलेंड, डेनमार्क, नार्वे – यद्धपि स्केन्डेवियाई देशों से ही सूचना का अधिकार सम्पूर्ण विश्व में फैला है तथापि इसमें स्वीडन का योगदान अधिक है। फिनलेंड 19वीं सदी तक स्वीडन का ही भाग था अत: इस परम्परा को उसने आगे बड़ाया और 1951 में लॉ ऑन द पब्लिक करेक्टर ऑफ आफिसियल डाक्युमेंट कानून बनाया।

पारदर्शिता की दृष्टि से अमेरिका भी विश्व के कई देशों से आगे रहा है वहां 1946 में प्रशासनिक स्तर ही कई प्रावधान ऐसे कर दिए गए थे कि इस आधार पर शासकीय सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती थी। यह बात और ही कि ऐसीर जानकारी सिर्फ चीफ इक्जीकिटिव ऑफिसर ही दे सकता था।

धीरे–धीरे युद्धकालीन परिस्थितियाँ समाप्त हुई और अमेरिकी संविधान में एक नया परिवर्तन आया जबकि 1966 में सूचना की स्वतन्त्रता एक्ट पारित किया। यद्धपि राष्ट्रपति जॉनसन इस और उदासीन थे परन्तु संसद ने पारित कर दिया। यह कानून लगभग स्वीडन के कानून जैसा था।

ऑस्ट्रिया – पश्चिम युरोपीय देशों में सर्वप्रथम पहल आस्ट्रिया द्वारा हुई जब वहां की संसद ने 1973 में जनता को शासकीय दस्तावेजों से सम्बन्धित सूचनाएँ उपलब्ध कराने सम्बन्धित कानून बनाया।

फ्रांस – दुरियां के जिन कुछ देशों में लोकतान्त्रिक परम्पराओं का अस्तित्व रहा है उनमें फ्रांस भी एक है। फ्रांसीसी संविधान न केवल विचार व अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता देता है बल्कि इसे मौलिक अधिकारों की श्रेणी में शामिल किया है।

1789 की प्रसिद्ध क्रांति का एक महत्वपूर्ण नारा मानवाधिकारों की रक्षा करना थी जिसमें प्रेस की स्वतन्त्रता भी शामिल थी। शायद यही वजह रही कि संविधान निर्माताओं ने फ्रांसीसी संविधान की प्रस्तावना में ही प्रेस की स्वतन्त्रता का उल्लेख कर दिया।

नीदरलेंड – फ्रांस की तरह नीदरलेंड में भी सत्तर के दशक में ही सूचना सम्बन्धी कानून बनाने की पहल हुई और यह पहल भी एक 1970 प्रशासनिक सुधार आयोग की सुझाव पर हुई। नवम्बर 1978 में प्रशासन में खुलापन एक्ट पारित किया गया।

कनाडा – कनाडा ऐसा संघीय राष्ट्र है जहां प्रान्तों को अत्यधिक स्वायत्तता है साथ ही राज्यपाल व कुछ केन्द्र राज्य सम्बन्धी प्रावधान हमने कनड़ा से ग्रहण किए है।

आस्ट्रेलिया – आस्ट्रेलिया भी एक ऐसा विशाल संघीय राष्ट्र है जहां प्रशासन में लम्बे समय तक गोपनीयता का बोलबाला रहा है। खुलेपन व पारदर्शिता की बात वहां 1972 में जोर पकड़ने लगी जब सत्ता परिवर्तन के बाद नई लेबर सरकार द्वारा इसकी पहल की गई।

ब्रिटेन – दुनिया को लोकतन्त्र का पाठ पढ़ाने वाला ब्रिटेन ऐसा देश है जहां पारदर्शिता बनाम गोपनीयता की बहस लम्बी चली है। इसका एक महत्वपूर्ण कारण ब्रिटेन का साम्राज्यवादी प्रवृति/औपनिवेशिक प्रवृति का होना भी है। क्योंकि विभिन्न उपनिवेशों में चल रहे स्वतन्त्रता आन्दोलन को ऐसे कानूनों

* शोधार्थी (राजनीति एवं लोकप्रशासन विज्ञान विभाग) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

से ताकत मिलती वही सरकार का भंयाकात रहता भी मुख्य कारण है।

इस कारण ब्रिटेन के नागरिकों को भी यह अधिकार बहुत देर से मिला है। वर्ष 1911 का गोपनीयता कानून इस राह में मुख्य बाधा भी बना हुआ था।

एक बात यह भी कि जो विपक्षी सूचना के अधिकार की मांग करते वही सत्ता में आने पर अपनी मनमानी करने लगते थे। यहां तक की विद्धानों का मानना है कि ब्रिटेन में एक जमाने में विश्व स्तर पर राज किया है उसका कारण भी गोपनीयता कानून ही रही है।

इस प्रकार समिति की रिपोर्ट पर संसद में लगातार चर्चा चली अतंत: 1989 को गोपनीयता कानून में संशोधन हुए।

इस प्रकार हम देखते है कि दुनिया के लगभग 200 सम्प्रभु राष्ट्रों में मात्र 15 राष्ट्र ही ऐसे है जहां नागरिकों को यह अधिकार प्राप्त है।

इस प्रकार ब्रिटिश हुकुमत ने स्थिति को देखते हुए प्रथम गोपनीयता अधिनियम 1889 पारित किया जो न सिर्फ ब्रिटेन के लिए बल्कि ब्रिटेन के समस्त उपनिवेशों के लिए था। बीसवीं सदी में 1904 में संशोधन कर लार्ड कर्जन ने इसमें सैनिक नौसेनिक मामलों के साथ सिविल मामलों को भी दायरे में लाया गया साथ ही किसी अधिकारी द्धारा बगैर न्यायिक आज्ञा के सूचना उजागर करने पर दण्ड की व्यवस्था कर इस अपराध को अजमानतेय बनाकर कठोर बनाया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति से लेकर नहरू युग तथा 1975 में इंदिरा गाँधी द्धारा लगाए गए आपात से पूर्व इस और किसी का ध्यान नहीं गया परन्तु 1975 के आपात से विपक्ष व प्रेस ने पारदर्शिता की मांग की। 1977 में जनता पार्टी सरकार ने चुनावों बारे किये और इस दिशा में प्रयास प्रारम्भ किए राज्यों से सुझाव मांगे किसी राज्य ने इसकी वकालत नहीं की। 1980 में जनता सरकार के पतन के बाद इंदिरा गाँधी व राजीव गाँधी की सरकार द्धारा कोई प्रयास नहीं हुए।

अप्रैल 2004 में यूपीए की मनमोहन सरकार सत्ता में आई तो राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गाँधी एवं पूर्व आई.ए.एस. रैमन मैग्सैस पुरस्कार प्राप्त सेविका एवं राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की सदस्या अरूणा रॉय की व्यक्तिगत पहल पर नया विधेयक सूचना का अधिकार 2005 पारित किया गया जो 12 अक्टूबर 2005 को सम्पूर्ण देश में लागू किया गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. बेल रॉबिन एण्ड केलन वार्चिस, सूचना की स्तवन्त्रता : राष्ट्र मण्डल का अनुभव (आरस्ट्रेलियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन संस्करण 37 नं. 4 दिस. 1988)
2. धमेजा, अलका, लोक प्रशासन में पारदर्शिता (डिबेट प्रंटिस हॉल, न्यू देहली नवम्बर 2004)
3. फेनबर्ग लॉट्टि, सूचना की स्वतन्त्रता का प्रबन्धन अधिनियम और संघीय सूचना नीति, (पब्लिक एडनिमिस्ट्रेशन रिकार्म नव.-दिस. 1986)
4. फ्रेंक कम्यूनिटी रिपोर्ट ऑन सेक्सन 2 ऑफ द आफिशियल सिक्रेट एक्ट - 1911, एच.एम.एस.ओ. लंदन, 1972
5. गुहा रॉय जयतिलक, ओपन गर्वमेन्ट एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव कलचर इन इंडिया - (इण्डियन जनरल ऑफ पब्लिक संस्करण 36, नवम्बर 3, जुलाई-सितम्बर 1990)
6. ईयर, वी.आर. कृष्णा - सूचना की स्वतन्त्रता और मूल अधिकार, (नवम्बर-दिसम्बर 1985)
7. रॉबट डोनाल्ड सी, कार्यालयीन दस्तावेजों से सम्बन्धित कानून - टी.एन. चतुर्वेदी (जनवरी 1980)
8. इंटरनेट
9. केन्द्रीय एवं राज्य सूचना आयोग की वेबसाईट

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

छायावादी साहित्य में सौन्दर्यनुभूति

गायत्री मेहरा *

शोध सारांश – छायावादी साहित्य का मूल रूप सौन्दर्य और प्रेम के लेकर विकसित हुआ है वस्तु और व्यक्ति इस प्रेम और सौन्दर्य की वास्तविक जन्म भूमि है। अत: सौन्दर्य आलंबन और प्रेम आश्रय है। सौन्दर्याभिव्यक्ति के क्षेत्र में छायावादी कवि जो कोमल भाव और सौन्दर्यान्कन की शक्ति लेकर आया है वह अन्य कही मिलना असंभव है। क्योंकि सौन्दर्य छायावाद का प्रधान साधन तत्व रहा है। मानव अथवा प्रकृति के सूक्ष्म किंतु व्यक्त सौन्दर्य में आध्यात्मिक छाया का भान तेरे विचार से छायावाद की एक सर्वमान्य व्याख्या हो सकती है। छायावादी साहित्कारों की इस सौन्दर्य बोध की भावना के पीछे सामाजिक संस्कार और भावानात्मक प्रतिरूप कार्य कर रहे है। सामाजिक संस्कारों ने कवि को अपनी रूचि को समाज में व्याप्त विभिन्न भावनाओं से प्रभावित करने के लिये चेताया और उसकी कविता में अपने लिए ससीम स्थान प्राप्त किया। अनुभूतियों का परिष्कार और स्थूल से सूक्ष्म की ओर उन्मुख होना छायावादी सौन्दर्य साधना की विशेषता रही है।

शब्द कुंजी – छायावादी साहित्यसंस्कार और भावानात्मकसौन्दर्य साधनासौन्दर्य निरूपणप्राकृतिक सोपान ।

प्रस्तावना – छायावादी साहित्कारों की इस सौन्दर्य बोध की भावना के पीछे सामाजिक संस्कार और भावानात्मक प्रतिरूप कार्य कर रहे है। सामाजिक संस्कारों ने कवि को अपनी रूचि को समाज में व्याप्त विभिन्न भावनाओं से प्रभावित करने के लिये चेताया और उसकी कविता में अपने लिए ससीम स्थान प्राप्त किया। अनुभूतियों का परिष्कार और स्थूल से सूक्ष्म की ओर उन्मुख होना छायावादी सौन्दर्य साधना की विशेषता रही है। सौन्दर्य की अनुभूति का स्वरूप आनन्दमय है आनन्द का अतरंग सरलता है और बहिरंग सौन्दर्य।[1] सौन्दर्य के इस सार्वभौम रूप का छायावाद के प्रवर्तक कवि प्रसाद जी के काव्य में अनेक स्थानों पर प्रगटीकरण हुआ है–

उज्जवल वरदान चेतना का सौन्दर्य जिसे सब कहते है
जिसमें अनन्त अभिलाषा के सपने सब जगते रहते है।[2]

सामाजिक संस्कार के साथ साथ सौन्दर्य ने छायावादी काव्य भूमि पर नारी सौन्दर्य, पुरूष सौन्दर्य, प्रकृति सौन्दर्य जैसे अनेक रूपों में अभिव्यक्ति प्राप्त की। इन सभी रूपों में सौन्दर्य मानव जीवन के व्यापक एवं प्रभावकारी भाव से रूप में प्रस्तुत हुआ है। प्रसार जी और महादेवी जी दोनो ही ने अपने अपने काव्य रूप में सौन्दर्य के इन विविध पक्षों को प्रस्तुत भी किया है। और उनका सार्थक विकास भी। प्रसाद जी के यहॉ नारी और पुरूष सौन्दर्य नायक और नायिका के रूप चित्रण के रूप में अनेक स्थानों पर चित्रित हुए है।

ये बंकिम भ्रू युगल, कुटिल कुल घने,
नील नलिन से नेत्र, चपल मद से भरे,
अरूण राग रंजित कोमल, हिमखण्ड से,
सुन्दर गोल कपोल, सुढ्रर नासा बनी।[3]

नायिका के रूप सौन्दर्य के माध्यम से नारी के वाहय सौन्दर्य को व्यक्त करने की भॉति ही प्रसाद जी ने अपने पुरूषो के वाहय सौन्दर्य अर्थात शारीरिक बलिष्ठता को, उनके वीरत्व को अभिव्यक्त किया है, वहीं आंतरिक सौन्दर्य के रूप में उनके स्वाभिमान, सहनशीलता और उदार स्वभाव को भी अभिवयक्ति दी है।

अव्यव की दृढ़ मॉस पेशियॉ
उर्जस्वित का वीर्य अपार,
स्फीति शिरायें स्वस्थ रक्त का
होता था जिनमें संचार।[4]

प्रसाद जी की भॉति जी भी सौन्दर्य निरूपण में रमी है। किन्तु उनके यहॉ नारी पुरूष सौन्दर्य की स्पष्ट व्यंजना न के बरावर प्राप्त होती है। उनके काव्य में जहॉ जहॉ प्रेम सौन्दर्य को स्थान मिला है। वहॉ वहॉ परोक्ष रूप में इस लौकिक सौन्दर्य को भी देखने का प्रयास किया जा सकता है।

स्वर्णलता सी कब सुकुमार
हुई उसमें इच्छा साकार
उगल जिसने तीन रंगे तार,
बुन लिया अपना ही संसार।[5]

और

सखि ! मै हू अमर सुहाग भरी
प्रिय के अनन्त अनुराग भरी।[6]

मानव से जुडी हुई प्रकृति को छायावाद में विशेष स्थान प्राप्त हुआ है। यद्यपि मानव और प्रकृति से ही एक दूसरी से अटूट संबंध रखते है इसलिए हर युग के रचनाकार ने प्रकृति को अपनी रचना में स्थान दिया है। प्रसाद और महादेवी जी दोनों ही ने अपनी अपनी भावनाओ की सटीक अभिव्यक्ति के लिये प्रकृति सौन्दर्य को बिना किसी संकोच के ग्रहण किया है–

प्राची में फैला मधुर रांग,
जिसके मंडल में एक कमल खिल उठा सुनहला भर पराग,
जिसके परमल से व्याकुल हो श्यामल कलरव सब उठे जाग
आलोक रश्मि से बुने ऊषा अंचल में आन्दोलन अमन्द,
करता प्रभात का मधुर पवन सब ओर विरतने को मरन्द।।[7]

प्रकृति का ऐसा आलंबन रूप प्रसाद जी के यहॉ अनेक स्थानों पर देखने को मिलता है महादेवी जी ने तो प्रकृति में ही अपने व्यक्तित्व को समाहित करके अपने सारे मनोभावो को इसी के माध्यम से उजागर किया–

फैलते है सांध्य नभ में भाव ही मेरे रंगीले
तिमिर की दीपावली है रोक मेरे पुलक गीले।[8]

प्रकृति का मानवीकरण महादेवी जी के साहित्य में आदि से अंत तक प्राप्त

* शोधार्थी (हिन्दी विभाग) भाषा अध्ययन केन्द्र, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

होता है। क्योंकि महादेवी जी ने प्रकृति से अपना एकात्म स्थापित किया और वही उनके काव्य में हर अभिव्यक्त ही हुआ। प्रसाद जी के काव्य में भी प्रकृति का मानवीकरण चित्रित है और उस रूप में सौन्दर्य के प्राकृतिक सोपान को सजीव अभिव्यक्ति मिली है।

बीति विभावरी जागरी।
अंबर पनघट में डूबा रही
ताराघट ऊषा नागरी।[9]

छायावादी कवि निराला की परिमल अनमिका अणिमा गीतिका अदि सभी रचनाओं में गीत सृष्टि हुई है। रहस्यवाद, छायावाद, प्रगतिवादी सभी काव्य धाराओं में इनके गीतों के उदाहरण मिलते है इनके गीतों का सौन्दर्य अदभुत है निराला के गीतों में संयोग व वियोग दोनो का ही सौन्दर्य उभरा है प्यार के अभाव में निराला के हद्रय उदार बन गया, वह दूसरा के प्रेम को अधिक से अधिक समृद्ध देखना चाहते है, उनका साधन, साध्य सब कुछ प्रेम है –

कुछ न हुआ हो न हो,
मुझे विष्व का सुख, श्री यदि केवल
पास तुम रहो।[10]

बेला गीतिकाव्य की दृष्टि से निराला जी की महत्वपूर्ण रचना है बेला में नयी शैली के गीत है– बेला मेरे नये गीतों का संग्रह है प्राय: सभी तरह के गेय गीत इसमें है।[11]

छायावाद के चतुर्थ स्तंभ में से एक पंत मूलत: प्रकृति के सौन्दर्य चेतना कवि है। वीणा से गुन्जन तक की कविताओं में इस सौन्दर्य चेतना का अत्यन्त स्वभाविक विकास देखा जा सकता है। पल्लव में यौवन की मादक अरूणिमा का गहरा रंग है। वीणा की विस्यमकारी बालिका अधिक मॉसल, सुरूचि सुरम्यपूर्ण बनकर प्राय: मुग्धा का हदय पाकर जीवन के प्रति अधिक संवेदनशील होकर पल्लव में प्रकट हुई है।[12] पल्लव के गीतों प्रगीतों में जो संवेदन,रसात्मकता ओर उल्लास का वातावरण देखने को मिलता है। वह आगे के काव्य संग्रहो में विरल हो गया है पल्लव के गीत संख्या में कम होते हुये भी अपार स्वर्ण राशि अपने में समेटे हुए है।गुंजन में कवि की वाणी का संवादी स्वर सा से एकदम रे हो गया है।[13] गुंजन के बाद ज्योत्स्ना में पंत ने अपने सुन्दर गीतों की सृष्टि की जिनमें पंत की कला प्रतिभा सौन्दर्य के अगणित दिव्य आयाम उद्घाटित कर सकी है।

बच्चन जी भी छायावाद युग क एक प्रसिद्ध कवि रहे है बच्चन जी की कृति मधुशाला का ऐतिहासिक महत्व रहा है सन1935 मे छायावाद अपने चरमोत्कर्श पर था। बच्चन जी की प्रत्येक रचना मधुशाला, निशा निमंत्रण एकांत संगीत, आकुल अन्तर हलाहल, सूत की माला आदि सभी गीत संग्रह के रूप में हमारे सामने आयी। बच्चन जी के गीत का सौन्दर्य अद्धितीय है। मधुशाला में संग्रहित मुक्तकों की रचना 1933 –34 में हुई थी। यह वह समय था जव छायावाद अपने पूरे प्रवाह में था। युग विशेष को साहित्य का स्वर्ण युग घोषित कराने की क्षमता रखने वाले युग में साकी, प्याला, शराब और सुराही के प्रतीकों से दार्शनिक रंग का रूपायन करना एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण कार्य था और कवि बच्चन ने यह साहस दिखाकर हिन्दी के काव्य सौन्दर्य को नये आयाम दिये। मधुशाला से जन्मे इस काव्य सौन्दर्य की महत्ता का अनुमान इसी के बल पर लगाया जा सकता है। कि बच्चन रातों रात इसके बल पर ख्याति के शिखर पर पहुँच गये। मधुशाला के प्रकाशन के साथ ही एक बार ही बच्चन का नाम एक गगन भेदी रॉकेट की तरह तेजी से उठकर साहित्य जगत पर छा गया।

मधुशाला, मधुशाला और मधुकलश एक के बाद ये तीनों संग्रह शीघ्र ही सामने आ गये हिन्दी मे जिसे हालावाद कहा जाता है ये उस काव्य पद्धति के धर्म ग्रन्थ है।[14] बच्चन जी के गीतो में लय, छनद, टेक, तुक व लोकधुन आदि का समावेश रहा। मधुशाला ने तो कवि सम्मेलन के मंच से व्यापक लोकप्रियता हासिल की। आज की इस कृति के मुक्तक जनमानस में अपनी पैठ बनाये हुए है–

एक बरस में एक बार ही
जगती होली की ज्वाला
एक बार ही लगती बाजी,
जलती दीपों की माला
दुनियॉ बालों किन्तु किसी दिन
आ मदिरालय मे देखो
दिन को होली, रात दिवाली
रोज मनाती मधुशाला[15]

अतत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि छायावाद में सौन्दर्य का उत्तरोत्तर विकास हुआ है। छायावादी कवियों ने सौन्दर्य सुधा के प्रति जो लालसा रखी है वह अन्य कहीं प्राप्त नही होती है। यद्यपि छायावाद से पहले भी सौन्दर्य की अभिव्यक्ति हुई है और छायावाद के बाद भी पर्याप्त सौन्दर्य चित्रण हुआ है। किन्तु छायावादी सौन्दर्य वर्णन अभिव्यक्ति और अनुभूति की दृष्टि से अद्धितीय बन पडा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कामायनी, लज्जासर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृ0 115
2. प्रसाद ग्रन्थावली भाग –1 झरना जय शंकर प्रसाद, पृ0 238
3. प्रसाद ग्रन्थावली, भाग 1 झरना जय शंकर प्रसाद, पृ0 238
4. प्रसाद ग्रन्थावली भाग 1 झरना जय शंकर प्रसाद, पृ0 414
5. महादेवी साहित्य समग्र, सांध्यगीत सं0 निर्मला जैन, पृ0 139
6. महादेवी साहित्य समग्र, सांध्यगीत सं0 निर्मला जैन, पृ0 296
7. कामायनी इडा़सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृ0 200
8. महादेवी साहित्य समग्र, सान्ध्यगीत, सं0 निर्मला जैन, पृ0 259
9. प्रसाद ग्रंथावली भाग 1, लहर जय शंकर प्रसाद, पृ0 345
10. अनामिका, निराला, पृ0 116
11. आवेदन, निराला, पृ0 5
12. रमिबंध, पंत, पृ0 11
13. गुन्जन, विज्ञापन सुमित्रानन्दन पंत
14. छायावाद की काव्य साधना, प्रो0 क्षेम, पृ0 112
15. मधुशाला, बच्चन, पृ0 30

****

Customer Satisfaction In Online Banking Services - A Study Of Public Sector Banks In Udaipur

Suman Gunjetia* Dr. Payal Sachdev **

Abstract - The purpose of this paper examines customer satisfaction in online banking services of public sector bank in Udaipur city. The study was multiple cross sectional design and based on the primary data. These primary data was collected from online banking user of Udaipur city, who was using the online banking services of public sector bank such as SBI from a sample of 200 respondents. The research showed that generally customers are satisfied with provide real time, convenient, 24*7 banking, fast delivery information.
Key words - On line banking, customer satisfaction.

Introduction - In traditional banking system a person has to approach the branch of bank for any transaction as withdraw cash or deposit a cheque or request for the statement of account where in the online banking a person can perform any transaction or inquiry and any other information without approaching to the branch. All it happens online at any time and from any place. People are ever more using online banking for an extensive variety of basis, as it is very convenient. Online banking is growing each day with the increase of number of people using these services for their bank transactions as inquiries, deal and any other information.

Online banking system gives its customer a user friendly atmosphere where a click can do any of work of the customer without taking any long time for processing. Online banking has made some major and important changes in traditional banking system according to its performance.

Review of literature:

Sharma (2013) explored that On comparing the e-banking adoption frequency by customers on persuasion of bankers or on their own between public and private sector banks, it has been found that there is not sufficient of awareness among the customers concerning the use of e-banking services and the guidance and opinion by bankers facilitate promote the use of such services among the customers. Mostly private sector banks are working towards it compared to that of public sector bank.

Rao, K. Rama Mohana and Lakew, Tekeste Berhanu (2011) found the service quality perceptions of customers of public sector and private sector banks in the city of Visakhapatnam, India. They reveal that the Reliability and Assurance dimensions of service quality got the highest ratings while the Tangibles dimension got the lowest score. Furthermore, in the study they found a strong difference in service quality perceptions between customers of private sector and public sector banks.

Safeena et al (2010) determines the costumer's point of view on online banking acceptance. She examine that perceived convenience, perceived user-friendliness, customer awareness and perceived risk are the important determinants of online banking acceptance and have strong and positive result on customers to accept online banking system.

Kundi and Shah, (2009) Shows that most of the users do not utilize and make good use of the online services, especially those offered by banking sector. And in a survey conducted in a major city, that only 8% of customers had knowledge of online bank account facilities Thus, in order to fully utilize online services presented by the banks, it is very important to understand the issue that can facilitate or hinder the use of newly developed banking systems; mainly in the perspective of developing economies.

Hao Chen and Jean-Pierre Corriveau (2009) explored that there are two potential security problems in the current online banking systems. First, online banking systems form a kind of customer/server application. Most research on online banking systems is concentrate on security on the server's side and on network security that is the formation of a secure channel between the user's computers and the bank's servers. Solutions to make sure authenticity and privacy over online are widely available. Still, little exists to address security on the user side. Second, there are many security technologies, execution and service that can be chosen and applied to online banking systems. However, it is hard to get a testing system that can be used by the customers themselves to verify if those security services are organization correctly. Clearly, there is no actual security

***Research Scholar, Pacific Academy Of Higher Education And Research University, Udaipur (Raj.) INDIA**
**** Associate Professor, Advent Institute Of Management Studies, Udaipur (Raj.) INDIA**

protection without accurate installation and configuration of such services.

Gonzalez et al., (2008) Found that Banks gain competitive advantage over their rivals by providing online banking services as technology induced services lower cost of operations, Take away geographical barriers, gives 24 hours banking, extended time of business and efficiency in routine banking processes. With no even interacting with the bankers, customers can handle banking activities anywhere as any corner of the world. Online banking has experienced fast growth and has transformed the traditional banking practices.

Research Design - The research is descriptive in nature and we have used the multiple cross sectional design. This study is based on the primary data, as it is related directly to the customers. Plenty information has been collected through the questionnaire; the questionnaire was served to the customers directly. And oral information is also gathered from the customers of the banks.

Source Of Data - There are many sources of data collection, such as secondary data collection and Primary data collection.

Sample Size - Primary data was collected from online banking users of Udaipur City, who was using the online banking services of Public sector banks such as State Bank of India. We have used Nonrandom, connivance sampling technique to collect the data from the customers of bank. Samples of 200 respondents who actually use online banking were selected.

Data And Data Collection Technique -This research is based on primary data, which was collected from the customers using online services of the public sector banks. We used the questionnaire as a tool for collecting the data. Questionnaire included open and close ended questions. Some demographic questions would be incorporated to understand the effect of demographic characteristics on the satisfaction of the customers five point Likert scale would be used in some of the closed ended questions to analyze the preference of the customers.

Table 1: Age wise Distribution of respondents

Age	**Public**	
	N	**%**
Below 20 years	22	11.00
21 - 30 years	110	55.00
31 - 40 years	46	23.00
41- 50 years	16	8.00
51 – Above	6	3

Table 1 shows distribution of public sector banks with respect to their age from the table it can be observed that maximum respondents belong to younger age group. As mobile and online banking is new concept and younger generation is using it more as compared to older.

Table 2: Gender wise Distribution of respondents

Gender	**Public**	
	N	**%**
Male	123	61.50
Female	77	38.50
Total	**200**	**100.00**

Table 2 shows distribution of respondents of public sector bank with respect of their gender. 61.50 % male and 38.50% female were found.

Table 3: Distribution of respondents according to Occupation

Occupation	**Public Sector**	
	N	**%**
Private Sector Employee	24	12.00
Govt. Sector Employee	42	21.00
Business	27	13.50
Professional	11	5.50
Housewife	38	19.00
Student	52	26.00
Retired	3	1.50
Others	3	1.50
No Response	0	0.00
Total	**200**	**100.00**

The about table 3 depicts majority of respondent 52 (26%) belongs to students while 42 (21%) respondents are be-long to government sector employee, as shown in the while only 6(3%)are belong retired and other respondents.

Table 4: Distribution of respondents according to Education

Education	**Public Sector**	
	N	**%**
Professional Degree	28	14.00
Post-Graduate of Higher	78	39.00
Graduate	49	24.50
Senior Secondary (Up to XII)	16	8.00
Secondary (Up to X)	15	7.50
Below X	3	1.50
Just Literate	2	1.00
Other	7	3.50
No Response	2	1.00
Total	**200**	**100.00**

Table 4 shows Total respondents are dividend into nine category of qualification i.e. 78(39%) respondents are post graduate of higher while 49(24.50%) respondents are graduate. 28 respondent (14%) stands in professional category and 15.5% respondents are similar between secondary and senior secondary.

Which have the lowest number of respondents stands in the category of below 10th, 14(7%) respondents only. Hence, it can be said that majority the respondents are educated and around 50% category are post graduate of higher and professional degree.

Table 5: Income wise Distribution of respondents

Income	**Public**	
	N	**%**
Below Rs. 2,00,000	56	28.00
Rs. 2,00,001 - Rs. 5,00,000	59	29.50
Rs. 5,00,001 - Rs. 10,00,000	57	28.50
Rs. 10,00,001 - Rs. 20,00,000	4	2.00
Rs. Rs. 20,00,001 & Above	0	0.00

No Response	24	12.00
Total	**200**	**100.00**

The above the table 5 depicts the demographic profile of respondents is income wise distribution. the majority 29.50% respondents earn 200001-500000, per year while only 2% respondents earn 1000001-2000000, and above yearly. The percentage of respondents who earn below to 200000 and 500001-1000000 yearly are same i.e. 28% of the total respondents. .

Table 6: Type of Accounts in the Bank

Option	Public	
	N	%
Saving Account	181	90.50
Current Account	46	23.00
FD Account	33	16.50
RD Account	19	9.50
Loan Account	34	17.00
Cash Credit Account	14	7.00
Demat Account	2	1.00
Any Other A/c	0	0.00

Table 7: Type of Online Banking Service you use

Option	Public	
	N	%
Internet Banking	169	84.50
SMS Banking	61	30.50
Mobile Banking	78	39.00

Table 7 shows type of online banking services used by public sector bank customer. 84% customer are using internet banking, 30.50% are using SMS banking, 39.50% are using mobile banking.

Opinion of respondents regarding online banking services - In the present section an analysis of opinion of responded regarding various aspects of online banking services are given. The respondents were asked to given their opinion on various aspects. On 5 point Likert types scale when respondents were asked to mark their opinion on 5 Likert point scale-never, rarely, sometime, often, frequently.

Table 8: Online banking provide real time (immediately after completing transaction) access to information

Option	Public	
	N	%
Never	3	1.50
Rarely	29	14.50
Sometimes	15	7.50
Often	97	48.50
Frequently	56	28.00
Total	**200**	**100.00**

Table 8: shows opinion of internet banking user regarding whether online banking provide real time access to information.

16% respondents said that they either rarely or never get real time access to information through online banking, 7.50% were sometime get real time access to information. But majority of respondents 76.5% said that they often or frequently get real time access to information through online banking.

Table 9: In online banking there is no geographical barrier limitation and transactions can be done throughout the world.

Option	Public	
	N	%
Never	11	5.50
Rarely	22	11.00
Sometimes	37	18.50
Often	44	22.00
Frequently	86	43.00
Total	**200**	**100.00**

Table 9 shows 16.50% respondents said that they either rarely or never get no geographical barrier limitation and transactions can be done throughout online banking, 18.50% were sometime get no geographical barrier limitation and transactions throughout online banking but majority of respondents 65% said that they often and frequently get no geographical barrier limitation and transactions can be done throughout the world.

Table 10: Online banking is convenient (Transactions can be done from anywhere without physical interaction with bank)

Option	Public	
	N	%
Never	1	0.50
Rarely	11	5.50
Sometimes	24	12.00
Often	97	48.50
Frequently	67	33.50
Total	**200**	**100.00**

Table10 shows 82% majority of respondents said that they often and frequently agree with online banking is convenient and 12% respondents were sometime agree with it but 6% respondents said that they either rarely or never agree with its convenient only.

Table 11: 24 x 7 banking - Transaction can be done anytime 24 hours a day and 7 days a week

Option	Public	
	N	%
Never	5	2.50
Rarely	26	13.00
Sometimes	22	11.00
Often	94	47.00
Frequently	53	26.50
Total	**200**	**100.00**

Table 11 shows that 15.50% respondents accepted that they either rarely or never get 24*7 banking, 11% were sometime get 24*7 banking but majority of respondents 73.50% accepted that they often and frequently get 24*7 banking services through online banking.

Table 12: Faster delivery of information

Option	Public	
	N	%
Never	1	0.50
Rarely	8	4.00

Sometimes	30	15.00
Often	100	50.00
Frequently	61	30.50
Total	**200**	**100.00**

Table 12 shows that opinion of respondents regarding to faster delivery of information thought online banking.

4.50% of respondents said that they either never or rarely get faster delivery of information, 15% were sometime get it but majority of respondents 80.50% said that they often and frequently get faster delivery of information.

Suggestions And Recommendations - Analysis reveals that customers are happier with the services of online Banking. Different age group customers have different perception towards the online banking services, mainly the old age groups are having the disinclination for using online banking facilities, so need to be given to those people and proper training on the usage of online banking should be given to them. Most of the customers prefer online banking for convenient and faster delivery of information. So banks should try that online banking is working 24*7 service is available to customers without any hassles.

Conclusion - Online banking is the need of the hour. In today's digital world when everything is online how can banking sector remains behind. Hence present study was ried to find out that what online facilities are provided by the banks in the market. customers prefer online banking because (in the order of preference) time saving, convenience in online banking, fast delivery of information, provide real time banking, transactions can happen across geographical boundaries and availability of 24x7 transactions. Hence it can be said that people are adopting online banking because of benefits in terms of time savings, time independence and geographical locations.

Attitude towards online banking was analyzed demographically and it was found that male customers are more positive towards online banking as compared to female customers. Attitude of upper age group i.e. between above thirty years were more positive towards online banking as compared to customers of age group below thirty years. Students and Service sector employees whether public sector or private sector were more positive towards online banking as compared to people in other professions. Housewives and retired persons were least positive towards online banking among all other occupations and as far as education is concerned people is higher education group were more positive towards online banking as compared to people in lower education group.

References :–

1. **Alsajjan, B. & Dennis, C. (2010),** "Internet banking acceptance model: Cross-market examination", *Journal of Business Research,* Vol. 63, No. 9-10, pp. 957-963.
2. **Chan, S. & Lu, M. (2004)** "Understanding internet banking adoption and use behavior: A Hong Kong perspective", Journal of Global Information Management, Vol. 12, No. 3, pp. 21-43.
3. **Daniel, E. (1999**), "Provision of electronic banking in the UK and Ireland" International Journal of Bank Marketing, Vol. 17, No.5, pp.211-32.
4. **Hao Chen and Jean-Pierre Corriveau (2009), "**Security Testing and Compliance for Online Banking in Real-World", Proceedings of the International MultiConference of Engineers and Computer Scientists, Vol. 1, IMECS 2009, March 18 - 20, 2009, Hong Kong.
5. **Kundi, G.M. & Shah, B. (2009),** "IT in Pakistan: Threats & opportunities for eBusiness", *The Electronic Journal of Information Systems in Developing Countries,* Vol. 36, No. 0.
6. **Liao, Z. & Cheung, M.T. (2002),** "Internet-based e-banking and consumer attitudes: an empirical study", *Information & Management,* Vol. 39, No. 4, pp. 283-295.
7. **Rao. K. Rama. Mohana and Lakew. Tekeste Berhanu (2011),** "Service Quality Perceptions of Customers: A Study of the Customers' of Public Sector and Private Sector Commercial Banks in India", *International Journal of Research in Commerce & Management*, Vol. 2, Issue No. 11 (November).
8. **Safeena. Et al (2010),** "Customer Perspectives on E-business Value: Case Study on Internet Banking", JIBC, Vol. 15, No.1, April 2010.

****

Quality Concern in Special Education

Dr. Bhavna Singh *

Introduction - Special education teachers work with students who have a wide variety of mental, emotional, physical, and learning disabilities. Some special education teacher's work with students who have physical disabilities, such as students who are wheelchair bound. Others work with students who have sensory disabilities, such as blindness and deafness. They also may work with those who have autism spectrum disorders and emotional disorders, such as anxiety and depression. The success of the special education programs offered by these special schools to a large extent depends on the teachers who are working in these schools. There is no doubt that every school may possess excellent physical facilities in the form of equipment, building and text books and the curriculum may be appropriately adopted to community requirements but if the teacher are misfit not competent and satisfied with their job the whole educational programme became ineffective.. Teacher's Satisfaction with their work is unique to every teacher and it varies over time and setting. There are combinations of intrinsic and extrinsic sources of motivation relating to the level of satisfaction. Special education teachers help students with severe disabilities develop basic life skills, such as how to respond to questions and how to follow directions. Some teach the skills necessary for students with moderate disabilities to live independently, find a job, and manage .

De Beer et al. (2007) and **George et al.** (2008) argue that job satisfaction within education is influenced by factors such as the person's own experience, his or her demographic circumstances and personality, as well as physical, psycho-social, emotional and economic factors. **Santos (2002)** several factors have been identified by **Billingsley (2004)**, and **Stempien and Loeb (2002)** as indicators of the lack of job satisfaction amongst special school teachers with special reference to their working conditions (overcrowded classrooms, the lack of electricity and inadequate sanitation — or the lack thereof). These factors are age, reward, physical resources and the level of stress experienced**. Billingsley (2004)** argues that teachers' salaries play an important role in their job satisfaction and that teachers earning a higher salary would rather commit to their jobs than those earning lower salaries. Poor remuneration and unreasonable demands made on teachers by the Department of Basic Education are the main reasons for teachers' leaving special school **education (Bateman, 2007; Bolowane, 2005; Johns, 2007; Kassiem, 2008; Keating, 2005; Masemola, 2007; Mbanjwa, 2007; Mohlongo, 2006; Nthite, 2006; Nzimande, 2008; Seale, 2006; Smith, 2005).**describes the influence that age, gender and experience within education have on job satisfaction. In the Indian context, studies have been conducted on teacher Competencies **(SujathaMalini, 2002 and Jeevanantham, 2002)**. The Role performance and awareness, attitude and competencies of special and normal school teachers to deal with children with disabilities were studied by **Reddy (2002 and 2004)**. Likewise, **Kusuma Harinath (2000)** studied the attitude of teachers towards disabilities in students.**Nikhat yasmin shafeeq(2003)** studied the effect of training course on the Adjusdtment and job satisfaction of teachers teaching visually impaired and **Nikhat yasmin shafeeq(2003)** studied the job satisfaction of teacher teaching visually impaired in relation to Adjustment. The Western context too studies are available on the competencies **(Blackhurst et. al., 1977; Blanchett, 2001; Mc Nicholas jim (2001), Heller, (1999), (Knowlton et.al, 1999 and Kronick, 1988)** of teachers in dealing with children with disabilities. Compared to the Western research works, the research work done in India is more sporadic in nature, systematic and Scientific research on the competencies of special education teachers to deal with children with disabilities is very limited in India and the present study is an attempt in this direction

Objectives of the Study :

1. To compare the teaching aptitude of male and female teachers of working with visually impaired children.
2. To compare the job satisfaction of male and female teachers working with visually impaired children.
3. To find out relationship between job satisfaction and teaching aptitude of teachers working in the special schools for the visually impaired children.

Hypotheses - The following hypotheses have tested

1. There is no significant difference in teaching aptitude of male and female teachers of special school for the visually impaired children.
2. There is no significant difference in job satisfaction of

***Assistant Professor (B.Ed) S.M.P. Govt. G.P.G. College, Meerut (U.P.) INDIA**

male and female teachers of special school for the visually impaired children.

3. There is no significant relationship between teaching aptitude and job satisfaction of teachers of working in the special schools for the visually impaired children.

Methodology - The survey methods of research were used. Sample for the study consists 101 teachers of working in the special schools for the visually impaired children. Among 28 teachers were female and the rest 73 teachers were male. Test of teaching aptitude and job satisfaction developed by researcher was used to collect the data. Product moment coefficients of correction and t-test have been used to analyze the data.

Data Analysis and Finding

Table-1

Mean S.D and t-ratio showing the difference in teaching aptitude of male and female teachers

Group	N	Mean	S.D.	t-ratio
Male	73	12.493	4.032	.291
female	28	12.250	2.939	

Table 1 shows that the value of t-ratio (=.291) is not significant at .05 level. It means that male and female teachers of special schools do not differ from one another in their teaching aptitude.

Table-2

Group	N	Mean	S.D.	t-ratio
Male	73	12.452	3.598	.307
female	28	12.178	4.937	

Table 2 shows that the value of t-ratio (=.307) is not significant at .05 level. It means that male and female teachers of special schools do not differ from one another in their job satisfaction.

Table-3

N	Coefficient of correlation
101	.260**

**Significant at .05 levels

Table 3 shows that there is a significant positive relationship between teaching aptitude and job satisfaction of teachers of working in the special school for the visually impaired children.

On the basis of the foregoing result it can be concluded that special education teachers work with a difficult and diverse population. Without support the many needs of special education training may lead to lower job satisfaction. Motivation and satisfaction in their employment are more effective in helping their students. For the most effective way to enhance teacher competence and teacher job satisfaction is through professional development. These programs have focused on upgrading teachers skills. Like wise the, existing special education teachers can be oriented to multiple disability concepts through short term in service training programs the training programs must include sufficient practical experience of individualized instruction, group instruction, seminars, workshop, visits and contacts with parents and various working in the field of special Education. They should have the benefits of in-service training programmes in order to be up-to-date in their skills as teachers for quality improvement in special education.

References :-

1. Kundu C.L. (Ed.) (2000) “Status of Disability in India” RCI, New Delhi.
2. Lulla B.P. (2005) “Qualities of Special Teachers” Journal of Rehabilitation Council of India, Volume 1, No – 2. July-December.
3. Shelton, C.F. and Pollingue A.B. (2000) “The Exceptional Teacher’s Hand book” Corwin Press. Inc Callifornia.
4. Reddy, G.L. and Sujatha malini, J. (2007) “Awareness, Attitude and Competencies of Special Teachers” perspective on special Education, Volume-2, Neelkamal Publication, Delhi.
5. Blanchett, Wanda, J. (2001). “Importance of teacher transition competencies rated by special educators”, Teacher Education and Special Education, Vol. 24, No. 1, P. 3-12
6. Jeevanantham, (2002). “Competencies of teachers”. HRD Times, Vol. 4, No. 6, June.
7. Knowlton, Marie, Berger, Kareen (1999). “Competencies required of Braille teachers”, REIVIEW, Vol. 30, No. 4. pp. 151-159.
8. Mc Nicholas, Jim (2001), “The assessment of pupils with profound and multiple learning difficulties”, British Journal of Special Education, Vol. 27, No. 3, pp. 150-53.
9. Sujathamalini, J. (2002). “Competencies required for primary school teachers to handle learning difficulties in children”, Unpublished Ph.D. Thesis. Alagappa University, Karaikudi.
10. Kusuma Harinath, P. (2000). A Study of Certain Fetors related to learning disabilities in English among school students”. Unpublished Ph.D. thesis, Alagappa University, Karaikudi.
11. Kronick, D. (1988), “New approaches to learning disabilities” Journal of Learning Disabilities, II The professional press. Inc.
12. Heller, Kathryn, Wolff, Fredrick, Laura, and D. Dykes, Mary Kay, Cohen, Elisabeth Tucker (1999). “A national perspective of competencies for teacher of Individuals With physical and health disabilities”. Exceptional children, Vol. 65, No. 2. pp. 219-34.
13. Blackhorst, A.E., Mc Loughlin, and Price, L.M. (1977) “Issues in the development of programme to prepare teachers of Children with learning and behaviours disorders” Bheaviour Disorders, 2, 157-
14. Bateman B 2007. Teachers wait for unpaid overtime. *Pretoria News*, 15 March.*South African Journal of Education, Volume 32(3), August 2012* 265
15. Billingsley BS 2004. Special education teacher retention and attrition: a critical analysis of the research literature. *The Journal of Special education*, 38:39-55.
16. Bolowane A 2005. Teachers want armed guards at

schools. *The Mercury*, 15 March.

17. George 168.E, Louw D & Badenhorst G 2008. Job Satisfaction among urban secondary school teachers in Namibia. *South African Journal of Education*, 28:135-154.
18. Keating C 2005. 17 November. Campus violence makes many teachers leave. *Cape Argus*. http://www.capeargus.co.za. Accessed 16 January 2010.
19. Masemola L 2007. Tutoring ads up to better marks. *Pretoria News*. http://www.pretorianews.co.za Accessed 16 January 2010.
20. Mbanjwa X 2007. Teacher struggle to make ends meet. *Pretoria News*. http://www.pretorianews.co.za. Accessed 16 January 2010.
21. Mhlongo A 2006. Teachers not ready to teach new curriculum. *Daily News*, 31 January
22. Ntithe T 2006. Teachers need to be taught how to teach. *Pretoria News*.http://www.pretorianews.co.za. Accessed 16 January 2010.
23. Nzimande B 2008. Education is the key to a deeper democracy. *Cape Times*.http://www.capetimes.co.za. Accessed 16 January 2010.
24. Seale L. 2006. Schools raise concerns about new curriculum. *The Star*, January.
25. Smith T. 2005. Western Cape education: ‘dismal and hopeless’. *Cape Argus*.
26. http://www.capeargus.co.za. Accessed 16 January 2011

****

Role Of Science And Information Communication Technology (ICT) For Educational Development

Dr. Monisha Mishra * Mr. Yashwant Sharma **

Abstract - "God in His wisdom imparted technological idea to man" It is only a blind and irrational man that will say he does not see the importance of science and technology in our society today. In our everyday life, we see the importance. Even as you are reading this topic, the importance of Science and Technology is what makes it possible. The importance of science and technology when critically and analytically explained can fill more than two thousand pages of a textbook. This is just a preamble on the importance of science and technology. In School Education has a great role for a country. It is the grass root level for any country. Any type of failure in this stage may become a country backward. It is considered only two or three goals in this level of education. Among them Universal Primary Education and Gender Equality are main. Government of India has taken many programmes and schemes for Universalizing the Primary and Elementary Education. In modern society ICT plays a remarkable role in School Education. ICT in schools provide lots of opportunities to teachers to transform their practices by providing the learners with improved educational content and more effective teaching and learning methods. ICT improves the learning process through the provision of more interactive educational materials that increase learner's motivation and facilitate the easy acquisition of basic skills. In Primary and Secondary level, the use of various multimedia devices such as computer application, OHP, videos, television e. t. c. offer more challenging and engaging learning environment for students. In twenty first century teaching learning skills underscore the need to shift from traditional teacher centered pedagogy to more learner centered method. Active collaborative and cooperative learning environment facilitated by ICT and its gadgets.

Introduction - The importance of science and technology in national development cannot be over-emphasized. It is a known fact that no nation can develop without science and technology. Science is the study of knowledge which can be made into a system and which depends on seeing and testing facts while technology is the practical application of scientific knowledge. Developed nations of the world like the America, Germany, France etc. boast of several scientific inventions which make them to be rated as the world powers. Science and technology is the pivot of any nation's development. Modern gadgets in all aspects of human comfort are inventions of science and technology. It is also very essential in the production of medicine and treatment of diseases. A nation which lacks the necessary science and technology in this area will have to depend on other developed nations for the existence of its people. Such a nation cannot be said to be independent because it has to depend on the whim and caprices of other nations with the necessary science and technology. The development of a nation depends solely on the amount of science and technology at the disposal of such nation. A strong and virile nation is a nation with adequate technology to make its people comfortable. A nation without science and technology cannot feed its people because agriculture requires the application of science and technology. In the past when there was no technological advancement, education was usually difficult to access and comprehend. Today, people can get educated even at their door steps without going to a building called university or college to collect their certificates. Distant learning has made this possible. Before, publications of names of students that have been given admission were done manually, but today, prospective students can access their admission status through the internet without stressing themselves much. Education is become more interesting because of technology. Teachers and lecturers now find it interest when they make the videos of what they will teach the students and convey the information with less stress. Hence, this piece covers the importance of science and technology on information, transportation, banking, agriculture, education, security, and marketing and on employment generation.

Information Communication Technology (ICT Means) - In modern era ICT play an important role in education development. What is ICT? **-** The nature of information (the **'I'** in **ICT**) covers topics such as the meaning and value of information, how information is controlled, the limitations of ICT legal consideration. Management of information covers how data is captured,Verified and stored for effective

*Principal (Education) B.T. Institute of Excellence, Sagar (M.P.) INDIA
** Lecturer (Education) B.T. Institute of Excellence, Sagar (M.P.) INDIA

use; the manipulation processing and distribution of Information; keeping information secure; designing networks to share information. Communication- The C part of ICT refers to the communication of data by electronic means, usually over a distance. This is often achieved via networks of sending and receiving equipment, wires and satellite software applications and data. The type of network is invaluable in the office environment where colleagues need to have access to common data or program. Technology-Technology is the making, modification, usage, and knowledge of tools, machines, techniques, crafts, systems, and methods of organization, in order to solve a problem, improve a pre-existing solution to a problem, achieve a goal, handle an applied input/output relation or perform a specific function.

Benefit of ICT in School Education – India uses ICT as a teaching tool. Its potential for improving the quality and standards of pupils' education is significant.

General Benefits

1. Enable grater learner autonomy,
2. Enable tasks to be tailored to suit individual skills,
3. Enable students to demonstrate achievement in ways which might not be possible with traditional methods,
4. Unlocks hidden potential for those with communication difficulties.

ICT Benefits for Students - Students using voice communication aids gain confidence and social credibility at school in their communities,

1. Increased ICT confidence amongst students motivates them to use the Internet at home for schoolwork and make their curiosity fulfill.
2. Computer can improve independent access for students to education, Students with profound and multiple learning disabilities can easily communicate more,
3. Visually impaired students using the internet can access information along their sighted peers.

ICT Benefits for Teacher

1. Using the ICT gadgets teachers can easily represent their lecture,
2. Teachers make interesting and fruitful their teaching by using ICT.
3. Non-teaching staff easily store the recodes in computers,
4. Reduces isolation of teachers working in special Educational needs by enabling them to communicate electronically with colleagues.
5. Enhances professional development and the effectiveness of the use of ICT with students through collaboration with peers.
6. Improving the skills of staff a greater understanding of access technology used by students.

ICT benefits for parents - Not only learners, teachers, non-teaching staffs but also parents to have higher expectations of children's sociability and potential level participation may occur by ICT, Students using voice communication aids gain confidence and social credibility at school in their communities,

1. Increased ICT confidence amongst students motivates them to use the Internet at home for schoolwork and make their curiosity fulfill.
2. Computer can improve independent access for students to education,
3. Students with profound and multiple learning disabilities can easily communicate more, visually impaired students using the internet can access information along their sighted peers.

The Role of ICT in enhancing the development of basic education and Literacy - We take the same broad definition of ICT to include radio, television, satellite, fixed and mobile telephone, fax, computers and CD-ROMs and the internet. The ICTs can be divided into two groups: traditional or old ICTs (namely, radio and TV) and the new ICTs (namely, the Internet and telecommunications). Learning through new ICTs is also called e-learning. Recent studies show the enormous potential of e-learning, especially in industrialized countries.

E-learning has the following advantages:

1. Access to the learning programme any time convenient to the learner. Learners can be at any place to log on.
2. Asynchronous interaction providing participants and tutors with time to prepare their responses. Leading to succinct and to-the-point interaction and on-track, thoughtful and creative conversations.
3. Enhanced group collaboration creating shared electronic conversations which can be more thoughtful and permanent than voice conversation. Aided by group coordinators, these sessions can be powerful for learning and problem solving.
4. New educational approaches can be used. For example, faculty from anywhere in the world, faculty teams with different specialties can be put together and innovations of teachers can be shared along themselves for improvement and adaptation.

The Use of ICTs to Support Basic Education - We shall examine below how and where ICTs, both new and old, can enhance education for all in developing countries. As in the case of higher education mentioned in the previous section, there are four ways ICTs can support basic education – (i) supporting education in schools, (ii) providing non formal education for out-of-school children and adults, (iii) supporting pre-service distance education of teachers and their in-service professional development, and (iv)enhancing the management of schools. These are detailed below.

Supporting Education - ICT can provide access to information sources, enable communications, create interacting learning environment and promote change in methods of teaching. Quality and access to up-to-date and relevant materials can be improved while offsetting some costs of textbooks. However, the improvement in quality resulting from the new ICTs is yet to be justified with the

cost in developing countries. Radio is still the most cost-effective ICT for enhancing quality in school education. However, with the falling cost of hardware, maintenance and Internet access and increasing extension of telecommunications and power infrastructure, it is expected that the benefits of using new technology in the schools of developing countries will exceed the costs.

Supporting non-formal Education for out of School Children and Adults - Empirical evidence demonstrates that radio and television, the traditional ICTs are cost effective means to reach out-of-school children and adults where the costs are spread over a large number of learners, in the regions of conflict and for refugees. If the purpose of ICT is to reach children and adults who cannot go to school for remoteness and/or for opportunity costs, radio and television are more likely to widen access than the new ICTs which may not be available to them. However, basic education is more successful when delivered in the mother tongue and traditional ICTs may be less economic because of the small number of learners. The possibility of two-way communications with new ICTs makes them more attractive where the target group has easy access to them, for example, in peri-urban areas. Supporting pre- and in-service teacher education. The high demand for teachers calls for the rapid supply of trained teachers. Distance education of teachers is an essential medium to achieve education for all. Radio and television (radio more than television) still remain popular means because of low costs. However, teacher education using new ICTs are increasingly becoming popular because of the possibilities of the 'multiplier effect', greater interactivity between students and tutor, opportunities for learners to proceed at their own pace , at any place and at any time, the possibilities of combining video, audio and texts to improve delivery and quality of instruction and finally the possibilities of establishing teacher resource centers with access to power and telecommunications equipped with computers and Internet facilities.

Conclusion - The study of science and technology act as a perpetual urge to acquire knowledge. It deepens our sense of mystery of creation. Today scientist speak of the wonder of nature with a thrill of emotions. While quality in education through ICT and its awareness amongst students will have positive impact on the society. It can be helpful in quality and standards of education by implementing it in various phases of education. It can be employed in formal and Non-formal types of education and would eventually make the learners employable and socially useful part of the society. By employing ICT in teacher training can save a lot of money of the Government. Moreover a lot of qualitative improvement can be seen as resource persons for the training can be best of the world. By employing ICT in administration can help in solving the problem of Absenteeism of students and teachers. Good quality content is one of the major issues and directly affects the standards of education and quality.

So a modern curriculum of studies must Include the study of science and technology, because the modern students needs a scientific mind in approaching the problem of life

References :-

1. http:// www.ictadvice. Org. uk/ index.php
2. http:// www2 unescobkk.org/elib/publications/188/ promoting ict-literacy
3. http:/ www.indianschooleducation.org.in
4. M.Yasothapriya.,(2010).The Role of ICT in Improving
5. Education.EDUTRACKS.10(4).19-22.
6. H.MITRA (2012).ICT in Indian Education.UNIVERSITY NEWS.12 (9).35-42.
7. University Grants Commission (2004) Annual Report 2002-03, New Delhi:
8. University Grants Commission.
9. Wright, C. (2000) "Issues in Education and Technology-Policy Guidelines and
10. Strategies." Commonwealth Secretariat, London
11. Dutta, Soumitra.,Lanvin. Bruno, and Fiona Paua (2004) The Global Information
12. Technology Report- Towards an Equitable Information Society (GITR) 2003-2004,
13. New York: Oxford University Press.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

मध्यप्रदेश में जनजातीयों की वन नीति का भौगोलिक अध्ययन

सन्दीप कुमार सिंह * डॉ. सुमन सिंह **

प्रस्तावना – वनवासी का अर्थ प्राणिशास्त्रीय वैज्ञानिकों ने इस प्रकार से किया है। इन्हें ट्राइब एक कुटुम्ब के रूप में स्वीकार करते हैं। इसे बोधक रूप में राजनीतिशास्त्र मे विकसित या अविकसित व्यक्ति के समूह का नृशास्त्र और समाजशास्त्री अध्ययन के दौरान इन्हें वनवासी कहा गया है। जड़ जंगल, जमीन इनकी आवाज रही है। ये वन को अपनी सम्पदा मानते हैं। जहाँ तक सामाजिक व्यवस्था का आधार ही उनकी वन उपज रही है। यहीं से इनका जीवन नीति मत्ता से पूर्ण रहा है। इनके सामाजिक जीवन की कसौटी ही उनका वन नीति रही है। वन के दोहन का इनका उद्देश्य वन को और विस्तृत करना है। ऐसी दशाओं में मानवीय विचारधारा के आये कुछ आला अवसरों ने इनके विचार को विखंडित कर दिया है। जनजातीय समुदाय का जीवन जंगलों में ही व्ययतीत होता रहा है। इन्हीं कारण ये वनों से इतना नजदीक रहें। इनकी परिस्थितियाँ और आर्थिक संकट के विचारों का परिणाम ही मानवीय विचारधारा का परिणाम रहा है। नि:संदेह ही वे वन्य जीवन की कसौटी का परिणाम प्रकृति के दोहन शक्ति का मानते हैं। यही कारण है कि जीवन और जगत् की कठिन समस्याओं को भी ये प्रकृति के न्याय से समझते हैं। वन ही उनकी जीविका का साधन है। इन्हीं जंगलों से ही जड़ी-बूटियों को प्राप्त कर रहे थें। जहाँ कन्दमूल फल, दाना पानी, शहद, घर बनाने का सामान, जड़ी बूटियाँ, पत्तियाँ आदि इनके जीवन का साधन रहा है। यहीं संसार के सभी प्राणियों का जीवन मानवीय जीवन स्तर से बढ़कर रहा करते थें। भारतीय जनजातियाँ समुदाय मुख्य रूप से वनों में निवास करते हैं। विश्व के अनेक जगहों पर वनवासी समुदाय पाये जाते हैं। सम्पूर्ण देश की वनवासीय एकरूपता भारतीय जनजातीय समुदाय से करना औचित्यपूर्ण नही है।

जनजातीय समुदाय की आस्थाऐं भी जंगलों से जुड़ी हुई सुविधाओं का परिणाम ही सामाजिक व्यवस्था का आधार ही मानवीय जीवन का आधार रहा है। इससे जंगलों से जुड़ी समस्याओं को वे अस्था का केन्द्र मानते है। पेड़-पौधें उनके देवी-देवता होते हैं। उन्हीं पौधों को देवता समझकर उपासना करते हैं।

जनजातीयों ने वनों का मनचाहा उपयोग किया है। इससे सिद्ध होता हैं कि जनजातीय समाज में जंगलों को लेकर आजादी भरा जीवन रहा है। इन्हीं के परिणाम स्वरूप आजादी के बाद इनका परिदृश्य बदलने लगा। उसी के परिणाम स्वरूप सरकार प्रतिबंध लगाना शुरू किया। वहाँ से ये जनजातीय समुदाय अपने जीवन सुरक्षा और व्यवस्था को लेकर आवाज उठाने लगे।

अंग्रेजी सरकार ने भारतीय जनजातीय समुदाय के लिए जंगलों के इस्तेमाल पर प्रतिबन्ध लगाना प्रारम्भ कर दिया है। उसने उस समय मध्य भारत का गवर्नर था। कहते हैं कि इस वन में जो भी इमारती लकड़ी है। वह राज्य सरकार की है। उसी ने वन नीति 1855 में घोषित करता है। इन इमारती लकड़ी में कोई भी व्यक्ति अपना अधिकार नहीं स्थापित करेगा।

इन्हीं नीतियों को लागू करके सुचारू रूप से संचालन करने के लिए वन विभाग की स्थापना की गई। जिसका सबसे बड़ा अधिकारी महानिरीक्षक वन विभाग हुआ। इसका मूल कार्य वन विभाग की सुरक्षा करना। उसके आर्थिक स्त्रोंतों का दोहन करना। उस जंगल के राजा को जंगल से वंचित कर दिया गया है। उन्हें सरकार के दाया पात्र का एक हिस्सा बना दिया गया है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में मध्यप्रदेश में जनजातीयों की वन नीति का भौगोलिक अध्ययन एक प्रकार से प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के रूप में अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं को भी अध्ययन का माध्यम बनाया गया है। पुस्तकालय के माध्यम से प्राप्त सामाग्री का अध्ययन करते हुए विद्वानों का भी मार्गदर्शन लिया गया है।

उद्देश्य – स्वतंत्र भारत की जनजातीय क्षेत्रों को वन अधिकार के द्वारा प्राप्त नीतियों को कानून अधिकार प्राप्त हुआ। जो संवैधानिक रूप से वन नीति के द्वारा कानूनी आधिकार प्रदान करेंगें –

1. खेती करने के लिए पानी लेने का आधिकार प्राप्त हुआ।
2. खेती करने के लिए कुँऐ खोदने के साथ-साथ नहरे निर्मित करने का अधिकार प्राप्त हुआ। जिससे मानवीय विकास का आधार ही सामाजिक व्यवस्था को निर्मित कर दिया।
3. इन जंगलों में नि:शुल्क पशुओं को चराने में कोई प्रतिबंध नहीं होगा। ऐसे अधिकार जनजातीयों को पशुओं को चारागाह उपलब्ध कराने के लिए नियम अनुवंधित कर दिया गया है।
4. घरेलू या कृषिगत कार्यों के लिए पत्थर और मिट्टी प्राप्त करने का आधिकार प्रदान किया गया है। जिससे अपने जीवन को व्यवस्था घर में रखकर अपनी व्यवस्थाओं को संचालित कर सकें।
5. घरों के निर्माण के साथ-साथ उनकी उन्नति और खेती कर उन जमीन को उपजाऊ बनाया जा सकें। इन उपकरणों के साथ-साथ खेती और लकड़ी की व्यवस्था का आधार उनके जीवन में आने वाली विसंगतियों का परिणाम न हो उनके विचार और अधिकारों का हनन न हो। इस स्थिति में जनजातीय समुदाय का विकास सम्वभव होते हैं।

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** सेवानिवृत्त प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

6. जनजातीय समुदाय को जलाऊ लकड़ी बिनने का अधिकार प्राप्त है।
7. पशुओं को घर बनाने के लिए घास-पूस लेजाने का अधिकार प्राप्त है। यही कारण है की सामाजिक व्यवस्था के अनेक आधार वन ही थे।
8. मछली पकड़ने की सुविधाएं प्राप्त थी। लेकिन सुरक्षित और संरक्षित जानवरों को छोड़कर। वह अन्य जानवारों को अपने जीविकोपार्जन के लिए शिकार कर सकते हैं।
9. जंगल की भूमि पर खेती करने की आवश्यक सुविधाऐं प्राप्त है।

इसके साथ-साथ परिवर्तन की दिशा बदली जिसके परिणाम स्वरूप मानव का स्वरूप ही बदल गया है। यहाँ तक जीवन और सहयोग की भावना इन जनजातीय समुदाय में मिलती हैं।

समस्याऐं :

1. जंगलो से प्राप्त होने वाली सुविधाओं का लाभ जनजातीय समुदाय को नहीं मिलता इसका मूल लाभ सरकार या तो पूँजीपति खाता है। जिसका अधिकार जनजातीय समुदाय को मिलना चाहिए।
2. इन अधिकारों का सही पालन क्या हो पा रहा है?
3. उन्हें यदि अधिकार नहीं दिये जायेगें तब उनके पास क्या बचता है। ऐसी स्थिति में मानवीय संवेदना ही आहत होती है। जिसका शिकार होकर अपनी सामाजिक और संस्कृति दोनों प्रभावित होती है।
4. वन अधिनियम की धारा-4 के अनुसार किसी भी पड़ती भूमि को वन भूमि घोषित किया जा सकता है। जिन्हें बन्दोवस्त करने का अधिकार प्राप्त है। यह वन संरक्षण का अधिकार और साम्यता को आधार बनाया जा सकता है।

समाधान – प्रत्येक मानव की तरह वनवासी समुदाय भी हैं। इन्हें भी आम नागरिकों की तरह सुविधाऐं प्रदान करना सरकार का कर्तव्य है। इन्हीं के परिणाम स्वरूप मानव जीवन का आधार ही उनकी सामाजिक व्यवस्था होती है। यही कारण है की इन्हीं वे अधिकार न मिलने के कारण उपेक्षित है। देश की उन जनजातीयों से भी भारतीय वनवासियों की की पहचान की जा सकती है। यह सबसे बड़ा कार्य मानवीय जीवन का आधार उनका जंगलीय वनस्पतियाँ है। इनके द्वारा ही सामाजिक व्यवस्था का आधार प्रदान करना चाहिए। यहाँ तक विचार और समाज की परिस्थितियों का परिणाम ही मानवीय विचार संतुलित कर देने की कला का नाम ही समाज और राष्ट्र है।उनकी अपनी संस्कृति और वेश-भूषा जरूर किसी-न-किसी रूपों मे पाई जाती है। वहीं से वन्य संस्कृति की पहचान की जाती हैं। यहाँ तक वनवासी समुदाय का यह रूप भी समाजिक दायरे में बधे होने के कारण महत्वपूर्ण माना गया है। यह वनवासी जनजातीयों के कुछ मूलभूत संसाधनों से जाना जा सकता है। उनका विश्वासों समाज और राष्ट्र के लिए कितना औचित्यपूर्ण है। इनका नगरीय क्षेत्र के जनजातीयों से हट कर इनकी संस्कृति जरूर है। जिस प्रकार हम उदाहरण के द्वारा देखते है कि किसी भी देश की संस्कृति और सभ्यता का विकास उनके मूलभूत विश्वासों पर आधारित होता हैं। का परिणाम ही इनकी संस्कृति है।

वनवासी संस्कृति का मुख्य अंग उनकी अद्भुत ज्ञान परम्परा रही है। इससे वन से प्राप्त जानवरों का शिकार करना और उनके मांस को भोजन के रूप में उपयोग करना। वनवासी संस्कृति का पेट भरने का साधन था। इनके कारण उनका लोकनृत्य और सामाजिक व्यवस्था ही जनजातीय संस्कृति का एक आधार रहा है। जिन जानवरों का शिकार किया जाता था, उन जानवारो की खाल का भी उपयोग वस्त्र आदि के रूप में किया जाता था। यहाँ तक उनके छाल का झोला, बनाना आदि। डोलक, तबला, नगरिया, नगारा, इत्यादि इनके वाद्य यंत्र भी हैं। इन जानवरों की छाल बेचना भी उनका एक बहुत बड़ा जीविकोंपार्जन का साधन रहा है। जिस प्रकार से जंगली-चूहा, खरगोश, मोर, कछुआ सांभर, पेडुक, तीतर, शेर, चीतल, बाघ, भालू, मछली इत्यादि का शिकार किया जाता रहा हैं। यही इनकी संस्कृति के महत्वपूर्ण अंग रहे हैं। जिन्हें आज वन नीति ने कानून के दायरे में दोषी सिद्ध कर दिया है।

जीवन का अधिकार – मानव अधिकारों में सबसे पवित्र अधिकार मानव जीवन का का अधिकार है। इसके बिना मानव की कल्पना एक कोरी कल्पना होगी। जहाँ इसका उल्लंघन अपराध की श्रेणी में आता है। जिसकी जिन्दगी का गुजर बसर भी सामाजिक व्यवस्था का आधार प्रदान करता है। यहीं व्यवहार मानवीय संस्कारों का अधिकार प्रदान करता है। जहाँ तक जीवन की गतिविधियों का संसाधन भी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था है। इन्हीं से परिवार का भरण पोषण संभव है। धन ही मानव जीवन की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इन्हीं तथ्यों के रूप में जीवन की अनेक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप जीवन और जगत् को कैसे समझा जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हसनैन, नदीम, 2002, जनजातीय भारत, जवाहर पबलिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, पृष्ठ 200
2. **बी. सी. एवं सिन्हा, पुण्या,** आर्थिक विकाश एवॅं नियोजन, वसुन्धरा, प्रकाशन, गोरखपुर।
3. **महिपाल**, 2002, ग्रामीण पुनर्निर्माण में पंचायत की भूमिका, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रमों, वार्षिक कार्यकारी योजना, 1992-93, जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, जिला टीकमगढ़ (म0प्र0)।
4. भारत में ग्रामीण विकास समस्याऐं एवं ब्यूह रचना, शोध पंत्रिका, अर्थशास्त्र विभाग सीधी, (1997)।
5. **बघेल, डी.एस.,** 1993, नगरीय समाज शास्त्र, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
6. **मिश्र, चन्द्रशेखर,** 1998, राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक, कुरुक्षेत्र वर्ष 28, अंक-11, सितम्बर
7. **यादव, डॉ. चन्द्रशेखर,** 2012, नगरी भूगोल, विश्व भारती पब्लिकेशन नई दिल्ली।
8. **भटनागर ए.बी., भटनागर मीनाक्षी एवं भटनागर अनुराग,** 2005, आर.लाल.बुक डिपो, दिल्ली।
9. **मिश्रा, ए. एण्ड मुखर्जी शेखर**, 1971, पापुलेशन फ्रूड एण्ड लैण्ड इन इक्यूल्टी इन इंडिया, ए ज्योग्राफी आफ नगर एण्ड इनसियोरटी, इलाइड पब्लिसर्च, बॉम्बें।
10. **म. प्र. एवं अध्ययन**, प्रतियोगिता सीरीज 2004, स. 1631
11. **राजपूत डॉ. वी. एस. एवं तिवारी, डॉ आर. पी.,** 2011-12, संसाधन मूल्यांकन एवॅं ग्रामीण विकास ए. पी. एच. पब्लिशिंग नई दिल्ली।

****

इस्लाम में मानवाधिकार तथा मुस्लिम महिलाएँ

डॉ. पूजा तिवारी *

प्रस्तावना – आज मानवाधिकार एक विषय के रूप में और एक मुद्दे के रूप में विश्व भर में वेहद चर्चित है। दुनिया भर की सरकारों ने मानवधिकारों के संरक्षण के लिए अपने-अपने संविधानों में प्रावधान कर रखें हैं। हांलाकि मानवाधिकार के मामले में स्त्री एवं पुरूष दोनों ही समान है, लेकिन यहाँ मुस्लिम औरतों के मानवाधिकार की चर्चा इसलिए की जा रही है, क्योंकि मुस्लिम औरतों के मानवधिकारों का हनन अपेक्षाकृत अधिक होता है, शिक्षा की कमी, परम्परागत कठमुल्लापन का प्रभाव एवं धार्मिक रूढ़ियों के चलते अकसर इन महिलाओं को वो मौलिक अधिकार नही मिल पाते है, जो कानून एवं इस्लाम द्वारा प्रदान किए गए है। यहाँ पर यदि कोई यह कहे कि मुस्लिम धार्मिक किताबों और इस्लाम में ही औरतों को दोयम दर्जे का नागरिक माना जाता है तो यह सरासर गलत सोच है, वास्तव में कुरआन शरीफ वह प्रथम धार्मिक ग्रन्थ है जिसमें आज से लगभग 1400 साल पहले ही औरतों को पुरूषों के बराबर मान लिया गया था। इस्लाम धर्म में विश्वास रखने वाला प्रत्येक व्यक्ति मुसलमान कहालाता है, इस्लाम एक परम्परागत सामाजिक व्यवस्था वाला धर्म है एवं इस्लाम का प्रचार सबसे पहले पैगम्बर मुहम्मद साहब ने अरब में किया था। 'कुरान', हदीस, सुन्न, इजमा और कियास को मुस्लिम विधि का प्राथमिक स्त्रोत माना जाता है, जिसके अनुसार इस्लामिक रीति-रिवाज एवं जीवन पद्धति चलती है।

प्रविधि – इस शोध पत्र में द्वितीय शोध सामाग्री के तथ्यों पर शोधपत्र तैयार किया गया है। इसमें पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से अध्ययन का आधार बनाया गया है।

उद्देश्य :

इस्लाम में मानवाधिकार :

1. जीवन एवं सम्पति की सुरक्षा या जीवन का अधिकार
2. सम्मान के संरक्षण का अधिकार
3. स्वतंत्रता का अधिकार
4. पवित्रता का अधिकार
5. अत्याचार के खिलाफ विरोध करने का अधिकार
6. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
7. संघ की स्वतंत्रता
8. विवेक एवं विश्वास की स्वतंत्रता
9. धार्मिक भावनाओं का संरक्षण
10. जीवन की बुनियादी जरूरतों का अधिकार
11. कानून के समक्ष समानता
12. राज्य के मामलों में भाग लेने का अधिकार
13. उत्तम जीवन जीना का अधिकार
14. कार्य करने की स्वतंत्रता
15. ज्ञान अर्जित करने का अधिकार
16. न्याय, स्वतंत्रता, आदर तथा निष्पक्षता का अधिकार

समस्या – उपरोक्त समस्त वर्णित बिन्दुओं से स्पष्ट है कि इस्लाम में मानवधिकारों का विस्तृत विवरण है, इस्लाम विचारों एवं अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता देता है, किन्तु आलोचना के नाम पर अपमान जनक भाषा की अनुमति नही देता है। पवित्र ग्रन्थ 'कुरान' के अनुसार आस्था के मामले में कोई दबाव नही होना चाहिए। अर्थात इस्लाम प्रत्येक प्राणी को कानूनी सुरक्षा एवं न्याय तथा समानता एवं बधुत्व भाईचारे आदि के माध्यम से उन्नति एवं प्रगति की राह पर चलाना चाहता है। इस्लाम मानवता एवं भाईचारे का संदेश देकर मनुष्य के भीतर की उत्कृष्टता का अहसास करवाता है।

समाधान :

मानवधिकार एवं मुस्लिम औरते – इस्लाम धर्म के प्रवर्तक पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब ने समस्त कुप्रथाओं का विरोध करके समाज को नियत्रित करने के लिए कुछ नियम कायदे बनाए थे, जो आज भी मुस्लिम विधि के रूप में मौजूद है।

उत्ताराधिकार – मुस्लिम औरतों को पति की संपति का उत्ताराधिकार प्राप्त है, यहाँ पर उत्ताराधिकार के नियम वेहद जटिल है।

निकह (विवाह) – मुस्लिम विवाह एक संविदा (अनुबंध) है, जिसमें 'मेहर' की राशि का विशेष महत्व है। मुस्लिमों में औरत की रजामंदी के बगैर विवाह नही हो सकता है। मुस्लिम विधि में बहु विवाह को मान्यता दी गई है।

मुता (अस्थायी) विवाह – इस विवाह की अनुमति केवल प्ररूषों को प्राप्त है, औरतों को नही।

तलाक – मुस्लिम विधि के अनुसार मुस्लिम पुरूषों को तलाम का अधिकार है, यदि किसी प्रकरण में स्त्री तलाक लेती है तो वह 'खुला' कहलाता है एवं मेहर की राशि नही दी जाती है।

मेहर – मेहर वह राशि जो निकाह के प्रतिकूल के रूप में पति हाय पत्नी को दी जाती है।

मुस्लिम विवाह :– विघरन अधिनियम –1939

मुस्लिम महिला (तलाक के अधिकार का संरक्षण) अधिनियम 1986

भरण-पोषण का अधिकार

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर देखे तो मुस्लिम औरतों को उनके मानवाधिकारों से नवाजे जाने की बात चल रही है, ईरान के आज कई महिला संगठन सक्रिय है, इसके अलावा इडोनेशिया, मलेशिया सहित अन्य मुस्लिम देशों में आज मुस्लिम औरते जागरूक हो रही है। और वो कुरान शरीफ में दिए गए अधिकरों की मांग कर रही है, क्योंकि कुरानशरीफ के अनुसार महिला एवं

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

पुरूष दोनों समान है, सभी अल्लाह की संताने है एवं लिंगीय समानता के पक्षधर है।

निष्कर्ष – इस प्रकार से कहा जा सकता है कि इस्लाम की तरफ से औरतों को वे सभी अधिकार प्रदत्त है जो पुरूष को है, किन्तु कट्टर पंथियों समाज के ठेकेदारों द्वारा औरतों के प्रति नकरात्मक विचार रख कर उन्हें उन अधिकारों से वंचित रखा गया है। भारतीय उपमहाद्वीप के भारत, पाकिस्तान, बंग्लादेश में औरते आज भी रूढ़ियों एवं परंपरा से जकड़ी हुई है, हालांकि भारतीय मुस्लिम औरतों की स्थिति अन्य देशों से काफी अच्छी है, लेकिन फिर भी सुधार की गुंजाइश है। वर्तमान में तथ्य यही है कि पाकिस्तान हो या बंग्लादेश वहा मुस्लिम औरते आज भी मध्ययुगीन काल में जी रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सिंह डॉ0 निशांत – मानवाधिकार एवं महिलाएं राधा पब्लिकेशन्स दिल्ली ISBN 7487-5821
2. माहा अकील – मुस्लिम औरते एवं मानवाधिकार इन्टनेट
3. हसनैन रिफत – इस्लाम में मानवधिकार – इन्टरनेट
4. कौसर याजदानी – इस्लाम और औरत
5. हसनैन नदीम – समाजशास्त्र

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Limnological Status And Aquatic Planktonic Biodiversity Of River Tapti At District Burhanpur, Madhya Pradesh, India

Prof. Iftekhar A.Siddiqui * Dr. Suchi Modi **

Abstract - The diversity of various types of plankton like phytoplankton and zooplankton were studied for river tapti near Burhanpur in M.P. The plankton were collected by a standard planktonnet from three different sites of River Tapti. The phytoplankton were represented by Bacilariophyceae , Chlorophyceae , Cynophyceae and Euglenophyceae, out of which genetics diversity of Bacilariophyceae was more. The zooplankton were identified in various Phyla like Protozoa, Helminthes, Rotifera, Annelida, Arthropoda etc. Diversity of Arthropods was highest. The percentage composition of various groups was calculated for the samples taken from different sites . The composition of plankton as percentage representation was correlated for different sites with sites characteristics. On the basis of different physico-chemical and biological parameters , the status of River Tapti is eutrophic in nature and during period under study 12 fish species, 42 phytoplanktons (15 Bacilariophyceae , 18 Chlorophyceae , 09 Cynophyceae) and 32 Zooplanktons (10 Rotifera, 03 Crustacea, 11 Protozoa, 06 Copepoda, 02 Ostracoda) Genera have been recorded.
Keywords - Limnology, Phytoplanktons, Zooplanktons, Tapti River, Burhanpur M.P. , India.

Introduction - The Tapti is also one of the sacred rivers of India. Amongst its various names tapti, payoshni, Tapti and Tapti are more commonly known. All these names can note one and the same meaning the Copler of the tap, meaning heat. The general direction of the river in nimar (East) is from north-east to south-west.it enters east Nimar at a distance of 120 mile (193km) from its sources.

The diversity of various types of plankton like phytoplankton and Zooplankton were studied for river Tapti near Burhanpur in M.P, India. Planktons are poor swimming but most drifting small organism that inhabit called the water column of ocean and fresh water bodies the name comes from the Greek term , plankton-meaning “wanderer” and drifter plankton is composed of tiny plant called Phytoplankton and animal called Zooplankton, as well as organism that are not easily classified in to those two groups (such as protozoa and bacteria), Planktonic organism are suspended in water and are also small fat even slight current move them about, the occurrence and abundance of Zooplanktons depend on its productivity, which in turn is flow by abiotic factors and the level of nutrients in the water. In a fresh water system, the Zooplanktons from and important faunal group , are most of them life on primary producer and make them selves available to be eat in by higher organism IN FOOD chains including fish and contribute significantly to the biological productivity of this ecosystem (Michael 1973). The Phytoplankton are the primary producers as they trap solar energy and produces organic molecules by consuming CO2 , phytoplankton are not only primary producers but also brings out biogenic oxygenation of the water during they time Welch,Wetzel,1975,1983).

I.Map. No.01-04: Maps showing study area of River Tapti at District Burhanpur, M.P., India.

*Principal, S. G. J . Quadariya College, Burhanpur (M. P.) INDIA
** Guide, Department Of Botany, Rabindra Nath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA

District Burhanpur is located between 21° . 21.05 - 21°.37 N Latitude and 75°.13 - 76° E Longtitude in Madhya Pradesh. Tapti is one of the major perennial rivers flowing towards west coast of india is an important sources of fresh water to this region. The 720km. Long River originates near Multai in the Betul District of

Madhya Pradesh .The Selected study sites in Tapti River are Bhat kheda , Jainabad, Dariyapur kalan, looking to the importance of subject as research Topic " **Limnological Status And Aquatic Planktonic Biodiversity Of River Tapti At District Burhanpur, M.P. , India"** has been undertaken.

Image .No.01: Burhanpur: The cultural heritage city

Image No.2: Surva putri originates (source-multai, near betul) and Burhanpur Dist. Of M.P.

Materials And Research Methodology
Experimental Work
Sampling sites, culture, observation -

Planktonic study is carried out seasonally, for which sampling were done 3-4 times in a month and in each day 3 times sample were taken. In each study site sample taken from 3 places.(The selected study sites in Tapti river are Bhatkheda, Jainabad, Dariyapur Kalan.) sample taken from 2m. Depth below the surface water.

Sampling site 1st

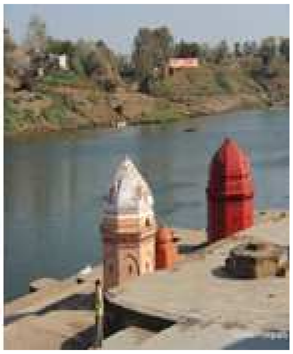

Sampling site 2nd

Biological Estimation

1. The plankton samples are collected following lind (1979,Welch 1953), Welzel (1975) by filtering 40 liters of water through plankton not having pure size 64 u. concentration plankton samples are fixed in 4%formalin.
2. Zooplankton are identic with the help of keys provided by pennak (1978), sehgal (1083), Needham and (1962), tonapi (1980), A.P.H.A.(1980) .
3. The phytoplankton will identify with the help of keys given by press cott (1962), smith (1950). Agarkar (1975), edlnondson (1959).

Sampaling site 3rd

Counting of the individual plankton will be done by "lac keys" dropping method (1935) using the formula.

$$\text{Plankton units /liter} = \frac{N \times C \times 10}{Y}$$

N =Number of phytoplankton counted 0.1 ml concentrate.
E = Total volume of concentrate in ml.
Y = total volume of water filtered for sample in liters

The phytoplankton density was expressed on units / liter and

Zooplankton density will expressed in individuals / liter.

During the period of study the range of variation in different physico-chemical parameters is as:

S.	Parameter	Tapti River
1	PH	7.4-9.4
2	Water Temperature	12-226 c
3	Transparency	20-60.0 cm
4	Dissolved Oxygen	2.2-11.6 mg/Lit.
5	Free CO2	Nil-18.0 mg/Lit.
6	Alkality	120-270 mg/Lit.
7	Total Hardness	100-220 mg/Lit.
8	Chloride	28-90.4 mg/Lit.
9	B.O.D.	8.0-26.3 mg/Lit.
10	Nitrate	0.6-2.2 mg/Lit.

On the basis of the observations that Tapti River are entropic in nature.

Result & Discussion - Among the phytoplankton chlorophyceae species.Cynophyceae species, bacillariophyceae species and Euglenophyceae species were recorded from the Tapti River during sep. 2015 to feb.2016. Monthly variation was recorded among phytoplankton. Half yearly average percentage composition of various groups of phytoplankton at different sites was studied.

Figure No.4: Types of Phytoplankton and Zooplanktons in sampling sites

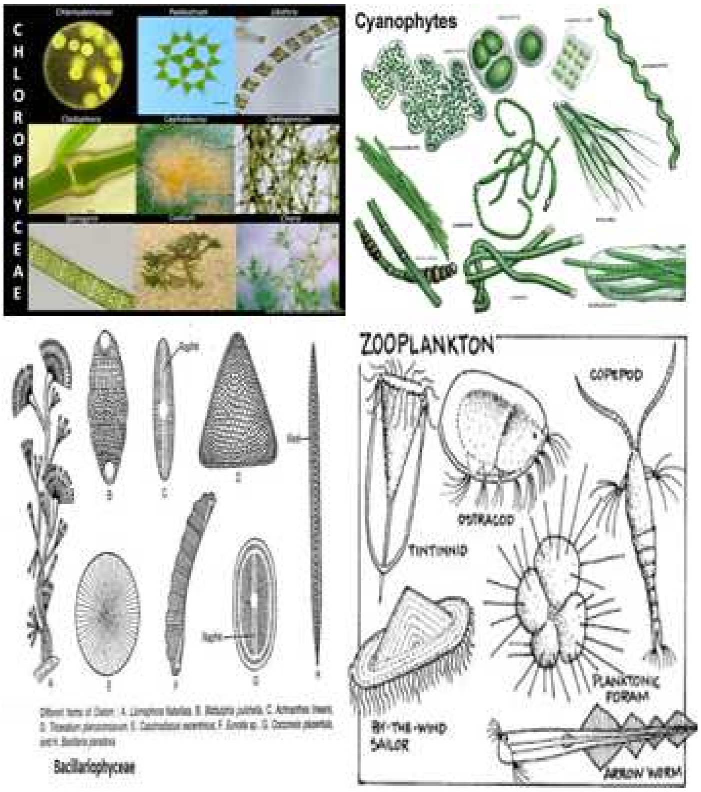

At site 1st bacillariophyceae and Euglenophyceae were dominant with 30%contribution of each group, at site 2nd chlorophyceae and Euglenophyceae with 35 %of each group were recorded and planktoic from representing chlorophyceae and Cynophyceae species were 30%each recorded from site 3rd. At site 3rd, second dominant group was bacillariophyceae about 25%. Seasonal variation in the amount of Euglenophyceae may be related to the influence of biotic factors (manoj, 1993). From unpolluted sites of several rivers of India, it has been observed that bacillariophyceae was dominating followed by the dominance of chlorophyeeae. Similar observation has been recorded for four sampling sites also.

Protozoa and rotifer Zooplanktons were of nearly equal composition but arthropod more in percent composition at site 2nd whereas, other groups were protozoa and rotifers in decline manner. At site 3rd protozoa and rotifers were more in number as this site has less impact as well as less turbidity.

The diversity and density of Zooplankton certainly get influenced by the physic chemical properties of water (onshore et,ak,1997)m that the density of Zooplankton remains more in the lower reaches of the rivers and very less density as well as diversity of Zooplanktons community has been reported from head water and first and second order streams. Further it is a fact that the diversity of Zooplanktons is always less in the flowing fresh water compared estuarine water or tidal influenced zone . The similar observation has been recorded for river like Narmada, Tapti, mahi and Sabarmati (Sharma, 1995. Nanda 2003).

Figure No.5 Aquatic Flora(Flowering Plants) in Tapti River At Burhanpur, M.P., India

IMAGES Ist – PHYTOPLANKTONS (GENERA OF CHLOROPHYCEAE 1 to 18)

Fig.no-01 CHLORELLA

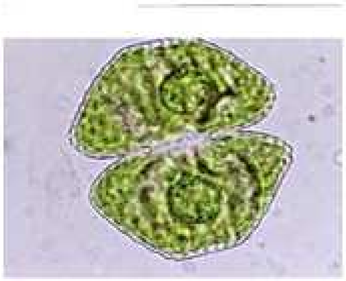

Fig.no-02 COSMARIUM

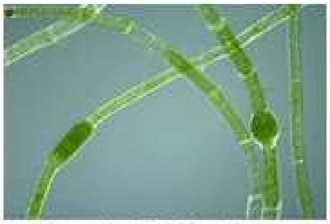
Fig.no-03 OEDOGONIUM

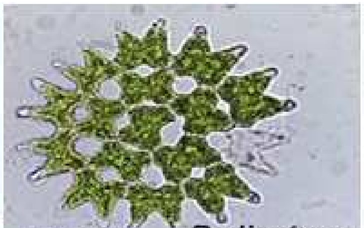
Fig.no-04 Pediastrum

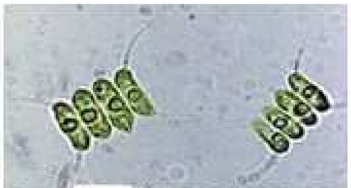
Fig.no-17 Scenedesmus

Fig.no-18 VOLVOX

Fig.no-05 SCENEDESMUS

Fig.no-06 CHLAMYDOMONAS

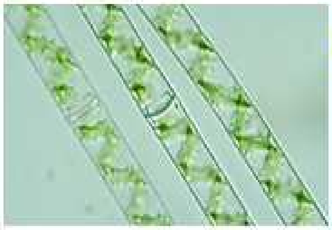
Fig.no-07 SPIROGYRA

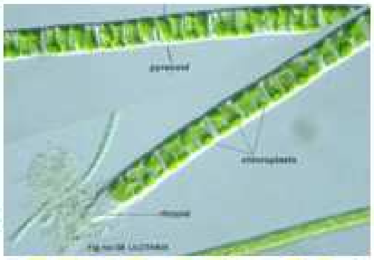

Fig.no-09 Hydrodiction

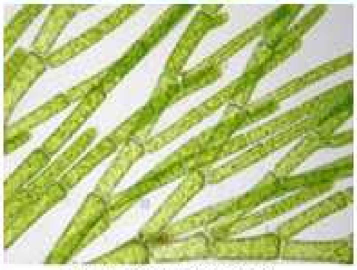
Fig.no.10 CLADOPHORA

Fig.no-11 CHLOROCOCCUM

Fig.no-12 MICROSPORA

Fig.no-13 DESMIDIUM

Fig.no-14 CHARA

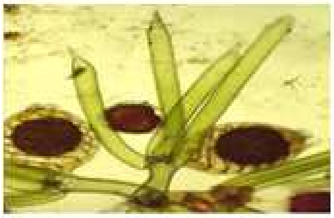
Fig.no-15 NITELLA

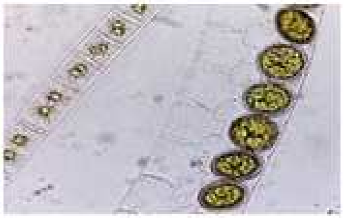
Fig. no- 16 ZYGENEMA

Phytoplanktons = 42 Genera

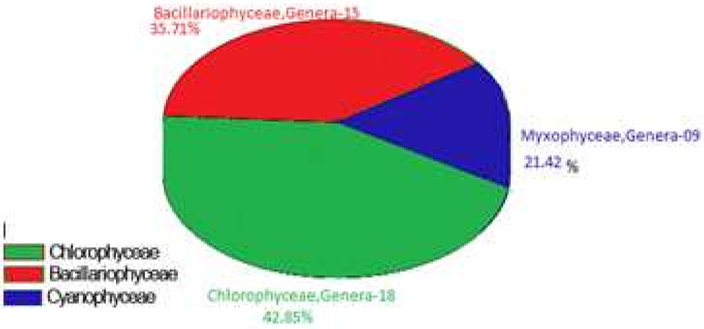

Fig.no- Available Classes Of Phytoplanktons

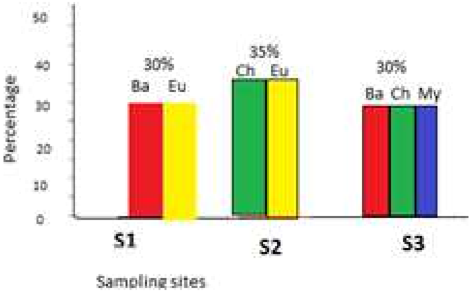

Abbreviations:
ph= phytoplankton,ch=chlorophyceae,Ba=bacillariophyceae,Eu=Euglinophyceae, My=Mixophyceae,S1=Sampling site Ist ,S2=Sampling site IInd,S3=Sampling site IIIrd

Graph-no- Showing Phytoplanktons at s1,s2,s3, of River Tapti.

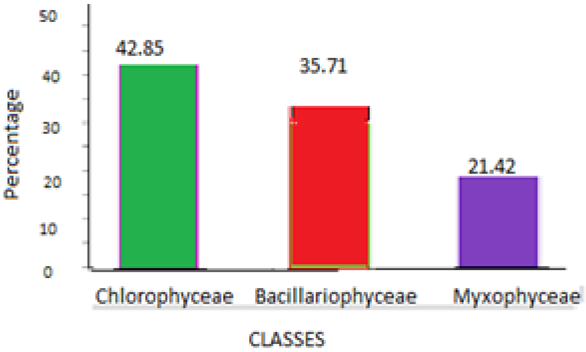

Graph-no- Showing Minimum & Maximum Dominant Classes of Phytoplanktons (Dominant Class-I-Ch,class-II-Ba)

IMAGES IInd – PHYTOPLANKTONS (GENERA OF BACILLARIOPHYCEAE 1 to 15)

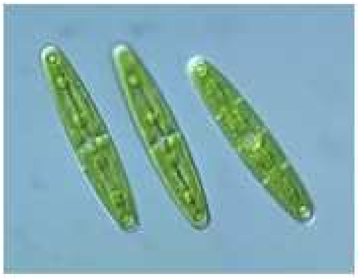
Fig.no-01 - NAVICULA

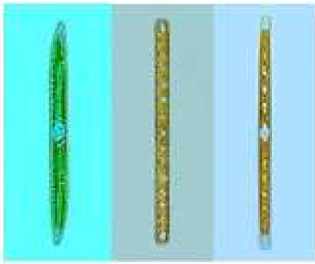
Fig.no-02 - NITZSCHIA

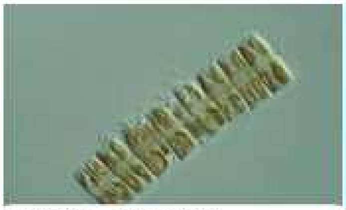
Fig.no-03 FRAGILARIA

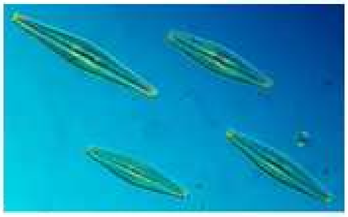
Fig.o-04 CERATONEIS

Fig.no-05 AMPHORA

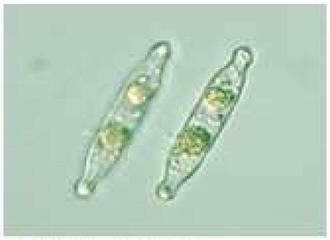
Fig.no-06 CALONEIS

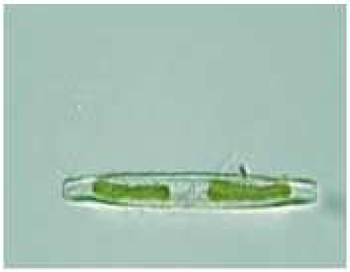
Fig.no-07 Synedra

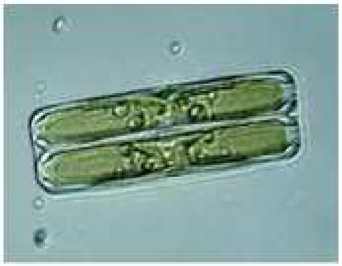
Fig.no-08 DIATOMS

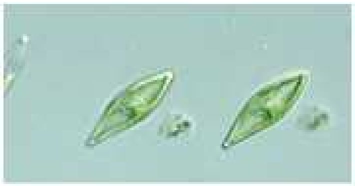
Fig.no-09 GOMPHONEMA

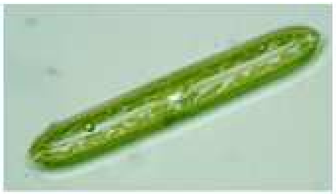
ZFig.no-10 PINNULARIA

Fig.no-11 MELOSIRA

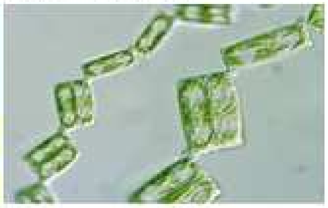
Fig.no-12 TABELLARIA

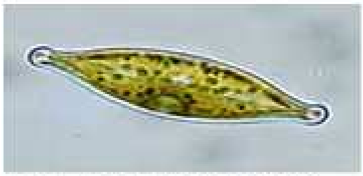
Fig.no-13 DENTICULA

Fig.no-14 CYMBELLA

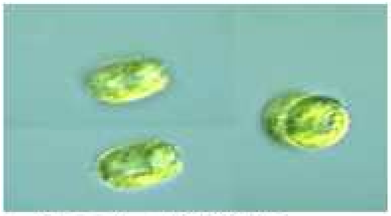
Fig.no-15 CYCLOTELLA

IMAGES IIIrd – PHYTOPLANKTONS (GENERA OF Myxophyceae 1 to 09)

Fig.no-01 ANADAENA

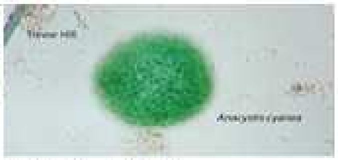
Fig.no- 02 ANACYSTIS

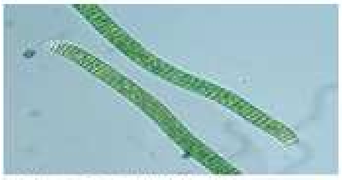
Fig.no-03 OSCILLATORIA

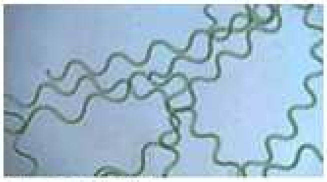
Fig.no-04 SPIRULINA

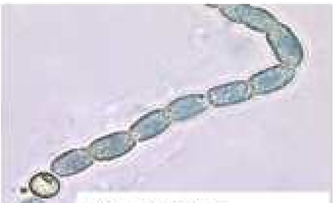
Fig.no-05 NOSTOC

Fig.no-06 RIVULARIA

Fig.no-07 APHANIZOMENON

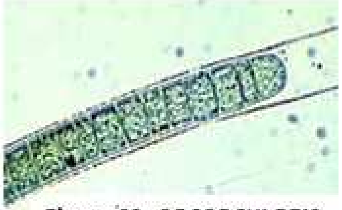
Fig.no-09 COCCOCHLORIS

Fig.no-09 PHORMIDIUM

IMAGES Ist – ZOOPLANKTONS, (GENERA OF ROTIFERA 1 to 10)

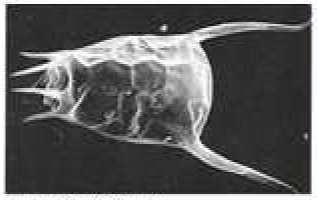
Fig.no-01 KERATELLA

Fig.no-02 ROTATORIA

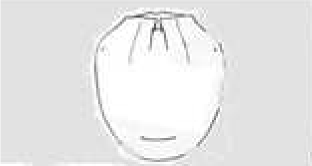
Fig.no-03 TESTUDINELLA

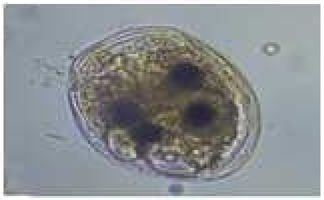
FIG.NO.04 ASCOMORPHA

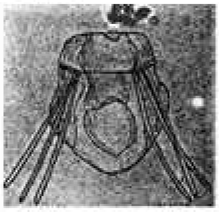
Fig.no-05 POLYARTHRA

Fig.no-06 PHILODINA

Fig.no.07 ASPLAPLANCHNA

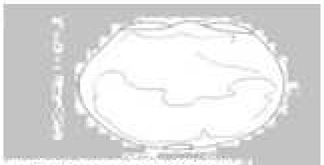
Fig.no-08 POMPHOLIX

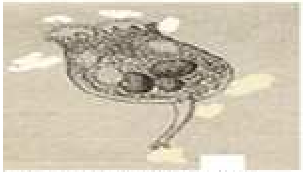
Fig.no-09 BRACHIONUS

Fig.no-10 TRICHOCERA

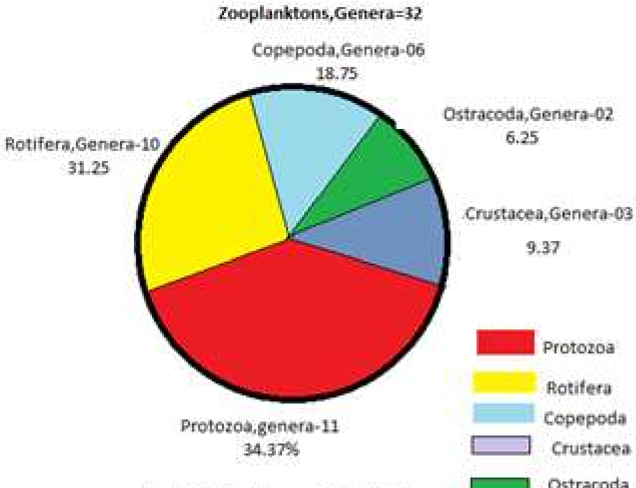

Fig.Available classes of Zooplanktons

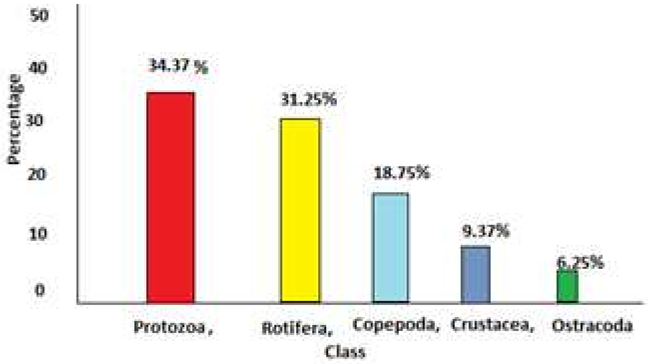

Graph no- Showing minimum & maximum dominant classes of zooplanktons

IMAGES II-nd – ZOOPLANKTONS, (GENERA OF PROTOZOA 1 to 11)

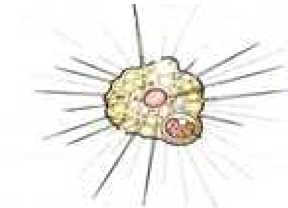
FIG.NO.01 ACTINOPHRYS

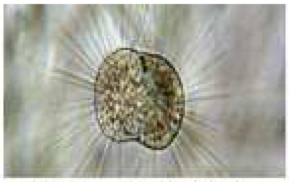
FIG.NO.02 ACTINOSPHAERIUM

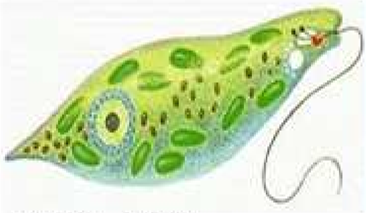
FIG.NO.03 EUGLINA

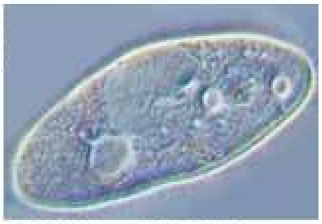
FIG.NO.04 PARAMECIUM

FIG.NO.05 PERIDINIUM

FIG.NO.06 CAMPENELLA

FIG.NO.07 EPISTYLIS

FIG.NO.08 VORTICELLA

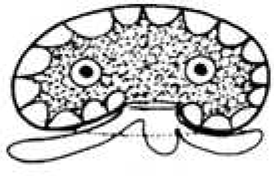
FIG.NO.09 ARCELLA

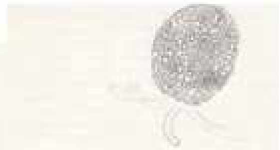
FIG.NO.10 DIFFLUGIA

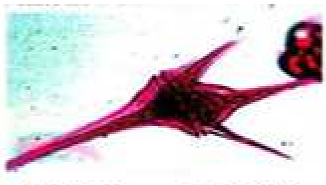

FIG.NO.11 CERATIUM

IMAGES III-rd – ZOOPLANKTONS, (GENERA OF CRUSTACEA 01 to 03)

FIG.NO.01 EUBRACHIOUNUS

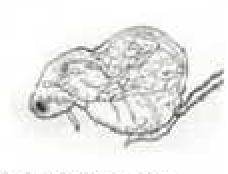

FIG.NO.02 MOINA

FIG.NO.03 NAUPLIUS

IMAGES IV – ZOOPLANKTONS, (GENERA OF OSTRACODA 01 to 02)

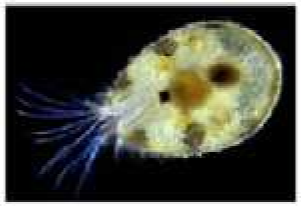

FIG.NO.01 CYPRIS

FIG.NO.02 STENOCYPRIS

IMAGES V – ZOOPLANKTONS, (GENERA OF COPEPODA 01 to 06)

FIG.NO.01 CYCLOPS

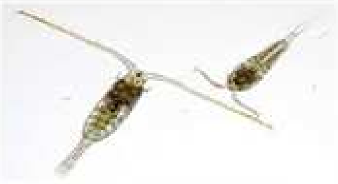

FIG.NO.02 DIAPTOMUS

FIG.NO.03 DAPHNIA

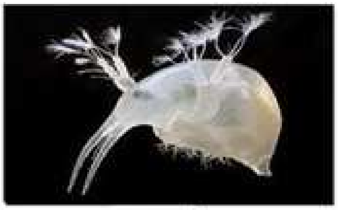

FIG.NO.04 BOSMINA

FIG.NO.05 HELOBDELLA

FIG.NO.06 NAUPLIUSTAGES

Table No.1 (See in last page)

Figure 6 Type of Fauna (Fishes) in Tapti River at Burhanpur,M.P.,India.

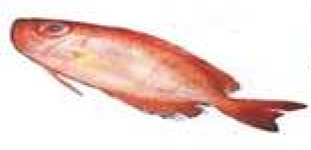

GOLI

BAM

KATLA

KEKDA

DUKE

ROHU

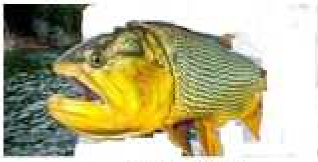

PARAN GEDHRA

prawn

SAWAL

SIGHARA

Conclusion - On the basis of different physico-chemical and biological parameters , the status of River Tapti is eutrophic in nature and during period under study 12 fish species, 42 phytoplanktons (15 Bacilariophyceae , 18 Chlorophyceae , 09 Cynophyceae) and 32 Zooplanktons (10 Rotifera, 03 Crustacea, 11 Protozoa, 06 Copepoda,

02 Ostracoda) Genera have been recorded . In future with increasing human interference at the same rate, it is possible that the River Tapti will further be polluted. Therefore further studies need to be undertaken to suggest restorative measures , which are of great – socio – economic importance to the region. The current prevailing condition of physico chemical parameters of River Tapti and Aquatic diversity besides acting as potential bio indicators of tropic status requires the management strategies for the conservation of River Tapti at District Burhanpur, Madhya Pradesh, India. (see Table No.1)

Acknowledgements - Most humbly I express my profound sense of gratitude to my esteemed supervisor Dr. Suchi Modi (Bio.Science . Dept. campus AISECT UNIVERSITY, Bhopal, M.P.) and Co-supervisor Dr. Taiyyab Saifee suggesting me this topic and her/his excelled and intellectual guidance and excellent supervision. Graciously I render my sincere thanks to him/her for providing all the necessary guidance and things, laboratory and library facilities.

I take this as an golden chance to express my deep depth of regards to Dr. Sangeeta Jauhari (Faculty management and convenor-Research Programme, AISECT UNIVERSITY, Bhopal, M.P.) for giving all the encouragement and guidance , support and keen attention that you have given us during the study and the prosecutions of the Ph.D course work.

It is my moral obligation to offer my thanks to all the members of the staff of AISECT UNIVERSITY, Bhopal, M.P.

I am also grateful to the worthy members of the management of Saifee Golden Jubilee Qudaeria College, Burhanpur (M.P.) (Quaderia Educational and cultural Society, Burhanpur) for permitting me to carry out these studies.

I am also grateful to Director Prof. M.H.Saleem and Pricipal Prof. (Dr.) M.I.R.Khan, Prof. Shaikh Mohammad (H.O.D),Dr. Shakil Ahmed, Dr. R.K.George S.G.J.Q. College, Burhanpur for providing research and library facilities, help and co-operation during my research work. The co-operation extended by all my friends and well wishers is gratefully acknowledged.

References :-

1. **APHA(1991):** standard methods for the examination of Water and Waste Water, American public Health association, Inc. New York. 18th Ed.
2. **C E P F., 2010-2011,** Fresh water biodiversity assessments in the western ghats.
3. **Campbell,C.A. and white. B.S. 2010 U S G S(science for a changing world) leetown science center ,** Aaquatic biodiversity conservation:an aquatic gap analysis for the Delaware river basin.
4. **Dhanapathi M.V.S.S.S. (1959):** Fresh water biology. 2nd (2003) Rotifer from Andhra Pradesh, India-III Hydrobiologia , 48 (1): 9-16.
5. **Edmondson W.T. (1959):** Fresh Water biology 2nd Ed. John Wiley and sons, New York, U.S.A.
6. **Fouzia Ishaq and khan amir 2013,** Aquatic biodiversity as an ecological indicators for water quality criteria of river Yamuna in Doom valley, Uttrakhand , India.(world journal of fish and marine sciences 5(3) pp. no. 322-334,2013.
7. **Govt . of western Australia, home , sustainability and Environment : 2016:** Aquatic biodiversity.
8. **Hutchinson G.E.(1967):** A treatise on Limnology , volume II. Introduction to lake Biology and the Limnoplankton. Wiley , New York. 1115 spp.
9. **khanna D.R. bhutani R. matta G ,singh v, and bhaduriya G ,2012** , Study of planktonic diversity of river ganga from devprayag to roorkee ,uttrakhand (india),Environment conservation jouranal 13 (1 and 2) pp no 211-217, 2012.
10. **kripal S.V, mir A.A. bhawsar A. and vyas v : 2014 :** Assessmentof fish assemblage and distribution in bahra strem in narmadabasin (central, India), (international journal of advanced research (2014) vol-2, issue-1, pp. no -888-887.
11. **Kadam S.S. and Tiwari L.R.(2012):** Zooplankton composition in Dahanu creek – west coast of India, Research Genera of Recent sciences I (5) , 62-65.
12. **LOUIS A. helfrich ,Richard j . neves and james parkhurst 2009 ,** Sustaining America'sAquatic biodiversity , Virginia Teeh (invent the future) Virginia state . peterstong 2009.puplication pp. no 420-520:
13. **Mary alkins –koo' and sharda suru jdeo –mahajan 7,** Life science West Indies ,st augusline ,trihidad :international journal , pp. no 01-15: waterresources and aquatic biodiversity conservation : A Role for Ecological assessment of rivers in trihidad and Tobago.
14. **New site currently under development combining Biotechnology and sciences 2014 ,** Learning Hubs with a new look and new functionality side havigation, published , 19 march 2014: RIVER ECOSYSTEM.
15. **Praveen tamot and ashu awasthi ,2012 ,** An approach to evaluate fish (fauna)diversity and imnological status of sewage fed urbenlake (shahpur) ,Bhopal , India (international journal of theoretical andapplied science 4(1) : 20-22(2012) ISSN NO (print :0975-1718).
16. **Patole s.s,2014 ,** Ichthyo faunal diversity of nandurbar district (north west khandesh region) of Maharashtra (India) .(International journal of fishes and aquatic studies 2014 ;2 (2) :pp .no 167-172.
17. **Sharma, s.k., and s.v. sai prasad 2009 ,** Academic world(international) ,add –I, PP. NO 273-203.agriculturally important : microorganisms.
18. **Tewari G . and bisht 1991 ,** Aquatic biodiversity : threats and conservation , aquafind , responsible E & P .aquatic fish data base est. 1991.

Table No.1 Biostatistical Estimation of species diversity

S.	Types of Planktons	Group & Genera	Name of Genera	Total result
I	Phytoplanktons (see image no.01-03) +Graph	Chlrophyecac , 18 (see image no.01)	Chlorella, Cosmarium, Oedogonium, Pediastrum, Scenedesmus,Chlamydomonas,Spirogyra, Ulothrix, Hydrodictyon, Cladophora, Chlorococcum, Microspora, Desmidium, Chara, Nitella, Zygenema, Syndesmus and Volvox	42
		Bacillariophyecac, 15(see image no.02)	Navicula, Nitzschia, Fragilaria, Ceratoneis, Amphora, Caloneis, Synedra, Diatoms, Gomphonema, Pinnularia, Melosira, Tabellaria, Denticula, Cymbella and Cyclotella.	
		Myxophyceac, 09(see image no.03)	Anabaena, Anacystis, Oscillatoria, Spirulina, Nostoc, Rivularia, Aphanizomenon, Coccochloris and Phormidium	
II	Zooplanktones (see image 01-03)+Graph	Rotifera, 10(see image no.01)	Keratella, Rotatoria, Testudinella, Ascomorpha, Polyarthra, Philodina, Asplanchna, Pompholix, Brachionus and Trichocera.	32
		Crustacea,03 (see image no.03)	Eubrachiounus, Moina, Nauplius	
		Protozoa, 11 (see image no.02)	Actinophrys, Actinosphaerium, Euglena, Paramecium, Peridinium, Campenella, Epistylis, Vorticella, Arcella, Difflugia, Ceratium.	
		Copepoda 06 (See image no.04)	Cyclops, Diaptomus, Daphnia, Bosmina, Helobdella and Nauplius- stages	
		Ostracoda 02 (See image no.05)	Cypris and Stenocypris	
III	Aquatic flowering plants	Dicots 48 Monocotes, 33	48 33	81
IV	Types of fishes	Fishes, 12	Carcinus sp.(Crab), Catla catla (Catla), Labeo boggut(Goryo/ger), Mastacembelus pancalus(pancalus), Palaemon sp (Smallprawn), Chonnamarulius(Marulius), Notopterus notopterus (Patola/ patoda), Wallago attu (Padin), Mastacembelus-armatus (Mastacemblus), Labeo-rohita(Rohu/rav), Heteropneustus-fossilis(Singhar), Silonia silondia(Seland)	12

****

डॉ. रघुवीरसिंह का मालवा के क्षैत्रीय इतिहास लेखन में योगदान

शांता मण्डलोई *

प्रस्तावना – भारत के नाभि स्थल कहे जाने वाला क्षेत्र मध्यभारत मालवा-निमाड़ में अवस्थित है। यह क्षेत्र क्षेत्रीय इतिहास एवं अनुसंधान तथा लेखन में महत्वपूर्ण है। वर्तमान मालवा का यह क्षेत्र मध्यप्रदेश के इन्दौर, उज्जैन तथा भोपाल संभाग में स्थित है। दूसरी और यह प्राचीनकाल में राजस्थान के झालावाड़ के अधिकांश भाग मालवा क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित थे।

मालवा का यह क्षेत्र जिन सांस्कृतिक भाषयिक अंचलों में विभाजित किया जा सकता है उनमें केन्द्रीय मालवा, उमठवाड़ा, सौंधवाड़ा, रजवाड़, डगेसर तथा निमाड़ प्रमुख है।[1]

मालवा की सीमाओं का समय-समय पर राजनीतिक आधार पर परिवर्तन होता रहा है। सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से मालवा की लोक परम्परागत सीमाएँ निम्नानुसार रही है-

इत चम्बल, उतबेतवा, मालवसीम सुजान।
दक्षिण दिसि है नर्मदा, यह पुरी पहचान।।[2]

मध्यभारत के मालवा क्षेत्र के इतिहास लेखन एवं अनुसंधान में कई इतिहासकारों, विद्वत्तों का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रस्तुत शोध पत्र में मध्यभारत के महान इतिहासकार डॉ. रघुवीरसिंह का क्षेत्रीय इतिहास लेखन एवं अनुसंधान का अध्ययन किया गया है।

रघुवीरसिंहजी का जीवन परिचय – डॉ. रघुवीरसिंहजी का जन्म 23 फरवरी 1908 ई. को सीतामऊ रियासत की आपातकालीन राजधानी ग्राम लटूना के राजमहल में हुआ था। जो वर्तमान में यह स्थान म.प्र. के मन्दसौर जिले में स्थित है। इनकी प्रारंभिक शिक्षा राजमहल में ही हुई। हाईस्कूल की शिक्षा सीतामऊ में स्थित श्रीराम हाईस्कूल में हुई। तत्पश्चात् बी.ए. की परीक्षा, इन्दौर में होकर कॉलेज से पास की एवम् 1930 में एल.एल.बी. की उपाधि आगरा विश्वविद्यालय से प्राप्त की तथा 1933ई. में एम.ए. इतिहास की उपाधि प्राप्त की थी। इसके पश्चात् निरंतर अध्ययन-अध्यापन का कार्य जारी रखते हुए 1936ई. में आगरा विश्वविद्यालय से प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. सर जदुनाथ सरकार के निर्देशन में **'मालवा इन टूरजिशन'** इतिहास विषय पर डी.लिट् की उपाधि प्राप्त की है। डी.लिट. की उपाधि करने वाले वह पहले विद्यार्थी रहे है। इसी डी.लिट् के ग्रन्थ को हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद द्वारा 1945 ई. को **'मंगलाप्रसाद'** पारितोशिक प्रदान किया गया था। वर्ष 1954 में डॉ. रघुवीरसिंह के ग्रंथ **'पूर्व आधुनिक राजस्थान' (1527-1947)** को उत्तरप्रदेश सरकार ने विशेष पुरस्कार प्रदान किया था।3 इस प्रकार डॉ. रघुवीरसिंह इतिहास के महान विद्धान थे। इनका कई क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान रहा है।

इतिहास लेखन एवं अनुसंधान में योगदान – डॉ. रघुवीरसिंहजी इतिहास के क्षेत्र में महान इतिहासकार थे। वे मध्यकालीन व उत्तर मध्यकालीन भारत के इतिहास में उनका विशेष योगदान रहा है। साथ ही आने वाली पीढ़ियों के शोधकर्ताओं हेतु मुख्य आधार स्तंभ एवं प्रेरणादायक रहे है। भारत के उपलब्ध प्रतिष्ठित इतिहासकारों में उनका अपना एक विशिष्ठ स्थान था। शोध की नई पीढ़ी और इतिहास अध्येताओं के लिए तो वे विश्व कोष थे। इतिहास लेखन का उनका अपना एक मौखिक दर्शन था। डॉ. साहब ने इतिहास के कई ग्रंथ लिखे है जिनमें उनी महत्वपूर्ण कृति **'पूर्व आधुनिक राजस्थान है'** इसके अतिरिक्त **'दुर्गादास की जीवनी'** रतलाम का प्रथम राज्य, मालवा का ट्रांजिशन तथा इसका हिन्दी रूपान्तरण **'मालवा में युगान्तर'** डॉ. रघुवीरसिंहजी का राजस्थानी शासको की गतिविधियों, उनका मालवा से संबंध, मुगल राजपूत संबंध, राजस्थानी शासकों की मालवा नीति, उनका मुगल तथा मराठों से संबंध आदि पर विशेष संकलन है।

नवीन खोजों पर आधारित उनके ग्रन्थ **'पूर्व मध्यकालीन भारत'** जो दिल्ली की सल्तनत कालीन मुसलमानी सल्तनत के उत्थान, विकास एवं पतन को नये ढंग से लिपिबद्ध किया है। इसके अलावा **'मालवा के महान विद्रोहकालीन अभिलेखन'** उनका एक ऐसा ग्रंथ है जो 1857 के महान विद्रोह की घटनाओं पर प्रकाश डालते है।

डॉ. रघुबीरसिंहजी इतिहास के ग्रंथों की रचना में माहिर थे ही ऐतिहासिक स्त्रोतों के संकलन, सम्पादन एवं अनुवाद करने का कार्य भी व्यवस्थित किया है। उनके द्वारा सम्पादित मौलिक ग्रंथों में शाहजहॉनामा, जहांगीरनामा, फूतूहात-इ अलमागिरी, हिस्ट्री ऑफ जयपुर, औरंगजेब का हिन्दी अनुवाद, विभिन्न शोध पत्रों अकबरकालीन विभिन्न केशवदास, मध्यकालीन मंदसौर में हुई भारतीय इतिहास की कुछ निर्णायक घटनाऐं, मराठों शासकों, रामपुरा क्षेत्र वहां का चन्द्रवत राजवंश, झाबुआ राज्य और बोलिया बखर, होलकर का नमक हराम बख्शी- भवानीशंकर , मुहम्मद तुगलक का राजधानी परिवर्तन आदि विभिन्न शोध पत्रों के माध्यम से डॉ. रघुबीरसिंहजी ने मध्यकालीन मालवा के क्षेत्रीय इतिहस को एक नवीन आयाम दिया हैं।

सेमीनारो तथा शोध संगोष्ठियों में डॉ. रघुबीरसिंह का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। इतिहास विषय के सेमीनारों व संगोष्ठियों में अग्रणी रहते थे। इतिहास विषय के सेमीनारों व संगोष्ठियों में अग्रणी रहते थे। कई सेमिनारों में वे अध्यक्षता करते थे तथा उनके सुझावों को स्वीकार कर लिया जाता है। कुछ सेमिनारों में डॉ. साहब की अध्यक्षता का विवरण निम्नानुसार है :-

1. 1956 में डॉ. रघुबीरसिंहजी ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के ग्वालियर अधिवेशन में अध्यक्षता की।
2. 1979 में मध्यप्रदेश इतिहस परिषद जबलपुर के वार्षिक सम्मिलन में अध्यक्ष।

*शोधार्थी (इतिहास) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

3. 1979 में राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस चौपासनी (जयपुर) अधिवेशन में अध्यक्षता।
4. 1956-57 में संयुक्त राष्ट्र संघ के 11वें अधिवेशन में भारतीय प्रतिनिधित्व मण्डल के सलाहाकार के रूप में भाग लिया था।[4]

क्षेत्रीय इतिहास लेखन में डॉ. रघुबीरसिंह का श्रीनटनागर शोध संस्थान में योगदान – डॉ. रघुबीरसिंहजी के पास इतिहास से संबंधित विभिन्न अमूल्य ग्रंथों, दस्तावोजों तथा पाण्डुलिपियों का दुर्लभ व्यक्तिगत संग्रह था। उसी संग्रह के आधार पर ही उन्होंने 1936 में सीतामऊ राजमहल में डॉ. साहब ने **'रघुबीर लायब्रेरी'** की स्थापना की। उनके ग्रंथालय में फारसी, राजस्थानी, हिन्दी, संस्कृत तथा मराठी के हस्तलिखित ग्रंथों के साथ-साथ माइक्रो फिल्में, फोओ प्रिंट्स आदि अनुपम संग्रह है।

14 अगस्त 1947 में रघुबीर लायब्रेरी को नटनागर शोध संस्थान में परिवर्तित कर दिया था ग्रंथालय के संग्रह को शोध संस्थान को समर्पित कर दिया। डॉ. साहब की संस्थान के अध्यक्ष तथा मानद् निर्देशक बना दियागया। शोध संस्थान का पंजीकरण मध्यप्रदेश रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1973 के अन्तर्गत 16 जनवरी 1975 को हुआ था।5 नटनागर शोध संस्थान तथा विभिन्न ऐतिहासिक लेखन एवं सग्रह को देखकर डॉ. रघुबीरसिंह के गुरू **'सरयदुनाथ सरकार'** ने आदर्श स्वप्न की कल्पना करते हुए लिखा था – **'यदि कभी स्वतंत्र भारत में एक केन्द्रिय इतिहास संस्था का निर्माण हुआ तो रघुबीर संग्रह इसकी अनिवार्य इकाई होगी।'**[6]

यह शोध संस्थान मध्यकालीन भारतीय इतिहास का एक अनुठा शोध केन्द्र है। जहां लगभग 18000 ग्रंथ है। इन ग्रंथों में मालवा और गुजरात की सल्तनतों का इतिहास, मुगलों के इतिहास मुगल सम्राट आदि ग्रंथों का संकलन है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि डॉ. रघुबीरसिंह एक महान इतिहास वेत्ता थे। शोधार्थी हेतु गुरू द्रोणाचार्य की तरह कहा जा सकता है। वे राजस्थान के इतिहास के आधुनिक लेखक व जनक थे।

क्षैत्रीय इतिहास लेखन में डॉ. रघुबीर सिंहजी का स्थान हमेशा सर्वोपरी रहेगा। मध्यभारत के मालवा क्षेत्र के क्षेत्रीय इतिहास लेखन में उल्लेखनीय योगदान है। उनके द्वारा सम्पादित ग्रंथों का आज पूरे भारत के शोधार्थियों द्वारा उपयोग किया जा रहा है।

वर्तमान में डॉ. रघुबीरसिंह के स्मृति ग्रंथ के सम्पादन का कार्य उनके शिष्य एवं वर्तमान में शोध संस्थान के डायरेक्टर डॉ. मनोहरसिंह राणावत के द्वारा किया जा रहा है। जिसमें 80 से ज्यादा इतिहासकरों अथवा विद्वानों के लेखों को स्थान दिया गया है। अलग-अलग खण्डों में डॉ. रघुबीरसिंह के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है।[6]

अंत में कहा जा सकता है कि डॉ. रघुबीरसिंह एक महान इतिहासकार विद्वान थे। उन्होंने क्षेत्रीय इतिहास लेखन का कार्य सुन्दर ढंग से किया जो आज शोधार्थी एवं इतिहासकारों के लिए रामबाण औषधि का कार्य कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चिन्तामणी उपाध्याय – 'मालवीय लोकगीत', पृ. 56
2. डॉ. श्यामसुन्दर निगम – 'मालवा की हृदय स्थली अवन्तिका', पृ. 2
3. डॉ. रघुबीरसिंह – 'मालवा के युगान्तर' सम्पादकीय से उध्द्रत।
4. अहिल्या स्मारिका, 1978, अंश पृ. 55
5. श्री औकारदास चरण का आलेख – 1978-'अहिल्या स्मारिका', नटनागर शोध संस्थान पृ.57
6. डॉ. नीलम आजाद – 'राजस्थान के कुछ अग्रणी इतिहासकार एवं उनका इतिहास दर्शन' पृ. 207।

****

खरगोन जिले के आदिवासी-गैर आदिवासी किशोरों के पारिवारिक सम्बन्धों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. मंजु पाटनी* दीपिका सेठे **

प्रस्तावना - व्यक्तित्व के विकास में हिनता की ग्रन्थी तथा श्रेष्ठता की ग्रन्थी का महत्वपूर्ण भूमिका होती है। व्यक्तित्व को विकास में यद्यपि वातावरण का भी कुछ हद तक प्रभाव होता है। अनुवांशिता भी कुछ हद तक व्यक्तित्व का निर्धारण करती है। हिनता की और श्रेष्ठता की ग्रंथी का विकास पुरस्कार और दण्ड द्वारा निर्धारित होता है। इसमें स्वीकारता और उपेक्षा भी महत्वपूर्ण होता है। परिवार में बच्चों और किशोरों के पालन-पोषण में अनेक सामाजिक संस्थाओं का योगदान रहता है। पालन पोषण में माता-पिता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। माता-पिता द्वारा जब बच्चे का सुचारु रुप से पालन-पोषण किया जाता है तो किशोरों में आशावादी दृष्टिकोण का विकास होता है। जबकि परिवार द्वारा माता-पिता द्वारा जब बच्चों और किशोरों के पालन-पोषण में अधिक ध्यान नहीं दिया जाता, तब बच्चे अपने आप को उपेक्षित महसूस करते है। वह उपेक्षा के शिकार होते चले जाते है। परिवार में ऐसे किशोर उपेक्षित होने लगते है। इस उपेक्षा के कारण वह अस्वीकृत महसूस करने लगते है। कालान्तर में यही से किशोरों में नकारात्मक प्रवृत्ति का विकास होने लगाता है। नकारात्मकता बढ़ने के साथ-साथ धीरे-धीरे उनमें निराशावादी दृष्टिकोण विकसित होने लगता हैं। यह निराशावादी दृष्टिकोण धीरे-धीरे कब अवसाद में बदल जाता है, पता ही नहीं चलता। इस अवसाद के कारण किशोरों में अनेक व्याधिया भी उत्पन्न हो जाती है। कभी-कभी तो ऐसे किशोर आत्महत्या तक करने के लिए मजबूर हो जाते है। अन्तत: खरगोन क्षेत्र में भी आदिवासी तथा गैर आदिवासी समाज के किशोर युवकों और किशोर युवतियों में भी इस तरह की प्रवृत्तियां विकसित हो रही है। इस तरह की प्रवृत्तियों के विकसित होने में अन्य कारक भी प्रभाव डालते है। किन्तु मेरे अध्ययन का विषय किशोरों की इस तरह की अभिव्यक्तियों के विकास में माता-पिता की भावात्मक स्वीकृति, एकाग्रता और उपेक्षित व्यवहार अर्थात पारिवारिक सम्बन्ध का कितना हाथ होता है यह जानना है। यह की सच है कि इस क्षेत्र में दोनों ही वर्गो की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं है। परिवार की इस स्थिति इतनी अच्छी नहीं है। परिवार की स्थिति के कारण भी बच्चों की किशोरों के पालन-पोषण में अनेक परेशानियां उत्पन्न होती है। माता-पिता चाह कर भी, उस तरह का पालन पोषण नहीं कर पाते है, जिस तरह का आदर्श पालन पोषण किया जाना चाहिए।

अध्ययन की विधि - शोध की अध्ययन पद्धति निम्नानुसार है। शोध चार अध्ययन समूहों का विश्लेषण है।

प्रस्तुत आंकड़े जिला खरगोन (पश्चिम निमाड़) मध्यप्रदेश के मध्यम सामाजिक-आर्थिक मिश्रित, आदिवासी और गैर आदिवासी समूहों से है। ऐसे किशोर के माता-पिता तथा परिवारों को अध्ययन में शामिल किया गया है। जिनके किशोर-किशोरियां, जो इस तरह की अभिवृत्ति से प्रेरित है।

मानक (नमूना) - इस शोध में समावेशी-गैर समावेशी मापदण्ड वाले नमूने क्रम गैर क्रम पद्धति के अंतर्गत लिये गये है। प्रथम स्तर पर इस पद्धति में संभावना नमूना पद्धति का उपयोग अपेक्षित नमूने के चुनाव हेतु किया गया है। सामान्य क्रमानुसार नमूना पद्धति (लाटरी पद्धति) इस शोध की विशेषता है। द्वितीय स्तर पर उद्देश्यपूर्ण नमूना पद्धति का उपयोग व्यक्ति किशोर वर्ग के माता-पिता के संकलन में हुआ है।

शोध मापदण्ड :

1. डॉ.(श्रीमती) जे.पी. शेरी एवं डॉ. जे.सी. सिन्हा द्वारा निर्मित पारिवारिक सम्बन्ध प्रश्नसूची
2. प्रो. ओ.पी. मिश्रा के अवसाद परीक्षण का उपयोग किया गया है।
3. साक्षात्कार एवं समूह चर्चा को भी अध्ययन की विधि के रुप में अपनाकर संबंधित आंकड़े प्राप्त किये गए है।
4. अध्ययन में आदिवासी और गैर आदिवासी किशोरों के माता-पिता को शामिल किये गए है।
5. इस अध्ययन में ऐसे किशोर जिनके उम्र 17 से 21 वर्ष है, उनके माता-पिता को शामिल किया गया है।
6. मनोवैज्ञानिक विकार वाले किशोरों के माता-पिता भी इस अध्ययन में शामिल किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य - प्रस्तुत शोध पत्र के निम्नलिखित उद्देश्य रखे गए है -

1. ऐसे किशोरों को पहचानना जो मनोवैज्ञानिक विकारों से ग्रसित है तथा उनके माता-पिता की भूमिका का विश्लेषण करना।
2. आशावादी अभिवृत्ति के विकास में माता-पिता की भूमिका का विश्लेषण।
3. निराशावादी दृष्टिकोण के विकास में माता-पिता की उपेक्षित व्यवहार का विश्लेषण करना।
4. दोनों ही वर्गो के किशोरों एवं किशोरियों को शामिल है जो माता-पिता द्वारा स्वीकार किये जाने है या उपेक्षित किये जाते है। उनसे संबंधित आंकड़े (तथ्य) एकत्रित किये तथा उसका वियलेषण किया जाना।
5. आदिवासी-गैर आदिवासी किशोरों की स्वीकृत एवं उपेक्षित अभिवृत्ति

* विभागाध्यक्ष (गृह-विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह-विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

का अवसाद पर प्रभाव का अध्ययन करना।

6. आदिवासी किशोरों में स्वीकृत व उपेक्षित अभिवृत्ति एवं अवसाद का लैंगिक भिन्नता पर प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन की उपयोगिता एवं महत्व – शोध पत्र में अध्ययन की उपयोगिता एवं महत्व निम्नानुसार है :

1. जीवन संघर्ष में पारिवारिक संबंधों का विशेष स्थान है, क्योंकि स्वीकृति/उपेक्षित किशोर के अवसाद रहित/अवसाद ग्रहित होने एवं आशावादी-निराशावादी होने में माता-पिता परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अगर कोई किशोरों के साथ समस्या है तो इसके घातक परिणाम देखने को मिलते है। अत: पारिवारिक संबंधों को समझना आवश्यक है। इनसे व्याप्त व्याधियों को समय रहते दूर किया जा सकता है।
2. यदि कोई किशोर मनोवैज्ञानिक रोगों से ग्रसित है, उसका उपचार कराने के बजाय उसका इलाज जानकार, ओझा, पड़वा या झाड़ फूंक द्वारा किया जाता है। यह प्रथा आदिवासियों और गैर आदिवासी दोनों ही समुदायों में व्याप्त है। ऐसे में स्थिति सुधरने के बजाय और बिगड़ जाती है। इस बिगड़ हुई स्थिति से सम्बन्धों पर बुरा असर होता है। अभिभावक किशोरों को उपेक्षित भाव से देखते है। उन्हें समझ नहीं पाते है जिससे इस तरह को मनोवृत्तियों में वृद्धि होती है। ऐसे में समय रहते उन्हें जागरुक किया जा सकता है।
3. ऐसी इकाईयों का पता लगा सकते है तथा उन्हें समय पर सही उपचार दिया जा सकता है। माता-पिता और किशोरों के मध्य एक खुशनुमा वातावरण तैयार किया जा सकता है,जिससे ऐसे किशोरों में आत्मविश्वास को बढ़ाया जा सके।
4. शोध करने वाले विद्यार्थियों को एक संकेत प्रदान करना भी है। जो इस शोध पत्र के आधार पर विस्तृत शोध कर सके। यह शोध पत्र उनके लिए मील का पत्थर साबित हो सके।
5. माता-पिता को जागरुक किया जा सके तथा उन्हें उचित पालन-पोषण देखरेख से अवगत कराया जा सके।
6. योजनाकारों को भी इस समस्या से निपटने के लिए संकेत मिल सके।

अध्ययन के निष्कर्ष :

1. गैर आदिवासी वर्ग से तुलना करने पर आदिवासी किशोरों के माता और पिता की भावनात्मक स्वीकृति तथा एकाग्रता का मान उच्च स्तर पर प्राप्त हुआ, जबकि माता की उपेक्षित से तुलना करने पर आदिवासी किशोरों के पिता का अपेक्षित मान अधिक प्राप्त हुआ।
2. गैर आदिवासी किशोरियों के पिता उपेक्षित अभिवृत्ति को जानना एवं उनका मान आदिवासी किशोरियों के पिता के उपेक्षित अभिवृत्ति के मान के बराबर पाया गया।
3. गैर आदिवासी वर्ग के माता एवं पिता के भावात्मक स्वीकृति और एकाग्रता से तुलना करने पर आदिवासी वर्ग की उसकी माता और पिता अभिवृत्तियों के मान उच्च पर प्राप्त हुआ।
4. किशोरों व किशोरियों के मध्य तुलना करने पर यह ज्ञात हुआ कि किशोरों के प्रति पालकों को स्वीकृति, किशोरियों के प्रति पालकों की भावानात्मक स्वीकृति से ज्यादा सामान्य रुप से परिलक्षित हुई।
5. आदिवासी व गैर आदिवासी वर्गो में किशोरियों के प्रति उनके पिता की अति संरक्षणता व अस्वीकृति अभिवृत्तियों उनके किशोरियों के प्रति उनकी अभिवृत्ति से तुलना करने पर सामान्य रुप से परिलक्षित हुई।
6. विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि आदिवासी वर्ग में किशोरों एवं किशोरियों के प्रति उनके बालकों की अभिवृत्तियां पक्षपाती रही है। किशोरों के प्रति पालकों के एकाग्रता व उपेक्षित प्रवृतियां किशोरियों की तुलना में अधिक सुरक्षित है।
7. गैर आदिवासी समाज में किशोर व किशोरियों के मध्य जो अति संरक्षणता (एकाग्रता) अभिवृत्ति का अनुभव करते है। पक्षपात का स्तर महत्वहीन रहा।
8. परिणामों से स्पष्ट हुआ कि इन समूहों में पालकों की प्रवृत्तियां पक्षपात लिये रही। आदिवासी किशोरियों के प्रति उनके माता-पिता की भावनात्मक अति संरक्षणता (एकाग्रता) तथा प्रतिहारता (उपेक्षित) उनकी माता तुलना में उनकी दर अंकितम है। उसी प्रकार आदिवासी किशोरों के प्रति उनकी माता की स्वीकृति, पति की तुलना करने की प्रवृत्ति भी उच्च रही।

अध्ययन से स्पष्ट है कि दोनों वर्गो में किशोरों के प्रति दोनों पालकों की भावनात्मक स्वीकृति अभिवृत्ति किशोरियों के साथ तुलना करने पर उच्च प्राप्त हुई। गैर आदिवासी किशोरियों के प्रति उनके पालकों की भावात्मक उपेक्षित तथा एकाग्रता प्रवृत्ति उनकी किशोरियों के साथ तुलना करने पर उच्च स्तर पर कम रही एवं उसके बाद आदिवासी वर्ग ने अनुसरण किया।

सुझाव :

1. किशोरों को उचित पालन पोषण हेतु माता-पिता को प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए। क्षेत्र में ऐसे परिवार जिनके बच्चे या किशोरों में निराशा व्याप्त हो रही है। उनमें निराशावादी दृष्टिकोण विद्यमान हो रहा है। ऐसे परिवारों को चिन्हित कर उनके माता-पिता को उनकी देखरेख एवं पालन पोषण के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। यह प्रशिक्षण गैर सरकारी संगठनों, शासन की एजेंसियों या स्वैच्छिक संस्थाओं ने माध्यम से किया जाना चाहिए।
2. नैतिक मूल्यों एवं धार्मिक रीति-रिवाजों से संस्कारित नाना परिवार में माता की भूमिका महत्वपूर्ण है उसके द्वारा बच्चों को नैतिक शिक्षा दी जानी चाहिए। माता-पिता को परम्परागत धार्मिक रीति-रिवाजों, मूल्यों और आदर्शो से किशोरों को संधारित माता चाहिए तथा धार्मिक उत्सवों में उनकी उपस्थित सुनिश्चित की जानी चाहिए।
3. स्कूल शिक्षा को सरल बनानी चाहिए, जिससे बच्चों में तनाव उत्पन्न न हो।
4. क्षेत्र में रोजगार के अवसरों की उपलब्धता होनी चाहिए।
5. माता पिता को मनोवैज्ञानिक विकारों से ग्रस्त बच्चों को काउंसलर के पास ले जाना चाहिए।
6. परिवार में सदस्यों की प्रस्थिति के अनुसार भूमिका हो माता-पिता को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाई योगेन्द्रजीत - विकासात्मक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक सदन आगरा, 1952
2. भार्गव उषा (1987)- किशोरावस्था एवं किशोर मनोविज्ञान-प्रकाशक राजस्थान, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
3. डेविड अलका (1988) किशोरावस्था की सामान्य अवधारणा एवं सिद्धांत किशोरावस्था विवाह एवं पारिवारिक जीवन, शिवा प्रकाशन
4. खपेडिया ममता (2014)- आदिवासी ग्रामीण महिलाओं की

व्यवसायिक सहभागिता का पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव का अध्ययन
5. हरलॉक बी.एजिलाबेथ (2007)– विकास मनोविज्ञान हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित
6. शुक्ला अनिता (2007)– अनुसूचित जाति तथा सामान्य वर्ग के किशोरों की सामाजिक परिपक्वता, पारिवारिक संबंध एवं किशोरावस्था की समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन
7. वर्मा प्रीति, बाल मनोविज्ञान(1996)–बाल विकास प्रकाशन विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
8. वर्मा प्रीति, आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान प्रथम संस्करण, पृ.सं. 80–85
9. वर्मा विमला, पारिवारिक संबंध एवं बाल विकास

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

आत्मछवि : अर्थ, प्रकार, कारक एवं उपाय

डॉ. उषा भटनागर * रश्मि सक्सेना **

प्रस्तावना – आज के इस आधुनिक युग में प्रत्येक व्यक्ति सफल, सुखी , स्वस्थ,एवं धनवान बनना चाहता है और एक खुशहाल जीवन व्यतीत करना चाहता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करना चाहता है। प्रत्येक निर्धारित लक्ष्य को आसानी से प्राप्त करना चाहता है। ऐसा तभी संभव है जब वह समाज में रहने वाले लोगों के साथ आसानी से सामंजस्य स्थापित कर सके और अपने जीवन से जुड़ी सभी समस्याओं का समाधान कर सके। यद्यपि समाज में रहकर ही उसे अपनी विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करना होता है एवं विभिन्न सामाजिक चुनौतियों का सामना करना होता है। इन सभी सामाजिक चुनौतियों का सामना करने में जो मनोवैज्ञानिक कारक सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, वो है उस व्यक्ति की स्वयं की 'आत्मछवि'।

आत्मछवि का अर्थ – आत्मछवि एक ऐसा काल्पनिक विचार या चित्रण है जो व्यक्ति अपने पूरे जीवन में स्वयं के बारे में स्वयं के द्वारा निर्मित करता है। अर्थात आत्मछवि से आशय किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में बनने वाली ऐसी छवि से है जो व्यक्ति द्वारा किसी विशेष वस्तु, विषय या परिस्थिति के प्रति निर्मित होती है। अत: आत्मछवि एक ऐसी छुपी हुई प्रवीण शक्ति है जिसे प्राप्त करने का ज्ञान हर व्यक्ति के पास होना चाहिए।

कोई भी व्यक्ति अपने चारों ओर के वातावरण में स्वयं को जैसा देखता या पाता है या उसके परिवार के लोग या परिचित उसे देखते हैं ,उसी आधार पर वह अपनी आत्मछवि का निर्माण करता है। सकारात्मक सोच रखने वाले व्यक्ति में आत्मविश्वास की मात्रा अधिक होती है और उसके कार्य करने की क्षमता भी अधिक होती है। वह बिना किसी संदेह के आसानी से निर्णय ले सकता है। ऐसे व्यक्तियों की आत्मछवि सकारात्मक होती है। वही दूसरी ओर नकारात्मक सोच रखने वाले व्यक्ति उत्साहहीन एवं दुर्बल होते हैं। वे किसी भी कार्य को पूरा करने में संदेह की स्थिति में रहते हैं और उनमें आत्मविश्वास का स्तर भी निम्न रहता है। इस प्रकार के व्यक्तियों की आत्मछवि नकारात्मक होती है।

आत्मछवि के प्रकार – किसी भी व्यक्ति की आत्मछवि उसके व्यक्तित्व का केन्द्र होती है जो उसके व्यवहार द्वारा पहचानी जाती है। यह दो प्रकार की होती है :-

1. सकारात्मक आत्मछवि
2. नकारात्मक आत्मछवि

सकारात्मक आत्मछवि – प्रत्येक व्यक्ति को अपने पूरे जीवन में खुश रहने के लिए एवं उच्च सफलता प्राप्त करने के लिए स्वयं के बारे में सकारात्मक आत्मछवि निर्मित करना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि सकारात्मक आत्मछवि वाले व्यक्ति में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता और स्वयं के प्रति सकारात्मक सोच विकसित होती है। वह किसी भी समस्या को सरल मानते हुये उसका हल आसानी से प्राप्त कर सकता है। वह अपनी रूचियों एवं आवश्यकताओं के साथ – साथ दूसरों की भावनाओं एवं आवश्यकताओं का भी सम्मान करता है। सकारात्मक आत्मछवि वाले व्यक्ति हमेशा अपनी जिंदगी के प्रति आत्मविश्वासी एवं उचित एहसास करने वाले होते हैं। ये अपने जीवन काल में कभी भी निराश नहीं होते हैं और प्रत्येक कार्य को उत्साह के साथ पूरा करते हैं।

नकारात्मक आत्मछवि – जब कभी व्यक्ति अपने जीवन में असहज परिस्थितियों का सामना करने में कई प्रकार की कठिनाईयों का अनुभव करता है। तब इसका कारण कहीं न कहीं उसकी आत्मछवि का नकारात्मक होना पाया जाता है। ऐसी स्थिति में या तो वह वास्तविक परिस्थितियों से भागने की कोशिश करता है या तरह –तरह के बहाने बनाता है। नकारात्मक आत्मछवि वाले व्यक्ति अक्सर अपनी छवि को बुरा दिखाने का प्रयास करते हैं । दूसरों के प्रति स्वार्थी एवं लापरवाह हो जाते हैं। वे कोई भी कार्य लोगों की पसंद या नापसंद को ध्यान में रखकर करते हैं। इनका आत्मविश्वास का स्तर भी निम्न रहता है। ऐसे व्यक्ति अपने जीवन में अधिक सफल नहीं हो पाते हैं।

सकारात्मक आत्मछवि को प्रभावित करने वाले निर्धारक तत्व – चूँकि प्रत्येक व्यक्ति की आत्मछवि का स्तर भिन्न-भिन्न होता है और उसके प्रभाव भी भिन्न-भिन्न होते हैं। अत: प्रत्येक व्यक्ति की आत्मछवि को प्रभावित करने वाले कारक भी भिन्न-भिन्न होते हैं। वर्तमान में ऐसे कई कारक देखने में आते हैं जो व्यक्ति की आत्मछवि को प्रभावित करते हैं जैसे –

1. **पारिवारिक कारक –** बालक की आत्मछवि पर सबसे अधिक प्रभाव उसके परिवार के सदस्यों के व्यवहार, गुणों एवं योग्यताओं का पड़ता है। उसके परिवार में माता-पिता ऐसे मुख्य सदस्य होते हैं जो बालक के जीवन को सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जैसे –

- **अभिभावकों का शैक्षिक स्तर –** यदि माता – पिता की शिक्षा उच्च स्तर की हो तो वे अपने बच्चों को सभी अधिगम सुविधायें प्रदान कर सकते हैं। उनके विद्यालय के कार्यों एवं अन्य गतिविधियों में उनकी सहायता कर सकते हैं। उनकी रूचि एवं क्षमता के अनुसार उन्हें कार्य करने की स्वतंत्रता दे सकते हैं। उनके लक्ष्य प्राप्ति हेतु प्रेरित कर सकते हैं। इस प्रकार वे अपने बच्चों की सकारात्मक आत्मछवि में वृद्धि कर सकते हैं। वहीं दूसरी ओर कम शिक्षित माता – पिता अपने बच्चों की उनके विद्यालयीन कार्यों में सहायता नहीं कर पाते हैं और उन्हें उचित मार्गदर्शन देने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं।

* आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, मायादेवी इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड एजुकेशन, देवास (म.प्र.) भारत

जिसके कारण ऐसे अभिभावकों के बच्चों का आत्मविश्वास का स्तर निम्न होने लगता है जो कि उनकी आत्मछवि को प्रभावित करता है।

- **अभिभावकों की शैक्षिक आत्मछवि का स्तर –** जिन बालकों के माता–पिता की आत्मछवि सकारात्मक होती है। वे अपने बच्चों के प्रति सकारात्मक सोच रखते हैं और उनका अपने बच्चों के प्रति रूझान भी अधिक रहता है। ऐसे अभिभावक अपने बच्चों द्धारा किये गये कार्यों की प्रशंसा करते हैं। हमेशा उनके आत्मविश्वास को बढ़ाने का प्रयास करते हैं और अक्सर अपने बच्चों से यह कहते पाये जाते हैं कि 'तुम सब कुछ कर सकते हो', 'तुम घबराना नहीं, हम तुम्हारे साथ हैं '। इस तरह माता–पिता का विष्वास पाकर उनके बच्चों की आत्मछवि का स्तर हमेशा उच्च रहता है। इसके विपरीत जिन अभिभावकों की आत्मछवि नकारात्मक होती है वे हमेशा अपने बच्चों से जरूरत से ज्यादा अपेक्षायें रखते हैं। ऐसे अभिभावक अपने बच्चों की तुलना हमेशा अन्य बच्चों से करते हैं और अक्सर यह कहते पाये जाते हैं कि 'तुम कुछ करने लायक नहीं हो' या 'तुम कभी कुछ नही बन पाओगे' इत्यादि। माता – पिता की इसी सोच के कारण बालक का आत्मविश्वास निम्न होने लगता है और उसकी आत्मछवि भी नकारात्मक होने लगती है। इसका परिणाम यह होता है कि उनका बालक प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ता चला जाता है।
- **अभिभावकों का सामाजिक आर्थिक स्तर –** यदि परिवार का सामाजिक आर्थिक स्तर ऊँचा है तो ऐसे परिवार के अभिभावक अपने बच्चों को ज्यादा से ज्यादा सुविधायें एवं अवसर उपलब्ध करा सकते हैं, परन्तु यदि बालक के परिवार की सामाजिक आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है और उसका परिवार उसकी मूल आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम नहीं है तब ऐसे परिवारों के बच्चों की आत्मछवि मुख्य रूप से प्रभावित होती है। जिसके कारण उनका आत्मविश्वास भी कम होने लगता है। इस प्रकार किसी भी परिवार की उच्च या निम्न सामाजिक आर्थिक स्थिति बालक की आत्मछवि को प्रभावित कर सकती है।

2. सामाजिक कारक – जब बालक अपने परिवार से निकलकर समाज में प्रवेश करता है तब वह समाज के विभिन्न लोगों के सम्पर्क में आता है। जैसे – शिक्षक, मित्र, पड़ौसी,संबंधी इत्यादि। इन सभी लोगों का व्यवहार बालक की आत्मछवि को प्रभावित करता है। जब बालक विद्यालय जाता है वहाँ का अनुकूल एवं प्रतिकूल वातावरण भी उसकी शैक्षिक आत्मछवि को मुख्य रूप से प्रभावित करता है। जैसे यदि शिक्षक का ज्ञान अपर्याप्त हो और वह अपने विद्यार्थी की समस्याओं का समाधान करने में असमर्थ हो या फिर उसके दोस्तों का व्यवहार उसके प्रति सहयोगात्मक न हो तब ऐसी स्थिति में उस विद्यार्थी के मस्तिष्क में अपने शिक्षक या दोस्तों के प्रति नकारात्मक आत्मछवि निर्मित होने लगती है। इसके विपरीत यदि उसके शिक्षक एवं मित्र उसकी शैक्षिक कार्यों में मदद करे ,साथ ही उसे प्रोत्साहित करें। तब इस स्थिति में विद्यार्थी के मस्तिष्क में उस शिक्षक एवं मित्रो के प्रति सकारात्मक आत्म छबि बन जाती है, जिसके कारण उसकी शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि होने लगती है।

3. व्यक्तिगत कारक – पारिवारिक एवं सामाजिक कारकों के अलावा कुछ व्यक्तिगत कारक भी होते है। जिनके कारण व्यक्ति की आत्मछवि प्रभावित होती है। जैसे –

- स्वास्थ्य संबंधी कारक :– जब कोई व्यक्ति किसी लक्ष्य प्राप्ति हेतु योग्यता एवं क्षमता दोनो ही रखता है, परन्तु किसी कारणवश वो शारीरिक रूप या मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाता है तब उसकी यह अस्वस्थता उसके लक्ष्य प्राप्ति की राह में बाधा बन जाती है जिसके कारण समय पर वह अपने लक्ष्य को प्राप्त नही कर पाता और उसकी यही असफलता धीरे–धीरे निराशा में बदल जाती है, तब ऐसी स्थिति में उसकी सकारात्मक आत्मछवि नकारात्मक आत्म छवि में बदल जाती है।
- गुण संबंधी कारक :– किसी व्यक्ति की विभिन्न विशेषताएं जैसे रंग, रूप, वजन, लंबाई आदि भी किसी अन्य व्यक्ति की आत्म छवि को प्रभावित करती है। इन सभी विशेषताओं की सहायता से ही कोई भी व्यक्ति अन्य व्यक्ति की आत्म छवि की पहचान करता है। अर्थात् एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के सशक्त गुणों के आधार पर अपने मस्तिष्क में एक छवि निर्मित कर लेता है, कि –'वो तो ऐसा है' परन्तु 'मैं उस जैसा नहीं हूँ' इत्यादि।

किशोरों में सकारात्मक शैक्षिक आत्मछवि विकसित करने के उपाय – किसी भी व्यक्ति की जिदंगी में कठोरता, उसकी शारीरिक अक्षमता, अस्वस्थता, धन का अभाव जैसी बहुत सारी समस्यायें होती है, जो उसकी स्वयं की आत्मछवि को मजबुत बनाने में बाधा उत्पन्न करती है, परन्तु थोड़े से प्रयास के द्धारा उस व्यक्ति की आत्मछवि में सुधार लाया जा सकता है। अर्थात् उसे नकारात्मक से सकारात्मक बनाया जा सकता है। किसी भी व्यक्ति की आत्मछवि को सकारात्मक बनाने के लिए यह अंत्यत आवश्यक है, कि सबसे पहले उस व्यक्ति की सकारात्मक सोच को विकसित किया जाये। उसे इस बात का अहसास दिलाया जाये कि वह किसी भी कार्य को आसानी से पूर्ण करने के योग्य है। उसके आत्मविश्वास के स्तर को बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए। इस कार्य में उसके अभिभावक, परिचित, मित्र एवं उसके शिक्षक उसका पूरा पूरा सहयोग कर सकते है। इसके लिए यह आवश्यक है, कि अभिभावक इस बात का ध्यान रखे कि वह अपने बच्चों की तुलना अन्य बच्चों से ना करे। उनसे ज्यादा अपेक्षा ना करते हुए उन्हे उनकी क्षमता और रूचि के अनुसार कार्य करने की स्वतंत्रता प्रदान करे। उन्हे अच्छे कार्यो हेतु प्रेरित करे। उनके शैक्षिक कार्यो में मदद करे। उनकी गलतियाँ बताने के बजाय उनकी प्रषंसा करे। आवश्यकता पढ़ने पर मनोचिकित्सक की सहायता लें।

इसी प्रकार शिक्षक भी अपने विद्यार्थियों के शैक्षिक कार्यो में मदद कर सकते है, उनको कक्षा में सबके सामने ना डांट कर अलग से समझा सकते हैं। उनके अभिभावकों से मिलकर उनके पारिवारिक कारणों को जानकर उसमें सुधार लाने का प्रयास कर सकते हैं। समय–समय पर उनकी आत्म छवि को पहचान कर उन्हें उचित मार्गदर्शन प्रदान कर सकते हैं। इस हेतुं वे अपने विद्यालय में ऐसे शिविर या सेमिनारों का आयोजन कर सकते हैं, जो बालकों की आत्मछवि को सकारात्मक बनाने में मददगार साबित हों।

साथ ही व्यक्ति के मित्र या संबंधी भी उस व्यक्ति की आत्म छवि को सकारात्मक बनाने में उसकी सहायता कर सकते हैं, उसके लक्ष्य निर्धारण हेतु उसे प्रोत्साहित कर सकते हैं।

यदि उपर्युक्त सभी उपायो पर ध्यान दिया जाये तो किसी भी व्यक्ति की आत्म छवि को पहचान कर उसमें पूर्णत: सुधार लाया जा सकता है, और उसे एक सफल व्यक्ति बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

Introduction to Brecht's Verfremdungseffekt Devices

Dr. Uttam.B. Parekar *

Introduction - 'Fremd' is a German equivalence for the French term 'Alien'. Hegel and Marx had made a very important principle out of 'Entfremdung', the normal German word for the French term 'Alienation' or 'Estrangement'. 'Verfremdungs' is Brecht's coinage for the process of making one alien or strange from the content of the play. It is the V-Effect technique that distinguishes the Brechtian theatre from the bourgeois theatre in passing understanding of the subject to the audience.

Brecht borrowed the concept of 'Alienation Effect' from the Russian Literary Criticism during his last visit to Moscow in 1935 and employed it as a substitute for the concept of 'Catharsis', and 'Empathy' and 'Process of Identification' of Aristotelian theatre.

For Brecht, A-Effect was a matter of "gaining new insights into the world around us by glimpsing it in a different and previously unfamiliar light."[1] Brecht's theory of Non-Aristotelian drama operates through his 'Organon' of which 'A-Effect' is an essential component "harnessed to change the consciousness of the audience and hence facilitate the altering of the reality that is reflected on the stage."[2] Brecht has provided a procedure to use V-Effect technique in a work of art. The theory of V-Effect as propounded by Brecht may be studied closely under the following three headings:

Alienation of the Audience: Brecht says that the prime function of his theatre is neither entertainment nor purgation of feelings of the audience. In his view theatre must function as a media to arouse people to think and act collectively against the prevailing injustice and sufferings in society. He says that theatre must present the dialectical situations bearing on the real life situations to activate 'learning-process' in the audience on the subject of 'socio-economic and socio-political determinism.' With the use of events and themes from 'Historical Events', 'Myths', 'Fables', 'Folk-Lores', Brecht keeps the audience away from getting emotionally involved with the action of the play.

He has successfully employed the dramatic devices such as 'Prologue', 'Epilogue', Narrative Voice', 'Song', 'Music', 'Light', etc. to alienate the audience from the action of the play. The narrative voice passes comments on the events and motivates the audience to understand the cause of the undesirable event they are watching.

Brecht has employed self-contained scenes having no direct correlation with the theme of the play: the complex-seeing technique. It keeps the audience always in the conscious state of mind. They are engaged in making out the meaning by establishing a common link to interpret the scenes.

In Brechtian theatre the devices such as: 'curtains', 'gestures', 'stage-settings' 'Projections' play vital role in keeping the audience alienated from the action of the play. Brecht was a renowned drama-director; therefore he prescribed 'Notes' in his plays as guidelines for drama performances. His notes are V-Effect oriented.

In Brecht's plays, *Gestus*is employed as a device to achieve the alienation of the audience from the theme of the play. Gestus arises from the interaction of people and it reflects their attitudes and ehavior towards each other. Its use integrates the content of the play with the form.

Alienation of the Actor: In his plays, Brecht lays emphasis upon the alienation of the actor from the character in order to break the process of audience's identification with the actor during stage performances. Brecht believes that the process of identification with the actor makes the audience inactive and weak in practical life. Therefore in order to break the process of identification, Brecht has modified the traditional practice of 'Acting' to a large extent, besides calling in for great changes in the 'Writing Style' of the play by introducing – (1) The adoption of the third person (2) The adoption of the past tense (3) The speaking of stage directions and comments.. However, instead of losing themselves in the character, the audience looks at the character from the outside. 'Gestus' or 'Social Gest' is one of the most essential elements in Brecht's theory of acting.

Alienation of the Character: In his dramaturgy, Brecht has alienated characters from their own vision and life. Brecht with his concept of 'The Alienation of Character' portrays the character of a protagonist as a person alienated from society for his dedication with concern and commitment to his personal dream. His characters demystify historical personages and events, myths, and legends. To achieve this effect of alienation Brecht has employed the device of 'Statistical Causality': With the device of 'Statistical Causality "The spectator's attention is

* Yeshwant Mahavidyalaya, Wardha (Maharashtra) INDIA

directed towards the more important movements of the collectives, and he must be made aware of the fact that the individual is no more than a small particle of such a mass or mass reaction."[3] However, using this device he makes the 'familiar' appear 'strange'.

Brecht's play *The Measures Taken* serves a classic illustration of the alienation of a character from society as 'The Voice of the Collective'.

In some of his plays the protagonist struggles hard to realize his dream of life; but certain unpredicted situations bring upon him a startling experience of realization in which he is alienated from his own long cherished vision of life. In his play *Mother Courage and her Children* the 'Voice of the Collective' emerges as a decisive factor in alienating mother Courage from her dream "to bring her children through the war unharmed."[4]

In his play *The Good Person of Szechwan* Brecht has devised the technique of 'Split-Characters' to achieve the effect of the alienation of protagonist: Shen Te, from her dream. Shen Te is alienated from her natural spirit of benevolence. Shen Te's dream is shattered and immediately she decides to marry the rich barber Shu Fu to solve her financial problems. "*The Good Person of Szechwan* is an example of a parable which illuminates the 'truth' that could never be established by describing life naturalistically, because the good person; in each of us supposedly disappears at an early age under the pressure of the alienating conditions of everyday social existence."[5]

Techniques of the V-Effect:

The Narrative Voice - In order to achieve V-Effect Brecht employed the technique of 'The Narrative Voice'. In his Dramaturgy he suggested to incorporate the narrative voice as a demonstrator to re-enact to the bystanders as to how the event took place, or the situation arose. This is how interposing itself between the audience and the event the narrative voice makes an appeal to the reason of the audience and achieves alienation effect. The narrative voice acts as a choral actor and supplies background information about complicated socio-historical process to enhance the capacity of reasoning in the audience. It, with the skills of his acting and speech, exposes the audience to the far beyond complicated situations. In his plays Brecht employed the narrative voice to describe the interaction that is taking place between characters; it was often used to analyze the situation in sequence of cause and effect. It functions as an eyewitness to bring round the effect the event taken place outside the stage. Above all, in Brechtian dramas the narrative voice is employed to introduce and control situations on the stage; 'Narrative Voice' is also presented by a skilled rhetorician who acts as a choral singer to establish effective link between the two contrasting situations.

Comic Elements - The central role of comedy in Brecht's plays lies in its complex, two-way relationship with V-Effect. "Comedy works primarily on our emotions and it appeals to intellect. Comedy is about paradoxes and absurdities in society and ehavior, about things not being what they seem: moreover it is essential that the audience should recognize this gap between Sein and Schein."[6] As comedy can be used to encourage critical distance and reflection in the audience, it would seem a good vehicle for Brecht's critical and didactic purposes.

In his comedies Brecht employed comic techniques and structures to achieve V-Effect; it is much more fundamental to recognize that he employed V-Effect to show the comedy of society. In his comedies *The Resistible Rise of Arturo Ui* (about Hitler), and *Round Heads and Pointed Heads* (about racism) Brecht has portrayed historical events to achieve V-Effect. With the help of these historical events Brecht leads the audience to the experience of V-Effect: of critical distance towards the reality being treated. However, the critical distance in turn enables the audience to recognize society as at present constituted as comic, because it is capable of being replaced in the course of the historical process by another social order.

Brecht's comedy is therefore not only a comedy for its own sake. It is also not simply comedy for the purpose of achieving V-Effect, critical distance. His comedy is not dependent on certain theatrical effects and techniques, but is a reflection and a function of an incongruous and paradoxical social structure; it is not so much a theatrical form as an interpretation of society and a statement of social purpose.[7]

Alienation Technique - Brecht used 'Alienation' as a dramatic technique to bring about the V-Effect in his plays. This technique creates situations in the play for the audience to understand the issue of the play and invites their responses. The most radical changes Brecht demanded in the theatre, other than in the writing, were in the acting. He says that three devices can contribute to the alienation of the words and actions of the person presenting them: 1 – The adoption of the third person. 2 – The adoption of the past tense, and 3 – The speaking of stage directions and comments. This meant that in early rehearsals the dialogue of a scene should be translated from the first to the third person and from the present to the past tense and that an actor should read all stage directions aloud as they occur. "It is Brecht's thesis that, if an actress practices enacting an incident while another performer reads the lines, she will eventually find she has acquired another way of acting, another style, the style of the new theatre."[8] By alienating the narrative from the performing actor the Brechtian playwright shows the actor openly disowning the effective charm of the character by not identifying himself (the actor) with the character; however, the actor prevents us (the audience) from making identifications with the character. Instead of losing ourselves in the character, we look at it from the outside. The object of this 'V-Effect' is to allow the spectator to criticize constructively from a social point of view.

If Plato preferred epic poetry because it was less able to distort the real than tragic drama, Brecht believed

responsible social drama must avoid the Aristotelian / Stanislavskian premise that the audience should be made to believe that what they are witnessing is happening here and now. The popular illusionistic theatre invited audience's absorption into a character and a plot that headed toward emotional climax; whereas Brecht's epic theatre demanded a performance 'presented quite coldly, classically and objectively.' The primary method of achieving such detachment was the V-Effect – the distancing of the audience from the events on the stage. "To accomplish this distancing, the illusionistic theatre techniques were undercut flaps, backdrops, wires, lights, were openly revealed rather than disguised. Banners were hoisted across the stage revealing what was to come so that the audience would be freed from the 'distraction of suspense.'"[9]

Brecht liked to have his plays performed on a relatively bare stage. His favourite designer, Caspar Neher, would take as his starting point for the work on any given scene and closely observe the relationships of the characters; then he would capture their gestures in a sketch which grouped them in significant poses. The blocking and movements of the scenes were developed in conjunction with such sketches. It is reported that on one occasion:

Brecht would not, or could not, proceed with the direction of a scene in the absence of advice from Neher about positioning. The rest of the set was then built up from a carefully selected group of properties that were functional within the action, some (usually minimal) indication of the nature of the space in which the action takes place (a door-frame or a window could represent a house, some shop-signs a street), and a backdrop which might be an empty cyclorama or a painted screen showing a free artistic evocation of, or commentary on a scene.[10]

Conclusion - Brecht's V-Effekt Technique abounds in many devices for effect of estrangement. These devices keep the audience from getting involved into the emotions of the character. In other words they encourage the audience to consider the character and his actions reasonably.

References :-

1. Szondi, Peper. "Epic Theatre: Brecht", p. 71.
2. Esslin, Martin. "The Brechtian Theatre – Its Theory and Practice", p. 116.
3. Esslin, Martin. "The Brechtian Theatre – Its Theory and Practice", p. 117.
4. Esslin, Martin. "The Brechtian Theatre – Its Theory and Practice", p. 117.
5. Esslin, Martin. "The Brechtian Theatre – Its Theory and Practice", p. 117.
6. Willett, John. "The Theory", p. 166.
7. McGowan, Moray. "Comedy and the Volksstuck" in *Brecht in Perspective,* Ed. Graham Bertram and Anthony, Waine. London: Longman, 1982. P. 64.
8. Speirs, Ronald. "Theories of Theatre", p. 43.
9. Subiotto, Arrigo. "Epic Theatre: A Theatre for the Scientific Age", pp. 41-42.
10. Willett, John. "The Theory", p. 177.

****

प्राचीन साहित्य में उज्जयिनी

इंदिरा चौहान *

प्रस्तावना – प्राचीन साहित्य में उज्जयिनी का महत्व बहुत अधिक रहा है। वास्तव में ये नगरी भारतीय समग्र की संस्कृति का केन्द्र रही है। प्राय: भारतीय साहित्य ज्ञान इन नगरियों को भूला नहीं जा सका। अवन्तिका उज्जयिनी भी इनमें से एक है। जिसकी सांस्कृतिक परम्परा आज भी विद्यमान है। यहाँ तक आज भी आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

तद्यथा –

अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
पुरी इरावती चैव सप्तैता मोक्षदायिका:।।[1]

पाणिनी ने अवन्ति का उल्लेख किया है। तथा वाल्मीकि रामायण में अवन्ती का उल्लेख प्राप्त होता है। महाभारत में तो पुराणों के अनुरूप तीर्थ महाकाल तीर्थ का वर्णन आया है। तथा विन्द और अनुविन्द की चर्चा भी पायी गयी है। जिनकी बहन मित्रवन्दा श्रीकृष्ण की आठ पटरानियों में से एक थी। तथा जिसका वर्णन श्रीमद्‌भागवत पुराण में भी किया गया है।

तद्यथा–

अवन्त्या राजतनयां मित्रविन्दां मनोहराम्।
स्वयंवरे तां जहार भगवान् रूक्मणिं यथा।।[2]

उज्जयिनी में महाकाल को उन महातीर्थों में सर्वश्रेष्ठ पुण्य तीर्थ माना जाता हैं। तथा इनके दर्शन होने मात्र से पाप नष्ट हो जाते हैं। तथा स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

तद्यथा –

वाराणसी प्रयागश्च कुरूक्षेत्र शूकरम्।
गङ्गा च नर्मदा चैव चन्द्रभागा सरस्वती।।
पुरूषोतमों महाकाल स्तीथोन्येतानि शङ्कर।
सर्व पाप हराण्येव भुटि मुटि प्रदानि वै।।[3]

पुराणों में सान्दीपनि का वर्णन आता है। सान्दीपनि आश्रम में श्रीकृष्ण बलराम और सुदामा विद्या अध्ययन किया था। उस अंकपात क्षेत्र का उल्लेख भट्ट लक्ष्मीधर के चक्रपाणिविजय महाकाव्य में भी पाया जाता है। एक स्त्रोत में सान्दीपनि में उज्जयिनी आगमन और यहाँ के भीषण अकाल से दु:खी होकर उनकी तपस्या का संकेत है। तथा भगवान महाकाल ने उन्हें मालवा में कभी अकाल न पड़ने का वरदान दिया था।

कदाप्यस्यां पुर्या न हि भवति दुर्भिक्षजनिता।
मनागप्यार्तिर्त्रोरूगपिसुतराङ्काय मनसो:।।

वराह पुराण में उज्जयिनी को मणिपुर (नाभि स्थान) और वहाँ के देवता महाकाल बताये गये है।

तद्यथा–

स्वाधिष्ठान् स्मृता काञ्ची मणिपूरमवन्तिका।
नाभि देशं महाकाल स्तत्राम्या तत्र वै हर:।।

शिव पुराण के साथ ही स्कन्द पुराण के अवन्ति खण्ड में तो उज्जयिनी के सभी तीर्थों का महत्व प्रतिपादन किया गया है। पुराणों में उज्जयिनी के अनेक नाम प्राप्त होते हैं। विशाला, अवन्ती, महाकालपुरी, पद्मावती, प्रतिकल्पा, कनकश्रृंगा, अमरावती, कुमुदवती, कुशस्थली, नन्दनी, पुष्पकरण्डिनी इत्यादि।

भास के स्वप्नवासदत्ता, प्रतिज्ञायौगंधरायण, तथा चारूदत्ता, नाटकों का स्थान प्राय: उज्जैन माना जाता है। इनमें उज्जयिनी के रमणीय, चौराहों, उदस्नान, स्थानों, अवन्तीसुंदरी यक्षिणी, शिप्रा के द्वारा मार्ग आदि की चर्चा पायी गयी है। वासवदत्तानाट्य में भी उज्जयिनी से सम्बन्धित प्रयाप्त विवरण प्राप्त होता है। शूद्रक के मृच्छाकटिक तथा पद्मप्राभृटक भाण का कार्य क्षेत्र भी उज्जयिनी है। मृच्छकटिक वास्तव में भास के चारूदत्ता का नाटक का विस्तार है।

अवन्तिपुर्य्या किल द्विजसार्थवाहो
युवा दरिद्र:, किल चारूदत:।
गुणानुरक्ता गणिका च तस्य
वसन्त शोभेव वसन्तसेना।।[4]

कालिदास के रघुवंश में अवन्तिनाथ, महाकाल शिप्रा और उसके तटवर्ती उद्यान परम्परा की मनोहरी चर्चा है।

तद्यथा–

असौ महाकाल निकेतनस्य वसत्रदूरे किल चन्द्रमौले:।
शिप्रा तंरगानिलकम्पितासु विर्हतुमुद्यानपरम्परासु ।।[5]

बाणभट्ट ने महाकाल के उस तांत्रिक रूप और महाकाल संहिता के पाठ की चर्चा की है। कथासारित्सागर की कथाओं का प्रवचन शिवजी उज्जैन के श्मसान में ही करते है। इन कथाओं में ही वेतालपञ्चीसी की कथाएँ भी है।

जैन ग्रन्थों में भी वर्णन प्राप्त होता है। शंकराचार्य ने वैष्णव, शैव, शाट और आदि को अपने वश में कर उज्जैन जाकर महाकाल के दर्शन किये।

मकरध्वजविद्रिडाप्ति विद्वान्
श्रमहत्पुष्पसुगन्धवद्धन्मद्धि:।
अगरूद्‌भवधु मधूपिताशं स
महाकाल निवेशनं विवेश।। (श्रीशंकरदिग्विजय:, सर्ग 15)

राजशेखर की काव्यमीमांसा में विद्त्सभा की व्यवस्था में अवन्ती के विद्धानों के बैठने का स्थान निर्धारित बताया गया है।

श्रूयते चोज्जयिन्यां काव्यकारपरीक्षा–53 'इहकालिदासमेण्ठावत्राम रुरूपसूरभारवय:'।

हरिचन्द्रचन्द्रगुप्तौ परीक्षिताविह विशालायाम्।।[6]

राजशेखर के अनुसार अवन्ती में भूतभाषा का प्रयोग करते हैं। (अध्याय–10)

* शोधार्थी (संस्कृत साहित्य एवं दर्शन विभाग) महर्षि पाणिनि संस्कृत एवं वैदिक विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

आवन्त्या: पारिमात्रा: सह दशपुरजैर्भूत भाषां भजन्ते।

बालरामायण अकं (दस) में उज्जयिनी की विशेषताएँ कहता है।

खेले संचरितुं तरङ्गतरलभू लेखमालोकितुं
रम्य स्थातुमनादरार्पितमनोमुग्धं च संभाषितुम्।
सन्त्यथोज्जयिनी जनीर्विवदितुं हृद्यं च हे जानकि
पत्यङ्गार्पणसुन्दरं च न जानो जानाति रन्तुं पर:।।[7]

दसवे अंक के अतिरिक्त तीसरे अत में भी उज्जयिनी शिप्रा का वर्णन प्राप्त होता है।

निर्वाणैकरूचिर्भवश्च भगवां स्त्रैलोक्य लीलागुरू
दैवोऽसौ मकरध्वजश्च वसतो विश्रान्तवै वैरव्रतम्।
यस्यामा श्रमतृष्णयैव नगरीमेकासर्नी तामसौ
शिप्राम्भ: परिरवावर्ती नृरपति: सत्यव्रतो रक्षति।[8]

श्री हर्ष ने भी अपने नैषध महाकाव्य में शिप्रा और महाकाल का वर्णन प्राप्त होता है।

तत्रा नुटीर वनवासित पस्विविप्रा शिप्रा तवोर्मिभुजया
जलकेलिकाले।
आलिङ्गनानि ददती भविता वयस्या हास्यानुषन्धरमणीय
सरोरूहास्या।।[9]

नवसाहसात चरित में उज्जयिनी का वर्णन प्रथम सर्ग में प्राप्त होता है। उज्जयिनी में अमरावती नाम की नगरी थी। जहाँ विक्रमादित्य नाम का राजा निवास करता था।

अस्ति क्षितावुज्जयिनीति नाम्नापुरी विहायस्यमरावतीव।
बबन्ध यस्यां पदमिन्द्रकल्प: श्रीविक्रमादित्य इति क्षितीश:।।[10]

महाकवि बाण्भटट् के रचना जगत् में उज्जयिनी –भाणभट ने न केवल अपने हर्षचरित में अपितु कादम्बरी में भी महाकाल की गौरवगाथा गयी है। भगवता महाकालाभिद्यानेन युवन त्रयसर्ग स्थिति सहाकारकारिना। प्रमथमाथेन काली को कवि ने महाकाल की अभिसारिका बताया है। महाकालाभिसारिकावेश –[11]

तृतीय उच्छावास में महाकाल हृदय नामक एक महातन्त्र के मारमाशान में जन की भी चर्चा है। भगवतो महाकाल हृदयनाम्नो महामन्त्रस्य जपकोट्या कृतपूर्व सेवोऽस्ति। हर्षचरित से भी ज्ञात होता है। कि यहाँ महाकालभट अथवा महाकाल उत्सव का आयोजन भी होता था। तदनुसार ही पाशुपत परम्परा के अनुपालन की चर्चा 'कादम्बरी' में भी है। जीर्णा पाशुपतोपदेशलिखितमहाकालमतेन।

कथासरित्सागर –(लावाणको नाम तृतीयो लम्बाए:) में भी उज्जयिनी का वर्णन प्राप्त होता है। इंगित है। न जाने वृष से उज्जैन को शिवजी ने अपना निवास बना लिया था–

उज्जयिन्यामभूत्पूर्व पुण्यसेनाभियो नृप: स जस्तु बलिनान्येन राज्ञा गत्वाभुज्यत।। [12](97)

राजतंरङ्गिनी 865 से प्राप्त होता है। कान्त उदन्त वाले भूमुज ने अवन्तिपुर भूमि पर, शालि, सम्पत्ति–शालिनी कुल्या अवतारित की है। तद्यथा–

अवन्तिपुरभूमौ च कान्तोदन्तेन मुभुजा। कुल्यावतारितातुल्या शालिवा सम्पति शालिनी।।[13](865)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गरूड पु. अ. 06/114
2. (महा. सभा.पर्व. 51/8.9) वायु पुराण. 34/57–भागवत पु. 10/58–30–31)गर्ग संहिता द्धाराका खण्ड 16/6/16
3. (गरूड पुराण अ. 66/7)
4. (मृच्छकटिकम् अ.1/6)
5. रघुवंश (35)
6. काव्यमीमांसा अध्याय 10) 54
7. बालरामायण अकं (दस) 81
8. बालरामायण अकं(अध्याय 3–47)
9. (नैषधीयचरितम् सर्ग 11–89)
10. नवसाहसाङ्क (1–17)
11. विभ्रर्य बिभ्रतीम् (पृष्ठ 641)
12. कथासरित्सागर –97
13. राजतंरङ्गिनी 865

****

Architecture of Ruined Avantiswamin temple, Avantipura

Sabeen Ahmad Sofi* Dr. Vasundhara Sharma**

Abstract - The kashmirian temples are outstanding through the sleek beauty in their outlines, via the massive boldness in their elements, and by means of the glad propriety in their decorations.The gateways of the avantiswamin temple having columned porticos with a flight of steps. Inside the center of the distance between the gateway and the primary shrine is a moulded pedestal base which seems to be the base of a Garudadhvaja pillar. The steps of the temple had been leading towards the river bank that is at the western side. An ordinary drain made below the peristyle on the south-western side becomes additionally found merging with the river as well as the rain water was taken off through this drain to the river. Its lofty pyramidal roofs, its trefoiled doors, included through pyramidal pediments and the superb width of its inter-columniations are the kashmirian architectural capabilities. In this paper, we discussed the architectural of said temple in terms of style, material, design, etc.
Keywords - Awantipura, Temple, Architecture, Ruined.

Introduction - Awantipura is located at 75^0 4 long. 33^0 55 latitude. In Srinagar-Jammu national highway and right bank the Jhelum river[1].the city is famous as an ancient capital, founded by king avantivarman in 855-883A.D.is about 27km south –east of Srinagar[2]. The town was most important sacred religious pilgrimage place in ancient times and was called vishvaikasara[3]. Avantivarman erected two remarkable temples, one was dedicated to Lord Vishnu and another to lord Shiva[4]. .Avantivarman built an avantiswamin temple [Vishnu] before accession to the throne[5].the courtyard is paved with stone flags and measures 174feet east to west by 148feet 8inchs north to south, inside the Centre, of which is the main shrine, constructed on a double base with four smaller shrines on the four corners, this shows the pancharatna class 'fivejewels'[6].The entrance of the temple that's in the middle of the west wall and is approached by means of a flight of steps[7]. The wall, floor of the entrance is both externally and internally ornamented with sculptured reliefs[8]. The scenes in the square panel at the right hand pilaster of the wall constitute probably a king and his two queens seated in 'sportive fashion' on a simhasana[9] [lion throne].inside the area among gateway and the main shrine is a stepped, stone which appears to be the base of a garudadhvaja, the divine eagle,is the vehicle of Vishnu, and also forms the emblem at the banner of his master[10]. The sculptured relief depicting six armed kamadeva sitting with two of his wives [rati and Priti] wears a long garland and carries pushpabana [floral-arrows] and dhanu [bow] in his upper right and left hands[11].the gateway was further divided into two chambers by a cross wall with a square opening in the center, permitting to go into the temple courtyard[12]. The Central shrine is constructed on a double base, that's a torus moulding and a cyma recta cornice[13]. They dazzle the tourists withtheirsumptuousness, elegance and durability[14]. The temple is built through tremendous rectilineal blocks of limestone, betokening strength and durability. the material involved in the construction of the temple is limestone of whitish, bluish color having fine grains and easy to chisel, no cementing material was used, revealed that fine quality lime was invariably used in the joints in such a fashion that even a hairpin gap was not visible and the smoothness of the surface was maintained in a high order. Now the temple is shapeless masses of ruins, but the gateway and colonnade are standing[15]. The base of the temple is intact, but the sanctum, which measured 33feet square externally, has almost disappeared[16].the chief beauty of the temple lies in its cellular colonnade and comprises 69 cells, each of which is on the average 3feet 8inches by 4feet 10inches, the cell in the Centre on each side being larger than the rest and advanced slightly forwards. All of them are preceded by 24 sided columns in plain square base which have for the most part suffered severely at the hands of the destroyer. The only wall ornament of the peristyle is the variety of 138 ½ engaged columns and at the pilasters on both sides of the terfoiled front of the cells[17]. In general, name the temple is known as 'pandavlari' which is a corrupt name of 'pandavvanki-lari' means 'pandus house'[18]. In this temple, latest excavations have found out a huge flight of stone steps leading as much as the stay of a valuable edifice which stands inside the Centre of a massive quadrangle enclosed via a colonnade of super architectural beauty and the pillars of the temple are fantastic layout[19].the style of the temple corresponds with that of the martand and

*Research Scholar (History) Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Principle, Kamlabai Tripathi College, Bargi Nagar (M.P.) INDIA

quadrangle; however the semi-connected pillars of the arched recesses are enriched with complicated carving of very varied character, even as the large indifferent columns are somewhat less elegantly proportioned[20].

Conclusion - in conclusion, we can say, after study and conducting the survey of the temple, the avantiswamin temple is one of the greatness of the king avantivarman and the architecture beauty of the temple is the master talent of the kashmirian architecture and the temple attracts the tourists throughout the world .The superiority of the kashmirian structure seems too had been recognized throughout India, the term 'sastra-silpina' [architects] had beenapplied to them as a result of their well-known ability in architecture.

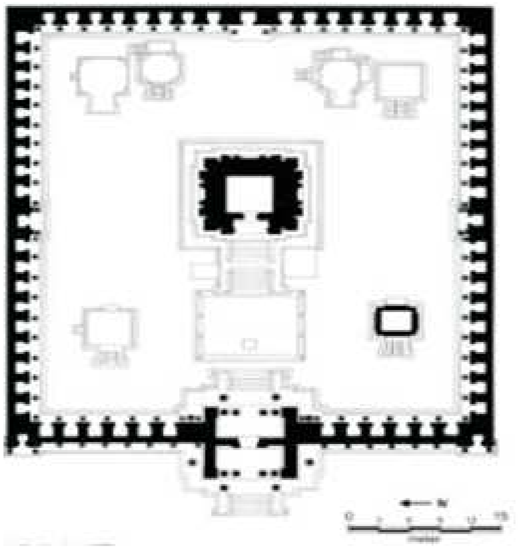

Plain of avantiswamin temple

References :-

1. Stein M.A; Kalhanas Rajatarangini, chronicle of the kings of Kashmir, vol.l p-191.
2. Bamzai; culture and political history of Kashmir, vol.l p-135.
3. Stein M.A; Kalhanas Rajatarangini, chronicle of the kings of Kashmir, vol.l p-191
4. Sufi G.M.D; Kashir, a history of Kashmir, vol.l p-56.
5. Koul Anand, Archaeological Remains in Kashmir, p-43
6. Kak, R.C. Ancient Monuments of Kashmir, London, [1953] p.124.
7. Ibid.
8. Ibid.
9. Ibid.
10. Ibid.
11. Ibid.
12. Medieval stone temples of Kashmir, p-1.
13. Kak, R.C. Ancient Monuments of Kashmir, London, [1953] p.122.
14. Koul Anand, Archaeological Remains in Kashmir, p-43.
15. Ibid.
16. Kak, R.C. Ancient Monuments of Kashmir, London, [1953] p.122.
17. Ibid.
18. Lawrence R. Walter, the valley of Kashmir, London, [1895] p.165.
19. Neve Ernest F. things seen in Kashmir, p-91.
20. Lawrence R. Walter, the valley of Kashmir, London, [1895] p.165

****

Old Age Problems and Challenges

Nisar Ahmad Nengroo* Dr. Sulekha Mishra**

Abstract - Aging is a process where over time an individual experiences a decline in performance, productivity and health. Traditionally, the care of the aged has been the responsibility of the family. But new trends have emerged to transform family structures which has reduced the capacity of this institution to serve as the safety net for the less privileged. The emergence of nuclear family has changed the pattern of life enormously. The institution of family as the shelter for aging is gradually being eroded. Ageing is the natural stage of human life, it brings with it innumerable problems for the people who have grown old. These problems can be distinguished under subheads health; economic, physiological, housing and elder abuse related India faces many challenges in welfare for its elderly population. This article highlights the problems of aged population living in India.

Key Words - Economic problem, social problem, housing problem.

Introduction - Senior citizen population is a universal phenomenon. One of the undeniable facts of human life is that the aging process is basically normal. Life is progression from youth to old. Aging is complex process that greatly influences the biological, psychological and sociological functioning of the organism it is normative process and not a fixed dimension of the life cycle. Like all previous life stages, aging consists of series of status passages. A central concept in any discussion ageing is the meaning of age itself. The senior citizens as per the United Nations are referred to as the people of 60 year of age and above. In India also they are described as persons of sixty years and above.

The main problem with the senior citizen in India is poverty. For the majority who works in the subsistence economy, the livelihood of the elderly depends on the vagaries of the weather, and receives no pensions when they retire. This has significance for their quality of life in that they have difficulties in meeting their basic needs (food, shelter, health and transportation). Because of the elderly persons have little or no money; they suffer from malnutrition, leading to depression and mantle confusion. In addition to problems of illiteracy, unemployment, widowhood and disabilities, older women in India also face life-long gender based discrimination, resulting in differential patterns of ageing of men and women.

Problems of Senior Citizens in India - Old age is a natural process. In many countries this phenomena has been considered a serious attention of policy makers of the government. There are a number of older people grows, we need to realize that there are many subsequent serious issues related to the situation. India is facing several challenges in the form of weak economic growth, weak pension system, and null infrastructure for ageing people, and above all lack of political will makes life miserable for the senior citizens in India. Problems of aging usually appear after the age of 65 years. In this Age senior citizens face Medical, Economic, Social and Psychological problems.

Medical Problem - Health problems are supposed to be the major concern of a society as senior citizens are more prone to suffer from ill health than younger age groups. It is often claimed that senior citizens are accompanied by multiply illness and physical ailments. Besides physical illness, the senior citizens are more likely to be the victims of poor mental health. Mental disorders are very much associated with old age. Decline in mental ability makes them dependent. They no longer have trust in their own ability or judgements but still they want to tighten their grip over the younger ones. They want to get involved in all family matters and business issues. Due to generation gap the youngsters do not pay attention to their suggestion and advice. Instead of developing a sympathetic attitude towards the old, they start asserting their rights and power. This may create a feeling of deprivation of their dignity and importance. Thus, health status of senior citizens should occupy a central place in any study of senior citizen population. In most of the primary surveys, the Indian, senior citizen in general and in rural particular are assumed to have some problems like cough, poor eye sight, anaemia and dental problems. There is lack of provision of medical aid, and proper familial care, besides insufficient public health services to meet the health needs of senior citizens. Failing health due to advancing age is complicated by non-availability to good quality, age-sensitive, health care for a large proportion of older persons in the country. In addition, poor accessibility of health services, lack of information,

* Research Scholar (Political Science) Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Professor & Head (Political Science) M.K.B. College, Jabalpur (M.P.) INDIA

high costs of disease management make reasonable elder care beyond the reach of senior citizen, especially those who are poor and disadvantage.

Economic Problems - Elderly people face several challenges and one of the most important among those is the problem of financial insecurity. Old age dependency ratio is increasing and it is projected to increase continuously, with higher share from rural areas than in urban areas. The National Sample Survey Organization (NSSO) in its 2006 report revealed that a higher percentage of males in rural areas (32 per cent) are found to be financially fully dependent as compared to that in the urban areas (30.1 per cent). Widow, poor and disabled elderly constitute more disadvantaged among elderly population. Pension and social security is restricted to those who have worked in the public sector or the organized sector of industry; however, many surveys have shown that even retired elderly people are confronted with the problems of financial insecurity and loneliness.

Social Problems - Sociologically, aging marks a form of transition from one set of social roles to another and such roles are difficult. However, in modern society, improved education, rapid technical changes and new forms of organization have often rendered obsolete the knowledge experience and wisdom of senior citizens. Older people suffer social losses greatly with age. Their social life is narrowed down by loss of work associated, death of relatives, friends and spouse and weak health which restricts their participation in social activities. The home becomes the centre of their social life which gets confined to the interpersonal relationship with the family members. Due to loss of most of the social roles they once performed, they are likely to be lonely and isolated severe chromic health problem enable them to become socially isolated which results in loneliness and depression.

Housing Problems - Housing for the senior citizens should be suitable not only to the living pattern which they have established in optimum health, but also to conditions of failing health and illness, commonly associated with later years of life such as, failing eye sight, hearing, slowing and upsurges, diminishing energy and more acute disabilities, such as blindness, forgetfulness etc. On this pattern, the housing available to majority of the senior citizens may be found inappropriate and unsuitable to their requirement. The sizeable populations of older widows as well as the older males have been facing the problem of where to live peacefully.

Conclusion - Older persons are considered as most revered members of the society in our country but treated otherwise when it comes to practical behaviour with older people. Old age is a stage of life that every human being ultimately reaches and it is inevitable. In this time people dread old age but what the youth should be aiming is to create a world where people do not fear old age as a phase which they consider an inescapable prison but look forward to it as a phase of vacation where they can enjoy and have their loved ones to care of them after decades of having worked so hard and showered their loved ones with care and love. This aim cannot be achieved through administrative means only this requires the people of the society to understand the severity and urgency of the situation to be made known to the masses. The real solutions are not new laws and provisions, the real solution lies with the people themselves. If they start treating the old aged people as they deserve to be treated with respect and love then this problem will cease to exist.

References :-

1. AmossPamel T, Harrell. Other Way of Growing Old: Anthropological Perspectives. Stanford University Press, California, 1981.
2. Bali P Arun. Understanding Growing People of India. Inter India Publications, New Delhi, 1999.
3. Bose Ashish, Kapoor Mala, Shankardas. Growing Old in India. Voices Reveal, Statistics, Speak. B.R publishing, New Delhi, 2004.
4. Dandekar K. The Elderly in India. Sage Publisher, New Delhi, 1993.
5. HooymanNacy R, Asuman H. Social Gerontology: A Multidisciplinary, Perspective. 4th edition, Allynand Bacon Publication, Boston, 1996.
6. Irudya S Rajan, Mishra US, Sharma Shankar. India's Elderly: Burden or Challenge, 1999.
7. London and thousand Oaks Sage Publications, New Delhi.
8. Mahajan A. Problems of Aged in Unorganized Sector. Mittal Publication, New Delhi, 1987.
9. Mnichiello Victor, Chappelle Kending, Walker (editors). Sociology of Aging International Perspectives. Venereology, Melbourne, 1996.
10. Nayar PKB. Aging and Society. The Case of Developing Countries. Social welfare: Sage Publications, New Delhi.
11. Pali P Arun. Care of the Elderly in India Changing Configurations. Indian Institute of Advanced Studies, Shimla, 2001, pp. 28-35.
12. RaginA, Sadka E. The Decline of the Welfare State. Demography and Globalization, MIT Press Cambridge, 2005.
13. Randhawa S Maninder. The Rural and Urban Aged. National Book Organization, New Delhi, 1999.
14. Shiva Raju. Status of Urban Elderly: A Micro Socio Study. B.R. Publications, New Delhi, 2002.
15. Sinha JNP. Problems of Ageing. Classical Publishing Company, New Delhi, 1989, pp.5-7.
16. Singh Kirpal. Aging in India. Minerva Associates Publications, Lucknow, 1975.

****

Perspectives of Elderly People in India

Aijaz Ahmad Khan* Dr. Sulekha Mishra**

Abstract - The elderly population of India is projected to increase to about 300 million by 2050. Families, the traditional source of support for the elderly in India, are getting smaller as result of reduction in fertility and, in rural areas, due to migration. Changing norms and attitudes on intergenerational relations and filial piety have the potential to weaken traditional social and family support structures that the elderly depend on. As institutional and welfare support systems are lacking in India, changes to the family and social support structures will have serious implications for ageing in India. The demographic, economic, family and health perspectives presented in this paper reveal some of the complexities of the ageing in India. They show that the nature, type and direction of support between the generations depends on the situation and resources of both parents and children, embedded within the wider social and cultural values of support and care, and the expectations and meanings attributed to these values. The perspectives presented also raise important questions about the relationships, roles and responsibilities of individuals, families and the state.
Key Words - family living, Work, Income, and Economic Independence.

Introduction - About eight per cent of India‘s population is over the age of 60, a figure similar to that of Indonesia but lower than China‘s 12.4 per cent. In absolute numbers, however, there are more than 93 million elderly in India and this number is projected to increase to about 296 million by 2050. This paper presents important demographic, economic, social, family, health and policy perspectives on ageing in India. With an ever changing socio-economic and demographic scenario across the country, living conditions of older persons have also changed remarkably. Today, with advancement of medical science, a better standard of life and overall development in the country, not only is the number of old people growing rapidly, their life expectancy is also gaining new heights every year. As per analysis of census 2011 data, population of older persons in India has already crossed the unique mark of 100 million old people in Indian population. Old people need family support and care but with increasing popularity of nuclear family system and continuous migration they are constantly being marginalized and isolated, particularly in urban areas. Emotional, social, financial, medical and legal security structure is getting diluted and it leads to continuous denial of their human rights. Human rights are rights people are entitled to simply because they are human beings.

Older men and women have the same rights as anyone else. Our human rights do not change as we grow older. However, there are no visible human rights for older persons under international law today.

In absence of family support and care, sense of security is missing among older persons, which is making their life painful and insecure day by day. In highly industrialized as well as commercialized areas of the country, most of the older persons find themselves isolated and marginalized as their old age related needs remain unattended at all levels. Despite growing share in population they are not getting due attention in the society.

Demographic Aspects of Ageing - Population ageing is brought about by shifts in the age structure of a population, due to changes in births, deaths and migration. Increasing birth rates make a population younger. However, the effect of mortality on age structure depends on the age groups which experience the decline in mortality at younger ages makes the population younger while decline in mortality at older ages makes the population older. Demographic transition in India over the last half century has witnessed a steady change in fertility and life expectancy. Fertility began to decline in earnest from the mid-1960s reaching a low of 2.66 by 2011. Life expectancy at birth increased rapidly between 1950 and 1975, mainly due to reductions in child mortality rates, followed by a steady but slower rate of increase post-1975. Mortality decline in older ages has not been dramatic. While life expectancy at birth increased from 49.7 to 63.5 between 1970-75 and 2002-6, life expectancy at age 60 increased from 13.8 to 17.9 years and at age 70 increased by less than 3 years during the same period.

India‘s spatial variation in demographic indicators means that there is diversity of ageing patterns. States like Kerala and Tamil Nadu which have progressed in the demographic transition have a larger proportion of elderly in the population and this is projected to increase to more than 15 per cent by 2021. Regional demographic

* Research Scholar (Political Science) Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Professor & Head (Political Science) M.K.B. College, Jabalpur (M.P.) INDIA

imbalances and economic disparities have intensified the interstate migration of surplus labour from low growth states with large young population such as Bihar to high growth states such as Tamil Nadu. Much of labour migration is for work in commercial sectors. There are no signs yet of migrants as care providers for elderly in states such as Tamil Nadu and Kerala.

Migration influences the age structure of the population in both the sending and receiving areas. In urban regions, such as Delhi, an influx of working age adults has kept the population relatively youthful. Many of these young migrants might move out of the city in old age, due to high cost of living in the city, keeping population of cities young over the long term. Migration is important in understanding the well-being of elderly in rural areas where many elderly are-left behind in villages as their children migrate to cities.

Family, Living Arrangements and Intergenerational Relations - Filial piety, a traditional virtue espoused by religion and culture in India, places the responsibility of support and care for the elderly on children. The traditional Indian family structure of elderly living with children was seen as a reflection of filial piety. However, structural, institutional and ideational changes have resulted in changes in employment structure, migration, shifts towards consumerism and changing notions of family. These may have weakened the support and care received by the elderly and could have brought about changes in the living arrangements of the elderly.

In public discourse, elderly living alone or in old age homes is interpreted as a sign of breakdown in traditional Indian values. Elderly cited inability of their families to take care of them as the main reason for living alone. However, a small number of elderly preferred living alone for privacy and to maintain distance from family members. About 40% of elderly living alone rarely or never communicated with their children despite the availability of communication technology. While lack of communication with their families might be a reason why they are living alone, it is also possible that living alone further weakens the ties with family members. Elderly approach living alone or in old-age homes with ambivalence. As Lamb has observed, living alone is not something the elderly in India find-unambiguously easy or natural but approach it-with critical self-reflection, self-consciousness and effort.

A majority of elderly live with at least one other family members. Nearly 22 per cent of them live with their spouse, children or both. Many elderly reside with their children‘s family such households include at least one of the following members: son-in-law or daughter-in-law or grand children. The remaining 17 per cent live in households that have at least one person who is not their spouse, child, son- or daughter-in-law, or grandchild. A majority of the elderly living with children expressed satisfaction with their current living arrangement, and a majority stated that children should support the elderly.

Work, Income and Economic Independence in Old Age - As in other countries, elderly in India consume more economic resources than they produce through labour. The relationship between production and consumption of resources across age groups is presented, Production and consumption of resources changes with age, showing a deficit at younger and older ages and a surplus at working ages. This shows that labour income declines rapidly past age 60 and plunges below the consumption level leading to a deficit. This deficit at older age can be met through public transfers via government, private transfers in the form of intra-family transfer of resources, and asset-based transfers such as through the use of accumulated savings or income derived from assets. Asset-based transfers are the main source of support for the elderly in India, except for the very old who rely on public transfers. The contributions of intra-family and public transfers are small and do not cover the deficit in old age in any significant way. Evidence from the National Transfer Accounts (NTA) project in India shows that family resources are used to support the young more than the elderly, and intra-family transfers from children to the parents are not high. In total, elderly contribute more than they receive over their lifetime. Elderly in India use income from productive assets such as farms or house and savings accumulated over their productive years to support themselves in old age.

Conclusion - The demographic, social, economic and health aspects of population ageing in India presented in this chapter raise important questions about the relationships, roles and responsibilities of individuals, families and the state. In India families remain the main source of support for the elderly. However, the intergenerational relationship is neither unidirectional nor fixed as seen in living arrangements and economic situation of the elderly. The nature, type and direction of support between the generations is determined by the situation and resources of both parents and children, embedded within the wider social and cultural values of support and care, and the expectations and meanings attributed to these values.

The family‘s role and responsibility in taking care of the elderly is reinforced by the government‘s approach and policies. National Policy of Senior Citizens, 2011, the guiding framework on ageing, strongly emphasizes that the elderly should continue to live with the family and that the family act as primary caregivers; institutional care is seen as a last resort. This blunt emphasis does not consider circumstances of the family. Neither does it provide any meaningful provisions to help the families support the elderly. The policy does mention that families must be strengthened to support the elderly, but none of the provisions in the-areas of intervention really strengthen or support the families. Most of the provisions deal with providing support to the elderly in terms of income security in old age, healthcare, housing and welfare needs of the elderly.

References:-

1. United Nations. 2013. World population prospects: The 2012 Revision. New York: Department of Economic and Social Affairs, Population Division.
2. Guilmoto, Christophe Z., and S. Irudaya. Rajan. 2013. Fertility at the district level in India. Lessons from the 2011 Census. Economic and Political Weekly 48(23): 59-70.
3. Saikia, Nandita, Abhishek Singh, and Faujdar Ram. 2010. Has child mortality in India really increased in last two decades? Economic and Political Weekly 45(51): 62-70.
4. Khandelwal, Rajiv, Amrita Sharma, and Divya Varma. 2012. Creative practices and policies for better inclusion of migrant workers: The experience of Aajeevika Bureau. Paper presented at the National Workshop on Internal Migration and Human Development in India Workshop Compendium. New Delhi: UNESCO and UNICEF.
5. Desai, Sonalde, Amaresh Dubey, Brijlal Joshi, Mitali Sen, Abusaleh Shariff and Reeve Vanneman. 2010. Human development in India: Challenges for a society in transition. New Delhi: Oxford University Press.
6. Bhat, Anitha Kumari, and Raj Dhruvarajan. 2001. Ageing in India: Drifting intergenerational relations, challenges and options. Ageing & Society 21(5): 621-640.
7. Brijnath, Bianca. 2012. Why does institutionalised care not appeal to Indian families? Legislative and social answers from urban India. Ageing & Society 32(4): 697–717.
8. Kalavar, Jyotsna M., and D. Jamuna. 2011. Aging of Indian women in India: the experience of older women in formal care homes. Journal of Women & Aging 23(3): 203-215.
9. Lee, Ronald, and Andrew Mason. 2010. Some macroeconomic aspects of global population aging. Demography 47(1): S151-S172.
10. Ladusingh, Laishram. 2012. Lifecycle deficit, intergenerational public and familial support system in India. Asian Population Studies 9(1): 78-100.
11. Lakshmanasamy, T. 2012. Ageing and security: savings and transfers behaviour of Indian households.Indian Journal of Gerontology 26(4): 484–501.

****

India's Membership to the Nuclear Suppliers Group

Dr. Pravesh Kumar Pandey* Mohd Ashraf**

Abstract - India seeks to join the Nuclear Suppliers Group with the objective of playing amore proactive role in the nuclear non-proliferation realm. Political issues remain, however,particularly with regard to its status outside the Treaty on the Non-Proliferation of NuclearWeapons. This brings to fore questions on the relationship between the Treaty and the Groupwith regard to their scope, mandate and membership. An assessment of prospective benefitswhich the Group can derive from including India in its fold is important for a nuancedunderstanding of the implications of India's accession. If it is the Group that stands to benefitequally, if not more, then political objections could be resolved.
Key words - Membership, Nuclear suppliers group, evolution.

Introduction - After being estranged from the global nonproliferation architecture for several decades, India is making efforts to integrate itself with the regime. These efforts include gaining entry into the four technology export control groups - the Nuclear Suppliers Group (NSG), Missile Technology Control Regime (MTCR), Australia Group, and the Wassenaar Arrangement.

The shift in India's approach to the global non-proliferation architecture has been gradual. Starting in the 1990s, India began to deliberate upon its approach to export controls as it pertained to dual-use chemicals, especially following its signing of the Chemical Weapons Convention in 1993. However, with regard to nuclear non-proliferation regimes, India's open support to the principles of the Treaty on the Non-Proliferation of Nuclear Weapons (NPT) was best captured in a speech given at the Parliament in 2000 by the then India's Minister of External Affairs, Jaswant Singh.That speech redefined India's broader approach to the existing mechanisms of global nuclear nonproliferation. This shift was further catalysed by the growing convergence of interests between India and the US at the geopolitical and strategic level. India's more nuanced response to President George W. Bush's speech on National Missile Defence of 01 May 2001 is a case in point. Discussions between India and the US on "Next Steps in Strategic Partnership" in 2003-04 provided the grounds for the negotiation of a civil nuclear agreement which was recognised as a way to both bring India into the nuclear nonproliferation architecture and also bolster India- US strategic relations. The India-US civil nuclear agreement of 2005 also provided the formal framework for India and the US to pursue trade in strategic goods, which is controlled through US domestic regulations as well as multilateral export control regimes.

This shift in India's approach to the global non-proliferation architecture culminated in the completion of what can be called the first stage of India's integration process in 2008, when the NSG gave waiver to India to participate in global nuclear commerce without requiring New Delhi to implement IAEA's full scope safeguards. This waiver was given on the condition that India would separate its civilian nuclear facilities from others and that all of its civilian facilities will fall under IAEA safeguards - an understanding that applies to all nuclear weapons states under the NPT. Having separated its civilian nuclear facilities from its military facilities and signing the Safeguards Agreement, India also ratified the Additional Protocol to its Safeguards Agreement, thereby fulfilling its commitment.
The next stage in India's integration process is for it to gain entry into the four export control regimes, an objective which was noted in the India-US joint statement issued on 8 November 2010, during US President Barack Obama's visit to New Delhi. The joint statement noted that India and the US were "committed to work together to strengthen the global nonproliferation and export control framework and further transform [their] bilateral export control cooperation to realise the full potential of the strategic partnership between the two countries."

For India, its membership to the NSG hinges more on the political understanding and acknowledgement of the country's credentials as a responsible nuclear weapons state despite it not being an NPT-signatory- this is discussed in the third section. The paper concludes by calling on both the NSG members and India to have greater engagement in understanding the merits and demerits of New Delhi's accession to the NSG. This could possibly facilitate the resolution of political issues highlighted in this brief.

Evolution Of NSG - Initially referred to as the London Club, the Nuclear Suppliers Group was established following the 1974 "Peaceful Nuclear Explosion" (PNE) conducted by

* Asst. Professor (Political Science) Shri Guru Nanak Mahila Mahavidalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Political Science) Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA

India to ensure that transfer of nuclear material and technology for peaceful purposes does not lead to the proliferation of nuclear weapons. The seven founding members of the Group (Canada, Germany, France, Japan, Soviet Union, the UK and the US) considered the formation of the Group after taking note of the inadequacy of the NPT framework in restricting nuclear proliferation. NPT, in particular Article III. 2, contains the mandate for export controls on sensitive nuclear and related items. To substantiate the definition of which items were tobe controlled, the Zangger Committee was set upin 1971. In 1974, the Committee came up with theTrigger List which contained all items recognizedas sensitive; it also issued guidelines which wouldgovern exports of these items. However, at thattime, NPT had limited signatories and not allsuppliers of nuclear items fell under the mandateof the NPT and the Zangger Committee. Thismade it more important to establish a separategroup which will include all suppliers andestablish guidelines for export controls. This isexemplified by the fact that one of NSG's firstagenda was to bring France into its fold. Francewas then not party to the NPT and thus was notobligated to abide by the guidelines issued by theZangger Committee. Meanwhile, a Frenchcompany called SGN had signed a contract to builda reprocessing facility for the Pakistan Atomic Energy Commission (PAEC) in 1974.Thecontract was terminated soon after France joinedthe NSG.

Soon after its establishment, however, NSG members hit a road-block in updating the guidelines to the point where the NSG members did not meet from 1978 to 1990. During those years, the membership of the NSG grew and all its members continued their adherence to the guidelines set up by the Group in 1978. But the members failed in agreeing to discuss proposals for updating the guidelines, resulting in the deadlock. For instance, attempts at kickstarting discussions on making full-scope safeguards a condition for exports fell through.

Over the years, NSG members have been conducting regular meetings to update guidelines and control lists. While these remain tasks in progress, one aspect where much of the debate has happened is the future expansion of the Group in terms of membership. Considering that the Group's primary objective has been to ensure that export of sensitive nuclear and related materials does not contribute to proliferation of nuclear weapons, inclusion of all suppliers of such sensitive items becomes vital to establishing the Group's credibility. At the same time, the Group needs to ensure that only like-minded countries are included in the Group as it functions on the principle of consensus. Any lack of consensus could lead to a stalemate and render the Group defunct. The challenge for the Group and its members, therefore, remains on how best to meet its objectives and bring in suppliers, while preserving the effectiveness of the Group.

Political Understanding Behindindia's Entry Into NSG - India meets all the requirements as far as the technical parameters of NSG and MTCR are concerned. However, NSG will prove to be the most challenging of all the export control regimes. This is not based on the technical qualifications but on political factors that have had a significant impact on how these regimes function. The US-India civil nuclear agreement of July 2005 remains an important development in this context.

Like mentioned earlier, India's membership to the NSG is likely to be most challenging particularly given the origins of the group. India's pending candidature into the NSG is likely to be made part of the agenda when the group convenes for its plenary in June 2016. NSG chairman Rafael Grossi, who was in India in November 2015, met Indian leaders and discussed the country's case. He said, "It has all the elements in place for membership. There have been some deliberations already, and I am trying to make the process more dynamic." Yet even with active support from the major powers including the United States, United Kingdom, France and Russia, India's accession into the NSG is not at all going to be uneventful. Given that the NSG's decisions are based on the principle of consensus, it is not enough that a majority of the members are in support of India's accession. Had India gotten entry into the MTCR in October 2015, the case of its membership to the NSG would have been stronger. However, India'sMTCR membership bid also ran into rough waters when Italy stated that it would need more time to consider the case-a strategy, essentially, to stallthe process. While Italy is not necessarily against India's MTCR accession, political issues pertaining to an entirely different bilateral issue came in the way, hampering the process.

Conclusion - India's membership to the NSG will be amilestone in the process of its integration with theglobal non-proliferation architecture. But it is thissame global non-proliferation community whichalso needs to assess the benefits which it wouldgain by including India into the NSG and otherexport control regimes. Including a prospectivesupplier of sensitive nuclear and related itemsinto the Group will only enhance the credibility ofthe Group. It will allow the members of the NSG toensure that all transfers to and from India of thesesensitive items are conducted as per theguidelines of the NSG. India, on the other hand, iswilling to continue abiding by the rules of thegame in return for limited benefits thatmembership to the NSG would entail.

An objective assessment of the benefits ofIndia's entry into the NSG for India and theGroup could further shape the politicalunderstanding of NSG members on the moredifficult issues such as that of India not being a NPT-signatory. If it is the NSG which stands togain equally, if not more, than India, then there isa strong case for New Delhi to be welcomed to the
Group.

References:-

1. "Sessional Review: Rajya Sabha - One hundred and Eighty-Ninth Session", Parliament of India,accessed

14 April 2016.

2. Peter Symonds, “India embraces Bush and national missile defence project,” World Socialist Web Site, May 16, 2001,
3. “Statement on the Next Steps in Strategic Partnership with India January 12, 2004,” United States Government Publishing.
4. “Joint Statement by President Obama and Prime Minister Singh of India,” White House, accessed 19 March 2016.
5. Tadeusz Strulak, “The Nuclear Suppliers Group,”The Nonproliferation Review, 1(1), Fall 1993, pp. 2-10.
6. Mycle Schneider, “Nuclear France Abroad: History, Status and Prospects of French Nuclear Activities in Foreign Countries,” Nuclear Information and Research Service, May, 2009,pdf, p. 17.
7. “Nuclear Suppliers Group to consider India’s entry in June 2016,” The EconomicTimes, November 2, 2015

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Role of Bureaucracy in Development

Dr. Pravesh Kumar Pandey* Ajaz Ahmad Dar**

Abstract - After the attainment of independence, a fundamental change was expected to take place in the role of bureaucracy. In the colonial regime before the advent of freedom, the state was described as the "law and order state" or the "police state" or the "night watch-man state" and bureaucracy was, as a result, considered to be an instrument for the maintenance of law and order and collection of land revenue. On the other hand, after the attainment of independence, the proclaimed purpose of the state was to user in rapid economic development and social change for raising the levels of living of the masses of people and therefore, bureaucracy as the instrument of state, was expected to play a positive role on pushing forward development in all aspects and undertake a large range of functions, a variety of tasks needed to sustain and accelerate the process of development.
Key words - development administration, role of bureaucracy and agriculture and ruler development.

Introduction - The civil services in India are neither a phenomenon of modern India nor the contribution of British Rule. There are historical evidences of the presence of Civil Services in ancient India, but it lacked a proper operational framework or institutional arrangements. The development of civil services in India dates back to the first quarter of 11th century, when some British merchants, under the banner of East India Company, came here for the purpose of trade. To consider the role of bureaucracy in development, it is necessary to analyze the concept of development itself. The economists in the early years tended to consider development as increase in the gross national product are per-capita income. The rate of growth would be determined by the size of investment. However, even economists keen to realize soon that such a view on development was hardly adequate since a number of other factors other than investment- often called "non-economic" factors came into the picture in determining the rate of growth. They include social attitudes such as attitude to work, attitude to wealth, attitude to each o0ther institutions, traditional as well as modern, economic, social as well as political. Development was also dependent on science technology and their dissemination. For administrative purposes development could not be conceived in the abstract terms of economics. It had to be conceived in terms of concrete tasks of development and these had a wide spectrum because of comprehensive and planned approach to development adopted by us in the early years after interdependence. We rejected the lasses faire approach in favour of the approach to development as one sponsored by the state. In the lasses faire context, the state and therefore the bureaucracy had only a limited role to play. The state discharge only sovereign functions like currency, coinage or laying down a framework of law. The actual tasks of development were left to the initiative of the private enterprise spurred by the motivation of self-interests. However, we felt that such an approach to development would not be suitable for India. First, because development through private enterprise would be a long drawn out process. India had to accomplish in a few decades what the countries in the west accomplished over a century and accelerated development required a positive role of the state. Secondly, it was felt that in several spheres which are essential for development, private enterprise would not be forthcoming at all, viz. exploitation and mobilization of natural resources and development of basic industries or industries requiring heavy investment with a long gestation period. Thirdly, development might require economic activities not justified in purely commercial terms, for example, development of the backward areas deep in the interior would not be possible without the initiative of the state. Finally, it was argued that development required a structural change whereas laissez faire policy and free market operation would only bring about marginal or incremental change.

Bureaucracy and Development Administration - Most developing countries are engaged in bringing about rapid social-economic development. The effort is to modernize the societies by introducing change in almost all the sectors including social overheads, infrastructural facilities and productive enterprises like industry and agriculture. Social services such as health, education and water supply, infrastructure like roads and communication facilities, electricity and market Centers and productive activities in industry, agriculture, animal husbandry and forestry are being developed within definite planning frameworks.

* Asst. Professor (Political Science) Shri Guru Nanak Mahila Mahavidalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Political Science) Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA

Development goals are being set and programmes and projects formulated and implemented to achieve the goals within a specific time-horizon. There is universal concern in the developing countries to improve the standard of living of large masses of people who have so far been denied even the basic requirements of decent living. It is this concern for rapid socio-economic development that sets the background for any discussion on the relationship between bureaucracy and development administration.

Development, in this context, is an exceedingly complex enterprise involving correct diagnosis of problems, setting right priorities, planning action programmes, mobilizing adequate resources, creating new organizations and improving the capacity of existing ones and implementing programmes and projects within a definite time frame. The context of activities connected with the development enterprise is essentially a government responsibility. Private sector may be induced to fall in line with general public policy, but the brunt of development work would naturally devolve on the public sector. Hence, a high degree of public administrative competence is of paramount importance in pushing through speedy development measures. As an indispensable aid to nation-building, the role of public administration is now universally acknowledged, and this is reflected in the emergence of a sort of new administrative science in recent times called ‘development administration’.

Role of bureaucracy - Although the vital role of the public sector in bringing about rapid socio-economic change is generally acknowledged, there are many misgivings about the role of the bureaucracy in development administration. Bureaucracy has often been characterized as a soulless, inflexible machine which seems to be unsuited to the dynamic needs of social transformation. It is commonly associated with red tape, rigidity and never ending rules and regulations. Historically, it has been observed that bureaucracy antedates development administration and does not fit in with the requirements of modernization. Conservation rather than change is the essence of bureaucracy. Culturally also, as the critics have maintained, the bureaucratic form of organization does not suit the needs of the traditional societies that are currently going through a process of change. Bureaucracy has also been criticized as urban-oriented and elitist in nature and unrelated to the needs of ruler areas where most of the people of the developing countries live. Above all, development has been looked at as essentially a matter of shrewd political management of a society. Bureaucracy, in this context, has often been considered a threat to political leadership and an undesirable monopolize of power. It has even been suggested that development calls for a degree of debureaucratization and steady institutionalization of popular participation in the management of development.

Agriculture and Rural Development - In the field of agriculture and rural development, a beginning was made in 1951-52 with the establishment of the community development programme and a network of national extension service. Simultaneously, a multi-tier structure of cooperative institutions was also established in the field of credit, supply of inputs, marketing, processing, consumer distribution, rural industries etc. the administrative mechanism set up for the community development programme soon gave way to the three-tier panchayati raj system in order to make rural development administration responsive to the elected representatives of the people.

In the sixties, it was felt that the general approach towards community development was not adequate and there had to be a special thrust and single minded approach to agricultural development to deal with emerging food crisis. A number of programmes were, therefore, introduced like intensive agricultural development programme, command area development programme and the new strategy for agricultural development. The extension service was also intensified through T & V approach. This approach of intensive development agriculture ushered in the “green revolution” in some parts of the country, especially Punjab and Haryana and specially in respect of wheat.

Bureaucracy as agent of change - The formulation and implementation of these programmes required bureaucracy to play a new role-the role of an agent of development or agent of change as compared with the traditional role of the past as the agent of status quo. Furthermore, since most of these were people oriented programmes, bureaucracy had necessarily to work with the people. Motivating and mobilizing the people, communicating programmes to them, eliciting their cooperation, building up grass-root popular institutions-these were the new methods & techniques of administration which bureaucracy had to adopt. They contrasted sharply rules and regulations. The bureaucrats had to go to people as development workers rather than just passing orders on cases of people approaching them with their grievances.

Conclusion - To fit bureaucracy into developmental tasks, change is needed both on structural and behavioral fronts. Development has to depend a lot on political leadership, as the impulse for change comes more often from the political leadership. To accept the supremacy of the politician and to work alongside him as a co-partner in development enterprise are the inbuilt requirement of development. Bureaucracy has to work very closely with the people under a general rubric of service ethic. Popular participation in development has to elicit popular support for the development tasks.

References :-

1. furqan ahmad,“bureaucracy and development administration”, New Delhi, 1995, P-13
2. J.N.Khosla,“development administration-New Dimensions”,the Indian journal of public Administration, Jan-March,1966.
3. Mohit Bhattacharya, “Bureaucracy and development administration”, new Delhi, 1979, P1-3.
4. A.D.Pant & Shiva K.Gupta, “bureaucracy development and change”, New Delhi, 1990, PP 132-135.

An Assessment of the Role of Information and Communication Technology in Agriculture Development of Madhya Pradesh

Touseef Ahmad Dar* Ishfaq Ahmad Ganie**

Abstract - Information and Communication Technology (ICT) can modernize farming sector in India and can benefit all categories of farmers. Agriculture is the most important sectorin Madhya Pradesh with the majority of the rural population depending on it. The challenges of the conventional agriculture are addressed extensively by using Information and Communication Technologies (ICT) that play an important role in raising the livelihoods of the rural small landholder farmers in Madhya Pradesh. In order to make the Agriculture sector smooth and sustainable, information and communication technology played important role from last few decades to produce qualitative as well as quantitative outcome. ICT has modernized the Agriculture sector and broadened the market of various Agricultural Crops which in turn has increased cost of return and enhanced the living standard of Farmers in Madhya Pradesh. In this paper I have Drawn various facet of information and communication needed for Farmers and available ICT tools in realizing those needs.It also helps in empowering the rural people by providing better access to natural resources, improved agricultural technologies, effective production strategies, markets, banking and financial services etc. This paper also explores the role of Information and communication technology in the agriculture sector.
Keywords - Information and communication Technology, Agriculture Development, Feasible ICT tools, Madhya Pradesh.

Introduction - Agriculture in Madhya Pradesh plays a critical role and contributes major share in the economy of Madhya Pradesh. In order to improve the quality and quantity it is necessary to know the technological aspects and to develop the Information and communication that helps the Farmers for attaining sustainable production. Information and Communication technology is considered as an important part for the development of agriculture in Madhya Pradesh especially in Agriculture sector .It has been Reported that there are 11 agro-climatic zones and variety of soils available in the state to support cultivation of wide range of crops.. Favorable soil and climatic conditions have helped the state to be a leading producer of coarse cereals, oilseeds and soybean in the country. Though the contribution of the primary sector, which includes agriculture, to the total Net State Domestic Product is coming down, agriculture is still the mainstay of the State's economy, as about 74 % of the population is still directly or indirectly dependent upon agriculture. The major crops grown in Madhya Pradesh include Paddy, Wheat, Maize and Jowar among cereals and Gram, Tur, Urad and Moong among pulses, while Soyabean, Groundnut and Mustard among oil seeds. Madhya Pradesh has rich crop diversity and occupied the space by nearly all the cereals (42%), pulses (23 %), oilseeds (35%) and others (2%) in its total food basket .The Physiographic of the state exhibits a great deal of diversity with areas ranging from less than 50 meter above mean sea level to more than 1200 meter. The state falls under the catchments of Yamuna, Ganga, Narmada, Mahanadi and Godavari. On the basis of broad land features and different soil and rain fall pattern, the state consist of 11 agro-climatic zones namely (Malwa plateau, Vindhyan plateau, Central Narmada Valley, Satpura plateau, Jhabua Hills, Gird Regions, Kymore plateau, BhundelKhand Region, NImar valley, Northern Hills of Chattisgrah, Chattisgrah Plains).The main soil types found in Madhya Pradesh are alluvial, deep black, medium black, shallow black, mixed red and black, mixed red and yellow and skeletal soils. The climate of Madhya Pradesh by virtue of its location is predominately moist sub humid to dry sub humid, semi arid to dry sub-humid and semi arid in east, west and central plateau and hills respectively, according to agro-climatic regions. Since decades agriculture is playing an important role in improving the Agriculture through technology to the grower' s level. Information and Communication Technology (IT) may strengthen not only the production part but also marketing structure by use of various IT tools in production and empowering growers with various information regarding marketing. Practical demonstrations were the most preferred method of communication by the customers of the state in adopting the technical knowledge on various aspects for attractive Agriculture production followed by

* Research Scholar (Economics) Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Economics) Jiwaji Vishwavidyalaya, Gwalior (M.P.) INDIA

speech/lectures . Regarding the participation of the different groups in various trainings, rural youth showed maximum interest followed by farmers/farm women. Various training programmes like technical aspects of cultivation, including agronomic practices, fertization, pest and disease management etc., were imparted to the farmers by various means of communication/media (frontline demonstrations, result demonstrations and use of audio visual aids) and to assess which method of communication was more effective in imparting the technology . The study discusses various magnitudes of information needed for horticulture growers and also feasible application of IT tools in identifying those needs.

Objectives of the Study :

1. To know the role of ICT in Agriculture Sector in Madhya Pradesh .
2. To portray how to utilize these tools through various informative programmers.

ICT and Agriculture Development - The application of Information and Communication Technology (ICT) in agriculture is increasingly important. e-Agriculture is an emerging field focusing on the enhancement of agricultural development through improved information and communication processes. More specifically, e-Agriculture involves the conceptualization, design,development, evaluation and application of innovative ways to use information and communication technologies (ICT) in the Rural domain, with a primary focus on agriculture. All stakeholders of agriculture production system need information and knowledge about these phases to manage them efficiently. Following are the ways through which ICT is very useful in Agriculture Sector.

1. ICT and Soil Quality Assessment - Assessment of soil quality can be done in farm level and also for regional level. In regional level it can be done based on soil, climate and land uses. Some useful technologies aid to understand nature of soil and its problems due to management practices. ICTs have developed several folds in the recent past. The vision on identifying the status of natural resources also widened. Soil quality assessment is being done with some useful technologies, like remote sensing. Remote sensing is a process that collects data about an object from a remote location. Geographers use a number of mechanical devices to achieve this process. These devices contain advanced sensors that can capture information via the reflection or emission of radiation from objects. Devices used for remote sensing are constructed to sense certain wavelength bands. The objects that are sensed have particular spectral signatures and one has to match the object to the sensor. The area reported with productivity decline is demarcated. Remote sensing products are collected and interpreted for low productivity with visual observations.

2. ICTs for Market Information - The lack of accurate and timely market information in the agri-input sector is an issue at continental, regional, national and local levels, and remains a key constraint to the development of agricultural business linkages and trade around the world. Significant progress continues to be made by public and private institutions to implement market information services using advanced information and communication technology (ICT) tools. However, the complexities of fertilizer, seed and crop protection product value chains remain major constraints for integration into broader information systems. With rapidly increasing access to cell phones and computer centres, even the more remote areas of the continent are benefiting from the information offered through this advanced technology.Some Successful ICT initiatives in India:

3. Broadening smallholders Access to financial services through ICT - ICT can be used to provide financial access to farmers . The effective provision of financial services in the Agriculture sector depends greatly on the underlying infrastructure, which makes electronic transactions efficient and reliable. We stress upon the new delivery channels that aid in the provision of financial products and services to the rural sector, highlighting the potential that the ICT-enabled channels have to directly provide access to finance to farmers, entrepreneurs and other rural dwellers. Governments can also make use of ICT-enabled delivery channels to oversee and regulate the agricultural and rural sectors. A diverse number of stakeholders that are involved in the provision of access to finance are, in some cases, in partnership with governments to provide necessary infrastructure and technology to users. India have taken this approach, where the private sector is in partnership with the public sector to provide ICT-enabled financial services.

4. ICT and Agriculture risk management - Risk and uncertainty are ubiquitous and varied characteristics of the agriculture sector. They stem from uncertain weather, pests and diseases, volatile market conditions and commodity prices. Managing agricultural risk is particularly important for small holder farmers because they lack resources to absorb shocks. Risk also inhibits external parties from investing in agriculture. Timelyinformation is essential to managing risk. ICTs have proven to be highly cost effective instruments for collecting, storing, processing, and disseminating information about risk. In this module a series of topic notes and innovative practice summaries describe a variety of strategies for managing agricultural risk. They also identify important trends in current practice and a number of practical lessons which have been drawn from recent experience.

Feasible IT tools for Farmers - Information technologies has a lot of possiblities regarding the tools of information systems such as voice information delivery services, developments in electronics, video Conferencing, multimedia and internet technologies have shaped possibilities for swift gathering, processing and presentation of information.

1. Voice information delivery services - it is a telephone-based information delivery services which helps

the growers in different farming methods and also market contact to develop the lives of rural farming groups in Madhya Pradesh . Problems that Farmers are facing while cultivating crops their solutions may well be on the internet but due tolack of literacy and language, this is way beyond the reach of majority of growers.

2. Database Management System(DBMS) - It includes the whole warehouse of data and through DBMS various data are generated regarding the Agriculture production system related to various Crops ,their characters, pests, climate data, post harvest input resources, marketing resources, statistical data on area , production and productivity . To provide a platform for storing data in electronic form database is simply and quickly managed for addition,deletion and modification.Database management is a group of hardware and software for addition ,modification,deletion and reporting of data. At present many flavor of DBMS are available in market to develop database for Agriculture crops such as MS Access, Base, MS-SQL,My-SQL,Foxpro, dBase, Oracle etc.

3. Kissan Call Centre - A Kissan call center is one of the important telecommunication infrastructure computer support and human resources organized to manage successfully the queries raised by farmers immediately in the local language. Now a days most Subject Matter specialists (SMSS) utilizing telephone and computer in solving the problems and answer the queries at a call center.Kissan call center is a new aspect in the field of Agriculture Extension Management which plays an important role in making full use of on–going information and communication revolution. Utilizing the communication bandwidth serving the farming community from remotest areas of the country .

4. E-Learning for basic skills, agricultural education and video- based approaches - This type of class covers the provision of information and learning material for agricultural skills. The specific videobased approach has several important advantages to traditional forms of agricultural content, which are typically not in the local language, are planned for a literate audience, use expert terminology,lack grassroots level practicalities, and remain inaccessible in a sea of scattered media.

Suggestions :

1. Government should make the IT tools accessible to the farmers at ground level.
2. The IT tools are very expensive therefore subsidy should be given by the government so that everyone can make use of these tools.
3. Awareness programs should be held in every locality of farmers and the awareness should be given in the local language so that they can understand how to use the IT tools is more effective manner .
4. The Farmers sell their products for less cost as they are not aware, and don't have direct marketing information because of the intermediates who don't always give the the right information. Therefore direct marketing information should be provided to the Farmers to get the maximum returns.
5. The number of marketing places for selling the products should be increased in order to lower down the transportation costs which are increasing very rapidly
6. Most importantly the pesticides and fungicides available in the market, because of their low quality , damage the products severely , should be checked regularly which in turn will increase the yield and the quality of the crops.

Conclusion - Information and Communication Technology is the solution in improving the quality and quantity of various Agriculture crops in the Madhya Pradesh . For sustainable productivity it is important to utilize the IT tools in the Agriculture sector and broadens the account in remote areas. In order to make the use of various technologies, it is important to make accessible information on time to the Farmers at the required period so that they will get the maximum production and return. In the trail to revolutionize access process by the use of certain infrastructure facilities must be developed for different Farmers in Madhya Pradesh .It has been found that information and technology increased interests for cultivation among the different Farmers especially rural youth in Madhya Pradesh . It is also concluded that proper use of Information and communication technology can offer solutions in order to improve the production and productivity by advanced technology in Madhya Pradesh . Use of different methods of communication in local dialect will help in spreading of knowledge which will improve the socio-economic conditions of Farmers.

References :-

1. Francis Lwesya and VicentKibambila (2017),The role of ICT in facilitating farmers' accessibility to extension services and marketing of agricultural produce: The case of Maize in Mbozi District, Tanzania,International Journal of Agricultural Marketing Vol. 4(2), pp. 142-151.
2. K Lokeshwari (2016) A Study of the Use of ICT among Rural Farmers, International Journal of Communication Research, Volume 6 • Issue 3, July / September 2016.
3. Kumar, G. And Sankarakumar, R. (2013) Role of Information and Communication technology in agri-culture–perception of the farmers in ramanathapuram district, International Journal of Current Research Vol. 5, Issue, 05, pp.1029-1033
4. Pukhta. M.S, N.A. Sofi and S. Maqbool (2012) "information and communication Technologies for apple farming Production Management " international Journal of Information Science and System vol,1(1): 1-6.
5. Warren, M.F. (2002) Adoption of ICT in agricultural management in the United Kingdom: the intra-rural digital divide. Agricultural Economics. 48 (1). pp.1-8.
6. http//www.agmarknet.nic.in.
7. http//www.Mpkrishi.org.

An Analytical study of Non Performing assets in ICICI Bank Ltd.

Amrita Soni* Dr. Ashish Pathak**

Introduction - Banking is an important segment of the tertiary sector and acts as a back bone of economic progress. Banks are supposed to be more directly and positively related to the performance of the economy. Banks act as a development agency and are the source of hope and aspirations of the masses. They are the oldest form of banking institution having large volume of operations over a vast area. Since the process of liberalization and reform of the financial sector were set in motionin 1991, banking has undergone significant changes private sector banks occupy a major part of the banking in India. They are the oldest form of banking institution having large volume of operations over a vast area. They are having very good net-work of branches even in rural and semi-urban areas. Now they are not only engaged in their traditional business of the accepting and lending money but have diversified their activities into new fields of operations like merchant banking, leasing housing finance, mutual funds and venture capital. ICICI Bank is an Indian multinational, private Sector banking and financial services company.

Industrial Credit and Investment Corporation of India (ICICI) :- ICICI Bank was established by the Industrial Credit and Investment Corporation of India (ICICI), an Indian financial institution, as a wholly owned subsidiary in 1994. The parent company was formed in 1955 as a joint-venture of the World Bank, India's public-sector banks and public-sector insurance companies to provide project financing to Indian industry. The bank was initially known as the Industrial Credit and Investment Corporation of India Bank, before it changed its name to the abbreviated ICICI Bank. The parent company was later merged with the bank. ICICI Bank launched internet banking operations in 1998. ICICI Bank was originally promoted in 1994 by ICICI Limited, an Indian financial institution, and was its wholly-owned subsidiary

Non Performing Assets:- The Non Performing Asset (NPA) concept is restricted to loans, advances and investments. As long as an asset generates the income expected from it and does not disclose any unusual risk other than normal commercial risk, it is treated as performing asset, and when it fails to generate the expected income it becomes a "Non Performing Asset". In other words, a loan asset becomes a Non Performing Asset (NPA) when it ceases to generate income, i.e. interest, fees, commission or any other dues for the bank for more than 90 days. A NPA is an advance where payment of interest or repayment of instalment on principal or both remains unpaid for a period of two quarters or more and if they have become „past due. An amount under any of the credit facilities is to be treated as past due when it remain unpaid for 30 days beyond due date. It is also called as Non Performing Loans.

Types of NPA:-

a) Gross NPA
b) Net NPA

Literature Review:- Review of literature is important part of the scientific research. It enables the researcher to understand different aspect of the study or the problems to be investigated.

1. **The Report of the Rural Banking Enquiry Committee (Thakurdas Committee) (1949)** Concluded that proper investigate action was very essential. Banks have to maintain close contacts with the borrowers, keep track of the end-use of funds lent to the borrowers' effective recovery of advances as per the repayment schedule.
2. **RBI's Study Team on Overdue (1974)** Estimated that more than three-fourths of the over dues were due to wilful default. Faulty lending policies, failure to link credit with marketing, lack of will on the part of management to take strong action against recalcitrant and wilful defaulters, lack of financial discipline and apathetic of some of the State Governments towards creating an environment conducive and congenial to repayment of dues were the causes for over.
3. **Tripathi, L. K., Parashar, A., Mishra, S. (2014):** The present study, with the help of multiple regression model attempts to investigate the impact of priority sector advances, unsecured advances and advances made to sensitive sectors by banks like SBI and ICICI group and other nationalised banks on Gross NPAs of banks.
4. **Joseph, A. L. (2014):** This paper basically deals with the trends of NPA in banking industry, the internal, external and other factors that mainly contribute to NPA rising in the

*Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA
** Professor (Commerce) Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

banking industry and also provides some suggestions for overcoming the burden of NPA.

5. Vighneswara Swamy (2013), Study has established that private banks and foreign banks have advantages in terms of their efficiencies in better credit management in containing the NPAs, which indicates that bank privatization can lead to better management of default risk. These findings infer that better credit risk management practices need to be taken up for bank lending. Adequate attention should be paid to those banks with low operating efficiency and low capitalisation as also to macroeconomic cycles that appear to be playing some role in NPA management. The state owned banks need to be toned up with adequate measures to sharpen their NPA management practices. These findings assume crucial importance in view of the significance. It is summarised that Private Banks (both Old and New) and Foreign Banks appear to manage their NPAs efficiently.

6. According to the Report of the Agriculture Credit Review Committee (1989), over dues prevented recycling of funds, impaired refinance eligibility and productivity of co-operative banks. Nearly 26 per cent of the resources deployed by the credit agencies for the agriculture sector were locked up in over dues and were not available for recycling. At the institutional level, the clogging of over dues had severely impaired the eligibility of the credit agencies, for refinance from NABARD. As a defaulter, the borrower is cut off from any access to credit from institutions. This affects his productive enterprise.

Objective:- A specific result that a person or system aims to achieve within a time frame and with available resources Objective of the study play the important role to find the result

1. To study the Gross Non-Performing Assets level in Private Sector Banks in India.
2. To study gross NPA of ICICI for the year 2010 to 2017.
3. To compare the, Gross NPA and Advances of ICICI Bank

Hypothesis:- A hypothesis is an educated prediction that can be tested. You will discover the purpose of a hypothesis then learn how one is developed and written.

1. The NPA level is continuous increasing in Private Sector Banks.
2. The Gross NPA is Private Sector Banks is Stable.
3. Due to largest bank in Private sector, ICICI Bank should reduce their NPA.

Research Methodology:- The nature of research is methodology study is aimed at exploring the impact of securitization Act on the NPA's in the banking sector. It includes research design, sampling framework, methods of data collection, framework of analysis and limitations. The secondary data are used in the present study. The secondary data to non-performing assets and the micro variable from 2010-11 to 2016-17 were collected from various issues of SBI Annual Reports and RBI Bulletins.

Data is measured, collected and reported, and analyzed, where upon it can be visualized using graphs or images. Data as an general concept refers to the fact that some existence information or knowledge is represented or coded in some form suitable for better usage or processing.

After nationalization of banks it has been given much attention on the lending policy of nationalized banks but not much attention has been given to the recovery of advances of nationalized banks by Reserve Bank of India (RBI). Recovery of non – performing assets has become critical performance area for all banks in India. As per RBI report, March 1999, the gross NPA of all the scheduled commercial banks and primary co – operative banks have gone up to Rs. 58,554 crores India (RBI) introduced a new set of prudential norms in April, 1992 for commercial banks and subsequently it has been extended, in stages to urban co-operative banks as well, as per the recommendations of high power committee on urban co-operative banks constituted in May 1999 under the chairmanship of K. Madharao as a need for strengthening the co-operative sector in order to enhance operational efficiency, productivity and profitability and with the objective of implementing international. best practices in Indian banks, it is compulsory for all banking institutions to comply with prudential norms of RBI.

Table-1 : Gross NPA of ICICI Bank.

YEAR	GROSS NPA of ICICI
2010-2011	10,034.26
2011-2012	9,475.33
2012-2013	9,607.75
2013-2014	10,505.84
2014-2015	15,094.69
2015-2016	26,720.93
2016-2017	42,551.54

(Source: Annual report of ICICI Bank Ltd)

Graph-1 : Gross NPA of ICICI (in Rs.)

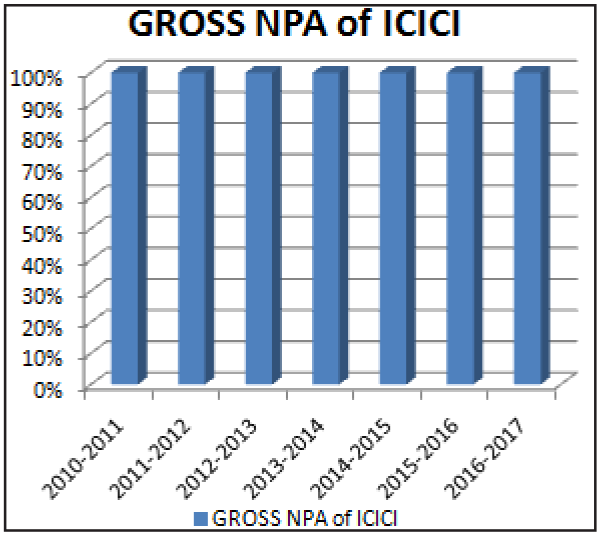

Table-2 : Advances of ICICI Bank

YEAR	ADVANCES of ICICI	In %
2010-2011	**256,019.31**	100
2011-2012	**292,125.42**	114.1028854
2012-2013	**329,974.13**	128.8864227
2013-2014	**387,341.78**	151.2939708
2014-2015	**438,490.10**	171.2722763
2015-2016	**493,729.11**	192.8483871
2016-2017	**515,317.31**	201.2806417

Source: Annual report of ICICI Bank Ltd)

Graph-2 : Advances of ICICI Bank

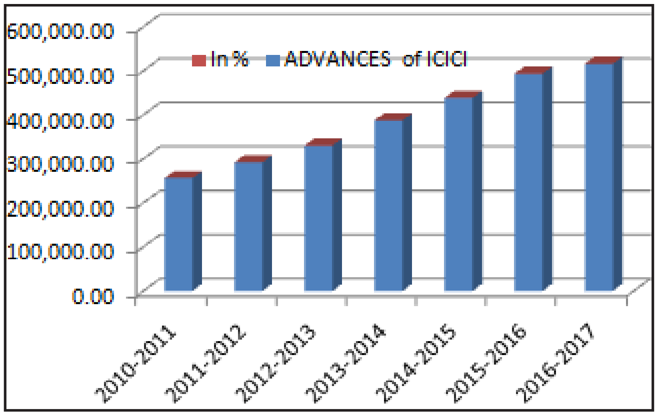

Findings, Analysis and Recomondation:- we have study last 7 years data of ICICI Bank of Advances,Gross NPA. NPA,s has been increasing whether gross or net in terms of rupees. NPA,s has been increasing whether gross or net in terms of percentage too. Lack of securitization while granting of loan is seen in the bank. We observe the every year Advances increases as well as NPA also increases. And we present the all data from ICICI balancesheet. The NPAs have always been a big worry for the banks in India. The Indian banking sector faced a serious problem of NPAs. . A high level of NPAs suggests high probability of a large number of credit defaults that affect the profitability and liquidity of banks. The extent of NPAs has comparatively higher in public sectors banks. To improve the efficiency and profitability, the NPAs have to be scheduled

Scope Of Study:- The NPAs have always been a big worry for the banks in India. The Indian banking sector faced a serious problem of NPAs. . A high level of NPAs suggests high probability of a large number of credit defaults that affect the profitability and liquidity of banks. The extent of NPAs has comparatively higher in public sectors banks. To improve the efficiency and profitability, the NPAs have to be scheduled. Various steps have been taken by government to reduce the NPAs. It is highly impossible to have zero percentage NPAs. But at least Indian banks should take care to ensure that they give loans to creditworthy customers. The study will lead to evaluate the non-performing assets and there effect on current valuation of banking performance. The study of NPA growth will give the direction and reason for increasing the dead block. How and why is the major concern of my study and it will give the direction to identify the reasons to modify the outcomes? The outcomes of study will help the bankers to check the day to day operation to reduce the NPA in there current account.

Conclusion:- Non Performing Assets of ICICI is studied in detail for the given time period of 2011 to 2017 with its factors, types of assets , NPA,s in terms of rupees as well as in percentage terms. Along with this findings have also been presented. The above paper indicates that NPA,s for the ICICI bank has been continue rising, which is a serious note for the bank and bank should take some strick action to avoid it, Proper system of recovery should be done is expected, Loan portfolio should be revived by the bank. In the present competitive global environment, the management of NPA is becoming critical and has become the need of the hour. The banking sector to become effective, NPA management must be an exercise for the entire bank from the Board down the last level. NPA particularly, its increased trend during financial crisis highlights the need for effective credit risk management mechanism. NPAs are draining the capital of the banks and weakening their financial strength. It is also as much a political and a financial issue. NPA directly effect to banks position. The banks and financial institutions should be more proactive to adopt pragmatic and structured non-performing assets management policy where prevention of non-performance assets receives priority. As compared to private sector banks, public sector bank is more in the NPA level. Public Sector bank must take more care in avoiding any account becoming NPA by taking proper preventive measures in an efficient manner.

References :-

1. Kothari C.R. Research Methodology, new age international publication 4835/24 Ansari Road, Daryaganj, New Delhi-110002
2. Amarchand, D, Ed. Research Methods in Commerce, Madras: Emerald, 1987.
3. Agarwal, A.N, Indian Economy, New Delhi: Vikas Publishing House, 1994.
4. **The Evolution of Bankings** by **Robert Harrison Howe - C. H. Kerr & co , 1915**
5. Jain, Vibha Management of Non Performing Assets in Commercial Banks", Regal Publications, New Delhi, 2007
6. Singh Rajendra, Empowering Banks for Recovery of Non-performing Assets (NPAs), the Journal of Indian Institute of Banking & Finance, P.5 ,2005.
7. Naryanan V. (2000), NPA Reduction The New 'Mantra' of Slippage Management ,MID-Term Review of Monetary & Credit Policy, A BankingJournal, Published by Indian Bank's Association Mumbai , Vol. XXII No 10,Oct. 2000.
8. Mohan, Rakesh (2003).Transforming Indian Banking: In Search of a Better Tomorrow, Reserve Bank of India. Reserve Bank of India Bulletin, Speech article. January, 2003.
9. Prasad M., Sinha, K. K. and Prasad, K. M. (2004), Post-reform Performance of Public Sector Banks with Special Reference to Non-performance Assets, Edited Book Banking in the New Millennium, New Delhi

Books& Journals Referred

10. Kothari C.R. Research Methodology, new age international publication 4835/24 Ansari Road, Daryaganj, New Delhi-110002
11. Amarchand, D, Ed. Research Methods in Commerce, Madras: Emerald, 1987.
12. Agarwal, A.N, Indian Economy, New Delhi: Vikas Publishing House, 1994

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Productivity Based Performance Analysis of Pre and Post-Merger of SBI & Associate Bank (with Special Reference to State Bank of Saurashtra to Merge with State Bank of India)

Dr. Mahesh Gupta* Prof. JaikishanSahu**

Abstract - Human resource is the most important asset of an organization and banking business is no exception to it. In the present study, employee productivity has been evaluated by taking three ratios, viz., Deposits per Employee; Advances per Employee and Profits per Employee.22 Mergers have taken place in the Banking Sector in India between various Banks. Some of them were forced mergers (Private Sector Bank merged with Public Sector Bank) and a few were voluntary in nature. SBI & Associate Banks took the first step to move on with merger for several reasons during the period of global financial crisis. Therefore, the study is undertaken to analyses the productivity based performance of the select Banks that have participated in the merger activity voluntarily. Incidentally, these are the leading banks in Public Sectors in Indian Banking Sector respectively in India.Deposits and Advances represent the volume of the business of the banks. These two parameters will have an impact on the profits of the bank on productivity of employee.
Key Words - Merger & Amalgamation, Employee Productivity; Branch Productivity; SBS merge with SBI.

Introduction - Mergers and acquisitions are increasing in the world as organizations try to expand their operations and increase their competitive advantage. Despite optimistic expectations, mergers and acquisitions frequently fail or succeed, in part because of the little attention given on the project planning and management part of it and the great neglect of human resource issues, which are rarely considered until serious problems arise. This is against the conception that the success of any merger or acquisition is as much about people and culture as it is about the financials. As such, organizations that recognize the link between people and performance make it their business to understand how to shape employee behavior during and after the mergers.

Mergers & Amalgamation - As per Accounting Standard - 14 issued by ICAI, Amalgamation in the nature of merger is an amalgamation which satisfies all the following conditions:-

(i) All the assets and liabilities of the transferor company become, after amalgamation, the assets and liabilities of the transferee company.

(ii) Shareholders holding not less than 90% of the face value of the equity shares of the transferor company (other than the equity shares already held therein, immediately before the amalgamation, by the transferee company or its subsidiaries or their nominees) become equity shareholders of the transferee company by virtue of the amalgamation.

(iii) The consideration for the amalgamation receivable by those equity shareholders of the transferor company who agree to become equity shareholders of the transferee company is discharged by the transferee company wholly by the issue of equity shares in the transferee company, except that cash may be paid in respect of any fractional shares.

(iv) The business of the transferor company is intended to be carried on, after the amalgamation, by the transferee company.

(v) No adjustment is intended to be made to the book values of the assets and liabilities of the transferor company when they are incorporated in the financial statements of the transferee company except to ensure uniformity of accounting policies.

Amalgamation in the nature of purchase is an amalgamation which does not satisfy any one or more of the conditions specified in sub-paragraph (e) above.**State Bank of Saurashtra to merge with State Bank of India -**
Central Board of State Bank of India on August 25 2007, gave it's go ahead to the merger of State Bank of Saurashtra with itself. Merger is subject to approval of the government and Reserve Bank in accordance with State Bank of India Act, 1955.In a communication to the Bombay Stock

*Assistant Professor, SABBGA & CC, Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Acropolis Institute of Management Studies & Research, Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA

Exchange, SBI said its central board on August 25 approved the merger, subject to approval of the government and Reserve Bank in accordance with State Bank of India Act, 1955. "This is the beginning of whole group's restructuring. SBS is the smallest of the seven associates and based on the experience we will look at other banks," said SBI Managing Director T S Bhattarcharya. The other associates are State Bank of Travancore, State Bank of Mysore, State Bank of Bikaner and Jaipur, State Bank of Hyderabad, State Bank of Indore and State Bank of Patiala. of these, the first three are listed on stock exchanges. SBI's interest in the associate banks ranges from 75-100 per cent. After SBS, SBI is likely to merge the other three unlisted arms and then follow it up with the listed ones. SBS has 460 branches and the merger would help eliminate duplication of branches in the same area. Its net profit rose 45 per cent to Rs 87.4 crore in 2006-07. The bank has paid-up equity capital of Rs 314 crore. The total deposits stood at Rs 15,804 crore while total advances were at Rs 11,081 crore. The merger would help SBI consolidate its position as the country's biggest bank and widen the gap with nearest rival ICICI Bank. With 9,579 branches, SBI has total assets of Rs 5,66,565crore and posted a net profit of Rs 4,541 crore as on March 31, 2007. ICICI Bank had assets of Rs 3,44,658crore and posted a net profit of Rs 3,110 crore in 2006-07. The merger comes at time when the bank has decided to go in for big expansion. The bank is also looking at freeing up capital by setting up a holding company for its life insurance and asset management businesses. SBI's move to merge its arms could pave the way for further consolidation in the industry, which faces imminent competition from foreign banks from 2009.

Review of literature - Mary Kivuti (2013) suggested that employee pay and remuneration affect employee performance in the merged organization. With this regard, wages and benefits, allowances/bonuses, as well as terms of employment and performance based pay affect the employee performance in the current merger setting. The study further concludes that mergers affect the sense of ownership and belonging among the employees in the Bank hence their performance. The study also established that employee contributions, employee composition, shareholder wealth and merger satisfaction and communication affect employee performance in the Bank. Thus it was made clear that same job satisfaction, job skills and traits, employee retention and organizational commitment affects employee performance. The study finally deduces that chain of command affects the employees' performance in the Bank. It was also ascertained that personal relationship, task conflicts, coordination, workloads, cultural compatibility, management support, working conditions, employees' attitudes, strategic rationale, non-monetary benefits and employee commitment affects employee performance in the merged Bank.

Sharma Laxmikant (2015) in his study emphasized that due to the mergers of firms, the bank employees come under stress which affect their attitude, behavior and consequently upon their productivity. The researcher suggested that good communication strategy is a tool through which the effect of most of the stressors like uncertainty, insecurity and fear of job loss can be minimized. Employee Development Programmes can be conducted so that employees can understand the working environment of the acquirer firm. Thus, effective stress management and professional help can improve the performance of employees. These stressors can affect the performance of employees. To achieve the desired target banks should focuses on employees' satisfaction keeping in view the problem in the wider perspective.

Craig W. Fontaine (2007) conducted a study on "Mergers & Acquisitions: Understanding the role of HRM". It showed that 65% of mergers and acquisitions that fail because of people issues - cultural issues, communication issues. Historically HR has no seat on the table of mergers process. The study concluded that best practices checklist for HR professionals while involved on mergers and acquisitions - Leadership, transition team, structure and all along communication at all levels are key elements.

Research Gap - The above review of literature points to the fact that, studies have been made on Mergers relating mainly to the performance of select banks; analyses the problems of mergers; benefits to the stakeholders; Financial performance of the transferee bank after the merger. However an analysis relating to certain key parameters; Employee Productivity; Branch Productivity and the Profitability of the select Transferee Banks before and after the Merger till 31st March 2017 has not been done in the recent past. Hence, the study is undertaken to fill the research gap.

Objectives of Study :

1. To analyse the Employee Productivity of SBI & Associate Bank(SBS)
2. To analyse the Branch Productivity of SBI & Associate Bank(SBS)

Methodology

Sources of Data - The study is based on Secondary Sources which includes the Annual Reports of the Select Banks; RBI Database- Profile of Banks -various issues; research publications etc.

Period of Study - The Period of the Study i.e., from 2000 to 31st March 2017.

Sample Selection - Financial performance of the transferee bank after and before merger. Employee Productivity; Branch Productivity and the Profitability of the select Transferee Banks before and after the Merger till 31st March 2017 has not been done in the recent past

Hypothesis

Ho: There is no significant difference in the Deposits per Employee and per Branch of the Select Banks beforeand after Merger.

H1: There is a significant difference in the Deposits per

Employee and per Branch of the Select Banks before and after Merger

Ho: There is no significant difference in the Advances per Employee and per Branch of the Select Banks before and after Merger

H1: There is a significant difference in the Advances per Employee and per Branch of the Select Banks before and after Merger

Tools for Analysis: The following tools are used for the analysis of the data apart from Percentages and Averages. Employee & Branch Productivity ratios for evaluating the employee efficiency and branch efficiency

t - test: to test the Hypothesis as to whether there is any significant difference in the performance of the select Banks before and after the Merger.

Karl Pearson's Multiple Correlation - to test the measure of the strength of the association between the dependent and independent variables.

The absolute values do not provide us meaningful values until and unless they are related to some other relevant information, therefore, the Branch level efficiency in terms of Business per Branch and Business per Employee and Profit per Branch and Profit per Employee of the selected banks is studied.

Human resource is the most important asset of an organization and banking business is no exception to it. In the present study, employee productivity has been evaluated by taking three ratios, viz., Deposits per Employee; Advances per Employee and Profits per Employee.

Deposits per Employee - This ratio has been computed by dividing the amount of total deposits by the number of employees in the bank. This ratio reveals the deposit-collection

Capacity of an employee - Higher the deposit per employee ratio, higher the productivity per employee.

Advances per Employee - This ratio has been computed by dividing the amount of total Advances by the number of employees in the bank;

Profits per Employee - This ratio has been computed by dividing the amount of Net Profit by the number of employees in the bank.Branch Productivity is measured by taking three ratios, viz., Deposits per Branch; Advances per Branch and Profits per Branch.

Deposits per Branch - This ratio has been computed by dividing the amount of total deposits by the number of branches in the bank;

Advances per Branch - This ratio has been computed by dividing the amount of total advances by the number of branches in the bank;

Net Profit per Branch - This ratio has been computed by dividing the amount of total Net Profit by the number of Branches in the Bank.

Table 1 (See in next page)

The Branch level efficiency in terms of Business per Employee, Business per Branch, Profit per Branch and Profit per Employee of the SBI are presented in table 1.

In table 1 from the eight years Pre Merger and eight years Post Merger Employee Productivity ratios and Branch Productivity ratios, it is clear that, throughout the sixteen year period the productivity ratios have exhibited an increasing trend, due to the fact that the percentage increase in the numbers of all the Parameters matched with the percentage increase in the number of Employees and Branches. Only exception is the Profit per Employee and Profit per Branch ratios in the years 2010-11; 2013-14 and 2015-16, as, profits during these years have recorded a decrease. The eight year average of Deposits per employee before and after the Merger is 1.76989 and 6.24052 with an increase; Advances per Employee 1.08646 and 5.14453 with an increase; Profits per Employee 0.01914 and 0.05088 with a minor increase.

The eight year average of Deposits per Branch before and after the Merger is 37.79090 and 86.40117 with an increase; Advances 23.19835 and 71.22699 with an increase; and Profits 0.40873 and 0.70441 with an increase. Tremendous increase is seen in all the ratios, therefore, T test is employed to see whether the difference in the performance of these ratios between the Pre Merger and Post Merger period is significant or not.

Table 2 (See)

Result - The t stat values for all the ratios are less than the t critical two tail value; and the p values as per't' test at 5% significance level in case of all the ratios is less than .05, indicating that there is a significant difference in their performance during the pre and post merger periods, therefore null hypothesis is rejected.

Reference :-

1. Personal research.

Table 2 : t- Test Results of Productivity Ratios of SBI

	D/E	A/E	P/E	D/B	A/B	P/B
Pre -Merger Mean Value	1.80297	1.12181	0.01961	37.44400	22.73649	0.40302
Post –Merger Mean Value	6.25982	5.15546	0.05080	84.95503	70.02976	0.70475
t-Value	- 8.56285	-11.08976	-7.5560	-10.82181	-19.659018	-4.27284
t-critical two tail	2.364624	2.364624	2.364624	2.364624	2.364624	2.364624
P two tail value	0.00000589	0.00001077	0.000013099	0.00001268	0.0000002201	0.0036877
Result	Reject H_0	Reject H_0	Reject H_0	Reject H_0	Reject H_0	Reject H_0

Table 1 : Pre & Post Merger Productivity Ratios of SBI Bank

Year	D/E	A/E	P/E	D/B	A/B	P/B
2000-2001	1.13025	0.52871	0.00747	26.74906	12.51267	0.17669
2001-2002	1.29169	0.57674	0.01162	29.72534	13.27247	0.26730
2002-2003	1.41687	0.65914	0.01486	32.58396	15.15832	0.34166
2003-2004	1.53893	0.76282	0.01778	34.98616	17.34204	0.40419
2004-2005	1.78599	0.98472	0.02094	40.06637	22.09082	0.46982
2005-2006	1.91195	1.31708	0.02217	40.14005	27.65114	0.46546
2006-2007	2.34924	1.81962	0.02449	44.99649	34.85236	0.46916
2007-2008	2.99882	2.32565	0.03755	50.30460	39.01226	0.62988
Average	1.76989	1.08646	0.01914	37.79090	23.19835	0.40873
Base Year	3.60412	2.63484	0.04430	61.72625	45.12585	0.75869
2009-2010	4.01458	3.15485	0.04576	61.67007	48.46338	0.70297
2010-2011	4.18930	3.39438	0.03306	65.08243	52.73306	0.51359
2011-2012	4.84334	4.02624	0.05423	70.03405	58.21896	0.78419
2012-2013	5.26833	4.58009	0.06500	77.27702	67.18174	0.95343
2013-2014	6.28019	5.44887	0.04905	86.83034	75.33649	0.67820
2014-2015	7.39452	6.09660	0.06144	96.54033	79.59508	0.80215
2015-2016	8.33124	7.04586	0.04790	103.11740	87.20808	0.59287
2016-2017	9.75703	7.49678	0.05003	119.08861	91.50136	0.61061
Average	6.24053	5.14453	0.05088	86.40117	71.22699	0.70441

Note: Base year is Merger Year 2008-09.

****

शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता का अध्ययन

जीतेन्द्र बैरागी* डॉ. महेश कुमार तिवारी**

प्रस्तावना - आज पर्यावरण विनाश एक विश्वव्यापी समस्या बन चुकी है। मनुष्य विज्ञान और विकास के नाम पर प्रकृति का लगातार विनाश करता जा रहा है। प्रकृति का अमर्यादित उपभाग, वनों की कटाई, उद्योगधधों की भरमार, उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन, व्यापार, बाज़ार और इसी प्रकार का एक परिवेश बनता जा रहा है जो प्रकृति, पर्यावरण पृथ्वी और मानव-जाति के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहा है। पर्यावरण की समस्या इतनी जटिल होती जा रही है कि भविष्य अंधकारमय होता प्रतीत हो रहा है। पर्यावरण संरक्षण आज जीव मात्र के कल्याण के साथ-साथ प्रकृति सुरक्षा के लिए भी अति आवश्यक हो गया है। पर्यावरण परिवेश को इस स्थिति तक पहुँचानेवाला मनुष्य है और उसे वापस पूर्वस्थिति में लाने की क्षमता और विवेक भी उसी में है अत: आज के इस युग में पर्यावरण शिक्षा अति आवश्यक और महत्वपूर्ण हो गयी है। बिना पर्यावरण शिक्षा के पर्यावरण संरक्षण की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यदि समय के रहते इस शिक्षा की और जन-मानस का ध्यान आकर्षित नहीं किया गया जो प्रलय की स्थिति का आगमन अवश्यंभावी हो जाएगा। प्रकृति के सभी तत्वों का एक दूसरे तत्वों पर भी उसका प्रभाव पड़ता है।

पर्यावरण प्रदूषण के कारण आज जल, वायु, मिट्टी से उपजी खाद्य सामग्री सब कुछ दूषित होती जा रही है। ऐसे दूषित वायु में सांस लेकर, दूषित जल पीकर, दूषित अन्न खाकर भला कोई इंसान कैसे स्वस्थ रह सकता, भला कोई माँ कैसे एक स्वस्थ शिशु को जन्म दे सकती हैं। पर्यावरण साफ-सुथरा रहेगा तो लोगों का जीवन भी स्वस्थ रहेगा। पर्यावरण शिक्षा के अंतर्गत महत्वपूर्ण जानकारियों द्वारा निम्न लाभ प्राप्त हो सकते हैं।

पर्यावरण शिक्षा के द्वारा वास्तव में पर्यावरण किसे कहते हैं और प्रदूषण क्या है? इसकी संपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। पर्यावरण शिक्षा प्राप्त करने वाला जानकार, चाहे स्त्री हो या पुरूष्झ बालक हो, युवा हो या फिर वृद्ध, शिक्षित हो या अशिक्षित, धनवान हो या निर्धन, कामकाजी स्त्री हो या फिर गृहणी, इस बात को जान लेते हैं जिस परिवेश और वातावरण में चारों ओर से हम घिरे हुए हैं उसे पर्यावरण कहते हैं तथा दैनिक जीवन में उपयोग में आनेवाली कई ऐसी वस्तुएँ जैसे कार-मोटर से निकलने वला धुआँ कई दुष्परिणामों को जन्म देता है। उसे इस बात का भी ज्ञान मिलता है कि यह धुआँ जहाँ वनस्पतियों, वायु आदि को दूषित कर देता है वहीं प्राणधारियों के स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक होता है। इससे यह होगा कि लोग अपने वाहनों का निरीक्षण करवाएंगे ताकि उनका वाहन कम धुआँ छोड़ें। बात केवल वाहनों तक ही नहीं है बल्कि प्रदूषण अन्य कई स्रोतों से भी होता है।

यह तो सर्वविदित है कि अस्वच्छ जल कई बीमारियों का गढ़ होता है। विशेषकर जब बाढ़ आती हो या फिर सूखा पड़ता हो तो दोनों ही स्थितियों में उस क्षेत्र का रहनेवाला मनुष्य अशुद्ध जल ग्रहण करने पर विवश हो जाता है परिणाम तरह-तरह के रोगों का शिकार बनना। वायु प्रदूषण की तरह जल प्रदूषण की जानकारी भी आम आदमी को पर्यावरण शिक्षा से प्राप्त होती है। क्योंकि मनुष्य का एक स्वभाव होता है दैनिक आचरण और क्रिया-कलापों से अपने आसपास के वातावरण और स्थान में इतनी गंदगी उत्पन्न कर देता है कि उसे इस बात की अनुभूति ही नहीं होती है और होती भी है तो वह सचेत भी नहीं होता और जागरूक भी नहीं। सुबह उठने से लेकर रात सोने तक जो कूड़ा-करकट जाने अनजाने फेंकता है। ये सारी गंदगी और कचरा किसी-न-किसी तरह बह कर नदी-तालाबों में जाता है। इसीसे नदी का जल दूषित होने लगता है। उसी जल को पशु-पक्षी पीते हैं, बीमार पड़ जाते हैं कभी-कभी तो उस पानी में उनका मृत शरीर सड़ता-गलता है और ऐसे जल को जब मनुष्य पीता है तो हम कल्पना कर सकते हैं कि उसकी क्या दुर्दशा हो सकती है। पर्यावरण का महत्व एवं उसकी आवश्यकता भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही है। वेदों में मानव के परोपकार के लिए परमात्मा द्वारा सूर्य, चंद्रमा, बादल, वृक्ष, नदियाँ, पर्वत, वनसपतियाँ पशु-पक्षी आदि का आविर्भाव किया जाना बताया गया है। इन समस्त उपादानों को ईश्वर प्रदत्ता बनाना इसीलिए आवश्यक था ताकि मनुष्य उन सब से नैतिक रूप से जुड़ा रहे तथा इसके संरक्षण को अपना कर्तव्य और धर्म समझे। किंतु आज मनुष्य भोगवादी जीवन शैली का इतना आदि और स्वार्थी हो गया है कि अपने जीवन के मूल आधार समस्त पर्यावरण को दूषित कर रहा है, नैतिकता, धर्म, कर्त्ताव्य सब भूल रहा है। पुन: मनुष्य को नैतिकता, धर्म, कर्त्ताव्य के मार्ग पर लाने के लिए आज के वर्तमान समय में पर्यावरण शिक्षा आवश्यक और महत्वपूर्ण हो गयी है।

पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से मनुष्य संपूर्ण पर्यावरण और उससे संबंधित समस्याओं के प्रति जागरूक एवं संवेदनशील हो जाए। संपूर्ण पर्यावरण और उससे संबंधित समस्याओं का आधारभूत ज्ञान प्राप्त करके उसके प्रति अपने उत्तरदायित्वों को निभा सके। पर्यावरण शिक्षा के द्वारा पर्यावरण के लिए गहरी चिंता, सामाजिक दायित्व निभाने तथा उसकी सुरक्षा और सुधार के लिए किये जा रहे कार्यो के प्रति एक प्राकृतिक रूझान उत्पन्न हो सके। ताकि बड़ी कुशलता के साथ समस्याएँ दूर हो जाए। इसके अतिरिक्त

* शोधार्थी, मेवाड विश्वविद्यालय, चित्तौड्गढ (राज.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, चित्तौड्गढ (राज.) भारत

मनुष्य में मूल्यांकन कुशलता और संभागिता की भी भावना उत्पन्न हो सकें, ताकि वह पर्यावरण संबंधी उपायों तथा शैक्षणिक कार्यक्रमों का पारिस्थितिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, सौंदर्यपरक, शैक्षिक घटकों आदि के परिप्रेक्ष्य में सही मूल्यांकन कर सके और पर्यावरण समस्याओं के उचित ढंग से हल निकालने की आश्वस्तता के प्रति महत्ता और अपनी संभागिता की भावना को विकसित कर सके। इसके अतिरिक्त पर्यावरण शिक्षा लोगों में इस बात की भी जागरूकता लाती है कि पर्यावरण के अनुकूल और प्रतिकूल कौन-कौन सी बातें हैं। पर्यावरण के अनुकूल वह पेड़-पौधे, जल-संसाधन, वन संपदा, पशु-पक्षी आदि की रक्षा के महत्व को जान पायेगा तो पर्यावरण के प्रतिकूल पड़नेवाली समस्त गतिविधियाँ जेसे बढ़ती जनसंख्या, बढ़ता औद्योगिकरण, वन-कटाई, बढ़ता शहरीकरण आदि के रोकथाम की दिशा में ठोस कदम उठा सकेगा। भौतिकतावादी जीवन शैली और विकास की अंधी दौड़ में आज मनुष्य यह भी भूल गया है कि पर्यावरण भी कुछ है। बढ़ते वाहनों और कारखानों से निकलते धुएँ ने वायु का, वुक्षों की कटाई से जीवनदायिनी गैसों को, मनुष्य द्वारा फैलायी जा रही गंदगी से जल को इस तेजी के साथ प्रदूषित कर रहा है कि दुगनी गति से बीमारियाँ भी फैल रही है। मानवीय सोच और विचारधारा में इतना अधिक बदलाव आ गया है कि भविष्य की जैसे मानव कोई चिंता ही नहीं है। अमानवीय कृत्यों के कारण आज मनुष्य प्रकृति को रिक्त करता चला जा रहा है पर्यावरण के प्रतिचिंतित नहीं है। जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण असंतुलन के चलते भूमंडलीय ताम, ओजोन क्षरण, अम्लीय वर्षा, बर्फीली चोटियों का पिघलना, सागर के जल-स्तर का बढ़ना, मैदानी नदियों का सूखना, उपजाऊ भूमि का घटना और रेगिस्तानों का बढ़ना आदि विकट परिस्थितियाँ उत्पन्न होने लगी है। यह सारा किया कराया मनुष्य का है और आज विचलित, चिंतित भी स्वयं मनुष्य ही हो रहा है। जिस पर्यावरण संरक्षण का गुण मनुष्य में जन्म से ही होता था, वही गुण आज उसे सिखना पड़ रहा है। वर्तमान परिस्थितियों के कारण आज पर्यावरण शिक्षा अनिवार्य हो गयी है। आज पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता प्राथमिक हो गयी है। मनुष्य की बदली हुई सोच तथा उसकी अभिवृत्ति को वापस पर्यावरण के अनुकूल बनाने का काम पर्यावरण शिक्षा ही कर सकती है।

पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा गृह है जिस पर जीवन संभव है। यहाँ के प्राणधारियों को एक सुदंर एवं स्वस्थ जीवन उपलब्ध कराने के लिए पृथ्वी को नष्ट होने से बचाना बहुत आवश्यक है। ऑक्सिजन जीवधारियों के लिए अति आवश्यक है, किन्तु अन्य प्राणघाती गैसों के कारण पर्यावरणीय विकृतियाँ उत्पन्न होने लगी है।

समस्या कथन – शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता का अध्ययन।

शोध उद्देश्य – प्रस्तुत शोध विषय के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं:

1. शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षकाओं में पर्यावरण कार्यविन्तता तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षकाओं में पर्यावरण कार्यविन्तता तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्यविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
3. शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्यविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अध्ययन विधि – प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा 'सर्वेक्षण विधि' का प्रयोग किया हैं।

प्रतिदर्श –प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श हेतु राजस्थान राज्य के प्रतापगढ जिले सेमाध्यमिक स्तर पर कार्यरत शहरी क्षेत्र के 5 सरकारी तथा ग्रामीण क्षेत्र के 5 सरकारी कुल 10 विद्यालयों के शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है। इस हेतु सम्पूर्ण जनसंख्या मेंसे स्तरीकृत याद्दछिक न्यादर्श विधि से 50-50 शिक्षकों का चयन किया गया है।

उपकरण – प्रस्तुतशोध अध्ययन में शोधकर्ताद्वारा स्वनिर्मित उपकरण प्रयुक्त किया गया है।

- पर्यावरण कायान्वितता प्रश्नावली -स्वनिर्मित

शोध की परिसीमन – प्रस्तुत शोध में निम्न प्रकार से शोध का परिसीमन किया गया है :

1. शोध को केवल राजस्थान राज्य के प्रतापगढ़ जिले तक ही सीमित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध केवल माध्यमिक विद्यालयों तक ही सीमित किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध में स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या :

- शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 को देखने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर कार्यरत शहरी शिक्षकोंके मध्यमान 61.017 एवं मानक विचलन 3.20 है तथा ग्रामीण शिक्षकों का मध्यमान 51.833 एवं मानक विचलन 5.24 है। तालिका 1से प्राप्त मध्यमानों में शहरी शिक्षकों का मध्यमान ग्रामीण शिक्षकों के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का डीएफ 98 पर टी-मान 11.21 है। जो 0.05 एवं .01 स्तर के प्राप्त मान1.98 एवं 2.63 से अधिक है। अत: परिकल्पना 'शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की पर्यावरण कार्यान्वितता अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षकों के पर्यावरण कार्यान्वितता अधिक हैं।

- ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्यविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 को देखने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण शिक्षकों के मध्यमान 54.341 एवं मानक विचलन 7.10 है तथा शिक्षिकाओं का मध्यमान 48.306 एवं मानक विचलन 4.73 है। तालिका 2 से प्राप्त मध्यमानों में ग्रामीण शिक्षकों का मध्यमान ग्रामीण शिक्षिकाओं के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का डीएफ 48 पर टी-मान 4.76 है। जो 0.05 एवं .01 स्तर के प्राप्त मान 2.01 एवं 2.68 से अधिक है। अत:

परिकल्पना 'ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्याविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण शिक्षकों तथा शिक्षिकाओं की पर्यावरण कार्यान्वितता अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों का पर्यावरण कार्यान्वितता अधिक हैं।

- शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्याविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 3 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 3 को देखने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर कार्यरत शहरी शिक्षकों के मध्यमान 61.017 एवं मानक विचलन 3.20 है तथा शिक्षिकाओं का मध्यमान 47.041 एवं मानक विचलन 4.55 है। तालिका 3 से प्राप्त मध्यमानों में शहरी शिक्षकों का मध्यमान ग्रामीण शिक्षिकाओं के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का डीएफ 48 पर टी–मान 15.47 है। जो 0.05 एवं .01 स्तर के प्राप्त मान 2.01 एवं 2.68 से अधिक है। अत: परिकल्पना 'शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्याविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शहरी शिक्षकों तथा शिक्षिकाओं की पर्यावरण कार्यान्वितता अन्तर पाया जाता है। शहरी शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों का पर्यावरण कार्यान्वितता अधिक हैं।

निष्कर्ष :

1. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के पश्चात् परिकल्पना प्रतापगढ़ जिले के शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।अस्वीकृत की जाती है क्योकि शहरी शिक्षक एवं ग्रामीण शिक्षकों के पर्यावरण कार्यान्वितता के मध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण शिक्षक एवं शहरी शिक्षकों के पर्यावरण कार्यान्वितता में अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षकों के पर्यावरण कार्यान्वितता अधिक हैं।
2. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के पश्चात् परिकल्पना प्रतापगढ़ जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्याविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अस्वीकृत की जाती है क्योंकि ग्रामीण शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के पर्यावरण कार्यान्वितता के मध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के पर्यावरण कार्यान्वितता में अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों के पर्यावरण कार्यान्वितता अधिक हैं।
3. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के पश्चात् परिकल्पना प्रतापगढ़ जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्याविन्तता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।अस्वीकृत की जाती है क्योकि शहरी शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के पर्यावरण कार्यान्वितता के मध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शहरी शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के पर्यावरण कार्यान्वितता में अन्तर पाया जाता है। शहरी शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों के पर्यावरण कार्यान्वितता अधिक हैं।

सुझाव – प्रस्तुत शोधकार्य में माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षक एवं शिक्षिकाओं की पर्यावरण कार्यान्वितता का अध्ययन किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षक तथ शिक्षिकाओं की पर्यावरण कार्यान्वितता में अंतर पाया गया है। शहरी क्षेत्र के शिक्षकों की पर्यावरण कार्याविन्तता अधिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. **ब्यूसन और ग्रेमा (2000),** *वैश्विक पर्यावरण शिक्षा के लिए बाधाओं का अध्ययन।*
2. **चन्द्रन, विनय (1991)** *पर्यावरण जागरूकता के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन*, पीएचडी, (शिक्षाशास्त्र) मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास।
3. **ची ली और जॉन (1999)** *हांगकांग के परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण शिक्षा को गोद लेने के मामले का अध्ययन।*
4. **ड्यूसार्थ (2000),** *यूरोप में पर्यावरण और पर्यावरण विज्ञान की शिक्षा के नेटवर्क का अध्ययन।*
5. **गोपाल, कृष्णन (1992)** *नीलगिरी, मद्रास और कोयंबटूर स्कूल से चयनित और मानक वी के प्राथमिक स्कूल से चयनित बच्चों पर पर्यावरण शिक्षा की समस्याओं और इसके प्रभाव का अध्ययन।*
6. **गोल्डमैन और सहकर्मी (2003),** *शिक्षक प्रशिक्षण में नए छात्रों का पर्यावरण साक्षरता के व्यवहार का अध्ययन।*
7. **हसन (1984)** *माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों का विज्ञान में पर्यावरण शिक्षा का उपयोग करने से भावी जागरूकता का अध्ययन।*
8. **हचिंसन और यूस (2000),** *चीन में पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्यों की पहल पर ध्यान केंद्रित करने के लिए शिक्षक के पर्यावरण ज्ञान का अध्ययन।*
9. **हैक्शाम और अन्य (2000),** *प्राथमिक आयु वर्ग के स्कूली बच्चों के वन्यजीवों ज्ञान का अध्ययन।*
10. **गुर्जर (1993)** *पर्यावरण जागरूकता के प्रति प्रशिक्षुओं की जागरूकता के प्रयास अध्ययन।*
11. **जरीना और अब्दुल, समद (2013)** *सेकेंडरी स्कूल में विज्ञान के शिक्षकों की पर्यावरण जागरूकता पर पर्यावरण विशेषज्ञों के सर्वेक्षण का अध्ययन।*
12. **जेनी जे, बायंट (1995),** तटीय देशों एवं गैर प्रशान्त तटीय देशों में पर्यावरण शिक्षा की व्याख्या के आधार में अंतर, शोधपत्र *मेलबर्न विश्वविद्यालय मेलबर्न, आस्ट्रेलिया।*
13. **जुन किंन और अन्य (2012),** *दक्षिणी चीन में इन्फलुएजा पर वायुमण्डलीय स्थितियों के प्रभावों का अध्ययन।*
14. **सी.एन. सुनीता, (2001)** *ए स्टडी ऑन डेवेलपिंग सप्लीमेंटरी करीकुलम प्रोग्राम ऑन इनवायरमेंटल एजूकेशन फार हायर प्राइमरी स्कूल*, पीएचडी, (शिक्षाशास्त्र) बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई।

15. **सिंहवाल (1991)** *ग्रामीण विद्यालयों में छात्रों का पर्यावरण प्रदूषण के प्रति मन:स्थिति का अध्ययन।*
16. **शर्मा, एम.के (2010)** एक सर्वेक्षण- सेकेंडरी स्कूल में पढ़ने वाले विद्यार्थियों पर आधारित पर्यावरणीय शिक्षा के तत्वों का एक सर्वेक्षण, *एनसीईआरटी, जर्नल ऑफ एनसीईआरटी,* नई दिल्ली।
17. **शर्मा, रामकरण (2016),** सेवापूर्व तथा सेवारत माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के बीच पर्यावरणीय शिक्षा के पर्यावरणीय जागरूकता, पर्यावरणीय अभिवृत्ति तथा पर्यावरणीय ज्ञान का अध्ययन, *त्रैमासिक पत्रिका, जनवरी-मार्च अंक, जयपुर,* रिसर्च एनालिसिस।
18. **शहनवाज, एन., (1990),** एनवायरमेन्टल अवेयरनेस एण्ड एनवायरमेन्टल एटीट्यूड ऑफ सैकण्डरी एण्ड हायर सैकण्डरी स्कूल टीचर्स एण्ड स्टूडेन्ट्स। *फिफ्थ सर्वे ऑफ एजूकेशनल रिसर्च,*Vol.-II, नई दिल्ली: एन.सी.ई.आर.टी।

तालिका 1 - शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में पर्यावरण कार्यान्वितता से सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-मूल्य

क्षेत्र	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता अंश	टी-मूल्य	सार्थकता
शहरी	50	61.017	3.20	98	11.21	सार्थक**
ग्रामीण	50	51.833	5.24			

**.01स्तर पर सार्थक

तालिका 2 - ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्यान्वितता से सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-मूल्य

शिक्षक	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता अंश	टी-मूल्य	सार्थकता
शिक्षक	25	54.341	7.10	48	4.76	सार्थक**
शिक्षिका	25	48.306	4.73			

**.01 स्तर पर सार्थक

तालिका 3 - शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में पर्यावरण कार्यान्वितता से सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-मूल्य

शिक्षक	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता अंश	टी-मूल्य	सार्थकता
शिक्षक	25	61.017	3.20	48	15.47	सार्थक**
शिक्षिका	25	47.041	4.55			

**.01 स्तर पर सार्थक

****

बारामासी फाग की विलुप्त परम्परा

धनीराम अहिरवार *

प्रस्तावना – बारह मासी गीतों में विरहणी नायिका को प्रमुख पात्र बनाकर जिसके प्रिय प्रवासी हैं उनके बिरह और मिलन की अभिव्यक्ति होती है। गीतों में बारह महीनों के क्रमवार वर्णन से इन्हें ऋतुगीत के अंतर्गत शामिल कर लिया गया है।

बारामासी एक ऐसी विशिष्ट विधा है, जिसमें विरहिणी अपने प्रिय को कभी नहीं भुला पाती। प्रत्येक महीने में ऋतुओं की विशेषता के साथ-साथ ही उनकी विरहिणी पर होने वाली प्रतिक्रिया भी प्रकट हो जाती है। बारहमासे में प्रकृति के चित्रण में नायिका की विरह वेदना के वर्णन को देखने से ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि साहित्य में बिरह वेदना की देन बारहमासे से ही मिली है। इन गीतों में विरह रूपी कसक तो जैसे लोक का पर्याय बन गई है।

हमारे पिया बदरिया हो गये, बरसे ने एकऊ बेर ....
पूस रजाई भराऊती रे, एक गदेला ख्वार,
एक पलंग पै पौड़ती, फिर उड़ती यार बहार ....
माव मीड़ा हो रहे रे, मान महत्तम लीन,
वे कुब्जा के बस परे, मोय बिरहा ने दुख दीन,
चैत चितरका घाम परे, मोय छिन-छिन लगत प्यास,
मन मोरो अब जा कहें, उड़ चलो पिया के पास।
असड़े अंग आगी लगे रे, जर गये सकल शरीर।
प्रेम बूंद बरसे नहीं, अब जियरा धरे ने धीर।
साहुन सखियॉ ऊपजे रे, पिया मिलन की आस,
पिया मिलाये ने मिलें, जर भयो करेजा राख।
भादों रात भियांयदी रे, निश इंदियारी रात।
मन मोरो जब जा कहे, कब सुनूं पिया की बात।
अगन अंग फरकन लगे रे, मोय सतावै पीर।
पिया खबर लियो मोरी, अब जीरा धरे ने धीर।
हमारे पिया बदरिया हो गये ....

अर्थ : मेरे पति कृष्ण उस बदली के जैसे हो गये जो आसमान पर छाती तो है लेकिन बरसती नहीं। इसी तरह से कृष्ण के आने पर मैंने सोचा था कि शीत से बचने के लिए मैं रजाई-गद्दा में रूई भरवा लेती और तब ठंड से बचना हो जाता लेकिन जब वे नहीं आये तो मैं क्या करती। माघ का महीना आ गया यह बड़े महत्व का महीना होता है, लेकिन वे तो कुब्जा के साथ रह रहे हैं और मुझे विरहाग्नि में जला रहे है।

चैत्र के महीने में तो ग्रीष्म की अधिकता होती है, अत्यधिक गर्मी के कारण मुझे बार-बार प्यास लगती। मेरा गला सूख रहा था, उस समय ऐसा मन करता कि अब तो मैं उनके पास ही चली जाऊॅ ....। असाढ़ मास में तो विरह की अधिकता से मेरा समूचा शरीर ही जल रहा था। मैं अधैर्य हो रही थी लेकिन वे नहीं आये। श्रावण तो मिलन की आस लेकर आया लेकिन जब वे नहीं आये तो मेरा हृद्य जलकर खाक हो गया। भाद्रमास की अंधेरी काली रातें बड़ी भयावनी लगती हैं उस समय मेरा मन हर घड़ी यही सोचता कि मैं कब उनसे बात कर लूॅ ....। अगहन मास में मेरे बायें अंग फडकते थे तो मुझे ऐसा लगता था कि यह उनसे मिलन का संकेत है मुझे विरह की पीड़ा सता रही थी। हे प्रिय, अब तो आकर मेरी सुधि लो, मेरा मन बड़ा आतुर हो रहा है।

श्याम बिन कौन हरे जा हो पीर ....
असढ़ा रे धन गरजन लागे, साहुन गैर गम्भीर।
चहुॅ दिस बरसत मेव, क्वांर मास बरसा भई थोरी।
कातक मच गई कीच, अरे अगन मास हर पाती भेजी,
और लिख पठाये संदेश, पूष मास में जाड़े परत हैं।
माव में तपत शरीर, ...
अरे फागुन मास में होली मनायी, कौना पै डारों अबीर,
अरे भजले रामा कौना पै डारों अबीर,
चैत मास फूलन की वर्षा, वेशाखें भई धूर,
अरे सूरश्याम जा कानो वरनों, जेठ मिलत रगवीर,
श्याम बिन कौन हरे जा पीर ....

अर्थ : कृष्ण के बिना यह पीड़ा कोई दूर नहीं कर सकता। असाढ़ मास में बादलों की गर्जना शुरू हुई, श्रावण में तीव्र वर्षा हो रही है। क्वांर में वर्षा थोड़ी हुई, कार्तिक में कीचड़ व्याप्त है। अगहन में कृष्ण ने पत्र भेजा। पूष के महीने में ठंड पड़ने लगी। माघ में कुछ तपन व्याप्त थी। फाल्गुन का रंग रंगीला महीना आ गया, लेकिन आपके (कृष्ण के) न होने से रंग अबीर किस पर डाला जाये? चैत्र में फूलों की अधिकता होती है, वैशाख में गर्मी तथा धूल होती है। सूरदास कहते है कि मैं कहॉ तक वर्णन करूं, ज्येष्ठ मास में कृष्ण आये सबके मन तृप्त हो गये।

छंदयाऊ फाग (बारामासी)

दोहा : जबसें हरि मथुरा गये, तजकें हमसें हेत।
तबसें देखों बदन में, मदन मरोरे देत।

टेक : दै रऔ मदन मरोरे भारी, आये न गिरधारी।

छंद : आये गिरधारी न आली, उन बिन सेज डरी है खाली।
बिरहा बान जेठ में पाली, मुझपै आकें।
अपनो जौ दुख कीसें कावै, सबरी राते जागत जावै।
बैरन छिनभर नींद न आवै, गई मुरझाकें।।

उड़ान : मुरझानी अति माननी, तन की दशा बिसारी।
अव लग आओ असाढ़ बा सजनी, उठी घटा नमकारी।।

* शोधार्थी, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

टेक : सावन में भवभावन मोपै, ऐसी बिछरन डारी।
छंद : मोरी जा हैं बारी बैस, जायें कैसे सहो कलेश।
टापुन छाये सौत के देश, न खबर लई।
भादों जल बरसे गंभीर, मोरे उठे करेजे पीर।
थर थर कांपें मोर शरीर, सुध बुध भूल गई।।
उड़ान : सुध बुध भूली है सखी, बिरहा बान की मारी।
कुआंर अबाई जान श्याम की, भौत निहारी।
टेक : कार्तिक में सब ग्वाल बाल जुर घर-घर नचत दिवारी।
छंद : घर घर नाचें ब्रज के वासी, बाजें ढोल ढाल चौरासी।
मेरे मन में छाई उदासी, ना कुछ भाये।
ऐसो लगत आगन की ऐरी, तन में हूक उठत है मेरी।
मैं हो बिना श्याम की चेरी, हरि ना आये।
उड़ान : हरि न आये हैं सखी, कोटि जतन कर हारी।
किये पठाऊ को जाय द्वारकें, पूस भओ अनजारी।।
टेक : जो कोऊ लाल माघ में हमखां, देतो लाय मिला री।
छंद : अपनो दुख-सुख उनमें काती, मोरे जी की तपन बुझाती।
जब कऊ होरी फाग सुहाती, फागुन मइयां।
करती चित्र चैत में चैन सजती, सिंगारन से ऐंन।
लेती पूज पुतरिया बैन, बरकी छइयां।
उड़ान : बटकी छइयां पूजती, सखीं पुतरियां लारी।
बैसायक अक्ती खां पाकें, लेती नाम लिवारी।
माधौसिंह बनाकें गावैं, बारामासी प्यारी।।

कृष्ण प्रवासी हो गये, उनके वियोग में राधा एवं उनकी सखियां व्याकुल हैं। आगमन की प्रतीक्षा करती हैं। पूरासाल उनका किस तरह से बीता। उक्त बारामासी फाग में उसी का वर्णन है।

अरी सखी! कृष्ण नहीं आये, मेरी सेज सूनी है। मैं उनकी प्रतीक्षा करती रही। ज्येष्ठ मास में विरहाग्नि और बढ़ गई, मैं अपना दुख किससे कहूं। अरी सखी! मुझे तो जागते ही रात व्यतीत करनी पड़ती है। मुझे एक पल के लिए भी नींद नही आती, मुझे अपने शरीर का ही होश नहीं रहता। असाढ़ मास में घटायें चहुंओर से घिर आयीं।

सावन जो कि सबके मन को अच्छा लगता है, मेरे लिए तो सूना ही लगा। वे तो सौत कुब्जा के साथ रहते हैं। मैं अभी अवयस्क हूं, उन्होंने जाकर मेरी खबर तक नहीं ली।

भाद्रपक्ष में जल की अधिकता रही, मेरे हृदय में पीड़ा उठती रही लेकिन वे नहीं आये।

मैं उनके विरह में कांपती रही, मुझे अपना जरा भी होश नहीं रहा। क्वांर में उनके आगमन का सुना, उनका रास्ता देखती रही लेकिन वे नहीं आये। कार्तिक में उनके ग्वाल-बाल सखा दिवारीं गा-गाकर नृत्य करते हैं। मधुर वाद्य बज रहे हैं लेकिन उनके विरह में मुझे सूनापन ही लगता है। अरी सखी! मैं किसे द्वारिका भेजूं जो जाकर मेरी मन:स्थिति उन्हें बता देता। मैंने तो उनके आने के लिए भांति-भांति के प्रयत्न कर लिये। यदि वे आ जाते तो उन्हें अपना दु:ख सुना देती, शायद अपने मन की जलन कुछ कम हो जाती लेकिन माघ भी सूना ही रहा। अब फाल्गुन आ गया, उनके बिना यह होली मुझे तनिक भी अच्छी नहीं लग रही। हर घर में रंग अबीर की बहार है लेकिन मेरे मन में तो सूनापन ही है। यदि वे चैत्र में आ जाते तो मैं अपना श्रृंगार करती तथा पुतलियों का पूजन कर लेती। वट वृक्ष के तले पूजन करती, उन्हें अपना दुखड़ा सुना लेती। वैसाख में अक्ती का त्यौहार आता है।

माधव सिंह जी ने पूरे वर्ष की बारामासी में राधा का विरह वर्णन कह दिया लेकिन राधा के श्याम नहीं आये।
गये कातक में कृष्ण बजा बाँसुरी, एक दु:ख एक हांसरी,
मईना अगन आयो आली, देखो आये ने वनमाली।
प्रीतम प्रीत की रीत न पाली, अब तो आन लागो सखी पूष मास री ......
सरदी दिन दूनी दरसाती, पी बिन थर-थर कॉपें छाती।
ऊधो ल्याये जोग की पाती, उन सौतन नें लये श्याम फांस री ....
अब जो आओ माव महीना, ब्रज वालों कों मुस्कल जीना।
ब्रज खों तज कुब्जा खों चीना, इतै गैयॉ लौ चरती न घास री,
फागुन में ब्रजभान किशोरी, पिय बिन कैसे खेलें होरी,
नई आये हरि चैत लगोरी, सखी फूल रहे फूॅल जे पलास री,
आओ है वैसाख सखीरी, हिरदें विरह दमार लगी री।
सौतन के सोचों भई पीरी, जेठ मईना में लेत हों उसांस री।
असढ़ा उठी घटा घनघोरें, वन में नाच रहीं जे मोरें।
नदिया नारे लेत हिलोरें, गुइयाँ सैयां के हिये बीच मांस री।
सावन रिमझिम बूंदें बरसें, श्याम दरसन खौं नैना तरसें।
आली कांकड़ जाउँ घर सें, बैरी फूल रओ भदैयाँ जो कॉस री।
आली क्वारै साल विलानी, अब लो आये ने सैलानी,
रातें परी-परी बर्रानी, लौड़ मईना में होय पूरी आस री ....
इतने मे मनमोहन आये, ब्रज वासिन के दु:ख मिटाये,
नित नऊ बाँके रास रचाये, दास कहें मिटी बृज की जा प्यासी री,

अर्थ : कृष्ण कार्तिक के महीने में बॉसुरी बजाकर गये, हे सखी उनके जाने पर एक तरफ दु:ख होता तो एक तरफ हंसी आती है। कार्तिक से अगहन आ गया लेकिन कृष्ण अभी तक नहीं आये उन्होंने हमारे प्रेम को नहीं पहचाना और अब तो पूष मास भी आ गया। इस समय शीत व्याप्त होने लगी है। मेरे प्रिय के न होने से मैं शीत में कॉप रही थी। उसी समय उद्धव जी योग के लिए पत्र ले आये। कुब्जा रूपी सौत ने कृष्ण को फसा लिया है।

अब माघ का महीना आ गया इस मास में ब्रजवासियों का जीना दूभर हो रहा है क्योंकि कृष्ण नहीं हैं उन्होंने ब्रज को छोड़कर कुब्जा को अपना लिया है। माघ से फाल्गुन आ गया यह रंग अबीर का पर्व है । फाल्गुन में वृषभान सुता आपके न होने से होली का त्यौहार कैसे मनावेंगी?

अब तो चैत्र का महीना भी लग गया और कृष्ण नहीं आये......! चैत्र में पलास फूल रहे है। कुछ समय बीतने पर वैशाख भी आ गया इस समय बिरह रूपी अग्नि बिरहीजनों को व्याप्त हो रही है उस पर कुब्जा सौत उसके कारण में दयनीय स्थिति में पहुँच गई हूँ। ज्येष्ठ के महीने में उसांसे ले रही हूँ। असाढ़ के महीने में घटायें छाने लगीं, वन में मोर नाच रहा है, बर्षा के कारण नदी नालों में पानी बढ़ गया है। हे सखी मेरे मन में एक गाँठ सी पड़ गई है। श्रावण में पानी बरसने लगा, कृष्ण की एक झलक के लिए मेरी ऑखे तरस गई। हे सखी, मैं घर से निकलकर कहाँ जाउँ? इस समय कॉस फूल रहे हैं। क्वाँर का महीना भी लग गया, कृष्ण नहीं आये वे मुझे रात्री में स्वप्न में दिखे थे। लौड़ का महीना (अधिकमास) लग गया और इस माह में मेरी आस पूरी हो गई।

कृष्ण आ गये सबे मन उनके आने पर प्रसन्न थे। उन्होंने आकर बृजवासियों के दु:ख दूर कर दिये। कृष्ण ने आकर रोज नये-नये रास रचाना शुरू कर दिये। कृष्ण से मिलकर बृजवासियों की प्सास बुझ गई सब तृप्त हो गये।

वर्तमान में बुन्देली बारामासी फाग की लुप्त परम्परा हो रही है। इनके संरक्षण एवं संवर्धन हेतु इनकी प्रस्तुतियां एवं बारामासी फागों का प्रकाशन

अत्यावश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बुन्देलखण्डी लोकगीत : शिवसहाय चतुर्वेदी
2. बुन्देली संस्कृति और साहित्य- डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त
3. बुन्देली लोक काव्य भाग 1 - डॉ. बलभद्र तिवारी
4. बुन्देली फाग परम्परा, डॉ. ओ.पी. चौबे
5. बुन्देली का फाग साहित्य, श्याम सुन्दर बादल, म.प्र. लोककला अकादमी, आदिवासी परिषद् भोपाल
6. फाग साहित्य, कपितल तिवारी, आदिवासी लोककला अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद भोपाल

****

भारतीय ग्रामीण समाज पर विज्ञान एवं प्रौधोगिकी का प्रभाव (डबरा तहसील के विशेष संदर्भ में)

करन सिंह *

शोध सारांश - शोधपत्र के शीर्षक के विवरण से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज जहां परम्परा, अंधविश्वास, प्रथाओं पर आधारित था जिसमें सामाजिक, जातीय व आर्थिक स्तरीकरण के साथ,कृषि-पशुपालन प्रमुख व्यवसाय था वह अब विज्ञान एवं प्रौधोगिकी से परिवर्तित हो रहा है यातायात-संचार के साधनों से सम्पूर्ण विश्व एक गॉव लग रहा है। ग्रामीण समाज में अंधविश्वास की कमी के साथ कुप्रथाओं व अन्य सामाजिक बुराइओं का अन्त होता जा रहा है, शिक्षा, स्वास्थ्य, उत्पादन में वृद्धि के साथ गॉवो में भी शहरों जैसी सुविधाऐं विज्ञान एवं प्रौधोगिकी से उपलब्ध होने के साथ-साथ सामाजिक सम्बन्धों में दूरी बढ़ने लगी है जो प्रमुखत: सामाजिक परिवर्तन या रूपान्तरण के रूप देखा जा रहा है जो कहीं न कहीं ग्रामीण समाज पर विज्ञान एवं प्रौधोगिकी का ही प्रभाव है।

कुॅजी शब्द -ग्रामीण समाज, जजमानी व्यवस्था, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, अस्पृश्यता, इंटरनेट, गतिशिलता, सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना - भारत ग्राम प्रधान देश है यहां के अधिकांश लोग गाँव में निवास करते है। भारतीय ग्रामीण समाज परम्परा प्रधान व जातीय संस्तरण पर आधारित है जिसमें प्रत्येक जाति अपने रीति-रिवाज एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रति प्रतिबद्ध है। यहां के ग्रामीण समाज की प्रमुख विशेषताओं में कृषि-पशुपालन, धर्म,-परम्परा प्रधानता, ऊॅच-नीच का संस्तरण, अर्न्तजातिय विवाह, खान-पान प्रतिबंध इत्यादि प्रमुख रहीं है।[1] वही आधुनिकता के दौर में विज्ञान व प्रौधोगिकी ने सम्पूर्ण समाज को गतिशील बनाया है।

विज्ञान एवं प्रौधौगिकी दोनो ही एक-दूसरे से अर्न्तसबंधित है। संक्षेप में विज्ञान प्रकृति के क्रमबद्ध ज्ञान को कहते है अर्थात् तार्किक ज्ञान। विज्ञान वह व्यवस्थित ज्ञान या विद्या है जो विचार, अवलोकन, अध्ययन और प्रयोग से मिलती है विज्ञान की प्रमुख कसौटी वैज्ञानिक विधि है। वहीं प्रौद्योगिकी से तात्पर्य नवीन उपकरणों मशीनों, तकनीको, शिल्प प्रणालियों का ज्ञान, संशोधन व उपयोग से है।[2] इस प्रकार विज्ञान एवं प्रौयोगिकी नवीन खोजो अविष्कारों, मशीनों, उपकरणों का नवोन्वेष प्रयोग है जो समाज व अर्थव्यवस्था में गतिशीलता लाती है।

'ग्रामीण समाज रूढीवादी व परम्परा प्रधान रहा है और ग्रामीण लोग अपने पुराने रीति-रिवाजो को छोड़ना नहीं चाहते तथा अपना जीवन यापन कृषि - पशुपालन, मजदूरी से करते है। गॉव में जाति व्यवस्था के अन्तर्गत कई जातियॉ उच्च तो कई निम्न श्रेणी की मानी जाती है तथा समाज के अन्दर उसी प्रकार का उनके साथ व्यवहार किया जाता है यहां छूआछूत अस्पृश्यता, ऋणग्रस्तता के प्रमाण देखे जा सकते है। ग्रामीण समाज में आवश्यकतानुसार वस्तुओं सेवाओं का आदान -प्रदान (जजमानी व्यवस्था) आज भी देखा जा सकता है जैसे-फसल कटाई करने पर मजदूरों को मालिकों द्वारा मजदूरी के रूप में पैसा न देकर अनाज या अन्य सेवा उपलब्ध कराना।' जातियों के बीच विभिन्न प्रकार के निषेध पाये जाते है। इन निषेधों से ग्रामीण समाज में जातियों के बीच सामाजिक सम्बन्धों में दूरी बनी रहती है। किन्तु फिर भी गॉव के कई कार्यक्रमो में सभी जातियों की सहभागीता देखी जा सकती है जैसे हाट-बाजार इत्यादि में। किन्तु आज विभिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों, खोजो, तकनीको, यातायात संचार के साधनो-मोबाइल, फोन, इंटरनेट, ई-मेल, फेक्स इत्यादि प्रौधोगिकी के कारण ग्रामीण समाज पर व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है जिसे हम निम्नलिखित प्रमुख बिन्दुओं से स्पष्ट कर सकते है-

आज विज्ञान एवं प्रौधोगिकी के कारण ग्रामीण समाज में एक ओर नवीन आधुनिक कृषि यत्रों, उपकरणें, खाद्य, बीज, उर्वरकों इत्यादि से कृषि उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है, गेहूॅ, चावल, दाले, तिलहन व अन्य फसलों के उत्पादन से देश की खाद्यान आपूर्ति के साथ विदेशों में निर्यात से आर्थिक लाभ हो रहा है वही दूसरी ओर कृषि में मशीनों के प्रयोग से ग्रामीण मजदूरों को आवश्यकतानुसार मजदूरी नही मिल पा रही है क्योकि पहले किसी खेत में कई मजदूरों द्वारा कृषि कार्य किया जाता था वहीं आज एक मशीन इस कार्य को थोडे से समय में अच्छे से कर देती है।[3] जैसे-गेहूॅ के खेत की कटाई 20 मजदूर एक दिन में करते थे उसे हार्वेस्टर मशीन 1 घण्टे में कर देती है। इस प्रभाव से ग्रामीण गरीब-मजदूर, खेतिहर लोग रोजगार हेतु बड़े शहरों के कारखानों में मजदूरी के लिये पलायन कर जाते है तथा वहां उन्हें अपने श्रम के अनुसार मजदूरी नहीं मिलती तथा, उनके पलायन से शहरों में जनसंख्या तीव्र गति बढ़ रही है जहॉ उन्हें आवास, भोजन, पेयजल, स्वास्थ्य- स्वच्छता इत्यादि समस्याओं का सामना करना पढ़ता है।

ग्रामीण समाज के लोग पीढ़ी दर पीढ़ी संस्कृति को अपनाते रहें हैं लेकिन आज विज्ञान और प्रौद्यौगिकी से गॉवों में यातायात एवं संचार के साधनों का तीव्र गति से विकास हुआ है प्रत्येक गॉव मुख्य सड़क मार्गो से जुड़ चुके है जिसमें प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना से गॉवों में अच्छी सड़कों का निर्माण किया गया है जो ग्रामीण लोगो की शहरों तक पहुचा आसान बनाती है। वहीं संचार के साधनों में कम्प्यूटर इंटरनेट, ई-मेल, फेक्स, मोबाइल, फोन, टेलीविजन, समाचार पत्रों की उपलब्धता इत्यादि ने ग्रामीण समाज को गतिशील बनाया है आज गॉव का व्यक्ति भी घर बैठे राज्य, शहर, देश व विश्व में होने वाली घटनाओं

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय एम0एल0बी0 उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

की जानकारी प्राप्त कर सकता है कम्प्यूटर, ईटरनेट से शासन प्रशासन की योजनाओं, कार्यकृमों, नीतियों, रोजगार के अवसरों इत्यादि का पता आसानी से कर सकता है।[4] आज गॉव के प्रत्येंक परिवार में मोबाइल फोन अवश्य मिलेगा जो अन्यत्र स्थान पर सम्बन्धिओं से सम्पर्क को आसान बनाते है लेकिन इनके दुरूपयोग से समाज में अराजकता भी तुरन्त फेलती है।

ग्रामीण लोगों में परम्पराओं, रूढीओं, प्रथाओं के प्रति दृढ़ता होती है जिनमें से कई रूढ़यों समाज के कई सदस्यों को प्रभावित भी करती है जैसे-दहेज प्रथा से महिलाओं के सम्मान में कमी आई है, ऐसी कई कुप्रथाऐ है जिनसे समाज प्रभावित रहा है कितु कानून द्धारा इन पर रोक, अधिनियम आदि से इन्हें अवैध घोषित किया गया है और इनका प्रचार-प्रसार संचार के साधनों से ही सम्भव हुआ है इसीलिए गॉवो में वर्तमान में पर्दाप्रथा, बाल-विवाह, सती प्रथा व ऐसी अनेक बुराइयों पर लगाम लगी है। सूचना प्रौधोगिकी से ग्रामीण समाज में जागरूकता आ रही है आज गॉव के लोग आर0टी0आई0 आदि का प्रयोग करने लगें है तथा इससे ग्राम पंचायत में होने वाले विनिर्माण कार्यो पर भी ग्रामीण लोगो का नियंत्रण सम्भव हुआ है गॉव का हर व्यक्ति ग्राम पंचायत द्धारा होने वाले प्रत्येक खर्च को आसानी से देख सकता है जिससे भ्रष्टाचार में कमी आई है।

ग्रामीण समाज जहां धार्मिक कर्मकाण्ड, अन्धविश्वास, जातीय भेद, अस्पृश्यता, पूजा- पाठव ब्राम्हणें की सर्वोच्चता पर आधारित था वहीं वर्तमान में ग्रामीण लोग शिक्षा प्राप्त कर विज्ञान की तर्कपूर्ण बातें करते है तथा अब संवैधानिक प्रावधानों, कानूनों, अधिनियमों आदि के ज्ञान से ग्रामीण लोग भी अस्पृथ्यता को नहीं मानते क्योकि इनको मानने वाले व्यक्ति को अपराधी माना जाता है अब गॉव के लोग कर्मकाण्ड व अन्धविश्वास में कम विश्वास करते है तथा कई धार्मिक कार्यो को पहले ब्राम्हाणें द्धारा सम्पन्न कराया जाता था जैसे - विवाह, नामकरण, लेकिन अब इन कार्यो को कई जातियों में लोग स्वंय ही करने लगे है जिससे ग्रामीण समाज में भी ब्राम्हाणें की सर्वोच्चता घटी है।[5] आज विज्ञान एवं प्रौधोगिकी का युग है जिसमें ग्रामीण समाज भी वैज्ञानिकता को अपनाता जा रहा है। और धर्म का प्रभाव लोगो पर कम होता जा रहा है।

'विज्ञान एवं प्रौधोगिकी के प्रभाव से ग्रामीण समाज में सामाजिक सम्बन्धों में शिथिलिता देखी जा सकती है पहले ग्रामीण समाज में परिवार में मुखिया और गॉवों में पंचों की बात को प्रमुखता से माना जाता था तथा गॉव में चौपालों पर लोग एक साथ बैठकर चर्चा करने के साथ साथ मनोरंजन भी करते थे तथा नियत समय पर एक-दूसरे का सहयोग करते थे। वहीं अब यह स्थिति बदलती नजर आ रही है विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से व्यक्ति में भौतिकतावादी व व्यक्तिवादी प्रवृत्ति का विकास हुआ है जिससे व्यक्ति केवल अपने स्वार्थ में लगा है। संयुक्त परिवार एकांकी परिवार में परिवर्तित हो रहे है, परिवार के मुखिया व पंचो की भूमिका में ह्रास हुआ है। अब गॉवों में घरों में ही कई मनोरंजन के साधन है टेलीविजन मोबाइल इत्यादि में व्यक्ति व्यस्त है वह दूसरों को समय ही नही देना चाहता। मोबाइल फोन, कम्प्यूटर, इंटरनेट इत्यादि के कारण व्यक्ति सामाजिक सम्बन्धों से दूर होता जा रहा है। वहा केवल जीविकोपार्जन में लगा हुआ है। पहले ग्रामीण समाज की पहचान, प्राथमिक सम्बन्ध थे वे आज द्वितीय सम्बन्धों में बदलते नजर आ रहें है।'

स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी विज्ञान एवं प्रौधोगिकी ने नए-नए कीर्तिमान स्थापित किये है पहले ग्रामीण लोगो को कई बीमारियों का सामना करना पढ़ता तथा उन बीमारियों का इलाज स्थानीय स्तर पर सम्भव नहीं था और गॉवों के लोगो को बड़े शहरों मे इलाज हेतु जाना पढ़ता था जहॉ उन्हें आवास, भोजन की समस्या का सामना करना होता है। किन्तु आज स्वास्थ्य के क्षेत्र में स्थानीय स्तर पर स्वास्थ्य केन्द्र, पढ़े-लिखे चिकित्सक, टेलीमेडिसीन जैसी, सुविधाओं से ग्रामीण लोगो को अत्यधिक लाभ मिल रहा है तथा विज्ञान एवं प्रौधोगिकी से कई प्रकार के ऊर्जावान उत्पाद, हरित वातावरण, स्वास्थ्यवर्धक यन्त्र इत्यादि से ग्रामीण समाज में स्वच्छता, उचित स्वास्थ्य की सुविधा देखी जा सकती है।

ग्रामीण स्तर पर शिक्षा प्रमुख कारक है जो प्रत्येक व्यक्ति की गतिशीलता को निर्धारित करती है। गॉवो मे पहले की अपेक्षा अब शिक्षा सुविधाऐ ठीक-ठाक है। पर्याप्त संख्या में शिक्षण संस्थाऐ है लेकिन शिक्षकों की कमी से यह आज भी प्रभावित है और शिक्षकों की पूर्ति के लिये केन्द्र-राज्य सरकारें निरंतर प्रयासरत है। वही विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने नित नयें आयामो यथा-ऑनलाइन शिक्षा प्रदाय, किताबें, अध्ययन, पाठ्यक्रम इत्यादि का लाभ अब गॉव के लोग भी घर बैठे टेलीविजन, मोबाइल, इंटरनेट से ले सकते है जैसे-ज्ञानदर्शन कार्यक्रम, यू.जी.सी. के ऑनलाइन शिक्षण प्रणाली आदि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से ही सम्भव हुआ है।[6]

उपर्युक्त विवरण शोधार्थी द्धारा किये जा रहे शोध 'डबरा तहसील के एक गॉव की सामाजिक व्यवस्था का एक समाजशास्त्री अध्ययन' (छीमक गांव के विशेष सन्दर्भ में) पर आधारित है जिससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज जो परम्परा, रूढ़ीवादी सोच, अंधविश्वास, प्रथाओं पर आधारित था जिसमें जातीय, सामाजिक व आर्थिक स्तरीकरण के साथ कृषि- पशुपालन प्रमुख था वह अब विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से परिवर्तित हो रहा है यातायात-संचार के साधनों से सम्पूर्ण विश्व एक गॉव लग रहा है ग्रामीण समाज में अंधविश्वास की कमी के साथ कुप्रथाओं का अन्त हो रहा है, शिक्षा, स्वास्थ्य, उत्पादन में वृद्धि के साथ गॉवो में भी शहरों जैसी सुविधाऐं उपलब्ध होने लगी है इसलिए तकनीकि का प्रभाव ग्रामीण समाज में स्वत: सिद्ध होता है जिसे हम सामाजिक परिवर्तन के रूप में देख रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह वी.एन.- ग्रामीण समाजशास्त्र
2. सरकारी बुक-'सामान्य अध्ययन-विज्ञान एवं प्रौद्योमिकी'
3. डॉ मदान जी0आर0-'परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र'
4. ————————————————
5. मुखर्जी रविन्द्र नाथ-'भारत में सामाजिक परिवर्तन'
6. डॉ मदान जी.आर.-'परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र'

****

Financial Restructuring in Banks

Dr. Priyanka Srivastava*

Introduction - The meaning of restructuring commonly mean give new, to rebuilt or rearrange. In financial context restructuring is a board term to denote significant reorientation or realignment of the investment or financial structure of a company through conscious management action with a view to drastically alter the quality and quantity of its future cash flow streams. Through restructuring would include freeing banks of excessive external and internal constrains, in a manner that would enable them to increase the allocate efficiency of resources a downward revision in statutory pre-emption would quality as regulatory reform.

Reason of Restructuring -There are basically six reason why companies are going for restructuring :-

1. The globalisation of business compelled Indian companies and export houses to meet global competition. Many companies to restructure lowest cost producer only can survive in the competition global markets.
2. Change in fiscal and trade policies like deregulation decontrol has led many companies to go for newer market and customer segment.
3. Revaluation in information technology it made is necessary for companies toadopt to new changes in communication/ information technology for improving performance.
4. Many companies have divisional strategy that has led to revamp them selves. Product division which do not fit in to the companies main line of business are being divested.
5. Improved productivity and cost reduction has necessitated drown sizing of the work force, both at work and managerial level.
6. Convertibility of rupee has attracted medium size companies also to operate in the global markets.

Prior to 1991, the banking system was the part of government fiscal operations. The banks formed a captive pool of resources for the government borrowing. Since the govt. was the largest borrower of the economy, they could assume the role of price maker. Govt. paying confessional rates of interest because they happened to figure in one of the govt. many priority lists.

Post 1991 banks in India reform process is complex, it is realized that banking in India never treated as an independent system, but only as a smaller facilitative clog in a large system. Banks were not autonomous profit-seeking entities, but operated to a great or lesser extent, as quasi fiscal mechanism, differing from the budget chiefly in a degree to which the funds employed can be circulate rather than being an out- and -out grant.

Restructuring of banking system has to operate at two level, first need to address macro systematic issue pertaining to factor responsible for ensuring banking soundness. Tracking micro level banks problem form the second level,the problem solved at financial and operational level. Financial restructuring of a bank is mainly aimed at restoring its solvency like capital infusion, reduction of other liabilities, management of assets with a view to increase their value and other instrument aimed at increasing profitability. Capital infusion may take the form of additional capital contribution from the present owner of existing liabilities such as subordinates debt and even deposits in to capital.

The operational restructuring tool may include changes in ownership and management and a drastic reengineering of its operations to cover, among other things, its business strategy product mix and pricing, loan recovery procedure, branch network, staff costs and increased resort to automation and other new technology

Systematic restructuring addresses the environmental issues such as the efficiency of the banking structure, ownership, entry and exit policies, distribution of banking assets, permissible activities etc. The operating environment also include the political, legal and other institutional infrastructure, the structure of quality and efficiency of which have a direct bearing on whether banking efficiency is promoted or hampered.

Upon reviewing the restructuring practices in 18 countries in 1970- 90s. The appropriateness of competing solutionsdepends critically on the correct identification of the causes of unfolding banking difficulties. A decade in to financial sector liberalization has witnessed little concerted efforts at restructuring the Indian Public Sector Banks. Though there has been significant progress in banking regulatory reforms in the period, the slow pace of the restructuring has slowed down the assimilation of the incentive structures inherent in the new regulation.

*Assistant Professor, Armapur P.G. College, Kanpur (U.P.) INDIA

The finding the interesting because they reinforce our conceptual division of regulatory reform versus restructuring. The Indian experience is quite in conformity with their where they find slow progress is directly linked to the instrument mix used. All the slow progress countries made extensive use of central bank instrument, in all of these countries, the central bank was only agency responsible for bank restructuring.

Different countries have opted for different strategies depending on the structure of their banking system. If banking assets are fragmented between different banks, consolidated by merger will achieve economies of scale and also economies on scarce managerial expertise. While healthier banks could be merged, consolidation could also be done by liquidating those that are insolvent. In The United States, thousand of banks and thrift were merged or closed.

In a more concentrated banking system, large insolvent banks could be split, the viable parts sold and rest liquidated. Breaking up of monolithic banking system was adopted in several emerging market economies of Eastern Europe. In Nicaragua, Peru and Tanzania, large problem banks were downsized by placing restrictions on asset growth. In Argentina, Estonia, Latvia and Venezuela, several bigger banks were either closed or merged. Simultaneously, some of the countries permitted entry of new banks including foreign banks.

While there is no unique solution to banking crises that could be prescribed and applied across the board to all countries, there are some common threads that seem to run through all cases of successful restructuring ultimately , each bank needs to be restored to a minimum level of solvency through financial restructuring . Therefore, only longer term operational and systematic restructuring can help them maintain their competitiveness and enable them to ensure sustained profitability. Only comprehensive approach to restructuring can have a lasting effect on the cost, earning and profit of the banks to be restructured.

Reference :-

1. Personal Research.

****

ब्रह्मा सृष्टि की उत्पत्ति (ब्रह्मपुराण के अनुसार)

संध्या दावरे *

प्रस्तावना – शंकराचार्य ने सौन्दर्य लहरी में महाशक्ति से अणु की उत्पत्ति का रूपक लिखा है

'तनी यासं पांसुं तव तरणपऽरुह भवम्।
विरञ्चिः सञ्चिन्वन् विचारयति लोकानविकलम्।।

अर्थात् आकाश रूपिणी अव्यक्त महाशक्ति से अणुओं की वृष्टि हुई। उन अणुओं में से सर्जनात्मक अणुओं को संचित करके संसार की रचना की गई। इसे ब्राह्मी अणु शक्ति कहते है।'

इस तीन अणुशक्ति द्वारा जिसे ब्राह्मी, वैष्णवी और रौद्री अणुशक्ति कहते है, जिनसे संसार की उत्पत्ति हुई है।

वस्तुतः पुराणों मेंइनका उल्लेख किया गया है कि–'वेदों और पुराणों का आविर्भाव काल समान ही है। कवि वेद मंत्रों के द्रष्टा मात्र है, कर्ता नहीं। वेद प्रतिपादित पुराणों के स्मर्ता ब्रह्म देव है।' अर्थात् ब्रह्मा के मुख से पुराणों का ही स्मरण हुआ है–

'पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम्।।'

वस्तुतः इस महाशक्ति के तीन रूप है ब्रह्मा उत्पत्ति के कारक है, विष्णु पालनकर्ता और रुद्र याने शिव संहारात्मक शक्ति बने हुए है।

सभी पुराणों मेंब्रह्मपुराण ही आद्यपुराण माना जाता है।

'आद्यं सर्वपुराणां ब्रह्ममुच्यते।।'

ब्रह्मपुराण में ही 'सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति ओर प्रलय के कारणीभूत अजर अमर नित्य परब्रह्म विष्णु ही है।

'अव्यक्ताव्यक्तभूताय विष्णवे मुक्तिहे तवे।
सर्ग स्थिति विनाशाय जग तो योऽजरामरः।।'

इसीलिए पुराणकर्ताओं ने ब्रह्म, विष्णु और शिव तीनों का एक ही महाशक्ति एक रूप ही माना है।

इसलिए लोमहर्षण ऋषि कहते है कि–

'हृष्टारं सर्व्वभूतानां नारायणपरायणम्।।'

मुनिश्रेष्ठ! उस ईश्वर को आप सब प्राणियों का सृष्टा तथा नारायणाश्रित अत्यंत तेजस्वी ब्रह्मा समझिये।

सृष्टि की उत्पत्ति में महत्–तत्त्व से अहंकार उत्पन्न हुआ। अहंकार से पंचमहाभूत और उनसे अनेक भेद उत्पन्न हुए। यही सनातन सृष्टि है।

'अहङ्कारस्तु महतस्त्माद्भूतानि जज्ञिरे।
भूतभेदाश्य भूतेभ्य इति सर्गः सनातन।'

स्वयंभू भगवान् ने अनेक प्रजाओं को उत्पन्न करने की इच्छा रखकर पहले जल की सृष्ट की। उस में बीज डाला। जल में सोये हुए परम पुरुष की नाभि से एक सुवर्णमय अण्डा उत्पन्न हुआ।

'अयनं तस्य ताः पूर्व्व तेन नारायण स्मृतः।
त्र हिरण्यवर्णमभवत्तदण्डमुदकेशयम्।।'

उससे स्वयंभू ब्रह्मा उत्पन्न हुए। हरिण्यगर्भ भगवान् ने वर्षो तक वास करके उस अण्डे को स्वर्ग और पृथ्वी इन दो टुकड़ो में विभक्त कर दिया।

'हिरण्यवर्णो भगवानुषित्वा परिवत्सरम्।।
तदण्डमकरोद् द्वैधं दिवं भुवमथापित च।
तयोः शकलयोर्म्मध्यं आकाशमकरोत्प्रभुः।।'

इस स्वयंभू अण्डे से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। हिरण्यगर्भ भगवान् ने वर्षो तक वास करके उस अण्डे को स्वर्ग और पृथ्वी इन दो टुकड़ों में विभक्त कर दिया।

फिर जल में डुबी हुई पृथिवी तथा दसों दिशाओं को धारण किया। तदनन्तर काल, मन, वाणी, काम, क्रोध और रति की रचना की। फिर सात प्रजापतियों की सृष्टि की जिसमें मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्य, पुलह, क्रतु और वशिष्ट जैसे महान तेजस्वी मानस पुत्रों को जन्म दिया।

'ततोऽसृजत् पुरा ब्रह्मा रुद्रं रोषात्मसम्भवम्।।'

इन सातों प्रजापतियों ने पहले ब्रह्मा के क्रोध से रुद्र को उत्पन्न किया। फिर सनत् कुमार को उत्पन्न किया। तब क्रियाशील प्रजावान और महर्षियों से अलंकृत हुए है।

बाद में बिजली, वज्र, लाल इन्द्र धनुष, जल और मेघ रखकर यज्ञसिद्धि के लिए ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का ब्रह्मा ने निर्माण किया।

'सृज्यमानाः प्रजा नैव विवर्द्धन्ते यदा तदा।
द्विजा कृत्वात्मनो देहमद्धेन पुरुषोऽभवत्।।
अद्धेन नारी तस्यां तु सोऽसृजद्विविध प्रजाः।।'

फिर भी सर्जन की जानेवाली प्रजा जब तक नहीं बढ़ी। तब ब्रह्मा ने अपने देह के दो भाग किये। आधे भाग से पुरुष बना और आधे भाग से स्त्री बनी।

'दिवञ्च पृथिवी चैव महिम्ना व्याप्य तिष्ठति।
विराजमसृजविष्णुः सोऽसृजत् पुरुषं विराट्।।'

अपनी महिमा से स्वर्ग और पृथ्वी को व्याप्त करके वे स्थित है। विष्णु ने विराट् की सृष्टि की। विराट् ने पुरुष को उत्पन्न किया। जिसे मनु माना गया। इस प्रकार विराट् से उत्पन्न शक्ति शाली पुरुष ने प्रजा की सृष्टि की। इसी स्वायंभू मनु ने प्रजा उत्पत्ति का कार्य आगे बढ़ा।

तत्पश्चात् 'आपव' नाम प्रजापति ने अयोनिज कन्या शतरूपा को अपने पत्नी बनाया, जिसने घोर तपस्या कर अपने तेजस्वी पति को प्राप्त किया। यही पुरुष स्वायंभुव मनु हुआ। फिर स्वयंभुव मनु और शतरूपा ने पीढ़ी दर पीढ़ी प्रजा की सृष्टि की।

दक्ष ने भी प्रजा उत्पन्न की, किन्तु इस मानसी सृष्टि का विस्तार नहीं किया गया। तब धर्मात्मा प्रजापति ने मैथुनिधर्म से इनके प्रकार की प्रजाओं

* शोधार्थी (संस्कृत) अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

के रचने की इच्छा की।

'स मैथुनेन धर्मोण सिसृ धुर्विविधा: प्रजा:।।'

ब्रह्मपुराण में वशिष्ट ने कहा है कि- ब्रह्मा अपने विकार के कारण अनेक रूप धारण करता है।

अप्रबुद्धथाव्यक्तमिमंगुणनिधिं सदा।
गुणानां धार्मता तत्त्व सृजत्यापिते तथा।।

अजन्मा ब्रह्म के हृदय में क्रीड़ा की इच्छा से विकार उत्पन्न होते है। तब वह अपने को अनेक रूपों में प्रकट करता है।

सुरभि ने गायों और भैसों को उत्पन्न किया। इराने वृक्षों, लताओं और सम्पूर्णतृण जाति को उत्पन्न किया। यक्ष और राक्षसों की एवं मुनि से अप्सरा की उत्पत्ति हुई। महासिद्धा अरिष्ठा ने अत्यंत तेजस्वी गन्धर्वो को उत्पन्न किया।

ब्रह्मा ने सबसे पहले सात महर्षियों की मानसी सृष्टि उत्पन्न की थी। विष्णु को आदित्यों का राजा, अग्नि को वसुओं का, दक्ष को प्रजापतियों का, इन्द्र को मरुतों का, प्रह्लाद को दैत्यों और दानवों का, सूर्य पुत्र यम को पितरो का तथा यक्ष, राक्षस, राजा, संपूर्ण भूत और पिशाचों का स्वामी महादेव जी को बनाया।

पूर्व में जब पृथ्वी उत्पन्न हुई तब वह बहुत उबड़ खाबड़ थी। उनमें गाँवों नगरों का विभाग नहीं था। अन्न, गो-रक्षा, खेती, वाणिज्य, मिथ्या, लोभ, डाह- ये सब नहीं थे।

'यत्र तत्र समं तवस्याभूमेरासीदत्त द्विजा:।
तत्र तत्र प्रजा: सर्न्वा बिवासं समरोचयन्।।

जहाँ जहाँ पृथ्वी समतल थी वहां सर्वत्र बसने लगी।
उस समय जनता परिश्रम और कष्ट से कंद-मूल भोजन प्राप्त करती थी।

ऋषि, देवता, पितर, नाग, दैत्य, राक्षस, गन्धर्व, पहाड़ वृक्ष इन्होंने पहले पहल पृथ्वी को दुहा।

'अत्रिर्वसिष्ठो भगवान् कश्यपस्य महानृषि:।
गौतमोऽथ, भरद्धाजो विश्वामित्र च।।
तथैव पुत्रो भगवानृचीकस्य महात्मन:।
सप्तमो जमदग्निश्च ऋषिय: साम्प्रतं दिवि।।'

अत्रि, वशिष्ठ, भगवान् कश्यप, गौतम भरद्धाज, विश्वामित्र और जमदग्नि ये सब ऋषि स्वर्ग मेंहै।
कश्यप और दक्ष की पुत्री के संयोग से विवस्मान् (सूर्य) उत्पन्न हुआ।
फिर चन्द्रमाकी उत्पत्ति बनाई है।

इसके पश्चात् ब्रह्मपुराण मेंविभिन्न राजवंशों के व्यापक उद्भव की कथा दी है। जिसमें नहुष के पुत्र ययाति, पुरु, वाह्लक का पुत्र सोमदत्त, च्यवन ऋषि, शान्तनु, पितामह भीष्म, कौरव और उनको सौपुत्र, और यदु वंश का वर्णन किया है। और पाण्डवों का जन्म हुआ। वृष्टि वंश का वर्णन किया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 शंकरा चार्य सौंदर्य लहरी
2 ब्रह्मपुराण सृष्टि उत्पत्ति
3 ब्रह्म. 1.23,24)
4 ब्रह्म. 1.34
5 ब्रह्म. 1.35
6 ब्रह्म. 1.39
7 ब्रह्मा 1.40.41
8 ब्रह्म. 1.45
9 ब्रह्म. 1.51, 52
10 ब्रह्म. 3.4
11 ब्रह्म. 4.94
12 ब्रह्म.5.34-35
13 ब्रह्म. 1.53
14 ब्रह्म. 5.34.35

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

'नीला अम्बर काले बदल' क्हानी संग्रैह् च चित्तरित समाजिक कदरां

शिव कुमार खजूरिया *

प्रस्तावना – मनुक्खी जीवन गी सचारु ढंगै कन्नै चलाने आस्तै किश माप-दन्ड निर्धारित कीते गेदे न ते उंदे अधार उप्पर गै किश अवधारना बनी दियां न, जिनेंगी समाज-शास्त्रियें 'मूल्य' नांऽ दी संज्ञा दित्ती दी ऐ। मूल्य गी डोगरी च कदरां गलाया जंदा ऐ। इस आस्तै अंग्रेजी च 'value' शब्द दा इस्तेमाल कीता जंदा ऐ। इ'नें कदरें गी पीढ़ी-दर-पीढ़ी ते युगें-युगें थमां परखेआ जंदा ऐ। इंदे उप्पर गै अच्छे परिवार ते समाज दी नीह् टिकी दी होंदी ऐ। एह् कदरां मनुक्खी जीवन गी शैल ते सौखा बनाने च मद्दगार साबत होंदियां न। मौजूदा दौर च कदरें दा प्रयोग प्रयोग परिवारिक, समाजिक, आर्थिक ते धार्मिक रुपै च बी होन लगी पेदा ऐ।

समाज दे बगैर कदरें दी कल्पना बी नेईं कीती जाई सकदी। कदरें दा विकास माह्नू दी समाजिक संरचना दे विकास कन्नै बड़ी गैहाई कन्नै जुड़े दा ऐ। कदरें गी जाने-पंछाने बगैर आपसी सरबंधे दा बी कोई म्हत्व नेईं ऐ। हर समाज दा संचालन कदरें ते नियमें कन्नै होंदा ऐ। इ'नें कदरें गी इक माह्नू गी नेईं सारें समाज गी अपनाना पौंदा ऐ। इ'नें कदरें कन्नै माह्नू दा व्यवहार बी प्रभावित होंदा ऐ। बदलदे परिवेश च मनुक्खी कदरें दा विकास होंदा ऐ। जेह्दे च मनुक्खी संरबध विकसित होंदे न, बदथे न ते विपरित परिस्थितियें च माह्नू दा माह्नू कन्नै साथ बनाने च मद्दगार बी साबत होंदे न। समाजिक कदरें दी नरोई झलक नरेन्द्र खजूरिया हुंदे क्हानी संग्रैह् 'नीला अम्बर काले बदल' च बी दिक्खने च लभदी ऐ। एह् संग्रैह् सन् 1967 ई. च प्रकाशित होआ। इस च कुल 15 क्हानियां न। इसगी सन् 1970 ई. च डोगरी दा पैह्ला साहित्य अकादमी पुरस्कार बी थ्होऐ दा ऐ। इस संग्रैह् च समाजिक सरोकार बारै खुल्लियै विचार-विमर्श इस चाल्ली कीता जाई सकदा ऐ:-

इस संग्रैह् दी सारें कोला पैह्ली क्हानी 'कास्तु दा काला तित्तर' इक सशक्त क्हानी ऐ। प्रस्तुत क्हानी च कास्तु दे जीवन च आए दे उतार चढाऽ दा बड़ा गै मार्मक चित्रण कीता गेदा ऐ। ओह् निम्न जाति कन्नै संरबध रखदी ऐ। ओह्दे त्रै व्याह् होंदे न ते त्रैवै घरै-आह्ले मरी जंदे न। खीर ओह्दा इक लौह्ता स्हारा कौडू जागत बी मरी जंदा ऐ। समाज च उसी डैन, जादूगिरनी करियै कुआलेआ जंदा ऐ। ओह्दा दूआ घरै-आह्ला छौंकू चौकीदार उच्च जाति दा होने पर बी उसी अपनांदा ऐ। अपने घरा च बराबर दा दर्जा दिंदा ऐ। क्हानी च आई दियां एह् सतरां दिक्खो:-

''फलै च परचोल पेई गेई- 'छौंकू चौकीदारै कोई प्हाइन दुआल रक्खी लैती ऐ।'

चौकीदारै दी बस इक बुड्डी मां गै ही। कास्तु ने अपने चम्मै कन्नै छौंकू गी ते कम्मै कन्नै ओह्दी माऊ गी मोही लैता।''[1]

पर, चौकीदारै दे मरदे गै ओह् समाज दे शोशन दा शकार होई जंदी ऐ। उसी ग्रांऽ थमां कड्ढी दिता जंदा ऐ।

'सद्दरो दाई'[2] क्हानी च सद्दरो दा अपना कोई बच्चा नेईं ऐ। ओह् निम्न जाति दी ऐ। ओह्दे म्हल्ले च गै इक उच्च जाति दी मां-म्टेहर कुड़ी रुला करदी ऐ। उस कुड़ी गी रुलदे दिक्खियै सद्दरो दी ममता जागी पौंदी ऐ। पैह्लें ते ओह् कुड़ी दे घरै-आह्लें गी पुच्छदी ऐ। पर, ओह् नेईं मनदे। सद्दरो किश दिनें बाद कुड़ी गी चुक्कियै गुमनाम थाँहे उप्पर लेई जंदी ऐ। कुड़ी दे घरै आह्लें गी बड़ी बेसती ते नमोशी मसूस होंदी ऐ। ओह् अपने रिश्तेदारें कन्नै रलियै कुड़ी गी तुप्पने दी हर मुम्कल कोशिश करदे न। घरै आह्लें गी कुड़ी कोला बी मती फिकर इस गल्लै दी होंदी ऐ जे इक निम्न जाति दी जनानी उंदी कुड़ी दी पालमा कीऽ करै ? इस गल्लै करी समाज च उंदी हास्सो-हानी होई सकदी ऐ। खीर पुलस चार साल बाद सद्दरो गी तुप्पी लैंदी ऐ। इस हरकत करी सद्दरो दी समाज च बड़ी बेसती होंदी ऐ। उसी भांत-सभांती दियां गल्लां बी सुनने पौंदियां न। पर, ओह् घाबरदी नेईं। कीजे उन्नै कुड़ी गी अपनी ममता दा निग्घ देइयै उसी नमां जीवन देने दा जतन कीते दा ऐ।

'सच जड़ा त्रामें दे पटे पर नेईं लखोआ' नरैनदत्ता दी मां राजे-म्हाराजे दे कुल परोह्त ते ब्राह्मण परिवार कन्नै सरबंध रखदी ऐ। उसह अपने पुत्तरै दे व्याह् दा बड़ा चाह् होंदा ऐ। पर, ओह्दा इक्को-इक्क पुत्तार नरैनदत्ता ग्रांऽ दी गै इक नीच जाति दी बिधवा जनानी गी ब्याइयै लेई औंदा ऐ। ओह् द'ऊं जागतें दी मां बी ऐ। पुत्तर नशेड़ी होंदा ऐ इसकरी उसी कोई फर्क नेईं पौंदा पर, ओह्दी मां दियें मेंदें ते ख्वाइशें गी मारना पौंदा ऐ। उसी समाज दियें गल्लें ते हासो-हानी दा बी शिकर होना पौंदा ऐ। क्हानी च मां-पुत्तरै दे एह् संवाद दिक्खो:-

'मिगी पता ऐ ओह्दे घर औंने करी लोक असेंगी सुखी नेईं बस्सन देन लगे। कुशवा भाईचारा असेंगी छेकी गै उड़ना। हुन जे किश झुल्लग झल्ली लैगे। आंऊ ते छड़ा जीन्दा रौह्ना चाह्ना। ओह् भलीमानस नेईं कबत्ती ऐ। जाति दी होली ऐ। कुच्छड़-कंनाडै पता निं कोदे जागत ञयाने बी ऐ न। वो फ्ही बी इक जनानी ऐ। इस कुल्लै दीया ते बलग। चुल्ली अग्ग नेईं सेई धूं-धुआखड़ ते पौग।'[3]

नरैनदत्तै दे नीच जाति च ब्याह् करने करी ओह्दी मां दियां ताह्गां मरी जंदियां न। ओह् जींदे होंदे होई बी इक लाश-जन बनियै रेही जंदी ऐ।

'इक सम्हाल' क्हानी च नानी ने ग्रांऽ दे गै इक मां-म्टेहर ते निम्न-जाति दे जागतै गी घरै च कम्मै काजै आस्तै रक्खे दा होंदा ऐ। नानी च इन्नी हिम्मत नेईं जे ओह् समाजी बंदिशे ते बरादरी गी दरकनार करियै उस जागतै गी परिवार दा हिस्सा बनाई लै। लोकें दी गल्लें ते तान्ने-म्हीने कोला बचने आस्तै ओह् रोज-मर्रा दे निक्के-मुट्टे कम्म करोआई लैंदी ऐ। नानी घरै दे जीबें ते समाज सामनै उस जागतै कन्नै बखले आह्ला बरताऽ करदी ऐ। पर, अंदरै दा ओह्दा मन साफ ऐ। जिसलै जागतै दी पिट्ठ उप्पर फौड़ा निकलदा ऐ तां

* शोधकर्ता (डोगरी विभाग) जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू, भारत

नानी समाजी लोकाचार भुल्लियै उस जागतै दी कारी च लग्गी जंदी ऐ। ओह् इंसानियत गी जात-पात कोला मता म्हत्ब दिंदी ऐ। क्हानी च आई दियां एह् सतरां नानी दी समाजी कदरें उप्पर लोऽ पाने आह्लियां न:-

'सामनै नानी उस्सै म्हाशे जागतै दी पिट्ठी उप्पर टकोर करै दी ही। निक्की-निक्की छोत-भिट बुज्झने आह्ली ते असेंगी उस जागतै थमां छोने लेई ठाकने आह्ली नानी, किन्ने हिरखै कन्नै गोदी च पाइयै उस मां-म्टेहर जागतै गी टकोर करै दी ही।'[4]

निशकर्श दे तौर पर गलाया जाई सकदा ऐ जे समाज दी बंड जाति ते धर्म दे अधार पर कीती गेदी ऐ। प्रस्तुत क्हानी संग्रैह् च बी जाति दे अधार उप्पर कदरां बनदियां ते त्रुटदियां लभदियां न। उच्च जाति दे लोक निम्न जाति दे लोकें गी शरीरिक ते मानसिक तौरा पर प्रताड़ित करदे न। उं'दा शोशन करदे न। किश क्हानियें च घरै दे बच्चें हौली जाति च व्याह् करी लैंदे न जिं'दे कारण घरै दे जीवें दी मानसिक ते समाजिक प्रतिश्ठा गी ठेह् पुजदी ऐ। पर, किश क्हानियें च जातिगत तौर पर एह् कदरां बनदियां बी लभदियां न। उच्च जाति दे किश लोक निम्न जाति दे लोकें गी अपनांदे बी लभदे न। उंदे कन्नै अपने घरै दे जीवे आह्ला बरताऽ करदे नजरी औंदे न। इंने क्हानियें च घरै दे बड्डे कुसै बी जाति दे होन ओह् बच्चें गी अपनें बच्चें आंगर गै हिरख ते लाड लांदे नजरी औंदे न। सुख-दुख ते विपता दी घड़ी च इक-दुए दा साथ दिंदे लभदे न।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नीला अम्बर काले बद्दल, नरेन्द्र खजूरिया, सफा-116
2. नीला अम्बर काले बद्दल, नरेन्द्र खजूरिया
3. उऐ, सफा-90
4. उऐ, सफा-51

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

राजा मंडलीक दी वार च नारी जीवन दी अभिव्यक्ति

डॉ. प्रीति रचना *

प्रस्तावना – मां, भैन, पत्नी, धीऽ ते पता नेईं किन्ने गै रूप धारण करने आह्ली मूरत कलजुग च नारी नांऽ कन्नै जानी जंदी ऐ। नारी प्राचीन काल थमां गै इस धरती पर केईं अवतार लेइयै जनम लैंदी रेही ऐ। एह् नारी कदें इक मां दे रूपै च लोआदी दी पालमा करदी ऐ ते कदें इक भैन बनियै अपने भ्राऊ दे हत्थै पर रक्षा–सूत्तार बनदी ऐ। कदें पुरश दा अद्धा अंग बनियै ओह्दी अर्धांगिनी खोआंदी ऐ ते कदें इक धीऽ बनियै प्योऽ दा नांऽ रोशन करदी ऐ। भारतीय संस्कृति च नारी गी लक्ष्मी, अन्नपूर्णा नांएं कन्नै सम्मानित कीता गेदा ऐ ते पूजनयोग मन्ने दा ऐ। शायद तां गै उस्सी शक्ति बी गलाया गेदा ऐ। वैदिक युग च नारी दी स्थिति बी चंगी ही, इस्सी करी गलाया गेदा ऐ–

'यत्र नार्यस्तु पूजन्ते रमन्ते तत्र देवता' अर्थात् जित्थै नारी दी पूजा होंदी ऐ उत्थै देवता वास करदे न। पर, वैदिक युग दे बाद नारी दी म्हत्ता छटी गेई ते ओह्दी स्थिति बी चंगी नेईं रेई। समें दे कन्नै–कन्नै नारी गी केईं दुख थ्होए। पैह्लें सती प्रथा फ्ही पर्दा प्रभा ते फ्ही बाल–ब्याह् ते ऐसे बड़े गै असमाजिक कम्में कन्नै भारती नारी दा सामना समें–समें पर होंदा रेहा ऐ। इक समां नेहा आया जदूं नारी सिर्फ इस्तेमाल दी चीज़ मन्नी गेई। उस्सी घरै दी चारा–दोआरी च कैद करी दित्ता गेआ। लौह्की बरेसा च गै उस्सी ब्याही दित्ताा जिसलै के उस्सी ब्याह् शब्द दा मतलब बी पता नेईं होंदा ते जेह्दे लड़ लाया जंदा उयै ओह्दा पालन–पोशन करदा ते अपनी मन–मरजी दा बरताऽ करदा। कोई बी इस गल्लै गी नेईं समझदा जे नारी प्रकृति दी अनमोल भेंट ऐ। स्रिश्टी दा अधार होने करी उस्सी विधाता दी इक श्रेश्ठ रचना बी गलाया जंदा ऐ।

नारी समाज, संस्कृति ते साहित्य दा म्हत्तवपूर्ण अंग ऐ। मनुक्खी गुणें दी द्रिश्टी कन्नै वचार कीता जा तां नारी मती मानवी ऐ। इ'नें सभनें गुणें करीबी नारी गी समाज ते संस्कृति च ओह् थाह नेईं मिली सकेआ जेह्दी ओह् हकदार ऐ। पुरश प्रधान व्यवस्था च नारी गी म्हेशां अधिकारें शा वंचित रखेआ गेआ ते उस्सी सिर्फ इस्तेमाल दी चीज़ समझेआ गेआ।

डोगरा संस्कृति बी भारती संस्कृति दा गै अंग ऐ। इस करी डोगरा समाज ते डोगरी साहित्य च बी नारी दी चंगी–माड़ी स्थिति दे केई उल्लेख मिलदे न। इ'यां गै 'राजा मंडलीक' वार च बी नारी जीवन दी अभिव्यक्ति होई दी ऐ। पर, इस वार दियें नारें गी समाज च उच्चा थाह हासल ऐ। इं'दी स्थिति आमतौर पर नरोई ऐ। मां रूप च लोआदी बगैर तड़फदी नारी, पत्नी रूप च अपने फर्ज नभांदी ते उं'दी मनोस्थिति दे कन्नै–कन्नै नारी दे होर केई रूप बी इस वार च द्रिश्टीगोचर होए दे न।

मां रूप च नारी :– नारी दी पूर्णता लोआदी गी जनम देने दे बाद गै मन्नी जंदी ऐ ते नारी दा मां रूप सारें शा उच्चा ऐ। इस रूप च नारी त्याग, तप, वात्सल्य, धीरज दी कोई हद्द नेईं होंदी। अपनी लोआदी लेई ओह् खुशी–खुशी केईं दुख झलदी ऐ। लोआदी दी कामजाबी च नंद दा अनुभव करदी ऐ। पर लोआद नेईं होने करी ओह्दा अस्तित्व अधूरा होंदा ऐ ते ओह्दा कोमल मन म्हेशां तड़फदा रौंह्दा ऐ, जेह्दा उदाहरण इस वार च बी लभदा ऐ। वार दी रानी बाशला लोआद नेईं होने करी दुखी ऐ ते ओह्दे तड़फने ते बिल्खने दा करुणा भरोचा द्रिश्श नज़री औंदा ऐ। लोआद पाने लेई ओह् गुरू गोरखनाथें दी भगती करदी बी चित्रत ऐ –

'सेवा लग्गी माता बाशला, इक मन राम ध्याई।
बोलै गोरख बचन करै, चलें गी गल्ल सुनाई।
चलो सिद्धो दुद्ध–न्हेरै चलचै, ख्याल पेई इक माई।
चरणें सीस नोआई नाथ जी, फल मंगने गी आई।'[1]

लोआदी लेई ओह् बड़ी तपस्या करदी ऐ पर, जिसलै पुत्तर प्राप्ति आह्ला फल गुरू गोरखनाथें शा ओह्दी भैन काशला धोखे कन्नै लेई जंदी ऐ तां ओह् रोई–रोई अपना दुख अभिव्यक्त करदे होई गुरूएं गी आखदी ऐ–

'बाल बरेसा में सेवा लग्गियां हुन सिर धौले आए।
कदूं नाथा तुद्ध पुत्तर दित्ते, कदूं खडाए जाए।
बब्ब दिंदा, रब्ब दिन्दा नेईं सा, करम कुत्थें कोई छोड़ै।
लिखेआ फल दरगाह् दा नेईं सा, कु'न कलामां मोड़ै।
जे तुद्ध फ्होड़ी छंडी नाथ जी, बाशल मार दुआई।'[2]

बाशला रानी च बात्सल्य ते ममता भरोची दी ऐ। जिसलै ओह्दे पुत्तर मंडलीक गी नाग डंग मारी जंदा ऐ तां बी बाशला बड़ी तड़फदी ऐ ते मंडलीक गी मंडली पर रक्खियै गुरुएं दा ध्यान करियै मन्नत मंगदी ऐ जे ओह्दे बच्चे गी बचाई देआ ते ओह् पत्तर पूजा करै करोग, जेह्ड़ी के अज्ज बी डुग्गर च कीती जंदी ऐ–

'रोदन करदी माता बाशला, फेरै चौका आई।
फेरी चौका माता बाशला छोड़े मंडली पर आई।
जे गुरुआ मेरा बच्चा बक्शी दें, तेरै पत्तर आटा पाई।
पत्तर आटा पाई नाथ जी पूजा पत्तर तेरा।[3]

मंडलीक दे बचपुने शा लेइयै जोआनी तगर हर रीत बड़े चाहें–चाहें करदी ऐ। जिसलै ब्याह्ले गी जंदा ऐ तां मां चाहें–चाहें उस्सी आपूं बी गैह्ले पाइयै त्यार करदी ऐ–

'पैह्ला सेहा गुरु गोरख दिन्दे, गल कैंठी जिनें पाई।
दूआ सेहा माता बाशला दिन्दी ऐ, हीरे रतन परोई।[4]

जिसलै राजा मंडलीक गौड़ बंगाले गेदा जादुएं दे असर करी घर–परोआर बी भुल्ली जंदा ऐ तां ओह् दुखी होई दी अपनी परोतेहानी तुलसू गी आखदी ऐ ते ओह् गौड़–बंगालें जाइयै ओह्दा पुत्तर परताई लेई आवे। पुत्तरै शा दूर होइयै तड़फदी माऊ दा चित्रण वार दी इ'नें सत्तारें च लभदा ऐ–

* पूर्व शोधछात्रा (डोगरी विभाग) जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू, भारत

'माता बाशला, भैन गुगड़ी रोन्दियां मैह्लें रेहियां।
बोलै बाशला वचन करै, परोहतानी गी लेआ बुलाई।
अऊं तुगी आखां माता तुलसू तूं देस बंगालै जाई।[5]

इस वार दी नारी भैड़े रवेइयै आह्ली ते ईशा प्रवृत्ति आह्ली बी ऐ। जि'यां रानी बाशला दी भैन काशला। ओह् काशला शा बड़ी ईशा करदी ऐ ते बेइमानी बी। ओह् गुरु गोरखनाथें कोला धोखे कन्नै पुत्तर प्राप्ति दा ओह् फल लेई औंदी ऐ, जेह्ड़ा काशला नै आह्नना हा–

'दगा कमाया काशल भैने, बाद बधाया थोढ़ा। गुरू गोरखनाथें दे डेरै जन्दी उत्थै मिलेआ जोड़ा।[6]

त्री नारी रानी सिरगला ऐ, जेह्ड़ी प्रेमिका दे रूपै च नज़री औंदी ऐ ते जादू–टोना करने च माहिर ऐ। ओह् मंडलीक गी दिक्खदे गै ओह्दे पर मोह्त होई जंदी ऐ ते ओह्दे कन्नै चौपड़ खेढदी ऐ। जिसलै राजा मंडलीक उस्सी चौपड़ च जित्ती लैंदा ऐ तां उस्सी आखदी ऐ जे ओह् उस्सी बी अपने कन्नै गै लेई चलै।

'बोलै सिरगला बचन करै राजा गी गल्ल सुनाई।
अ'ऊं तुगी आखां क्षत्रिया मिगी लेई चल डोलै पाई।[7]

पर, जिसलै राजा मंडलीक उस्सी ब्याह्ने गी औंदा ऐ तां जादू कन्नै राजे गी ते पूरी जान्नी गी भिड्डू बनाई दिंदी ऐ ते अपनी इस भैड़ी करनी करी राजे दे बजीर कालीवीर शा सजा बी पांदी ऐ।

'लेई राजा गी कालीबीरा, फी अन्दर मैह्लें जाई।
ऐसी कला दबाई कालीबीरें, पींड़ै पेई सिरगला गी जाई।
पीड़–पीड़ करलांदी सिरगला, हुन जिन्द बचदी नाईं।[8]

इस वार दी इक होर नारी तुलसू, रानी बाशला दी परोह्तेआनी ऐ, जेह्ड़ी बड़े क्यासी सभाऽ दी, आग्याकारी, दलेर ते होश्यार ऐ। ओह् रानी बाशला दी आज्ञा पाइयै राजे मंडलीक गी तुप्पने गी गौड़ बंगाले जंदी ऐ ते बड़ी होशियारी कन्नै रानी सिरगला दे मैह्लें जाइयै रानी दे जादू फूकियै राजे गी ओह्दे घर–परोऔर दा चेत्ता करांदी नज़री औंदी ऐ–

'बोलै तुलसू वचन करै माता गी गल्ल सुनाई।
बारां देई घोड़े–तोफां माता, कन्नै गुड्ड जुगड़ाई।
जादू फूकै तुलसू ब्रैह्मणी ते होश गेई राजा गी आई,
पैह्लें फूकेआ लेफ सर्हैना फी पलंगै दी बारी आई।[9]

इं'दे अलावा राजे मंडलीक दी भैन गुग्गड़ी, भैन रूपै च बड़ी समझदार ते हिरखी ऐ। जिसलै ओह्दा भ्रा मंडलीक गौड़ बंगाले जाइयै उ'नेंगी भुल्ली जंदा ऐ तां बड़ा रोंदी ऐ ते सुक्खना–सरीनियां मंगदी ऐ तां जे ओह्दा भ्राऽ घर परतोई आवै–

'रोदन करदी भैन प्यारी भरदी ठंडी आही।
मन्दरें रोन्दी भैन प्यारी, मैह्लें बाशला माई।[10]

आखर च निश्कर्श दे तौर पर एह् गलाया जाई सकदा ऐ जे राजा मंडलीक दी वार च नारी जीवन दे बक्ख–बक्ख पक्ख उग्घड़े दे न ते इस वार दी नारी परोआर ते समाज च रेहियै अपने अपनें दे सुखें आस्तै जींदी ऐ। बाशला माऊ दे रूपै च ते गुग्गड़ी भैनू दे रूपै च ममता दे प्रेम दियां मूरत न। सिरगला दे व्यक्तित्व च गुण–औगुण दोऐं न। ओह् प्रेमभाव आह्ली बी लभदी ऐ ते जादू–टोना करदी बी। काशला भैड़ी ते ईशा प्रवृत्ति आह्ली ऐ, जेह्ड़ी भैनू कन्नै धोखा करदी ऐ ते ओह्दे पुत्तरै दे अनिश्ट दी कामना करदी ऐ। तुलसू बड़े चंगे सभाऽ दी ते दुएं दे दुख–तकलीफ गी समझदी ऐ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डोगरी लोकगीत भाग–दो,नीलाम्बर देव शर्मा, केहरि सिंह मधुकर, सफा–72–73
2. उ'ऐ, सफा–74
3. उ'ऐ, सफा–77
4. उ'ऐ, सफा–83
5. उ'ऐ, सफा–88
6. उ'ऐ, सफा–73
7. उ'ऐ, सफा–80
8. उ'ऐ, सफा–86
9. उ'ऐ, सफा–90
10. उ'ऐ, सफा–87

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

माध्यमिक स्तर पर सी.बी.एस.ई. व आर.बी.एस.ई. विद्यालयों में मूल्यांकन की वस्तुस्थिति का अध्ययन

डॉ. सुगन शर्मा * मोनिका भादविया **

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – वे सभी अनुभव जिन्हें मनुष्य अपने प्रयास से अथवा किसी अन्य की सहायता से ग्रहण करता है, तथा जिनके ग्रहण करने के परिणामस्वरूप उसके व्यवहार में परिवर्तन होता है, शिक्षा के अन्तर्गत आते है। इस तरह शिक्षा –

सीखने-सीखाने की प्रक्रिया है।

सीखने-सीखाने की यह प्रक्रिया मनुष्य का सर्वागीण विकास करती है।

अर्थात् शिक्षा से बालक के अंतस में छुपी बीज रूपी शक्तियों का वृहत् वृक्ष के रूप में बाहर प्रकटीकरण होता है। **स्वामी विवेकानन्द ने भी कहा है कि बालक में अर्न्तनिहीत पूर्णता को बाहर निकालना ही शिक्षा है।** बालक ने कितना ग्रहण किया है, उसकी उपलब्धि कितनी रही है व उसे और कितना सीखने की आवश्यकता है इस सब का पता लगाने के लिए शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन को तकनीकी शब्द के रूप में प्रयोग में लिया जाता है।

शिक्षण पाठ्यक्रम शिक्षण विधियों आदि की सफलता के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए भी मूल्यांकन का सहारा लिया जाता है। मूल्यांकन शब्द अपने आप में बहुत व्यापक एवं विस्तृत है, **विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग 1948-49 में लिखा है कि 'हमें विश्वास है कि यदि हम विश्वविद्यालय शिक्षा में केवल एक बात में सुधार करने का सुझाव दें, तो वह परीक्षाओं के बारें में होगा।'**

माध्यमिक शिक्षा आयोग 1952-53 ने भी कहा है कि 'परीक्षा और मूल्यांकन का शिक्षा के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है, अभिभावकों और शिक्षकों के लिए समय-समय पर यह जानना आवश्यक है कि **छात्र कैसी प्रगति कर रहे है और उनके ज्ञान का स्तर क्या है? समाज भी यह जानना चाहता है कि उसने स्कूलों को बच्चों को शिक्षा देने का जो कार्य सौंपा है वह ठीक तरह से चल रहा है या नहीं।'**

शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन 1964-66) ने भी विद्यार्थियों के समग्र मूल्यांकन की बात करते हुए **ग्रेडिंग प्रणाली में अंकन** करने के लिए कहा गया। **एन.सी.एफ. 2005 ने भी कहा है कि विद्यार्थियो का मूल्यांकन उनकी शैक्षिक व सहशैक्षिक गतिविधियों को ध्यान में रखकर किया जाये।**

राजस्थान राज्य में मुख्यत: दो प्रकार के विद्यालयों की प्राथमिकता है जो कि सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ सेकेण्डरी एज्यूकेशन (सी.बी.एस.ई.) व राजस्थान बोर्ड ऑफ सेकेण्डरी एज्यूकेशन (आर.बी.एस.ई.) से संचालित है। दोनों ही विद्यालयों में मूल्यांकंन की अलग-अलग प्रणालियों को अपनाया गया है व समय-समय पर इन प्रणालियों में परिवर्तन भी किए गए है। इस परिवर्तन का प्रारम्भिक श्रेय सी.बी.एस.ई. विद्यालयों को दिया जा सकता है, जिन्होंने समय समय पर अपने मूल्यांकन पद्धति में आवश्यकतानुसार व विकासात्मक क्रम में कई प्रकार के परिवर्तन किये है जैसे - प्रारम्भिक समय में त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक व वार्षिक परीक्षाओं का होना इसके अन्तर्गत लिखित, मौखिक, व प्रायोगिक मूल्यांकन करना, समय के साथ ही सन् 2010 से सतत् व समग्र मूल्यांकन के अन्तर्गत **FA** (रचनात्मक मूल्यांकन) व **SA** (योगात्मक मूल्यांकन) पद्धति के द्वारा मूल्यांकन किया जा रहा है व सन् 2015 से वह अपनी इस मूल्यांकन प्रणाली में भी कुछ परिवर्तन कर रहे है इन्ही सब बातों को ध्यान में रखकर शोधार्थी के मन में कई सवाल उत्पन्न हुए जो इस प्रकार है :-

1. सी.बी.एस.ई.व आर.बी.एस.ई. विद्यालयों मे मूल्यांकन की यथास्थिति (प्रयुक्त प्रणालियाँ) क्या है?
2. जिन उद्देश्यों को लेकर इन प्रणालियों को लागू किया गया है क्या वे उद्देश्य पूरे हो रहे है?

इन बातों को ध्यान में रखकर ही शोधार्थी के मन में यह इच्छा जाग्रत हुई कि वह इन सवालों के जवाब प्राप्त करें। इसी आधार पर शोधार्थी ने सी.बी.एस.ई.व आर.बी.एस.ई. विद्यालयों का चयन कर इस कार्य को पूर्ण करने के लिए समस्या के रूप में इस विषय का चयन किया है।

शोध उद्देश्य – प्रस्तुत शोध समस्या अध्ययनार्थ शोधार्थी ने निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए :-

1. सी.बी.एस.ई. विद्यालयों में मूल्यांकन की यथास्थिति (प्रयुक्त प्रणालियाँ) का अध्ययन करना।
2. आर.बी.एस.ई.विद्यालयों में मूल्यांकन की यथास्थिति (प्रयुक्त प्रणालियाँ) का अध्ययन करना।
3. सी.बी.एस.ई. व आर.बी.एस.ई. विद्यालयों में मूल्यांकन की स्थिति (प्रयुक्त प्रणालियाँ) का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या :

1. सी.बी.एस.ई. : सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ सैकेण्डरी एज्यूकेशन – सी.बी.एस.ई. विद्यालयों से तात्पर्य उन विद्यालयों से है जिनमे पाठ्यक्रम संचालन केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा निर्धारित किया जाता है।

2. आर.बी.एस.ई- : राजस्थान बोर्ड ऑफ सैकेण्डरी एज्यूकेशन – आर.बी.एस.ई. विद्यालयों से तात्पर्य उन विद्यालयों से है जिनमे पाठ्यक्रम संचालन राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा निर्धारित किया जाता है।

3. मूल्यांकन – मूल्यांकन प्रणाली से तात्पर्य मूल्यांकन की उस प्रक्रिया

* शोध निर्देशिका, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

से है जो वर्ष पर्यन्त बिना रूके विद्यार्थी की शैक्षिक एवं सह शैक्षिक गतिविधियों का मापन करती है। प्रत्येक कार्य जो विद्यार्थी वर्ष भर करता है, वे सभी मूल्यांकन में आते है।

समस्या का औचित्य – साहित्य के अवलोकन से पता चलता है कि विभिन्न स्तर पर मूल्यांकन की वर्तमान स्थिति समस्याएँ, मुद्दो, माध्यमिक एवं प्राथमिक स्तर पर सतत् एवं समग्र मूल्यांकन की स्थिति का अध्ययन, मौखिक परीक्षा, ग्रेडिंग प्रणाली के प्रति अभिधारकों के अभिमत, विद्यालय के विकास आन्तरिक एवं बाह्य मूल्यांकन के सम्बन्ध आदि का अध्ययन पूर्व में किया जा चुका है। राजस्थान में सी.बी.एस.ई. व आर.बी.एस.ई. बोर्ड द्वारा संचालित विद्यालय प्रमुख रूप से है। दोनो ही प्रकार के विद्यालयों में मूल्यांकन की भिन्न-भिन्न प्रणाली को अपनाया गया है। सी.बी.एस.ई. बोर्ड ने सन् (2010) से सभी केन्द्रीय विद्यालयों में माध्यमिक स्तर पर सतत् एवं समग्र मूल्यांकन प्रणाली लागू की गई व वर्तमान समय में इस व्यवस्था में पुन: बदलाव करने पर विचार किया जा रहा है। उक्त मूल्यांकन व्यवस्था की स्थिति एवं प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से जुडे अभिधारकों (शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावकों) का अभिमत मूल्यांकन के प्रति क्या है। इस क्षेत्र में अभी तक कोई भी कार्य नहीं किया गया है। अत: अध्ययन की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण क्षेत्र माना जा रहा है। अत: ऐसे महत्वपूर्ण एवं उपयोगी क्षेत्र पर वांछनीय शोध कार्य अपरिहार्य बन जाता है।

माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन के लिए भावी योजनाएँ – राजस्थान राज्य में माध्यमिक स्तर पर मुख्य रूप से सी.बी.एस.ई. व आर.बी.एस.ई. बोर्ड द्वारा संचालित विद्यालय है। इन विद्यालयों मे आन्तरिक व बाह्य मूल्यांकन किस रूप में हो रहा है, शोध द्वारा इन विद्यालयों के मूल्यांकन की वस्तुस्थिति का पता लगा कर आवश्यक समाधान हेतु सुझाव प्रस्तत किये जायेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

BOOKS (English)

1. Best, J.W.,& Kahn,J.V. (2012). *Research in Education.*(10th ed.). New Delhi: Prentice Hall of India Learning Private Limited.
2. Good, C.V.(1959). *Introduction of Educational Research*. (2nd ed.). New York : Appleton Century Crafts Ins.
3. Vockel, E.L. (1983). *Educational Research*. New York : McMillan Pub. Co. Inc.

BOOKS (Hindi)

1. भटनागर, आर.पी.,। भटनागर, ए.बी. (1995) '*शिक्षा अनुसंधान*' मेरठ : लॉयल बुक डिपो।
2. भटनागर, सुरेश (2003), कोठारी कमीशन, एजूकेशन कमीशन 1964-66 : आर.लाल.बुक डिपो, आई.एस.बी.एन- 978-93-82065-47-0।
3. चौधरी, डॉ. दामीना एवं सिंह राजपाल आदि (2007) 'शिक्षा में अनुसन्धान पद्धतियां' कोटा वर्द्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय
4. ढौंढियाल,एस.एन.,। फाटक, ए.बी. (1972) '*शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र*' जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
5. गुप्ता, एस.पी. (2003) '*सांख्यिकीय विधियाँ*' इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।
6. नायक जे.पी., (1998) 'शिक्षा आयोग और उसके बाद', सांखला प्रिन्टर्स, आई.एस.बी.एन.- 81-85127-68-9।
7. पाण्डेय, के.पी. (2005) '*शैक्षिक अनुसंधान*' आगरा : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
8. शर्मा, आर.ए. (1995) '*शिक्षा अनुसंधान*' मेरठ : आर.लाल बुक डिपो।
9. सुखिया, एम.पी.,। मेहरोत्रा, एस.पी. (1976) '*शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व*' आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

ग्लोबल गॉव के देवता उपन्यास में आदिवासी विमर्श

अखिलेश कुमार *

प्रस्तावना – आज के समय में 'आदिवासी' हिन्दी उपन्यास में सबसे चर्चित विमर्श है। इसमें विश्व की सबसे प्राचीन मानव जाति के विभिन्न विषयों, जिसमें उनकी उपजातियां उनका समाज और उनकी परम्पराओं पर आधारित उनकी समस्याओं को उजागर करके पाठको एवं समाज के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है। इस विमर्श में जो परम्परा बहुत पहले आरम्भ हो चुकी थी आदिवासी चित्रण जो 2000 के दशक में अपने विकास काल में पहुंच चुकी थी।

इसी आदिवासी विमर्श को उपन्यास के माध्यम से इस उपेक्षित,विभिन्न जाति की यथार्थ स्थिति को अपनी कलम का विषय बनाने वाले रणेन्द्र एक लोकप्रिय आदिवासी उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठापित हुए।

प्रस्तुत उपन्यास ग्लोबल गॉव के देवता में प्राचीन आदिवासी जाति 'असुर' के विषय में उनकी जीवटता प्रकृति एंव आज के समय में ग्लोबलाइजेशन के कारण उनको होने वाली समस्याओं को इस उपन्यास में यथार्थ की दृष्टि से दिखाया गया।

ग्लोबल गांव के देवता का उपन्यास का प्रकाशन सन् 2008 में भारतीय ज्ञानपीठ के द्धारा किया गया था। इस उपन्यास की लोकप्रियता का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि 2016 तक इसके तीन संस्करण प्रकाशित हो चुके है।

इस उपन्यास की शुरूआत एक शिक्षक की नियुक्ति के साथ होती है जिसको असुर जनजाति बाहुल्य क्षेत्र में सरकारी विद्यालय में असुर जनजातियों के बच्चो को शिक्षित करना है। वही शिक्षक एक कथाकार के रूप में असुर आदिवासियों के एक-एक रीतिरिवाज, संस्कारों, आर्थिक क्रियाकलापों धार्मिक मान्यताओं को जो देखता है उन्ही लोगों में रहकर कहता है। 'मीलों तक पसरे पहाड़ के ऊपर का यह चौरस इलाका मन को और उचाट कर रहा था छिटपुट जंगल बाकी खाली दूर-दूर तक फैले उजाड बंजर से खेत' बीच-बीच में बॉक्साइट की खुली खदाने। जहां से बॉक्साइट निकाले जा चुके थें वे गडढ़े भी मुँह बाये पड़े थे'।[1]

असुर आदिवासियों के क्षेत्र में असुर की दयनीय स्थिति पर किसी का ध्यान न होकर वहां पर मौजूद वॉक्साइट कि खदानों पर सबका ध्यान था। आज के समय में असुर जनजातियों कुछ असुर नाम सुनकर जो अक्सर देवताओं को परेशान करने का काम करते थे, से लगाते है। लेकिन ये असुर उन असुरों जैसे बिल्कुल नहीं थे।

'सुना तो था कि यह इलाका असुरों का है किन्तु असुरों के बारे में मेरी धारणा थी कि खूब लम्बे, चौड़े, काले-कलूटे भयानक, दाँत-वॉत निकले हुए माथे पर सींग-वींग लगे हुए होगें। लेकिन लालचन को देखकर सब उलट-पुलट हो रहा था। बचपन कि सारी कहानियॉ उलट घूम रही थी।'[2]

असुर आदिवासी लोगों की मान्यतायें भी अन्य असुर जनजातियों की तरह है जिनको ये लोग बड़े विश्वास के साथ पूरा करते है 'देवी को जब बली की जरूरत महसूस होती है तो गुफा से नगाड़े की आवाज आने लगती है। हम समझ जाते है। फिर मजबूरी में दूर थाना इलाका के बाहर जाकर 'पूजा' लाना पड़ता है। उस भक्त की बलि के बाद नगाड़े की आवाज खुद बन्द हो जाती है।'[3]

ग्लोबल गॉव के देवता उपन्यास में हमे पता चलता है कि असुर जनजाति को प्राचीन काल में किस नाम से एंव काम से जाना जाता था 'हम असुर लोग मोटा-मोटा तीन भाग में बटे है।' रूमझुम ने फिर बात शुरू की 'बीर असुर, अगरिया असुर और बिरिजिया असुर।'[4]

और इन असुर जनजातियों को प्राचीन काल से रक्षक के रूप में प्रस्तुत किया गया और प्राचीन सभ्यता में इनका महत्वपूर्ण स्थान था। 'लेकिन प्राचीन असरिया -बेबीलोन सभ्यता में असुर का अर्थ बलवान पुरूष ही होता है। अपने यहां भी सायणाचार्य असुरों कों बलवान-प्रज्ञावान शत्रुओ का नाश करने वाला और प्रांणदाता पुकारते है। ऋग्वेद के प्रारम्भ के लगभग डेढ़ सौ श्लाकों में असुर-देवताओं के रूप में है। मित्र, वरूण, अग्नि, रूद्र सभी असुर ही पुकारे जा रहे है।'[5]

'इस उपन्यास में प्राचीन काल से जुडी उत्पत्ति सम्बंधी मान्यताओं का पता चलता है। 'अंगिरा ऋषि भी अपने को आग से उत्पन्न बताते है और अगरियों की भी पैदाइश आग से ही हुई है। यह अंगिरा ही है जिन्होने सबसे पहले आग की खोज की थी।'[6]

असुर जनजातियों की स्थिति खाने -पीने की अन्य पिछड़ी जनजातियों की तरह ही है उनके पास आज के समय में भी ज्यादा खाद्य पदार्थ नहीं है। 'इन मकई के घट्टा खाने वालों के यहां भात-दाल मिल जाता है वही बहुत है।'[7]

आर्थिक रूप से ये लोग बिल्कुल भी सक्षम नहीं हो पाये क्योकि भारत में 65% आबादी गॉव मे रहते हुए कृषि कार्य करती है लेकिन जनजातियों के पास गांव तो है लेकिन जमीन नहीं है जिससे खाने के लिए मक्का उत्पन्न कर सके इसलिए वे सब मजदूरी करने के लिए बाध्य है।

ऐसी स्थिति में उन लोगों की स्थिति खाने के लिए बहुत बद्तर होती है जिनके यहां मजदूरी करने वाले नहीं होते है। 'हालाँकि इस इलाके के लगभग सभी गांवो में ऐसे साल भर अनाज उगा पाने वाले दो-चार परिवार होते है। अधिकांश परिवारो के पास इतनी जमीन होती ही नहीं कि साल भर खाने के लिए मक्का भी मिल सके। जिस घर में मजूरी खटने वाले हाथ रहते है वे तो खान-खदान में खटकर पेट पाल लेते है किन्तु जिन घरों में खटने लायक समांग नहीं होता है उस घर का पेट तो जंगल ही पालता है। महुआ, कटहल,

*शोधार्थी (हिन्दी) अटलबिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

कई तरह के कन्द और साग, सब पेट भरने के काम आते है।'[8]

इनका असुर जनजातियों के विषय में कहा जाता है कि 'ये बल से बहुत शक्ति शाली होतें है। इनमें अपार शक्ति होती है ये भारी से भारी काम करने से पीछे नहीं हटते है इनका जीवन मेहनत पर अधारित होता है। सामान्य से सामान्य भोजन करके भी ये बड़ा से बड़ा कार्य कर सकते है। भभअपने देवता सिंग बोंगा की तरह असुर आदिम जाति भी कभी थकती नहीं है। आग से उत्पन्न, कभी लोहा पिघलाने और पिघला लोहा खाने वाले लोग खुद भी लोहा थे। केवल मक्का या कन्दा खाकर लोग इतना खट सकते है यह विश्वास नहीं होता है।'[9]

उपन्यास के अन्त में जो आदिवासी उपेक्षित थे वो आज विदेशी कम्पनियों से लड़ने के लिए एक जुट हो रहें है और समझदारी से काम लेकर एक-एक काम को निपटाते जा रहें हैं यानि आज का असुर आदिवासी मुख्यधारा की ओर बढ़ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-8
2. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-17
3. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-18
4. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-18
5. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-18
6. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-18
7. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-20
8. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-24
9. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, तीसरा संस्करण 2016 पृष्ठ-28

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की व्यावसायिक सन्तुष्टि का अध्ययन

लीला चतुर्वेदी * डॉ. पूजा गुप्ता डॉ. एम.के. तिवारी *****

प्रस्तावना - वर्तमान समय की ज्लवन्त समस्या शैक्षिक गिरावट है। शिक्षा शास्त्री तथा बुद्धिजीवी वर्ग तथा आम नागरिक शिक्षा के मानकों में आ रही गिरावट के प्रति चिन्तित है। शिक्षा के मानकों से तात्पर्य शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के ज्ञान, अभिव्यक्ति तथा सामाजिक वातावरण उसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान करता है। विद्यालय के भवन, कक्षों, साज-सज्जा व विद्यालय में उपलब्ध उपकरण ही के द्वारा विद्यालय का वातावरण निर्धारित नहीं होता है, वरन् प्रधानाध्यापक, शिक्षक तथा छात्रों के उचित व अपेक्षित व्यवहार से विद्यालय का वातावरण प्रभावित होता है। यदि शिक्षकों व प्रधानाध्यापक के मध्य परस्पर मधुर सम्बन्ध, सहयोग, मित्रता व सहृदयता की भावना होगी तब छात्रों पर भी इसका अनुकूलन प्रभाव पडेग़ा तथा उन छात्रों का व्यवहार भी उसी प्रकार का होगा।

शिक्षकों की कार्य-सन्तुष्टि विद्यालय व शिक्षा के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। कार्य-सन्तुष्टि वह स्थिति है जो कि शिक्षक को अपने कार्य सन्दर्भ मं प्राप्त होने वाले आनन्द के मूल्यों का अनुमान देती है। कार्य-सन्तुष्टि व्यक्ति के कार्य के समान विभिन्न पहलुओं जैसे-वेतन, पदोन्नति के अवसर, अधिकारियों एवं सहयोगियों के प्रति दृष्टिकोण आदि के कारण उत्पन्न मानसिक संवेगात्मक स्थिति है। किसी व्यवसाय में सन्तुष्टि एक अति आवश्यक तत्व है, क्योंकि एक व्यक्ति अपने व्यवसाय से जितना अधिक सन्तुष्ट होगा उतने ही प्रभावशाली रूप से अपने कार्य को पूरा करेगा। यही बात शिक्षक के व्यवसाय के सम्बन्ध में भी सत्य है कि यदि एक शिक्षक का अपने शिक्षण व्यवसाय में सन्तुष्टि की भावना दृष्टिगत होगी त बवह अपने कर्तव्यों का निर्वाह सही प्रकार से कर पायेगा।

इसके साथ ही शिक्षक का स्वयं प्राथमिक शिक्षा के प्रति किस प्रकार की अभिवृत्ति है यह तथ्य भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था का आधार है। प्राथमिक विद्यालयों में आधारभूत सुविधायें उपलब्ध कराने के लिये नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में आपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना तैयार की गई है। संविधान में 14 वर्ष तक की आयु के सभी बालकों के लिये नि:शुल्क तथा अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गई। सन् 1990 में सबके लिये शिक्षा विषय पर हुई विश्व सम्मेलन में सभी व्यक्तियों की मूलभूत अधिगम आवश्यकताओं को पूरा करने पर विशेष ध्यान दिया गया। इस प्राथमिक शिक्षा के विकास के लिये चलाये जा रहे इन प्रयासों तथा योजनाओं के प्रति शिक्षक की अभिवृत्ति किस प्रकार की है, यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

आदिकाल से विद्धानों का मत यही रहा है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का वास होता है, मानसिक क्रियायें सुचारू रूप से कार्य करती है, शरीर और मानसिक क्रियाओं में तालमेल बना रहता है। कठिन एवं विषम परिस्थितियों में स्वस्थ्य शरीर मानसिक क्रियाओं में समायोजन बनाये रखने में समर्थ होता है। कभी-कभी यह भी पाया जाता है कि दोनों (शरीर तथा मानसिक क्रियाएँ) में तालमेल ठीक से बना हुआ है, पर्याप्त सन्तुलन है, फिर भी व्यक्ति अपने को ऐसी स्थिति में पाता है कि वह उतना प्राप्त नहीं कर पा रहा है जितना उसे मिलना चाहिए था कभी-कभी वह यह भी सोचता है कि उसके जीवन में कहीं कोइ कमी है, कभी-कभी उसे यह अनुभूति होती है कि अब इतना सब करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जो है वह पर्याप्त है, अर्थात जीवन के छोटे से रास्ते को तय करने के लिए अब में वह नहीं करूंगा जो सभी कर रहे हैं। इस प्रकार व्यक्ति के सोचने और चिन्तन करने की प्रकृति बदल जाती है और वह यथार्थ से दूर होता चला जाता है तथा धीरे-धीरे मानसिक तनाव के जाल में स्वयं फंसता चला जाता है। उसे वह सब कुछ मिल जाने पर भी जो उसे उसकी क्षमताओं और योग्यताओं के अनुकूल मिलना चाहिए था, दु:खी रहने लगता है। उसे ऐसा लगता है, जैसे अब कहीं चैन नहीं मिलेगा। मन की यह स्थिति असन्तोष है।

आज की दौड़ में युवा-युवती शिक्षित समाज और विशेषकर मध्यमवर्ग, असन्तोष के नजले से पीड़ित हैं। साधन और पर्याप्त क्षमता न होते हुए भी वह दौड़ में आगे निकलने के लिए अपने मूल लक्ष्य को भूल जाता है। छोटे-छोटे समूह से लेकर बड़े-बड़े समाज में अग्रिम स्थान ग्रहण करने के लिए वह उतावला हो जाता है तथा चारों हाथ पैर फेंकता है कभी-कभी उसके स्वयं का ठीक मूल्यांकन हो जाता है और कभी उसे पीछे धकेल देने के लिए उसके साथी उसे एक ऐसे मार्ग की ओर उन्मुख कर देते हैं कि भटकने की स्थिति में आ जाता है। अब उसके असन्तोष की शृंखला और मजबूत हो जाती है यह स्थिति उसके पूर्ण असन्तोष की है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इसे 'आवेग की अवस्था' की संज्ञा दी जायेगी। इस अवस्था में वह जो कर रहा है वह उसकी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति कराने में सहायक तो हो सकता है, किन्तु चेतन और अचेतन में वह असन्तुष्ट ही रहता है।

तो अब प्रश्न यह उठता है कि आखिर सन्तोष क्या है? मनोवैज्ञानिक भाषा में सन्तोष एक ऐसी साधारण अनुभूति की अवस्था है जो व्यक्ति को अनुकूल उद्देश्य प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती हे। यह अनेक मनोवृत्तियों का परिणाम है, जिन्हें व्यक्ति अपने सम्पूर्ण जीवन के प्रति बनाये रखता है। इस प्रकार सन्तुष्टि वही है, जहाँ उद्देश्य है। बिना लक्ष्य के भाग-दौड करने वाला व्यक्ति सदैव असन्तुष्ट रहता हे उसकी प्यास नहीं बुझती है। वह कार्य बदलता है, स्थान बदलता है, साथी बदलता है लक्ष्य को प्राप्त करने के माध्यम बदलता है, साधन बदलता है और एक स्थिति वह आ जाती है कि

* शोधार्थी, मेवाड विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड़गढ (राज.) भारत
** एसोसिएट प्राध्यापक (शिक्षा) मेवाड विश्वविद्यालय,गंगरार, चित्तौड़गढ (राज.) भारत
*** प्राचार्य, मेवाड महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, चित्तौड़गढ(राज.) भारत

वह इस बदलने के प्रक्रम में स्वयं बदल जाता है। अब उसे अपने कार्य से सन्तोष नहीं मिलता। वह कार्य व्यवसाय, जिसे वह जीविकोपार्जन हेतु कर रहा है उसे ऐसा लगता है कि जिस कार्य को वह कर रहा है उसमें एकरसता है वह केवल पेट भरने के लिए है तथा उसमें जीवन तत्व की समाविष्टि नहीं है। आज के प्रगतिशील समाज ने व्यक्ति को बहुत कुछ दिया है। लेकिन इसके साथ-साथ उसने अनेक समस्याओं को जन्म दिया हे और उलझने बढ़ाई है। जिस व्यक्ति से मिले वह अपनी वर्तमान स्थिति और विशेषकर व्यवसाय से असन्तुष्ट दिखाई देता है। चाहे उसे उसकी क्षमताओं से अधिक मिल रहा हो, चाहे उसे कितनी ही सुविधाएँ प्रदान की जा रही हों, कार्य या स्थान अनेक हो सकते हैं, यदि पूछा जाये कि तुम इतना परिश्रम कर रहे हो, क्यों? तो वह उत्तर देता है- 'पेट भरने के लिए' जिसका परिश्रम केवल इतने मात्र के लिए होगा, जिसमें उद्देश्य का एक भी तत्व सम्मिलित न हो, वह निश्चय ही सन्तोष की एक-एक बूंद के लिए भटकेगा।

व्यावसायिक सन्तुष्टि का अर्थ विभिन्न अभिवृत्तियों के परिणाम से है, जिनका सम्बन्ध कर्मचारी के व्यवसाय से होता है। इसके साथ-साथ अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए जो अभिवृत्ति वह रखता है, वह व्यावसायिक सन्तुष्टि का परिणाम ही होता है। हालांकि इस सन्दर्भ में और अनेक कारक भी हो सकते हैं, किन्तु प्रमुखत: कर्मचारी की वह अभिवृत्ति ही है जो उसने अपने व्यवसाय के प्रति बनाई है।

जो कर्मचारी अपने कार्य से सन्तुष्ट हैं वे स्वस्थ मानसिक सन्तुलन रखते हैं। स्वस्थ मानसिक सन्तुलन कर्मचारी को कार्य करने के लिए प्रेरित करता है, उसके मनोबल को बनाये रखता है तथा उसकी उत्पादन क्षमता में किसी प्रकार का ह्रास नहीं आने देता है। अनेक अध्ययनों ने यह सिद्ध कर दिया है कि जो कर्मचारी अपने कार्य से असन्तुष्ट होते हैं, उनकी उत्पादन क्षमता गिरती चली जाती है। इसलिए कर्मचारी को कार्य असन्तोष से बचाए रखने के लिए आवश्यक है कि औसत स्तर के कर्मचारी को इस प्रकार कार्य(व्यावसाय) मिले कि वह केवल जीविकापार्जन का साधन मात्र ही न हो, बल्कि उसे अपने कार्य से उद्देश्य प्राप्त करने की प्रेरणा मिले तथा जीवन को सुखमय बनाने के सभी तत्व उसमें सम्मिलित हों। व्यावसायिक सन्तुष्टि की परिभाषा को सीमाबद्ध करना सुलभ नहीं है, जितना कि लगता है, क्योंकि इस शब्द से मिलते-जुलते और भी शब्द हैं, जैसे-कार्य-सन्तोष को अभिवृत्ति एवं मनोबल के अर्थ में भी प्रयुक्त किया जाता है। अध्ययन की दृष्टि से यही कह सकते हैं कि व्यावसायिक सन्तुष्टि कर्मचारी की एक प्रवृत्ति है, जो अनेक कारकों के साथ उसकी कार्य-क्षमता को प्रभावित करती है। चहे दर्शनशास्त्र की दृष्टि से देखिए या विज्ञान की दृष्टि से, तथ्य एक से ही प्राप्त होते हैं। किसी भी संस्कृति या सभ्यता का मूल्यांकन केवल उसके भौतिक पक्ष के अवलोकन मात्र से ही नहीं किया जा सकता और न ही यह सम्भव है कि केवल आध्यात्मिक पक्ष को आधार मान लिया जाये। कर्मचारी के सर्वांगीण विकास के लिए अधिक वेतन, अच्छा रहन-सहन आवश्यक कारण हो सकते हैं लेकिन उसका बौद्धिक विकास और संवेगात्मक अभिव्यक्ति के पर्यापत अवसर सबसे महत्वूपर्ण कारक है। बौद्धिक विकास समझने की क्षमता प्रदान करता है और संवेगात्मक अभिव्यक्ति जीवन से सम्बन्धित समस्याओं के साथ तालमेल करने में सहायक होती है। ये स्थितियाँ कर्मचारी को कार्य में रूचि रखने के लिए प्रेरित करती है और वह अपने व्यावसायिक क्षेत्र के सभी तत्वों से सन्तुष्ट रहता है।

अब भी बहुत से व्यक्ति पुरानी परम्पराओं में विश्वास रखते हैं। उनके विचार में कार्य के घंटे आर्थिक एवं सामाजिक सुविधाएँ, औद्योगिक वातावरण और अच्छी मशीनें कर्मचारी के व्यावसायिक सन्तुष्टि हेतु पर्याप्त हैं। इन्हीं कारणों से कार्य इतने विशिष्टगत हो गए हैं कि कर्मचारी को कार्य करते समय कोई प्रलोभन नहीं मिलता है। वह तो केवल उसे जीविका हेतु करता है। अधिकांश उद्योगपति तथा सरकारी संस्थाओं के संचालक कार्य-संतोष को कोई विशेष महत्व नहीं देते हैं, जिनके कारण कर्मचारी सम्बन्धी मूल समस्या का निराकरण नहीं हो पाता है।

व्यावसायिक सन्तुष्टि सम्बन्धी समस्त कारकों को तीन प्रधान वर्गों में बांटा जा सकता है

1. व्यक्तिगत कारक
2. कार्य-सम्बन्धी कारक
3. प्रबन्धकों से सम्बन्धित कारक

व्यक्तिगत कारक के अर्न्तगत लिंग, आयु, बुद्धि, आकांक्षा स्तर, शिक्षा, व्यक्तित्व, समायोजन, पारिवारिक उत्तरदायित्व को रखा जा सकता है। कार्य-सम्बन्धी कारक के अर्न्तगत कार्य की प्रकृति, कारखाने की रचना, भौगोलिक दशाएँ, व्यावसायिक प्रतिष्ठा को रखा जा सकता हे।

प्रबन्धकों से सम्बन्धित कारक के अर्न्तगत वेतन, पदोन्नति, सहकर्मी की प्रकृति, उत्तरदायित्व की भावना, सुरक्षा, अवकाश आदि को रखा जा सकता है।

समस्या कथन – 'माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की व्यावसायिक सन्तुष्टि का अध्ययन'

शोध उद्देश्य – प्रस्तुत शोध विषय के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं-

1. शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओंके व्यावसायिक सन्तुष्टि का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण माध्यमिक विद्यालय के शिक्षक-शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सन्तुष्टि का अध्ययन करना।
3. शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
3. शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अध्ययन विधि – प्रस्तुत अध्ययन में शोधार्थी द्वारा 'सर्वेक्षण विधि' का प्रयोग किया हैं।

प्रतिदर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श हेतु राजस्थान राज्य के डूंगरपुर जिले सेमाध्यमिक स्तर पर कार्यरत शहरी क्षेत्र के 15 सरकारी तथा ग्रामीण क्षेत्र के 15 सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों तथा शिक्षिकाओं को सम्मिलित किया गया है। इस हेतु सम्पूर्ण जनसंख्या में से स्तरीकृत याद्दच्छिक न्यादर्श विधि से 150-150 शिक्षक-शिक्षकाओं का चयन किया गया है।

उपकरण – प्रस्तुतशोध अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित उपकरण प्रयुक्त किया गया है।

- शिक्षक व्यावसायिक सन्तुष्टि मापनी -स्वनिर्मित

शोध की परिसीमन – प्रस्तुत शोध में निम्न प्रकार से शोध का परिसीमन किया गया है-

1. शोध को केवल राजस्थान राज्य के डूंगरपुर जिले तक ही सीमित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध केवल माध्यमिक विद्यालयों तक ही सीमित किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध में स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या

- शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका -1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 1 से स्पष्ट है कि शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी क्षेत्र के शिक्षक - शिक्षिकाओं के मध्यमान 157.50 एवं मानक विचलन 22.05 है तथा ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षक - शिक्षिकाओं के मध्यमान 147.50 एवं मानक विचलन 17.87 है। तालिका 1 से प्राप्त मध्यमानों में शहरी शिक्षक - शिक्षिकाओं का मध्यमान ग्रामीण शिक्षक - शिक्षिकाओं के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का डीएफ 298 पर टी-मान 4.77 है। जो 0.05 एवं .01 स्तर के प्राप्त मान 1.97 एवं 2.59 से अधिक है। अत: परिकल्पना 'शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक - शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शहरी एवं ग्रामीण शिक्षक - शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि मेंअन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षक - शिक्षिकाओं की अपेक्षा शहरी शिक्षकों के व्यावसायिक सन्तुष्टि अधिक हैं।

ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका -2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 2 से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण शिक्षक के मध्यमान 143.25 एवं मानक विचलन 20.05 है तथा शिक्षिकाओं का मध्यमान 139.82 एवं मानक विचलन 17.25 है। तालिका 2 से प्राप्त मध्यमानों में ग्रामीण शिक्षकों का मध्यमान ग्रामीण शिक्षिकाओं के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का डीएफ 148 पर टी-मान 2.41 है। जो 0.05स्तर के प्राप्त मान 1.98 से अधिक है। अत: परिकल्पना 'ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण शिक्षकों तथा शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सन्तुष्टि में अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों का व्यावसायिक सन्तुष्टिअधिक हैं।

शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तलिका- 3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 3 से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर कार्यरत शहरी शिक्षकों के मध्यमान 159.37 एवं मानक विचलन 22.31 है तथा शिक्षिकाओं का मध्यमान 154.85 एवं मानक विचलन 20.33 है। तालिका 3 से प्राप्त मध्यमानों में शहरी शिक्षकों का मध्यमान ग्रामीण शिक्षिकाओं के मध्यमान से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का डीएफ 148 पर टी-मान 2.76 है। जो 0.05 एवं .01 स्तर के प्राप्त मान 1.98 एवं 2.61 से अधिक है। अत: परिकल्पना 'शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शहरी शिक्षकों तथा शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सन्तुष्टि में अन्तर पाया जाता है। शहरी शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों का व्यावसायिक सन्तुष्टि अधिक हैं।

निष्कर्ष :

1. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के पश्चात् परिकल्पना डूंगरपुर जिले के शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक - शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।अस्वीकृत की जाती है क्योंकि शहरी शिक्षक-शिक्षिकाओं एवं ग्रामीण शिक्षक - शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टिके मध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण शिक्षक- शिक्षिकाओंएवं शहरी शिक्षक - शिक्षिकाओं केव्यावसायिक सन्तुष्टिमें अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षकों के व्यावसायिक सन्तुष्टि अधिक हैं।
2. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के पश्चात् परिकल्पना डूंगरपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकतथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अस्वीकृत की जाती है क्योंकि ग्रामीण शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि के मध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि में अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों के व्यावसायिक सन्तुष्टि अधिक हैं।
3. शोध अध्ययन के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के पश्चात् परिकल्पना डूंगरपुर जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।अस्वीकृत की जाती है क्योंकि शहरी शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि के मध्यमानों की गणना द्वारा प्राप्त टी का मान विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक तालिका मान से अधिक है। अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शहरी शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि में अन्तर पाया जाता है। शहरी शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षकों के व्यावसायिक सन्तुष्टि अधिक हैं।

सुझाव - प्रस्तुत शोधकार्य में माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी विद्यालयों में कार्यारत शिक्षक एवं शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सन्तुष्टिका अध्ययन किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी विद्यालयों में कार्यारत शिक्षक तथ शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सन्तुष्टि में अंतर पाया गया है। शहरी क्षेत्र के शिक्षकों की व्यावसायिक सन्तुष्टि अधिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अलध्यायज, अब्दुल अजीज, डी.एम. (1966) ए स्टडी ऑफ द इमपेक्ट आफ सुपरवाइजरी स्टाइल ऑन टीचर्स जॉब-सैटिसफेक्सन इन द सेकेन्डरी स्कूल इन : कुवैत, इडी, वेस्टर्न मिसीगत, यूनिवर्सिटी, डिसरटेशन, एब्सट्रेक्ट्स इंटरनेशनल 48(1) 1987, 2ए।

2. अग्रवाल एस.एस. (1966) द स्टडी ऑफ आट्टिटयूड ऑफ ट्रेनिंग कॉलेज टीचर्स ऑफ आगरा यूनिवर्सिटी टुअवर्डस देअर प्रोफेशन, एम.एड डिसरटेशन, देल्ही यूनिवर्सिटी।
3. अवलरेज, क्रूज, लीन्डा हेलन (1990) सुपरविजय ऑफ द मिडिल टीचर: जॉ-सैटिसफेक्शन एण्ड मोटिवेशन, इडी.डी. फारधाम यूनिवर्सिटी डिसरटेशन एब्सट्रेक्ट्स इंटरनेशनल, 51(11), 1991, 3565-66ए.
4. आनन्द, एस.पी, (1977) स्कूल टीचर्स, जॉब-सैटिसफैक्शन बी एक्सट्रर्वजन एण्ड न्यूरोटिसीजन, इंडियन एजूकेशनल रिव्यू, 12(2), 68-78.
5. Kothari, R.C. (2005) Research Methodology, New Delhi, New Age International.
6. Koul, Lokesh : Methodology of Educational Research, New Delhi, Vikas Publishing House Pvt. Ltd.
7. Rao. D, Bhashkar and Damera, Sridhar (2005) Job-Satisfaction of School Teachers

तालिका -1 : शहरी क्षेत्र एवं ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं के व्यावसायिक सन्तुष्टि से सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-मूल्य

क्षेत्र	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता अंश	टी-मूल्य	सार्थकता
शहरी	150	157.50	22.05	298	4.77	सार्थक**
ग्रामीण	150	147.50	17.87			

**.01 स्तर पर सार्थक

तालिका -2 : ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि से सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-मूल्य

ग्रामीण क्षेत्र	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता अंश	टी-मूल्य	सार्थकता
शिक्षक	75	143.25	20.05	148	2.41	सार्थक*
शिक्षिकाएँ	75	139.82	17.25			

*.05स्तर पर सार्थक

तलिका- 3 : शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में व्यावसायिक सन्तुष्टि से सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-मूल्य

शहरी क्षेत्र	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता अंश	टी-मूल्य	सार्थकता
शिक्षक	75	159.37	22.31	148	2.76	सार्थक**
शिक्षिकाएं	75	154.85	20.33			

**.01 स्तर पर सार्थक

****

इस्लाम धर्म के उपासना के तरीके और उनका समाज में योगदान

बेनज़ीर पटेल *

प्रस्तावना – इस्लाम एक एकेश्वरवाद ही धर्म है। जो इसके अनुयायियों के अनुसार अल्लाह के अंतिम रसूल और नबी मोहम्मद द्धारा मनुष्य तक पहुंचाई गई अंतिम ईश्वरीय पुस्तक कुरान की शिक्षा पर आधारित है। कुरान अरबी भाषा में रची गई और इसी भाषा में विश्व की कुल जनसंख्या के 25 प्रतिशत हिस्से यानी लगभग 1.6 से 1 दशमलव 18 अरब लोगों द्धारा पढ़ी जाती है। हजरत मोहम्मद साहब के मुंह से कथित होकर लिखी जाने वाली पुस्तक और पुस्तक का पालन करने के निर्देश प्रदान करने वाली शरीयत ही दो ऐसे संसाधन है। जो इस्लाम की जानकारी स्त्रोत को सही करार दिए गए जाते हैं। ईश्वर की ओर से संसार में जितने धर्म नेता और धर्म शिक्षक आए उन सब का एक मात्र आदेश यही था कि ईश्वर को मानों उसी को पूजा और उसी की आज्ञा पर चलो कुरान में ख़ुदा कहता है।

'वामा अरसलनाका रसूल इला नहीं इलाही अन्नू ला इलाहा इलल्लाह आना'

अर्थात हमने जितने भी रसूल भेजें उनकों यही आदेश दिया कि मेरे सिवाय कोई पूछ नहीं शो मेरी ही पूरा बंदगी करो और मेरी आज्ञा पर चलो।

1. ईश्वर की एकता – मुसलमान एक ही ईश्वर को मानते है। जिसे भी अल्लाह कहते हैं। मुसलमानों के अनुसार ईश्वर अद्धितीय है। उसके जैसा और कोई नहीं ईश्वर एक और अनुपम सनातन सदा से सदा तक जीने वाला है। ना उसे किसी ने जाना और ना नही वह किसी का जनक है एवं उस जैसा कोई और नहीं है (कुरान, सूरत, 112, आयत 1 से 4)

विश्वास ईश्वर की सत्ता ओर उसके एक तत्व तथा हजरत मोहम्मद (सल्लल्लाहू अलेही वसल्लम) के ईश्वर के दूर होने का विश्वास।

2. नमाज़ – नमाज फारसी शब्द है। जो उर्दू में अरबी शब्द 'सलाद' का पर्याय है। कुरान में सलाद शब्द बार – बार आया है। और प्रत्येक मुसलमान स्त्री और पुरूष को नमाज पढ़ने का आदेश ताकत के साथ दिया गया है। यह मुसलमानों का बहुत बड़ा कर्तव्य है। और इसे नियम पूर्वक पढ़ना पुण्य तथा त्याग देना पाप है। प्रत्येक मुसलमान के लिए प्रतिदिन 5 समय की नामज़ पढ़ने का विधान है।

1. नमाज फजर (उषाकाल की नमाज)
2. नमाज जोहर (अवनति काल की नमाज) यह दूसरी नमाज है जो मध्यान सूर्य के धरना शुरू करने के बाद पढ़ी जाती है।
3. नामजे असर (दिसावर की नमाज) नमाज है जो सूर्य से अस्त होने के कुछ पहले होती है।
4. नमाज मगरिब (साई काल की नमाज़) चौथी नमाज है जो सूर्यास्त के तुरंत बाद होती है।
5. नमाज ए ईशा (रात्रि की नमाज अंतिम पास जो सूर्यास्त के डेढ़ घंटे बाद पढ़ी जाती है।)

यह नामाजी तो अनिवार्य है। जो फर्ज कल आती हैं। इसके अलावा नस्ल की नमाज पढ़ना अपनी इच्छा पर है। इसके अलावा तहज्जूद की नमाज़ जिसका समय 24:00 से लेकर प्रात: पोपट फटने से पूर्व तक है। यह भी इच्छा पर है। यह सब ईश्वर प्रसन्नता की प्राप्ति के लिए पढ़ी जाती है। इबादत और भक्ति उपासना के संबंध में इस्लाम का इस्लाम की मतानुसार ईश्वर की पूजा और भक्ति का प्रश्न मनुष्य के कुछ समय और कुछ कार्य का प्रश्न नहीं है। उसके समस्त समय और संपूर्ण जीवन का प्रश्न है इस्लाम के अनुसार एक मुसलमान का जीवन ईश्वर की इबादत और भक्ति ही के अधीन है।

इस्लामी जीवन के 5 वर्ष इस्लाम धर्म के उपासना के तरीके वैसे तो मानव जीवन के अनेक धागे व्यक्तिगत जीवन, पारिवारिक जीवन, सामाजिक जीवन आदि इस्लाम के अनुसार जीवन के यह सभी भाग धर्म के अंतर्गत है।

इस्लाम ने इस सब भागों के संबंध में आदेश और नियम दिए हैं परंतु इस्लाम ने संपुर्ण मानव जीवन के समस्त भागों को दो भागों में विभक्त कर दिया है।

1. ईश्वर संबंधी कर्तव्य
2. प्राणी संबंधी कर्तव्य

ईश्वर संबंधी जो भी पूजा, उपासना स्तुति कम आराधना कामा चिंतन करते हैं यह सब जीवन के पहले भाग में आते हैं। और इसे अतिरिक्त हमारे जितने भी कार्य है वह दूसरे भाग में आते हैं।

इस्लाम में इस संपूर्ण मानव जीवन के लिए पांच आधारभूत कर्मों का अनुष्ठान है। जो इस्लामी जीवन के स्तंभ कल आते हैं।

इस्लाम में इस संपूर्ण मानव जीवन के लिए पांच आधारभूत कर्मों का अनुष्ठान है। जो इस्लामी जीवन के स्तंभ कल आते हैं।

1. विश्वास
2. नमाज
3. जकात
4. रोजा
5. हज

जकात (दान) – जकात समाज के दिन हीन तथा कष्ट ग्रस्त व्यक्तियों के सहायता अर्थ अनिवार्य धर्मदान है। यह दान प्रत्येक धनवान व्यक्ति को ढाई रूपए प्रतिशत वार्षिक की दर से देना पड़ता है। यदि इस्लामी शासन हो तो शासन द्धारा जकात वसूल की जाती है। जोकि समाज की भलाई के लिए उपयोग में ली जाती है कुरान में स्थान पर नमाज के साथ ही जकात देने का भी आग्रह है और नमाज ना पढ़ने के समान जकात ना देने को भी सलाम

*शोधार्थी (इतिहास) स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

विरूद्ध का गया है कुरान की एक आयत है। जो लोग सोना चांदी संचित करते है और उसकों ईश्वर के मार्ग में वे नहीं करते उनको उस दिन के लिए कष्टदायक दंड का समाचार सुना दो जिस दिन वह धन नरक की आग में अच्छी तरह तपाया जाएगा। फिर उससे उनके माथे उनकी बगले और उनकी पीठ दागी जाएगी। (और कहा जाएगा) कि यह वही है जो तुमने अपने लिए संचित किया था। शो जो तुम संचित करते थे। अब उसका फर रखो (सूर्य तौबा आयत 33) जकात के संबंध की दूसरी मुख्य बात यह है। कि जकात के द्धारा इस्लाम ने ऐसी व्यवस्था की है। कि समाज का कोई व्यक्ति इतना धन ही ना हो जाए कि वह जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति ना कर सके। इस्लाम ने धन ही नो और कष्ट ग्रस्त व्यक्तियों की सहायता अर्थदान को कितना महत्व दिया है। और किस प्रकार जन सेवा और सहायता को दोनों का मुख्य अंग बना दिया है। जो पूरे समाज के गरीब और अमीर व्यक्ति को एक सूत्र में बांध कर रख देते हैं।

रोजा – प्रति वर्ष पूरे पूरे रमजान का रोजा अर्थात व्रत इस रोजे व्रत प्रात:काल पो फटने के पूर्व से लेकर से लेकर सूर्यास्त खानपान तथा पत्नी सेवा सब कुछ वर्जित है। साथ ही सचेत कर दिया है कि व्रत रखकर जो मनुष्य हाथ से कोई वर्जित कार्य करेगा, जबान से कोई वजूद बात बोलेगा, कान से कोई वर्जित बात सुनने, तथा आपसे कोई वजूद वस्तु देखने की चेष्टा करेगा लड़ेगा झगड़ेग तो उसका रोजा या व्रत टूट जाएगा। कुरान में रोजे का उद्देश्य बातते हुए कहा है। यह मुसलमानों तुम पर रोजे फर्ज है। अनिवार्य है। जिस प्रकार तुमसे पहले के लोगों पर सर्च किए गए थे ताकि तुम सदाचारी बनो। सूरह बकर आयत 183 रोजे का उद्देश्य कि मनुष्य स्वयं में तथा सदाचारी बनें अगर कोई ऐसा कार्य न करें जो संयम और सदाचार के विरूद्ध हो जो उदद्देश्य नमाज और जकात का है वही रोजे का भी है। एक शासक और अमीर व्यक्ति रोजा रखकर ही अनुभव कर सकता है। कि भूख की पीड़ा कैसी होती है। रोजे की अवस्था में ही पूंजीपति और धनवान निर्धनों के कष्टों को समझ सकते हैं। और दान पुण्य से उनकी सहायता की ओर प्रवृत्त हो सकते हैं।

हज – हज मक्का तीर्थ यात्रा जीवन में हर उस व्यक्ति पर एक बात सच है। अनिवार्य है। जो मक्का यात्रा का खर्च उठा सकता है। नमाज औकात और रोजे की तरह भी हज का उद्देश्य मानव जीवन को भक्ति में बनाना है। इस्लाम का पांचवा तथा अंतिम स्तंभ है। इसलिए इसका महत्व और भी प्रभाव भी सबसे अधिक है। नमाज रकात और रोजे का प्रभाव व्यक्ति समाज अधिक से अधिक नगर तथा देश पर पड़ता है। पंरतु हज का असर सारे संसार पर पड़ता है। नियमित समय पर होता है। और अधिक या कम सभी देशों के मुसलमानों हज करने जाते हैं। आज हो जाए तो जिल हिज्जा मास में जो इस्लामी वर्ष का बार बार मासे परंतु हज की यात्रा 800 माह बाद ही से आरंभ हो जाता है। कितने हाजियों की इच्छा होती है। कि रमजान मक्का में ही व्यतीत करें और वापसी का सिलसिला रबी उल अव्वल मास तक जारी रहता है। चाहे वह सामान्य व्यक्ति हो चाहे अरबपति किसी देश का शासक वस्त्र केवल एक तरह बंद होता है। और एक चादर होती है खुला रहता है। वह एक त्यागी सन्यासी और अपने प्रभु का बन जाता है। उदाहरण करता है। आराधना कहते हैं। वह कहता है। अल्लाह में उपस्थित हूं तेरा कोई सजा नहीं एक तू ही स्वामी तथा उपस्थित हूं तेरे लिए ही है। और ही है आशिकी तू ही है। आशिकी का शासन भी तेरा ही है। तेरा कोई समझा नहीं बालक लब्बेक लब्बेक इन नल लक लक लक लक।

उपसंहार – एकता समानता की भावना बनी रहती है। इस्लाम में छोटा बड़ा कुछ नहीं सभी समाज के व्यक्ति समाज ने सभी के लिए समानता है भेदभाव का कोई प्रभाव है नववर्ष और जाति का रंग का वेशभूषा का भाषा का और सभ्यता का यह सत्य साकार रूप से समान है। कि सारे संसार का एक ही सृष्टि करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. इस्लाम एक परिचय – लेखक अनुमुहम्मद इमामुद्दीन रामनगरी प्रकाशक मधुर संगम
2. Bhart discover.org/india/
3. ब्रिटेनिया विश्वकोष
4. विकिपीडिया
5. उन्नमत नबी ummat-e-nabi.com/zakaat-kya-our-kisho-de
6. मुस्लिम महिलाएँ और सामाजिक परिवर्तन (लेखक – अय्यूब मोहम्मद) राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली
7. भारतीय मुसलमान : दशा और दिशा (संपादक –यादव सिंह डॉ. वीरेन्द्र) राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली

****

व्यापार पर जीएसटी का प्रभाव

डॉ. राकेश कुमार *

प्रस्तावना – वर्षो की गहन चर्चा, के बाद सबसे महत्वपूर्ण कर सुधार वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) 1 जुलाई, 2017 से देश में लागू हुआ है। यह सफर वर्ष 2000 में अटल बिहारी बाजपेयी, सरकार के दौर में शुरू हुआ था, जब सरकार ने जीएसटी मॉडल का सुझाव देने के लिये एक समिति गठित करने की बात की थी। इसके बाद 2003 में विजय केलकर की अध्यक्षता में एक कार्याबल का गठन किया गया था।

जीएसटी के कार्यान्वयन के साथ भारत, जर्मनी, इटली, ब्रिटैन, दक्षिण कोरिया, जापान, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, रूस, चीन, सिंगापुर और मलेशिया सहित 160 से अधिक देशों की समूह में शामिल हो गया है, जिन्होंने एजीएसटी/वैट व्यवस्था को लागू किया। 1954 में जीएसटी व्यवस्था को लागू करने वाला पहला देश फ्रांस था, जिसने कर चोरी को रोकने के लिए ऐसा किया था। जीएसटी वह पहला कदम है जिससे भारत में व्यापार करना आसान होने वाला है। ईज इन डूइंग बिजनेस की रैंकिंग में अपनी स्थिति सुधारने की दिशा में यह बड़ा कदम है। वर्तमान में, भारत विश्व बैंक, की व्यवसाय रिपोर्ट 2017 में 190 देशों में 130 वें स्थान पर है।

क्या है जीएसटी – जीएसटी निर्माता और उपभोक्ता से वस्तु और सेवाओं की आपूर्ति पर एक गंतव्य आधारित एकल कर व्यवस्था है, जिसने केन्द्रीय और राज्य सरकारों द्वारा लगाए गये कई अप्रत्यक्ष करों का स्थान लिया है। इससे देश को एक एकीकृत बाजार में परिवर्तित किया जा सकता है। अन्य लाभों के अतिरिक्त जीएसटी से व्यवसाय करने की स्थितियों में सुधार होने की अपेक्षा है क्योंकि इससे कर अनुपालन बढेगा, कर के ऊपर कर की व्यवस्था खत्म होगी, कर प्रशासन में सुधार होगा, कर चोरी कम होगी, अर्थव्यवस्था का संगठित क्षेत्र व्यापक बनेगा और सरकारी खजाने में अधिक राजस्व जमा होगा।

जीएसटी में 17 अप्रत्यक्ष कर (8 केंद्रीय, 9 राज्य स्तरीय) और 23 केंद्रीय और राज्यीय उपकर समाहित हैं, जब कई रिटर्न भरने की जरूरत खत्म हो गयी है और उत्पादक से उपभोक्ताओं तक की आपूर्ति श्रृंखला के साथ वस्तुओं और सेवओं के करों को तर्कसंगत बनाया गया है। जीएसटी में केंद्रीय जीएसटी (सीजीएसटी) और राज्य जीएसटी (एजीएसटी) शामिल है जो इससे पहले से केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा चुंगी के रूप में वसूली की जाती थी। जीएसटी(सीजएसटी/एसजीएसटी) को मूल्य संवर्धन के प्रत्येक चरण में लगाया जाता है और आपूर्तिकर्ता कर क्रेडिट तंत्र के माध्यम से मूल्य श्रृंखला के पिछले चरणों में इनपुट पर वसूली की कमी पूरी कर लेता है। आपूर्ति श्रृंखला का अंतिम डीलर उपभोक्ता से जीएसटी वसूलता है। जिससे यह गंतव्य–आधारित उपभोग कर बन जाता है। मूल्य श्रृंखला के प्रत्येक चरण में इनपुट क्रेडिट लेने का प्रावधान जीएसटी के तहत कैस्केडिंग प्रभाव (कर के ऊपर कर) से बचने में मदद करता है, जिससे यह उम्मीद लगायी जा रही है कि वस्तुओं की कीमते कम होंगी और उपभोक्ताओं को लाभ मिलेगा। पहले की कर व्यवस्था में कर के ऊपर कर एक बड़ी समस्या थी। इससे उत्पादन की लागत बढ़ती थी। उदाहरण के लिए एक मैन्युफैक्चरर 100 रूप्ये की शर्ट पर 12 रूपये का केंद्रीय उत्पाद शुल्क चुकाता है। अगले स्तर पर राज्य सरकार 15 प्रतिशत का वैट 100 रूपये पर नहीं, 112 रूप्ये पर चार्ज करती है। इससे कर के ऊपर लग जाता है ।

जीएसटी 5, 12, 18 और 28 प्रतिशत की चार स्तरीय कर संरचना है, जिसमें आवश्यक वस्तुओं के लिए कम दरें और लक्जरी और डी–मैरीट सामान के लिए उच्चतम दरें हैं। वस्तुओं या सेवाों के निर्यात पर कर दर शून्य है और उन पर कोई जीएसटी नहीं लगाया जायेगी। जीएसटी के तहत लगभग 60 प्रतिशत वस्तुओं पर या तो 18 प्रतिशत या 28 प्रतिशत की दर से कर वसूला जाएगा और करीब 20 प्रतिशत पर 28 प्रतिशत कर वसूला जाएगा। छूट वाली वस्तुओं या सालाना 20 लाख रूपये से कम कारोबार करने वालों, जो अंतराज्यीय व्यापार नहीं करते, को जीएसटी के लिए रिटर्न दाखिल करने से छूट दी गयी हे।

व्यापार पर जीएसटी का प्रभाव – अप्रत्यक्ष कर के अनुपालन से संबंधित समस्याओं, जो भारत में कारोबार करने को मुश्किल बनाते हैं, को उजागर करते हुए सीआईआई–केपीएमजी (2014) के एक अध्न में पाया गया कि कंपनियों को कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जैसे वैट, उत्पाद शुल्क, सीमा शुल्क और सेवा कर, वस्तुओं की आवाजाही से जुड़ी समस्याएं, कर अधिकारियों से निपटना; कर विवादों का निवारण, कर छूट प्राप्त करना और समय पर कर रिफंड प्राप्त करना पिछली व्यवस्था में राज्य विभिन्न कर दरों को लागू कर रहे थे, जिसके परिणामस्वरूप उच्च कर दरों के साथ राज्यों में व्यापार करना नुकसानदेह साबित हो रहा था। राज्य की सीमाओं में वस्तुओं के स्थानांतरण से दोनों राज्यों में करों का भुगतान किया जा रहा था। इसके अलावा अनुपालन लागत भी एक बोझ थी। राज्यों के बीच समान कर व्यवस्था न होने से व्यापारिक फैसलों में अनिश्चितता और भ्रम कायम था। वस्तुओं और सेवाओं पर वसूले जाने वाले करों में मूल्य श्रृंखला के पिछले चरणों में चुकाये गये करों पर छूट के लिए कोई स्पष्ट तंत्र नहीं था जिससे कर के ऊपर कर की समस्या आ खड़ी होती थी।

जीएसटी के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए कर अनुपालन को सरल बनाया गया है। साथ ही वस्तुओं की अंतरराज्यीय आवाजाही की दिक्कतों को दूर किया गया है और कर के बोझ को कम किया गया है। इसके अतिरिक्त कर रिफंडों को समय पर भर कर इन सभी समस्यओं का हल हो सकता है।

अनुपालन में सरलता – पिछली कर व्यवस्था में, व्यापारियों की कई करों

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) रामसहाय राजकीय महाविद्यालय, बैरी शिवराजपुर, कानपुर नगर (उ.प्र.) भारत

के लिए रिटर्न दाखिल करने पड़ते थे, अनेक अधिकारियों से जूझना पड़ता था और विभिन्न अप्रत्यक्ष करों के मूल्यांकन के लिए लंबे नौकरशाही विलंब का सामना करना पड़ता था। जीएसटी ने सभी अप्रत्यक्ष करों को एकल कर में तब्दील करके, कर अनुपालन को आसान बनाया है। जीएसटी नेटवर्क (जीएसटीएन) के आईअी प्लेटफार्म का उपयोग करते हुए जो केंद्र और राज्यों के बीच साझा आईटी बुनियादी ढांचा है, करदाता कर अधीकिरियों से संपर्क किये बिना कहीं से भी ऑनलाइन पंजीकरण कर सकते हैं, रिटर्न फाइल कर सकते हैं, भुगतान कर सकते हैं और रिफंड का दावा कर सकते है। यह जीएसटी के सहज कामकाज का भरोसेमंद और प्रभावी आधार है। इससे कर अनुपालन की प्रक्रिया आसान, पारदर्शी, तेज और कागज रहित होती है और उत्पादकता बढ़ाने एवं व्यवसाय की दक्षता के लिए मंच तैयार होता है।

अंतर्राज्यीय आवागमन में आसानी – विभिन्न राज्यों में चेक पोस्टों पर करों का भुगतान करने में परिवहन वाहनों को विलंब हो जाता था। जीएसटी प्रवेश कर और चुंगी सहित अनेक अप्रत्यक्ष करों को हटाकर इस समस्या को दूर करता है। इससे व्यापारियों की रसद की लागत (समय और धन दोनों) और उपभोक्ताओं के लिए कीमते कम होने की उम्मीद है। जीएसटी के लागू होने के बाद सभी राज्यों की सीमाओं से चेक पोस्ट खत्म कर दिये गये हैं

सभी के लिए एकल इंटरफ़ेस – जीएसटीएन कर अधिकरियों को करदाताओं का इंटरफेस और विवादों से निपटने के लिए एक मंच प्रदान करता है आपूर्तिकर्ताओं, खरीददार और कर अधिकारियों को सभी प्रासंगिक जानकारियां प्राप्त होन से चालान को जोड़ना और मिलान करना आसान होगा। इसके अलावा, आगम कर क्रेडिट के लिए सभी चालों को क्रेडिट का लाभ उठझने के लिए मिलान करने की आवश्यकता होती है, जो स्वत: खरीदारों को इस बात का जिम्मा देता है कि वे सुनिश्चित करें कि आपूर्तिकर्ता रिटर्न फाइल करें और समय पर करों का भुगतान करें।

कर के बोझ में कमी –पिछले व्यवस्था के विपरीत, जीएसटी मूल्य श्रृंखला के पिछले चरणों में कच्चे वस्तु और इनपुट पर लगाये जाने वाले करों पर क्रेडिट का लाभ प्रदान करती है, जो कैस्केडिंग प्रभाव (कर के ऊपर कर) को कम करता है। चूंकि मैन्युफैक्चरर अब निर्माण प्रक्रिया के एक निश्चित चरण में जोड़े गये मूल्य पर कर का भुगतान करता है, बजाय उत्पादों की कुल लागत पर, तो कर का बोझ स्वत: कम होने की संभावना बनती है।

निर्यात में वृद्धि –पिछली कर व्यवस्था में, हमने दोहरे, कराधन के कारण करों का एक हिस्सा निर्यात किया था, जिसमें कर अनुपालन से संबंधित उच्च लेन–देन लागत के कारण विश्व बाजार में भारत की प्रतिस्पर्धा प्रभावित होती थी। कर के ऊपर कर के कम होने और कर अनुपालन के बोझ को कम करने में भारत में निर्यात को बढ़ावा मिलेगा जैसा कि न्यूजीलैंड और ऑस्ट्रेलिया सहित कई देशों की अर्थव्यवस्थाओं में हुआ है।

स्थायी रूप रेखा –जीएसटी कारोबार करने को सुविधाजनक बनाने, उत्पादकों और उपभोक्तओं पर कर के दबाव को कम करने और सरकार के कर संग्रह को बढ़ाने का वादा करता है। यह सुधार व्यापक रूप से अर्थव्यवस्था के तीन प्रमुख भागीदारों के जीवन को प्रभावित करता है। ये तीन भागीदार हैं– उपभोक्ता, उत्पादक और सरकार। इसमें सभी राज्य सरकारें और केंद्र शासित प्रदेश संलग्न हैं,

निष्कर्ष –कारोबार को सहज बनाने में जीएसटी के सकारात्मक प्रभाव पर कोई संशय नहीं है व्यापार के प्रत्यक्ष लाभों में अनुपालन लागत को कम करना, कर बोझ का कम होना और राज्यों के बीच वस्तुओं की सहज आवाजाही इत्यादि शामिल हैं। ऐसे व्यापार सुधारों को लागू करने के बाद अब जीएसटी को अगले चरण में ले जाने के प्रयास किए जाने चाहिए। हमें अब यह सुनिश्चित करने के प्रयास करने चाहिए कि जीएसटी सच्चे अर्थो में यएक राष्ट एक कर के आधार पर काम करे और कई दरों की मौजूदा स्थिति और कई परिहार्य छूटों से दूर करें। जीएसटी के तंत्र को व्यापक बनाकर और असंगठित क्षेत्र को इस मंच में भागीदारी बनाकर दूसर महत्पूर्ण लक्ष्य बनाया जाना चाहिए।

इसके अतिरिक्त सिंगापुर और मलेशिया, जहां जीएसटी की क्रमश: 7 और 6 प्रतिशत की एकल दर है, भारत को भी जल्द एकल कर दर की ओर बढ़ना चाहिए जो बहुत कम है और वहां न्यूनतम छूट संभव है। यह भी महत्वपूर्ण है कि इस मॉडल में उन व्यापारियों को, जो कई राज्यों में कारोबार करते हैं, राज्यों में अलग–अलग पंजीकरण और कर फाइलिंग न करनी पड़े। भारत में व्यापार करने में सहजता की दिशा में ऐसे उपाय भी जरूरी हैं और इससे देश की प्रतिस्पर्धात्मकता में अधिक वृद्धि होगी। सरकार के मेक इन इंडिया अभियान की सफलता के लिए भी यह उल्लेखनीय है। जीएसटी के कार्यान्वयन के लंबे सफर में हमें यह प्रयास त्वरित गति से करने चाहिए ताकि भारत विश्व की सर्वश्रेष्ठ अर्थव्यवस्थओं के समानांतर पहुंच सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. https/thewire.in/152820/ned-shot-medium-long-term-fallout-indias-gst/
2. सीआईआई–केएमपीजी (2014): ईज ऑफ ड्राइंग बिजनेस इन इंडिया, सीआईआई–केएमपीजी रिपोर्ट, नई दिल्ली, मई 2014

****

Process And Importance Of E-Learning And E-Resources

Dr. Rakesh Kumar Sharma *

Introduction - In the century of technology, studentship can become an easier period of life. Even if professors assign more and more tasks, students now have the possibility of completing those faster by using the right resources as well powerful online tools and applications. The rapid changes and increased complexity of today's world present new challenges and put new demands on our education system. There has been generally a growing awareness of the necessity to change and improve the preparation of students for productive functioning in the continually changing and highly demanding environment. In confronting this challenge it is necessary to consider the complexity of the education system itself and the multitude of problems that must be addressed. Clearly, no simple, single uniform approach can be applied with the expectation that significant improvements of the system will occur. The Internet and the Web are constantly influencing the development of new modes of scholarly communication; their potential for delivering goods is quite vast, as they overcome successfully the geographical limitations associated with the print media. Further, the distribution time between product publication and its delivery has been drastically reduced.

The Internet can be used for efficient retrieval and meeting information needs. This important fact is convincing many libraries to move towards digital e-resources, which are found to be less expensive and more useful for easy access. This is especially helpful to distant learners who have limited time to access the libraries from outside by dial-up access to commonly available electronic resources, mainly CD-ROM, OPACs and Internet, which are replacing the print media. Over the last several years, a significant transformation has been noticed in collection development policies and practices. Print medium is increasingly giving way to the electronic form of materials (Narayana and Goudar, 2005). Developments in computing and telecommunications technology are changing India's educational landscape and its workforce. The growth in e-learning, in which education is delivered and supported through computer networks such as the internet, has posed new challenges for library services. E-learners and traditional learners now have access to a universe of digital information through the information superhighway. New information and communications technologies, as well as new educational models, require librarians to re-evaluate the way they develop, manage and deliver resources and services. The application of new digital technologies to education, management, manufacturing, distribution, and services has produced significant and lasting increases in productivity. The new technologies have also created new industries (e.g., Internet access providers) and entirely new kinds of work (e.g., website designers) and boosted other industries. But the new technologies have also shrunk or even eliminated other industries and the jobs associated with them (e.g., electric type writers).

E-Learning - E-learning can be defined as a learning process created by interaction with digitally delivered content, network-based services and tutoring support E - learning is any technologically mediated learning using computers whether from a distance or in face to face classroom setting (computer assisted learning), it is a shift from traditional education or training to ICT-based personalized, flexible, individual, self-organized, collaborative learning based on a community of learners, teachers, facilitators, experts. E-learning technologies offer educators a new paradigm based on adult learning theory, which states that adults learn by relating new learning to past experiences, by linking learning to specific needs, and by practically applying learning, resulting in more effective and efficient learning experiences. E-learning is the use of Internet technologies to enhance knowledge and performance. E-learning technologies offer learners control over content, learning sequence, pace of learning, time, and often media, allowing them to tailor their experiences to meet their personal learning objectives. To manage access to e-learning materials, consensus on technical standardization and methods for peer review of these resources. E-learning presents numerous research opportunities for faculty, along with continuing challenges for documenting scholarship. Innovations in e-learning technologies point toward a revolution in education, allowing learning to be individualized (adaptive learning), enhancing learners' interactions with others (collaborative learning), and transforming the role of the teacher.

The integration of e-learning into education can catalyze the shift toward applying adult learning theory,

*Associate Professor, C.S.S.S. P.G. College, Machhra, Meerut (U.P.) INDIA

where educators will no longer serve mainly as the distributors of content, but will become more involved as facilitators of learning and assessors of competency. E-learning refers to the use of Internet technologies to deliver a broad array of solutions that enhance knowledge and performance. E-learning can be used by medical educators to improve the efficiency and effectiveness of educational interventions in the face of the social, scientific, and pedagogical challenges noted above. It has gained popularity in the past decade; however, its use is highly variable among medical schools and appears to be more common in basic science courses than in clinical clerkships. E-learning is also called Web-based learning, online learning, distributed learning, computer-assisted instruction, or Internet-based learning. Historically, there have been two common e-learning modes: distance learning and computer assisted instruction. Distance learning uses information technologies to deliver instruction to learners who are at remote locations from a central site. Computer assisted instruction (also called computer-based learning and computer based training) uses computers to aid in the delivery of stand-alone multimedia packages for learning and teaching.

Multimedia Learning - Multimedia uses two or more media, such as text, graphics, animation, audio, or video, to produce engaging content that learners access via computer. Blended learning, a fairly new term in education but a concept familiar to most educators, is an approach that combines e-learning technology with traditional instructor-led training, where, for example, a lecture or demonstration is supplemented by an online tutorial. Faculty, administrators, and learners find that multimedia e-learning enhances both teaching and learning. These advantages can be categorized as targeting either learning delivery or learning enhancement. Learning delivery is the most often cited advantage of e-learning and includes increased accessibility to information, ease in updating content, personalized instruction, ease of distribution, standardization of content, and accountability. Accessibility refers to the user's ability to find what is needed, when it is needed. Improved access to educational materials is crucial, as learning is often an unplanned experience. Updating electronic content is easier than updating printed material: e-learning technologies allow educators to revise their content simply and quickly. Learners have control over the content, learning sequence, pace of learning, time, and, often, media, which allows them to tailor their experience to meet personal learning objectives. Internet technologies permit the widespread distribution of digital content to many users simultaneously anytime and anywhere. Moreover, e-learning can be designed to include outcomes assessment to determine whether learning has occurred. Advantages in learning enhancement are a less well recognized but potentially more revolutionary aspect of e-learning than are those related to learning delivery. Learning enhancement permits greater learner interactivity and promotes learners' efficiency, motivation, cognitive effectiveness, and flexibility of learning style. Learning is a deeply personal experience: we learn because we want to learn. By enabling learners to be more active participants, a well-designed e-learning experience can motivate them to become more engaged with the content. Interactive learning shifts the focus from a passive, teacher centered model to one that is active and learner centered, offering a stronger learning stimulus. Interactivity helps to maintain the learner's interest and provides a means for individual practice and reinforcement. Evidence suggests that e-learning is more efficient because learners gain knowledge, skills, and attitudes faster than through traditional instructor-led methods. This efficiency is likely to translate into improved motivation and performance. E-learners have demonstrated increased retention rates and better utilization of content, resulting in better achievement of knowledge, skills, and attitudes. Multimedia e-learning offers learners the flexibility to select from a large menu of media options to accommodate their diverse learning styles.

Components of E-Learning Creating e-learning material involves several components: once content is developed, it must be managed, delivered, and standardized. Content comprises all instructional material, which can range in complexity from discrete items to larger instructional modules. A digital learning object is defined as any grouping of digital materials structured in a meaningful way and tied to an educational objective. Learning objects represent discrete, self contained units of instructional material assembled and reassembled around specific learning objectives, which are used to build larger educational materials such as lessons, modules, or complete courses to meet the requirements of a specified curriculum. Examples include: tutorials, case-based learning, hypermedia, simulations, and game based learning modules. Content creators use instructional design and pedagogical principles to produce learning objects and instructional materials. Content management includes all the administrative functions (e.g., storing, indexing, cataloging) needed to make e-learning content available to learners. Examples include portals, repositories, digital libraries, learning-management systems, search engines, and e-Portfolios.

As educators seek ways to meet the demands put upon the education system in today's world of rapid changes and ever increasing complexity, it may be helpful to recognize that there is a need for both convergent and divergent approaches to teaching and learning. Educators who stress the importance of the acquisition of specific knowledge as a useful way to prepare the students for productive future functioning, must come to realize that even for the purpose of this goal alone, a divergent approach is needed today. With the great proliferation of knowledge and rapid changes in most fields as well as the appearance of many new fields, it is critical to develop students' capacity for self-directed learning and self growth. On the other hand, those who

emphasize the importance of autonomous growth and creative self-expression must realize that the students need academic skills (such as reading, writing, calculating, etc.) as prerequisites for productive self expression. Since the creative process involves new ways of using existing knowledge, it is important to provide opportunities for students to acquire such knowledge (which can be acquired by convergent teaching). Hence, convergent and divergent teaching strategies are both needed and the challenging question is how to find the balance between them within the complexity of the process of teaching and learning. It is likely that the two approaches may increasingly become not mutually exclusive but interrelated and interdependent. An important development is the growing awareness that academic achievement could improve by adapting teaching to students' individual differences. This awareness is finding its most distinct expression in the education system's attempts to deal with the issues of students with special needs. However, other aspects of adaptation to students' individual differences get far less attention.

In general, adaptation to individual differences under convergent teaching tends to be limited. The students are all expected to strive toward one goal of learning specified required knowledge; some may attain it and others may fall by the wayside or be given some remediation with limited results. Nevertheless, there are various possibilities of effective adaptation to individual differences under convergent teaching. In addition to adaptation in the rate of learning, where each student can be allowed to work at his/her own pace, there are many possibilities of adaptation through the use of diverse methods of teaching. Even when all the students are taught the same material, teachers can use different methods, different techniques or different media, to cater to individual differences in abilities and personality characteristics. Such a 'multi-convergent' approach can be more effective in giving the students opportunities to use their aptitudes and inclinations for learning and attaining higher achievements. As the students experience success and consequently a sense of competence, their motivation is enhanced to pursue further learning. Such an approach has a better potential for success than the common reality of students with learning difficulties, who often struggle through remediation with a sense of inadequacy and discouraging experiences of failure.

Adaptation to individual differences under divergent teaching may be expected to be productive because of its emphasis on student autonomous, active, self-reliant learning. Yet, there are students who may not function well under divergent conditions because of their strong need for guidance, direction, and structure. Divergent teaching can cater to such needs by individual guidance, along with ongoing assessment and subsequent modifications. This is a 'guided-divergent' approach which is more structured and less flexible than the open divergent teaching but less narrow and limiting than convergent teaching.

E-Resources - Today libraries are providing electronic access to a wide variety of resources, including indexes, full-text articles, and complete journals with back files and internet web resources. E-resources in collaboration with internet have become a sign of modern age being an invaluable tool for teaching, learning, and research. The library and information landscape has transformed with the onset of the digital era and today traditional libraries have changed their roles to serve as 'knowledge centers' with priority on value added electronic information services. The rapid growth of new technologies has changed the communication process and reduced the cost of communication for individuals. Electronic information sources can be seen as the most recent development in information technology and are among the most powerful tools ever invented in human history. Actualization of knowledge and abilities of students is the key element of the first stage of training, which should take into account personal qualities and characteristics of future teachers. This approach allows us to not only individualize and differentiate the process of teaching engineers, but also provides successful adaptation of students to the higher education environment. The purpose of the next stage of mathematics training at university is characterized by the process of structuring and systematizing students' knowledge and skills by means of modern educational technologies. The use of information and communication technologies contributes to activation of learning and cognitive activity of students providing quick feedback, availability of varied techniques and training methods, ensuring intensification of the process of teacher's training at university.

Types Of Different E-Resources - Generally, e-resources may be classified into two major areas viz,

1. Online e-resources and
2. Offline e-resources

Online e-resources :

1. e-books
2. e-journals
3. email
4. gmail
5. sms / mms
6. e-library
7. e-learning (courses)
8. e-shops
9. e-dictionaries
10. Search engines
11. Meta search engines
12. Websites

Offline e-resources :1

1. CD ROM based e-resources
2. Offline e-books
3. Offline e-dictionaries
4. MS Office applications (power point presentation)
5. Training software (mouse training)
6. e-prompter

7. PDF converter
8. e-resources on mobile devices

Development of e-resources for Education: The development of e-resources requires the fundamental knowledge of the following:-

1. Basic computer skills
2. Internet skills
3. Web skills etc.

Features of E-Learning :

1. Learning is self-paced and gives students a chance to speed up or slow down as necessary
2. Learning is self-directed, allowing students to choose content and tools appropriate to their differing interests, needs, and skill levels
3. Accommodates multiple learning styles using a variety of delivery methods geared to different learners; more effective for certain learners
4. Designed around the learner
5. Geographical barriers are eliminated, opening up broader education options
6. 24/7 accessibility makes scheduling easy and allows a greater number of people to attend classes
7. On-demand access means learning can happen precisely when needed
8. Travel time and associated costs (parking, fuel, vehicle maintenance) are reduced or eliminated
9. Fosters greater student interaction and collaboration
10. Enhances computer and Internet skills

References :-

1. Abbas Khan, A. A., Minhaj F. & Ayesha, S. (2007), E-resources: E-books and E-journals In E-Libraries: Problems and perspectives, Ed. by Ramiah, Sankara Reddy and Hemant Kumar. Allied, New Delhi.
2. Bourner, T. & Flowers, S. (1997). Teaching and learning methods in higher education: A glimpse of the future. Reflections on Higher Education, 9, 77-102.
3. Ganski, Kate L. (2008). An Evaluation of the Accessibility of E-resources fromTheological Library Websites. Theological Librarianship: An Online Journal of the American Theological Library Association, 1 (1). 38-45.
4. Madhusudhan, Margam. (2010). Use of Electronic Resources by Research Scholars of Kurukshetra University. The Electronic Library, 28 (4). 492-506.
5. Narayana Poornima and Goudar IRN, "E-Resources Management through Portal: A Case Study of Technical Information Center", In: International Conference on Knowledge Management (ICIM2005), 22-25 Feb 2005, P 1-19.
6. Okello-Obura, Constant. (2010). Assessment of the Problems LIS Postgraduate Students Face in Accessing E-Resources in Makerere University, Uganda. Collection Building, 29 (3). 98-105
7. Singh, G. & Priola, V. (2001). Long distance learning and social networks: An investigation into the social learning environment on online students. Proceedings of the Sixth Annual ELSIN Conference. 158-164.

Web References:-

1. http://www.rudenko.com
2. http://aalbc.com/about_eBooks.htm
3. http://www.eie.situedurnd.org
4. http://www.innovationsinindianeducation.150m.com
5. http:// www.aiaer.150m.com
6. http://www.web-books.com/default.htm
7. http://www.searchebooks.com
8. http://www.encyclopedia.com

****

Study of Secondary School Teachers' Classroom Verbal Behaviour in Relation to Their Mental Health

Amit Kumar Tyagi * Sangita Sirohi **

Introduction - Entire education process converts man into productive and competent human capital to undertake various development of any nation requires that its students should receive appropriate education. Students constitute the most delicate, valuable, vibrant and dynamic asset of a nation. If a nation has to pave its path of progress and prosperity, there is no alternative but to take full care of students. It is a well accepted fact that the quality of the nation depends upon the quality of the education imparted to its citizens which in turn depends upon the 'quality of its teachers'. However, a teacher with innumerable degrees and high profile personality cannot necessarily be termed as a good teacher.

The primary quality that makes a whole lot of difference is the classroom interaction and his teacher like behaviour. The behaviour of the teacher not only as a person but also as a teacher is predominantly controlled by his emotional behaviour, which in turn depends upon the degree of emotional intelligence possessed by him. In the modern world we need not just competent teachers, but teachers, who can question own actions and who are able to envisage new forms of professionalism.

Mental health is sometimes served to identify very desirable personal qualities which only a few people show in any degree and in this way mental health may cannot something more than good adjustment. Good adjustment indicates desirable or valued qualities or patterns or behaviour in terms of a person's inter-action with the environment. Therefore teacher's behavior depends on the mental health too. We cannot leave the importance of mental health aside when we are talking about the class room behavior of a teacher.

Objectives Of The Study - The present study aimed at realizing the following objectives:

1. To identify secondary school teachers with good mental health and poor mental health.
2. To study the verbal behavior of government secondary school teachers in relation to their mental health.

Analysis And Interpretation Of Data- Data collected through the administration of the tools on selected sample are raw in nature. These data need to be organized, analyzed and interpreted for drawing sound conclusions and valid generalizations. The organization of data includes editing, classifying and tabulating quantitative information. Editing implies checking of the gathered raw data for accuracy, usefulness and completeness. Here classification refers to dividing of the data into different categories, classes and groups. Thus in brief analysis data refers to the study of the organized material in order to discover inherent facts. Further the data were studied from various angles for accessing the new facts.

Classification Of Teachers In Terms Of Their Mental Health Scores - To achieve the objectives, the classification of the government aided and non-aided secondary school teachers on the basis of their mental health was needed. The classification of teachers as good, moderate and poor mental health teachers has been taken as per the norms given in the manual of Mental Health Check-list (MHC). The teachers who attained scores less than or equal to 20 were considered as good mental health teachers. They were found 156 out of 425. The score obtained by the teachers more than or equal to 28 were considered as poor mental health teachers. They were found 64 out of 425, and the score obtained by the teachers ranging from 21-27 were considered as moderate mental health teachers. They were found 205 out of 425.

Status Of The High, Moderate And Low Mental Health Teachers In Relation To Their Verbal Behaviour Scores - After the classification of teachers as good, moderate and poor mental health teachers, the status of good, moderate and poor mental health teachers in relation to their verbal behavior of teachers was studied.

The variation exiting between two groups and dispersion within the groups is of greater importance. Hence as regard the present study, the mean, and S.D. were computed. The derived results are presented in the Table 1.

Table 1 : Status of the good, moderate and poor mental health teachers in relation to their verbal behaviour scores

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.
1.	High Emotional Intelligent teachers	156	253.81	17.43
2.	Moderate Emotional Intelligent Teachers	205	242.32	16.52

*Research Scholar (Education) Mewar University, Gangrar, Chittorgarh (Raj.) INDIA
** Associate Professor, C.S.S.S. PG College, Machhra, Meerut (U.P.) INDIA

3	Low Emotional Intelligent teachers	64	235.78	28.71
	TOTAL	**425**		

Table-2 : Significance of the difference between mean scores on verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	253.81	17.43	218	4.68**
2.	Poor Mental Health	64	235.78	28.71		

****Significant at 0.01 level**

Table-2 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high verbal behavior in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-3 : Significance of the difference between mean scores on 'clarity' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	43.98	5.97	218	2.77**
2.	Poor Mental Health	64	41.40	6.41		

****Significant at 0.01 level**

Table-3 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high '*Clarity*' in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-4 : Significance of the difference between mean scores on 'enthusiasm' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	41.74	3.75	218	3.62**
2.	Poor Mental Health	64	39.25	4.95		

***Not Significant at 0.05 level**

Table-4 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high '*Enthusiasm'* in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-5 : Significance of the difference between mean scores on 'interaction' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	37.75	3.94	218	2.88**
2.	Poor Mental Health	64	35.55	5.56		

****Significant at 0.01 level**

Table-5 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high *'Interaction'* in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-6 : Significance of the difference between mean scores on 'organization' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	35.34	2.99	218	6.98**
2.	Poor Mental Health	64	30.35	5.63		

****Significant at 0.01 level**

Table-6 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high *'Organization'* in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-7 : Significance of the difference between mean scores on 'pacing' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	23.17	1.33	218	3.54**
2.	Poor Mental Health	64	21.56	3.54		

****Significant at 0.01 level**

Table-7 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high *'Pacing'* in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-8 : Significance of the difference between mean scores on 'disclosure' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	27.98	2.34	218	4.52 **
2.	Poor Mental Health	64	24.97	5.10		

****Significant at 0.01 level**

Table-8 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high *'Disclosure'* in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-9 : Significance of the difference between mean scores on 'speech' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	24.12	3.87	218	6.91**
2.	Poor Mental Health	64	21.23	2.25		

****Significant at 0.01 level**

Table-9 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high *'Speech'* in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Table-10 : Significance of the difference between mean scores on 'rapport' dimension of verbal behaviour for good and poor mental health teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	Good Mental Health	156	22.98	2.01	218	4.19**
2.	Poor Mental Health	64	20.95	3.66		

****Significant at 0.01 level**

Table-10 shows that Good Mental Health Teachers have significantly high *'Rapport'* in verbal behaviour in comparison to Poor Mental Health Teachers.

Conclusions Of The Study - On the basis of above findings following conclusions have been made:

1. Good Mental Health Teachers of schools are better in their verbal behavior in comparison with Poor Mental Health Teachers.
2. Good Mental Health Teachers are better in clarity, enthusiasm, interaction, organization, pacing, disclosure, speech, and rapport dimensions of their verbal behavior.

Reference :-

1. Personal survey and research.

****

नागपुरी साहित्य के संरक्षण - संवर्द्धन में मीडिया का योगदान

कोरनेलियुस मिंज *

नागपुरी भाषा परिचय - विश्व में आज हजारों भाषाएं बोली जाती हैं। ये कई भाषा परिवारों में विभक्त हैं। जिनमें से एक भारोपीय भाषा परिवार भी है, जिसे आर्य भाषा परिवार भी कहा जाता है। नागपुरी इसी कुल की भाषा है। नागपुरी भाषा की उत्पत्ति के बारे में अब तक स्पष्ट जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है। इसके उद्‌भव के बारे में किसी विद्वान ने निश्चयपूर्वक नहीं लिखा है। वर्तमान में बोली जाने वाली नागपुरी की मूल, बोली कब से और कहाँ से प्रारंभ हुई, इसके बारे में भले ही सही-सही जानकारी नहीं मिल पायी हो, लेकिन इसकी प्राचीनता को नकारा नहीं जा सकता है। नागपुरी को सदानों की भाषा कही गयी है और छोटानागपुर के गैर-आदिवासियों को, जो प्राचीन काल से रहते आ रहे हैं, उन्हें ही सदान कहा जाता है। इनकी भाषा ही सदानी कहलायी। अन्य क्षेत्रों के गैर-आदिवासियों को सदान नहीं कहा जाता है, अत: स्पष्ट होता है कि नागपुरी छोटानागपुर में रहने वाले सदानों की ही भाषा रही होगी। यहीं से नागपुरी भाषा सदानों के द्वारा पैदा की गयी है।

नागपुरी भाषा की प्राचीनता और उत्पत्ति के संबंध में कई विद्वानों ने अपने विचार दिये हैं। डॉ राम प्रसाद ने नागपुरी की उत्पत्ति प्राकृत भाषा से माना है। उनके अनुसार नागपुरी ईसा पूर्व से बोली जा रही है। 'नागवंशियों की राज-काज की भाषा नागपुरी थी और उनका शासनकाल 64 ई. माना गया है तो निश्चय ही उस काल में यहाँ की जन सामान्य की भाषा के लिए कम से कम 500 वर्ष का समय चाहिये।'[1] ऐसी स्थिति में 'झारखंडी प्राकृत' से नागपुरी का उद्‌भव ई. पूर्व 500 से ई. पू. 200 मानना युक्तिसंगत प्रतीत होता है। इसलिए मैं दृढ़तापूर्वक कहता हूँ कि 200 ई. पू. तक नागपुरी का उद्‌भव हो चुका था, जो 64 ई. में नागवंशियों की राज-काज की भाषा बनी। डॉ राम प्रसाद ने नागपुरी की प्राचीनता को गोंड जाति से जोड़कर देखा है। वर्तमान नागपुरी भाषा लिखित रूप में चाहे जितना अर्वाचीन हो, परंतु बोली के रूप में इसकी प्राचीनता असंदिग्ध है। चूंकि यह क्षेत्र गोंडवाना का अंग रहा है और प्राचीन काल में मध्यप्रदेश में गोंडी भाषा का प्रभुत्व था और इसका सीमावर्ती क्षेत्र, वर्तमान छोटानागपुर का गुमला जिला पड़ता है। इसलिए अनायास ही गोंडी, छत्तीसगढ़ी, मराठी, उड़िया आदि भाषाओं का प्रभाव नागपुरी पर पड़ा है।'[2] डॉ वी पी केशरी ने भी नागपुरी का संबंध नाग जाति से और इनके पूर्वजों का संबंध गोंड़ जाति से बतलाया है। 'सदानी मूलत: नाग जाति की भाषा है जो कालक्रम से आर्य एवं प्रोटोऑस्ट्रोलॉयड तथा द्रविड़ भाषाओं के प्रभाव से विकसित और रूपांतरित होती गयी है।'[3] 'नागपुरी भाषा भारत की ही नहीं, संसार की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है।'[4] नागपुरी बोलनेवाले मुण्डाओं के आगमन से पूर्व इस भू-भाग में रहते थे। 'नागपुरी भाषा कम से कम फणिमुकुट राय के समय जरूर थी।'[5]

नागपुरी साहित्य का श्रीगणेश - नागपुरी झारखंड में अन्य भाषियों के बीच संपर्क भाषा के रूप में स्थापित हो चुकी है। मूलत: नाग जाति, सदान समुदाय की मातृभाषा कही जाने वाली नागपुरी 83 ई. से 1947 ई. तक नागवंशी राज्य में राजभाषा रही। ऐसे में नागपुरी साहित्य की प्राचीनता को नकारा नहीं जा सकता है। भले ही इसका लिखित रुप बहुत बाद में प्रारंभ हुआ हो लेकिन ईसा पूर्व से ही इस क्षेत्र में साहित्य की परंपरा रही है। इस बात को डॉ श्रवण कुमार गोस्वामी ने उद्धृत किया है - 'छोटानागपुर की पहाड़ियों में सीताबेंगा की गुफा में द्वितीय या तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व की एक नाट्यशाला मिली है, जो 'नाट्य-शास्त्र' के वर्णन से मेल खाती है।'[6] हालांकि इस भाषी के लोगों में लिपि की जानकारी के अभाव में इसका शिष्ट साहित्य बाद में प्रारंभ हुआ। नागपुरी शिष्ट साहित्य कब से प्रारंभ हुआ, इसका पहला प्रयोग किसने किया, कहना कठिन है, क्योंकि अभी बहुत से नागपुरी कवियों का काल निर्धारण नहीं हुआ है। नागपुरी शिष्ट साहित्य की बात करें तो शोधपरक प्राप्त जानकारी के अनुसार रघुनाथ नृपति से इसकी शुरूआत मानी जाती है। रघुनाथ नृपति नागवंश के 50 वें राजा थे। इनका शासन काल 1626 से 1668 ई. तक माना जाता है।
उनके गीत के कुछ अंश इस प्रकार हैं -

'पोड़िलो बरखा रीत, बिरहे बेदन चीत,
ताइ जागे दुगुन मदन, दुख दारून हे
झुले सदाइ कमल नयन।
गरजे गगन घटा,बिजली चमके छटा
गृह भेल बिरस कानन, दुख दारून हे
झुले सदाइ कमल नयन।।'[7]

नागपुरी साहित्य की शुरूआत गीत से ही हुई है। इसके प्रमाण उपलब्ध हैं। नागपुरी शिष्ट साहित्य के ज्ञात प्रथम कवि रघुनाथ नृपति के गीत में वैष्णव भक्ति का प्रभाव दिखता है -

।।हरि तजि जब मथुरा गेल, जरजर तनु अधिक भेल
सब सुख गेली दूरे हे
गावत रघुनाथ नृपति साजत हलधरे हे, आजु नाग मन परे।।

उनकी भक्ति गीतों की रचना से नागपुरी साहित्य का रचना संसार प्रारंभ होता है लेकिन नागपुरी में गद्य-लेखन का प्रारंभ सन् उसके लगभग 200 वर्षों बाद प्रारंभ हुआ। इसकी शुरूआत 1900 के आस-पास ईसाई मिशनरियों ने किया। रेव्ह पी. इडनेस ने इस दिषा में अग्रणी भूमिका निभायी। धनीराम बक्शी की तरह काथलिक मिशन के फादर पीटर शांति नवरंगी ने नागपुरी के उन्नयन के लिए सराहनीय कार्य किया। हालांकि इस दिशा में सबसे पहला प्रयास रेव्ह. ई. एच. व्हिटली ने 1896 में 'नोट्स ऑन दि गँवारी डायलेक्ट ऑफ लोहरदगा, छोटानागपुर लिखकर कर दिया था। इसमें नागपुरी

* सहायक प्राध्यापक (जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग) राँची महिला महाविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

गद्य का नमूना दिया गया है। जबकि डॉ श्रवण कुमार गोस्वामी के अनुसार – 'नागपुरी में गद्य लेखन का प्रारंभ सन् 1900 के आस–पास ईसाई मिशनरियों ने किया और इसके अग्रदूत रेवरेण्ड पी. इडनेस हुए।'[8] डॉ. गिरिधारी राम गौंझू के अनुसार – 'नागपुरी गद्य पुस्तकें प्रकाशित करने का प्रारंभ ईसाई मिशनरियों ने ही किया। 19 वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में नागपुरी गद्य का श्रीगणेश माना जा सकता है। ईसाई मिशनरियों ने अपने धर्म ग्रन्थों का अनुवाद नागपुरी गद्य में प्रकाशित का प्रचारित करना प्रारंभ किया। आधुनिक नागपुरी गद्य का पालन–पोषण ईसाई मिशनरियों की गोद में हुआ।'[9]

नागवंशी राजाओं का शासन काल 83 ई. से माना जाता है,जो 1947 तक अपने प्रभाव में था, लेकिन शिष्ट साहित्य 1550 ई. वर्ष बाद 1626 ई. से मिलता है। इस दिशा में अभी भी काम करने की जरूरत है। नागपुरी लोक साहित्य बहुत ही प्राचीन है। नागपुरी लोक साहित्य से शिष्ट गीतों की रचना हुई। शिष्ट गीत ने ही नागपुरी शिष्ट साहित्य को जन्म दिया है। लोक जीवन में गीतों की भरमार होने के कारण लोक साहित्य भी गीतों से भरा पड़ा है। यही वजह है कि नागपुरी शिष्ट साहित्य भी गीतों से प्रारंभ हुआ होगा। 1626 ई. से लेकर अब तक नागपुरी साहित्य ने कई विधाओं में आगे बढ़ना प्रारंभ कर दिया है। रघुनाथ नृपति के गीत भक्तिकालीन हैं। उनके बाद कई कवि हुए, जिन्होंने गीतों को लिपिबद्ध कर गाने की परंपरा को आगे बढ़ाया है। कोई भी भाषा–साहित्य अपने विकास के प्रथम चरण में लोक गीत तथा लोक कथा का आश्रय लेता है। नागपुरी के साथ भी यही रहा। इसकी शुरूआत भी लोक कथा और लोक गीतों से हुई है।

मीडिया और नागपुरी – नागपुरी साहित्य का प्रारंभ नागवंशी राजा रघुनाथ नृपति के शासन काल 1626 ई. से माना जाता है, लेकिन लोगों तक नागपुरी साहित्य का प्रसार बहुत कम रहा है। रचनाएँ पांडुलिपि के रूप में रहने के कारण आम जनता तक इसकी पहुंच नहीं हो पाती थी, जिससे रचनाकारों की प्रतिभा और रचनाकारों के बारे में आम जनता नहीं जान पाती थी। हाँ यह बात अवश्य थी, कि गायन के माध्यम से प्रारंभ की नागपुरी साहित्य लोगों के जुबां पर चढ़ती थी, क्योंकि शुरूआती दौर में नागपुरी साहित्य गीत–कविता के रूप में लिखी जाती थी। इस क्षेत्र में लोगों की गीत गाने और सुनने में गहरी रूचि होने के कारण कुछ कवि लोकप्रिय हुए लेकिन मीडिया में छपने के बाद से नागपुरी साहित्य संसार का विस्तार रूप सामने आने लगा। छोटानागपुर में विशेषकर आदिवासी क्षेत्रों में आदिवासियों की अपनी भाषा और नागपुरी ही प्रचलित थी। हिंदी से लोग अनभिज्ञ थे, लेकिन अंग्रेजों के आगमन के बाद से लोग हिंदी भाषियों के संपर्क में आये और हिंदी बोलने लगे। इसकी चर्चा सुधीर लाल ने अपनी पुस्तक झारखंड सामान्य ज्ञान में की है। '15 जनवरी 1834 ई. में कंपनी सरकार द्वारा राँची में साउथ वेस्ट फ्रंटीयर एजेंसी कमिश्नरी का मुख्यालय स्थापित हुआ। उसके बाद बिहार, उत्तर प्रदेश आदि जगहों से आकर हिंदी भाषी बसने लगे। कार्यालयों, बाजारों, पुलिस थानों, सैनिक छावनियों, यातायात माध्यमों से हिंदी का प्रचार बढ़ता गया।'[10]

इस कारण पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन भी प्रारंभिक दौर में हिंदी में किया गया। राँची से भाग्यवती देवी क्षेत्रिय के संपादन में 'वनिता हितैषी' नामक पत्रिका 15 सितंबर 1892 ई. से निकलना प्रारंभ हुआ। यह समाज सुधारक पत्रिका थी। यह नारी जाति के उत्थान पर केंद्रित थी। बाल–विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा आदि कुप्रथाओं को समाप्त करने के लिए बालकृष्ण सहाय, ठाकुर गदाधर सिंह आदि रचनाकारों की लेख, निबंध, कविता प्रकाशित होती थी। झारखंड क्षेत्र का प्रथम अखबार आर्यावर्त को माना जाता है, जो एक छोटी साप्ताहिकी थी। यह एक अप्रैल 1898 ई. में राँची से प्रकाशित हुई। यह झारखंड की पहली साप्ताहिक अखबार थी। हालांकि इस क्षेत्र में सर्वप्रथम सन् एक दिसंबर 1872 ई. से जर्मन मिषन द्वारा धर्म प्रचार के लिए हिंदी में घर–बंधु नामक पत्रिका प्रारंभ की। 'यह झारखंड की पहली पत्रिका है।'[11] बहुत जगह इस पत्रिका के प्रकाशन का वर्ष 1880 ई. बताया गया है, लेकिन जीईएल चर्च कार्यालय से प्राप्त जानकारी के अनुसार घर–बंधु पत्रिका का प्रकाशन 1872 ई. में प्रारंभ हुआ, जो आज भी जारी है। इसे राँची से प्रकाशित किया जाता था। रेव्ह एनाट रॉड इसके संपादक हुआ करते थे। यह पत्रिका आज भी रांची से ही छपती है। वर्तमान में 10 हजार प्रतियां छपती हैं। इसके बाद इस क्षेत्र में पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन तेजी से होने लगा, लेकिन अब तक नागपुरी को इन पत्र–पत्रिकाओं में जगह नहीं मिल पायी थी। सर्व प्रथम राँची से प्रकाशित पत्रिका 'सत्संग' में नागपुरी भाषा को जगह मिली। 'सत्संग' मूलतः इसाई धर्म की पत्रिका थी, जो फादर पीटर शांति नवरंगी के संपादन में निकली। यह पत्रिका 1937 ई. से 1954 ई. तक निकली। जिसमें छोटानागपुर के इतिहास पर धारावाहिक छपी। 'झारखंड' मासिक पत्रिका 1938 ई. में बड़ाईक ईश्वरी प्रसाद सिंह के संपादन में गुमला से प्रकाशित झारखंड आंदोलन की महत्वपूर्ण पत्रिका थी। इस पत्रिका के पहले इस क्षेत्र के लिए झारखंड शब्द का प्रयोग नहीं होता था। 'झारखंड पत्रिका ने झारखंड शब्द को स्थापित कर दिया। इस नाम को देने में राधाकृष्ण का नाम सबसे अग्रणी है, चूंकि उन्होंने ही बड़ाईक ईश्वरी प्रसाद को इस नाम से पत्रिका निकालने के लिए प्रेरित किया। जिसमें उनका भरपूर सहयोग रहा।'[12] 'आदिवासी सकम' छह जुलाई 1940 ई. को जयपाल सिंह मुंडा के संपादन में प्रकाशित हुई। यह आदिवासी महासभा का मुखपत्र था, जिसमें हिंदी, बंगला और अंग्रेजी सहित झारखंडी भाषाओं के आलेखों को प्रमुखता से स्थान दिया गया। इसमें नागपुरी को भी जगह दी गयी। 'अबुआ झारखंड' 14 दिसंबर 1947 ई. से इग्नेस कुजूर एवं आगे चलकर इग्नेस बेक के संपादन में दासो प्रेस, पत्थलकुदवा रांची से निकलना प्रारंभ हुआ, जो 1950 ई. से झारखंड पार्टी का मुखपत्र बना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ राम प्रसाद, स्वतंत्र्योत्तर नागपुरी साहित्य : एक शास्त्रीय अध्ययन, पृ –46
2. डॉ राम प्रसाद, स्वतंत्र्योत्तर नागपुरी साहित्यः एक शास्त्रीय अध्ययन, पृ –28
3. डॉ राम प्रसाद, स्वतंत्र्योत्तर नागपुरी साहित्यः एक शास्त्रीय अध्ययन, पृ –28
4. –वही – पृ – 24
5. पंडित योगेंद्र नाथ तिवारी, नागपुरी का संक्षिप्त परिचय, पृ–42
6. डॉ श्रवण कुमार गोस्वामी, नागपुरी शिष्ट साहित्य, 1972, पृ– 10
7. डॉ श्रवण कुमार गोस्वामी, नागपुरी शिष्ट साहित्य, 1972, पृ– 10
8. डॉ श्रवण कुमार गोस्वमी, नागपुरी शिष्ट साहित्य, पृ– 15
9. डॉ गिरिधारी राम गौंझू, पीटर शांति नवरंगी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ– 126
10. सुधीर लाल, झारखंड सामान्य ज्ञान, पृ –133
11. सुधीर लाल, झारखंड सामान्य ज्ञान, पृ –134
12. सुधीर लाल से बातचीत में मिली जानकारी के अनुसार

मुण्डारी गद्य साहित्य का इतिहास

इंदिरा कोनगाड़ी *

शोध सारांश – मुण्डाओं का इतिहास प्राय: मौखिक रूप में उनके लोक साहित्य में ही मिलता है। इसका लिखित इतिहास विदेशी विद्धानों ने प्रारम्भ किया था, फिर भी अब तक इसका कोई प्रामाणिक इतिहास नहीं आ सका है। इस तरह मुण्डाओं के इतिहास का पता प्राचीन अवशेषों, उनकी संस्कृति, लोक–भाषा, पौराणिक कथाओं तथा लोक साहित्य के विशेष अध्ययन से ही लगाया जा सकता है। परन्तु 'मुण्डारी लोक साहित्य में ऐतिहासिक तथ्य ऐसे बिखरे पडे हैं, जैसे नदी के बालू में सोने के कण बिखरे पड़े होते हैं। यही कारण है कि मुण्डारी लोक साहित्य, ये एक कठिन काम है। इसका बड़ा भाग अभी भी मौखिक है। ये प्रकाशित तथा अलिखित लोक गीत, लोक कथाएँ, कहानियाँ और बुझौवल कब की है। इसका भी पता प्राय: नहीं चलता है। जिनमें आदिम तथा प्राचीनता मिटकर नवीनता का योग विद्यमान है।'[1]

मुण्डारी गद्य साहित्य का उद्गम और विकास – किसी भाषा या लोक भाषा का विकास उसके मौखिक साहित्य की परम्परा से ही होता है। मानव समुदाय में मौखिक रूप से प्रचलित लोक कथा, लोकोक्ति, पहेली आदि जब किसी भाषा में लिखित रूप में संकलित कर प्रस्तुत की जाती है, तब उस भाषा के गद्य साहित्य के मुद्रित और प्रकाशित होने पर भाषा और साहित्य का अंग बन जाती है। 'आदिकाल से लेकर आधुनिक काल के बीच के हजारों वर्षो की कालावधि में विभिन्न चरणों में विभिन्न भाषाओं के साहित्य का विकास मौखिक रूप से होकर लिखित रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत हुआ है। 'मुण्डारी गद्य साहित्य' भी इसका अपवाद नहीं है। 'मुण्डा' जनजाति का इतिहास भी उनके प्रव्रजन, विस्थापन, विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक समूहों से सम्मिलन के साथ जुड़ा हुआ है। साहित्य लेखन और उसके विकास तथा विस्तार के लिए सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिरता और स्थायित्तव आवश्यक होता है। 'मुण्डा' जनजाति का इतिहास प्रवर्जन के साथ–साथ विभिन्न आन्दोलन,विद्रोह और युद्धों से जुड़ा रहा है। अपने आदि स्थान 'सिङदिशुम' से बिछुड़ने के बाद उनका स्थायी पुनर्स्थापन छोटानागपुर में सुतियाम्बे (सुतिया नागखण्ड) में ही सम्पन्न हुआ। उसके पूर्व के साहित्य लेखन का कोई प्रसंग या उदाहरण नहीं मिलता है। अत: इस लम्बी अवधि में उनका गद्य साहित्य पूरी तरह मौखिक परम्परा में ही अक्षुण्ण और संरक्षित रहा।'[2] कहा जाता है कि 'मुण्डारी भाषा के लिखने की शुरूआत एक ताड़ पत्ता (तलि सकम) में उड़िया में उड़िया लिपि में लिखा गया लेकिन यह प्रचलित न हो सका।'[3]

'मुण्डारी साहित्य का सृजन नहीं होने का कारण है राज्याश्रय की प्राप्ति का न होना। पहले पूरे देश में इस प्रकार की भाषाओं का अपने समाज को छोड़कर राजकीय स्तर पर कोई महत्त्व नहीं था। मुण्डारी भाषा सबसे पहले ब्राह्मी लिपि, उड़िया लिपि, और कैथि लिपि में लिखी गई थी। परन्तु अब इसका कोई प्रमाण नहीं है। कैथी लिपि का प्रमाण कहीं–कहीं 'ससंग दिरि' (शमसान) घाट के पत्थर और खतियानों में मिल सकता है।'[4]

मुण्डारी गद्य साहित्य से संबंधित लोककथा, पहेलियाँ, मुण्डारी भाषा का व्याकरण, शब्द कोष आदि का लेखन और संकलन का कार्य तत्कालीन विदेशी (अंग्रेज प्रशासको और अन्य विद्धानों) द्धारा प्रारम्भ किया गया था। 'मुण्डारी भाषा को व्याकरण प्रदान करने का कार्य सर्वप्रथम रेव0 अलफ्रेड नोट्रोट ने 1904 ई0 में 'ग्रामर ऑफ द कोल लैंगवेज' नामक पुस्तक (अंग्रेजी में) के माध्यम से किया था।'[5]

'इससे पहले सभी भाषाएँ मौखिक रूप से ही प्रचलित थी। इसे अंग्रेजी में इस तरह कहा जाता है:–The Munda language was for the first time, reduced to writing.

यह बिहार के क्षेत्र में हिन्दी और देवनागरी लिपि का प्रचलन था इसलिए 'बाइबल' का मुण्डारी लिखित देवनागरी लिपि मे ही लिखा गया। यही से मुंडा भाषा का विकास तथा विस्तार शुरू हुआ।'[6]

1850 ई0 के आस–पास से कुछ मुण्डा विदेशी धर्म 'ईसाई' की ओर अपना कदम बढ़ाने लगे। वे अपनी परम्पराओं को छोड़कर अंग्रेज व ईसाई सभ्यता संस्कृति को पूर्णत: ग्रहण करते गये। 'होड़ो जगर रेअ: एते:हइसि नङगम ओड़ो: हरा रनकब' नामक पुस्तक के पृष्ठ संख्या 50 का अध्ययन करने से स्पष्ट पता चलता है कि विदेशी मिशनरीज् Rev.Dr.A. Nottrott का' मुण्डा इतुन सिदा पुथि' मुण्डारी व्याकरण, मुण्डारी भाषा में सबसे पहले 1871 ई0 प्रकाशित हुआ था।'[7]

इसके बाद डॉ अल्फ्रेड नात्तारोत की लिखी गई अन्य पुस्तक है:– 'मुण्डा इतुन एटअ: पुथि,' एटअ: क्लास रअ: पढ़व पुथि', 'सिदा स्ट्रैण्डर्ड गिनती पुति', 'मरकुसअ: सुकु कजि', 'ग्रामेटिक डेर कोल एसपरच', 'होड़ो जगर सुनुसर कजि', 'उलथकद् धरम पुथि', 'बाइबल' आदि। सभी पुस्तके 1871 ई0 से 1891 ई0 के बीच प्रकाशित हुई। 'होड़ो जगर रे मरि नियम' 1909 ई0 में तथा होड़ो जगर रेअ धरम पुथि', 'बाइबल' 1911 ई0 में प्रकाशित हुआ।'[8]

'मुण्डारी ग्रामर' जे0 सी0 ह्विटली 1873 ई0 में, 'मुण्डारी ग्रामर', रेव0 जॉन हॉफैमैन के द्धारा बंगाल सेक्रेटेरियट प्रेस, कलकत्ता से 1903 ई0 में प्रकाशित हुआ। इन दोनों विद्धानों ने संभवत: मुण्डारी भाषा की मौखिक साहित्य को या उस समय उपलब्ध (अंग्रेजी भाषा में) कतिपय लिखित रचनाओं को आधार बनाकर व्याकरण की रचना की होगी। इसके बाद मुण्डारी व्याकरण के साथ शब्दकोष पर 20वीं सदी के प्रथम चरण में रेव0 जॉन हॉफमैन के द्धारा 'इनसाइक्लोपीडिया मुण्डारिका' का 1950 ई0 में प्रकाशन हुआ। बंगला के श्री शरत चन्द्र राय का शोध–प्रबन्ध 'मुण्डा एण्ड देयर कन्ट्री'

* जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, राँची महिला महाविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

1912 ई0 में प्रकाशित हुआ।

मुण्डारी गद्य साहित्य से संबंधित लेखन और प्रकाशन का कार्य उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर 1845 ई0 से आरंभ हुआ। उस समय की विविध गद्य रचनाएँ निम्न प्रकार थी:-

1. रूडिमेंट्स ऑव ए मुण्डारी ग्रामर, फादर जे0 दि0स्मेत, कॉथलिक ऑरफन प्रेस कलकत्ता 1891 ई0।
2. मुण्डारी फर्स्ट रीडर, सिदा पुथि, कॉथलिक ऑरफन प्रेस, कलकत्ता से 1896 ई0 में 1ला संस्करण।
3. ग्रामेटिकडेर कोल-एसपरच् (जर्मनी), डॉ0 अल्फ्रेड नोत्तरोत (दि ग्रामर ऑव कोल लैंगवेज)(अंग्रेजी), बर्लिन से 1904 ई0 में प्रकाशित
4. ए मुण्डारी ग्राम विथ एक्सरसाइजेज्, फादर जॉन बापतिस्ति हॉफमैन ऑरफल प्रेस, पुर्त्तगीज चर्च रोड कलकत्ता।
5. टीच यूरसेल्फ मुण्डारी, सिरिल हँस, सेंडा समइति राँची।[9]
6. ए मुण्डारी इगलिश शब्दकोष, मनदरा भूषण भादूरी 1931 ई0
7. LANGUAGE HAND BOOK MUNDARI -ANON, मनदरा भूषण भादूरी 1944 ई0
8. A MUNDARI GRAMMAR PART 1 TO 3, मनदरा भूषण भादूरी 1903 ई0
9. MUNDARI GRAMMAR, डॉ0 एन0 के0 सिन्हा 1975 ई0
10. MUNDARI PHONETIN READER, डॉ0 एन0 के0 सिन्हा 1974 ई0
11. STUDIES IN THE MUNDA NUMERALS, डॉ0 नोर्मन एच0 जाईड 1978 ई0
12. दंडा जमाकन होड़ो कहानिको, भाइया राम मुण्डा तथा गाँधी कथा 1961 ई0, सचिवालय मुद्रणालय बिहार राँची, बिहार सरकार कल्याण विभाग।
13. मुण्डा लोक कथाएँ, श्री जगदीश त्रिगुणायत, 1968 ई0,सचिवालय शाखा मुद्रणालय, बिहार राँची।
14. कुदुम ओड़ो: सोलको, डॉ0 मनमसीह मुण्डु 1980 ई0, कॉथलिक, प्रेस राँची।
15. मतुराअ: कहनि,मेनास राम ओड़ेया सत्य भारती, राँची 1989, ई0, 1ला संस्करण, 1786 ई0 में प्रकाशित
16. गुइरम् , काशीनाथ सिंह मुण्डा काण्डे', 1980 ई0
17. 'ए आ नवा कानिको', रामदयाल मुण्डा, अमित मुण्डा,नलिनी, नाग, 1980 ई0
18. मुण्डाओं का कुर्सीनामा और गोत्र, पी0 एस0 जे0 पुर्ती, 1972 ई0

इस प्रकार 1950 ई0 तक मुण्डारी' मौखिक गद्य साहित्य का जो भी संकलन/ लेखन कार्य हुआ, उसे अंग्रेजी और मुण्डारी भाषा मे रोमन लिपि में मुद्रित एवं प्रकाशित किया गया। उनके अध्ययन और लेखन, विश्लेषण का कार्य उस समय के उच्च पदस्था प्रशासनिक पदाधिकारी, मानव शास्त्री तथा जाने-माने विद्वानों द्वारा अंग्रेजी भाषा (रोमन लिपि) में किया गया, जो जनसाधारण के पहुँच से बाहर था। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उनका प्रचार एवं प्रसार खुब हुआ उस समय के मुण्डा गद्य से संबंधित जिस लोक साहित्य का विकास हुआ था वह लोक अथवा मुण्डा समुदाय के आम आदमी के लिए नहीं प्रस्तुत किया गया था। इस अवधि में मुण्डा समाज में मौखिक परम्परा से चली आ रही मिथकों, आख्यानों, लोक कथाओं, पहेलियों, सगुन विचार, मुण्डा गोत्र की उत्पत्ति आदि विषयों पर लेखन संकलन और अभिलेखीकरण का महत्तवपूर्ण कार्य, भाषा की दुरूहता और जटिलता के कारण वह आम आदमी के लिए ग्राह्य एवं उपयोगी नहीं हो सका।

इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि मुण्डा समाज में व्याप्त लोक कथाओं का प्रकाशन 1961 ई0 में भइया राम मुण्डा की पुस्तक 'दंडा जमाकन कानिको' अधीक्षक, सचिवालय मुद्रणालय बिहार, राँची से बिहार सरकार के कल्याण विभाग के द्वारा छापा गया। इसमें 26 लोक कथाएँ हैं। इसमें जो लोक कहानियाँ है वे खाँटी हसादअ: मुण्डारी में लिखी गई है। इनकी प्रकाशित रचनाओं में मुण्डा क्षेत्र में प्रचलित एवं लोकप्रिय लोक-कथाओं में निम्न हैं:- मियद् रगोसा कुड़ी आद् ए हगेया को, लण्डिया रोतोड़े बमाड़े, कोंडा होन आद् बोंगा हइ, पुती राजा आद् बेलमुती रानी, हिरा मुन्दरा, मेद् अद् सोना दिदि, गुपिन कोव: बा, ए हगेया कोव: होन मिसी पिरी, डोण्डो होड़ो, सतना कुम्बर, पुइतु हड़म बुड़ि आद् बन्डा तुयु, ए हगेया को, ए हगेया को आद् इनकुव: मिसि, राजा: कुड़ि होन लो: तुयुव: अंणंदि, हड़म बुड़िया किङ आद् मोयोद कुला, बोंगा कि: कुड़ी होन, लिट कोड़ा आदि विभिन्न विषयों से संबंधित लोक कथाएँ हैं।

सन् 1968 ई0 में श्री जगदीश त्रिगुणायत की पुस्तक 'मुण्डा लोक कथाएँ' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई। इसका प्रकाशन अधीक्षक, सचिवालय शाखा, मुद्रणालय, बिहार राँची से हुआ। श्री जगदीश जी ने 'मुण्डा लोक कथाएँ' पुस्तक को दो भागों में विभाजित किया है। पहला भाग में विषय प्रवेश तथा दूसरी भाग में लोक कथाएँ। इसके अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि 'मुण्डा' लोक जीवन के विभिन्न पहलु उनकी सामाजिक व्यवस्था, संस्कृति, लोक परम्परा, विधि-निषेध आदि देखने को मिलती है। उनके कथाओं के सभी तत्तव मिलते हैं, जो पौराणिक जातक कथाओं, हितोपदेश की कथाओं-मित्रलाभ आदि मिलते हैं। इन कथाओं में मिथक, आख्यान, जातिकथा आदि की प्रधानता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि 'लोक में प्रचलित और परम्परा से चली आने वाली मूलत: मौखिक रूप में प्रचलित कहानियाँ लोक कहानियाँ कहलाती है।'[10] यह स्व: चलित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 सिकरादास तिर्की, 'मुण्डारी लोक साहित्य में इतिहास' पृष्ट संख्या- 38,39,
2. डॉ0 आदित्य प्रसाद सिन्हा, 'हो भाषा और साहित्य का इतिहास', पृष्ट संख्या-201,202
3. एस0ए0बी0डी0 हँस, 'होड़ो जगर रेअ एतेह:इसि नङगम ओड़ो हरा रनकब, पृ. सं.-41
4. सुलेमान बडिङ, रेफरेशन कोर्स, ज0जा0 एवं क्षेत्रीय भाषा स्टाफ का राँची, पृ0सं0-03
5. डॉ0 आदित्य प्रसाद सिन्हा, हो भाषा और साहित्य का इतिहास, पृ0 सं0-102
6. एस0ए0बी0डी0 हँस, होड़ो जगर रेअ एते:हइसि नङगम ओड़ो हरा रनकब, पृ0 स0-44
7. एस0ए0बी0डी0 हँस, होड़ो जगर रेअ एते:हइसि नङगम ओड़ो हरा रनकब, पृ0 स0-50
8. डॉ0 मनसिद्ध बड़ायउद्, होड़ो जगर सइति ओड़ो सइति ओलहरियाको, पृष्ट संख्या-188
9. डॉ0 मनसिद्ध बड़ायउद्, होड़ो जगर सइति ओड़ो सइति ओलहरियाको, पृष्ट संख्या-188, 191, 196
10. डॉ0 सत्येन्द्र, हिन्दी साहितय कोश, भाग 1, संपादक डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, वाराणसी, सवंत 2015 पृष्ट संख्या-748

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

खड़िया जनजीवन की पारम्परिक शासन-व्यवस्था

चन्द्र किशोर केरकेट्टा *

प्रस्तावना - झारखण्ड जनजातियों का राज्य है। यहाँ सभी 32 जनजातियाँ निवास करते हैं और सभी जनजाति की अपनी-अपनी सामाजिक बंधन, संस्कृति एवं सामाजिक नियम-कानून में बंधे होते हैं। जनजाति समाज इसी नियम-कानून से चलती है। सभी जनजातियाँ जैसे संताल, मुण्डा, खड़िया, हो, उराँव, लोहरा, खेरवार, आदि सभी प्रमुख जनजातियों की अपनी-अपनी पारम्परिक कानून व्यवस्था है जिसे हमारे पूर्वजों ने बनाया है। शिक्षा की दृष्टि से जनजातियाँ समाज धीरे-धीरे शिक्षित हो रहे हैं और अपनी जाति की पारम्परिक कानून व्यवस्था, संस्कृति, और साहित्य प्राप्त कर रहे हैं। खड़िया जनजाति की भी अपनी पारम्परिक शासन-व्यवस्था और इसी से समाज चलती है। खड़िया जनताति की पारम्परिक कानून व्यवस्था प्राचीन काल से ही चली आ रही है। यह सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था पीढ़ी दर पीढ़ी से चलती आ रही है। इसी पारम्परिक कानून व्यवस्था से खड़िया समाज लम्बी समय से चलती आ रही है। इसी पारम्परिक कानून व्यवस्था से खड़िया समुदाय के लोग किसी भी बात के लिए साथ बैठकर ही सर्वसम्मति से निर्णय लेते हैं। खड़िया समाज के सभी बुद्धिजीवी वर्ग के लोग बैठक से सही न्याय करते हैं। सामाजिक बैठक में किसी ममला के निर्णय लेने में पुरूषों की अहम भूमिका होती है। खड़िया समाज के सभी बुद्धिजीवी एक साथ बैठकर विचार-विमर्श करते हैं इन्हें को खड़िया भाषा में डोकलोय कहा जाता है। खड़िया डोकलोय दो शब्दों के मेल से बना है। डोको + आलोय के मेल से डोकलोय शब्द बना है। इसमें दोनों शब्द का अलग-अलग अर्थ है। डोको शब्द का अर्थ है बैठना और आलोय शब्द का अर्थ अलग करना है। यानि असत्य को सत्य से अलग करना कहने का मतलब यह है कि समाज में यदि कोई आदमी अपराध करता है तो उसको समाज से छिलन किया जाता है। अगर समाज से किसी व्यक्ति को छिलन किया जाता है तो उससे ना तो किसी को बात करना है और ना ही उसका परिवार से किसी तरह का ना खान-पान ना किसी को बैठना-उठना है।अगर गाँव का कोई व्यक्ति उस व्यक्ति से बात करता या उनसे खान-पान करता है तो उनको भी जुर्माना भरना पड़ता है । अगर छिलन किया व्यक्ति समाज के लोगों के पास जाकर आपनी गुनाह या अपराध स्वीकार करता है तो बैठक कर जात भितर किया जाता है ।

खड़िया समाज में किसी भी तरह गलती होने या गलत बात के लिए डोकलोय किया जाता है। गाँव में कोई भी मामला होता है तो उसमें दो पक्ष के लोग होते हैं और किसी भी प्रकार का मामला होता है तो समाज के दोनों पक्ष का बात को सुनते है। उस बात में सच और झूठ दोनों हो सकता है। इस झूठ से सच को निकालने के लिए डोकलोय का होना बहुत जरूरी होता है। क्योंकि डोकलोय के माध्यम से ही इस मामला का सही निर्णय किया जा सकता है। ये सब सामाजिक कार्यों को करने के लिए ही खड़िया जाति का अपना शासन का व्यवस्था है और इसी शासन-व्यवस्था से खड़िया समाज चलती है। इस शासन-व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए गाँव स्तर से खड़िया जाति में एक संगठन बना रहता है। इसी संगठन के माध्यम से समाज चलती है। गाँव स्नर के इस संगठन के प्रमुख को करटाहा कहते है। खड़िया जाति की सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था अभी भी जीवित है । खड़िया संगठन से खड़िया जाति के लोगों को विनाश होने से बचाया जा सकता है। खड़िया समाज के हर घर के लोग इस संगठन का सदस्य होते है। हमारी इस सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था को बचाकर रखना हम सभी लोगों का कर्त्ताव्य है।

1. करटाहा डोकलोय (गांव स्तरीय संगठन) (क) करटाहा (ख) संघ्रो करटाहा (ग) मोहता (घ) कोटवार
2. खुँट डोकलोय (पंचायत स्तरीय संगठन)
3. पहटा डोकलोय (प्रखण्ड स्तरीय संगठन)
4. परगाना डोकलोय (जिला स्तरीयसंगठन)
5. राईज महाडोकलोय (राज्य स्तरीय संगठन)

ये पाँच तरह के खड़िया पारम्परिक शासन-व्यवस्था के रूप-रेखा है। इसी के दिशा-निर्देश पर समाज चलती है। समाज के लोगों को इनका बनाया नियमों का पालन करना ही पड़ता है। अगर कोई इस नियमों का पालन नहीं करते हैं तो उनको समाज से छिलन किया जाता है। गाँवों में करटाहा समिति होती है जो इसका प्रभाव किसी एक गाँव में होती है। करटाहा संगठन हर गाँव बनी होती है।गाँवों का कानून व्यवस्था को करटाहा संगठन ही देखती है। करटाहा से उपर खुँट संगठन होती है जो कई गाँवों को मिलाकर बनती है। खुँट संगठन का प्रभाव कई गाँवों में होती है जो एक पंचायत के बराबर में होती है। खुँट से उपर पहटा डोकलोय संगठन होती है जो कई खुँट को मिलाकर बनती है । पहटा संगठन डोकलोय का प्रभाव कई खुँट में होती है जो एक प्रखण्ड के बराबर में होती है। पहटा से उपर परगना डोकलोय संगठन होती है जो कई परगना को मिलाकर बनती है। परगना डोकलोय संगठन का प्रभाव कई पहटा में होती है जो एक जिला के बराबर में होती है। परगना से उपर राईज महाडोकलोय संगठन होती है जो कई परगना को मिलाकर बनती है। राईज महडोकलोय संगठन का प्रभाव पूरे देश में होती है। यह खड़िया समाज का सबसे उपर है इसका निर्णय अंतिम होती है। राईज महाडोकलोय के निर्णय को सभी मानना ही पड़ता है।

1. करटाहा डोकलोय - करटाहा डोकलोय संगठन खड़िया शासन-व्यवस्था का सबसे नीचे गाँव स्तर में काम करता है। करटाहा ही खड़िया शासन-व्यवस्था के मूल कार्यो को करता है। करटाहा का उत्पति **'करकर**

* सहायक प्रोफेसर (खड़िया) जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, कार्तिक उराँव कॉलेज, गुमला (झारखण्ड) भारत

डा' से हुआ है जिसका खड़िया भाषा में अर्थ है, शुद्ध करना। यानि समाज से छिलन और बहिस्कृत लोगों को शुद्धिकरण कर समाज में पुन: रहने योग्य बनाता है। करटाहा जो भी बात कहता है वह साफ-साफ कहता है। करटाहा प्रत्येक गाँवों होती है इसका चयन उस गाँव के सभी गोत्र के कुटुम्बों के द्धारा होता है। करटाहा पद के लिए गाँव के किसी पुरुष कुटुम्ब को ही सर्वसहमति से चुना जाता है। करटाहा का कार्य क्षेत्र एक राजस्व ग्राम के अन्दर ही होता है। करटाहा डोकलोय संगठन का सदस्य खड़िया समाज के हर घर के पुरूष लोग होते हैं। इसका जो अगुवाईकर्ता करटाहा होता है। गाँव के सभी सदस्यों को करटाहा का कार्य में सहयोग करना होता है। खड़िया जाति के सदस्यों को संगठन में रखकर इसे आगे बढ़ाने की पूरा सहयोग करते हैं। हमारे समाज में करटाहा का पद प्राचीनकाल से है ।

(क) करटाहा – सभी गाँवों में एक करटाहा डोकलोय होती है। जिसका चयन उस गाँव के सभी पुरुष कुटुम्बों के द्धारा चयन किया जाता है। यह अपने कुटुम्बों में से किसी भी गोत्र का हरटाहा हो सकता है। यह गाँव का ईमानदार एवं सामाजिक रीति-रिवाजों का जानने वाला व्यक्ति होना चाहिए। करटाहा गाँव का प्रमुख व्यक्ति होता है। गाँव के जितने भी समस्याएँ होती है उस सब समस्या को करटाहा के बताना होता है। गाँव का सारा कानून इसी के हाथ में होता है। गाँव के प्रमुख होने के नाते इसे सबों की समस्या सुनना और उसको समाधान करना करटाहा को पड़ता है। कोई ऐसे भी आदमी होते हैं, जो सिर्फ अपनी स्वार्थ के लिए कार्य करते हैं, पर मौजा का जो बड़े होते हैं। उनको ईमानदारी से काम करने के लिए चुना जाता है। इसको किसी भी तरह का समाज के प्रति बुरा नहीं सोचना चाहिए। पूर्ण ईमानदारी के साथ कार्य करना चाहिए। करटाहा को समाज में बहुत लोगों की खरी-खटी बात भी सुनना पड़ता है। एक गाँव में जितने भी परिवार होते हैं और परिवार में जितने भी सदस्य होते हैं। सभी के सभी करटाहा के अधीन में होते हैं। सभी सदस्य उसका सम्मान करते हैं। गाँव के हर सदस्य को मिलाकर ही करटाहा समिति का निर्माण होता है। गाँव में बसने वाले प्रत्येक गोत्र के सभी परिवार के प्रधान करटाहा डोकलोय संगठन के अनिवार्य सदस्य होते हैं। इन सभी को मिलाकर ही करटाहा डोकलोय संगठन का निर्माण किया जाता है। सभी गाँवों में एक करटाहा होता है। इसका सहयोग के लिए एक संघ्रो करटाहा, एक महतो और एक कोटवार होता है। इसके साथ ही गाँव में जितने गोत्र के लोग कुटुम्ब होते हैं। करटाहा, संघ्रो करटाहा, मोहतो, कोटवार के गोत्र को छोड़ कर सभी इस समिति के सदस्य होते हैं।

समाज में करटाहा के कार्य – करटाहा के गाँवों के सबसे प्रमुख व्यक्ति होता है, समाज में किसी भी बैठक की अगुवाई करटाहा स्वयं करता है। खड़िया समाज में किसी भी प्रकार के नियम लागू हैं। खड़िया समाज के लोग प्राचीन काल से ही किसी भी बात के लिए एक साथ बैठकर ही सर्वसहमति से समस्या का समाधान करते आ रहे हैं और यही वर्तमान समाज में भी है। गाँव के सभी नियमों का पालन करना सभी सदस्यों का कर्त्तव्य है। समाज में रहने के नाते सामाजिक नियमों का पालन करना बहुत जरुरी होता है।

शासन-व्यवस्था सभी जाति समाज के लोगों का होता है। हम सभी मानवा जाति के लोग अपनी समाज का सही तरीका से चलाने के लिए इसका पालन करना ही होता है। खड़िया समाज के लोग भी अपनी शासन-व्यवस्था एक अंग होते हैं। करटाहा डोकलोय संगठन समाज में नि:स्वार्थ सेवा करता है। समाज के लोगों को सही मार्ग पर लेकर चलना ही उसका मुख्य उद्देश्य होता है। किसी परिवार के लोगों को सामाजिक रीति-रिवाज तोड़ने पर कुटुम्ब समाज से छिलान करता है तो उनको उद्धार या शुद्धिकरण के बाद ही समाज में पुन: शामिल किया जाता है। गाँव के जितने लोग गलती करते हैं। सभी गलतियों का समाधान करटाहा तथा गाँवों के सभी सदस्यों के द्धारा ही किया जाता है। करटाहा अपनी मर्जी से किसी भी ममाला का फैसला अकेले नहीं कर सकता है। करटाहा सभी लोगों को बैठक में बुलाकर इसका करवाई सबके सामने करता है। बैठक में गाँव के सभी सदस्यों को बैठक आना पड़ता है। बैठक में ही सबके सामने किसी अपराध के खिलाफ सजा या माफी का फरमान करटाहा सुनाता है। गाँवों का शासन-व्यवस्था सभी लोगों के राय से ही चलती है।

(ख) संघ्रो करटाहा – गाँव में करटाहा का एक सहयोगी होता है उसे संघ्रो करटाहा कहते हैं। संघ्रो करटाहा गाँव का दूसरा प्रमुख और सम्मानित व्यक्ति होता है। करटाहा की अनुपस्थिति में संघ्रो करटाहा ही डोकलोय का संचालन करता है। करटाहा के नहीं रहने पर संघ्रो करटाहा का अधिकार है कि किसी परिवार के लोगों को सामाजिक रीति-रिवाज तोड़ने पर कुटुम्ब के लोग समाज से छिलान कर दिया है तो उनलोगों का उद्धार या शुद्धिकरण कर समाज में पुन: शामिल करना संघ्रो करटाहा का काम है । गाँव के जितने लोग गलती करते हैं।गाँव के लोगों की गलतियों का समाधान संघ्रो करटाहा तथा गाँवों के सभी सदस्यों के द्धारा ही किया जाता है। संघ्रो करटाहा, करटाहा के सारे क्रियाकलापों में सहयोग करता है। करटाहा के जितने भी कार्य होते हैं। उस कार्यो में संघ्रो करटाहा का आवश्यक रूप से सहयोग रहता है। करटाहा और संघ्रो करटाहा दोनों साथ मिलकर ही गाँव के सामाजिक कानून-व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाते हैं।

(ग) मोहतो – खड़िया सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था के करटाहा डोकलोय में मोहतो का भी एक पद है। एक गाँव में मोहतो का रहना आवश्यक है। गाँव में करटाहा डोकलोय की बैठक होने की जानकारी लोगों तक मोहतो ही पहुँचाता है। खड़िया सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था के करटाहा डोकलोय की बैठक गुरूवार दिन को ही होती थी। गुरूवार दिन को खड़िया भाषा में महातोय कहते हैं। इसी महातोय दिन से ही इनका नाम मोहतो पड़ा है। खड़िया समाज के लोग गुरूवार को बहुत पवित्र दिन मानते हैं। इसी कारण खड़िया समाज के लोग बैठक कर समाज के विकास के लिए विचार-विमर्श करते हैं। इस दिन खड़िया समाज के लोग किसी तरह का कोई काम नहीं करते हैं। इसलिए बैठक भी महातोय यानि गुरूवार में ही होता था। चूँकि उस दिन खड़िया लोग हल नहीं चलाते हैं। खड़िया सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था के करटाहा डोकलोय के मोहतो समाज के लोगों को सूचना देने का काम करता है। मोहतो टोला-टोला घुम-घुम कर लोगों को बैठक के लिए सूचित किया करता था। वह खड़िया भाषा में कहता था-**'महातोय ते डोकलो' आयि'ज् लेई झाड़ी लेबू डोकलो' ते डामनापे'** अर्थात गुरूवार को बैठक है, आप सभी लोगों का इस बैठक में आना है ।

मोहतो को कार्य – खड़िया सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था के करटाहा डोकलोय में समाज की सभी बातों की सूचना मोहतो के द्धारा ही लोगों दिया जाता है। गाँव में बैठक का आयोजन मोहतो के कहने पर ही लोग आते थे। मोहतो का प्रमुख कार्य बैठक स्थल तक गाँव के लोगों को आने के लिए सूचना देना। संघ्रो करटाहा महातो को गाँवों में लोगों को सूचित करने का आदेश देता है। उसके बाद ही मोहतो गांव-गांव घूम-घुम कर बैठक की सूचना सभी लोगों को देता है। सूचना पाने के बाद सभी लोग बैठक में आते हैं, यह परम्परा प्राचीन काल से ही चलते आ रही है। वर्तमान में भी खड़िया सामाजिक पारम्परिक कानून-व्यवस्था के करटाहा डोकलोय उसका सूचना मोहतो की गाँव के हर सदस्य को देता है। जैसे किसी का घर

में परिवारिक विवाद हो या फिर कुछ भी बात तो उसका सूचना सबसे पहले तो करटाहा के पास ही जाता है, फिर करटाहा संघ्रो करटाहा को सूचित करता है।

(घ) कोटवार – खड़िया सामाजिक पारम्परिक कानून व्यवस्था के करटाहा डोकलोय में एक कोटवार होता है। यह करटाहा डोकलोय का सबसे छोटा पद है परन्तु यह भी आपने जगह महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कोटवार का चुनाव गाँव के लोग ही किसी ईमानदार व्यक्ति को सभी के सहमति से चुना जाता है। इसके लिए एक बैठक होता है और उसी बैठक में गाँव के समस्त सदस्यों के द्वारा उनका चुनाव किया जाता है। जब कोई व्यक्ति बैठक में नहीं आता है और बैठक विशेष कर उसी के लिए बैठा हो तो उसे बैठक स्थल तक आने का आदेश करटाहा देता है। तब कोटवार उस व्यक्ति को बुलाने लकड़ी का बना मुगरा लेकर उसे पकड़कर लाने जाता है। इस लकड़ी के मुगर को खड़िया भाषा में कोटला कहते हैं । इसी कोटला के नाम से वह कोटवार कहलाने लगा। जब भी कोटवार किसी व्यक्ति को बुलाने के लिए जाता है तो अपने साथ लकड़ी का बना कोटला लेकर ही जाता है। इस बड़ा मुगर या कोटला लेकर जाने के कारण ही इसका नाम कोटला से कोटवार हो गया।

निष्कर्ष – खड़िया सामाजिक पारम्परिक कानून–व्यवस्था के करटाहा डोकलोय में कोटवार करटाहा के आदेश पर किसी भी व्यक्ति को बुलाने या पकड़ कर बैठक में हाजिर करता है। कोटवार अपने कोटला को लेकर ही जाता है लकड़ी का बना मोटा कोटला देखकर अपराध किया व्यक्ति बैठक स्थान में जाने को राजी हो जाता है। ऐसी घटना लड़का–लड़की का मामला में गाँवों देखने को मिलता है। गाँव में इस तरह के बहुत से घटना होती है । जिसमें व्यक्ति गलती करने के बाद भी वह अपने आप को दोषी मानने से इन्कार करता है और वह बैठक में उपस्थित नहीं होता है। ऐसे स्थिति में कोटवार उस व्यक्ति को खोज कर बैठक स्थान में हाजिर करना कोटवार का काम है। कोटवार का मुख्य रूप से यही काम के लिए ही चुना होता है। कोटवार को सबसे ज्यादा परेशानी झेलना पड़ता है, क्योंकि कभी–कभी कोटवार को गाली भी सुनने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डुँगडुँग, डॉ. जोवाकिम : खड़िया जीवन और परम्पराएँ : 1999 कैथोलिक प्रेस राँची ।
2. शर्मा,तारा,डॉ. – खरिया जनजीवन: 2007, के.के.पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. सिंकु,बीर सिंह –झारखण्ड में आदिवासियों की पारम्परिक स्वशासन व्यवस्था: 1998, 'बिरसा' बिन्दराय इन्स्टीच्यूट फॉर रिसर्च, स्टडी एण्ड एक्शन चाईबासा, झारखण्ड

व्यक्तिगत साक्षात्कार :-

1. प्रो. फ्रांसिस कुल्लू, गोसस्नेर कॉलेज सिमडेगा,तिथि– 01.08.16
2. निकोलस किड़ो,बीरू परगना डोकलोय सोहोर, तिथि– 15.07.16
3. मुचुंग पहान,ग्राम–किनीरकेला,थाना–बसिया,गुमला, तिथि– 12.04.16
4. गंगा राम खड़िया, ग्राम–टेंगरिया कोरकोटोली,पालकोट, तिथि– 06.02.15
5. डॉ. सुशील केरकेट्टा, अध्यक्ष– खड़िया साहित्य समिति, राँची।
6. खड़िया समाज के अनेकों बुद्धिजीवी ।

****

Problems of Population Education in India and their Remedies

Prof. Krishna Kant Sharma*

Abstract - The problems of population growth were first of all perceived by T.R. Malthus an English missionary in 18th century. In 1962, Prof. Viederman, S. Thomas and Prof. Philip. M. Hauser al Columbia University emphasized on the inclusion of population education in school curriculum. In 1964 Prof. Sloan R. Wayland of the Teacher Education Department, Columbia University coined the term 'Population education' and prepared its content material. In 1970 a regional workshop on 'Population and Family Life Education' was convened in Bangkok by UNESCO. After 1970, a serious thought over population education began in almost all the countries of the world, including India. In this paper Problem of the Subject Matter of Population Education, Problem of When to Start Population Education, Problem of How to Impart Population Education and their remedies have been discussed in brief.
Key Words - Population Education, Family Life Education, Family Planning.

Introduction - Population growth is a natural phenomenon. There was a time when population of the world was very less and the growth of population was necessary for us. The present situation is that the population in the world is growing at an alarming rate. It has created many problems before us. These problems were first of all perceived by T.R. Malthus an English missionary in 18th century. He published a book entitled 'An Essay on the Principles of population' in which he presented his ideas and views related to population growth. Encouraged by Malthus, economists began to study this problem minutely and reached at the conclusion that from the view- natural resources and production the growth of population to a certain extent is necessary, but after that it becomes dangerous. Politicians and educational organisers, in the 6th decade of 20th century felt the need that children should be made aware about the causes of population growth and its evil consequences and they should develop the attitude towards population control, right from the beginning. In 1962, Prof. Viederman, S. Thomas and Prof. Philip. M. Hauser al Columbia University emphasized on the inclusion of population education in school curriculum. In 1964 Prof. Sloan R. Wayland of the Teacher Education Department, Columbia University coined the term 'Population education' and prepared its content material. In 1970 a regional workshop on 'Population and Family Life Education' was convened in Bangkok by UNESCO. In this workshop the aims of population education were decided, the framework of its curriculum and strategy for its expansion were prepared. In this workshop the population education was defined in the following way- Population education is an educational programme which provides for a study of the population situation of the family, community, nation and work, with the purpose of developing in the students rational and responsible attitudes and behavior towards that situation. (The Asian Regional Workshop an Population and Family Life Education.—Bangkok, 1970).

After 1970, a serious thought over population education began in almost all the countries of the world, including India. Next to China, India is the most populous country of the world. The magnitude of the problem and the urgency to gauge its seriousness are perhaps nowhere so pressing as they are in India which alone accounts for about 17.5% of the world's population with no more than 2.4% of the total land area of the world. on the bases of the aims which have been decided for population education and the curriculum which has been prepared for it, in our country, population education should be defined as follows :

Population education is an education by which the children, youths and adults, all are made aware about the causes of population growth and its evil consequences, and at the same time an attitude is developed among them towards population control, increase in production and limited use of natural resources and thereby they are prepared to control the population.

Population education may thus be seen as the development of proper attitude towards population problems and the capacity to take rational decision in this regard.

Problems and Remedies - The condition of population explosion is highly alarming in India and population education is very necessary here. But the scholars are not unanimous about what should be the subject-matter of this education, when should this education be imparted and how should it be imparted. These are the major problems of population education in India.

Problem of the Subject Matter of Population Education

*Dean (Education) University of Kota and Principal, Bhagwati P.G.T.T.College, Gangapur City (Raj.) INDIA

- Although NCERT has prepared a detailed curriculum of population education in India and the Central and the State Governments have added it in school subjects- language, geography, history, civics, economics and biology and at the same time it has been added to the adult education programmes. But the educationists are not yet unanimous that whether population education should be imparted as a separate subject or as a part of other subjects and at the same time what should be its subject-matter at the different levels of education. The inclusion of sex education in population education is opposed by the populace themselves in India. The reasons of this problem are as follow- (1) The curriculum of population education prepared by NCERT is very extensive. (2) This curriculum has no relation with the children in the age group 6 to 14 years at the primary level. (3) The curriculum at the secondary level is already very extensive. (4) In our country it is not considered proper to impart sex education.

Remedy of the Problems :

1. There should be no curriculum of population education at the primary level.
2. Its curriculum should be limited at the secondary level and it should be taught as a part of economics. There should be a separate chapter on population in the text-books of economics wherein knowledge of the area, natural resources and population of India in comparison to the area, natural resources and population of the world and the knowledge of the evil consequences of rapid population growth and the measures of population control should be imparted.
3. In higher education it should be taught as a specialised subject as option, and not in the form of compulsory subject and an extensive curriculum should be prepared for it.
4. A general information of it should be provided in adult education and adults should be prepared for population control.

Problem of When to Start Population Education - Some scholars believe that the development of proper attitude towards life is affected more easily in childhood stage therefore efforts for the development of attitude towards population control should begin from the primary level of education. On the other hand, there are some scholars who do not want to burden the children with future anxiety. Some are even against making it as a part of school education; they believe that mass consciousness should be awakened through the means of mass communication. The causes of this problem are as follows—

1. Scholars of the first category fail to differentiate between value and attitude and they do not cogitate that which type of material will the children in the age group 6-14 years be able to understand.
2. Scholars of the second category forget that the objective of secondary education is to prepare children for future life. They may be made aware about the future problems of life, in fact they must be made aware about it.

Remedy of the Problems :

1. Children in the age group 6-14 years at the primary level neither have any relation with the subject-matter related to population education nor they are able to understand the subject-matter. It also hampers their normal growth by burdening them with future anxiety, Population education therefore should not be started at this level.
2. The main aim of secondary education is to prepare children for the forthcoming life. Moreover, children, at this level, become capable of understanding the subject-matter related to population education. Therefore, this education should be started at this level.
3. At present, adult education means education of the illiterates in the age group 15-35 years or the education of those who leave their primary education in between. By providing them general information related to population education they should be prepared for population control.
4. This subject is basically related to mature citizens, therefore this education should certainly be provided to them.

Problem of How to Impart Population Education - Scholars are even divided over how to impart population education. N.C.E.R.T. has developed teaching methods for this subject and also imparts their knowledge and training from time to time. The causes of this problem are as follow-

1. Some people, specially politicians place every problem on the shoulder of education and their supporters and so called educationists prepare its complete plan and work method. And all these are done more on the idealistic plane and less on realistic ground.
2. Some scholars have even tried to establish their reputation falsely by developing the teaching methods of population education.

Remedy of the Problems :

1. At the secondary level it should be taught as a topic of economics and should be taught in the same way as economics. There is no need of developing any new method separately for it.
2. We do support its inclusion in the adult education programme. Many good methods have been developed for adult education; therefore same methods should be used to impart population education to the adults.
3. Everyone, be it school goers, illiterate or educated adults, do watch television; literate children, youths and adults even read newspapers also. Therefore, population education must be imparted through these mediums. It is a matter of great elation that our telecommunication department is doing this work. The only thing now needed is to make population education an essential part of the educational channel.
4. In the field of education many slogans are popular at present—value education, environmental education,

population education and education for national integration etc. They should be regarded as an essential part of life and they should be conjointly developed with life.

Conclusion - There is no doubt that education is the basis of social change, but for some social changes, social and political revolutions are more important than education. Population control is not an idea but an action, for this social and political revolutions are more important than education, and the best means for this is the medium of mass communication- poster, pamphlet, letters, magazines, radio and television. Although we do favor to add a chapter on population education in economics at the secondary education level and to impart this education compulsorily in adult education, but it will only create awareness among them, for its implementation and to make it a practical reality, social and political revolutions are now necessary. The second request in this - context is that superficial knowledge will do no benefit; the need of the hour is to legislate law regarding family planning and to implement it strictly. When the top politicians, sitting at the helm of power, fail to think in terms of national interest, it is delusion to expect the common people to think for the nation. The need of the hour is to cast aside the polities of vote and think in terms of national interest. Those who indulge in politics of vote give logic that no idea can be imposed forcibly in democracy and there is direction in the Constitution to safeguard the interests of scheduled castes, scheduled tribes and minorities, is something hard to swallow. Is it against democracy to provide education forcibly to everyone! Is it against democracy to forcibly look after the health of everyone! If not, then how compulsory family planning, for the happy life of everyone, is against democracy. Irrespective of the type of governance, the politicians should think for the interests of people. In family planning lies the interests of people, therefore it should be observed and followed not only in India but in the whole world.

References :-

1. Lal,R.B. and Sharma, K.K. (2012). Bhartiya Shiksha Ka Itihas ,Vikas evam Samasyaye. Merrut, R.Lal
2. UNESCO (1988).Family Life Education. Bangkok,UNESCO Principal Regional Office for Asia and the Pacific
3. UNPF (1978) Population Education: A Contemporary Concern. Paris,UNESCO

****

कृषि में उन्नत बीजों के उपयोग का एक अध्ययन (जबलपुर जिले के संदर्भ में)

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा* सपना पाण्डे**

शोध सारांश – कृषि की उत्पादकता केवल भूमि की जोत पर ही नही होती अपितु अन्य कारक जिनमें भूमि, सिंचाई, उर्वरक, कीटनाशक, पूंजीगत संसाधन तथा उन्नत बीज के उपयोग पर भी निर्भर होती है। उन्नत बीजों के उपयोग में कृषक का शिक्षित दृष्टिकोण भी महत्वपूर्ण होता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में कृषक, जोत एवं समुदाय वर्ग में उन्नत बीज के उपयोग के बीच अंर्तसंबंध को जानने का प्रयास किया गया है। यह शोध पूर्णत: प्राथमिक समंक पर आधारित है। समंक प्राप्ति के लिए जबलपुर जिले से चयनित 37 ग्रामों के 571 कृषक परिवारों से प्रश्नावली, साक्षात्कार के आधार पर समंको को एकत्रित किया गया है। समंको के विश्लेषण में उन्नत बीजों के उपयोग से कृषि उत्पादन पर पड़ने वाले प्रभाव को जानने का प्रयास किया गया है, साथ ही कृषकों की उन्नत बीज तक पहुंच तथा उन्नत बीज के उपयोग से संबंधित समस्याओं को पहचानकर उनके उपाय बतलाने के प्रयास को शोध अध्ययन का उद्देश्य बनाया गया है।

प्रस्तावना – भारतीय कृषि में खाद्यान्न उत्पादन में उन्नत बीज के उपयोग से एक बड़ा परिवर्तन देखने को मिल रहा है। इस कारण भारतीय कृषि में जैव तकनीक का उपयोग भी बड़ा है। जिसमें अच्छे बीज से तात्पर्य विपुल उत्पादन (High Variety Of Seeds) से उन्नत बीजों के सफलता पूर्वक प्रयोग व अपेक्षित परिणाम के लिए न्याय संगत संयोजन – रसायनिक उर्वरक, कीटनाशकों का छिड़काव, सिंचाई के पर्याप्त संसाधन तथा अन्य कृषि आवश्यकता की पूर्ति के लिए आवश्यक है। फोर्ड फाउन्डेशन समिति (1959) के सुझाव से प्रेरित होकर भारत सरकार ने 'गहन कृषि जिला कार्यक्रम' शुरू किया। यह गहन कृषि जिला कार्यक्रम (IADP, Intensive Agricultural District Programme) का उद्देश्य अधिक उत्पादन देने वाले बीजों को अपनाकर कृषि उत्पादन में वृद्धि करना था। इस कार्यक्रम में प्रदर्शन के द्वारा खाद्य उत्पादन को बढ़ाने के लिए कृषकों को प्रोत्साहित करना, खेतों में सुधार के लिए आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराना, साख, बीज, खाद्, दवा का उपयोग एवं सिंचाई संसाधनों को बढ़ाने का प्रयास कृषकों की उन्नति के लिए विभिन्न पैकेज के माध्यम से साख तथा प्रत्येक कृषक को उसकी भूमि पर फसल उत्पादन में सहायता करना आदि शामिल है। भारत में हरितक्रांति की धारा प्रवाहित रखने के लिए उन्नत बीज की गुणवत्ता का बनाये रखना एक प्रमुख कुंजी है, जिसके अन्तर्गत पांच प्रमुख खाद्यान्न फसलें– गेहूं, चावल, मक्का, ज्वार एवं बाजरा है। इन बीजों की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए कृषि वैज्ञानिकों ने निम्नानुसार सुझाव दिये हैं–

1. कृषि उपज में वृद्धि के लिए उन्नत बीज के प्रयोग के साथ प्रति इकाई उच्च उर्वरक का उपयोग भी महत्वपूर्ण है।
2. धान के बीज का चुनाव सिंचित व सूखी कृषि भूमि को ध्यान में रखकर अक्षांशीय आधार पर करना चाहिए।
3. कृषि में फसल चक्रण तथा भूमि का मृदा परीक्षण करवा कर उसमें उपलब्ध तत्वों के आधार पर उपयुक्त फसल का ही उत्पादन करना चाहिए।
4. उन्नत बीज में तुलनात्मक रूप से स्वदेशी किस्म के बीज से दो से चार गुना अधिक उपज प्राप्त होना चाहिए।

उच्च उपज किस्म के बीज का उपयोग स्थानीय कारकों पर निर्भर होता है। कृषकों द्वारा उन्नत बीज को अपनाना और उच्च परिणाम प्राप्त करना उसके भौतिक पर्यावरण से संबंधो पर निर्भर होता है। पर्यावरणीय तत्वों में विशेषकर जलवायु महत्वपूर्ण कारक है, क्योकि जलवायु से ही मिट्टी का निर्माण और भूमि का स्वभाव बनता है। जैसे रोजगार के लिए पूंजी और तकनीकी ज्ञान दोनो आवश्यक होता है, उसी तरह उन्नत बीज उपयोग के लिए अनुकूल शैक्षणिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति आवश्यक होती हैं। इन्हीं पूर्व निर्धारित स्थिति को ध्यान में रखकर जिले के कृषकों से प्रश्नावली साक्षात्कार के माध्यम से कृषक परिवारों से जानकारी एकत्रित की गई हैं।

उद्देश्य – जिले की कृषि में उन्नत बीज के उपयोग का कृषक जोत एवं सामाजिक परिस्थितियों के परिपेक्ष्य में मूल्यांकन करना है, ताकि क्षेत्र में उन्नत बीज के प्रयोग में आने वाली संबंधित समस्याओं की पहचान कर, उनका समाधान करने के प्रयास किये जा सके तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि के उपायों को सारांशित रूप में दर्शाया जा सके।

जोत आकार व उन्नत बीज का उपयोग – प्रस्तुत शोध अध्ययन पूर्णत: प्राथमिक समंको पर आधारित है। समंक में कृषकों के सामाजिक व जोत कारकों को समावेश किया गया है। प्राथमिक समंको की प्राप्ति के लिए जिले के 37 ग्रामों से 571 कृषक जोतकारों से सूचनाओं को एकत्रित किया गया है।

यह एक आम धारणा है कि जोत आकार व उन्नत बीज में धनात्मक संबंध होता है। जोतकारों में उन्नत बीज की उपयोगिता को जानने के लिए जोतानुसार– 70 सीमांत जोत, 142 लघु जोत, 144 मध्यम, 138 अर्द्ध मध्यम तथा 76 वृहद जोत के कृषक परिवार को शामिल किया गया, उनसे

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय हमीदिया कॉलेज, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्राप्त जानकारी निम्न सारणी के रूप में प्रस्तुत किया गया है -

तालिका 1 - (देखे अगले पृष्ठ पर)

सर्वेक्षित क्षेत्र के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उन्नत बीज का संबंध जोत आकार से है। क्षेत्र में उन्नत बीजों का उपयोग 47.28 प्रतिशत कृषक करते है। यह द्वितीयक आंकड़ों से अधिक है। जोत का आकार जितना बड़ा होगा उन्नत बीज का प्रयोग भी उतना अधिक होता है। उन्नत बीज का प्रयोग कुल फसल क्षेत्रफल के 62.80 प्रतिशत भाग में करते है। सीमांत क्षेत्र के कृषक केवल 15.19 प्रतिशत भाग में प्रयोग करते हैं। जोत और उन्नत बीज के बीच अनुकूल संबंध है। अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि उन्नत बीज उपयोग करने वालों में मध्यम तथा बड़े कृषकों की संख्या अधिक है। इसका मुख्य कारण यह है कि सर्वेक्षित क्षेत्र में मध्यम तथा बड़े कृषकों की वित्तीय स्थिति अच्छी हैं, साथ ही उनका सामाजिक स्तर उंचा हैं। इन कृषक को नवीन तकनीक अपनाने के लिए निवेश हेतु ऋण की राशि निजी, सरकारी एवं सहकारी बैंको से आसानी से प्राप्त हो जाता है। वहीं लघु एवं सीमांत कृषकों को ऋण लेना आसान नही होता है एवं इस वर्ग के कृषकों में तकनीकी ज्ञान का भी अभाव होता है।

कृषकों की शिक्षा व उन्नत बीज का प्रयोग - एक सामान्य सोच के अनुसार कृषि में आधुनिक तकनीक को अपनाने के लिए कृषक का शिक्षित होना आवश्यक होता है। विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षित क्षेत्र में उन्नत बीज का उपयोग करने वालों में अधिकांश संख्या शिक्षित लोगों की हैं, जो सारणी के द्वारा दर्शाया गया है -

तालिका 2 - (देखे अगले पृष्ठ पर)

अध्ययन से ज्ञात होता है कि साक्षरता और उन्नत बीज उपयोग का सीधा संबंध कृषक की सामाजिक स्थिति से है। विश्लेषण से मालूम होता है कि उन्नत बीज उपयोग करने वालों में सबसे कम साक्षरता 20.0 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति समुदाय में है, जिनमें केवल 8.19 प्रतिशत कृषक ही उन्नत बीज का उपयोग करते है। सामान्य समुदाय वर्ग के कृषक में साक्षरता 85.38 प्रतिशत है जिनमें से 78.78 प्रतिशत कृषक उन्नत बीज का उपयोग करते है। ये समुदाय कुल फसल क्षेत्र का 71.95 प्रतिशत भाग में उन्नत बीज बोते है। पिछड़े वर्ग समुदाय में उन्नत बीज का उपयोग 68.74 प्रतिशत क्षेत्र में होता हैं। अनुसूचित जनजाति के 7.08 प्रतिशत और अनुसूचित जाति के 44.09 प्रतिशत कृषक उन्नत बीज का उपयोग करते है। ये कृषक तुलनात्मक रूप से कम क्षेत्र में उन्नत बीज का प्रयोग करते है। बड़ी और मध्यम जोत वर्ग में कृषक उन्नत बीज का उपयोग करते समय वैज्ञानिक ज्ञान का भी उपयोग करते है। सर्वेक्षित क्षेत्र में गेहूं फसल के अंतर्गत उन्नत बीज का उपयोग अधिक है।

उन्नत बीज प्राप्ति के स्त्रोत - उन्नत बीज का उपयोग हमेशा उनकी उपलब्धता (पूर्ति) पर निर्भर होता है। उन्नत बीज के प्राप्ति स्त्रोत में शासकीय योजनाएं, वितरण कार्यक्रम तथा कृषकों का सामाजिक समन्वय बहुत महत्वपूर्ण होता है। बीज के उपयोग में - साख, योग्यता, समय पर और सहज उपलब्धता आवश्यक है। अधिकांश कृषक उन्नत बीज का उपयोग स्वयं के बीज में सुधार कर एवं धनी साथी कृषकों से उधार लेकर उपयोग करते है। कृषि में प्रयोग किए जाने वाले बीज की कीमत तथा उसका बाजार मूल्य भी महत्वपूर्ण होता है।

तालिका 3 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

अध्ययन से ज्ञात होता है कि बीज के उपयोग में वृद्धि जोत अनुसार देखने को मिलती है। क्षेत्र में सीमांत कृषक 45.46 प्रतिशत बड़े कृषकों से बीज उधार पर निर्भर है उन्हे बीज का दुगना मूल्य (1 बोरे के बदले 2 बोरे) चुकाना पड़ता है। सीमांत, लघु, मध्यम तथा अर्द्ध मध्यम चारों प्रकार के कृषक व्यापारी व साथी कृषक पर ही बीज के लिए निर्भर रहते है। क्षेत्र में 44.73 प्रतिशत बड़े कृषक ही सहकारी समितियां और शासकीय ऐजेंसी से बीज प्राप्त करते है। केवल 18.1 प्रतिशत सीमांत कृषक समितियां और शासकीय एजेंसी से बीज प्राप्त करने में सफल होते है।

जिले में उन्नत बीज के प्रति कृषकों की प्रतिक्रिया - उन्नत बीज के उपयोग में उर्वरक और सिंचाई की व्यवस्था कितनी आवश्यक है ? और उसमें कृषकों की प्रतिक्रिया कैसी है ? इसके विश्लेषण हेतु प्राप्त समंक तालिका में प्रस्तुत है -

तालिका 4 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विश्लेषण से ज्ञात होता है कि जिले के 2.60 प्रतिशत कृषक परिवार उन्नत बीज के साथ उर्वरक का उपयोग नहीं करते है। जिले के 3.33 प्रतिशत कृषक परिवार उन्नत बीज को बोते समय सिंचाई को आवश्यक नहीं मानते है। कुल कृषक परिवार में 97.80 प्रतिशत कृषक उन्नत बीज में सिंचाई को आवश्यक मानते है। जिले में सिंचाई सुविधा सीमित है।

उन्नत बीज का उपयोग जोत वर्गो में भिन्न-भिन्न है, उन्नत बीज का उपयोग बड़ी जोत के कृषक अधिक करते है। सीमांत कृषकों के साथ जोखिम अधिक होती है, कृषक उन्नत बीज के साथ उर्वरक का उपयोग नही कर पाते है। विश्लेषण में मालूम होता है कि सीमांत कृषक (63.3) उन्नत बीज के उपयोग को लाभदायक मानते है, जिनमें 81.8 प्रतिशत कृषक उन्नत बीज के साथ उर्वरक उपयोग को आवश्यक मानते है और 72.7 प्रतिशत कृषक उन्नत बीज का उपयोग सिंचाई क्षेत्र में ही करना आवश्यक समझते है।

निष्कर्ष :

1. लघु एवं सीमांत जोत कृषक को ऋण लेना आसान नही होता है इन कृषकों के पास उच्च कोटि के तकनीकी ज्ञान का भी अभाव होता है।
2. सीमांत व लघु कृषकों की अपेक्षा बड़े एवं मध्यम जोत के कृषक उन्नत बीज का प्रयोग अधिक करते है इसका मुख्य कारण है कि क्षेत्र में मध्यम तथा बडे कृषकों की वित्तीय स्थिति अच्छी है तथा उनका सामाजिक स्तर भी ऊंचा है।
3. बड़े एवं मध्यम कृषक की वित्तीय साख अच्छी होने के कारण निजी, सहकारी तथा सरकारी बैंको से कृषि में नवीन तकनीक को अपनाने के लिए निवेश राशि ऋण के रूप में आसानी से प्राप्त कर लेते है।
4. सर्वेक्षित क्षेत्र में मध्यम और बड़ी जोत के कृषक अधिक साक्षर है, इसलिए वे उन्नत बीज का उपयोग भी अधिक करते है लेकिन सीमांत व लघु कृषकों में साक्षरता का स्तर बहुत कम है अर्थात- वे उतने शिक्षित नहीं है कि उन्नत बीज का उपयोग अच्छे प्रभावी ढंग़ से कर सकें। अत: वे उन्नत बीज का कम उपयोग करते हैं।
5. जिलें में जोत अनुसार बीज के उपयोग में वृद्धि मिलती है। सर्वेक्षित क्षेत्र में सीमांत एवं लघु कृषक बड़े कृषकों से बीज उधार लेकर उपयोग करते है, अर्थात क्षेत्र में सीमांत व लघु कृषक उधार पर निर्भर है। उन्हे बीज का दुगना मूल्य चुकाना पड़ता है। बड़े व मध्यम कृषक ही शासकीय तथा सहकारी संस्थाओं से उन्नत बीज प्राप्त कर पाते है।

सुझाव - उपर्युक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि जातीय संरचना, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, राजनीतिक नीति ग्रामीण क्षेत्र में उन्नत बीज के उपयोग में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। उन्नत बीज के उपयोग में कृषक की योग्यता महत्वपूर्ण होती है। जिले के सीमांत और लघु कृषक जो मुख्यत: अनुसूचित

जाति और अनुसूचित जनजाति के है, वे कृषक कम शिक्षित हैं। अत: उन्हे जागरूकता एवं प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है साथ ही उनकी आर्थिक परिस्थितियों में सुधार करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Barker, Randolph and Mangahas, Mahar, 1971, "Environmental and Other Factors Influencing the Performance of New High Yielding Varieties of Wheat and Rice in Asia", Polices, planning and Management for agricultural development. oxford, institute.
2. Bhalla, G.S., 1974 "changing agrarian structure in india : a study of the impact of green revolution in haryana."Meenakshi Prakashan, delhi.
3. Chourasia R.P and Singh, V.N., 1972, "Economics of local and HYV of paddy and wheat in panagar village of m.p. "Indian journal of agricultural economics.
4. Kumar, G. 1999, spatial variability in croup yields: the case of cereals across districts of Aandhra Pradesh.
5. Mishra, G.S., 1970 green revolution in mp - study of HYV programmer in raipur district as referred in B.N.Sinha, 1975 modernization of India agriculture.
6. Sharma, s.k. 1992 a, "environment and adoption of high yielding variety of seeds in M.P." pp 107-119 in Noor Mohammad, ed. new dimensions in Agricultural Geography.
7. Sharma S.K. 2003 Agricultural innovations and their impact on agricultural productivity in M.P., the deccan geographer.
8. Sinha B.N. 1975 "modernization of India agriculture; high yielding varieties and green revolution', research bulletin no.1 eastern geographical society Bhubaneshwar.

तालिका 1 : चयनित कृषकों में जोतानुसार उन्नत बीज का उपयोग

जोत वर्ग	कृषकों में उन्नत बीज का उपयोग				उन्नत बीज के अंतर्गत क्षेत्र	
	संख्या	प्रतिशत	शिक्षित	प्रतिशत	हेक्टेयर	प्रतिशत
सीमांत	11	15.71	05	45.45	7.40	15.19
लघु	41	28.67	21	51.21	53.25	27.76
अर्द्ध मध्यम	53	36.80	34	64.15	137.81	37.39
मध्यम	89	64.49	71	79.77	552.99	67.67
वृहद	76	100.0	65	85.52	1887.79	96.00
समस्त	270	47.28	195	72.22	2639.24	62.80

स्त्रोत चयनित ग्रामों में 571 कृषक परिवारों से साक्षात्कार प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त

तालिका 2 : चयनित कृषकों में समुदायानुसार शिक्षा एवं उन्नत बीज का प्रयोग

समुदाय	उन्नत बीज का उपयोग करने वाले		शिक्षित		उन्नत बीज के अंतर्गत क्षेत्र	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	हेक्टेयर	प्रतिशत
अनु.जनजाति	10	8.19	2	20.00	26.24	7.08
अनु.जाति	41	36.93	31	75.60	182.80	44.09
पिछड़ा वर्ग	89	51.44	51	57.30	629.86	68.74
सामान्य	130	78.78	111	85.38	1799.64	71.95
समस्त	270	47.28	195	72.22	2639.24	62.80

स्त्रोत चयनित ग्रामों में 571 कृषक परिवारों से साक्षात्कार प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त

तालिका 3 : चयनित कृषकों में जोतानुसार उन्नत बीज प्राप्ति के स्त्रोत

जोतवर्ग	स्वयं के पास		साथी कृषक से		सहकारी समिती से		शासकीय विभाग से		व्यापारी से		अन्य स्त्रोंत		कुल कृषक	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
सीमांत	0	0	5	45.4	2	18.1	0	0	4	36.3	0	0	11	100
लघु	0	0	18	43.9	12	29.2	1	2.44	10	24.3	0	0	41	100
अर्द्ध मध्यम	0	0	23	43.4	16	30.1	4	7.55	10	18.8	0	0	53	100
मध्यम	0	0	14	15.7	39	43.8	12	13.4	23	25.8	1	1.2	89	100
बड़े	06	7.9	05	6.5	34	44.7	12	15.7	19	25.0	0	0	0	100
समस्त	06	2.2	65	24.0	103	38.1	29	10.7	66	24.4	1	03	270	100

स्त्रोत चयनित ग्रामों में 571 कृषक परिवारों से साक्षात्कार प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त

तालिका 4 : उन्नत बीज में सिंचाई और उर्वरक उपयोग में कृषकों का अभिमत

जोत का आकार		उन्नत बीज का उपयोग			उर्वरक का उपयोग		सिंचाई क्षेत्र में उन्नत बीज का उपयोग		क्या सिंचाई आवश्यक है ?	
		लाभ दायक	हानि कारक	कोई प्रभाव नही	हां	नहीं	हां	नहीं	हां	नहीं
सीमांत	संख्या	7	3	1	9	2	8	3	9	2
	प्रतिशत	63.6	27.2	9.1	81.8	18.1	72.7	27.2	81.8	18.1
लघु	संख्या	41	0	0	4.1	0	40	1	40	1
	प्रतिशत	100	0	7	100	0	97.5	2.4	97.5	2.4
अर्द्ध मध्यम	संख्या	53	0	0	53	0	52	1	52	1
	प्रतिशत	100	0	0	100	0	98.1	1.8	98.1	1.8
मध्यम	संख्या	83	4	2	87	2	87	2	87	2
	प्रतिशत	93.2	4.5	2.2	97.7	2.2	97.7	2.2	97.7	2.2
बड़े	संख्या	66	4	6	73	3	74	8	76	0
	प्रतिशत	86.4	5.2	7.8	96.0	3.9	97.3	2.6	100	0
समस्त	संख्या	250	11	9	263	7	261	9	264	6
	प्रतिशत	92.6	4.0	3.3	97.4	2.6	96.6	3.33	97.8	2.20

स्त्रोत चयनित ग्रामों में 571 कृषक परिवारों से साक्षात्कार प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त

****

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक में वित्तीय परिचालन

गोपाल कुरील* डॉ. सुनील मोरे **

प्रस्तावना – नर्मदा झाबुआ बैंक के लिए गत पाँच वर्षो का वित्तीय परिचालन चुनौतिपूर्ण रहा है। विपरित आर्थिक परिस्थितियों के साथ बढ़ती नॉन परफारमेंनिग असेट (NPA) से संघर्ष करना पड़ा है। इन सभी विषम स्थिति व उतार–चढ़ाव के बावजूद बैंक ने वित्तीय क्षेत्रों में प्रगति की है। बैंक ने कई मानदण्डों पर अद्‌भुत प्रदर्शन दर्ज किया है, जो बैंकिंग उद्योग की औसत प्रगति से अधिक रहा है।

बैंक ने वित्तीय समावेशन, स्वसहायता समूह, संयुक्त देयता समूह, मुद्र व वित्तीय साक्षरता के क्षेत्र में ग्राहकों के हितों को दृष्टिगत रखते हुए अनेक सामाजिक व आर्थिक जीवन पर गहरा प्रभाव हुआ है। एक ओर बैंक दूरस्थ ग्रामीण अंचल के कृषकों के हितों की पूर्ति में जुटा हुआ है, तो वहीं दूसरी ओर वह महानगरीय बैंकिंग सेवाओं के साथ युवाओं को भी अपने साथ जोड़ रहा है।

बैंक की अंशपूँजी – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की सथापना 1 नवम्बर, 2012 को दो बैंकों की समेकन की प्रक्रिया के तहत् हुई हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (संशोधन) अधिनियम, 2015 के प्रावधानों के अनुसार इस बैंक की अधिकृत पूँजी 5.00 करोड रुपये से बढ़ाकर 200 करोड़ रुपये कर दी गई हैं। यह पूँजी 10 रुपये प्रति अंश के रुप में 200 करोड़ अंशों में विभाजित है। बैंक की प्रदत्त अंशपूँजी 11625.11 लाख रुपये है जो भारत सरकार बैंक ऑफ इण्डिया (प्रायोजित बैंक) एवं मध्यप्रदेश सरकार की संयुक्त क्रमश: 50 : 35 : 15 के अनुपात में विभाजित है।

तालिका क्रमांक 01 : नर्मदा–झाबुआ ग्रामीण बैंक में अंशधारक व अंशपूँजी की स्थिति

क्र.	अंशधारक	अंशपूँजी (हजार रु.)	प्रतिशत
1	भारत सरकार	58,1255.66	50
2	बैंक ऑफ इण्डिया	40,6878.68	35
3	मध्यप्रदेश सरकार	17,4376.68	15
	कुल	116,2511.20	100

स्त्रोत : नर्मदा–झाबुआ ग्रामीण बैंक वार्षिक प्रतिवेदन (2013–14 से 2017–18)

उपयुक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि इस बैंक की कुल पूँजी में आधा भाग भारत सरकार से विनियोजित किया है।

तालिका क्रमांक 02 : नर्मदा–झाबुआ ग्रामीण बैंक में जमा (वृद्धि दर)

क्र.	वर्ष	जमा राशि (करोड़ रु.)	वृद्धि दर
1	2013	3333.67	–
2	2014	3740.22	12.20
3	2015	4204.97	12.43
4	2016	4783.93	13.77
5	2017	5942.11	24.20

स्त्रोत : नर्मदा–झाबुआ ग्रामीण बैंक वार्षिक प्रतिवेदन (2013–14 से 2017–18)

उपर्युक्त तालिका के विवेचन से स्पष्ट है कि नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की जमा राशियों में निरन्तर वृद्धि हुई हैं। वर्ष 2013 की तुलना में वर्ष 2017 में जमा राशि में 78 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई हैं। इसी प्रकार तालिका में जमा वृद्धि दर भी निरन्तर बढ़ती हुई परिलक्षित हो रही हैं। वर्ष 2014 की तुलना में वृद्धि दर वर्ष 2017 में लगभग दुगूनी हो गई हैं। इससे स्पष्ट है कि नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के प्रति लोगों का विश्वास बढ़ रहा है।

तालिका क्रमांक 03 : नर्मदा–झाबुआ ग्रामीण बैंक में अग्रीम (वृद्धि दर)

क्र.	वर्ष	अग्रीम राशि (करोड़ रु.)	वृद्धि दर
1	2013	2474.88	–
2	2014	2965.47	19.82
3	2015	3562.66	20.14
4	2016	4209.23	18.15
5	2017	4493.66	6.83

स्त्रोत : नर्मदा–झाबुआ ग्रामीण बैंक वार्षिक प्रतिवेदन (2013–14 से 2017–18)

उपर्युक्त तालिका के विवेचन से स्पष्ट है कि नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के द्धारा स्वीकृत अग्रीम राशि में वर्ष 2014 में एवं 2015 में लगभग 20 प्रतिशत की वृद्धि दर रही हैं, लेकिन वर्ष 2016 में इस दर में 2 प्रतिशत की कमी हुई हैं और वर्ष 2016 की तुलना में वर्ष 2017 की वृद्धि दर में लगभग 12 प्रतिशत की कमी हुई हैं। इससे स्पष्ट है कि गत वर्षो में बैंक द्धारा कृषकों को पर्याप्त रुप से ऋण स्वीकृत नहीं किए है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सिह, मिश्रा – भारतीय बैंकिंग प्रणाली, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा
2. प्रो. एस. एल. कोठारी, डॉ. मिलिन्द कोठारी – बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
3. नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक वार्षिक प्रतिवेदन (2013–14 से 2017–18)
4. स्वविवेक पर आधारित।

*शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, शासकीस महाविद्यालय, अजंड़ (बड़वानी) (म.प्र.) भारत

मानवाधिकार और भारतीय संविधान : एक विश्लेषण

डॉ. नीना प्यारी *

प्रस्तावना – 'भारत के संविधान में भारत की वैदिक संस्कृति का मूल मानवतावाद अंगीकार किया गया। अत: भारत के संविधान के पारित होने के समय मानवाधिकार की बात न केवल चर्चा में आ चुकी थी वरन् संसार भर में मानवाधिकार को लेकर आन्दोलनात्मक हलचल प्रारम्भ हो गई थी। भारत के संविधान के निर्माण के समय मानव मूल्यों का पर्याप्त प्रसार हो चुका था इसलिए उदारवादी दृष्टिकोण को लेकर मानव अधिकार को संरक्षण प्रदान करते हुए भारत के संविधान का निर्माण हुआ ।

26 जनवरी 1950 को भारत का अपना संविधान लागू किया गया। इसी दिन भारत पूर्ण स्वतंत्र होकर सर्व प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य बना। भारतीय संविधान की 'प्रस्तावना' ही संविधान का सारांश है। माननीय न्यायाधिपति हिदायतुल्लाह के अनुसार 'प्रस्तावना' संविधान की आत्मा हैं, जिसमें अपने देश की सम्प्रभुता, समाजवादिता, धर्मनिरपेक्षता तथा लोकतंत्रीय शासन की झलक मिलती है तथा साथ ही साथ यह अपने देश को न्यायिक, सामाजिक, आर्थिक एवम् राजनीतिक सुरक्षा भी प्रदान करती है।

भारत से संविधान की प्रस्तावना – भरतीय संविधान में एक प्रस्तावना है जो संविधान – निर्माताओं के विचारों की कुंजी है। प्रस्तावना में संविधान का सार हैं। दर्शन है। प्रस्तावना में निरूपति तथ्यों, सिद्धान्तों और आदर्शो की छाप समूचे संविधान पर है और प्रस्तावना के आधार पर समूचे संविधान का पुनर्निर्माण किया जा सकता हैं, प्रस्तावना की शब्दावली में अनेक शब्द और पद ऐसे हैं जिनमें प्राच्य या पाश्चात्य सभी परम्पराओं के सर्वश्रेष्ठ तत्व सम्मिलित हैं और जो प्रयोग की दृष्टि में सार्वभौम हैं। प्रस्तावना पर आधुनिक युग की तीन महान क्रान्तियों का प्रभाव पड़ा हैं – फ्रांसीसी, अमेरिका एवम् रूसी। फ्रांसीसी क्रान्ति में स्वतंत्रता, समानता और बन्धत्व पर, अमेरिकी क्रान्ति में राजनीति स्वतंत्रता एवम् व्यक्ति–स्वातंत्रय पर और रूसी क्रान्ति में आर्थिक समानता पर बल दिया गया था। भारतीय क्रान्ति के सूत्रधारों ने आरम्भ से ही इन तीनों में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया है, हमारे संविधान की प्रस्तावना इस प्रकार हैं।

'हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व–सम्पन्न लोकतंत्रात्मक धर्म–निरपेक्श समाजवादी, गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिको को– सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक न्याय,विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिये तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज दिनांक 26 नवम्बर 1949 (मिति मार्गशीर्ष शुक्त सप्तमी सम्वत् दो हजार छ: विक्रमी) को एतद् द्धारा संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मर्पित करते है।'

प्रस्तवाना में **'हम भारत के लोग'** – पद के अनुसार सम्प्रभुता अन्तत: जनता में निहित हैं सरकार के पास अथवा राज्यसत्ता के विभिन्न अंगों के पास जो शक्तियाँ हैं, वे सब जनता से मिली हैं, संविधान जनता के प्राधिकार पर ही आधारित हैं इस पदावली में एक और भी अर्थ निहित है कि 'हम भारत के लोग' अर्थात संविधान का निर्माण राज्यों ने अथवा अनेक राज्यों के लोगों ने नहीं किया बल्कि समूचे भारत के लोगों ने अपनी सामूहिक क्षमता से किया है। इसलिए सवैधानिक दृष्टि से न कोई राज्य अथवा राज्य समूह हमारे संविधान का अन्त कर सकता हैं और न यह संविधान द्धारा निर्मित संघ से बाहर ही जा सकता है।

प्रस्तावना में प्रयुक्त 'हम भारत के लोग' इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं पदावली से यह स्पष्ट है कि भारतीय संविधान का स्त्रोत भारत की जनता है, अर्थात जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों की सभा द्धारा ही संविधान का निर्माण किया गया है।

भारत का संविधान लोकतंत्रात्मक हैं लोकतंत्र के राजनीतिक, सामाजिक और अर्थिक पहलू हैं। राजनीतिक पहलू में राजनीतिक पहलू में राजनीतिक समानता के सादर्श को माना गया है और राजनीतिक शक्ति पर किसी वर्ग–विशेष का एकाधिकार नहीं स्वीकार गया हैं सामाजिक आदर्श के रूप में लोकतंत्र मनुष्य के बीच समानता का प्रतिपादन करता है। लोकतंत्र में कोई सुविधा–सम्पन्न वर्ग–विशेष नहीं हो सकता और जाति, भाषा, वर्ण, वंश, तथा लिंग के आधार पर व्यक्ति–व्यक्ति के बीच भेदभाव नहीं किया जा सकता हैं

संविधान ने सबसे अधिक महत्व स्वतंत्रता के सिद्धान्त को प्रदान किया है तथा विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता को व्यक्तियों तथा राष्ट्र के आत्मिक उत्कर्ष के लिए आवश्यक माना हैं संविधान के 3 भाग में मूल अधिकारों के अन्तर्गत स्वतंत्रय अधिकारों का विस्तार से प्रतिपादन कि गया है।

स्वतंत्रता के साथ–साथ प्रस्तावना में प्रतिष्ठा और अवसर की क्षमता की बात कही गई हैं समानता के विद्धान्त को ध्यान में रखते हुए संविधान निर्माताओं ने स्पष्ट प्रतिष्ठिता और अवसर की समता पर बल दिया है।

कानून की दृष्टि में सभी समान है। आर्थिक समता में यह बात निहित है कि एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य का अथवा एक वर्ग को दूसरे वर्ग का आर्थिक शोषण करने का कोई अधिकार नहीं है।

प्रस्तावना में अन्य दो आधारभूत सिद्धान्तों का उल्लेख हैं– व्यक्ति की गरिमा तथा बन्धुता। सविधान में समानता और समता के आदर्श ने व्यक्ति की गरिमा को प्रतिष्ठित किया है। इसके साथ ही सारे देश के लिए एक–सा

* प्राचार्य, एस.जी.टी.बी. खालसा विधि महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

प्रशासन, एक-सी नागरिकता, एक ध्वज, एक-सी कानून व्यवस्था आदि की स्थापना करके देश को एकता के सूत्र में बाँधने और राष्ट्रीय बन्धुता को सुदृढ़ करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में 'विश्व बन्धुत्व' तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भवना को विकसित और पोषित करने का निरन्तर प्रयास किया है।

भारत के संविधान में मानवाधिकार सम्बन्धी प्रावधान

(1) मौलिक अधिकार

अनुच्छेद - 14 - कानून के समस्त समानता

अनुच्छेद - 15 - धर्म, वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद पर प्रतिबन्ध

अनुच्छेद - 16 - लोक नियोजन के विषय में अवसर की समानता

अनुच्छेद - 17 - अस्पृश्यता का अन्त

अनुच्छेद - 18 - उपाधियों का अन्त

अनुच्छेद - 19(1)(क) - वाक एवम् अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 19(1)(ख) - शान्तिपूर्वक व निरायुध सम्मेलन की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 19(1)(ग) - संघ बनाने की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 19(1)(घ) - भारत में सर्वत्र आबाध संचरण की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 19(1)(ड़) - भारत राज्य क्षेत्र में किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 19(1)(छ)- कोई वृत्तिका, उपजीविका, व्यपार कारोबार करने की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 20 - अपराधों में दोषसिद्धि के सम्बन्ध में संरक्षण

अनुच्छेद - 21 - प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण

अनुच्छेद - 22 - कुछ दशाओं में निरोध और गिरफ्तार से संरक्षण

अनुच्छेद - 23 - मानव के बलात् श्रम और बेकार पर रोक

अनुच्छेद - 24 - कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिबन्ध

अनुच्छेद - 25 - अन्त: करण की ओर धर्म को अबाध रूप से मानने, आवचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 26 - धार्मिक कार्यो के प्रबन्ध की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 27 - किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि के लिए करों संदाय के बारे में स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 28 - कुछ शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में उपस्थित होने की स्वतंत्रता

अनुच्छेद - 29 - अल्पसंख्यक वर्गो के हितों का संरक्षण

अनुच्छेद - 30 - शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यक वर्गो का अधिकार

अनुच्छेद - 31 - मौलिक अधिकारों के प्रवर्तित कराने के लिए उपचार का अधिकार

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अवस्थी, मंजू - भारत का संविधान, इण्डिया पब्लिशिंग कम्पनी, रायपुर 2007
2. सबु, डी.डी. - भारत का संविधान, बाधक एण्ड कम्पनी, नागपुर, 2001
3. श्रीवास्तव, सुधारानी - भारत में मानवाधिकार की अवधारणा, अर्जुन पब्लिशिंग नई दिल्ली, 2003
4. पाण्डेय, जे.एन.- भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, 1996

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Cashless Transaction in Indian Scenario : A Critical Study

Dr. Manish Jain*

Introduction - A cashless economy is one in which the transactions are done using cards or digital means. The circulation of physical currency is minimal. A cashless society describes an economic state whereby financial transactions are not conducted with money in the form of physical bank notes or coins, but rather through the transfer of digital information (usually an electronic representation of money) between the transacting parties.

In this increasingly digital world, it's not surprising that money will follow suit as well. Recent trends show that digital money kept in mobile wallets will soon replace physical cash and even credit cards.

Objectives:

1. To study the awareness and use of online transaction among the consumers.
2. To study consumer's reasons for preference of online transactions over hard cash.
3. To study out the usefulness and popularity of online transaction.

Hypothesis:

H_0 : There is no relationship between online transaction and education level of the online money holder.

Research Methodology - This research is based on Primary as well as Secondary sources of data. Questionnaires are distributed through some social media like WhatsApp, Facebook, and e-mail and personally to respondents. The sample consist 100 people aged 20 to 60 years Indore city is the study area selected for this research. Primary data is collected through well structured questionnaire. Samples of 100 respondents in Indore city have been selected by using random sampling method. The collected information were reviewed & consolidated into a master table. For the purpose of analysis the data were further processed by statistical tools.

Process of Online Transaction - Online transaction processing is information systems that facilitate and manage transaction-oriented applications, typically for data entry and retrieval transaction processing.

Online transaction processing system is a popular data processing system in today's enterprises. Some example of online transaction processing system include order entry, retail sales, and financial transaction systems. Online transaction processing system increasingly requires support for transactions that span a network and may include more than one company. For this reason, modern online transaction processing software use client or server processing and brokering software transactions to run on different computer platforms in a network. In large application, efficient Online transaction processing may depend on sophisticated transaction management software (such as CICS) and\or database optimization tactics to facilitate the processing of large numbers of concurrent updates to an Online transaction processing oriented database.

Online transaction processing involves gathering input information, processing the information and updating existing information to reflect the gathered and processed information. As of today, most organizations use a database management system to support online transaction processing. Online transaction processing is carried in a client server system. Online transaction processing system concerns about concurrency and atomicity. Concurrency controls guarantee that two users accessing the same data in the database system will not be able to change that data or the user has to wait until the other user has finished processing, before changing that piece of data. Atomicity controls guarantee that all the steps in transaction are completed successfully as a group.

Below the example of online transaction process:

1. Log in with user name and password: User enters the username and password.
2. Select the Telecom Operator: Select the user which telecom operator he wants.
3. Enter Recharge amount, phone number and connection type: Enter the recharge amount, mobile number and connection type of the user.
4. Enter card Information: Enter the card information like pin number.
5. Select one of the payment options: Select one of the payment options like ATM card, Debit card etc.
6. Payment Processor's his payment is proceeding.
7. Authenticate it is confirm or not: When the authenticity is confirmed or not, when it is Yes then received success message. Or No then receive failure message.

Literature Review - Cashless economy is not the complete absence of cash, it is an economic setting in which goods

* Vice Principal, Acropolis Institute of Management Studies & Research, Indore (M.P.) INDIA

and services are bought and paid for through electronic media.

1. According to **Alvars;',Clifford (2009)** in their reports – the problem regarding fake currency in India. It is said that the country's battle against fake currency is not getting easier and many fakes go undetected. It is also stated that counterfeiters hitherto had restricted printing facilities which made it Easier to discover fakes.

2. Jain,P.M. (2006) in the article – E-payments and e-banking opined that e-payments will be able to check black. An Analysis of growth pattern of cashless transaction system. Taking fullest advantage of technology, quick payments and remittances will ensure optimal use of available funds for banks, financial institutions, business houses and common citizen of India. He also pointed out the need for e-payments and modes of e-payments and communication networks.

3. Srinivas,N. (2006) in his study – An analysis of the defaults in credit card payments, has tried to analyze the socio-economic profile of the defaulters of credit cards, to identify the set of factors which contributed to such defaults and suggest relevant measures to minimize the default cases. Analysis of reasons indicated that economic hardship is the major reason identified by majority of the sample units follows by rigid payment structure and loss of job\business. The main suggestion is that the banks concerned should redesign the payment structure of credit card defaulters in a flexible and affordable installment.

4. Sukanta Sarkar (2010) conducted a study on the parallel economy & in India : Causes, impacts & government initiatives in which the research focused on the existence of causes & impacts of black money in India. According to the study, the main reason behind the generation of black money is the Indian Political System i.e. Indian govt. just focused on making committees rather than to implement it. The study concludes that law should be implemented properly to control black money in our economy.

Limitations of Research :

1. Financial Transaction Processing Costs.
2. Online Transaction Processing systems allow multiple users to access and modify the same data at the same time. For obvious reasons, you can't allow one user to change data while another person is modifying it.
3. Unscheduled Downtime.
4. Your business can suffer considerable losses when the Online Transaction Processing system goes down, even temporarily. This can happen due to network outages, data corruption or hardware failure.
5. Concurrency challenges.
6. Atomicity.
7. In Online Transaction Processing, "atomicity" refers to transaction in which either all the database steps succeed or the entire transaction fails. If anyone step goes wrong, and the transaction continues anyway, you'll probably end up with data errors or corruption.
8. For many business, Online Transaction Processing narrowly refers to transactions with financial institutions, mainly credit card and debit card payments over the internet or through physical card readers.

Analysis :

Age group & uses of alternative of cash

Age\ Alternate of Cash	Debit Card	Credit Card	e-wallet	e-bank ing	Total
20-30	4	8	14	2	**28**
30-40	6	3	5	3	**17**
40-50	12	1	4	7	**24**
50-60	14	2	3	12	**31**
Total	**36**	**14**	**26**	**24**	**100**

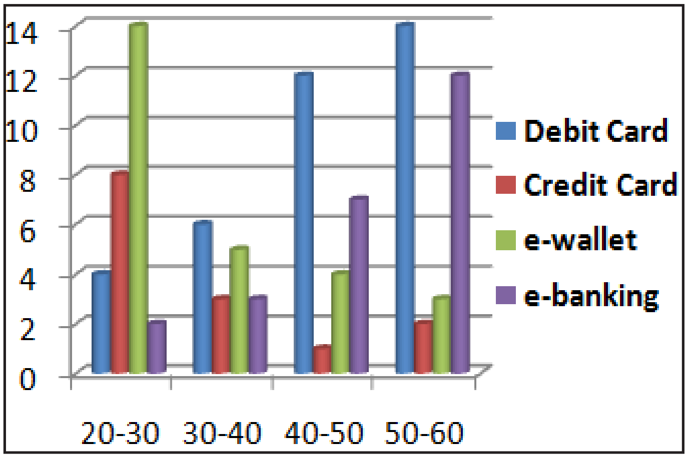

In above table we see that the 36% respondents use Debit card, 26% respondents like to use e-wallet (such as PTM, RuPay, Bheem etc.), 24% like to use internet banking and 14 uses credit card for their transactions

It can be seen that majority of respondents use e-money in the form of debit card. However, some use both debit and credit cards. The preference of the specified card makes a great amount of impact on the spending patterns of various consumers. The preference of debit card over credit card marks a strong sense of favoritism among the respondents of India, which is far different as compared to other western countries where credit card is a primary mode of payment.

Majority of respondents prefer using debit card and e-wallet over credit card and e-banking as they feel that the use of debit card and e-wallet is more beneficial than credit card and e-banking in terms of cash back policy, control over spending and security. However, some of the opinion that both debit and credit cards have varies from person to person. However, majority find the feature of cash back facility effective, and as the trend continues the financial institutions would get a balanced end of the year balance sheet as their debtors would be lesser than their creditors.

Online transaction and education level

Education Level	Online transaction
below 10^{th}	4
10^{th}	8
12^{th}	14

Graduate	25
PG & Plus	49
Total	**100**

Majority shows the trend of use of online transaction as the level of education is up the online transaction holders are increases. On the analysis of table above we see that below 10th only 4% persons using online transaction, up to 10th 8%, up to 12th 14%, graduates 25% and PG & plus 49%. Their shows that as the education level increase online transactions are increases.

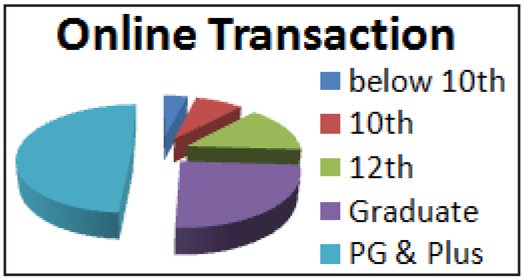

Hypothesis Testing :

H_0 : There is no relationship between online transaction and education level of the online money holder.

In order to test the hypothesis is tested by percentage tool. And it was found that 49% of respondents are post graduates and more and 25% of respondents are graduates. Total 74% of respondents are graduates and post graduates it shows that there is a relationship between online transaction and education level of online money holder. Thus our hypothesis is rejected. We can say that there is a relationship between online transaction and education level of the online money holder.

Conclusion - This study was to know the awareness of online money among the customers. The findings reveal that majority of respondents use online money in one form or another and out of them, they have been using it for over three years. Therefore, customers are well aware of online money and its usage, and have been using online money for a long time.

That was to study customer's preference of online money over cash. The findings reveal that majority of respondents prefer using online money in one form or another, over cash. It was also revealed that majority of the respondents using as mode of payment is satisfied with their Debit\Credit cards and the services provided by the company. Therefore, the study shows that customer mostly prefer to online over cash for their transactions and its satisfied using it.

The research shows that the majority of consumer used and preferred for e-money in one form or another over paper money and hence the trend of e-money is gradually increasing day by day. Moreover, users are satisfied with the service provided by the company and majority of them feel secure while doing any online and e-transactions.
As a safety measure many consumers recommended the use of security pin and digital sign. To reduce the misuse of e-money hence, it is found that e-money is the most beneficial method of transaction for the consumer and has a bright future.

Findings - The major findings of this research are as follows:

1. Majority of the respondents 72% belong to the age group of 30 to 60 year age groups.
2. Majority of the respondents 64% are males and 36% of respondents are female.
3. 74% of the respondents are graduate and post graduates.
4. 46% of the respondents are private employees.
5. Majority of the respondents 64% have an annual income between 3 lakh to 5 lakh.

References :-

1. Alvars',Clifford,. "The problem regarding fake currency in India",2009.
2. Jain, P.M. "An analysis of growth pattern of cashless transaction system, 2006.
3. Srinivas,N., "An analysis of the defaults in credit card payments, 2006.
4. CA Lalit Mohan Agarwal, "White Paper on Black Money", Journal of Securities Academy & faculty for e-education, vol.72, 2012.

Bibliography :-

1. www.careratings.com
2. www.cornellpolicyreview.com
3. www.scribd.com
4. www.wikipedia.com
5. www.economictimes.com
6. www.indiatoday.com
7. www.ivestopedia.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

विद्यालयीन पर्यावरण एवं विद्यार्थियों की निष्पत्ति

किरण पवार * डॉ. साधना देवेश वर्मा **

प्रस्तावना – पर्यावरण से जीवन की गुणवत्ता का निर्धारण होता है, विद्यालय पर्यावरण से शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित होती है। प्रदूषणमुक्त वातावरण में स्थित शिक्षालयों के शिक्षार्थी अच्छी शैक्षिक उपलब्धि दर्शाते हैं। वायु प्रदूषण, भूमि प्रदूषण तथा मुख्यत: ध्वनि प्रदूषण के माहौल में स्थित विद्यालयों के शिक्षार्थी की शैक्षिक उपलब्धि पर पर्यावरण की नकारात्मकता का प्रभाव पड़ता है। विद्यालयों की पवित्र गरिमा को सामाजिक, नैतिक प्रदूषण भी प्रभावित करता है, बालकों की निष्पत्ति पर विद्यालय के पर्यावरण का सीधा प्रभाव पड़ता है जो उनकी आदतों, रूचियों, वृत्तियों तथा समायोजन को निर्धारित करता है, विद्यार्थियों में पर्यावरणीय चेतना के विकास हेतु शिक्षक भी उतने ही सक्रिय तथा सतर्क होने चाहिए जितने कि पालक-अभिभावक एवं प्रशासक/बालकों को पर्यावरण संरक्षण तथा पर्यावरणीय चेतना के गुणों के साथ विकसित करने हेतु विद्यालयों में प्रयत्न करना आवश्यक है।

पर्यावरण प्राकृतिक होने के साथ मनुष्यकृत भी होता है। डॉ रघुवंशी ने आवास के आधार पर तीन तरह के पर्यावरण की चर्चा की है – अलवण जलीय पर्यावरण, समुद्री पर्यावरण एवं स्थलीय पर्यावरण। व्यक्ति जहां रहता है उसके व्यक्तित्व एवं जीवनशैली को वहां की बहुत सी दशाएं प्रभावित करती है। जिनके परिणाम स्वरूप मनुष्य अपने व्यवहार प्रदर्शित करता है। भौतिक पर्यावरण, सामाजिक पर्यावरण, मनोवैज्ञानिक पर्यावरण, सांस्कृतिक पर्यावरण, सौंदर्यबोध से संबंधित पर्यावरण, शैक्षिक पर्यावरण एवं आर्थिक पर्यावरण। सभी प्रकार के पर्यावरण की सकारात्मकता एवं नकारात्मकता उसमें मौजूद व्यक्ति को प्रभावित करती हैं। बालक के जीवन का अधिकांश समय विद्यालय में व्यतीत होता है, वह जिस शैक्षिक वातावरण में दिन बिताता है उसके अनुरूप वह निष्पत्ति दर्शाता है।

विद्यालय का शैक्षिक पर्यावरण – जहां शैक्षिक पर्यावरण सामाजिक एवं भौतिक पर्यावरण से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है वहीं सांस्कृतिक पर्यावरण का आवश्यक पक्ष भी प्रस्तुत करता है। शिक्षक व समाज की सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति जैसी होगी उसी के अनुरूप उनकी मानसिकता शैक्षिक पर्यावरण को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए विभिन्न सामाजिक स्तर के लोक समाज के बच्चों का अलग अलग विद्यालयों में पढ़ना।

1. उनके शैक्षिक पर्यावरण में भिन्नता होना।
2. उनकी शैक्षिक उपलब्धि में भिन्नता होना।
3. शाला के क्षेत्रीय व भौतिक पर्यावरण में भिन्नता होना।
4. विद्यार्थियों की रूचियों व समायोजन में भिन्नता होना।

आदि के लिए पारिवारिक वातावरण के अलावा शाला का शैक्षिक पर्यावरण भी जिम्मेदार होता है।

शैक्षिक पर्यावरण मूलत: शैक्षिक संस्थानों के विभिन्न संघटकों के आपसी सम्बन्ध, तालमेल एवं नियंत्रण के आधार पर निर्मित होता है।

शैक्षिक पर्यावरण के निर्धारक संघटक – शैक्षिक पर्यावरण में शिक्षा संस्थान के सभी मानव सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध का प्रभाव भी महत्व रखता है। भौतिक संसाधनों की अपेक्षा मानवीय संसाधन पर्यावरण निर्मित करने या वातावरण बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

विद्यालयीन पर्यावरण या शैक्षिक पर्यावरण मूलत: शैक्षिक संस्थानों के विभिन्न संघटकों के आपसी सम्बन्ध, तालमेल एवं नियंत्रण के आधार पर निर्मित होता है, इसके कई रूप हैं :

1. शिक्षक-शिक्षक सम्बन्ध।
2. विद्यार्थी-शिक्षक सम्बन्ध।
3. विद्यार्थी-विद्यार्थी सम्बन्ध।
4. शिक्षक-प्रशासन सम्बन्ध।
5. विद्यार्थी-प्रशासक सम्बन्ध।

शैक्षिक संस्थाओं के प्रशासक तन्त्र, प्रबन्धकीय प्रणाली, शैक्षिक स्तर एवं नेतृत्व के स्वरूप पर भी शैक्षिक पर्यावरण निर्भर करता है। जिस संस्था में मानव पर्यावरण स्वस्थ होगा, व्यक्तियों के आपसी सम्बन्ध अच्छे तथा सौहार्दपूर्ण होंगे वहां का शैक्षिक पर्यावरण संतुलित होगा। वहां के विद्यार्थियों को समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ेगा तथा उनकी शैक्षिक निष्पत्ति भी सकारात्मक परिणाम दर्शाएगी। अच्छे व सौहार्दपूर्ण आपसी सम्बन्ध संस्था के पर्यावरण को स्वस्थ बनाते हैं।

सौहार्द्रता शैक्षिक पर्यावरण को संतुलित बनाती है। शाला के भौतिक संसाधनों का सुव्यवस्थापन भी बालक के समायोजन के तनावों को कम करता है तथा उसे अच्छी निष्पत्ति के लिए तैयार करता है।

शैक्षिक संस्थाओं के प्रशासक तंत्र, प्रबन्धकीय प्रणाली, शैक्षिक स्तर एवं नेतृत्व के स्वरूप पर भी शैक्षिक पर्यावरण निर्भर करता है। प्रबन्धकीय तन्त्र के अन्तर्गत :

1. छात्र सुविधाओं की उपलब्धि।
2. छात्रावास का सुव्यवस्थापन।
3. पुस्तकालय का पठन-सामग्री से सम्पन्न होना।
4. वाचनालय आदि।
5. प्रशासकीय तंत्र।
6. अनुशासन।
7. परीक्षा प्रणाली वस्तुनिष्ठ एवं

* शोधार्थी, मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत
** प्राध्यापक, मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

8. पाठ्यक्रम

आदि सम्मिलित हैं।

शैक्षिक पर्यावरण का निर्माण – जिस विद्यालय का प्रशासकीय एवं प्रबन्धकीय तंत्र उच्चकोटि का होगा वहां का शैक्षिक पर्यावरण भी समुन्नत होता है। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएं भी विद्यालयीन पर्यावरण के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं :

1. नाटक
2. स्काउटिंग
3. गाइडिंग
4. खेलकूद
5. सांस्कृतिक कार्यक्रम
6. भ्रमण व पर्यटन
7. सेमिनार
8. बाल सभा
9. प्रतियोगिताएं
10. स्वास्थ्य रक्षा कार्यक्रम आदि।

विद्यालयीन पर्यावरण के स्वास्थ्य संवर्धन में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएं विद्यालय के शैक्षिक पर्यावरण के पोषक तत्व हैं। विद्यालय के नियन्त्रण एवं नेतृत्व की क्षमता शैक्षिक पर्यावरण की आधार है। शिक्षक या प्रशासक का नियन्त्रण विद्यालयीन पर्यावरण को अव्यवस्थित होने से बचाता है।

विद्यालय की भौगोलिक स्थिति एवं वहां के पर्यावरण का प्रदूषण प्रशासक व शिक्षक के नियन्त्रण में नहीं होते लेकिन वह पर्यावरण प्रदूषण के नियंत्रण के लिए प्रयासरत रह सकता है। विद्यालयीन पर्यावरण को सुधारने व सुरक्षित रखने के लिए वह नगर–कस्बे में प्रदूषण के खिलाफ मुहीम छेड़ने के लिए विद्यार्थियों का सफल नेतृत्व कर सकता है। प्रशासन एवं सरकार की प्रदूषण के प्रति सचेत कर सकता है, विद्यार्थियों को पर्यावरण चेतना का पाठ पढ़ा कर जागरूक कर सकता है।

विद्यार्थियों में पर्यावरण चेतना का विकास – विद्यार्थियों के लिए पर्यावरणीय शिक्षा के विभिन्न कार्यक्रम आयोजित करते हुए भी विद्यालयीन पर्यावरण को सुधारा जा सकता है। विद्यालय के पर्यावरण के परिष्कार हेतु तथा विद्यार्थियों के विकास के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं जिनका संचालन सिद्धहस्त शिक्षकों द्वारा किया जाता है :

1 परिस्थिति का विकास शिविर
2 पर्यावरण संरक्षण प्रशिक्षण शिविर
3 पर्यावरणीय संदेश रेलियां
4 प्रदर्शनियां
5 विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताएं
(चित्रकला, वाद–विवाद, निबन्ध लेखन, फोटोग्राफी आदि)
6 नाटक, नुक्कड़ नाटक, लोकनृत्य
7 कठपुतली शो
8 विद्यालय संस्थाओं की सौंदर्य प्रतियोगिताएं, पत्र–वाचन आदि
9 वृक्षारोपण कार्यक्रम
10 विद्यालय में बागवानी
11 पर्यावरणविदों के व्याख्यान
12 फिल्म शो, आदि।

अधिकांश कार्यक्रम सहगामी प्रवृत्तियों की तरह आयोजित किए जा सकते हैं। विद्यालय के तकनीकी संसाधन प्रयुक्त करते हुए दृष्य–श्राव्य साधनों का समुचित उपयोग हो सकता है।

पर्यावरणीय जागरूकता एवं शिक्षक – विद्यालयीन पर्यावरण स्वस्थ व स्वच्छ हो इस हेतु शिक्षकों को शिक्षक–प्रशिक्षण के समय पर्यावरण शिक्षा दी जानी चाहिए, जिसके उद्देश्य इस प्रकार हों :

1 सहभागी अध्यापकों की पर्यावरणीय जागरूकता में सुधार लाना।
2 स्थानीय पर्यावरणीय समस्याओं को पहचान कर उनके सुनियोजित अध्ययन में प्रशिक्षण प्रदान करना।
3 नवीन पर्यावरणीय मुद्दों या समस्याओं के समाधान हेतु गहन रूप से प्रशिक्षण प्रदान करना।
4 कक्षा में उत्पन्न पर्यावरणीय मुद्दों के समाधान में विषिष्ट लक्ष्यों के अनुरूप प्रशिक्षण देना।

(अ) सैद्धान्तिक के निहितार्थ को वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में कार्यान्वित करने में मदद देना।
(ब) विद्यार्थियों में पर्यावरणीय जागरूकता विकसित करना। इन उद्देश्यों का लक्ष्य बालक को अच्छा पर्यावरण देना है।

समस्त विद्यालयीन प्रबन्धन, शिक्षक एवं विद्यार्थी मिलकर विद्यालय के पर्यावरण का निर्माण करते हैं, पर्यावरण प्रत्यक्षत: विद्यालयीन पर्यावरण का स्वस्थ व स्वच्छ होना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अनिल अग्रवाल स्टेट ऑफ इंडियाज एनवायरमेंट 1982 /न्यू देल्ही द फर्स्ट सिटीजंस रिपोर्ट/सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट/1982
2. बैस, नरेन्द्रसिंह / पर्यावरण शिक्षा/ जैन प्रकाशन मंदिर/जयपुर सन् 2006/ ISBN 81-87449-52-7/पृष्ठ 14.9
3. गोयल, एम.के./पर्यावरण अध्ययन /विनोद पुस्तक मंदिर आगरा/ सन् 2006/1/ ISBN 81-7457-401-8
4. गोयल एम.के./मानव और पर्यावरण/विनोद पुस्तक मंदिर/आगरा/ सन् 2006/ISBN 81- 7457-407-71
5. शर्मा लोकेश /पर्यावरण शिक्षा (विज्ञान) एंव उसका शिक्षण/विनोद पुस्तक मंदिर/आगरा/सन् 2006/ ISBN 81-7457-399-2/ पृष्ठ 316-340
6. शर्मा मंजु तथा चौहान राजेशकुमार / पर्यावरण शिक्षा/शिक्षा प्रकाशन/जयपुर / सन 2006
7. शर्मा वी एस/एनवायरमेंटल एजूकेशन/अनमोल पब्लिकेशंस/ न्यू देहली/ सन 2005 /ISBN 81- 261-2275-7
8. बैस, नरेन्द्रसिंह/भार्गव, सुनिता/दत्ता, संजय/पर्यावरण शिक्षा/जैन प्रकाशन
9. पाण्डेय के पी /भारद्वाज : अमिता/पाण्डे आशा/पर्यावरण शिक्षा एवं भारतीय सन्दर्भ /विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 2005/ISBN 81-7124-443-2 पृष्ठ 175

****

अम्बेडकर की सामाजिक-न्याय की अवधारणा

महेश कुमार रचियता*

प्रस्तावना – अम्बेडकर की मूल मान्यता थी कि सब मनुष्य समान है और सबको सम्मानपूर्वक जीवनयापन का पूरा-पूरा अधिकार है, तथा समाज की तरफ से प्रत्येक व्यक्ति को आगे बढ़ने एवं प्रगति करने का समान अवसर मिलना चाहिए। उनके इस मंतव्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनके विचारों एवं कृत्यों के पीछे मानवता की प्रबल भावना निहित थी। वे किसी भी तरह के शोषण एवं एकाधिकार के प्रबल विरोधी थे।

अम्बेडकर ने आजीवन दलितों एवं शोषितों के हितों के लिए संघर्ष किया और इस संघर्ष का मूल लक्ष्य सामाजिक-न्याय की प्राप्ति करना था। उन्होंने भारत के राष्ट्रीय मूल्यों को भी अपने कार्यक्रमों में समान रूप से प्राथमिकता दी थी। उनका लक्ष्य सामाजिक-न्याय के साथ-साथ राष्ट्र की एकता भी था। हालांकि उनके आलोचक यह कहते हैं कि उन्होंने दलितों को समान अधिकार दिलाने के लिए जो संघर्ष किया वह सिर्फ इसलिए किया कि वे स्वयं दलित थे और अछूत थे। परन्तु वास्तविकता इससे भिन्न है और यह है कि इस न्याय के प्रति उनका दृष्टिकोण इतना व्यापक था कि वे न तो शत्रु की सीमाओं में बंधे थे और न ही किन्हीं तरह के पूर्वाग्रहों से ग्रस्त थे। उनका साध्य महान था और वह था सामाजिक-न्याय की प्राप्ति करना। अपने साध्य के प्रति उनका लगाव व निष्ठा उनके द्वारा तिलक को लिखे गए एक पत्र से परिभाषित होती है – जिसमें वे तिलक को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि, 'यदि आप अछूतों के समाज में पैदा हुए होते तो कदापि नहीं कहते कि स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है बल्कि आप कहते कि भारत से छुआछूत को मिटाना मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।'

अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म में सुधारों का आह्वान करते हुए इसे जनसम्मत बनाने हेतु मौलिक एवं पूर्ण समाधान प्रस्तुत किए जिससे धर्म सामाजिक-न्याय की स्थापना में बाधक ना रहकर सहायक बना जाए। जैसे –

- इसाइयों, सिक्खों तथा मुसलमानों की तरह सभी हिन्दुओं के द्वारा स्वीकृत एक मान्य ग्रंथ होना चाहिए।
- कोशिश यह होनी चाहिए कि हिन्दू समाज में पुरोहितवादी प्रथा का उन्मूलन हो और किसी भी सूरत में पुरोहिताई का आधार पैतृक नहीं होना चाहिए तथा समाज का प्रत्येक व्यक्ति पुरोहिताई का समान अधिकारी होना चाहिए। साथ ही पुरोहिताई का मुख्य कार्य राज्य द्वारा मान्य धार्मिक कार्यक्रमों को सम्पन्न कराने के लिए तक स्वीकृत सनद होनी चाहिए तथा सभी पुरोहितों को पाबंद किया जाना चाहिए कि उसी के अनुसार पुरोहिताई कराए। इसमें अपनी मर्जी करने वाले को दण्डित किया जाना चाहिए।
- पुरोहित एक प्रकार का सरकारी कर्मचारी होना चाहिए जो राज्य के कानून के अनुसार कार्य करे तथा प्रशासन द्वारा समय-समय पर उसके कार्यों का निरीक्षण भी करते रहना चाहिए ताकि वे किसी का शोषण नहीं कर पाएं।
- नैतिक दृष्टिकोण से धर्म सभी समाजों में एक मान्य सिद्धांत की हैसियत रखता है। अत: आवश्यकता है कि धर्म बोधिक्ता पर आधारित हो अर्थात् धर्म विज्ञानसम्मत होना चाहिए और इसके नियमों में स्वतंत्रता, समानता व भ्रातृत्व की भावना का समावेश होना चाहिए।

अम्बेडकर ने पुरोहितवाद, वर्णवाद, जातिभेद एवं छुआछूत के प्रति ना केवल अपना विरोध प्रकट किया वरन् इनके विकल्प के लिए ठोस सुझाव भी प्रस्तुत किए जिसके आधार पर हिन्दू समाज में आधारभूत परिवर्तन लाए जा सके। अम्बेडकर ने वर्णव्यवस्था के प्रतिरोध में जो अकाट्य तर्क प्रस्तुत किए वैसे तर्क भारतीय जनमानस में किसी अन्य सुधारक ने नहीं दिए। वर्ण व्यवस्था की तीव्र वेदना एक अछूत समाज के व्यक्ति से ज्यादा और कौन जान सकता है। इन्होंने वर्ण व्यवस्था के सिद्धांत का बड़ी गम्भीरता से अध्न किया व इसके अमानवीय व घृणित व्यवहार को जीया व महसूस किया। यही वजह है कि वर्णवाद के प्रति उनका विरोध न्यायोचित था।

भागवद गीता के चौथे अध्याय के तेरहवें श्लोक का अर्थ की, चारों वर्णो की व्यवस्था गुण और कर्म के भेद से मैंने की है उसका कर्ता होते हुए मुझ अविनाशी को कर्ता जान गीता ने इसी व्यवस्था को स्वधर्म कहा और यह निर्धारित किया कि इसमें जिस व्यक्ति की आस्था नहीं होगी वह ईश्वर की भक्ति का अधिकारी नहीं होगा और बाद के समय के टीकाकारों ने इसी ग्रंथ का सहारा लेकर हिन्दू परम्परावादी समाज व्यवस्था को जिसमें की अनेक प्रकार की ऊँच-नीच की भावनाएं सम्मिलित हो गई थी, उनको भी न्यायोचित ठहराया तथा यह भी एक तथ्य है कि गीता के अतिरिक्त भी सभी हिन्दू धर्म ग्रंथों ने भी वर्णवाद की वकालत की तथा साथ ही हिन्दू साधु संतों, ऋषियों ने भी वर्ण व्यवस्था को एक प्रकार की आदर्श व्यवस्था मानकर जाति एवं छुआछूत की ऊपरी तौर पर निन्दा की।

अम्बेडकर ने इसी परस्पर अंतर्विरोध को समझा और स्पष्टत: कहा कि वर्ण व्यवस्था ही वह मूलभूत आधार है जिससे छुआछूत, ऊँच-नीच व भेदभाव पनप रहा है और जब तक वर्ण व्यवस्था को जड़ से नहीं उखाड़ा जाता तब तक किसी भी तरह का समाज सुधार सफल नहीं हो सकता है। इसी क्रम में उन्होंने एक पुस्तक लिखी जिसका शीर्षक था – 'जाति का उन्मूलन'। इसमें उन्होंने वर्णवादी व्यवस्था का खण्डन किया और साथ में जाति व्यवस्था तथा छुआछूत की भयंकर समस्या के सम्पूर्ण उन्मूलन के उपाय सुझाए। साथ ही गीता द्वारा स्थापित जन्मजात गुणों पर प्रकटित चातुर्वण्य व्यवस्था का भी तीव्र खण्डन किया और कहा कि गीता के चातुर्वणाय का दार्शनिक आधार सांख्य दर्शन से है, जिसमें यह कहा गया है कि मनुष्य जाति के सभी

* सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान) डॉ. बी.आर. अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

मानसिक, शारीरिक गुण मूलत: तीन गुणो - रज, तम, सत्व की अभिव्यक्तियां हैं और इन तीनों गुणों में निरंतर संघर्ष होता है और परिवर्तन होता रहा है। ताकि एक-दूसरे पर अपनी प्रधानता स्थापित कर सके। इसी प्रकार आदमी का स्वभाव भी निरंतर परिवर्तनशील है क्योंकि मनुष्य मात्र भी प्रकृति का ही अंश मात्र है। इसलिए इसमें भी निरंतर परिवर्तन की सम्भावनाएं बनी रहती हैं। यहाँ पर अम्बेडकर यह तर्क बड़ी मजबूती के साथ देते हैं कि यदि मनुष्य में तीन गुणों की प्रधानता है जिनमें प्रभुत्व के लिए संघर्ष होता है तो यह कैसे मान लिया जाए कि एक व्यक्ति में जो गुण जन्म के समय प्रधान थे वही गुण मृत्यु तक अपनी प्रधानता रखेंगे और एक व्यक्ति में एक ही स्वरूप में कोई गुण बना रहेगा इसकी क्या गारंटी है। गीता में, सांख्य दर्शन में तथा व्यवहार में कहीं भी ऐसा कोई प्रमाण देखने को नहीं मिलता की व्यक्ति विशेष में जन्म से लेकर मृत्यु तक एक सी अवस्था में गुण रहेंगे क्योंकि प्रकृति में भी परिवर्तन होते रहते हैं और मनुष्य भी प्रकृति का अभिन्न अंग है। इसलिए मनुष्य के स्वभाव में भी परिवर्तन होना लाजमी है। इस प्रकार अम्बेडकर इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि चार वर्णों वाली वर्ण व्यवस्था का मूल आधार ही गलत है।

संविधान के मुख्य शिल्पकार के रूप में अम्बेडकर ने उन मानवीय अधिकारों को दलितों तथा शूद्रों के लिए सुलभ बनवाया जो उनके लिए निषिद्ध थे। यह वे नागरिक अधिकार थे जो सदियों से अछूत वर्ग से छीन लिए गए थे।

स्त्री और शूद्रों के प्रति जो स्मृति और धर्मग्रंथों के अन्यायपूर्ण विधान से छुटकारा दिलवाया, इसी प्रकार महिला वर्ग के प्रति हो रहे अन्याय के विरुद्ध हिन्दू कोड बिल द्वारा मौलिक सुधार लाना चाहते थे। उनके मंत्री काल में उसे पारित नहीं होने दिया लेकिन बाद में उस बिल की मुख्य धाराएं किसी न किसी रूप में अन्य कानूनों के द्वारा स्वीकार कर ली गई। अम्बेडकर समान अधिकार, समान अवसर, स्वतंत्र आजीविका, स्वतंत्र व्यक्तित्व तथा सामाजिक बंधुत्व जैसे विचारों के समर्थक थे व पोषक थे और यही मुख्य मूल्य उनके सामाजिक-न्याय के दर्शन के मौलिक तत्तव हैं।

महाराष्ट्र की अछूत मानी जाने वाली महार जाति में इनका जन्म हुआ और यह भी माना जाता है कि यह महार लोग ही महाराष्ट्र के मूल निवासी थे। माँ भीमा बाई और पिता रामजी के नाम को मिलाकर इनका नाम भीमराव रामजी रखा गया। छ: वर्ष की आयु में इनकी माँ का देहांत हो गया था। इनका पालन पोषण इनकी बुआ मीरा बाई ने किया। पिता कबीरपंथी थे, अपने बच्चों को वे भजन, अभंग और दोहों का पाठ करवाते थे। इस धार्मिक शिक्षा का प्रभाव भीमराव के मस्तिष्क एवं विचारों पर पड़ा।

अम्बेडकर के जन्म से पूर्व से ही समाज के एक वर्ग विशेष की स्थिति अति दीन-दलित, पीड़ित, शोषित तथा ईश्वर व धर्म के नाम पर अस्पृश्यों की थी। जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा होने के बावजूद भी यह वर्ग सभी प्रकार के कष्टों के साथ आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सुविधाओं का अभाव झेल रहा था। विभिन्न प्रकार के अमानवीय अत्याचारों को झेलते हुए भी जिंदगी जीते लोगों को बालक भीमराव ने स्वयं महसूस व अनुभव किया था। अम्बेडकर के व्यक्तित्व पर उनके पिता का गहरा प्रभाव था। धार्मिक व आध्यात्मिक विषयों में रुचि उनको अपने पिता से विरासत में मिली थी। इनके पिता ने सतारा के स्कूलों में इनका प्रवेश कराने का अथक प्रयास किया लेकिन इनका अछूत होना इनके प्रवेश में बाधक बना। अंतत: काफी प्रयास और एक अंग्रेज अधिकारी के सहयोग से बालक को एक स्कूल में प्रवेश मिल ही गया और यहीं से अम्बेडकर को छुआछूत का आभास सर्वप्रथम इसी स्कूल में हुआ और इस स्कूल के वातावरण का इनके मस्तिष्क पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। अछूत होने के कारण विद्यालय में इनके सहपाठी और शिक्षक उनके साथ असमानता का व्यवहार करते थे। वे कक्षा कक्ष में अन्य स्वर्ण विद्यार्थियों के साथ नहीं बैठ सकते थे। उन्हें रोजाना स्कूल में जाते वक्त अपने साथ एक टाट का टुकड़ा ले जाना पड़ता था ताकि अलग से बैठ सके। पानी पीने के लिए उन्हें नल को छूने की अनुमति नहीं थी। जब भी उनको प्यास लगती थी तो उन्हें किसी अन्य लड़के या स्कूल चपरासी की आवश्यकता पड़ती थी जो इनके लिए नल खोल दे और वे सुरक्षित दूरी बनाते हुए उसमें से पानी पी लें। यदि कभी कोई नल खोलने वाला नहीं होता तो उन्हें प्यासा ही रहना पड़ता था। सामान्य और रोजमर्रा के इस अपमान के अतिरिक्त भी अनेक बार ऐसी घटनाएं घटित हुई, जिन्हे अम्बेडकर जीवनपर्यन्त नहीं भूलें। वे श्यामपट्ट को नहीं छू सकते थे क्योंकि इसके पीछे स्वर्ण विद्यार्थियों के खाने के टिफिन रखे होते थे और ब्लैक बोर्ड छूने से उनका खाना अपवित्र होने का खतरा था। स्वर्ण सहपाठियों के इस व्यवहार से अम्बेडकर का मन बेहद आहत हो गया था। और वे जीवनभर इन कटु अनुभवों को नहीं भुला पाए थे। बालक भीमराव बड़े स्वाभिमानी थे वे हर स्थिति में अपना स्वाभिमान बनाए रखना चाहते थे।

असमानता तथा अपमान की यह अत्याचारी व्यवस्था यहीं तक सीमित नहीं थी। वरन् उन दिनों तो रोजाना ही नित नए अपमान के तरीके इजाद किए जा रहे थे। जैसे नाई या हज्जाम के द्वारा अछूतों के बाल नहीं काटे जाते थे। इसलिए अम्बेडकर के बाल उनकी बहन तुलसी काटती थी। अछूत होने के कारण वे संस्कृत भाषा नहीं पढ़ सकते थे, इसलिए विवशतावश बचपन में ही उनको फारसी पढ़नी पड़ी। विद्यालय के वातावरण का उनके व्यक्तित्व पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा, लेकिन आशा की किरण के रूप में दो शिक्षक ऐसे भी आए उनके जीवन में जिनको अम्बेडकर सदैव अपनी स्मृति में रखते हैं। इन दोनों ने पग-पग पर उनको धीरज बंधाया तथा अपमान व यातना का साहस के साथ सामना करना सिखाया तथा सदैव इन्हें जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रोत्साहित करते रहे। ये शिक्षक थे श्री पेंडसे और श्री अम्बेडकर। इन दोनों को अम्बेडकर अपने विद्यालयी जीवन के सुखद प्रसंगों में रूप में देखते हैं। श्री अम्बेडकर (शिक्षक) का भीमराव के प्रति इतना स्नेह था कि इन्होंने स्कूल के रजिस्टर में भीमराव के नाम के साथ जुड़े गाँव के नाम पर आधारित 'आम्बावाडेकर' की जगह खुद का कुल नाम अम्बेडकर लिख दिया। इस प्रकार शिक्षक के द्वारा संशोधित नाम अम्बावाडेकर से अम्बेडकर इनके साथ स्थायी रूप से जुड़ गया। उपरोक्त दोनों के अतिरिक्त विल्सन हाई स्कूल बम्बई के हैडमास्टर श्री केलुस्कर ने भी अम्बेडकर को व्यवस्थित व गहन अध्ययन करना सिखाया। एलफिंस्टन कॉलेज, बम्बई में भी अम्बेडकर को श्री इरानी व श्री मूलर जैसे शिक्षक मिले जिन्होंने अम्बेडकर को स्नेह, सहयोग व प्रोत्साहन दिया।

गौतम बुद्ध के पश्चात् संत कबीर से अम्बेडकर अत्यधिक प्रभावित थे। उनका मानना था कि कबीर की कविताओं में बहुत ही सुंदर और कल्पनाशील तरीके से गौतम बुद्ध के विवेकपूर्ण और पंथनिरपेक्ष विचारों का प्रवाह होता था। कबीर से अम्बेडकर ने यह संदेश ग्रहण किया कि कोई भी व्यक्ति कभी भी इतना महान नहीं बन सकता कि उसे महात्मा मान लिया जाए क्योंकि महात्मा बनना तो दूर की बात है कोई व्यक्ति सच्चे अर्थों में मनुष्य बनना ही बेहद कठिन और परिश्रमशील है। कबीर की ही भांति वे व्यक्ति पूजा के विरोधी थे तथा अपने समस्त जीवन में व्यक्ति पूजा के तीव्र आलोचक बने रहे। उनका यही विश्वास था कि वे गांधी को महात्मा न कह

कर हमेशा श्री गांधी कहते थे।

ज्योतिबा फुले को अम्बेडकर अपना गुरु मानते थे क्योंकि 19वीं शताब्दी में महाराष्ट्र के वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने 1852 में अछूतों के लिए प्याऊ की व्यवस्था की तथा अछूतों व शूद्रों के लिए सार्वजनिक स्कूल खोला जिसमें अध्यापन का कार्य वे और उनकी पत्नी श्रीमती सावित्री बाई फुले करती थीं। लेकिन अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि स्वर्ण लोग उनके इस कार्य में सदैव बाधा ही डालते थे। ज्योतिबा फुले का यह स्पष्ट मत था कि कोई भी व्यक्ति जन्म से छोटा या बड़ा नहीं होता तथा उच्चता और निम्नता का विचार सामाजिक विकृति है। हालांकि यह भी उल्लेखनीय है कि फुले मनुस्मृति के भी कटु आलोचक थे उनका मानना था कि मनु स्मृति भारत में सामाजिक-न्याय की स्थापना तथा सामाजिक एकता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। फुले ने वेदों के अतिमानवीयता के दर्शन तथा ब्राह्मणों के वर्चस्व की भी आलोचना की। उन्होंने शूद्रों को स्वर्णों द्वारा उन पर किए जा रहे अत्याचारों के विरुद्ध जागृत करने का भी कार्य किया। अम्बेडकर ने ज्योतिबा फुले के प्रति अपने सम्मान को प्रकट करते हुए अपनी पुस्तक 'हू आर दी शूद्राज' में फुले को आधुनिक भारत के ऐसे महानतम शूद्र के रूप में वर्णित किया है जिसने कि हिन्दुओं के पिछड़े वर्गो को स्वर्णों द्वारा किए जा रहे अन्याय के प्रति जागरूक किया और यह संदेश दिया कि भारत के लिए विदेशी स्वतंत्रता की अपेक्षा समाजिक लोकतंत्र अधिक आवश्यक है।

अम्बेडकर मार्क्स की वर्ग संघर्ष की धारणा से भी प्रभावित हुए। मार्क्स की ही भांति उनका भी विश्वास था कि पीड़ित और शोषित व्यक्तियों को स्वयं अपनी दासता से मुक्ति के लिए संगठित होकर शोषकों के विरुद्ध निर्णायक संघर्ष करना होगा। अम्बेडकर ने मार्क्स के इस विचार का समर्थन नहीं किया कि आर्थिक रूप ही शोषण का एकमात्र कारण होता है वरन् अम्बेडकर की मान्यता थी कि सामाजिक शोषण भी आर्थिक शोषण की भांति बेहद कष्टप्रद होता है। वे साम्यवादी अधिनायक राज्य के द्वारा उद्योगों को अधिग्रहण करने के पक्ष में नहीं थे वरन् उनका विचार था कि उद्योगों का शनैः शनैः और संसदीय तरीकों से राष्ट्रीयकरण करना चाहिए।

अम्बेडकर कोलम्बिया विश्वविद्यालय के शिक्षक जॉन डिवे से भी प्रभावित थे। उनका प्रभाव अम्बेडकर पर इन विचारों के द्वारा समझा जा सकता है कि सामाजिक प्रश्नों पर केवल सैद्धांतिक और शैक्षणिक दृष्टि से विचार करने की अपेक्षा ऐसे दृष्टिकोण को अपनाया जाना चाहिए जो व्यावहारिक हो तथा सर्वसाधारण के लिए अपनाए जाने योग्य हो। क्योंकि शिक्षा केवल संसार को जानने का माध्यम ही नहीं है अपितु उसे परिवर्तित करने का भी एक प्रभावशाली साधन है। ऐसी धारणाओं के वशीभूत होकर ही अम्बेडकर ने अस्पृश्यों और दलितों के लिए शिक्षा की प्रभावशीलता और उपयोगिता को समझा और माना की दलितों के उत्थान के लिए उनका शैक्षणिक उत्थान होना अति आवश्यक है। क्योंकि दलितों का उत्थान तब तक नहीं होगा जब तक वे राज्य, सरकार, और समाज तीनों के साथ अपना संघर्ष नहीं करेंगे। अम्बेडकर ने रानाडे का भी यह विचार ग्रहण किया कि लक्ष्यों का निर्धारण काल्पनिक और अत्यन्त आदर्शवादी नहीं होना चाहिए तथा समस्याओं के प्रति व्यवस्थित और व्यवहारिक दृष्टिकोण रखा जाना चाहिए। गांधी के अम्बेडकर जीवनपर्यन्त आलोचक रहे लेकिन अछूतों के लिए उनके द्वारा किए जा रहे कल्याणकारी कार्यो के वे प्रशंसक भी रहे तथा संघर्ष की गांधीवादी शैली सत्याग्रह व असहयोग को अम्बेडकर ने अपनाया तथा गांधी की तरह अम्बेडकर भी यह स्वीकार करते थे कि शक्ति द्वारा किए गए परिवर्तन स्थायी महत्तव के नहीं हो सकते क्योंकि दूरगामी लक्ष्य निर्धारित तथा मूलभूत परिवर्तन सत्याग्रह तथा अहिंसक माध्यमों से ही लाए जा सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर में सामाजिक-न्याय की भावना को दृढ़ करने वाले उक्त व्यक्तियों के अलावा कुछ तथ्य भी रहे हैं जिनसे वे बहुत प्रेरित हुए। जैसे जब वे अमरीका में थे तो वहाँ वे दो बातों से बहुत प्रभावित रहे। पहला तथ्य अमरीकी संविधान का चौदहवां संशोधन जिसमें नीग्रो लोगों की दासता समाप्त करने का प्रावधान था। अम्बेडकर ने इन नीग्रो प्रजाति के लोगों में भारत के अछूतों का प्रतिबिम्ब देखा, जिनको भारत में किसी प्रकार का कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। दूसरा वाशिंगटन के जीवन व संघर्ष से भी वे काफी प्रभावित हुए। उन्होंने अमरीका में नीग्रो जाति के लिए महान समाज सुधार का मार्गदर्शन किया तथा नीग्रो लोगों में शिक्षा का प्रचार प्रसार किया जिसके फलस्वरूप नीग्रो लोगों में चेतना जागृत हुई और उन्होंने संघर्ष करके दासता से मुक्ति पायी।

राजनीतिक संस्थाओं ने भी अम्बेडकर को बहुत प्रभावित किया। इस संदर्भ में ब्रिटेन का संसदात्मक लोकतंत्र उनका आदर्श था। इस संदर्भ में उनका यह विचार था कि भारत की राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों पर पश्चिम का व्यापक प्रभाव था। उनका मानना था कि केवल पाश्चात्य प्रणालियों के प्रभाव से अछूत अपनी जंजीरें तोड़ सकते हैं क्योंकि किसी भी देश में मनुष्यों का जीवन निर्माण जन्म से नहीं कर्म से होता है तथा भारतीय राजनीति में आने से पूर्व ही अम्बेडकर ने पाश्चात्य विचारधाराओं का अध्न कर लिया था और यह समझ चुके थे कि हिन्दू समाज में अछूतों के उत्पीड़न एवं शोषण का मूल कारण वर्णजनित जाति व्यवस्था है।

सन् 1923 में अम्बेडकर लंदन से भारत आए। आते ही उन्होंने देखा कि अछूतोद्धार आंदोलन का संचालन स्वर्ण हिन्दू कर रहे हैं। इस बात से वे सहमत नहीं थे वरन् उनका मानना था कि अछूतों द्वारा ही अपने सुधार आंदोलनों का नेतृत्व किया जाना चाहिए। उनके नेतृत्व में अछूतों के लिए मानव अधिकारों की माँग का आंदोलन चलाया गया। प्रथमतः बम्बई में अछूतों की सभा करके उन्होंने अंत्यज संघ की स्थापना की जिसका मूल उद्देश्य अछूतों की हर प्रकार की सेवा व सहायता करना था। इस संगठन द्वारा अछूतों की शिक्षा व्यवस्था के लिए कुछ चंदा एकत्र किया जाता था। इस संगठन ने दलितों की बस्तियों में वाचनालय व छात्रावास खोले। फलस्वरूप दलितों में शिक्षा के प्रति आकर्षण पैदा हुआ और सामाजिक, राजनीतिक व शैक्षणिक चेतना का उदय हुआ।

दलितों में चेतना के ठोस प्रयास की शुरूआत 20 जुलाई, 1924 को अम्बेडकर ने बम्बई में बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना से मानी जा सकती है। इस सभा का कार्यक्षेत्र बम्बई था। इसका कार्य भी अंत्यज संघ की तरह अछूतों के उद्धार का कार्य करना था। अम्बेडकर की यह मंशा थी कि अछूतोद्धार आंदोलन का संचालन अछूत स्वयं करे। उन्हें विश्वास था कि ऐसा करने से दलितों में स्वावलम्बन, आत्मविश्वास, और आत्मसम्मान की भावनाएं उत्पन्न होगी। यह भावनाएं आवश्यक भी हैं क्योंकि इनके बिना अछूतों का उत्थान सम्भव नहीं था। अप्रैल, 1925 में रत्नागिरी जिले के माफवण नामक गाँव में बम्बई प्रांतीय अस्पृश्य परिषद का पहला अधिवेशन हुआ जिसकी अध्यक्षता करते हुए अम्बेडकर ने अछूतों को विश्वास दिलाया कि वे अछूतोद्धार को नया मोड़ देंगे और सच्चे व निःस्वार्थ भाव से इसके साथ जुड़े रहेंगे। यहाँ भी देखना आवश्यक हो जाता है कि अम्बेडकर अछूतोद्धार आंदोलन को एक नया मोड़ क्यों देना चाहते थे? ऐसी संस्थाओं और संगठनों का अभाव नहीं था जो दलितों के उत्थान में रुचि रखते थे।

उनमें से कुछ हिन्दू समाज को सुधारना चाहते थे।

अम्बेडकर ने परिवार से सम्बन्धित सुधार और वास्तविक समाज सुधार में भेद किया। अम्बेडकर का स्पष्ट मत था कि वह समाज सुधार आंदोलन जिसका संचालन रानाडे जैसे समाज सुधारक और अनेक समाज सुधारकों ने किया उनका सम्बन्ध परिवार सुधार जैसे विधवा विवाह, स्त्री का सम्पत्ति का अधिकार, स्त्री शिक्षा, बाल विवाह आदि से था। वह कहने को समाज में सुधार करने का प्रयास था लेकिन हिन्दू समाज में मौलिक परिवर्तन के पक्ष में नहीं थे। वास्तविका समाज सुधार जाति और वर्ण व्यवस्था की समाप्ति था जिसकी ओर सुधारकों का ध्यान कम था। इन उपरोक्त संगठनों ने हिन्दू समाज में नई चेतना का संचार तो अवश्य किया परन्तु वर्ण और जाति को जड़ से समाप्त करने का उत्साह उन्होंने नहीं दिखाया। समाज के निचले स्तर पर सुधार करने में उन्होंने कोई उत्साह नहीं दिखाया और यही कारण था कि प्रार्थना सभा, ब्रह्म समाज, आर्य समाज और हिन्दू महासभा जैसी संस्थाएं समाज में मौलिक परिवर्तन नहीं ला पायी।

अम्बेडकर का मानना था कि अछूतों को मानवीय अधिकार होने चाहिए ताकि वे स्वयं को मानव प्राणी समझे। इनका मानना था कि दलितों व शोषितों में सामाजिक एवं आर्थिक रूप से जागृति आए लेकिन यह कार्य इतना आसान नहीं था क्योंकि कट्टर हिन्दुओं द्वारा इसका कड़ा प्रतिरोध किया जा रहा था। अत: सतत् संघर्ष किए बिना हिन्दू समाज में दलितों को मानवाधिकार प्राप्त नहीं हो सकते। अत: उचित यही होगा कि संघर्ष के साथ-साथ सत्याग्रह किया जाए। इनके द्वारा किए गए सत्याग्रहों में दो प्रमुख थे महाड़ का जल सत्याग्रह और दूसरा नासिक का धर्म सत्याग्रह। इन दोनों सत्याग्रह का विवेचन इस प्रकार है।

महाड़ का जल सत्याग्रह – महाड़ के चौदार तालाब का पानी जो अछूतों के लिए प्रतिबंधित था, जबकि बाम्बे काउन्सिल ने 4 अगस्त, 1923 को यह प्रस्ताव पारित कर दिया था कि अछूतों को सार्वजनिक स्थानों का प्रयोग करने दिया जाए। इसी आदेशानुसार कौलाब जिले की महाड़ नगरपालिका ने सन् 1924 में चौदार तालाब से पानी भरने का अधिकार अछूतों को दे दिया था। परन्तु स्वर्ण हिन्दू अछूतों को पानी नहीं भरने दे रहे थे। यहाँ एक विचित्र बात यह हो रही थी कि यदि कोई दलित ईसाई या मुसलमान हो जाए तो वह चौदार तालाब से पानी पी सकता था, परन्तु वह अछूत के रूप में उस पानी को छू भी नहीं सकता था। इसके लिए उन्होंने 19 और 20 मार्च, 1927 को महाड़ में दलित जाति परिषद की ओर से एक सभा का आयोजन किया, जिसमें महाराष्ट्र तथा गुजरात के दूर-दूर स्थानों से स्त्री-पुरुष एकत्रित हुए। अपने अध्यक्षीय भाषण में अम्बेडकर ने दलितों को समझाया कि ऐसा काम करो जिससे तुम्हारे बच्चे तुम्हारे से अच्छी स्थिति में रहे। कुलीनता और हीनता की भावना को समाप्त करे तथा स्वावलम्बन, स्वाभिमान और स्वविवेक के बल पर ऊँचे उठे। अपना पुराना कार्य छोड़ें तथा सरकारी नौकरियों में भर्ती होवें, खेती के लिए जंगलों की खाली जमीन पर अधिकार करें। 20 मार्च को तालाब से पानी पीने की माँग को व्यावहारिक रूप दिया जाना तय हुआ। अम्बेडकर के नेतृत्व में लगभग पाँच हजार नर-नारियों के एक जुलूस ने नियंत्रित ढंग से चौदार तालाब की तरफ कूच किया। इसके प्रतिरोध में कुछ लोगों ने यह अफवाह फैला दी कि अछूत मंदिर में प्रवेश की योजना बना रहे हैं। इस खबर से उत्तोजित हिन्दुओं ने अछूतों के सभा स्थल को तहस-नहस कर डाला और अछूतों को पीट-पीट कर भागने पर मजबूर कर दिया। स्वर्णो के इस हिंसक कृत्य को देखकर अम्बेडकर ने कहा कि अब हमारे लोगों को चाहिए कि वे आक्रामक कदम उठाए एवं सार्वजनिक पनघटों से पानी भरने का अपना अधिकार छीने तथा जबरदस्ती मंदिरों में प्रवेश करें। छुआछूत के विरुद्ध यह एक ऐतिहासिक निणर्य था। इस घटना से अम्बेडकर तनिक भी निरुत्साहित नहीं हुए बल्कि नयी स्फूर्ति को साथ लेकर अपनी कठिनाइयों तथा अयोग्यताओं को समाप्त करने के लिए प्रोत्साहित हुए। उनमें आत्मसम्मान एवं आत्म उत्थान की भावनाएं जागृत हो गई। महाड़ आंदोलन ने अछूतों को संगठित कर दिया और वे समझ गए कि संघर्ष के बिना कोई अधिकार प्राप्त नहीं होगा। उन्हें संगठित होकर ही संघर्ष करना पड़ेगा।

महाड़ के सनातनी हिन्दुओं ने अछूतों द्वारा चौदार पानी को अपवित्र कर देने के बाद पुन: तालाब को शुद्ध करने का संस्कार कियास। ब्राह्मण पुरोहितों द्वारा तालाब शुद्ध करने के बाद स्वर्ण हिन्दू फिर से तालाब में पानी भरने लगे। साथ ही महाड़ नगरपालिका ने स्वर्ण हिन्दुओं के दबाव में आकर सरकार का यह आदेश रद्द कर दिया, जिसके अंतर्गत अछूतों को तालाब से पानी भरने का अधिकार दिया गया था। अम्बेडकर ने इन दोनों चुनौतियों को स्वीकार कर एक बार फिर महाड़ सत्याग्रह समिति की स्थापना की तथा 25 दिसम्बर, 1926 को अम्बेडकर अपने साथियों के साथ महाड़ पहुँचे। वहाँ के जिलाधीश ने अम्बेडकर को बताया कि स्वर्ण हिन्दुओं ने चौदार तालाब को खानगी सम्पत्ति होने का दावा न्यायालय में किया है और जब तक इस बात का फैसला न हो जाए तब तक आप लोग सत्याग्रह न करे और अदालत के निर्णय तक सत्याग्रह स्थगित कर दे। ऐसी परिस्थितियां बनती देख अम्बेडकर ने यह निर्णय लिया कि सत्याग्रह भविष्य में सम्भव नहीं होगा। अत: उचित होगा कानूनी कार्यवाही की जाए और उन्होंने चौदार तालाब से अछूतों को पानी पीने का अधिकार दिलाने का दावा पेश कर दिया। अदालत में कई वर्षो तक अम्बेडकर स्वयं मुकदमे की पैरवी करते रहे और अंतत: 17 मार्च, 1936 को दलितों की विजय हुई। यह विजय सामाजिक-न्याय के संघर्ष की ऐतिहासिक विजय कही जा सकती है।

नासिक धर्म सत्याग्रह – 2 मार्च, 1930 में नासिक का कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलन भी दलितों की सामाजिक-न्याय की प्राप्ति की दिशा में एक और कदम था। इस आंदोलन का प्रारम्भिक उद्देश्य हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन करना था। इसके लिए उन्होंने शांतिपूर्ण सत्याग्रह का आयोजन किया और एक शांतिपूर्ण जुलूस मंदिर तक निकाला। यह संघर्ष एक वर्ष तक चलता रहा क्योंकि स्वर्ण हिन्दू किसी भी कीमत पर दलितों को मंदिर में प्रवेश नहीं देना चाहते थे। स्वर्ण हिन्दुओं में ना तो अछूतों को कालाराम मंदिर में प्रवेश करने दिया और ना ही गोदावरी घाट पर स्नान करने दिया। अछूत लोगों ने भी सत्याग्रह और संघर्ष निरंतर जारी रखा। परिणाम यह हुआ कि हिन्दुओं को भी मंदिर के दरवाजे एक साल तक के लिए बंद रखने पड़े। अंत में एक समझौते के माध्यम से यह आंदोलन समाप्त हुआ। परन्तु स्वर्ण हिन्दू समझौते की शर्तों पर स्थिर नहीं रहे। अक्टूबर, 1935 में कालाराम मंदिर प्रवेश के लिए एक कानून बना और मंदिर के दरवाजे अछूतों के लिए खोल दिए गए।

महारो के लिए संघर्ष – महारों के वंशानुगत अधिनियम के अनुसार कुछ निर्धारित नौकरियों में काम करने वाले महारों को दिन-रात कार्य करना पड़ता था तथा काम पर न जाने की स्थिति में व्यक्ति विशेष की जगह किसी अन्य व्यक्ति को कार्य करना पड़ता था। चौबीस घंटे के बंधुआ मजदूरों की स्थिति के कारण इनकी स्थिति बद से बदतर हो गयी। इनको इस अमानवीय स्थिति से मुक्ति दिलाने के लिए अम्बेडकर ने 17 दिसम्बर, 1917 को बम्बई विधानसभा के पूना अधिवेशन में एक प्रस्ताव रखा तथ्झा 1959 में बम्बई इन्फीरियर विलेज वर्क्स एबोलिशन एक्ट के द्वारा इस प्रथा को समाप्त किया

गया। तब तक यह संघर्ष चलता रहा। सामाजिक-न्याय की दिशा में यह एक क्रांतिकारी विजय थी। इन सामाजिक समानता व मानवतावादी तथा सामाजिक-न्याय रूपी इन आंदोलनों से अम्बेडकर के साथ दलितों ने यह सिद्ध कर दिया कि -

1. अछूत हिन्दू समाज का भाग नहीं है और वे सामाजिक रूप से हिन्दुओं से कई मामलों में भिन्न हैं।
2. वे दलितों व शोषितों से इस मनोवैज्ञानिक धारणा को निकालने में एक सीमा तक सफल रहे कि ईश्वर सर्वशक्तिमान है। क्योंकि शूद्रों के मंदिर प्रवेश ने यह सिद्ध कर दिया कि शूद्र ईश्वर से ज्यादा शक्तिशाली है। क्योंकि इनके स्पष्ट मात्र से ही ईश्वर अपवित्र हो जाता है।
3. शूद्रों ने गीता का इस श्लोक 'यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत, अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानय सृजाम्यहम' को भी अप्रासंगिक बना दिया क्योंकि हिन्दुओं ने अछूतों व शूद्रों के लिए जो प्रतिबंध लगाए थे वे अब शून्य हो गए हैं और हिन्दुओं के अनुसार अछूत अगर मंदिर प्रवेश करेंगे तो धर्म की हानि होगी लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ।

साइमन कमिशन, सामाजिक-न्याय और अम्बेडकर - प्रमुखत: ब्रिटिश सरकार के प्रति फैल रहे असंतोष को कम करने तथा भारत के प्रशासन में सुधार लाने के उद्देश्य से भारत सरकार अधिनियम, 1919 के तहत ब्रिटिश सरकार ने एक आयोग का गठन किया, जो कि भारत के लि ए यह मापदण्ड सुनिश्चित करे जिससे यहाँ के लोगों को और अधिक संवैधानिक अधिकार दिए जाए और उनका स्वरूप क्या हो तथा अल्पसंख्यकों, दलितों, शोषितों के विकास का मूल्यांकन हो। ब्रिटिश सरकार का दलितों के सामाजिक-न्याय की दिशा में एक महत्तवपूर्ण निर्णय था। हालांकि यह भी एक तथ्य है कि इसमें एक भी भारतीय सदस्य नहीं था। इसलिए इस पर तुरंत प्रतिक्रिया भी हुई। यह आयोग भारत के राजनीतिक भविष्य को निश्चित करता और इसके लिए किसी भी भारतीय को न लिया जाने के कारण समस्त भारत में तेज बहादुर सप्रु के नेतृत्व में इस आयोग का बहिष्कार किया गया। आयोग का विरोध किया गया, इस विरोध को ब्रिटिश सरकार ने दमन कर दबा दिया। चूंकि यह आयोग भारत की दबी, पिछड़ी, दलित जातियों के साथ हो रहे असमानता, दुर्व्यवहार और शोषण की भी जाँच कर रहा था, इसलिए कानपुर में कुछ स्थानों पर इसका स्वागत भी किया गया। अम्बेडकर व स्वामी अछूतानंद ने भी दलितों की समस्याओं के सम्बन्ध में आए आयोग का स्वागत किया। साइमन कमिशन के सहयोग के लिए गठित समिति मे बम्बई से अम्बेडकर को चुना गया।

अम्बेडकर ने जिस तरह दलितों और अछूतों का पक्ष आयोग के सामने रखा उससे प्रभावित होकर ब्रिटिश सरकार ने अछूतों और दलितों की समस्याओं पर ध्यान देना शुरू कर दिया और परिणामस्वरूप भारत के इतिहास में पहली बार केन्द्रीय असेम्बली, नई दिल्ली में जिन 14 सदस्यों की नियुक्ति हुई उनमें से एक स्थान अछूतों के लिए आरक्षित किया गया। इसी प्रकार प्रांतीय विधानसभाओं में भी इनके लिए प्रतिनिधित्व रखा गया जैसे बम्बई-2, बंगाल-1, मद्रास में विभिन्न जातियों के लिए 10 स्थान स्थान तत्कालीन सेन्ट्रल इण्डिया (मध्य प्रदेश) में 4 स्थान सुरक्षित किए गए। इस प्रकार प्रथम बार अस्पृश्यों को विधानसभाओं में मनोनीत किया गया। ब्रिटिश सरकार के सामने जिस तरह अम्बेडकर ने अस्पृश्यों का पखा रखा यह उसकी का परिणाम था।

यह अम्बेडकर की दूरदर्शिता का ही परिणाम था कि ब्रिटिश सरकार ने उनकी समस्याओं को गम्भीरता से लेते हुए 1930 और 1932 की अवधि में लंदन में हुए तीनों गोलमेज सम्मेलनों में भारतीयों की अनेक समस्याओं के साथ-साथ दलितों की समस्याओं को भी इनमें शामिल किया और भारत से इनके प्रतिनिधि के रूप में अम्बेडकर को ही प्रतिनिधि माना और इन गोलमेज सम्मेलन में अम्बेडकर ने सामाजिक-न्याय की प्राप्ति के लिए आवाज बुलंद की।

गोलमेज सम्मेलन एवं सामाजिक-न्याय - साइमन कमिशन की रिपोर्ट में यह सिफारिश की गई कि दलित वर्गों में से उस समय तक कोई चुनाव नहीं लड़ सकता जब तक वह प्रांत के गवर्नर द्वारा योग्यता का प्रमाण-पत्र प्राप्त न कर ले। यह एक विचित्र शर्त थी और अछूतों के लिए अपमान की बात थी, जिसका प्रतिरोध स्वयं अम्बेडकर ने भी किया था। 6 सितम्बर, 1930 को वायसराय के द्वारा अम्बेडकर को गोलमेज परिषद का निमंत्रण प्राप्त हुआ। यह एक अविस्मरणीय घटना थी, क्योंकि भारत की भावी राजनीतिक व्यवस्था में अछूतों की राय ली जा रही थी। लगभग दो हजार वर्षों से लगातार शोषित रहने के पश्चात् यह अवसर आया जिसके लिए सुयोग्य प्रतिनिधि अम्बेडकर ही थे। अछूतों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ले जाने का श्रेय उन्हीं को था। अछूतों के लिए सामाजिक-न्याय के संघर्ष में अम्बेडकर का गोलमेज सम्मेलनों में प्रतिनिधित्व करना एक अन्य महत्तवपूर्ण सफलता थी। उन्होंने अपने लोगों को यह आश्वस्त किया कि हम स्वराज्य के महत्तव को भी कम नहीं होने देंगे। जहाँ स्वराज्य हर भारतीय का जन्मसिद्ध अधिकार है वहीं हम भारत में रहने वाले अछूतों को भी सम्मानपूर्वका जीने का जन्मसिद्ध अधिकार है।

12 नवम्बर, 1930 को इस प्रथम सम्मेलन आरम्भ हुआ। अम्बेडकर के साथ ही अछूतों के दूसरे प्रतिनिधि रायबहादुर श्रीनिवास थे। कुल 89 प्रतिनिधियों ने विभिन्न हितों का प्रतिनिधित्व किया। ब्रिटिश प्रधानमंत्री राम्जे मैक्डोनल्ड की अध्यक्षता में यह प्रथम गोलमेज सम्मेलन आरम्भ हुआ। 20 नवम्बर को प्रारम्भिक सत्र की पांचवी बैठक में अम्बेडकर ने अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करने का पुन: अवसर प्राप्त हुआ। जिसको स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा जिस वर्ग की मैं बात कर रहा हूँ उनकी संख्या हिन्दुस्तान की कुल जनसंख्या का पाँचवां भाग है अर्थात् इंग्लैण्ड अथवा फ्रांस की जनसंख्या के बराबर, परन्तु मेरे उन अछूत भाइयों-बहनों की स्थिति गुलामों से भी बदतर है, हमें छूना भी पाप समझा जाता है। ब्रिटिश राज से पहले भी हम अस्पृश्यता की घृणित अवस्था में जीवनयापन कर रहे थे, क्या ब्रिटिश सरकार ने हमारी हालत सुधारने के लिए कुछ किया है। पहले हम कुओं, तालाबों से पानी नहीं भर सकते थे, क्या ब्रिटिश शासन ने हमें यह अधिकार दिलाया? ब्रिटिश शासन से पूर्व हमें मंदिरों में प्रवेश नहीं दिया जाता था, क्या अब प्रवेश दिया जाता है? महोदय इन सबका उत्तार नहीं है। ब्रिटिश राज के सामने क्योंकि इस राज्य में भी हमारी दशा वैसी ही है जैसे कि पूर्व भारत में सदियों से चली आ रही है। ब्रिटिश शासन से पूर्व भी हमारे लिए पुलिस सेवा में भर्ती होना निषेध था। क्या अब ब्रिटिश सरकार हमें पुलिस सेवा में लेती है, ऐसे अनेक प्रश्न है जिनका उत्तार नकारात्मक है। दलितों की समस्या है, सदियों से हमारे समाज में सामाजिक-न्याय का हनन किया जा रहा है। सामाजिक-न्याय की सिर्फ बातें ही की जाती हैं, परन्तु उसके हनन का कहीं भी प्रतिरोध नहीं किया जाता है। अम्बेडकर ने माँग की कि आज अछूत भी मौजूदा राज्य के स्थान पर जनता के लिए जनता का राज्य चाहते हैं। मजदूर और किसानों का शोषण करने वाले पूंजीपतियों और जमींदारों की रक्षक सरकार नहीं चाहते। अम्बेडकर ने यह स्पष्टत: कहा कि हमारे दुखों को अपने सिवाय और कोई नहीं मिटा सकता। हम उन्हें उस समय तक समाप्त नहीं कर सकते, जब तक कि हमारे हाथों में राजनीतिक सत्ताा न आ जाए।

दलित वर्गों ने सरकारी चमत्कार देखने के लिए लम्बे अर्से तक इंतजार किया अब और इंतजार नहीं किया जा सकता। इस भाषण में अम्बेडकर ने भारत के लिए एक डोमिनियन स्टेट की माँग की। निरंतर वाद-विवाद के पश्चात् भी गोलमेज परिषद में हिन्दू-मुस्लिम समझौता न हो सका। प्रथम गोलमेज परिषद का मुख्य योगदान यह रहा कि भारतीय राजनीतिक क्षितिज पर दलित वर्गों का निश्चित उद्भव सामने आया। अम्बेडकर ने उनके दुख-दर्द का जो चित्रण किया उससे विश्व जनमत उनके पक्ष में उभरने लगा।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन – प्रथम गोलमेज सम्मेलन का कांग्रेस ने बहिष्कार किया था। इस सम्मेलन का महत्तवपूर्ण विवाद यह था कि दलितों का वास्तविक प्रतिनिधित्व किसे प्राप्त है। गांधी का कहना था कि कांग्रेस ही एकमात्र प्रतिनिधि है समस्त भारतीयों की। अत: गांधी ही समस्त भारत की जनता के प्रतिनिधि हैं। जबकि दूसरी ओर अम्बेडकर का यह कहना था कि वे अछूतों के सच्चे प्रतिनिधि हैं। अम्बेडकर का यह मत था कि कांग्रेस तथा गांधी का यह दावा कि वे दलित वर्गों के प्रतिनिधि हैं, यह सरासर गलत है और जब भारत के अछूतों को इस बात का ज्ञान हुआ तब लंदन स्थिति ब्रिटिश सरकार को तार भेजे गए कि भारत से अछूतों के एकमात्र प्रतिनिधि अम्बेडकर ही हैं। इन सब बातों के साथ अम्बेडकर ने यह कहा कि दलितों का कोई मित्र नहीं है। सरकार उनका उपयोग अपनी सत्ताा सुरक्षित रखने के लिए करती है। हिन्दू हमें अपनी दासता के लिए ही मान्यता देते हैं, मुसलमान भी हमें अलग समुदाय के रूप में स्वीकार नहीं करते क्योंकि उन्हें डर है कि उनके विशेषाधिकारों में कटौती होगी। इस तरह हमें हर तरह से सताया जा रहा है और हम असहाय अवस्था में रहने को मजबूर हैं, जहाँ पर मानव अधिकारों का कोई मूल्य नहीं है।

जबकि दूसरी ओर गांधी की दलील यह थी कि मैं दलितों के पृथक राजनीतिक अधिकार और संरक्षण के विरुद्ध हूँ क्योंकि यह एक प्रकार का आत्मघात ही होगा। अछूतों के बिना हिन्दू समाज अपूर्ण है। वर्णाश्रम धर्म के अनुसार यह चौथा वर्ण है और अगर यह वर्ण अलग हो गया तो हिन्दू समाज विकलांग हो जाएगा और मैं नहीं चाहता कि हिन्दू समाज का अंग-भंग हो।

सदियों से दबी कुचली जातियों को उनके राजनीतिक अधिकारों को दिलाने के लिए अम्बेडकर ने इस सम्मेलन में उनके लिए पृथक प्रतिनिधि और पृथक चुनाव क्षेत्र की माँग प्रस्तुत की क्योंकि वे स्वर्ण हिन्दू दासता से दुखी थे। अपने ही देश में राजनीतिक, सामाजिक दासता से पीड़ित थे। सम्मेलन में अम्बेडकर के इस प्रस्ताव का कांग्रेस सहित भारतीय दलों के प्रतिनिधियों ने विरोध किया। लेकिन अंग्रेज सरकार ने पिछड़ी जातियों की नाजुक स्थिति को देखते हुए उनके लिए अलग चुनाव क्षेत्र की माँग को स्वीकृति प्रदान कर दी। ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने अम्बेडकर के तर्कों और दृष्टिकोण को न्यायोचित बताया।

इस सम्मेलन की अल्पसंख्यक समिति में अम्बेडकर ने ब्रिटिश सरकार के नए संविधान में ब्रिटिश सरकार से दलित वर्ग के सामाजिक-न्याय की प्राप्ति हेतु सात अधिकारों की माँग की जिसे स्वीकार कर लिया गया। सामाजिक-न्याय की प्राप्ति में आगे चलकर जो सहायक सिद्ध हुए वे सात अधिकार निम्न थे –

1. समान मूल अधिकार
2. भेदभावपूर्ण व्यवहार के विरुद्ध संवैधानिक संरक्षण
3. सरकारी नौकरियों में आरक्षण
4. विधानसभा सीटों के लिए आर क्षण
5. दलितों और पिछड़ों के सामाजिक कल्याण के लिए अलग विभाग
6. पिछड़ों का सामाजिक बहिष्कार करने वालों को सजा की व्यवस्था
7. शोषण से उन्मुक्ति का प्रावधान

इस प्रकार अम्बेडकर ने सामाजिक-न्याय की लड़ाई को ब्रिटिश संसद में उठाकर अछूतों की समस्याओं की संवैधानिक स्थिति सुधारने का आह्वान किया।

साम्प्रदायिक पंचाट (पूना पैक्ट), अम्बेडकर और सामाजिक-न्याय – 1931 के द्वितीय गोलमेज सम्मेलन लंदन में अम्बेडकर ने जिस तरह ब्रिटिश प्रधानमंत्री के सामने दलित व शोषित समाज का वास्तविक स्वरूप उजागर किया था उससे प्रभावित होकर तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री श्री रेम्जे मैक्डोनाल्ड ने 17 अगस्त, 1932 को कोम्यूनल अवार्ड की घोषणा कर दी, जिसमें दलितों, अल्पसंख्यकों और स्त्रियों के लिए कुछ विशेष प्रावधानों की व्यवस्था थी, जो निम्न प्रकार से थी –

1. अछूतों को अल्पमत मानते हुए उन्हें पृथक निर्वाचन तथा प्रतिनिधित्व का अधिकार दे दिया गया।
2. सीमा प्रांत को छोड़कर शेष अन्य प्रांतों की व्यवस्थापिकाओं में महिलाओं के लिए पाँच प्रतिशत सीटों का आरक्षण किया गया।
3. मुसलमान, सिक्ख, भारतीय ईसाइयों को भी अल्पमत मानते हुए उनके लिए भी पृथक निर्वाचन की व्यवस्था की गई।
4. उन प्रांतों में जहाँ भी मुसलमान अल्पमत में थे तथा हिन्दुओं और सिक्खों के लिए पंजाब में अलग-अलग प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई।

पूना पैक्ट के 9वें पैरा के अनुसार अछूतों को पृथक चुनाव द्वारा आत्मनिर्णय का अधिकार मिला। साथ ही वयस्क अछूतों को सामान्य निर्वाचन में भी अपना अलग वोट देने का अधिकार दिया गया अर्थात् अपने प्रतिनिधियों का स्वयं के वोट से चुनाव तथा अन्य प्रतिनिधियों को भी वोट देना।

गांधी ने अछूतों को पृथक निर्वाचन के अधिकार दिए जाने पर घोर आपत्तिा की और 18 अगस्त, 1932 को पूना की यर्वदा जेल से ब्रिटिश प्रधानमंत्री को सूचित किया कि वे इस निर्णय के विरुद्ध 20 सितम्बर, 1932 से जेल से आमरण अनशन आरम्भ कर देंगे तथा यह अनशन तभी समाप्त करेंगे जब सरकार अछूतों के पृथक निर्वाचन सम्बन्धी निर्णय को वापिस लेगी। गांधी की लगातार यह माँग थी कि अछूतों को हिन्दू समाज से अलग नहीं रखा जाए क्योंकि वे हिन्दू समाज के अविभाज्य अंग हैं। यह निर्णय हिन्दू धर्म तथा हिन्दू समाज को सदैव के लिए विभाजित कर देगा। अत: अछूतों का पृथक निर्वाचन शीघ्र रद्द करने की माँग को लेकर उन्होंने 20 सितम्बर, 1932 को जेल में ही अपना आमरण अनशन प्रारम्भ कर दिया। गांधी के अनशन पर चले जाने का अम्बेडकर को दु:ख हुआ, उनको यह शिकायत थी कि गांधी ने इसाइयों और मुसलमानों को उसी साम्प्रदायिक निर्णय में स्वकीृत पृथक प्रतिनिधित्व के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं कहा और अछूतों को प्राप्त उसी अधिकार के लिए प्राण देने पर उतारू हो गए हैं। जबकि गांधी ने उस प्रार्थना पत्र पर हस्ताक्षर भी किए हैं जिसमें ब्रिटिश प्रधानमंत्री को निर्णय लेने के लिए अधिकृत किया था। और सब उस निर्णय को मानने के लिए बाध्य थे और अब उसी से मुकर रहे हैं। यह कैसी बात हुई।

अम्बेडकर का कहना था कि हमने पृथक निर्वाचन मण्डल की माँग करके हिन्दू समाज का अहित नहीं सोचा है। अपने भाग्य का निर्माण करने के लिए हमें स्वर्ण हिन्दुओं की कृपा पर निर्भर नहीं रहना पड़े इसलिए हमने अलग निर्वाचन मण्डल का रास्ता चुना है।

गांधी के आमरण अनशन को तुड़वाने के लिए यह जरूरी था कि ब्रिटिश

प्रधानमंत्री के निर्णय को बदलवाया जाए और इसके लिए अम्बेडकर की सहमति की आवश्यकता थी। उधर दलितों को स्वर्णो के आक्रोश का सामना करना पड़ रहा था। अम्बेडकर की छवि खलनायक की छवि बनायी जा जा रही थी। अम्बेडकर जानते थे कि गांधी का यह निर्णय बहुत ही खतरनाक निर्णय है। अम्बेडकर ने एक विज्ञप्ति जारी कर स्पष्ट किया कि जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं किसी भी विचार-विमर्श के लिए तैयार हूँ परन्तु दलितों के अधिकारों में किसी भी प्रकार की कमी के लिए कतई तैयार नहीं हूँ। यदि गांधी देश की आजादी के लिए इस प्रकार का कदम उठाते तो ज्यादा अच्छा होता और यह बड़े दु:ख की बात है कि गांधी केवल अछूतों के ही पृथक चुनाव के विरुद्ध आत्मदाह करना चाहते हैं, जबकि साम्प्रदायिक निर्णय में मुसलमानों, इसाइयों, सिक्खों, ऐंग्लो इण्डियनों और यूरोपीयन्स को भी पृथक प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ है।

अम्बेडकर एक भारी धर्मसंकट में पड़ गए। दलितों के हितों की रक्षा करे या महात्मा के प्राण बचाए। अंत में राजगोपालाचारी एवं अन्य नेताओं की सहायता से यह निर्णय हुआ कि किसी जनमत के बिना सुरक्षित सीटों तथा संयुक्त निर्वाचन की अवधि दस साल रख दी जाए और अछूतों के पृथक निर्वाचन का अंत भी हो जाए। अम्बेडकर के सहमत होते ही गांधी को जेल में यह समझौता सुनाया गया तो उन्होंने कहा कि यह तो बड़ा अच्छा है। उन्होंने भी अपनी सहमति दे दी। 24 सितम्बर, 1932 को यर्वदा करार (पूना पैक्ट) नेताओं ने हस्ताक्षर कर दिए। दलित वर्ग की ओर से अम्बेडकर और स्वर्ण हिन्दुओं की ओर से पं मदन मोहन मालवीय ने हस्ताक्षर किए। इस पैनल प्रणाली के द्वारा दलितों का विधानसभाओं में 126 सदस्यों का आरक्षण प्राप्त हुआ। इसके अलावा कुछ और प्रावधान भी थे। इसे पूना पैक्ट कहा गया जिसे ब्रिटिश सरकार ने भी स्वीकार कर लिया और मैक्डोनाल्ड के साम्प्रदायिक समझौते को रद्द कर दिया। इसी समझौते को और अधिक व्यावहारिक बनाकर, सामाजिक-न्याय की प्राप्ति के लिए इसे 1935 के भारत सरकार अधिनियम में शामिल किया गया। पूना पैक्ट ने सारे देश का ध्यान आकर्षित किया और इससे यह सिद्ध हो गया कि गांधी कांग्रेस और स्वर्ण हिन्दू जो अभी तक अम्बेडकर को दलित वर्गो का नेता नहीं मानते थे, उन्हें दलितों का सर्वोच्च नेता मानने लगे। गांधी के प्राण बचाने का श्रेय बाबा साहब अम्बेडकर को दिया गया। अछूतों की समस्या देशव्यापी स्तर पर ठोस ढंग से उभरकर आयी और नैतिक दृष्टि से स्वर्ण हिन्दू भी इस समस्या का समाधान खोजने पर मजबूर हो गए।

सामाजिक-न्याय की प्राप्ति के लिए चलाया गया महत्तवपूर्ण आंदोलन एक ऐतिहासिक समझौते के साथ सम्पन्न हुआ जिसके माध्यम से दलितों ने अपने अस्तित्व की एक अहम् लड़ाई जीत ली।

श्रमिकों एवं कामगारों के लिए सामाजिक-न्याय – तत्कालीन भारत में अछूतों व दलितों की भांति श्रमिकों व कामगारों की स्थिति भी बहुत दयनी थी। इस वर्ग के सदस्य पीढ़ी दर पीढ़ी अन्याय और शोषण के शिकार होते चले आ रहे थे। इन मजदूरों व कामगारों की सहायता के लिए अम्बेडकर ने 1936 में एक स्वतंत्र दल – मजदूर दल (इण्डीपेन्डेन्ट लेबर पार्टी) की स्थापना की। इसके तहत ऐसे कार्यक्रम बनाए गए जिससे गरीबों, भूमिहीनों तथा मजदूरों की तात्कालिक समस्याओं का तुरंत समाधान किया जा सके। इसकी विशेष उल्लेखनीय बात यह थी कि इस दल का दृष्टिकोण तथा विचारधारा दलितों के लिए ही न होकर समाज के सभी शोषित वर्ग के हितों के लिए थी। उन्होंने मजदूरों से यह आग्रह किया कि तुम लोग इतने निर्धन क्यों हो? इसके क्या कारण है? जरा सोचो तथा तुम्हारे खिलाफ जो अन्याय किया जा रहा है उसके विरुद्ध संघर्ष करो।

डॉ. अम्बेडकर ने बम्बई में म्यूनिसिपल कर्मचारी संगठन की स्थापना की जिसका उद्देश्य शोषित वर्ग की दशा सुधारना निश्चित किया गया। मजदूर शब्द की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा कि इस शब्द में दलित व शोषित वर्ग समाया हुआ है और इसलिए उन्होंने इसे स्वतंत्र मजदूर पक्ष का नाम दिया। डॉ. अम्बेडकर के द्वारा ही बम्बई के गवर्नर को महार बटालियन की स्थापना का सुझाव दिया गया तथा 2 जुलाई, 1942 को अम्बेडकर की योग्यता तथा दलितों की सेवा को देखते हुए भारत के वायसराय ने इन्हें अपनी कार्यकारिणी में एक सदस्य के रूप में मनोनीत कर उनको श्रम मंत्री बनाया गया। अम्बेडकर का मानना था कि अधिकांश श्रम कानून मजदूरों के हित में ना होकर सरकार और मालिकों के हितों की रक्षा के लिए बनाए गए हैं। उन्होंने फैक्ट्री एक्ट में सुधार किया और काम के घंटे तय किए और मजदूरों की विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान के लिए अलग-अलग विभाग खुलवाए। मजदूर, सरकार तथा मालिक – तीनों की समस्याओं को अपने-अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से एक टेबल पर टेबल टॉक की स्वस्थ परम्परा भी अम्बेडकर ने ही शुरू करवायी थी। अम्बेडकर ने श्रमिक वर्ग की हर समस्या का व्यावहारिक समाधान खोजने का प्रयास किया। इसी क्रम में उनका एक बेहतरीन प्रयास था 2 सितम्बर, 1945 को उन्होंने सरकार के लिए एक योजना बनायी जिसे लेबर चार्टर का नाम दिया और श्रम मंत्री की हैसियत से उन्होंने कामगारों, श्रमिकों की सामाजिक-न्याय की लड़ाई को एक मंच दिया। सामाजिक-न्याय से वंचित इस वर्ग को काफी हद तक कानूनी दायरे के भीतर लाकर उन्हें जीवन जीने के मौलिक अधिकार दिलवाए जिनसे अब तक यह वंचित था। मजदूर शब्द की एक नयी व्याख्या इन्होंने प्रस्तुत की जिसमें मजदूर को एकमात्र शोषण की मूर्ति ना मानकर एक जागरूक और चेतन मजदूर बनाया।

हिन्दू कोड बिल और सामाजिक-न्याय – भारत सरकार के कानून मंत्री ही हैसियत से अम्बेडकर ने भारत की संसद में हिन्दू कोड बिल प्रस्तुत किया। बिल में उत्ताराधिकार, गुजारा भरण पोषण, विवाह, तलाक, गोद लेना, नाबालिग, और अभिव्यक्ति के कानून पर हिन्दुत्व की एकता तथा प्रगतिशीलता की दृष्टि से विचार किया गया था। इसे पेश करते हुए अम्बेडकर ने कहा कि यदि आप हिन्दू व्यवस्था, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू समाज की रक्षा करना चाहते हैं तो उनमें जो दोष पैदा हो गए हैं, उनको सुधारने में आपको देरी नहीं करनी चाहिए और हिन्दू कोड बिल हिन्दू व्यवस्था के केवल उन्हीं अंशों में सुधार चाहता है जो बिल्कुल ही विकृत हो गए हैं, और इन सुधारों के माध्यम से भारत की बहुत बड़ी जनसंख्या को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक-न्याय प्राप्त होगा। परन्तु यह विडम्बना ही रही कि इस बिल की सर्वत्र आलोचना ही की गई। संसद में इसके विरोध के कारण 1951 में इस बिल की केवल 4 धाराएं ही पास हो सकी।

हिन्दू कोड बिल के पीछे अम्बेडकर की सोच थी कि वे भारतीय सामाजिक व्यवस्था के प्रचलित स्वरूप के विरोधी थे और ऐसी मान्यता थी कि शताब्दियों से कुछ वर्गो के विरुद्ध अन्याय को बढ़ावा दिया जाता रहा है। इनका मानना था कि मनु द्वारा रचित 'सामाजिक संहिता' में सामाजिक अन्याय का क्रूरतम स्वरूप अभिव्यक्त हुआ है और सामाजिक अन्याय का कोई भी दूसरा उदाहरण मनु की संहिता की तुलना में फीका लगेगा। हिन्दू समाज का संगठन पारम्परिक आधार पर चार वर्णों में विभाजित रहा है। अम्बेडकर ने वर्ण व्यवस्था के इस नियम को पूर्णत: अवैज्ञानिक, अव्यावहारिक, अन्यायपूर्ण एवं गरिमाहीन माना तथा इसकी निंदा की है।

अम्बेडकर का यह कहना है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व में विद्यमान विभिन्नता का ही परिणाम है कि वर्ण व्यवस्था में वर्णित चार वर्ण, भारतीय समाज में व्यवहार में चार हजार जातियों में परिवर्तित हो गए। अम्बेडकर इस वर्ण व्यवस्था का इस आधार पर भी विरोध करते थे। इसके अंतर्गत शूद्रों को अन्य तीन वर्णो की तुलना में निम्न स्तर प्रदान किया गया तथा वस्तुत: शूद्र वर्ण के सदस्यों को अन्य तीन वर्णों का अधीनस्थ या भक्त या उनके द्वारा संरक्षित मान लिया गया है। उपरोक्त तीन वर्णो को शूद्रों के संरक्षक के रूप में चित्रित तो किया गया है, किन्तु सामाजिक संहिताकारों ने तीन वर्गो के सदस्यों के अन्याय, अत्याचारों के विरुद्ध शूद्रों के संरक्षण के लिए कोई व्यवस्थाएं नहीं की। स्वर्णो ने शूद्रों के ऊपर विभिन्न प्रकार के प्रतिबंध लगाए थे जिनके कारण वे अपने ऊपर हो रहे अन्याय का प्रतिकार नहीं कर पा रहे थे। और इन्हीं प्रतिबंधों के कारण वे अक्षम भी रहे हैं और इसका दूरगामी परिणाम यह हुआ कि वर्ण व्यवस्था दलित वर्गो को स्वयं अपनी उन्नति के लिए संगठित होकर प्रयत्नशील होने की सामर्थ्य, प्रेरणा और अवसरों से वंचित करती रही। शूद्र वर्ण को मूल वर्ण व्यवस्था का अंग न मानकर उसे बाद में विकसित की गई प्रवृत्ति के रूप के रूप में चित्रित करके अम्बेडकर ने निष्कर्ष निकाला कि वर्तमान में हिन्दू समाज में शूद्र वर्ण की हीन स्थिति वर्ण व्यवस्था के मूल स्वरूप में शूद्रों की हीनता के कारण नहीं अपितु यह ब्राह्मणों और संहिताकारों के द्वारा जानबूझ कर किए गए प्रयत्नों का परिणाम है। अत: इसका कोई स्वाभाविक आधार नहीं है। अत: अम्बेडकर ने मनुस्मृति के विरुद्ध शूद्रों की जागरूकता और सौहार्दपूर्ण तथा न्यायसममत सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए आवश्यक माना।

वर्ण व्यवस्था को नकारने का अन्य तर्क जो कि अम्बेडकर के द्वारा किया गया है वह इस प्रकार है - वर्ण व्यवस्था का मूल आधार सांख्य-दर्शन का त्रिगुण सिद्धांत है। प्रत्येक व्यक्ति में तीन गुणों सत्व, रजस, तमस का सम्मिश्रण होता है। और इन्हीं गुणों से व्यक्ति का स्वभाव संचालित होता है। इन गुणों में स्वाभाविक स्पर्द्धा व परिवर्तनशीलता होती है व जन्म से लेकर मृत्यु तक इनके आधार पर व्यक्ति में गुणात्मक परिवर्तन होते रहते हैं। कभी एक गुण का बाहुल्य है तो कभी दूसरे का। इसलिए अम्बेडकर का मानना था कि गुणों की स्पर्द्धा एवं परिवर्तनशीलता की स्थिति में व्यक्ति का स्वभाव स्थायी किस प्रकार रह पाएगा। और यदि व्यक्ति की स्थिति बदलती रहती है तो मनुष्यों को स्थायी वर्गो में बांटना उनकी प्रृति के विरुद्ध होगा। यह कैसे सम्भव होगा कि प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यवहार में जीवनपर्यन्त एक सा बना रहे। अम्बेडकर के मतानुसार सांख्य दर्शन अथवा गीता यह सिद्ध नहीं कर सकती की परिवर्तन शक्ति प्रकृति से निर्मित आदमी सदैव ब्राह्मण था, क्षत्रिय था, वैश्य अथवा शूद्र ही बना रहेगा। यही मूल वजह थी जिसके कारण उन्होंने चातुर्वण्य के सिद्धांत को अप्राकृतिक और अव्यावहारिक बताया।

बौद्ध धर्म, बौद्ध दीक्षा और अम्बेडकर का सामाजिक-न्याय - अम्बेडकर की यह मान्यता स्थायी हो चुकी थी कि जब इतनी अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त करके भी समाज में उचित स्थान व सम्मान नहीं पा सके तो उन करोड़ों अछूतों को स्वतंत्रता, समानता, एवं सम्मान कैसे मिलेगा। और अंतत: उन्होंने दलित समाज को सम्मान और समानता, संक्षेप में मनुष्यत्व का अधिकार, दिलाने के लिए धर्मान्तरण के रूप में समाधान प्रस्तुत किया। इस संदर्भ में उठे एक प्रश्न कि क्या अम्बेडकर व उनके करोड़ों अनुयायी उस धर्म को छोड़ दे जिसमें वे लोग पैदा हुए हैं। इसके जवाब में अम्बेडकर का तर्क था कि स्वर्ण हिन्दू उनकी बातों अर्थात् दलितों की समस्याओं पर गहराई से विचार क्यों नहीं करते? यह लोग हमें बराबरी का अधिकार क्यों नहीं देते? हिन्दू अन्य धर्मो के लोगों से हाथ मिलाते हैं परन्तु दलितों से क्यों नहीं। इन समस्याओं के समाधान के लिए उन्होंने धर्म परिवर्तन का अंतिम प्रयोग किया कि शायद उनके इस फैसले से हिन्दू समाज की आंख खुल जाए और वे दलितों के लिए स्कूलों व मंदिरों के द्वारा खोल दें, परन्तु अफसोस की स्वर्ण हिन्दुओं ने उनके इस कदम को कोई अहमियत नहीं दी और आखिर में अपने ही समाज में बने रहने की अम्बेडकर की आखिरी कोशिश भी विफल हो गई। अंतत: उन्होंने 13 जनवरी, 1936 को पूना में की गई प्रतिज्ञा को 1956 में फिर दोहराया और कहा कि यदि साक्षात ईश्वर भी आकर कहे कि हिन्दू धर्म मत छोड़ो तो भी मैं इस नर्कतुल्य हिन्दू धर्म में नहीं रहूंगा। अछूत व दलित समाज जब तक सिर झुका कर हिन्दू समाज में आस्था व्यक्त करता रहेगा तब तक स्वर्ण उसे अस्पृश्य ही मानते रहेंगे क्योंकि स्वर्णो का हिन्दू समाज तो इस बात की आज्ञा देता है कि उनकी दृष्टि में हमारा धर्म श्रेष्ठ व सनातन है। अत: इसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। यह कुछ कारण थे जिनके कारण अंत में उनको कहना पड़ा कि, 'मैं पैदा तो हिन्दू धर्म में अवश्य हुआ हूँ लेकिन इस धर्म में रहकर मरूंगा नहीं।'

अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म की श्रेष्ठता का बखान करते हुए व्याख्यायित किया कि बौद्ध धर्म सताए गए पद दलितों के लिए आशा का एक दीप है जिसमें सभी लोगों के लिए प्रज्ञा, करुणा और समानता के गुण हैं जो इसे अन्य धर्मो से श्रेष्ठ सिद्ध करते हैं और हिन्दू समाज व धर्म का परित्याग करने से ही दलितों की परिस्थितियों में सुधार सम्भव है और धर्मान्तरण के सिवाय दलितों के पास दूसरा कोई उपाय नहीं है। 14 अक्टूबर, 1956 को दशहरे के दिन नागपुर में अपने पाँच लाख अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण किया। धर्म परिवर्तन के बाद अम्बेडकर ने कहा कि मैंने आज समाज के उस वर्ग को जो आम तक मनुष्यों की श्रेणी में नहीं था उसको हिन्दुओं की बराबरी का बना दिया और आज मुझे ऐसा आभास हो रहा है कि आज मेरा पुनर्जन्म हुआ है और नरकीय यातना से मेरी मुक्ति हुई है।

धर्म परिवर्तन के साथ ही अम्बेडकर ने यह भी ध्यान रखा कि वह कहीं देश व संस्कृति से वंचित ना हो जाए और चूंकि बौद्ध धर्म भारतीय संस्कृति का ही अभिन्न अंग है इसलिए उन्होंने कहा कि, मैंने इस बात का ध्यान रखा है कि मेरा धर्म परिवर्तन उस भूमि के इतिहास और परम्परा को कोई हानि नहीं पहुँचाए। उनका धर्म परिवर्तन आत्माभिमान तथा आत्मसम्मान, समता एवं बन्धुत्व के लिए था। सम्मानपूर्वक रहना मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। इसके लिए जितना त्याग हो सके हमें करना चाहिए और बौद्ध धर्म ही दलितों में आत्मभिमान तथा आत्मविश्वास पैदा कर सकता है क्योंकि यही एकमात्र धर्म है जो स्वतंत्रता, समता और मानव बंधुत्व पर आधारित है। बौद्ध धर्म की समतावादी व मानवतावादी नीति की प्रशंसा में उन्होंने कहा कि ईश्वर और आत्मा के लिए बौद्ध धर्म में कोई स्थान नहीं है। भगवान बुद्ध का यह दर्शन है कि संसार में सब जगह दु:ख है और लोगों के दु:खों का निवारण करना ही बौद्ध धर्म का लक्ष्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उल्लेख, धनंजय कीर : डॉ. अम्बेडकर : लाइफ एण्ड मिशन, पोपुलर प्रकाशन, बम्बई, 1962, पृ. 81 (29.7.27 का वृहस्त हितकारिणी का संपादकीय)
2. बी.आर. अम्बेडकर : एनिहिलेशन ऑफ कास्ट, अम्बेडकर स्कूल ऑफ थॉट, अमृतसर, 1944, पृ. 29-32

3. नवयुग विशेषांक : भाग तथा अंक-7, बम्बई, 1949, पृ. 73
4. अम्बेडकर : राइटिंग एण्ड स्पीच, कास्ट इन इण्डिया, वोल्यूम-1, महाराष्ट्र सरकार का प्रकाशन, बम्बई, 1976, पृ. 161
5. अम्बेडकर : बुद्धा एण्ड दी फ्यूचर ऑफ रिलीजन, लेख, 1950, पैरा 17-26, उद्धृत आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन, डॉ. पुरुषोत्तम नागर, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1995
6. अम्बेडकर : स्टेट्स एण्ड माइनोरिटीज, थैकर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1947, पृ. 37
7. बी.आर. अम्बेडकर : भाग-1, भारत भूषण प्रिंटिंग प्रेस, बम्बई, 1952, पृ. 1-4
8. चन्द्रा भारिल्ल : सोशल एण्ड पोलिटीकल आइडियाज ऑफ डॉ. भीमराव अम्बेडकर, पृ. 120-123
9. महाराष्ट्रीयता दैनिक कोष : भाग-7, पृ. 644
10. अम्बेडकर : व्हाट दी हिन्दूज हैव डन टू अस, थैकर, बम्बई, 1946, पृ. 37-41, तथा कीर, पृ. 12-13
11. जी.एस. लोखाण्डे : भीमराव राजी अम्बेडकर, ए स्टडी इन सोशल डेमोक्रेसी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1977, पृ. 1
12. के.सी. मार्कण्डन : डायरेक्टिव प्रिंसिपल्स इन दी इण्डियन कॉन्स्टीट्यूशन, स्टर्लिग पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 1972, पृ. 373
13. इण्डियन स्टोरी कमीशन रिपोर्ट, भाग-16, पृ. 52-57 का उल्लेख, अम्बेडकर राइटिंग एण्ड स्पीच, भाग-2, 1982, पृ. 459-489
14. इण्डियन राउण्ड टेबल कान्फ्रेन्स, 12.11.1930 से 19.01.1930, भाग-3, (माईनोरिटीज), पृ. 76
15. भगवान दास : दस स्पोक अम्बेडकर, भाग-1 (संपादित) (सलेक्टेड स्पीचेज ऑफ डॉ. बी.आर. अम्बेडकर), रिवाइज्ड एडीशन-2, भीम पब्लिशर्स, जालंधर, 1963, पृ. 67
16. प्रोसीडिंग ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमीशन (माईनोरिटी), पृ. 527
17. डी.आर. जाटव : अम्बेडकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व, समता साहित्य सदन, जयपुर, 1991, पृ. 145
18. अम्बेडकर : व्हाट कांग्रेस एण्ड गांधी डन टू अनटचेबल, थैकर, बम्बई, 1946, पृ. 62
19. धनंजय कीर : महात्मा ज्योतिराव फुले फादर ऑफ सोशल रिवोल्यूशन, पोपुलर, बम्बई, 1965, पृ. 376
20. ए.एम. राजेकशाह : दी क्रेस्ट ऑफ सोशल जस्टिस, उप्पल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 199
21. दुर्गादास वासु : भारतीय संविधान की रूपरेखा, प्रेंटिस हाल ऑफ इण्डिया प्रा. लि., दिल्ली, 1989, पृ. 25
22. सर्वपल्ली राधाकृष्णन : द व्यू ऑफ लाइफ, एलिन एण्ड अनविन, लंदन, 1949, पृ. 99
23. अम्बेडकर द्वारा 19 मार्च, 1927 को महार आंदोलन की जनसभा के समक्ष दिए गए भाषण का अंश, उल्लेख नोट-1, पृ. 73-74
24. बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाड्.मय, खण्ड-1, कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की ओर से प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, पृ. 78

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Tagore's Chokher Bali : Quest for Love and Completeness

Sunita Ahuja*

Abstract - Tagore has shown four female characters in this novel: Rajlaxmi, Annapurna, Binodini and Ashalata. In this paper, I would discuss mainly two of his characters i.e. Asha and Binodini. How do they face problems and come out of those and how do they find their love. All the female protagonists have their own voices, but Binodini has a powerful voice that dominates all the other three characters. Though Binodini is a frustrated woman yet she knowshow to command the people. The purpose of this paper is to highlight the incompleteness and the loneliness of Binodini and the struggle of Ashalata. Though we find all the characters are sometimes incomplete without each other but women are more incomplete than the men.

Keywords - Womens' liberation, Education, Struggle and Suffering.

Introduction - Tagore has highlighted women's suffering and their struggle in his novels. The novel "Chokher Bali" is the best example of it. Love making was a taboo at that time. But Tagore has dealt with the theme of love in his novels wthout hurting anyone. He has showed pure love and devotion. Binodini in "Chokher Bali" is the strongest woman. Though she is a representative of suffering Indian woman, on the contrary, she is an active and bold woman who knows her rights and duties and how to fight against injustice.

Kriplani asserts: - "Of all women characters created by Tagore in his many novels, Binodini is the most convincing, because vital and full-blooded. In her frustration and suffering is summed up the author's ironic acceptance of the orthodox Hindu society of the day."[1]

The centre of the story is man-woman relationship in modern society. It begins with Rajlaxmi urging her son Mahendra to marry Binodini. But without seeing, he refuses to marry her. Binodini is a beautiful, intelligent and educated woman. Binodini, as her name indicates, seems to be cheerful but there is a hidden pain in her heart. It is the pain of negligence, which leads her to ruin the lives of others. Her father exhausted all his wealth on Binodini's upbringing and education. He died very early. She could not get a suitable match for herself so her mother married her off to an old and sick man who died soon after their marriage. Hence she was known as Bipin's widow. She was thrown out of the society with its repressive laws but she was not ready to live a miserable life in a remote village.

Hence she reacted against this social injustice and laws which were imposed upon her by the society.

"As a widow, she is condemned for life, but she emerges triumphantly out of his quagmire of a lacerated life by asserting her right to love and happiness."[2]

In comparison to Binodini, Asha is a young, meek and uneducated girl who is an orphan and lived with her uncle. Annapurna, her mashima is her well-wisher and she wanted Bihari to marry Asha. It is her simplicity that makes Bihari fall in love with her at first sight. But at the last moment, Mahendra snatches Asha from Bihari and marries her. She is too young to perform her duty as a daughter-in-law. Hence, it becomes difficult for Asha to prove herself a good home-maker in her mother-in-law Rajlaxmi's eye. Mahendra showers his love and affection on Asha. Seeing Mahendra's overindulgence with Asha, Rajlaxmi could not bear it and she leaves for her village with Bihari. After the departure of Rajlaxmi, Asha could not manage the house.

At the village, Binodini takes care of Rajlaxmi with great affection and love. With her loving nature, she wins the heart of Rajlaxmi. Rajlaxmi takes Binodini with her to her home. She is a perfect home-maker and does all household chores very neatly and responsibly. Hence she becomes the star of Rajlaxmi's eye. Rajlaxmi deliberately praises her each and every time so that Asha would listen and can improve herself. Binodini's acts towards Asha was impulsive. Earlier she was rejected by Mahendra so she has come to his place to take revenge from him. She takes command over Mahendra's house and shows herself as a perfect home-maker to him.

As Binodini is an expert in her work so she does not hesitate to do any work and give orders to servants. With her beauty and intelligence, she wins the admiration of all the people in the house including Asha. She leaves no room for her.

"Asha saw that Binodini was well versed in all kinds of domestic skills Mastery came naturally and easily to her; she had no qualms about setting the domestic staff to work, rebuking them or ordering them about. Observing all this,

* Research Scholar (English) Govt. J.H.P.G. College, Betul (M.P.) INDIA

Asha felt that she was utterly inferior to Binodini."[3]

Binodini is a very clever woman and she has good command on the psychology of the people around her. After seeing Asha's innocence, she takes Asha in her confidence and makes her friend. They call each other Chokher Bali (Eyesore). Asha was the sore of Binodini's eye. She thinks that if Mahendra had married her, she would have been the queen of the house and not this uneducated girl. But this was her fate that she could not get married to Mahendra. She knows very well the taste of chilli and pepper of love. But she is unable to get that taste of love because she has no companion in her life. Tagore has described her state of mind beautifully:

"Such a comfortable home and such an amorous husband! I could have made a kingdom of this home, a slave of this husband. Would the house have been in such a condition then, or the man of the house been reduced to such a state? And to have this babe in arms, this toy doll in my place!"[4]

Initially, Binodini is eager to know about love and life, which she has been deprived of but the sense of envy makes her restless. Binodini is jealous of Asha and Mahendra's relation and his love for Asha, hence to take her revenge, Binodini tries to attract Mahendra. She enters in their happy married life. Binodini knows very well that Asha cannot judge her foul game because of her innocence. Initially, Mahendra does not pay attention to her. He does not dare to make eye contact with Binodini. He moves away from her too. Binodini herself is sometimes confused. She does not know whether she loves or hates Mahendra, or she wants to punish him or not. Sometimes she questions herself:

"Laughing bitterly to herself, she would wonder: 'Has any woman ever suffered a condition such as mine? Whether I want to die or to kill, I simply couldn't say! But whether she wanted to surrender to the fire or to scorch others with it, she needed Mahendra desperately. Where else in the world would she direct her poisoned arrow of fire? 'Where can he go?' sighed Binodini. 'He must return. He belongs to me."[5]

Binodini knows very well how to get love from the people around her hence, in Asha's absence when she looks after Mahendra, she comes closer to him to know him more. He notices her beauty and becomes mad about her and falls in love with her. Binodini knows very well that Asha is a very simple and innocent girl. By showing sympathy for Asha, she would conquer Mahendra's and Bihari's heart very easily. Because Bihari too has a soft corner for Asha. Binodini pays her attention to Bihari now. But he moves away from her. Binodini wants to show the difference between Asha and her to Mahendra and Bihari.

"Once, just once, Binodini wanted to drag Mahendra and Bihari down into the dust and show them the difference between Asha and Binodini. What a contrast between the two of them! Prevented by adverse circumstances from conquering any male heart with her brilliance, Binodini assumed the image of the goddess of destruction, her fiery, powerful spear upraised in her hand."[6]

Here, in fact, we cannot look down upon Binodini, as she tries to attract Mahendra and Bihari. She only wants to show herself superior to Asha. Bihari is somewhere angry with Binodini, because of her behaviour with Mahendra and does not want anyone between Mahendra and Asha's relation. But he also has sympathy for her because he learns about her past. Now he sees a gracious woman behind the clever Binodini. Through Bihari Tagore has shown his feelings in this story. Bihari proposes Binodini fo marriage. At that time widow re-marriage was a taboo. As a reformer Tagore wanted to give a new direction to the society through widow- remarriage.

When Mahendra ignores Asha for Binodini, in spite of that she serves him. She cannot imagine her life without Mahendra. Her love for Mahendra is pure. Her 'mashi' has taught her to learn from the experience of pain and hardships in life, to be firm to faith and devotion and have faith in Almighty. Tagore has dived deep into Asha's heart to show how innocent she was. Even if her husband is deceiving her in spite of that she is serving him, offering her prayers to him.

"She bent in a posture of obeisance towards the deity who reigned supreme above all worldly things, according to her mashi. 'I am a young girl,' she prayed. 'I do not know You, I only know husband, but please do not blame me on that account. O Lord, please ask my husband to accept the prayers that I offer him. If he spurns them, I shall die."[7]

Mahendra is mad after Binodini. Now, he has decided to leave his home and elope with her. Even he does not care for his wife and mother. Binodini tells Bihari about their elopement. He is astonished and tells him to stop Mahendra to run away. Binodini is an ambitious girl. She does not want to compromise with her life and her happiness. The so-called society's rituals and Mahendra's rejection of marriage have made her a rebellious woman.

"After a short silence, Binodini fixed her gaze on Bihari. 'Stop him for whose sake?' 'For your Asha? Have I no joys and sorrows of my own? Must I give up all claims to life in this world for Asha's benefit, for the benefit of Mahendra's household? I am not so virtuous, nor am I so well versed in what the religious scriptures say. What will I get in return for what I am to relinquish?"[8]

Binodini is very well known to Mahendra now. She knows that until Mahendra is not bounded, he would love Binodini. As soon as she depends on him, he would run away. He is king of his kingdom. Only Bihari is a reliable man for Binodini. Hence she loves him so much and prays him as God. He is the only man one who can support her and can give shelter to her.

"Day and night, her heart declared, with fierce insistence, 'Bihari must accept my offering of devotion".[9]

Mahendra sometimes lives in his home and sometimes in rented house. But whenever he comes, Rajlaxmi tries to remove the distance between Asha and Mahendra. She deliberately sends Asha to Mahendra but they hesitate to make eye contact. They were not able to talk with each other as they were used to do earlier and behave like strangers. Once Rajlaxmi falls ill and Asha takes care of her. At this time Asha goes to Mahendra without any hesitation and informs him about Rajlaxmi's ill health. Mahendra is astonished to see Asha. He has never seen her before like this. He sees a mature and responsible woman in Asha instead of the weak and ignorant girl. Now Asha is intelligent enough to understand that wife is not only to move behind her husband but she is his strength and guide too.

"Tonight, he had seen a new side to Asha. This Asha had no shyness, no meekness; she was confident, fully aware of her rights. She did not come to Mahendra as a beggar craving his bounty. Mahendra may have neglected her as his own wife, but he felt a sense of deference towards her as the daughter-in-law of the house."[10]

The dejection of Mahendra and hard situations have made Asha a strong woman. Earlier she used to hesitate to talk to anyone or to make eye – contact, but now she commands over Mahendra. She has guts to take decisions for her home. She has risen up above her suffering and humiliation. Besides asserting her deserved position in the house, she also wins the heart of her mother-in-law.

"Asha's maturity into a self-possessed housewife is the result of herself scrutiny which compels Binodini, her rival to yield. Thus, a raw and shy young woman becomes an efficient woman."[11]

Binodini is in love with Bihari. Only for him, she moves from one place to another. She is searching for him without telling Mahendra. Now she too behaves like a stranger to Mahendra. She starts following all the rules which are followed by the widows. She eats once in a day and does not laugh aloud. Mahendra is frustrated now. He realizes now that he has lost everything, his mother, wife and his friend Bihari only for the sake of the woman (Binodini) one who is not paying attention to him and she has not to love him ever. He has lost his dignity and respect. He wants to get rid of Binodini so, he makes arrangements for Binodini to live her life and sets her free. When Binodini finds Bihari, she expresses her love and gratitude to him. Bihari again proposes her for marriage but she refuses. Society does not permit it. She is aware of the social taboo and hence she takes calculated move at each and every step.

"For shame, it is embarrassing to think of such a thing. I am a widow, a woman disgraced. I cannot permit you to be humiliated in the eyes of the society. For shame, don't mention such things."[12]

Binodini now has realized her mistakes and she feels her real love is only for Bihari. Because it is only Bihari, who, stands beside her in every ups and down in her life. Binodini had not recognized him earlier though she loves Bihari, she sets him free. Whatever may happen but she wins in her defeat by keeping herself away from re-marriage. She wants to serve Bihari. "On the strength of that love, I shall commit a single act of daring today. Saying this, Binodini prostrated herself and kissed Bihari's toe."[13]

Here if Tagore has united her in marriage bond with Bihari, she would have been meek, a poor woman. On the contrary, Tagore has shown her as a victor and symbol of a new emancipated woman.

"Binodini is the symbol of a new class of emancipated women who are no longer prepared to be crushed and burned out by society but fight to assert their rights in a particular materialistic society. Her rebellion is a Hindu woman's protest against the unjust privations of a grimly mortifying existance. She is not a woman whose sphere was defined and maintained by men."[14]

It is surprising how Binodini, who always longs for love, leaves everything so easily? It is not Tagore's weakness that he could not show a widow's re-marriage but he shows a woman who has made Mahendra a puppet in her hands and has surrendered herself before Bihari. There are two women shown in Binodini- one is envious, thirsty for love while another is devoted, holy and loving.

In this novel Tagore has shown Binodini "the free woman" one who knows to live her life on her own condition and choice. She is an independent and courageous woman. She has enough courage to enter in Mahendra's life and run away with him in search of Bihari and to deny Bihari's marriage proposal for the sake of society. She loved Bihari but could not spend her life with him. Tagore succeded in portraying Asha. He has shown a great difference in Asha's personality, changing with time and situation. As Tagore was a social reformer, he tried to reform the society through his work and to some extent he got success too.

Asha's self-confidence and determination makes her able to win the respect and admiration from everyone. She also gets her husband back. She forgives her husband, not because of fear of society, but it is her true love for him. Now she is so mature that she would not trust anybody blindly. Tagore has added one more aspect to a woman and that is her modernity.

References :-

1. Kriplani, Krishna. Rabindranath Tagore- A Biography. New Delhi: UBS Publishers' Distributors Pvt. Ltd. Reprint, 2012. p.171-72.
2. Swain, S.P. The Feminine Voice in Indian Fiction. New Delhi: Asia Book Club,2005. p.22.
3. Tagore, Rabindranath. Chokher Bali. Noida: Random House Publishers India Private Limited, 2012. p.55.
4. Ibid., p.60.
5. Ibid., p.109.

6. Ibid., p.112.
7. Ibid., p.203.
8. Ibid., p.232.
9. Ibid., p.266.
10. Ibid., p.293.
11. Sapowadia, F. Soniya. Woman in Tagore's Novels: A Critical Study. Jaipur: Shree Niwas Publications, 2013.p.58.Niwas Publications, 2013.p.58.
12. Tagore, Rabindranath. Chokher Bali. Noida: Random House Publishers India Private Limited, 2012. p.355-56.
13. Ibid., p.356.
14. Swain, S.P. The Feminine Voice in Indian Fiction. New Delhi: Asia Book Club,2005. p.22

****

उत्तराखण्ड की थारू एवं बोक्सा जनजाति में परम्परागत चिकित्सा (तन्त्र-मन्त्र) व्यवस्था: एक अध्ययन

डॉ. नीलम सोनी *

शोध सारांश – बोक्सा एवं थारू जनजाति उत्तराखण्ड के नैनीताल, ऊधमसिंहनगर एवं देहरादून में प्रारम्भ से ही निवास करती है। इनके निवास क्षेत्र को क्रमश: बोक्साड़ एवं थरूवाट नाम से जाना जाता है। प्रारम्भ से ये जनजातियाँ तराई क्षेत्रों में विषम भौगोलिक परिस्थितियों में जीवन यापन करती आयी है। ये जंगलों एवं नदी-नालों के समीप बसे होने के कारण प्रकृति की आलौकिक शक्तियों पर विश्वास रखती है। इन अदृश्य शक्तियों के प्रकोप से बचने के लिए इनके प्रति आस्था आत्मपूजन, तन्त्र-मन्त्र एवं जादू-टोना आदि क्रियाकलापों का सहारा लेने लगे। उनका विश्वास रहा है कि इन अदृश्यों शक्तियों के पूजन से रोग एवं बीमारियाँ दूर हो जाती है। यह परम्परागत चिकित्सा प्रणाली इन जनजातियों की एक अलग पहचान बनाती है। प्रस्तुत शोध पत्र में इन जनजातियों की परम्परागत चिकित्सा पद्धतियों का विस्तृत उल्लेख किया गया है।

शब्द कुंजी – भरारे, गनात, थरूवाट, बोक्साड़, आत्मपूजन, सयाना, तन्त्र-मन्त्र आदि।

प्रस्तावना – बोक्साओं में आलौकिक एवं अदृश्य शक्तियों के प्रति आस्था एवं विश्वास उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में विशेष रूप से परिलक्षित होता है। ये वनों एवं प्रकृति के अतिनिकट होनें से प्रकृति पूजन एवं आत्म पूजक समुदाय माना जाता है। इनका मानना है कि मानव आत्मा का मृत्यु के बाद भी अस्तित्व बना रहता है। देवी-देवताओं की आत्माएँ भी प्रबल होती है जो कि हमारे जीवन की गतिविधियों को निर्धारित एवं निर्देशित करती रहती हैं। मनुष्य इन आत्माओं के कुप्रभावों से बचने के लिए उनके प्रति आस्था के भाव जागृत करके उनकी पूजा अर्चना करके उन्हे प्रसन्न रखता है। बोक्साओं के गाँव के निकट आम या पीपल वृक्ष के नीचे ग्राम रक्षक देवी 'खेड़ी देवी' का थान (स्थान) बना होता है। बोक्साओं की मान्यता है यह ग्राम देवी हमारे खेतों में फसल एवं पशुओं की रक्षा करती है।

बुक्साड़ क्षेत्र में सांकरिया देवता जिसे पशुओं का रक्षक देवता माना जाता है। सांकरिया देवता की स्थापना गाँव से दूर जंगल में पेड़ों के बीच 'देवता का प्रतीक लोहे से बनी सांगल' किसी पेड़ पर ठोक दी जाती है। मान्यतानुसार सांकरिया देवता हमारे पशुओं की जंगल में चुगते समय बाघ व अन्य जंगली जानवरों एवं बीमारियों के प्रकोप से बचाता है। देवता को प्रसन्न करने के लिए वर्ष में एक बार सुअर या मुर्गे के बलि चढाई जाती है। इस मांस को सभी बुक्सा परिवार आपस में बाँटकर खाते हैं। गाँवों में स्थित देवी भवानी तथा काली माता के मन्दिर में भी विशेष पर्वो पर बकरे तथा मुर्गे की बलि चढ़ाई जाती है। उनकी मान्यता है कि ऐसा करने से हमारा जीवन स्वस्थ एवं सुखी रहता है।[1]

बोक्सा समाज आत्मपूजक समाज रहा है। रामनगर, काशीपुर एवं बाजपुर के बोक्सा अपने पूर्वजों की आत्मा का पूजन करते हैं। इनमें मनीराम ठेकेदार, कोधन पद्यान, डलपुरिया एवं बुक्सारों पधान प्रमुख है। इन पूर्वजों की आत्मा को आज भी पूजा जाता है। इन्होंने अपनी तान्त्रिक सिद्धियों द्वारा बोक्साओं के हितार्थ कार्य किये थे। इसी आस्था एवं विश्वास के साथ आज भी लोग इनके मन्दिर में जाकर मनौती मांगते हैं, जो कि अवश्य ही पूर्ण होती है। मन्नत पूरी हो जाने पर बोक्सा लोग इनकी आत्मा को पूजते हैं। तंत्र-मंत्र विद्या में पारंगत व्यक्ति को 'भरारे' कहा जाता है। भरारे द्वारा तंत्र-मंत्र या जादू-टोना जनहित के कार्य किये जाते हैं। जब कोई व्यक्ति बुखार, पेट दर्द, पीलिया, ज्वर, सर्पदंश या बिच्छू दंश व प्रेतआत्माओं के प्रकोप से घिर जाता है तो भरारे या भकत द्वारा अपनी तान्त्रिक विद्याओं द्वारा इन समस्त व्याधियों को दूर करने का कार्य किया जाता है। बोक्साओं की मान्यता है कि भरारे अपनी तंत्र विद्या में पारंगत होते हैं। जिससे बीमार व्यक्ति एकदम ठीक हो जाता है।[2] प्राचीन समय से ही बोक्सा जादूई विद्या का प्रचलन बोक्सा समाज पर रहा है। आज भी जो लोग तंत्र-मंत्र पर आस्था व अटूट विश्वास रखते हैं उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त होती है।

पशुओं की गला घोंटू, खुरपका, मोतीझरा, अफारा आदि बीमारियों को भी तन्त्र-मंत्र से ठीक किया जाता है। खेतों में खड़ी फसल को तंत्र-मंत्र के द्वारा पक्षियों एवं पशुओं से होने वाले नुकसान से भी बचाया जाता है। वर्तमान में बोक्साओं का कहना है कि नये सामाजिक एवं वैज्ञानिक विकास के चलते हुए लोगों में जादू-टोने एवं तंत्र-मंत्र के प्रति आस्था एवं विश्वास घटता चला जा रहा है। आज रोगी व्यक्ति को अस्पताल में उपचार के लिए ले जाया जाता हैं पहले तो जब अस्पताल सुविधाएँ नहीं थी तो तंत्र-मंत्र से ही रोगी को रोग मुक्त किया जाता था।

बोक्सा लोग भूतप्रेत, बुरी आत्माओं के अच्छे जानकार होते हैं। इस विद्या में पारंगत व्यक्ति को 'सयाना' कहते हैं। सयाना वशीकरण, सम्मोहन विद्या से भूत-प्रेत एवं बुरी दृष्टि को तंत्र-मंत्र, तावीज, गण्डा तैयार करके दूर कर देता है। सयाने को सूफी, फकीरों, सन्तो के द्वारा सिद्धी प्राप्त होती है। एक प्रसिद्ध सयाना-प्रेम सिंह, निवासी गदरपुर (उधमसिंह नगर) से सम्पर्क करने पर मंत्र प्राप्त किया जो इस प्रकार है:-

खुर्द मौजे हस्ती, मक्के महीने की बस्ती
खुदा की खुदाई मानकर, मौहम्मद की बादशाही को मानकर।
फातमा बीवी को मानकर, दुलदुल घोड़े को मानकर,
लहर तेरी जस तेरा, चले-चले कौन चले।
दरिया माँ तीस ख्वाजा चले, मंत्रों के परिणाम चले।

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) राम सहाय राजकीय महाविद्यालय, शिवराजपुर, कानपुर (उ.प्र.) भारत

मेरे गुरू का वचन साचा, देखे दुनिया तेरा तमाशा।[3]

यह मंत्र रोगों को भगाने, प्रेत आत्मा को शान्त करने में प्रयुक्त किया जाता है। वर्तमान में बोक्साओं में शिक्षा के विकास के साथ बाह्य समाज के सम्पर्क में आने से तंत्र-मंत्र एवं जादू-टोने जैसी दुष्प्रभावी विद्यायेँ विलुप्त हो चुकी हैं। लेकिन बुजुर्ग एवं पुरानी रूढ़िवादी अंधविश्वासी मान्यताओं से जुड़े कुछ ही बोक्साओं को तंत्र-मंत्र, जादू-टोना पर विश्वास कायम है। वे इन मंत्रों का प्रयोग बीमारी के प्रकोप से बचने, शत्रु से बदला लेनें, पशुओं को बीमारी से बचाव के लिए किया करते हैं। सभी धार्मिक कृत्यों को सम्पन्न करने में भी 'भरारे' को विशेष सम्मान प्राप्त है। अत: आज भी समाज में पुरोहित या ज्योतिषी की तरह 'भरारे' को विशेष महत्व दिया जाता है। 'भरारे' आज भी पुरोहित या ज्योतिषी की तरह मानव के जीवन में घटित घटनाओं या भविष्य में घटने वाली घटनाओं के बारे में पहले सूचित करने की क्षमता रखता है। बुक्साड़ क्षेत्र के सभी धार्मिक कार्यो को कराने के लिए 'भरारे' को आमंत्रित किया जाता है। 'भरारे' के आदेशानुसार ही आज भी बोक्सा समुदाय में जन्म संस्कार से लेकर मृत्यु संस्कार तक के समस्त धार्मिक क्रियाकलापों को सम्पन्न किया जाता है।

बोक्साओं की तरह थारू समाज प्रकृति की आलौकिक शक्तियों पर विश्वास करता है। उनके प्रति विशेष आस्था एवं विश्वास के साथ उनकी पूजा-अर्चना विभिन्न तरीकों से करता है। इनके अपने ईष्ट देवी-देवता होते हैं। गाँव में स्थित पीपल या वट वृक्ष के नीचे देवी-देवता का मन्दिर या थान बना होता है। विशेष पर्वो पर इन देवी-देवताओं की पूजा वन्दना का आयोजन किया जाता है। तत्रं-मंत्र, आत्मपूजन, जादू-टोना आदि क्रिया कलाप 'भरारे' को आमन्त्रित करके सम्पन्न कराये जाते हैं।

थारूओं का ईष्ट देवता भूमिया (भूमिसेन) की स्थापना वरगद या पीपल वृक्ष के नीचे की जाती है। भूमिया देवता पशुओं एवं फसलों का रक्षक देवता माना जाता है। प्रत्येक वर्ष गेहूँ की नई फसल तैयार होने पर सर्वप्रथम नये अनाज से रोट हलुआ-पूड़ीया बनाकर देवता के थान में जाकर चढ़ाई जाती हैं। थारूओं के आंगन में भी शिवलिंग की स्थापना की हुई रहती है। शिवरात्रि के दिन प्रत्येक थारू परिवार अपने घर पर स्थित शिवलिंग में जलाभिषेक करके पूजा करते हैं। घर के आंगन में पूर्व दिशा पर नगराई, कारेदेव, बुढ़े बाबा आदि की प्रतीकात्मक मिट्टी की चार छोटी-छोटी प्रतिमाएँ बनायी रहती हैं। भादों के महीने प्रत्येक वर्ष इन प्रतिमाओं की लिपाई-पुताई नदी से लाई गयी स्वच्छ मिट्टी से की जाती है। इन प्रतिमाओं को घर-परिवार का रक्षक देवता माना जाता है जो कि घर के अन्दर कुदृष्टि, भूत-पिशाच, जानवरों की रक्षा, बीमारी एवं अनिष्टकारी शक्तियों के कुप्रभाव से बचाते रहते हैं।[4] देवी दुर्गा को अन्न-धन्न की देवी माना जाता है। नवरात्रि पर्वो पर विशेष पूजा अर्चना में पंचरंगी मिठाई एवं पांच कन्याओं को देवी का स्वरूप मानकर भोजन कराया जाता है।

माघ या आषाढ़ माह में थारू समुदाय के लोग कालिका, शीतला, ज्वाला, पार्वती, दुर्गा एवं हुलाका आदि सात देवीयों की पूजा करते हैं। देवी के मन्दिर में भरारे को बिठाकर 'गणत' की जाती है। देवी को प्रसाद में नारियल व बतासे चढ़ाये जाते हैं। इन देवियों के दो सेवक जिन्हें खरगा एवं पछुआ के नाम से पुकारते हैं। खरगा एवं पछुआ के पूजन में मुर्गे एवं बकरी की बलि चढ़ाई जाती है। भरारे द्वारा मंत्रोच्चारण करके सातों देवीयो का नाम का हवन कराया जाता है। जो इस प्रकार है कि-

सूरज मूख अग्नि, पश्चिम मुख कारे,
देवी की चौकी, हनुमान का पहरा।
जिसकी भेट दें वही लेई ले।
और न लेई कोई
राजा राम की दुआई ———— ।[5]

उक्त मंत्र को विशेष पूजा-अर्चना के समय 'भरारे' द्वारा उच्चारित किया जाता है। मान्यता है कि उक्त मंत्र के उच्चारण मात्र से ही अनिष्टकारी शक्तियों का प्रभाव समाप्त हो जाता है।

बोक्साओं की तरह थारूओं में भी तन्त्र-मन्त्र एवं जादू-टोना जैसी मान्यताऐं पायी जाती हैं। थारू स्त्रियां भी मोहिनी मंत्र एवं सम्मोहन मंत्र द्वारा किसी व्यक्ति को अपने वश में करने की क्षमता रखती हैं। शादी-विवाह, सन्तानोत्पत्ति, प्रेमी-प्रेमिकाओं की प्राप्ति, फसल एवं पशुओं की रक्षा आदि के लिए भी जादू टोना, तन्त्र-मन्त्र का सहारा लिया जाता है। थारू समाज प्रेत-आत्माओं एवं अदृश्य शक्तियों पर विश्वास रखते हैं। इन आत्माओं के पूजन के लिए बलि चढ़ाते हैं। आत्मपूजक समाज होने के कारण जब किसी व्यक्ति को बुखार, पिलिया, पेटदर्द, लकुवा, स्वप्न में बड़-बड़ाने की बीमारी होती है तो उसका उपचार डॉक्टर या अस्पताल न ले जाकर 'भरारे' क पास ले जाते हैं। उस पर अदृश्य शक्ति या आत्मा का प्रकोप मानकर तत्रं-मत्रं द्वारा ठीक करने की कोशिश करते हैं। इस कार्य को करने के लिए भरारे बीमार व्यक्ति को सामने बैठाकर अपनी नंगी पीठ पर संगलों से बना चाबुक मारकर प्रश्न पूछता है कि 'तू कौन सी आत्मा है जो अमुक व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करके बीमार किये हुए है, हम तुझे मुर्गे या बकरे की बलि देकर प्रसन्न कर देंगे, लेकिन तू इस व्यक्ति से दूर चली जा'। ऐसा कहकर भरारे द्वारा काली व ईष्ट देवी के मंत्रोच्चारण करके बीमार व्यक्ति को ठीक कर दिया जाता है।[6] मान्यता है कि तब ये आत्माएं व्यक्ति को परेशान नहीं करती हैं। थारू समाज में जंगल के देवता ऐडीमल, भारामल, प्रेत शक्तियाँ खरगा-पछुवा को यदि बलि नहीं दी जाती है तो ये छल-बीमारी का प्रकोप फैला देते हैं। अत: वर्ष में एक बार 'थारूवाट' क्षेत्र के लोग इन अदृश्य आत्माओं को प्रसन्न रखने के लिए मुर्गे व बकरे की बलि चढ़ाते हैं। मान्यता है कि जिससे क्षेत्र या गांव में सुख-समृद्धि रहती है। रोग व्याधि का प्रकोप भी समाप्त हो जाता है।

निष्कर्ष - उत्तराखण्ड का थारू एवं बोक्सा जनजातीय समाज प्रारम्भ से ही तराई के जंगलों एवं नदी-नालों के निकट विषम परिस्थतियों में रहकर प्रकृति की रहस्यमयी शक्तियों के प्रति भयभीत होता रहता था। इन शक्तियों के प्रकोप से बचने के लिए उनमें आत्म-पूजन, तन्त्र-मन्त्र एवं पशु बलि के भाव जाग्रत हुऐ। जब कोई व्यक्ति बीमार हो जाता था तो उसे तान्त्रिक के द्वारा तन्त्र-मन्त्र एवं पशु बलि का सहारा लेकर रोगी को ठीक करने की अंधविश्वासी परम्परा निभायी जाती थी। लेकिन आज स्वास्थ्य सुविधाओं एवं शिक्षा की जागरूकता से इन अंधविश्वासी परम्पराओं से हटकर ये जनजातियाँ सरकारी एवं निजी चिकित्सालयों में डॉक्टर के पास जाकर अपना इलाज कराने लगे है। वे अपनी परम्परागत तन्त्र-मन्त्र चिकित्सा पद्धति को छोड़कर आधुनिक चिकित्सा प्रणाली को अपनाकर स्वस्थ एवं सुखी जीवन व्यतीत करने लगे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बिष्ट वी0एस0- उत्तरांचल: पिछड़ी जाति एवं जनजाति परिदृश्य, अल्मोड़ा बुक डिपो प्रकाशन, वर्ष 1997, पृष्ठ-150।
2. वही, पृष्ठ-198।
3. बमराड़ा राजेन्द्र प्रसाद- बोक्सा जनजाति का समाजशास्त्रीय अध्ययन, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वर्ष-2002, पृष्ठ-45 ।

4. बिष्ट वी0एस0- उत्तारांचल: पिछड़ी जाति एवं जनजाति परिदृश्य, अल्मोड़ा बुक डिपो प्रकाशन, वर्ष 1997, पृष्ठ-150।
5. भागीरथ सिंह राणा, (भरारे)-झनकट (खटीमा) निवासी से प्राप्त मन्त्र, वर्ष-2003।
6. डोभाल दीपक- उत्तराखण्ड हिमालय: समाज एवं संस्कृति, हर्षिता प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष-2015, पृष्ठ-113।

****

Demonetization: Bane or Boon

Dr. P.K. Sirothia*

Introduction - On the heels of the Undisclosed Foreign Income and Assets (In position of Tax) act of 2015 and Income Disclosure Scheme of 2016, The NarendraModi Government has announced demonetization of Rs. 500 and Rs. 1000 currency, which has been referred to as masterstroke by many experts.

Basic Meaning of Demonetization - Demonetization of Currency means discontinuing of particular currency from circulation and replacing it with new currency.

Why was demonetization done (As per the reasons given by the Government in the present case)

1. To tackle the menace of black money/parallel economy/ shadow economy.
2. The Cash circulation in India is directly connected to corruption hence we want to reduce the cash transactions and also control corruption and thereby move towards cashless transactions.
3. To counter the menace of counterfeit currency.
4. To prevent the cash being used for terrorist activities/ terror funding.

This is the only second time of post-independence (even before independence demonetization was done in 1946) that the measure such as demonetization has been announced. The last time this was done in 1978 under Morarji Desai government when Rs. 500, Rs. 1000 and Rs. 10,000 notes were demonetized. A CBDT report which evaluated this measure concluded that –

1. It was an ineffective more as only 15% of the high denominations were exchanged
2. The rest never surfaced for the fear of stringent penalty by the government.
3. The report concluded that demonetization may not be the solution of black money largely held in the form of benami properties bullion and jewelry. Such a measure would only increase the cost of more currency notes, which have to be printed. It can also have an adverse impact on the banking logistics.

Analysis Of Demonetization

Criticism againstDemonetization - Critics say, the demonetization as a means of tackling the black money carried out on the incorrect premise that black money means cash. It was thought that if cash was squeezed out the black economy would be eliminated. But cash is only one component of black wealth; about 1% of it.

Black money is a result of black income generation. This is produced by various means which are not affected by the one shot squeezing out of cash. So there is little impact of demonetization on the black economy.

Cash is the King - In India majority of the transactions are done in the form of cash. As per RBI 87% of transactions in India are cash transactions.

1. All the black money is not stored in the form of cash only and secondly the measure takes care of result but not the causeblack money is generated mainly because of corruption and tax evasion. This measure controls the usage of black money but cannot control the causes.
2. Sudden and huge demand for the new currencies
3. Panic amongst the common man (already we have seen the case wherein people have looted fair price shop in MP, Cash Carrying companies seeking higher insurance etc). already the panic has led to people hoarding currencies which has further reduced the liquidity in the market
4. The small traders/shopkeepers were facing difficulties
5. Black marketing of the new notes/currencies is on the rise
6. The establishments such as banks, hospitals etc. are under lot of stress
7. Another area which is a cause of worry is the likely drop in the rural demand as the cash usage will become restricted. Apart from this the experts are also expecting an impact on SME sector.

- The coverage of the banking sector-

a. Only 27% of the villages have a bank within 5 Kms (as per Economic Survey 2015-16)
b. In spite of recording breaking implementation of Jan DhanYojana, the banking penetration is low, on an average 46% in all the states (as per Economic Survey 2015-16)

- Another challenge in implementing and eradicating black money would be presence of informal economy. It accounts for 45% of GDP and 80% of employment, hence this move may have a greater impact on informal economy
- Logistics and cost challenges of replacing all the Rs

*Professor (Commerce) Vijayaraje Government Girls Post Graduate College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

500 and Rs 1000 notes – as per the RBI documents this measure would cost at least Rs 12000 crore as it has to replace over 2300 crore pieces of these currencies

- The decision to issue Rs 2000 denomination currency and withdrawal of Rs 500 and Rs 1000 currency will lead to huge challenge as most of the day to day transactions in India are centered around Rs 500 note (more than 47% of the value of notes in circulation is in Rs 500 note form)
- The availability of Rs 500 and Rs 1000 notes will be the biggest challenge as both of them covered over 85% in terms of value of total currencies issued
- The process has led to huge rush and long queues of the people in front of ATMs and as per the statement of finance minister the ATM recalibration would take around 2 to 3 weeks

Changed Narrative from Black Money to Cashless Economy - The original intent of demonetization was to address the issue of black money. There is enough work that suggests that people with black money hold a very small proportion of it in cash. Most of it is usually invested in gold, or real estate, or in the stock market, or abroad, and the share of black cash is only 6% of the total black economy.

1. The primary pitch and narrative of demonetization drive by Prime Minister seems to have taken a major shift to cashless Economy from the initial key highlights of war against black money, corruption and counterfeit currency.
2. Now Government says that idle money has come into the system, the cash-to-GDP ratio will decline; the tax base will expand. But none of these required demonetization and could have been implemented independently.
3. The government now also said that demonetization is only one of the many steps to tackle the black economy.
4. The government's argument that cash coming back to the banks will enable it to catch the generators of black income, and there will be formalization of the economy, may not hold.
5. Then the goalposts started shifting when it became apparent that the main reason was not justified by what was happening. First it was cashless, then less cash economy, then formalization of the economy. The final step was in saying this would give IT authorities the information to go after people who had deposited black money.

Merits of Demonetization - The demonetized policy will help India to become corruption free. Those indulging in taking bribe will refrain from corrupt practices as it will be hard for them to keep their unaccounted cash.

1. This move will helps the government to trace the black money. Those individuals who have unaccounted cash are now required to show income and submit PAN for any valid financial transaction.
2. This move have generated interest among those people who had opened Jan Dhan Accounts under the Prime Minister's Jan DhanYojana. They cannot deposit their cash under this scheme and this money can be used for the developmental activity of the country.
3. The demonetization policy will force people to pay income tax. Most of the people who have been hiding their income are now forced to come forward to declare their income and pay tax on the same.
4. The ultimate object objectives are to make India a cashless society. All the monetary transaction has to be through the banking methods and individuals have to be accountable for each penny they possess.
5. Terror financing, using black money for illegal activities etc will all take a hit
6. The counterfeit currencies which have an impact on the real economy, will be rooted out
7. The mobilization of deposits in the banks will increase, which may lead to increased credit financing and lowering of lending rates
8. The black money adds to the inconspicuous demand and hence the inflation to some extent will be under control
9. The real estate is one of the major sources of black money generation. With this move it is expected that the property market rates may bottom out or moderate
10. The honest workers will be rewarded under such scenario
11. The elections are usually associated with black money generation and circulation, with this scheme the funding of elections through nefarious ways will be hit
12. It is expected that with this move the Fiscal Deficit of the government may come down

Other Significant gains from demonetization

1. Nobel laureate KailashSatyarthi and others working to fight human trafficking said that the note ban had led to a huge fall in sex trafficking.
2. The Demonetisation has badly hit Maoist and Naxalites as well. The surrender rate has reached its highest since the demonetisation is announced. It is said that the money these organisations have collected over the years have left with no value and it has caused them to reach to this decision.
3. Mumbai Police reported a setback to Hawala operations. Hawala dealers in Kerala were also affected. The Jammu and Kashmir Police reported the effect of demonetisation on hawala transactions of separatists.
4. Several e-commerce companies hailed the demonetisation decision as an impetus to an increase in digital payments, hoping that it would lead to a decline in COD returns which could cut down their costs.
5. The demand for point of sales (POS) or card swipe machines increased. E-payment options like PayTM and Instamojo Payment Gateway, PayUMoney also

saw a rise.

6. The number of I-T returns filed for 2016-17 grew by 25 per cent and the advance tax collections during that period rose 41.8% over the 1-year period, as increased number of individuals filed their tax returns post demonetization

Conclusion - But after having discussed so much with this, measure eliminate all the black money in the economy? The answer simply would be a confirmative – No, as it has been seen that the black money is stored in various forms other than cash (such as gold, jewelry, assets etc.) and as per A 2012 report prepared by National Institute of Financial Management on uncounted income found that cash was the least preferred option for storing unaccounted wealth. Economists are busy in listing out many more merits and demerit of this policy. The government is saying that there are only advantages of demonetization policy and this will be seen in the long term. Former Prime Minister Manmohan Singh who is a noted economist, former RBI governor and former Finance Minister of the country, dubs the demonetization move as an 'organized loot and legalized plunder'.

However, if we compare the merits verses demerits, it will be safe to conclude that the former outweighs the latter. Even though there is suffering and agony among the masses right at the moment but the forecast is that its benefits will be seen in the long run.

The government is taking all the necessary steps and actions to meet the currency demand and soon the trial and tribulations of the people will be over with the smooth flow of the new currency.

References :-

1. Government of India Economic Survey, 2016-17.
2. Henry James S. (1980) "The cash connection", How to make the Mob Miserable", The Washington Monthly
3. Acharya Shankar N (1986) "Aspects of the black economy in India, National Institute of Public Finance and Policy.
4. Sen, Pronab (2016), "Demonetization is a Hollow Move"
5. Byjus.com
6. Youtube.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

नव्य वेदान्त में मानवीय मूल्यों की अवधारणा

देवदास साकेत *

शोध सारांश - वेद ही अन्तिम निर्णय है, अन्तिम निर्णय ही सत्य है। आज मानवीय मूल्यों के प्रति संसार चिन्तित है। वेद अंतर्ज्ञान और संस्कृति के मूलतम् स्त्रोत कहें जा सकते हैं। अगर हम मानवीय मूल्यों को देखने का प्रयास करते हैं तो सबसे पहले वेदों की नीति का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है। अर्थात् वेद ही मानव जीवन और सभ्यता के निर्माण का मूलत: आधार है। वेदों के उदय को हम इतिहास की दृष्टि से प्रथम मानते हैं। वेद को यह कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति का प्राचीनतम् ग्रन्थ है। वेदों को अपौरूषेय कहा गया है। वेदों के सम्बन्ध में अगर हम कहें तो पता चलता है। चार्वाक, बौद्ध और जैन के अतिरिक्त सभी भारतीय दार्शनिकों ने वेदों की प्रमाणिकता को किसी-न-किसी रूप में स्वीकार किया है। धर्म सूत्रों में उल्लेखित किया गया कि वेद धर्म का मूल है। वैदिक मनुष्यों की कल्पना थी कि इस समाज के निर्माण में सुख सम्पत्ति, उन्नति और शान्ति को निश्चित रूपों में चलाना चाहते हैं। इन पुण्य कार्यों के लिए यथा संभव प्रयत्न भी करते हैं। फिर भी वह पापपूर्ण कार्यो से बचकर न्याय युक्त कार्यो को ही करना सद्कर्म समझना चाहिए। उनकी सोच भी यदि इस विशाल विश्व को न्याय संगत ढंग से चलाने वाली अगर कोई कर्त्ताधर्ता है तो वह ऋत् ही है। देवतागण ही इसके अधिष्ठाता है। ऋत् के ही कारण यह संसार नियमबद्ध रूपों में चल रहा है। इसीलिए ऐसी कल्पना वैदिक मानव करते हैं कि अगर संसार को ऋत् चलाता है। तो मानव जीवन को सत्य की पराकाष्ठा चलाती है। ऋत् ही मानव जीवन का सत्य है।

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र **नव्य वेदान्त में मानवीय मूल्यों की अवधारणा** में द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम से अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक अध्ययन को समाहित करते हुए विद्वानों से भी मार्गदर्शन लिया गया है।

समस्या - समाज में हो रहें असमाजिक वातावरण के कारण मानवीय मूल्यों का हनन हो रहा है। यह समस्या वास्तव में एक गॉव कस्बे की ही नहीं बल्कि यह वैश्विक रूप से विद्यमान है। आज आये दिन हो रही घटना, अपहरण, हिंसा, बलात्कार, चोरी, अगजनी, घूस, लूट-पाट, धोखा-धड़ी जैसी समस्याऐं पनप रही है। इसका वास्तविक कारण व्यक्ति में नैतिक मूल्यों का अभाव कहा जा सकता है, जिसकों व्यक्ति जानते हुए टालमटोल कर रहा है। यह समाज के लिए सबसे बड़ा खतरा है।

उद्देश्य - मानवीय मूल्यों को समाज में बनाये रखने हेतु जागरूक करना इस शोध पत्र का उद्देश्य है, जिसका विषय नव्य वेदान्त के माध्यम से समाज में नैतिकता की विशेषताओं से परिचित करना है। यदि व्यक्ति में नैतिकता के भाव होगें वहाँ हिंसा, अगजनी, बलात्कार, चोरी, लूटपाट आदि घटनाऐं नहीं होगी। इसी उद्देश्य से इस शोध का अध्ययन कर लेखन कला में परिणित किया गया है।

समाधान - वैदिक कालीन व्यक्तियों की सोच थी कि सम्पूर्ण संसार के व्यवहार न्याय संमत एवं सत्य के आधार पर चलना चाहिए। चाहें उसमें कष्ठ ही क्यों न हो। इसके विपरीत होने की दशा पर दैवीयशक्तियों के सामने नतमस्तक होकर अराधना किया करते थें। इस प्रकार के विचारों से इस संसार में पृथ्वी जगत् में शांति रहेगी।

'सत्य की महिमा वेदों में यहाँ तक कही गयी है कि देवाधिदेव को भी सत्य का पालन करने वाला बताया गया है।'[1]

'थोड़ा सावधान होकर सुनो, आकाश में बहुत प्रकार के मेंघ रहते हैं। कोई तो वृष्टि से पृथ्वी को तर कर देते है और कोई व्यर्थ में गर्जते ही है; उन्हें देने लेने को कुछ नहीं रहता, अत: बिना समझे बूझे जिस किसी मेंघ के सामने तुम दीन वचन मत कहा करो, किन्तु समझ बूझकर ही माँगा करो।'[2]

व्यक्ति को हमेशा बिना सोच विचार कर ही निर्णय लेना चाहिए। बोलने से ज्यादा कार्य को अंजाम देना चाहिए। सत् पुरूष बोलता कम है। वह सत् निर्णय पर आश्रित होते हैं। उनके निर्णय हमेशा विचारवान होते हैं। वह मेघ की तरह गरज कर बारिस नहीं करते हैं। वह तो चुपचाप बारिस करके कार्य को पल्लवित करते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य को सोच विचार कर ही निर्णय देना चाहिए।

जीवन का लक्ष्य ही सत् धर्म युक्त सुख शान्ति की प्राप्ति है। सुख के सम्बन्ध में ये विचार क्षण प्रतिक्षण परिवर्तित होते रहते हैं, परन्तु आज जिस सुख में ये मानव लीन है। उस सुख के पीछे वैदिक काल के लोगों का अपना अलग सिद्धान्त रहा है। इसके सम्बन्ध में वह किस प्रकार के सुखों को अनुभव करना चाहते थें। यह विचारणीय है क्योंकि कहतें है कि जैसा खाये अन्न वैसा हो मन, जैसा हो अध्ययन वैसा हो विचार, जैसा हो विचार वैसा हो कर्म, जैसा हो कर्म वैसा प्राप्त हो फल।

वैदिक परम्परा के मनुष्यों की सोच विलकुल ऋग्वेदों के अनुरूप थी। जिस प्रकार से ऋग्वेद में कहा गया है। कि 'हम सौ वर्ष तक देखें और सौ वर्ष तक जियें।'[3 ऋग्वेद 7/11/16]

वेदकालीन परम्परा को मानने वाले मनुष्य केवल यह पूजा-अर्चना ही नहीं वह तो अपने परिश्रम और पुरूषार्थ में अधिक विश्वास रखते थें। इन वैदिक लोगों की मान्याताएँ थी की भगवान उसी की मदद करता है जो अपनी अजीविका का साधन स्वयं जुटाता है।

'जीवन एक संग्राम है। उसका प्रवाह उस नदी के समान है जो पत्थरों को चीरती और कटती हुई कल्याण सागर की ओर बढ़ती है।'[4 अर्थववेद 12/2/24]

'जो पाप मैंने जानबूझ कर किया है और जो अनजाने किया है उसको क्षमा करने वाला तू है।'[5] **डॉ. भीखन लाल आत्रेय** मानवीय मूल्यों के सम्बन्ध

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

में नैतिकता और अनैतिकता के बीच ईश्वर ही एकमात्र सत्ता है। ईष्वर की सत्यता को अभिव्यक्त का प्रत्येंक प्राणी में सत्यता फलन निहित होनी चाहिए। क्योंकि व्यक्ति नैतिक मूल्यों को किस प्रकार से समझने का प्रयास करता है। नैतिक मूल्य अपने आप में स्वयं सत्य है। इन शब्दों के पीछे तर्क है, व्यक्ति को नैतिक मूल्यों से साथ कैसे जीवन निर्वहन करना चाहिए, जितना महत्वपूर्ण है। उससे ज्यादा कहीं उसे मरना कैसे चाहिए, यह अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि मानवीय मूल्यों के लिए जीवन का पहला क्षण जन्म है। यहीं कतर्व्य धर्म में निहित है। उसके अन्तिम क्षण में मृत्यु निश्चित होती है, जिसमें उसके कर्म के आधार पर नियत निर्धारित होती है। इसी में वेदान्त और नव्य वेदान्त दोनों निहित है कि मनुष्य जन्म किस लिए है? मृत्यु कैसे होगी? यही वेदान्त और नव्य वेदान्त को समझा जाता है। वहीं उसके कर्म पर निर्धारित होता कि वह जैसे कर्म करेगा उसे वैसा फल भी प्राप्त होगा।

भारतीय दर्शनों के षड्दर्शनों में दो ऐसे भी दर्शन है। पहला मीमांसा और सांख्य सम्प्रदाय में कुछ तो ईश्वर की सत्ता को अस्वीकार करते हैं। इसमें 'अनीश्वरवादी मीमांसकों के अनुसार इस जगत् को बनाने वाला कोई ईश्वर नहीं यह जगत् सदा से ही चला आ रहा है।'[6]

इसी प्रकार वेदों को अपौरूषेय कहा गया है क्योंकि मानव निर्मित नहीं है। ईश्वरीय अर्न्तज्ञान के सम्बन्ध में यह बात आती है। कि परमपरमेश्वर का कोई शरीर और हाथ तो हैं नहीं। तो वह कैसे ग्रन्थ लिख सकता है। जब शरीर नहीं तब उसके पास मुख, वाणी, जिह्य इत्यादि भी नहीं हो सकती है। यह आलोचको का कथन है। कि वह मनुष्य को कैसे सिखायेगा। तब प्रश्न उठता है कि व्यक्ति जीवित है, क्या उसको स्वयं की आत्मा दिखाई दे रही हैं। वह क्यों चल रहा है, वह पानी क्यों प्रतिक्षण पीता है। साँस क्यों लेता है। दस मिनट के लिए अगर कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति की साँस बन्द कर दे, तो उसको पता चल जायेगा कि ईश्वर और वेदों को कौन लिखा है और कौन ज्ञान बॉटता है। कौन नहीं बाटता है।

इसका एक कारण और भी हो सकता है जिसका पखंण्डी-पुजारियों के लालच के कारण भी चरमता को प्राप्त करना कहा जा सकता है, जबकि कोई व्यक्ति इतनी बड़ी आलोचना कैसे कर सकता है। क्योंकि जब हम नववेदान्त में स्वामी विवेकानन्द, दयानन्द सरस्वती और अरविन्द आदि दार्शनिकों की बात करते हैं। तब लगता है कि इन्होंने सम्पूर्ण समाज को एक अद्भुत दिशा दिखाने का प्रयास किये हैं। वेद शास्वत सत् है। इसको नकारा नहीं जा सकता है किन्तु इसके रखवालों ने जो विसंगतियाँ फैलाई कि विशेष समुदाय का व्यक्ति पूजा-पाठ और उसका अध्ययन नहीं करेगा। ऐसे विचारों के कारण हमे लगता है कि यहाँ से अलोचना का आडंबर प्रारम्भ होता है। जब व्यक्ति क्यों का प्रश्न खड़ा करता है। तब उसके सामने उत्तार ढूढ़ने का वह हमेशा प्रयत्न करता है। शायद ऐसी ही गलती कुछ लोगों ने किया हो जिसका आज एक उपेक्षित समुदाय बन गया है। जिसकी विचारधारा ही नकारात्मक हो गई, जिस प्रकार से मीमांसक और वेदान्ती में भी उनका अलग-अलग दृष्टिकोण सामने आता है। इस दृष्टिकोण की आलोचना चार्वाक करता है। उसके साथ-साथ बौद्ध, जैन भी करते हैं। उसी प्रकार सबकी और सर्वदर्शन संग्रह के आचार्य माध्वाचार्य कटाक्ष के रूप में करते हैं। इसी से कहीं-न-कहीं नव्य वेदान्त की परम्परा उभर कर सामने आती है।

निष्कर्ष - मानव की बौद्धिक क्षमता के विकास का मूल वेदों को ही मानना चाहिए। क्योंकि विकास की प्रारम्भिक बातों का भी उद्धरण मिलता है, कि परमात्मा ज्ञान की बहुत बड़ी कसौटी हैं। जिसकों प्रत्येक मानव अपने जीवन में उतारना चाहता है। ईश्वर में स्वभावना है। इसके गुण-कर्म की स्वाभावना के प्रतिकूल कोई बात नहीं होनी चाहिए। क्योंकि यह ईश्वर ही एक सत्यनिष्ठापूर्ण दयालु, न्यायकारी नियंता मुक्तमार्गी सभी कालों में विराजमान है। उसी से ईश्वर के गुणों-कर्मों और स्वभावों का ज्ञान प्रत्येक मानव को प्राप्त होता है। यही वेदों के द्वारा भी प्रत्येक मानव को जीवन जीनें का मार्ग प्रस्सत होता है। जबकि कुछ अन्य ग्रन्थों में इसके विपरीत भी कुछ बाते कही गई है। वेदों में उद्धत सभी बाते परमपिता परमेश्वर के गुण-कर्म और स्वभाव के अनुसार मनुष्य को अपने जीवन में कर्म के मार्ग को सिखाती है। अगर हम इस पृथ्वी के चर-अचर जीवों की उत्पत्तिा के सम्बन्ध में बाते करें तो, इस ईश्वर ने ही इस भूमि को उत्पन्न किया है। चन्द्रमा और सूरज की उत्पत्तिा हुई। अनेकों प्रकार के अनाजों को उत्पन्न किये। पशु-पक्षियों को भी जीवन दिया। इन्हीं कल्याणार्थ-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। जीव, वनस्पति, वायु और चराचर वस्तुओं का वर्णन मिलता है। इन्हीं के साथ परमेश्वर ने मनुष्य को वेदों का ज्ञान दिया। जो अनादि सृष्टि के कालों से चली आ रही है। इस परमेश्वर में आज आधुनिक युगीन युवक-यवतियों के कृत्यों का पूर्ण ज्ञान है, जिसकी सजा कुछ को समय रहते मिलती है और कुछ को समय के बाद मिलती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **डॉ. भीखन लाल आत्रेय,** भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास, हिन्दी समिति सूचना विभाग, उ.प्र. लखनऊ संस्करण 1964 पृष्ठ 39
2. वही, पृष्ठ 320
3. **ऋग्वेद** 7/11/16
4. **अर्थववेद** 12/2/24
5. **डॉ. भीखन लाल आत्रेय,** भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास, हिन्दी समिति सूचना विभाग, उ.प्र. लखनऊ संस्करण 1964 पृष्ठ 41
6. **आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति,** वेद और उसकी वैज्ञानिकता भारतीय मनीषा के परिप्रेक्ष्य में, श्रद्धनन्द अनुसन्धान प्रकाशन, केन्द्र गुरूकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, प्रथम सन् 1990 पृष्ठ 80

****

भारतीय अर्थव्यवस्था में स्वयं सहायता समूह का योगदान

डॉ. आर.एस. वाघेला* प्रो. हरीश दुबे**

शोध सारांश – स्व सहायता समूह – कमजोर वर्गो के आर्थिक उत्थान के लिए दो दशक पूर्व शुरू किया गया, एक ऐसा समूह जिसकी अधिकतर सदस्य महिलाएँ होती है। वर्ष 1976 के प्रारंभिक शोध चरण में इस संकल्पना को पूर्ण रूप देने वाले विचारधारक, निर्माता व संस्थापक डॉ मोहम्मद यूनुस खान हैं, जिन्होंने सर्वप्रथम बांग्लादेश में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर पद पर रहकर 'समूह' की संकल्पना को प्रस्तुत किया था। क्योंकि निम्न वर्ग की आय कम होना एवं विशेष कार्य के लिए धन की आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए महाजनों, जमींदारों व सूदखोरों पर निर्भरता उत्पन्न होती है, इसी सोच को समाप्त करने के लिए निम्न वर्ग द्वारा छोटे-छोटे गांव में 4-5 सदस्यों में मिलकर समूह स्थापना कार्य प्रारंभ हो चुका है, जिसमें छोटी-छोटी बचत की राशि एकत्रित कर एक बड़ी पूंजी को एकत्रित किया जा रहा है, बांग्लादेश मॉडल के आधार पर भारत देश में इस तरह के सूक्ष्म आर्थिक विकास कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं।

प्रस्तावना – वर्तमान की सबसे विकराल समस्या गरीबी है, जिससे निम्न वर्ग इस परिभाषा से उभर नहीं पा रहा है, या संपूर्ण प्रक्रिया कही न कही परिवर्तन की माँग कर रही है, ऐसे निम्न वर्गो के उत्थान के लिए प्रत्येक राष्ट्र, राज्य एवं प्रांत में समूह की आवश्यकता है, ऐसे कमजोर वर्गों को केवल आर्थिक मदद की आवश्यकता नहीं, बल्कि एक आदर्श मार्गदर्शन की भी जरूरत है, जिससे गरीब द्वारा गरीब वर्ग को संगठित कर आर्थिक एवं सामाजिक उन्नति की ओर प्रेरित किया जा सके।

स्व-सहायता समूह तीन शब्दों का ऐसा मिलन है, जिसमें स्व अर्थात् स्वयं की सहायता अर्थात् सहयोग मदद, समूह अर्थात् व्यक्तियों का समूह होता है अगर इनको संयुक्त रूप से पुकारा जाए तो स्व-सहायता समूह एक ऐसा समूह है जो स्वयं अपनी सहायता व व्यवस्था करता है। स्व-सहायता समूह प्राय: 10 से 20 सदस्यों का एक ऐसा समूह होता है, जिसमें प्रत्येक सदस्य की एक निश्चित राशि बचत की जाती है, ऐसी लघु बचतों को एकत्रित कर समूह एक बड़ी पूंजी निर्मित करता है। ऐसे निम्न वर्गों के लोग जिनको बैंकों से आर्थिक सहयोग प्राप्त नहीं हो पाता है, क्योंकि बैंक के ऋण देने का आधार नौकरी, व्यवसाय, आय व संपत्ति होती है, जो उन लोगों के पास मौजूद नहीं होती है। समूह ऐसे सदस्यों को संग्रहित बचत राशि से छोटी-छोटी आवश्यकताओं पूर्ण करने हेतु ऋण राशि उपलब्ध करता है। समूह गठन का उद्देश्य केवल बैंक से ऋण प्राप्त करना नहीं अपितु समस्याओं का समाधान, पारिवारिक समस्याओं का निदान, बचत से पूँजी का संग्रहण, स्वरोजगार व्यवसाय एवं उद्योगों की स्थापना करना है। स्व-सहायता समूह ऐसे वर्गों को आर्थिक-सामाजिक विकास की नई दिशा प्रदान करता है।

कमजोर वर्गों के आर्थिक विकास में कमी एवं अविश्वास, अशिक्षा, बेरोजगारी जैसी महत्वपूर्ण समस्याओं को दूर करने के लिए स्व-सहायता समूह का गठन हुआ है। समूह द्वारा निर्धारित उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए आंतरिक व्यवस्था प्रबंध में प्रजातांत्रिक तरीके चयनित अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, सचिव, कोषाध्यक्ष इत्यादि होते हैं जो कि स्व-सहायता समूह की गतिविधियों को नियमित एवं पूर्ण जिम्मेदारी से क्रियान्वित करते हैं।

स्व-सहायता समूह का महत्व – समूह मुख्यत: कमजोर वर्ग के लिए लक्षित है, जिसका संचालन विधिवत प्रक्रिया से संपन्न होता है। समूह की स्थापना निम्नांकित लाभ पूर्ति हेतु किया जाता है –

1. निर्धन वर्ग को बैंक से ऋण सुविधा योग्य बनाना
2. साख-उपलब्धता का अवसर प्रदान करना
3. सदस्यों में बचत की प्रवृत्ति उत्पन्न करना
4. बैंकों से आसान ऋण सुविधा की उपलब्धता
5. समूह सदस्यों को सामाजिक सुरक्षा
6. सरकारी योजनाओं से लाभान्वित
7. प्रशिक्षण सुविधा की व्यवस्था
8. समूह का 'अपना बैंक'

स्व-सहायता समूह के उद्देश्य :

1. स्व-सहायता समूह के माध्यम से कमजोर वर्ग की आर्थिक, सामाजिक स्थिति में बदलाव लाना।
2. विशेषकर ग्रामीण महिलाओं में सूक्ष्म बचत करने की प्रवृत्ति उत्पन्न करना।
3. जमींदारों, साहूकारों, सेठ व अन्य सक्षम वर्गों के चुंगल से निम्न वर्गो को मुक्त कराना।
4. समूह में जीवन एवं ऋण बीमा सबंधित सुविधा उपलब्ध करना।
5. विकास सूचना एवं विपणन संपर्को तक स्व-सहायता समूह।

स्व सहायता समूह को संचालित करने वाली संस्थाऐ – देश के विकास में आर्थिक एवं सामाजिक दोनों तथ्य महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं, क्योंकि किसी एक की मदद से संपूर्ण विकास की प्राप्ति संभव नहीं है, इसी सोच को रखते हुए समूह की विकास धारा को संचालित करने वाली संस्थाएँ इस प्रकार है :-

1. मैसूर रिसेटलमेंट एवं विकास

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय अटल बिहारी वाजपेयी वाणिज्य एवं कला महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) 1 भारत
** देवी अहिल्या कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इदौंर (म.प्र.) भारत

2. महिला चेतना मंच (भोपाल)
3. भारतीय माइक्रोफाइनांस स्व-सहायता समूह परिसंघ नेटवर्क
4. कामकाजी महिला कोरम मद्रास (भारत)
5. प्रतिभा समन्विता विकास (इंदौर सखी सहकारिता द्वारा मर्यादित)
6. जनलक्ष्मी फाइनेंशियल सर्विसेज प्रा.लि. (बेंगलुरू)
7. आई.एफ.एम.आर.
8. शक्ति महिला संघ (जबलपुर)
9. सेजा फाइनेंस प्रा.लि. (पटना)

स्व-सहायता समूह की कार्यप्रणाली - प्रत्येक समूह अपने सदस्यों का भविष्य सुखद एवं सफल बनाने के लिए प्रयासरत है। समूह द्वारा कार्यों की पूर्ति के लिए प्रत्येक सदस्य को जिम्मेदारी एवं दायित्व का विभाजन किया जाता है, जो समूह कार्यप्रणाली का एक मुख्य भाग है, प्रत्येक सदस्य नियमों का पालन एवं सर्वसहमति से निर्णय लेने का कार्य करते हैं। इस प्रकार समूहों की मुख्य कार्यप्रणाली निम्नानुसार दर्शायी गई है :-

1. स्थापना कार्यप्रणाली

1. समूह में नियमावली तैयार करना।
2. समूह की नियमित बैठक का संचालन करना।
3. समूह के प्रवेश विकास एवं निष्कासन सबंधित नियम तैयार करना।
4. समूह में सदस्यों की संख्या निर्धारित करना।
5. समूह बैठक में सदस्यों की उपस्थिति एवं संचालन की व्यवस्था करना।

2. पंजीयन कार्यप्रणाली

1. समूह पंजीयन हेतु दस्तावेज की व्यवस्था करना।
2. पंजीकरण के लिए निर्धारित शुल्क को चालान से भुगतान करना।
3. पंजीयन प्रक्रिया के पूर्ण होने पर पंजीयन प्रभाव प्रमाण पत्र जारी करना।

3. बैंकिंग कार्यप्रणाली

1. बचत खाते की उपयोगिता से सदस्यों को अवगत करना।
2. बैंक और सदस्यों के मध्यस्थापना कर मधुर सबंध स्थापित करना।
3. रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित कार्यप्रणाली एवं नियमों को सदस्यों तक पहुँचाना।
4. बैंक से ऋण की मांग एवं ऋण की वापसी गतिविधियों से सदस्यों को प्रशिक्षित करना।

शोध प्रविधि - उक्त शोध विषय भारतीय अर्थव्यवस्था मे सूक्ष्म वित्त व्यवस्था लोगों की आर्थिक स्थिति पर रोजगार के अवसर तथा लघु व्यवसाय के विकास संबंधित विभिन्न चरों के मध्य सबंधो का गहन अध्ययन किया गया है। किसी भी एक चर का अन्य चरों पर क्या प्रभाव होता है, इस बिंदु को पूर्णत: अध्ययन किया गया है। शोध अध्ययन हेतु व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प का उपयोग किया गया है। स्व-सहायता समूह में द्वितीयक समंकों का संकलन किया गया है। समंकों के संकलन के लिए शोध पत्रिका, समाचार पत्र-पत्रिकाएँ, इंटरनेट इत्यादि माध्यमों का उपयोग किया जा रहा है। समूह की स्थिति मूल्यांकन के लिए समूह संबंधित सैद्धांतिक आंकड़ों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गये है।

समूह की समस्याऐ - सर्वेक्षण के दौरान स्व-सहायता समूहों के संचालन संबंधित अनेक समस्याऐ ज्ञात हुई है। इन समस्याओं में से प्रमुख समस्याओं को निम्नानुसार दर्शाया जा रहा है :-

1. समूह सदस्यों का अधिकांश भाग निरक्षर होना।
2. समूह सदस्य को ऋण सुविधा के साथ बीमा सुविधा उपलब्ध न होना।
3. समूह सदस्यता प्रक्रिया औपचारिक, वैधानिक व जटिल होना।
4. समूह प्रोत्साहन के लिए सरकार द्वारा अतिरिक्त सेवाओं की उपलब्धता का अभाव।
5. राष्ट्रीय, केंद्रीय राज्य स्तर पर गठित समिति व विभाग द्वारा समूहों के निरीक्षण, प्रशिक्षण एवं सर्वेक्षण व्यवस्था का अभाव।
6. जाति और लिंग आधारित भेदभाव के कारण समूह के मूल उद्देश्यों की पूर्ति मे अवरोध पैदा होना।

समूह के लिए सुझाव - स्व-सहायता समूह के कार्य का मूल्यांकन करने हेतु प्रस्तुत शोध के अध्ययन क्षेत्र से जो सर्वेक्षण कार्य किया गया, जिसमें तथ्य तथा समंक संकलित करने के साथ विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श होने से संबंधित कई समस्याएँ प्रकट हुई, उनके समाधान प्राप्ति के लिए प्रयत्न किये गये। इनसे संबंधित महत्वपूर्ण सुझाव निम्नानुसार है :-

1. निरक्षर समूहों को साक्षरता की ओर अग्रसर करना।
2. नवीन समूहों की स्थापना एवं विकास के लिए बैंकों से शीघ्र ऋण उपलब्ध होने की व्यवस्था करना।
3. शासकीय एवं गैर शासकीय विभाग द्वारा स्थापित समूहों की उन्नति एवं विकास की ग्रेडिंग व्यवस्था होना।
4. समूह के लिए सुनिश्चित स्थान, बेहतर तकनीक एवं बौद्धिक ज्ञान वृद्धि हेतु आवश्यक सुविधाएँ की उपलब्धता करना।
5. समूह सदस्यों को डिजिटल बैंकिंग एवं बैंक लिकेज कार्यक्रम से जोड़ने के लिए प्रशिक्षण सुविधा की व्यवस्था करना।

निष्कर्ष - भारतीय अर्थव्यवस्था में स्व-सहायता समूह के योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह निष्कर्ष सामने आया है कि क्षेत्र के विकास में स्व-सहायता समूहों का महत्वपूर्ण स्थान है। जब समूहों को संचालित हेतु साख एवं आर्थिक साधनों की आवश्यकता होती है, तब समूह स्वयं एकजुट होकर सूक्ष्म बचत से एक बड़ी पूंजी को संग्रहित कर अपनी आवश्यकता एवं समस्या का निदान कर लेते हैं, समूह द्वारा संचित की गई, लघु बचतों के आधार पर बैंकों द्वारा समूहों को ऋण उपलब्ध कराया जाता है जो समूहों को अपने निर्धारित उद्देश्य को पूर्ण करने में मदद करता है इससे सेवाओं के क्षेत्र में स्वरोजगार में वृद्धि हुई है। समूहों के गठन, समूह की बचत एवं ऋण सुविधा से सदस्यों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन स्तर में सुधार हुआ है। बैंकों से प्राप्त ऋण एवं स्वरोजगार सृजन होने से सदस्यों की आय में वृद्धि हुई है, बेहतर स्वास्थ्य-सेवाएँ, शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता अवसरों में वृद्धि हुई है। इन सभी कार्यों में समूहों को सकारात्मकता प्राप्त हो पाई है। स्व-सहायता समूहों को आदर्श व्यावहारिक एवं कार्यशील बनाने के लिए बैंक की कार्यप्रणाली सरलीकरण होना आवश्यक है, तभी समूह के वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करते हुए समाज निरंतर विकास के पथ पर अग्रसर होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Krishna Gopal (2010) : SHGS and Social defence social welfare vol. 44 (1) 30-34 Jan.
2. Sahthaham and Azad (2009) : Rural Group – A Study of behaviour and International patterns, social welfare, June.
3. कुमार 2009 - 'शक्ति ने बनाया महिलाओं को आत्मनिर्भर' समाजवादी दृष्टि 28-29 अक्टूबर
4. डॉ. सुखपाल श्रीवास्तव (2009) - 'सदस्यों की एकजुट करते स्वयं-सहायता समूह' अक्टूबर 2009 पत्रिका-कुरुक्षेत्र पृष्ठ क्रमांक 15 देखें

5. भट्ट कुसुम (2003) – पढ़ी-लिखी स्त्रियों का क्षेत्र घर या बाहर, शोधार्थी बा.नि.स., महू
6. प्रकाशचंद्र सेन (2008) – 'ग्रामीण अर्थव्यवस्था' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली।
7. Ram Krishna & Krishnamart Boss (2012) : Micro Credit for the rural poor threat SHGS, Journal Co-operative Management, Kurukshetra.
8. Joshi and Vyas (2009) – Encyclopedia of Co-operative Management P.P.R.A. Meerut.
9. डॉ. यादव शर्मा (2010) – 'भारत में आर्थिक नियोजन' ओमेगा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।
10. डॉ. शर्मा (2009) – 'भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी उन्मूलन की समस्याएँ' राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

****

Horticulture Sector of Jammu and Kashmir : A source of Foreign Exchange Earning

Rather Tajamul Islam*

Abstract - Jammu & Kashmir is basically an agrarian state. Over the years, horticulture sector has emerged as an important and viable option in agriculture and has transformed the subsistence level of farming into a high value commercial enterprise and has gained momentum by its contribution to gross state domestic product. Agribusiness including export of fresh and dry fruits is the foundation of economy of the state. The dry fruits of Jammu and Kashmir especially walnut and almonds have earned worldwide fame due to their taste and quality. Walnuts and almonds are important commodities of international trade in the state and are also exported to other countries and in turn earn substantial foreign exchange. In this paper an attempt has been made to analyse the export of dry fruits and foreign exchange earned between 2005-06 and 2016-17. It is found from the study that total exports decreased from 5552.45 Mt's in 2005-06 to 2403 Mt's in the year 2016-17. with average annual growth rate of 0.91 percent compound annual growth rate of -6.74 percent where as foreign exchange earnings decreased from ₹ 115.95 crore in 2005-06 to ₹ 61.87 crore in the year 2016-17, with average annual growth rate of 19.89 percent and compound annual growth rate of -5.61 percent over the study period of 12 years.

Key Words - Almond, Export, Foreign Exchange, Horticulture, Walnut.

Introduction - The scope of large scale industrial sector is very limited in the state of Jammu and Kashmir due to its unique economic disadvantages such as poor infrastructure, poor investment climate, misdirected economic policies, shallow markets etc (Khan, 2013)[1]. J&K is basically an agrarian state. Over the years, horticulture sector has emerged as an important and viable option in agriculture by its contribution to gross state domestic product (Joshi, et al., 2006)[2]. Horticultural production has a positive impact over financial development. Horticulture encourages exports and generates income and employment in the rural area (Rather, et. al., 2013)[3].

Horticulture has a place of pride in the economy of J&K and is one of the main sources of state income. This sector is the biggest source of income in the state's economy among the allied sectors of the agriculture. (Govt. of J&K, 2017)[4]. Jammu and Kashmir produces different kinds of fruits and flowers. Nearly 75 per cent of temperate fruits in India are grown in the state (Sharma et. el., 2012)[5]. Jammu and Kashmir is the major producer of apple and walnuts in India, 77 percent of apple and 90 percent of walnut production in India belongs to Jammu and Kashmir and the state has been declared as the "Agri. export zone for apples and walnuts" (Darzi, 2016)[6].

Agribusiness including export of fresh and dry fruits is the foundation of economy of the state. The horticulture export from J&K has occupied an important place in the trade matters. (Farzana et. al., 2015)[7]. The dry fruits of J&K especially walnut and almonds have earned worldwide fame due to their taste and quality. Walnuts and almonds are important commodities of international trade in the state and are also exported to other countries and in turn earn substantial foreign exchange (Sharma, 2012)[8].

Objectives of Study

1. To examine the export of dry fruits from Jammu and Kashmir over the study period.
2. To analyse the foreign exchange earnings from horticulture sector of J&K.

Research Methodology - Keeping in view the status of the research work, the data has been collected from the secondary sources. The secondary source of data have been collected from various official sources like Horticulture Statistics Division, Economic Survey of Jammu & Kashmir , Economic Review of Jammu and Kashmir, Department of Horticulture Jammu & Kashmir and Digest of Statistics Jammu and Kashmir. Further various published research papers, books, periodicals, reports, magazines, newspapers, and websites have also been used for the study. The present study covers a time period of 12 years i.e. 2005-06 to 2016-17.

Statistical Analysis - The statistical techniques used in this study are Average, Standard Deviation, Co-efficient of Variation, Growth Rate, Compound Annual Growth Rate and Decomposition Analysis.

***Research Scholar, Department of Post Graduate Studies and Research in Economics, Rani Durgavati Vishwavidylaya, Jabalpur (M.P.) INDIA**

1. Average = $\frac{1}{n} \times \sum_{i=0}^{n} x_i$

Where, A = average

n = the number of terms

X_i= value of each individual item in the list of numbers being averaged.

2. Compound Annual Growth Rate (CAGR) - In order to study the year-wise growth in the variables, the compound annual growth rate has been calculated. It is a simple measure to find out the year-wise increase and decrease in the variables under study. It is expressed in the following form.

$$CAGR = \left(\frac{Y_t}{Y_{t-1}}\right)^{\frac{1}{N}} - 1 \times 100$$

Where, Y_t = Value of Current year

Y_{t-1} = Value of Base year

N = Number of Years

3. t - Statistic - The t - statistic is the proportion of the departure of the estimated value of a factor from its hypothesized value to its standard error. It is used when there are only two groups within the each dimension. It is expressed in the following form.

$$t = \frac{(\Sigma D)/N}{\sqrt{\frac{D^2 - \left(\frac{(\Sigma D)^2}{N}\right)}{(N-1)(N)}}}$$

Where, ΣD = Sum of the differences

ΣD^2 = Sum of the squared differences

$(\Sigma D)^2$ = Sum of the differences squared

Results and Discussion

Table- 1.1 (see in last page)

The export of dry fruits from the state of Jammu and Kashmir between 2005-06 and 2016-17 is presented in table 1.1. It is apparent from the table that during the year 2005-06, the total export was of the order of 5552.45 Mt's which decreased to 2403 Mt's in the year 2016-17. The highest growth rate of 56.10 percent was observed during the year 2009-10, while as the lowest growth rate of -56.90 percent was recorded during the year 2014-15 with average annual growth rate of 0.91 percent over the study period. The average exports have been of the order of 5955.54 Mt's with CAGR of -6.74 percent between 2005-06 and 2016-17.

During the year 2005-06, the export of almonds was of the order of 296.45 Mt's which decreased to 214.91 Mt's in the year 2016-17. The highest growth rate of 176.46 percent was recorded during the year 2012-13, while as the lowest growth rate of -64.31 percent was observed during the year 2015-16 with average annual growth rate of 13.32 percent over the study period of 12 years. The average exports of almonds have been of the order of 185.95 Mt's with CAGR of -2.64 percent between 2005-06 and 2016-17.

Furthermore, it is obvious from the table 1.1 that during the year 2005-06, the export of walnuts was of the order of 5256 Mt's, which decreased to 2188.65 Mt's in the year 2016-17. The highest growth rate of 59.28 percent was recorded during the year 2009-10, while as the lowest growth rate of -63.52 percent was observed during the year 2014-15 with average annual growth rate of -0.43 percent over the study period. The average exports of walnuts have been of the order of 5797.06 Mt's with CAGR of -7.04 percent between 2005-06 and 2016-17, while as the average exports of in shell walnuts have been of the order of 295.12 Mt's with CAGR of 6.79 percent and average exports of kernels have been of the order of 5502.03 Mt's with CAGR of -8.30 percent.

Table 1.2 (see in last page)

Table 1.2 shows the average annual growth rate of exports of walnuts and almonds in the state of Jammu and Kashmir between 2005-06 and 2016-17. The AAGR of export of almonds is 13. 3164 and the AAGR of export of walnuts is -0.4309. The difference between the two is 13.74727. It is found from the F-test that the variance between the two groups is not significant. Therefore, equal variance was assumed. It is found from the t-test that the mean difference between the two groups is insignificant at 5 percent level. Therefore, it is concluded that the exports of almonds has not increased significantly as compared to exports of walnuts over the study period.

Table- 1.3 (see in last page)

The foreign exchange earned from export of dry fruits in the state of J&K is presented in table 1.3. It is apparent from the table that during the year 2005-06, the total foreign exchange earnings was of the order of ? 115.95 crore which decreased to ? 61.87 crore in the year 2016-17. The highest growth rate of 225.70 percent was recorded during the year 2016-17, while as the lowest growth rate of -83.64 percent was observed during the year 2015-16 with average annual growth rate of 19.89 percent over the study period of 12 years. The average foreign exchange earnings have been of the order of ? 161.43 crore with CAGR of -5.61 percent. It is obvious from the table that during the year 2005-06, the foreign exchange earnings from almonds was of the order of ? 1.48 crore which increased to ? 6.28 crore in the year 2016-17. The highest growth rate of 379.67 percent was recorded during the year 2012-13 while as the lowest growth rate of -60.15 percent was observed during the year 2015-16, with average annual growth rate of 29.74 percent. The average foreign exchange earnings from almonds have been of the order of ? 4.59 crore with CAGR of 14.06 percent between 2005-06 and 2016-17.

Furthermore, It is clear from the table that during the year 2005-06, the foreign exchange earnings from walnuts was of the order of ? 114.47 crore which decreased to ? 55.18 crore in the year 2016-17. The highest growth rate of 343.21 percent was recorded during the year 2016-17 while as the lowest growth rate of -87.45 percent was observed during the year 2015-16, with average annual growth rate of 29.74 percent. The average foreign exchange

earnings from almonds have been of the order of ? 156.84 crore with CAGR of -6.42 percent between 2005-06 and 2016-17.

Table 1.4 (see in last page)

Table 1.4shows the average annual growth rate of foreign exchange earned from almonds and walnuts in the state of Jammu and Kashmir between 2005-06 and 2016-17. The AAGR of foreign exchange earned from almonds 42.7545 and the AAGR of foreign exchange earned from walnuts is -29.7355. The difference between the two is 13.01909. It is found from the F-test that the variance between the two groups is not significant. Therefore, equal variance was assumed. It is found from the t-test that the mean difference between the two groups is insignificant at 5 percent level. Therefore, it is concluded that foreign exchange earned from almonds has not increased significantly as compared to foreign exchange earned from walnuts over the study period.

Conclusion - Jammu & Kashmir is basically an agrarian state. Over the years, horticulture sector has emerged as an important and viable option in agriculture by its contribution to gross state domestic product. The dry fruits of J&K especially walnut and almonds are important commodities of international trade in the state and are also exported to other countries and in turn earn substantial foreign exchange. It is found from the study that total exports decreased from 5552.45 Mt's in 2005-06 to 2403 Mt's in the year 2016-17, with CAGR of -6.74 percent where as foreign exchange earnings decreased from ? 115.95 crore in 2005-06 to ? 61.87 crore in the year 2016-17, with CAGR of -5.61 percent over the study period of 12 years. It is concluded that exports of dry fruits from the state of J&K has declined drastically over the years, as the CAGR has been negative for total exports (-6.74 percent), almonds (-2.64 percent), walnuts (-7.04 percent) and kernels (-8.30 percent) while as in shell walnuts have only recorded positive CAGR (6.79 percent) over the study period. Similarly, the foreign exchange earned from export of dry fruits has declined remarkably over the years, as the CAGR has been negative for total foreign exchange earnings (-5.61 percent) and foreign exchange earnings from walnuts (-6.42 percent) while as foreign exchange earnings from almonds have only recorded positive CAGR (14.06 percent) over the study period.

References :-

1. Khan, B. (2013). Unemployment and Employment Pattern in Jammu and Kashmir: A Case Study of Kupwara District. International Journal of Educational Research and Technology, 4 (1), 79.
2. Joshi, P. K., Laxmi, T., and Birthal, P. S. (2006). Diversification and Its Impact on Smallholders: Evidence from a Study on Vegetable Production, Agricultural Economics Research Review, 19 (2), 220.
3. Rather, N. A., Lone, P. A., Reshi, A. A., and Mir, M. M. (2013). An Analytical Study on Production and Export of Fresh and Dry Fruits in Jammu and Kashmir. International Journal of Scientific and Research Publications, 3 (2), 1-7.
4. Government of Jammu and Kashmir. (2017). Digest of Statistics 2016-17. Directorate of Economics and Statistics.
5. Sharma, R., Kumar, V., and Singh, V. I. (2012). Impact of Peace and Disturbances on Tourism and Horticulture in Jammu and Kashmir. International Journal of Scientific and Research Publications, 2 (6), 6.
6. Darzi, I. (2016). Horticulture Sector towards Economic Development of Jammu & Kashmir. International Journal of Multidisciplinary Research and Development, 3 (4), 238.
7. Farzana, G., Nusrat, R., and Imtiyaz, A. (2015). Comparative Strategies of Horticultural Practices: An Evaluative Study of North Kashmir. Journal of Agro ecology and Natural Resource Management, 2 (5), 414.
8. Sharma, R., Kumar, V., and Singh, V. I. (2012). Impact of Peace and Disturbances on Tourism and Horticulture in Jammu and Kashmir. International Journal of Scientific and Research Publications, 2 (6), 6.

Table- 1.1: Export of dry fruits from Jammu and Kashmir from 2005-06 to 2016-17

(Quantity in Metric Tonnes)

Year	Almond (a)		Walnuts (b)				Total (a + b)	
	Quantity	Growth Rate	In Shell (c)	Kernel(d)	Total(c + d)	Growth Rate	Quantity	Growth Rate
2005-06	296.45	-	179	5077	5256	-	5552.45	-
2006-07	260.88	-11.99	376	5061	5437	3.44	5697.88	2.61
2007-08	197.10	-24.44	161	6531	6692	23.08	6889.10	20.90
2008-09	168	-14.76	294	5401	5695	-14.89	5863	14.89
2009-10	81.29	-51.61	364	8707	9071	59.28	9152.29	56.10
2010-11	91	11.94	382	9141	9523	4.98	9614	5.04
2011-12	65.47	-28.05	485	9246	9731	2.18	9796.47	1.89
2012-13	181.00	176.46	309	4985	5294	-45.59	5475	-44.11
2013-14	230.37	27.27	330	5274	5604	5.85	5504.37	0.53
2014-15	327.94	42.35	178.71	1866.34	2044	-63.52	2372.28	-56.90
2015-16	117.04	-64.31	88.84	2940.20	3029.04	48.19	3146.08	32.62
2016-17	214.91	83.62	393.87	1794.78	2188.65	-27.74	2403.56	-23.60
Average	185.95	13.32	295.12	5502.03	5797.06	-0.43	5955.54	0.91
CAGR	-2.64		6.79	-8.30	-7.04		-6.74	

Source: Digest of Statistics, Directorate of Economics and Statistics, J&K Government, various issues

Table 1.2: Comparison of Growth Rates of Exports between Almonds and Walnuts

Dimension	Parameters	Number	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean
Export	Almond	12	13.3164	68.85107	20.75938
	Walnut	12	-0.4309	36.80639	11.09754

Independent Samples Test

Dimension	Description	Levene's test for equality of variance		t test for equality of means			
		F	Sig.	t	Df	Sig. (2 tailed)	Mean Difference
Export	Equal Variance assumed	2.326	0.143	0.584	20	0.566	13.74727
	Equal variance			0.584	15.284	0.56	13.74727

Source: Computed by Author from table 1.1

Table- 1.3: Foreign Exchange Earned from Exports (2005-06 to 2016-17)

(in Crores)

Year	Almond(a)	Growth Rate	Walnut(b)	Growth Rate	Total(a + b)	Growth Rate
2005-06	1.48	-	114.47	-	115.95	-
2006-07	1.82	22.97	118.02	3.10	119.84	3.35
2007-08	0.91	-50	160.53	36.01	161.44	35.11
2008-09	1.02	12.08	141.22	-12.02	142.24	-11.89
2009-10	1.05	2.94	197.80	40.06	198.85	39.79
2010-11	1.64	56.19	206.85	4.57	208.49	4.84
2011-12	1.23	-25	231.63	11.97	232.86	11.68
2012-13	5.90	379.67	199.82	-13.73	205.72	-11.65
2013-14	11.23	90.33	344.90	72.60	356.13	73.11
2014-15	16.11	43.45	99.21	-71.23	115.32	-67.61
2015-16	6.42	-60.15	12.45	-87.45	18.87	-83.64
2016-17	6.28	-2.18	55.18	343.21	61.46	225.70
Average	4.59	42.75	156.84	29.74	161.43	19.89
CAGR	14.06		-6.42		-5.61	

Source: Digest of Statistics, Directorate of Economics and Statistics, J&K Government, various issues

Table 1.4: Comparison of Growth Rates of Foreign Exchange Earnings between Almonds and Walnuts

Dimension	**Parameters**	**Number**	**Mean**	**Std. Deviation**	**Std. Error Mean**
Foreign Exchange	Almond	12	42.7545	120.28156	36.26626
	Walnut	12	29.7355	113.78366	34.30706

Independent Samples Test

Dimension	Description	Levene's test for equality of variance		t test for equality of means			
		F	Sig.	t	Df	Sig. (2 tailed)	Mean Difference
Foreign Exchange	Equal Variance assumed	0.014	0.905	0.261	20	0.797	13.01909
	Equal variance not assumed			0.261	19.939	0.797	13.01909

Source: Computed by Author from table 1.3

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Fish Diversity Of Narmada River At Hoshangabad, Madhya Pradesh

Sunil Kumar Kakodiya* Sudhir Mehra**

Abstract - The fish community of the Narmada River at Hoshangabad region was studied by monthly sample taken from Aug. 2015 to July 2017. Narmada River is the largest Westward flowing river of India. It is also referred as the life line of Madhya Pradesh. Present study was aimed to generate information on the fishes of Hoshangabad region of river Narmada. The present study has been conducted to assess the fish biodiversity in a stretch of Narmada river in Madhya Pradesh. We tried to document fish biodiversity composition, physical habitats characteristics as well as identification of carps, catfishes, Lpaches, Mahaseer, Eels, Murules species in the river. Study assess of this study are divided in two district (Hoshangabad and sehore) a total of 50 species belonging to 30 Genera and 13 Families and six orders were recorded.
Keywords - Fish diversity, Narmada River.

Introduction - The Narmada river is the fifth largest river of India. It is commonly known as the life line Madhya Pradesh and largest west flowing river of the country which originates from an elevation of 1015 m. in maikal highland near Amarkantak under Anuppur district (m.p.) of 22^0 40'N Latitude and 81^0 45'E Longitude. The river Narmada is an inter-state river flowing through Madhya Pradesh, Chhattishgarh , Maharashtra, and Gujarat. The total length of the river is 1312 Km. with flow area of Narmada river is approximately 36000 square miles. Narmada river merges to the Gulf of khambhat in bharuch. The river is flows 1312 Km. in district of Madhya Pradesh and runs along the common border of Madhya Pradesh and a length of 1077 km. Study of biodiversity of fish fauna and their identification is one of the interesting field of biological research, which gives us an idea about the morphological variations and population diversity of fauna in polluted and non polluted site of any particular habitat (Mukesh kumar Napit 2013). Rich biodiversity of any ecosystem is absolutely essential in order to maintain their stability for proper function of their food chains (Siddiqui et,al. 2014). Fishes are the important element in the economy of many nations as they have been a stable in the diet of many people (Shukla Pallavi et,al. 2013). Ichthyofaunal documentation is important to analyze status of fish species and also helps us for future planning to improve and conserve the biodiversity (Bose A.K. et, al. 2013). Present study is based on the fish diversity of Narmada river at Hoshangabad.

Material And Method - Present study conducted in selected sites of Narmada River at Hoshangabad. Hoshangabad is located at Latitude 21°532 N and Longitude 78.44°E. The central point of India is located in Hoshangabad district. River Narmada is by far the most significant water resources of the state of Madhya Pradesh. The River is the most important ecological hub for aquatic biodiversity in central India and has therefore been the epicenter of the biodiversity studies. 5 sites were selected from Narmada river at Hoshangabad district i.e. Sakatpur, Bandrabhan, Sethanighat, Dongarwada and Aamlighat. The study has been carried out over a period of Aug. 2016 to Oct. 2017. The sampling was carried out seasonally covering pre-monsoon, monsoon, post-monsoon and winter season. Experimental fishing was carried out with the help of local fishers. After obtaining the fish from the site photographs were taken. The specimens were taken to the laboratory for identification. Morphometric measurements were taken and meristic characters were observed and the fin formula was completed. The fish samples were preserved in 5-10% formalin according to the size of the fishes. Smaller fishes were directly placed in the formalin solution, while larger fishes were given an incision on the abdomen before they were fixed. Plastic jar were used for the collection and preservation. Fishes were labelled based on the serial number, common name, scientific name, locality and date of collection. Fishes were identified with the help of taxonomic key, Days fauna (1994) and Talwar and Jhingran (1991). Fish Base website was also referred for various aspects of fish fauna (www.fishbase.org). Specific identifying characters on the body was observed and noted.

Results And Discussion - A total 50 species of fishes recorded from selected sites of Narmada river at Hoshangabad belonging to 6 orders and 13 families. Among species, family Cyprinidae was the most dominant with 28 species and the percentage composition is 56% of fishes

*Research Scholar (Zoology) Saifia Science P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor (Zoology) Saifia Science P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

followed by Bagridae 8% with 4 species, Cobitidae and Ophiocephalidae 6% with 3 species, Siluridae, Ambassidae, and Mastacembelidae 4% with 2 species, Notopteridae, Schilbeidae, Clariidae, Heteropneuidae, Gobiidae, Belonidae 2% of with one species . The species diversity peak in post monsoon, coinciding with favourable conditions such as sufficient water and ample food resources. The diversity was low in pre monsoon probably due to the shrinkage of water. Information collected from fisherman communities displayed high decline of fish diversity. Deforestation, water scarcity, pollution, introduction of exotic species, sand mining and excessive fishing are the biggest threats to fish population.

Various workers have done work on Narmada river. Vishwakarma et,al. (2014), recorded 33 fish species belonging to 5 orders, 9 families and 21 genera. Kumar et,al. (2014) studied the fish species diversity of river Narmada In Khedighat, Warwaha, Madhya Pradesh, and recorded 21 species of fish belonging to 4 orders and 6 families. Family cypriniformes were dominated with 15 species of fish. Pathak et,al. (2014) recorded 58 species of fish from western region of Narmada river at Jabalpur. Vyas et,al. (2013) recorded 27 species of fish from Jamner river, a tributary of Narmada river. Siddiqui et,al.(2014) work done on Biodiversity of Ichthyofauna of Narmada river of Mandleshwar region, Madhya Pradesh, India and recorded 48 species of fish belonging to 7 orders and 17 families. Bose at,al. (2013) recorded 57 species, belonging to 35 genera , 13 families, and 6 orders from middle stretch of river Tawa. Bakawale et, al. (2013) worked on the fish Species diversity of the River Narmada in western zone, and recorded total 50 species of fish belonging to 7 orders and 15 families. In the present study 49 fish species, belonging to 7 orders and 14 families were recorded. Present investigation revealed that, Narmada river is a healthy water body providing a habitat for freshwater fishes of diverse type. However, there is constant threat to fish population due to eutrophication and illegal fishing activities. The illegal fishing activities should be banned to prevent depletion of fresh water fish resources and further studies should be conducted to generate more details regarding seasonal production and ecology of fishes. In situ conservation is one of the several prominent and suggestive measures for the conservation of fish biodiversity.

Table1. List of fish species from Narmada River

S.	Species	Sampling				
		S1	S2	S3	S4	S5
	Family- Cyprinidae					
1	*Amblypharogodon mola*	+	+	+	+	+
2	*Barilius barila*	+		+	+	
3	*Barilius bendelisis*	+	+	+	+	+
4	*Chela laubuca*	+	+	+	+	+
5	*Catla catla*	+		+	+	
6	Cirrhinus mrigala	+		+		+
7	Cyprinus carpio		+			
8	Crossocheilus latius		+			
9	Ctenopharyngodon idella				+	
10	Danio davario	+	+	+	+	+
11	*Garra gotyla*	+	+	+	+	+
12	*Puntius ticto*	+	+	+	+	+
13	*Puntius sarana*	+		+	+	+
14	*Puntius saphore*	+	+	+	+	+
15	*Puntius conchonius*	+	+	+	+	+
16	*Rasbora daniconius*	+	+	+	+	+
17	*Tor tor*	+		+	+	
18	*Oxygaster bacaila*	+	+	+	+	+
19	*Oxygaster gora*	+		+	+	
20	*Oxygaster clupeoides*		+		+	
21	*Osteobrama cotio*	+	+	+	+	+
22	*Labeo bata*	+		+	+	
23	*Labeo rohita*	+				
24	*Labeo gonius*	+	+	+	+	
25	*Labeo calbasu*	+		+	+	
26	*Labeo dyocheilus*	+				+
27	*Labeo fimbriatus*	+			+	
28	*Labeo angra*	+	+			
	Family- Clariidae					
29	*Clarius batriacus*	+				
	Family-Heteropneustidae					
30	*Heteropneustes fossilis*				+	
	Family- Siluridae					
31	*Ompok bimaculatus*	+	+	+	+	+
32	*Wallago attu*	+		+	+	+
	Family –Bagridae					
33	*Mystus cavasius*	+	+	+	+	+
34	*Mystus seenghala*	+		+	+	
35	*Mystus aor*	+		+	+	+
36	*Mystus bleekeri*	+	+	+	+	+
	Family- Schilbeidae					
37	*Clupisoma garua*	+		+	+	
	Family- Cobitidae					
38	*Nemacheilus botia*	+	+	+	+	+
39	*Lepidocephalichthys guntea*	+	+	+	+	+
40	*Nemacheilus evezardi*	+	+	+		
	Family- Ophiocephalidae					
41	*Channa marulius*	+		+	+	
42	*Channa gachua*	+		+	+	+
43	*Channa striatus*				+	+
	Family- Ambassidae					
44	*Chanda nama*	+	+	+	+	+
45	*Chanda ranga*	+	+	+	+	+
	Family –Gobiidae					
46	*Glossogobius giuris*	+	+	+	+	+
	Family –Mastacembelidae					
47	*Mastacembelus armatus*	+		+	+	
48	*Mastacembelus pancalus*	+	+	+	+	
	Family-Notopteridae					
49	*Notopterus notopterus*	+		+	+	
	Family- Belonidae					
50	*Xenetodon cancila*	+	+	+	+	+
		44	27	39	42	27

Table 2: Total Catch (in number) and Fish Composition (%) in Different Families in Narmada River (2015-2017)

S.	Families	Total Catch No. of Fish Species	Composition (%)
1	Cyprinidae	28	56.00
2	Siluridae	2	4.00
3	Bagridae	4	8.00
4	Schilbeidae	1	2.00
5	Ophiocephalidae	3	6.00
6	Ambassidae	2	4.00
7	Gobiidae	1	2.00
8	Cobitidae	3	6.00
9	Mastacembelidae	2	4.00
10	Notopteridae	1	2.00
11	Belonidae	1	2.00
12	Claridae	1	2.00
13	Heteropneustidae	1	2.00
	Total-	**50**	**100.00**

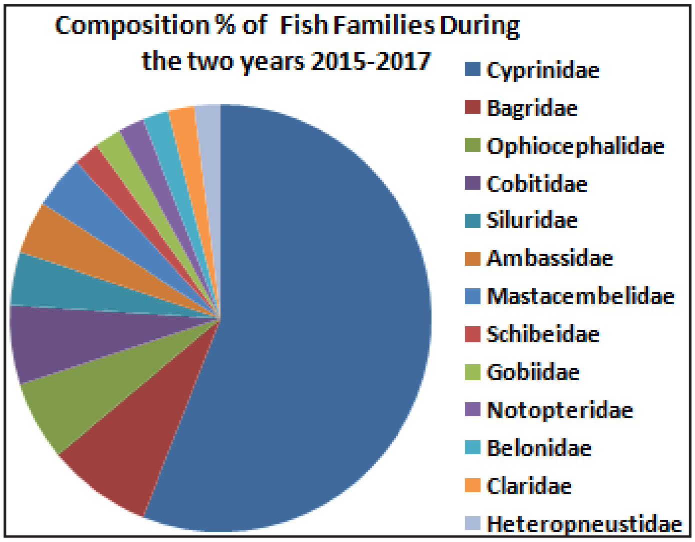

During the two year study period (2015-2017), a total 50 fish species belonging to 13 families, 6 orders and 30 Genera were recorded.

Acknowledgement - The authors are thankful to the principal and head of the department of Saifia Science P.G. College Bhopal for providing all necessary facility for conducting this study. I am also thankful to my guide Dr. Sudhir Mehra for their valuable support in this research work.

References :-

1. Vishwakarma Kripal Singh, Altaf Ali Mir, Abhilasha Bhawsar and Vipin Vyas, (2014) Assessment of Fish assemblage and distribution in Barna Stream Network in Narmada basin (Central India), International Journal of Advanced Research, Volume 2(1), 888-897. 2. Siddiqui Anis, Meenakshi Chouhan, and Shailendra Sharma (2014), Biodiversity of Ichthyofauna of Narmada River of Mandleshwar Region, Madhya Pradesh, India, (2014). Science Secure Journal of Environmental Biology. Vol 1(1), 21-25.
3. Pathak Triguna, K. Borana & T. Zafar, (2014), Ichthyofauna of western region of Narmada River, Madhya Pradesh. International Journal of Research in Applied, Natural and Social Sciences, Vol. 2, Issue 4, 25-28.
4. Bose A.K., B.C. Jha, V.R. Suresh, A,K. Das, A. Parashar and Ridhi.(2013).Fishes of the middle stretch of river Tawa, Madhya Pradesh, India. Journal of Chemical, Biological and Physical sciences.vol 3(1): 706-716.
5. Shukla Pallavi and Ajay Singh (2013), Distribution and Diversity of Freshwater Fishes in Aami River, Gorakhpur, India. Advances in Biological Research 7 (2): 26-31.
6. Bakawale Sunita and Kanhere R. R. (2013). Study on the Fish Species Diversity of the River Narmada in Western Zone. Research Journal of Animal, Veterinary and Fishery Sciences, 1(6):18-20.
7. Napit Mukesh kumar,(2013). Study of fish fauna of Bundelkhand region with special reference to Damoh district. International journal of advance research. Vol 1(4):24-30.
8. Day Francis, F.L.S. and F.Z. S. The fishes of India (1994), Jagmander book agency, New Delhi, vol 1.
9. Day Francis, F.L.S. and F.Z. S. The fishes of India (1994), Jagmander book agency, New Delhi, vol 2.
10. Paunikar Sanjay, Ashish Tiple, S.S. Jadhav and S.S Talmale, (2012). Studies on Ichthyofaunal Diversity of Gour River, Jabalpur, Madhya Pradesh, Central India. World Journal of Fish and Marine Sciences 4 (4): 356-359.
11. Talwar P.K. and A.G. Jhingran (1991). Inland fishes of india and adjacent countries. Vol 1 and 2. Oxford and IBH publishing co. pvt. Ltd. New Delhi India.
12. www.fishbase.org. 13. Yodha Ravindra Kumar and Chaurasia Rajendra Kumar, (2014).Studies on the fish species diversity of river Narmada in Khedighat, Barwaha, MP, India. International Journal of Developmental Research and Engineering. 1(1).

Map.1-Map Showing Study Area

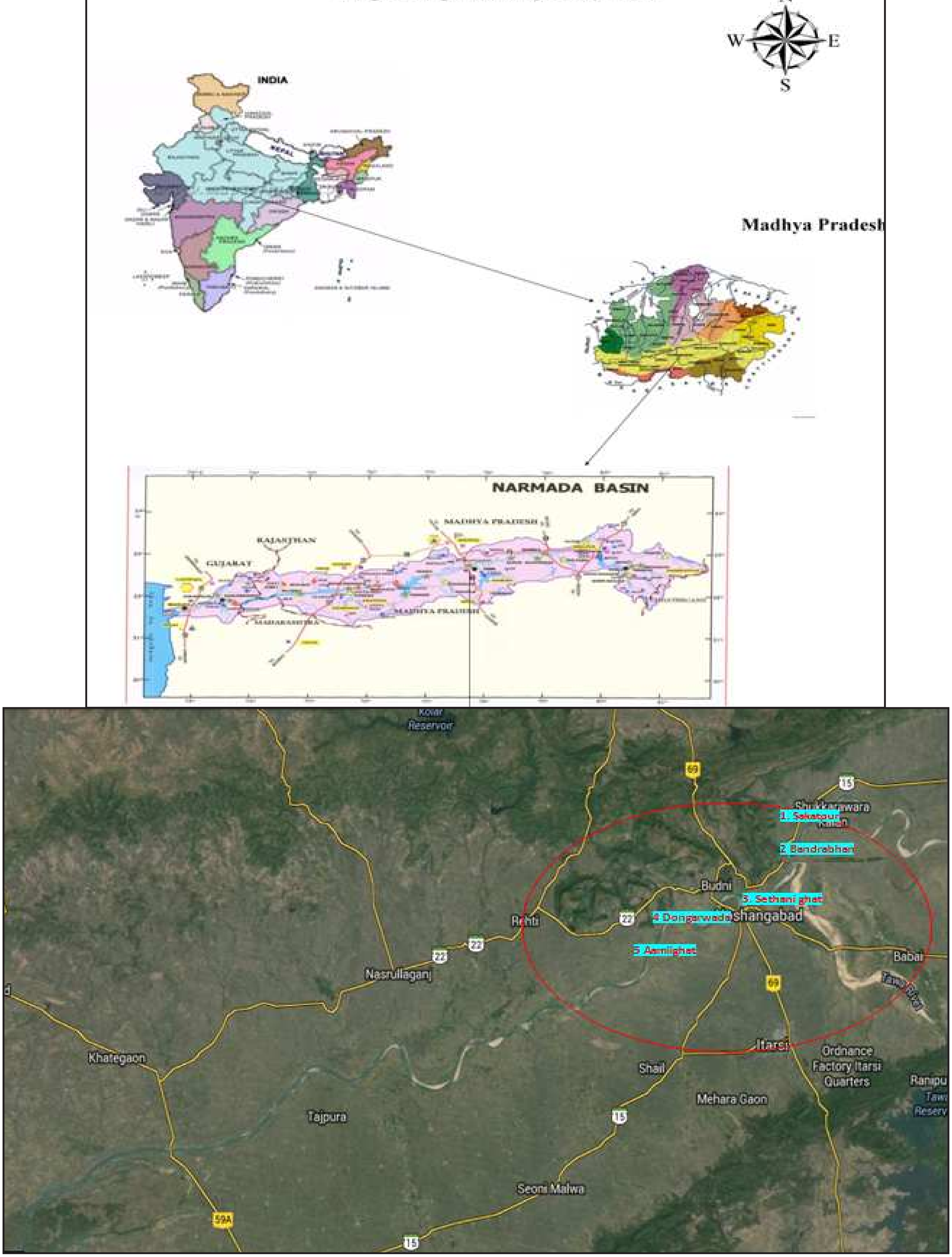

सोलंकी कालिन वास्तुकला जैन मंदिरों के विशेष संदर्भ में

डॉ. मनोज दाधीच * कल्पेश कुमार पी. चौधरी**

प्रस्तावना – भवनों के विन्यास आकल्पन और रचना की तथा परिवर्तनशील समय तकनीक और रूचि के अनुसार मानव की आवश्यकताओं को संतुष्ट करने योग्य सभी प्रकार के स्थानों के तर्कसंगत एवं बुद्धि संगत निर्माण की कला विज्ञान और तकनीकि ज्ञान का मिश्रण वास्तुकला या वास्तुशिल्प की श्रेणी में सम्मिलित होता है। वास्तुकला ललित कला की वह शाखा है जिसका उद्देश्य औद्योगिकी का प्रयोग करते हुए उपयोगिता को दृष्ट्रिगत रखते हुए भवन निर्माण करना है। प्रकृति, बुद्धि तथा रूचि द्वारा निर्धारित सिद्धान्तों और अनुपातों का प्रयोग इस कला का अभिन्न अंग है। सौलंकीकाल में शासकों और जनसामान्य द्वारा उपरोक्त नियमों को ध्यान में रखकर कई भवनों का निर्माण करवया गया। इनके सौदर्य महानता, एकता, कलात्मकता के कारण इस काल की बनी वास्तुशिल्प की कृतियों को विश्व विरासत मं तक स्थान प्राप्त है।

सोलंकीकाल में निर्मित देवालयों, जलाशयां, आदि के उल्लेख ताम्रपत्र, अभिलेखों और समकालीन साहित्य की उपलब्ध प्रतियों में पाए जाते हैं। साथ ही कुछ के पुरातात्विक साक्ष्य भी वर्तमान में उपलब्ध है। जिनमे आबू के लुणनसहि विमलवसहि, शत्रुजय, कुम्भारिया के मंदिर वास्तुपाल बिहार आदि कई के पुरातात्विक साक्ष्य उपलब्ध है जो उल्लेखनीय है।

सोलंकी कालिन वास्तुकला – सौलंकीकालीन वास्तुकला को गुजरात में सोलंकी शैली कहा जाता है जिसका उदय सोलंकी शासकों के समय क्षेत्रीय रूपों में गठन किया गया था। इस शैली के मंदिर बहुत प्रसिद्ध है। इसकी दीवारें सीधे और सरल है। जिसमे से एक या अधिक बेलनाकार भाग बाहर निकलते थे। फलस्वरूप इसका बाहरी स्वरूप तरकार जैसा दिखता था। मंदिरों की शिर्ष चोटी को अद्धितीय गढ़ से कलाकृत किया जाता था। दीवारों पर भी छोटी–छोटी चोटीया निर्मित की जाती थी। पूजा के लिए गृभ गृह में एक देव, मूर्ति पूजा, पूजा और पूजा के रखी जाती थी।

गर्भगृह से आगे एक मंडप है। छोटे मंदिरों में, गर्भगृह, चौक या गर्भगृह, मंडप चौकी ऐसे दो या तीन खण्ड होते है। बड़े मंदिरों में, गर्भगृह के मार्ग, गर्भगृह और मंडप के बीच होने काफी अंतराल है। आयताकार भाग में कई अन्य मंदिरों को जोड़कर रखा जाता है। जिनके ऊपरी भाग में विस्तृत छत होती है। इसके आंतरिक भाग को 'वितान' कहा जाता है। पिरामिड के ऊपरी हिस्से को 'सामरणा' कहा जाता है। कभी–कभी मंडप के सामने एक दूसरा मंडप जोड़ जाता है। पीठ (पिछके भाग) को 'गुढमंडप' कहा जाता है और सामने के भाग को 'रंगमंडप' कहा जाता है। मंदिर एक उच्च पिठीका पर बनाया जाता था। इसका बाहरी पक्ष कभी–कभी गजथर, अश्वथर, और नरथर की प्रतिभाओं से सजाया जाता था। (गुढ़मंडप) की ओर घूमने वाली अनिवार्य दीवार को 'मंडोवर' कहा जाता हैं। मंडोवर में, पूरक कुंभो, जंघा, बुनाई, भरना, शिरावटी, फूलछाप इत्यादि बनते हैं। मंडप के बीच मुख्य स्तंभ आमतौर पर अष्टकोणीय व्यवस्था के साथ व्यवस्थित होते हैं। मंडोवर की तरह, लंबवत प्रभाव अलग–अलग वर्गो में विभाजित होते हैं। जिन्हे कुंभी, केवाल, भरणी, शिरा टेका इत्यादि नामों से जाना जाता है।

कुछ बड़े मंदिरों में चारो ओर का परकोटा खुले भाग में बनाया गया था। जिनके बाहरी पक्ष सरल और सामान्य प्रतित होते जबकी भितरी भाग में कई देवताओ की प्रतिमाएँ एक पक्ति में होती थी उनके सामने खम्भों पर आधारित शीर्ष भाग तक छत होती थी जिसे 'भमती' कहते है। बाहर के भाग की दीवारों को 'बलानाज' कहा जाता था। मंदिर के मुख्य द्वार के सामने सौलकी राजाओं द्वारा दो बडें स्तम्भों पर बने दरवाजे है जिन्हे तोरण अथवा किर्तितोरण कहा जाता हैं। इस काल के अधिकांश मंदिर रामायण सुत्रधार जैसे शिल्पग्रंथों के आधार पर बनाए गये थे। सौलकी काल में कई अद्धितीय अद्भूत मंदिरों का निर्माण जारी रहा। इस काल के कतिपय मन्दिरों का वर्णन निम्नानुसार है।

विमलवसहि – मोढेरा के सूर्यमंदिर के निर्माण के पांच वर्षो के बाद भीमदेव के दंडनायक विमलवसहि ने आबू देलवाड़ा में ऋषभ्ज्ञदेव का सगमरमर से बना जैनमंदिर बनवाया। यह मंदिर विमलवसहि के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें गर्भगृह, गर्भमंडप, रंगमंडप, नवचोकी और बावन देवकुलिकाये शामिल हैं। इस मंदिर के मुख्य गर्भगृह में आदिनाथ की सुंदर प्रतिमा है। मुख्य गर्भगृह और इसके सामने की धुरी काफी सामान्य सुंदर मूर्तिकला के अवशेष इसके आयताकार भाग एवं लटकन में देखे जाते हैं सोम विद्यालय की बांस की मूर्तियां बड़े हॉल के बीच में शाही घर में स्थित हैं। शिखर के बीच में, दो खंभे के बीच मे, रंग की किरण होती है। मंदिर में लगभग 121 पत्थर संगमरमर हैं। लगभग तीस खम्भों पर सुन्दर नक्काशी की गई है।

मंदिर प्रदक्षिणापथ में बावन देव कुलिका स्थित हैं। जिसमें भरत बाहुबली युद्ध, नेमिनाथ के चरित्र, श्रीकृष्ण के कालिय नागध्यान, नरसिंह अवतार आदि सुंदर दृश्य हैं विमलवसहि के सामने एक हस्तशाला है। इसके सामने अश्वरूढ विमल की एक मूर्ति है। इसके आसपास दस हाथियों पर पृथ्वीपाल के स्वयं की ओर पूर्वजों की छवियाँ निर्मित है। मंदिर में संगेमरमर निर्मित अनेक अद्धितीय नक्काशी युद्ध स्थापत्य कुला के प्रतिक स्थानीय और विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करती है।

तारंगा और अजंता के मंदिर – श्री तरंग तिर्थ या तरंगा मंदिर जो की एक जैन तीर्थ है का निर्माण गुजरात के सौलकी चालुक्य राजा कुमारपाल ने करवाया था। इस तीर्थ स्थल पर अजितनाथ की 2.74 मीटर की संगमरमर

*सहायक आचार्य (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

की मूर्ति संरक्षित है। यहाँ श्वेताम्बर और दिगम्बर दो सम्प्रदाय के जैन लोग आते है। इस मंदिर में गर्भगृह, गुढ़ मंडप स्तम्भ आदि बने है। इसका भी कई बार पुननिर्माण हुआ अत: मूल स्वरूप के सम्बन्ध में साक्ष्य उपलब्धन नहीं है। यह मंदिर आकार में 45.7x30.5 मीटर है। इसके आगे एक सभा मंडप है। जिसके तीन तरफ प्रवेश द्वार है। आठ उच्चे खम्भे और गुढमंडप इसकी शोभा बढाते है। इसके चारो ओर एक प्रदक्षिणा पथ बना है। मंदिर के बाहर की दिवारें देव और मानव मूर्तियों से अंलकृत है। सोलहवी सदी के एक लेख से ज्ञात होता है की इसका पुननिर्माण अकबर के समय भी किया गया था।

कुंभारीया के जैन मंदिर – गुजरात के सबसे पवित्र तीर्थ स्थल अंबाजी में कुंभारीय में प्रसिद्ध जैनमंदिर हैं। जैन तीर्थकरों के ये मंदिर मुख्यत: पाँच विभिन्न मंदिरों का समूह है जिसमें (1) महावीर (2) नेमिनाथ (3) संभवनाथ (4) शान्तिनाथ (5) पार्श्वनाथ के मंदिर हैं। जो कलात्मक ढ़ग से सफेद संगमरमर से बने है। इनका निर्माता सोलकी शासक भीमदेव प्रथम के मंत्री विमलशाह है। ये मंदिर तरंगा पहाडियों से 40 किमी की दूरी पर स्थित है। यहॉ स्थित शांतिनाथ मंदिर की रचना महावीर स्वामी मंदिर जैसी है। इसके रंग मण्डप और छत को अद्‌भूत कलाकृतियों से अंलकृत किया गया है। मंदिर के आस पास चौसठ देव प्रतिमाऐं स्थापित है। पार्श्वनाथ के मंदिर के चारो ओर भी चौबीस देवकुलीका हैं। दीवारों, खंभे और द्वार सुंदर कलाकृतियों से सुशानजीत है। नेमिनाथ ओर मंडोतर मंदिर को पीछे से खूबसूरती से अलंकृत किया गया हैं। रंगमंडप के चरो ओर चौबीस देव प्रतिमएं है। मंदिर के चारो और मानव और हाथी की प्रतिमाऐं है। भीतर देवदेवीओं और यक्ष–यक्षिनीओं की मूर्तियाँ स्थित है। यहां मंदिर के कुछ खंभे और छत विमलवसहि मंदिर के खंभे और छतों की तरह सजाए गए हैं।

गिरनार पे वस्तुपाल विहार – गिरनार की विभिन्न पहाड़ियों पर कई खूबसूरत जैन मंदिर हैं। इन सभी में नेमिनाथ का मन्दिर सबसे बडा इस मन्दिर का आकार 190x130 फिट है। इस मन्दिर का निर्माण सिद्धराज जयसिंह के मंत्री वास्तुपाल तेजपाल द्वारा बनवाया गया था। तत्पश्चात् अलग–अलग समय पर इस मन्दिर को अनेको बार पुननिर्मित किया गया। नेमीनाथ मन्दिर के उत्तार–पश्चिम और दक्षिण में सुन्दर आगन बने थे। यही पर अजीतनाथ और शांतिनाथ की सुन्दर प्रतिभाओं के साथ निर्माता ने अपने पितामह और पिताश्री की भी प्रतिभाएं स्थापित करवाई थी। इसके बाद सिद्धराज के महामात्य वास्तुपाल ने नेमिनाथ मन्दिर के उत्तार में भगवान आदीनाथ और ऋषभदेव के प्रासादों का निर्माण करवाया। जिसे वर्तमान में वास्तुपाल विहार कहाँ जाता है। वास्तुपाल विहार में, मूल नायक की सुंदर संगेमरमर की मूर्ति स्थापित की गई है, गिरनार स्थित वास्तुपाल विहार में ही अंबिकादेवी की मूर्ति और महावीर स्वामी की मूर्ति मंदिर के मंडप वाले क्षेत्र में रखी गई है। इसके अलावा, मुख्य गर्भगृह के दक्षिण और उत्तर में स्वयं उसकी और उनके भाई तेजपाल की अश्वरूढ़ मूर्तियां स्थापित है। यही पर उनकी पत्नी लिलादेवी द्वारा भगवान आदीनाथ सहीत बीस अन्य तिर्थकरों की प्रतिभाओं सहीत स्तम्भों से अलंकृत भवन महातीर्थावर स्थापित करवाया गया।

वर्तमान समय में नेमिनाथ के मंदिर में वस्तुपाल द्वार कराये गये मंडप या मूर्तियां नहीं दिखाई देती हैं। लेकिन वस्तुपाल विहार के दो प्रसाद मौजुद हैं। यह एक तरह का त्रिगुण देवालय सा है। उनमें से, 53x29 फीट के दो घुम्मटवाले लंबाकार मंडप हैं। मंडप के दोनों किनारों पर एक 13 फीट वर्ग गर्भगृह और 38x38 फीट का एक मंडप है। यह मंदिर पूर्वाभिमुख है। मध्य में मुख्य गर्भगृह में मुलनायक की प्रतिभा स्थित है।

वस्तुपाल द्वारा निर्मित इस चैत्य के मूल नायक आदीनाथ और ऋषभदेव थे। यहाँ वर्तमान में ऋषभदेव की प्रतिमा के बजाय पार्श्वनाथ की मूर्ति है। यही पर श्री पार्श्वनाथ के बिल, श्री सामंतसिंह और सलमणसिंह द्वारा गिरनार के शिखर पर नेमिनाथ चैत्य के सामने पार्श्वनाथ का उंचा प्रसाद निर्मित कराये जाने का उल्लेख है।

लुणवसहि – राजस्थन के अर्बुदांचल के गुजरात के निकट के प्रदेश में 22 वें जैन तिर्थकर नेमीनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर स्थित है। इस मंदिर का निर्माण गुजरात के चालुक्य सौलकी शासक भीमदेव द्वितीय के मंत्री वस्तुपाल और तेजपाल ने आबु के परमार राजा सोमसिंह की अनुमति से विमलवसहि मन्दिर के निकट उसी के समान सफेद संगमरमर के पत्थरों से वि. सं. 1288 में करवाया था। इसी मन्दिर को लुणवसहि के नाम से भी जाना जाता है।

यह संगमरमर का एक भव्य मन्दिर है। इसकी स्थापत्यकला अद्‌भुत और अद्वितीय है। मन्दिर का आकार 155x92 फीट के लगभग हैं। यह मन्दिर अपने नक्काशीदार खम्भे, दरवाजें छत और पैनल के लिए प्रसिद्ध है। मन्दिर का मुख्य सभा स्थल (हॉल) जिसे रंग मण्डप कहा जाता है 360 छोटे–छोटे तिर्थकरों की मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध हैं। इन प्रतिभाओं को गोलाकार आकार में यहाँ स्थापित किया गया है। यही के गुढ़मण्डप में श्री नेमीनाथ जी की श्याम वर्ण के पत्थर से बनी मूर्ति स्थापित है। इस मन्दिर की दीवारों को नेमीनाथ यक्ष यक्षिणी, अन्य तिर्थकरों की मूर्तियों द्वारा अंलकृत किया गया है। यही पर अमीका देवी और शांतिनाथ जी की मूर्तियाँ भी स्थापित है। यहॉ के एक शिलालेख से ज्ञात होता है की मन्दिर निर्माण में वास्तुपाल की दूसरी पत्नी सुहड़ादेवी की सहायता से तेजपाल द्वारा करवाया गया था। मन्दिर की दीवारों पर बने दृश्यों में श्रीकृष्ण के बचपन, द्वारका प्रवास जन्म विवाह तिर्थयात्रा आदी प्रमुख स्थान लिये है। इस मन्दिर में 146 मूर्तियाँ, 130 स्तम्भ, विद्यादेवी की मूर्ति भी है। मदिर के सम्मुख तेजपाल के परिवार के सदस्यों की प्रतिमाऐं दस गोखड़ों में स्थित है। लुणवसहि का स्थापत्य शिल्प विमलवसहि से उत्कृर्षटता लिए हुए पूर्णत: भिन्न प्रकार का है। जो सौलकीकालीन कला स्थापत्य के विकास को रेखांकित करता है।

गुजरात राज्य के बडौदा नगर से 16 किमी दक्षिण–पूर्व में एक प्रसिद्ध नगर है। जिसका प्राचीन नाम दर्भावती या दर्भवती था। यहाँ से ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण मन्दिर के अवशेष मिले। जिसके बारें में सौलंकीकाल की वैद्यनाथ प्रशस्ति और प्रभक्ति प्रांची से उल्लेख मिलता है। इसके अनुसार मंदिर के वास्तुकार का नाम देव भी था। मंदिर के निर्माता के रूप में वामदेव के पुत्र मदन का उल्लेख मिलता है। समय के साथ, यह मंदिर मालव राजा के आक्रमण का शिकार हो गया था। अत: संभव है कि इसे पुनर्निर्मित किया गया होगा। इसके बाँयी ओर कालिका माता का एक बड़ा मन्दिर स्थित है। मन्दिर में लगे एक मराठी शिलालेख में भी कालिका का माता का उल्लेख मिलता है।

शत्रुंजय पर्वत पर बने जैन मंदिर – जैन धर्म के अनुसार प्राचीन काल से ही पालिताणा जैन साधुओं और मुनियों के मोक्ष एवं निर्वाण का प्रमुख स्थल रहा है। यह भावनगर जिले से 50 किलोमीटर दूर दक्षिण–पश्चिम में शत्रुंजय पर्वत पर स्थित है। यहां पर बड़ी संख्या में मंदिर स्थित है, जिनका निर्माण संगमरमर पर सुंदर नक्काशी कर किया गया है। इनमें पर्वत की चोटी पर जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ (ऋषभदेव) का प्रमुख मंदिर स्थित है। यह पहाड़ी पर लगभग 220 फीट की ऊंचाई पर स्थित है। अलग–अलग कालों में शासकों द्वारा पहाड़ पर स्थित इन मंदिरों का अब तक लगभग 16 बार पुनर्निर्माण किया जा चुका है। शत्रुंजय पर्वत पर बने जैन धर्म के 24 तीर्थंकर भगवानों को समर्पित हैं। इन जैन मंदिरों को 'टक्स'

भी कहा जाता है। 11वीं एवं 12वीं सदी में बने इन मंदिरों के बारे में मान्यता है कि ये मंदिर जैन तीर्थंकरों को अर्पित किए गए हैं। कुमारपाल, विमलशाह, समप्रति राज मंदिर यहां के प्रमुख मंदिर हैं। मान्यता है कि सभी जैन तीर्थंकरों ने यहाँ पर निर्वाण प्राप्त किया था। निर्वाण प्राप्त करने के बाद उन्हें 'सिद्धाक्षेत्र' कहा जाता था। यहाँ के जैन मंदिरों में मुख्य रूप से आदिनाथ, कुमारपाल, विमलशाह, समप्रतिराजा, चौमुख आदि बहुत ही सुंदर एवं आकृष्ट मंदिर हैं।

संगमरमर एवं प्लास्टर से बने हुए इन मंदिरों को देखने पर उनकी सुंदरता हमारे समक्ष प्रकट होती है। पालिताणा जैन मन्दिर सफेद संगमरमर व चूने से निर्मित हैं। इन मंदिरों की नक्काशी व मूर्तिकला विश्वभर में प्रसिद्ध है। 11वीं शताब्दी में बने इन मंदिरों में संगमरमर के शिखर सूर्य की रोशनी में चमकते हुए एक अद्‌भुत छटा प्रकट करते हैं और माणिक्य मोती से नजर आते हैं। शत्रुंजय तीर्थ का जैन धर्म में बहुत महत्व है। पांच प्रमुख तीर्थों में से एक शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा करना प्रत्येक जैन अपना कर्तव्य मानता है। मंदिर के ऊपर शिखर पर सूर्यास्त के बाद केवल देव साम्राज्य ही रहता है। पालिताणा का प्रमुख व सबसे ख़ूबसूरत मंदिर जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का है। आदिश्वर देव के इस मंदिर में भगवान की आंगी दर्शनीय है। दैनिक पूजा के दौरान भगवान का श्रृंगार देखने योग्य होता है। 1618 ई. में बना 'चौमुखा मंदिर' क्षेत्र का सबसे बड़ा मंदिर है।

यहां के मंदिरो में जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ भगवान का मंदिर कलात्मक स्थापत्य का अदभूत नमुना है। कुमारपाल, विमलशाह और चौमुखि आदि दर्शनीय मंदिर भी यहां स्थापित हैं। प्रसिद्ध धाम पालिताणा में हर साल फाल्गुन तेरस, चैत्र की पूर्णिमा के दिन और अक्षय तृतीया पर लाखों की संख्या में जैन यात्री परिक्रमा के लिए आते हैं। परिक्रमा का पथ 18 कि.मी. का है, यात्री पैदल चलकर या डोली में बैठकर यह सफर तय कर सकते हैं। इस परिक्रमा को अति महत्वपूर्ण माना जाता है।

तेहरवी शताब्दी में वस्तुपाल और तेजपाल दो भाईयों ने इस पहाड़ी पर चढ़ने के लिये पत्थरों का रास्ता बनवाया था। करीब 20 एकड़ क्षेत्र में फैले इस तीर्थ स्थल में लगभग सात हजार जैन प्रतिमाएं विद्यमान हैं। संगमरमर और चूने से बनी खूबसूरत कलाकृतियों वाले मंदिर व मूर्तियां विश्व में किसी भी अन्य स्थल पर मौजूद नहीं है। प्राचीनकाल में इस तीर्थ स्थल पर जैनधर्म के प्रथम तिर्थंकर भगवान ऋषभदेव के गणधार पुंडरिक स्वामी ने मोक्ष पाया था। अत: इसे पुंडरिकगिरी के नाम से भी जाना जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ढो.म.सा. आचार्य, गुजरातनो सौंलकीकालीन इतिहास, युनि. ग्रंथ निर्माण बोड, प्रथम आवृत्ति, अहमदाबाद, 1993
2. नीलांजना शाह, सौलंकीकालीन साहित्य, गुजरात युनिवर्सिटी, प्रेस, अहमदाबाद, 1968
3. डॉ. रमनलाल गरेता, गुजरातनो राजकीय अने सांस्कृतिक इतिहास, मुनि ग्रंथ निर्माण बोर्ड, अहमदाबाद, 1970
4. राम डोभाङ्गा, उदयराज, रासमाला, गुजराती सभा, मुंबई, 1922
5. M.S. Commissariat, History of Gujarat, Navjivan Printing Press, Amadavad, 1980
6. प्रो. आर.सी. शाह, गुजरातनो सांस्कृतिक वारसो, न्यू पोपुलर प्रकाशन, सूरत, 2011
7. डी.के. शास्त्री, प्रबंध चिंतामणि, मार्बस गुजरानी सभा, मुंबई, 1922
8. असात्र के छारैया, गुजरात इतिहास, समजावश एण्ड कंपनी, अहमदाबाद, 1987

****

हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति : मध्यप्रदेश के उज्जैन जिले के विशेष सन्दर्भ में

शुभम ओझा* डॉ. बी. एल. जोशी**

प्रस्तावना - महिलाओं से संबंधित एक समस्या तलाक (या विवाह विच्छेद) है। विवाह विच्छेद मूलत: परिवार का विघटन है। परिवार चूंकि सामाजिक संगठन की बुनियादी इकाई होने के नाते समाज की रीढ़ होता है, इसलिये सामान्यत: कोई समाज विवाह विच्छेद को प्रोत्साहित कर परिवार व समाज को टूटने देना नहीं चाहता है। किन्तु कभी-कभी पति-पत्नी की बेमेल प्रकृति, पारस्परिक अविश्वास, रुचि, पसन्द एवं प्राथमिकताओं में भिन्नता तथा मूल्यों में संघर्ष आदि कारणों से उनमें दिन-रात कलह होती रहती हैं जिससे परिवार की सुख-शांति समाप्त हो जाती है और दोनों का साथ-साथ रहना कठिन हो जाता है। ऐसे में कलह व तनावपूर्ण जीवन से उन्हें मुक्ति दिलाने का तलाक ही एक मात्र विकल्प बचता हैं। इसलिये दुनिया के प्राय: सभी समाज तलाक को अपनी सेहत के लिए अच्छा न मानते हुये भी विशिष्ट परिस्थितियों में इसकी अनुमति प्रदान करते हैं।

विवाह विच्छेद वैधानिक आधार पर पति-पत्नी के बीच विवाह बन्धन की समाप्ति है। भारतीय समाज में यह वैधानिक रूप से मान्य है किन्तु इस सम्बन्ध में सभी नागरिकों के लिये कोई सामान्य विधान लागू नहीं है। भारतीय संविधान के भाग 4 राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्त के अनुच्छेद 44 के अंतर्गत राज्य को निर्देशित किया गया है कि वह सभी नागरिकों के लिए एक सामान्य नागरिक संहिता प्राप्त करने का प्रयास करेगा किन्तु संविधान निर्माण के छ: दशक व्यतीत होने के बाद भी राज्य अभी तक ऐसा नहीं कर पाया है। भारतीय समाज के विभिन्न धार्मिक घटकों के विवाह संबंधी अपने विशिष्ठ विधान हैं जिसके अनुसार उनमें विवाह एवं विवाह विच्छेद का संचालन व नियमन होता है। जहाँ तक हिन्दू समाज का प्रश्न है इस सम्बन्ध में 1954 में विशेष विवाह अधिनियम पारित किया गया जिसमें तलाक को वैधानिक स्वरूप प्रदान किया गया। आगे चलकर इस बाबत् एक तुलनात्मक रूप से अधिक व्यापक अधिनियम जिसे हिन्दू विवाह एवं विवाह विच्छेद अधिनियम 1955 के रूप में जाना जाता है, पारित किया गया। शुरु में इसके तहत तलाक विवाह के तीन वर्ष पश्चात्, प्राप्त किया जा सकता था किन्तु इसमें संशोधन (1978) के पश्चात् यह अवधि घटा कर एक वर्ष कर दी गई है। इस अधिनियम के अनुसार पति-पत्नी में से कोई पक्ष यदि जारता (अर्थात् व्यभिचार), क्रूरता, परित्याग, धर्मान्तिरण, मानसिक विकृतता, असाध्य कुष्ठ रोग अथवा रतिज (संक्रमण) रोग से पीड़ित हो, सात वर्ष या अधिक समय से लापता हो तो दूसरा पक्ष उससे न्यायिक प्रक्रिया के माध्यम से तलाक प्राप्त कर सकता है। इस अधिनियम की धारा 13(ब) के अनुसार पत्नी एवं पति आपसी सहमति से सामूहिक याचिका दायर कर एक-दूसरे से तलाक प्राप्त कर सकते है। पूर्व में इस आधार पर तलाक एक वर्ष के बाद प्राप्त किया जा सकता था, किन्तु यह अवधि घटा कर अब 6 माह कर दी गई है।

महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा व अत्याचार की रोकथाम के लिये राज्य द्वारा कानून बनाया जाना तथा आवश्यकता पड़ने पर उनमें संशोधन कर दण्ड के प्रावधानों को अधिक कठोर किया जाना अपने आप में इस बात का प्रमाण है कि समाज में महिलाओं के विरुद्ध घर और घर के बाहर हिंसा और अत्याचार होता रहा है, और आज भी होता हैं।

तलाकशुदा महिला - कूपर एवं कूपर (1985) के अनुसार 'वह स्त्री जिसने अपने वैवाहिक सम्बन्धों का अन्त कानून एवं धार्मिक विधि द्वारा कर लिया हैं, तलाकशुदा महिला कहलाती है'।

प्रस्तुत शोध में उन महिलाओं को सम्मिलित किया गया है जिन्हें उनके पति द्वारा तलाक दिया गया है।

तलाक (विवाह-विच्छेद) - सामाजिक एवं कानूनी रूप से पति-पत्नी के विवाह सम्बन्धों की समाप्ति ही तलाक कहलाता है। तलाक पति-पत्नी के वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन में असामंजस्य एवं असफलता का सूचक है। इसका तात्पर्य यह है, कि जिन उद्देश्यों को लेकर विवाह किया गया वे पूर्ण नही हुये हैं। **मिशेल (1970)** के अनुसार तलाक वह प्रक्रिया है, जिसमें पति-पत्नी विवाह संस्था द्वारा विधिपूर्वक अलग होकर एकाकी स्तर को प्राप्त कर लेते है और भावी समय में पुर्नविवाह के लिये स्वतन्त्र हो जाते हैं। प्रस्तुत शोध हेतु हिन्दु एवं मुस्लिम दोनों वर्गो की तलाकशुदा एवं परित्यक्ता महिलाओं को लिया गया है। अत: दोनों धर्मो में तलाक की क्या प्रक्रिया है ? उसे विस्तृत रूप में समझाने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य- प्रत्येक शोध कार्य निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिये ही किया जाता है, बिना उद्देश्य के शोध कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। अत: प्रस्तुत शोध के भी उद्देश्य है, जिन पर यह शोध कार्य आधारित है। तलाकशुदा महिलाओं की पारिवारिक, सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं का अध्ययन करना।

अध्ययन का समग्र - अध्ययन का समग्र मध्यप्रदेश का जिला उज्जैन मे हिन्दू तलाकशुदा महिलाएं हैं।

अध्ययन की ईकाई - उज्जैन जिले के जिला एवं सत्र न्यायालय, उज्जैन के अन्तर्गत न्यायालय अतिरिक्त प्रधान न्यायाधीष, कुटुम्ब न्यायालय उज्जैन (म.प्र.) द्वारा वर्ष 2013 से लेकर वर्ष 2018 तक की पीड़ित तलाकशुदा हिन्दू महिलाएं अध्ययन की इकाई हैं।

अध्ययन का प्रतिदर्श - अध्ययन हेतु तलाकशुदा महिलाओं में से 100 हिन्दू कुटुम्ब न्यायालय उज्जैन (म.प्र.) से प्राप्त सूची (वर्ष 2013 से लेकर

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, कालापीपल, शाजापुर (म.प्र.) भारत

2018 तक) में से किया गया है। इस प्रकार कुल 100 हिन्दू तलाकशुदा महिला उत्तरदाताओं का चयन कर उनके सामाजिक-आर्थिक जीवन का अध्ययन करने का प्रयास किया गया हैं।

हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं का सामाजिक आर्थिक स्थिति: विश्लेषण

तालिका 1 आयु का वर्गीकरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	18 से 25 वर्ष	25	25
2	26 से 33 वर्ष	48	48
3	34 से 41 वर्ष	20	20
4	41 वर्ष से अधिक	07	07
	योग	100	100

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट होता है कि 100 हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं में से 25 प्रतिशत उत्तरदाता 18 से 25 वर्ष के है, सर्वाधिक 48 प्रतिशत हिन्दू तलाकशुदा महिलाएं 26 से 33 वर्ष के मध्य की है, जबकि 20 प्रतिशत महिलाएं 34 से 41 वर्ष के मध्य की है। मात्र 7 प्रतिशत उत्तरदाता 41 वर्ष से अधिक की हैं। अत: उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकांश हिन्दू महिलाएं जिनकों तलाक मिला है वें 26 से 33 वर्ष के मध्य की है।

तालिका 2 वैवाहिक जीवन/सम्बन्ध में कैसे अनबन प्रारम्भ हुयी

क्र.	विवरण	पूरी तरह सहमत	सहमत	पूरी तरह असहमत	असहमत	योग
1	पति नियमित रूप से घर नहीं आता था	15	10	25	50	100
2	वह दैनिक खर्चो को पूरा नहीं करता था	43	30	11	16	100
3	उसने आपकी और बच्चों की देखभाल ठीक से नहीं की	33	16	21	30	100
4	उसकी शरब की लत के कारण	19	37	20	24	100
5	उसके माता-पिता के बर्ताव के कारण	45	12	18	25	100

जैसा कि हम सभी जानते है किसी भी रिश्ते में खटास की शुरूवात आपसी अनबन से होती है इसी संबंध में 15 प्रतिशत महिलाओं ने माना है कि उनके पति नियमित रूप से घर नही आते थे जिसके कारण आये दिन उनके बीच अनबन होती थी वहीं 50 प्रतिशत उत्तरदाता इससे असहमत है, 43 प्रतिशत महिलाओं ने माना है कि उनके पति दैनिक खर्चो को पूर्ण नही करते थे इसलिये उनमें विवाद की स्थिति उत्पन्न होती थी। 33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है कि उनके पति उनका और बच्चों का ठीक से देखभाल नहीं कर पाते थे इसलिये उनके बीच अक्सर अनबन होती रही। वहीं 30 प्रतिशत महिलाएं इस बात से सहमत नहीं है कि उनके पति को शराब की लत हो गई। ज्यादातर 45 प्रतिशत महिलाओं ने स्वीकार किया है कि उनके बीच की अनबन को मुख्यत: सास-ससुर अधिक तूल देते थे। जिस कारण दोनों के मध्य संबंध मधुर न होने के कारण विवाह विच्छेद की स्थिति निर्मित हुई।

तालिका 3 पति द्धारा किस प्रकार से प्रताडित किया गया

क्र.	विवरण	पूरी तरह सहमत	सहमत	पूरी तरह असहमत	असहमत	योग
1	पत्नी की पिटाई	63	21	10	06	100
2	परिवार की दैनिक जरूरतों को पूरा न करने में लापरवाही	57	19	14	10	100
3	यौन सम्बंधों में दिलस्पी न होना	38	23	15	24	100
4	अक्सर डॉटना और हमेशा झगड़े की स्थिति पैदा करना	72	11	10	07	100
5	अक्सर मेरी वफादारी पर शक करना	64	15	11	10	100
6	व्यभिचारी हो जाना	07	15	19	59	100

तालिका क्रमांक 3 के अनुसार स्पष्ट है कि 63 प्रतिशत तलाकशुदा महिलाएं यह मानती है कि उनके पतियों द्धारा उनके साथ मारपीट की जाती थी जबकि 57 प्रतिशत उत्तरदाता मानती है उनके पति उनके दैनिक आवश्यकताओं की आवश्यक वस्तुओं को पूरा नही कर पाते थे वही 38 प्रतिशत हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं ने माना है कि शादी के पश्चात उनके व उनके पति के मध्य यौन संबंध ठीक नही रहे 72 प्रतिशत उत्तरदाता मानती है कि उनके पति उनसे अक्सर झगडा किया करते थे व छोटी-छोटी बात पर उनको प्रताडित करते थे। 64 तलाकशुदा उत्तरदाताओं ने माना कि उनके पति अक्सर उन पर शक किया करते थे जबकि 59 प्रतिशत महिलाओं ने माना है कि उनके पति का बर्ताव व्यभिचारी नहीं है।

तालिका 4 तलाक आपके सामाजिक सम्बंधों को कैसे प्रभावित करता है

क्र.	विवरण	प्रभवित नहीं	सामान्य रूप से प्रभावित	बहुत बुरी तरह से प्रभावित	योग
1	पड़ोसी के साथ संबंध	22	45	33	100
2	दोस्तों के साथ संबंध	49	26	25	100
3	क्षेत्र के अन्य निवासियों के साथ संबंध	65	22	13	100

वैवाहिक जीवन विच्छेद होने के कारण सामाजिक संबंध भी प्रभावित हो जाते है, इस प्रभाव को जानने हेतु तालिका 7 से स्पष्ट है कि 33 प्रतिशत हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं ने माना है कि तलाक के पश्चात उनके संबंध आस-पास के रहवासियों के साथ बहुत बुरी तरह से प्रभावित हुए वही 25 प्रतिशत हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं ने माना कि दोस्तों के साथ संबंध भी बहुत बुरी तरह से प्रभावित हुए जबकि 65 प्रतिशत हिन्दू महिलाओं ने माना है कि क्षेत्र के अन्य निवासियों के साथ संबंध ज्यादा प्रभावित नहीं हो सके क्योंकि क्षेत्रवासियों को इस संबंध में सूचना प्राप्त नहीं हुयी।

तालिका 5 आपके पास घरेलू जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त आय है

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हॉ	35	35

2	नहीं	65	65
	योग	100	100

तालिका क्रमांक 5 हिन्दू तलाकशुदा महिलाओं की आर्थिक स्थिति को स्पष्ट करती है जो बता रही है 35 प्रतिशत हिन्दू उत्तरदाताओं के पास वर्तमान में अपने घरेलू आवश्यक वस्तुओं को पूर्ण करने के लिये उनके पास पर्याप्त आय के साधनों का अभाव है। वही 65 प्रतिशत महिलाए ऐसा नही मानती है।

तालिका 6 आप मानती है कि आपकी स्थिति अच्छी होती यदि आपका तलाक न हुआ होता

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हॉ	93	93
2	नहीं	07	07
	योग	100	100

तालिका क्रमांक 6 के अनुसार 93 प्रतिशत तलाकशुदा उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि आज आर्थिक स्थिति अच्छी होती यदि हमारे विवाह विच्छेद नहीं हुआ होता जबकि 7 प्रतिशत उत्तरदाताओं को ऐसा बिल्कुल नही लगता।

निश्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अधिकांश हिन्दू महिलाएं जिनकों तलाक मिला है वें 26 से 33 वर्ष के मध्य की है। सबसे अधिक तलाकशुदा हिन्दू महिलाओं में माध्यमिक स्कूल तक की शिक्षा ग्रहण की है। ज्यादातर उत्तरदाताओं ने माना है कि वे मजदूरी करके अपने परिवार का भरण–पोषण कर रही है। अधिकांश ऐसी भी महिलाएं है जो मानती है कि उनकी आय 96001 रूपये से अधिक है। ज्यादातर उत्तरदाताओं ने माना है कि सगे संबंधियों से उन्हे अक्सर आर्थिक सहायता समय असमय उपलब्ध होती रहती है। 93 प्रतिशत तलाकशुदा उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि आज आर्थिक स्थिति अच्छी होती यदि हमार विवाह विच्छेद नहीं हुआ होता। यह आंकडें इस तथ्य पर जोर देते हैं कि अगर तलाक ही महिलाओं के सशक्तिकरण और लैंगिक समानता के लिए एक बाधा है तब मुस्लिम महिलाओं की तुलना में हिन्दू महिलाओं की तरफ ध्यान देने की ज्यादा आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुरुबक्श सिंह फ्रैंक, भारतीय नवजागरण और पंजाब, प्रदीप सक्सेना (सम्पा.) जनजागरण व इतिहास चेतना, पहल, जबलपुर, 1992, पृ 138
2. राम विलास शर्मा, नवजागरण की परम्पराएँ व क्रांतिकारी आंदोलन, प्रदीप सक्सेना (सम्पा.) नवजागरण व इतिहास चेतना, पहल, जबलपुर, 1992.
3. डॉ. राजकुमार : नारी शोषण समस्या एवं समाधान, अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, दरियागंज नई दिल्ली, 2008
4. मीनाक्षी निशांत सिंह : 'आधुनिकता और महिला उत्पीड़न', ओमेगा प्रकाशन, दिल्ली, ISBN No. 978-81-8455-39-9, 2010.
5. http://www.indiaspendhindi.com

****

झाबुआ राज्य के ठिकानेदारों द्वारा किए गए विकास कार्य का ऐतिहासिक विश्लेषण

निर्मला बिलवाल* डॉ. रविद्र सिंह **

प्रस्तावना - झाबुआ राज्य के शासक के अधीन रहे ठिकानेदारों के अंतर्गत खवासा, बोरी, झकनावदा, कल्याणपुरा, रायपुरिया, सारंगी, उमरकोट, बरवेट, नौगांवा, बावड़ी, करवड़, अंतरवेलिया, बोड़ायता, कोदली, गेहेन्डी, जामली, घूघरी आदि प्रमुख जार्गीरें थी। इन जागीरदारों के द्वारा अपने तथा जनता के लिए कई निर्माण कर्य करवाए गए । सारंगी के जौरावर समय कई निर्माण कार्य हुए। धर्मशाला, गंगाजल, कुँआ, शंकरजी व हनुमानजी के मंदिर और गढ़, ब्रजराज भवन बनवाए। अच्छे प्रशासक होने से उन्होंने 1953 में गाँव कसारवार्डी का फैसला किया।[1] बोरी -1961 में रतनसिंह के भाई दुलेसिंह को भाई बांट में पीथनपुर पलासकी, झुमका और बावड़ी चार गाँव की जागीर मिली। 1971 में पीथनपुर में कुँए का निर्माण भी कराया था।[2]

ठिकाना अन्तरवेलिया के देवीसिंह की 1903 मृत्यु होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र भेरूसिंह गद्दी पर बैठा। 1918 में भेरूसिंह ने एक कुँआ भी खुदवाया था।[3] ठिकाना करवड़ - झाबुआ राज्य के अन्तर्गत करवड़ ठिकाने के जागीरदार मेड़तिया राठौड़ राजपूत रहे है। यह ठिकाना झाबुआ से 69 कि.मी. दूरी पर स्थित है। सबसे पहले जाजपुर ठिकाना राणाजी से मिला वहाँ पर किले, बावड़ी बनवाए तथा बाग लगवाए किन्तु एक घटना में राणाजी के साले को मारने के कारण ठिकाना छूट गया तब वहाँ से आगे चलकर पंवार इलाके इंगणोद ठिकाना पाया [4] झाबुआ राज्य के अन्तर्गत ठिकाना बावड़ी के जागीरदार पृथ्वीराजोत राठौड़ राजपूत है। ठिकाना बावड़ी भी जामली पृथ्वीराजोत के भाई बंधु हैं। बावड़ी की जागीर झाबुआ महाराज कुशालसिंह ने 1715 में रघुनाथसिंह को दी थी। ठाकुर रघुनाथसिंह के बाद रतनसिंह गद्दी पर बैठा सन् 1832 में रतनसिंह ने ठिकाने में पक्की बावड़ी बनवाई तथा दरवाजा भी बनवाया था। [5]

बरवेट ठिकाने के जागीरदार पृथ्वीराजोत राठौड़ राजपूत है। दौलतसिंह के देवलोक होने पर 1851 में शेरसिंह के पुत्र बख्तावर सिंह को गोद लिया इस उत्तराधिकार की स्वीकृति झाबुआ दरबार से 1891 में प्राप्त हुई। बख्तावरसिंह ने संवत् 1963 में भगवान महादेव का बड़ा मंदिर बनवाया था। इसके आस-पास दो छोटे मंदिर बख्तावरसिंह की धर्मपत्नियों रूपकुंवर षक्तावत मुंदेड़ी और सूरजकुंवर सिसोदिया आठीनेरा ने भी महादेव के मंदिर बनवाये उस समय उनकी लागत 4500 रू. थी। [6] ठाकुर भौमसिंह ने मोकमसिंह का चोतरा कोद के पास कोटेश्वर महादेव मंदिर के पास बनवाया था। जिसकी मृत्यु 1831 में हुई। 6 झाबुआ राज्य के अधीन कल्याणपुरा के ठाकुर भारमलोत राठौड़ राजपूत है। मोकमसिंह के बाद शिवसिंह, बखतसिंह, जयसिंह, रामसिंह, मुकुंदसिंह, बुधसिंह व नाहरसिंह कल्याणपुरा की गद्दी पर बैठे। 1897 में ठाकुर नाहरसिंह ने रामा गाँव में कुँआ खुदवाया और बाद में उसे पक्का भी बनवाया। यहीं पर एक बाग भी उनके द्वारा बनवाया गया।[7]

झाबुआ राज्य के अधीन ठिकाना झकनावदा के राजगीर भारमलोत राठौड़ राजपूत है। सन् 1661 में झाबुआ महाराजा महासिंह के द्वारा झकनावदा की जागीर कुबेरसिंह को दी गई थी। सन् 1833 में ठाकुर जवानसिंह झाबुआ दरबार में काफी क्रियाशील रहा। इसी की वजह से उसने राज्य के विद्रोहियों छीतु भिलाला पटेल अलीराजपुर को बंदी बना दिया। चूंकि छीतु भिलाला 1857 के संग्राम में अंग्रेजों के विरूद्ध में लड़ाई लड़ रहा था तथा जवानसिंह को 1890 में इस कार्य हेतु अंग्रेजों द्वारा रायबहादुर की पदवी से सम्मानित किया गया। 1877 में जसवंत सिंह ने अनेक निर्माण कार्य कराए। जिसमें छार बाग में चौतरा, मोकमसिंह, बख्तावरसिंह, जसवंतसिंह और भगवान शंकर की मूर्तियां बनवाई। 1880 में गरवाखेंड़ी में तालाब तथा झकनावदा में कुँओं का निर्माण करवाया।[8] मोहनकोट 1904 में दौलतसिंह के देवलोक जाने के बाद माधवसिंह पाट पर बैठा। 1911 में माधवसिंह की मृत्यु होने पर उसका भाई मानसिंह गद्दी पर बैठा। जिसकी तलवार बंदी झकनावदा के ठाकुर किशोरसिंह के द्वारा 1957 में की गई। भेरूसिंह ने निमार्णकार्यों में 1976 में एक गड़ी बनवाई कुँए खुदवाए और दक्षिण में एक बड़ा दरवाजा बनाया और इसी वर्ष एक मंदिर का भी निर्माण करवाया। [9]

झाबुआ राज्य के अंतर्गत जामली के जागीरदार पृथ्वीराजोत राठौड़ राजपूत है। इस ठिकाने से बोड़ायता, बावड़ी, वरवेट, रायपुरिया, अलस्याखेड़ी व गेहन्दी ठिकाने के सभी भाई बंधु। अमरसिंह ने पुराने गढ़ को गिरवाकर नया बनवाया। जिसमें जनाना महल, रसोई घर तथा अमरविलास 3 मंजिला बनवाया गया। इसी के साथ ही राममंदिर, सत्यनारायण मंदिर, गड के सामने बाजार तथा जनता के हित के अस्पताल खोला गया। ठाकुर अमरसिंह के पश्चात् मोडसिंह गद्दी पर बैठा। मोडसिंह ने ठिकाने में देवी मंदिर बनवाया और बगीचा भी लगाया। 1976 में उसकी लागत 3 हजार रूपये थी। माताजी के भोग के लिए कुछ प्रबंध किया गया। पिपल्या वाला कुँआ दिया गया। इनकी माता डोडनीजी चन्द्रकुंवर चापानेर द्वारा शंकर भगवान का पक्का मंदिर बनवाया। पुजारी कोदरदास को नियुक्त किया तथा माता सिंहदेवी के पास कुँआ भी खोदा गया।[10]

झाबुआ राज्य के उमरकोट ठिकाने के जागीरदार फतहसिंहोत राठौड़ राजपूत है। यह ठिकाना झाबुआ से 35 कि.मी. दूर पूर्व दिशा में स्थित है। फतेहसिंह महेशदास का तृतीय पुत्र था। उसी के नाम से एक पृथक शाखा कायम हुई। 1665 में फतहसिंह को 7 सदी का मनसब मिला। साथ में उसे फुलिया परगने के 80 गाँव जागीर में मिले थे। संवत् 1958 को जवानसिंह

*शोधार्थी (इतिहास) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

की मृत्यु हो गई तब मोड़सिंह गद्दी पर बैठा। मोड़सिंह ने वनविभाग की उन्नति का भरसक प्रयास किया। इसके अलावा उसने वगासा देव कुण्ड, मोड़ सागर व मोड़ निवास बंगले का काम उत्कृष्ट कराया। गमेरसिंह ने 1926 में राम-लक्ष्मण का मंदिर बनवाया था। [11] नौगंवा ठिकाने की जागीर राजा महासिंह ने 1665 में केशवदास के भाई किशनदास के वंशज पृथ्वीसिंह को दी थी जिसमें 9 गाँव प्राप्त हुए थे। अतः इसका नाम नौगंवा हो गया। ठाकुर कल्याणसिंह की निःसंतान रहने से उसके भाई तेजसिंह के पुत्र भुवानसिंह को गोद बिठाया।12 ठाकुर भुवानसिंह के पश्चात् ठाकुर रणजीतसिंह रूपायली के पुत्र गोविन्दसिंह को गोद बिठाया गया। गोविन्दसिंह के बाद किशोरसिंह गद्दी पर बैठा। 1947 में गोविन्दसिंह ने नौगंवा में हवेली का निर्माण कराया। जिसकी लागत उस समय 2001 रू. आयी थी। इसके अलावा उसने छतरी, हवेली के दरवाजे, कचहरी, हवेली के पीछे कुँआ आदि कार्य कराया था।[13] अतः हम इन तथ्यों के माध्यम से इस सत्यता का पता लगाया जा सकता है। कि झाबुआ राज्य के ठाकुरों द्धारा किए गए विकास कार्य किस हद तक जनता के लिए लाभदायी रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 3, पत्र क्रमांक 156।
2. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 6 ,पत्र 170 अ।।
3. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 6 ,पृ 88 ब।
4. मालवा के राठौड़ रेखा द्धिवेदी एवं सहदेवसिह चौहान ,नटनागर शोध संस्थान सीतामऊ पृ. 353।
5. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 3 ,पत्र 205 अ।
6. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 3, पत्र 207 अ।
7. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 6, पत्र 175 अ।
8. मालवा के राठौड़ रेखा द्धिवेदी एवं सहदेवसिह चौहान ,नटनागर ष्शोध संस्थान सीतामऊ पृ.376।
9. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 6, पत्र 181 अ।
10. मालवा के राठौड़ पृ.382 रेखा द्धिवेदी एवं सहदेवसिह चौहान ,नटनागर शोध संस्थान सीतामऊ।
11. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 4 , पत्र 8।
12. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 6 ,पत्र 46 ए।
13. गुरू निर्भयसिंह संग्रह 6 , पत्र 46 ए।
14. डॉ. शोभनाथ पाठक भीलों के बीच बीस वर्ष, प्रभात प्रकाशन दिल्ली।
15. डॉ. राजेन्द्र जैन झाबुआ के भीलों की संस्कृति, मानसी पब्लिकेशन्स दिल्ली।
16. श्रीचंद जैन वनवासी भील एवं उनकी संस्कूति, रोशनलाल एण्ड़ संन्स जयपंर।
17. झाबुआ स्टेट गजटियर , लुआर्ड संकलन बाम्बे ब्रिटिश प्रेस, बेयकुला बाम्बे।

****

जनजाति क्षेत्रों में गैर सरकारी संगठनों द्वारा क्रियान्वित मद्यपान निषेध कार्यक्रमों का अध्ययन (जिला अलिराजपुर के विशेष संदर्भ में)

लखनलाल गांगले *

प्रस्तावना - मद्यपान एवं नशा से आदिवासी समुदाय ग्रसित है। घर के प्रत्येक सदस्य चाहे वह घर का मुख्यिा हो, स्त्रियां हों, बुढे हों या बच्चे इन सब पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से इसके आदि बनते जा रहे हैं। फलस्वरूप कई प्रकार की समस्याओं से ग्रसित हो रहे हैं तथा अपराधों में वृद्धि हो रही है। शारीरिक एवं मानसिक दुष्प्रभावों के कारण विकास, स्वास्थ्य एवं सुखद जीवन-यापन करने में असफल हो रहे हैं। विविध प्रकार के नशे की आदतों के फलस्वरूप अधिकांश आदिवासी वयस्क तथा युवा वर्ग गंभीर बिमारीयाँ जैसे मुँह का कैंसर, फेफड़ों के कैंसर, शारीरिक एवं मासिक कमजोरी, रोगप्रतिरोधक शक्ति की कमी, कम आयु में ही वृद्धावस्था तथा क्षमताओं का ह्रास आदि समस्याओं से ग्रसित हो रहे हैं। अधिकांश शोधकर्ताओं द्वारा अपने शोध को केवल वर्तमान स्थितियों में मद्यपान एवं नशे के प्रकारों तथा इनके दुष्प्रभावों को विश्लेषित किये जाने तक ही सीमित रखा गया है। केवल आदिवासी समुदाय पर केन्द्रित अध्ययन सामने नहीं आया है। अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न शासकीय प्रयासों के अतिरिक्त भी अनेक गैर सरकारी संगठन हैं जो कि मद्यपान के विरोध में कार्य कर रहे हैं तथा कुछ हद तक सफल भी हुए हैं।

अलीराजपुर जिले में कार्यरत गैर सरकारी संगठनों में से 34 गैर-सरकारी संगठन जो मद्यपान एवं नशामुक्ति के लिए महतवपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इन गैर सरकारी संगठनों द्वारा नशा मुक्ति के लिए अपनाये गये तरीकों, कार्यक्रमों एवं उनके प्रभावशीलता का अध्ययन करने से उनके द्वारा अपनाये गये तरीकों में खामियों को उजागर किया जायेगा तथा प्रभावों को आदर्श के रूप में अन्य जगहों पर अपनाने में सहायक सिद्ध होगा। प्रस्तुत शोध अध्ययन जनजातियों में मद्यपान एवं नशे के रोकथाम में गैर-सरकारी संगठनों की विभिन्न गतिविधियों का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत अध्याय में चयनित गैर-सरकारी संस्थाओं के कार्यों के प्रति लाभार्थियों के अभिमत को जानने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रविधि -

शोध प्रारूप - प्रस्तावित शोध अध्ययन हेतु वर्णनात्मक शोध प्रारूप को अपनाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र - प्रस्तुत शोध कार्य हेतु आलीराजपुर जिले का चयन किया गया है। जो मध्यप्रदेश के दक्षिण-पश्चिमी भाग में स्थिति मध्यप्रदेश के अलीराजपुर जिले की कुल जनसंख्या 7,28,999 है। जिनमें जनजातीय वर्ग की जनसंख्या 6,48,648 है। जिनमें से पुरूष 3,21,842 एवं महिलाओं की संख्या 3,26,796 है। इस जिले की साक्षरता दर प्रदेश में सबसे कम है।

अध्ययन का समग्र - अध्ययन क्षेत्र अलीराजपुर जिले में निवासरत् समस्त आदिवासी परिवार अध्ययन का समग्र हैं।

अध्ययन की इकाई - अध्ययन क्षेत्र का एक अदिवासी परिवार अध्ययन की इकाई है।

निदर्शन विधि - शोध अध्ययन हेतु निम्नानुसार बहुस्तरीय दैव निदर्शन विधि के द्वारा उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। इस प्रकार 6 विकासखंडों में से उच्च जनसंख्या, मध्यम जनसंख्या एवं निम्न जनसंख्या वाले विकासखंडों का चयन किया गया है।

चयनित तीन विकासखंडों में से प्रतयेक विकासखंड में दो कार्यरत् गैर सरकारी संगठन का चयन किया गया है। गैर सरकारी संगठनों के कार्यक्षेत्र में से 5 ग्रामों का चयन किया गया, इस तरह तीन विकासखंड में से कुल 30 ग्रामों का चयन बहुस्तरिय दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया है। चयनित 30 ग्रामों में से 300 उत्तरदाता का चयन दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया है।

तथ्य संकलन के स्रोत -

प्राथमिक स्रोत -शोध के उद्देश्यों के अनुरूप साक्षात्कार सूची बनाकर एवं अवलोकन से क्षेत्र के समुदाय विशेष के बारे में मौखिक रूप से प्राप्त जानकारियाँ एकत्र की गई।

द्वितीयक स्रोत - अध्ययन के विषय में विद्वानों द्वारा लिखी गई पुस्तकें, प्रलेखों तथा विकासखण्ड और विकास प्राधिकरण द्वारा विभिन्न बिन्दुओं पर संकलित जानकारियों का उपयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं विवेचन -

गैर सरकारी संगठनों की कार्य अवधी - किसी भी संस्था अथवा व्यक्ति द्वारा किसी भी क्षेत्र में किए गए कार्य का मूल्यांकन करने हेतु यह ज्ञात करना आवश्यक होता है कि संस्था स्थान विशेष पर कितने समय से कार्य कर रही है। निम्न तालिका में अध्ययन क्षेत्र में मद्यपान निशेध हेतु कार्य कर रही संस्थाओं के कार्यकाल का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 01 - गैर सरकारी संगठनों की कार्य अवधी संबंधी अभिमत

कार्य अवधी	आवृत्ति	प्रतिशत
पता नहीं	123	41.0
2 वर्ष	111	37.0
2 - 5 वर्ष	66	22.0
कुल	300	100.0

उपरोक्त तालिका अनुसार 41 प्रतिशत उत्तरदाताओं को यह पता नहीं है कि उनके क्षेत्र मे कितनी अवधि से एनजीओ कार्य कर रहे है। 37 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि 2 वर्ष से कार्य कर रहे है शेष 22 प्रतिशत

* शोधार्थी (समाजकार्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

उत्तरदाताओं का मत है कि 2 से 5 वर्ष से एनजीओ कार्य कर रहे है।

इससे ज्ञात होता है कि एनजीओ कुछ वर्षो से इन क्षेत्रों में शराबखोरी के विरूद्ध कार्य कर रहे है। भारतवर्ष में एनजीओ की अवधारण अधिक पुरानी नहीं है। परंतु इनके द्वारा किये जा रहे कार्य अवश्य ही सराहनीय है। बीते कुछ वर्षो में ही एनजीओ ने समाज कार्य में अपनी एक नई पहचान बनाई है। आने वाले समय में गैर शासकीय संगठन के कार्यो से अनेक सामाजिक समस्याओं की वास्तविक स्थिति समझने तथा उनके हल खोजने में महत्वपूर्ण सहयोग प्राप्त होने की संभावना है।

मद्यपान समाप्त हेतु उपयोग विधि – किसी भी कार्य को करने के लिए एक उचित विधि की आवश्यकता होती है। उचित ढंग से कार्य करने पर ही लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है। यही कारण है कि अध्ययन क्षेत्र में कार्यरत गैर सकरारी संगठन द्वारा भी मद्यपान निशेध हेतु किसी ना किसी निश्चित विधि का ही उपयोग किया गया है। निम्न तालिका में उपयोग की गई विधियों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 02 – गैर सरकारी संगठन द्वार मद्यपान समाप्त हेतु उपयोग विधि संबंधी अभिमत

विधि	आवृत्ति	प्रतिशत
सामुहिक	33	11.0
एकात्मक एवं सामुहिक दोनों	267	89.0
कुल	300	100.0

उपरोक्त तालिका अनुसार 89 प्रतिशत व्यक्तियों का यह कहना है कि शराबखोरी के विरूद्ध एनजीओं दो या उससे अधिक तरिकों का प्रयोग करते है जिसमें एकात्मक एवं सामुहिक दोनों ही विधि सम्मिलित होती है।शेष 11 प्रतिशत व्यक्तियों का मानना है कि वे सामूहिक विधि का प्रयोग करते हैं। इससे ज्ञात होता है कि शराबखोरी से लोगों को बचाने के लिए एनजीओं अलग–अलग प्रकार के तरिकों का प्रयोग कर रहे है जिससे कि वो अधिक से अधिक लोगों तक अपना संदेश एवं सेवा पहुँचा सके अर्थात यह एक सार्थक प्रयास है। समय–समय पर अपने कार्यो का मुल्यांकन करने तथा स्थिति अनुरूप नवीन तकनीकों तथा साधनों का प्रयोग करने की प्रकृति एनजीओ में होती है। जिसके कारण उनके प्रयास अधिक सार्थक होते देखे जा सकते है। अलग–अलग प्रकार की तकनीकों तथा साधनों के उपयोग का फायदा यह होता है कि समाज के सभी तबकों एवं उम्र के लोग जो कि भिन्न–भिन्न विचारों एवं शैक्षणिक स्तर के होते है सभी तक वे अपनी बात स्पष्ट रूप से पहुँचा पाते है।

मद्यपान निशेध हेतु किए गए एकात्मक कार्य – गैर सरकारी संगठनों द्वारा अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न प्रकार से मद्यपान निशेध के प्रयास किए गए हैं। संगठनों के द्वारा किए गए एकात्मक कार्यो का विस्तृत अध्ययन निम्न तालिका के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 03 – गैर सरकारी संगठनों के एकात्मक कार्य संबंधी अभिमत

	आवृत्ति	प्रतिशत
परामर्श	255	85.0
चिकित्सा सेवा	22	7.3
उपरोक्त सभी	23	7.7
कुल	300	100.0

उपरोक्त तालिका अनुसार 85 प्रतिशत उत्तरदाता ने यह कहा कि एनजीओ शराबखोरी छोडने तथा इससे बचने के लिए परामर्श प्रदान करते है। 7.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि एनजीओ परामर्श तथा स्वास्थ्य सुविधाएँ दोनों ही उपलब्ध कराते है। शेष 7.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार एनजीओ स्वास्थ्य सुविधाऐं प्रदान करते है।

विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि एनजीओ मुख्य रूप से शराबखोरी के विरोध में सभी प्रकार के परामर्श प्रदान करते है। कुछ स्तर पर इनके द्वारा स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ भी दिया जा रहा है। परामर्श वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति को उसके कार्यो का मुल्यांकन करने का अवसर प्राप्त होता है। उसे यह स्पष्ट होता है कि वह जो कार्य कर रहा है यह उसके स्वयं, परिवार तथा समाज के लिए कितना उचित अथवा अनुचित है। उसे एक सही दिशा की ओर ले जाने के प्रयास किया जाता है जिसे चुनकर वह शराब जैसी गलत वस्तुओं का त्याग करने के लिए प्रेरित हो पाये। स्वास्थ्य सेवाओं का खर्च अधिक होने के कारण तथा सरकार द्वारा इसकी पहले से ही व्यवस्था करने के कारण एनजीओ द्वारा यह कार्य कम मात्रा में ही किया जाता है।

मद्यपान निषेध हेतु सामुहिक कार्य – मद्यपान निषेध हेतु गैर सरकारी संगठनों द्वारा एकात्मक कार्य पद्धति के साथ–साथ सामुहिक कार्य पद्धति का भी उपयोग किया है। संगठनों द्वारा किए गए सामुहिक कार्यों का अध्ययन निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका 04 – गैर सरकारी संगठनों के सामुहिक कार्य संबंधी अभिमत

कार्य	आवृत्ति	प्रतिशत
रैली निकालना	154	51.3
नुक्कड़ नाटक	33	11.0
सामुहिक परामर्श	56	18.7
संगठन एवं उनके कार्यकर्ता	33	11.0
उपरोक्त सभी	24	8.0
कुल	300	100.0

उपरोक्त तालिका अनुसार 51.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि सामूहिक कार्य में एनजीओ रैली निकालते है। 18.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार एनजीओ सामूहिक कार्य के अंतर्गत सामूहिक परामर्श प्रदान करते है। 11–11 प्रतिशत लोग के अनुसार एनजीओ नुक्कड नाटक तथा साथीगण एवं उनके कार्यकर्ताओं के माध्यम से सामूहिक कार्य करते है। 8 प्रतिशत लोगों के अनुसार वे उपरोक्त सभी तरिकों का प्रयोग सामूहिक कार्य के अंतर्गत करते है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि एनजीओं शराबखोरी से बचाने के लिए सामूहिक कार्य के अंतर्गत सभी प्रकार के तरिकों अथवा प्रणालियों, विधाओं का उपयोग करते है जिससे कि संबंधित समाज को आसानी से समझाया जा सके कि मद्यपान कितना खतरनाक होता है। किसी भी विचार को समझाने अथवा स्थिति को बताने के अलग–अलग तकनीके एवं प्रणालियॉ होती है। किसी भी व्यक्ति को समझाने से पूर्व यह आवश्यक है कि उसकी मानसिक, शारीरिक एवं शैक्षणीक स्थिति क्या है। इन्हीं स्थितियों को ध्यान में रखकर अलग–अलग प्रकार के तरिकों का उपयोग कर उसे समझाने का प्रयत्न किया जाता है। जिससे कि वह पूर्ण रूप से उस विचार को आत्मसात कर सके।

उपरोक्त तालिकाओं के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि गैर सरकारी संगठनों द्वारा मद्यपान निशेध हेतु क्रियान्वित कार्यक्रम प्रत्येक व्यक्ति की पहुँच की दृष्टि से किए जा रहे हैं जिसका की शासकीय कार्यक्रमों में अभाव मिलता है। यही कारण है की गैर सरकारी संगठनों द्वारा किए जा रहे प्रयास शासन के कार्यक्रमों से अपेक्षाकृत अधिक सफल होते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भौमिक पी.के. (1982), **एप्रोच टू ट्राइबल डेवलपमेंट,** इंटर-इंडिया पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
2. देवगांवकर एस.जी. (1980), **प्राब्लम ऑफ डेवलपमेंट ऑफ ट्राइबल एरियाज,** इंटर-इंडिया पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
3. दुबे बी.के. (1967), **ए स्टडी ऑफ द ट्रायबल पीपुल एण्ड ट्रायबल एरियाज ऑफ मध्यप्रदेश**, ट्रायबल डेवलप एण्ड रिसर्च इंस्टीट्यूट, भोपाल (मध्यप्रदेश)
4. सिद्दिकी एस.वाय. (1984), **सोशल वर्क एण्ड सोशल एक्शन** व्हूमन पब्लिकेशन, नई दिल्ली
5. सच्चिदानन्द (1989), रोल ऑफ वोलेन्टरी एजेन्सीज् इन सोशल एण्ड इकोलोजिकल डेवलपमेंट इन ट्रायबल एरियाज्, **वन्यजाति**, वर्ष 37, अंक 4, अक्टूब, नई दिल्ली।

****

एच.आई.वी. एड्स से ग्रसित व्यक्तियों की मनोसामाजिक स्थिति का अध्ययन (मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में)

मुकेश अजनार *

प्रस्तावना – एड्स एक बेहद खतरनाक और भयानक बीमारी है। अगर यह एक बार हो जाये तो फिर संक्रमित व्यक्ति का बचना असंभव है। यदि भारत की ही बात की जाए तो प्रतिवर्ष करीब 80000 (NACO अनुसार) से ज्यादा लोग इस बीमारी का शिकार होकर असमय ही काल के ग्रास बन जाते है। इस बीमारी के बारे में यह कहा जाता है कि इसकी जानकारी ही इसका बचाव है, अर्थात इस बीमारी से संक्रमित हो जाने के कई महीनो से कई सालों तक इसके लक्षण नजर नहीं आते और जब नजर आते है तो वे अन्य साधारण बीमारियों से इतना मेल खाते है कि कोई व्यक्ति एड्स से पीडित है इसको जानने में कही अधिक समय नष्ट हो जाता है।

दु:खद विचार यह है कि संम्पूर्ण विश्व में एचआईवी को लेकर अनेक गलतफहमियॉ एवं अफवाहे हैं जिनके कारण कई लोग इसकी चपेट में आ जाते है एवं इस रोग से ग्रसित लोगों का जीवन नर्क बन जाता है। उनका इस प्रकार से वैयक्तिक, पारिवारीक एवं सामाजिक बहिष्कार किया जाता है कि वह उचित प्रेरणा, उपचार एवं परामर्श के अभाव में समय से पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। इसलिए यह जानना भी अत्यंत आवश्यक है कि वर्तमान समाज में वे कौन कौन सी भ्रांतियॉ फैली हुई है जिनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है तथा वे सिर्फ घृणित मानसिकता की उपज है।

भारत में बडे पैमाने पर वैश्यावृत्ति होती है जो कि एचआईवी/ एड्स होने का भारत में सबसे महत्वपूर्ण कारण है। हालांकि भारत मे वैश्यावृत्ति पर कानूनी रूप से पूरी तरह से पाबंदी है किंतु फिर भी भ्रष्ट राजनीति, कमजोर पुलिस प्रशासन तथा जनसाधारण में जागरूकता की कमी होने के कारण एड्स बड़ी आसानी से भारतीयों को अपना शिकार बना रहा है। मुख्य रूप से आपराधिक कार्यो में लिप्त पुरूष, मलीन बस्तियों में रहने वाले पुरूष, कम उम्र के बच्चे जिन्हें उचित देखभाल, समझाईश ना मिली हो वैश्याओं के संम्पर्क में आकर स्वंय को जानलेवा स्थिति में डाल लेते है। ग्रामों में निवासरत महिला–पुरूष जिनमें एचआईवी/एड्स से संम्बधित अधिक जानकारी ना हो, वह अपनी कामवासना में पागल होकर असुरक्षित यौन संम्बंधों का निर्माण कर बडी सुलभता से इस बीमारी का शिकार हो जाते है।

भारत में प्रथम एच.आई.वी पीड़ित व्यक्ति का मामला (केस) 1986 को तमिलनाडु के चेन्नई में पाया गया जो देह व्यापार में लिप्त था। और पता लगाने पर पता चला कि ये एक विदेशी पर्यटक के सम्पर्क में आने से पाया गया था। वर्ष 1987 में राष्ट्रीय एच.आई.वी. नियंत्रण कार्यक्रम की शुरूआत की गई, जिसने प्राथमिक रूप से खुन की जाँच और स्वास्थ्य शिक्षा पर विशेष ध्यान रखा। 2017 में NACO और UNAIDS के सामान्य अध्ययन के अनुसार भारत में लगभग 21 लाख 40 हजार लोग एच.आई.वी./एड्स से पीड़ित व्यक्ति पाये गये। मध्यप्रदेश में **मार्च 2019** तक 61372 एचआईवी एड्स पीड़ित व्यक्ति है। **(मध्यप्रदेश राज्य एड्स नियंत्रण समिति के अनुसार)**

मध्यप्रदेश के आदिवासी बाहुल्य जिलों में से झाबुआ एक विशेष पिछड़ा जिला है, इस जिले की अधिकांश जनसंख्या सामाजिक, आर्थिक, स्वास्थ्य समस्याओं से निरंतर ग्रसित जीवन–यापन कर रहे है। जिनमें से स्वास्थ्य समस्या एक प्रमुख समस्या है। इस क्षेत्र में लोग अज्ञानता, अस्वच्छता, परम्परागत मान्यतायें, सुखा, पलायन, शासकीय योजनाओं का ज्ञान नहीं होना इत्यादि महत्वपूर्ण कारणों से ही स्वास्थ्य समस्या से ग्रसित हो रहे हैं। झाबुआ जिला मध्यप्रदेश राज्य के पश्चिमी छोर पर स्थित है। जनगणना 2011 के अनुसार झाबुआ जिले की जनसंख्या 1024091 है। वर्तमान में **मार्च 2019** तक झाबुआ जिले में 533 लोग एड्स पीड़ित है। **(मध्यप्रदेश राज्य एड्स नियंत्रण समिति के अनुसार)**

वर्तमान झाबुआ जिले में अनेक स्वास्थ्य समस्या है। जिलें में अनेक बीमारी में से एक एच.आई.वी./एड्स भी व्याप्त है। पीड़ित लोगों में व्याप्त एच.आई.वी./एड्स का मुख्य कारण अशिक्षा, अजागरूकता एवं पलायन है। इस क्षेत्र में कृषि उत्पादन कम एवं बेरोजगारी के कारण यह लोग जीविका हेतु समीपस्थ गुजरात राज्य में कार्य हेतु पलायन करते है। जहाँ पर जनजातीय किशोरी, महिलाओं को कुछ उच्च वर्गो के द्वारा शोषण किया, जाता है, एवं जनजातीय यूवक–यूवतियों में असुरक्षित यौन क्रिया द्वारा भी यह रोग फैल रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. एच.आई.वी. एड्स ग्रसित व्यक्तियों पर बीमारियों के कारण हुये मानसिक आघात तथा समाज द्वारा लगाये गये कलंक की प्रकृति एवं प्रभावों का अध्ययन करना।
2. एच.आई.वी एड्स से ग्रसित व्यक्तियों में बीमारी के कारण स्वयं के प्रति अविश्वसनीयता की स्थिति एवं परिणामों का अध्ययन करना।
3. एच.आई.वी. एड्स ग्रसित व्यक्तियों के उपचार हेतु उपलब्ध सामाजिक पूर्नवास तथा चिकित्सा सुविधायों के प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
4. एच.आई.वी. एड्स ग्रसित व्यक्तियों में तेज गति से फैल रही बीमारी तथा उसके शारिरिक दुष्प्रभाव पर रोकथाम करने में परिवार तथा समाज की भूमिका का अध्ययन करना।
5. एड्स ग्रसित व्यक्तियों के उपचार में व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता की प्रभावी भूमिका एवं हस्तक्षेप के लिए सूझाव प्रस्तूत करना।

शोध प्रविधि –

अध्ययन क्षेत्र – मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में अशिक्षा, गरीबी तथा

* शोधार्थी (समाजकार्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

बेरोजगारी की समस्या से ग्रसित अधिकांश जनसंख्या रोजगार के लिए अन्य राज्यों में पलायन करती है। अत: नियमित पलायन के कारण झाबूआ जिला एड़स जैसी बीमारियों के फैलने के लिए अति संवेदनशील है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2014 में कुल 353 व्यक्ति एड़स से ग्रसित है। ऐसे व्यक्तियों की संख्या में प्रतिवर्ष इजाफा ही हो रहा है। अत: यह तथ्य को ध्यान में रखते हुये शोध हेतु झाबुआ जिले को अध्ययन क्षेत्र स्वरूप चयनित किया गया है।

निष्कर्ष – एड्स से ग्रसित व्यक्तियों की सामाजिक एवं मानसिक स्थिति :

1. कुल उत्तरदाताओं में सबसे अधिक बीमारी से ग्रसित अनुसूचित जनजाति एवं पिछडा वर्ग से है। उसके बाद सामान्य तथा अनुसूचित जाति के लोग है।
2. पुरूषों के साथ ही महिलाओं में भी एड्स जैसी समस्या समान रूप से हो रही है। अत: महिला–पुरूष सभी के लिए अध्ययन करना आवश्यक है।
3. कुल उत्तरदाताओं में सबसे अधिक 36 प्रतिशत 41 से 50 आयु वर्ग के है। 33.3 प्रतिशत 31 से 40 तथा 28 प्रतिशत उत्तरदाता 21 से 30 वर्ष के है। 2.7 प्रतिशत उत्तरदाता 51 से 60 वर्ष के है।
4. 63.3 प्रतिशत व्यक्तियों को एड्स के बारे में जानते है तो शेष 36.7 प्रतिशत को पूर्ण जानकारी नहीं है परंतु एड्स के संबंध में कुछ–कुछ पता है।
5. आधे से ज्यादा लोगों को एड्स बीमारी के बारे में प्राथमिक ज्ञान है तथा एक तिहाई के करीब लोगो को सिर्फ इसके बारे मे कुछ ही जानकारी पता है अर्थात उनके पास कोई विस्तृत जानकारी का अभाव है।
6. 36 प्रतिशत से अधिक व्यक्ति किसी प्राथमिक जानकारी के ही अपना जीवन निर्वाह कर रहे है अत: ऐसे लोग अनजाने में ही एचआईवी एड्स जैसी बीमारियों के संम्पर्क में आ जाते है।

अशिक्षित, रूढीवादी तथा घृणित विचारधारा के कारण समाज के कुछ लोग इस प्रकार की बीमारी से पीडित रोगीयों से सामान्य से अलग व्यवहार करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आहुआ राम (1994), 'सामाजिक समस्याएं', रावत पब्लिकेशन, जवाहर नगर, जयपुर।
2. ओझा एन. एम (2005),'भारत की सामाजिक समस्याऐं', रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. गुप्ता एम. एल., शर्मा डी. डी. (2010) ,'भारतीय सामाजिक समस्याएं', साहित्य भवन, पब्लिकेशन आगरा।
4. आहुजा राम, (2008), 'सामाजिक समस्या, विवेक प्रकाशन', नई दिल्ली।
5. दुबे श्यामचरण (2005),'भारत में सामाजिक समस्याएँ', नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया नई दिल्ली।
6. जैन राजेन्द्र (2008),'झाबुआ के भिलों की संस्कृति', मानसी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. जैन राजेन्द्र (2008), 'झाबुआ के भिलों की संस्कृति', मानसी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

****

बालकों की शालापूर्व शिक्षा में आँगनवाड़ी केन्द्र एवं प्ले स्कूलों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. बी. के. गुप्ता*

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध लेख उत्तर प्रदेश के बाराबंकी क्षेत्र के आँगनवाड़ी केन्द्रों और प्ले स्कूलों पर किए गए अध्ययन से जुड़ा है। पूर्व-प्राथमिक शिक्षा और शुरुआती प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों की भागीदारी अस्थिर और परिवर्तनशील है। जरुरी नहीं है कि यह भागीदारी नीतिगत दस्तावेजों (बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 और राष्ट्रीय प्रारंभिक बाल्यावस्था की देखरेख एवं शिक्षा नीति 2013) द्वारा निर्धारित आयु आधारित दिशा का पालन करती है। कुछ राज्यों में चार वर्षीय बच्चे पहले से ही आँगनवाड़ी केन्द्र में हैं। वहीं, कुछ अन्य राज्यों में छ: से सात साल के बच्चों की एक बड़ी संख्या अब भी पूर्व-प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों में जा रही है। सभी राज्यों में बच्चों की भागीदारी अनियमित है। यह पाया गया कि अक्सर बच्चे पूर्व-प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों और प्राथमिक विद्यालयों के बीच अदला-बदली कर रहे होते हैं और आठ वर्ष की आयु तक आते-आते ही नामांकन स्थिर हो पाता है।

शाला पूर्व शिक्षा का पाठ्यक्रम – आँगनवाड़ी केन्द्र की संरचना, पाठ्यक्रम और प्रक्रियाएं इस अवधारणा के साथ बनाई जाती हैं कि बच्चे अपनी आयु के अनुसार और एक समान गति से सीखें। हालांकि, भागीदारी के विभिन्न तरीके यह दिखाते हैं कि यह मान्यताएं शुरुआती कक्षाओं की वास्तविक आयु संरचनाओं से शायद ही कभी मेल खाती हैं। परिणामस्वरूप, बच्चों के एक बड़े हिस्से से विकासात्मक तौर पर अनुपयुक्त पाठ्यक्रम में दक्षता हासिल करने की उम्मीद की जाती है। चार से पांच साल की उम्र में नियमित शाला-पूर्व शिक्षा में भागीदारी पांच साल की आयु में बच्चे की स्कूल की तैयारी पर काफी महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। अर्थात् पूर्व-प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता स्कूल की तैयारी को बेहतर बनाने वाले प्रमुख कारकों के तौर पर उभरती है। स्कूल की तैयारी का प्राथमिक शिक्षा के दौरान, खासकर गणित और भाषा सीखने की उपलब्धियों से महत्वपूर्ण सम्बन्ध है।

यूनिसेफ के अध्ययन – यूनिसेफ के अध्ययन के अनुसार औसत रूप से, 5 साल की उम्र में बच्चों की स्कूल की तैयारी का स्तर अपेक्षित स्तर से काफी कम था। अधिकांश बच्चे कम गुणवत्ता वाले ऐसे संस्थानों में जा रहे हैं, जो आयु के अनुसार उपयुक्त तरीकों, सामग्री और गतिविधियों का उपयोग करने में असफल होते हैं। इसलिए, बच्चे प्राथमिक विद्यालय के पाठ्यक्रम को सीखने के लिए आवश्यक संज्ञानात्मक, पूर्व-साक्षरता, पूर्व-संख्यात्मक कौशलों और अवधारणाओं में दक्षता प्राप्त किये बिना ही स्कूल में आ जाते हैं। बच्चे क्या कर सकते हैं और उनसे क्या करने की उम्मीद की जाती है, इनके बीच का अंतर काफी जल्दी सामने आ जाता है और बच्चों के एक कक्षा से दूसरी कक्षा में जाने के साथ यह अंतर तेज़ी से बढ़ता जाता है।

शाला पूर्व शिक्षा के मॉडल – सरकार द्वारा संचालित आंगनवाड़ी केन्द्र और प्ले स्कूल वर्तमान में भारत में उपलब्ध पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के दो प्रमुख मॉडल हैं। बच्चों का केवल एक छोटा सा हिस्सा ही अन्य विकल्पों, जैसे कि गैर-सरकारी संगठनों या धार्मिक या अन्य संस्थाओं द्वारा संचालित पूर्व-प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों में जाता है। आंगनवाड़ी केन्द्र और प्ले स्कूल कई मापदंडों पर काफी अलग हैं। जहां आंगनवाड़ी केन्द्र मुख्यत: पोषण या बच्चों की देखभाल करने वाले केन्द्रों की तरह काम कर रहे हैं, वहीं प्ले स्कूल विद्यालय का ही निचला विस्तार होते हैं। दोनों में से कोई भी मॉडल बच्चों को इस आयु में उनके सर्वागीण विकास के लिए जरुरी वातावरण और सहयोग नहीं प्रदान करता है। विशेषकर, नियोजित खेल के अवसर, जो सफल पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का बेहद महत्वपूर्ण घटक हैं, इन दोनों ही मॉडल्स में पूर्णत: अनुपस्थित हैं। दोनों प्रकार के पूर्व-प्राथमिक केन्द्रों में पूरा ध्यान पढ़ने, लिखने और गणित के औपचारिक शिक्षण पर केन्द्रित होता है।

अंतर्राष्ट्रीय शोध – पूर्व-प्राथमिक स्तर पर बच्चों के अनुभव प्राथमिक स्तर की शिक्षा में बच्चों के सीखने को प्रभावित करते हैं। कई अंतर्राष्ट्रीय शोध इस बात को दर्शाते हैं कि गुणवत्तापूर्ण पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का असर स्कूली शिक्षा के बाद तक बना रहता है। वर्तमान में केवल 6-14 साल की आयु के बच्चे शिक्षा का अधिकार अधिनियम के दायरे में आते हैं, इसलिए बच्चों को उनके मस्तिष्क के विकास के सबसे अहम् चरण में इस अधिकार से वंचित रखना शिक्षा के अच्छे आधार को पाने के उनके अधिकार का उल्लंघन है। वर्तमान में बहुत सी राज्य सरकारें बच्चों को छ: वर्ष की आयु से पहले भी प्राथमिक विद्यालय में प्रवेश की अनुमति देती हैं।

हाल के अनुसंधनों का जो सारांश स्मालेनस्की और शेफात्या ने दिया है उसके संकेत के अनुसार नाटकीय खेल के विकास से संज्ञानात्मक और सामाजिक विकास के अलावा स्कूल संबध कौशलों को भी लाभ पहुँचता है। उदाहरण के लिए शाब्दिक अभिव्यक्ति, शब्द-भण्डार, समझ, अवधान की अवधि, कल्पनाशीलता, एकाग्रता, आवेश पर नियंत्रण, जिज्ञासा, समस्या-समाधान की और अधिक युक्तियां, सहयोग, सहानुभूति और सामूहिक भागीदारी इनमें शामिल हैं। वाइगोत्स्कीवादियों ने उन क्रियातंत्रों की जांच की है जिनके द्वारा शालापूर्व शिक्षा विकास को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए मैन्यूल के और इस्तोमिना ने देखा है कि अधिगम की अन्य गतिविधियों की अपेक्षा खेल के दौरान बच्चों के मानसिक कौशल उच्चतर स्तर पर होते हैं। वाइगोत्स्की ने इसे निकट विकास क्षेत्र के उच्चतर स्तर की तरह पहचाना है। मैन्यूल के ने पाया कि बाकी की अपेक्षा खेल के समय बच्चों का आत्म-नियंत्रण उच्चतर स्तर पर होता है। एक लड़के को जब खेल में निगरानी रखने का काम दिया गया तो वह जितनी देर तक ध्यान को एकाग्र रखते हुए अपनी जगह पर टिका रहा उतनी देर तक वह शिक्षक द्वारा

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा) जे. एन. एम. पी. जी. कॉलेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

बताए काम पर ध्यान नहीं रख पाता। इस्तोमिना ने तुलना करके देखा कि प्रयोगशाला में एक समतुल्य स्थिति की अपेक्षा बच्चे शलापूर्व शिक्षा के समय कितनी चीजें याद रख पाते हैं। बच्चों को शब्दों की एक सूची याद करने के लिए दी गयी थी। मैन्यूल ने पाया कि नाटकीय खेल की स्थिति में बच्चों को ज्यादा संख्या में चीजें याद रहीं।

खेल-खेल में सीखना – शोधकर्ता इस बात से सहमत हैं कि बच्चे खेल द्वारा बहुत कुछ सीखते हैं और खेल से विकास को गति मिलती है। अध्ययनों से यह प्रमाणित होता है कि जिन बच्चों को खेलने के अवसर और प्रेरणा नहीं मिलते वे विकास के हर क्षेत्र में पिछड़ जाते हैं। अनाथालय और इसी प्रकार की संस्थाओं में रहने वाले बच्चों के अवलोकन द्वारा कुछ प्रमाण मिले हैं। इस प्रकार की सभी संस्थाएँ बच्चों को भोजन, आश्रय, शारीरिक देखभाल, कपड़ा और शिक्षा प्रदान करती हैं। परन्तु शोध से यह पता चलता है कि अधिकतर मामलों में यह संस्थाएँ अनुकूलतम विकास के लिए उचित वातावरण प्रदान नहीं कर पाती। प्राय: एक ही पालनकर्ता बहुत सारे बच्चों की देखभाल करती है और इस कारण हर बच्चे को पर्याप्त समय नहीं दे पाती। वहाँ न तो शिशुओं से कोई अतिरिक्त बात करता है, न उन्हें दुलारता है और न ही कोई उनसे खेलता है। ऐसे मौकों पर कम से कम अंत:क्रिया होती है। ऐसी स्थिति में पालनकर्ता और बालिका में परस्पर स्नेह का अभाव रहता है और बालिका अपने आप को भावात्मक रूप से सुरक्षित महसूस नहीं कर पाती। ऐसी कई संस्थाओं में यह भी देखा गया कि शिशुओं को जिन पालनों में लिटाया गया था वे चारों ओर से कपड़े से ढका गया था जिसके कारण शिशु पालने के बाहर कुछ नहीं देख पाते थे। बच्चों के पास पालने से लटके खिलौनों के अतिरिक्त कोई खिलौने नहीं थे और यह खिलौने भी इतनी दूर लटके हुए थे कि बच्चे इन तक पहुँच नहीं पाते थे। बच्चों का सारा दिन पालने में पड़े-पड़े बीतता था और उन्हें कुछ नया देखने, सुनने या छूने को नहीं मिलता था। अवलोकन में यह पाया गया कि इन बच्चों की संज्ञानात्मक, भाषा संबंधी और शारीरिक विकास की गति अन्य बच्चों की तुलना में धीमी थी।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. आँगनवाड़ी केन्द्र और प्ले स्कूल की सरंचना को जानना।
2. आँगनवाड़ी केन्द्र और प्ले स्कूल की सेवाओं के उपागम के स्तर का मूल्यांकन करना।

प्राक्कल्पनाएँ :

1. आँगनवाड़ी केन्द्रों के द्वारा टीकाकरण और पूरक पोषाहार की गतिविधियों पर अधिक जोर दिया जाता हैं।
2. प्ले स्कूलों में शालापूर्व शिक्षा की गतिविधियों को प्राथमिकता दी जाती हैं।

न्यादर्श – न्यादर्श हेतु उद्धेश्यपूर्ण निदर्शन की विधि को प्रयोग में लाया गया हैं जिसमें उत्तर प्रदेश के बाराबंकी के 5 आँगनवाड़ी केन्द्रों और 5 प्ले स्कूलों पर अध्ययन किया गया है।

तथ्य संकलन – प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु 4 बिन्दू लिकर्ट स्केल आधारित अर्धसहभागी अवलोकन अनुसूची तथा ग्रुप डिस्कशन प्रविधि का प्रयोग किया गया हैं जिसमें शालापूर्व शिक्षा की गतिविधि और सेवाओं के प्रदर्शन के अनुसार अंक गणना की प्रविधि को प्रयोग में लाया गया हैं। प्रदर्शन के अनुसार 1 का अंक भार 1, बिन्दू 2 का अंक भार 2, बिन्दू 3 का अंक भार 3 और बिन्दू 4 का अंक भार 4 रखा गया हैं। यह तथ्य संकलन आँगनवाड़ी केन्द्रों और प्ले स्कूलों पर बालकों की उपलब्धता के अनुसार किया गया हैं।

शालापूर्व शिक्षा का तुलनात्मक प्रदर्शन – सारणी संख्या 1 में प्ले स्कूल और आँगनवाड़ी केन्द्र की शलापूर्व शिक्षा के प्रदर्शन का गतिविधि अनुसार अंकों द्वारा तुलनात्मक स्थिति को दर्शया गया है जिसमें पाया गया कि आंगनवाड़ी केन्द्र ने स्वच्छता एवं स्वास्थ्य शिक्षा की गतिविधि में 2 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 4 अंक पाए है और आंगनवाड़ी केन्द्र ने सामाजिक विकास की गतिविधि में 1 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 3 अंक पाए है एवं मानसिक विकास की गतिविधि में आंगनवाड़ी केन्द्र ने 2 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 5 अंक पाए है तथा संज्ञानात्मक विकास की गतिविधि में आंगनवाड़ी केन्द्र ने 3 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 5 अंक पाए है जबकि शारीरिक विकास की गतिविधि में आंगनवाड़ी केन्द्र ने 2 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 4 अंक पाए है। अत: उक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि शलापूर्व शिक्षा की गतिविधियाँ आँगनवाड़ी की तुलना में प्ले स्कूलों में विधिवत दी जाती है।

सारणी 01 – शालापूर्व शिक्षा की गतिविधियों का प्रदर्शन

शालापूर्व शिक्षा की गतिविधि	प्रदर्शन	
	आँगनवाड़ी केन्द्र	प्ले स्कूल
	अंक	अंक
स्वच्छता एवं स्वास्थ्य शिक्षा	2	4
सामाजिक विकास	1	3
मानसिक विकास	2	5
संज्ञानात्मक विकास	3	5
शारीरिक विकास	2	4
कुल	10	21

अन्य गतिविधियों का स्तर

सारणी 02 – अन्य गतिविधियों का प्रदर्शन

शालापूर्व शिक्षा की गतिविधि	प्रदर्शन	
	आँगनवाड़ी केन्द्र	प्ले स्कूल
	अंक	अंक
टीकाकरण	5	1
स्वास्थ्य जाँच	5	1
पूरक पोषाहार	5	1
रेफरल सेवा	5	1
भ्रमण	3	4
कुल	23	8

सारणी संख्या 02 में प्ले स्कूल और आँगनवाड़ी केन्द्र की शलापूर्व शिक्षा के अतिरिक्त अन्य गतिविधियों के प्रदर्शन का अंकों द्वारा तुलनात्मक स्थिति को दर्शया गया है जिसमें पाया गया कि आंगनवाड़ी केन्द्र ने टीकाकरण में 5 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 1 अंक पाए है और आंगनवाड़ी केन्द्र ने स्वास्थ्य जाँच की गतिविधि में 5 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 1 अंक पाए है एवं पूरक पोषाहार की सेवा में आंगनवाड़ी केन्द्र ने 5 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 1 अंक पाए है तथा रेफरल सेवा में आंगनवाड़ी केन्द्र ने 5 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 1 अंक पाए है जबकि भ्रमण की गतिविधि में आंगनवाड़ी केन्द्र ने 3 अंक पाए है वहीं प्ले स्कूलों ने 4 अंक पाए है। अत: उक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि शलापूर्व शिक्षा की अतिरिक्त अन्य गतिविधियाँ आँगनवाड़ी केन्द्र की तुलना में प्ले स्कूलों पर सही स्तर पर नहीं दी जाती है।

निष्कर्ष :

1. आंगनवाड़ी केन्द्र की अपेक्षा प्ले स्कूलों में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य शिक्षा की गतिविधि का स्तर बेहतर है।

2. सामाजिक विकास की गतिविधि में प्ले स्कूल की तुलना में आंगनवाड़ी केन्द्र का प्रदर्शन अच्छा नहीं है।
3. मानसिक विकास की गतिविधि में आंगनवाड़ी केन्द्र तुलना में प्ले स्कूलों का प्रदर्शन अच्छा है।
4. संज्ञानात्मक विकास की गतिविधि में आंगनवाड़ी केन्द्र के तुनला में प्ले स्कूलों ने अच्छा प्रदर्शन किया है।
5. शारीरिक विकास की गतिविधि में प्ले स्कूलों की तुलना में आंगनवाड़ी केन्द्र ने कम अंक पाए है।
6. शालापूर्व शिक्षा की गतिविधि में आंगनवाड़ी केन्द्रों के पिछड़ने का प्रमुख कारण अन्य गतिविधियों में बेहतर प्रदर्शन का दबाव और काय अधिकता हैं।

सुझाव – शाला पूर्व शिक्षा के पाठ्यक्रम को विकास की इस बुनियादी अवस्था हेतु आवश्यक विशिष्ट विषय सामग्री और शिक्षण संबंधी जरूरतों को पूरा करने वाला होना चाहिए, जिसमें खेलकूद के अवसर व पूर्व–साक्षरता और पूर्व–संख्या के साथ ही बच्चों का सर्वागीण विकास शामिल हों। आधारभूत अवस्था में सहयोग देने के लिए उपयुक्त शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम बनाया जाए और प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के समकक्ष स्थिति वाले पूर्व–प्राथमिक शिक्षकों के कैडर का विकास किया जाए। राष्ट्रीय प्रारंभिक बाल्यावस्था देखरेख और शिक्षा नीति 2013 द्वारा अनुशंसित, आरंभिक बचपन की देखभाल और शिक्षा के लिए एक प्रभावी और गुणवत्तापूर्ण नियंत्रण या प्रमाणन प्रणाली का गठन किया जाना चाहिए। सरकारी, निजी और स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा संचालित हर तरह के पूर्व प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों को इसके दायरे में होना चाहिए, ताकि गुणवत्ता के मानकों और विकासात्मक तौर पर उपयुक्त तरीकों/कार्य प्रणाली के पालन को इन संवेदनशील वर्षो के दौरान सुनिश्चित किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Buysee, V.; P. W. Wesley (2005). Consultation in Early Childhood Settings. Baltimore: Paul H. Brookes Publishing. ISBN 978-1-55766-774-8.
2. Levin, H.M.; Schwartz, H.L. (2007). “What is the cost of a preschool program?”. National Center for the study of Privatization in Education. Symposium conducted at the meeting of the AEFA Annual Conference, Baltimore, Maryland.
3. Reeves, K. (2000). Preschool in the public schools. American Association of School Administrators. 1-9
4. Skinner, B. F. (1954). “The science of learning and the art of teaching”. Harvard Educational Review. 24 (2): 86–87.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Promotion of Culinary Tourism as a Destination Attraction in Nainital district - Uttrakhand region

Sundeep Singh Takuli* Dr. Yashwant Singh Rawal**

Abstract - Food plays an important role in attracting tourists to a particular destination because as it reflects a region's culture and lifestyle. Cuisine has a great impact on traveler's choice when choosing their final destination. A variety of businesses including farms, restaurants, or specialty food stores, cooking school, tour operators, breweries, wineries, historical attractions, religious monuments and many other businesses across the country have capitalized on their regions culturally unique cuisines to attract various tourist. Culinary of a destination can also be categorized as a part of cultural tourism. It is not only a basic need for tourist but also a cultural element that can positively present a destination. Food consumption can be used in the development of a destination image. In addition, culinary tourism is not only attracting the tourist, but also contributes to the social, economic and environmental development of that particular destination. This paper focus at the importance of the connection between food and tourism which cannot be ignored from any point of view. Each tourist destination of uttrakhand has different level of beauty that can attract tourist from different countries and various places thus the delicious food of uttrakhand which is also rich in medicinal values as it grow on high altitude and harsh climate can be used as the main attraction and promotional tool for the development of tourism in uttrakhand
Keywords: - culinary, Cuisines, Cultural, local Food, Tourism.

Introduction - The state is also known as the 'Dev Bhumi' or 'Land of God' because it houses various religious places that are regarded as the most sacred and propitious areas of devotion and pilgrimage. Uttarakhand was created by joining a number of districts from the Northwestern part of Uttar Pradesh and a portion of the Himalayan Mountain Range. The state is mostly famous for its scenic features and affluence of the Himalayas, the Tarai and the Bhabhar. The autonomous territory of Tibet is situated to the north of the state.

The name of the state was formally altered from Uttaranchal to Uttarakhand in 2007 and its capital is Dehradun The High Court of Uttarakhand is in Nainital another important city in the state. The two major industries in the state are handicrafts and handlooms . Tourism is now becoming the most important industry in uttrakhand , It is also famous for being the origin of the Chipko Movement or Chipko Andolan.

On 9 November 2000, it became a full-fledged state of India with the formal induction of a separate state government .The geography of Uttarakhand reveals that it is surrounded by Himachal Pradesh in the north-west and Uttar Pradesh in the south and shares its international borders with Nepal and China. The state is quite rich in natural resources and beauty,

The well known Himalayan peaks of Nanda Devi, Kedarnath, Trishul, Bandarpunch and Mt Kamet and the important glaciers like Gangotri, Pindari, Milam and Khatling are situated in Uttarakhand. Major rivers found in the state of uttrakhand are The Ganga, the Yamuna, Ramganga and Sharda, and some major ecological important places in uttrakhand are-

1. Nanda Devi National Park
2. Valley of Flowers
3. Gangotri
4. Govind National Park
5. Rajaji National Park
6. Kedarnath
7. Mussoorie
8. Binsar
9. Sanadi
10. Govind sanctuary
11. Ascod sanctuary

All these divisions support many rare plants and animal communities in uttrakhand in india ,

The American Culinary Traveller Report, 2013 published by the American travel market research firm Mandala Research has a few interesting findings:-

1. Travellers are most interested in local and authentic foods and culinary experiences that are different from those they can get at home.
2. Most travellers combine culinary activities with other activities, also participating in culture, heritage and nature-based activities.

*Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

3. Increasing reliance on reviews and recommendations of friends makes getting the word out through social media and other user content sources critical for destinations.
4. Various festival like nanda devi , phooldei, Harela etc, can also attract by serving various dishes and various regional cuisine ,
5. Foodies want to be educated when travelling. Eighty-three percent enjoy learning about the local culture and cuisine of the destinations they visit. And the same percentage says they will spend more money on food and drinks while travelling.

Objectives of the Study - The paper aims to focus on the impact of culinery tourism in regional and local development and conservation of culinary traditions that is mixed with the culture of uttrakhand. Focus has been made to make food popular as the guest will come as an destination attraction to consume those dishes like the other cuisines ,moreover focus has been made for those dishes who are on the edge of least consumption in comparison to other dishes, in the local area of Nainital district of uttrakhand

Methodology - The methodology which is used is explanatory in nature. It mainly involved secondary data collection. Secondary data has been collected from text book, research papers and websites. Some primary data source has been used from the information's gathered from interaction with the guest who come to Nainital district of uttrakhand ,

Uttrakhand India : Paradise Unexplored - Uttrakhand India is a paradise for tourist. Its enchanting hill, dancing rivers, roaring waterfalls, thick and dark forests, heavy rains during monsoon, innumerable varieties of flora and fauna, countless species of wild animals and plants, mysterious clouds, melodious folk music, thrilling dances and festivals, variety of many delicious dishes, handlooms and handicrafts ,and above all its green landscape attract people from different parts of the world. one of the constituent states of the region, an embodiment of natural beauty and grace, a true representative of the region, has always been at the centre stage of tourist attraction. The allowed blessings of nature have made tourism in uttrakhand essentially nature centric, despite the fact there are historical and religious places of tourist attraction.

Scope Of Culinary Tourism In Uttrakhand - In gastronomical point of view cuisine of India is as rich and diverse as its civilization. The scope of Uttrakhand India culinary tourism is immense and it has not yet carved a specialized segment in global culinary map because of its recognition as like other tourism. From Kashmir toKanyakumari, the cuisine of India is widespread .The Cuisine of India can be segregated in region wise and can be explored simultaneously. Each region cuisine has its own identity in the field of culinary art which are the hidden treasures of immediate aroma and flavor compared to other cuisines of the world that should become the forefront for tourist. The Tourism of Uttrakhand India has scopes to promote tourism through cuisines of each destination of the region as these are interlinked with each other by setting street side food stalls , mega food parks, theme restaurants, as well as food courts which caters the tourist the traditional local foods in an eco ambience. By showcasing the Uttrakhand food can attract million of tourist to the regions of Uttrakhand India because of its notional value and taste . Culinary Tour Packages can be arranged in a detailed manner so as to analyse the influence of both domestic and international tourist and their attachment towards to the cuisine of the particular region In uttrakhand ,

Future Trends - Target of culinary tourism is to experiences like the local cuisine. Interested tourist towords local cuisine can be a potentional consumers This would in turn bring in greater professionalism in all those involved directly and indirectly with the tourism machinery. That culinary tourism can be a major revenue earner for the states of the region can be presumed from the increased tourist footfalls in the region during the last few years. Foreign tourists inflow into Uttrakhand states will increase in coming future ,

Graph 1 (see in next page)

SWOT Analysis – The aroma of Uttrakhand culinary skill has reached foreign shores, attracting them in hordes to idyllic landscape of uttrakhand india. In a nutshell we can plot the Strength ,Weakness, Opportunities and Threats of Tourism Industry in the following manner:

Strength :

1. Global band.
2. Highly educated.
3. Good law and order.
4. Better infrastructure.
5. Segmented Tourist packages.

WEAKNESS :

1. Lack of proper solid waste management.
2. Over changing of services.
3. Distance from major markets.
4. Infrastructure issues with respect to transportation.
5 Natural disasters.

OPPORTUNITIES :

1. Culinery Tourism.
2. Medical Tourism.
3. Eco-Tourism.
4. Trade Opportunities of local products and goods.
5. Heritage Tourism.
6. River Tourism.

THREATS - Threats from other competitive states in India and natural disasters.

Conclusion - It can be concluded as Culinery Tourism has vast potential for generating employment and earning large sums of foreign exchange besides country's overall economic and social development. Tourism is an activity which is necessary for each individual for for overall development Culinery is bestly and experienced in India because in every hundred metres, the food dimension changes and a tourist can enjoy the different food with different experience which is nowhere found in the

world.Tourist are gradually pouring into the Uttrakhand but most states of the region are still faring below the national average and as such there is no space for complacency. Culinary tourism can be a major source of livelihood for the people and for this the culinary richness of the region needs to showcase effectively for the prospective tourist in discovering the richness of it one will discover the culture of the land. However, Culinery Tourism will keep growing ,create huge job opportunities in all the related sectors including small and medium scale businesses. In future Culinary Tourism will be the largest sector of Tourism industry in terms of tourism receipts, while developing countries will emerge as top most destinations due to their natural resources and cheap labour force.

References :-

1. https://en.wikipedia.org/wiki/Tourism_in_Uttarakhand
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Uttarakhand
3. http://uttarakhandtourism.gov.in/utdb/?q=contact-us
4. http://uttarakhandtourism.gov.in/
5. http://planningcommission.nic.in/plans/stateplan/sdr/sdr_uttarakhand1909.pdf
6. http://www.icar.org.in/Vision%202050%20VPKAS,%20Uttarakhand.pdf
7. Hall,C.M and Mitchell, R.(2001).Wine and food tourism.In Douglas,N.andDerret,R.(eds.) Special Interest Tourism: Context and Cases.John Wiley and Sons,Australia,Brisbane,pp.307-329
8. Hobsbawn,E.& Ranger,T(1983).The invention of tradition.Cambridge University Press.Cambridge.
9. Riley,M.(2000).What are the implications of tourism destination identity for food and beverage policy? Culture and cuisine in a changing global marketplace in a strategic questions.In R.Woods,marketplace in strategic questions.In R.Woods(Eds),food and Beverage Management(pp187-194)London:Butterworth Heinemann.
10. Jha, S.M. 2011. Tourism Marketing. Himalaya Publishing House: Mumbai, 238.
11. Achaya, K.T. 1998. A Historical Dictionary of Indian Food. Oxford University Press: New Delhi.

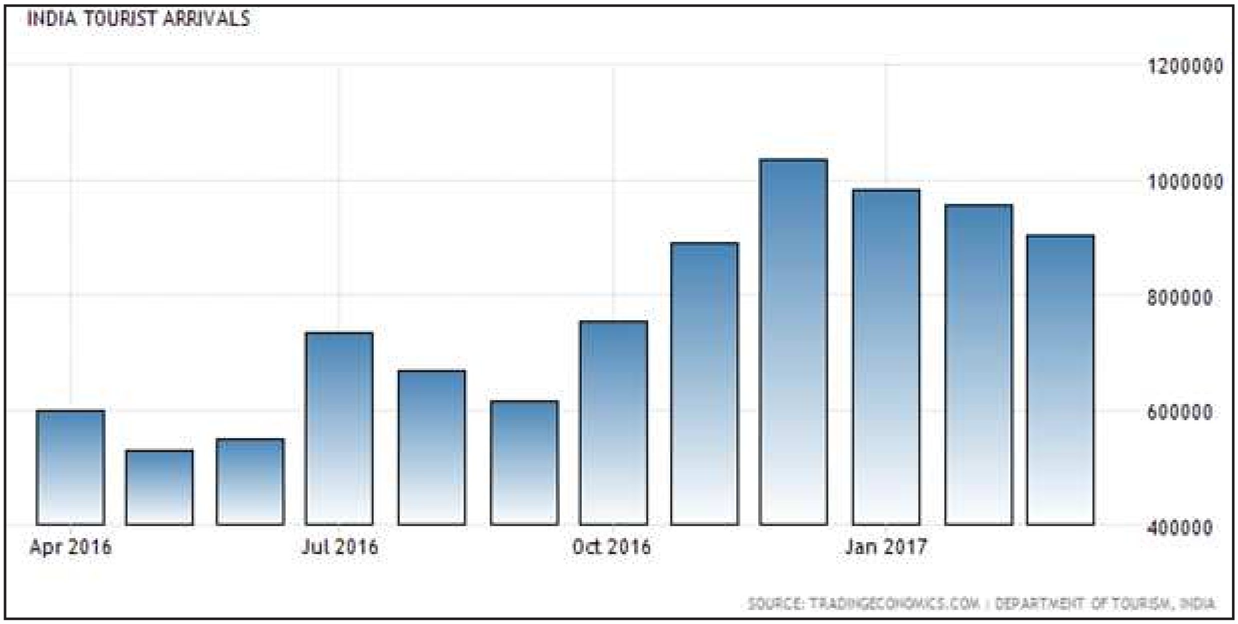

****

Drug Proving

Dr. Rajinder Girdhar* Dr. Parveen Kumar**

Abstract - Drug providing is the method of studying the scientific properties of the drug substance. The drug substance is administrated oraly different provers of both sexes and all ages and in different geographical areas in home drug proving. In modern medicine, the drug substance is injeeded directly in tissues of the animal. Homeopadhy uses healthy human beings or provers.
Key Words - Drug proving, Investigational proving substance, placebo, protocol.

Introduction - Drug Proving is a systematic & orderly process of investigation of the pathogenetric power (disease-curing power) of the medicine by administering it on the different healthy human beings.

Drug proving also termed as homeopathic pathenetic Trial (HPT) is a process in which drug substances are put into trial on healthy human volunteers so their pathogentic effects are observed, noted & compiled as the first stop to introduce the drug in the homoepathic malaria medica.

In sec 105 Dr. Hahneman says that drug proving is a process of 'acquiring a knowledge of instruments intended for the cure of the natural disease : It is a unguine process in homoepathy unlike conventional medicine where animal experimentation forms the basis of evaluation of drug pathogensis.

Dr. Hahneman developed the idea of testing of action iof drug substances on healthy individuals (Aphoris 106)

Hahnemann was not the first clinician who noted that the drug selected on the basis of their similarity to the disease to reach to cure. He cites previous experiences of clinicions like Hippocrates. Paracelsus stahl in whose writings he found that the most definite statements of Law of similors but none of these proceecded systematically to offer an experimental proof. While he was translating cullens meteria medica from. English to german; He come across with cullens remark on the curative power of cullens-bark in marsh ague and dectded for testing. Its positive effects on himself. He was surprised to note that the similarity of the sympotoms of ague with that products by cinchona-bark, then he formed a hypothesis in his mind that the specific. Curative power of a drug lies in its power of producing similar symptoms in a healthy individual i.e. disease producing power is the disease curative power. He continued researches and experiments and wrote about 50 drugs which specifically curred the diseased conditions the similar pictures of which they produced when administered to healthy individuals.

Rules of Drug proving -

1 **Selection of prover -** Prover means subject on whom a drug is proved. The proving must be done on human beings not on animals the medicines must be tested on healthy human. Individuals not on the sick. The medicines must be tested on both males & females.

2 Method of preparation of any proving (in 122) Indigenous plants are collected in fresh state by mixing their juice mixed With little alcohol. Exotic vegetables are prepared in powder or tincture form. Salts & Guns should be dissolved in water.

3 Drug administration. In a proving . a drug is administered till it meets the suscebtibility The specific capacity of the drug to affect health acts on the susceptibility in a prover to give rise to find picture in a drug proving .

4 **Recording -** The symptoms of the primary action of all medicines are to be observed Aphorisim 114 so in narcotics medicines the symptoms of the secondary action are to be recoreded (Sec. 109)

5 Precations to be taken during proving Regarding medicines medicine to be proven must be perfectly well known, taken is simple form. Single medicine should be proved at a time.

Regarding Prover - Those things which has many medicinal property should not be taken on same day not during all the time we went to observed the of effects of medicine. Diet during proving should be purely nutritiovs and simple and he must avoid all over exertion of mind & body & he must devote himself to carefull self observation.

Conslusion -The protocol aims at combining the possible methods to increase the quality and to minimize blas in the Sufficiently to evolve a pathogensis. Which can then further

*Principal, HMC, Abohar (Punjab) INDIA
**Director (Academic & Research) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

be subjected for appropriate Clinical response in patients. The protocol is open for discussion and readers and invited to send their commands and reviews on the protocol.

References :-

1. Lectures on orgonon of Medicine.
2. Lectures on Homeopathic Philosophy.
3. A study of Hahnemann's Organan of Medicine.

****

National Implementation of Human Rights

Dr. Gurpreet Singh* Dr. B. K. Yadav**

Introduction - Despite the availability of various enforcement mechanisms, human rights are still regularly violated, and the Universal Declaration of Human Rights remains an inspirational document in many ways. The negative impacts of globalization, such as trafficking, child labour and corruption constitute a threat to undermine many of the economic, social and cultural rights that have been pioneered in the past half-century. Both authoritarian and progressive regimes continue to undermine fundamental civil and political rights. Furthermore, genocide remains a real danger despite the steps taken in the wake of the Holocaust to prevent the reoccurrence of mass genocide. Some forms of human rights violations that were thought to have been eradicated long ago have, have developed in new forms, as the world has seen with the growth in human trafficking and bonded labour.

The international monitoring mechanisms are supplementary to national implementation. This means that they only come into force if individual nations are not able to ensure the protection of the rights themselves. In countries where protection is good, criticisms from the international bodies are only sporadic and cautious.

The state's responsibility with respect to human rights - The state's responsibility with respect to human rights can be broken down into its duty to ***respect***, ***protect***, and ***fulfil***. The duty to **respect** human rights is a negative obligation on the state, requiring the state not to violate the human rights of its citizens. The responsibility not to infringe on the human rights of citizens applies to all parts of the government, including the executive branches, the legislature, administrative bodies, the police force, and the military.

The duty to **protect** human rights is a positive obligation to protect individuals from human rights violations. This does not mean that a government is liable for all of the actions of private citizens, but in cases where a human rights violation by a private citizen can be traced to the failure of a government to perform its due diligence, the government will be found liable for its failure to protect human rights. States have been found liable for not protecting individuals for instance from murder and domestic violence when they have obtained reliable information prior to the incidents about the threats towards individuals, that they should have acted upon.

Domestic legislation and implementation - In most states, the judiciary is independent of the executive and the legislative branches of government. Because of this separation of powers, neither the executive nor the legislative branch have the authority to instruct the judiciary in individual cases. However, the legislative branch can decide the scope of the authority of the judiciary, for instance deciding what degree human rights are incorporated into national law.

Human rights are relevant to courts in many aspects. In criminal proceedings, the defendant may allege that he or she has been denied access to a lawyer during police interrogations, or that the procedural delays were excessive. In civil proceedings, compensation for loss of property or unlawful interventions by the childcare services can be claimed.

In most cases, human rights issues are only a minor part of a lawsuit. In addition, the human rights issues of a case are not always easily discernible during the procedure and judgment. It is also common that courts do not have the ability to institute proceedings *ex officio*, but instead depend on the parties to take a case to court. The arguments presented by the parties and the manners in which legal proceedings are instituted thus determine the further development of the case. As a consequence, many human rights issues are never taken to court.

Ombudsmen are officials that enjoy a significant degree of independence and usually have a mandate to deal with specific types of cases. Some ombudsmen are appointed by parliament and others by the government or by special interest organisations. While they do not have the authority to make binding decisions, because of their insight and independence, their statements are given considerable weight.

The public authorities are crucial for the implementation of human rights. Within the limits set by the legislative and executive branches, the authorities enjoy great latitude. Often the authorities do not refer to human rights in their decision-making, despite the relevance of the topic. An explanation for this mode of action is that legislators have

*Research Supervisor (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
**Research Scholar (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

already considered these aspects and aligned the scope of action to human rights requirements. In other cases, human rights are an integral part of the decision-making process, either because the legislator intended this, or because a completely new issue arises. When the public authorities contemplate a municipal ban on smoking for employees outside the workplace, they have to consider the provision that addresses the right to respect for private life.

A school that considers an application asking for exemption from religious instruction must consider the scope of the provision that protects a parent's right to secure their children a moral and religious education in accordance with their own convictions. The actions of the authorities may give rise to human rights issues, such as the treatment of prisoners, the rejection of a patient at a hospital, or the search of arrested persons.

NGOs in domestic monitoring - NGOs play an important role in human rights monitoring and frequently send representatives to the UN as observers to UN discussions on human rights. For example, the World Conference on Human Rights in Vienna in 1993 had hundreds of NGO participants. In addition, NGOs often have an active role in the periodic reporting processes of many treaty monitoring bodies.

The human rights treaty bodies consider the "shadow reports" of NGOs as a part of their periodic review of states parties, similarly to the procedure under the UPR mechanism. When a NGO submits a report on a state undergoing a periodic review, its report will often give a very different view of the situation in a particular state, than the state's own report. NGOs also publish their findings within a particular state, which can push governments to divulge more information on particular issues than what they might have done otherwise.

National Human Rights Institutions, commissions and ombudsmen - National Human Rights Institutions (NHRIs) are formal administrative bodies that address human rights issues within a particular country. The Office of the United Nations High Commissioner for Human Rights (OHCHR) and regional bodies have supported the establishment and the growth of NHRIs in various countries, and work closely with them to centre their work on core protection issues.

Challenges faced by human rights defenders - The primary responsibility to promote and protect human rights and fundamental freedoms lies with the state (Article 2 ICCPR). This implies an obligation on the state to protect human rights defenders, including attacks from non-state actors.

The OHCHR has recognized that not all human rights work necessarily places human rights defenders at risk, and that in some countries defenders are generally well protected from violations by both state and non-state actors. Human rights defenders nevertheless face various challenges, which depend not only on the regional, national, political, cultural or other contexts within which they work, but also on their own status and position in the society or country where they live or work.

Numerous human rights defenders, from every region of the world, continue to suffer clampdowns and violations of their human rights. Authorities in many countries consider the work of human rights defenders as a threat to established power structures. In many places, they continue to be the targets of executions, torture, physical violence, arbitrary arrest and detention, death threats, harassment and defamation, as well as suffering restrictions on their freedoms of movement, expression, association and assembly. Violations most commonly target either human rights defenders themselves or the organizations and mechanisms through which they work.

Human rights defenders can also be victims of false accusations, unfair trials and conviction, or vigorous follow-up from the police and courts on legal processes and charges. In addition, the introduction of new or revised legislation can in some instances be used by the state to directly or indirectly make the work of human rights defenders harder. In some cases, the "security legislation" that has been adopted by many countries since 9/11 2001, provides an example of this.

The UN Declaration on human rights defenders - The UN Declaration on human rights defenders was adopted in 1998, and is not, in itself, a legally binding instrument. However, it contains principles and rights that are based on human rights standards enshrined in other international instruments that are legally binding upon some, but not all, states, such as the ICCPR.

The declaration does not create new rights but rather confirms already existing rights, which also support and protect human rights defenders. It articulates existing rights in a way that makes it easier to apply them to the practical role and situation of human rights defenders, in addition to introducing new principles of a political nature. The UN Declaration on human rights defenders is available at -

The declaration is addressed not just to states, but to everyone. It also focuses both on the rights and the responsibility of all individuals, groups and organs of society to promote respect for, and foster knowledge, of human rights and fundamental freedoms at the national and international level. The declaration emphasises that everyone have duties to, and within, the community, and encourages all of us to be human rights defenders (Articles 10, 11 and 18).

However, it must be stressed that the prime responsibility lies with the individual state (Article 2 of the declaration). The state has a duty to protect, promote and fulfil all human rights and fundamental freedoms (in general). This also means that a state shall adopt such legislative, administrative and other steps as may be necessary to ensure that the rights and freedoms referred to in the declaration are effectively guaranteed. Some states have adopted parts of the declaration into their domestic legislation and others are currently working towards doing

this.

Firstly, women often become more visible as defenders. In other words, women defenders may arouse greater hostility than their male colleagues where they defy cultural, religious or social norms on femininity and the role of women in a particular country or society. Secondly, it is not unlikely that female defenders may face gender specific hostility, harassment and repression, ranging from, for instance, verbal abuse directed exclusively at women to sexual harassment and rape. Thirdly, human rights abuses perpetrated against women human rights defenders can have gender-specific consequences. For example, the sexual abuse and rape of a woman human rights defender can result in pregnancy and sexually transmitted diseases. The UN General Assembly passed a landmark resolution (68/181) in December 2013. The resolution was called: "Promotion of the Declaration on the Right and Responsibility of Individuals, Groups and Organs of Society to Promote and Protect Universally Recognized Human Rights and Fundamental Freedoms: protecting women human rights defenders", and gives attention to the challenges presented above, as well as building upon established obligations for states to protect, promote and fulfill the rights of women human rights defenders.

Reference :-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Currency alternatives to manage somewhat risk against foreign currency exchange

Manish Jain*

Abstract - Money options are subsidiary instruments that offer customers the decision of the elective that may be right for them, however not the commitment to make a positive exchange in the crucial cash couple. It gives the purchaser the adaptability whether he needs to make an alternative settlement. These are unmistakable from different subsidiaries, for example, advances and prospects in a way that offers a powerless shield against risk just as an upside profit by beneficial developments in principle trade rates. Since the individual has the privilege to buy or sell the remote money that isn't constrained on him that may permit the alternative that it might terminate on the off chance that it isn't performed however in the event that the trade rates move to support him, subsequently making profit that was not all that on the off chance that it was supported by cash fates. Be that as it may, the advantage isn't free in light of the fact that the money decisions above are generally more costly than other supporting instruments.
Keywords - adaptability, trade rates, call alternative, product, credit, choices.

Introduction - The advantage provided by options is adaptability in picking the swapping scale at which a money can be bought or sold dissimilar to advances or fates at which just one conversion scale exists. There are two sorts of decisions for cash, for example call and put. profit/loss from a choice – Profit or loss from financial decisions under various conditions is in a manner of speaking[1]. The frequency of mispricing for at - the-money options is higher, but the magnitude of mispricing for deep-in - the-money and in - the-money options is higher than for at - the-money and out of - the-money options. The frequency of mispricing is lower, but for thinly traded alternatives the magnitude of mispricing is greater. For options with maturity up to 30 days, the frequency of mispricing is higher, but the magnitude of mispricing is greater for options that mature beyond 30 days. For periods of elevated volatility, the average quantity of mispricing is greater than for periods of low and moderate volatility. Mispricing cases have continued to develop since the start of currency options trading, which is contrary to teaching behaviour expectations[2].

The second component of the premium is ' Extrinsic worth, 'mirroring every single other variable that decide a choice's cost, including expiry minute, foreseen basic money related unpredictability, transient loan costs, and swelling rates. Positive association between call premium and swapping scale as conversion scale rises additionally call premium ascents and reverse association between call premium and strike rate builds call premium abatements as strike rate rises[1]. There is a positive association between putting premium and strike rate, as strike rate rises, putting premium ascents too. What's more, there is a backwards connection between putting the premium and the conversion standard, as ascends in the swapping scale lead to a decrease in the premium. Call and Put choices are winding up increasingly significant as time to development ascends, as time rises it is because of hazard. There is a huge level of vulnerability about the money level and along these lines about the decision as unpredictability rises. The call's proprietor profits by the rate rise and the put focal points from the rate decays.

Hazard free financing cost: the distinction in loan fees between the underlying money sets used to acquire the FX forward rate and along these lines influences the expense of the choice. According to the monetary loan fee, the cost of the call choice increments and the estimation of the spot choice abatements. It is just conceivable to hold or drop cash decisions in India no doubt or relying upon exposures[3]. Banks in India are not allowed to offer alternative items without fundamental presentation and just European choices are allowed because of game plan. This restriction undermines the pertinence of various mixes of choices. The choice's expiry date ought not surpass the fundamental introduction development. Before going into choice arrangements, enterprises must sign an ISDA contract with banks.

Exchanging financial choices began during the 1970s and 1980s at Chicago, Philadelphia, and London's recorded prospects and alternatives markets. Exchanging focused uniquely on a minority of noteworthy trade costs in alternatives and fates choices. A hierarchical change occurred during the 1990s, when the main part of cash choices exchanging expanded and appeared as the financial framework to the burden of the organized trades.

*Research Scholar (Management) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

Once introduced in the remote trade advertise interbank district, the volume of choice exchanging burst. Additionally, money options began to be key off the total swapping scale term[4]. Exchanging unprecedented cash choices began to advance at a quick rate in the mid-1990s. Today, retailers normally supply an expansive scope of colourful money choices with two-way offer ask rates. How-ever, boundary decisions are the greatest hungers for striking money related decisions.

The market is lower, however not irrelevant, for bin choices, normal rate cash decisions, compound money choices, and quantum alternatives. The market for cash choices can appropriately profess to be the main really around the world, 24-hour choice market for the world. By exchanging amount, the financial alternative market is one of the greatest choice markets. It is hard to be precise about its general size as most money alternatives exchanging happens on the private interbank advertise. Be that as it may, in an investigation directed by the Bank for International Settlements (BIS), some unpleasant evaluations are recorded. The Bank for International Settlements (BIS) presented the Foreign Exchange and Over - The-Counter (OTC) Derivatives Markets twelfth Triennial Central Bank Survey[5].

The Triennial Survey, led at regular intervals since 1986, is the broadest wellspring of information about the size and structure of the business sectors for overall remote trade and OTC subsidiaries.

It looks to help national banks, different authorities and market members to screen slants in OTC markets and educate banters on OTC markets changes. In April 2016, the past examination demonstrated that remote trade spot exchanging and the business sectors for OTC subordinates arrived at the midpoint of $5.1 trillion every day. In excess of 1,200 money related foundations in 53 countries will add to the 2019 Triennial Survey[1.] In April 2019, budgetary organizations will gather information on remote trade turnover and OTC financing cost subsidiaries markets. Information on remote trade, loan fee, value, ware, credit and other OTC subsidiaries will be gathered toward the part of the arrangement remarkable notional sums and gross market esteems1. The BIS will distribute starter results for turnover toward the start of September 2019 and for outstanding amounts toward the start of November 2019. In December 2019, the last discoveries will be discharged.

The BIS arranges the Triennial Survey under the direction of the Markets Committee and the Global Financial System Committee. National banks included are looking over monetary organizations in their wards and submitting household totals to the BIS, which ascertains and distributes overall figures[6].

Conclusion - As important instruments in taking care of remote trade hazard, cash options have accomplished gathering. In light of their particular nature, they are generally utilized and bring a lot more extensive assortment of supporting choices. An agreement alternative in a general sense gives its holder the privilege to buy or sell a basic resource at a foreordained expense on a future date. In view of his desires and current market conditions, the alternative holder can either rehearse this right or book profit from purchasing and selling the fundamental at a great expense than the market cost or let the right pass on the off chance that he accepts a similar won't profit him. Like other subordinate instruments, choices are additionally tradable and they can be sold by the alternative holder before development to leave the market.

References :-

1. Coase,R.H (1937), "The nature of the firm", Economica, Vol. 4, No. 16,pp. 386-405
2. D. Duffle and W. Zaxne. The consumption-based capital asset pricing model. Econometrica, 57:1279-1297, 1989.
3. Dunning, John H. (1980), "Toward an Electric theory of international production:Some Empirical tests", Journal international business studies, Vol.11,No.1,9-31.
4. Dunning, John H. (2001), "The Electric Paradigm as an Envelope for Economic and Business Theories of MNE Activity", International Business Review, Vol. 9, 163 - 190.
5. Eicher Theo and Jong Woo Kang (2002), "Trade, Foreign Direct Investment or Acquisition: Optimal Entry Modes for Multinationals", journal of development economics, vol. 77(1), 207-228.
6. Himanshu, (2011): "Employment Trends in India: A Re-examination", Economic and Political Weekly, Vol. XLVI, No. 37, pp.43-59.

****

श्रवण हास के कारण बालकों की बुद्धि-लब्धि स्तर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (रीवा जिले के संदर्भ में)

जयलक्ष्मी मौंपाची* डॉ. आभा गोयल**

शोध सारांश – इस शोध कार्य का उद्देश्य श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालकों की बुद्धि लब्धि के बीच सार्थकता का अध्ययन करना है(रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)। इसमें हमने श्रवण हास के 100 ग्रामीण तथा 100 शहरी बालकों का चयन कर उनके बीच सार्थकता का अध्ययन किया जिसका परिणाम इस प्रकार है, ग्रामीण बालकों का M=69.09 तथा SD=8.34 तथा शहरी बालकों का M=74.95 तथा SD=8.63तथा तथा SE_D=1.31 t=4.47 p=<0.01 पाया गया, बुद्धि लब्धि स्तर ज्ञात करने के लिए सेंगुईन फार्म बोर्ड स्केल का उपयोग किया गया हैं।

प्रस्तावना – विकास एक सर्वाभौमिक एवं सतत् प्रक्रिया है जो जगत के प्रत्येक जीव में पाई जाती हैं, यह जीवन के प्रारम्भ अर्थात गर्भाधारण से जीवन के अन्त तक चलती रहती है। ऐसी कई समस्याएँ है जिनका प्रभाव बालक के सर्वागीण विकास पर पड़ता है इनमें से एक श्रवण हास समस्या है, जिसका प्रभाव बालक एवं बलिकाओं के बुद्धि स्तर के साथ-साथ अन्य प्रकार के विकास पर पड़ता है। सुनने की क्षमता में कमी को श्रवण हास कहते है। कान के तीन भाग होते है, और इन भागों में बीमारी होने या अन्य समस्याओं के कारण श्रवण क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। श्रवण हास मुख्यता: तीन प्रकार के होते है:- 1 प्रवाहकीय श्रवण हास 2. संवेदी स्नायविक श्रवण हास 3. मिश्रित श्रवण हास। कान के तीनों भाग में बीमारी, चोट इत्यादि के कारण श्रवण हास होता हैं।

स्टर्न (1914) के अनुसार 'नई परिस्थितियों में समायोजन की योग्यता ही बुद्धि है।' मानसिक आयु में शरीर आयु से भाग देने तथा प्राप्त संख्या में 100 से गुणा करके जो मान प्राप्त होता है, वह बुद्धि लब्धि कहलाता है। कुछ कारण जैसे, कि प्रजाति एवं लिंग, इत्यादि के कारण बुद्धि लब्धि स्तर प्रभाव पड़ता है। श्रवण हास की आडियोमेट्री मशीन से तथा बुद्धि लब्धि-स्तर को सेगुइन फार्म बोर्ड स्केल से ज्ञात किया जाता हैं।

शोध साहित्य का सर्वेक्षण – ब्रिल एवं रिचर्ड (1962) ने अपने अध्ययन में पाया कि बहरे छात्र जो अकादमिक डिप्लोमा, व्यावसायिक डिप्लोमा का प्रशिक्षण ले रहे है या प्रशिक्षण पूर्ण कर चुके है उनके बुद्धि लब्धि में उन बहरे छात्रों जो प्रशिक्षण नहीं ले रहे है से काफी भिन्नता मिला। अध्ययन में यह भी देखने को मिला कि एक बधिर छात्र को एक शैक्षणिक डिप्लोमा पाने के लिए बुद्धि लब्धि स्तर अच्छी तरह से औसत से ऊपर होना चाहिए।

लेवाइन एवं एडना एस. (1974) ने अपने अध्ययन में पाया कि बधिर बच्चे एवं वयस्कों के साथ काम कर रहे मनोवैज्ञानिक कर्मियों के अनुभवों अनुसार बहरे व्यक्तियों के साथ काम करने के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों का अभाव एक बड़ी समस्या हैं।

जरवेक, सुसान, यसेलडाइक एवं जेम्स ई0 (1975) अपने अध्ययन में पाया कि मनोवैज्ञानिक श्रवण बाधितों के बौद्धक आंकलन में उपलब्ध सामान्य साइकोमेट्रिक उपकरणों जैसे वेचश्लर, स्केल का भारी उपयोग करते है, लेकिन श्रवण बाधितों के बौद्धिक आंकलन में इन उपकरणों के कारण गलत व पक्षपातपूर्ण परिणाम मिल सकते है।

उद्देश्य :

- श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालकों की बुद्धि लब्धि के बीच सार्थकता का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

- श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालकों की बुद्धि लब्धि के मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर होगा।

प्रयोज्य – श्रवण हास के 100 ग्रामीण बालक तथा 100 शहरी बालकों का चयन याद्धचिछत प्रतिदर्श तकनीक द्वारा किया गया। ग्रामीण व शहरी बालकों की उम्र 6-12 वर्ष की ली गई हैं।

उपकरण – सेंगुइन फार्म बोर्ड स्केल का उपयोग ग्रामीण तथा शहरी बालकों की बुद्धि लब्धि ज्ञात करने के लिये किया गया।

कार्यविधि – श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालकों के चयन के बाद उनकी बुद्धि लब्धि ज्ञात किया गया। बुद्धि लब्धि ज्ञात करने के लिए सेंगुइन फार्म बोर्ड स्केल का उपयोग किया गया। ग्रामीण श्रवण हास के 100 बालक तथा शहरी श्रवण हास के 100 बालकों की बुद्धि लब्धि के बीच सार्थकता को देखा गया।

परिणाम

सारणी-1

ग्रामीण बालक तथा शहरी बालकों की बुद्धि लब्धि का मध्यमान

	N	M	SD	SE_D	t	P
ग्रामीण बालक	100	69.09	8.34	1.31	4.47	<0.01
शहरी बालक	100	74.95	8.63			

* शोधार्थी (गृहविज्ञान) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

ग्रामीण बालक तथा शहरी बालकों की बुद्धि लब्धि का मध्यमान

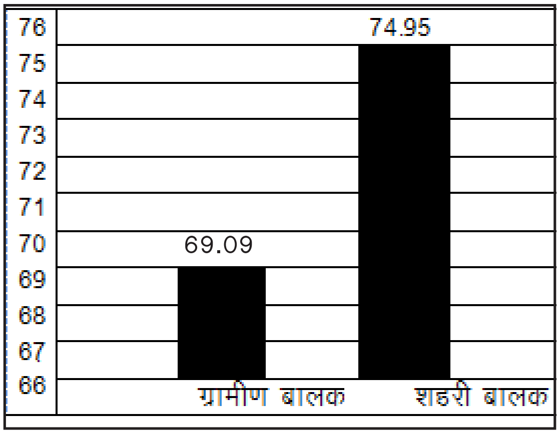

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बिशप, एच.एम. (1936) बधिर और कठोर श्रवण का परीक्षण आर्थर प्रदर्शन के साथ सेंट पॉल स्कूलों में बच्चे स्केल, राष्ट्रीय शिक्षा संघ की कार्यवाही 74,393.394
2. ब्रिल एवं रिचर्ड (1962) ने अपने अध्ययन में बहरे छात्र जो अकादमिक डिप्लोमा व्यावसायिक डिप्लोमा वाले छात्र।
3. Pintner आर और पैटरसर डी0जी0 (1915) विनेट पैमाने और श्रवण हास बालक का शैक्षिक मनोविज्ञान 6. 201-210 के जर्नल।
4. रीमर, जे.सी. (1921) के मानसिक और शैक्षिक मापन बहन जी, मनोवैज्ञानिक मोनोग्राफ 29 (132)
5. ब्रिजमैंन, ओ0 (1939) बधिर और मानसिक क्षमता का अनुमान बच्चे बहरा के अमेरिकी Annals , 84, 337-349

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Detection of Residues of Pollutants in Vegetables grow near PandarolNalain Burhanpur City (M.P.)

Sheetal Patel*

Abstract - Nitrate and sulphate is the chemical that may cause pollution.The aim of present work was to detect the residues of nitrite and sulphate in vegetables which grow beside Panda rolnala in Burhanpur city. In March 2015 to July2015, thirty samples were collected from Village farm and from beside Panda rolnala land, which land is used for fertilization of crops andwaste water is used for irrigation purpose. It was observed that, the nitrite concentration 39-50mg/kg was observed in spinach which is higher as compared to cabbage and Brinjal. The sulphate concentration 74.4-92.4mg/kg was observed in Brinjal which is higher as compared to spinach, cabbage. In all over the values of nitrite and sulphate in vegetables which grow near Panda rolnala are higher than the vegetables which are taken from other Village farm.
Key words - Waste water, Vegetables, Residues- Nitrite & Sulphateetc.

Introduction - Pollution issue is now among the most important issues that the world countries are interested in since this issue has a great effect an all life aspects and causes great threaten to plants environment and human health. The pollution problems range up after the industrial evolution. Nitrate, nitrate and sulphate chemical that may cause pollution. The acceptable daily intake of nitrate and nitrate set by European commission scientific committee for food is 3.7mg/kg body weight of nitrate (Ministry of Agriculture, 1994).

An estimated daily dose of nitrates consumed by man reacts 75-100ng of which 80-90% come from vegetable and 5-10% come from water (Tannenbaum and Wastra, 2000).

According to Gangoli (1994) Nitrate and nitrate found in plant, food as part of the nitrogen cycle. Vegetable are the original source of dietary however wide variation in nitrate level have been observed depending on the type of vegetable their source, condition of cultivation and storage. Globally human nitrogen production has increased rapidly since 1950 and currently exceeds nitrogen fixed by natural source by about 37% (Fields S. 2004). According to Umah*et al*.,(2003) drinking water and vegetable are the major source of nitrate consumed by human stomach. vegetables are the major source of the daily intake of nitrate by human beings supplying about 72-94% of the total intake part of this nitrate - N is converted to nitrate and N - nitroso compound that have determental effect on human health (Gupta *et al.,* 2008). The nitrate ion concentration is very important in public water supplies, because if it exceeds more than 45mg/l, it causes blue baby diseases (Methemoglobinemia) in children.(Bhadram*et. al.,*2004). High concentration of sulphate may induce diarrhea, laxative effect may occur.

The main source of nitrate comes from the waste water of industries and city drainage which mix in to the river. Huge amount of waste water is produced in the cities due to the increasing population. The indiscriminate disposal of such sewage and industrial waste water cause soil and water pollution. However, the waste water has been used in agriculture as a source of irrigation. Panda rolnalafolw from centre of the city Burhanpur.

Increasing population and inflation people grow crops of vegetable beside Pandarolnala water from it used for irrigation purpose. At that places elements like Nitrate (NO_3), Sulphate (SO_4) and Chloride (Cl) are assimilated and deposited. When these crops grow beside Panda rolnala these elements are assimilated by plants and deposited in leaves. When such contaminated vegetable consumed liable to get some problems associated with excessive consumption of these factors.

1. Material and Methods

- **Collection of Sample -** Three type of vegetable, crops were collected for this study :

Cabbage,Brinjal and Spinach. These crops are the most common cultivated crops in Burhanpur district in this season March to July 2015 samples were collected from other villeges farm and beside Panda rolnala. Which land is used for fertilization of crops and waste water is used for irrigation purpose.

- Thirty samples of these crops were collected. Fifteen fromVilleges farm and Fifteen from beside Panda rolnala.
- Samples were collected from behind Matrusevasadan and behind Sindhi basti and from other villages farm in Burhanpur district.

Samples were collected between March to July 2015

*HOD (Microbiology) Prof. Brijmohan Mishra Institute of Medical & Technical Sciences, Burhanpur (M.P.) INDIA

Table no. 1: Number of Samples collected from Villages farm and beside Panda rolnala.

Sr.	Type	From Village farm	Beside Panda rolnala
1	Cabbage	05	05
2	Spinach	05	05
3	Brinjal	05	05

Nitrite and Sulphate extraction - A fifty gram sample of the prepared crop was blended with 50ml distilled water in home blender. The mixture was filtered through whatman no.2 filter paper and the filtrated was passed through glass column fitted with a tape and filled with activated alumina in order to separate the green colour (Chlorophyll) and get a transparent solution. Water was used as eluting solvent. The eluted solution filtered using 0.45um filter paper in order to eliminate the turbidity and get a clear solution.

Quantitative determination of nitrite - with the AOAC official method 973.31 a portion of solution containing nitrite was transferred in to a 25ml volumetric flask. Then 2.5ml sulfanilamide was added, followed by addition of 2.5ml NAD. The volume was completed with water and left for 15 minutes in order to give time for colour development. The absorbance was measured at 545nm against a blank solution. The nitrite concentration prepared as follows 10,20,30 and 40ml of nitrite working standard solution were transferred in to 50ml volumetric flasks in order to prepare standard solution of 0.2, 0.4, 0.6 and 0.8 ppm $NaNo_2$. Then 2.5ml NAD regent. The volume were completed to the marks. The absorbance were measured after 15 minutes at 545nm. The plotting the absorbance vs to concentration.

Quantitative determination of sulphate:

i. In to 50ml filtered sample 10ml of NaclHcl solution, 10ml glycerol ethanol solution and 0.15gm barium chloride was added the mixture was stirred for about 1hrs. (Magnetic stirrer was used)

ii. The absorbance at 420nm on spectrophotometer simultaneously running distilled water bla

Table no.2:Nitrite Determination in Cabbage(Cab)

S.	Samples from Village farm	Nitrite Mg/l	Samples from beside Waste water	Nitrite mg/kg
1	$VCab_1$	4.0	$PCab_1$	19
2	$VCab_2$	3.0	$PCab_2$	20.25
3	$VCab_3$	3.5	$PCab_3$	21.0
4	$VCab_4$	2.5	$PCab_4$	45.25
5	$VCab_5$	3.0	$PCab_5$	32.75
Mean		3.2		27.65

V= Village

P= Panda rolnala

Table no. 3:Nitrite Determination in Spinach(Sp)

S.	Samples from Villege farm	Nitrite mg/kg	Samples from beside Waste water	Nitrite mg/kg
1	VSp_1	20	PSp_1	50
2	VSp_2	25	PSp_2	44
3	VSp_3	22	PSp_3	39
4	VSp_4	24	PSp_4	49
5	VSp_5	23	PSp_5	45
Mean		22.8		45.4

Table no. 4: Nitrite Determination in Brinjal(Br)

S.	Sample from Village farm	Nitrite mg/kg	Samples beside Tapti River	Nitrite mg/kg
1	VBr_1	5	PBr_1	39
2	VBr_2	10	PBr_2	37
3	VBr_3	10	PBr_3	40
4	VBr_4	11	PBr_4	39.5
5	VBr_5	09	PBr_5	42
Mean		09		39.5

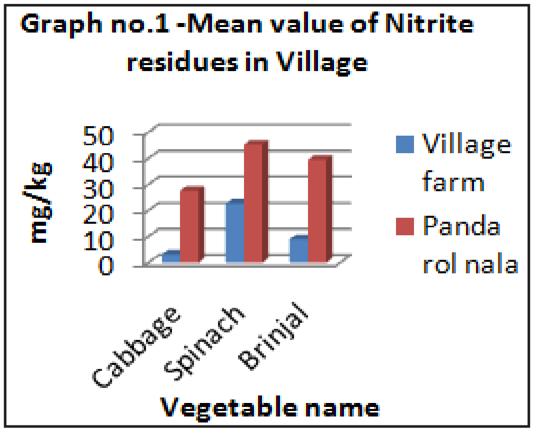

Table no.5:Sulphate Determination in Cabbage(Cab)

S.	Sample from Village farm	Sulphate mg/kg	Samples from beside Waste water	Sulphate mg/kg
1	$VCab_1$	10.0	$PCab_1$	22.4
2	$VCab_2$	12.3	$PCab_2$	34.4
3	$VCab_3$	8.4	$PCab_3$	14.4
4	$VCab_4$	18.9	$PCab_4$	30.4
5	$VCab_5$	20.0	$PCab_5$	34.4
Mean		13.92		27.2

Table no.6:Sulphate Determination in Spinach (Sp)

S.	Sample from Village farm	Sulphate mg/kg	Samples from beside Waste water	Sulphate mg/kg
1	VSp_1	25	PSp_1	48.5
2	VSp_2	21.8	PSp_2	49.0
3	VSp_3	15.0	PSp_3	44.4
4	VSp_4	16.5	PSp_4	46.9
5	VSp_5	20.0	PSp_5	50.0
Mean		19.66		47.76

Table no.7: Sulphate Determination in Brinjal(Br)

S.	Sample from Village farm	Sulphate mg/kg	Samples from beside Waste water	Sulphate mg/kg
1	VBr_1	25.8	TBr_1	90.4
2	VBr_2	30.0	TBr_2	74.4
3	VBr_3	54.0	TBr_3	84.4
4	VBr_4	25.0	TBr_4	92.4

5	VBr_5	20.5	TBr_5	76.4
Mean		31.06		83.6

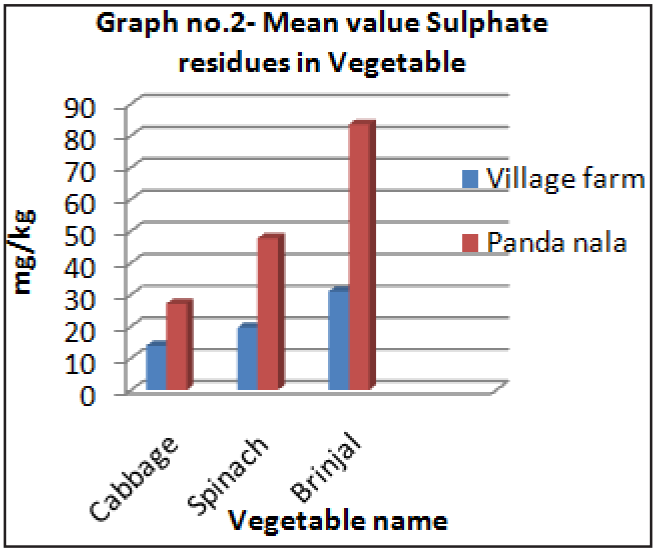

Result and Discussion - From table no.2 to 7 observed that the values of nitrite concentration in Cabbage which grow beside Panda rolnala in the range of19.0 to 45.25mg/kg and taken from villages farm which concentration was in the range of3-4mg/kg. Nitrite value in Spinach which was taken from Village farm was in the range of 20-25mg/kg and Spinach which grow beside Waste water nitrite value was in the range of 39-50mg/kg. According to U.K. Ministry of Agriculture Fisheries and Food (1992) Avon (1993) value of nitrite in spinach 26mg/kg, Above observation shows that high amount of nitrite residues in spinach which grow beside Panda rolnala. In case ofBrinjal also shows that which grow beside Waste water land which was nitrite value was in the range of 37-42mg/kg greater than the Brinjal which is taken from village farm that is 5-10mg/kg.

The value of sulphate in Cabbage which grow beside Waste water land was in the range of 14.4 - 34.4mg/kg which values are greater than Cabbage taken from village farm the values was in the range of 8.4-20.0mg/kg .Similar report shows that in Spinach and Brinjal also. The sulphate values in Spinach and Brinjal which grow beside Panda rolnala was in the range of 44.4 -50mg/kg, 72.4 - 92.4mg/kg respectively is greater than the Spinach and Brinjal which is taken from village farm are in the range of 15-25mg/kg,20.5-54mg/kg respectively.

Calculation - The vegetables grow beside waste water (Panda rolnala (residues) of nitrite and sulphate which are having very high alarming level of the residues. Although it is a very good source of water and highly fertile land therefore if yields good quality and quantity of vegetables but this is very dangerous for public health.

These days more accumulation of nitrite in the soil is more common due to chemical fertilizers and there are causing many problems in the society. The above experiment in lightness us about indiscriminate use of chemical fertilizers and irrigation with polluted water. The Farmers should to avoid growing crops which such polluted reservoirs.

References :-

1. Ministry of Agriculture and Fisheries and food (1994) Total diet study: Nitrite and Nitrite. Food surveillance information sheet no.137
2. Tannenbaum S. And Wastra P. (2000) : Handbook of water Analysis, edited by L.M. Nollet Marcel Dekker, New York, N.Y. USA.
3. Gangoli S.D., Vanden Brandt P.A., Feron V.J. et al, (1994) : “Nitrite, nitrite and N-nitroso compound” European journal of Pharmacology : 292(1) : 1-38
4. Fields S. (2004) : Global nitrogen : Cycling out of Control Environ Health prospect. 112, A557-A563.
5. WHO (1978) Nitrites, Nitrites and N-Nitroso compounds Geneva Environmental Health Criteria 5
6. Gupta S.K., Gupta R.C, Chhabra S.K., Eskiocak S., Gupta A.B., Gupta R. (2008) : Health issues related to N pollution in water and air Indian Agriculture, Environment and Health 94496-1477
7. AOAC Method 973.31 for determination of nitrite in caused meats samples and its subsequent quantification 19(4) 820-827.
8. U.K. Ministry of Agriculture and Fisheries and food (1992) : Nitrate, Nitrite and N-Nitroso compound in Food : Second Report, Food surveillance paper no. 32. Landon HMSO
9. Umah J.A., A.O. Ketiku and M.K.C Sivdhar (2003) : Nitrate, Nitrite and Ascorbic Acid content of commercial and Home-prepared complementary Infant Food. African journal of Biomedical Research, 6(1) : 15-20.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

आधुनिक भारत में सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार का योगदान

विजिया जायसवाल* डॉ. रविद्र सिंह **

शोध सारांश – अठारहवी और उन्नीसवीं सदी का कालखण्ड कई मायनों में भारत के लिए संक्रमण काल माना गया । इस दौरान एक और स्वतंत्रता के लिए राजनैतिक संघर्ष चल रहा था, वहीं दूसरी और समाज को संगठित करने के प्रयास हो रहे थे। समाज में फैली कुरीतियों के कारण हिन्दु समाज एवं धर्म को होने वाली क्षति को रोकने के लिए अभियान चलाए। उस परिदृश्य में एक और महापुरूष का पदार्पण हुआ, जिन्होने हिन्दवी स्वराज की कल्पना को आगे बढाया उनका नाम था डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार ये समाज के लिए अपना सबकुछ होम करने को लालायित रहते थे इनके विचार हमारे लिए मुल्यवान है समाजिक जीवन का ऐसा कोई पहलु नही ऐसी कोई समस्या नही, जिसका हल उनके विचारों में न मिलता हो उन्होने भारतवासियों को आपसी मतभेदो को भुलाकर एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में खडे रहने का आह्रान किया।

प्रस्तावना – देशकाल परिस्थितयों के अनुसार समाज में मनुष्य के व्यवहार में परिवर्तन आते रहे ये बदलाव कई कारणों से आए जैसे समाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना में परिवर्तन होना समाजिक संस्कार में जब बदलाव आता है तो परिवार की संरचना में कुछ विघटनकारी तत्व पैदा हो जाते है संस्कार शिक्षा एवं व्यवसाय समाज के चरित्र निर्माण के मुख्य आधार माने गये।

भारतीय हिन्दू समाज अलग अलग व्यक्तिगत जीवन में एकात्मता की भावना में लाभ के लिए सनातन परम्पराओं से विमुख होता गया जिससे समाजिक जीवन में एकात्मता की भावना कम होती गयी। पुरातन काल में बच्चों की शिक्षा गुरूकुल में हुआ करती थी लेकिन आधुनिक युग में गुरूकुल का स्थान अग्रेजी स्कूलों ने ले लिया। अग्रेजो ने स्कूल व कॉलेज खोले उसमे शिक्षा का माध्यम अग्रेजी को रखा। अग्रेजो ने हिन्दु धर्म में फैली समाजिक कुरीतियों का लाभ उठाते हुए अग्रेजी संस्कृति और ईसाईयत का प्रचार किया तथा भारतीय समाज में फूट डालो और शांसन करो की निति अपनाई । डॉ.हेडगेवार का पदार्पण जिस दौर में हुआ वह समय भारत में समाजिक विघटन का काल था हिन्दू संस्कृति और धार्मिक विशवासों और आकांक्षाओं पर विदेश मिशनों के लगातार हमले हो रहे थे। दिन रात अनेक प्रश्नों के समाधान को दूर करने के प्रयास कर हम गुलाम बने तो क्यों ? हिन्दू समाज में यह दीनता क्यों ? वह इतना निस्तेज क्यों ? वह अपने गौरव पूर्ण इतिहास के प्रति इतना उदासीन क्यों ? संगठित समाज के बजाय वर्गौ खण्डों में बटे जन समूह क्यों ? भाई बधूत्व के भाव की जगह आपस में वितृष्णा क्यों ? इन्ही प्रश्नों के आलोक में विस्तृत विश्लेषण कर शोधपत्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

डॉ. हेडगेवार जीवन परिचय – महाराष्ट्र प्रान्त के नागपुर महानगर में रहने वाले कर्मनिष्ठ बलिराम हेडगेवार के यहा रेवती माता के गर्भ से शुक्ल वर्ष प्रतिपदा प्रात: कालीन 1 अप्रेल 1889 ई.में पूत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम केशव रखा गया। ये बचपन से ही कुशागृ बुद्धि के कारण साहसी मनोवृत्ति के थे। उन्होने सन् 1925 के विश्वविख्यात काकोरी काण्ड में केशव चक्रवर्ती के नाम से भाग लिया । 27 सितम्बर 1925 दिन रविवार को पढने वाले कुछ छात्रों को साथ लेकर सरदार मोहिते के मकान में ' राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ' की स्थापना की सन् 1930 में गॉधी जी द्वारा गुजरात में नमक सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ किया 22 जुलाई 1930 को डॉ. हेडगेवार ने महाराष्ट्र के यवतमाल में सत्याग्रह प्रारम्भ किया जिसमें उन्हे नौ मास की सजा सुनायी गयी। डॉ.हेडगेवार ने अपना सारा ध्यान समाजिक कुरीतियों को दूर करने में लगाया उन्होने निष्कर्ष निकाला कि देश यानी समाज और समाज यानी उसका सबसे महत्पूर्ण घटक व्यक्ति , तो व्यक्ति का संस्कार ही समाज और फिर देश को उसके असली स्वरूप का न केवल भान कराएगा बल्कि धर्म और संस्कृति के पथ पर चलते हुए वैभवशाली और स्वाभिमानी भी बनाएगा।

डॉ.हेडगेवार के आधुनिक भारत में समाजिक कुरीतियों को दूर करने के प्रयास – डॉ.हेडगेवार नागपुर और उसके आसपास समाज में काम करते हुए 1922 में प्रान्ती काग्रेस में सयुक्त महासचिव का पद ग्रहण किया। उनकी वाणी में ओज था , उनके शब्द लोगो को आकर्षित करते थे और युवाओं में जोश जगाते थे। इस समय में हिन्दू समाज में जाति भेद भी एक समस्या थी। हिन्दू समाज जाति भेद के कारण शतखण्ड हो गया था भिन्न भिन्न जातियों ने अपने चारों और मजबूत दीवारें खडी कर ली थी जातियों में ऊँच – निच की भावना बडी उग्र थी सबसे बडा दुर्देव इस काल में अस्पृश्यता का था।[1] डॉ.हेडगेवार का मानना था कि समाज व्यवस्था के दोषो की चर्चा करते रहने से और उन पर टिप्पणी करते रहने से प्रत्यक्ष में कार्य सिद्ध नही होता , कार्य को प्रारम्भ करना पडता है इसीलिए हिन्दू समाज संघटित करने की दृष्टि से कुछ – कुछ एकदम साधारण विचार सामने रखा करते।

अस्पृश्यता – डॉ. हेडगेवार हिन्दू समाज के भीतर व्याप्त समाजिक दोषो सामन्ती अस्पृश्यता का निषेध करते रहे उनके जीवन में ऐसा दिखाई पडता है कि उन्होने रूढि भंजन के लिये कभी संघर्ष नही किया, जाति भेदों पर हमला नही किया ऐसा कुछ भी न कर वे अत्यन्त शांति पूर्वक हिन्दू संगठन करते रहे।[2]

*शोधार्थी (इतिहास) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

उनका कहना था – संसार का कोई भी व्यक्ति हिन्दू समाज की और तिरछी नजर से देख न सके इतने शक्तिशाली संगठन का निर्माण हमे करना है। क्या अस्प्रश्यता जाति भेद आदि बातो का डॉ. हेडगेवार के जीवन में आकर्षण था? नही क्योंकि अस्प्रश्यता, जाति भेद आदि बातो को तो डॉ.हेडगेवार ने जीवन में तिल मात्र भी स्थान नही दिया। उन्होने संघ की स्थापना कि और संघ में हर जाति के हिन्दुओं को जगह दी वे स्वयं सभी स्वयं सेवको को के घर जाते और उनके साथ भोजन करते। अपने व्यवहार द्वारा डॉ.हेडगेवार ने अनेक रूढियों को तोडा वे अस्प्रश्यता को नही मानते थे। उन्होने संघ के शिविरो का आयोजन किया तब विभिन्न जातियों के हिन्दु एक साथ रहते खाना पीना भी एक साथ ही करते थे।[3] कभी भी मन में प्रश्न आता है कि अस्प्रश्यता निर्मूलन करने के लिए डॉ. हेडगेवार का क्या तात्विक विचार रहा होगा। उनके जीवन का अध्ययन करने पर पता चलता है कोई तत्वविचार डॉ.हेडगेवार ने नही बताया फिर भी उन्होने स्वयं तथा संघ जीवन द्वारा अस्प्रश्यता का समूल नाश किया है विजयदशमी उत्सव के अवसर पर डॉ.हेडगेवार ने कहा था। संघ की कार्यपद्धति मे पथ – उपपंथ, जातिय मत भेद जैसी बाते उपस्थित हो ही नही सकती। संघ में से छूआछूत कभी की समाप्त हो गइ है क्योंकि संघ में सभी जातियों के लोग एक झण्डे के नीचे काम करते है।[4] डॉ. भीमराव अम्बेडकर संघ के शिविर में 1938 में पूना में आए थे उन्होने महार स्वयं सेवकों के साथ सम्मान एवं समानता का भाव देखकर आश्चर्य प्रकुट करते हुए कहा कि 'मैने इस तरह से अस्प्रश्यता समाप्त करने का कार्य पहले कभी नही देखा। महात्मा गॉधी ने वर्धा शिविर देखने के बाद यही बात कही थी।[5] डॉ. हेडगेवार समाजिक तौर पर अस्प्रश्यता का निषेध करते रहे। वह पूना के न्यू इंगलिश हाईस्कूल में अस्प्रश्यों के साथ सहभोज के आयोजको मेंसे एक थे। 22 अक्टूम्बर 1932 को इस स्कूल के छात्रों को सम्बोधित करते हुये उन्होने कहा कि साहस पूर्ण ढंग से अस्प्रश्यता का मुकाबला करे।[6]

महिला सुधार – डॉ. हेडगेवार महिलाओं को दया का पात्र नही बल्कि समानता एवं सम्मान का हकदार मानते थे। वह बाल विवाह के विरोधी एवं विधवा विवाह के समर्थक तो थे ही उन्होने य बेमेल विवाह य का भी विरोध किया था। तत्कालीन समाज में कम उम्र की लडकियों के साथ अधिक उम्र के दुल्हे के विवाह की कुप्रथा थी एक बार जब उन्हे ऐसे बेमेल विवाह की सूचना मिली तब उन्होने अपने सहयोगियों के साथ जा कर उस विवाह को रोका। उस लडकी की शादी समान उम्र के लडके से कराई। उनहोने महिलाओं के लिए 'रमणीय' शब्द के प्रयोग पर आपत्ति करते हुये देवी शब्द के प्रयोग पर बल दिया।[7] डॉ. हेडगेवार ने महिलाओं में आत्मविश्वास एवं हिम्मत पैदा करके उन्हे स्वतंत्र संगठन की नीव रखने के लिए प्रेरित किया था। डॉ.हेडगेवार महिलाओं की समाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक भूमिका के प्रति जागरूक थे। उन्होने महिलाओं के अधिकार से लेकर महिला संगठन तक उनकी सहायता की उन्हे जागरूक किया।

मुल्यांकन – अस्प्रश्यता बूरी है उसे समाप्त करना चाहिये ये बताकर डॉ.हेडगेवार रूके नही उन्होने व्यक्ति के आचरण को सर्वाधिक महत्व दिया। सारे हिन्दू समाज का संगठन करने की उनकी एक विशिष्ठ द्दष्टि थी। हिन्दू समाज के सामाजिक दोषो के प्रति उनका एक विचार था। वे किसी एक जाति विशेष का विचार नही करते वे किसी एक प्रदेश के हिन्दुओं का विचार नही करते थे। उनकी ऑखों के सामने आसेतु हिमालय फैला हुआ सारा हिन्दू समाज था। उन्हे इस विशाल समाज को संगठित करना था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. बाडे मोहन – तीन सरसंघ चालक प्र. 21
2. पंतगे रमेश – डॉ. हेडगेवार एक अनोखा नेतृत्व , सूरूचि प्रकाशन नई दिल्ली प्र. 48
3. पंतगे रमेश – डॉ. हेडगेवार एक अनोखा नेतृत्व , सुरूचि प्रकाशन नई दिल्ली प्र. 50
4. भिशीकर सी.पी. – केशव संघ निर्माण प्र. 116
5. सिन्हा राकेश – डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार पटियाला हाऊस नई दिल्ली ,प्रथम संस्करण , 2003 प्र.205
6. हितवाद – 27 अक्टूम्बर 1932
7. सिन्हा राकेश – डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2003 प्र. 207

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Cryptography (Technology used for Secure Online Data Sharing)

Syed Asif Ali*

Abstract - While using the internet and sharing the information, security has become a major issue. Everyone need to security for transferring their information or doing any online work. Encrypting and Decrypting data have recently been widely investigated and developed because here is a demand for a stronger encryption and decryption which is very hard to crack. **Cryptography** plays major roles to fulfilment these demands. Nowadays, many of researchers have proposed many of encryption and decryption algorithms such as AES, DES, RSA, and others. But most of the proposed algorithms encountered some problems such as lack of robustness and significant amount of time added to packet delay to maintain the security on the communication channel between the terminals. In this paper, the security goals were enhanced via "The easy way we can manage the Complex Encrypting and Decrypting Data" which maintains the security on the communication channels by making it difficult for attacker to predicate a pattern as well as speed of the encryption / decryption scheme.

Introduction - Cryptography is a Greek word. Which means "Secret Writing". It is an ancient art because it was used during war time for forming battle plans. The term to refer to the science and art of transforming massage to make them secure and immune to attacks is called "Cryptography ".

Similarly the data that can be read and understood without any special measures is called plaintext. The method of disguising plaintext in such a way as it hide its substance is called encryption. Encrypting plaintext results in unreadable gibberish called ciphertext. We use encryption to ensure that information is hidden from anyone for whom it is not intended, even those who can see the encrypted data. The process of reverting ciphertext to its original plaintext is called decryption.

Figure 1 illustrates this process (see in last page)

Data Encryption and Decryption. Encryption is the process of translating plain text data (plaintext) into something that appears to be random and meaningless (ciphertext). Decryption is the process of converting ciphertext back to plaintext. For different amount of data different type of processed were used like encryptingmore than a small amount of data, symmetric encryption is used.

A secure computing environment would not be complete without consideration of encryption technology. The term encryption refers to the practice of obscuring the meaning of a piece of information by encoding it in such a way that it can only be decoded, read and understood by people for whom the information is intended. It is the process of encoding data to prevent unauthorized parties from viewing or modifying it.

The use of simple codes to protect information can be traced back to the fifth century BC. As time has progressed, the methods by which information is protected have become more complex and more secure. Encryption can be used to provide high levels of security to network communication, e-mail, files stored on hard drives or floppy disks, and other information that requires protection.

The goal of this article is to present the reader with an introduction to the basics of encryption, its role in the small office/ home office environment and the benefits and drawbacks of encryption to the non-professional user who is concerned about information security.

Cryptography – Different meaning or cryptography

1. The science or study of the techniques of secret writing, esp code & cipher system.
2. The procedure, processes, method etc of making & using secret writing as code or cipher or ciphers.
3. Anything writing in secret code.

How does cryptography work?

The art of protecting information by transforming it (encrypting) in to an unreadable format called cipher text. Only those who possess a secret key can decipher (or decrypt) the message into plain text.

Encrypted message can sometime be broken by cryptography also called code breaking.Although modern cryptography techniques are virtually unbreakable.

A *cryptographic algorithm,* or cipher, is a mathematical function used in the encryption and decryption process. A cryptographic algorithm works in combination with a *key*

* Vice Principal & HOD (Computers) Prof. Brijmohan Mishra Institute of Medical and Technical Sciences, Burhanpur (M.P.) INDIA

— a word, number, or phrase — to encrypt the plaintext. The same plaintext encrypts to different ciphertext with different keys. The security of encrypted data is entirely dependent on two things: the strength of the cryptographic algorithm and the secrecy of the key.

A cryptographic algorithm, plus all possible keys and all the protocols that make it work comprise a *cryptosystem.* OpenPGP is a cryptosystem. Key management and conventional encryption Conventional encryption has benefits. It is very fast. It is especially useful for encrypting data that is not *going* anywhere. However, conventional encryption alone as a means for transmitting secure data can be quite expensive simply due to the difficulty of secure key distribution.

Recall a character from your favourite spy movie: the person with a locked briefcase handcuffed to his or her wrist. What is in the briefcase, anyway? It's probably not the missile launch code/ biotoxin formula/ invasion plan itself. It's the *key* that will decrypt the secret data.

For a sender and recipient to communicate securely using conventional encryption, they must agree upon a key and keep it secret between themselves. If they are in different physical locations, they must trust a courier, the Bat Phone, or some other secure communication medium to prevent the disclosure of the secret key during transmission. Anyone who overhears or intercepts the key in transit can later read, modify, and forge all information encrypted or authenticated with that key. From DES to Captain Midnight's Secret Decoder Ring, the persistent problem with conventional encryption is *key distribution:* how do you get the key to the recipient without someone intercepting it?

Component of cryptography:

1. Encrypt
2. Decrypt
3. Cipher
4. Plain text
5. Cipher text
6. Key

ENCRYPT: To alter the information using a code or mathematical algorithm to unauthorized readers.

Decrypt: Recovery of originalmessage from the encrypt data.

Cipher: Arithmetical symbol 0, a person of no important.

Plain text: The original message before transformed, are called plain text.

Cipher text: After the message is transformed is called cipher text.

Key:A key is number that the cipher, as an algorithm, operate on.

Encryption and there used: The process of conversion of plain text (the message) to cipher text (encoded message) is known as encryption.

Uses–

1. Encryption is used by Militaries &Government for secret communication.
2. Encryption used in many kind of civilian system like internet mobile telephone.

Decryption - The process of conversion to plaintext is known as decryption.

Use – The use of encryption & decryption are same are using together.

An "encryption algorithm" transform the plain text into "cipher text".

A "decryption algorithm" transform cipher text into "plain text".

The sender uses an encryption algorithm & the receiver uses a decryption algorithm.

In actual what is sender or receiver?

A- A is the person who need to send secure data. A is also called sender.

B- B is the receiver of the data. It is also called receiver.

C- C is the person, who somehow want to disturb the communication between A&B.

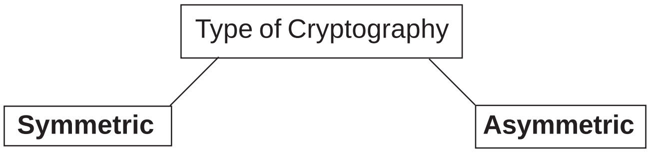

Figure 2. Typeof Crptography

Symmetric key System - Symmetric key System that use a single key that the sender and recipient, also call private key system.

Symmetric

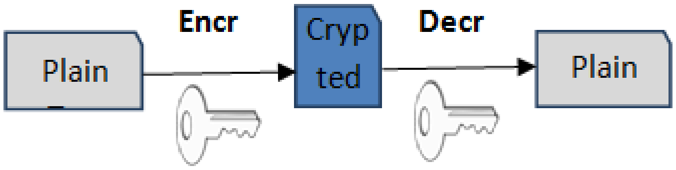

Figure 3. Symmetric typeof Encryptions

Asymmetric key System - Asymmetric key System that use a single key know to everyone and a private key known to only the recipient of message uses, call public key system.

Figure 4 (see in last page)

Keys and there types:-

There are three types of keys in cryptography.

1. Secrete key
2. Public key
3. Private key

The first secrete key, is the shared key used in symmetric key cryptography.

The second and third are public and private key used in asymmetric key cryptography.

Public Key Cryptography - The problems of key distribution are solved by *public key cryptography,* the concept of which was introduced by Whitfield Diffie and Martin Hellman in 1975. (There is now evidence that the British Secret Service invented it a few years before Diffie

and Hellman, but kept it a military secret — and did nothing with it. [J H Ellis: The Possibility of Secure Non-Secret Digital Encryption, CESG Report, January 1970])

Public key cryptography is an asymmetric scheme that uses a *pair* of keys for encryption: a *public key,* which encrypts data, and a corresponding *private,* or *secret key* for decryption. You publish your public key to the world while keeping your private key secret. Anyone with a copy of your public key can then encrypt information that only you can read. Even people you have never met.

It is computationally infeasible to deduce the private key from the public key. Anyone who has a public key can encrypt information but cannot decrypt it. Only the person who has the corresponding private key can decrypt the information.

Figure 5 (see in next page)

The primary benefit of public key cryptography is that it allows people who have no pre-existing security arrangement to exchange messages securely. The need for sender and receiver to share secret keys via some secure channel is eliminated; all communications involve only public keys, and no private key is ever transmitted or shared. Some examples of public-key cryptosystems are Elgamal (named for its inventor, Taher Elgamal), RSA (named for its inventors, Ron Rivest, Adi Shamir, and Leonard Adleman), Diffie-Hellman (named, you guessed it, for its inventors), and DSA, the Digital Signature Algorithm (invented by David Kravitz).

Advantage of cryptography:

1. The public key cryptography is increased security and convenience private key never need to transmitted or revealed to anyone.
2. The secret key System, by contrast, the secret key must be transmitted (either manually or through a communication channel) & there may be chance that enemy can discover the secret key during their transmitted.

Disadvantages of cryptography - There are so many advantages in cryptography also having some disadvantage.

A disadvantage of using public key cryptography for encryption is speed: there are popular secret – key encryption method. That are significantly faster than any currently available public key encryption method.

In some situation public key cryptography is not necessary & secret key cryptography alone is sufficient. They include environment where secure secret – key arrangement can take place.

Conclusion - Cryptography is an international threat stimulated by internet.Encryption challenges ability if law enforcement agencies to fight terrorism and crimeled social disorder.It can facilitate product that support information security requirement of global information infrastructure.

This paper introduced a new approach for complex encrypting and decrypting data. Although there have been many researchers on the cryptography, but most of the existing algorithms have several weaknesses either caused by low security level or increase the delay time due the design. The proposed algorithm have been tested against different known attacks and proved to be secure against them. Therefore, it can be consider as a good alternative to some applications because of the high level of security and average time needed to encrypt and decrypt a data using a proposed algorithm is much smaller than AES algorithm.

References :-

1. Cryptography and Information Security, By – V. K. Pachghare
2. Cryptography and Network Security: Principles and Practice, By - William Stallings
3. Network Security: A Hacker's Perspective, By - Ankit Fadia
4. Cryptography and Network Security, 3e [Kindle Edition] By - Atul Kahate
5. http://www.symantec.com/connect/articles/introduction-encryption
6. http://support.gpgtools.org/kb/how-to/introduction-to-cryptography
7. http://cryptography.informatik.fh-nuernberg.de/Introduction.pdf
8. http://www.hcidata.info/encryption.htm

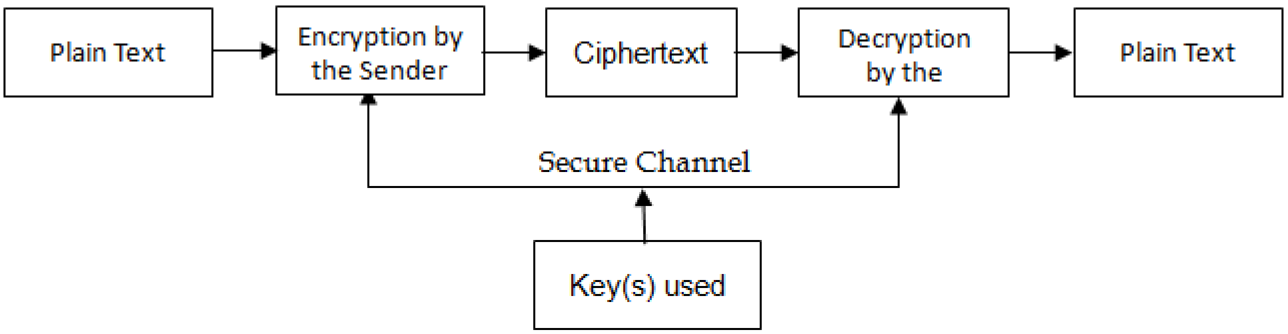

Figure 1. Process of secret communication

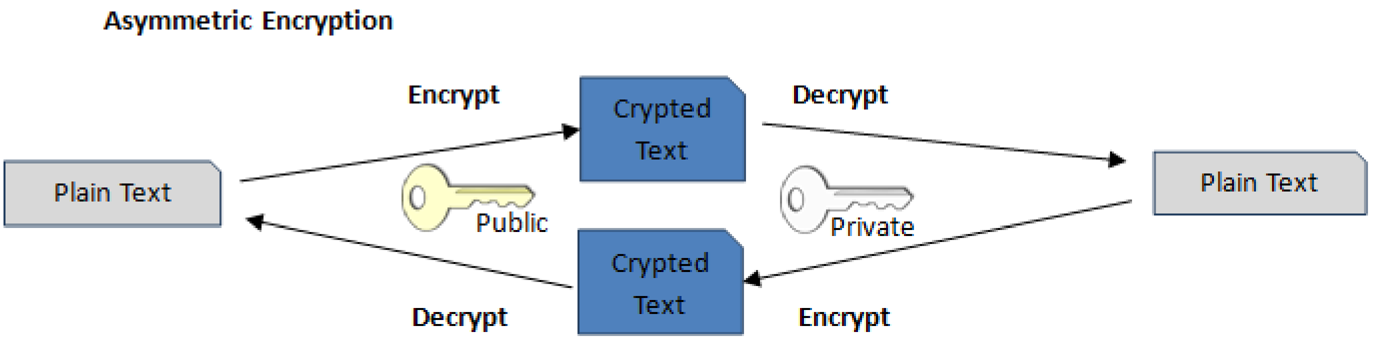

Figure 4. Asymmetric type of Encryptions

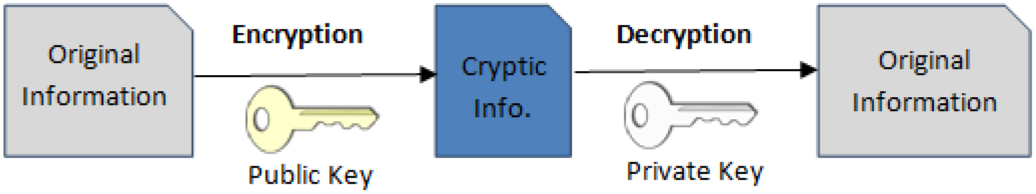

Figure5. Public key Cryptography

****

प्राणायाम योग के पथ की अमूल्य निधि

डॉ. दिनेश कुमार कौशल *

प्रस्तावना – प्राणायाम का अर्थ है प्राण का संयम। भारतीय दार्शनिकों के मतानुसार सारा जगत दो पदार्थों से निर्मित है। उनमें से एक का नाम है– आकाश। यह आकाश एक सर्वव्यापी, सर्वानुस्यूत सत्ता है। जिस किसी वस्तु का आकार है, जो वस्तु किसी वस्तुओं के मिश्रण से बनती है, वह इस आकाश से ही उत्पन्न हुई है। यह आकाश ही वायु में परिणित होता है, यही तरल पदार्थ का रूप धारण करता है, यही फिर ठोस आकार में बदल जाता है। यह आकाश ही सूर्य, पृथ्वी, तारा, धूमकेतु आदि में परिणित होता है। समस्त प्राणियों के शरीर, पशुओं के शरीर, उद्‌भिद आदि जितने रूप देखने को मिलते हैं, जिन वस्तुओं का हम इन्द्रियों के द्वारा अनुभव कर सकते हैं, यहाँ तक कि संसार में जो कुछ वस्तु है, सभी आकाश से ही उत्पन्न हुई हैं। सृष्टि के आदि में केवल आकाश रहता है फिर कल्प के अन्त में समस्त ठोस, तरल और वाष्पीय पदार्थ पुन: आकाश में लीन हो जाता है।

किस शक्ति के प्रभाव से आकाश का जगत के रूप में परिणाम होता है। इसका उत्तर है– प्राण की शक्ति से। जिस तरह आकाश इस जगत का कारण स्परूप अनन्त, सर्वव्यापी भौतिक पदार्थ है, प्राण भी उसी तरह जगत की उत्पत्ति की कारण स्वरूप अनन्त विक्षेपकारी शक्ति है। प्राण ही गति रूप में अभिव्यक्त हुआ है, यही गुरूत्वाकर्षण या चुम्बक शक्ति के रूप में अभिव्यक्त हो रहा है। विचार शक्ति से लेकर अति सामान्य बाह्य शक्ति तक सबकुछ प्राण का ही विकास है। बाह्य एवं अन्तर्जगत की समस्त शक्तियाँ जब अपनी मूल अवस्था में पहुँचती है तब उसी को प्राण कहते हैं।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में द्वितीयक अध्ययन सामाग्री के अनुसार प्राणायाम योग के पथ की अमूल्य निधि के रूप में अध्ययन किया गया है। इसके लिए मूलगन्थों, दर्शन से सम्बन्धित चिन्तन प्रणाली ज्ञानमीमांसा और तत्वमीमांसा आदि के द्वारा इस शोध पत्र का निर्माण किया गया है।

समस्या – आधुनिक समय में व्यक्ति में मानसिक विकृति, द्वेषु, लालच, अहंकार, नशीले पदार्थों का अनियंत्रित सेवन, हिंसा आदि व्याप्त है। इन समस्याओं की जड़ मानव के अन्दर विद्यमान हीन भावना के साथ कार्य न करने की प्रवृत्तिा है। इससे व्यक्ति कम परिश्रम में अधिक पैसों की लालच मानव को एक हिंसक प्राणी बना दिया है। इन सब की समस्या के विद्यमान होने का मूल कारण है कि व्यक्ति योग की चितन परम्परा के अनुसार आपने जीवन को नहीं जी रहा है।

उद्देश्य :

1. मानव कल्याण ही योग दर्शन में शोध पत्र तैयार करने का मूल उद्देश्य है।
2. अनेकों बिमारियों का समाधान योग के प्राणायाम क्रिया के माध्यम से सम्भव है।
3. योग पद्धति हमेंशा से जीवन दायिनी रही हैं।

समाधान – 'जब अस्ति और नास्ति कुछ भी न था, जब तम से तम आवृत्त था, तब क्या था? यह आकाश ही गति शून्य होकर अवस्थित था।'

प्राणायाम के सिद्ध होने पर मानो अनन्त शक्ति का द्वारा खुल जाता है। इसके सिद्ध हो जाने पर हम उस तत्व को जान लेते हैं जिसके जानने पर सब कुछ जाना जा सकता है–

'कस्मिन्नु भगवो विज्ञाने सर्वमदं विज्ञानं भवति।'

(ऐसी कौनसी वस्तु है जिसके जान लेने पर सब कुछ जाना जा सकता है।)

प्राणायाम का अर्थ – शारीरिक, मानसिक उन्नति के साथ ही साथ आध्यात्मिक उन्नति के लिए अष्टांग योग साधना में प्राणायाम का अत्यधिक महत्व है। प्राणायाम अष्टांग योग का चतुर्थ अंग है। प्राणायाम के विषय में घेरण्ड संहिता में वर्णन मिलता है। महर्षि पतंजलि के अनुसार–

'तस्मिन सति श्वास–प्रश्वासयोर्गविविच्छेद: प्राणायाम:'

अर्थात आसन के सिद्ध हो जाने पर स्वाभाविक रूप से श्वास–प्रश्वास की गतियों का विच्छेद करना ही प्राणायाम है।

प्राणायाम दो शब्दों के मेल से बना है– प्राण + आयाम। प्राण का अर्थ प्राण उर्जा से लिया गया है, जिस प्राण वायु के द्वारा उज्जीवित किया जाता है और आयाम का अर्थ रोकना या विच्छेद करना अर्थात श्वास–प्रश्वास को क्रम से विच्छेद करना ही प्राणायाम है। शास्त्रों में प्राणायाम के बारे में विभिन्न वर्णन मिलते हैं–

'प्राण विराट प्राण दृष्टि प्राण सर्व उपासते।
प्राण ही सूर्य चन्द्रमा प्राण माहु प्रजापते:।।'

प्राणायाम से पूर्व ध्यान देने योग्य बिन्दु – प्राणायाम करने से पूर्व विशेषकर चार बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। इसके बारे में कहा गया है–

'आदौ स्थान तथा कालं, मिताहारं तथो परम्।
नाड़िशुद्धिश्च तत: पश्चात प्राणायामं च साध्यते।।'

अर्थात स्थान, काल, मिताहार तथा नाड़ी शुद्धि चार अत्यावश्यक बातें हैं, जिनका ज्ञान होना योग साधक के लिए आवश्यक है।

1. स्थान – प्राणायाम के अभ्यास के पूर्व साधक का स्थान का चुनाव करना अति–आवश्यक माना गया है, क्योंकि समुचित स्थान न मिलने के कारण वह साधना में सफल नहीं हो सकता। स्थान के विषय में घेरण्य संहिता कहती है:–

'वापी कूपं तड़ागं च् प्राचीर मध्यवर्ती च्।
ना व्युच्चं नाति नीचं कुटीरं कीट वर्जितम्।।
सम्यग गोमय लित्तं च कुटीरं तज निर्मितम्।

* शिवाजी नगर,बी. डी. ए. कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) भारत

एवं स्थानेषु गुप्तेषु प्राणायामं साधयेत।।'

अर्थात जहाँ प्राणायाम का अभ्यास हो, वहाँ पर कुआँ, बावली, तालाब आदि तथा उसके साथ मध्य में दीवार हो। साधक का आश्रम चार दीवारी से घिरा हो। वहाँ की जगह न अधिक ऊँची तथा न अधिक नीची हो, कीटाणुओं से रहित हो, गाय के गोबर से लिपी हुई कुटिया हो, जो एकान्त शान्त स्थान में हो, ऐसे ही स्थान पर प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए, ऐसा घेरण्य ऋषि का मत है।

2. काल – 'हेमन्त शिशिरे ग्रीष्मे वर्षायाम चहितो तथा।
योगारम्भम् न कुर्वीत कृते योगिभिः रोगदः।।'

हेमन्त ऋतु, शिशिर ऋतु, ग्रीष्म ऋतु एवं वर्षा ऋतु में योगारम्भ या प्राणायाम का अभ्यास नहीं करना चाहिए। इस ऋतु में प्राणायाम का अभ्यास करने के लिए योग शास्त्रों में दो ऋतुओं का उल्लेख है–

'बसन्ते शरदि प्रोक्तं योगारम्भं समाचरेत।
तथा योगों भवेद सिद्धौ रोगान्मुक्तो भवेद ध्रुवम।।'

योगारम्भ का काल या प्राणायाम का अभ्यास बसन्त अथवा शरद में प्रारम्भ करना चाहिए। ऐसा करने से योगी योग में सिद्ध तथा रोगों से मुक्त हो जाता है।

3. मिताहार – योगाभ्यासी को योग मार्ग में अग्रसर होने के लिए सर्वप्रथम खाद्य ग्रहण के प्रति ध्यान देना आवश्यक है।

'अन्नेन पुरयेत अर्थ तोयेन तृतीयकम्।
उदरस्य चतुर्थांस संरक्षेद वायु पूरणे।।'

आमाशय को चार भागों में बाँटकर दो भागों को अन्न से भरना चाहिए तथा एक भाग को जल से एवं रिक्त एक भाग को वायु के आगमन के लिए रखना चाहिए।

4. नाड़ी शुद्धि – 'मलाकुलाषु नाड़ीषुमारूतौ नैव गच्छति।
प्राणायामं तथं सिद्धिः तत्वज्ञानं तथं भवेत्।।'

नाड़ी शुद्धि के लिए योगशास्त्र में वर्णन है कि जब तक नाड़ियों की शुद्धि नहीं होती, तब तक प्राण सुषुम्ना में प्रवेश नहीं कर सकता है जिससे तत्वज्ञान दुर्लभ हो जाता है। अतः प्राणायाम अभ्यास करने से पूर्ण नाड़ी शोधन करना अति आवश्यक है। आद्य शंकराचार्य ने भी नाड़ी शोधन पर बल दिया है।

प्राणायाम करते समय साधक को 14 बिन्दुओं पर ध्यान रखना आवश्यक है:–

1. आसन	2. पूरक	3. कुम्भक	4. रेचक
5. ईड़ानाड़ी	6. पिंग्ड़ला नाड़ी	7. सुषुम्ना नाड़ी	8. जालन्धर बंध
9. मूलबंध	10. उड्यिन बंध	11. षट्चक्र	12. कुण्डिलिनी
13. मात्रा	14. देश।		

महत्व :

1. 'ततः क्षीयते प्रकाशावरम्।'
प्राणायाम का अभ्यास करने से आवरण छूट जाता है।
2. 'चले वाते चले चित्तं निश्चले निश्चल भवेत्।
योगी स्थानुत्व मापनोति ततोः वायु निरोधयेत्।।'

प्राणायाम के निरंतर अभ्यास से मन की समस्त चंचलनायें समाप्त हो जाती है एवं मन को शक्ति मिलती है।

3. प्राणायाम के अभ्यास से प्राण शक्तिशाली एवं मन में अपार उर्जा प्राप्त होती है।

निष्कर्ष – प्राणायाम का उद्देश्य सुषुम्ना नाड़ी का द्वारा खोलकर स्नावयिक शक्ति प्रवाह को ऊर्ध्वमुखी बनाना। सुषुम्ना को खोलना ही योगी का उद्देश्य है। सुषुम्ना नाड़ी में ही समस्त चक्र स्थित होते हैं। रूपक की भाषा में इन्हें पद्यम कहते हैं। सबसे नीचे वाला चक्र सुषुम्ना के सबसे नीचे वाले भाग में अवस्थित है। उसका नाम है मूलाधार चक्र। इसके बाद है, स्वाधिष्ठान, तीसरा मणिपुर, चौथा– अनाहत, पाँचवा– विशुद्ध, छटाँ– आज्ञा और सातवाँ सहस्त्रार। यह सहस्त्रार चक्र सबसे ऊपर मस्तिष्क में स्थित है। सबसे नीचे वाला चक्र ही समस्त शक्ति का अधिष्ठान है और उस शक्ति को उस जगह से लेकर मस्तिष्टस्थ सर्वोच्च चक्र पर ले जाना होता है। मनुष्य देह में जितनी शक्तियाँ हैं, उनमें ओज सबसे उत्कृष्ट कोटि की शक्ति है। संसार में जिन–जिन संप्रदायों में बड़े–बड़े धर्मवीर हुये हैं, उन सभी ने ब्रम्हाचर्य पर जोर दिया है। हम प्राणायाम को शास्त्रोक्त तरीके से अभ्यास करते हुए अपने अन्दर छिपी उस अमूल्य निधि को प्राप्त कर सकते हैं, जिस पर हमारा अधिकार है और जो आत्मा का मूल स्वभाव है।

'तत्वमसि।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. घेरण्ड संहिता
2. पातंजलि योगसूत्र–।।2/49।।
3. ऋग्वेद संहिता ।।10/129।।
4. मुण्डकोपनिषद् ।।1/3।।

****

रामायण काल में परिणय संस्कार

डॉ. पंकज कुमार सिंह *

प्रस्तावना – मानव-जीवन में विवाह एक महत्वपूर्ण घटना हैं। विवाह-संस्कार पुरूषों की अपेक्षा नारी जीवन को अधिक प्रभावित करता है। इससे एक ओर नारी की मातृत्व-प्राप्ति की महती आकांक्षा की पूर्ति होती है तो दूसरी ओर वह पति पर आश्रित हो जाती है। यदि पति अनुकूल एवं पतिकुल उत्ताम कोटि का मिला तब तो नारी का जीवन सुखमय हो जाता है अन्यथा विपरीत होने पर उसे जीवन भर रो-रोक दिन काटना पड़ता है।

सृष्टि की प्रक्रिया को गतिशील रखने के लिए, यौवनोन्माद के आवेग को नियंत्रित रखने के लिए तथा मनुष्यों के सामाजिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए विवाह की प्रथा का प्रादुर्भाव हुआ।'विवाह' का सामान्य अर्थ है कन्या को पिता के घर से वर के घर लाना तथा पत्नी के रूप में रखना।पितृ-ऋण से उऋण होना तथा सृष्टि की प्रक्रिया में योगदान देना विवाह का प्रमुख प्रयोजन है। मनुष्य जाति के ऊपर देव ऋण, ऋषि ऋण एवं पितृ ऋण जन्मजात होते है।मनु ने कहा है कि इन तीनों ऋणों को चुका कर मन को मोक्ष में लगाना चाहिए-

ऋणानि त्रीधि अपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत्।

वेद वेदाओं के स्वाध्याय से ऋषि-ऋण का, यज्ञों के अनुष्ठान से देव-ऋण का एवं धर्मानुकूल पुत्रोत्पत्ति द्वारा पितृ-ऋण का निर्यातन होता है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि ऋण से मुक्ति के लिए पुत्र प्राप्ति अनिवार्य है। ऋग्वेद संहिता का कथन है कि विवाह ही मनुष्य को गृहस्थ बनाता है और देवताओं के निमित्त यज्ञ करने की योग्यता प्रदान करता है। देवताओं के पूजन में पति-पत्नी एक-दूसरे के सहायक माने गये है।तैत्तिरीय ब्राह्मण के अनुसार पत्नी रहित व्यक्ति यज्ञ नहीं कर सकता। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार पत्नी पतिके आधे भाग की पूर्ति करती है। मनु ने व्यक्तिगत, सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टि से विवाह को अत्यावश्यक बतलाया है। इन्होंने चारो आश्रमों मे सहिस्थ्य को ही सर्वश्रेष्ठ बतलाते हुए कहा है कि जैसे सभी नद-नदी समुद्र में आश्रय प्राप्त करते हैं, वैसे ही सभी आश्रम गृहस्थाश्रम में ही आश्रय पाते है। महाभारत काल में भी विवाह करके गृहस्थ धर्म का परिपालन आवश्यक तथा नितान्त श्रेयस्कर विधान था। फिर भी पुरूष के लिए, यदि वह चाहे तो उसे विवाह के बिना मोक्ष मार्ग को स्वीकार करने की स्वतंत्रता थी, किन्तु नारी के लिए विवाह अनिवार्य था। उस काल में यदि कोई कन्या विवाह-संस्कार के बिना रह जाती तो यह समझा जाता था कि उस कन्या में कोई दोष है। इसीलिए सुलभा से जनक ने कहा था-

अथवाऽपि स्वतंत्राऽसि स्वदोषेण केनचित्।

दीर्घतमस ऋषि ने मर्यादा स्थापित की थी कि पति को प्राप्त न करने वाली नारी आज से पाप की भगिनी होगी-

अपतिश्चापि या कन्या अनपत्या च या भवेत्।
तस्याजन्म वृथालोके गतिस्तस्या न विद्यते।।

महर्षि वाल्मीकि ने भी विवाह संस्कार को बड़ा महत्व प्रदान किया है। इनके अनुसार योग्य पत्नी से विवाह बिना, धार्मिक कर्मो एवं अनुष्ठानों को किए बिना तथा सन्तानहीन अवस्था में मनुष्य का मर जाना पापपूर्ण माना जाता था। यज्ञ में अर्द्धांगिनी का उपस्थित होना उतना ही अनिवार्य था जितना पुरूष का। इसलिए पत्नी को सहधर्मिणी कहा जाता था। वाल्मीकि का कथन है कि सम्पूर्ण धर्मो को जानने वाले प्रभावशाली राजा दशरथ पुत्र के लिए सदैव चिन्तित रहते थे क्योंकि उनके वंश को चलाने वाला कोई पुत्र नहीं था। श्रवण के माता-पिता ने पुत्र की मृत्यु के कारण अपने प्राणों को त्याग दिया था क्योंकि पुत्रहीन जीवन भारस्वरूप माना जाता था।

विवाह के प्रकार – मनुस्मृति में विवाह के आठ प्रकारों का उल्लेख है-

ब्राह्मो दैवस्तथैवार्ष प्राजापत्यस्तथाऽसुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः।

इनमें ब्राह्म, दैव, आर्श और प्राजापत्य विवाह को विहित एवं प्रशंसनीय तथा शेष को निम्न कोटि का माना गया है। यह मान्यता वैदिक काल से ही रही है। रामायण काल में स्वयंवर की प्रथा का प्रचलन होने पर भी विवाह का स्वरूप एवं महत्व प्राचीन शास्त्रीय मर्यादा के अनुकूल ही था।

विवाह योग्य अवस्था – भारतीय धर्मशास्त्रों में विवाह के योग्य हो जाने पर कन्यावरण का निर्देश दिया है। मनु ने कहा है कि तीस वर्ष के युवक को बारह वर्ष की कन्या से या चौबीस वर्ष के युवक को आठ वर्ष की बालिका से विवाह करना चाहिए। यद्यपि ऋतुधर्म के पूर्व कन्या की शादी कर देनी चाहिए, परन्तु यदि ऋतुधर्म होने के तीन वर्ष पर्यन्त उसकी शादी नहीं कर दी जाती तो कन्या स्वयं वर का वरण कर सकती है। महाभारतकार ने कहा है कि कन्या के वयस्क होने पर सदृश वर को कन्यादान न करने वाला पिता ब्रह्महत्या के पाप का भागी होता है। कन्या के ऋतुमती हो जाने पर उसे अविवाहित रखने वाले पिता ब्रह्महत्या का पाप लगता है।

रामायण के अध्ययन से अनुमान होता है कि उस समय वयःप्राप्त कन्या की ही शादी की जाती थी। कन्या के विवाह-योग्य हो जाने पर उसके माता-पिता चिन्तातुर हो जाते थे। अनुसूया के प्रति सीता की उक्ति से पता चलता है कि जब उसकी अवस्था विवाह के योग्य हो गयी थी तो उसके पिता चिन्तातुर रहने लगे थे। पुत्री के विवाह के वरपक्ष से सम्भावित अपमान से वे काफी भयभीत हो गये थे। बालकाण्ड में राजा जनक विश्वामित्र से कहते है कि भूमि-शोधन करते हुए मुझे जो कन्या (सीता)मिली थी , अब वह वय-प्राप्त हो चुकी है। उसका वरण करने के लिए कितने राजाओं ने मुझसे याचना की।जनक की इस उक्ति से विवाह के समय सीता की आयु का अनुमान लगाया जा सकता है। सीता विवाह के योग्य हो गयी थी। कुशनाभ की

* पीएच.डी. (संस्कृत विभाग) जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

कन्यायें विवाह से पूर्व पूर्ण यौवन को प्राप्त कर चुकी थी। तभी तो वायु देवता न उनके समक्ष प्रणय प्रस्ताव रखा था। राजर्षि तृणविन्दु की कन्या विवाह के पूर्व ही गर्भधारण करने के योग्य थी। तभी पुलस्त्य जी के दृष्टिपथ में आते ही वह गर्भवती हो गयी। शुक्र की ज्येष्ठा कन्या भी यौवन सम्पन्न थी। तभी तो उसे देखते ही उसके रूप सौन्दर्य पर राजा दण्ड मोहित हो गया था। इन उद्धरणों से अनुमान किया जा सकता है कि रामायणकाल में कन्या का विवाह सोलह वर्ष की अवस्था हो जाने पर ही किया जाता होगा।

वर-वधू के वरणीय गुण - वर के संबंध में अपेक्षित गुणों पर अनेक ग्रन्थों ने प्रकाश डाला है। आश्वलायन गृहसूत्र की सम्मति है कि बुद्धिमान वर से कन्या का वरण करना चाहिए। आपस्तम्ब उच्चकुल, सच्चरित्रता, स्वस्थता और विद्याधन आदि सभी गुणों को वर के लिए आवश्यक समझते है। स्मृति चन्द्रिका में यम वर के सात गुणों को विवाह के लिए आवश्यक मानते है- सत्परिवार, सच्चरित्रता, रूप, कीर्ति, विद्या, धन, इष्टमित्र और बन्धुओं का सहयोग। मनु, याज्ञवलक्य, आश्वलायन एवं चाणक्य समस्त गुणों में कुल की उच्चता पर बहुत जोर देते हैं। इस संबंध में महाकवि कालिदास का विचार भी बड़ा उत्ताम है।

कन्या के आवश्यक गुणों पर भी विभिन्न शास्त्रों में प्रकाश डाला गया है। कात्यायन ने वधू के लिए रूप, शील, चरित्र, स्वस्थता को आवश्यक बतलाया है।महाराज मनु ने निर्देश दिया है कि भूरे बालवाली, अधिकांगी , रूग्णा, रोमरहित, अधिक रोमयुक्त, अधिक बोलनेवाली तथा पीले नेत्रवाली कन्या से विवाह नहीं करना चाहिए। जिसके किसी अंग में दोष न हो, जिसका नाम सुन्दर और बोलने में सुखद हो ,जो गजगामिनी, सूक्ष्म लोम और केश, एवं छोटे दाँत और कोमल अंगवाली हो उससे विवाह करना चाहिए। मनु ने यह भी परामर्श दिया है कि श्रेष्ठकुल का सुन्दर सजातीय वर मिले तो कन्या के अवयस्क होने पर भी उसे यथाविधि ब्याह दें। ऋतुमती होने पर कन्या भले ही अजीवन कुमारी एवं पिता के घर में रहे किन्तु उसे गुणहीन वर को कभी न दें।भरद्वाज ने कहा है कि धन, सौन्दर्य, बुद्धिमता और परिवार -ये चार विचारणीय विषय हैं।यदि कन्या के पास ये चारों एक साथ उपलब्ध न हो तो सर्वप्रथम धन की उपेक्षा करनी चाहिए, तत्पश्चात् सौन्दर्य की।वैवाहिक संबंध की आवश्यक मान्यताओं पर महाभारतकार ने भी विचार किया है। इनकी सम्मति में जिन दो व्यक्तियों की धन एवं विद्या में समानता हो उन्हीं में मैत्री और विवाह संबंध हो सकते है। इन्होंने भी विवाह के लिए कुलीनता को प्रश्रय दिया है। महाभारत में वधू-वर की अनुरूपता और सदृशता को प्रधानता दी गयी है। वहाँ लिखा है कि शुद्ध व्रत और सदाचार से युक्त, कुलीन तथा रूपवती कन्या को पिता जिस योग्य वर को विवाह में देना चाहता है वह कन्या को भी पसन्द होना चाहिए। अपनी रूपवती कन्या के बड़ी हो जाने पर जो उसे अनुरूप वर को विवाह में नहीं देता, उस पिता को ब्रह्महत्या का पाप लगता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अथयदेव प्रजामिच्छेत्। तेन पितृभ्यह ऋणं जायते......। शत.ब्रा. 1/7/2/4
2. ऋग्वेद 5/3/2 , 5/28/3
3. अयज्ञियो वा एष योऽपत्नीकः। तै.ब्रा.2/2/2/6
4. शत.ब्रा. 5/2/1/10
5. उत्पादनमपत्यस्य जातस्य परिपालनम्।
   प्रत्यहं जोकयात्राणाः प्रत्यक्षं स्त्रीनिबन्धनम्।। मनु.9/27
6. सर्वेषामपि चैतेषां वेदस्मृतिविधानतः।
   गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठः स त्रीनैतान्बिभर्तिहि।।
   यथा नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
   तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्।। मनु. 6/88/89
7. महा. शान्ति. 37/28: 234/29 अनुशासन. 103/35
8. वही, शान्ति. 224/7:226/4-5, 262/19-20
9. वही, 308/64
10. महाभारत में नारी, पृ.141
11. वा.रा. 2/5/2
12. इयं सीता मम सुता सहधर्मचारिणी तव।।वही , 1/73/26
13. तस्य चैवं प्रभावस्य धर्मज्ञस्य महात्मनः।
    सुतार्थ तप्यमानस्य नासीद् वंशकरः सुतः।। वही, 1/8/1
14. मनु. 3/21
15. त्रिंशद्वर्षाद्वहेत्कन्यां हृयां द्वादशवार्षिकीम्।
    त्रयष्टवर्षोऽष्टवर्षा वा धर्म सीदति सत्वरः।। वही , मनु.9/94
16. त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत्र कुमार्यतुमती सती।
    ऊर्ध्वं तु कालादेतस्माद्विन्देत सदृशं पतिम्।। वही, 9/90 द्रष्टव्य महा. अनु.79/18
17. महा. अनु.63/9
18. वही, 55/4-5
19. पतिसंयोगसुलभं वयो दृष्टवा तु मे पिता। चिन्तामभ्यगमद् दीनो चित्तनाषादिवाधनः।।
    तां घर्षणामदूरस्थां संद्धष्वात्मनि पार्थिवः। चिन्तार्णव गतः पारं नासस्त्रादाप्लवो यथा।। वा.रा. 2/118/34-36
20. भूतलादुत्थिता सा तु व्यवर्धन ममात्मजा।। भूतलादुत्थितां तां तु वर्धमानं ममात्मजाम् ।।
    वरयामासुरागत्य राजानो मुनिपुड्.ग्व। वही, 1/66/14-16
21. अहं वः कामये सर्वा भाया र्मम भविष्यथ। मानुषस्त्यज्यतां भार्वो दीर्घमायुरवाप्स्यथ।। वही, 1/32/16
22. सा तु वेदश्रुंति ध्रूत्वा दृष्ट्वा वै तपसो निधिम्। अभवत् पाण्डुदेहा सा सुव्यजितंषरीरजा।। वही, 7/02/2017
23. कुतस्त्वमसि सुश्रोणि कस्य वासि सुता शुभे । पीडितोऽहमनड्.गेन पृष्छामि त्वां शुभानने।। वा.रा. 7/80/6 (द्रष्टव्य 7/80/4-8)
24. बुद्धिमते कन्यां प्रयच्छेत। आष गृह्य. 1/5/2
    बंधुशीललक्षणसम्पन्नः श्रृतवानरोज इतिवरसम्पत्। आप. गृह्य. 1/3/20
25. कुलं च शीलं च वपुर्यशष्च विद्यांच वितंव सनाथतां च।
    एतान्गुणान्सप्त परीक्ष्य देया कन्या बुधैः शेषमचिन्तनीयम्। यम-स्मृतिचंद्रिका, पृ. 78
26. सत्तमैरुत्तमैर्नित्यं संबन्धानां चरेत्सह। निनीषु : कुलमुत्कर्शमधमा नधामोस्त्यजेत्।। मनु. 4/244
27. याज्ञवलक्य स्मृति विवाहप्रकरण 3/54/55
28. कुलमग्रे परीक्षेत ये मातृतः पितृतष्चेति, यथोक्तं पुरस्तात्। आष्व. गृह्वा. 1/5/1
29. सत्कुले योजयेत्कन्यां पुत्रं विद्यासु योजयेत्। चा.नी.द. 3/3
30. कुमार . 5/72
31. उन्मत्तः पतितः कुष्ठी तथा षष्ठः स्वगोत्रणः। चक्षु श्रोत्रविहीनष्च तथापस्कारदूषित।

वरदोषा: स्मृता ह्सेते कन्यादोशाष्च कीर्तिता:।। स्मृतिचन्द्रिका, पृ. 1,59

32. मनु द 3/8 एवं 10
33. वही, 9/88-89
34. चतवारि विवाह कारणानि चितं रुपं प्रज्ञा वान्धवमिति। तानिवेत्सर्वाणि न शक्नुयाद्धित्तमुदस्येत्ततो रुपं प्रज्ञायां च तु बान्धवे न विवदन्ते। बान्धवमदुस्येदित्येक आहुरप्रज्ञेन हिक: संवास:। भार. ग्रह्य. 1/11
35. ययोरेव समं वित्तं ययोरेव समं श्रुतम्। तयोर्मैत्री विवाहष्च न तु पुष्टविपुष्टयो: ।। मा. आदि. 122/8
36. विवहेच्च महाकुले-वही , अनुषासप. 161/146
37. कन्यां शुद्धव्रताचारां कुलरुपसमन्विताम्। यस्मै दित्सति पात्राय तेनापि भृषाकामिताम्।। वही, 235/69
38. आत्मजां रुपसम्पन्नां महर्ती सद्दषे वरे। वही, 5/161

****

Effects Of Brainstorming & Simulation Teaching Method On Academic Achievement In Schools

Lokesh Jain*

Abstract - A declining unit of teaching resource has put the spotlight on teaching methods because teaching staff costs are a high proportion of total costs within schools. Greater focus on and publicity about performance indicators of teaching quality have also increased the attention paid to teaching methods. Developments in technologies for communicating and disseminating information are significant aspects. None of these factors are likely to go away, so it is unlikely that concern about teaching methods in universities will subside. On the contrary, each is likely to become more compelling and so, will concern about teaching methods.

Introduction - Research has revealed that students' poor performance is due to their inability to solve problem in perception of the subject as difficult and demanding . In the midst of these factors, the teaching method seems to be more associated with the poor performance of students because it is the responsibility of teachers as facilitators of learning to adopt teaching strategies that can actively engage students in learning.

The purpose of the present research work is to determine the effect of selected teaching methodology on academic achievement of students therefore the scope of present study is limited to three types of teaching methodology namely lecture method, simulation method and brain storming.

Objectives Of The Study - Schools have two core processes: teaching through learning and the output of higher education. The output of teaching through learning and the output of research is a contribution to knowledge. What are the learning outcomes that we want for our students? We have a clear view of the learning aims in school education. Our rationale for each of these aims is:

1. Disseminate knowledge
2. To develop the capability to use ideas and information
3. Developing critical faculties
4. To develop the student's ability to generate ideas and evidence.
5. To facilitate the personal development of students
6. Develop the capacity of students to plan and manage own Learning.

Hypothesis Of The Study - The following hypothesis are framed and will be tested.

1. There is no significant impact of simulation method on academic achievement of class X students.
2. There is no significant impact of brain storming method on academic achievement of class X students.
3. There is no significant difference between impact of teaching methodologies (Lecture, simulation and brain storming) on academic achievement of class X students.

Methodology - According to Webster's dictionary of education, method indicates a systematic way of procedure adopted in scientific way of procedure adopted and in scientific investigation proper methods leads to systematic procedure and finally attains fruitful results. Considering the nature of the study the researcher has selected Experimental Method which is more appropriate method for the type of the study.

In this research, The Self-made achievement test is developed for the study and is used as pre-test and post-test.

Analysis & Discussions :

Objective - To study the impact of simulation method on academic achievement of class X students.

Conclusion - on the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by the simulation method.

Objective - To study the impact of Brain storming method on academic achievement of class X students.

Conclusion - on the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by the Brain storming method.

Objective - To compare the impact of teaching methodologies (simulation and brain storming) on academic achievement of class Xth students.

Conclusion - on the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by both the simulation & brain storming method.

1. Academic achievement of class X students is more effected by & brain storming than simulation method.

Main Findings Of The Study – The educational and pedagogical implications of the present study are as follows:

1. The findings reveal that there could be a shared

*Research Scholar (Education) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

experience between students and the teacher.

2. The study indicated that these teaching methodologies may help in imparting information and critical thinking skills to others.
3. Facilitation of the learning process – The findings reveal that these teaching methodologies are effective in enhancing learning among students in terms of their academic achievement. Hence, the teachers may include these teaching methodologies as a part of the teaching learning process in order to improve academic achievement level of students.
4. The study reveals that these teaching methodologies could guide students to be critical thinkers and enable them to evaluate their world.
5. The findings implied that these teaching methodologies could motivate students to use their full potential.
6. All agencies in the field of curriculum development such as National Council of Educational Research and training (NCERT), State Institute of Educational Research and Training (SIERT) and National Council for Teacher Education (NCTE) may prepare curriculum according to the teaching methodologies.

References :-

1. Alclrich, C. (2004). Simulation and the future of learning. An innovative (and perhaps revolutionary) approach to e-learning San Francisco, CA: Pfeiffer publishing.
2. Bell, B. S., & Kozlowski, S. W. J. (2002b). Goal orientation and ability: Interactive effects on self-efficacy, performance, and knowledge. Journal of Applied Psychology, 87, 497-505.
3. Bell, B. S., & Kozlowski, S. W. J. (2007).Advances in technology-based training.In S. Werner (Ed.), Managing Human Resources in North America (pp. 27-42). New York: Routledge.
4. Bell, B. S., & Kozlowski, S. W. J. (in press). Active learning: Effects of core training design elements on self-regulatory processes, learning, and adaptability. Journal of Applied Psychology.
5. Blake, C., & Scanlon, E. (2007).Reconsidering simulations in science education at a distance: features of effective use. Journal of Computer Assisted Learning, 1-12.
6. Bransford, J. D., Brown, A. L., & Cocking, R. R. (Eds.). (1999). How people learn: Brain, mind, experience, and school. Washington, DC: National Academy Press.
7. Brown, K. G. (2001). Using computers to deliver training: Which employees learn and why? Personnel Psychology, 54, 271–296.
8. Brown, K. G., & Ford, J. K. (2002). Using computer technology in training: Building an infrastructure for active learning. In K. Kraiger (Ed.), Creating, implementing, and managing effective training and development (pp. 192-233). San Francisco: Jossey-Bass.
9. Al khadra, Fadia Adel. (2005). The development of innovative and creative thinking,experimental study, Dar Dibono: Amman, Jordan.
10. Alzyadat, Maher. (2003): The effect of using the strategy of cognitive teaching and the investigation form in academic achievement and the development of creative thinking among ninth-grade students in the study of geography, Unpublished Ph.D dissertation, YarmoukUniversity,Irbid,Jordan.
11. Atef, Hiyam Mohammed. (2005). Integrated activities, i 3. Cairo: Dar al fikr- Araby.
12. Abbas, Muhammad and Absi Muhammad (2007). Curricula and methods of teaching mathematics to lower primary stage, Al Maseera House for publication, distribution and printing:Amman.
13. Abbas, HanaAbdo (2001). Effective use of computers in academic achievement and the development of innovative capabilities for primary school pupils.Journal of Mathematics, Volume IV, p 2, Egyptian Educational Scientific Society. Pp. 147-179.
14. Abdul Amir, Abbas Naji al. (2010). The effect of using the strategy of brainstorming to second grade students in mathematics and their attitude towards it, maysan Journal for Studies Academy, M-8, (p 16).
15. Abdul Hamid, Awatef. (2008). A proposed program in mathematics using the method of collaborative learning and some scientific activities, and measure its effectiveness in acquiring some of the scientific concepts and the development of some socal skills for Kindergarten children (Level II). Journal of Faculty of Education, University of Sohag, the number (24), pp. 43-65
16. Azzouz, Hunaida (2008). The effectiveness of some scientific activities in the development of innovative thinking among a sample of children in a Kindergarten in the city of Mecca. Unpublished Master Thesis, Mecca: Umm Al-Qura University, faculty of Education.
17. Awadhi, wafa and Muwafi, SawsanIzz al-Din (2006). Learning methods for students of the faculty of Education for Girls according to the theory of brainstorming in Saudi Arabia, Jeddah, Unpublished MA, Umm Al-Qura University, Makkah.
18. Alkanaani, Mahmoud Abdel Wahed(2009) The effectiveness of brainstorming and Wanda's educational model in the engineering thinking and achievement for intermediate stage, Unpublished
19. *Hague, 1991, p.64*
20. Ikwumelu, B., &Oyibe, Y. (2014).The Comparative Effects of Simulation Games and Brainstorming Instructional Strategies on Junior Secondary School Students'Achievement in Social Studies in Nigeria.African Research Review, 5(3). doi:10.4314/afrrev.v5i3.67342
21. Jaber, Abdul Hamid (2003) Development of brainstorming and understanding, the Arab House, Cairo.
22. Khasawneh, Rima (2004). The development of

mathemetics curriculum for the sixth grade in the light of the basic principles of education and test the effectiveness of the developed educational unit in student achievement and the development of their creative thinking, unpublished Ph.D. dissertation, Yarmouk University, Irbid,Jordan.

23. Khatatba, Abdulla and Bdour, Adnan (2006). The effect of using learning strategies based on the activity in teaching mathematics for seventh grade students of science operations. Magazine of Arabian Gulf. No. (99).
24. Zuber-skerritt, 1992, p.24

****

English For Specific Purposes : Overcoming Problems Faced By Engineering And Hotel Management Students In Teaching English In National Capital Region

Dr. Omprakash Upadhyay*

Abstract - It is true that English is a main subject but without it desired job and skills are not possible in todays world. Soft skills and verbal ability have been introduced in colleges for teaching English. English language has acquired a very important and dignified place not only in our country but across the globe. Although it is not a global language, yet communication between two countries is hardly possible without this language. In India, its need was felt more than a century ago much before India got freedom .This decision gave birth to the Idea of teaching English in schools, colleges, and other government and private institutions. Hence, English started to acquire a shape of a dignified and specific language and also produced the need for teaching and learning English for Specific Purposes like Technical English, Scientific English, English for Tourism, Medical English, Official English and so on. This paper is aimed to study problems faced by engineering and hotel management students during learning English in National Capital Region(NCR).

Key Words - Esp.Teaching English, Engineering -Hotel Students, NCR.

Introduction - The term "specific" in ESP refers to the specific purpose for learning English. Students approach the study of English through a field that is already known and relevant to them. This means that they are able to use what they learn in the ESP classroom right away in their work and studies.

"ESP is a major activity around the world today. It is an enterprise involving education, training and practice, and drawing upon three major realms of knowledge: language, pedagogy, and the students' participants' specialist areas of interest." (Robinson, 1991, p.1) The full name of "ESP" is generally given as "English for Specific Purposes", and this would imply that what is specific and appropriate in one part of the globe may well not be elsewhere. Thus, it is impossible to produce a universally applicable definition for ESP. Stevens (30, p.109) suggests that "a definition of ESP that is both simple and watertight is not easy to produce."It is necessary to understand the importance of teaching English language through literature in order to make language learning an enriching experience for students. English language Teaching (ELT) gained prominence in the last three decades. The mushrooming of technical institutes all over the country has led to the popularity of technical English in our country. The paper tries to analyze a proposed course that can be used effectively for teaching technical English in engineering colleges and hotel management students .In the modern world companies recruit employees on the basis of their communicative skills and other skills .In India more than one thousand languages are running but a few languages are officially accepted Ihis paper is aimed particularly students studying engineering and hotel management institutes.

Review Of Literature - On the basis of many research findings, studies conducted and experiences at various places with different kinds of students, they also found grammar as one of the cornerstones that enables the learners to communicate accurately and meaningfully. Current researches which have been referred in this chapter clearly indicate that grammar instructions help in bringing high level of proficiency in the target language.

The Generative Approach - A mathematician, psychologist, socialist, philosopher and linguist, Noam Chomsky is the most influential, intelligent and revolutionary linguist who came out with 'Syntactic Structures' in 1957 in which he talked about his transformational generative grammar. According to him, grammar means a finite set of rules which generate an infinite number of sentences. A grammar must be scientific, logical, explicit, economic and predictive. Human beings are born with innate grammatical competence that helps in generating infinite utterances. Chomsky later worked for SLA and came out with many articles in 1965, 1975, 1981, 1982.structural format, verbal tool,soft skillsand other modern methods will be applied in teaching for desired goals. A review of the literature illustrates the complex task of sorting through the vast subject of ESP for tourism and engineering, A review of the literature illustrates the complex task of sorting through the vast subject of ESP for tourism and engineering.

*Lecturer, Kamla College, Dholpur (Raj.) INDIA

Learning English Well-A Difficult Task - According to the experts of both the fields express their concern about poor skills of communication and understanding of English.students come from different backgrounds and they feel that English is a language of some other planets. It must be well versed in subject to grasp the desired goals. To evaluate how effective the teaching and learning process at technical colleges and what the real needs of the students in a technical institution are, students were selected to participate in this research. These students have been admitted through RPET, AIEEE and Joint Entrance Examination [IIT-JEE]. This programme consists of intensive instructions in physics, chemistry, mathematics, and English. Remedial classes are provided to improve the academic skills, linguistic proficiency and levels of comprehension . In the classes, these students are prepared to face the challenges of the B.Tech. courses so that they can stand academically . In the language classes, these students are encouraged to develop their writing skills and grammar skills so they can perform well in their written examination. The ESP approach is practiced to develop students' language skills .As the main concern of the study is to demonstrate how the learners can learn the English language most effectively, it would be vital to explore what the learners actually know. The objectives of the study are to identify learners' subordinate skills and knowledge required by the learners in order to carry out real world communication tasks; to find out what these learners should be taught at this level when they are getting prepared to face the challenges of B.Tech. courses; to see what can be done to improve students' poor motivation; and to examine how the course of study should be prepared to serve students' academic needs in language usage and to cater to their sociolinguistic needs.

The tourism industry is growing quickly in India and so is the hospitality industry, tourism outperformed all other departments as the largest foreign exchange earning in India. There is a tremendous growth in India in order to capitalize on the potential of Indian beauty and culture that attracts a large number of visitors; there is a necessity for English- speaking tour guides, hotel employees and other hospitality related professionals. Consequently, this specialized workforce requires English language courses that focus on tourism and hospitality; thus, courses need to be developed and offered along with social and cross-cultural awareness training. It is difficult for learners to develop English language fluency. Despite the difficulties, however, the status of English as an international .

Techniques Used In Teaching English

1. the content, design and implementation of a language programme are basics
2. It can be used in developing objective, goals and content of a language Programme.
3. It provides data for reviewing and evaluating an existing programme.
4. The present study is concerned with examining the above three purposes.

Course Proposed - Technical students need a language course that encompasses teaching of all the four language skills, emphasizing speaking and writing. the teachers seems quite aware of the students 'real and practical needs, but at the same time the wants and necessities of the learners cannot be ignored as necessities of the learners can be helpful in retaining their interest in the language .therefore, it can be suggested that the syllabus may be designed in such a way that it meets the academic as well as sociolinguistics needs of the students, emphasizing writing and speaking as well. In order to create a useful course for students of the tourism and hotel industry in NCR. More generally, a needs analysis was conducted among students and English teachers inNCR. Current workers in the tourism and hotel industry in Alwar and DELHI.are included..The students from hospitality-related departments should not only be given enough background knowledge about their target workplace and professional environments through their courses, but also be familiarized with how to handle business documents, presentations, and discourses which are found inadequate from the current courses. In our context, productive language skills need considerable polish for certain topics and tasks that the hotel employees meet in their everyday contact with customers. Teachers can address these two skills more specifically in class. Thus, technology-enhanced pedagogical tasks should be designed for the on-the-job English courses to promote hotel employees' motivation and equip them with adequate language abilities for their careers. Instructional designers should involve practitioners and researchers when attempting to identify, document, and execute best practices for business and industry .

The teaching materials, methods, and assessments should be designed based on the above course revisions. Teachers need to adopt appropriate materials and effective teaching methods, and make new and emerging communication technologies available to meet learners' needs and wants (Brunton, 2009). For example, more work-integrated tasks involving business writing and presentation should be included. . Short-term industry internship, if possible, could be provided for teachers. In addition, workshops should be designed for teachers to exploit the methodology, integrating language learning and subject learning such as problem-solving techniques, case studies, and project work which are found effective for ESP courses (Dudley-evans & St John, 1998

Last but not least, collaboration between the hotel industry and education institutes regarding course revision and materials development is of great importance. Seminars could be organized for the hotel associations and ESP teachers. Both the industry and educational institutes can benefit through collaboration. On the one hand, the industry can gain more training for their staff members, improve their language skills and in turn provide better service to foreign customers. On the other hand,

educational institutes can offer their students more professional knowledge. Technical and professional course require four skills development programmes such as video lectures, interactive class, soft skills developments, industries interface programmes motivational videos.mock drills of placements .In engineering course all the above recommendations are required.

Conclusion - The purpose of this research is to develop an ESP course for the tourism and hospitality college students in NCR. As any other ESP course, this course is founded on identified specific needs of learners and it aims at satisfying those needs. The purpose of the course and students' needs inspired the development of a course that embraces a communicative teaching method. In order to develop students' intercultural awareness, the course content includes the development of intercultural language skills. Intercultural awareness is needed because students in this course are aspiring to work in tourism and hospitality ,and technical industry. Students need to be aware that cultural differences are involved in their interactions with visitors to NCR, and they need to learn how to effectively deal with diversity. The course content also includes teaching tourism and hospitality related vocabulary since students need to be knowledgeable of all the special terminology they will encounter. To familiarize students with the industry, the course also includes field trips, and expert speakers are invited to talk to students in the classroom. Using recommendations from experts in the ESP field, people working in the tourism and hospitality industry, college students, teachers, a needs assessment, and review of pertinent literature, this course seeks to meet the specific needs of learners through actively engaging them in their learning and creating opportunities for authentic exposure to the real language used in the tourism and hospitality industry. .In another subject I have focused on particular learning aspects and various activities that have been done in the course of engineering. The existing gap between the present curriculum for Engineering students and engineers' real life language requirements needs to be closed. Teaching needs to be aligned to the industry' need for English language use. However,the present study is only limited to Alwar (NCR) and should not be generalized to other settings and contexts.

References :-

1. Brunton, M. W. C. (2009a). An evaluation of hotel employees' attitudes to general and specific English in their coursework. ESP World, 8(4), 1-82.
2. Dudly-Evans, T. & St. John, M. (1998) Developments in ESP: A multi-diciplinary approach, Cambridge: Cambridge University Press.
3. Hutchinson, Tom and Alan Waters. (1987) English for Specific Purposes, Cambridge: Cambridge University Press.
4. Munby, John. (1978) Communicative Syllabus Design, Cambridge: Cambridge University Press.
5. Nunan, David. (1988) The Learner-centred Curriculam, Cambridge: Cambridge University Press.
6. Nunan. D. (Ed.). (1992) Collaborative language learning and teaching . New York : Cambridge University Press.
7. Richards, J. (1984) "Language curriculum development, RELC Journal,15/1

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

बैगा विशेष अधिकारों से पिछड़ी एवं बिछड़ी जनजाति अपने कानूनी अधिकरों से अज्ञान दास्ता

डॉ. एस.पी. पाण्डेय* बैजनाथ**

प्रस्तावना – भारतीय संविधान निर्माताओं की मान्यता थी कि आजाद भारत का प्रत्येक व्यक्ति न सिर्फ स्वतंत्र हो बल्कि समान भी हो। उनमें मैत्री भावना भी हो जिसे दुनिया में गुलामी प्रथा के नाम से जाना जाता था। लेकिन दुनिया से विभिन्न कालों में और विशेषकार 19 वीं सदी से 20 वीं सदी के बीच प्रथा या गुलामी प्रथा खत्म हो गयी लेकिन भारत में यथावत बनी रही। आजादी के वर्षों बाद महसूस किया कि हमारे भारत में बंधुआ श्रम समाप्त नहीं हुई बल्कि उसके रूप-स्वरूप और अस्तित्व में परिवर्तन हो गया इस कारण वर्ष 1976 में बंधुआ श्रम (प्रतिबंधन) अधिनियम बनाया गया। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 बनाया गया। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम 1989 और बाद में 1995 भी बनाया गया।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के द्वारा अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ विद्वानों का मार्गदर्शन प्राप्त करते हुए पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा भी स्रोत सामाग्री को संकलित किया गया है।

समस्याएं :

1. श्रम के मालिक है लेकिन पारिश्रमिक के नहीं।
2. इनकी ऋण राशि चक्रवृद्धि ब्याज की दर से बढ़ती रहती है।
3. इन बंधुआ श्रमिक पीढ़ी दर पीढ़ी बंधुआ बने रहने को मजबूर होती है।
4. मौलिक अधिकरों से बंचित रहते है।
5. सामाजिक कल्याण की योजनाओं के लाभ से बंचित होते है।

उद्देश्य – यद्यपि कि इसके पूर्व संविधान में मौलिक अधिकरों को सुनिश्चित किये गये थे। अनुच्छेद 23 के अनुसार बेगार प्रथा बलात प्रथा मानव व्यापार आदि प्रतिबंधित किए गए। अनुच्छेद 17 के अनुसार अस्पृश्यता का निषेध किया गया। लेकिन इतना सब होने के बाबजूद भी दलित, बैगा अधिवासियों की स्थिति परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं आया इसके प्रमुख कारण यह रहा है कि न तो उन्हें मौलिक अधिकारों का पता है न ही अन्य अधिकार यह रहा है कि मामला विशाल जनसमुदाय का है क्योंकि देश की आबादी में दलित यानि दबा-कुचला आदिवासी यनि इस देश का मूल निवासी सर्वप्रथम देश में निवास करने वाला लगभग 75 प्रतिशत दबा-कुचा मैलिक अधिकारों के साथ अन्य सभी अधिकारों से वंचित लोगों को सावित करेगा मानक अधिकरों के सर्वभौम घोषणा इस पत्र से सम्मिलित किया गया है कि समस्त अधिकरों को साथ में मौलिक अधिकरों का भी इस समावेश किया जाएगा। क्योंकि प्रकृति की संतान मानव के क्या-क्या अधिकार है। कौन-कौन से अधिकारों से वह अज्ञान है। दूसरा यह कि मालिक अधिकार क्या है और कितने है मानव अधिकरों के सार्वभौम घोषणा में कुल 30 अनुच्छेद है, वहीं मौलिक अधिकारों के 32 जिनकी संक्षिप्त व्याख्या पुस्तक में समाहित है। यद्यापि मानव अधिकरों के सार्वभौम घोषणा और मौलिक अधिकार दोनों के अनुच्छेद 23 बालश्रम, बंधुआ श्रम, और बेगारी तीनों को ही प्रतिबंधित करते है इसके अतिरिक्त मानव व्यापार के भी प्रतिबंधित करते है।

भाग दो में बंधित श्रम प्रथम (उन्मूलन) अधिनियम 1976 के साथ अनुसूचित जाति एवं विशेष पिछड़ी जनजाति (आत्याचार निवारण/नियम 1989 और अनुसूचित जाति, जनजाति अत्याचार निवारनण नियम 1995 को सम्मिलित किया गया है। इसके पीछे ये उद्देश्य रहा है कि तीनों अधिनियम का चोली दामन का साथ है क्योंकि बंधुआ श्रम प्रथा के उत्पीड़ितों में 99.5 प्रतिशत उत्पीड़ित गाँव एवं जंगलों में निवास करने वाले लोग इससे इन्कार नहीं किया जा सकता है कि इसमें अन्य जानकारियों से अनभिग्य जिससे चाहे स्थान खाद्दान का श्रमिक है ईट, भट्टे की श्रमिक या खेत-खलिहान या श्रमिक सभी की हालात एक जैसे ही है।

समाधान – हम भारत के लोग भारत को एक सम्पर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिक को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता भारतीय संविधान की इस प्रकार उद्देश्य था। संविधान से अपरिचित लोग किसी प्रकार की जन जागरूकता से आज बंचित रखा गया ताकि धर्म ग्रन्थों को जाल में आदिवासी मावोसी 95 प्रतिशत लोगों को भारतीय संविधान से भटाका दिया गया है। ताकि सामाजिक जुलामी राजनैतिक गुलामी, मानसिक गुलामी के जंजीरों से जकड़ी रहे भारतीय संविधान का पाठ विद्यालय में चलाना चाहिए तो किस्सा, काहानिया, कथा, भागवत आडम्बरों में विलीन किया गया जिससे आजतक सामाजिक आडम्बरों से निकल पाना मुश्किल है। भारत संविधान सभा तक ही सीतिम रह गया क्योंकि जो व्यक्ति शिक्षा से रहें तो अपने-अपने समाज का भला ना ही किया न ही कर पाएगा सरकार द्वारा चलाए गयी योजनाओं का लाभ या हानि का मतलब नहीं जनता 'शिक्षा बिन नीति गई नीति बिन गति कई गति बिन पिछड़ गए। इस सारी विडम्बनाओं को समझपाना मानों का विज्ञान का खेल कियाजाता है। शोधार्थी का मानना है किसी दोहरी करण की नीति शिक्षा चलती रही तो समाज अन्धे कानून का सहारा नहीं ले पाएगा अमर

* प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी) महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी) महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

बेल की तरह' सामाजिक विकास होता रहेगा।

दास्ता का उल्लेखनीय पक्ष यह है कि यह आजादी के पूर्व दृश्य स्वरूप में विद्यमान थी मगर आजादी के बाद स्वरूप पायी है एक जमींदार भूस्वामी ठेकेदार भट्‌ढ़ा मालिक और उद्योग धंधे के प्रबंधकों को ही इसके बारे में पता होता है। कभी-कभी जब बधुआ श्रम प्रथा के स्वयं के अनुभव का एक व्यक्ति वर्णन करता है। दूसरा बंधुआ श्रमिक उसे बताता है कि वे भी बंधुआ है अथवा लम्बें समयावधि तक बंधुआ श्रमिक के घर वालों के खोज खबर लेने पर बंधुआ श्रमिकों के बारे में पता चल पाता है। ये देश के विविध क्षेत्रों में और राज्यों के खदानों, ईट भट्‌ढ़ों औद्योबिक इकाईयों भवन निर्माण उद्योगों कृषि क्षेत्रों, सड़क, व रेल निर्माण इकाइयों, टेलीफोन लाइन डालने वाले इकाइयों अथवा अन्य सभी क्षेत्रों जहाँ ठेकेदारी प्रथा चलती है। सभी विभागों में प्राइवेट सेक्टर के माध्यम से इनके खोज बचाव राहत व पुनर्वास का कार्य लोहे के चने चबाने जैसा है।

अगम्यता-दासता – अगम्यता दासता का दूसरा उल्लेखनीय पक्ष है अगम्यता आजादी के पूर्व तो ब्रिटिश शासन में अगम्यता यत्र-तत्र सर्वत्र विद्यमान थी अर्थात देश की वे जगहे या स्थान जैसे पहाड़, पठार, नदी, घाटी, और जंगलों के दुर्गम क्षेत्रों एवं अन्य अस्वास्थकर क्षेत्रों में जहाँ आदमी का पहुचना मुश्किल होता था।

वह पर बंधुआ श्रमिक ठेकेदारों व्दारा पहुचाये जाते थे। अगम्यता का लाभ उठाकर ठेकेदार उनके मनमानी काम करवाये जाते है वे छोड़कर भाग भी पाना मुश्किल हो जाता है। अवशोष इसका है कि भारत आजाद हुआ पर वे आजाद नहीं हुए। आजादी के बाद बंधुआ श्रमिकों को धनाण्ड लोगों का बरचश्व यथावत बना रहा चाहे किसी भी प्रकार का कार्य क्यों ही ना हो क्योकि चार दीवारों में कैद आदिवासी जिसे अनुसूचित जाति एवं जनजाति की श्रेणी में रखा गया आदिवासी मोवासी धर्म धर्ममान्तर के जाल में उनकों तोते जैसे पिंजरे में बन्द रखा गया आत्मा में परमात्मा का स्वरूप दिया गया भारतीय समाज भारत का मूल्यवंश का इतिहास खत्म कर उन्हें अपने इतिहास से परिचित कराकर इतना अन्दर तहखने में रखा गया जिससे अपने आप यानि खराब खाना को जहाँ तक उठाकर ले जाए चाहे जहाँ जिस गड्ढा में दिया जाए लावारिस की तरह बिना बाप की औलाद जैसे कानूनी ज्ञान से बंचित हो जाना ही शिक्षा की तो बात ही नही भारतीय संविधान में कानूनी प्राक्रिया की गयी परन्तु 95 प्रतिशत जनसंख्या आज भी बंचित अधिकारों से है। भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात 1947 में भारत में झड़ा तो लहराया गया तथा 26 जनवरीर 1950 को संविधान भी लागू किया गया किन्तु सामाजिक परम्पराओं की जंजीरों से सूलझा नहीं बल्कि अलग दिया गया उनकील सूची लम्बी कतार लगाकर लगातार संविधान का नाम लेकर संविधान रह गया संविधन में किसी भी प्रकार का जाति धर्म, लिंग का सूचक शब्द ही नही उपयोग में उल्लेखित नहीं है। जबकि धार्मिक धर्मनंतरण का भय का सूचना का अधिका 2005 में लागू किया गया 2019 तक सर्वेक्षण बैगा समाज उसे पता ही नहीं लगा कि हमारा भारतीय संविधान के प्रावधान में समाहित है। किसी भी विभाग में ग्राम पंचायत अपनी जानकारी प्राप्त करने यह दासता के सामने आती है।

अशिक्षा – दास्ता का तीसरा उल्लेखनी पक्ष है अशिक्षा के कारण दासत्व या बंधुआ श्रमिक का जीवन जीने का मजबूर लोग (पुरूष/महिला/बच्चे) दासत्व जीवन का बयान नहीं कर पाते। अशिक्षा के कारण वे सामाजिक मानवाधिकार, मौलिक अधिकरों, मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणाएं एवं आर्थक तथा आद्योबिक (कानूनो) अधिकरों के प्रति अज्ञान होते है।

भाषायी समस्या – अशिक्षा का एक उल्लेखनीय पहलू है। भाषा (लिपि) की समस्या एं हिन्दी भाषा यदि पंजाबी, अंग्रेजी, उडिया भाषा में दासत्व जीवन जीने को मजबूर किया गया है तो वह अपने हालात का बयान नहीं कर सकता ठीक उसी प्रकार श्रमिक तमिल, तेलगू मराठी, गुजराती बंगाजी असमी आर मलयालम अपनी-अपनी भाषा में से परिचित नहो तो दासत्व जीवन में जीने को मजबूर है।

अज्ञानता – देश की गुलामी खत्म हो गयी। सवर्णो और असवर्णो की गुलामी खत्म हो गयी। जमीदारी प्रथा उपधि प्रथा, अस्पृश्ता, क्षेत्रीय भेदभाव, पुरूष-स्त्री, का भेदभाव खत्व हो गया सभी को शिक्षा के अधिकार बोट का अधिकर किसी भी प्रान्त में आने-जाने और व्यवसाय का अधिकर मिल गया। अभिव्यक्ति, विश्वास, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक न्या का अधिकार मिल गया मगर अफसोस देश की 90 प्रतिशत जनसंखा को इसकी जानकारी नहीं बंधुआ श्रम प्रथा अनुसूचित जाति, जनजाति अत्याचारों को कानूनन प्रतिबंधित कर दिया गया। मगर लोग प्रति अज्ञान है। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, औद्योगिक अधिनियम देश में लागू है हर किसी भी श्रमिक को न्यूनतम मजदूरी पाने और लेने का अधिकर है। यहाँ तक कि बोनस लेने पाने का अधिकार है मगर लोगों को इसका पता नहीं।

मानवअधिकारों की घोषणा – 10 दिसम्बर 1948 को यूनाइटेड़ नेशन्स की जनरल असेम्वेली ने मानव अधिकरों की सर्वभौम घोषणा को स्वीकृत और घोषित किया इसका पाठ आगें ऐतिहासिक कार्य के बाद ही असेम्बली ने सभी सदस्य देशों से अपील की वे इस घोषणा का प्रचार करें देश अथवा प्रदेशों में राजनैतिक स्थिति पर आधारित भेदभाव का विचार किए बिना विशेषता स्कूलों और अन्य शिक्षा संस्थानों में इसके प्रचार प्रदर्शन पठन और व्यवसाय का प्रबन्ध करें। क्योंकि सभी मनुष्य समाज अहस्तान्तरणीय अधिकारों तथा मूलभूत स्वतंत्रताओं के साथ जन्म लेते है। मानव अधिकरों की विश्वव्यापी घोषणा में संयुक्त राष्ट्र ने प्रात्येक व्यक्ति का समान रूप से प्राप्त अधिकरों को स्पष्ट व सरल शल्यों में घोषित किया है।

निष्कर्ष – ये अभागे मानव बैगा समूह जिनके लिए इनका जीवन ही काल पुरूष बनगया है, जिसका कोई अलम्बन नहीं, न ही कोई संसाधन है, वे महा तक कि आवाज भी नहीं कर सकते क्योंकि उन्हे पता है कि उनकी अवाज उजाड खण्ड में ही गूजेगी जिसे सुनने के लिए कोई आदमी नाम की चीज होगी ही नहीं। वे अपने जीवन को इसलिए खींच रहे है क्योंकि माललिया है कि मृत्यु नाम की ही शक्ति उन्हे इस जीवन से मुक्त करा सकेगी।

आज समय आ गया विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका से पूछने का कि तुमने हमारें लिए क्या किया है क्या हमें मानवीय गरिमा, आजादी और उसके बाद के विकास प्रक्रिया में सहभागी बन कर जीने का अधिकरा नहीं है अथवा क्या हमारा जीवन दासत्व का भूखमरी के हवाले ही रहेगा जहां हमारे कृशकाय बच्चें जिनकी आंखं एवं गाल धसे हुए है को ही देखने के लिए है सम्पूर्ण समाज चिन्तक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. एच.पी. गुप्ता (2002) भारत का संविधान मार्डन ला पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
2. आर.एस. शर्मा (2000)अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 एवं नियम 1995 इण्डिया पब्लिशिंग कम्पनी इन्दौर।
3. जय सिंह 2000 लिवरेशन फ्राम ब्राण्डेज बालण्टिर्स फार सोशल

जस्टिस किल्लौर (पंजाब) प्रकाशन।

4. दी शेड्यूल्ड कास्ट एण्ड शेड्यूल ट्राइब्स (प्रिवेंशन आफ एट्रोलिटीज) एक्ट 1989 भारत सरका के गजट, भारत सरकार प्रकाशन।
5. बंचित श्रम पद्धति (उत्पादन) अधिनियम 1976 भारत सरकार विधि और न्याय मंत्रालय भारत सरकार प्रकाशन दिल्ली 110054 द्वारा प्रकाशित।
6. मानव अधिकरों का सर्वभौम घोषणा संयुक्त राष्ट्र सूचना केन्द्र नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित 2001।
7. लक्ष्मीधर मिश्र (1997) बार्डन आफ बाण्डेज मानक प्रकाशन (प्रा.) लिमिटेड नई दिल्ली।
8. संविधान के 95 संशोधन अधिनियम 2009 द्वारा संशोधित सेंट्रल ला पब्लिकेशन इलाहाबाद 211002।
9. दण्ड प्रक्रिया संहिता डॉ. एन.वी. पराजवे/ बार एक्ट, बटुक लाल बार एक्ट, आर.एन सक्सेना बार एक्ट।
10. दीपक कुमार महार्षि (एडवोकेट) राजा पाकेट बुक्स 330/1 बुराड़ी, दिल्ली 110084

****

बिलासपुर संभाग में परिवहन तंत्र के विकास का विश्लेषण

डॉ. काजल मोइत्रा* सृष्टि शर्मा **

शोध सारांश – प्रगतिशील विश्व की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और वर्तमान विकसित सभ्यता का आधार परिवहन तंत्र की देन है, जो प्रादेशिक विकास के लिए औद्योगिक समोन्नति, विस्तृत व्यवसायिक संरचना, नवीन शैक्षणिक एवं तकनीकी ज्ञान, विभिन्न उपयोगी एवं उपभोज्य पदार्थ, सामाजिक सहिष्णुता आदि आधुनिक विकसित परिवहन की ही देन है।

प्रस्तावना – परिवहन के साधन किसी क्षेत्र विशेष के विकास के प्रतीक है। यातायात के मार्ग यदि सुगम और सरल है, तो व्यापारिक कार्य को सर्वश्रेष्ठ वातावरण मिलता है और उस क्षेत्र विशेष का आर्थिक स्वास्थ्य उत्तम रहता है। यदि कृषि और उद्योग को आर्थिक जीवन का शरीर माना जाए तो यातायात को उस आर्थिक जीवन का स्नायुतंत्र माना जाना चाहिए। किसी भी क्षेत्र विशेष के आंतरिक क्षेत्रो को आपस में जोड़ने के लिए यातायात के साधनों की अहम् भूमिका रहती है। आधुनिक वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के फलस्वरूप परिवहन के साधनों में बड़े महत्वपूर्ण सुधार हुए हैं।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य बिलासपुर संभाग में परिवहन तंत्र के विकास का विष्लेशण करना है।

विधि तंत्र – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है।

व्याख्या – बिलासपुर संभाग छत्तीसगढ़ के उत्तरी भाग में 21^0–20^0 उत्तरी अक्षांश से 24^0–6^0 उत्तरी अक्षांश तथा 81^0–21^0 पू. से 84^0–24^0 पूर्वी देशांतर के मध्य 55,152 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैला है, उत्तर से दक्षिण तक इसकी लंबाई 771 कि.मी. एवं पूर्व से पश्चिम 803 कि.मी. है। इस संभाग में 1998 तक तीन बिलासपुर, रायगढ़ तथा अंबिकापुर थे। सन् 1999 में इसको विभाजित कर सात जिलों बिलासपुर, कोरबा, जांजगीर-चांपा, रायगढ़, जशपुर, सरगुजा एवं कोरिया में बांटा गया है। जनगणना 2011 में संभाग की जनसंख्या 44,92,283 थी। जो छत्तीसगढ़ राज्य का 42.71 प्रतिशत है। यहां कुल 8298 आबाद ग्राम 36 तहसील तथा 66 विकासखंड है। राजनीतिक रूप से भी इस संभाग की स्थिति महत्वपूर्ण है उत्तरी भाग में उत्तरप्रदेश राज्य की सीमा, उत्तर पूर्व भाग में बिहार राज्य, पूर्वी भाग में उड़ीसा राज्य, पश्चिमी भाग में मध्यप्रदेश के रीवा एवं जबलपुर संभाग इससे जुड़े हुए है। दक्षिण भाग में यह रायपुर संभाग से लगा हुआ है । छत्तीसगढ़ राज्य का यह संभाग लम्बे समय अपक्षय और अपरदन से प्रभावित रहा है। इसी कारण इसकी धरातलीय संरचना विषम है, केवल यहां जनसंख्या की बसाहट को ही नहीं बल्कि कृषि उत्पादकता एवं विकास तथा समग्र विकास को प्रभावित करती है।

परिवहन के साधनों का विकास मानव सभ्यता के विकास के साथ ही इनका प्रचलन प्रारंभ हो गया था। समय के साथ ही इनमें परिवर्तन आता रहा है। एक समय था जबकि मानव अनिश्चित मार्गों पर वनों अथवा अन्य क्षेत्रों में मानव निर्मित पगडंडियों पर अवागमन था और आज वह ध्वनि की गति के समान चलने की क्षमता रखता है। वास्तव में परिवहन का विकास मानव सभ्यता का विकास है। सभ्यता के इतिहास की गहनता में न जाकर परिवहन के विकास की अति संक्षिप्त विवेचना उनकी वर्तमान प्रगतिको समझने के लिए पर्याप्त है।

विश्व की प्राचीन महत्वपूर्ण सभ्यताओं जैसे मिश्र, मेसोपोटामिया, चीन आदि में नदियों द्वारा वस्तुओं का स्थानांतरण प्रचलित था। रोम के साम्राज्य का आधार वहां की सड़के एवं जल यातायात था। वहां की सड़के एवं जल यातायात का विकास कर रोमन साम्राज्य में एकता स्थापित की गई थी। रोम साम्राज्य के पतन के पश्चात् निश्चित मार्गो पर परिवहन प्रायः समाप्त हो गया तथा छोटे-छोटे सामन्ती राज्यों में आपसी व्यापार समाप्त हो गये थे। यह स्थिति अन्धा युग की तरह था।

परिवहन के साधनों के विकास एवं निर्माण का प्राकृतिक तत्व प्रभावित करते हैं। यद्यपि तकनीकी विकास द्वारा धरातलीय बाधाओं को निरंतर कम किया जा रहा है परंतु आज भी स्थलीय यातायात का घन्त्व पर्वतीय क्षेत्रों की अपेक्षा मैंदानी भागां में अधिक है। पर्वतीय, मरूस्थलीय, दलदली एवं वन प्रदेश आज भी परिवहन पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। परिवहन के साधन सदैव ढाल का उपयोग करते हैं। वायु परिवहन का संबंध यद्यपि अधिक होता है किन्तु हवाई अड्डों के निर्माण हेतु समतल भूमि का होना अति आवश्यक होता है। जलवायु की दशाओं का हवाई यातायात पर अधिक प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक तत्वों के अतिरिक्त क्षेत्र की आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियां भी परिवहन विकास को प्रभावित करती है।

परिवहन विभिन्न स्थानों या प्रदेशों के मध्य आर्थिक संबंधों को व्यक्त करता है। अतः परिवहन विभिन्न स्थानों या प्रदेशों के आर्थिक संबंधों के प्रतिरूपों के अनुरूप ही होता है। एडवर्ड उल्मैन के अनुसार, 'किन्हीं दो प्रदेशों के बीच परिवहन संबंध स्थापित होने के लिए निम्नलिखित तीन तत्वों का होना आवश्यक है।'-

1. **परिपूरकता –** दो प्रदेशों के मध्य परिवहन की जरूरत तभी पड़ती है जब किसी वस्तु या वस्तुओं के लिए एक प्रदेश में मांग हो तथा दूसरे में इस मांग की पूर्ति हेतु वस्तु विशेष का आधिक्य हो। इस प्रकार की परिपूरकता के लिए विभिन्न प्रदेशों की प्राकृतिक भिन्नता उत्तरदायी होते हैं। धरातलीय बनावट, जलवायु प्राकृतिक वनस्पति, खनिज संसाधन, मिट्टी प्राकृतिक तत्वों में भिन्नता होने के कारण ही किसी प्रदेश में किसी वस्तु विशेष का

* सह प्राध्यापक (भूगोल) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

उत्पादन एवं आधिक्त्य होता है, जबकि किसी अन्य प्रदेश में उसे वस्तु विशेष की कमी होने से अधिक मांग होती है। इसी तरह मानवीय तत्वों की भिन्नता तथा उत्पादक पैमाने में अंतर होने पर भी परिपूरकता उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए यदि किसी प्रदेश में एल्युमीनियम की मांग है तो उनके मध्य परिवहन संबंध स्थापित हो सकता है, लेकिन यह किसी प्रदेश में बॉक्साइट की मांग है तथा दूसरे प्रदेश में एल्युमीनियम का आधिक्य है तो यह विशिष्ट परिपूरकता नहीं हाती, फलत: उनके बीच परिवहन की जरूरत नहीं पड़ती है।

2. मध्यवर्ती आपूर्ति स्त्रोतों का अभाव – परिवहन के लिए यह भी जरूरी है कि दो क्षेत्रों के बीच किसी मध्यवर्ती आपूर्ति स्त्रोत का अभाव हो। यदि प्रदेश में किसी वस्तु विशेष की मांग है तथा इसकी आपूर्ति अनेक स्त्रोतों से हो सकती है तो उस स्थिति में वह प्रदेश किसी भी स्त्रोत से ही इस मांग की पूर्ति कर सकता है। साधारणतया निकटवर्ती स्त्रोत से ही इस मांग की पूर्ति होगी। अत: किसी दूरस्थ पूर्ति प्रदेश एवं मांग प्रदेश के मध्य परिवहन संबंध नहीं होगा, क्योंकि मध्य में अन्य आपूर्ति स्त्रोत उपलब्ध हैं। यदि मध्यवर्ती स्त्रोत का अभाव है, तभी दोनो के बीच परिवहन संबंध स्थापित होगा।

3. विनिमयता – विशिष्ट परिपूरकता तथा मध्यवर्ती आपूर्ति स्त्रोत के अभाव होने पर भी प्रदेशों के बीच परिवहन संबंध तब तक स्थापित नहीं हो सकता, जब तक उनमें विनिमयति न हो। विनिमयता से तात्पर्य है कि एक प्रदेश दूसरे प्रदेश से वस्तुऐं मंगाने में सक्षम हो। ऐसा तभी संभव है जब उन वस्तुओं का परिवहन में उतनी ही परिवहन लागत अथवा समय लगे जो आर्थिक दृष्टि से लाभदायक हो। यदि मांग वाले प्रदेश तथा आपूर्ति स्त्रोत के बीच की दूरी इतनी अधिक है कि परिवहन लागत और समय बहुत अधिक लगता है तो उनके बीच परिवहन संबंध स्थापित नहीं हो सकता।

निष्कर्ष एवं सुझाव – भारत जैसे विकासशील देश में समुन्नत साधनों का अभाव आर्थिक उत्थान के मार्ग में प्रधान अवरोध रहा है। और बिलासपुर संभाग का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है। इस भू–भाग पर प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता के रूप में कृषि योग्य भूमि, समुचित प्राकृतिक दशायें, वन सम्पत्ति, कोयला विविध धात्विक खनिज और प्रचुर जन संसाधन होते हुए भी परिवहन साधनों की सीमितता के कारण अभी तक बहुत विकसित हो पाया है। यद्यपि परिहवन साधनों कृत्रिम विकास से इस क्षेत्र में कृषि उपजों, औद्योगिक उत्पादनों, व्यापारिक केन्द्रों तथा आर्थिक तंत्र से जुड़ी अन्य सामाजिक सुविधाओं का उत्तरोत्तर विकास हुआ है। परन्तु सीमित पूंजी और सीमित परिवहन के अभाव में आर्थिक विकास पिछड़ापन और विकसित दो अलग–अलग भागों में बटे हुए दिखाई देते हैं। यद्यपि अन्य कारक जैसे सामाजिक विन्यास, राजनैतिक प्रभाव, प्राचीन परंपरायें, अशिक्षा और आधारभूत सुविधाओं की कमी परिवहन के साथ आर्थिक विकास को पीछे छोड़ जाते हैं। यहां परिवहन सुविधा के अभाव में आज भी अनुकूल प्राकृतिक दशायें होते हुए भी कृषि कुछ प्रारंभिक व्यापारिक पद्धति की ही हो पाती है। संभाग में खाद्यान को परम्परागत परिवहन साधनों से बाजार तक पहुंचने में इतना अधिक व्यय होता है कि स्थानीय कृषक को पर्याप्त लाभ नहीं हो पाता और आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने में उसकी अभिरूचि समाप्त होने लगती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Pankaj T (1968) : “A study of the traffic flows pattersn of the port of cochin” Indian Economic Journal 10(4).
2. वनमाली एस. एवं घोष अभिजीत (1975) : ‘ग्रामीण भारत में उपभोक्ता वस्तुओं का वितरण प्रारूप’ प्रबंधन एवं श्रम अध्ययन 7, पृ. 10
3. जैन पी.एस. (1992) : ‘परिवहन अर्थशास्त्र’ रिसर्च पब्लिकेशन नई दिल्ली
4. Rangnathan R. (1995) : “National urban transport policy-A Frame work” Indian journal of Transport management vol.19, no.2 PP 85-98.
5. Khan Z.T. Dutta, S. (2004) : “Traffic system of Raipur City” Dissertation, Pt. Ravishankar Shukla University Raipur 2004.
6. पदम एस. एवं सिंग एस. (2006) : ‘भारत में नगरीय करण एवं नगरीय परिवहन’ उत्तर भारत भूगोल पत्रिका
7. मोइत्रा, काजल (2012) : ‘छत्तीसगढ़ राज्य में यातायात तंत्र की विषमताएं एक भौगोलिक विश्लेषण’ शोध प्रबंध गुरूघासीदास विश्वविद्यालय बिलासपुर

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Environmental Policies in India : An assessment

Dr. Suman Lata Pandey*

Abstract - The world has realized the importance of being sensitive to the damage caused to the environment by the impact of human activities. The increasing population and economic and technological development have led to greater impacts on the environment. Though developed countries have the major impact on the global environment, developing countries cannot ignore the damage they're inflicting in their natural resources either. Since 1970s, India has been developing various policies and legislations to safeguard the environment, but their implementation and impact has been limited due to shortcomings in these policies.

Introduction - The United Nations Conference in Stockholm on Human Environment (1972) was UN's first major conference focusing on the environment and sustainability. It led to the creation of United Nations Environment Programme (UNEP) to protect the environment and promote sustainability(WCED, 1987). The importance of environmental conservation and economic development being interdependent was mentioned in its final declaration. This marked a shift in global environmental policies, and its influence was felt in India as well.

The next important event influencing environmental policies was the Rio Conference held in 1992(United Nations Conference on Environment and Development, 1992). The conference focused on preserving bio-diversity and reducing greenhouse emissions.A major drawback of the guidelines and principles of the conference were that they weren't legally binding and hence countries didn't necessarily have to implement the recommendations.(Bal, 2005)

These two international events, along with the Bhopal Gas Tragedy of 1984, marked significant milestones in Indian environmental policies as well and can be used to differentiate the periods of environmental policy-making in India.

Environment and Indian Traditions - Indian Vedic tradition has multiple references to the environment, weather cycles, forces of nature, and related phenomena.

Vedic deities were elements of nature: Varuna, Indra, Mitra, Aditya and Maruts. Mountains, lakes, forests, trees and rivers were venerated and this reflects some level of awareness about their significance for human existence. (Sharma, 2009)

For projects leading to usage of natural resources, prayers were offered for nature's recovery. These traditions carried through the middle ages up until the modern era, and continue to be a part of Indian traditions even today. In the backdrop of these, the government also enacted several legislations and initiated projects to preserve the environment.

Indian Environmental Policies - Prior to the Stockholm Conference Indian constitution did not mention environmental protection in any of its directive principles of state policy, which guide policy-making in India.

In 1972, the National Council for Environmental Planning and Policy was setup, and later evolved in to the Ministry of Environment and Forest (MoEF) in 1985.

In the 42nd Amendment of the Indian constitution in 1976, Article 48A was added to the Directive Principles stating: "The State shall endeavor to protect and improve the natural environment and safeguard the forests and wildlife in the country".(Article 48A) 'Forests' and 'Wildlife' were moved from state list to the concurrent list.

The environmental policies of India can thus be divided into the following periods:

1. Pre-independence to 1972
2. 1972 to 1984
3. 1984 onwards

Pre-independence to 1972 - The following Acts were enacted in this period:

a. Bombay Shore Nuisance Act (1853)
b. Elephants' Preservation Act (1879)
c. Fisheries Act (1897)
d. Factories Act (1897)
e. Bengal Smoke Nuisance Act (1905)
f. Bombay Smoke Nuisance Act (1912)
g. Wild Birds and Animals Protection Act (1912)
h. Forest Act (1927)
i. Factories Act (1948)
j. Mines and Minerals (Regulation and Development) Act (1957).

*Assistant Professor, Deptt. of Chemistry, DAV (PG) College, Dehradun (Uttarakhand) INDIA

While, these covered multiple environmental issues, economic development was always the focus while environmental considerations were secondary.

1972 to 1984 - The impact of the Stockholm Conference, which had highlighted environmental resource conservation, resulted in the following legislations during this period:

a. Wildlife (Protection) Act (1972): was enacted to preserve animals and birds in forests by prohibiting poaching, and allowing state governments to declare areas as Wildlife Sanctuaries and National Parks
b. Water (Prevention and Control of Pollution) Act (1974): Led to creation of Central and State Pollution Control Boards (CPCB and SPCBs) to maintain cleanliness of rivers, streams and wells
c. Air (Prevention and Control of Pollution) Act (1981): Defined air pollution and entrusted CPCB and SPCBs to implement the Act
d. Forest (Conservation) Act (1980): Focused on preventing deforestation, and preventing non-forest use of forest lands.

These Acts clearly reflect the Stockholm conference's impact on the direction of environmental policy-making in India. While the major aspects of the environment were all covered in these Acts, they were still in silos and not looking at the environment as a whole.

1984 onwards - Post the tragedy at Bhopal, policy-makers shifted focus towards developing a comprehensive legislation for the environment. This led to the following acts:

a. Environment (Protection) Act (1986): This extended to entire India, and was a step towards improving coordination between different regulatory agencies and in the immediate aftermath of the Bhopal Tragedy the Act also focused on regulating discharges, hazardous substances and disaster response.
b. Motor Vehicles Act (1988)
c. National Environment Appellate Authority Act (1997)
d. National Environment Tribunal Act (1995).

The National Council for Environmental Planning and Policy, became the Ministry of Environment and Forest in 1985. The ministry also came out with a policy statement in 1992 for abatement of pollution and National Conservation Strategy. An Environmental Action Programme was also formulated in 1993 to integrate environmental objectives with development oriented programmes.

The Policy(MoEF, 1992) adopted these guiding principles:

1. Prevention at the source
2. Adopting available technology
3. Polluter pays principle to be adopted
4. Public participation.

National Environmental Policy (2006) :

a. It was an initiative in strategy-formulation for environmental protection in a comprehensive manner.
b. It aimed at taking into account factors responsible for degradation of land and suggested remedial measures required. Factors included in the policy were fiscal, tariffs and sectoral policies, owing to the unintentional impacts of these resulting in land degradation.
c. The remedial measures comprised of traditional land-use practices to be implemented in combination with science-based techniques including pilot-scale demonstrations, large scale dissemination, adoption of multi-stakeholder partnerships, and promotion of agro-forestry, organic farming, environmentally sustainable cropping patterns and adoption of efficient irrigation techniques.
d. It mandated Environmental Impact Assessment and environment management plans, detailed public hearing and a project report to the impact assessment agency for clearance. There was scope for further review by a committee of experts in certain cases and public hearing.(Sarkar, 2014)

Assessment of these Policies - As can be observed from the progression of the policies from each period, these policies have mostly been created to fulfill the immediately observed requirements of the political/environmental landscape rather than being visionary and comprehensive. The following major drawbacks can be observed in these policies:

a. The regulatory organizations aren't empowered to take action on the offenders but only take the said parties to court. The parties usually can take stay orders and continue production
b. For new projects which require environmental impact assessments, these activities aren't comprehensive and often delayed
c. The departments entrusted with duties under different acts work in silos and have limited powers.(Vyas & Reddy, 1998) In many cases, they're not equipped with enough resources to conduct a full and comprehensive scientific analysis of various projects
d. Environmental concerns: their costs and benefits aren't incorporated into national statistics, and damage to natural resources isn't be priced by the government
e. Macro-policies are still independent of environmental policies and concerns

Conclusion - While policies have been there for some time now, India needs to develop them in a more comprehensive manner. The gap between practical implementation and theoretical policy needs to be addressed by inculcating environmental costs/benefits into overall macro-policy frameworks. The authorities dealing with different aspects of environmental concerns need to better coordination to ensure there's no work-overlap and also no blind-spots in their assessments. The National Environment Policy was a step in the right direction but much more work is needed to ensure sustainable development of India.

References :-

1. Article 48A. (n.d.). *The Constitution of India*.
2. Bal, A. S. (2005). *An Introduction to Environmental*

Management. Himalaya Publishing House.

3. MoEF. (1992). Policy Statement for the Abatement of Pollution.
4. Sarkar, D. N. (2014). Environmental Policy of India. *Asian Review of Social Sciences*, 17-20.
5. Sharma, K. N. (2009, June 30). *Vedic perspective on environment*. Retrieved from Times of India: https://timesofindia.indiatimes.com/Vedic-perspective-on-environment/articleshow/4613346.cms
6. United Nations Conference on Environment and Development. (1992). *The Rio Declaration on Environment and Development.*
7. Vyas, V. S., & Reddy, V. R. (1998, January 10). Assessment of Environmental Policies and Policy Implementation in India. *Economic and Political Weekly*, pp. 48-54.
8. WCED. (1987). *Report of the World Commission on Environment and Development: Our Common Future.*

****

Analysis of Estoppels under Indian Evidence act and its relevance in Present Scenario

Narender Dhaka*

Introduction - The law for estoppel or the rule of exclusion of certain evidence under certain Circumstances, like between tenant and landlord, licensee of person in possession and licensor (s. 116), or as between acceptor and drawer of a bill of exchange, as between Bailee and bailor and licensor and license (s. 117). Estoppel is a procedure of proof. Section 115 of evidence act reads: When one person has, by his declaration, act or omission, intentionally caused or permitted another person to believe a thing to be true and to act upon such belief, neither he nor his representative shall be allowed, in any suit or proceeding between himself and such person or his representative, to deny the truth of that thing .[1]

Estoppel is based on the maxim, Allegan's contraria honest audients (a person alleging contradictory facts should not be heard) and is that kind of presumption juris et de jure, where the fact presumed is taken to be true, not as against all the world, but as against a particular party, and that only by reason of some act done, it is in truth a kind of argumentum ad hominine.

Doctrine Of Estoppel - Appearing initially as a negative aspect in the field of evidence, the principle has extended its scope. Estoppel by deed can be described as "estoppel by matter in writing" which rests on the principle that written evidence is more conclusive than oral evidence. Estoppel by deed is applicable in the court of law so as to cajole a party from taking an opposite stand. In estoppel by deed, it is the written document that is always given reliance.[2] As per the principle recognized in The Doctrine of Res Judicata-Where one person (representor) has made a representation to another person (represented) by acts or by conduct or by silence or by any action, with the intention and with the result of inducing the represent on the faith of such representation to alter his position to his detriment the representer in any litigation which may afterwards take place between him and the represented, is estopped as against the representor making or attempting to establish by evidence any averment substantially at variance with his former representation, if the represented at the proper time and in the proper manner objects thereto.[3] Ever since the principle of estoppel has been expounded and applied in judicial proceedings there has been a conflict of views as to whether estoppel is a rule of evidence or a rule of substantive law. The principle of estoppel is recognized in India as a rule of evidence incorporated under the purview of Section 115 of The Indian Evidence Act, 1872. The section reads as follows: -

When one person has, by his declaration, act or omission, intentionally caused or permitted another person to believe such a thing to be true and to act upon such belief, neither he nor his representative shall be allowed, in any suit or proceeding between himself and such person or his representative, to deny the truth of that thing.[4] In the case of R.S. Madanappa and ors. v.. Chandramma and Anr, the court made the following observation with regards to the principle of estoppel concerning Section 115 of the Indian Evidence Act, 1872-¯We doubt whether the court while determining whether the conduct of a particular party amounts to an estoppel, could travel beyond the provisions of Section 115 of the Evidence Act. The court denied to accept the contention that the law of estoppel by representation is not confined to the provisions of Section 115 of the Evidence Act.[5]

Nature Of Estoppel In India - The precise and exact nature of an estoppel has lead different opinions. An estoppels has at least three aspects.

(1) Rule of Evidence - There is high authority for the view that estoppel is only a rule of evidence.831 Estoppel has some similarity to an irrefutable presumption of law, and has been so treated for one of its effects is to prevent the rebuttal of facts alleged by the other party. But an estoppel has two characteristics of evidence to distinguish it from such a presumption which is a rule of substantive law. An estoppel may be waived by the party who would otherwise benefit by it; and frequently operates only between the parties to an action.

(2) Matter of Pleading - As per the jurist Stephen fitzjames, estoppels belong rather to the law of pleading than to that of evidence.Subject to minor exceptions, a party who proposes to rely on an estoppel must raise this point and state the relevant facts in his pleading. This requirement involves an exception to the rule that evidence should not be pleaded, but it does not show that estoppel is not a rule of evidence. Failure to plead an estoppel may amount to a

*LL.M., Ph.D., Bikaner (Raj.) INDIA

waiver, and thus may result in making admissible facts which would otherwise be excluded.

(3) Substantive Law - The doctrine of estoppel belongs rather to substantive than to adjective law.834 Yet it has been shown that estoppels are not on the same footing as the rules of Substantive law embodied in irrefutable presumptions, and estoppels will not generally find a cause of action at common law, for they involve no claim. However, it is said that they may support claims to equitable relief and they may amount to a defence when they prevent a plaintiff proving some facts, essential to his case. Accordingly, estoppels have some characteristics of substantive law.[6]

WHEN ESTOPPEL IS NOT ATTRACTED?

In case of S. Sethuraman v. R. Venkataraman , the appellant initially submitted himself to the jurisdiction of the Joint Director of School Education (appellate authority) regarding his promotion, but later on challenged the decision of the appellate authority. In these circumstances, the Supreme Court held that the appellant could not be estopped.[7]

No Estoppel in Criminal Cases - Estoppel is a rule of civil actions. It has no application to criminal proceedings, though in such proceedings matters which in civil actions create an estoppel are usually so cogent that it would be almost useless to setup a different story.A petition was filed for quashing the proceedings under sections 498A and 304b of IPC and under the Dowry Prohibition Act because of an agreement between the parties. The petition was dismissed as the party to the agreement was not bound by an unlawful compromise and hence there was no question of estoppel either.[8]

Estoppel should be pleaded - The rule of estoppel depends for its application on certain of fact.853 It should, therefore, be specifically, pleaded unless there is no opportunity of doing so, e.g., in cases where there are no pleadings, in which case the party relying on estoppel must raise it by an objection in other form at the earliest possible stage of the proceeding. Where estoppel is not specifically pleaded, a party will not have permitted to rely it at a subsequent stage.

Kinds Of Estoppel - Spencer Bower and Turner have classified estoppels into three kinds:-

(i) Estoppel by matter of record
(ii) Estoppel by matter in writing
(iii) Estoppel by matter in pails

The first two are sometimes referred to as technical estoppels as distinguished from acquirable estoppels estoppel in apical these kinds have been discussed under Indian law in various cases:-

I. Estoppel by Res Judicata - Estoppel by record means nothing more generally than that the matter is res Judicata. It belongs more properly to the province of the pure procedure and is so dealt with in the Indian legislation. Res judicata is an estoppel by judgment. It embraces all those rules, the common characteristic of which is that final judicial decision of tribunal of competent jurisdiction, once pronounced between parties litigant, cannot be contradicted by anyone, as against any other of such parties, in any subsequent litigation between the same parties respecting the same subject matter.

II. Estoppel by deed - The rule of estoppel binds the parties to the instrument and those claiming through them by deed. An estoppel by deed is a preclusion against the competent parties to a valid sealed contract and their privies, to deny its force and effect by any evidence of inferior solemnity.868 The tendency in modern times is, to treat estoppel by deed as resting upon contract and as merely a form of estoppel by representation.

III. Estoppel by Matters in pails - "Estoppel by matters in Paiis" (also, pais) is defined by Blackstone as an "assurance transacted between two or more private persons in pais, in the country, that, is, upon the very spot to be transferred".Estoppel in paiis is said to arise, firstly, from agreement or- contract; secondly independently of contract, fromact or conduct of misrepresentation which has a change of position in accordance with the real or apparent intentions of the party against whom the estoppel is alleged. The Act deals with the subject of in pais in sections 115-117. The rules contained in sections 116 and 117 are instances of the estoppel by contract. Other cases which have been included under that designation will be found to fall within the purview of section 115, which, however,primarily appears to refer to what is known as estoppel by representation.[9]

IV. Equitable Estoppel - The modern law of estoppel owes immensely to the doctrine of equity being founded on the incidents of contractor relations analogous to contracts coupled with the representations of parties by a declaration, act, or omission.Estoppels that are not provided by statute law may, in this country, be termed equitable estoppels. A man may be estopped not only from giving particular evidence, but from doing acts, or relying upon any particular arguments or contention which the rules of equity conscience prevent his using as against his opponent.

This doctrine also applies to a case where a person is given an unequivocal assurance and On the faith whereof, he acts detrimental to his interest and he then suffers an irretrievable injury in that pursuit. In such a case having made a promise, the maker thereof is precluded to resolve there from. However it has been held that section 115 is not exhaustive and there may be rules of estoppel which may be applicable in India other than what is contained in that section.

V. Proprietary Estoppel - A legal precedent that will prevent a party from denying the right that another party has in the first party's property. The second party will have had costs in relation to the first party's property. Until 1986 the doctrine of proprietary estoppel was used as a way to bar litigants from asserting their strict proprietary rights. The doctrine had not been used to give effect to promises to leave property to someone in the future. It has developed into one of equity's sharpest instruments in its intervention

in the common law and statutory regulation of land and the distribution of assets on death.880 In such a manner, there is a balance to be struck between the need to hold people for their bargains and
promises.[10]

VI. Promissory Estoppel - The legal enforcement of a promise. Made by words or conduct to the promisee without the consideration of the detriment it may cause. The doctrine of promissory estoppel does not fall within the scope of section 115 as the section talks about representations made as to existing facts whereas promissory estoppels deals with future promises.[11]

Estoppel And Admission - Though in both admissions and estoppels there are statements, an admission does not ripen into an estoppel unless the person to whom the representation is made believes it and acts upon such belief, whereas in the case of mere admission evidence can be given to show that the admission was wrongly made. Admission made in earlier suit as to the nature of property if proved valid in subsequent proceedings are bindingas estoppel.[12]

Conclusion And Suggestions - Estoppel has been defined in a general way as the "preclusion of a person to assert a fact which has been admitted or determined under circumstances of solemnity, such as by matter of record or by deed, or which he has, by an act in pais, induced another to believe and act upon to his prejudice." As appears from this definition, estoppel share of three general classes: (1) estoppels by record; (2) estoppels by deed; (3) estoppels in pairs, or, as they are sometimes called, equitable estoppel. The latter, and, indeed, all of these are sometimes treated under the head of conclusive' admissions. Estoppel of the first and second classes have been sufficiently treated elsewhere, and this chapter will be confined to the subject of estoppel in pais. Estoppels have also been likened to solemn admissions and conclusive evidence.

This species of estoppel is also referred to as "common law estoppel by representation" in Halsbury's Laws of England, vol 16(2), 2003 reissue. A representation can be made by words or conduct. Although the representation must be clear and unambiguous, a representation can be inferred from silence where there is a duty to speak or from negligence where a duty of care has arisen. Under English law, estoppel by representation of fact usually acts as a defense, though it may actins support of a cause of action or counterclaim. Estoppel was once regarded as a rule or branch of the law of evidence, but the better opinion, and that which now prevails, is that it is more properly a branch of the substantive law. Although in some respects it might be regarded as within the field of procedure. In any event, however, it is customary to treat the subject to some extent works on evidence, and it is clearly within the scope of our plan to treat it so far as questions of evidence are concerned when estoppel is involved as a particular issue in a case.

References :-

1. http://www.mondaq.com/india/x/262648/landlord tenant leases/Doctrine Of Estoppel Overview
2. http://www.shareyouressays.com/knowledge/doctrine-of-estoppel-under-the-indian-evidence-act- 1872/ 119153
3. https://www.slideshare.net/prince70/doctrine-of-estoppel-e
4. http://manupatra.com/roundup/376/Articles/The%20 Doctrine%20of%20Promissory.pdf
5. http://ijldai.thelawbrigade.com/wpcontent/uploads/ 2015/11/YuvrajShhaurya.pdf
6. http://netk.net.au/Contract/07Estoppel.asp
7. http://www.legalservicesindia.com/article/88/Agency-By-Estoppel.html
8. http://docs.manupatra.in/newsline/articles/Upload/ 123E249D-6C00-493A-80EF-7A6E4EEA43E5.pdf
9. https://www.legalbites.in/promissory-estoppel/
10. http://www.klelawcollege.org/kle/wp-content/uploads/ 2017/10/5.Capacity-of-Parties.pdf
11. http://www.lawyersnjurists.com/article/doctrine-estoppel-applicability-judicial-system-bangladesh/
12. http://www.indialawjournal.org/archives/volume5/ issue_2/article_2.html

****

Conceptual Analysis Of Public Intresrt Litigation Concerned With The Environmental Degradation And Role Of Judiciary

Dr. Suneeta Bhadoo*

Introduction - Since all power to the people, the instrumentalities of governance to which such power is delegated have to exercise it in the interest of the people, not in the interest of the ruling group, not in the interest of Opposition, not in the interest of the legislators, not in the interest of Executive authorities, not in the interest of judges, not in the interest of those manning the other constitutional instrumentalities.

In the shape of promises the Constitution of India vests too many fundamental rights and constitutional rights. But these promises have been proved valueless to the ordinary people. Where does one go from here? Of course the way to judiciary through Public Interest Litigation (PIL) is the answer. If the government does its job well then there is no role for P1L. P1L is only to ensure that the Government should perform its duties in proper manner.

Public interest has been defined in Russel v. Wheeler[1] as: "Something in which the public, the community at large, has some pecuniary interest, or some interest by which their legal rights or liabilities are affected. It does not mean anything so narrow as mere curiosity, or as the interests ofthe particular localities, which may be affected by the matter in question".

Therefore, the expression 'Public Interest' means an act beneficial to general public. It means action necessarily taken for public purpose[2]

Obviously, the expression interest of the general public embraces public security, public order and public morality.[3] 'Public Interest Litigation' means a litigation which serves public interest. It is a litigation which vindicates a right of large number of people, perhaps millions, or, redresses a wrong done to them.

The object of Public Interest Litigation' is to enforce a right or to redress a wrong which affects a large number of people, but who are too poor, illiterate, disadvantaged, unaware or unorganised to be able to enforce their rights. Public interest litigation, is undertaken for the purpose of redressing public injury, enforcing public duty, protecting social, collective, diffused rights and interests of vindicating public interest, any citizen who is acting bonafide and who has sufficient interest, has to be accorded standing. What is sufficient interest to give standing to a member of the public would have to be determined by the court in each individual case. It has necessarily to be left to the discretion of the court.[4]

In People's Union for Democratic Rights v. Union of India[5]. The Apex court has rightly remarked that, Public interest litigation is a strategic arm of the legal aid movement and which is intended to bring justice within the reach of the poor masses, who constitute the law visibility area of humanity. It is essentially a cooperative and collaborative effort on the part of the petitioner, the state or public authority and the court to secure observance of the constitutional or legal rights.

Public interest litigation is therefore, the new device by which public participation in judicial review of administrative action is being assured.[6]

Some Public Interest Litigation opinions on bonded labour, children of prostitutes, Bofors scandal, educational matters, Ramaswamy and the Nadiad episodes, closing down of stone quarries, and the like would look moral discourse and the statements issued in the judgments would seem to be addressed to other political elements - policy makers, legal academics, professionals, and the press etc.[7]

Obviously, the proceedings in public interest litigation are intended to vindicate and effectuate the public interest by prevention of violation of the right, constitutional or statutory of sizeable segments of the society, which owing to poverty, ignorance, social and economic disadvantages cannot themselves assert and quite often not even aware of those rights. The technique of public interest litigation serves to provide effective remedy to enforce these group rights and interests.[8]

Etymologically the term" Environment" connotes surroundings. It is a composite term referring to conditions in which organisms consisting of air, water, food, sunlight, etc. live and become living sources of all the living and non-living beings including plant life.[9] In fact, the word "Environment" is a surrounding, external conditions influencing development or growth of people, animals or plants, living or working conditions, etc.

While according to Section 2 (a) 'Environment' Protection Act, 1986, the term/Environment' includes water, air and land and human beings, other living creatures,

*LL.M., Ph.D., Bikaner (Raj.) INDIA

plants, micro organisms and property.

Thus, environment is both physical and biological concept, it encompasses both the non living (abiotic) and living (biotic) components of the planet earth. On the basis of basic structure, the Environment may be divided into two basic types e.g. physical or abiotic environment and biotic environment. On the basis of Physical characteristics abiotic or physical environment is subdivided into three broad categories - (i) Solid, (ii) Liquid and (iii) Gas; which represents the lithosphere, hydrosphere and atmosphere, respectively.[10]

The word Pollution' is derived from the Latin word 'Pollutus', which means defiled or to make dirty or to pollute.[11] In general terms it has been defined as:

"The introduction by man into any part of the environment of waste matter or surplus energy, which so changes the environment, directly or indirectly, as to adversely affect the opportunity of man to us or enjoy it and it is the introduction into water of substances of such character and quantity that its natural quality is so altered as to impair is usefulness or render it offensive to sense of sight taste or smell.[12]

It has been estimated that every year 1 600 million tonnes of oxygen are burned up and that between 21000 and 24000 million tonnes of carbon-dioxide are discharged into the atmosphere. The pollution of rivers, lakes, seas and oceans has reached a dangerous level with about 50 percent of all the pollution of biosphere being caused by the United States, which has less then six percent of the world population.[13]

The Apex court started giving serious attention to the problems of environmental degradation immediately after the Menka's Gandhi Case[14] by expanding the scope of right to life and personal liberty as envisaged in Article 21 of the constitution of India.

In MC. Mehta v. Union of India[15] the court held that right to live in pollution free environment is a part of Art. 21 and therefore, any infringement to this cherished right can be heard by the Apex court under Art. 32 of the Indian Constitution.[16]

In L.K. Koolwal v. State of Rajasthan[17] the Rajasthan High Court tried to solve the acute sanitation problem in some parts of state through write jurisdiction and by way of judicial activism.

In another MC. Mehta Case[18] a PIL was filed in the Apex court in which it was alleged that about 14000 trucks carrying about 64000 tonnes weight pass every day through Agra causing nuisance and environmental Pollution in the already polluted city due to industrial activities The pollution in area is responsible for eroding the beauty of Taj It was suggested in the petition that if a bypass road is constructed around Agra City then it would help in the preservation of historical monument and also it will give some relief to the inhabit ants of the area The Supreme Court ordered that the bypass road must be constructed around the city within a period of six months positively.

The Supreme Court in another Case[19] directed the company to take all necessary safety measures before starting the operation as the company was using hazardous and lethal chemicals and gases which were passing danger to the health and life of workmen and people living in its neighbourhood. The court also directed the management to deposits sum of Rs. 200 Lakh by way of security of compensation claims of the victims of oleum gas leak and sum of Rs. 15 Lakhs as bank guarantee to ensure compliance of order of the court.

In another PIL (filed by MC. Mehta)[20] the Apex court had directed the various hazardous industries which were situated in Delhi to shift outside the prohibited zone as these industries were passing a potential threat of industrial accidents and also were responsible for causing environmental pollution in the already overtaxed environment of Delhi specially in the thickly polluted areas The supreme court has taken a drastic step simply a letter was treated as a writ petition under Art. 32 of the Constitution was initially brought before the Supreme Court to abate pollution caused by limestone quarries in the Dehradun Valley in the Mussourie hill of the Himalayas.[21]

In M C Mehta v Union of India2[22] (Ganga pollution tannery case) the Supreme Court has pronounced a landmark judgment in the environmental jurisprudence and opens new vista in the direction of protecting environment and pollution caused by hazardous activities of the industries The Apex court opined, " an industry, which cannot afford paying minimum wages, cannot be allowed to exist, similarly an industry, which cannot treat its effluent and cannot curb environment damages and pollution should not be allowed to exist.

In Indian Council for Enviro-Legal Action v. Union of India[23] the Supreme Court ordered closure of the five hazardous chemical industries located in Bichhri village in Udaipur District of Rajasthan and attached their all moveable and immovable properties, after holding them responsible for infliction untold misery upon the villagers and causing long lasting damage to the environment in the area.

The Supreme Court ordered, on a PIL petition, for the constitution of an eight-member committee to examine the important questions relating to 'solid waste management' in class I cities. It was also directed by the court that the said committee should also suggest ways and means for eco-friendly treatment of solid waste including its shorting, collection, transportation, disposal recycling and reuse and proven technologies if any, in this behalf.[24]

According to the specific observation made by the Apex Court in Ashok Kumar Pandey V/s State of West Bengal[25] "A public interest litigation is a weapon which has to be used with great care and circumspection and the judiciary has to extremely careful to see that behind the veil of public interest an ugly private malice, vested interest and/or publicity seeking is not lurking".

In S.R Anand Case,[26] the Supreme Court remarked

that 'The prerequisites of clear heart, clean mind and clean objective over and above clean hands are essential in order to be able to ascertain and to be satisfied that the carriage of proceedings is in the competent hands of a person who is genuinely concerned in public interest"

Recently in Divine Retreat Centre V/s State of Kerala[27] our Apex Court maintained that "the public interest litigant must disclose his identity so as to enable the court to decide that the informant is not a wayfarer or officious intervener without any interest or concern. Anonymous letter can not be. entertained as PIL"

There is a need of the hour that judges should visit the pollution affected areas in order to pronounce a proper judgment. The judiciary has to see that the dormant penal sanctions under the different environmental laws against the 'Offences- by Government Departments' are put to adequate use so that the officials playing foul with the Indian environment are made accountable.

At the global level the nations of the world must unite to save the earth.[28]

References :-

1. 165 COLO 296 cited in Prof. (Dr.) D.C.Jain. The Phantom of Public Interest. (1986) 3 SCJ. p.30
2. AIR 1952SC252
3. Emperor Vs Jeshingbhai Ishwarlal Dhobi, AIR 1950 Born 363
4. S.p Gupta Vs Union of India, AIR 1982 SC 149.
5. (1982) 2 SCC 235
6. Justice S. Awasthy " Public Interest Litigation", central India Law Quarterly. Vol. 1 1988 p. 137
7. Parmanand Singh, "Public Interest Litigation' XXV[[ASIL(1991)I p.35
8. Sheela Barse Vs. Union of India AIR 1988 SC 238. See also Kunga Nima Lepcha Vs. State of Sikkim, AIR 2006 5K. p.1; Janta Dal Vs. H.S. choudhary (1992), 4 SCC 305
9. Dr. N. Maheswara Swamy, Law reIang to environment polution and protection, Hyderabad 2000 p2
10. IA. Khan, Environmental Law, 2002 p.9
11. Mahesh Mathur, "Legal control of Environmental law ", New Delhi p.61
12. J.M.c. Logh Lin, The Law relating to Pollution, common-wealth Publication, 1972, p.30
13. V.R. Krishna Iyer, Environmental Pollution and the Law, 1 984 p.3
14. Maneka Gandhi v. Union of India, AIR 1978 sc 597 (1986)
15. 2 SCC 176
16. Forum for Prevention of Environment and Sound Pollution V s. Union of India, AIR 2006 SC 348
17. AIR 1988 Raj 2
18. M.C. Mehta Vs. Union of India, (1986) 2 SCC 176
19. MC. Mehta Vs Union of India, AIR 1987 SCC 1086
20. M.C. Mehta Vs Union of India, AIR 1996 SCC 2231
21. Rural Litigation and Entitlement Kendra v. State of U.P.,AIR 1 985 SCCp.652
22. AIR 1988 SCC 1037
23. AIR 1 996, SC 1446
24. Almitra H. Patel & Others Vs Union of India, 1 998 (1) SCALE 131
25. AIR 2004 sc 280, Also Quoted in Gayching Bhutia Vs Union of India, AIR Dec. 2008 SK1.
26. AIR 1 997 Sc 272, Also Quoted in Supra note 27, AIR Dec.2008 Ski . See also; Rajasthan chapter of Indian Association of Lawyers Vs Union of India, AIR 2008, NOC Raj 533; Mc. Mehta Vs Union of India AIR January 2008 sc 1 80; common cause (A Regd. Society) Vs Union of India, AIR August 2008 sc 2116
27. AIR, June 2008 sc 1614
28. Justice Kuldip Singh, " Environment Protection: A global chal-lnge" Journal (UIA India chapter, 1999) p. 55.

****

Measuring Level Of Managerial Satisfaction With Inventory Management As Working Capital Components In Steel Companies Of India

Dr. Yadu Rao * Dr. Abha Jaroli **

Abstract - Working Capital (WC) is an important for integral part of financial decision making, the main component in the working capital management cannot leave inventory and its management.Since it is the major part it requires appropriate care. Though, it should be critical for to a firm to endure their short term investment since it will ensure the ability of firm in longer period (Chouhan. & Verma, 2014:b; Chouhan, 2013; Chouhan et.al, 2014 & Chouhan et, al, 2013). The crucial part in managing working capital is required maintaining its inventory and to ensure its smooth operating cycle and meets its obligation. The present research work is an attempt to measure that whether the Indian steel companies are putting stress oninventory management and their mangers and accountants are satisfied with their current levels of WC. The data for the study was gathered from 31 managers and by using Kruskal-Wallis H test it revealed that the respondents were satisfaction from inventory management is based on variables like IM_1, IM_2, IM_3, IM_4, IM_7, IM_8, IM_9, IM_10 and IM_11

Introduction - Management of inventory as component of working capital is essential for the success of organisations. It is very important to achieve a trade-off between magnitude of fixed and current assets or trade-off between profitability and liquidity(Khan et.al, 2012; Chandra et.al, 2012; Chandraet.al, 2012 & Chouhan & Verma 2014:a). The Indian steel industry is inventory driven and its raw materials exceed all other components in its cost structure. Iron ore, the raw material, is also obtainable in India in rich quantities that provided cost benefit to the domestic steel industry. The Indian steel industry has always thrashed for continuous transformation and up-gradation of large plants to achieve energy efficiency levels. India maintains its position of being the 4th major producer of crude steel in the world and is expected to become the 2nd largest producer of crude steel. As per five years plan [12th Five Year Plan (2012-2017)], domestic demand of steel is likely to grow with an annual average growth of over 10% (Ministry of Steel, 2015-16) with the current production capacity of over 120 million tonnes (MT) in 2017-18this sector has contributed nearly two per cent of the country's gross domestic product (GDP) and provided employment to over 6,00,000 people. As a recent development Government of India has also allowed 100 per cent foreign direct investment (FDI) under the automatic route (Consolidated FDI Policy Circular, 2014). India has committed to investing US$ 1 trillion in infrastructure during the 12th Five Year Plan (2012–17) which was only US$ 428 billion (in 11th Five-Year Plan) (Ministry of Steel, 2013-14) it can become a pillar for the growth of the country. Despite of it the companies in this sector is having scarcity of required WC as their WC is negative and may adversely affect its growth the this paper has measured that whether its reason is the improper management of its inventory or not.

The objective of this paper is to analyse the level of satisfaction from Inventory levels as components of WC financial professionals of selected steel companies in India.

Reviews Of Literature - The reviews related with steel industry are as under:

Beauchamp et.al, (2014)[1] revealed that the shareholder wealth effects associated with inventory are examined. Initial results indicate a positive and significant relation between shareholder wealth and inventory. Additional findings suggest that operating conditions, financial constraints, and working capital behavioral influence the value of inventory. These findings are consistent with tactical and strategic decisions influencing managers to hold inventory. Overall, the results suggest that shareholders price the strategic advantages accompanying inventory.

Du and Yaolian (2014)[2] conducted a channel based on the channel theory of working capital, their study calculated the mean and standard deviation rate of both working capital structure and efficiency index of listed companies in China. They found that management of working capital in the production channel can learn from the inventory management of advanced enterprises. Management strategies for the purchasing channel of electronic industry include keeping a proper concentration of suppliers,

*Assistant Professor, Government Meera (Girls) College, Udaipur (Raj.) INDIA
**Finance Manager, Jodhpur (Raj.) INDIA

enhancing business credit of enterprises and improving the inventory management mode.

Working Capital Management Survey: 2009, (2010)[3] revealed that WCM performance procurement channels contrarian reasons for the increase is not a large area of inventory management level improved accounts payable deferred payment is the main reason. It was also found that WCM performance among regional imbalances, higher export-oriented textile and garment, and two levels of electronic industry export ratio larger sample group and ratio of export small sample group marketing channels WCM performance differences are significant.

Jiang and Ru (2010)[4]revealed that in views of the WCM involve account receivable policy, inventory policy, loan policy, account payable policy and cash management policy. It's a Multi-Criteria Decision Making problem. Their study results provided another viewpoint for the firm manager to raise their performance.

Zhangjiagang, et.al, (2014)[5] conducted a study which was based on supply chain management. They introduced the optimization of inventory WCM for the global group company .It shows detail about independent ordering decision , independent inventory management , independent ordering decision , hosting inventory management , joint ordering decision , hosting inventory management , joint ordering decision and jointly inventory management .It analyses the ordering and inventory decision of group company , its subsidiary companies in upstream and downstream of the group company , and the total annual cost of inventory. The results have shown that purchasing and inventory strategy cooperation can bring great benefits for the group company and subsidiaries companies, realize the optimization of inventory WCM for the global group company.

Enqvist et.al, (2013)[6] revealed that the significance of efficient inventory management and accounts receivables conversion periods increase during periods of economic downturns. Their results demonstrate that active WCM matters and, thus, should be included in firms' financial planning.

Mansoori (2012)[7] found that managers can increase profitability by managing working capital efficiently. Moreover, managers can improve firms' profitability by shortening receivable conversion period and inventory conversion period. The analysis is applied at the level of full sample as well as economic sectors. However, the results of industry analysis suggested the effect of economic sector on relationship between WCM and profitability.

Panigrahi and Sharma (2013)[8] investigated the existence of relationship between the WCM and the profitability, average receivable period, inventory conversion period, average payment period and the cash conversion cycle which expresses the efficiency of working capital. Hypotheses were tested using multiple regression analysis and Pearson's correlation. It was found that there is a negative significant relationship between accounts receivable period and firm's profitability, a negative relationship between Inventory conversion period and profitability, negative significant relationship between accounts payable period and profitability but a positive relationship between firm's cash conversion cycle and its profitability. This shows that firms are selling their inventory and collecting the receivables before they have to pay for the payables.

John & Kwaku (2015)[9] established a statistical relationship between profitability measured by the return on assets and the elements of working capital such as the cash conversion cycle (CCC), average collection period (ACP), average payment period (APP) and inventory turnover days (IT). Growth, size and leverage were control variables identified. The inventory turnover days as well as all other control variables showed a positive relationship with profitability. Hence, the study recommends that trading companies should manage their working capital more efficiently so as to keep it in equilibrium.

Knauer and Wöhrmann (2013)[10] consolidated the empirical literature on the association between WCM and firm profitability. This state of the art analysis provides evidence of positive effects of accounts receivable management and inventory management on profitability. However, results for the effects of accounts payable management on profitability are driven by reverse causality. Finally, it has highlights critical aspects of prior research and points to avenues for future research.

Panigrahi (2014)[11] revealed that Negative working capital arises in cash base business, efficient utilization of resources and sound inventory management etc., which leads to minimum stock of inventory etc., and the overall impact is lower level of current assets. On the other hand, due to better contract and negotiations to the creditors and suppliers, they are extending more liberal credit, which enhances the level of current liabilities. They found that companies in which negative working capital exist, profitability is more and shareholders are getting more dividend and capital appreciation, which maximizes the shareholders' value in the long run.

Ahmadi et.al, (2012)[12] in their paper on "Studying the Relationship between Working Capital Management and Profitability at Tehran Stock Exchange: A Case Study of Food Industry," investigated the relationship between WCM and profitability at companies of food industry group member at Tehran Stock Exchange. 33 companies were selected for a period of five years from 2006-2011 and the effect of various variables of WCM including average accounts collection cycle, inventory turnover, medium-term debt payment and the cash conversion cycle on operational net profit of companies. Current ratio, debt ratio and the company size (which has been measured by natural logarithm of sale) was considered as control group (control variable). For data analysis, correlation and regression was used. The results of the study showed that there is a reverse relationship between the variables of WCM and profitability.

It is found out that increasing collection cycle, debt payment period, inventory turnover and cash conversion cycle leads to decreasing profitability in the companies. According to the research findings, managers can create a positive value for stockholders by decreasing collection cycle, debt payment period, inventory turnover and cash conversion cycle to the lowest possible level.

Blinder et al (1991)[13] revealed that WCM is the management of current assets and current liabilities. Maintaining high inventory levels reduces the cost of possible interruption in the production process or of loss of business due to the scarcity of products, reduces supply costs and protects against price fluctuations among other advantages

Brennan et al (1988); and Petersen et al (1997), affirmed that Granting trade credit favors the firm's sales in various ways. Trade credit can act as an effective price cut, similarly Emery (1987) revealed that an incentive to customers to acquire merchandise at times of low demand. Further, **Wilner (2000)** revealed that firms that invest heavily in inventory and account receivable can suffer low profit. Thus, greater the investment in current assets, lower is the risk, and profitability obtained. Similarly, trade credit is a spontaneous source of finance that reduces the amount required to finance the sums tied up in the inventory and account receivables. The trade credit can have a very high implicit if early payment discounts are available. In fact, the opportunity cost may exceed 20 percentages depending on the discount percentage and the discount period granted.

Lazaridis et.al, (2006)[14] investigated the relationship between corporate profitability and WCM using listed companies on the Athens Stoke Exchange. They discovered that a statistically significant relationship existed between profitability and the cash conversion cycle. They concluded that businesses can create profits for their companies by correctly handling the cash conversion cycle and keeping each component of the cash conversion cycle (that is accounts receivable, accounts payable, and inventory) to an optimum level.

Research Methodology - The research methodology accounts for the can be examined for Indian steel industry as under:

Data Source - Primary Sources were used to collect the data that31 financial professionals of top 10 steel companies operating in India.

Type of sample - The sample includes 31 professionals including Promoter/CEO, Accounts manager and Financial personnel top 10 steel manufacturing companies in India

Universe of study - The total numbers of financial professionals in steel companies in India are included in the universe of the current study but due to various limitations sampling method were used to conduct current study.

Sample size - For the purpose of current study a healthy sample of 31 financial professionals of steel companies were selected on the basis of the convenient sampling method.

Data analysis Tools - The statistical tools & techniques used during the study include one sample t test and Independent sample Kruskal Wallis Test.

Variables included in the study -

The variables names are enlisted in table-1 as under:

Table-1: Variable names with SPSS Code

S.	Please rank in 1-5 points as Extremely Dissatisfied=1; Dis-satisfied=2; No opinion=3; Satisfied=4 & Extremely Satisfied=5	SPSS Name
1	1. Your satisfaction with Inventory management approaches with current WCM Practices	Sat_inv

Factors affecting CASH management

S.	Questions	SPSS Name
1	Preparation of inventory budgets	IM_1
2	Review of inventory levels	IM_2
3	determining inventory levels is based on theories	IM_3
4	Based on historical data	IM_4
5	Based on owner/manager 's experience	IM_5
6	Use of Inventory models (EOQ, EPQ, etc.) for IMP	IM_6
7	Just in time method for inventory management	IM_7
8	Enterprises Resource Planning for better inventory control System	IM_8
9	Planning and Sales Forecasting for inventory	IM_9
10	Material requirement planning (MRP) for Raw materials	IM_10
11	Supply chain management for continuous supply	IM_11

Table-2: Level of satisfaction from Inventory

		Freq-uency	Per-cent	Valid Per-cent	Cumulat-ive Percent
Valid	Extremely Dissatisfied	1	3.2	3.2	3.2
	Dis-satisfied	4	12.9	12.9	16.1
	No opinion	11	35.5	35.5	51.6
	Satisfied	12	38.7	38.7	90.3
	Extremely Satisfied	3	9.7	9.7	100.0
	Total	31	100.0	100.0	

Figure-1 (see in next page)

Table-2 and figure-1 revealed the respondents satisfaction from inventory revealed that maximum respondents were satisfied with level of inventory maintained by their company.

As per the objective (to empirically examine the steel companies Accountant's / Finance managers' attitude towards factors affecting working capital in steel industry.) the agreement of the respondents related with the various areas are checked with the broader hypothesis. At this

level the perception of the respondents related to Factors Affecting inventory management were analysed. The following hypothesis was developed to identify key variables in Inventory management Independent sample Kruskal Wallis Test has been used with SPSS-19 software and results were shown in table-3 as under:

Table-3 (see in next page)

Conclusion - As per the study significant gap were found between the hypothesized test values with the calculated sample statistics for level of satisfaction with inventory management in selected steel companies at 5% level of significance. A Kruskal-Wallis H test showed that there is a statistically significant difference on the importance of inventory management factors for working capital management for IM_2, IM_5, IM_6 as $p<0.05$. Thus for the other factors the null hypothesis is accepted and we can say that the satisfaction from inventory management is based on variables like IM_1, IM_2, IM_3, IM_4, IM_7, IM_8, IM_9, IM_10 and IM_11.

References :-

1. Beauchamp, C. F., Hardin, W. G., Hill, M. D. and Lawrey, C. M. (2014), Frictions and The Contribution Of Inventory To Shareholder Wealth. Journal of Financial Research, 37: 385 –404. doi: 10.1111/ jfir.12041
2. Du, Yuan, Yaolian Jun.(2014). Research on the Emphases and Strategies of Business Working Capital Management-Inspiration from Dispersion, Finance Forum, 10, 50-58.
3. Working Capital Management Survey: 2009,(2010). The Working Capital Management Survey of Chinese Listed Companies in 2009, Accounting Research, 30-42
4. Jiang, Yihui and Ru Lin Wan.(2010). Working Capital Management Policy on Performance-The case of Top5 of Electronic Industry in Taiwan, East Asia Forum, 468, 89 – 101
5. Zhangjiagang, Z., Zhang, Yuting and Qingliang, Meng,. (2014). Optimization of Inventory Working Capital Management in A Group Company, Mechanical design and manufacturing engineering, 6, 37 - 40
6. Enqvist, Julius and Graham, Michael and Nikkinen, Jussi. (2013). The Impact of Working Capital Management on Firm Profitability in Different Business Cycles: Evidence from Finland, 1-4 (August 30, 2013). Available at SSRN: http://ssrn.com/abstract=1794802 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.1794802.
7. Mansoori, Ebrahim and Muhammad, Datin Joriah. (2012). The Effect of Working Capital Management on Firm 's Profitability: Evidence from Singapore (March 6, 2012). Interdisciplinary Journal of Contemporary Research in Business, Vol. 4, No. 5, September 2012. Available at SSRN: http://ssrn.com/abstract=2185840.
8. Panigrahi, Ashok Kumar and Sharma, Anita. (2013). Working Capital Management and Firms' Performance: An Analysis of Selected Indian Cement Companies (September 1, 2013). Asian Journal of Research in Business Economics and Management (2013). Available at SSRN: http://ssrn.com/abstract=2342085
9. Mensah, John and M. Kwaku, Working Capital Management and Profitability of Firms: A Study of Listed Manufacturing Firms in Ghana (March 3, 2015). Research Journal of Accounting and Finance, Vol. 5, No. 22, 2014. Available at SSRN: http://ssrn.com/abstract=2573319
10. Thorsten Knauer and Arnt Wöhrmann.(2013), Working capital management and firm profitability, Journal of Management Control, Volume 24, Issue 1, pp 77-87.
11. Panigrahi, Ashok Kumar. (2014). Working Capital Management of Indian FMCG Companies: A Conceptual Analysis (December 31, 2014). Journal of Business Analysis, Volume 4, December, 2014. Available at SSRN: http://ssrn.com/ abstract=2626392
12. Ahmadi, Mosa, Arasi, Iraj Saie and Garajafary, Maryam.(2012). Studying the Relationship between Working Capital Management and Profitability at Tehran Stock Exchange: A Case Study of Food Industry, Research Journal of Applied Sciences, Engineering and Technology, 4(13), 1868-1874
13. Blinder, A. S. and L. Macinni, (1991). Taking Stock: A critical Assessment of Recent Research on Inventories. Journal of Economic Perspectives. 5(1), 73-96
14. LazaridisI, TryfonidisD, 2006. Relationship between working capital management and profitability of listed companies in the Athens stock exchange.Journal of Financial Management and Analysis, 19:26-25.

Figure-1: Level of satisfaction from INV

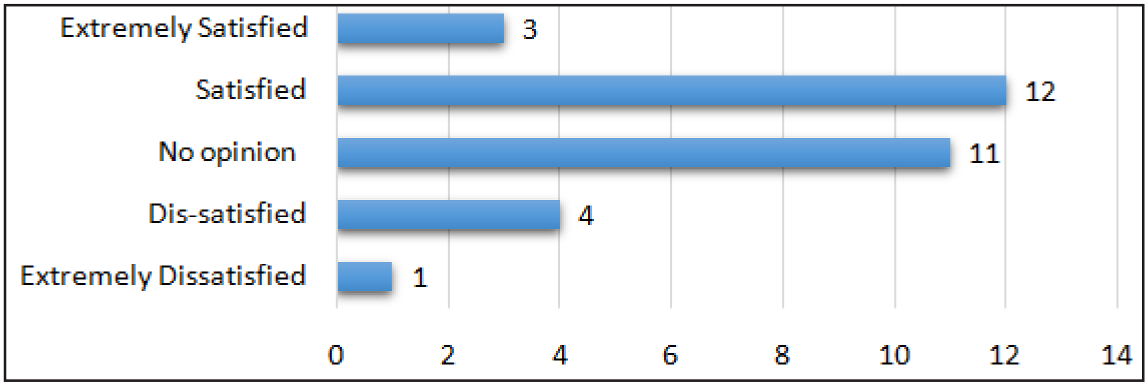

Table-3: Independent sample Kruskal Wallis Test for Inventory Management

Hypothesis Test Summary

	Null Hypothesis	Test	Sig.	Decision
1	The distribution of IM_1 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.063	Retain the null hypothesis.
2	The distribution of IM_2 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.004	Reject the null hypothesis.
3	The distribution of IM_3 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.421	Retain the null hypothesis.
4	The distribution of IM_4 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.373	Retain the null hypothesis.
5	The distribution of IM_5 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.034	Reject the null hypothesis.
6	The distribution of IM_6 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.002	Reject the null hypothesis.
7	The distribution of IM_7 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.269	Retain the null hypothesis.
8	The distribution of IM_8 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.669	Retain the null hypothesis.
9	The distribution of IM_9 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.458	Retain the null hypothesis.
10	The distribution of IM_10 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.273	Retain the null hypothesis.
11	The distribution of IM_11 is the same across categories of Sat_inv.	Independent-Samples Kruskal-Wallis Test	.602	Retain the null hypothesis.

Asymptotic significances are displayed. The significance level is .05.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

उद्यमी महिलाओं की समस्याएं एवं सफल उद्यमी बनाने के मूल मंत्र (सतना जिले के विशेष संदर्भ में)

नन्दना शिल्पकार * डॉ. ए.के. पाण्डेय **

प्रस्तावना – आज दुनिया के हर कोने में महिलाओं के पक्ष में प्रयास किया जा रहा है। विश्व में 1990 से 2000 का दशक 'महिला दसक' के रूप में बनाया था। भारत 2001 का वर्ष महिला सशक्तिकरण के रूप में मना रहा है। इन सभी बातों से सभी जगह महिलाओं के समुचित विकास के लिए अनुकूल वातावरण बनता जा रहा है। इसी आधार पर लोग '21वीं शताब्दी को महिलाओं की शताब्दी' के नाम से पुकारने लगे हैं। अब महिलाएं हर क्षेत्र में पुरूषों के साथ कदम मिलाकर अपनी अंर्तनिहित क्षमताओं के बल पर आत्मविश्वास और साहस के साथ पुरूष प्रधान समाज में अपने अस्तित्व का अहसास दिलाने का प्रयास कर रही है।

यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि कृषि पालन, पशुओं की देखभाल, वनाउत्पदों के संग्रह, ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में खनन, मजदूर खाद्य प्रसंस्करण, हस्तकाला छोटे-छोटे व्यवसाय में कहीं न कहीं दिखाई दे रही है।

ग्रामीण क्षेत्रों में इन महिलाओं के कार्यो को पद या उद्यमी के रूप में पहचाना नही जा रहा है, एक ओर जहां ग्रामीण महिलायें, ग्रामीण परिवेश में इन समस्त कार्यों में लिप्त हैं, जो कि व्यवसायिक व आर्थिक स्वरूप को बनाता है, किन्तु सही जानकारी का अभाव तथा सही दिशा-निर्देश न मिलने के कारण अपने गुणों को पहचान नहीं पा रही है जिससे ग्रामीण अंचल मे आर्थिक रूप से कई समस्यायें उत्पन्न होती है। इन समस्याओं का निपटारा साहूकारों से प्राप्त राशि के द्धारा होता है। जिससे आने वाली दो-तीन पीढ़ी कर्ज में लिप्त हो जाती है।

इसे विधि की विडम्बना ही कहा जा सकता है कि 21वीं सदी के प्रवेश द्धार पर खड़े होने के बावजूद प्रत्येक प्लेटफार्म पर महिला उत्थान तथा महिला स्वतंत्रता की बात करने के बावजूद महिला उत्थान हेतु दिन प्रतिदिन नई-नई योजनाएं घोषित होने के बावजूद तथा महिलाओं की भागीदारी के बिना देश, समाज के सफलता असंभव मनाने के बावजूद सब महिला उद्यमियों की बात आती है तो आज भी वही वस्तु स्थिति देखने को मिलती है जो हाथ से कई दशक पूर्व देखने को मिलती थी, यदि आज सफलता की दृष्टि से देखा जाए तो सफल उद्यमी के रूप में पुरुषों की तुलना में महिलाओं का अनुपात वही है जो वर्षो पूर्व था। यही वजह से महिला उद्यमियों द्धारा प्राय: यह शिकायत की जाती है कि उन्हे गंभीर नहीं लिया जाता है इस संदर्भ में समान्यत: महिला उद्यमियों द्धारा उन जिन प्रमुख अवरोधों का सामना प्राय: किया जाता है वे निम्न है-

1. गतिशीलता की समस्या।
2. अपने आप निर्णय लेने की क्षमता का अभाव।
3. वर्तमान व्यवसाय व्यवस्थाओं/आचार व्यवहार के साथ समझौता न कर पाना।
4. उद्योग/व्यवसाय में पूरा समय नही दे पाना।
5. व्यापार में अनुभव की कमी के कारण विवर्णन वित्तीय प्रबंधन और आर्थिक निर्माण की कमी के कारण महिलाओं का आगे न आना।
6. आर्थिक बाधाओं के कारण महिलायें पुरूषों की तरह निर्माण एवं निवेश करने के लिए स्वतंत्र नहीं है।

शोध साहित्य का सर्वेक्षण – डॉ. पी.के. मिश्रा (2005) मे अपने शोध कार्य मे व्यवसायिक क्षेत्र में आने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला, महिलाओं को उद्योग और व्यवसाय के क्षेत्र में इसलिए आना आवश्यक है कि वे अपने इस प्रयास से परिवार को एक स्थिर आर्थिक दावा प्रदान करने में सहायक हो सकती है। इसमें सफलता मिलने पर वे अपने वस्त्रों को प्रारंभ में जोखिम उठाने स्वयं निर्णय लेने, समस्याओं को हल निकालने आदि के लिए तैयार कर सकती है।

डॉ. प्रतिमा तिवारी (2011) में अपने शोध मे नई दिल्ली में महिला उद्यमिता की स्थिति का अध्ययन किया और पाया महिला उद्यमिता की स्थिति वर्तमान में सुधारी तो है आत्मविश्वासी कदमों की आफकड़ों पर नजर डाले तो विकास की आवश्यकता है। मात्र 45 प्रतिशत में भी 40 प्रतिशत महिला उद्यमी लघु व कुटीर और घरेलू उद्योगों में व्यस्त है, मात्र 5 प्रतिशत महिलाएं ही वृद्ध व मध्य में उद्योगों को संचालित कर रही है। यह भी उनके परिवार या पति द्धारा स्थापित किया जाता है। वे मात्र उसका संचालन कर रही है। लाभांश, निर्णय, भागीदारिता आदि का निर्णय उनके परिवार या पति का होता है।

उद्देश्य :

1. शोध अध्ययन का उद्देश्य उद्यमी महिलाओं की समस्याएं ज्ञात करना है।
2. यह शोध अध्ययन महिलाओं को परम्परागत रूढ़िवादी धारणाओं से मुक्त करके आर्थिक समाज विकास के मुख्य धारा से जोड़ने में मदद करेगा महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता उनके सशक्तीकरण के साथ उद्योग और व्यवसाय के क्षेत्र में उनकी आर्थिक भागीदारी में वृद्धि करेगा जिससे देश की अर्थ व्यवस्था भी सुदृढ़ और मजबूत होगी साथ ही रोजगार की संभावनाओं में भी वृद्धि होगी।

परिकल्पना का निर्माण – किसी कार्य को करना पूर्णत: इस बात पर

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

निर्भर करता है कि कार्य के सम्पादन से पूर्व उसके प्रारंभ करने और उसके सम्पादन के उपायों के संबंध में कई प्रकार की कल्पना करली जाऐ और उसके संपादन की रूप रेखा तैयार कर ली जाए इस शोध का मुख्य बिंदु उद्यमी महिलाओं की समस्याएं एवं सफल उद्यमी बनने के मूल मंत्र (सतना जिले के विशेष संदर्भ में है)

न्यायदर्श का चुनाव – प्रस्तुत शोध अध्ययन में सतना शहर की 40 उद्यमी महिलाओं को उद्देश्यपूर्ण निर्देशन विधि से न्यायदर्श के रूप में चयनित किया गया।

न्यायदर्श की विशेषताएं :

1. सभी महिलाएं 25 से 50 वर्ष की आयु की है।
2. सभी महिला शिक्षित है।
3. सभी महिलाएं मध्यम वर्ग की हैं।

आंकड़ों का संकलन – शोध परक जानकारी प्राप्त करने हेतु साक्षात्कार विधि द्वारा महिला उद्यमियों से उद्यम को चलाने में अनुभूत समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त की गई। यह जानकारी उनसे उनके कार्यस्थल में जा कर एकत्र की गई। साक्षात्कार पूर्व उन्हे प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्य की जानकारी दी गई तथा उन्हें विश्वास भी दिलाया गया कि उनके द्वारा दी गई जानकारी केवल शोध कार्यो में ही प्रयुक्त की जाएगी। प्रत्येक साक्षात्कार में लगभग 15–20 मिनट का समय लगा। साक्षात्कार द्वारा प्राप्त उत्तरों को सारणीबद्ध करके विश्लेषित किया गया।

परिणाम – प्रस्तुत अध्ययन में सतना शहर की 40 उद्यमी महिलाओं पर साक्षात्कार विधि द्वारा प्राप्त परिणामों को तालिका में दर्शाया गया है–

क्र.	समस्याएं	N=40				N=40	
		हाँ		नहीं		योग	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	आत्मविश्वास	28	70%	12	30%	40	100%
2	रूढ़िवादी सोच	32	80%	8	20%	40	100%
3	स्थानीय स्तर पर वस्तुए उपलब्ध न होना	28	70%	12	30%	40	100%
4	वित्तीय सहायता प्राप्त करने की प्रक्रिया का जटिल होना	36	70%	4	10%	40	100%
5	आवश्यक प्रशिक्षण का अभाव	31	80%	8	20%	40	100%
6	पारिवारिक और सामाजिक सहयोग न मिलना	32	80%	8	20%	40	100%

उपरोक्त तालिका व अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि 70प्रतिशत महिलाएं उधम का संचालन करते समय आत्मविश्वास की कमी का अनुभव करती है। आत्मविश्वास की कमी भी व्यक्ति की कार्य क्षमता में कमी आ जाती है। महिलाओं में आत्मविश्वास की कमी का मुख्य कारण लिंग भेद शिक्षा की कमी है।

1. रूढ़िवादी सोच कारण 80 प्रतिशत उद्यमी महिलाएं अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन नहीं कर पाती है। रूढिवादी के कारण उद्यम क्षेत्र में पुरूषों का एकाधिकार माना जाता है।
2. किसी भी उद्यम को चलाने के लिए कच्चा माल मशीनरी कुशल श्रम की आवश्यकता होती है स्थानीय स्तर पर उपरोक्त की अनुपलब्धता उद्यमी महिलाओं के लिए एक प्रमुख बाधा होती है। सर्वेक्षित महिलाओं का 70 प्रतिशत उद्यम संचालन में स्थानीय सामग्री उपलब्ध न हो पाने की बाधा से ग्रस्त पाया गया है।
3. वित्तीय जोखित भी महिला उद्यमिता विकास में बाधक है, परिवार के विभिन्न सदस्य यदि जीवन निर्वाह के एक विशेष स्तर के आदी हो चुके हो तब आय की यह अनिश्चता उन्हे काफी शारीरिक तथा मानसिक यातना दे सकती है। उसके अतिरिक्त यह भय भी रहता है कि कही व्यवसाय के असफल होने पर उद्यमी द्वारा विनियोजित पूंजी डूब न जाए। अत: 90 प्रतिशत महिलाएं इसी कारण उद्यम के क्षेत्र में आने से हिचकिचाती हैं।
4. सर्वेक्षित उद्यमी महिलाओं में 80 प्रतिशत महिलाएं उद्यम संचालन संबंधी कमी को एक बाधा के रूप में स्वीकार करती हैं। किसी भी उद्यम में अधिकतम प्राप्त होने वाले लाभ के लिए उद्यम संबंधी उच्च स्तरीय दक्षता आवश्यक है। यह दक्षता प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त की जा सकती है। प्रशिक्षण की कमी उद्यम द्वारा प्राप्त होने वाले लाभ को सीधा प्रभावित करती है।
5. प्रत्येक महिला पारिवारिक जीवन में एक पत्नी और माँ और बहू की भूमिकाओं का निर्वाहन करती है। पारिवारिक दायित्वों के साथ–साथ अन्य उत्तर दायित्वों के निर्वाह के लिए परिवारिक सहयोग आवश्यक होता है। पारिवारिक सहयोग की कमी महिलाओं में नकारात्मक उत्प्रेरण का काम करती है। जिसका सीधा प्रभाव उनके उद्यम पर पड़ता है। वहीं पारिवारिक सहयोग, पति सास से मिलने वाला सहयोग उन्हें दोहरे उत्तरदायित्वों के निर्वाह में सहायक होता है। 80 प्रतिशत सर्वेक्षित महिलाएं पारिवारिक सहयोग के अभाव को प्रमुख बाधा मानती है।

इस प्रकार निष्कर्षत: कहां जा सकता है कि महिला उद्यमियों के दोहरे उत्तरदायित्वों के कारण तथा उसमें भी प्राथमिकता पति घर और को देने के कारण अधिकांश उद्यमी महिला परेशानियों को आते देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त ऐसे अनेक बाधक तत्व है जो महिला उद्यमियों को सफलता को प्रभावित करते है। श्रमिकों के साथ मिलकर उनके साथ बैठकर कार्य नही कर पाती है तथा शारीरिक रूप से अपेक्षाकृत स्ट्रांग नहीं होने के कारण वे लगातार ज्यादा देर तक कार्य नहीं कर पाती हैं तथा जल्दी घबरा जाती है। शोध का मूल उद्देश्य भावी उद्यमी महिलाओं को उद्यम के क्षेत्र में संभावित बाधाओं का पूर्वाभास कराना है। अत: यह महिला उद्यमियों के विशेष हित में होगा जिससे इस वस्तु स्थिति से निपटने हेतु पहले से ही तैयार रहे।

सफल उद्यमी बनने के सुझाव :

1. महिला उद्यमियों को पारिवारिक स्तर पर पति संतानों एवं सास द्वारा सहयोग दिया जाना चाहिए।
2. महिला उद्यमियों में आत्मविश्वास की वृद्धि के लिए सकारात्मक वातावरण उपलब्ध कराया जाना चाहिए।
3. उद्यम के क्षेत्र में स्त्री–पुरुष असमानता को दूर करने की दिशा में पहल की जानी चाहिए।
4. महिला उद्यमियों के लिए सरकारी ऋण प्राप्त करने की प्रक्रिया को सरलकृत किया जाना चाहिए।
5. विभिन्न उद्यम संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. उद्यमी – युधिष्ठिर हालदार (2014)

2. भारत मे विकास प्रशासन – सविन्दर सिंह, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग जालंधर (2001),
3. भोन्टगोमरी जोन डी. एण्ड चेंज न्यूयार्क – कोलम गोजर, मैग्त्रहिल (1966)
4. भारतीय आर्थिक नीति – बी.सी. सिन्हाए, पुष्पा सिन्हा (2008)
5. उद्यमिता विकास पुस्तक – त्रिभुवननाथ शुक्ला (2010)
6. व्यवसायिक क्षेत्र मं आने वाली – डॉ. पी.के. मिश्रा समस्याओं का अध्ययन (2005)
7. दिल्ली में महिला उद्योग की – डॉ. प्रतिभा तिवारी स्थिति का अध्ययन (2011)

****

हिन्दी साहित्य में महात्मा गाँधी और महिलायें : योग और विचार-दर्शन के सन्दर्भ में

डॉ. अभयवीर *

शोध सारांश – गाँधी जी भारतीय और पाश्चात्य महिलाओं के काफी सम्पर्क रहे उन्होने भारतीय नारी एवं पाश्चात्य परिवेश की नारियों को खूब देखा परखा साथ ही देशी विदेशी दाम्पत्य सम्बन्धों को समझा और जाना इसी कारण हिन्दी की मूर्धन्य कहानीकार सूर्यवाला जैसी विदुषी स्त्रियाँ गाँधी जी से प्रभावित हुए बिना न रह सकी हिन्दी के समस्त कहानीकार हों चाहे उपन्यासकार व अन्य विधाओं में रचना करने वाले हों सभी लेखक एवं कवियों में गाँधीत्व का अंश देखने को मिल ही जाता है गाँधी जी के विचार, जीवन शैली,सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना का संदेश हमें गाँधी से मिल ही जाता है। सूर्यवाला, मन्नू भण्डारी, मृदुला गर्ग, सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा जैसी महिला लेखिकाओं ने कहीं न कहीं अपनी कलम चलाकर गाँधी जी के सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला है। गाँधी जी के विचार एवं सिद्धान्तों का प्रभाव भारतीय दम्पतियों की जीवन शैली में देखने को मिलता हैं गाँधी जी ने अपने विचारों से अनेक महिलाओं को प्रभावित किया और विविध आचार-विचारों के साथ योग विधियों का ज्ञान भी भारत में ही नहीं विदेशों में भी प्रसारित किया जिससे एक नये समाज का रूप उभरकर सामने आया गाँधी जी के ऐसे विचार,सिद्धान्त,योग कार्य,स्मरणीय हैं ऐसे ही विचारों से आठ स्वदेशी एवं विदेशी महिलाऐं किसी न किसी प्रकार से गाँधी जी के सम्पर्क में आयीं और उनसे प्रभावित हुए बिना न रह सकीं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि गाँधी जी सामान्य व्यक्ति न होकर महापुरूष की एक आत्मा का अंश थे। गाँधी जी के दार्शनिक दृष्टिकोंण का प्रभाव भारत में ही नहीं विदेशों में भी पड़ा जिससे आज की संस्कृति प्रेरणा ले रही है।

शब्द कुंजी – गाँधीवादी विचार धारा, गाँधीजी और महिलायें,साहित्य में गाँधी। गाँधी का दर्शन, दाम्पत्य सम्बन्ध और योग।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. गाँधी वादी विचारधारा का उल्लेख कर दाम्पत्य सम्बन्धों में गाँधी की महत्वता बताना।
2. साहित्यिक लेखन में गाँधीवादी विचार धारा के प्रभावों का उल्लेख करना।
3. महिलाओं पर गाँधी जी के प्रभावों का उल्लेख करना।
4. आज के सन्दर्भ में गाँधी वादी विचार धारा की आवश्यकता पर जोर देना।
5. भारतीय एवं पाश्चात्य सभ्यता की महिलाओं पर गाँधी जी के प्रभावों का उल्लेख करना।
6. गाँधी दर्शन और गाँधी के योग कार्यो का उल्लेख करना।

प्रस्तावना – गाँधी साहित्य का अध्ययन करने पर हम पाते है कि गाँधी के जीवन में आठ महिलाऐं अत्यधिक करीब रहीं जिनसे गाँधी प्रभावित हुए तो ये महिलाऐं भी गाँधी से काफी प्रभावित रहीं इन आठ महिलाओं का विवरण निम्न प्रकार है। ज्यादातर महात्मा गाँधी की तस्वीरों पर गौर किया जाये तो ज्यादातर तस्वीरों में गाँधी के करीब काफी लोगों की भीड़ दिखाई देती है। इस भीड़ में कुछ नाम ऐसे लोगों के रहे हैं जिन्हें भारत का लगभग हर नागरिक जानता है मसलन जवाहर लाल नेहरू, नेताजी सुभाष, सरदार पटेंल,कस्तूरबा गाँधी लेकिन गाँधी के करीब इसी भीड़ में कुछ लोग ऐसे भी रहे जिनके बारे में शायद कम ही लोग जानते हैं। भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति की महिलाओं पर गाँधी जी के सिद्धान्त,विचार,योग क्रियाओं का काफी प्रभाव पड़ा जिसके कारण दाम्पत्य सम्बन्धों में भी परिवर्तन आज तक दिखाई देता है।

मोहनदास करमचन्द गाँधी के विचारों की वजह उनके बेहद करीब रही ऐसी महिलाओं के विवरण निम्न प्रकार हैं।

1. मेडेलीन स्लेड उर्फ मीराबेन (1892-1982) – मेडेलीन ब्रिटिश एडमिरल सर एडमंड स्लेड की बेटी थी एक ओहदेदार की बेटी होने के चलते उनकी जिन्दगी अनुशासन में गुजरी मेडेलीन जर्मन पियानिस्ट और संगीतकार बीयावेन की दीवानी थी इसी बजह से वो लेखक और फ्रांसीसी बुद्धिजीवी रोमैन रोलेंड के सम्पर्क में आयीं। यह वही रोमैन रोलेंड थे जिन्होने सिर्फ संगीतकारों पर लिखा बल्कि महात्मा गाँधी की बायोग्राफी भी लिखी गाँधी पर लिखी रोमेंन की बायोग्राफी ने मेडेलिन को काफी प्रभावित किया गाँधी का प्रभाव मेंडेलिन पर इस कदर रहा कि उन्होने जिंदगी को लेकर गाँधी के बताये रास्तों पर चलने की ठान ली गाँधी के बारे में पढ़कर मेंडेलीन रोमांचित हुयीं और उन्होंने खत लिखकर अपने अनुभव साजा किये और साथआने की इच्छा जाहिर की शराब छोड़ने, खेती सीखना शुरू करने से लेकर शाकाहारी बनने तक मेंडेलीन ने गाँधी का अखबार 'यंग इड़िया' भी पढ़ना शुरू किया अक्टूबर 1925 में वो मुम्बई के रास्तों अहमदाबाद पहुंची गाँधी से अपनी पहली मुलाकात को मेडेलिन ने कुछ यूं बयाँ किया है 'जब मैं वहाँ दाखिल हुयी तो सामने से एक दुवला शख्स सफेद गदद्दी से उठकर मेरी तरफ बढ रहा था मैं जानती थी कि ये शख्स बापू थे मैं हर्ष और श्रद्धा से भर गई थी मुझे वस सामने एक दिव्य रोशनी दिखाई दे रही थी मैं बापू के पैरों मे झुककर बैठ जाती हूँ, बापू मुझे उठाते हैं और कहते हैं तुम मेरी बेटी हो।'

मेडेलिन और गाँधी के बीच इस दिन से एक अलग रिश्ता बन गया बाद में मेडेलिन का नाम मीराबेन पड़ गया।

2. निला क्रैम कुक (1972-1945) – आश्रम में लोग निला नागिनी

* असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी) कमला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धौलपुर (राज.) भारत

कहकर पुकारते खुद को कृष्ण की गोपी मानने वाली निला माउंटआबू में एक स्वामी धार्मिक गुरू के साथ रहती थी। अमरीका में जन्मी निला को मैसूर के राजकुमार से इश्क हुआ निला ने वर्ष 1932 में गाँधी को बंगलूरू से खत लिखा था इस खत में उन्होने छुआछूत के खिलाफ किए जा रहे कामों के बारे में गाँधी को बताया दोनों के वीच खतों का सिलसिला यहाँ से शुरू हुआ फरवरी 1933 में निला की मुलाकात यरवदा जेल में गाँधी से हुई थी फिर गाँधी ने निला को साबरमती आश्रम भेजा वहाँ कुछ वक्त बाद ही वे नए सदस्यों से खास जुड़ाव महसूस करने लगी थी उदार ख्यालों वाली निला के लिए आश्रम जैसे एकांत माहौल में फिट होना मुश्किल भरा रहा ऐसे में वो एकदिन आश्रम से भाग गई बाद में वो एक रोज वृन्दावन में मिली थी, कुछ वक्त बाद उन्हें अमरीका भेज दिया गया जहाँ उन्होंने इस्लाम कबूल लिया और कुरान का अनुवाद किया। निला पर गाँधी के विचार, सिद्धान्त, योग क्रियाओं का काफी प्रभाव पड़ा।

3. **सरला चौधरानी** (1872-1975) - उच्च शिक्षा सौम्य सी नजर आने वाली सरला देवी की भाषाओं, संगीत और लेखन में गहरी रूचि थी सरला रविंद्रनाथ टैगोर की भतीजी भी थी। लाहौर में सरला के घर पर ही गाँधी जी रूके थे यह वह दौर था जब सरला के स्वतंत्रता सेनानी पति रामभुज दत्त चौधरी जेल में थे दोनों एक दूसरे के काफी करीब रहे । इस करीबी को समझने का एक अंदाजा इस बात से लगा सकते हैं कि गाँधी सरला को अपनी 'आध्यात्मिक पत्नी' बताते थे बाद के दिनों में गाँधी ने ये भी माना कि इस रिश्ते की वजह से उनकी शादी टटते-टूटते बची। गाँधी और सरला ने खादी के प्रचार के लिए भारत का दौरा किया दोनों के रिश्ते की खबर गाँधी के करीबियों को भी रही, हक जमाने की सरला की आदत के चलते गाँधी ने जल्द उनसे दूरी बनाली कुछ वक्त वाद हिमालय में एकांतवास के दौरान सरला की मौत हो गई। सरला के जीवन पर गाँधी दर्शन और यौगिक क्रियाओं का प्रभाव भी पड़ा।

4. **सरोजिनी नायडू** (1879-1949) - भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पहली महिला अध्यक्ष सरोजिनी नायडू गाँधी की गिरफ्तारी के बाद नमक सत्याग्रह की अगुवाई सरोजिनी के कंधों पर थी सरोजिनी और गाँधी जी की पहली मुलाकात लंदन में हुई थी। इस मुलाकात के बारे में सरोजिनी ने कुछ यूँ बताया था-'एक छोटे कद का आदमी जिसके सिर पर बाल नहीं थे जमीन पर कंबल ओढ़े ये आदमी जैतून तेल से सने हुए टमाटर खा रहा था दुनिया के मशूहर नेता को यूँ देखकर मैं खुशी से नाच उठी तभी वे अपनी आँख उठाकर मुझसे पूछते हैं आप जरूर मिसेज नायडू होंगी इतना श्रद्धाहीन और कौन हो सकता हैं। आइए मेरे साथ खाना शेयर कीजिए।'

जबाब में सरोजिनी शुक्रिया अदा करके कहती हैं, क्या बेकार तरीका है ये और इस तरह सरोजिनी और गाँधी के रिश्ते की शुरूआत हो गई थी। जीवन भर नायडू पर गाँधी के विचार,सिद्धान्त,उनकी यौगिक क्रियाऐं हावी रहीं।

5. **राजकुमारी अमृत कौर** (1889-1964) - शाही परिवार से ताल्लुक रखने वाली राजकुमारी अमृत कौर कपूरथला पंजाब के राजा सर हरनाम सिंह की बेटी थी राजकुमारी अमृत कौर की पढाई इंग्लैण्ड में हुई थी राजकुमारी अमृत कौर को गाँधी की सवसे करीबी सत्याग्रहियों में गिना जाता था बदलें में सम्मान एवं जुड़ाव रखने वाली राजकुमारी ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी 1934 में हुई पहली मुलाकात के बाद गाँधी और राजकुमारी अमृत कौर ने एक-दूसरे को सैकड़ों खत भेजे नमक सत्याग्रह और 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान वो जेल भी गई स्वतंत्र भारत की पहली स्वास्थ्य मंत्री बनने का सौभाग्य भी राजकुमारी अमृत कौर को मिला।

गाँधी राजकुमारी अमृत कौर को लिखे खत की शुरूआत 'मेरी प्यारी पागल और बागी' लिखकर करते और खत के आखिर में खुद को तानाशाह लिखते। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि राजकुमारी जी पर गाँधी जी पूरी तरह हावी रहे।

6. **डॉ. सुशीला नायर** (1914-2001) - गाँधी के सचिव महादेव देसाई के बाद प्यारेलाल की बहिन थी ये पंजाबी परिवार से थे। माँ के तमाम विरोध के बाद से दोनों भाई-बहिन गाँधी के पास आने से खुद को नहीं रोक पाए थे। हालांकि बाद में गाँधी के पास जाने से रोकने वाली उनकी माँ भी महात्मा गाँधी की पक्की समर्थक बनी। चिकित्सा की पढ़ाई करने के बाद सुशीला महात्मा गाँधी की निजी डॉक्टर बनी मनु और आभा के अलावा अक्सर गाँधी जिनके कंधों पर अपने बूढ़े हाथ रखकर सहारा लेते उनमें सुशीला भी शामिल थी भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान से कस्तूरबा गाँधी के आखिरी दिनों में सुशीला उनके साथ रहीं थी इसके अलावा सुशीला गाँधी के बृह्मचर्य पर किये प्रयोगों में भी शामिल हुई थी। इस प्रकार हम सकते है कि गाँधी के सम्पूर्ण क्रियाकलापों का प्रभाव सुशीला नायर पर पड़ा।

7. **आभा गाँधी** (1927-1995) - आभा जन्म से बंगाली थी आभा की शादी गाँधी के परपोते कनु गाँधी से हुई, गाँधी की प्रार्थना सभाओं में आभा भजन गाती थी और कनु फोटोग्राफी करते थे 1940 के दौर की महात्मा गाँधी की काफी तस्वीरें कनु की ही खींची हुई हैं आभा नोआरवाली में गाँधी के साथ रहीं यह वो दौर था जब पूरे मुल्क में दंगे भड़क रहे थे और गाँधी हिन्दू मुस्लिम के बीच शांति स्थापित करने की कोशिश में जुटे हुए थे नाथूराम गोडसे ने जब गाँधी को गोली मारी तब वहाँ आभा भी मौजूद थी। आभा पर गाँधी की यौगिक क्रियाओं का काफी प्रभाव पड़ा।

8. **मनु गाँधी** (1928-1969) - बहुत हल्की उम्र में मनु गाँधी के पास चली आई थी। मनु महात्मा गाँधी की दूर की रिश्तेदार थी गाँधी मनु को अपनी पोती कहते थे नोआखाली के दिनों में आभा के अलावा ये मनु ही थी जो अपने बापू के बूढ़े शरीर को कंधा देकर चलती थी, जिन रास्तों में महात्मा गाँधी के कुछ विरोधियों ने मल-मूत्र डाल दिया था, उन रास्तों पर झाड़ू उठाने वालों में गाँधी के अलावा मनु और आभी ही थी कस्तूरबा के आखिरी दिनों में सेवा करने वालों में मनु का नाम सबसे ऊपर आता है। मनु की डायरी पर गौर करें तो उसमें यह जानने में काफी मदद मिली है कि महात्मा गाँधी के आखिरी के कुछ साल कैसे बीते थे।

निष्कर्ष - इस प्रकार से इन आठ महिलाओं का अवलोकन करने पर हम पाते हैं, महात्मा गाँधी महिलाओं से लगाव रखने के साथ-साथ सुखद एवं आनन्दमयी जीवन यापन करने के लिए गाँधी हमेंशा समर्थक रहे, उन्होंने महिलाओं के उत्थान के लिए समय-असमय प्रयास किये एवं महिला शिक्षा महिला मूल्य स्थापना,योग पर भी खूब जोर दिया यदि गाँधी महिलाओं के उत्थान हेतु सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में भागीदारी नहीं निभातें तो आज की आधुनिक नारी का उत्थान किसी भी प्रकार से संभव नहीं हो पाता साहित्यिक रचनाओं में संलग्न लेखक-लेखिकाओं ने गाँधीवादी दृष्टिकोंण को ध्यान में रखकर ही साहित्य का सृजन किया प्रेम का कहानी साहित्य हो चाहे महिला कहानीकारों में सूर्यवाला जैसा नाम हो तो दूसरी ओर महादेवी वर्मा,सुभाद्रा कुमारी चौहान ने भी गाँधी जीवन के अनेक प्रसंगों का उल्लेख अपने साहित्य में किया है। नये समाज का निर्माण करने के लिए गाँधी जी ने स्त्री-पुरूष की गरिमा का उल्लेख करने वाले अनेक आन्दोलन चलाये जिसमें

स्त्री–पुरूष अपने अहम् को पहचानने लगे साथ ही नारी की तीवृ गति से प्रगति में मुख्य योगदान गाँधी वादी विचारधारा को कहा जाये ता सटीक जान पड़ता है आज नये समाज का नव–निर्माण करने में गाँधीवादी विचारधारा की आवश्यकता है। भारतेन्दु काल से आज तक कहीं न कहीं गाँधी वादी विचारधारा का प्रचलन लेखक व लेखिकाऐं करने में लगे हुए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मनु की डायरी
2. वीवीसी हिन्दी
3. हिन्द स्वराज 1909
4. सत्य के प्रयोग 1927
5. भारत : गाँधी के बाद
6. मेरे सपनों का भारत 1947
7. आरोग्य की कुंजी 1948
9. The Mind of Mahatama Gandhi 1945
10. The Way to Good 1971
11. The Essential Gandhi 1962
12. The Word of Gandhi 1982
13. www.hindustan Express.com
14. www.deanik bhaskar.com
15. www.rajasthan patrika.com

****

Modernisation of the Princely State of Bikaner By Maharaja Ganga Singh

Girdhari Singh*

Introduction - Maharaja Ganga Singh (1880-1943) ruled the Bikaner princely state for fifity-six years, improving its amenities of education and medicine, modernizing its transport and communications network. And cutting the famous Gang Canal through the barren wastes (jangaldesh) in the north. The old military forces of Bikaner state were modernized by Ganga singh, serving with distinction in several overseas military campaigns, and were the Bikaner princely stere's contribution to the Indian Army after its merger with India.

1. Modernisation of Bikaner state Army - The order and training of the Bikaner army had not changed by much in 500 years of history; a centrally raised force of cavalry, artillery, infantry, camel cavalry and camel artillery, which was augmented from the quotas contributed by the Rajput chieftains of Bikaner. Under Ganga Singh this force was standardized in rank and pay structure, its training and equipment was improved, the system of feudal quotas was ended, and each unit was given formal uniforms and designations. In 1933 the Bikaner army included:

The Dungar Lancers, numbering 342 horsemen and including the maharaja's bodyguard unit. This cavalry force was named after the previous maharaja Dungar Singh, Maharaja Ganga Singh's elder brothe.

The Ganga Risala, wihich the British came to call the Bikaner Camel Corps, numbering 466 and named after the maharaja.

The Sadul Light Infantry of 619 men, named after Maharaja Ganga Singh's elder son, Sadul Singh.

The Bijay Battery, a mounted camel pack with 4 BL 2.75"guns, manned by 236 men and named after the maharajas's younger son bijey singh.There was, in addition, a second camel battery unit with smaller guns.

Motorised Machine Gun section of 22 Lewis and 8 Hotckiss guns. Manned by 100 men.

State Band: Ganga Risala, which was formally rasied in 1889 has six companies of 500 men marked as Imperial service Tropps, the composition of soldiers was:

(1) Seventy-five percent Rajputs of the ruling Rathod clan of Bikaner.

(2) Twenty-five percent Rajputs of other clans and a few Sikhs and Kiamkhani Muslims.

The first major use of this new army was in the Great Famine of 1899 which afflicted a large part of British and princely India. Organising famine relief is a measure of an afficient administration, and while using the army to transport grain to relief centers, Ganga Singh also launched public works to give employment and income to his people for the successful disbursement of relief material.

The twenty-year old maharaja led the Ganga Risala to China for service in the Boxer Rebellion from September 1900 to May 1901.The Camel Corps saw action as a dismounted unit in that theater. The most shining moment for the Ganga Risala came in the Somaliland expedition where it operated till 1904, and was deemed most useful in that waterless tract.

Ganga Singh was not permitted to join the Somaliland campaign, but he led the camel corps to Egypt during the First World War. It was the only camel corps available and was utilized for patrol and reconnaissance along the Suez Canal, which was under attack from the Turks. In one engagement the maharaja himself fired many rounds at the enemy, and after their defeat led the Ganga Risala in pursuit. The Bikaner Camel Corps, along with the Bijay Battery, was again deployed in the Middle East during the Second World War. Other units like the Dungar Lancers, the machine gun section and the Sadul Light Infantry were also utilized in different theaters of that global conflicT.

Camel Corps of other Indian Kingdoms - The Bikane Camel Corps, along with the irregular troops of the Jaisalmer Risala, became the 13 Grendiers of the Indian Army and saw action during the 1965 and 1971 wars. Subsequently, this unit was convetted into regular infantry while the camels became part of the Border Security Force(BSF).

2. Progress of Irrigation - The Bikaner State administration next turned its Attention to the canal irrigation. First , it made efforts to review the use of water from the old Ferozeshah canal now part of the West Jamuna Canal which had been suspended for irrigation . the area irrigated in the state after the revised agree ment went down from 33 to 20 precent whereas, the area irrigated in the british india went up to 80 perecent of the total irrigation Financially also, as the expendition on the up keep of these canals

*Research Scholar, Govt. Dungar College Bikaner (Raj.) INDIA

exceeded the revenue, the Ghaggar Canals proved more of liability than a asset.

Of all the canal irrigation projects undertaken by the Maharaja to alleviate the suffering of the peasantry in the stare, the Ganga canal irrigation project was the broadest of this achievements. Therefore, when the sutlij valley project was prepaned by R.G. kennedy, the then chief engineer of Punjab which included a weir ligher up the river at harike and was to have commanded a much langer area of the state, the maharaja impressed by the prespects of the Sutlej Project rushed to Simla to plead for his case before Lord Curzon The agreement was signed between the Punjab, Bahawalpur and the Bikaner Government on 4th September 1920 the canal which was rightly called the Gang canal, after the name of the Maharaja was formally inaugurated by the viceroy on 26th October 1927.

A remarkable feature of the project was that the main canal down to Shivpur, a distance of 80 miles, was lined, its bed and sides with concrete to conserve water and prevent wather logging it was claimed to be the longest lined canal in the world the cost of the lining was 77.5 lakhs. It was the special characteristic of the maharaja to utilize the state's own resources in all undertakings whenever possible. The canal was designed to irrigate 6,20,000 acres. The whole secheme of colonization of the area to be irrigated (1000 sqs.miles) was organized in the minutest details with the help of Mr. Rudkin, the then revenue Minister of the state. It was dinded into squares of 25 bighas each. The whole area was devided in to 913 chakes or water courses, of which 495 were since to the old inhabitants, few chaks sold by quction and remaining.

Chaks were sold at fixed rates. The scheme virtually costed nothing to state treasury and yet created a perennial source of revenue to the state. Another impact of the Gang canal was coming in to existence of 500 new villages. All planned and built on systematic lines. The project brought about a phenomenal increase in population development of cultivation and subsequent establishment of marketing centres and trading towns. It also led to the considerable industrial development of the state.[7]

3. Progress of Medical Relief - There had been a continuous string of progress in the Medical Department of the Bikaner State right from 1897 A.D., but the rate of the progress was severely impeded due to the fact that this department was under the charge of the civil surgeon of Bikaner, who served under the Government of India and not under the State of Bikaner.[8] After the conference at mount Abu in May,1910, where the decision to have a self-contained Medical Service of the State was taken, the Medical department came under the State and was manned entirely by State Sub-Assistant Surgeons or others, recruited through private arrangements. Provision was also made to obtain Medical Specialists on loan basis from the Governement of India who would serve under the State Administration.[9]

The First General Hospital in the State was built in the Capital in 1894 A.D. during the Regency period of Maharaja Ganga Singh. It soon became evident thatem in so far as, the Building and accommodation was concerned this hospital was proving imadequate. In 1907 A.D. therefore, one new operation theatre providing with the then Modern facilities was added to it. Since the Allopathy System of medicine was gaining popularity by then, One separate women's Hospital was constructed in 1913-14 A.D. at a sost of 50,413/- and was manned by a competent and highly trained staff.[10]

The construction of two new General Hospitals one for men and the other a separate self-contained Hospital for women with accommodation for 137 and 107 beds respectively, and each having two separate operative units equipped for all major surgical work were completed in March1937 and were named as the Prience Bijay Singh Memorial General Hospital for women.

The Bikaner was Hospital for the treatment and care of the sick and wounded soldiers and officers of the Indian Army with 400 beds was established in 1940 A.D. [12] The First bach of 88 patients was admitted in 1940-41 A.D. Consturction of an upper storey over the P.B.M. General Hospital for Men to accommodate additional was patients was completedat a cost of Rs. 51,613/- . For the benefit of the State Troops, a well-equipped Hospital was opened in February,1914 seperately. It was named the "Sadul Military Hospital" after the Heir-Apparent. It was thoroughly reorganized in 1935-36 A.D. to conform to the standards of an efficient Modern Military Hospital.[13]

It is thus evident that this highness had steadily and ardently worked for the infusion of modern techniques and advancement in the medical field and tried to make them available to the people of Bikaner State and also at the same time to educate them against the various health hazards.

4. The famine Relief Policy of Maharaja Ganga Singh - Maharaja Ganga Singh came to the throne of Bikaner on 16th Dec. 1898. Within eight monts of his enthronement, the state had to face one of the worst famines in 1899-1900. The whole of Bikaner State fell in to the grip of this greate calamily. At that time he was only eighteen years old. [14] But the manner in which he fought the famine inspite of his young age was really praiseworthy. Looking to the severity of the famine, he constituted a special famine department with himself as its head on 23rd August 1899. He discussed the problem with Major H.V. cox of the Imperial Service Troops and according tohis suggestions, in to a part of the Famine Department.[15]

The commissioned and non-commissioned officers and the men of the camel corps and of the State troops were engaged on Famine duties. Secondly, he instructed all the authorities of the various related departments to keep him informed of all aspects of the distress and the progress of the relief measures. More relief works were opened to cope with the appalling famine of 1899-1900. In all, nine irrigation, two railway, three road and nine miscellaneous famine works were executed during the course of this famine . All famine relief works throughout the state were inspected by the Maharaja himself. This timely help and

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

personal supervision of famine relief works by the Maharaja enabled the people to withstand the calamity boldly.[16]

Sir Arthur Martindale, agent ot the governor general in Rajputana, on his visit to Bikaner in the month of March 1900, deseribed the famine administration of Bikaner State as the best in the whole of the Rajputana.[17] Owing to the failure of the crops, the prices of food grains rose very high. The Maharaja immediately arranged import of food grins from the Punjab and the North-western provinces. But the main problem before the Maharaja was to transport the grain from railway stations tovarious remote parts of the state.[18]

The Maharaja of Bikaner realized that it was only the military who could carryout this work with efficiency. So the Maharaja used his Ganga Risala Camel Carts for transporting the food grains to the villages and mitigated the sufferings of these helpless people of Bikaner State.[19]

5. Progress of Judiciary in Bikaner State – When Maharaja Ganga Singh ascended the throne,the administarationof justice in the State of Bikaner was medieval in nature.The reorganization of judiciary in Bikaner was attempted for the first time in 1871 A.D. when three types of courts were setup at capital. These were further assisted by courts set up at Tehsil Headquarters where the Tehsildars could try civil as well as Criminal cases. In 1884-85 A.D. The central Civil and Criminal courts were abolished and replace by Nizamat courts of Bikaner, Reni and Sujangarh.

The Maharaja Ganga Singh decided to established a chief court in 1910 A.D. presided over by a chief Judge and two other judges. The oppointments and removal of Judges, however depended upon the pleasure of the Maharaja. [21] The next important land mark in the evolution of judiciary and the administration of justice in Bikaner State was the establishment of a High Court in place of chief courts on May 3,1922. The High Court was established under the Royal Charter. The reiforms of 1940, further led to minor amendments, pertaining to the organization of judiciary.An appeal against the judgement, order of sentence of High Court in the exercise of criminal jurisdication could be made to the Maharaj. The interest and initiative taken by Maharaja Ganga Singh, introduced in Bikaner a scientifically organized judicial System.

6. Industrial Progress in Bikaner - The two outstanding works of Maharaja Ganga Singh which contributed more than any other efforts to the economic growth of the State were the bringing to the Gang Canal and the expansion of Railways. Development of power resources is considered indispensable for the rapid growth of Industrialisation. This did not go un noticed in the reign of Maharaja Ganga Singh. Electricity first came to Bikaner as early as 1886 A.D. In 1902 A.D. A Thermal Power House was erected on modern lines but the demand quicly outgrew the ever increasing consumptionand one larger power house was set up in 1986 A.D. In the newly established industrial area at Bikaner town power was used in factories for wool pressing, ice, glass etc. [22]

As a keen observer of financial affairs, Ganga Singh Ji took every possible step to exploit the mineral resources on modern lines so as to widen the economic base of the state. We can say that although the construction work under the regime of Maharaja Ganga Singh growth in industrial field was rather limited due to so manyfactors constrollable and uncontrollable but a take of stage had been reached.

Conclusion - Maharaja Ganga Singh ji who ruled the state fo a period of about fifty Six years was in many respects the builder of Modern Bikaner for the stamp of his personality could be seen in almost every walk of life by his multisided genius, keen administrative acumen, benevolent deeds and soldier states man habits, Maharaja Ganga Singh successfully elevated there evenues and status of the house of Bikaner, His superb performance in renovating the state army and administration, his magnified rloe in the chamber of princes and inter national conference and implementation of state polices had earned for him the richly deserved title of “Bismark of Bikaner”.

References :–

1. Rajyashree Kumari:- The Maharaja of Bikaner, page 297
2. Rajyashree Kumari:- The Maharaja of Bikaner, page 298
3. K.M. Panikkar:- His Highness The Maharaja of Bikaner:A Biography-Fagan’s Report R.S.A.B. – oxford Uni. Press, 1937 p. 288
4. “Four decades of progress in Bikaner”, A state publication, Bikaner, 1937. P.88
5. Foreign & Political Departmnet- Bikaner press cutting from the “ Civil and Military Gazett” F.N. 70dated 27-10-1927
6. Reports on the administration of Bikaner for 1926-27, p.17
7. K.M. Pannikar; O.P. Cit. P.301-302
8. Salient Features of administration of Bikaner State p.63
9. Four decades of progress in Bikaner ,1937 p.50-51
10. Salient Features of administration p.66; Public Health, file no 118 of 1920 A.D.
11. Four decades of progress, PP 54-55.
12. Reports on political Administration p.92
13. Fourd Decades of progress, p. 56
14. Report on the famine relief operations in the Bikaner State, Bikaner, 1900 A.D.
15. Report on the Political Administration of the Rajputana State for 1899- 1900, P.91.
16. Ojha, G.H. – The History of Rajputana, Vol.V part II, Bikaner 1939, PP.505-06
17. Rajasthan District Gazetteer, Bikaner (1972), p.144
18. K.M. Pannikar; His Highness the Maharaja of Bikaner a biography, London 1937, P.61.
19. Mahakma Khas, Bikaner , File no. 23 of 1900, Bundle No.32
20. Meghh singh – Tararikh Riyast Bikaner, P.102
21. Reports on the administration of Bikaner State, 1910-11, p.6
22. G.S.L. Devra – Bikaner Administration , P; 159-62.

भारत में महिला उद्यमिता : उपलब्ध अनुकुलताएं एवं चुनौतियां

डॉ. सविता अग्रवाल * डॉ. वीनस शाह **

प्रस्तावना – प्रत्येक परिवार का आधार स्तंभ महिलाऐं होती है। परिवार से ही समाज व समाज से देश का निर्माण होता है। इस दृष्टि से किसी भी देश की सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक प्रगति उस देश में महिलाओं की स्थिति पर निर्भर करती है। महिलाओं को परिवार की विभिन्न क्रियाओं में चाहे व बच्चों के लालन-पालन व शिक्षण का कार्य हो, रिश्तों में सामंजस्य स्थापित करना या परिवार की आर्थिक क्रियाओं में समायोजन का कार्य हो, प्रत्येक कार्य उसे कुशलतापूर्वक पूर्ण करने होते है। इस दृष्टि से महिलाओं में प्रबंधकीय गुण व उपलब्ध साधनों के सर्वश्रेष्ठ उपयोग की क्षमता अपेक्षाकृत अधिक होती है। यदि उचित वातावरण निर्मित किया जाये तो महिलाएं उद्यमिता के क्षेत्र अपने प्राकृतिक गुणों के कारण अधिक सफलता प्राप्त कर सकती है।

आज भारत में जनसंख्या का करीब 47 प्रतिशत हिस्सा महिलाओं का है। परंतु इनमें से अधिकांश महिलाएं या तो मजदूरी कार्य अथवा पारिवारिक जिम्मेदारियों के निर्वाहन में अपना समय व्यतीत कर रही है।

अनेक प्रयासों एवं विभिन्न योजनाओं के लागू करने के उपरांत भी भारत में महिला उद्यमिता हेतु एक उचित वातावरण निर्मित नहीं हो पाया है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य इन्हीं तथ्यों का विश्लेषण करना है, कि अनुकूल वातावरण के उपरांत भी महिलाओं की सहभागिता उद्यमिता के क्षेत्र में सीमित क्यूं है ? साथ ही शोध पत्र में सुझाव भी शामिल है, जिनके माध्यम से भारत जैसे विकासशील देश में महिला उद्‌यमिता को प्रोत्साहित कर न केवल आर्थिक विकास में तीव्रता लायी जा सके वरन् महिलाओं व पुरूषों को समान दर्जा दिये जाने के सामाजिक उद्देश्य को भी पूर्ण किया जा सके।

शोध हेतु मुख्य रूप से द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है।

परिचय – उद्यमशीलता जीवन का महत्वपूर्ण तत्व है यह मानव को कर्म करने हेतु प्रेरित करता हैं। इसका उद्देश्य मात्र धनार्जन नहीं, वरन् यह व्यक्तित्व विकास एवं संपूर्ण सामाजिक विकास की आधारशीला है जीवन के आयामों में आ रहे परिवर्तनों का श्रेय उद्यमशीलता को ही हैं। उद्यमशीलता एक तकनीक, कौशल एवं चिंतन के साथ एक जीवन पद्धति भी है जो मानवीय प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति को एक सशक्त मार्ग प्रदान करती हैं।

विकासशील देशों में उद्यमिता समृद्धि का एक महत्वपूर्ण आधार है उद्यमिता के माध्यम से नवीन उत्पादों व सेवाओं को खोजा जाता है जिससे देश की अर्थव्यवस्था को विकास के अवसर प्राप्त होते हैं।

सामान्यत: उद्यमिता के क्षेत्र में पुरूष वर्ग का ही वर्चस्व रहा है लेकिन पिछले कुछ वर्षो में उद्योग व्यवसाय के क्षेत्रो में महिलाएँ भी अग्रसर हो रही हैं।

महिला उद्यमी से आशय: जनसंख्या के उस भाग से है जो औद्योगिक क्रियाओं में साहसिक कार्य में संलग्न हैं।

उद्यमिता के संदर्भ में महिलाएं भी प्रयत्नशील हैं। वर्तमान परिपेक्ष्य में महिलाऐं विभिन्न कार्य क्षेत्रों की चुनौतियों को स्वीकार कर अपनी उपयोगिता को स्थापित करने के लिए प्रयासरत् हैं। विभिन्न आर्थिक तथा सामाजिक कार्य क्षेत्रों में महिलाओं ने सफलता अर्जित कर यह सिद्ध किया है कि वह देश के विकास में अपनी भागीदारी दे सकने में सक्षम हैं। उद्योग व व्यवसाय के क्षेत्र में धीरे-धीरे महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही है लेकिन महिला उद्यमिता की यह सफलता केवल चुनिंदा क्षेत्रों तक सीमित है। आज भी महिला उद्यमियों ने उद्यमिता के संदर्भ में पुरूषों के बराबर स्थान प्राप्त नहीं किया हैं। भारतीय संस्कृति में आज भी महिलाओं को पुरूषों के अधीन ही माना जाता है फिर भी अनेक प्रतिरोधों, संकीर्ण मानसिकताओं व उपेक्षित वातावरण के बावजूद महिलाऐं अपने अस्तित्व के लिए प्रयत्नशील हैं।

आज शिक्षित महिलाऐं घर की चार दीवारी में रहने की अपेक्षा आत्मनिर्भरता को महत्व देने लगी है परन्तु आज भी मात्र कुछ प्रतिशत महिलाओं की आबादी शिक्षा, चिकित्सा, नर्सिंग, व्यक्तिगत सेक्रेटरी आदि गिने चुने व्यवसाय तक ही सीमित हैं। बहुत कम महिलाऐं ही उद्योग व्यवससाय जैसे क्षेत्र में प्रवेश कर पाती हैं।

शोध पत्र के उद्देश्य – शोध पत्र निम्न उद्देश्यों पर केन्द्रित कर बनाया गया है –

1. महिला उद्यमिता को प्रभावित करने वाले तत्वों का अध्ययन।
2. महिला उद्यमियों की समस्याओं का अध्ययन
3. अनुकुल वातावरण की उपलब्धता के उपरांत महिला उद्यमिता की सहभागिता में कमी के कारणों का अध्ययन।

महिला उद्यमी का विकास – आर्थिक विकास के प्रति बढ़ती जागरूकता, बदलता सामाजिक परिवेश, बदलती संस्कृति और आधुनिक सभ्यता ने विश्व के विभिन्न समाजों को प्रभावित किया है, इससे भारतीय समाज भी अछूता नहीं हैं। आज विभिन्न आर्थिक सामाजिक कार्यक्षेत्र में महिलाओं ने सफलता की ओर अपने कदम बढ़ाकर यह सिद्ध किया है कि महिलाएँ परंपराओं से हटकर एक नयी संस्कृति की रचना कर सकती हैं। आज अनेक लघु उद्योगों का संचालन महिला उद्यमियों द्वारा किया जा रहा हैं। स्वरोजगार के क्षेत्र में जुडी महिलाओं ने अब शनै शनै गैर पारंपरिक औद्योगिक क्षेत्रों, अभियांत्रिकी ऊर्जा एवं इलेक्ट्रानिक्स और कम्प्यूटर से संबंधित उद्योगों पर भी अपना आधिपत्य जमाना प्रारंभ कर दिया हैं।

वर्ष 1990-91 में हमारे देश की आबादी 440.98 मिलियन थी जिसमें

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) एम. के. एच. एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) एम. के. एच. एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

महिलाओं का प्रतिशत 46.4 रहा था। इनमें से करीब 126.48 मिलियन महिलाकर्मी थी जो कुल महिला आबादी का करीब 28.9 प्रतिशत थी, लेकिन 1991 की जनगणना के अनुसार केवल 1,85,900 महिलाएँ स्वयं के रोजगार में संलग्न थी जो मात्र 4.5 प्रतिशत होती हैं। वर्ष 1998-99 तक महिला उद्यमी की संख्या करीब 2,95,680 हो गई, जो लगभग 11.29 प्रतिशत हैं। दसवी पंचवर्षीय योजना के प्रांरभ में महिला उद्यमियों की संख्या कुल महिलाओं की 34 प्रतिशत तक पहुंच पाई है जो महिला उद्यमिता विकास के निरंतर आगे बढ़ने का संकेत हैं।

महिला उद्यमिता के संदर्भ में अनुकूलताएँ या अवसर – समाज में पुरूष एवं महिलाओं के बीच कम होते अंतर के कारण आज महिला उद्यमियों के लिये वस्तु स्थिति कुछ आसान सी प्रतीत हो रही है तथा यही कारण है कि भारत जैसे विकासशील देश में महिला उद्यमियों को प्राप्त होने वाले अवसरों में दिनो दिन वृद्धि देखी जा सकती हैं। वर्तमान में अमेरिका, यूरोप एवं जापान के बाद अब भारत में भी उद्यमिता क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका क्रमश: बढ़ती जा रही हैं। भविष्य में भी महिलाएँ उद्यमिता के शिखर पर जा सकेगी इसकी पर्याप्त संभावनाऐं हैं। महिलाओं को उद्यमिता के क्षेत्र में अनेक अवसर उपलब्ध है यह अवसर न केवल शहरी क्षेत्र में अपितु अर्द्धशहरी व ग्रामीण क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। वैसे तो महिलाऐं किसी भी क्षेत्र में सफलता अर्जित करने में सक्षम हैं। परन्तु कुछ क्षेत्र में विशेषत: महिलाऐं अपना योगदान दे सकती है क्योंकि उन क्षेत्रों में विशेष सृजनात्मक की आवश्यकता होती है जो कि महिलाओं में जन्मजात उपलब्ध होती हैं। इस दृष्टि से महिला उद्यमी के लिए निम्नलिखित क्षेत्रों में अपेक्षाकृत अधिक अवसर हैं।

1. **महिलाऐं निर्माण व उत्पादन उद्यमों में संलग्न हो सकती है जैसे –** अचार, पापड़, चटनी, ज्यूस, जैम, जेली आदि तैयार करना, रेडिमेड वस्त्र, बनाना, सिलाई करना, कसीदाकारी, चटाई, खिलौने तैयार करना, बेकरी उत्पाद बनाना, मसालों को तैयार करना, सौंदर्य प्रसाधन तैयार करना, लाख जूट एवं बांस से बनी सामग्री तैयार करना आदि उद्योग महिलाऐं घरेलू या कुटीर उद्योगों के रूप में प्रारंभ कर सकती हैं।

2. **महिलाऐं सेवा उद्यम कार्यो में संलग्न हो सकती है जैसे –** कम्प्यूटर सेवा, इन्टरनेट सर्विस सेन्टर, कम्प्यूटर स्टेशनरी व्यवसाय, इलेक्ट्रानिक वस्तुओं की ऐसेम्बलिंग, फोटोकॉपी एवं टाइपिंग केन्द्र, एस.टी.डी. केन्द्र एवं साइबर कैफे, समाचार पत्र एजेंसी, ब्यूटी पार्लर, हेल्थ क्लब एवं फिटनेस सेंटर, फैशन डिजाइनिंग प्रशिक्षण संस्थान, पेंटिंग क्लासेस, कुकिंग कलासेस, महिलाओं के लिए कार ड्रायविंग प्रशिक्षण केन्द्र आदि सेवा प्रदायी उद्योग महिलाऐं अपने सीमित साधनों के साथ भी संचालित कर सकती हैं।

3. **महिलाऐं क्रय-विक्रय पर आधारित उद्यमों में भी संलग्न हो सकती है जैसे –** साडियाँ, किराना सामान, ज्वेलरी, खाद्य पदार्थ, गिफ्ट आइटम, सौन्दर्य प्रसाधन, रेडिमेड वस्तु, अन्तर्वस्त्र, सेनेटरी नेपकिन्स, खिलौने आदि क्रय विक्रय के उद्यम को भी स्थापित किया जा सकता हैं।

4. **महिलाऐं तकनीकी स्वरोजगार उपक्रम में भी संलग्न हो सकती है जैसे –** स्क्रीन प्रिंटिग, हाउस वायरिंग, मोटर वाइंडिंग, इमरजेन्सी लाइट का निर्माण, कम्प्यूटर प्रशिक्षण, रेडियों व टेलीविजन मरम्मत संबंधी कार्य आदि तकनीकी स्वरोजगार उपक्रम में भी महिलाऐं सफलता अर्जित कर सकती हैं।

महिलाऐं उपरोक्त में से किसी भी उपक्रम को संचालित कर अपना वर्चस्व स्थापित कर सकती हैं। उद्योग व स्वरोजगार के क्षेत्र में महिलाओं की विशिष्ट आवश्यकता को देखते हुए महिलाओं की अधिकाधिक भागीदारी बढाने के उद्देश्य से विभिन्न बैंको व वित्तीय संस्थाओं द्वारा केवल महिलाओं हेतु कुछ विशिष्ट योजनाएँ प्रतिपादित की गई है इनमें से कुछ प्रमुख परियोजनाएँ निम्न है –

1. **बैंक ऑफ इंडिया की प्रियदर्शी योजना –** इस योजना के अंतर्गत औद्योगिक इकाइयां स्थापित करने हेतु वित्त प्रदान किया जाता हैं। मुख्यत: टैक्सी, ऑटोरिक्शा, ट्रक, बस, टेम्पो, ब्यूटी पार्लर, पेट्रोल पम्प, होटल, स्वल्पाहार गृह इत्यादि कार्यो हेतु कार्यशील पूँजी ऋण स्वरूप प्रदान की जाती हैं।
2. सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा स्वरोजगार कल्याणकारी योजना लागू की गई है इसके अंतर्गत बेबी क्रेश, पापड़ तथा अचार बनाना, टेलरिंग कार्य, कोचिंग कक्षाएँ, प्रकाषन आदि के लिये वित्तीय सहायता प्रदान की जाती हैं।
3. भारतीय स्टेट बैंक समूह की स्त्री शक्ति पैकेज योजना के अर्न्तगत पुस्तकालय, लॉण्ड्री, भोजनालाय, टी-स्टॉल, शिशु गृह आदि की स्थापना के लिये वित्तीय सहायता प्रदान की जाती हैं।
4. सभी बैंको द्वारा प्रदान की जाने वाली वित्तीय सहायताऐं –
   - i. खुदरा व्यापार जैसे – किराना दुकान, जनरल स्टोर, सुपर मार्केट आदि व्यवसायों हेतु वित्तीय सहायता भी उपलब्ध हैं।
   - ii. कृषि क्रियाओं जैसे कृषि, कृषि उत्पादों के परिवहन, विपणन आदि कार्यो के लिए भी वित्तीय सहायता प्रदान की जाती हैं।
   - iii. फुटकर व्यापार आरंभ करने हेतु भी विभिन्न फुटकर व्यापार से संबंधित योजनाऐं के लिऐ वित्तीय सहायता प्रदान की जाती हैं।
   - iv. ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों के लिये वित्तीय सहायता प्रदान की जाती हैं।
   - v. महिला उद्यम निधि (एम.यु.एन.) के अंतर्गत महिला उद्यमियों को सुलभ ऋण के रूप में वित्तीय सहायता प्रदान की जाती हैं।
5. शहरी क्षेत्र में निवास करने वाली गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाली, अनपढ़ महिलाओं को स्वर्ण जयंती रोजगार योजना में वित्तीय सहायता बैंको के माध्यम से उपलब्ध करायी जाती हैं।
6. शहरी एंव ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली षिक्षित बेरोजगार महिलाओं को प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहयोग प्रदान कि तो हैं।
7. ग्राम्या योजना लघु व्यवसायी ग्रामीण महिलाओं को कार्यशील पूंजी उपलब्ध कराती हैं। इस योजना का कार्य क्षेत्र पूरे (म.प्र.) में फैला हुआ हैं।

महिला उद्यमिता चुनोतियॉ समस्याऐं – महिला उत्थान हेतु प्रतिदिन नई-नई योजनाएँ होने के बावजूद महिलाऐं उद्यमिता के क्षेत्र में अपनी पूर्ण सहभागिता दर्ज करने में सफलता अर्जित नहीं कर पायी है कुछ महिला उद्यमियों को छोड़कर अधिकांश महिला उद्यमी नाम मात्र के उद्योग जैसे जो पापड़-बड़ी निर्माण, रेडिमेड गारमेन्ट्स निर्माण आदि तक ही सीमित हैं। महिला उद्यमी के समक्ष अनेक चुनौतियां होती है जैसे –

1. सर्वप्रथम समस्या महिला उद्यमी से व्यक्तिगत तौर पर जुडी हैं। महिलाऐं भले ही उद्यम के क्षेत्र कदम रख ले परंतु इसके बावजूद भी उनकी घर के भीतर की जिम्मेदारियों में कमी नहीं हुई है अर्थात् उन्हें दोहरी भूमिका का निर्वाहन करना पडता है परिणामस्वरूप वे अपना पूर्ण ध्यान उद्यम पर केन्द्रित करने में असमर्थ होती हैं।
2. महिलाओं के पास वित्तीय स्त्रोत अत्यंत सीमित होते हैं। अधिकांश महिलाऐं घरेलू कार्य में तल्लीन होती है अत: उनकी कोई नियमित आय नहीं होती जिससे वित्तीय संस्थाऐं उन्हें वित्त देने में हिचकती हैं। वित्तीय समस्या के कारण महिला उद्यमी आगे नहीं बढ़ पाती हैं।

3. रूढ़ि वादी विचारधारा भी महिलाओं को आगे बढ़ने से रोकती हैं। आज भी उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेष अवांछनीय माना जाता हैं। इसलिये उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाऐं आने से कतराती हैं।
4. शिक्षा की कमी एवं विशेषकर गुणवत्तपूर्ण शिक्षा के प्रति महिलाओं में जागरूकता में कमी के कारण महिलाओं में व्यवसाय के प्रति रूझान विकसित नहीं हो पाता हैं।
5. पुरूष प्रधान समाज की मानसिकता के कारण महिलाओं में आत्मविश्‍वास का अभाव पाया जाता है और आत्मविश्‍वास के अभाव के कारणवश वे आगे नहीं बढ़ पाती हैं।
6. महिला उद्यमी की गतिशीलता पुरूषों की तुलना में अत्यंत सीमित होती है यह उनके विकास में सबसे बडी बाधा हैं। व्यवसाय के क्षेत्र में कई बार एक शहर से दूसरे शहर जाना होता है ऐसे में महिलाऐं असहज महसूस करती हैं।
7. भारत में महिलाऐं अतयंत ही संरक्षित जीवन जीती रही हैं। अधिकांश महिलाऐं कम शिक्षित एवं पूर्ण रूप से आर्थिक स्वतंत्र नहीं होती हैं। इन सभी कारणों से महिलाऐं व्यवसाय के संचालन हेतु जोखिम वहन करने में हिचकिचाती है तथा उद्यमिता का प्रमुख गुण जोखिम वहन करना ही हैं।
8. भारतीय समाज में अधिकांशत: महिलाओं को बचपन से आत्मनिर्णय लेने की स्वतंत्रता नहीं होती हैं। इसी कारण उन्हें स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने का मौका ही नहीं मिलता और यह प्रकृति उद्यमी बनने के बाद भी होती है, और किसी भी उद्यम में सही समय पर सही निर्णय लेने की क्षमता अति आवश्यक हैं।
9. पुरूषों की दोहरी मानसिकता भी महिला उद्यमी के मार्ग में बाधक है अधिकतर महिला की प्रगति होने पर उनके पति उसकी सफलता को सहन नहीं कर पाते तथा धीरे-धीरे आपसी रिष्तों में कडवाहट पनपने लगती है तथा मानसिक परेशानियों उत्पन्न हो जाती है फलस्वरूप महिला उद्यमी के कार्य क्षेत्र पर बुरा प्रभाव पडता हैं।
10. भारतीय महिलायें आज भी अपने परिवार को अधिक महत्व देती है जब वे उद्यमिता के क्षेत्र में अपने कदम आगे बढ़ती है तथा उन्हें परिवार का सहयोग नहीं मिलता तो वह परिवार व व्यवसाय में से परिवार को महत्व देती है तथा धीरे-धीरे व्यवसाय को द्धितीयक महत्व देने लगती हैं।

महिला उद्यमिता के विकास हेतु सुझाव - महिलाओं में सफल उद्यमी के सभी गुण मौजूद होते है परंतु अनेक समस्याओं के कारण उद्यमिता के क्षेत्र में उनका विकास नहीं हो पाया हैं। महिला उद्यमिता के विकास हेतु कुछ सुझाव निम्नलिखित है-

1. महिलाओं को बचपन से स्वतंत्र वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए ताकि वे आत्मनिर्णय लेने में सक्षम बन सकें तथा उनकी निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो सकें।
2. महिलाओं को परिवार से सहयोगात्मक वातावरण दिया जाना चाहिए ताकि वह आगे बढ़ सकें।
3. महिलाओं में उद्यमिता के क्षेत्र में आने हेतु जागरूकता लाने की आवश्यकता हैं। अत: विभिन्न स्तरों पर महिला उद्यमिता जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।
4. महिला शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए शिक्षा के साथ ही साथ उन्हें व्यक्तित्व विकास, प्रशिक्षण कम्प्यूटर शिक्षा इत्यादि हेतु भी उपयुक्त वातावरण प्रदान किया जाना चाहिये।
5. महिला उद्यमी के लिए विशेष ऋण सुविधा उपलब्ध करायी जानी चाहिये ताकि वित्तीय समस्याओं की पर्याप्तता के साथ सफलता अर्जित की जा सकी।
6. शैक्षणिक संस्थाओं को विभिन्न सरकारी व गैर सरकारी एजेन्सी के माध्यम से उद्यमिता विकास कार्यक्रमों को विशेषकर महिलाओं के लिए आयोजित करना चाहिये ताकि महिलाओं में उद्यमिता विकास हो सकें।
7. सरकार द्धारा संचालित विभिन्न योजनाओं को जानकारी महिलाओं तक पहुंचाई जानी चाहिए ताकि वे उनका लाभ ले सकें।
8. महिलाओं हेतु समय-समय पर नवीन तकनीकी का ज्ञान एवं विकास प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना आवश्यक है ताकि महिलाओं को नवीन तकनीकों से परिचित कराया जा सकें।
9. महिलाओं को पुरूषों के साथ-साथ विभिन्न कार्य क्षेत्रों में आने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिए उन्हें पुरूषों के बराबर अधिकार दिये जाने चाहिये।
10. महिला उद्यमियों की सबसे बड़ी समस्या उनके द्धारा बनी वस्तु की बाजार में बिक्री हैं। सरकार द्धारा इस हेतु उचित व्यवस्थो की जानी चाहिये। ताकि उन्हें अपने उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त हो सकें।

निष्कर्ष - उद्यमिता के लिये किसी भी वर्ग, जाति, स्त्री, पुरूष या किसी विशेष पक्ष की आवश्यकता नहीं होती है, कोई भी व्यक्ति जिसमें सफल उद्यमी के गुण मौजूद है, वह उद्यमी बन सकता है महिलाओं में मौलिक कल्पना शक्ति का गुण मौजुद है जिससे बेहतर कल्पना शक्ति के कारण वे प्रतिस्पर्धी बाजार में नये विचारों एवं अवसरों को बेहतर तलाश कर सकती हैं। इसके अलावा भी महिलाओं में संवेदनशीलता, सृजनात्मकता, कठोर परिश्रम प्रवृत्ति, कार्य के प्रति ईमानदारी, दृढ़ संकल्प शक्ति आदि गुण उपलब्ध है जिनके माध्यम से वे एक सफल उद्यमी बन सकती है यदि एवं परिवार द्धारा उन्हें सहयोगात्मक वातावरण प्रदान किया जाये तो वह उद्यमिता के क्षेत्र में अग्रसर हो सकती हैं। विदेशों में आज भी कुछ निर्मित वस्तुओं का विशेष आकर्षण है वे हस्त निर्मित वस्तुओं को प्राप्त करने हेतु अधिक मूल्य चुकाने को तैयार है हस्त निर्मित वस्तुओं तथा अन्य कई वस्तुओं के निर्माण कार्य में मुख्यत: महिलाओं का योगदान होता हैं। परन्तु बिक्री हेतु उचित निर्यात व्यवस्थाओं के ज्ञान के अभाव में महिलाओं द्धारा मध्यस्थों द्धारा बिक्री की जाती है तथा महिलाओं को अपने परिश्रम की पूर्ण राशि प्राप्त नहीं होती हैं। यदि सरकार द्धारा हस्त निर्मित वस्तुओं की बिक्री हेतु निर्यात की उचित व्यवस्थाऐं करायी जायी तो महिला उद्यमी को अपने उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त हो पायेगा तथा वह उद्यमिता के क्षेत्र में अपनी पहचान कायम कर पायेगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्यमिता विकास -डॉ. राजीव शर्मा, डॉ. योगिता चंदेल, देवी अहिल्या प्रकाशन, (2012)
2. उद्यमिता विकास - डॉ. मिलिन्द कोठारी, डॉ. व्ही.के. मिश्रा, डॉ. एम.पी. साहू, रमेश बुक डिपो,(2011)
3. उद्यमिता विकास - डॉ. बी.एल. गुप्ता, एवं डॉ. अलि कुमार क्वालिटी पब्लिशिंग कम्पनी,
भोपाल (म.प्र.) (2010)
4. Women Entrepreneurship & Economic Development, संजय तिवारी, अनशुजा तिवारी, सरूप एंड संन्स
5. Entrepreneurship Development & Project Management, एन. बपोरिकर, हिमालया पब्लिकेशन हाउस

Inter Relationship between Women Empowerment & Economic Development in Rajasthan

Dr. Meenaskshi Panchal* Heena Shekhawat**

Introduction - Women empowerment and financial advancement are firmly related: in one heading, improvement alone can assume a significant job in driving down imbalance among people; in the other bearing, engaging ladies may profit improvement. Does this infer pushing only one of these two switches would get a highminded hover under way? This paper audits the writing on the two sides of the strengthening improvement nexus, and contends that the interrelationships are likely too feeble to be in any way self-supporting, and that ceaseless arrangement responsibility to equity for the wellbeing of its own might be expected to realize fairness among people.

The tirelessness of sexual orientation imbalance is most distinctly acquired home the wonder of "missing ladies". The ter was begat by Amartya Sen in a now exemplary article in the New York Audit of Books (Sen 1990) to catch the way that the extent of ladies is lower than what might be normal if young women and women all through the creating scene were conceived and passed on at a similar rate, comparative with young men and men, as they do in sub-Saharan Africa. Today, it is evaluated that 6 million ladies are feeling the loss of consistently (World Bank 2011) Of these, 23 percent are rarely conceived, 10 percent are absent in early adolescence, 21 percent in the conceptive years, and 38 percent over the age of 60. Unmistakable as the abundance mortality may be, despite everything it doesn't catch the way that for the duration of their lives, even before birth, ladies in creating nations are dealt with uniquely in contrast to their siblings, falling behind men in numerous spaces. For each missing lady, there are a lot more ladies who neglect to get instruction, an occupation, or a political duty that they would have acquired on the off chance that they had been men.

There is a bidirectional connection between monetary improvement and ladies' strengthening characterized as improving the capacity of ladies to get to the constituents of advancement—specifically wellbeing, instruction, gaining openings, rights, and political investment. One way, advancement alone can assume a significant job in driving down disparity among people; in the other course, proceeding with oppression ladies can, as Sen has mightily contended, prevent improvement. Strengthening can, as it were, quicken advancement.

Policymakers and social researchers have would in general spotlight on either of these two connections. Those concentrating on the first have contended that sexual orientation uniformity improves when destitution decays. Policymakers ought to accordingly concentrate on making the conditions for monetary development and thriving, while at the same time chasing, obviously, to keep up a level playing field for the two sexual orientations, yet without embracing explicit methodologies focused at improving the state of ladies.

The proof on the two sides of the strengthening advancement relationship. It first shows that neediness and absence of chance breed segregation sex hole among male and female, so when monetary advancement diminishes destitution, the state of female enhances two checks: first, when neediness is decreased, the state of everybody, including ladies, improves, and second, sexual orientation disparity decays as destitution decays, so the state of ladies improves more than that of men with advancement. Financial advancement, be that as it may, isn't sufficient to achieve total equity among people. Arrangement activity is as yet important to accomplish equity between sexual orientations.

Can Economic Development Cause Women's Empowerment?

Gender Gap is regularly more noteworthy among poor people, both inside and crosswise over nations. For instance, while the sex disparity in essential and auxiliary part net enlistment has profoundly gone down around the world, it is as yet more extensive in immature nations (share 7% focuses for essential division, share 13% focuses for optional area) than in working class salary nations (share 3% focuses for essential segment, share 2% focuses for optional segment) and rich class nations (share 0% focuses for essential segment, share 1% point for optional segment). What's more, inside nations, disparity sexual orientation holes among guys and females continue in less fortunate and increasingly separated networks (World Bank 2011). The ladies work power support in the work showcase has

*Asst. Professor (Economics) PCSSH Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Economics) PCSSH Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

Growth by 15 percent in East Asia and Latin America somewhere in the range of 1971 and 1995, a rate quicker than that for men, and the sexual orientation hole in compensation has limited too. The future of ladies has expanded by 20–25 years in creating nations in the course of recent years (World Bank 2011), while male future didn't improve to such an extent.

Relaxing the Grip of Poverty through Economic Development - The main path by which financial improvement diminishes disparity is by loosening up the issues poor families face, along these lines lessening the proof at which they are set in the situation to settle on last chance decisions. Since these heartbreaking decisions are regularly settled to the detriment of ladies' prosperity, expanding the assets accessible to families, as financial advancement does, diminishes the overabundance powerlessness of ladies.

Giving Women Hope by Expanding Their Aspirations - The way that ladies have insufficient yearnings in the work market may add to their inconsistent treatment in the family unit. Despite the fact that guardians have lessens desires for their little girls than for their children, and female youngsters themselves have lower openings.

Freeing Up Women's Time - Monetary advancement can prompt the strengthening of ladies by liberating their time (which would then be able to be utilized for advertise exercises or for different things). Greenwood, Seshadri, and Yorukoglu (2005) contend that the dissemination of apparatuses in the US somewhere in the range of 1930 and 1950 was a key driver of the expansion in the work showcase interest of ladies during that period and past. Dinkelman (2010) abuses the strategic attainability of the turn out of charge in South Africa to think about the effect of access to power on female and male work supply. She finds that zap prompted an expansion of 9.5 rate focuses in female business (with no adjustment in male work) and contends that this increment was because of time liberated for ladies in home creation.

Economic Development and Women's Rights - Experimentally, there is a acitve interdependence between economic development and women's legal rights, in areas as different as property rights, access to land, access to bank loans, distruction against women, failure policy, etc. Doepke and Tertilt (2009) show a sound adverse interdependence of 0.4 or higher overall countries between the deficit of rights and GDP per capita.

Can Women's Empowerment Cause Economic Development? - There are two justification for keeping up dynamic strategies to raise female. The first is that advantages is important in and autonomously : ladies are by and by more awful circumstance than male, and this inbalance between sexes is hostile in its very own right.

The position that ladies strengthening is gainful for reasonable shapes both the strategy contend and the eventual outcome monetary arrangements the world over. Miniaturized scale credit plans, for instance, have been helped socially right at ladies, since, it is contended, ladies go through the cash in merchandise and ventures that build up the flourishing of families, in products that are significant to advancement.

Enlightenment for wom has a driving force result on each factor of advancement: lower kid and maternal death rates; broadened instructive accomplishment by little girls and children; tremendous efficiency; and created natural adminstration. Together, these can mean quicken financial development and, consistently significant, more extensive circulation of the products of development. More training for womens will likewise enable an ever increasing number of ladies to achieve managership positions at all degrees of society: from wellbeing facilities in the communities to parliaments in the capitals. This, thus, will change the manner in which social orders will manage issues and lift the standard of worldwide basic leadership.

Women Empowerment and Changes in Family Outcomes - A considerable writing has contemplated these requirements and discovered clear recurrence of an association between moms' training and wages, and youngster welfare, definitely kid wellbeing. Infact, the reliance with moms' instruction and wages is quite often seen as incredible than the relating association with fathers' instruction and wages. However, relationship are regularly beguiling. In this model, there are two pivotal issues with the portrayal of the results. Initial, a lady's instruction, compensation, or political support might be interdepended with unnoticed elements of her fitness, family, or network foundation. To the degree that these unnoticed determinants legitimately regulage youngster wellbeing, the reliance doesn't show the incurious response of enlarging a lady's instruction, income, or political investment. Distinguish that the very actuality that ladies are normally more averse to get instruction, gain a salary, and take an interest in political choices is probably going to make this predisposition dynamic for female than for male. Additionally, youngsters may improve in nations or locales where females political interest is higher in light of the fact that these spots are generally increasingly positive atmostpheres. Second, the association between the coefficients of married couples' tutoring or wages may be mysterious by a relationship between spouses' tutoring or compensation and unnoticed highlights of husbands for two reasons: From one perspective, increasingly taught or liberal ladies might have the option to wed men who care progressively about their kids. Then again, the recognition that, in the wake of controlling for all out assets, gaining in the hands of ladies is related with more productive results than salary in the hands of men may consider unnoticed attributes of a man that straightforwardly sway youngster results. For instance, in the event that he is progressive enough to enable his significant other to look for business, at that point this equivalent progressive sentiment may make him treat his youngsters better.

Women as Important within the Household - Smaller scale credit plans or progress offices that utmost credit or

moves to ladies in light of the fact that the cash will be put to utilize apropos to advancement always recognize that ladies are not totally weak. In the event that ladies were weak, at that point the cash would be instantly esteemed by their spouses, and we would see no consequence of disseminating the cash to ladies as opposed to men. Then again, if family units were musical elements where everybody had similar choices and needs, at that point the proper responsibility for would not make any difference inside the family unit. It would all go to a typical pool and led toward the best uses for the families.

On the Land : Women and Property Right - We notice numerous models where ladies hold property rights over a segment of the things they bring into the family unit the creation is likewise consolidated all in all for utilization by all family individuals. Without a doubt, as we saw above, family unit individuals may have different suppositions about how these joined assets ought to be utilized, and various elements, containing how much land they possess, will control the inevitable utilization decisions of the family. A well- working family, be that as it may, would initially attempt to misrepresent the size of the pie before contemplating how to seperate it. All data sources, including work, seeds, and manure, ought to be estimated to all plots to overstate the complete efficiency of the landholding.

And within the Community : Women as Bureacratics - We have seen that ladies and men have different options, and that the family unit doesn't financially deal to pick the exercises that overstate the family unit's productivity, proposing that ladies and men will have distinctive arrangement decisions. In the first place, ladies will pick arrangements that better concentrate their own superiorities. Since they are explicitly thought about youngster wellbeing and nourishment, they ought to admir techniques that will help them accompish these targets. Second, ladies ought to be agreeable to arrangements that will build their exchange control inside the family, that is, procedures that better their circumstance in instances of separation, and techniques that development their efficiency in ordinary work or better their odds to present the work advertise. In Rajasthan, both male and female work on streets, however men utilize the streets more as they travel all the more always looking for work.

Granting Women: Is It Free Lunch for Development Policy? - Ladies and men have different options, and likewise, utilize their privileges over the lasting exchange to express those decisions. Notwithstanding, the way that ladies have different options doesn't imply that those decisions are constantly liberal, that they generally support "beneficial things," aggreable to advancement. In the South Africa case, offering cash to ladies helps young ladies, however not young men. He compares school enlistment of teenagers (ages 13 to 17) in families where there is a more established part who is appropriate for the benefits and in families where there is an inadequate more seasoned part. He finds that, acclimatized to those in families with inadequate olders, youngsters are bound to be in school when they live with an appropriate man than with an attractive lady. Here once more, we discover evidence that the euality of the pay proprietor matters. For this situation, nonetheless, it is when men get the benefits that they settle on the choice positive to prosperity and improvement.

Ladies' strengthening and financial improvement are also interconnected. While advancement alone will realize ladies' strengthening, enabling ladies will achieve changes in basic leadership which will have an immediate impact on improvement. Contradictorily to what is announced by a portion of the all the more encouraging policymakers, it is, nonetheless, uncertain that a one-time tendency of ladies' privileges will flare a noble hover, with ladies' strengthening and improvement conversely fortifying one another and ladies at last being equivalent accomplices in ample social orders.

In an unexpected way, financial improvement itself is lacking to affirm huge advancement in significant regions of ladies' strengthening, specifically, exceptional development in basic leadership capacity even with broad generalizations against ladies' inclination. In an unexpected way, ladies' strengthening prompts headway in certain figures of kids' welfare (wellbeing and sustenance, specifically), however at the estimation of some others (training).

This infers neither monetary advancement nor ladies' strengthening is the enchantment shot it is in some cases portrayed. So as to achieve resources among people, in my view an extremely useful objective all by itself, it will be basic to keep on taking strategy activities that help ladies to the detriment of men, and it might be fundamental to keep doing as such for quite a while. While this may bring about some auxiliary advantages, those advantages could possibly be sufficient to make up for the expense of the inclination partnered with such redistribution. This proportion of credibility needs to temper the places of strategists on the two sides of the advancement strengthening contradict.

Significant Relationship between Women Empowerment and Education :

HO : Education and Women Empowerment are Independent

H1 : Education and Women Empowerment are not Independent

Table-1 (see in next page)

From the above computation it is seen that we accept the hypothesis. By this, it is clear that educational level of the beneficiary cannot be the only one influential factor for women empowerment.

References :-

1. Fernandez, Rauqel. 2009. "Women's Rights and Development".
2. Jensen, Robert T. 2010a. "Economic Opportunities and Gender Differences in Human Capital : Experimental Evidence from India".
3. World Bank 2011 World Development Report 2012 .

Gender Equality and Development.
4. Books :- Boserup, E (1970) Women's Role in Economic Development. Earthscan, Trowbridge UK.
5. Todaro, M. Smith, S. (2006) Economic Development. Person Education Limited, USA.
6. Publications – Lim, L. (2003). Female Labour-Forrce Participation, Gender Promotion Programme (GENPRON), Internatioinal Labour Office, Geneva Switzerland.

Table-1

Empowerment Education	**Education**	**Economic Empower -ment**	**Self Empl-oyed**	**Respect from Society**	**Decision Power**	**Group Member**	**Political Partici-pation**	**Total**
Literate	34	319	155	252	1069	29	5	900
Primary	35	324	160	255	109	30	5	918
High School	36	349	178	278	114	29	6	990
Inter	42	365	191	294	125	37	5	1059
Graduate	48	336	173	266	120	37	7	987
Post. Graduate	33	320	155	252	105	28	5	898
Total	**228**	**2013**	**1012**	**1597**	**679**	**190**	**33**	**5752**
pValue			0.999999572					
Value			0.05					
Accept / Reject			Accept HO					

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

A Study on Quality of Work Life among Employees in their Sector

Dr. Rajendra Singh Waghela* Viranchi Vyas**

Abstract - The success of any organization is highly dependent on how it attracts, recruits, motivates and retains its workforce. Today's organizations need to be more flexible so that they are equipped to develop their workforce and enjoy their commitment. Therefore, organizations are required to adopt a strategy to improve the employees' quality of work life to satisfy both the organizational objectives and employee needs. The term quality of work life refers to the favourableness' or unfavourableness of a total job environment for people. The main aim of this study is to know employees balance their life and to identify health determinants in working life among employees. For this purpose quality of work life is measured by taking into account of employees' Health and safety, Work Environment, Job satisfaction, Motivation, Job Designing and Term Effectiveness. From this study work environment, job analysis, satisfaction and motivation are the four major determinants of quality of work life which play the vital role for employees' better performance in the organization.
Keywords - Job Satisfaction, Organisational Commitment, Social relevance of work life, Constitutionalisation in the work organization, Job security, career development, Quality of Work life, Work life.

Introduction - Quality of Work Life is the existence of a certain set of organizational condition or practices. This definition frequently argues that a high quality of work life exists when democratic management practices are used, employee's jobs are enriched, employees are treated with dignity and safe working conditions exist. Quality of Work Life refers to the level of satisfaction, motivation, involvement and commitment individuals experience with respect to their lives at work. Quality of Work Life is the degree to which individuals are able to satisfy their important personal needs while employed by the firm. Companies interested in enhancing employees Quality of Work Life generally try to instil in employees the feelings of security, equity, pride, internal democracy, ownership, autonomy, responsibility and flexibility.

Objectives Of The Study :

1. To assess the quality of work life among employees in IT companies.
2. To know the perceived link between work life balance and team effectiveness.
3. To identify the importance of work environment towards the performance.

Research Methodology - The research design chosen is descriptive in nature.

Review Of Literature - Taylor (1979) more pragmatically identified the essential components of Quality of working life as; basic extrinsic job factors of wages, hours and working conditions, and the intrinsic job notions of the nature of the work itself. He suggested that relevant Quality of working life concepts may vary according to organization and employee group.

Mirvis and Lawler (1984) suggested that Quality of working life was associated with satisfaction with wages, hours and working conditions, describing the ¯basic elements of a good quality of work life as; safe work environment, equitable wages, equal employment opportunities and opportunities for advancement.

Baba and Jamal (1991) listed what they described as typical indicators of quality of working life, including: job satisfaction, job involvement, work role ambiguity, work role conflict, work role overload, job stress, organizational commitment and turn-over intentions.

Bertrand and Scott (1992) in their study ¯Designing Quality into Work Life found that improvements in the quality of work life are achieved not only through external or structural modifications, but more importantly through improved relations between supervisors and subordinates.

Datta (1999) in his study ¯Quality of Work Life: A Human Values Approach say that in a deeper sense, quality of work life refers to the quality of life of individuals in their working organizations—commercial, educational, cultural, religious or whatever they are. Modern society is organizational society. Individuals spend much of their lives in organizations. Hence, the importance of quality of work life is unquestionable.

Normala and Daud (2010) in their study ¯Investigating

*Prof. (Commerce) SABV Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
** Research Scholar, School of Commerce, DAVV, Indore (M.P.) INDIA

the Relationship between Quality of Work Life and Organizational Commitment Amongst Employees in Malaysian Firms says that the quality of work life of employees is an important consideration for employers interested in improving employees' job satisfaction and commitment.

Factors Effecting Quality Work Life

1. Adequate and fair compensation
2. Safe and healthy working conditions
3. Immediate opportunity to use and develop human capacities
4. Opportunity for continued growth and security
5. Social integration in the work organization
6. Constitutionalism in the work organization
7. Work and total life space

Facing Some Problems While Implementing Quality Of Work Life Programmes

1. Managerial attitudes
2. Union influence
3. Restrictiveness of industrial engineering

Suggestions To Improve Quality Of Work Life - By implementing some changes, the management can create sense of involvement, commitment and togetherness among the employees which paves way for better Quality of Work Life.

1. Job enrichment and Job redesign
2. Autonomous work redesign
3. Opportunity for growth
4. Administrative or organizational justice
5. Job security
6. Suggestion system
7. Flexibility in work schedules
8. Employee participation

Organisational Benefits Of Worklife Balance

1. Measured increase in individual productivity, accountability and commitment
2. Better team work and communication
3. Improved morale
4. Less negative organizational stress

Individual Benefits Of Worklife Balance

1. More value and balance in your daily life
2. Better understanding of what your individual work life balance
3. Increased productivity and reduced stress
4. Improved relationship both on and off the job

Improving Work Life Balance - IT organizations should take up the initiative of improving and enhancing the emotional intelligence of their employees. This can be done by designing and providing effective training to their employees. This will help enhance the skills of the employees with regard to "self – awareness" self – awareness forms the most critical element of emotional intelligence. High self – awareness helps an individual to monitor the actions and try to rectify it if required, self-awareness guides an individual to fine tune the job performance style and become more acceptable and socially networked. Further it also helps employees, use their emotions to facilitate performance by directing them toward Constructive activities and improving personal performance. Any person highly capable in this dimension would be able to encourage him or herself to do better continuously and direct his or her emotions in positive and productive directions. Hence emotional Intelligence will help an employee experience better work life balance. IT organizations should clearly define the roles and responsibilities for each every employee so that there is a clear objective laid down by the organization as to who is accountable for what and no does extra work. By doing this IT organizations will help improve the work - life balance across management levels. IT organizations can improve the work life balance of their employees by encouraging the concept of job sharing. There should be a clear boundary drawn between work and non – work activities. Human Resources and the Senior Management should take the initiative and communicate the importance of having a good balance between personal and professional life. Focus on effectiveness rather than on length of work hours. Use communication technologies and time management strategies to boost output.

Conclusion - All over the world people are craving for their human dignity and respect. Besides their aspirations and expectations are rising along with rapid changes in times and technologies. There is growing significance attached to human resources. Therefore, it is necessary to ensure quality work life for all-round peace and prosperity. Better quality of work life leads to increased employee morale. It minimizes attrition and checks labour turnover and absenteeism. There will be better communication and understanding among all employees leading to cordial relations. It enhances the brand image for the company as that, in turn, encourages entry of new talent into the organizations work environment means the milieus around a person. It is the social and professional environment in which employees' are supposed to interact with a number of people. Employees' are supposed to co-ordinate with each other in one way or the other. They may be working in a team or in dependent. It depends upon their position and status in their work place. It is not important that an office would always be called the work place. It can either be home environment where they use to work for all the time where they were supposed to interact with your family members by and by. Work environment does not only count the living world things but also the materialistic world stuff. It may count the room or home where they are working. It may counts the things that they are using in one way or the other. It is all about things and livings that are around the employees' where they are working. It finally concluded that work environment, job analysis, satisfaction and motivation are the four major which dominates all the other factors and helps the employees for their better performance in the organization.

Reference :-

1. Personal research.

पीड़ा को आनंदित करते बच्चन के मधुकाव्य

डॉ. सत्येन्द्र कुमार मिश्रा *

प्रस्तावना - लाल सुरा की धार लपट सी कह न इसे देना ज्वाला
फेनिल मदिरा है मत इसको कह देना उर का छाला
दर्द नशा है इस मदिरा का विगत स्मृतियॉ साकी है
पीड़ा में आनंद जिसे है आये मेरी मधुशाला।

पीड़ा में आंनदित करती बच्चन की यह जीवन मदिरा वास्तव में अद्वितीय है इस मदिरा का व्यसन दर्द है, पीड़ा है। बच्चन का यूँ तो समस्त जीवन ही उनके काव्य में उभरा है उनकी काव्य यात्रा पर दृष्टिपात करने पर उनका सारा जीवन ही उसमें प्रतिबिंबित होता है। पर किसी रचनाकार या कवि का प्रतिबिंब उसके रचना में होना कोई असामान्य बात नही। किंतु जब रचनाकार के आइने में हर दर्शक को भी अपना प्रतिबिंब नजर आने लगे तो वह अवश्य ही असामान्य है और इसी असाधारणता के धनी है कविवर बच्चन। उमर खैयाम की रूबाईयों से प्रभावित होकर जब उन्होंने खुद अनुवाद करने का निश्चय किया तो खैयाम के भावनाओं से इस तरह एकाकार हुए कि उन्ही प्रतीकों के माध्यम से उन्होंने अपनी मधुशाला का महल तैयार कर लिया। इसी मधुशाला से उन्हें अप्रतिम ख्याति मिली। इस अप्रतिम ख्याति की नींव भी उतनी ही गहरी और दृढ़ है जितना उँचा उसका महल। खैयाम की रूबाईयों को तो औरों ने भी अनुवाद किया पर शायद भाव विदग्धता की पराकाष्ठा को बच्चन ने ही पार किया तभी वो जन मन में अपनी भावनाओं को पहुँचा पाए। बच्चन जनता की जरूरत को बहुत अच्छी तरह समझते थे इसलिए उन्होंने जनता के अनुरूप और समय के अनुरूप अपनी कलम चलाई और सिर्फ कलम ही नहीं चलाई अपना कंठ भी चलाया है उनकी जनप्रियता का आधार केवल शब्द नहीं बल्कि वे ध्वनियां भी है जिनका उच्चारण उन्होंने अपने कंठ से किया। शब्दों के जादू के साथ अपनी आवाज का जादू भी उन्होंने बिखेरा। इस प्रकार शब्द और ध्वनि दोनो के समुचित समन्वय से उन्होने स्वयं को और पाठकों, श्रोताओं की पीड़ा को आनंदित किया।

बच्चन की पूर्व पत्नी श्यामा ने बच्चन बहुत पहले ही देख लिए थे इसलिए उन्हें वे सफरिंग (Suffering) कहती थीं। श्यामा को कवि की वेदना का गहरा ज्ञान था शायद कवि और पीड़ा का चोली दामन का संबंध होता है। पीड़ा के संबंध में एक बात तो बिल्कुल सत्य है कि पीड़ा के बिना मनुष्य का दंभ नही टूटता और दंभ के टूटे बगैर एक आदमी दूसरे आदमी के दिल तक नही पहुँच पाता। आदमी-आदमी को जोड़ने वाला कोई तार नहीं बन पाता। विचारों को तार तो बिना दंभ के जुड़ भी सकता है किंतु भावों को तार दंभ का नाष किए बगैर नहीं जुड़ सकता। मुक्तिबोध के शब्दों में पान चबाऊ संतुष्ट मुख मुद्रा वाले लोग भले ही गाल बजा लें, किंतु कविता कदापि नहीं कर सकते। संघर्ष का सान्निध्य और सौभाग्य सिर्फ कवि को प्राप्त होता है तो अवश्य ही यह ईश्वरीय अनुग्रह होता है अन्यथा साधारण जन की भांति पीड़ा और दुख के आघात से शायद वह भी टूट जाता, किंतु कवि के हृदय को ईश्वर वेदनाओं को सहने के लिए वज्र सा बना देता है वही हृदय जब भावों से सिक्त होता है तो अपने कोमलतम रूप में प्रकट होता है। कवि का काम भावनाओं के पुल बनाने से अधिक स्वयं पुल बन जाने पर निर्भर होता है इसलिए विज्ञ जनों का कहना है कि कवि पैदा होते हैं, निर्मित नहीं होते। कविता की दु:साध्य के विषय को बच्चन स्वयं अनुभूत करते हुए कहते है कि कविता लिखने का, विषय उतना नहीं जितना जीने का। और कविता जीना, जीने का सबसे दु:साध्य रूप है। कविता की दु:साध्यता को बच्चन बिल्कुल वही समझते है जो कबीर ने कहा है -

सीस काटि भुईं पै धरै, तापर धारै पॉव,
दास कबीरा यों कहैं ऐसा होउ तौ आव।

इन पंक्तियों के मर्म को समझाते हुए बच्चन कहते है कि शीषा काटना तो शायद संभव हो भी जाए पर उसको उठाकर भूमि पर रखना और फिर उस पर पाव रखना तो तभी संभव हो सकता है जब कोई मृत्योपरांत भी जीवित रहे या जीने की चेतना अपने हाथों में बचाये रहे। अंह के काटने बाद जो चेतना र्शीष को उठाती है, उस पर पॉव धरती है, उसी का नाम कवि है। बच्चन की इन वक्तव्यों का आशय कवि को वेदना की आवश्यकता से है और वह वेदना अंह के नाश के लिए है। इस अहं के नष्ट करने के लिए उनकी खुद की पंक्तियां बड़ी मार्मिक और समीचीन है -

मै कुंभकार की चाक चढ़ी
फिर मेरे तन पर बेलि कढ़ी
तब गयी चिता पर मैं रखी,
हर ओर अग्नि की ज्वाला बढ़ी

जल चिता गयी हो राख-राख
मैं मिट्टी किंतु रही बाकी।
मैं एक सुराही मदिरा की।

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने शायद अपने आपको ही सुराही के माध्यम से प्रस्तुत किया है कि कवि किन हृदय विदारक पीड़ा से तपकर फिर भी अपनी चेतना को मिट्टी में सुरक्षित करके सुराही सदृश आकार पाता है। बच्चन के काव्य की सफल शुरूआत मधुकाव्यों से हुई जो स्वयं में ही पीड़ा की नींव पर आधृत है। इस पीड़ा में भी नशा है, लोग कवि की इस पीड़ा में अपनी पीड़ा भी पा गये और उनकी पीड़ा का भी कवि के पीड़ा के साथ विरेचन हो गया ठीक उसी तरह जैसे दुख बॉटने से घटता है। मधुकाव्यों में पीड़ा नशा के रूप

* सहायक प्राध्यापक, सी - 15 कैलाशपुरी आलमबाग, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

में प्रस्तुत है उस नशा के मादकता में कुछ कर गुजरने की तमन्ना भी कहीं-कहीं जग उठी है। क्षणवाद को कवि ने प्रश्रय दिया है।

मधुकाव्यों के पश्चात कवि के वैयक्तिक जीवन में कई विशम परिस्थितियां आई जिससे कवि के मानस पर गहरा प्रभाव डाला। और फिर इसी पीड़ा विशाद के क्षणों में उन्होंने हिन्दी जगत को निशा निमंत्रण, एकांत संगीत और आकुल अंतर जैसे, अनुपम गीत देकर हिन्दी काव्य ही यश में वृद्धि की। कवि के लिए दु: ख चिंता विशाद से निकलने का एकमात्र उपाय सृजन ही होता है, उसका व्यथित पीड़ित मन अपने सारे विशाद अवसादों को संचित कर उसे सालते रहते हैं और जब सघनतम रूप में बरसने को आतुर हो जाती हैं तब वह स्वमेव ही नि:सृति का मार्ग खोज लेती है और कविता के माध्यम से नि:सृत होकर कवि को मुक्त करती है, आनंदित करती है। बच्चन के विषय में समीक्षकों ने कहा भी है कि कवि ने अपने विशाद के समय ही अच्छे गीत साहित्य को दिए है। इसको स्वयं बच्चन ने भी स्वीकार किया है। उनकी काव्ययात्रा की अगली कड़ी में सतरंगिनी है सतरंगिनी कवि के स्वस्थ गीतों का संकलन है। कवि के अनुसार सतरंगिनी अंधकार के ऊपर प्रकाश, विध्वंश के ऊपर, निर्माण, निराशा के ऊपर आशा और मरण के ऊपर जीवन की जीत का गीत है यह कोई सस्ता आशावाद नहीं। यह अश्रु, स्वेद, रक्त का मूल्य चुकाकार उपलब्ध किया गया है।

बच्चन जी ने सतरंगिनी की कविताओं को स्वस्थ तो कहा है किन्तु उसकी स्वास्थ्य का आधार भी वही पीड़ा है जिसने कवि को शीष काटकर फिर से उठाने की चेतना दी थी। सतरंगिनी के स्वास्थ्य के लिए उचित आहार विहार और संयम का समुचित श्रम मधुकाव्य और उसके बाद के विशाद गीतो से हुआ है।

कविवर बच्चन ने त्याज्य और अखाद्य मदिरा व मदिरालय में उदात्त भावों का दर्शन करा दिया, उन्होंने भूख में भविष्य की उर्वरा शक्ति को पहचान लिया, बापू की मृत्यु जैसे विशादतम् घटना में भी आशा और हत्यारे के प्रति धन्यवाद का हेतु ढूँढ़ लिया तो ऐसे कवि का श्रम संघर्ष क्यों न पाठकों को आनंदित करे, क्यों न ये पीड़ा पाथेय बने।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बच्चन हरिवंशराय, बच्चन मधुशाला, हिन्द पॉकेट बुक्स संस्करण 2008, पृ0-24
2. बच्चन हरिवंषराय, क्या भूलूँ क्या याद करुँ, राजपाल एण्ड सन्स 2016 पृ0-192
3. सं. अजित कुमार, बच्चन रचनावली भाग-1, राजकमल प्रकाशन 2017 पृ0-मधुबाला/93
4. वही, पृ0-निशा निमंत्रण/151
5. वही पृ0-310/बच्चन रचनावली-1
6. वही पृ0-312/बच्चन रचनावली-1
7. वही पृ0-सूत की माला /551
8. वही पृ0-बंगाल का काल/429

****

भारत में प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण-एक रिपोर्ट

यतीन्द्र कुमार झा *

शोध सारांश - भारत एक लोकतांत्रिक देश है इसलिए यहाँ 'सबके लिए शिक्षा' अर्थात 'शिक्षा के सार्वभौमिकरण' का प्राथमिक स्तर पर महत्व और भी अधिक हो जाता है। शिक्षा का सार्वजनीकरण या सार्वभौमिकरण ऐसी परिस्थिति पैदा करता है जिससे 6-14 वर्ष के सभी बच्चें अपनी योग्यता कौशल तर्कशक्ति सामाजिक चतुराई समानता आत्मविश्वास जिज्ञासा स्वतंत्रता स्वालम्बन धैर्य और समझ का विकास हो सके। इसके लिए व्यक्ति को अनवरत रुप सें जुडे रहने की भी आवश्यकता है।भारत में शिक्षा का सार्वभौमिकरण एक संवैधानिक लक्ष्य रहा है जिसे 1960 तक प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया था। यद्यपि इस हेतु व्यापक प्रयास भी किए गए किन्तु फिर भी आज तक लक्ष्य कर प्राप्ति नही हो सकी है।

शब्द कुंजी –प्राथमिक शिक्षा, सार्वभौमिकरण, शिक्षा ।

प्रस्तावना - सबके लिए शिक्षा की आवश्यकता इसलिए है कि शिक्षा का मानवीय साधनो के विकास में प्रमुख स्थान होता है। शिक्षा एक साधन के साथ-साथ स्वयं में एक साध्य होती हौ शिक्षा के माध्यम से ही समाज में मानव मूल्य; मानव संसाधनो की गुणवत्ता और सांस्कृतिक विविधता के प्रति सम्मान सम्भव है। स्पष्ट है कि प्रत्येक व्यक्ति का शिक्षित होना परमावश्यक है। फलत: शिक्षा का सार्वजनीकरण या सार्वभौमिकरण आज की महती आवश्यकता है। सन 1950 में भारत ने स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षा के सार्वजनीकरण या सार्वभौमिकरण हेतु संविधान के अनुच्छेद 45 का प्रावधान करके इसे 10 वर्षो के भीतर अर्थात 1960 तक प्राप्त करने का उपबन्ध बनाया जिसके अनुसार 6-14 वर्ष के सभी बच्चें अगले 10 वर्षों में प्राथमिक शिक्षा से आच्छादित होगे। शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए समय समय पर विभिन्न प्रयास किए गए और अनवरत यह प्रयास जारी भी है।

शिक्षा का सार्वजनीकरण या सार्वभौमिकरण ऐसी परिस्थिति पैदा करता है जिससे 6-14 वर्ष के सभी बच्चें अपनी योग्यता कौशल तर्कशक्ति सामाजिक चतुराई समानता आत्मविश्वास जिज्ञासा स्वतंत्रता स्वालम्बन धैर्य और समझ का विकास हो सके। इसके लिए व्यक्ति को अनवरत रुप सें जुडे रहने की भी आवश्यकता है।

भारत में शिक्षा का सार्वभौमिकरण एक संवैधानिक लक्ष्य रहा है जिसे 1960 तक प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया था। यद्यपि इस हेतु व्यापक प्रयास भी किए गए किन्तु फिर भी आज तक लक्ष्य कर प्राप्ति नही हो सकी है।

अध्ययन का उद्देश्य - शिक्षा मानव जीवन के लिए अति महत्वपूर्ण है। 'सा विद्या या विमुक्ते' अर्थात शिक्षा अज्ञान और दमन से मुक्ति प्रदान करती है। आधुनिक युग में शिक्षा का मानवीय जीवन में केन्द्रीय स्थान हो गया है। 'महात्मा गाँधी' के शब्दो में 'शिक्षा चेतना के विकास और समाज के पुर्नगठन का बुनियादी साधन है।' शिक्षा बिना जीवन निरर्थक है। शिक्षा व्यक्ति की उन्नति की पहली शर्त है। भारत एक लोकतांत्रिक देश है इसलिए यहाँ 'सबके लिए शिक्षा' अर्थात 'शिक्षा के सार्वभौमिकरण' का प्राथमिक स्तर पर महत्व और भी अधिक हो जाता है।

शिक्षा के सार्वभौमिकरण का उद्देश्य - वर्तमान में अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा के सार्वभौमिकरण का अर्थ कुछ व्यापक रुप में लिया जाता है। हमारे देश के संविधान की धारा 45 में यह निर्देश है कि राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से 10 वर्षो के भीतर 6-14 वर्ष के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं निरूशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करेगा। यहां 6-14 वर्ष के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं निरूशुल्क शिक्षा से तात्पर्य महात्मा गांधी द्वारा प्रास्तावित कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा से है। परन्तु 6-14 वर्ष के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने का तब तक कोई अर्थ नही जब तक यथा आयु के शत प्रतिशत बच्चे उसमें प्रवेश नही लेते और शत प्रतिशत बच्चे उसमें प्रवेश लेने का कोई अर्थ नही जब तक यथा आयु के शत प्रतिशत बच्चे उसमें रुके नही रहते अर्थात् पढ़ाई बीच मे छोड़कर नही जाते शत-प्रतिशत रुके रहने का कोई अर्थ नही जब तक शत-प्रतिशत बच्चे निश्चित समय मे शिक्षा पूरी नही करते अर्थात् उत्तीर्ण नही होते। इस दृष्टि से भारत में अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा अर्थ है। शिक्षा के सार्वभौमिकरण का अर्थ है जन जन को शिक्षित करना। लोकतांत्रिक जीवन की सफल अभिव्यक्ति के सन्दर्भ में तो जन जन की शिक्षा का महत्व और भी बढ जाता है। भारतीय संविधान की धारा 45 में प्रत्येक राज्य को उत्तरदायित्व सौंपते हुए आशा व्यक्त की गई थी कि वे जन जन को शिक्षित बनाने के लिए शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था करेगें। संविधान की धारा 45 के निर्देश के अनुपालन हेतु 2 अक्टुबर 1951 से ही निरन्तर प्रयास किए जा रहे है किन्तु आज भी हम लक्ष्य प्राप्त करने में असमर्थ रहें है। देश के लगभग 30 प्रतिशत लोग आज भी अशिक्षित है। इतनी बडी संख्या में लोग आज भी अशिक्षत होना शिक्षा के सार्वभौमिकरण की आवश्यकता को अपरिहार्य बनाता है जिस हेतु महती प्रयास की आवश्यकता है।

प्राथमिक शिक्षा और भारतीय संविधान - भारतीय संविधान में अनेक महत्वपूर्ण धाराएँ व उपबन्ध है जिनका प्राथमिक शिक्षा से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है; वे निम्नलिखित है-

1. संविधान की धारा 45 में यह निर्देश है कि राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से 10 वर्षो के भीतर 6-14 वर्ष के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था करेगा।

* असिस्टेंट प्रोफेसर, डॉ राजेंद्र प्रसाद मेमोरियल डिग्री कॉलेज, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

2. संविधान की धारा 46 में यह निर्देश है कि राज्य जनता के निर्बल विभागो विशेषतया अनुसूचित जातियों के शिक्षा एवं अर्थ सम्बन्धी हितो की विशेष सावधानी से उन्नत करेगा और सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।

भारत में प्राथमिक शिक्षा का विकास – भारत में प्राथमिक शिक्षा से तात्पर्य कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा से है और इसके विकास से तात्पर्य समय के साथ–साथ होने वाले मात्रात्मक प्रगति और गुणात्मक उन्नयन से है।

भारत में आधुनिक शिक्षा के विकास को ब्रिटिश काल या स्वतंत्रता पूर्व शिक्षा का विकास एवं स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षा का विकास के रुप में अध्ययन किया जाता है–

1. ब्रिटिश काल या स्वतंत्रता पूर्व प्राथमिक शिक्षा का विकास
2. स्वतंत्रता के पश्चात् प्राथमिक शिक्षा का विकास

ब्रिटिश काल या स्वतंत्रता पूर्व प्राथमिक शिक्षा का विकास – भारत में ब्रिटिश काल या स्वतंत्रता पूर्व प्राथमिक शिक्षा का विकास के लिए अत्यल्प प्रयास किए गए थे। प्रारम्भिक प्रयास के रुप में मिशनरियों ने अपनी बस्ती के बालको की शिक्षा का प्रबन्ध किया था। इस शिक्षा से ईसाई धर्म का प्रचार–प्रसार करना ही उनका मकसद था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने 1854 के घोषणा पत्र में सबसे पहले सर्वसाधारण को शिक्षा का प्रबन्ध करने के दायित्व को स्वीकार किया तथा सहायता अनुदान प्रणाली की सिफारिश की।

1. गेखले विधेयक 1911
2. द्वैध शासन काल में प्राथमिक शिक्षा
3. वर्धा योजना
4. डा0 जाकिर हुसैन समिति
5. खैर समिति

खैर साहब की अध्यक्षता में बनी खैर समिति ने अपनी रिपोर्ट1938 में पेश की। बेसिक शिक्षा या बुनियादी तालीम 6 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए अनिवार्य की जाएँ। 7 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों को प्रवेश की छुट हो। फलस्वरुप स्वतंत्रता मिलने तक देश के 229 नगरो तथा 1017 ग्रामो में 1.34 लाख केन्द्र अनिवार्य शिक्षा की प्रबन्ध बेडे में शामिल हो चुके थे। सन् 1947 तक 6 से 14 वर्ष के विद्यालय जाने वाले बच्चों की संख्या का 31.1 भाग प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर रहा था।

तालिका 1

वर्ष	प्राथमिक विद्यालयों की संख्या	प्राथमिक विद्यालयों में पढने वाले विद्यार्थी
1881–82	82916	2061541
1901–02	93604	3076671
1921–22	105017	6109752
1936–37	112244	10224288
1946–47	134866	10525943

स्वतंत्रता के पश्चात् प्राथमिक शिक्षा का विकास – 15 अगस्त 1947 को हमारा भारत देश स्वतंत्र हुआ तथा 26 जनवरी 1950 को हमारे भारत देश में अपना संविधान लागू हुआ। प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में संविधान की धारा 45 में निर्देश है कि 'राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से 10 वर्षो के भीतर 6–14 वर्ष के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था करेगा।' तभी से हमारे भारत देश में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं नि:शुल्क करने की ओर ठोस कदम लिए जा रहे है–

1.कोठारी कमीशन – 1966 में कोठारी कमीशन की रिपोर्ट प्रस्तुत हुई। कोठारी कमीशन ने शैक्षिक अवसरों की समानता पर विशेष बल दिया और सरकार का ध्यान पिछडे वर्ग; अनुसूचित जाति;अनुसूचित जनजाति; अल्पसंख्यकों तथा कबीलो के बच्चों की ओर आकर्शित किया।

2.राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NPE–1986) – 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की गई। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण या सार्वभौमिकरण को राष्ट्रीय ध्येय के रुप में स्वीकार किया गया और उसके विस्तार एवं उन्नयन पर बल दिया गया है।

3.जनार्दन रेड्ड समिति – जनार्दन रेड्डी समिति ने प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण या सार्वभौमिकरण के लक्ष्य को 20वीं शताबदी के अन्त तक प्राप्त करने को कहा। जनार्दन रेड्डी समिति ने सभी बच्चो को 1कि0मी0 की दूरी के अन्दर प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध कराने; जो बच्चे किसी कारण स्कुली शिक्षा प्राप्त नही कर पा रहे हो उनके लिए निरौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था करने पर जोर देती है परन्तु यह शिक्षा औपचारिक शिक्षा के स्तर की ही होनी चाहिए।

स्वतंत्रता के पश्चात् प्राथमिक शिक्षा का विकास

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की सफलता हेतु किए गए प्रयास – स्वतंत्रता के पश्चात् प्राथमिक शिक्षा को सर्वसाधारण तक पहुचाने अर्थात् प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु अनेक योजनाओं को लागू किया गया। जिनमें से कुछ निम्नलिखित है–

आपरेशन ब्लैक बोर्ड – आपरेषन ब्लैक बोर्ड योजना सन् 1987 में क्रियान्वित की गई; जिसका आधार नई शिक्षा नीति 1986 थी। यह योजना प्राथमिक विद्यालय की दशा सुधारने के लिए की गई थी। यह योजना प्राथमिक विद्यालय को भवन; आध्यापन एवं शिक्षण सामग्री उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गई थी।

शिक्षा का विकेन्द्रीकरण – 'प्राथमिक शिक्षा योजना और व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण' राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 का मुख्य लक्ष्य था जिसमे प्रत्येक बच्चें को न्यूनतम आठ वर्ष की शिक्षा सुनिश्चित करवाना है।भारतीय संविधान के 73वें एवं 74वें संषोधन द्वारा शिक्षा के विकेन्द्रीकरण हेतु शिक्षा में पंचायतीराज संस्थाओं को सम्मिलित किया गयाहै। इसमें शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु राज्य के हस्तक्षेप की अपेक्षा की गई है। प्राथमिक शिक्षा विकेन्द्रीकरण की संरचना दलितों; अल्पसंख्यकों एवं महिलाओं की प्राथमिक शिक्षा में भागीदारी सुनिष्चित करती हैं।

शिक्षा गारंटी योजना – वर्ष 1979–80 में 6.14 वर्ष के ऐसे सभी बच्चों के लिए निरौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था की गई जो औपचारिक शिक्षा में नही आ सके।

1. **शिक्षाकर्मी योजना**
2. **लोक जुम्बिश परियोजना**

सर्व शिक्षा अभियान – 'सर्व शिक्षा अभियान' भारत सरकार का एक प्रमुख कार्यक्रम है, जिसकी शुरूआत अटल बिहारी बाजपेयी द्वारा एक निश्चित समयावधि के तरीके से प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण को प्राप्त करने के लिए किया गया, जैसा कि भारतीय संविधान के 86वें संशोधन द्वारा निर्देशित किया गया है जिसके तहत 6–14 साल के बच्चों (2001 में 205 मिलियन अनुमानित) की मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा के प्रावधान को मौलिक अधिकार बनाया गया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य 2010 तक संतोषजनक गुणवत्ता वाली प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण को प्राप्त

करना है।

मध्याहन भोजन/मिड-डे-मील योजना

भारत में वर्तमान शैक्षिक परिदृष्य – देश की गुलामी की जंजीरें जैसे ही टूटी वैसे ही राष्ट्रनायको एवं शिक्षाशास्त्रो ने राष्ट्रीय प्रगति और आज़ादी की अक्षुण्णता के लिए प्राथमिक शिक्षा के महत्व का प्रथमत: प्रतिपादन किया। संविधान निर्माताओ ने राष्ट्र की इस इच्छा को अनुच्छेद 45 में इस प्रकार किया है-'कि राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से 10 वर्षो के भीतर 6.14 वर्ष के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था करेगा।'

इस भावना का आदर करते हुए राज्य सरकारों ने प्रयास किए। सन् 1946-47 में देश में प्रारम्भिक विद्यालयो की संख्या लगभग डेढ लाख थी जिसमें लगभग 12 करोड़ विद्यार्थी पढते थे; जिसपर लगभग 19.27 करोड़ रु0 व्यय किए गए थे। तब जनसंख्या का लगभग 12.2 प्रतिशत साक्षर था। प्रथम पंचवर्षिय योजना के लागू होने के बाद से केन्द्र व राज्य सरकार निरन्तर प्रत्यनशील रही। वर्तमान में भी केन्द्र व राज्य सरकारें प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रत्यनशील है। शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु केन्द्र व राज्य सरकारो द्धारा किए गए प्रयास का सार्थक प्रतिफल रहा है। 2014 तक किए गए प्रयासों के प्रतिफल का विवरण निम्नलिखित है-

2000 से 2014 तक प्राथमिक शैक्षिक संस्थानो में हुई प्रगति – 2000-01में देश में प्राथमिक विद्यालयो की संख्या लगभग 6.38 लाख थी जो वर्तमान में बढ़कर लगभग 8.58 लाख हो गई है प्राथमिक विद्यालयो की संख्या में भी लगभग 2.20लाख की वृद्धि हुई है। साथ ही उच्च प्राथमिक विद्यालयो की संख्या लगभग 2.06 लाख थी जो वर्तमान में बढकर लगभग 5.89 लाख हो गई है उच्च प्राथमिक विद्यालयो की संख्या में भी लगभग 3.76 लाख की वृद्धि हुई है। इस प्रकार ऑकड़ो से ज्ञात होता है कि 2000.01 से 2013.14 तक प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक विद्यालयो की संख्या में लगभग 5.90 लाख वृद्धि हुई है।

तालिका 2

वर्ष	प्राथमिक विद्यालयो की संख्या(I-V)	उच्च प्राथमिक विद्यालयो की संख्या(VI-VIII)	कुल विद्यालयो की संख्या (I-VIII)
2000-01	638738	206269	845007
2001-02	664041	219626	883667
2002-03	651382	245275	896657
2003-04	712239	262286	974525
2004-05	767520	274731	1042251
2005-06	772568	288493	1061061
2006-07	784852	305584	1090436
2007-08	805667	445108	1250775
2008-09	809108	476468	1285576
2009-10	809974	493838	1303812
2010-11	827244	535080	1362324
2011-12	842481	569697	1412178
2012-13	853870	577832	1431702
2013-14	858916	589796	1448712

2001से 2014 के दौरान प्राथमिक शैक्षिक संस्थानो की संख्या में उच्च प्राथमिक शैक्षिक संस्थानो की तुलना में अधिक वृद्धि दर्ज की गई।

2000 से 2014 तक प्राथमिक शैक्षिक संस्थानो में नामांकन में हुई प्रगति – 2001से 2014 के दौरान प्राथमिक शैक्षिक संस्थानो में नामांकन में लगभग 19.4 करोड की वृद्धि हुई और उच्च प्राथमिक शैक्षिक संस्थानो में नामांकन में लगभग 23.7 करोड की वृद्धि हुई इस प्रकार ऑकडो से ज्ञात होता है कि 2000-01 से 2013-14 तक प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक विद्यालयो में नामांकन में लगभग 43.1 करोड़ की वृद्धि दर्ज की गई है।

तालिका 3 (अगले पृष्ठ पर देखे)

2001से 2014 के दौरान प्राथमिक शैक्षिक संस्थानो में लडको के नामांकन में लगभग 4.6 करोड की वृद्धि हुई और लडकियों कें नामांकन में लगभग 14.0 करोड की वृद्धि हुई इस प्रकार आकडो से ज्ञात होता है कि 2000-01 से 2013-14 तक प्राथमिक विद्यालयों में लडके और लडकियों के नामांकन में लगभग 18.6 करोड की वृद्धि दर्ज की गई है।

निष्कर्ष– जनसंख्या की भारत विश्व का दूसरा बड़ा देश है। 2011 के अनुसार भारत की जनसंख्या लगभग 1.21 अरब हो गई है। 2011 के अनुसार भारत की साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत है। भारत में व्यापक निरक्षरता का कारण यह भी है कि भारत सरकार शिक्षा पर बहुत कम खर्च कर रही है प्राथमिक शिक्षा पर तो और भी कम व्यय किया जा रहा है। विश्व के अधिकांश देश शिक्षा पर जितना व्यय करते है उसका 50 प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा पर व्यय करते है। जबकि भारत में यह प्रतिशत बहुत कम रहा है। सन् 1951 में भारत अपनी आय का 1.2 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय करता था। पैंसठ वर्ष के पश्चात आज भारत अपनी आय का 3 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय करता है। जहॉ अन्य देश 6-7 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय करते है।आज़ादी के बाद भारत में साक्षरता दर में तीन गुना वृद्धि हुई है परन्तु आबादी में भी ढाई गुना वृद्धि हुई। यही कारण है कि सीमित साधनो; गरीबी; भुखमरी के कारण देश के भावी कर्णधार शिक्षा से न जुड़कर स्वयं को शोषण व अत्याचार के प्रति समर्पित कर देते है। लाखो बच्चे कारखानो; घरों;खेतो व दुकानों में मजदूरी करने को विवश है। करोड़ो बच्चे ऐसे है जो स्कूलो से नही जुड़ सके है। ये स्कूल जाने योग्य बालक-बालिकाएँ जब प्राथमिक शिक्षा में वंचित है तो आगे चलकर प्रौढ़ शिक्षा इतनी साधन सम्पन्न नही है कि सबको साक्षरता प्रदान कर सके। साथ ही साथ प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करते समय अधिसंख्य छात्र विद्यालय बीच में ही छोड़ देते है। अत: इनको औपचारिक अथवा अनौचारिक रुप से शिक्षा से जोड़कर ही साक्षरता में प्रत्याशित सुधार लाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय : अध्ययन सामग्री (MAED-09) : खण्ड प्रथम : 2014-2015
2. रमन बिहारी लाल : भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएँ : रस्तोगी पब्लिकेशन : 2010-2011
3. hhttp://wikipidia.org./wiki
4. hhttp://amararaja.co.in
5. wwww.google.com
6. hhttp://bed.op.nic.in.pri.seceduhtml
7. hhttp://mhrd.gov.in

तालिका 3

वर्ष	प्राथमिक विद्यालयो की संख्या (I-V)			प्राथमिक विद्यालयो की संख्या (VI-VIII)			प्राथमिक विद्यालयो की संख्या (I-VIII)		
	लडके	लडकियां	कुल	लडके	लडकियां	कुल	लडके	लडकियां	कुल
2000-01	64	49.8	113.8	25.3	17.5	42.8	89.3	67.3	156.6
2001-02	63.6	50.3	113.9	26.1	18.7	44.8	89.7	69	158.7
2002-03	65.1	57.3	122.4	26.3	20.6	46.9	91.4	77.9	169.3
2003-04	68.4	59.9	128.3	27.3	21.5	48.8	95.7	81.4	177.1
2004-05	69.7	61.1	130.8	28.5	22.7	51.2	98.2	83.8	182
2005-06	70.5	61.6	132.1	28.9	23.3	52.2	98.4	84.9	183.3
2006-07	71	62.7	133.7	29.8	24.6	54.4	100.8	87.3	188.1
2007-08	71.1	64.4	135.5	31	26.2	57.2	102.1	90.6	192.7
2008-09	70	64.8	134.8	29.4	26	55.4	99.4	90.5	189.9
2009-10	70.8	64.8	135.6	31.8	27.6	59.4	102.6	92.4	195
2010-11	70.5	64.8	135.3	32.8	29.3	62.1	103.3	94.1	197.4
2011-12	70.8	66.3	137.1	31.8	30.1	61.9	102.6	96.4	199
2012-13	69.6	65.2	134.8	33.2	31.7	64.9	102.8	96.9	199.7
2013-14	68.6	63.8	132.4	34.2	32.3	66.5	102.8	96.1	198.9

source: Statistics of School Education, 2007-08, MHRD, GoI; and Unified District Information System for Education (U-DISE), National University of Educational Planning and Administration (NUEPA)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

डॉ. अम्बेडकर की जल नीति तथा जल प्रदूषण समस्या और उसके निदान

ज्योति सौलंकी *

प्रस्तावना – जीवन के लिये जल अनिवार्य है। जल एक प्राकृतिक संसाधन है। जल मानव जीवन के लिये नितान्त आवश्यक माना जाता हैं। इसीलिये जल संसाधनों की राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि अतर्राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन, कार्यान्वयन और प्रबंधन की आवश्यकता होती है। राष्ट्रीय जल नीति यह स्पष्ट करती है कि जल एक दुर्लभ राष्ट्रीय साधन है। उसका संवर्धन, प्रगति और एकत्रीकरण होना आवश्यक है। जल संसाधन की परियोजनाएं बहुउद्देशीय के लिये होती है। जैसे कि पेयजल, सिंचाई, जल विद्युत निर्माण, बाढ़ नियत्रंण तथा उद्योग आदि।

जल सभी जीवधारियों के लिये नितांत जरुरी है। पेड़–पौधों भी अपना भोजन जल के माध्यम से ग्रहण करती है। इसलिये जल ही जीवन है कहना अतिश्योक्ति न होगा। प्रत्येक जीवधारियों की कोशिकाओं में नब्बे प्रतिशत से भी ज्यादा जल की मात्रा होती है। शरीर की समस्त क्रियाएं जल के माध्यम से ही होती है।

धरती की 75 प्रतिशत सतह जलमग्न है। जल हमारी फसल के लिये ही नहीं अपितु उद्योगों रसायनों आदि के लिये भी बहुत आवश्यक है। धरती के तापमान को सामान्य बनाये रखने में जल का बहुत बडा योगदान है, अन्यथा पृथ्वी पर तपिस इतनी बढ़ जायेगी कि जीवधारियों का रहना कठिन हो जाए। जल हमकों कई रुपों में प्राप्त होता है। जल का सामान्य रुप द्रव है। देश की जलनीति बनाने तथा जल संसाधन विकास के लिये बहुत सारे विद्धानों और अभियंताओं ने अपना योगदान दिया है। इनमें डॉ. बाबा साहेब भीमराव आम्बेडकर, डॉ. ए.एन. खोसला, डॉ. के.एल. राव, डॉ. मेघनाद साहा, बंगाल सरकार, एक करीम, बीएल सबरवाल, डी.एल. मजुमदार सर, इगलिस आदि का जल संसाधन विकास के लिये विशेष योगदान रहा है।

भारत रत्न डॉ. भीमराव आम्बेडकर को सभी संविधान निर्माता के रुप में जानते है। डॉ. बाबा साहेब आम्बेडकर भारतीय संविधान के शिल्पकार के रुप में माने जाते है। लेकिन वे एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होनें अनेक विषयों में अपने वैचारिक चिंतन प्रस्तुत किये थे। उन्होनें देश को विकास की संकल्पना तथा परियोजनाओं का उपहार दिया है। वे एक इतिहासकार, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, अनुसंधानक, विधिवेत्ता, प्रभावी वक्ता, पत्रकार, समाज के मार्गदर्शन संशोधक एवं ग्रंथकार के रुप में माने जाते हैं। लेकिन बहुत ही कम को यह पता है कि भारत में जल की पूंजी को जोड़ने का नजरिया सबसे पहले डॉ. आंबेडकर ने ही पेश किया था । वे मानते थे कि छोटे बांध और नदियो की बदलती दिशाएं तीन बडी समस्याओं का समाधान देती है। पहली सिंचाई और पशुधन के लिये पर्याप्त जल उपलब्धता। दूसरी ऊर्जा के संकट से निजात और तीसरी यातायात के एक नये साधन के रुप में जल मार्ग का उपयोग।

डॉ. बाबा साहेब आम्बेडकर सन 1942 से 1946 के दौन वायसराय के मंत्रीमडंल में रम मंत्री के रुप में थे। उन्होने बहुउद्देशीय नदी घाटी विकास, जल संसाधन का उपयोग, रेलवे और जलमार्ग, तकनीकी बिजली बोर्ड का निर्माण, केंद्रीय जलमार्ग, सिंचाई तथा नौचालन आयोग, केंद्रीय जल आयोग, दामोदर नदी घाटी निगम, महानदी पर हीराकुंड बांध का निर्माण और सोन नदी परियोजना यशस्वी करने के लिये योगदान दिया है।

डॉ. अम्बेडकर ने 20 जुलाई 1942 को वाइसराय के मंत्रीमंडल में श्रम मंत्री के रुप में कार्य ग्रहण किया। तब डॉक्टर अम्बेडक ने युद्धोत्तर पुननिर्माण समिति द्धारा अपनी जल संसाधन तथा बहुउद्देशीय नदी घाटी विकास की नीति अपनाई। डॉक्टर अम्बेडकर कहते है – 'यह सोचना गलत है कि पानी की बहुतायत कोई संकट है। मनुष्य को पानी की बहुतायत के बजाय पानी की कमी के कारण ज्यादा कष्ट भोगने पड़ते है। कठिनाई यह है कि प्रकृति जल प्रदान करने में केवल कंजूसी ही नहीं करती, कभी सूखे से सताती है तो कभी तूफान ला देती है। परंतु इससे इस तथ्य पर कोई अंत नही पड़ता कि जल एक सम्पदा है। इसका वितण अनिष्चित है। इसके लिये हमें प्रकृति से शिकायत नहीं करनी चाहिए बल्कि जल संरक्षण करना चाहिए।'

डॉ. आम्बेडक ने सोन नदी, दामोदर घाटी और महानदी जैसी कई योजनाएं 1944 को कलकत्ता (कोलकाता) में पेश की थी। उन्होने नदियों की बाढ़ के बारे में चल ही चिंताओं और पुर्नवास की योजनाओं को खारिज कर एक ठोस योजना सामने रखी थ। लेकिन उस पर अमल नही हो सका और नदियो का पानी प्रकृत का उपहार न बनते हुए आज भी अभिशाप के रुप में खडा है। यह प्रारुप उनके द्धारा पेश भारत की पहल जल नीति के रुप में जाना जाता है, जो भारत में जलस्त्रोतों की उपयुक्तता के लिये एक ऐतिहासिक दस्तावेज के रुप में दर्ज है।

1944 की दामोदर नदी घाटी परियोजना के लिये डॉक्टर अम्बेडकर का मानना था कि दामोदर परियोजना बहुउद्देशीय होनी चाहिए। इस परियोजना का बाढ़ की समस्या के साथ साथ सिंचाई और ऊर्जा के लिये इस्तेमाल होना चाहिए। पानी के बहुउद्देशीय विकास के लिये डॉक्टर अम्बेडकर के द्धारा उठाये गये कदम साहसी कदम माने जाते है।

डॉक्टर बाबा साहेब अम्बेडकर ने कटक में 'ओडिशा की नदियो के विकास' की बहुउद्देशीय परियोजना पर संबोधन दिया। डॉ. अम्बेडकर ओडिशा की बाढ़ की समस्या से मुक्ति चाहते थे। ओडिशा में मलेरिया से भी मुक्ति पाना

* शोधार्थी, डॉ.अम्बेडकर विचार एवं दर्शनशास्त्र बानिस, महू, इंदौर (म.प्र.) भारत

चाहते थे। नौचालन और सस्ती बिजली तैयार करके वे अपनी जनता का जीवनमान स्तर सुधाना चाहते थे। डॉ. बाबा साहेब कहते हैं कि 'ओडिशा को भी वही तरीका अपनाना चाहिये जो नदियों की समस्या से निपटाने के लिये अमेरिका ने अपनाया है वह तरीका है पानी का स्थायी भंडार रखने के लिये कई जगह नदियों पर बांध बनाना। ऐसे बांध सिंचाई के साथ अन्य कई लक्ष्य भी साधते है। महानदी में बह जाने वाले पे पानी का भंडारण संभव है। इतनी भूमि होने पर, दस लाख एकड़ जमीन की सिंचाई हो सकती है। जलाशयों में एकत्र जल से बिजली उत्पादन भी हो सकता है।'

डॉ. अम्बेडकर क्षेत्रीय विकास तथा बहुउद्देशीय विकास परियोजना द्वारा पूरे देश के अंदर जल संसाधन नीति लागू करना चाहते थे। इसीलिये पानी का विषय उन्होनें केंद्र सरकार के अधीन लाया। बाबा साहेब ने संविधान में प्रावधान किया क्योंकि उस दौरान बाबा साहेब श्रम मंत्री तथा राज्य घटना मसौदा समिति के अध्यक्ष की दोहरी भूमिका कर रहे थे। इस नीति को अपनाने के लिये म विभाग ने दो तकनीकी संस्थानों की नवंबर 1944 में केंद्रीय तकनीकी विद्युत मंडल (CTBT) तथा 5 अप्रैल 12945 में केंद्रीय जलमार्ग सिंचाई तथा नौचालन आयोग (CWINC) स्थापना की।

डॉ. बाबा साहेब अम्बेडक ने इस देश की पूरी जल संसाधान विकास नीति बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। डॉ. अम्बेडकर का बहुउद्देशीय नदी घाटी विकास का मॉडल आज हिमालय की बहती नदियों के बारे में अमल किया जा सकता है। गंगा, यमुना कोसी, गंडक आदि नदियों के जल प्रबंधन के बारे में सोचना जरुरी हुआ है। डॉ. अम्बेडकर का कहना था कि 'श्रमिक व दलित एवं कमजो वर्ग के लोगों के लिये यह योजनाएं एक स्वाभिमानी सशक्तिकरण के लिये कार्य करेगी। यह उन्हें शांति, समृद्धि, अच्छी शिक्षा के साथ एक अच्छा स्वास्थ्य और सम्मान मुहैया करायेगी। इससे कृषि, यातायात, ऊर्जा और औद्योगिकीकरण उनके जीवन की क्षमताओं को बढ़ायेगा। उन्हें बिजली, साफ पानी, रोजगार और यातायात का साधन मिलेगा।'

जल प्रदूषण के कारण – जल प्रदूषण का सीधा संबंध जल के अतिशय उपयोग से है। नगरों में पर्याप्त मात्रा में जल का उपयोग किया जाता है और सीवरों तथा नालिों द्वारा अपशिष्ट जल को जलस्त्रोतों में गिराया जाता है। जल स्त्रोतों में मिलने वाला यह अपशिष्ट जल अनेक विशैले रासायनों एवं कार्बनिक पदार्थो से युक्त होता है जिससे जल स्त्रोतों का जल स्वच्छ जल भी प्रदूषित हो जाता है। उद्योगों से नि:सृत पदार्थ भी जल प्रदूषण का मुख्य कारण है। इसके अतिरिक्त कुछ मात्रा में प्राकृतिक कारणों से भी जल प्रदूषित होता है। जल प्रदूषण जल के रासायनिक, भौतिक एवं जैविक गुणों में ह्रास हो जाने से होता है जो मानव क्रियराओं एवं प्राकृतिक क्रियाओं द्वारा जल संसाधन में अपघटित एवं वनस्पति पदार्थो तथा अपश्रम पदार्थो के मिलाने से होता है।

जल प्रदूषण की समस्या वास्तव में कोई नई समस्या नहीं है। वर्तमान समय में तीव्र औद्योगिक विकास, जनसंख्या वृद्धि, जल स्त्रोतों का दुरुपयोग, वर्षा की मात्रा में कमी आदि मानवकृत एवं प्राकृतिक कारणों से जल प्रदूषण की समस्या ने विकराल रुप धारण कर लिया है। विभिन्न क्रियाकलापों से जब जल के रासायनिक, भौतिक एवं जैविक गुणों में ह्रास हो जाता है तो ऐसे जल को प्रदूषित जल कहा जाता है। स्पष्ट है कि जब जल की भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक संरचना में इस तरह का परिवर्तनअ हो जाता है कि वह जल किसी प्राणी की जीवन दशाओं के लिये हानिकारक एवं अवांछित हो जाता है तो वह जल प्रदूषित जल कहलाता है। जल में अनेक प्रकार के खनिज तत्व, कार्बनिक, अकार्बनिक पदार्थ और गैसे घुली रहती है। यदि जल में यह पदार्थ आवश्यकता से अधिक मात्रा में इक्कठे हो जाते है तो पानी प्रदूषित होकर हानिकारक हो जाता है। जल की इस गुणवत्ता की कमी को ही हम जल प्रदूषण कहते हैं। जल में भौतिक प्रदूषण रंग, स्वाद, गंध और ऊष्मीय गुणों में बदलाव की वजह से होता है।

रासायनिक प्रदूषण पानी में रासायनिक पदार्थो की वजह से उत्पन्न होता है तथा जैव प्रदूषण पानी में हानिकारक सूक्ष्म जीवों की मौजूदगी से उत्पन्न होता है। घरों में कचरा जैसे नहाने, धोने, पोछा लगाने, सड़े फल, तरकारियों, साबुन औ डिटर्जेंट आदि से जो कूडा करकट और गंदा पदार्थ निकलता है वह साफ पानी से मिलकर पानी को प्रदूषित बनाते है। पानी में रोगजनक सूक्ष्म जीवों के लिए जाने से पानी प्रदूषित होता है जो मनुष्य के पीने लायक नहीं रह जाता है। प्रदूषित जल रोग जनित होता है। प्रदूषित जल जंतुओं पर बुरा प्रभाव डालता है। ऑक्सीजन की कमी से अक्सर मछलियां मर जाती है। अन्य जंतुओं पर ऑक्सीजन की कमी का बुरा असर पड़ता है। जिस कारण समुद्री जीवों में चालीस प्रतिशत की कमी पिछले बीस वर्षो में हुई है। समुद्र में तैलीय जल प्रदूषण से जलचरो व पेड पौधों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

जल प्रदूषण का भयंकर परिणाम राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिये एक गंभीर खतरा है। एक अनुमान के अनुसार भारत में होने वाली दो तिहाई बीमारियाँ प्रदूषित पानी से ही होती है। जल प्रदूषण का प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर जल द्वारा जल के सम्पर्क से एवं जल में उपस्थित रासायनिक पदार्थो द्वारा पड़ता है। पेयजल के साथ साथ रोगवाहक बैक्टीरिया, वायरस, प्रोटोजोआ मानव शरीर में पहुँच जाते है और हैजा, टाइफाइड, शिशु प्रवाहिका, पेचिश, पीलिया, अतिषय, यकृत नारु, लेप्टोस्पाइरोसिस जैसे भयंकर रोग उत्पन्न हो जाते है जबकि जल में उपस्थित रासायनिक पदार्थो द्वारा कोष्टबद्धता, उदरशूल, वृक्कशोथ, मणिबंधपात एवं पादपात जैसे भयंकर रोग मानव में उत्पन्न हो जाते है। जल के साथ रेडियोधर्मी पदार्थ भी मानव शीर में प्रविष्ट कर यकृत, गुर्दे एवं मानव मस्तिष्क पर विपरीत प्रभाव डालते है।

जल प्रदूषण का निदान – जल प्रदूषण की रोकथाम हेतु सबसे आवश्यक बात यह है कि हमें जल प्रदूषण को बढ़ावा देने वाली प्रक्रियाओं पर ही रोक लगा देनी चाहिए। घरों से निकलने वाले खनिज जल एवं वाहित मल को एकत्रित कर संशोधन संयंत्रों में पूर्ण उपचार के बाद ही जल स्त्रोतों में विसर्जित किया जाना चाहिए। पेयजल के स्त्रोतों के चारो तरफ दीवार बनाकर विभिन्न प्रकार की गंदगी के प्रवेश को रोका जाना चाहिए। जलाशयों के आसपास गंदगी करने, उसमें नहाने, कपड़े धोने आदि पर भी रोकथाम लगानी चाहिए। कृषि कार्यो में आवश्यकता से अधिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के प्रयोग को भी कम किया जाना चाहिए। जहां रोक लगाना संभव न हो, वहां इनका प्रयोग नियंत्रित ढंग से किया जाना चाहिए।

समय–समय पर प्रदूषित जलाशयों में उपस्थित अनावश्यक जलीय पौधों एवं तल में एकत्रित कीचड़ को निकालकर जल को स्वच्छ बनाये रखने के लिये प्रयास किये जाने चाहिए। प्राय: इसी नदी में शहर का कूडा करकट, मल–मूत्र, कारखानों आदि से निकलने वाला अपशिष्ट पदार्थो को बहाया जाता है। जिसकी वजह से हमो देश की तमाम नदियों का पानी प्रदूषित होता जा रहा है। जन–साधारण के बीच जल प्रदूषण के कारणों, दुष्परिणामों एवं रोकथाम की विधियों के बारे में जागरुकता बढ़ानी चाहिए, ताकि जल का उपयोग करने वाले लोग जल को कम से कम प्रदूषित करें या प्रदूषित न करें तथा संरक्षण करें।

'केंद्रीय जल स्वास्थ्य इंजीनियरिंग संस्थान' के अनुसार भारत में प्रति एक लाख व्यक्तियों में से तीन सौ साठ व्यक्तियों की मृत्यु आंत्रशोध थायराइड, पेचिश आदि से होती है। जिसका मूल कारण जल प्रदूषण है। नगरो में शत-प्रतिशत निवासियों के लिये स्वच्छ पेयजल की व्यवस्था नही हो पाती है। जल प्रदूषण के निवारण एवं नियंत्रण के लिये भारत सरकार ने वर्ष 1974 से 'जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम' लागू किया है। जल प्रदूषण की समस्या लगातार बढ़ती जा रही है। जल प्रदूषण का निवारण, हम और हमारी जागरुकता है। समय के हमें इसका निदान ढूंढना होगा। डॉ. अम्बेडकर की जल नीति को अपनाना चाहिए। जल संरक्षण एवं संवर्धन में वह बहुत मददगार साबित होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वांडमय, खंड-7 क्रांति तथा प्रतिक्रांति बुद्ध अथवा कार्ल मार्क्स, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्यास और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली, सातवां संस्करण -2013, पृष्ठ 305.
2. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वांडमय, खंड-7 क्रांति तथा प्रतिक्रांति बुद्ध अथवा कार्ल मार्क्स, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्यास और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली, सातवां संस्करण -2013, पृष्ठ 455.
3. सिंह, हरिनारायण, सम्पादक, कथादेष, अक्टुबर 2007, बजरंग बिहारी तिवारी, पृष्ठ 39.

****

An Application of Fuzzy Mathematics in Fault Detection

Shilpi Singh*

Abstract - The success of any system is greatly depends on fault-free and stable operation of every unit. Deviations from normal situation decrease productivity. Therefore reliable detection of faults is an important part for a successive maximization of productivity. Detection of faults is based on symptoms that they are changes of observable quantities from their normal behavior during its operational stage.

Symptoms can be expressed in linguistic terms. Since linguistic terms are fuzzy quantifiers, therefore, indirectly symptoms can be represented by fuzzy numbers. This work involve two cases consider one is based upon the compositional rule of inference the other is based on modified similarity measure. Fuzzifications give a curve so it has better result comparison to simple linear transformation (In case of separation of two groups).
So we change linear transformation into curve or non-linear transformation.
Keywords - Fuzzy number, fuzzy relation, occurrence indication relation, conformability indication relation, fault detection, failure mode and effect analysis (FMEA), modified similarity measure (MSM)

Introduction - The phenomenon of system failure, initially related with unsuccessful which include quality monitoring, reliability, safety, security etc. Failure is such type of phenomenon which can't be avoided and can be observed in different circumstances such as airplane crash, bomb explosion, chemical reaction accident etc. Hence there is a need to design such a system or develop a process, which can give the best result to customer.

One of important tools in both safety and quality control of system is failure mode and effect analysis (FMEA) which used in automated manufacturing system. According to Pouliezos and Stavrakakis [1] some of the symptoms are pressure decrease in boiling water reactor. The process of fault detection becomes very important and it is an essential part in automated electronics manufacturing systems. The success of such a system is greatly depended on fault-free and stable operation of every unit. Deviation from normal position decreases productivity.

For example a higher performance-smaller fault can be detected and different faults can be isolated. Detection of faults is based on symptoms that are changes of observable quantities from their normal behavior. Nowadays for fault diagnosis, fault isolation and control problems a possible solution can be use of model based approach which contain a representation of our knowledge about the fault free and faulty systems.

According to Sarsa and Kovia[2] the problems of fault detection could be solved by any of the three methods

- The estimation method
- The rule-based reasoning
- The pattern-recognition technique

Frank[3] used the estimation method for fuzzy residual generation,Tsukamoto[4],et al, Ase[5] et al have used rule-based reasoning for fault detection problems.

Methodology - Peltier and Dubuisson [8] showed that pattern recognition techniques could be used to deal with fault detection problems in cars.

In present work, following two method have been presented using trapezoidal fuzzy number.

- fuzzy set of symptom is observed in different systems
- fuzzy set of symptom is observed in particular systems

Case study 1: **Determination of the Fuzzy Set of Possible Faults for Different Systems using Compositional Rule of Inference -** Let ***S*** be a crisp universal set of all symptoms, F be a crisp universal set of all faults, and ***P*** be the universal set of all components/ systems. A fuzzy relation ***Ms*** specifying the degree of presence of symptoms for different systems is given. Particular faults has to be determined by constructing two types of relations,

a. Occurrence relation (frequency of appearance of a symptom with a particular fault)

b. Conformability relation (discriminating power of the symptom to confirm a particular fault)

The basic flow chart for this Methodology given below

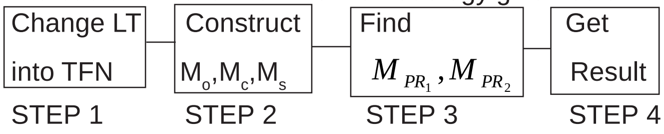

In step 1 LT is Linguistic term and TFN is Trapezoidal fuzzy no.

In step 2 M_0 and M_c defined on $S \times F$ while on

*Assistant Professor (Mathematics) Govt. Degree College, Shivrajpur, Kanpur (U.P.) INDIA

set $P \times S$ [10].

In Step 3 $M_{PR_1} = M_S \otimes M_0$, $M_{PR_2} = M_s \otimes M_C$

Case study 2: Determination of the Most Likely Affecting the system by a similarity measure called Modified Similarity Measure - In this case, faults have been detected by fuzzy clustering. The method uses some form of distance measure to determine the similarity between observed attributes (symptoms) and those present in existing diagnostic clusters. The method described is a modified version of method employed by Esogbue and Elder [11, 12].

The importance of the symptoms for detecting faults is given by a matrix depicting weights of relevance.

Suppose we obtained the weights $\mu_w(s_1, f_1)$, $\mu_w(s_2, f_2), \ldots,$ $\mu_w(s_n, f_n)$,where n is number of symptoms.

Instead of the weighted sum of the inputs we use their polynomial combination.

It is clear (because it is easier to separate by a continuous curve than by a line) that in many cases the new module provides a better diagnostic performance, However, as it was pointed out by many authors, it is impossible to provide the correct diagnosis in every case, because two persons can have approximately the same symptoms, and one suffers the disease and the other is healthy. In that situation one would need more information (additional significant symptoms) to separate them.

Illustration: Suppose that a linear transformation of the raw data into the unit interval resulted through the following figure 1(a)

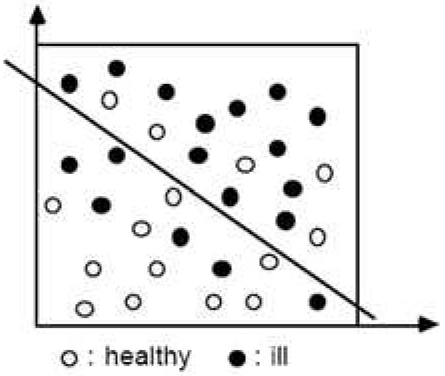

Fig. 1(a)

It is clear that there does not exist a line separating the ill persons from the healthy ones. The meaning of the prepocession is to move as much as possible the ill persons to the direction of the top-right corner and the healthy ones to the direction of the bottom-left corner. Then we shall have more freedom to separate them.

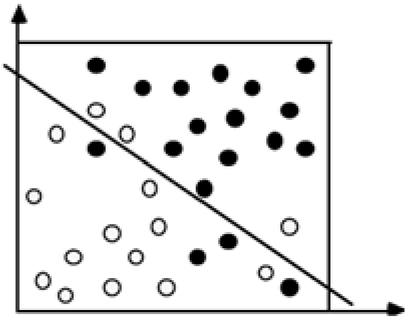

Fig. 1(b) Prepocession

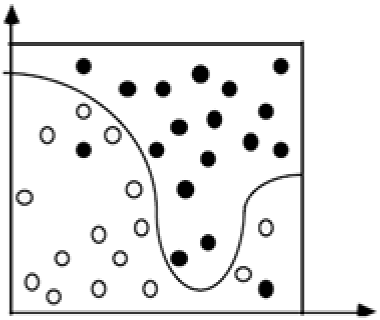

Fig. 1(c) Fuzzification

It is easy to see that by the help of fuzzification we could separate more persons than by a simple linear transformation. However, in certain cases we are still not able to separate them by a line.The fourth module provides Sa more flexible curve for separation, but as we can see from the following figure, it could not provide the correct answer in every case.

The basic flow chart are given below

Step-1	Step-2	Step-3	Step-4	Step-5
Change S into TFN	Write interval of confidence	Find Normalized distance	Find MSM	Get Result

Here is symptom in a system

If $\mu_w(S_i, f_i)$ denotes the weight of the symptoms S_i for the fault f_i then the MSM is given by the following relation:

$$D_x f_j = \left[\sum_{i=1}^{n} (\mu_w(s_i, f_i).\delta x_{s_i} f_{s_{ij}})^2 \right]^{1/2}$$

Where $\delta x_{S_i} f_{S_{ij}}$ is the normalized distance [20] between the symptoms $S_1, S_2, \ldots, S_n$ and the symptoms of fault, f_j (j=1,2…..p)

The most likely fault for the system is the one for which similarity measure has the minimum value.

Case 1 - Let there be four symptoms S_1,S_2,$S_3$and $S_4$and two types of faults f_1 and f_2 . Assume that we have relation between S_1,S_2,$S_3$and $S_4$with faults f_1 and f_2 .

The linguistic terms and the corresponding quadruple representations of fuzzy number are shown, However these values are only suggestive [16, 21]

Linguistic Term	Fuzzy Number
Always	(.9,1,1,1)
Very often	(.6,.8,.8,1)
Often	(.5,.7,.7,1)
Unspecific	(0,0,1,1)
Seldom	(0,.3,.3,.5)
Very seldom	(0,.1,.1,.3)
Never	(0,0,0,.3)

Matrices of relation M_o,M_c are M_s as given below

$$M_o = \begin{array}{c} \\ S_1 \\ S_2 \\ S_3 \\ S_4 \end{array}\begin{array}{cc} f_1 & f_2 \\ \left[\begin{array}{cc} (0,0,0,0.3) & (0.5,0.7,0.7,1) \\ (0,0.3,0.3,0.5) & (0.9,1,1,1) \\ (0.6,0.8,0.8,1) & (0,0,0,0.3) \\ (0,0,1,1) & (0,0.1,0.1,0.3) \end{array}\right] \end{array}$$

$$M_C = \begin{array}{c} \\ S_1 \\ S_2 \\ S_3 \\ S_4 \end{array}\begin{array}{cc} f_1 & f_2 \\ \left[\begin{array}{cc} (0,0,0,0.3) & (0,0,1,1) \\ (0,0.1,0.1,0.3) & (0.9,1,1,1) \\ (0,0.3,0.3,0.5) & (0,0,0,0.3) \\ (0,0,1,1) & (0.5,0.7,0.7,1) \end{array}\right] \end{array}$$

$$Ms = \begin{array}{c} \\ P_1 \\ P_2 \\ P_3 \\ P_4 \end{array}\begin{array}{cccc} S_1 & S_2 & S_3 & S_4 \\ \left[\begin{array}{cccc} 0.3 & 0.7 & 0.6 & 1.0 \\ 0.2 & 0.9 & 0.3 & 0.7 \\ 0.5 & 0.4 & 0.8 & 0.1 \\ 1.0 & 0 & 0.6 & 0.6 \end{array}\right] \end{array}$$

$$defuzzM_{PR_1} = \begin{array}{c} \\ P_1 \\ P_2 \\ P_3 \\ P_4 \end{array}\begin{array}{cc} f_1 & f_2 \\ \left[\begin{array}{cc} 0.7100 & 0.6825 \\ 0.4625 & 0.8775 \\ 0.6400 & 0.4150 \\ 0.5100 & 0.7250 \end{array}\right] \end{array} \quad ...(1)$$

Similarly calculating for M_{PR2} , then fuzzifying , we get

$$defuzzM_{PR_2} = \begin{array}{c} \\ P_1 \\ P_2 \\ P_3 \\ P_4 \end{array}\begin{array}{cc} f_1 & f_2 \\ \left[\begin{array}{cc} 0.5450 & 0.7575 \\ 0.3725 & 0.8775 \\ 0.2200 & 0.4400 \\ 0.3450 & 0.4350 \end{array}\right] \end{array} \quad ...(2)$$

From (1) and (2) we get result.

Case II - Let there be a system x which indicate symptoms S_1,S_2,$S_3$and S_4 and the level of severity of these symptoms are as below:

Symptoms	Level of severity
S1	Almost absent severity
S2	Very high severity
S3	Moderate severity
S4	High severity

The normal range of severity of different systems are given below:

Faults	Symptoms			
	S1	S2	S3	S4
f_1	(0.0,0.0, 0.0,0.2)	(0.6,0.7, 0.7,0.1)	(0.5,0.6, 0.6,0.7)	(0.0,0.0, 0.0,0.0)
f_2	(0.0,0.0, 0.0,0.0)	(0.9,0.95, 0.95,1)	(0.3,0.7, 0.7,0.1)	(0.2,0.3, 0.3,0.4)
f_3	(0.0,0.0, 0.0,0.3)	(0.0,0.0, 0.0,0.0)	(0.7,0.8, 0.8,0.9)	(0.0,0.0, 0.0,0.0)

The importance given to different weights of the symptoms in the detection of faults f is given by the following matrix W

$$W = \begin{array}{c} \\ S_1 \\ S_2 \\ S_3 \\ S_4 \end{array}\begin{array}{ccc} f_1 & f_2 & f_3 \\ \left[\begin{array}{ccc} 0.4 & 0.8 & 1.0 \\ 0.5 & 0.6 & 0.3 \\ 0.7 & 0.1 & 0.9 \\ 0.9 & 0.6 & 0.3 \end{array}\right] \end{array}$$

One has symptoms of x as

System	Symptoms			
	S1	S2	S3	S4
X	(0,0.1, 0.1,0.2)	(0.5,0.7, 0.7,1)	(0.2,0.4, 0.4,0.6)	(0.4,0.6, 0.6,0.8)

The interval of confidence for the trapezoidal fuzzy number is given as follows:

For x

$$S_{1x_\alpha} = (0.1\alpha, -0.1\alpha + 0.2)$$

The interval of confidence for (a_1, a_2, a_3, a_4) is $[(a_2 - a_1)\alpha + a_1, -(a_4 - a_3)\alpha + a_4)]$ and then calculate it for x, f_1, f_2 and f_3 for.

Taking β_1 and β_2 as the two extreme values of the trapezoidal fuzzy number [7] ie. β_1=0, β_2=1 one find the normalized distance between S_1 of x and S_1 of f_1, $S_2$of x and S_2 of f_1 and so on , for all three types of faults. If A=(a_1,a_2),B=(b_1,b_2)be two interval of confidence, then normalized distance.

$$\delta_{AB} = (a_1 - b_1, a_2 - b_2) \quad \text{Therefore}$$

$$\delta x_{s_1} fs_{11} = \frac{0.2\alpha}{2} \qquad \delta x_{s_2} fs_{21} = \frac{0.1\alpha - 0.1}{2}$$

$$\delta x_{s_3} fs_{31} = 0.2 \qquad \delta x_{s_4} fs_{41} = 0.6$$

For $\alpha = 0$, one gets modified

distance as $D_x^2 f_1 = 0.3218$

Similarly $D_x^2 f_2 = 0.0625$

$D_x^2 f_3 = 0.22093$

since $D_x^2 f_2$ is min. one can conclude that systems symptoms are most similar to those of fault f_2. we'll get same result if take ($\alpha = 0.5$ or $\alpha = 1$)

Conclusion - Modified weight give important in diagnostic performance in many cases, with the help of modified weight we apply it on methodology which determine the fault detection conventional quantitative analysis. In general documentation relating different symptoms to different systems are expressed in linguistic term. In such cases the usual conventional method can't be applied. In this paper linguistic terms expressed as trapezoidal fuzzy numbers. Since fuzzy numbers are easy to deal with the proposed methods can provide useful ways of detecting the faults.

References :-

1. **Pouliezos, A.D. & Starvakakis, G.S.(1994);** "Real-time fault-monitoring of industrial processes". Kluwer Academic Publishers.
2. **Sorsa, T. & Koivo, H.N.(1993);** "Application of artificial neural networks in process fault diagnosis", Vol. 29, Issue 4, **pp. 843-49.**
3. **Frank, P.M.(1994);** "Application of fuzzy logic to process supervision and fault diagnosis". In Fault detection, supervision, and safety for technical processes, edited by T. Ruokonen. Pergamon Press, pp. **507-14.**
4. **Tsukamoto, Y. & Terano, T.(1977);** "Failure diagnosis by using fuzzy logic". Proceedings of the IEEE Conference on Decision Making and Control, pp. **1390-395.**
5. **Asse, A.; Maizener, A,; Moreau, A,& Willaeys, D.(1988);** "Diagnosis based on subjective information in solar energy plant". I n Approximate reasoning in intelligent systems, decision and control, edited by E. Sanchez & L.A. Zadeh. Pergamon Press, **pp.159-173**.
6. **Bastani, F.B.; DiMacro, G. & Pasquini, A.(1993);** "Experimental evaluation of a fuzzy-set based measure of software correctness using program mutation". In Proceedings of the IEEE **15th** International Conference on Software Engineering, pp. **45-54.**
7. **Sanchez, E.(1979);** "Medical diagnosis and composite fuzzy relations". In Advances in fuzzy set theory and applications, edited by M. M. Gupta, R. K. Ragade & R. Yager. North Holland, New york,pp. **437-44.**
8. **Peltier, M.A. & Dubuisson, B.(1994);** "A fuzzy diagnosis process to detect evolution of a car driver's behavior". In Fault detection, supervision, and safety for technical processes, edited by T.Ruokonen. Pergamon Press, **pp. 767-72.**
9. **Cai, K.Y.(1996);** "Introduction to fuzzy reliability". Kluwer Academic Publishers.
10. **Klir, G.J. & Folger, T.A.(1988);** "Fuzzy sets, uncertainty and Information". Prentice-Hall.

****

अकबर युगीन धार्मिक समन्वय की पृष्ठभूमि : एक अध्ययन

प्रताप कुमार पाण्डेय* डॉ. रामरतन साहू

शोध सारांश – अकबर ने भारत में अपने साम्राज्य संचालन के प्रारंभिक वर्षो में ही यह अनुभव कर था कि हिन्दुत्व व इस्लाम में समन्वय का प्रयत्न करके ही एक बेहतर प्रशासन व राजनीतिक सफलता स्थापित की जा सकती है। वह स्वयं भी जिज्ञासु प्रवृत्ति का था। उसने दोनों धर्मों में समन्वय हेतु सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक आदि अनेक क्षेत्रों में विविध प्रयत्न किये। उनकी इन नीतियों ने भारतीय जनजीवन की सभी क्षेत्रों में अमूलचूल प्रयत्न किये। यही कारण है कि उसके द्वारा पुष्ट किया गया मुगल–साम्राज्य आगे चलकर लम्बे समय तक फलता–फूलता, सशक्त बना रहा। इसके युग में सभी क्षेत्रों में समन्वय की धारा बही, जिसने अल्पकाल के लिये ही किन्तु एक नया उज्ज्वल पथ प्रस्तुत किया।

शब्द कुंजी – भारतीय दर्शन, एकेश्वरवाद, ईश्वरीय ज्ञान, सूफीवाद, शरीयत, सुलह–ए–कुल, दीन–ए–इलाही, धार्मिक समन्वय, वैश्विक पुनर्जागरण, आध्यात्मिक जागृति।

प्रस्तावना – दिल्ली सल्तनत (1206 से 1526 ई.) के उपरांत 21 अप्रैल 1526 में पानीपत के प्रथम युद्ध में विजयी बाबर ने नवीन मुगल राजवंश की नींव डाली। भारतीय इतिहास में यह अत्यंत महत्वपूर्ण युग की शुरूआत थी। बाबर का धार्मिक दर्शन प्राय: तटस्थ रहा, उसकी असहिष्णुता और कथित उदारता के प्रश्न आज भी ऐतिहासिक विवाद के विषय हैं। यह तो हो नहीं सकता कि अयोध्या के 'राममंदिर' को ध्वस्त करने में 'मीरबांकी' को बाबर का प्रत्यक्ष या अपरोक्ष समर्थन प्राप्त न रहा हो। हुमायूँ भी बाबर की तरह ही अवसरवादी नीति पर चला, यद्यपि उसका शासनकाल संघर्षो से सदा आच्छन्न रहा। इसी मध्य अफगान शेरशाह ने सिंहासन पर अधिकार स्थापित कर लिया। शेरशाह की नीतियां अपने साम्राज्य के हित में उदारतापूर्ण थीं तथापि उसने मुस्लिम वर्ग को ही अधिक पोषण दिया।

अकबर ने अपने राज्यारोहण के कुछ प्रारंभिक वर्षो तक उसकी नीतियाँ अनुदार थी परन्तु शीघ्र ही उसने यह भलीभांति अनुभव कर लिया कि धार्मिक कट्टरता भारत की बहुसंख्यक हिन्दू जनता की सांस्कृतिक, धार्मिक प्रवृत्ति और जनजीवन के विरूद्ध थी। अत: वह धीरे–धीरे मुल्लाओं के प्रभाव से मुक्त हो गया और उसने सूफीवाद, भक्तिकालीन आंदोलन, भारतीय दर्शन तथा वैश्विक पुनर्जागरण के इस महत्वपूर्ण युग में स्थायी प्रशासन के लिये सुलह–ए–कुल (सबके लिये शांति) की नीति को अपनाकर हिन्दुओं से समन्वय करने हेतु प्रयत्न प्रारंभ किय। यह उसकी प्रबल राजनीतिक आवश्यकता थी।

16वीं शताब्दी : धार्मिक परिवर्तन का युग – धर्म कोई नया अविष्कार नहीं है, यह उतना ही पुरातन है जितना संसार, तो कम से कम उस संसार के बराबर पुरातन है ही जिस संसार को हम जानते हैं, जब से हमें मनुष्य की भावनाओं और विचारों का कुछ भी ज्ञान हुआ है तब से हम देखते हैं कि उस पर धर्म का प्रभाव है। हम चाहे अपने बौद्धिक विकास के नीचे से नीचे उतर जायें, चाहे अनुमान की ऊंची उड़ान, पर सब जगह हमें यह मिलता है कि धर्म एक शक्ति है जिसने विजय प्राप्त की है, इतना ही नहीं धर्म ने उन पर भी विजय पाई है जो सोचते हैं कि उन्होंने धर्म पर विजय पायी है। धर्म का प्रयोग कई अर्थों में हुआ है, कहीं पर उसका प्रयोग धार्मिक विधियों के द्वारा मूल तत्व की अभिव्यक्ति में, कहीं नैतिक मूल्यों के लिये, तो कहीं कर्मकाण्डों के लिये हुआ है। कैन्ट के अनुसार – 'धर्म सदाचार है, जब हम अपने नैतिक कर्तव्यों को दैवी आज्ञा मानते हैं।'

हिन्दुस्तान की दुनिया को ख़ास दिन यह रही है कि उसने विचारों और क़ौमो के जुदा–जुदा तत्वों के समन्वय की ओर विभिन्नता से एकता पैदा करने की योग्यता और तत्परता दिखाई है।(1) भारतीय दर्शन में गीता इसे और भी अधिक स्पष्ट कर देती है। भारतीय दर्शन में शरीर को महत्व न देकर आत्मा की अजरता–अमरता के सिद्धांत को प्रमुखता प्रदान की गयी है। नैतिकता का आचरण भारतीय संस्कृति का प्रमुख आधार रहा है।(2)

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्त: संङ्गवर्जित:।
निर्वैर: सर्वभूतेषु य: स मामेति पाण्डव।।

– श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 11, श्लोक 55

– अर्थात् जो पुरूष सर्वत्र मुझ को ही समझता हुआ सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मो को करने वाला है, आसक्ति रहित है और सम्पूर्ण भूतप्राणियों में वैरभाव से रहित है ऐसा वह अनन्य भक्ति वाला पुरूष मेरे को ही प्राप्त होता है।(3)

उपनिषदों में धर्म को ईश्वर के संबंध में ज्ञान माना गया है। ईश्वर सभी को स्वामी, सर्वज्ञाता, स्र्वस्त्रोत, प्राणीमात्र का जनक एवं विनाशक है। विश्व के सभी धर्मो का मूल ईश्वर के विषय में ज्ञान प्राप्त करना है। सभी धर्म वास्तव में ईश्वर तक पहुंचने के लिये एक–एक मार्ग है।

सभी धर्मो का अपना–अपना दर्शन है। दर्शन का मूल उद्देश्य सांसरिक दु:ख और अज्ञानता का अंत करना है। ईश्वरीय ज्ञान की अज्ञानता मनुष्य के दु:खों का मूल स्त्रोत है। धार्मिक दर्शन के माध्यम से मनुष्य ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति कर सुख का अनुभव करता है। इस्लाम, ईसाई, हिन्दु, बौद्ध, जैन सभी धर्मो में मोक्ष (परम सुख) की प्राप्ति की अलग–अलग चर्चा की गई है। दर्शन का मूल ईश्वर की सृष्टि, आत्मा, जीव है तथा मूल उद्देश्य ईश्वरीय ज्ञान को प्राप्त कर मनुष्य के अंतिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करता है।(4) हिन्दु धर्म में प्राचीनकाल से ही इन्हीं विषयों पर जोर दिया जाता है। इसमें विशाल

* शोधार्थी (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

धार्मिक एवं दार्शनिक साहित्य की उपलब्धि इसका प्रमाण है।

वैश्विक धार्मिक मान्यताओं में उथल-पुथल का युग - यूरोप में जिस समय सीजर रोम के रिपब्लिक का अंत कर सारी राजशक्ति अपने हाथ में रखा था, उस समय रोमन साम्राज्य के सुदूर पूर्वी प्रदेश में फैलेस्टाइन में एक महात्मा का जन्म हुआ जिन्हें जीसस या यीशु कहा गया। ईसाई इन्हें ईश्वर का पुत्र मानते हैं। उन्होंने नये धर्म का प्रचार किया। उनका कहना था कि हमें पृथ्वी को स्वर्ग बनाना चाहिये। परमेश्वर सबका पिता है। उसके सामने सब समान हैं। सूर्य के समान वह प्राणी मात्र को अपनी रोशनी देता है। यीशु के उपदेश बाईबिल में संग्रहित हैं।(5)

इसी प्रकार अरब में इस्लाम का उदय नवीन ज्योति के रूप में हुआ। अरब वाले सामाजिक बुराईयों और धर्म के आडम्बर में डूब रहे थे। नैतिकता समाप्त हो चुकी थी। उस समय ईश्वर के पैगाम को पहुंचाने के लिये मोहम्मद साहब का अवतरण हुआ, उन्होंने ईश्वर की एकता, समानता एवं भ्रातृत्व का उपदेश दिया। उनके ये उपदेश 'कुरान' में संग्रहित हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि धर्म अपने युग की आवश्यकता के अनुरूप अपने बाह्य कलेवर में परिवर्तन करता है।

महावीर स्वामी, गौतम बुद्ध तथा भक्ति आंदोलन के महान समाज सुधारकों ने मनुष्य के दु:खों को दूर कर मोक्ष प्राप्त करने के साधन को अपने ढंग से बताया है। समय तथा परिस्थिति का प्रभाव धर्म के परिवर्तित विचारों पर पड़ा है।

15वीं, 16वीं शताब्दी का युग धार्मिक क्षेत्र में उथल-पुथल का युग था। जिस प्रकार 16वीं शताब्दी में भारत में धार्मिक कर्मकाण्डों और जटिलताओं के विरूद्ध बौद्ध और जैन धर्म के रूप में प्रतिक्रिया अभिव्यक्त हुई, उसी प्रकार चीन में लाआत्से कन्फ्यूशियस ने नये सिद्धान्तों का प्रचार किया। वहीं ईरान में जरथुस्त्र ने पारसी धर्म की नींव डाली। इसी प्रकार इस 16वीं शताब्दी में रोम कैथोलिक ईसाई धर्म की बुराईयों के विरोध में एक नये प्रोटेस्टेंट धर्म का उदय हुआ। जिसने पोप के विशेषाधिकार और चर्च की प्रामाणिकता को मानने से इंकार कर दिया।

भारत में धार्मिक समन्वय की पृष्ठभूमि - भारत में यह युग दो प्रमुख धर्मो के संघर्ष के अंत का युग था और समन्वय की ओर जाने का सुनहरा युग था। इसी युग में भक्ति मार्गी विचारधारा का उदय हुआ जिसे प्रियर्सन ने 'बिजली की चमक' की उपमा दी है। मुस्लिम धर्म में यह युग सूफीवाद के चरम विकास का है। सूफी मत की गणना विश्व के प्राचीन सम्प्रदायों में नहीं की जा सकती। धर्म के रूप में यह 16वीं शताब्दी में उपस्थित हुआ। इस धर्म में साधक की बाह्य और आंतरिक शुद्धता पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है।

वस्तुत: सोलहवीं शताब्दी संसार के इतिहास में धार्मिक जागृति का युग था। वैश्विक-पुनर्जागरण की विशाल धाराओं की तुलना भारत के नवजागरण से की जा सकती है। हिन्दुस्तान में यह ऐसी जागृति हुई जिससे उसकी प्रगति को प्रेरणा मिली ओर राष्ट्रीय जीवन को बल प्राप्त हुआ। इस जागृति का मुख्य स्वर था प्रेम और उदारता। ऐसा प्रेम जो मनुष्य और ईश्वर को एक करता था और इसीलिये मनुष्य को मनुष्य के निकट लाता था और ऐसी उदारता जिसके कारण जाति, सम्प्रदाय और व्यवसाय के भेद मिट गये थे और जो मानव अस्तित्व और समस्त धर्मो के तत्व पर आश्रित थी। इन महान उद्देश्यों के द्वारा हिन्दु और मुसलमान दोनों को प्रेरणा मिली और वे अपने समय की निस्सार बातों को कुछ समय के लिये भूल गये। दोनों के लिये एक नये युग का उदय हो गया। मुसलमान समझते थे कि महदी का जन्म होने वाला है और हिन्दुओं में ईश्वर के प्रति सर्वव्यापी प्रेम उमड़ पड़ा था।

धार्मिक समन्वय हेतु अकबर के विविध प्रयत्न - युग के आवश्यकतानुसार इन परिस्थितियों में अकबर ने राजसत्ता की जो नवीन व्याख्या की थी, उससे सम्राट का पद इतना ऊँचा हो गया था कि कोई उसे चुनौती नहीं दे सकता था। अबुल फजल लिखता है - 'राजत्व, ईश्वर से उद्भासित एक प्रकाश, सूर्य की एक किरण, विश्व को प्रकाशित करने वाला, पूर्णता के ग्रंथ का तर्क और गुणों को केन्द्र है। आधुनिक भाषा में इस प्रकाश को 'करे रजीदी' (देवी प्रकाश) कहते हैं और प्राचीन भाषा में इसे 'किया ख़ुरा' (पवित्र मण्डल) कहते हैं। यह राजाओं को बिना किसी मध्यस्थ की सहायता के ईश्वर से प्राप्त होता है। इसकी उपस्थिति में लोग प्रशंसा से मस्तक को अधीनता की भूमि की ओर नत कर देते हैं।(6)

राजत्व के इन आदर्शो को अपनाते हुए अकबर ने धार्मिक क्षेत्र में समन्वय हेतु विविध प्रयत्न किये। उसने 1562 ई. में अपने सिंहासनारोहण के तीसरे वर्ष में युद्धबंदियों को दास बनाने एवं उन्हें जबरिया इस्लाम अपनाने पर प्रतिबंध लगा दिया साथ ही हिन्दुओं से तीर्थयात्रा कर लेना बंद कर दिया। 1564 ई. में घृणित 'जजिया' कर दिया जाना निषेध घोषित कर दिया। हिन्दुओं को नवीन मंदिरों के निर्माण एवं पुराने मंदिरों के जीर्णोद्धार करने की आज्ञा प्रसारित कर दी। इसी समय से उसने हिन्दू राजकुमारियों से विवाह भी करने प्रारंभ किये। आमेर, बीकानेर, जैसलमेर आदि की हिन्दू की राजकुमारियों से उसने विवाह किया। इन रानियों के लिये उसने अपने महल में मंदिर भी बनवाया। हिन्दुओं की गाय के प्रति कोमल भावनाओं को देखकर उसने गौवध पर प्रतिबंध लगा दिया तथा स्वयं भी गौमांस खाना बंद कर दिया।

दीन-ए-इलाही - अकबर ने 1575 ई. में फतेहपुर सीकरी में इबादतखाने की स्थापना भी करायी और वहां होने वाले हिन्दू, जैन, पारसी व ईसाई आदि धर्माचार्यों के धर्म-सिद्धांतों की व्याख्या सुन-सुनकर वह इस निष्कर्ष पर पहुंच गया कि सभी धर्मो में न्यूनाधिक अच्छी व बुरी बातें शामिल हैं। सभी धर्मो के मानने वाले विभिन्न मार्गो से एक ही मंजिल पर पहुंचने के लिये प्रयत्नशील हैं। अत: उसने विभिन्न धर्मों की उपासना पद्धतियों से प्रभावित होकर एक नए पथ दीन-ए-इलाही का 1582 में प्रवर्तन किया। दीन-ए-इलाही एक धर्म नहीं था अपितु यह सब धर्मों का सार था। इसमें अकबर द्वारा रविवार को दीक्षा दी जाती थी। अकबर दीक्षार्थी को 'शिस्त' (मंत्र) प्रदान करता था। दीक्षार्थी एकेश्वरवाद में विश्वास करता था और अकबर को अपने आध्यात्मिक गुरू के रूप में स्वीकार करता था। प्रत्येक शिष्य को मांसाहार त्यागना पड़ता था। अगर यह संभव न हो सके तो कम से कम उसके जन्म माह में मांसाहार निषिद्ध था। जन्मदिवस पर प्रीतिभोज देना होता था तथा मृत्युभोज को अपने जीवनकाल में ही देना होता था। क्रोध का त्याग करना होता था। दीक्षार्थियों के लिये यह आवश्यक था कि वे कर्म के प्रभाव पर विचार करें, भक्ति और ज्ञान में वृद्धि करें, शरीर को स्वच्छ व निरोग रखें, आत्मा को भगवत् प्रेम और भगवत् प्राप्ति में लगाएं। दीन-ए-इलाही में कोई पवित्र ग्रंथ या पुराहित नहीं था। इसमें कोई पूजा गृह, कर्मकाण्ड या पूजा पद्धति नहीं थी। दीन-ए-इलाही के अनुयायी चार वर्गों में विभाजित थे जो उनके त्याग पर आधारित था। उन्हें धन-सम्पत्ति, मान-सम्मान, जीवन और धर्म का बलिदान करना पड़ता था। इनमें से एक का त्याग करने वाला पहला पद, दो त्याग करने वाला दूसरा पद, तीन त्याग करने वाला तीसरा पद और चारों को त्याग करने वाले चौथे पद पर होते थे। धर्म-त्याग का अर्थ

धार्मिक संकीर्णता और कट्टरता का त्याग करना होता था। ये चारों स्थितियां सूफीवाद के सोपानों के समान थी। अकबर ने दीन-ए-इलाही का प्रचार नहीं किया और न ही इसके लिये किसी प्रकार का प्रलोभन दिया था। अकबर का उद्देश्य धर्म की स्थापना करना नहीं था, बल्कि विभिन्न वर्गों में वैमनस्य को समाप्त कर साम्राज्य को सुदृढ़ बनाना था, जिससे सभी धर्म के अनुयायी अपने धर्मों का स्वतंत्रता से पालन करते हुए सौहार्द्र और सद्भावना बनाये रखें वे साम्प्रदायिक विवादों में न फंसे।

इन उदारनीतियों के परिणाम अंततोगत्व हुआ अकबर के लिये अत्यंत लाभप्रद सिद्ध हुए। हिन्दू जनता की सहानुभूति को प्राप्त करके जहां एक ओर उसे मुस्लिम विरोधियों को दबाने के लिये प्रबल राजपूत सेनानायकों का साथ प्राप्त वहीं दूसरी ओर वह मुगल साम्राज्य की जड़ों को मजबूत करने में सफल हुआ। यद्यपि महाराणा प्रताप के साथ चले संघर्षो ने उसे व्यक्तिगत व राजनीतिक रूप से सदा सर्वदा के लिये अपूर्णीय क्षति पहुंचायी तथापि उसके ये प्रयत्न धार्मिक समन्वय के लिये इतिहास में मील का पत्थर सिद्ध हुए।

दैवीय व्यवस्था की इस व्याख्या ने राज्य की इस्लामी व्याख्या तथा उसकी दुहरी नागरिकता के सिद्धान्त को रद्द कर दिया और सम्राट को अपनी सम्पूर्ण प्रजा का बिना जाति, धर्म के भेदभाव के पितृत्वपूर्ण शासक बना दिया। अब प्रजा की भलाई ही सम्राट का प्रमुख कर्तव्य बन गया था। अकबर सम्पूर्ण रूप से भारतीय हो गया था। उसकी प्रतिभा ने हिन्दू और मुसलमान दो जातियों को एक महान शानदार साम्राज्य की समान सेवा और समान नागरिकता के बंधनों द्वारा एक राष्ट्र में ढलने के कार्य की सम्भावना का अनुभव किया और उसके साहस ने यह कार्य पूर्ण किया।[7] इस पवित्र कार्य को करने के लिये अकबर ने ऐसे धर्म को बनाने का प्रयास किया था जो सभी को मान्य हो। के.टी. शाह का कथन सत्य ही है कि 'मुगलों में अकबर सबसे बड़ा था और महान मौर्य शासकों को छोड़कर सम्भवत: पिछले 1000 वर्षों में होने वाले भारतीय शासकों में भी वह सबसे महान था।'[8]

निष्कर्ष - अब तक राजसत्ता में इस्लामी सिद्धांत ही मान्य था किन्तु अकबर ने इस क्षेत्र में 'दैवीय उत्पत्ति के सिद्धांत' को बलवती बनाया। अपने व्यक्तिगत व राजनीतिक कारणों से अकबर ने समन्वयवादी उदार विचारधारा को प्रधानता दी जिससे उसका साम्राज्य निरंतर सुदृढ़ होता चला गया। भारत में लगभग 375 वर्ष के लम्बे समय के मजहबी राज्य को बदलकर एक उदारवादी, समन्वयवादी राज्य की स्थापना हेतु अकबर के प्रयत्न नि:संदेह उस युग की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि कहे जा सकते हैं। अकबर ने वस्तुत: अपनी विशिष्ट दूरगाही उदार नीतियों, सिद्धांतों और कार्यो से मुगल साम्राज्य को न केवल सुव्यवस्थित और सशक्त बनाया वरन् साथ ही साम्राज्य की बहुसंख्यक हिन्दू प्रजा की विरोधी और विद्रोही भावनाओं को भी शांत कर दिया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नेहरू, जवाहरलाल : **हिन्दुस्तान की कहानी**, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, 7वां संस्करण, 1997, पृष्ठ 100
2. सिंह, डॉ. बृजेश : **मेवाड़ दर्शन और स्वातंत्र्यचेता महाराणा**, पंकज बुक्स, दिल्ली 3रा संस्करण 2012, पृष्ठ 225
3. वेदव्यास : **श्रीमद्भगवद्गीता**, अध्याय 11, श्लोक 55, गीता प्रेस गोरखपुर 43वां संस्करण, 2000, पृष्ठ 251
4. चौबे, झारखण्डे एवं श्रीवास्तव कन्हैया लाल : **मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति**, उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1979, पृष्ठ 324
5. विद्यालंकार सत्यकेतु : **यूरोप का आधुनिक इतिहास**, श्री सरस्वती सदन, सफदरजंग एनक्लेव, दिल्ली 1990, पृष्ठ 32
6. अबुल फजल : **आइने-अकबरी**, अनुवाद-एच. ब्लोचमेन, जिल्द - 1, कलकत्ता, 1956, पृष्ठ 3
7. पाण्डेय, श्रीनेत्र : **भारत का वृहद् इतिहास**, भाग-3, लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 1940, पृष्ठ 150
8. शाह, के.टी. : **स्प्लेण्डर दैट वाज़ इण्डिया**, केसिंगर पब्लिकेशन, मोण्टाना, यूएसए, 1960, पृष्ठ 30

****

गुलाबीपोश अपराध एवं व्यवहार विचलन के कारण

गुंजन पारिख *

प्रस्तावना – गुलाबीपोश अपराध शब्द सन् 1980 में अपराध शास्त्री केथलीन डेली ने प्रस्तुत किया था। गुलाबीपोश अपराध की परीभाषा डेली के शब्दों में जो कि उन्होंने अपनें आर्टिकल में दी थी, इस तरह है। गुलाबीपोश अपराधी निम्न एवं मध्य वर्ग की कार्यस्थल पर जाने वाली महिलाएं है जो मेनेजर, क्लर्क, किताबें सम्भालने वाली आदि हो सकती है और जो अपने कार्यस्थल से पैसों को चुराती है।

1982 में व्हीलर में महिलाओं एवं पुरूषों के सामाजिक, आर्थिक प्रोफाईल्स को तथा उनके व्यवसायों की प्रकृति एवं अवैधानिकता पर अपना आंकड़ों का संकलन प्रस्तुत किया और उसका परिणाम पुरूष अल्पसंख्यकता तथा महिलाओं का मुठ्ठी में होना ही उच्च श्रेणी के सफेदपोश अपराधों को प्रतिबिम्बित करता है अधिकांश कार्यरत महिलाऐें लिपिक वर्ग या लिपिक कर्मचारी होती है तथा पुरूष मैनेजर या प्रशासन में होते है महिलाऐें निकले वर्ग की, काली, कम पढ़ी लिखी तथा जिनके पास अपने स्वयं के आर्थिक साधन नहीं होते है वे ही होती है। पुरूष अपने अपराध कार्यो में ज्यादातर अपराध समूह में रहकर करना पसंद करते हैं तथा अपराध करने में अपने संगठित गिरोहों की सहायता लेते है और इस प्रकार इन अपराधों से ज्यादा से ज्यादा आर्थिक लाभ प्राप्त करते है। वहीं महिलाओं को व्यवसायिक रूप से निम्नतम रखना उनके आवागमन में कमी आदि महिलाओं के द्वारा किए जाने वाले गुलाबीपोश अपराधों को समझाते है।

प्राचीन समय में जब मनुष्य समुदायो में रहता था तो प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के सम्पर्क में रहता था तथा इनके मध्य सबंध ही प्रधान होते थे। हर समुदाय अपने नियमों पर चलता था तथा उसके उल्लंघन पर दण्ड दिया जाता था। दण्ड का आधार धर्म होता था तथा धर्म, नैतिकता, इमानदारी, सच्चरित्रता तथा कर्तव्यपरायणता के एक महत्वपूर्ण मूल्य के रूप में मान्य था। किन्तु समुहों के आकार मे वृद्धि के पष्चात राजनीतिक तंत्र एवं न्याय व्यवस्था की स्थापना की गई तथा शासन के प्रत्येक स्तर पर बहुत से बडे-बडे अधिकारियों तथा सामान्य कर्मचारियो को नियुक्त-करके उतने अधिकार दे दिये गये कि वे उस क्षैत्र के जनजीवन को नियमित कर सकें किन्तु जनतंत्र के यही क्रिया कलाप :अधिकारियो एवं कर्मचारियों को अधिकार देने के परिणाम स्वरूप इस व्यवस्था के लिए संकट कारक बन गए। प्रथम तो अधिकार प्राप्त व्यक्तियों ने अपने अधिकारों का दुरूपयोग करना प्रांरभ कर दिया एवं बाद मे समाज के दूसरे वर्गो ने उसका अनुसरण करना प्रारंभ कर दिया। आज स्थिति यह है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति राजनीतिक प्रशंसा संक व्यापारी व्यवसायी तथा सामान्य व्यक्ति-अन्य व्यक्तियों की कर्तव्य हीनता के बारे में जानता तो है परन्तु उनके खिलाफ कुछ भी कर पाने में स्वयं को असहाय पाता है। फलस्वरूप विधि का अपालन हो रहा है मर्यादाएं नष्ट हो रही है, नैतिक मूल्यो का कोई महत्व नही रह गया है तथा प्रत्येक व्यक्ति भ्रष्ट साधनों से अधिकाधिक लाभ कमानें की होड में लगा हुआ है। और इस होड में हम महिलाओं के कहीं भी पीछे नही पाते है। आज महिलाएं भी इस प्रकार के अपराधों को करनें में पीछे नही है, तथा दिन प्रतिदिन इनके द्वारा किए जाने वाले अपराधों के आंकडे बहुत ही जा रहे है। महिलाओ के द्वारा किए जाने वाले अपराधों को हम **गुलाबीपोश** अपराध कहते है।

आज सफदेपोश अपराध समाज के हर व्यापार व्यवसाय में गहरी जडे जमा चुका है दूसरो से ज्यादा पानें की लालसा तथा '**जब सभी कर रहे है तो मेरे द्वारा करने से क्या फर्क पड जाएगा'** ऐसी सोच रखना, समाज का इस अपराधों के प्रति जागरूक नही होना तथा स्वयं के अहम को प्राथमिकता देना इन अपराधों के प्रति समाज की उदारसीनता है, और सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण तो यह बात है कि समाज इन अपराधो को अपराध नही मानता है और इन अपराधो के द्वारा समाज को होने वाले गंभीर परिणामों का भान स्वयं समाज को ही नही हो पा रहा है।

अध्ययन का महत्व – भारत में सफेदपोश अपराधों के लिए भारतीय दण्ड संहिता 1860 के अन्तर्गत कई प्रावधान पूर्व में ही किए गए है परन्तु उन प्रावधानों का वर्तमान की समस्याओं से मेल नही हो पाने के कारण अन्य कई विशेष अधिनियम बनाए गए है जो कि वर्तमान सफेदपोश अपराधों से निपटते है परन्तु अपराधी नित नए अपराध करने के तरीके खोज लेते है। जिसकी वजह से ये नये प्रावधान भी कम लगते है। वर्तमान मे सफेदपोश अपराधों के किए जाने सिर्फ पुरूष ही आगे नही है। बल्कि महिलाएँ भी बराबरी से यह अपराध करने लगी है। मेरा यह शोध महिलाओं के द्वारा किये जाने वाले सफेदपोश अपराधों के सम्बन्ध में है। महिलाओं द्वारा कार्यस्थल पर किये जाने वाले इन अपराधों को गुलाबीपोश अपराध (Pink Collar Crime) कहते है। मेरे शोध में महिलाओं की मानसिकता मे परिवर्तन तथा उत्पन्न विसंगतियों के कारणो के बारे में विचार किया गया।

प्रो. सदरलैण्ड ने श्वेतापोश अपराध की परिभाषा इस प्रकार दी है- 'प्रतिष्ठित एवं उच्च सम्मानित पद के व्यक्ति द्वारा अपने व्यवसाय के समय में किया गया अपराध ही श्वेतपोश अपराध है। अपनी इस परिभाषा को प्रो. सदरलैण्ड ने बाद में और भी सुधारते हुए लिखा कि 'अपने पेशा या व्यवसाय से संबंधित क्रिया कलापों में उच्च सामाजिक और आर्थिक वर्ग के व्यक्तियों द्वारा अपराध विधि का उल्लंघन सफेदपोश अपराध है।'

सफेदपोश अपराधी वह व्यक्ति नहीं है जो किसी मानसिक या आर्थिक कारणों से अपराध कर बैठता है बल्कि वह एक ऐसा व्यक्ति होता है जो अपने कारोबार के उपक्रम में कानून का उल्लंघन करते हुए समाज में प्रतिष्ठित व्यक्ति बना रहता है। **सदरलैण्ड** के अनुसार 'परिणाम की दृष्टि से सामाजिक

* शोधार्थी (विधि) मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

आर्थिक अपराध सामान्य अपराधों की अपेक्षा कहीं अधिक गंभीर स्वरूप लिए हुए होते है सभी जानते है कि कपरटपूर्ण विज्ञापनों की गलत बयानबाजी पेटेन्टस, कापी राईट्स आदि का अतिलंघन ट्रेडमार्क संबंधी नियमों का उल्लंघन जिसे **भारतीय दण्ड संहिता** की धारा 478 तथा धारा 480 एवं जालसाजी जिसे **भारतीय दण्ड संहिता** की धारा **463** में परिभाषित किया गया है इत्यादि अपराध लाभ कमाने की दृष्टि से प्राय: किये जाते है। अन्य प्रकार के सामाजिक आर्थिक अपराध झूठे व्यापारिक वार्षिक लेखे या आय व्यय विवरण प्रकाषित करना व्यापार में अनुचित स्पर्धात्मक तरीके अपनाना अपनी वस्तु के दोष छुपाते हुए उसे धौंस देकर ग्राहाको को बेचना, कालाबाजारी तस्करी इत्यादि हो सकते है। सामाजिक आर्थिक अपराधों का स्वरूप इस प्रकार होता है कि उनके कारण इतने अधिक व्यक्ति प्रभावित होते हे कि प्रत्येक पर इनका व्यक्तिगत प्रभाव प्राय: नगण्य होता है सम्भत: यही कारण है कि **इन अपराधों के प्रति समाज कठोर नीति नहीं अपनाता** और अपराधी के पकडे जाने पर भी उसको सामाजिक स्तर पर कोई प्रत्याघात नहीं होता।

महिला अपराध के शुरूआती स्पष्टीकरण अपराध और मानव व्यवहार के संबंध में प्रचलित विचारों को अधिक आमतौर पर दर्शाते है 1800 के दशक के उत्तारार्ध में मानव व्यवहार के सिद्धान्तों को ही निर्धारक माना जाता था। अपराध विज्ञान में यह परिप्रेक्ष्य व्यक्तियों के नियंत्रण से परे जैविक या सामाजिक कारणों के लिए अपराध को जिम्मेदार सिद्धान्तों में स्पष्ट था। मनोवैज्ञानिक स्पष्टीकरण के साथ ही मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों को प्रमुखता प्राप्त हुई अपराध के सामाजिक स्पष्टीकरण (अंतर संघ विसंगति सामाजिक विघटन) सामाजिक और संस्कृति कारकों पर जोर दे रहे थे जो महिला एवं पुरुष अपराधिकता के लिए जिम्मेदार थे।

लोम्ब्रेसो ने महिला अपराधियों को नर की विशेषताओं के रूप में देखा उन्होंने तर्क दिया कि जैविक रूप से अपराधिक महिलाऐं अन्य महिलाओं की तुलना में पुरूषों के समान मिलती है।

ओटो पोलक ने जैविक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कारकों के मिश्रण के संदर्भ में महिला अपराध और लिंग अंतर को समझाते हुए आपराधिक व्यवहार में महिलाओं की भागीदारी की सीमा और गुणवत्ताा से संबंधित मूल धारणाओं को चुनौती दी।

पोलक के अनुसार अपराध में महिलाओं की भागीदारी पुरूषों की ओर से आती है और जनसंख्या में उनके प्रतिनिधित्व के अनुरूप है। उनका तर्क कै कि अपराधों के प्रकार महिलाओं की खरीदारी दुकानकारी घरेलू चोरी, वेश्यावृत्ति गर्भपात, झनडे से चोरी, विभिन्न कारणों से अपराध आंकडो में अविकसित है। वे इन अपराधों के लिए सामाजिक एवं पर्यावरणीय कारकों के महत्व पर जोर देने है।

महिला अपराधिकता के लिए **पोलक** ने जैविक और शारीरिक आधार का गुण भी एक मौलिक विषय माना। उन्होंने महिला अपराधिकता पर हार्मोनल और जनरेटिव चरणों जैसे **मासिक धर्म गर्भावस्था** और **रजोनिवृत्ति** के प्रभावों को भी महत्वपूर्ण माना।

व्यवहार विचलन के कारण – प्राचीन समय में प्रत्येक व्यक्ति समुदाय में रहने के कारण एक दुसरे के सम्पर्क में होता था। धर्म,नैतिकता, सदाचार, ईमानदारी, कर्तव्यपरायणता आदि को एक महत्वपूर्ण मूल्य के रूप में मान्यता देता था किन्तु समय में परिवर्तन के पश्चात् महिलाओं के अधिकारों में बढोतरी होने से एवं महिलाओं को अध्ययन में कामकाज में तथा घुमने फिरने एवं पुरूषों के समान समस्त कार्य करने के अधिकार मिलने से, एवं घर में समय कम दिये जाने से बच्चों के नैतिक शिक्षा का हास हुआ एवं होता ही जा रहा है इस वजह से महिलाऐं भी अपराध कार्य करने में निरन्तर आगे बढ़ती जा रही है जिनके **व्यवहार विचलन के कारण**

निम्नलिखित है:–

1. अवसर की सुलभता
2. गुप्त रूप से किया जाना
3. लालच
4. ईमानदारी की असामान्यता
5. कम सजा
6. पकड़ना मुश्किल
7. व्यावसायिक प्रतियोगिता
8. कमजोर कानून
9. सम्पूर्ण देखरेख का अभाव
10. सबूत का भार
11. अपराधियों का स्वयं को अपराधी न मानना
12. सरकारी नीतियों का वास्तविकता से अलग होना
13. परिवार की सहायता के लिए
14. बेराजगारी
15. मानसिक या शारिरीक बिमारी

आज उच्च पदस्थ महिलाएं जैसे **चंदा कोचर** या राजस्थान में **आइपीएस मीणा** ऐसे कई नाम सामने है जो कि इस तरह के अपराधों में लिप्त है।

कई बार तो महिलाए अपराध करने के लिए उन कानूनों की सहायता लेती है जो स्वयं उनके फायदे के लिए ही बने है ये महिलाए अन्यों को ड़राने या पैसा वसूल करने के लिए उन कानूनों का गलत उपयोग करती है जो कि स्वयं उनके फायदे के लिए बनाए गए है। जैसे कि दहेज हत्या SIFF (Save Indian Foundation) के अनुसार 98% दहेज प्रताड़ना के मामले झूठे मुकदमो की वजह से अपनी नौकर खोई तथा नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो के अनुसार 57693 (2007) पुरूषों ने आत्म हत्या की जबकि महिलाओं का आंकडा 30000 ही था।

इस तरह से महिलाएं स्वयं के लिए बनाए कानून की आड़ में लोगो को ड़रा धमका रही है जिसको की एक तरह से **विधिक आतंकवाद** कहा जा सकता है। आज नारी की स्थिति अबला के रूप में नहीं कही जा सकती है परन्तु यह और भी भयानक है क्योंकि आज इनके भी अपराध के क्षेत्र में आ जाने से अपराधों का आंकडा अधिकतम गति से बढ़ रहा है। और यह एक गंभीर समस्या है। महिलाओं के द्वारा पुरूषत्व के गुण अपनाना क्या समाज एवं स्वयं उनके लिए उचित हो रहा है? या फिर यह एक आवरण है जिसमें वे स्वयं को छिपाकर अपनी कुण्ठा अपराध के रूप में निकाल रही है।

हम जानते है कि आज वर्तमान में महिला अपराधियों की संख्या में वृद्धि बहुत हो रही है किन्तु हम यह भी जानते है कि महिला अपराधियों की अपेक्षा पुरूष अपराधि ज्यादा गंभीर अपराध करते है और पुरी दुनिया की जैलों का अध्ययन करने पर हमें यह ज्ञात होता है कि पुरूषों की तुलना में महिला अपराधियों की संख्या बहुत ही कम है। परन्तु यह फिर भी **घण्टी बजने** के स्तर Alarming Level तक पहुंच चुका है।

निष्कर्ष – महिलाऐं आज सक्षम हो चुकी है तथा सशक्त होना अवसरों की सुलभता तक पहुंचाता है समानता के अवसर की आड में महिलाऐं आज भी अबला के रूप में कानून का फायदा उठा रही है। धार्मिकता तथा नैतिकता का कोई स्थान नहीं रह गया है पारिवारिक जिम्मेदारियां न उठाने की ईच्छा

तथा उच्च जीवन स्तर की कामना एवं लालच महिलाओं को अपराध के गौर अंधेरे में धकेल रहा है वैश्वीकरण एवं इन्टरनेट की सर्वसुलभता का योगदान इन अपराधों को बढ़ावा दे रहा है। आज महिलाओं द्वारा कानून का दुरूपयोग एक तरह से विधिक आतंकवाद के रूप में जाना जा रहा है महिलाओं ने अपने उपर लगी जंजीरों को तोड दिया है तथा कई जगहों पर ये उसका दुरूपयोग करना प्रारंभ कर चुकी है। इनके द्वारा स्वयं को अपराधी नहीं मानना, अपराध कार्य में संदेह का लाभ लेना, कानून का फायदा उठाकर लोगों को डराना, आदि जैसे कई अपराध इनके द्वारा किये जा रहे है जिनकी रोकथाम आवश्यक है।

References :-

1. Lombroso and Ferrero. `The Female Offender', p.109-112.
2. Poliak Otto. `The Criminality of Women', p.31-32.
3. Bowker, LeeH. `Women and Crime in America', p.2.
4. Thomas, W.I. `The Unadjusted Girl', p.70-72.
5. Poliak Otto. `The Criminality of Women', p.45.
6. Smart Carol. `Women, crime and criminology-A feminist critique', p.37.
7. Poliak Otto. `The Criminality of Women', p.48.
8. Daly, K., 1989a. Gender and varieties of white-collar crime. Criminology, 27 (4), 769–794.
9. Daly, K., 1989b. Rethinking judicial paternalism: gender, work-family relations, and sentencing.Gender and society, 3 (1), 9–36.
10. Davidson, M.J. and Cooper, C.L., 1992. Shattering the glass ceiling: the woman manager. London:
11 P. Gottschalk and R. Smith, Downloaded by [Robert Smith] at 11:59 09 October 2013
12. Eikhof, D.R., Summers, J. and Carter, S., 2013. `Women doing their own thing': media representations of working as a female entrepreneurship. International journal of entrepreneurial behaviour and research, 19 (5), 6.
13 Ferguson, J., Kreshel, P.J. and Tinkham, S.F., 1990. In the pages of Ms.: sex role portrayals of women in advertising. Journal of advertising, 19 (1), 40–51.
14. Gottschalk, P., 2012. White-collar criminals: cases and theories of financial crime. Norway: UniPub.
15. Gottschalk, P. and Smith, R., 2011. Criminal entrepreneurship, white-collar criminality, and neutralization theory. The journal of enterprising peoples, communities and places in the global economy, 5 (4), 300–308.
16. Swagata senand And Arvind Chabra “Unhappy Married” Indian Today 31 August 2009

****

Doctrines Of Gandhi : Acceptance And Peractices

Dr. Rahul V. Bavge*

Abstract - When Mahatma undertook a fast in prison as a tactic to mobilize the masses, the British released him when his life seemed in danger. Fasts have been used by Gandhiji and all his democracy seeking activists against authoritarian ruler - British government. For Gandhiji fasting was typically a tactic of the weak against the strong. It's simply wrong to call such fasts a submission of parliament or democratic process, as seen in recent times.

Though some of us still persist and relentlessly tread and follow the path of Gandhian philosophy and practice the ideology imprinted by this saint, still the society at times impels and imposes on us the authoritarian dictates of abandoning and evading such virtues and doctrines of truth. Many of us ask, WHY? Meekness, polarization and threats of the stronger forces outside us constrain people like us to ward off our attention and participation to protest and stage opposition against the prevailing and existing anomalies and degradation. Examples are now before us of the civil activists and the savants around us for taking up cudgels against the Government denouncing the corruption now pervasive in the country. Opinions and shortcomings by the critics were spinning the fact that these civil activists have such tactics to suit their own agendas. So they denounced the anticorruption movement as a middle class plot to divert attention from the poor, or from Dalits, or from Maoism or whatever. Some of them call the civil activists' tactics blackmail, authoritarian and an assault on democratic functioning.

Introduction - There's nothing new in self-service criticism of political fasts. Even during the time of Gandhiji, leader claimed the fast was ' Authoritarian', something being cited by critics today. Critics in the modern times are dead right in saying that corruption cannot be combated by a single institution like the Lokpal. We need a much wider institutional change. The police - judicial system for instance, totally fails in delivering justice. It needs an overall completion, so that it quickly convicts law-breakers of all sorts, from murderers to corporate crooks. All they need to be jailed no less than corrupt.

The world is in turmoil. Pathway to God by humanity has been torn as under by them for reasons of darkness within inner confines and misguided perception felt outside. The social anomaly engulfed around us made us jinxed, little realizing, the worth of human and moral values that all we need to foster and pervade for making this world a place of safe abode.

Pathway to Spiritual and Moral Values :

(1) "Never in human history", writes a modern servant, "man experienced so much darkness within him in midst of all-round enlightenment often, so much in poverty in the context of without measureless enrichment. The modern crisis is essentially a spiritual crisis". Every man is now in search for light mainly to help him extricate from the ignorance of darkness and insipid. At every hearth and home, most people are seen crying for truth, making attempts to search out that light of life giving them succor. Untold misery! It is highly difficult for any one crying to get dispelled from such onerous situation and adversity of life. Only remedy and antidote to such a crisis for bringing oneself at relief can be willingly to walk on the pathway chalked out by a saint like Gandhiji.

Moral and spiritual values have been eroded in recent times resulting into degrading society, meaningful of its people, prone towards materialistic world thus inclined towards outer values of life. Such people are oblivious of the basic precepts of life having its edifice on moral and spiritual values. The enthusiasm and keenness for living and leading life with the ideals of these values have been altogether disappeared.

Only the ground of spiritual crisis that modern man now suffers can certainly be waned and dispelled provided the realization of rising oneself on the moral and spiritual level of humanity emulated by our Mahatmaji. The pathway to God harbored and preached by Gandhiji can certainly be the greatest inspiration to our young breed generation across the world to foster and realize the divine truth within them including spiritual and moral values.

(2) "To me God is truth and love". The belief of God in the heart of Gandhiji was more on spiritual and transcendental level rather than earthly grounds. He always intended to see God face-to-face and considered every entity under the sun living on having being to be embodiment of God. Even for those atheists, non-believer of God, and even the breed of agnostic, sad to be one who neither believes nor disbelieves in the existence of God, rarely realizes any denial of living God in the world. Such people also have

*HOD (Political Science) VNGIASS, Nagpur (Maharashtra) INDIA

instinctive faith within them believing on the laws of God that pervaded and manifests in this universe. Mahatma embraced every entity under the Sun to be God personified creation at the hands of ultimate reality.

Political Fasting – There is nothing new in self-serving criticism of political fasts. When Gandjhiji fasted, Jinnah denounced him as a hypocritical Hindu, the RSS condemned him as a covert Muslim-lover, the Communist Party blamed him as a British stooge for opposing violent revolution and Ambedkar reviled him as an upper-caste wolf in secular clothing.

When one of Gandhiji's fast foiled, Ambedkar's goal of separate electorate for untouchables, he was a bad loser. He claimed the fast was "authoritarian', something being cited by critics today. How ridiculous! Authoritarianism is about monopolizing political office. Like civil activists have done, Gandhiji would never whip the drunken villagers.

Political fasting, resorted by the activists on Gandhian ideology is now a tactic used across the globe. Many such examples are conspicuous before us of the British and American suffragette, anti-Castro dissidents in Cuba, Pedro Louis Bortel, a poet, died of starvation in 1972. Guillermo Farinas staged a 7-month hunger strike against internet censorship in 2006, and won the Cyber "Freedom Prize of reporters without borders.

The British Suffragette Movement demanding voting rights for women was the first in recent history to use fast as a political pressure tactic. The American suffragettes did the same later. The British Government called it blackmail.

Mahatmaji knew by all intents that in Ireland fasting was an ancient practice to shame others into redressing injustices.

Turkey has seen many hunger strikes by political prisoners, mostly Kod or Marxist dissidents. One mass hunger strike in 1996 lasted for 69 days and took 12 lives. Another wave of hunger strikes started in 2000 and relatives of prisoners claimed that over 100 died, Wikipedia lists examples of hunger strikes in Venezuela, Greece, Japan, Sri Lanka and Estonia.

Clearly political fasts are global phenomena, akin to practices and methods initiated by Gandhiji during his freedom movement mainly protesting against the British Raj. Such a peaceful method resorted by Gandhiji has now assured to be a benchmark for all political fasting for redressing injustices.

Gandhiji demonstrated that fasts are democratic form of protest and can greatly depend upon democracy. The suffragette movements in Britain and US brought democratic rights to women that have been earlier denied to them.

The government was finally shamed to make a change, something that's happened in India, too. This is a vibrant example of democratic process, not subversion of it.

When Mahatma undertook a fast in prison as a tactic to mobilize the masses, the British released him when his life seemed in danger. Fasts have been used by Gandhiji and all his democracy seeking activists against authoritarian ruler – the British government. For Gandhiji fasting was typically a tactic of the weak against the strong. It's simply wrong to call such fasts a submission of parliament or democratic process, as seen in recent times.

Face to face with Truth - (3) "Sat or truth is perhaps the most important name of God" – Sat or Satya is only appropriate and altogether significant name for God. Whenever truth prevails or exists, at that space and time, we find knowledge (chit) also remains and gets established at that place. Knowledge, chit, is also associated with the name of God. When we transcend truth and knowledge or pragmatically go beyond its realm then bliss, "Ananda" pervades. God is Sat – Chit - Ananda, the union of these, a combination of truth, knowledge and bliss. At this state of consciousness or the stage culminated into a divine destination, the aspirant or the seeker has reached the stage in the pilgrim's progress.

Whenever truth exists, it is the Abode of God, the sanctum sanctorum of the temple, the divinity of God realized by practicing fervently, most sacredly and truly by every thought word and action, all our renditions for offerings to the society. Such a truth pursued and practiced by a seeker.

(4) Gandhiji believed such truth involves Tapas – self-suffering, sometimes even unto death. By all forms and practices, the pursuit of truth is true Bhakti – devotion. In his lifetime, Gandjiji realized, God as truth that remained for him a treasure beyond price. Every man like us can be incumbent to the practice of truth pursued by Gandiji, always acclaimed to be God. As a treasure, transcending all values and pervading price.

Tolerance : Equality of Region – Gandhiji believed that the seeker or the spiritual aspirants devoted toward any religion by practice of truth, in the long run, attain the full vision of truth within them. As soon as the seeker experiences the full vision of truth, he or she becomes one with God, said to be one with the ultimate reality, being bequeathed within, the reality of truth, one without a second in the seeker.

(6) "Religion is always a subject to process of evolution and re-interpretation". Any religion practiced by any community or society, be it Hindu, Muslim, Christian, Jews or any other have been it, got evolved and re-interpretive in different perspective and progress through passage of time, mainly through perception, beliefs and changing trends of the society through the passage of time.

It is true that every religion has a set of different practices, at times quiet 1antithetic. Our very proverbs prove it. Mohammedans turn to the west for worship, whilst Hindus turn to the east. The formal look-down on the Hindus as idolaters and their worshiping the cow; the Mohammedans kill her. The Hindus believe in the doctrine of non-killing, the Mohammedans do not. We thus meet with differences at every step.Nevertheless people

belonging to different religions live in it.

A country is one nation only when such a condition obtains in it. In our country such faculty for assimilation has evolved over a period of time. In reality there are so many religions as there are individuals; but those who are conscious of the spirit of nationality do not interfere with one another's. This is true in practice to the precept of tolerance for an individual assuredly transcending towards equality of religion. For an individual not subscribing to the spirit of tolerance and equality for other religions, they do not fit to be considered as a part of entity of a nation. Whenever the Hindus believe India must be abode for living only by Hindus, such people are living in dreamland – a fool's paradise. The Hindus, the Mohammedans, the Parsis, the Sikhs, the Jains, the Buddhists, the Jews and the Christians who have made India their country united, are fellow countrymen, and we all live in unity and integrate ourselves singularly as an embodiment of "**National Integration**".

Equality of religions in India has evolved and re-interpreted over the period of time by the people of India for instilling peace, brotherhood and progress for the interest of the society. In no part of the world are one nationality and one religion synonymous terms still in India lit evolves and establishes firmly on the fabrics of tolerance, mutual understanding and belief, to be void of realizing the sense of subordination and subversion of other religions existing across the globe.

Wherever the practice of diverse religion addresses to a nation, tolerance amongst people for religion of other equally requires embrace, a spirit of secularism that breeds the country from the version of the Preamble enshrined in our Constitution. Hence the necessity of tolerance certainly cannot be meaningful of indifference towards one's own faith. When we realize that soul is one but the bodies which she animates are many, then we raise ourselves recognizing the unity of the soul.

This belief and realization in us is tolerance that gives us spiritual insights. Fostering of tolerance for other faiths and religions help us and imbibes within us a truer understanding of our own. Though at times we revile and censure anything, still we are not oblivious of our state of equimindedness of tolerance inbuilt within us. Such a soft skill of equimindedness helped us to solve many difficulties and surmount crisis that fell upon us for past many generations. During such turmoil and adversity, we as people of India expressed ourselves with unit because we all believed in faith of God and ultimate triumph of God.

(6) Gandhiji averred:

"Rock of Ages cleft for me,
Let me hide myself in "Thee".

Once to Gandhiji, a Muslim friend said in all sincerity:

(7) "I do not believe in your non-violence. At least I would not have my Muslims to learn it. Violence is the law of life. I would not have "Swaraj" by Non-Violence as you define the latter. I must hate my enemy." To this Gandhiji had his own reply; "The friend is an honest man. I entertain great regard for him. Much the same has been reported by another very great Muslim friend of mine. The report may be untrue but the reporter himself is not an untrue man."

Gandhiji believed and advocated non-violence in its extreme form. It meant that these opinions against non-violence stated by people are necessary to be understood and then, thereafter we would understand the solution to offer.

When tolerance is realized on the acceptance to the doctrine of equality of religion, every countryman that pursues the laws of God never bears any animosity towards the irreligious brothers.

(8) Reap as You Sow –

"He who will ferry others across to the shore,
Will also take his boat to the port.
He who will let others go to the bottom.
Shall himself flounder.
No good to wield the sword or the axe,
The gun, the knife or the arrow,
For, you will but reap what you."

The poet sings, "**Reap as you sow**", is an age-old adage, known across the world that arose from Safe Patanjali. A creeper yielding a bitter fruit will never bear jasmines and Palashas will never yield mangoes. The poet is meaningful about the laws of the world, or nature, that he who takes others safely across will himself reach the shore.

Equally true whenever humans served others, our needs were provided to us and served us. Unlike animals, birds and beasts, man is a benevolent creature.

At this state the poet says: "He who will let others go to the bottom, shall himself flounder." Though the, other suffers pain and discomfort to foster her child, in the end, the same mother finds herself happy. None of our brethren, in India, can seek happiness for himself by breaking this fundamental law.

Conclusion - In the present era, where the world is in the grip of credit contraction and undergoing economic depression, the people, almost covering all the cardinal points, have to integrate and congregate under common roof for pursuing and practicing the doctrine of truth enshrined by Gandhiji.

Racialism, Separatism, Political feud, Cyber crime and Terrorism have made this world most dreaded destination, an abode for the criminals and desperados. Hardly one can have trust and faith even on his neighbor, and equally with his or her friends to vouch upon the commitment of lifelong relationship. Every nation is clamoring under political, social and economic cleavages beyond redemption. Not a single day passes by, where one hasn't heard killing of people, hijacking of planes and waging war against the enemy country. The reason behind such warring encounters being pervasive across the globe seemingly attribute to the loss of spiritual and moral values including democratic graces and human values.

References :-

1. Pathway to God by M. K. Gandhi
2. My God by M. K. Gandhi
3. From Yeravda Mandir : M. K. Gandhi
4. The Story of My Experiment : M. K. Gandhi
5. “On Myself” by M. K. Gandhi
6. Young India Sept 25, 1924
7. The Hindu - Muslim Unity
8. Snippets : Dr. Reuben Ray and Yash Ahuja

****

Challenges and Strategies in Services Marketing in India

Dr. D.N. Khadse*

Introduction - There are majority of academic literature on the role of services sector in the Indian economy. The growing share of the services sector in the gross domestic product (GDP) of India indicates the importance of the sector to the economy (GOI 2012; Eichengreen and Gupta 2010; Singh 2006; Papola 2008). The services sector accounted for about 30 per cent of total GDP of India in 1950s; its share in GDP increased to 38 per cent in the 1980s, then to 43 per cent in the 1990s and finally to about 56.5 per cent in 2012 13 (GOI 2013). Thus, the services sector currently accounts for more than half of India's GDP. This process of tertiarisation (dominance of the tertiary or services sector) of the economy has been accompanied by a decline in the share of the primary sector (agriculture) and a more or less constant share of the secondary (industry) sector over the years.

Objective of the research

The main objective of this study is to identify big challenges in service marketing in India. The present study specific objectives as:

1. To understand service marketing.
2. To understand difference between goods and service.
3. To identify challenges and market segmentation in India.

What is service marketing?

Services marketing are a sub field of marketing which includes the marketing of both goods and services. Goods marketing include the marketing of fast moving consumer goods and durables. Services marketing typically refer to the marketing of both business to consumers (B2C) and business to business (B2B) services. Common examples of service marketing are found in telecommunications, air travel, health care, financial services, all types of hospitality services, , and professional services.

Definition and characteristics of Services - Stated simply, Services Marketing refers to the marketing of services as against tangible products.Service marketing is a people-dependent activity, owing to the fact that there is often no tangible product that is delivered to customersThe American Marketing Association defines services as - "Activities, benefits and satisfactions which are offered for sale or are provided in connection with the sale of goods."

Characteristics of a service

1. Intangibility: Services are intangible and do not have a physical existence. Hence services cannot be touched, held, tasted or smelt. This is most defining feature of a service and that which primarily differentiates it fromgoods. Also, it poses a unique challenge to those engaged in marketing a service as they need to attach tangible attributes to an otherwise intangible offering.

2. Heterogeneity/Variability: Given the very nature of services, each service offering is unique and cannot be exactly repeated even by the same service provider. While products can be mass produced and be homogenous the same is not true of services.

3. Perishability: Services cannot be stored, saved, returned or resold once they have been used. Once rendered to a customer the service is completely consumed and cannot be delivered to another customer. eg: A customer dissatisfied with the services of a barber cannot return the service of the haircut that was rendered to him. At the most he may decide not to visit that particular barber in the future.

4. Inseparability: This refers to the fact that services are generated and consumed within the same time frame. ***Inseparability*** of production and consumption involves the simultaneous production and consumption which characterizes most services. Whereas goods are first produced, then sold and then consumed, services are first sold, then produced and consumed simultaneously. Since the customer must be present during the production of many services (e.g. haircuts), inseparability forces the buyer into intimate contact with the production process (Carmen and Langeard 1980, p.8).

Types of Services

1. **Core Services:** A service that is the primary purpose of the transaction. Eg: a haircut or the services of lawyer or teacher.
2. **Supplementary Services:** Services that are rendered as a corollary to the sale of a tangible product. Eg: Home delivery options offered by restaurants above a minimum bill value.

Difference between Goods and Services - Given below are the fundamental differences between physical goods and services:

Goods	Services
A physical commodity	A process or activity

*Associate Professor (Commerce) Dhanwate National College, Nagpur (Maharashtra) INDIA

Tangible	Intangible
Homogenous	Heterogeneous
Production and distribution are separation from their consumption	Production, distribution and consumption are simultaneous processes
Can be stored	Cannot be stored
Transfer of ownership is possible	Transfer of ownership is not possible.

As already discussed, services are inherently intangible, are consumed simultaneously at the time of their production, cannot be stored, saved or resold once they have been used and service offerings are unique and cannot be exactly repeated even by the same service provider.

Marketing of services is a relatively new phenomenon in the domain of marketing, having gained in importance as a discipline only towards the end of the 20th century. **Services marketing first came to the fore in the 1980's when the debate started on whether marketing of services was significantly different from that of products so as to be classified as a separate discipline**. Prior to this, services were considered just an aid to the production and marketing of goods and hence were not deemed as having separate relevance of their own.

Challenges Ahead - The sustainability of impressive growth of Indian economy has been questioned in the wake of some challenges in the form of lack of social infrastructure, physical infrastructure; IT infrastructure, agricultural and industrial sector reforms, rupee appreciation and US sub-prime crisis, etc. Besides, challenges in the field of IT and ITES like rising labour costs, rapid growth in demand for talented manpower/quality staff, high attrition rate, outsourcing backlash etc are some other limiting factors. The growth of IT and ITES is having social, economic, health, ethical and environmental implications also. Further, delay in the promotion of conductive business environment and good governance will enable us to catch up with the global giants in terms of world –wide presence and scale. It is also important to point out here that the measurement of output , productivity , non-availability of data or availability of data after a time lag are other problems confronted with in case of services . The problem gets further compounded because of the entry of new species of services (like IT, ITES etc) and lack of development of concepts on the one hand and non-inclusion of unpaid households on the other. Further, quality of each unit of the same service varies from the other. Therefore, it is too difficult to achieve the same level of output in terms of quality as has been pointed out in Cowell (1984). Further, quality improvements stemming from the application of new technologies are extremely hard to measure.

Marketing Strategy - Marketing strategy deals essentially with the interplay of three forces known as the strategic three Cs which are: the customer, the competition, and the corporation. He noted that these three strategic Cs are dynamic, living creatures with their own objectives to pursue and together, form the marketing strategy triangle. If what the customer wants does not match the needs of the corporation, the latter's long-term viability may be at stake. Positive matching of the needs and objectives of customer and corporation is required for a lasting good relationship. But such matching is relative,and if the competition is able to offer a better match, the corporation will be at a disadvantage over time. In other words, the matching of needs between customer and corporation must not only be positive, it must be better or stronger than the match between the customer and the competitor. When the corporation's approach to the customer is identical to that of the competition, the customer cannot differentiate between them. The result could be a price war that may satisfy the customer's but not the corporation's needs. Furthermore, based on the interplay of the strategic three Cs, formation of marketing strategy requires the following three decisions:

1. ***Where to compete;***that is, it requires a definition of the market (forexample, competing across an entire market or in one or more segments).

2. ***How to compete;***that is, it requires a means for competing (for example,introducing a new product to meet a customer's need or establishing a newposition for an existing product).

3. ***When to compete;***that is, it requires timing of market entry (for example,being first in the market or waiting until primary demand is established).

Thus, marketing strategy is the creation of a unique and valuable position,involving a different set of activities. Thus, development of marketingstrategy requires choosing activities that are different from rivals.

Types of marketing strategies - According to Porter (1985), there are two basic types of competitive advantage a firm can possess: low cost or differentiation. The significance of any strength or weakness a firm possesses is ultimately a function of its impact on relative cost or differentiation. Cost advantage and the differentiation in turn are derived from industry structure. The two basic types of competitive advantage combined with the scope of activities for which a firm seeks to achieve them lead to three generic strategies for achieving above-average performance in an industry: cost leadership, differentiation, and focus. The focus strategy has two variants, cost focusand differentiation focus

Cost Leadership: A company pursuing cost leadership strategy aims to become the low cost producer in its industry. The company has a broad scope; it can serve many industry segments and may even operate in related industries. The sources of cost advantage vary and depend on what the industry structure is. They may be the pursuit of economies of scale, propriety technology, preferential access to raw materials etc. For example, in the facility service industry, a company providing the service of security guard could achieve cost advantage by maintaining low overhead, an abundant source of low cost of labour and provide efficient training procedures due to high turnover.

If a firm can achieve and sustain overall cost leadership, then it will be an above average performer in its industry provided it can command price at or near the industry average. If a firm which is a cost leader offers equivalent or lower prices than its rivals then its low cost position will yield high returns. However, despite being a cost leader and relies on cost leadership for its competitive advantage a firm cannot ignore the bases of differentiation because if its product is not perceived as comparable or acceptable by buyers, a cost leader will be forced to lower prices well below its competitors' in order for it to gain sales. This may nullify the benefits of its favorable cost position. Also, the cost leader must achieve parity or proximity in the bases of differentiation relative to its competitors. Parity in the bases of differentiation allows a cost leader to translate its cost advantage directly into higher profits than competitors. Proximity in differentiation implies that the price discount necessary to achieve an acceptable market share does not offset a cost leader's advantage which enables the cost leader to earn above average returns. The strategic logic of cost leadership usually requires that a firm be the cost leader and not one of several firms trying to be in that position. Many firms have made serious errors by failing to recognize this. When there is more than one aspiring cost leader, rivalry among them is usually fierce because every point of market share is viewed as crucial. Unless one firm can gain cost leader and "persuade" others to abandon their strategies, the consequences for profitability (and long run industry structure) can be disastrous. Thus cost leadership is a strategy particularly dependent on preemption, unless major technical change allows a firm to radically change its cost position.

Conclusion and Recommendations

Conclusion - Seeing the growth of service sector in economies throughout the world, and the belief that services marketing in certain key respects is different from goods marketing, the rapid growth of services marketing literature in recent years is not surprising. Increased academic interest and research activity in services marketing in years to come is expected and is necessary because far more questions than answers exist at this time. A need exists for services marketing research to enter a new phase of empirical work that integrates various disciplines and various services industries.

Recommendations - We have analyzed the problems and strategies of the service providing firms from different point of view like the primary customer group, geographic scope of operation, duration of benefit etc and that's why depending on their specific nature the different service firm requires different set of strategies. It may not be wise to provide a specific policy paper for every kind of service firm. Still we have listed a number of strategies below that in much extent fit with all categories of service firms under consideration.

1. Use a combination of cost and competition based costing system as gradually competition based costing might be popular in the industry due to increment in the number of competitors.
2. Syncro-pricing may be a better strategy to cope with the fluctuating demand in service firms
3. It will be better for the service firms to provide more customized services to the customers which in turn will permit them to follow demand based pricing.
4. Use heavy informative advertisement to show how the service can be better utilized. But the firms whose benefit of service is long should practice more of reminder advertisement
5. Encourage the existing customers to promote services to the new customers and use newspaper as the prime media for advertisement to educate the customers in using services
6. As the institutional service provider, empower customers by close contact through sending mail and knowledgeable sales personnel.
7. Whatever the category of service firm you belong to, choose service providing employees very carefully, train them highly to make them knowledgeable regarding the service standards.
8. Use technology to keep in touch with customers even after sales.
9. Service providers (e.g. universities, hospitals) must be concentrating on their physical infrastructure and wide distribution facilities.
10. Use technologies to maximize the service quality and to reduce the fluctuation in service quality Provide service above standard as promised to the customers to reduce the service gaps.
11. Do marketing research through field level marketing executives to prepare customer driven services and make marketing decisions participatory.
12. Revision of service and service delivery mechanism are required according to marketing research result and activities of the competitors.
13. A formal demand management plan should be prepared incorporating the strategy to motivate customers to shift their service demand to non-peak time.
14. Service providers should employ extra part-time employees in peak demand time. Or transfer full-time employees from the branch where the demand is low to the high demand branches.
15. Show target market the benefit of services with sales promotional incentives in low demand time.

Implications for Further Research - Numerous implications for researchers interested in services marketing arise from the findings reported in this article. Some of more intriguing implications are as follows:

1. This article is an overview of the problems and strategies of the overall service firms. A research priority in services marketing is empirical study that transcends specific industries and tests service marketing concepts.

2. For reason suggested earlier, this research study didn't for the most part uncover the critical problems facing most service business today. What are these problems? How are they changing due to environmental, competitive and other conditions? How do they differ for various types of service firms? The further research needs to be concentrating on those.
3. There are importance of institutional image and the use of tangible cues like services cape and personnel appearance to enhance service quality and delivery. Additional investigation of such issues as the use of employee uniforms, the role of architecture in the marketing mix, and building of corporate image would be useful to service firms.
4. It was found that institutional service providers are more marketing oriented compared to the firms serving individual customers. Even they are more apt to contact customers after purchase, to choose carefully the personnel who interact with customers, and to regularly collect information about customers' needs. Why this finding is different from the goods industry? What aspects of services lead to this reversal in marketing practices is necessary to be identified.

References :-

1. Carmen, James M. and Eric Langeard (1980). Growth Strategies of Service Firms, *Strategic Management Journal*, 1 (January-March), pp. 8.
2. GOI (2012) *Economic Survey 2012 13*, Ministry of Finance, Government of India, New Delhi.
3. Eichengreen Barry and Poonam Gupta (2010) "The Service Sector as India's Road to Economic Growth?" Working Paper No. 249, Indian Council For Research On International Economic Relations, New Delhi.
4. Papola T.S. (2008) "Industry and Employment: Dissecting Recent Indian Experience", in S.R. Hashim, K.S. Chalapati Rao, K.V.K. Ranganathan, M.R. Murthy (Eds) *Indian Industrial Development and Globalisation*, Academic Foundation, New Delhi.
5. Singh Nirvikar (2006) "Services Led Industrialization in India: Assessment and Lessons", Working Paper No. 290, Stanford Center for International Development, Stanford.

****

भारतीय दण्ड विधियों में महिलाओं के अधिकारों का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल *

शोध सारांश – सशक्त नारी के बिना समृद्ध राष्ट्र की कल्पना नही की जा सकती। भारत में नागरिकों को सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक स्वतंत्रता समान रूप से बिना किसी भेदभाव के प्राप्त हैं तथा भारत में सविधान एवं विभिन्न विधियों में महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण के लिए विभिन्न प्रावधान किये गये हैं। वर्तमान समय में महिलाओं के अधिकारों का संरक्षण करना वैश्विक चिंता का विषय है। भारत में महिलाओं के प्रति हो रहे अत्याचार इस बात का परिचायक है कि महिला अधिकारों का संरक्षण नहीं हो पा रहा है।

बदलते सामाजिक परिवेश एवं बदलते व्यक्तियों के विचारों ने महिला अधिकारों के संरक्षण में बाधक हो रहे हैं। भारतीय दण्ड विधियों द्वारा महिला अधिकारों को संरक्षित करने का विभिन्न प्रावधान किये गये हैं। इस अध्ययन में महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण हेतु भारतीय दण्ड विधियों का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

शब्द कुंजी – महिला, अधिकार, संरक्षण, भारतीय, दण्ड विधि।

शोध का उद्देश्य – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय दण्ड विधियों में दिये गये महिला अधिकारों से संबधित प्रावधानों का अध्ययन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें सर्वमान्य पुस्तकों तथा आलेखों में व्यक्त विचारों का समावेश करते हुए समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

विवेचना – स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व से ही भारत में दण्ड विधियों का संहिताकरण किया गया है जिसमें भारतीय दण्ड संहिता 1860, भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 एवं स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् दड प्रक्रिया संहिता 1973 संहिता बद्ध किये गये है। इन दण्ड विधियों में महिला अधिकारों के संरक्षण के प्रावधान अग्रलिखित हैं।

भारतीय दण्ड संहिता (1860) – भारतीय दण्ड संहिता अपराधो को नियंत्रित तथा समाप्त करने के लिए कारगर विधि है। इसमें महिलाओं की मर्यादा, नैतिकता, गरिमा, शारीरिक संरक्षा के अंतर्गत समाज तथा पारिवारिक हिंसा और सभी प्रकार के यौन उत्पीडन से सुरक्षा के उपादानों का उल्लेख किया गया हे। इसमें महिलाओं के सुरक्षार्थ निम्नांकित उपबंध किये गये है।

धारा 100 (3) शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार में बलातसंग करने का आशय से किया गया हमला का विस्तार मृत्यु कारित करने तक है।

धारा 294 के अनुसार यदि कोई पुरूष किसी स्त्री को तंग करने के लिए किसी सार्वजनिक स्थल पर कोई अश्लील हरकत करें, अश्लील गाना गाये या कोई अश्लील शब्द कहे, तो वह दण्डनीय अपराध है। उसे तीन माह के कैद या जुर्माना या दोनो हो सकता है।

धारा 313 के तहत यदि कोई व्यक्ति किसी स्त्री की सहमति के बिना उसका गर्भपात करे, तो वह दण्डनीय है।

धारा 354 के अंतर्गत कोई भी व्यक्ति यदि किसी महिला पर हमला अथवा उसकी आपराधिक बल द्वारा लज्जा भंग करता है तो वह दो वर्ष के कारावास से दंडनीय होगा।

धारा 366 के अनुसार विवाह आदि के करने को विवश करने के लिए किसी स्त्री को व्यपहृत करता है या उत्प्रेरित करता है उसे 10 वर्ष तक की सजा और जुर्मने का प्रावधान किया गया है।

धारा 366 – क के अंतर्गत यदि 18 वर्ष से कम आयु की लडकी के साथ लैंगिग हमले किया जाएगा तो उसे 10 वर्ष का कारावास से दंडाष्टि किया जाएगा।

धारा 372 के अंतर्गत यदि कोई व्यक्ति 18 वर्ष से कम उम्र की किसी लडकी को किसी वेश्यालय के हाथ बेचता है या किराये पर देता है तो यह दंडनीय है। दस वर्ष की कैद और जुर्मने की सजा का प्रावधान है।

धारा 375 में बलातसंग को परिभाषित किया गया है तथा धारा 376 में बलात्कार के दण्ड का प्रावधान किया गया है। जिसमें इसके लिए कम से कम दण्ड 10 वर्ष से लेकर आजीवन कारावास तक का दिया जा सकता है। इसमें बलात्कार के मामले में न्यूनतम सजा 20 वर्ष और अधिकतम मौत की सजा का प्रावधान है। इसके अलावा महिला के संवेदनशील अंगो से छेड़छाड़ को भी बलात्कार की श्रेणी में रखा गया है। तथा बलात्कार के कारण हुई मौत या स्थायी विकलांगता आने पर आरोपी को मौत की सजा दिया जाने का प्रावधान है।

धारा 498–क किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा क्रुरता किया जाता है तो वह तीन वर्ष तक कारावास और जुर्मने से दण्डित किया जायेगा।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (1973)

इस संहिता द्वारा महिलाओं को निम्न प्रकार के अधिकार दिये गये है, जिनमें से प्रमुख निम्नांकित है।

धारा 46 (क) में यह प्रावधान किया गया है, असाधारण परिस्थितियों के सिवाय कोई महिला सूर्यास्त के पश्चात और सूर्योदय के पहले गिरफ्तार नही की जाएगी। और जहाँ ऐसी असाधारण परिस्थितियों विद्यमान है वहॉ महिला पुलिस अधिकारी, लिखित में रिपोर्ट करके, ऐसी प्रथम श्रेणी के

* सहा. प्राध्यापक, डॉ. सी. वी रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

न्यायीनक मजिस्ट्रेट की पूर्व अनुमति प्राप्त करेगी जिसकी स्थानीय अधिकारिता के भीतर अपराध किया गया है या गिरफ्तारी की जानी है।

धारा 47 के परन्तुक के अनुसार यदि ऐसा कोई स्थान जो ऐसी स्त्री के वास्तविक अधिभोग में है जो रूढी के अनुसार लोगों के सामने नहीं आती है तो पुलिस अधिकारी उसके कक्ष में प्रवेश करने के पूर्व उस स्त्री को सूचना देगा कि वह वहाँ से हट जाए और उसे प्रत्येक उचित सुविधा देगा तभी वह कमरे के अन्दर घुस सकता है।

धारा 51 (2) के अनुसार, जब किसी स्त्री की तलाशी करना अवाश्यक हो तब ऐसी तलाशी शिष्टिता का पूरा ध्यान में रखते हुए अन्य स्त्री द्वारा की जायेगी।

धारा 53 (2) के अनुसार, यदि किसी महिला अभियुक्त के शरीर की मेडिकल चांज की जरूरत है, तो ऐसी जांच कोई महिला चिकित्सक की करेगी अथवा महिला चिकित्सक के पर्यवेक्षण में जाँच की जाएगी।

धारा 98 के अनुसार यदि अवैध उद्देश्य हेतु महिला या 18 वर्ष से कम उम्र की लडकी के अपहरण या अवैध नजरबंदी की शिकायत शपथ पत्र के साथ प्राप्त हो तो, जिला मजिस्ट्रेट या उप क्षेत्रीय मजिस्ट्रेट या प्रथम श्रेणी का मजिस्ट्रेट उस महिला को तत्काल छोड़ने या उस लडकी के वैद्य प्रभारी को सौपने का आदेश दे सकता है और इसके अनुपालन हेतु आवश्यक बल का प्रयोग कर सकता है।

धारा 125 के तहत पति के द्वारा पत्नी का भरण पोषण किया जाना है अर्थात यदि कोई पति अपनी पत्नी को तलाक देता या छोड देता है तो उसे प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट द्वारा निर्धारित गुजारा भत्ता उसे देना पडेगा।

धारा 160 के अनुसार संज्ञेय अपराध के अन्वेषण में पुलिस अधिकारी द्वारा किसी महिला को उसके निवास स्थान से भिन्न स्थान में हाजिर होने की अपेक्षा नही की जायेगी।

धारा 174 (3) के अनुसार जब किसी महिला द्वारा विवाह की तारीख से 7 वर्ष के भीतर आत्महत्या करने का मामला हो या ऐसी महिला की ऐसी परिस्थितियो में मृत्यु से संबंधित है जो युक्तियुक्त रूप से यह संदेह उत्पन्न करता है कि किसी अन्य व्यक्ति ने ऐसी महिला की किसी नातेदार ने महिला की मृत्यु के संबंध मे जाँच हेतु निवेदन किया है या पुलिस अधिकारी को मृतयु के कारण के बारे में कोई संदेह है या किसी अन्याकरण से पुलिस अधिकारी ऐसी जांच करना आवश्यक समझता है। तो ऐसी महिला का शव पोस्ट मार्टम हेतु निकटतम सिविल सर्जन के पास या राज्य सरकार द्वारा इस हेतु नियुक्त अन्य चिकित्सक के पास भेजा जाएगा।

धारा 176 (1-क) के अनुसार जब यह अभिकथित हो कि पुलिस अभिरक्षा में या द.प्र.स. के अधीन मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य अभिरक्षा में होते हुए किसी महिला से बलात्संग किया गया है तब पुलिस अधिकारी द्वारा की गई जांच अन्वेषण के अतिरिक्त ऐसी न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा भी जांच की जाएगी जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमांओ के भीतर अपराध किया गया है।

धारा 198 के अनुसार भारतीय दंड संहिता की धारा 493, 494, 495, 497, 498 में वर्णित विवाह के विरूद्ध अपराधों बाबत् परिवाद संबंधित महिला यदि वह पर्दानशीन है तब उसकी ओर से कोई अन्य व्यक्ति द्वारा न्यायालय की अनुमति से पेश किया जाएगा।

धारा 198 क के अनुसार भारतीय दण्ड संहिता की धारा 198 – क के अधीन दण्डनीय अपराध का संज्ञान पुलिस रिपोर्ट पर या अपराध से व्यथित महिला द्वारा या उसके माता-पिता, भाई, बहन द्वारा या उसके पिता अथवा माता के भाई-बहन द्वारा या रक्त विवा हया दत्तक ग्रहण द्वारा उसके संबंधित किसी अन्य व्यक्ति द्वारा न्यायालय की अनुमति से पेश परिवाद पर ही लिया जाएगा। अन्यथा नही।

धारा 199 के अनुसार, ऐसी महिला जो पर्दानशीन हो वहाँ उसकी ओर से अन्य व्यक्ति अदालत की इजाजत से मानहानि के लिए परिवाद संस्थित कर सकेगा।

धारा 265 – क (1) के अनुसार प्ली – बारगेनिंग के प्रावधानो का लाभ ऐसे अपराधो को लागू नही होता है। जो किसी महिला के विरूद्ध हो।

धारा 327 (2) के अनुसार, बलात्कार आदि के मामले में मुकदमें का विचारण (ट्रायल) खुले कोर्ट में न होकर एकांत में न्यायाधीश के कक्ष में होगा। जिससे पीडित महिला पर अनावश्यक दबाव न पडे तथा उसे लोक लज्जा का शिकार न बनाना पडे। इस धारा में भारतीय दंड संहिता की धारा 376, 376 (क), 376 (ख), 376 (ग), 376 (घ) के अधीन दंडनीय अपराध की जांच और उसका विचारण बंद कमरे में किये जाने का प्रावधान है।

धारा 360 के अनुसार, जब कोई महिला ऐसे अपराध के लिए जो मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय नही है, दोषसिद्धी नही की गई है, तब अदालत उसे सदाचरण की परिवीक्षा पर छोउ सकती है।

धारा 416 के अनुसार स्त्री, जिसे मृत्यु दंडावेश दिया गया है, गर्भवती पायी जाती है तो उच्च न्यायालय दंडादेश का निष्पादन मुल्तवी किये जाने का आदेश और यदि ठीक समझे तो, दंडादेश का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण कर सकेगा।

धारा 437 (1) के अनुसार, अजमानतीय अपराध के मामले में यदि कोई महिला, 16 वर्ष का नाबालिक, मरीज या अस्वस्थ्य को गिरफ्तार किया गया है तो मजिस्ट्रेट उसे जमानत में छोडने का आदेश दे सकता है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम (1872)

भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 मे भी महिलाओं के अधिकारो के संबंध में महत्वपूर्ण प्रावधान किया गया है।

धारा 113-क के अनुसार विवाह लेने के सात वर्ष के भीतर जब ऐसी महिला द्वारा आत्महत्या किया जाता है तब यदि यह दर्शित किया जाता है कि उसके पति या ससुराली रिश्तेदारो ने उसके प्रति कूरतापूर्ण व्यवहार किया था, तो न्यायालय यह उपधारणा कर सकेगा कि ऐसी आत्महत्या हेतु उसके पति द्वारा या ससुराली रिश्तेदारों द्वारा दुष्प्रेरणा की गई है।

धारा 113-ख में यह उपबन्धित है कि, जब प्रश्न यह है कि किसी व्यक्ति ने किसी स्त्री की दहेज मृत्यु की है और यह दर्शित किया जाता है कि मृत्यु के पूर्व ऐसे व्यक्ति ने दहेज कि किसी मांग के लिए या उसके संबंध में उस स्त्री के साथ कूरता की थी या उसको तंग किया तो न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि ऐसे व्यक्ति ने दहेज मृत्यु कारित की थी।

धारा 114-क में यह प्रावधान है कि किसी महिला के साथ अभियुक्त द्वारा बलात्संग नही किया गया है। यह साबित करने का भार अभियुक्त पर होता है।

धारा 146 के तहत बलात्संग का प्रयास करने या बलात्संग करने के अपराध के विचारण में पीडित महिला के सामान्य अनैतिक चरित्र के बारे में प्रतिपरीक्षा में प्रश्न नही पूछा जा सकता।

धारा 151 के तहत न्यायालय किसी भी प्रकार के अशिष्ट और कलंकात्म प्रश्नों का पूछा जाना निषिद्ध कर सकता है।

धारा 152 के अनुसार न्यायालय ऐसे प्रश्न का निषेध करेगा, जो उसे

ऐसे प्रतीत होता है कि वह अपमानित या क्षुब्ध करने के लिए आशयित्व है, या जो यद्यपि स्वयं में उचित है, तथापि रूप मे न्यायालय को ऐसा प्रतीत होता है कि वह अनावश्यक तौर पर संतापकारी है।

उपसंहार – प्रमुख दण्ड विधियों के अध्ययन के समीक्षा उपरांत यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि प्रमुख भारतीय दण्ड विधियों में महिला अधिकारों को विस्तृत रूप से परिभाषित किया गया है और स्वतंत्रता पूर्व में संहिताबद्ध भारतीय दण्ड संहिता एवं साक्ष्य अधिनियम में महिलाओं के अधिकारों को यथोचित स्थान दिया गया है। जिससे कि महिलाओं के अधिकारों का संरक्षण हो सके। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय दण्ड संहिता, दण्ड प्रक्रिया संहिता और साक्ष्य विधियों में महिलाओं की संरक्षा संबंधी अनेक उपबंध किये गये है ताकि भारत में महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों में कमी आ सके व महिलाओं के मानव अधिकारों की रक्षा की जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय दण्ड संहिता, 1860
2. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973
3. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों में अंसगठित क्षेत्र के श्रमिकों के अधिकार - एक अध्ययन

रवि प्रकाश चौधरी*

शोध सारांश – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिकों के मानव अधिकारों के संरक्षण के विकास की शुरूआत अत्यंत प्राचीन काल से प्रगतिमान है।

विश्व में श्रमिकों के हितों के संरक्षण के लिये यह आवश्यक हो गया कि जब तक श्रमिको के हितों को संरक्षित नहीं किया जाता, तब तक कोई राष्ट्र आर्थिक सामाजिक एवं राजनैतिक रूप से सुदृढ़ नहीं हो सकता। अत: इन सभी में सन्तुलन बनाये रखने के लिये एक अवधारणा का विकास हुआ जिसे श्रम विधिशास्त्र के रूप में जाना जाने लगा। 18वीं शताब्दी के उत्ताराद्धर्‌ में एवं 19वीं शताब्दी व पूर्वाद्ध में श्रम विधिशास्त्र के अवधारणा का विकास होने लगा। इसके पूर्व पूंजीपतियों एवं भूमिस्वामीयों के द्वारा श्रमिकों का बहुतायत से शोषण किया जाता था। प्रथम विश्व युद्ध के उपरांत श्रम अधिकारों से सम्बंधित प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय संस्था अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का जन्म हुआ जो कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत पर आधारित था। तत्पश्चात् मानव अधिकारों को संरक्षित करने में राष्ट्र संघ तथा द्वितीय विश्व युद्ध पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का जन्म हुआ जिसके माध्यम से श्रमिकों सहित समस्त मानव समुदाय के मानवाधिकार संरक्षण हेतु प्रयास किये जा रहे हैं। असंगठित क्षेत्र के काम में कम मजदूरी की विशेषता होती है जो अक्सर अपर्याप्त पोषण, लंबे समय तक कार्य के घण्टे, खतरनाक कार्य की परिस्थितियां, प्राथमिक उपचार, पेयजल और सफाई जैसी बुनियादी सेवाओं की कमी सहित न्यूनतम जीवन स्तर को पूरा करने के लिए अपर्याप्त होती है। इसलिए असंगठित क्षेत्र, में श्रमिकों के मानवाधिकारों की रक्षा करने की आवश्यकता है। इस अध्ययन में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अंसगठित क्षेत्र के श्रमिकों से संबधित विभिन्न अभिसमयों का अध्ययन किया गया है।

शब्द कुंजी – मानवाधिकार, असंगठित क्षेत्र, कार्यरत् महिला, अंतर्राष्ट्रीय, मजदूरी, अभिसमय।

अध्ययन का उद्देश्य – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों में अंसगठित क्षेत्र के श्रमिकों के अधिकारों से संबंधित उपबंधों का अध्ययन कर मूल्यांकन किया गया है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र पुर्णत: सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें विषय से संबंधित सर्वमान्य ग्रन्थ एवं प्रशासकीय दस्तावेजों प्राप्त सुचनाओं को आधार मानकर अध्ययन किया गया है।

विवेचना – अंतराष्ट्रीय स्तर पर असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के अधिकारों का संरक्षण अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के स्थापना के साथ प्रारंभ हुआ तथा अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन के कार्यो में प्रमुख श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए विभिन्न अभिसमयों को लागू किया गया। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अभिसमयों के पक्षकार राज्य अपने राष्ट्रीय विधियों में इन अभिसमयों के प्रावधानों को लागू करने के लिए बाध्य होते हैं। इसलिए अंतराष्ट्रीय अभिसमयों का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है। इस अध्ययन में अंसगठित क्षेत्र के श्रमिकों से संबंधित प्रमुख अभिसमयों का अध्ययन प्रस्तुत है।

1. **दासता एवं दास व्यापार संबंधि अभिसमय –** दास एक ऐसे व्यक्ति को कहा जाता है जो मानव होने के बावजूद भी वह दूसरे की सम्पत्ति समझे जाते है। दास अपने इच्छा से कोई कार्य नहीं कर सकता। आज दासता की प्रथा को मानव गरिमा को प्रतिकूल समझा जाता है।

इस संबंध में राष्ट्र संघ ने अन्तर्राष्ट्रीय दासत्व अभिसमय 1926, अंगीकार किया था। जिसमें दास व्यापार को ऐसे सभी कार्यो के लिये परिभाषित किया गया था, जो किसी व्यक्ति को दास बनाये रखने के आशय से गिरफ्तार करने, अर्जित करने या बेचने के लिये किये जाते थे। दास व्यापार और दासत्व के समान प्रचलन एवं संस्थाओं के उन्मूलन का अनुपूरक अभिसमय आर्थिक एवं सामाजिक परिषद द्वारा आयोजित राजदूतों के सम्मेलन द्वारा 1956 में जेनेवा में अंगीकार किया गया।

यह अभिसमय 30 अप्रैल 1957 को प्रवृत हुआ और 31 अक्टूबर 1999 तक 118 राज्य इसके पक्षकार बन चुके हैं। इस अभिसमय के द्वारा बंधक उन्मूलन, दास व्यापार, ऋण उन्मुक्तता, महिला व्यापार एवं सम्पत्ति के छिनने जैसे बातों को समाप्त करने का उल्लेख किया गया है।

2. **बलात श्रम अथवा अनिवार्य श्रम से संबंधित अभिसमय –** बलात श्रम से तात्पर्य संयुक्त राष्ट्र चार्टर में संदर्भित एवं मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के द्वारा प्रतिपादित व्यक्तियों के अधिकारों के उल्लंघन से है। बलात श्रम भी दासता के विभिन्न रूपों में से एक है।

बलात श्रम को समाप्त करने के लिये आई.एल.ओ. ने अपना लक्ष्य बनाया। श्रम संगठन के द्वारा बलात श्रम संबंधित अभिसमय 1930 में अंगीकार किया गया। बाद में इसका दमन करने हेतु बलात श्रम के उन्मूलन के लिये एक अभिसमय जिसे आई.एल.ओ. के साधारण सम्मेलन द्वारा 25 जून 1957 को अंगीकार किया गया, जो कि 17 जनवरी 1959 को लागू हुआ।

अभिसमय के अनुच्छेद 1 में यह प्रावधान किया गया है कि आई.एल.ओ. का प्रत्येक सदस्य जिसने इस अभिसमय का अनुसमर्थन किया हो, बलात श्रम को किसी भी रूप में प्रयोग न करने अथवा उसे दबाने के लिये वचन बद्ध होता है।

1. राजनैतिक विचारों के व्यक्त करने अथवा स्थापित राजनैतिक, सामाजिक आर्थिक, प्रणाली की विचारधारा के विपरीत, को व्यक्त करने मान्य ठहराने के लिये राजनैतिक प्रपीड़न अथवा शिक्षा अथवा

* शोधार्थी (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

दण्ड के साधन के रूप में।

2. आर्थिक विकास के उद्देश्य के लिये श्रम को सक्रिय करने अथवा प्रयोग करने के तरीके के रूप में।
3. श्रमिक अनुशासन के रूप में।
4. हड़तालों में भाग लेने के रूप में।
5. मूल, वंशीय, सामाजिक, प्राकृतिक अथवा धार्मिक भेदभाव के रूप में।

अभिसमय के राज्य पक्षकारों ने बलात श्रम एवं अनिवार्य श्रम की पूर्ण रूपेण तथा तत्कालीन समाप्ति को सुनिश्चित करने के लिये प्रभावी उपाय अपनाने के लिये वचन दिया है।

यह उल्लेखनीय है कि अभिसमय बलात श्रम को विनिष्ट करने में प्रभावी नहीं रहा। आई.एल.ओ. द्वारा 2001 में किया गया एक अध्ययन जिसका शीर्षक था 'बलात श्रम को समाप्त करना था', जो इस बात को दर्शाता है कि सारे विश्व में बलात श्रम की वृद्धि से बहुत गहरा व्यवधान आ गया। जिसमें महिलाओं एवं बच्चों का दमन एवं शोषण किया जाता है।

3. व्यक्तियों का दुर्व्यापार एवं वेश्यावृत्ति से संबंधित अभिसमय – वेश्यावृत्ति एवं वेश्वावृत्ति के उद्देश्य से व्यक्तियों के दुर्व्यापार तथा उससे जुड़ी हुई बुराई मानव गरिमा एवं उसकी योग्यता से बेमेल है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1949 में अन्तर्राष्ट्रीय लिखतों के एक ही अभिसमय में समेकित कर दिया जिन्हें राष्ट्र संघ के संरक्षण में अंगीकार किया गया था, इनमें निम्नलिखित शामिल है–

- 30 सित्मबर 1921 का महिलाओ एवं बच्चों का दुर्व्यापार के दमन हेतु अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय।
- 11 अक्टूबर 1933 का परिपक्व आयु की महिलाओं के दुर्व्यापार के दमन हेतु अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय, जिसका उद्देश्य श्वेत दास व्यापार को समाप्त करना था।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1949 में व्यक्तियों के व्यापार एवं दूसरों की वेश्यावृति के शोषण के दमन के लिये एक अभिसमय लाया गया। जिसके पक्षकार इस बात से सहमत हुए कि जो कोई व्यक्ति वेश्यावृत्ति को प्रोत्साहित करेगा, उसे दंडित करेंगे एवं प्रचलित किसी ऐसी विधि, विनियम अथवा प्रशासनिक प्रावधान के निरसन या समाप्त करने के लिये सभी प्रकार के आवश्यक उपाय करने हेतु सहमत हुए थे। अभिसमय 25 जुलाई 1951 को अनुच्छेद 24 के अनुसार प्रवृत्त हुआ और 31 अक्टूबर 1999 तक इसके 72 राज्य पक्षकार बन चुके हैं।

4. बालश्रम से संबंधित अभिसमय – बालश्रम एक गंभीर समस्याओं में से एक है। जिनका अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय काफी समय से सामना कर रहा है। आई.एल.ओ. ने 1990 में बाल श्रम की समाप्ति पर अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम की शुरूवात की थी। महासभा ने 1992 में सरकारो एवं मानव अधिकार आयोग ने गलियो के ऐसे बच्चो की समस्याओ पर कार्यवाही करने के लिये कहा जो गम्भीर अपराध, नशे संबंधित आदतों, हिंसा एवं वेश्यावृत्ति जैसे कार्यो द्वारा प्रभावित एवं उसके अन्तर्गत है। श्रम संगठन द्वारा प्रभावी कदम 17 जून 1995 को जनेवा में बालश्रम के सर्वाधिक कुत्सित रूप पर एक अभिसमय बनाया।

5. प्रवासी कर्मचारियों के अधिकार से संबंधित अभिसमय – प्रवासी कर्मचारियों एवं उनके परिवारों के सदस्यों के विरूद्ध व्यापक भेदभाव तथा उनकी स्थिति को सुधारने के लिये और प्रयास करने की आवश्यकता के कारण 18 दिसम्बर 1990 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा एक अभिसमय 1990 अंगीकार किया गया। जिसे प्रवासी कर्मचारियों एवं उनके परिवार के सदस्यों के अधिकारो के संरक्षण पर अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय के नाम से जाना जाता है। यह तभी लागू होगा जब 20 राज्य अपने हस्ताक्षर कर देंगे।

उपसंहार – इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के द्वारा किये गये विभिन्न अभिसमय, प्रसंविदाओं, संधियों, समझौतों के सदस्य एवं पक्षकार राज्यों ने अपने अपने राज्यों की विधियों एवं योजनाओं में श्रम अधिकारों को काफी हद तक मान्यता प्रदान कर लागू किया है। जिसके परिणाम स्वरूप अन्य राज्यों के साथ-साथ भारतीय विधियों में भी अन्तर्राष्ट्रीय प्रावधानों का प्रभाव देखने को मिलता है। जिससे भारतीय संविधान एवं श्रम विधियों के अन्तर्गत श्रमिकों की मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा, श्रम कल्याण संबंधी प्रावधानों के अन्तर्गत असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के मानवाधिकारों को संरक्षण प्रदान किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. गंगा सहाय शर्मा : श्रमिक विधियाँ, सेण्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद 2014
2. एच. ओ. अग्रवाल : अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवं मानवाधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन इलाहाबाद 2010
3. गिरधारी प्रसाद दास, 'भारत के असंगठित क्षेत्र में मजदूरों की सुरक्षा अर्थशास्त्र और सामाजिक विज्ञान में अनुसंधान': अन्तर्राष्ट्रीय जर्नल वॉल (2012)
4. सुजाता गोथोस्कर, 'वैश्वीकरण में कार्य की विवशता: अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में वैश्वीकरण और महिला श्रमिक एक परिप्रेक्ष्य' (2003)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार का एक अध्ययन (शहद के विशेष संदर्भ में)

राकेश कुमार गुप्ता* डॉ. के.के.शर्मा **

शोध सारांश – शहद एक बहुपयोगी पदार्थ है, हनी बी अर्थात् मधुमक्खियों को न केवल शहद की मिठास और उत्पादन में विशेषज्ञता हासिल है। मधुमक्खियों के पालन से केन्द्र के आसपास के खेती–बाड़ियों में ली जाने वाली फसल के उत्पादन में 10 से 30 फीसदी तक ज्यादा प्राप्त होता है। इसी वजह से छत्तीसगढ़ शासन– प्रशासन मधुमक्खी पालन की दिशा में ज्यादा से ज्यादा किसानों की भागीदारी अर्जित करने पर जोर दे रही है।
शब्द कुँजी –एग्रोक्लाइमेटिक झोन, अराष्ट्रीयकृत औषधीय लघुवनोपज, सम्पोष्य विकास एवं प्रसंस्करण।

प्रस्तावना – शहद एक बहुपयोगी पदार्थ है इसका छत्तीसगढ़ राज्य में वार्षिक उत्पादन 3,750 क्विंटल है एवं इसका राज्य में वार्षिक व्यापार रू. 500 प्रति किलो की दर से रू. 18.7 करोड़ का होता है। राज्य के बस्तर पठार, मध्य क्षेत्र एवं सरगुजा क्षेत्र की ऐग्रोक्लाइमेटिक जोन इसके उत्पादन हेतु उपयुक्त हैं। शहद मुख्यत: बस्तर, पश्चिम भानुप्रतापपुर, बीजापुर, नारायणपुर, कवर्धा, जशपुर, बिलासपुर, कटघोरा तथा रायगढ़ आदि वन मंडलों में पाया जाता है, इसके साथ ही अन्य वनमंडलों में उत्पादित शहद की मात्रा का विवरण तालिका क्र. 1 में दिया गया है।

उद्देश्य – छत्तीसगढ राज्य के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप 1 नवम्बर 2000 देश के 26वें राज्य के रूप में छत्तीसगढ़ की स्थापना की गई। मूलत: यह राज्य विपुल वन संसाधनों एवं खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के बावजूद मध्यप्रदेश राज्य के अंतर्गत सदैव उपेक्षित रहा। प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में औषधीय लघु वनोपज शहद के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।
3. अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज शहद के व्यापार का छत्तीसगढ़ राज्य की आर्थिक स्थिति में सशक्त संभावनाओं का अध्नन करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज शहद के व्यापार एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज शहद के व्यापार एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र :

1. अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।
2. यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।
3. अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज शहद के व्यापार एवं विपणन पर आधारित हैं।
4. अध्ययन की समय सीमा पिछले पाँच वर्षों के उत्पादन एवं विपणन पर आधारित हैं।

शोध उपकरण – अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।

सांख्यिकी उपकरण – यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।

शोध व्याख्या–

शहद के मुख्य उत्पादन क्षेत्र – शहद एक बहुपयोगी पदार्थ है इसका छत्तीसगढ़ राज्य में वार्षिक उत्पादन 3,750 क्विंटल है एवं इसका राज्य में वार्षिक व्यापार रू. 500 प्रति किलो की दर से रू. 18.7 करोड़ का होता है। राज्य के बस्तर पठार, मध्य क्षेत्र एवं सरगुजा क्षेत्र की ऐग्रोक्लाइमेटिक जोन इसके उत्पादन हेतु उपयुक्त हैं।

तालिका 1. शहद के मुख्य उत्पादन क्षेत्र

क्र.	उत्पादन हेतु उपयुक्त जिला यूनियन	स्थानीय बाजार	वार्षिक उत्पादन मात्रा (क्विं.में)
1	दंतेवाड़ा	नेसलनार, गीदम	150
2	सुकमा	सुकमा, दोरनापाल	150
3	बीजापुर	मंदेड, बासागुड़ा, गंगालुर	150
4	जगदलपुर	माचकोट, जगदलपुर	150
5	उत्तर कोण्डागांव	केशकाल, विश्रामपुरी, फरसगांव, लंजोडा	100
6	दक्षिण कोण्डांगाव	लारीपुर, कोण्डागांव	100
7	नारायणपुर	नारायणपुर	150
8	पूर्व भानुप्रतापपुर	आमाबेडा, भानुप्रतापपुर	150

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी. पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

9	पश्चिम भानुप्रतापपुर	भानुप्रतापपुर	200
10	धमतरी	नगरी, धमतरी	100
11	पूर्व रायपुर	गरियाबंद, छुरा	150
12	उदन्ती	मैनपुर	150
13	महासमुंद	पिथौरा, महासमुंद	100
14	दुर्ग	बालोद, डोंडी, गुरूर	100
15	राजनांदगांव	राजनांदगांव, डोंगरगढ़	100
16	खैरागढ़	साल्हेवारा, छुईखदान	100
17	कवर्धा	चिल्फी, रेंगाखार, खारा	200
18	बिलासपुर	लोरमी, खुडिया	200
19	मरवाही	मरवाही	100
20	कोरबा	हरदीबाजार, कोरबा	100
21	कटघोरा	कटघोरा, कोरवी	150
22	धरमजयगढ़	लैलुंगा, धरमजयगढ़	100
23	रायगढ़	घरघोड़ा, खमरिया	100
24	उत्तर सरगुजा	बिहारपुर, बाड्रफनगर	100
25	दक्षिण सरगुजा	मैनपुर, तौरंगा, इंदागांव	100
26	पूर्व सरगुजा	धौरपुर, शंकरगढ़	100
27	मनेन्द्रगढ़	मनेन्द्रगढ़	100
28	जशपुर	लदोन, बगीचा, जशपुरनगर	200
	योग		**3,750**

उक्त तालिका का अध्ययन कर यह ज्ञात किया जाता है कि किन क्षेत्रों में कितना शहद उपलब्ध है व प्रसंस्करण केन्द्रों की स्थापना की जा सकती हैं।

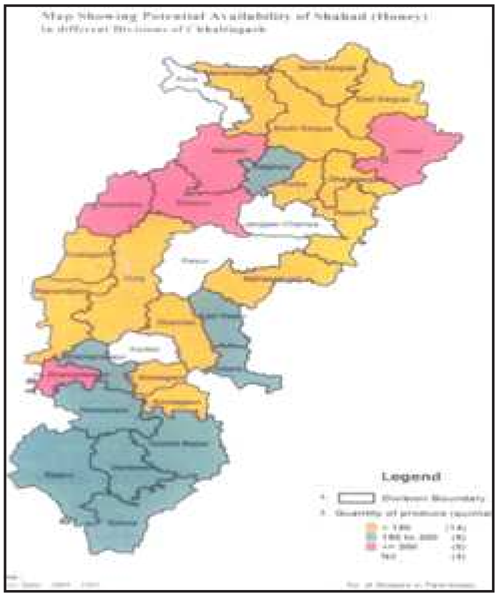

शहद के राज्य एवं देश में मुख्य बाजार – छत्तीसगढ़ राज्य में उत्पादित शहद की स्थानीय खपत ज्यादा होने के कारण अन्य राज्यों में यह ज्यादा मात्रा में नहीं भेजा जाता है फिर भी मुख्यत: कर्नाटक एवं हिमाचल प्रदेश में राज्य के शहद की कुछ मात्रा विक्रय की जाती है। अत: शहद का विपणन राज्यों के बाज़ारों जैसे कांकेर, धमतरी, रायपुर आदि में बेचकर अच्छे मूल्य प्राप्त किये जा सकते हैं। साथ ही अन्य राज्यों में होने वाली विपणन की मात्रा का विवरण निम्न तालिका क्र. 2 में दिया गया हैं।

तालिका 2. शहद के राज्य एवं देश में मुख्य बाजार

छत्तीसगढ़ राज्य के मुख्य बाजार	अन्य राज्य	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्वि.में)	मुख्य बाजार	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्वि.में)
रायपुर, धमतरी	कर्नाटक	87	बैंगलोर	87
	हिमाचल प्रदेश	54	मंडी	54
	मध्यप्रदेश	10	इंदौर	10
	योग	**151**		**151**

निष्कर्ष – प्रस्तुत लघु शोध पत्र के अंतर्गत यह पाया गया कि अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी नही होने के कारण वनवासी आदिवासी इसका संग्रहण करके स्थानीय हाट बजारो में छोटे व्यापारियों को विक्रय कर देते है। अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया कि ये छोटे व्यापारी राज्य की इन लघु वनोपज को मांग के अनुरूप अपना कमीशन या अधिक मूल्य पर बाजारों पर विक्रय करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा संग्रहित वनोपज को ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मण्डियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय कर देते है। प्रत्येक वर्ष छत्तीसगढ़ राज्य में संग्रहित किये जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगो को भेज दी जाती है। अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज आंवला पर आधारित उद्योगों का विकास अपर्याप्त है साथ ही शहद की वार्षिक उत्पादन क्षमता को देखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि छत्तीसगढ़ राज्य में इनका संपोष्य विकास करते हुए संबंधित उद्योगों के विकास की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है ।

सुझाव – प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के अंतर्गत यह पाया गया कि अंराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी नही होने के कारण वनवासी आदिवासी इसका संग्रहण करके स्थानीय हाट–बाज़ारों में छोटे व्यापारियों को विक्रय कर देते हैं। अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया कि ये छोटे व्यापारी राज्य की इन लघु वनोपज को मांग के अनुरूप अपना कमीशन या अधिक मूल्य पर बाजारो पर विक्रय करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा संग्रहित वनोपज को ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय कर देते हैं। प्रत्येक वर्ष छत्तीसगढ़ राज्य में संग्रहित किये जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा अन्य राज्यों की मण्डियों या उद्योगों को भेज दी जाती है। अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों का विकास अपर्याप्त है साथ ही औषधीय व गैर औषधीय लघु वनोपज की वार्षिक उत्पादन क्षमता को देखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि छत्तीसगढ़ राज्य में इनका सम्पोष्य विकास करते हुए संबंधित उद्योगों के विकास की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुबे, डॉ. श्यामाचरण – आदिवासी लोक कला परिषद, 1987
2. तिवारी डॉ वी.के.– छत्तीसगढ़ की जनजातियाँ, 2001
3. 11वीं पंचवर्षीय योजना 2007–2012, छ.ग. रायपुर
4. 12वीं पंचवर्षीय योजना 2012–2017, छ.ग. रायपुर
5. मामोरिया डॉ. चतुर्भुज, भूगोल, साहित्यभवन पब्लिकेषन्स 2013.
6. भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2011
7. आर्थिक सर्वेक्षण – 2010–11, 2011–12, 2012–13.
8. Social History of Chhattisgarh, Agam kala Prakasham Delhi 1985

9. Chhattisgardh Redis Coverd, Aryan Book International Delhi 1995
10. Census of India 2001 &2011
11. Impact of Forestry Project on Tribal Economy Tribal & Harijan WelfarePlanning – Commission
12. Tiwari D.N. Primitiv eTribes of M.P.
13. Mahapatro, P.C. – Economic Development of Tribal India 1987 , New Delhi

****

हिन्दी भाषा के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सरोकार

प्रो. मुकेश भार्गव *

प्रस्तावना – भाषा, साहित्य और संस्कृति अन्योन्याश्रित हैं। भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी भारतीय संस्कृति की संवाहक है और भारतीय साहित्य की केन्द्रीय भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। अत: हिन्दी भाषा साहित्य के सरोकार जाँचने से पूर्व यह जानना आवष्यक है कि हिन्दी भाषा एवं बाह्मा अपादेयता के कौन से प्रमुख कारक हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर जहाँ वह अपने विचारों को अभिव्यक्त करना चाहता है वही दूसरों के विचारों को समझने या जानने की सहज इच्छा भी उसमें निहित है। अभिव्यक्ति की इसी सहज इच्छा ने भाषा को जन्म दिया। अत: भाषा भावों और विचारों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। भाषा पर समस्त सामाजिक क्रियाक्रलाप निर्भर है। भाषा अर्जन और समाजीकरण कि प्रकिया समानान्तर चलती है। बालक मातृभाषा को अपने प्रारंभिक शिक्षकों माता-पिता, भाई-बहन आदि के द्वारा अनौपचारिक वातावरण में सीखता है। साथ ही धींरे-धींरे सम्पर्क भाषा के रूप में प्रथमभाषा को भी वह सीखता जाता है। लेकिन जब विद्यालय के औपचारिक वातावरण में शिक्षक के क्रम में माध्यम भाषा के रूप में हिन्दी या अग्रेंजी का चयन करता है तो इस चयन के साथ ही विभेदीकरण की प्रकिया प्रारंभ हो जाती है। इस विभेदीकरण के विभिन्न स्तर है जैसे – स्कूल (प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा) विभिन्न जागरण अभियान,हिन्दी भाषा का विरोध, संचार (सूचना तकनीकि एवं इलेक्ट्रानिक मीडिया) यहाँ हिन्दी के भाषा माध्यम एवं प्रयोग पर विचार मंथन से चौंकाने वाले तथ्य प्रकट होते है जिनकी उपेक्षा करना हिन्दी भाषा के लिए हानिकारक होगा। यह चौकाने वाला सत्य है कि भाषा वर्ग-विभेद को जन्म देती है और वर्ग-विभेद, समाज-विभाजन को पुष्ट करता है। इस विभाजन की शुरूआत हिन्दी माध्यम सरकारी स्कूल और अग्रेंजी माध्यम में बँटा हुआ है। इन दो श्रेणियों में भी कई तरह के स्कूल्स आते है जिनमें कोई समरूपता देखना संभव नही होता। अंग्रेजी माध्यम पब्लिक स्कूल के अन्तर्गत एक और नामी-गिरामी शहर के प्रतिष्ठित स्कूल आते हैं तो दूसरी ओर शहर की गुमनाम गलियों में तंग कमरों में लगने वाले स्कूल्स हैं। इसी प्रकार हिन्दी माध्यम सरकारी स्कूल के अन्तर्गत ग्रामीण सरकारी स्कूल और शहरी सरकारी स्कूल आते है।

भाषा के आधार पर समाज के विभाजन के साथ ही आर्थिक, सांस्कृतिक और वैचारिक आधार पर भी समाज का स्पष्ट विभाजन दर्शाता है। यह सर्वविदित है कि हिन्दी माध्यम स्कूल का सस्ता विकल्प है। इन स्कूलों में गरीबी रेखा से नीचे और निम्न मध्यम वर्ग परिवारों के बच्चे पढ़ते हैं। इसके विपरीत अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में उच्चवर्ग और उच्चमध्यवर्गीय परिवारों के बच्चे बढ़ते है। शिक्षा के इन दोनो केन्द्रों का मुख्य उद्देश्य बच्चों में समाज में समाज सापेक्ष वैचारिक समझ एवं चारित्रिक प्रशिक्षण है। इस बुनियादी एकरूपता के बावजूद शिक्षा को बाँटने वाली इन दो श्रेणियों की व्यवस्था समाजीकरण और साक्षरता के स्तर पर एकदम पृथक और चौंकाने वाली हदों तक पृथकवादी परिणाम पैदा करती है।

माध्यम के आधार पर बँटे हुए उनके स्कूली संसार कालान्तर में वर्गीय चेतना के शिविरों मे रूपान्तरित हो जाते हैं।

हिन्दी और अंग्रेजी के सामाजिक संसार साथ-साथ चलते हैं। भाषा की हैसियत में भिन्नता सामाजिक विभाजन को जन्म देती हैं। हिन्दी और अग्रेंजी की हैसियत के अनुभव दैनिक जीवन में बहुत देखने को मिलते हैं। यथा नौकरी में चयन समिति द्वारा अग्रेंजी पढ़े लिखे को वरीयता देती है। मात्र नौकरी में भी अंग्रेजी माध्यम से पढ़े-लिखे शिक्षित को समाज सम्मान की नजरों से देखता है। हिन्दी हिंतैषी बड़ा वर्ग स्वयं अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में पढ़ाते हैं। सरकारी स्कूलों में प्रवेश के लिए शिक्षकों को घर-घर जाकर मशक्कत करनी पड़ती हैं, लेकिन अंग्रेजी माध्यम में मोटी फीस देकर भी माता-पिता बच्चों को पढ़ाना चाहते हैं क्योंकि मानसिक रूप वे अंग्रेजी की अधीनता स्वीकार कर चुके हैं। अंग्रेजी की अज्ञानहीनता का विषय हो गया। इससे हिन्दी भाषी में मन की विफलता की टीस मैं असंतोष तो पैदा होता है लेकिन यह विद्रोह / विरोध को जन्म नहीं देता क्योंकि समाज इस हैसियत को आत्मसात कर चुका है। हिन्दी माध्यम से पड़ा बच्चा हमेषा स्वयं को समाज की मुख्यधारा से कटा हुआ समझता है। उसमें आत्मविश्वास की कमी होती है। माध्यमिक, हायरस्कूल और हायर सकेण्डरी तक आते-आते उसके सामने सबसे बड़ा प्रश्न अंग्रेजी का होता है।

शैक्षणिक स्तर पर हिन्दी माध्यम स्कूल का छात्र बहुत जल्दी यह समझ लेता है कि उसके ज्ञानस्त्रोत अनुवाद है, जिनका मूल पाठ अंग्रेजी में है। यह अहसास सबसे ज्यादा और जल्दी गणित व विज्ञान के विषयों मे प्रकट होता है। इन विषयों में शब्दावली की कृत्रिमता और अंग्रेजी मूल जानने की जरूरत अन्य विषय की तुलना में कहीं ज्यादा होती हैं। शिक्षक स्वयं महसूस करने लगते हैं कि उच्चतर माध्यमिक परीक्षा की ओर बढ़ते हुए छात्रों की तैयारी अंग्रेजी शब्दावली के परिचय से ही सुधर सकती है। हिन्दी माध्यम छात्र लगातार असमंजस्य भरे विद्या जगत में समाजीकृत होता जाता है। समझ और अभिव्यक्ति की प्रक्रियाएँ भाषाई द्वैष से ग्रस्त होकर हिचक या आत्मविश्वास की कमी को जन्म देती है। दूसरी तरफ अंग्रेजी माध्यम स्कूल का छात्र सभी तरह से समन्वित विद्याजगत में जीता है और अभिव्यक्ति के स्तर पर अंग्रेजी के प्रयोग से मिलने वाली सामाजिक स्वीकृत व प्रशंसा का आदी होता जाता हैं। ज्ञान के स्त्रोतों की कोई कमी उसके भाषाई संसार में नही होती, भौतिक संसार मे भले हो। अनुवाद की व्यथा उसे बचपन के आरंभिक वर्षों के बाद हमेंशा के लिए छोड़ देती हैं। वही एक बहुराष्ट्रीय दुनिया का स्वभाविक नागरिक बनता जाता हैं। जबकी हम ता उम्र हिन्दी

* व्याख्याता, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

माध्यम छात्र अपनी सीमित दुनिया में ही रह जाते हैं इस प्रकार दो माध्यम दो विभिन्न संसारों या समाजो की सृष्टि करते हैं।

शिक्षा के नाम पर स्कूलों में विभिन्न स्तर पर चलाये जा रहें साक्षरता अभियान जैसे मिशन भी समाज को बाटनें का काम करते हैं। समाज वैसे भी शिक्षित और अशिक्षित दोनों वर्गो में बंटा है। अब साक्षरता अभियान से तीसरे वर्ग के रूप में अल्पशिक्षित वर्ग का जन्म हुआ हैं। इस वर्ग में पढने लिखने की निम्नतम योग्यता तो हैं लेकिन वैचारिक स्तर पर यह वर्ग अभी भी बहुत पिछड़ा हुआ हैं अत; शिक्षा के स्तर पर समाज शिक्षित, अल्पशिक्षित और अशिक्षित तीन वर्गों में बटा हुआ हैं।

इस प्रकार कें समाज विभाजन के दुष्परिणाम से संवेदन शून्य युवा पीढ़ी तकनीकि शिक्षा व्यवसाय के प्रति अंधीदौड़ में युवा वर्ग, संस्कृति, साहित्यकला का विलोपन या उपेक्षाभाव इन विद्यार्थियो के पास भाषा के रूप में कुछ नही होता, क्योंकि अंग्रेजी को वो केवल शिक्षा को माध्यम भाषा के रूप में पढतें है।

जिससे भाषायी दक्षता नितान्त अभाव होता है। अंग्रेजी भाषा चिन्तन नहीं रटन की कला सिखाती है। अत: भाषा के अभाव में चिन्तन की कमी संवेदनहीनता की और ले जाती है।

अंग्रेजी शिक्षा का एक परिणाम छात्रों में तकनीकि शिक्षा की ओर बढ़ते आकर्षक के रू९ में उभरा है। अंग्रेजी वास्तव में विज्ञान और तकनीकी भाषा हैं क्योंकि सारा तकनीकी ज्ञान अंग्रेजी में ही है। संस्कृति, कला और साहित्य के साथ संवेदना जुड़ी है। चूँकि अंग्रेजी माध्यम में पढ़े बच्चे/ छात्र प्राय: संवेदनहीन होते हैं, इसलिए वे साहित्य के मूल को नहीं समझ पाते और साहित्य उनके लिए 'उपदेश' मात्र रह जाता है। इससे समाज में संस्कृति, कला और साहित्य का विलोपन या अपेक्षा होना स्वाभाविक है।

वर्तमान परिवेश में शिक्षा ने जहाँ सामाजिक विभेदीकरण को जन्म दिया है वहीं सम्पूर्ण भारत को 'भारत' और 'इंडिया' में बाँटकर वैचारिक विभेदीकरण की प्रक्रिया को जन्म दिया है। भारत जहाँ अपने अतीत के मूल्यों से जुड़ा है, आदर्श और मर्यादा को महत्व देता है, वहीं 'इंडिया' बहुराष्ट्रीय वैश्वीकरण के साथ हर तरह की अमर्यादित स्वतंत्रता, स्वच्छंदता को महत्व देता है, जिसका प्रमाण भी दिया है। ये दोनों 'भारत' एक बँटे हुए समाज की मानसिक संरचनाओं को उजागर करते हैं। हिन्दी के चिन्तक मनीषियों को इस दिशा में कोई ठोस उपाय करना समीचीन होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतेन्दु और नवजागरण, डॉ. रामविलास शर्मा
2. भारतीयता की पहचान, डॉ. विद्यानिवास मिश्र
3. देश धर्म और राष्ट्र, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी
4. भारतीय संस्कृति, डॉ. श्यामाचरण दुबे

****

कन्नौज जनपद का इत्र उद्योग: स्वरूप, समस्या और समाधान

प्रो. डी. एस. नेगी* नागेन्द्र सिंह**

प्रस्तावना - शुमाखरन की प्रसिद्ध पुस्तक 'स्मॉल इज ब्यूटीफुल' लघु उद्योगों की भूमिका को अत्यंत उत्कृष्ट रूप से प्रदर्शित करती है। भारत जैसे विकासशील देश में लघु और कुटीर उद्योगों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। लघु उद्योगों ने सकल घरेलू उत्पादन के विकास और रोजगार सर्जन, निर्यात संवर्धन और ग्रामीण विकास के क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। शुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों का देश के सकल घरेलू उत्पाद में योगदान लगभग 8 प्रतिशत, विनिर्मित उत्पाद में 45 प्रतिशत और निर्यात में 40 प्रतिशत रहा है।

शुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों की चौथी अखिल भारतीय गणना, जो शुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग अधिनियम, 2006 के बाद पहली गणना है, के अनुसार शुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग देश में छह करोड़ लोगों को रोजगार देता है, इसमें 28 प्रतिशत इकाइयां विनिर्माण और 72 प्रतिशत सेवा क्षेत्र में थी।

2006-07 में शुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों में लगभग 312 लाख व्यक्ति संलग्न थे। शुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों में लगने वाली स्थिर और कार्यशील पूंजी तुलनात्मक रूप से कम होती है, जिसके कारण भारत जैसे विकासशील देश में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग अधिक अनुकूल है। इसी प्रकार जहां एक ओर वृहत्ता उद्योग कुछ बड़े नगरों में ही केंद्रित होते हैं, जिसके कारण उद्योगों का केंद्रीकरण कुछ सीमित क्षेत्र में ही हो पाता है, जिससे क्षेत्रीय असमानता बढ़ती है, वही दूसरी ओर इनके कारण शहरी क्षेत्र तथा ग्रामीण क्षेत्रों के बीच अंतराल भी बढ़ता है। इसके विपरीत शुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग ग्रामीण तथा नगरीय अंतराल को कम करने तथा क्षेत्रीय असमानत को समाप्त करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

कन्नौज जनपद के औद्योगिक परिदृश्य में यहाँ के इत्र उद्योग का विशिष्ट महत्व है। यही कारण है कि कन्नौज जनपद को भारत में इत्र की राजधानी कहा जाता है। कन्नौज में निर्मित इत्र भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। यहाँ से अमेरिका, ब्रिटेन, संयुक्त अरब अमीरात, सिंगापुर, फ्रांस, ओमान, कतर, सऊदी अरब, ईरान, इराक जैसे देशों में इत्र का निर्यात किया जाता हैं। सरकार द्वारा यहाँ निर्मित पारंपरिक इत्र को भौगोलिक संकेतक (Geographical Indication) भी प्रदान किया गया है।

इत्र बनाने की कला अपने आप में अनूठी है, यह कला यहां कुछ वर्ष नहीं वरन हजारों वर्ष पुरानी है। प्राचीन काल में कन्नौज से होने वाला व्यापार मध्य पूर्वी एशिया तक था। ऐसा माना जाता है, कि वहीं से यह उद्योग कन्नौज में आया। इत्र का उद्गम फारस को माना जाता है, संभवत: फारस से ही इत्र बनाने की कला कन्नौज में आयी। कन्नौज के इत्र कारीगरों लगभग तीन शताब्दियों तक मुगल साम्राज्यौ के लिए इत्र की आपूर्ति की। मुगल बादशाह कन्नौज के इत्र और सुगंधित तेल के मुरीद थे। अबुल फजल ने अपनी ऐतिहासिक रचना आइन-ए-अकबरी में कन्नौज के इत्र उद्योग का उल्लेख किया है।

यद्यपि कन्नौज में इत्र बनाने की कला में समय से साथ-साथ अनेक संशोधन हुए है तथापि यहाँ के इत्र की सुगंध और गुणवत्ता पूर्ववत ही है, यहाँ इत्र बनाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों जैसे केसर, सफेद चमेली, गुलाब और मोगरे के पुष्प, कस्तूहरी, कपूर, मिट्टी आदि का उपयोग किया जाता है। इस पारंपरिक इत्र में किसी भी प्रकार के अल्कोहॉल (Alcohol) और रसायनों का प्रयोग नहीं किया जाता है, यही यहाँ के इत्र की विशिष्ठता है। इत्र बनाने की कला अत्यंत जटिल और समय लेने वाली हैं। इसकी एक छोटी बोतल के उत्पादन में ही 15 दिन से अधिक का समय लग जाता है। कन्नौज में विभिन्न प्रकार के इत्र तैयार किए जाते हैं, ऐसा ही एक इत्र 'इत्र-ऐ-खाकि' या 'मिट्टी इत्र' हैं। इसे मानसून की पहली सौंधी सुगंध का एहसास होता है। इसके अलावा अनेक इत्र तो ऐसे हैं, जिनका शायद कोई नाम ही नहीं जानता। इनमे शमामा, शमाम, तूल-अंबर और मास्क अंबर जैसे इत्र प्रमुख इत्र है।

अत्याधुनिक तकनीकों के पश्चात भी यहाँ इत्र आज भी परंपरागत रूप से ही तैयार किया जाता है। इत्र तैयार करने की प्रक्रिया को देग भापका (Deg Bhapk) कहा जाता है, जो अत्यंत जटिल और लम्बी प्रक्रिया है। देग का अर्थ है तांबे का बर्तन (चन्दन और फूलों के तेल से भरा पात्र), इसे भट्टी पर अत्यधिक उच्च तापमान पर रखा जाता है साथ ही इसके लिए जल का स्रोत भी इसके नजदीक ही बनाया जाता है। इसमें एक भापका जुड़ा होता है, जिससे आसवन विधि से सुगंधित तेल प्राप्त किया जाता है। इनके पश्चात सुगंधित चंदन के तेल को चमड़े से निर्मित शीशियों या 'कुप्पियों' में रखा जाता है। इन कुप्पियों को वाष्पन हेतु सूर्य के प्रकाश में कई दिनों के लिए छोड़ दिया जाता है, जिससे वास्तिविक इत्र प्राप्त होता है।

कन्नौज में वर्तमान में लगभग 4,000 से अधिक व्यक्ति इत्र के इस व्यवसाय में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से संलगन हैं। जैसे फूलों की कृषि करने में लगभग 400 व्यक्ति, इत्र कारखानों में लगभग 300 और 500 के लगभग व्यक्ति दुकानदारों के रूप में इत्यादि।

कन्नौज जनपद में इत्र के व्यापार पर दृष्टि डाले तो ज्ञात होता है कि विश्व में सुगंध के बाजार में भारत का 10 प्रतिशत योगदान है। कन्नौज में निर्मित इत्र का उपयोग खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों, गुटखा, तंबाकू और पान मसाला के निर्माताओं द्वारा भी किया जाता है। परंतु वर्तमान समय में लोग रसायनों से निर्मित कृतिम और तीक्षणक सुगंध वाले सेंटो की ओर अपेक्षाकृत

* प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय, चौबट्टाखाल पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखंड) भारत
** शोधकर्ता (भूगोल) डॉ. पीतांबर दत्त बड़थ्वाल हिमालयन राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटद्वार (गढ़वाल) (उत्तराखंड) भारत

अधिक आकृष्ट हो रहे हैं, जिसके कारण कन्नौज के प्राकृतिक इत्रों की मांग अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कम होती जा रही है, साथ ही साथ नई कर संरचना ऋद्घ ने भी कन्नौज के इत्र व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। एक आंकलन के अनुसार कन्नौज का एक कारखाना प्रत्येक माह लगभग 2,000 लीटर इत्र और सुगंधित तेल तैयार करता है, जिसका 20 फीसदी हिस्सा विदेशों में निर्यात कर दिया जाता है।

इत्र उद्योग की समस्याएँ

क. कन्नौज जनपद में निर्मित इत्र का लगभग 95 प्रतिशत इत्र खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों द्वारा उपयोग किया जाता था, परन्तु वर्तमान में कई राज्य सरकारों द्वारा अपने राज्यों में गुटखे और पान मसाले पर प्रतिबन्ध लगा दिया है, जिसके कारण यहाँ के इत्र व्यवसाय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

ख. कच्चे माल की बढ़ती कीमतों ने भी इस उद्योद पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। लोगों की बदलती हुई मानसिकता ने भी इत्र उद्योग के व्यापर पर परभाव डाला है। वर्तमान समय में लोग रसायन वाले परफ्यूम (Perfume) अधिक खरीदना पसंद करते हैं।

ग. नई कर संरचना GST ने भी इत्र व्यवसाय पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। जिसके कारण अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इसका निर्यात अत्यंत महँगा और जटिल हो गया हैं।

घ. इत्र निर्माण में में लगे कई कारखाना मालिकों ने अपनी पूंजी को आलू के व्यापार हेतु कोल्ड स्टोरेज बनाने में लगा दी है, जिसके कारण इत्र उद्योग में पूंजी का भी अभाव हो गया है।

ङ. कन्नौज में निर्मित प्राकृतिक इत्र का प्रचार बहुत ही कम हुआ हैं, जिसके कारण उत्तार प्रदेश राज्य के बाहर इसके बारे में सीमित जानकारी हैं।

च. सरकार द्वारा भी इत्र उद्योग को पर्याप्त प्रोत्साहन नहीं मिला। यद्यपि सरकार द्वारा यहाँ इत्र उद्योग के लिए अनेक योजनाएँ बनाई गयी हैं, परंतु यहाँ सरकारी स्तर पर मौजूद लालफीताशाही के कारण इन योजनाओं का पर्याप्त लाभ इत्र उद्योग को प्राप्त नहीं हो सका।

छ. यद्यपि यहां पर इत्र बनाने की विधि पूर्णतरू प्राकृतिक है, परंतु प्राकृतिक इत्र बनाने के विभिन्न चरणों में आधुनिक तकनीकी का उपयोग किया जा सकता है, पूर्णत: परंपरागत तकनीकों से बनाने के कारण इत्र बनाने की लागत अत्यधिक बढ़ जाती है, जिसके कारण यहां का इत्र अत्यधिक महंगा हो जाता है, जो आम व्यक्ति की पहुंच से बाहर है।

ज. अध्ययन क्षेत्र में इत्र बनाने का संपूर्ण कच्चा माल स्थानीय स्तर पर ही प्राप्त होता है। कन्नौज के आस-पास अवस्थित न्याय पंचायतों में फूलों की खेती की जाती है, यहाँ फूलों के पौधे बहुत पुराने हो चुके हैं, जिसके कारण इनकी उत्पादक क्षमता कम हो गयी है, यदि यहां आधुनिक तकनीकी से उन्नत प्रजाति के फूलों के पौधे लगाए जाएं तो उससे अपेक्षाकृत अधिक फूलों का उत्पादन होगा।

झ. अध्ययन क्षेत्र में आधारभूत संरचनाओं की स्थापना हेतु व्यापक रूप से भूमि अधिग्रहण किया गया है, जिसमें वह भूमि भी शामिल है, जिसमें इत्र निर्माण हेतु फूलों की खेती की जाती थी, जिसके कारण यहां इत्र उद्योग के लिए कच्चे माल की आपूर्ति में बाधा आने लगी हैं।

इत्र उद्योग के संवर्धन हेतु सुझाव

क. इत्र उद्योग के संवर्धन हेतु जीएसटी की संरचना में अपेक्षित सुधार आवश्यक है, साथ ही साथ जीएसटी के अंतर्गत लघु उद्योगों के लिए विशेष प्रावधान बनाने आवश्यक है, जिससे यहां के इत्र उद्योग को प्रोत्साहन मिले।

ख. यहां निर्मित प्राकृतिक इत्र का व्यापक रूप से प्रचार-प्रसार किया जाना आवश्यक है, इसके लिए देश-विदेश में विभिन्न इत्र मेलो का आयोजन किया जाना चाहिए।

ग. इत्र उद्योग के संवर्धन हेतु यहां इत्र उद्योग में संलग्न औद्योगिक इकाइयों को वित्तीय प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जिसमें कार्यशील और स्थाई पूंजी के लिए वित्तीय स्रोत प्रमुख है।

घ. सरकार की योजनाओं का सीधा लाभ इत्र औद्योगिक इकाइयों को मिलना चाहिए, इसके लिए लालफीताशाही को समाप्त को समाप्त किया जाना आवश्यक है, इसके लिए जहां एक तरफ अधिकारियों की विवेकाधीन शक्तियों को सीमित किया जाए साथ ही साथ सभी सरकारी कार्य ऑनलाइन किए जाएं।

ङ. फूलों की खेती करने वाले कृषकों को आधुनिक तकनीकों का हस्तांतरण किया जाना आवश्यक है, इसके लिए जरूरी है कि किसानों को कौशल विकास कार्यक्रम के अंतर्गत प्रशिक्षण दिया जाए।

च. भूमि अधिग्रहण करते समय ऐसे खेतों को अधिगृहीत नहीं किया जाए, जहां फूलों की खेती व्यापक रूप से होती है।

निष्कर्ष – कन्नौज जनपद का इत्र उद्योग यहां की स्थानीय अर्थव्यवस्था की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, यह न केवल यहां पर व्यापक रूप से रोजगार सर्जन करता है, वही यह अपने अंतरराष्ट्रीय व्यापार से विदेशी मुद्रा का भी सृजन करता है। यहां पूर्णत: प्राकृतिक रूप से इत्र बनाया जाता है, इत्र बनाने की प्रक्रिया अत्यंत लंबी, धीमी और जटिल है, जिसके कारण यहां के इत्र की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। कन्नौज जनपद में इत्र उद्योग के अंतर्गत अनेक समस्याएं मौजूद हैं, यदि इन समस्याओं का सही प्रकार से समाधान किया जा सके तो यहां के इत्र उद्योग का पर्याप्त विकास हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

An Evaluation of Collection and Trade of MFP in Chhattisgarh State

Dr. Niket Shukla*

Abstract - As we all know that Chhattisgarh is a growing state and department of forest is one of the important departments under the government of Chhattisgarh. It is engaged in planning, implementation, monitoring and evaluation of forestry, and environmental programmes in the state. Mainly forest produce is divided into two categories i.e. major and minor forest produce. Minor forest produce (MFP) have a greater impact on revenue generation in the state. The research embodies work on collection and trade of MFP in the state of Chhattisgarh. Researcher has made a clear attempt to present the overall scenario of trade of MFP in the state. It covers the overall introduction, issues like features and policies of Chhattisgarh forest, problems in collection and trade of MFP, contribution of forest to Chhattisgarh economy, infrastructural requirement and marketing mix of forest produce etc.
Key Words - Minor Forest Produce, Collection Strategies, Trade policies, marketing mix of forest produce.

Introduction - Chhattisgarh is prominent and renowned state for forest. Collection and trade of minor forest produce is the main occupation of the people lives nearby forest. Chhattisgarh is 10th largest state in India according to geography and 16th largest state in India according to population, of the total population of Chhattisgarh state, around 76.76 percent live in the rural areas. There are 27 districts and 20306 villages. In the state total geographical area is 137898 sq. km out of which 59772 sq. km area is covered by forest. Where 25782 sq. km is reserved forest and 24036 sq. km area is covered under protected forest. Because of high production of herbal and medicinal plant Chhattisgarh government declared the state as "Herbal State".

Chhattisgarh state is doing commendable job in procurement and marketing of forest resources. But some were down the line we are lacking in marketing of such resources. To find new ways and new strategies of marketing researcher have chosen this topic. The present study is based on both primary and secondary data related to availability, production, marketing and the dependency of rural population on forest products. The study intended to understand the production and trade status of forest production and how these products can be used in an improved way to reduce poverty and enhance economy of the state. Thus, the present study endeavored to assess the trade and marketing trends of forest products and their role in economy at global, national level as well as regional level.

Chhattisgarh forest at a glance - The state of Chhattisgarh being placed in Deccan bio-geographical Area, houses an important part of that rich and unique biological diversity. What is a more conspicuous is that the state is significantly rich in endemism with respect to many plants having medicinal importance. The forests of the state fall under two major forest types, i.e., Tropical Moist Deciduous forest and the Tropical Dry Deciduous forest. The state of Chhattisgarh is endowed with about 22 varied forest sub-types existing in the state.

Graph 1 Forest Area in Chhattisgarh (In Sq. Km)

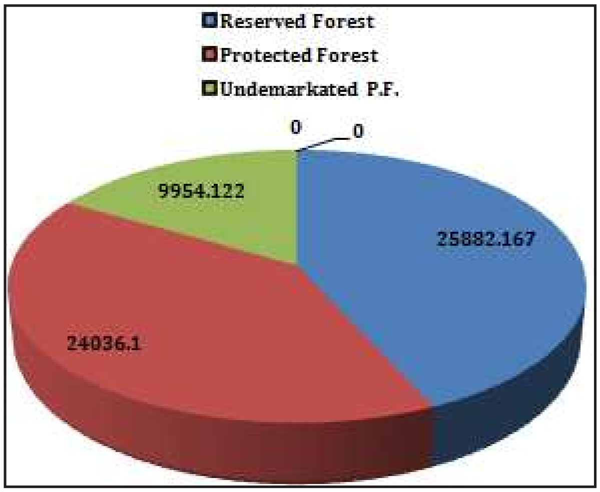

Graph 1 shows that out of total forest cover 9954.122 sq. km area is reserved forest, 25882.167 sq. km is protected forest and reaming of 24036.1 sq. km area is unddemarcated forest.

About MFP's in Chhattisgarh - Forest products can be divided into three categories: Timber, Non Timber and Minor Minerals. Non timber forest products (NTFPs) are known also as minor forest produce or non-wood forest produce (NWFP). The NTFP can be further categorized into

*Assistant Professor (Management) Dr. C. V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

medicinal and aromatic plants (MAP). NTFP have been known as 'minor forest produce' (MFP) because of their volume and value compared to timber is minor. In the state of Chhattisgarh there are several of commodities are produced and list of commodities are given below:

Primary Commodity

Bamboo	Chironji Pod	Chironji Seed	Gum karaya
Honey	Karanj	Lac	Lac Kusumi
Lac Rangeeni	Mahuwa flower	Mahuwa seed	Myrobalan
Sal Leaves	Sal Seed	Tamarind	Tamarind

Objectives of the study - Following are the broad objectives of study:

1. To study the various MFP's of Chhattisgarh.
2. To study the collection pattern of MFP's in Chhattisgarh state.
3. To evaluate marketing system implemented by Government for selling of MFP's in Chhattisgarh.

Hypothesis - Based on the review of earlier studies and pilot study conducted by the researcher, the following hypotheses have been formulated

H01 Marketing procedure and policies adopted by co-operative society are not effective and efficient.

Related work - With increasing trade, exploitation of forest-based exportable and superior non-tradable goods will intensify and their abundance will decline. Large, slow-growing, slow-reproducing species will be more prone to local extinction than small, fast-growing, rapidly reproducing species. High market value and efficient technology have the potential, however, of causing the local extinction of any forest-based exportable good. Kosa has lot of potential in the region in term of host plants to grow Kosa cocoons and government support in providing seeds and market to sell cocoon. [Rath, Bikash(2005). Globalization, Global Trend in Herbal Market, and the Impact thereof on Medicinal Plants in Orissa. Vasundhara. Bhubaneswar] As a forest-based good becomes progressively rare with over-exploitation for export, the market for this good may change as consumers Trade encourages households to specialize in the production of those local goods that can be exported. We might expect that trade will enhance the conservation of substitutable and inferior non-tradable forest goods,because households reduce or cease their exploitation.[Kothari, C. R. (1984). Quantitative techniques, second ed. New Delhi: Vikas Publishing house pvt. Ltd.] Institutional systems subsistence rubber estates extractive households orientation modern; agribusiness; farmer; market ranches forest manager integration Chhattisgarh is a pioneer State of India, producing the best quality Tendu leaves. The Tendu leaves are used as Beedi wrappers.

The production of Tendu leaves in Chhattisgarh is approximately 16.44 lacs standard bags annually, which is nearly 20% of the total Tendu leaves production of the country. One standard bag of Tendu leaves in Chhattisgarh comprises of 1000 bundles of 50 leaves each. The collection season is from third week of April to last week of May. The collection season starts earlier in the Southern part of the state in comparison to Northern part of the state.[Koul, Lokesh (2003). Manual for project work, New Delhi: school of education, ignou] The Chhattisgarh Govt. took a major policy decision in 2004 that instead of selling godowned leaves sell the leaves in advance to the purchaser. However the collection of leaves and the payment of the collection wages to the pluckers will be done by the primary co-operative society only. Green leaves will be handed over at the collection centre to the purchaser appointed in advance of collection. The purchaser will treat the leaves at collection centre, transport and store in his goodowns or the godowns of Forest Federation. The purchaser will make the payment of the purchase price in four equal installments. After implementation of this policy, in the first year 2004, Federation disposed 73% of total quantity in advance. In the collection year 2007, 2009, 2010, 2011 and 2012, 100% quantity has been sold in advance to the purchasers. More over the average sale rates are also increasing every year. In nut shell the change in the trade of Tendu leaf policy has brought good results. [Gandhi, J. C. (1985). Marketing: a managerial introduction, New Delhi: Tata mcgraw – hill publishing co. ltd.]

Potential intervention of Trade for MFP - Collection and Trade Practices of Non-Nationalised MFP

1. The villagers collect the forest produce from forest areas and sell in the local haat-bazars or to the petty traders in the nearest town.
2. Some petty traders purchase the forest produce from the villagers, visiting their homes or villages at regular intervals.
3. Main traders of forest produce collect this produce from petty traders or agents appointed by them for the purpose at village or haats.
4. The produce collected by the petty traders or agents of main traders is graded / primarily processed.
5. The graded / primarily processed material is sold in nearby Mandis or to the main traders at Jagdalpur, Bilaspur, Dhamtari and Raipur markets in Chhattisgarh.
6. The main trader, if required, further processes/grades the material according to the market need and sells the same in bigger markets of the country.
7. The main markets outside the state for the forest produce of Chhattisgarh are in Delhi, Uttar Pradesh, Maharashtra, Madhya Pradesh, West Bengal, Tamilnadu and Andhra Pradesh states.
8. The mode of trade with main traders is based on traditional market linkages and fixation of rates is based on the samples sent to the customer.

Proposed Approach - Marketing procedure and policies adopted by co-operative society are not effective and efficient for that one sample K-S test is conducted to know about the distribution pattern of sample. All the dimensions were found significant ($p<0.05$) rejecting the null hypothesis that data follow normal distribution and hence a non-parametric test is warranted. Chi-square test was carried

out on all the dimensions with respect to policies adopted by the cooperative societies and null hypothesis was rejected for all the dimensions. So it was concluded that marketing procedure and policies adopted by the cooperative societies in Chhattisgarh are very effective and efficient.

1. The purpose to apply one sample K-S test is to know about the distribution pattern of sample. When we look at all the dimensions, it is found significant and it is rejecting the null hypothesis that data follow normal distribution and hence a non-parametric test is warranted.
2. Chi-square test was carried out on all the dimensions with respect to policies adopted by the cooperative societies and null hypothesis was rejected for all the dimensions. So it was concluded that marketing procedure and policies adopted by the cooperative societies in Chhattisgarh are very effective and efficient.

Table 1 (see in last page)

Findings :

1. It was analyzed that various policies formulated by the forest department for auction and marketing procedure significantly impacts the satisfaction of wood merchants by 45%.
2. It was noted that various policies formulated at cooperative societies with respect to forest produces positively impacts the satisfaction level of the representatives by 26.6%.
3. Analysis revealed that marketing system implemented by the cooperative societies has positive impact on the satisfaction of representatives but it requires reformulating the whole process.
4. It was revealed that the factors of marketing which influences the people mostly with respect to nationalized forest products are "Assorted", "Payment and Clarity" and "Documentation".
5. It was revealed that the factors of marketing which influences the people mostly with respect to non-nationalized forest products are "Categorize and Profit", "Benefits", "Pay system", "Policies" and "Facilities".

Suggestion - It is suggested that small and tiny enterprises for dealing in forest resources should be set up to generate good employment opportunities to the tribal people, if necessary, by imparting training in required skills to these people. The experience gained by the tribal people during their employment in such enterprises or during the training period enables them to carry on their occupation of collecting, grading, packing etc. of the forest produces in a better way in addition to increasing their skills in salesmanship.

Conclusions - Forest products are essential and unavoidable products in human life. It fulfills needs of daily life. Chhattisgarh is a state having full of such resources. State is doing a commendable job in increasing production of forest products, therefore its efficient production, pricing, distribution and promotion is the requirement of present time. Designing of marketing policies are essential. However there are differences in policy practices from other private sectors in herbal and medicinal product segment. These differences should be eliminated to bring in a unique marketing principle which should best suit the customer's requirement. The formulation of plans should communicate a standard benchmark to provide needful gain to produce provider, consumers and the whole forest department.

References :-

1. Baker, R. P., and Howell, A. C. (1938). The preparation of reports, New York: Ronald Press
2. Chaturvedi, J. C. (1953). Mathematical statistics, Agra: Nok Jhonk Karyalaya.
3. Kothari, C. R. (1984). Quantitative techniques, second ed. New Delhi: Vikas Publishing house pvt. Ltd.
4. Chhabra, T. N. (2010). Marketing Management, New Delhi: Dhanpat Rai & Co. (pvt.) Ltd.
5. Gandhi, J. C. (1985). Marketing: a managerial introduction, New Delhi: Tata mcgraw – hill publishing co. ltd.
6. Kotler, Philip, and Gary Armstrong(1996), Principal of marketing, New Delhi: Prentice hall of india
7. Mintzberg, Henry, (1979). The structuring of Englewood cliffs, N. J., prentice-hall, inc.
8. Hussain, donna & Hussain K. M., (1985). Information processing systems for management, Homewood, III, Richard D. Irwin, inc.
9. Malhotra, K.C. and Prodyut Bhattacharya(2010). Forest and Livelihood. Published by CESS, Hyderabad. pp.246
10. Bhattacharya, P.etal (2008). "Towards Certification of Wild Medicinal and Aromatic Plants in Four Indian States" Unasylva,230, vol.59, pp. 35-44.
11. TFRI (2011), National Workshop on Non-timber Forest Products Marketing: Issues & Strategies (Background paper). Tropical Forest Research Institute, Jabalpur
12. Rath, Bikash(2005). Globalization, Global Trend in Herbal Market, and the Impact thereof on Medicinal Plants in Orissa. Vasundhara. Bhubaneswar
13. Shiva M. P. & Mathur R. B.Price Regime Analysis, Marketing and Trade of Minor Forest Produce by C. Sekhar Eds.

Table 1 : Test Statistics for H01 Testing

	Chi-square	Asymp. Sig.	P value	H0
The entire area of collection of non-nationalized products is divided into different units, which cater the whole requirement.	88.400[a]	.000	Sig.	Rejected
Collection units are less in numbers according to heavy production.	56.800[a]	.000	Sig.	Rejected
The district union provides enough funds on time to the primary societies for procurement of material.	42.107[b]	.000	Sig.	Rejected
Every no nationalized produce collection family does have a collection card.	66.480[b]	.000	Sig.	Rejected
The collectors get timely payment of material collection.	101.253[b]	.000	Sig.	Rejected
The payment to the collectors remains due for so many times due to insufficient fund.	103.813[b]	.000	Sig.	Rejected
Sometimes produce collectors sell out their collected produce in the open market (peti traders) because they get higher price there.	68.600[a]	.000	Sig.	Rejected
Non nationalized produce collectors percept that selling to peti trader is more convenient than of primary society.	29.040[b]	.000	Sig.	Rejected
Supervision charges i.e. rs. 0.50/qtl. per day imposed to pay for delayed lifting of purchased material is not enough and it should increase.	57.533[a]	.000	Sig.	Rejected
Grading system of material is standardized to meet requirement of state as well as country.	69.200[a]	.000	Sig.	Rejected
Collector's complaints about lack of facilities provided by government.	38.200[a]	.000	Sig.	Rejected
Transportation of material is a biggest challenge for purchaser.	15.067[b]	.002	Sig.	Rejected
Government of Chhattisgarh provides so many facilities to the persons living nearby forest so as to enhance their living.	86.693[b]	.000	Sig.	Rejected
Right implementation of policies and benefits received by collectors motivates them to do more quality work.	41.893[b]	.000	Sig.	Rejected
Government should provide incentive to those who achieve target of collection.	65.573[b]	.000	Sig.	Rejected
Benefits received by tendu leave collectors should also be given to collectors of non nationalized produce.	78.853[b]	.000	Sig.	Rejected
You are satisfied with the whole process and policies.	64.267[a]	.000	Sig.	Rejected

a. 0 cells (0.0%) have expected frequencies less than 5. The minimum expected cell frequency is 30.0.
b. 0 cells (0.0%) have expected frequencies less than 5. The minimum expected cell frequency is 37.5.

****

A comparative Study of Soft drink and Fruit juices

Dr. Suresh Shrawan Patil*

Abstract - Soft Drinks were common preference among all the individuals before juices were being introduced. With the changing lifestyle and income levels, people are shifting their consumption patterns and have therefore become more health conscious thus leading to increase in demand of juices. The study focused on the preference and consumption pattern of soft drink and fruit juice on the basis of different age group of people living in Nashik city. The study starts with determining the major factors affecting the consumption pattern of soft drinks and fruit juices, and ends up with the conclusion as per the state of mind of the average rational human being. The study concludes that there exists a significant difference between the consumption pattern of the soft drinks and fruit juices in all age groups. The study also remarked the frequency of consuming fruit juices is more than that of soft drinks due to health consciousness of people.
Keyword - Consumption, Soft drink and Fruit Juices.

Introduction - Drink or beverage is a liquid specifically prepared for human consumption. In addition to basic needs, beverages form part of the culture of human society or any liquid suitable for drinking any liquid suitable for drinking: 'may I take your beverage order?'or A liquid to consume, usually excluding water; a drink. This may include tea. coffee, liquor, beer, milk or soft drinks

Types of beverage

The various types of beverages are :

1. Alcoholic beverages
2. Non-Alcohol beverages
3. Soft drinks
4. fruit JLIICC
5. Hot beverages
6. Other

1. Alcoholic beverages:-An alcoholic beverage is a drink containing ethanol, commonly known as alcohol. although in chemistry the definition of an alcohol includes many other compounds'. Alcoholic beverages, such as wine, beer, and liquor have been part of human culture and development for 8,000 years.

2 Non-alcohol beverages :-Non-alcoholic beverages are drinks that would normally contain alcohol, such as beer and wine hut are made with less than .5 percent alcohol by volume. The category includes drinks that have undergone an alcohol removal process such as non-alcoholic beers and de - alcohol zed wines.

Non-alcoholic variants:

a. Low alcohol beer
b. Non-alcoholic wine
c. Sparkling cider

3**. Soft drinks:-**The name "soft drink" specifies a lack of' alcohol by way of contrast to the term 'hard drink" and the term "drink" the latter of which is nominally neutral but often carries connotations of alcoholic content. fleverages lake colas, sparkling water, iced tea. lemonade, squash. and fruit are among the most common types of soft drinks, while hot chocolate, hot tea, coffee, milk, tap water, alcohol, and milkshakes do not fall into this classification.

4. Fruit juice:-Juice is a liquid naturally contained in fruit or vegetable tissue. Juice is prepared by mechanically squeezing or macerating fresh fruits or vegetables without the application of heat or solvents. For example, orange juice is the liquid extract of the fruit of the orange tree. Juice may be prepared in the home from fresh fruits and vegetables using variety of' hand or electric juicers. Many commercial juices arc filtered to remove fiber or pulp, but high pulp fresh orange juice is a popular beverage.

5.Hot beverages:-Hot beverages, including infusions. Sometimes drunk chilled.

a. Coffee-based beverages
b. Coffee
c. Flavored teas (chai etc.)
d. Green tea
e. Pearl milk tea
f. Tea
g. Herbal teas

Literature Review:

Most of the studies conducted on the customer satisfaction of beverage have been reviewed in the subsequent section. Gopi & Arasu, (2012) focused on factor analysis model and its application to identify consumer preferences for a popular soft drink product in Dharmapuri.

The qualification set of fruit juice which maximizes

*Associate Proffesor (Economics) KKHA Arts SMGL Commerce and SPHJ Science College, Neminagar Chandwad, Distt. Nashik (Maharastra) INDIA

consumer satisfaction was determined as "the orange juice which is 100% fruit juice, without sugar additive, organic and has international quality and food safety certificates and affordable price".

Dhuna and Mukesh (1984) conducted a study to analyze the pattern of consumption of soft drinks. A sample of 150 respondents was surveyed regarding their consumption habits. Analysis revealed that 54 per cent of consumption was in summer and 46 per cent during other seasons. It was found that about 26 per cent of the respondents were regular consumers and the rest consumed soft drinks occasionally.

Objective of the study :

1. To study the preferences of the people for soft drink and fruit juices.
2. To find out the factors that influences the consumer's consumption of soft drinks and fruit juices.
3. To test the know - how of the consumers regarding the various existing brands of soft drinks and fruit juices.

Problems :

1. Understanding the view of sample size in regards to related drinks & fruit juice.
2. There are people who don't prefer drinking either aerated drinks of fruit juices.

Research Methodology

Sample Design - In this research report/we have target more people in age group of 15-30.

Sampling Procedure - We have used convenience sampling to select the sample in this study.

Sources of Data Collection - The useful data would be collected from both primary and secondary sources of information. Data collection will be mainly alone through questionnaire some non- structured conversations and talk will also have their valuable place in the work. Secondly through e-mail, chat, phone etc will also to enrich the research work. Observation and personal experiences will also have their relevant place in the data collection.

1. Steps involved for data students, customers and retailers.
2. Contact and explaining them the purpose of study.
3. By questionnaire and interview with related people.

Data Analysis and Findings

Q1.What do you prefer to drink?

Particulars	No.of Respondents	Percentage%
Soft Drink	20	33%
Fruit Drink	40	67%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 33% of the respondent prefer soft drink to drink.
b) 67% of the respondent prefer fruit drink to drink.

Q2. Do Advertisement Affect Your Purchase?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
Yes	40	66%
No	20	34%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 34% of the respondents think that Advertisement Affect their purchase.
b) 66% of the respondents think that Advertisement do not Affect their purchase.

Q3.Which One Of The Below Economy?

Particulars	No.of Respondents	Percentage
Soft Drink	25	41%
Fruit Juice	35	59%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 4 1% of the respondents think that Below Economy Soft Drink
b) 59% of the respondents think that Below Economy Fruit Juice

Q4.Are You Aware Of The Offer Available on the Drink?

Particulars	No. of respondent	Percentage
Yes	15	25%
No	45	75%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 25 % Of The Respondents think The Offer Available on the Drink
b) 75% Of The Respondents think Do Not The Offer Available on the Drink

Q5. How Do You View Soft Drink?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
As a Health Drink	0	0%
As a Status Symbol	4	6%
As an aid to put off thirt	38	64%
Any Other	2	30%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) No Of The Respondents View Soft Drink As a Health Drink
b) 6% Of The Respondents View Soft Drink As a Status Symbol
c) 64% Of The Respondents View Soft Drink As an aid to put off thirst
d) 30% The Respondents View Soft Drink Any Other

Q6. How Do You View Fruit Juices ?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
As a Health Drink	58	96%
As a Status Symbol	0	0%
As an aid to put off thirst	2	4%
Any Other	0	0%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 96% Of The Respondents View Fruit Juices As a Health Drink
b) 0% None Of The Respondents View Fruit Juices As a Status Symbol
c) 4% Of The Respondents View Fruit Juices As an aid to put off thirst
d) 0%None The Respondents View Fruit Juices Any Other

Q7. What Induces You To Buy Fruit Juice?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
Price With Quantity	6	10%
Health Drink	45	75%
Status Symbol	4	6%
Taste	0	0%
Variety	5	9%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 10% Of The Respondents Consume Fruit Juice Because Of Its Price
b) 75% Of The Respondents Consume Fruit Juice Because Of It is a Health Drink
c) 6% Of The Respondents Consume Fruit Juice Because Of It is a Status Symbol
d) None Of The Respondents Consume Fruit Juice Because Of Its Taste
e) 9% Of The Respondents Consume Fruit Juice Because Of It is a Variety

Q8. What Induces You To Buy Soft Drink?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
Price With Quantity	7	11%
Health Drink	0	0%
Status Symbol	6	10%
Taste	38	64%
Variety	9	15%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 11% Of The Respondents Consume Soft Drink Because Of Its Price
b) None Of The Respondents Consume Soft Drink Because Of It is a Health Drink
c) 10% Of The Respondents Consume Soft Drink Because Of It is a Status Symbol
d) 64%Of The Respondents Consume Soft Drink Because Of Its Taste
e) 15% Of The Respondents Consume Soft Drink Because Of It is a Variety

Q9. Which Drink Do You Like Most?

Particulars	No. of Respondents	Percentage
Soft Drink	13	21%
Fruit Juice	47	79%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 21% Of The Respondents like Soft Drink
b) 79% Of The Respondents like Fruit Juice

Q10.With Whom You Prefer To Drink Fruit Juice?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
Alone	7	11%
Family	20	33%
Friend	30	50%
Other(please specift)	3	5%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 11% Of The Respondents Prefer To Alone Drink Fruit Juice
b) 33% Of The Respondents Prefer To Family Drink Fruit Juice
c) 50% Of The Respondents Prefer To Friend Drink Fruit Juice
d) 5% Of The Respondents Prefer To Other(please specify) Drink Fruit Juice

Q11.With Whom You Prefer To Drink Soft Drink?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
Alone	10	17%
Family	30	50%
Friend	20	33%
Other(please specify)	0	0%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 17% Of The Respondents Prefer To Alone Drink soft Drink
b) 50% Of The Respondents Prefer To Family Drink **soft** Drink
c) 33% Of The Respondents Prefer To Friend Drink soft Drink
d) 0% None Of The Respondents Prefer To Friend Drink soft Drink

Q12.Which Advertisement Influence You To Buy The Drink?

Particulars	No. of respondent	Percentage%
Television	38	63%
Banners	20	33%
Other(please specift)	2	4%
Total	60	100%

ANALYSIS

a) 63% Of The Respondents Television Influence To buy the Drink.
b) 33% Of The Respondents Banners Influence To Buy The Drink.
c) 2% Of The Respondents Other(please specift) Influence To Buy thee Drink.

Suggestions

1. With the changing lifestyle ,people have started becoming more health conscious therefore the fruit juice people company should use appropriate marketing techniques thereby reducing the demand for drink in the future.
2. As it is seen that people consider conned juices to be health with preservatives this shows that awareness level of the people is low and needs to be corrected therefore various methods like campaigns by government, help by media etc can be taken to change.

Conclusions - With the increased importance of health and nutrition, changing life styles an higher incomes, the Indian food market offers numerous opportunities for new products and product modifications. The purpose of this study was to develop a better understanding of consumption pattern of soft drinks and fruit juices of consumers at Nashik city. Results from descriptive statistics for the survey indicated that 42% of the respondents prefer Soft Drinks and 58% of the respondents prefer fruit juices. Through the survey it was conveyed that weekly consumption of soft

drinks is lower than the weekly consumption of fruit juices. The majority of the respondents consume soft drinks and fruit juices at the time of parties &celebrations. The basis of soft drinks consumption is its taste, price and an aid to put off thirst and for that of fruit juices is the health consciousness of consumers.

References :-

1. Bonilla, T. (2010, August). Analysis of consumer preferences toward 100% fruit juice packages and labels. Costa rica.
2. Dhuna, M. (1984). An Analysis of Consumer Behaviour. International Journal of Marketing, 14 (7), 26-28.
3. Gopi,K.,& Arasu, R. (2012). Consumer preferences towards soft drink products in dharmapuri – a factor analysis evidence. Namex International Journal of Management Research 2 (1), 38-47.
4. www.foodindustryindia.com
5. http://www.naturalnews.com/softdrinks.html

****

सरकारी निगमों में बजट एवं बजट नियंत्रण तंत्र की एक व्यवस्थित समीक्षा

सुनील कुमार विश्वकर्मा * डॉ. विकास सराफ**

शोध सारांश – बजट और बजटीय नियंत्रण किसी संगठन के प्रबंधन द्वारा लक्ष्यों की स्थापना और एक प्रक्रिया को डिजाइन करने पर जोर देता है जो एक रूपरेखा के रूप में कार्य करता है जिसके भीतर एक संगठन प्रभावी ढंग से समग्र नियोजित गतिविधियों को कलाकृत करता है। वित्तीय संदर्भ में इन नियोजित गतिविधियों की मात्रा का ठहराव बजट के रूप में जाना जाता है, जबकि वांछित परिणाम की गारंटी के लिए एक प्रभावी तंत्र की स्थापना को बजटीय नियंत्रण के रूप में जाना जाता है। अत: यह अध्ययन सरकारी संगठन में बजट और बजटीय नियंत्रण की एक व्यवस्थित समीक्षा के रूप में किया जा रहा है एवं पूर्वगामी महत्व को देखते हुए, सरकारी संगठन पर ध्यान केंद्रित किया गया।

शब्द कुंजी – बजट, बजटीय नियंत्रण, प्रभावी, कुशल, प्रबंधन, प्रदर्शन।

प्रस्तावना – बजट सार्वजनिक प्रबंधन और निगम के प्रबंधन के लिए एक महत्वपूर्ण नीति साधन है। यह कई लोगों के लिए एक परिचित गतिविधि है क्योंकि हमारे निजी जीवन के साथ-साथ व्यवसायों और सरकारी इकाइयों में भी इसका अभ्यास किया जाता है। सरकारी परिवेश में बजट का उपयोग उद्यमों या व्यावसायिक क्षेत्र में लंबे समय से पहले किया गया है। बजट के उपयोग ने अपने स्वयं के संघर्षो का निर्माण किया, जैसा कि कुछ अग्रणी कंपनियों ने बजट को प्रबंधन के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में बताया, जबकि अन्य ने दक्षता या उत्पादकता पर इसे एक सकारात्मक साधन एं प्रभाव के रूप में बताया गया हैं।

पांडे (2008), एक नीति बनाये रखने के लिए कार्यकारी की जिम्मेदारियों से संबंधित विभागीय बजट की स्थापना, और वास्तविक बजट परिणाम की निरंतर तुलना करने के लिए बजटीय नियंत्रण को परिभाषित करता है। लाम्बे (2012) ने बजट और योजना पर लेखन को बजट को एक व्यापक और समन्वित योजना के रूप में परिभाषित किया है, जो एक संगठन के प्रबंधन द्वारा पैक की जाती है, और भविष्य में कुछ विशिष्ट अवधि के लिए किसी उद्यम के संचालन और संसाधनों के लिए वित्तीय शब्दों में व्यक्त की जाती है। उस नीति का उद्देश्य इसके संशोधन के लिए एक ठोस आधार प्रदान करना है। इस प्रकार, एक बजट को एक योजना के रूप में देखा जा सकता है जिसमें दिखाया जाएगा कि संसाधनों की आवश्यकता कैसे होगी और समय की एक विशिष्ट अवधि में उपयोग की जाएगी। यह मात्रात्मक शब्दों में व्यक्त भविष्य की एक योजना का प्रतिनिधित्व करता है।

परंपरागत रूप से, बजट को हमेशा खर्च को सीमित करने के तरीके के रूप में देखा जाता है, इसलिए प्रबंधन के समय का एक बड़ा हिस्सा निधि के आवंटन के लिए समर्पित है। हालाँकि, आज की वैश्वीकृत दुनिया में अनुभवजन्य साक्ष्य, यह सुझाव देते हैं कि बजट केवल अपेक्षित राजस्व और परियोजना के व्यय को दर्शाता है। यह सिद्धांत एक बजट की तैयारी के साथ जाता है, जैसे कि एक बजट तैयार करने में, व्यवसायों के प्रबंधन को यह महसूस करना चाहिए कि यह वास्तव में आर्थिक प्रणाली का एक हिस्सा है और इस तरह, आर्थिक प्रणाली के भीतर गतिविधियों से प्रभावित होने के साथ-साथ प्रभावित कर सकता है।

हर संगठन में मूल रूप से दो बहुत ही सामान्य प्रकार के बजट होते हैं, इनमें पूंजी और नकद बजट शामिल होते हैं। यह किसी भी तरह से बजट के अन्य रूपों के महत्व को नकारता नहीं है, क्योंकि प्रत्येक संगठन के पास बजटों को वर्गीकृत करने का अपना तरीका होता है, जैसे बिक्री बजट, उत्पादन बजट, आम बजट, प्रशासनिक बजट, अनुसंधान और विकास बजट, अन्य। ये बजट अल्पावधि, मधयवर्ती या दीर्घकालिक हो सकते हैं। पूंजी बजट उन धनराशि को इंगित करता है जो एक संगठन या सरकारी एजेंसी के एक विशिष्ट अवधि के लिए पूंजी परियोजना को समर्पित करती हैं। दूसरी ओर नकद बजट एक विस्तृत वित्तीय पूर्वानुमान है जो एक संगठन में एक विशेष अवधि में नकदी प्रवाह (प्रवाह और बहिर्वाह) दिखाते हुए अनुसधी में प्रस्तुत किया जाता है। बैट्टी (1968) ने कहा कि एक नकद बजट नकदी प्राप्तियों का अनुमान है और भविष्य की योजना के लिए भुगतान करने के बाद अपेक्षित शर्त और समग्र बजट योजना पर विचार किया गया है। किसी भी बजट का सार व्यय को नियंत्रित करने और प्रबंधन को महत्व के क्रम में परियोजनाओं को पूरा करने में सक्षम बनाना है; इसलिए बजट प्रक्रिया को प्रबंधन दक्षता और संचालन में प्रदर्शन को बेहतर बनाने के रूप में देखा जाता है। नीति या इसके संशोधन के लिए एक आधार प्रदान करने के लिए। नियमित अंतराल पर तुलना करना आवश्यक है, बजटीय परिणामों या मानक सेट के साथ वास्तविक प्रदर्शन यह सुनिश्चित करने के लिए कि नियोजित परिणामों से विचलन को कम से कम रखा जाए और ऐसे विचलन की जांच के बाद आवश्यक सुधारात्मक कार्रवाई जल्द से जल्द की जाए।

शोध समीक्षा – हर संगठन की बजट प्रणाली उन लोगों को इस तरह के संगठन के प्रबंधन की जिम्मेदारियों के साथ आधार प्रदान करती है कि वे यह निर्धारित करें कि कैसे तार्किक निर्णय लेने और संगठनात्मक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए धन का स्रोत, आवंटन और उपयोग कर सके। बजटीय प्रणाली के माध्यम से, संगठनों ने ऐसी गतिविधियों की योजना बनाई गयी

*शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं निर्देशक, विद्यासागर प्रबंधन संस्थान, अवधपुरी, भोपाल (म.प्र.) भारत

है जो प्रभावी रूप से मौद्रिक शर्तों और निश्चित अवधि में निर्धारित की जा सकती हैं।

आज की वैश्वीकृत दुनिया में उभरते मुद्दों में से एक यह है कि आम लोग अपने संगठनों के भविष्य के लिए एक ऐसे वातावरण में योजना बना रहे हैं, जहां स्थितियों में बदलाव लगातार समय-समय पर अनुभव किए जाते हैं। मुद्राओं के मूल्य में वृद्धि और गिरावट होती है, इनपुट सामग्री की कीमतों में अचानक उतार-चढ़ाव होता है और वैश्विक आर्थिक प्रणालियों में आमतौर पर संरचनात्मक असंतुलन और कठोरता होती है। उन स्थितियों के साथ-साथ, प्रबंधन को व्यापक मूल्यांकन करना चाहिए और संगठन के भविष्य के बारे में महत्वपूर्ण निर्णय लेना चाहिए ताकि एक समस्या और परिणाम उन्मुख बने रहें। लाम्बे (2014) के अनुसार, बदलती परिस्थितियों में तैयार करने के लिए प्रभावी तरीकों में से एक फ्रेम कार्य प्रदान करना है जिसमें विशिष्ट योजना शामिल है जो अप्रत्याशित परिवर्तनों के अनुकूल पर्याप्त रूप से लचीला है। इस तरह के फ्रेम कार्य प्रदान करने की एक व्यापक प्रक्रिया को बजट के रूप में जाना जाता है। इसमें लक्ष्यों की स्थापना, और उन बजटों के खिलाफ वास्तविक प्रदर्शन की प्रभावी निगरानी भी शामिल होती है।

वैचारिक ढांचा – एसेमिक (1997) ने, एक बजट को दिए गए उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए योजना के वित्तीय या मात्रात्मक विवरण के रूप में परिभाषित किया। ब्राउन और हॉवर्ड (2002) के अनुसार, एक निश्चित अवधि के दौरान एक बजट प्रबंधन नीति का एक पूर्वनिर्धारित कथन है जो वास्तव में प्राप्त परिणाम के साथ तुलना के लिए एक मानक प्रदान करता है। चार्ल्स (1997) के विचारों में बजट योजना की मात्रात्मक अभिव्यक्ति, समन्वय एवं कार्यान्वयन के लिए एक सहायक होता है। जिसके अंतर्गत, बजट विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने के लिए डिज़ाइन किया गया हैं; योजना बनाना, प्रदर्शन का मूल्यांकन करना, गतिविधियों का समन्वय करना, योजनाओं को लागू करना, संचार करना, प्रेरित करना और प्राधिकरण करना। पांडे (2001) का मानना है कि एक बजट एक उद्यम के संचालन और संसाधनों के लिए और भविष्य में कुछ विशिष्ट अवधि के लिए वित्तीय संदर्भ में व्यक्त एक व्यापक और समन्वय योजना है। लुसी (1988) के विचारों में चूंकि यह प्रवचन से संबंधित है, एक बजट धन आवंटन की वार्षिक प्रक्रिया है, जिसे संगठनों के दीर्घकालिक उद्देश्यों की प्रगतिशील पूर्ति में चरणों के रूप में देखा जाना चाहिए। तदनुसार, बजट प्रक्रिया संगठन को कॉर्पोरेट योजना में परिभाषित दीर्घकालिक उद्देश्यों की ओर ले जाती है।

बजट की अवधारणा पर उपरोक्त प्रस्तावों के विश्लेषण से पता चलता है कि हालांकि उनकी अलग-अलग व्याख्याएं हैं, लेकिन वे सभी एक सामान्य तत्व हैं। संक्षेप में, एक बजट एक निश्चित अवधि के दौरान प्रबंधन नीति का एक पूर्व निर्धारित कथन है, जो वास्तव में प्राप्त परिणामों के साथ तुलना के लिए एक मानक प्रदान करता है। इसमें समय की अवधि के साथ आय और व्यय का अनुमान शामिल है, इस प्रकार एक योजना तैयार करने और इसे वित्तीय रूप से निर्धारित करने का कार्य बजट के माध्यम से जाना जाता है।

बजट के प्रकार

पूँजीगत बजट – इसमें संयंत्र में निवेशों के लिए व्ययों की योजना बनायी जाती है तथा उत्पाद विकास पूँजीगत बजट्स की अवधि 3 से 5 अथवा दसवर्षीय हो सकती है।

नगदी बजट – इसमें आगामी वर्ष अथवा अवधि के लिए सम्भावित नगद प्राप्तियों व भुगतानों का विस्तृत आकलन किया जाता है। ऐसा इसलिए किया जाता है क्योंकि हो सकता है कि बिना तरलता के किसी संगठन का अस्तित्व, बिना लाभ के टिकना व बने रहना संदिग्ध हो। नगदी बजट में संगठन के नगदी घाटे अथवा नगदी अधिलाभ की सम्भावित अवधि की पहचान का प्रयास किया जाता है। इसीलिए किसी भी संगठन के लिए यह महत्तवपूर्ण हो जाता है कि नगदी की कमी के प्रतिकूल प्रभाव से बचने के लिए ओवरड्राफ़्ट सुविधा की व्यवस्था की जाये अथवा अल्पावधिक निवेश के माध्यम से अधिलाभ-निधि से जुड़े लाभ को अधिकाधिक किया जाये।

लचीला बजट – गेरिसन (2000) की दृष्टि में लचीले बजट में बजट परिवेश में परिवर्तनों के प्रभाव छलकते हैं जो बजट के निष्पादन को प्रभावित करेंगे, यह गतिविधि के एक ही स्तर तक सीमित नहीं एवं वास्तविक परिणामों की तुलना मौलिक गतिविधि स्तर पर बजटेड लागतों से नहीं की जानी है।

मास्टर बजट – इसे लाभ-योजना भी कहा जाता है। यह निर्धारित समयावधि के लिए संगठनों के कार्यकलापों की समस्त अवस्थाओं से समाविष्ट बजट्स का विस्तृत समुच्चय है। 'मास्टर बजट' बजट प्रणाली का एक प्रमुख परिणाम है। यह एक विस्तृत लाभ-योजना है जिसमें संगठनात्मक कार्यकलापों की सभी अवस्थाओं को एकसाथ समाहित कर लिया जाता है। इसमें अनेक पृथक्-पृथक् बजट्स होते हैं जो स्वतन्त्र होते हैं। ये हैं: (क) संचालनात्मक बजट एवं (ख) वित्तीय बजट।

संचालनात्मक बजट– इसमें दैनिक आय व परिव्यय परिलक्षित होते हैं, इसमें मूल्यह्रास की लागत (पूँजीगत परिव्ययों का वर्तमान भाग) को भी धयान में रखा जाता है (ओकान्लावान 2011)। ये प्राय: एक वर्ष की अवधि के लिए तैयार किये जाते हैं।

शून्यआधारित बजट - शून्याधारित बजट (Z.B.B.) में परिव्ययों को प्रत्येक बजट चक्र के दौरान पुन: गढ़ा जाता है, न कि पूर्ववर्ती वर्षों अथवा अवधियों पर आधारित बजट्स। अतीत की अदक्षताओं व असटीकताओं पर शून्याधारित बजट का निर्माण नहीं किया जाता। लेखक ने यह भी उल्लेख किया है कि इस प्रस्ताव का महत्तव संचालनात्मक परिवेश की स्थिरता पर निर्भर है।

निष्पादन बजट– यह ऐसा बजट तन्त्र है जिसमें विषय वस्तुओं को प्रयोजन, गतिविधियों, मधयवर्ती उत्पाद, गतिविधि के प्रत्यक्ष उत्पाद के अनुसार वर्गीकृत कर दिया जाता है। इसमें वास्तविक परिणाम अथवा प्रभाव पर ज़ोर दिया जाता है, न कि आदान (Input) पर; इसे गतिविधि की लागत अथवा कार्यभार द्वारा परिव्यय से जाना जाता है। इसे 'गतिविधि-उन्मुख प्रबन्धन' भी कहा जाता है।

बजट प्रशासन, अवधि और लाभ – इस तरह के प्रवचन में एक प्रासंगिक मुद्दे की जांच करने की आवश्यकता होती है, जो संगठनात्मक सेटिंग में बजट प्रशासन की जिम्मेदारियों से दुखी लोगों की पहचान करती है। अधिकांश औपचारिक संगठनों में बजट तैयार करने की प्राथमिक जिम्मेदारी नियंत्रक या बजट अधिकारियों के साथ रहती है, जो विभिन्न इकाइयों या विभागों के प्रतिनिधियों से इनपुट प्राप्त करते हैं, जिनके लिए संगठन संरचित है। नियंत्रक या कार्यालय प्रतिनिधि बाद में प्रस्तावों को स्क्रीन करेगा, उन्हें कंपनी के प्रस्तावित बजट में समेकित करेगा और अंतिम अनुमोदन के लिए शीर्ष प्रबंधन को बजट प्रस्तुत करेगा। बड़े संगठनों में, हालांकि, बजट की तैयारी एक बजट समिति की जिम्मेदारी होती है। समिति में अध्यक्ष के रूप में मुख्य कार्यकारी के साथ कार्यात्मक प्रमुख शामिल हैं। पांडे (2002) ने निम्नलिखित को शामिल करने के लिए बजट समिति के कुछ कार्यों की पहचान की:

1. विभिन्न विभागों को निर्देश जारी करना।
2. बजट अधिकारियों को प्राप्त करना और उनकी जाँच करना।
3. विभागीय प्रबंधक को उनके पूर्वानुमान में मदद करने के लिए ऐतिहासिक जानकारी प्रदान करना।
4. संभावित संशोधन का सुझाव देना।
5. प्रबंधकों के साथ कठिनाइयों पर चर्चा करना।
6. यह सुनिश्चित करना कि प्रबंधक समय में बजट तैयार करें।
7. बजट सारांश तैयार करना।
8. समिति के लिए बजट जमा करना और विशेष कार्य पर स्पष्टीकरण देना।

ओनौरा (2005) की मान्यता हैं कि 'बजट अब नहीं है और कंपनी में मुख्य कार्यकारी बजट अधिकारी या अन्य शीर्ष अधिकारियों की एकमात्र जिम्मेदारी नहीं होनी चाहिए। बल्कि, कंपनी के सभी स्तर बजटीय प्रक्रिया में भाग लेंगे और बजट द्धारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रतिबद्धता करेंगे। भविष्य की लहर सभी मानव संसाधन को टैप करने के लिए होगी जो एक कंपनी को बजट तैयार करने और नियंत्रण में उपलब्ध है। अधिक लोगों द्धारा अधिक से अधिक भागीदारी उन्हें स्थापित होने पर बजट लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रतिबद्ध करेगी। यह प्रेरणा और उपलब्धि के संदर्भ में महत्वपूर्ण परिणाम होगा'।

संक्षेप में, किसी संगठन में प्रबंधन और कर्मचारियों के सभी स्तरों, चाहे रणनीतिक, सामरिक या परिचालन, को बजट बनाने के लिए एक साथ काम करने की आवश्यकता होती है। जो यह सुनिश्चित करेगा कि संपूर्ण संगठन एक एकल इकाई के रूप में कार्य करता है जिसमें इसकी सभी घटक इकाइयाँ आपस में जुड़ी हुई हैं। बजट की अवधि, बजट की प्रकृति के आधार पर, कुछ घंटों से लेकर कई वर्षों तक हो सकती है। ओवलर और ब्राउन (1999) ने बजट अवधियों की पहचान की, अवधि जिसके लिए एक बजट लागू किया जाना है, जो अल्पकालिक, मधयम अवधि या दीर्घकालिक हो सकती है। नतीजतन, एक संगठन द्धारा बजट तैयार करने से कई फायदे या लाभ प्राप्त होते हैं।

डोगरा (2014) के अनुसार, इनमें से कुछ लाभ, कई अन्य लोगों में शामिल हैं:

1. बजट इस बात पर जोर देता है कि कंपनी के सभी विभाजन एक समान लक्ष्य की ओर काम करते हैं। यह स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है कि केवल जब कंपनी के डिवीजनों में सभी लोगों के प्रयासों को ठीक से निर्देशित किया जाता है, तो लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।
2. बजट नियंत्रण कार्य करता है, क्योंकि यह भविष्य में एक निश्चित अवधि के लिए संचालन की योजना है। इस अवधि के दौरान परिचालन संबंधी गतिविधियाँ बजट के ढांचे के भीतर काम करके नियंत्रित की जाती हैं। इस तरह से विचलन को ट्रैक करना आसान हो जाता है और सुधारात्मक उपाय उचित तरीके से किए जाते हैं, इस प्रकार बजट बनाना दक्षता को बढ़ावा देता है और अपशिष्ट को रोकता है।
3. यह बजट अवधि के लिए उत्पादन की लागत का अनुमान लगाने में सहायता करता है और इसमें सामग्री लागत, श्रम लागत और ओवरहेड लागत का अध्ययन और पूर्वानुमान शामिल है।
4. बजट में कंपनी के संसाधनों और सुविधाओं के अधिक तर्कसंगत उपयोग का परिणाम है। प्रबंधन भविष्य के श्रम और पूंजी आवश्यकताओं का अधिक सटीक अनुमान लगा सकता है। यह श्रमिकों के कल्याण के साथ–साथ कर्मचारी के लिए योगदान देता है क्योंकि यह उनकी सेवाओं की मांग को स्थिर करता है।

बजटीय नियंत्रण की रूपरेखा – जैसा कि पहले कहा गया था, बजट का एक निहित अर्थ और बजट लक्ष्यों की स्थापना यह तथ्य है कि यह नियंत्रण उद्देश्यों के लिए एक उपकरण है। अकेले योजना बनाने से ज्यादा जरूरी कार्रवाई के प्रस्तावित पाठ्यक्रम को लागू करना नहीं है, इसलिए बजटीय प्रस्ताव भी होना चाहिए, जिनके लिए प्रासंगिक बने रहने के लिए प्रभावी नियंत्रण होना चाहिए। ब्राउन और हॉवर्ड (2002) के अनुसार बजटीय नियंत्रण को, लागत को नियंत्रित करने की प्रणाली के रूप में देखा जा सकता है जिसमें विभाग को समन्वित करने और बजट की तैयारी शामिल है, जिसमें उस बजट के साथ वास्तविक प्रदर्शन की तुलना करना और अधिकतम लाभप्रदता प्राप्त करने के लिए परिणामों पर कार्य करना शामिल है। उपरोक्त पदों से, इसका सीधा मतलब यह है कि बजटीय नियंत्रण प्राप्त करने के लिए, वास्तविक प्रदर्शन को बजटीय लक्ष्य के खिलाफ, नियमित अंतराल पर मापा जाना चाहिए ताकि प्रदर्शन का सही मूल्यांकन किया जा सके। प्रबंधन को सबसे पहले उन लक्ष्यों और मानकों को स्थापित करना होगा जो इसे निर्देशित करेंगे, अपना लक्ष्य तैयार करेंगे, जिसके खिलाफ वास्तविक प्रदर्शन की तुलना स्थापित मानक के साथ की जा सकती है और यदि कोई विचलन होता है, तो सुधारात्मक कार्रवाई भी बाद में की जा सकती है ॽ बजटीय नियंत्रण का उद्देश्य प्रबंधन को सबसे कुशल तरीके से व्यापार करने में सक्षम बनाना है। स्कॉट (2000) अनुसार, बजटीय नियंत्रण एक प्रशासनिक तकनीक से अधिक है जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि प्रबंधन कार्यों को अच्छी तरह से व्यवस्थित और समन्वित अंदाज में किया जाता है। उनके अनुसार, बजटीय नियंत्रण का उद्देश्य किसी संगठन के भीतर संचार को सीधा करना है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि बजटीय प्रावधान लक्ष्य उन्मुख रहें। बजटीय नियंत्रण समान रूप से कुछ मौलिक कार्यों (जैसे प्रशासन नियंत्रण, बिक्री के प्रयास की दिशा, उत्पादन योजना, स्टॉक पर नियंत्रण, मूल्य निर्धारण, वित्तीय आवश्यकता, व्यय नियंत्रण और उत्पादन) के लिए आधार प्रदान करता है।

पूर्वगामी को देखते हुए, बजटीय नियंत्रण के मूल उद्देश्य में निम्नलिखित शामिल हैं:

1. वित्तीय योजना की तैयारी में प्रबंधन के सभी स्तर के विचारों को एक साथ लाने में सहायक।
2. संगठनात्मक नियंत्रण को केंद्रीकृत करना।
3. प्रत्येक कार्यप्रणाली को नियंत्रित करने के लिए जिससे कि सर्वोत्ताम संभव परिणाम प्राप्त हो सकें।
4. जब अप्रत्याशित परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं तो प्रबंधकीय निर्णय के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करना।
5. आय और व्यय की योजना और नियंत्रण करना ताकि अधिकतम लाभप्रदता प्राप्त हो सके।
6. यह सुनिश्चित करने के लिए कि व्यवसाय के कुशल संचालन के लिए पर्याप्त कार्यशील पूंजी उपलब्ध है।
7. एक पूर्वानुमान ढांचा प्रदान करना जिससे कि वास्तविक प्रदर्शन को मापा जा सकता है।

3. कार्यपद्धति – सर्वेक्षण अनुसंधान डिजाइन और प्रतिशत सांख्यिकी पद्धति के माधयम से, इस अध्ययन ने भारत के राष्ट्रीय ताप विद्युत् निगम पर विशेष धयान देने के साथ, सरकारी स्वामित्व वाले संगठनों में बजट

और बजटीय नियंत्रण की एक व्यवस्थित समीक्षा की गयी हैं। इस डिजाइन का विकल्प इस तथ्य के कारण था कि शोधकर्ता ने प्रश्न में मुद्दे के तुलनात्मक और गहन मूल्यांकन की आवश्यकता के कारण इसे उपयुक्त माना। अध्ययन की आबादी में संगठन के शीर्ष प्रबंधन और मधयम स्तर के प्रबंधन कर्मचारी शामिल थे जो बजट की तैयारी में सक्रिय रूप से हिस्सा लेते हैं। प्राथमिक डेटा उत्तरदाताओं को प्रशासित एक अच्छी तरह से संरचित प्रश्नावली के उपयोग के माध्यम से प्राप्त किया गया, जबकि माध्यमिक डेटा राष्ट्रीय ताप विद्युत् निगम के वार्षिक वित्तीय विवरणों से प्राप्त किए गए। प्रतिशत सांख्यिकी पद्धति का उपयोग करके एकत्रित डेटा का विश्लेषण किया गया। अध्ययन के लिए पहले विकसित किए गए शोध सवालों के जवाब में कच्चे स्कोर और उनके समकक्ष प्रतिशत का उपयोग भी किया गया।

4. परिणाम और निर्णय – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य सरकारी स्वामित्व वाले संगठनों में बजट और बजटीय नियंत्रण की एक व्यवस्थित समीक्षा करना हैं। प्राथमिक और द्वितीयक दोनों स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण और व्याख्या को समीक्षा के तहत लाया गया है ताकि इस अध्ययन में उठाए गए प्रासंगिक प्रश्नों का उत्तर दिया जा सके। इस अध्ययन में उठाए गए सभी मुद्दों से, यह अनुमान लगाया जा सकता है कि बजट और बजटीय नियंत्रण का विषय एक समस्या के रूप में हो सकता है, जबकि किसी भी परिणाम उन्मुख संगठन के प्रदर्शन पर सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव को बढ़ाने में इसका महत्व (विशेष रूप से सरकारी स्वामित्व वाले व्यवसायों में) अत्यधिक बल नहीं दे सकता हैं। विश्लेषण के परिणाम से पता चलता है कि :

1. अधिकांश उत्तरदाता इस बात से सहमत हैं कि बजट किसी भी संगठन (चाहे वह निजी हो या सार्वजनिक) में व्यावसायिक गतिविधियों की योजना बनाने के प्रभावी साधन हैं।
2. यह पता चला कि एक संगठन के वास्तविक प्रदर्शन का एक दिए गए लेखांकन अवधि के भीतर तैयार किए गए विभिन्न बजटों के साथ सीधा संबंध है।
3. बजट निष्पादन पर नियंत्रण उपाय संगठनों के प्रदर्शन पर एक प्रासंगिक जाँच के रूप में कार्य करता है।
4. बजट समितियों और बजट अधिकारियों द्वारा अपर्याप्त योजना (संगठन के प्रकार पर निर्भर करता है) ज्यादातर बजट प्रदर्शन में विसंगतियों और विचरण के लिए जिम्मेदार होती है।
5. बजट और बजटीय नियंत्रण एक सत्य साधन है जो प्रबंधकों और रणनीतिक प्रबंधन को संगठन के भविष्य के लिए पर्याप्त रूप से सोचने और योजना बनाने के लिए विवश करता है।
6. एक आम सहमति है कि बजटीय नियंत्रण उचित निर्णय लेने में प्रबंधन को नियंत्रित करता है और प्रभावी और कुशल संगठनात्मक गतिविधियों के लिए एक मूल बनाता है।
7. एक अच्छी बजटीय प्रक्रिया संगठन के उन हिस्सों में संसाधनों को आवंटित करने का एक साधन प्रदान करती है जहां उनका प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा सकता है।
8. एक प्रभावी और परिणाम उन्मुख बजट वह है जो लक्ष्यों और उद्देश्यों को परिभाषित करता है जो प्रदर्शन के मूल्यांकन के लिए बेंचमार्क के रूप में काम करते हैं।

5. निष्कर्ष और सुझाव – सरकारी स्वामित्व वाले संगठनों में बजट और बजटीय नियंत्रण की एक व्यवस्थित समीक्षा करने और भूमिका निभाने के बाद वे कॉर्पोरेट उद्देश्यों को पूरा करने और लाभ अर्जित करने का निर्धारण करते हैं, यह निष्कर्ष निकालना आवश्यक है कि बजट और बजटीय नियंत्रण किसी भी संगठन के लिए एक अनिवार्य उपकरण है। जब बजट और बजटीय नियंत्रण से संबंधित मामले किसी भी संगठन (विशेष रूप से सरकारी स्वामित्व वाले संगठनों) द्वारा सावधानीपूर्वक योजनाबद्ध और कार्यान्वित किए जाते हैं, तो इससे लागत में कमी और राजस्व में वृद्धि हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप लाभ अधिकतम होता है। हालांकि बजट और बजटीय नियंत्रण संगठन के प्रदर्शन की दक्षता को बढ़ा सकता है, लेकिन यह धयान दिया जाना चाहिए कि यह कोई जादुई छड़ी के रूप में नहीं है जो प्रभावी प्रबंधन की जगह ले सकता है या संगठन की चिंता को दूर करने और संचालन की स्थिरता सुनिश्चित कर सकता है।

शोध द्वारा यह पता चलता है कि जब बजट पूर्वनिर्धारित और प्रभावी नियंत्रण के ढांचे के भीतर प्रभावी रूप से सबसे अधिक उपयोग किया जाता है, तो यह संगठनात्मक योजनाओं और कार्यों को प्राप्त करने और समन्वय करने के साधन के रूप में कार्य करता है। यह समान रूप से उनके निष्पादन के लिए जिम्मेदार लोगों को, योजनाओं को संप्रेषित करने के एक अच्छे साधन के रूप में कार्य करता है, जबकि एक ही समय में सभी स्तरों पर प्रबंधकों और कर्मचारियों को प्रेरित करने और वास्तविक प्रदर्शन को मापने के लिए एक मानक के रूप में सुविधा भी प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, इस शोध के निष्कर्षों से यह भी पता चलता है कि राष्ट्रीय ताप विद्युत् निगम एक ऐसा संगठन है जो काफी सुव्यवस्थित है, क्योंकि ऐसा देखा जा सकता है कि इस संगठन द्वारा सबसे अधिक प्रासंगिक प्रबंधन सिद्धांतों का लाभ उठाया गया है। इसलिए यह कहा जाना आवश्यक है कि कोई भी प्रणाली कितनी भी प्रभावी या कुशल क्यों न हो, फिर भी उनमे सुधार की आवश्यकता होती है क्योंकि नियमित अंतराल पर आवधिक समीक्षा आवश्यक होती है। नतीजतन, उपरोक्त निष्कर्षों और चर्चा के आधार पर, निम्नलिखित सुझाव दिया जाता हैं कि :– लचीली बजट प्रणाली ज्यादातर सरकारी स्वामित्व वाले संगठनों से जुड़ी होती है, और इस तरह, यह अनुशंसा की जाती है कि शून्य–आधारित बजटरी को समान रूप से इसके कई लाभों को देखते हुए अपनाया जाना चाहिए। शून्य आधारित बजट प्रणाली एक ढांचा प्रदान करता है जो शुरुआत से प्रत्येक प्रक्रिया के मूल्यांकन को सक्षम करता है। बजट व्यय के प्रत्येक आइटम की समीक्षकों द्वारा जांच की जानी चाहिए और बजट का हिस्सा बनने से पहले इसे उचित ठहराया जाना चाहिए। यह अनुमानों या बजटों को अधिक यथार्थवादी बनाता है क्योंकि यह वर्तमान परिस्थितियों पर आधारित है। यह संगठन को अपने संसाधनों के प्रबंधन और आवंटन के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में इस तरह के दृष्टिकोण का उपयोग करने में सक्षम करता है और अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सहायता भी करता हैं। इस तथ्य के आधार पर कि वास्तविक बजट तैयार करना, समन्वय और कार्यान्वयन लगभग विशेष रूप से दोनों शीर्ष स्तर के प्रबंधन की जिम्मेदारियां होती हैं। इसलिए यह सिफारिश की जाती है कि इकाइयों और विभागों के प्रमुखों को बजट की तैयारी में अधिक शामिल होना चाहिए, न कि केवल कार्यान्वयन होना चाहिए।

इस प्रकार, प्रत्येक विभाग या उप–विभाग के बजट का उचित समन्वय बजट के सभी घटकों की सावधानीपूर्वक जांच के माध्यम से सुनिश्चित किया जा सकता है, इससे पहले कि शीर्ष प्रबंधन अंतिम अनुमोदन करता है। नतीजतन, बजट और बजटीय नियंत्रण प्रबंधन दक्षता और उच्च उत्पादकता के सुधार में योगदान करते हैं; बजट समिति को बजट के

कार्यान्वयन में शिक्षित एवं प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए। यह उन्हें वास्तविक बजट सम्बन्धी प्रावधानों के पालन के महत्व को समझने में सक्षम बनाता है। इस प्रकार, बजट शिक्षा एवं सम्बंधित प्रशिक्षण को, संगठन के सभी प्रमुख अधिकारियों एवं सम्बंधित कर्मचारियों के लिए नियमित अंतराल पर आयोजित किया जाना चाहिए, क्योंकि इस तरह के अभ्यास प्रबंधन दक्षता और उच्च उत्पादकता को बढाया जा सकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

शोध पत्रिकाएँ एवं जरनल

1. आर. के. शर्मा एवं शशि के. गुप्ता (1999) वित्तीय प्रबंध, कल्याणी पब्लिकेशन, लुधियाना
2. डॉ. आर. के. कुलश्रेष्ठ (1998) वित्तीय प्रबंध, साहित्य भवन पब्लिकेशंस (प्रा.) लि., आगरा
3. डॉ. एस. एम. शुक्ला एवं डॉ. एस. पी. सहाय (2013) स्यांख्रिकी के सिद्धान्त, साहित्य भवन पब्लिकेशंस (प्रा.) लि., आगरा
4. एम. एल. अग्रवाल (1975) परिव्यय लेखांकन, साहित्य भवन, आगरा
5. सी.आर. कोठारी (2010) रिसर्च मेथोडोलाजी, हिमालया पब्लिकेशन, दिल्ली
6. Marc Robinson and Jim Brumby (Nov. 2005), Does Performance Budgeting Work? An Analytcal Review of the Empirical Literature, International Monetary Fund.
7. Maria Gustafsson & Rebecca Parsson (May 2010), Budget – a perfect management tools. (A Case study of AstraZeneca), School of Business, Economics and Law, University of Gothenburg.
8. Greg Hager, Ginny Wilson (2001), Performance based budgeting: Concepts and examples adopted by Program review and Investigations, Legislative research commission (Research Report No. 302).
9. Richard D. Young (January 2011), Performance-Based Budget Systems, Usc Institute For Public Service And Policy Research.
10. John Hagen (1968), Program Budget, Centre for the Study of Evaluation, UCLA Graduation School of Education, Los Angles, California (CSE Report No.7).

****

Print Media And The Challenges Of Social Media

Anil Malviya* **Dr. Vijay Jain****

Abstract - This paper analyses the print media and the difficulties presented by online life. It is no uncertainty that online networking has modified the news assembling and handling worldview however the print medium stays pertinent in news spread. The examination is secured on the innovation determinism hypothesis by Marshall McLuhan. The hypothesis expresses that media innovations shape how we as people in a general public think, feel act and how a general public works as we move starting with one innovation age then onto the next. In another manner, McLuhan anticipated that we would be amidst the upheaval and that the world will never be the equivalent because of the development in innovation. Insightful diaries and meeting papers shaped the hotspots for auxiliary information for this examination. Discoveries from the examination uncover that the new media have caused the print media, especially the paper a colossal loss in income and promotion.

Keywords - Media, Print media, Social Media, New Media, Technology.

Introduction - The media scene has been in steady transformation. Improvement in Information and Communication Technology (ICT) has made data sharing simpler (Udenze, 2017). It is hard to recognize the customary media from the new media right now progression. Mill operator et al (as referred to in Udenze, 2017, p.148) compactly contend that "the development in ICTs have shut the hole between the regular and private media". The web has altered data social affairs and scattering. Talabi (2011) declares "the web changes the substance of correspondence; writers are starting to have another method for bundling and shattering news to people in general". Online networking is a significant branch of the Internet (Udenze, 2017). Rajendran and Thesinghraja (2014), present that online life has been a piece of the present society. The researchers further opine the nearness of the new media and internet-based life has represented a test to the printed paper. Readership propensities appear to be changing as clients go to the Internet with the expectation of complimentary news and data. The elective wellspring of news isn't just free yet, in addition, acts quickly. The "moment" highlight of the internet based life and the online news were one of the shrewd alternatives for the purchasers to acknowledge it comprehensively, (p. 609).

On the other, some different researchers accept online life has improved the social event and scattering of news. Talabi (2011) contends consequently past sending email to a central command and getting directions from a similar web has made new open doors for columnists to sell stories not exclusively to other media houses locally however over the globe. The web has made the world littler for columnists to investigate. This brilliant innovation has likewise made a research on different topics accessible through visit and trade of messages. This has made new markets and types of news coverage where columnists practice and work as online writers, content directors or editors for specific sites. From the previous, it tends to be seen that web-based life resembles a two-edged sword. Online networking has its upsides and downsides. This innovation has democratized data dispersal and simultaneously made another medium-papers to endure. In general, internet-based life are a vital piece of society. Mechanical advancements are making a general public in which internet-based life is installed (Ahmad, n.d).

The goal of the Paper: The point of this paper is to fundamentally assess the test of the internet based life on the print media, especially papers, to feature rising patterns in print media. This investigation additionally takes a gander at the capability of web-based life and how it has influenced conventional news coverage.

Technique: Data for the investigation were sourced optionally by means of insightful diaries and meeting procedures, subsequently a subjective philosophy.

Hypothetical Framework: Theoretical structure is the premise whereupon any academic work is based on. This investigation is moored Marshall McLuhan's (1963) Technology Determinism hypothesis (TD).

Obalanlege (2015), states that most new media and news coverage contemplates depending on innovation determinism hypothesis. The hypothesis expresses that media advancements shape how we as people in a general public think, feel, act and how a general public works as we move starting with one innovation age then onto the next. In another manner, McLuhan anticipated that we would

*Research Scholar, Faculty of Management, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, Anand Institute of Management, Bhopal (M.P.) INDIA

be amidst the upheaval and that the world will never be the equivalent because of the development in innovation. The Internet has made the "worldwide town" that McLuhan imagined in the mid-1960s.

McLuhan saw each new type of media advancement to be an expansion of some human personnel; the book is an augmentation of the eye, the wheel is an expansion of the foot, attire is an augmentation of the skin, electronic circuit or the PC is an augmentation of the focal sensory system. As per Marshall McLuhan, the medium is the message.

Talabi (2011) composes that with the progression of innovation, the media calling after test running the impacts of the most recent medium at that point investigates its possibilities to contact the crowd. Today, reporting relies upon new media (Talabi, 2011). Web-based social networking is an extraordinary determinant of how news data is accumulated, prepared and dispersed. Innovation determinism infers that innovation decides the working of society.

It is no uncertainty that the new media have modified ordinary news strategies. By and large, this hypothesis considers innovation to be the driver of social change (Obalanlege, 2015).

Reasonable Clarification - Online life throughout this paper, web-based life, person to person communication destinations, and new media will be utilized reciprocally. Internet-based life is a medium that has come to remain. Its approach has tested the media business from various measurements. The momentary component of this medium has charmed people, media associations and media specialists to it. Hasan and Pfaff (as referred to in Ekwenchi and Udenze, 2014, p.1) "beneficially recorded the new media as including sites, sound, and video spilling, visit rooms, email, online networks, web publicizing, DVD and CD-ROM media, augmented reality condition, Internet communication, advanced cameras, and portable processing". This order of new media is sweeping. The arrangement inventoried the new media to incorporate all types of new advances. So also, Agboola (2014, p.105), accept that "most advances depicted as "new media" are computerized, and regularly have attributes of being networkable, thick, compressible, intuitive and unbiased. Models are the web, sites, PC interactive media, games, CD-ROMs, and DVDs". Logan (2010) sees new media that are intuitive, fuse two registering instead of "old media, for example, the phone, radio, and TV.

Boyd and Ellison (2007) portray the interpersonal organization as an electronic help that permits the individual to: establish an open or semi-open profile inside a limited framework, articulate a rundown of different clients with whom they share an association and view and cross their rundown association and those made by others inside the framework. The main realized long range informal communication site was Six degrees, propelled in 1995.

Kaplan and Haenlein (2010) characterize online networking as "a gathering of Internet-put together applications that work with respect to the ideological and innovative establishments of Web 2.0, and that permit the creation and trade of client produced content "(p. 60). The online networking is viewed as an elective wellspring of open correspondence (Poell and Borra, 2011).

Web-based social networking contrast from regular media in various manners, including quality, recurrence, ease of use, quickness, and lastingness (Adegbilero and Ikenwe, n.d).

Kaplan and Haenlein (2012), sets that online networking has become an essential current strategy for speaking with each other. Kaplan and Haenlein believe it to be comprised of: cooperative tasks, for example, Wikipedia, web journals, and small scale online journals (eg.Twitter), content networks (eg. Youtube), informal communication destinations (eg. Facebook), virtual game universes (eg.World of Warcraft), and virtual social universes (eg. Second Life) (2012).

The new media is best described by its "chronicle content" that can be effectively and continually got to (Rajendran and Thesinghraja, 2014). Agber (2017) diagrams the highlights of web-based social networking, therefore:

1. Participatory media
2. Personal intrigue/online network
3. Conversational
4. User-created content
5. Turns down the limit of origin

The new media can be portrayed as close to home media; it gives its clients a feeling of proprietorship. The client can without much of a stretch recover data at some random time. The Print Media Despite the rise of the new media, the print media stay a solid power to deal with in the media scene. The print media prospered in the pre-new media period when access to new electronic innovations was constrained. With the coming of these advancements, the elements of data get to has changed fundamentally (Rajendran and Thesinghraja, 2014). The print media, especially the paper despite everything appreciates readership from the maturing populace of the general public. One quality of the print media is in its capacity to spread all around investigated data. This is not normal for the internet-based life that is generally open to anyone. The entryway keeping hypothesis despite everything applies to customary media to date. Kurt Lewin (1947) established and promoted the gatekeeping hypothesis. This hypothesis empowers news supervisors to strainer out superfluous things that are considered not newsworthy. Shoemaker (as referred to in Barzilai-Nahon, n.d, p.3) characterizes gatekeeping along these lines:

Simply put, gatekeeping is the process by which the billions of messages that are available in the world get cut down and transformed into the hundreds of messages that reach a given person on a given day." Ten years later Shoemaker admitted a broader concept of gatekeeping:

"However, the gatekeeping process is also thought of as consisting more than just selection. In fact, gatekeeping in mass communication can be seen as theoverall process through which social reality transmitted by the news media is constructed, and is not just a series of "in" and "out" decisions.

These days, papers keep up a solid online nearness. Thomas (2013, p.10) "The online papers follow the decisions of intelligence, speed, and selectivity, with clients having the option to choose their preferred subjects through the guide of hyperlinks or pamphlets. Right now, open a continuous correspondence channel among them and perusers, which allows a live stream in discussions and in chances to offer criticism to stories.

Discoveries from the examination uncover that punched paper has a portion that is devoted to happenings on the Internet. The I-Punch is similarly named by The Punch as"… your day by day web screen". This further clarifies the aim of the segment. The I-Punch was fused into the paper in February 2013 The I-Punch has since kept up a consistent portrayal on pages 14 and 15 of the punch paper Monday to Friday.

The I-Punch catches new media issue in seven (7) subsections:

1. i-tip, on the highest point of page 14, a sort of quotable statement via web-based networking media or innovation;
2. Technology news generally winnowed from the web, on the furthest left of page 14;
3. "Buzz… web-based life journal remarks of the web open from systems on at any rate three topical issue class;
4. Report troubling on remarks from the issue in the general public, and furthermore on significant characters exercises on Twitter or Facebook;
5. "Trending-Nigeria", at the highest point of page 15, with mainstream names standing out as truly newsworthy bulleted as it would show up on Twitter;
6. An educative corner on the extreme right-hand side of page 15 just beneath "Drifting Nigeria" to show the online life and other Internet advancements;
7. And additionally, there is the Photo of the day that catch believably interesting picture sourced from Facebook, BBM, web journals and other online networking stages.

Adegbilero-Owari and Ikenwe likewise found that the new media additionally unite on the communicating medium. The researchers found a model in the Channels TV I-witness highlight. Conventional communication media likewise utilize the utilization of web-based social networking stages like Twitter, Facebook, email, YouTube, and so on in their telecom. It is a typical sight to see a remark from the web-based life stages on most communication programs. The utilization of internet-based life stages empowers a feeling of intuitiveness in communication programs.

Reviving the Print Media Industry: Newspaper The paper business needs to face the opposition presented by the new media. The new media is quick removing the paper business from the business. Be that as it may, the inquiry is, in the midst of the forces of the new media, will the print media endure the holocaust. Agboola (2014) in his intelligence offers this arrangement:

The path forward for papers, standard, just as other customary media especially in Nigeria, would be as a matter of first importance, to improve their validity. As it is presently there are sections of the general public that consider standard to be the mouthpiece and purposeful publicity apparatus of the decision government (p.110). The passageway of option online wellsprings of news additionally denoted another time of computerized rivalry. Consequently, it does the trick to specify that the suspicion by media examiners and analysts that the paper business is in never-ending decay is half valid and reliant on conditions. Along these lines, the possibility of the "demise of print" is better established on the sensible evaluation of the effect of innovative progressions (p.11).

Conclusion - Internet-based life has caused a change in outlook in the newsgathering and spread procedure. News crowds are the two customers and makers of news. In spite of this move, the customary print medium stays a significant supporter of the data conveyance chain. Van Doorn (as referred to in Agboola, 2014, p.111) "agrees that news coverage won't be wiped out, notwithstanding, it should coincide and attempt to separate itself". From the prior statement, it very well may be contended that the print media is coinciding one next to the other the new media. The assembly of various media on a medium uncovers that somewhat no medium can remain all alone as discoveries from this examination uncover that the customary media meet on the new media and the other way around. In as much as innovation will keep improving, it will be hard to anticipate the measurement the media scene will accept later on.

References :-

1. Adegbilero-Iwari, I. & Ikenwe, J.I. (N.D). New Media in the Old: the Nigeria Case. Accessed from: https://www.ifla.org/.../newspapers/.../2014_ifla_slc_adegbilero-iwari_ikenwe_-_new...
2. Agber, K., "Social media and the society. Unplished lecture note. M.A Media Arts class, University of Abuja. 2017.
3. Agboola A.K., "The Influence of New Media on Conventional Media in Nigeria". Academic Research International Vol. 5(4).pp. 105-113. 2014.
4. Ahmad, N., "The decline of conventional news media and challenges of immersing in new technology@. Retrieved from: https://www.gla.ac.uk/media/media_529633_en.pdf
5. Barzilai-Nahon, K., Gatekeeping: A Critical Review", Accessed from: jtc501.pbworks.com/w/file/fetch/44979604/BarzilaiNahon%202009.pdf

6. Boyd, d., & Ellison, N. B., „Social Network Sites: Definition, History, and Scholarship .Journal of Computer-Mediated Communication, 13/2: 210–230. 2007.
7. Ekwenchi, O. & Udenze, S., “Youth and Political Apathy: Lessons from a Social Media Platform. International Journal of Social Sciences and Humanities Reviews. Vol.4 No.4. p.1-8. 2014
8. https://www.channelstv.com/iwitness/ Kaplan, A. M., & Haenlein, M., “Users of the world, unite! The challenges and opportunitiesof social media , Business Horizons, Vol. 53, No.1. pp.59-68. 2010.

****

Astudy Of Problems And Expectations Of Teacher Tarining Programme

Dr. Dinesh Kumar*

Introduction - History of Teacher Education has been coming from Vedic Period on the demand of society. The society has made by the people. The people have learn more things by the Nature, people, society, materials made by the people on the basis of his/ her require. The learning process has been leading by the learned person of the society, which called teacher. So,we can say that a teacher is real leader of the society. The teacher and learner are like the jug and mug. Jug is greater than Mug in reference of knowledge and experience. The Education for the teacher is known by Teacher Education and the curriculum of teacher education is called teacher education programme. From the old days the teacher known as a eminent and respectable personality of the society but now these days the quality in teacher and teacher education is decreasing day by day. The concept of teacher has been changed at basic level, and the pedagogy and methodology of teacher training programme has been also changed in present education system at every stage in India. We can say that the quality of education is very poor in India basically Uttar Pradesh, Madhya Pradesh Chhattis Garh, Jharkhand and Bihar. Plato said, "if you want to destroy any state just destroy its education system." it is vehemently accepted that acquisition of knowledge is the more important and necessary thing for the development of human being.In the extension process of education is a main factor which has decreased the quality in education. Teacher Education is a part of education system, we are talking about the only teacher education in this paper. Teacher Education is a programme of educational research and training of persons to teach from pre-primary to higher level. To maintain the quality in teacher education, National Council For Teacher Education(NCTE) is acting with help of Regional Part in India.

Rational of the Study - Pradhan(1995) conduted a study on Environmental awareness among teacher trainees and found that the master degree holder exhibited higher environmental awareness than the bachelor degree holders. Srivastava(2007) has focused on some basic training areas which are providing by Distance Education. There are some skills and competencies in these areas which are important for a good teacher in his/her professional life. Gupta(2007) has focused on strengths, weaknesses, opportunities and threats (SWOT) analysis, which can helps for more effectively to train in-service teachers.Sahoo, Yadav and Kumar(2010) have focused on the importance of student support services for distance mode learners and some major problems which are faced by distance mode learners. Singh& Singh(2012) have studied on environmental awareness among B.Ed. students and found that no effect of gender and stream on environmental awareness, but general students are more aware than the SC/ST students. Kaur(2012) has studied on opinion of B.Ed. students about teacher Eligibility Test and found that a considerable percentage of students agree with the TET. Srivastava (2014) has indicated some anxiety at under graduate level students of eastern UP.There are many studies in deferent variables for teacher trainees and researcher feel that there are some problems and constrains in teacher education in eastern part of UP. So, researcher has decided to indicate the problems and expectations of teacher trainees in eastern part of UP.

Objectives of the Study - The objectives of the study are given bellow:

1. to discuss the problems of B. Ed. trainees.
2. to find the solutions of their problems of B. Ed. trainees.

Methodology - A descriptive survey method has been used for this study.30 Students of B.Ed. programme have been purposively selected in the sampling. 18 students from SMMTD college Ballia and 12 students from SC college, Ballia have been selected for this study from the eastern part of U.P.. A self made open ended questionnaire has been used for data collection. Content analysis has been used for data analysis.

Findings and Discussion - In this paper researcher has been going to discuss the problems which have faced by the B.Ed. Trainees from eastern part of U.P. and solution against their problemson the basis of content analysis.

1 Problems - There are many problems which have been facing by the teacher trainees. The researcher has divided these problems in three areas which are given bellow:

a. Educational Problems,
b. Administrational Problems and
c. Personal Problems.

a. Educational Problems - There are some educational problems which are facing by teacher trainees are given

*Gulab Devi Mahila P.G. College, Ballia (U.P.) INDIA

bellow:

(i) The books are not issuing from library on the basis of needs and demand of students.
(ii) The classes are not running according to the time-table.
(iii) Teachers do not come to the class room in time.
(iv) There are no any provision for feedback in writing of practical files.
(v) There are communication gap among the students, because they come from deferent parts of our state.
(vi) The interaction among teachers and thoughts are very poor.
(vii) The teachers focus on some local students.
(viii) The college did not open regularly with due to students politics.

b. Administrational Problems - There are some administrational problems which are facing by teacher trainees are given bellow:

(i) The scholarship are not providing properly to the students.
(ii) The hostel facility is not available to the out sider students.
(iii) The college provide some extra facility to the local students.
(iv) The proctorial board also provide facility to the local students during the cheking.
(v) The students elections affects the teaching.
(vi) The college treated as a valet paper collection centre after the elections by the district election officer.

c. Personal Problems - There are some personal problems which are facing by teacher trainees are given bellow:

(i) The problems of accommodation for the outsider students.
(ii) The interaction between teacher and trainees are very poor.
(iii) Theadjustment problem for outsider students.
(iv) Transportation problem for local students.
(v) Ego creates some problems to the adolescent stage students.
(vi) The college did not run according to the academic calendar.
(vii) Some problems create during practice teaching.
(viii) Medical problems for outsider students.

(2) Solutions - There are many problems which have been facing by the teacher trainees. They have suggested some solutions to their problems, which are given bellow:

(i) Hostel facility will provide to the outsider students.
(ii) Medical facility will provide to the students.
(iii) Transportation facility will provide to the local students.
(iv) Scholarship facility will provide to the appropriate students.
(v) Practice teaching should be make in flexible form.
(vi) Students politics should be minimize and control.
(vii) The classes should be run according to the time-table.
(viii) The books should be issue to the students according to their purpose.

Conclusion - On the basis of finding of this study we can say that there are many faults in the system of education from both side of the teacher and students. So, the quality of education specially teacher education is decreasing day by day. We are not able to develop a positive attitude among teacher trainees for becoming a good teacher. We have to take initiative to maintain the quality in not only teacher education but, total education system at every stage of education.

References :-

1. Pradhan, C.(1995).Environmental Awareness among teacher trainees. *Indian Educational Abstract*, July1996,vol.-1.
2. Srivastava, Ranjana(2007). Training through Distance Education beyound Academic Excellence. *Dimentions of Distance Education*, UPRTOU, Allahabad, pp-392-96.
3. Gupta, Meenu(2007). A SWOT analysis of Teacher Education Programme imparted through Distance Mode. *Dimentions of Distance Education*, UPRTOU, Allahabad, pp-404-10.
4. Sahoo, Yadav& Kumar(2010). A study of problems and expectations of Distance Mode B.Ed. Trainees regarding SSS. *Research and Studies*, Dept. of Education, Allahabad,vol.-59&60, pp-1-9.
5. Srivastava, Savita(2014). A study of Anxiety at Under Graduate level students in eastern UP, *Gyandayini Samaj Vigyanshodh Patrika*, vol.-iv, no.3,pp-41-4.

****

An Study On Resistance To Change

Sangita Pankaj Hadge*

Abstract - Resistance to change involves of any worker behaviours intended to dishonour, stay or stop the execution of aneffort change. Workers resist change since it hovers their wants for safety, communalinterface, rank and confidence. The apparentdangercurtailing from a change might be actual or fictional, envisioned or unintentional, great or slight. Regardless of its nature, employees will try or protect themselves from the effects of change. Their schedules may series from grievances, foot-dragging and unreceptive resistance to nonattendance, disruption and work slowdowns. This paper focus on resistance of change and it also focus on reasons for resistance.
Keywords - Logical resistance, Low tolerance, status quo, Skill Downgrading.

Introduction - Employees tend to resist change; this tendency is offset by their desire for new experience and for the rewards that come with change. Surely not altogethervicissitudes are fought, as about are vigorously required by employees. Other changes are so trivial and routine that resistance, insecurity and change are conditions that effect may develop in organizational behaviour.

Reasons For Resistance - Workforcesmight resist changes for two widedetails.

1. First, they might not texturecontented with the countryside of the modification itself. It may disturb their ethicaltrust system, they may believe the decision is strictly incorrect, or they may simply be reluctant to exchange the comfort of certainty and knowledge for doubt.
2. A second reason for resistance stalks from the technique by which modification is announced. They may begrudge having been ill-informed, or they may cast-off astrictmethod that did not include them in the change sequence. Their resistance determination be unfluctuating more penetrating them in the change process. Their resistance will be even more intense if they disagree with both the nature of the change and the method used.

Types Of Resistance:

Psychological Resistance - This is constructed on feelings, thoughts and insolences. Psychological resistance is insidecommon-sense from the viewpoint of the worker'sinsolences and tempersnear change. They may fear the unknown, mistrust management's leadership, or feel that their security and self-esteem are threatened. Even though management may believe there is no justification for these feelings, they are real to employees and managers must deal with them.

1. Fear if the unknown
2. Low tolerance of change
3. Lack of trust in others
4. Need for security
5. Desire for status quo
6. Dislike of management
7. Other change agent

Logical Resistance - This is grounded on divergence with the truths, lucidcognitive, reason and discipline. Logical resistance rises from the real time and exertionobligatory to correct to change, together with new jobburdens that must be erudite. These are factualpricesstood by the workers. Even though a change may be favourable for employees in the long run, these short-run costs must first be paid.

1. Time required to adjust
2. Extra effort to releam
3. Possibility of less desirable conditions
4. Economic costs of change
5. Technical feasibility of change
6. Skill Downgrading

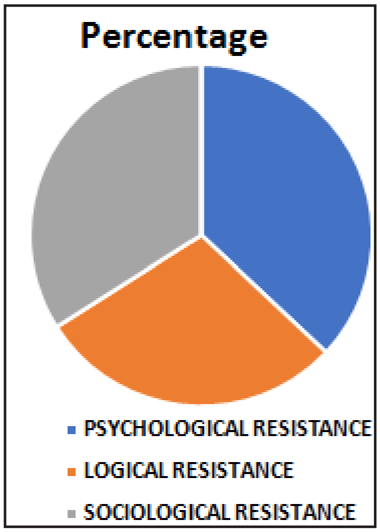

*Assistant Professor (Commerce) Samarth Mahavidyalaya Lakhani, Distt. Bhandara (Mh.) INDIA

Sociological Resistance - Sociological Resistance is assembly of a test to group benefits, standards and morals. Meanwhilecommunal values are authoritativeforces in the atmosphere, they must be carefully measured. There are political conditions, labour union values, and even different community values. On a small- group level there are work friendship and status relationships that may be disrupted by changes.

1. Opposing group values
2. Political coalitions
3. Narrow outlook
4. Vested interest
5. Desired to retain existing friendships

Importance Of Resistance:

1. Resistance encourage management to re-examine its chance proposals.
2. Employees operate as a check and balance to ensure that management properly plans and implement changes.
3. Resistance identify specific problems.
4. Management take corrective actions before serious problems develop.
5. Resistance gives information to management about the intensity of employee emotions on an issue.
6. Resistance provide emotional release for pent-up employee feelings.
7. Resistance encourage employees to think and talk.
8. Resistance encourage management to understand employees.

Stages In Resistance To Change:

Unfreezing - Unfreezing means that ancientthoughts and performs need to troupe aside so that new-fangled ones can be learned. Frequently this phase of receivingfree of old performs is just as toughas knowledge the new ones. It is an easy step to oversee while concentrating on the forthcoming change itself, but this is frequently leads to resistance to change.

Changing - Changing is the stage in which the new ideas and practices are learned. This involves portion an operative think, reason, and perform in new ways. It can be a time of misperception, bewilderment, excess, and wretchedness.

Refreezing - Refreezing means that what has been learned is integrated into actual practise. The new practices become embraced and incorporated into the employee’s routine behaviour. New knowledge is not enough to ensure its use.

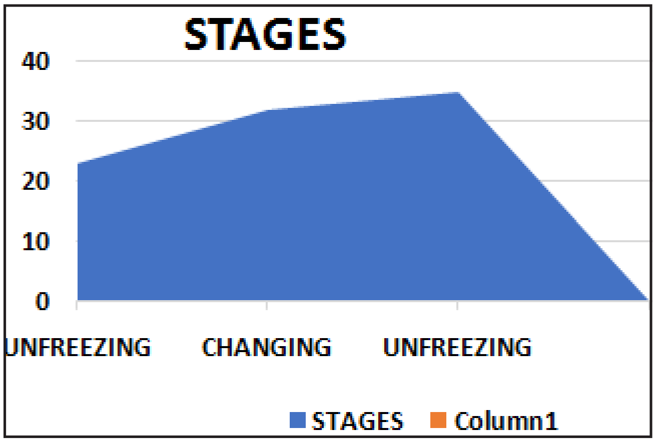

Conclusion - Change is ubiquitously, and its pace is growing. The effortsituation is filled with change that, while constructive in determined, upsets the communal system and needs employees to regulate. When they do, employees rejoin with their reactions as well as balanced reasoning. Resistance to change can effort on the change itself or on the way it was presented. Change has charges as well as aids, and both must be considered to regulate not effects. Workers tend to resist change because of its charges, including its intellectual costs. Management are fortified to apply a methodical change processstraddling unfreezing, change and refreezing activities. Since there is an organisational grantarc for change, time is required for the latentassistances of change to happen. Change is essential for any organisation for their growth and maintain healthy relationship between employer and employees working in the organisation.

References :-

1. Organizational Behavior, John W. Newstrom, Tata McGraw- Hill Publishing Company Limited, New Delhi.
2. Organizational behaviour, Sharma, Vrinda Publications pvt. Ltd., New Delhi.
3. Organizational behaviour, Datta, Himalaya Publications pvt. Ltd., New Delhi.
4. Organizational Behaviour, khanka, S.Chand publications, New Delhi.
5. www.organisationalbehavior.co.in
6. www.resistancetochange.co.in

****

आर्थिक विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों का मूल्यांकन

माया पिण्डोलिया*

प्रस्तावना – महात्मा गांधी के अनुसार 'भारत का आर्थिक विकास उसके लघु एवं कुटीर उद्योगों में निहित है।' संसार के सभी देश चाहे वे विकसित हो या विकासशील उनके कुल राष्ट्रीय उत्पाद व रोजगार का लगभग 50 प्रतिशत लघु उद्योगों से प्राप्त होता है। बड़े उद्योगों की स्थापना करने में भारी मात्रा में पूँजी, संयंत्र, मशीनों की आवश्यकता होती है। किन्तु लघु उद्योग में कम पूँजी की आवश्यकता होती है, और प्रशिक्षण की भी आवश्यकता ज्यादा नही होती है। लघु उद्योग आर्थिक व सामाजिक विनियोग को बचाते है और इस विनियोग का उपयोग सीधा उत्पादन प्रक्रियाओं में किया जा सकता है। लघु उद्योगों में लगने वाले मशीनरी व संयंत्र के आयात की बहुत कम आवश्यकता होती है इससे विदशी मुद्रा की बचत होती है, और इस बची हुई विदेशी मुद्रा का उपयोग उच्च अधिमान्यता वाली परियोजनाओं में किया जा सकता है जहाँ इनकी बहुत आवश्यकता रहती है।

लघु उद्योग अर्थव्यवस्था के विकेन्द्रीकरण को गति प्रदान करते है लघु उद्योगों के द्वारा लोगों को स्वयं का रोजगार प्राप्त होता है जो कि आर्थिक विकास में सहायक होता है। लघु उद्योगों के महत्व को निम्न प्रकार भी बताया जा सकता है–

1. आज देश की गंभीर समस्या बेरोजगारी है। बेरोजगारी की इस समस्या को दूर करने के लिए ऐसी विधि को अपनाया जाना चाहिए जिससे श्रम अधिक व पूँजी कम लगे, इस समस्या को लघु उद्योगों को स्थापित कर दूर किया जा सकता है।
2. लघु उद्योगों में कम पूँजी की आवश्यकता होती है जिससे पूँजी की बचत होती है इसी बची हुई पूँजी का उपयोग बड़े उद्योगों के उत्पादन कार्य में किया जा सकता है।
3. पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में बड़े उद्योगों में आर्थिक शक्ति कुछ ही हाथों में केन्द्रीत हो जाती है जबकि छोटे उद्योग समानता का वातावरण बनाकर आर्थिक शक्ति के केन्द्रीयकरण को रोकते है इससे आर्थिक शोषण कम होता है।
4. इन उद्योगों की स्थापना में कम पूँजी एवं तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है क्योंकि ये उद्योग श्रम प्रधान तकनीक पर आधारित होते है।
5. इन उद्योगों का विकास प्राय: श्रम प्रधान तकनीक पर आधारित होता है इस कारण इन उद्योगों के विकास के लिए आयातों पर कम निर्भर रहना पड़ता है इससे देश में विदेशी मुद्रा की बचत होती है।
6. इन उद्योगों द्वारा उत्पादित बहुत सी कलात्मक वस्तुओं का विदेशों में निर्यात किया जाता है जिससे विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है जो कि आर्थिक विकास का सूचक है।
7. हमारे देश की 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। जनसंख्या की कृषि पर निर्भरता को कम करने के लिए लघु उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। ये उद्योग ग्रामीण क्षेत्र में बेकारी के दिनों में लोंगों को रोजगार प्रदान करते है।
8. भारत में ग्रामीण एवं अर्द्ध शहरी क्षेत्र में अनेक ऐसे सीमित संसाधन है जो उद्योगों की अनुपस्थिति में किसी काम के नहीं आते है लघु उद्योगों के द्वारा इन साधनों का उचित उपयोग किया जा सकता है इससे देश में खुशहाली में वृद्धि होगी।

उद्देश्य :–

1. आर्थिक विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों के योगदान का अध्ययन करना।
2. लघु एवं कुटीर उद्योगों की संख्या, विनियोग व रोजगार का अध्ययन करना।

प्रविधि – अध्ययन का क्षेत्र सम्पूर्ण भारत है। यह प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक संमकों पर आधारित है। जिसमें 2010–11 से 2016–17 तक के आँकड़े एकत्रित किये गये है। इनका संकलन भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट, आर्थिक समीक्षा – भारत सरकार एमएसएमई, जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, इन्दौर के प्रपत्रों से किया गया है।

● **लघु कुटीर उद्योगों का इतिहास –** प्राचीन काल से भारत औद्योगिक दृष्टि से एक उन्नतशील एवं धनाढ्य देश माना जाता है। नि:सन्देह यहाँ आधुनिक उद्योग विकसित नहीं हुए थे, यद्यपि कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग की वस्तुओं के लिए भारत विश्व विख्यात था भारत वर्ष के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में गृह उद्योग और शिल्प कला प्रधान तत्व रहे है। ढाँका की मलमल, काश्मीर की शालें, चद्दरें, गलीचें, बनारस, की साडियाँ, लकड़ी के खिलौने आदि भारत की प्रमुख निर्यातक वस्तुऐं थीं। प्रत्येक गाँव से बढ़ई और मोची इन कार्यो को आज भी करते पाये जाते हैं ये उद्योग गृह उद्योग तथा लघु कुटीर उद्योगों के रूप में संचालित किए जाते थे।

अतीत काल में भारत में लघु उद्योग अत्यंत ही गौरवपूर्ण अवस्था में था। इस उद्योग का पतन उसी दिन से प्रांरभ हो गया जब से यूरोपीय व्यापारियों को व्यापार करने की अनुमति दी गई। भारत के उद्योग इंग्लैंड में बनी मशीनों के द्वारा उत्पादित वस्तुओं की प्रतियोगिता में टिक न सके। इसके अतिरिक्त अंग्रेजो के शासनकाल में उनकी नीति भारतीय उद्योगों के विपरीत थी। अपने देश में तैयार वस्तुओं को भारत में लाने लगे। वे वस्तुऐं इतनी आकर्षक एवं सस्ती थी कि उनकी प्रतियोगिता में भारतीय कुटीर उद्योग टिक न सके। अंग्रेजो ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा एवं सभ्यता का भी विस्तार किया जिससे लोगों की रूचि, पसन्द, स्वभाव में भी परिवर्तन होने

* शोधार्थी, वाणिज्य अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

लगे। वे देश में बनी वस्तुओं की अपेक्षा इंग्लेंड और यूरोप में बनी हुई वस्तुओं को अधिक पसन्द करने लगे जिसके कारण स्वदेशी वस्तुओं की मांग घटने लगी और देश में कुटीर उद्योगों को काफी हानि होने लगी। भारतीय वस्तुऐं जो इंग्लैंड को निर्यात की जाती थी, उन पर इंग्लैंड की सरकार ने कड़ा नियंत्रण लगाया। भारतवर्ष में शिक्षा का स्तर बहुत नीचा था। भारतीय कारीगर अनपढ़, अज्ञानी और परम्परावादी थे। उन्होनें बदलती परिस्थितियों के अनुसार अपने को ही बदला और अपने कार्य करने के तरीकों में कोई परिवर्तन नहीं किया। नतीजा हुआ कि उनकी कला तथा कारीगरी का विनाश होने लगा।

उपर्युक्त कारणों के बावजूद भारत के लघु उद्योगों को विनाश पूर्ण रूप से नहीं हुआ। बहुत से ऐसे उद्योग हमारे देश में चलते रहें जिन्हें मशीन के सामान से कोई प्रतियोगिता नहीं थी जैसे – मिट्टी के बर्तन बनाना, टोकरी बनाना, हार्थी दॉत का सामान इत्यादि उद्योग मुख्य थे। बहुत से वैसे उद्योग भी चलते रहे जिनके समान मशीन से बने सामानों से अधिक टिकाऊ रहे और जहाँ के दस्तकारों ने अपने आप को नयी परिस्थितियों के साथ बदल दिया था अर्थात् जहाँ वे अपने काम के लिए पुराने औजारों को छोड़ कर नये औजारों को काम में लाने लगे थे। महात्मा गांधी के स्वदेशी आंदोलन ने इनमें एक नये जीवन का संचार किया।

- **भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थिति :-**

तालिका क्रमांक 1.1

भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों का पंजीयन, विनियोग एवं रोजगार

वर्ष	पंजीयन (लाखों में)	विनियोग (करोड़ रू. में)	रोजगार (लाखों में)
2010-11	428.11	1721553	965.69
2011-12	447.73	1834332	1012.59
2012-13	455.94	1871018	1032.24
2013-14	464.11	1908438	1053.52
2014-15	473.28	1946644	1074.06
2015-16	482.46	1985578	1095.48
2016-17	491.64	2025289	1116.90

स्त्रोत – भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट वर्ष 2018

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 2010-11 में उद्योगों की संख्या 428.11 लाख थी जो 2016-17 में 491.64 लाख हो गई। तालिका से स्पष्ट होता है कि उद्योगों के विनियोग में निरन्तर वृद्धि देखी गई है वर्ष 2010-11 में विनियोग 1721553 करोड़ रू. था जो निरन्तर बढ़कर वर्ष 2016-17 में 2025289 करोड़ रू. तक हो गया, विनियोग में वृद्धि होना भारत के औद्योगिक विकास का सूचक है। रोजगार के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि भारत में औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार भी बढ़े है वर्ष 2010-11 में 965.69 लाख लोगों को रोजगार मिला जिसमें निरन्तर वृद्धि हुई और वर्ष 2016-17 में 1116.90 लाख लोग कार्यरत है। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उद्योगों की संख्या, विनियोग एवं रोजगार तीनों क्षेत्रों में वृद्धि हुई है अर्थात भारत भी में औद्योगिक विकास हो रहा है।

- **म.प्र. में लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थिति –**

तालिका क्रमांक 1.2

म.प्र. में लघु एवं कुटीर उद्योगों का पंजीयन, विनियोग एवं रोजगार

वर्ष	पंजीयन	विनियोग (लाखों में)	रोजगार
2010-11	20104	559.61	35067
2011-12	19832	637.87	41895
2012-13	19374	687.19	48759
2013-14	19903	750.00	51571
2014-15	48179	5171.75	194761
2015-16	87071	9547.32	363812
2016-17	206142	14401.67	596990

स्त्रोत – आर्थिक समीक्षा – भारत सरकार एमएसएमई

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 2010-11 में उद्योगों की संख्या 20104 थी जो 2016-17 में 206142 हो गई। तालिका से स्पष्ट होता है कि उद्योगों के विनियोग में निरन्तर वृद्धि देखी गई है वर्ष 2010-11 में विनियोग 559.61 लाख रू. था जो निरन्तर बढ़कर वर्ष 2016-17 में 14401.67 लाख रू. तक हो गया, विनियोग में वृद्धि होना मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास का सूचक है। रोजगार के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि मध्यप्रदेश में औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार भी बढ़े है वर्ष 2010-11 में 35067 लोगों को रोजगार मिला जिसमें निरन्तर वृद्धि हुई और वर्ष 2016-17 में 596990 लोग कार्यरत है। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उद्योगों की संख्या, विनियोग एवं रोजगार तीनों क्षेत्रों में वृद्धि हुई है अर्थात मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास हो रहा है।

- **इन्दौर जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थिति –**

तालिका क्रमांक 1.3

इन्दौर जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों का पंजीयन, विनियोग एवं रोजगार

वर्ष	पंजीयन	विनियोग (लाखों में)	रोजगार
2010-11	806	1190.06	2068
2011-12	844	3383.07	1900
2012-13	663	2695.37	1744
2013-14	807	3250.19	1908
2014-15	822	3196.23	1845
2015-16	851	3349.39	1911
2016-17	903	3363.11	1987

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र इन्दौर

जिले में पंजीकृत लघु उद्योगों की तालिका क्रमांक-1.3 का अवलोकन करने पर स्पष्ट हो रहा है कि जिले में वर्ष 2010-11 में 806 इकाइयां पंजीकृत हुई जिसमें 2068 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त था और कुल निवेश 1190.06 लाख रू. था और वर्ष 2016-17 में 903 इकाइयां पंजीकृत हुई जिसमें 1987 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त था और कुल निवेश 3363.11 लाख रू. रहा। सबसे अधिक लघु उद्योग वर्ष 2016-17 में 903 पंजीकृत हुए और सबसे कम वर्ष 2012-13 में 663 पंजीकृत हुए। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उद्योगों की संख्या, विनियोग एवं रोजगार तीनों क्षेत्रों में वृद्धि हुई है अर्थात इन्दौर जिले में भी औद्यौगिक विकास हो रहा है।

निष्कर्ष – इस शोध पत्र में आर्थिक विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों का मूल्यांकन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारत, मध्यप्रदेश और इन्दौर जिले में स्थापित लघु एवं कुटीर उद्योगों की प्रतिवर्ष स्थापना हो

रही है। अध्ययन में पाया गया कि प्रतिवर्ष व्यक्तियो को रोजगार भी प्राप्त हो रहा है। विनियोग के क्षेत्र में भी सतत् व निरन्तर वृद्धि हुई है। इन सबके आधार पर यह कहा जा सकता है लघु एवं कुटीर आर्थिक विकास में सहायक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला विकास पुस्तिका वर्ष 2010, संभागीय योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय, संभाग इन्दौर।
2. वार्षिक प्रतिवेदन 2015-16, भारत सरकार उद्योग मंत्रालय, नई दिल्ली।
3. wwww.msme.gov.in
4. जिला उद्योग केन्द्र इन्दौर।

****

विमुद्रीकरण का भारत पर प्रभाव

डॉ. स्वाति शर्मा *

शोध सारांश – मुद्रा विमुद्रीकरण के तहत सरकार पुरानी मुद्रा को चलन से बाहर कर देती है और नई मुद्रा को चलन में लाई जाती है। यानी पुरानी मुद्रा की वैघता नहीं रहती, प्राय: अर्थव्यवस्था में काले धन पर शिंकजा कसने के लिए विमुद्रीकरण प्रक्रिया अपनाया जाता है, जब कालाधन अर्थव्यवस्था के लिये खतरा बन जाता है, तब अर्थव्यवस्था के लिये विमुद्रीकरण अपनाया जाता है, वह उसके बदले नई मुद्रा लेने का साहस नहीं जुटा पाते और काला धन स्वयं ही नष्ट हो जाता है।

शब्द कुंजी – मुद्रा विमुद्रीकरण।

प्रस्तावना – विमुद्रीकरण एक आर्थिक गतिविधि है जिसके अंतर्गत सरकार पुरानी मुद्रा को चलन से बाहर कर देती और नई मुद्रा को चालू करती है , जब काला धन बढ़ जाता है तो इसे दूर करने के लिए इस दूर करने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है, जिनके पास काला धन होता है, वे उसके बदले में नई मुद्रा लेने का साहस नहीं जुटा पाते हैं और काला धन स्वयं ही नष्ट हो जाता है। इसका प्रयोग 8 नवम्बर , 2016 को भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने किया गया है। इस दिन से पुराने रू. 500 और रू. 1000 की मुद्रा चलन से बाहर कर दिए और नए मुद्रा चलन में लाए। भारत के चौथे प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के द्वारा सत्र 1978 में सर्वप्रथम मुद्रा का विमुद्रीकरण किया गया जिसमें 1000 और 5000 के नोट बैंड किये थे।

विमुद्रीकरण क्या है और उसके फायदे एवं नुकसान – नवम्बर 2016 से पहले संभवत: भारत के आम लोग इस शब्द से अनभिज्ञ थें इसकी वजह इस शब्द का रोजमर्रा के जीवन में प्रयोग का लगभग ना होना रहा है, हाँ, अर्थशास्त्र के विद्यार्थी, शिक्षक और फिर अर्थजगत के ज्ञाता विमुद्रीकरण से अवगत तो रहे होंगे, परन्तु क्या भारत मे इसे अमल में लाया जा सकता है, इसके बारे में उन्होंनें जाना सोचा भी नहीं होगा, हालाँकि जिस तरह से पिछले ढाई वर्षो से देश की नरेन्द्र मोदी की सरकार काले धन पर लगाम लगाया जाने लगा था कि काले धन का नेस्तनाबूद करने के लिए वह कोई बड़ा और अभूतपूर्व कदम उठा सकते है, अतत: 8 नवम्बर , 2016 को राष्ट्र को संबोधित करते हुए, उन्होने बड़े मूल्य के नोटों यानि 500 और 1000 के नोटों को उसी दिन की अर्द्धरात्रि से बंद कर दिए जाने की ऐलान कर दिया। Demonetisation की हिन्दी है विमुद्रीकरण। कानूनी रूप में किसी मुद्रा इकाई की स्थिति। मूल्य को अमान्य कर देना ही Demonetisation यानि विमुद्रीकरण है। संक्षिप्त रूप में हम कह सकते है कि 'विमुद्रीकरण वह प्रक्रिया है जिसके तहत् किसी देश की सरकार अपने देश की किसी मुद्रा (नोट) को कानूनी तौर पर प्रतिबंधित कर देती है व प्रतिबन्ध कर देने के बाद उस मुद्रा की कीमत नहीं रह जाती है। 8 नवम्बर, 2016 का विमुद्रीकरण भारत में विमुद्रीकरण की पहली घटना नहीं थी, इससे पूर्व 1946 व 1978 में थी विमुद्रीकरण भारत में किया गया था। अवैध गतिविधियों को नियंत्रित करने के पूर्ण प्रयास कि गया, 2014 के बजट में विशेष जाँच दल की स्थापना करना। काला धन और करारोपण अधिनियम, 2015। बेनामी लेनदेन अधिनियम, 2015। इत्यादि के द्वारा भारत में होने वाली अनियंत्रित मौद्रिक प्रवाह को रोकने का अथक प्रयास किया गया जिसमें असफलता हाथ लगी।

विश्लेषण – विमुद्रीकरण को किसी भी देश के लिए एक युगांतांकारी परिवर्तन का आधार माना जा सकता है। यह केवल अर्थव्यवस्था को ही बदलने में सक्षम है अपितु सामाजिक आर्थिक ढांचे में परिवर्तन करने में सक्षम है। विमुद्रीकरण का प्रभाव अर्थव्यवस्था में न केवल साकारात्मक पड़ता है अपितु नकारात्मक भी पड़ता है। सकारात्मक प्रभाव के अंतर्गत – मुद्रा आपूर्ति में गिरावट, हवाला कारोबार ठप होना, सस्ता ऋण प्रवाह, लोककल्याणकारी योजनाओं इत्यादि को शामिल किया जाता है एवं नकारात्मक प्रभाव के अंतर्गत – निवेश में कमी , बेरोजगारी में वृद्धि , नगद कम प्रवाह, मांग में कमी इत्यादि। विमुद्रीकरण का भारत में यह लक्ष्य था के औपचारिकीकरण को बढ़े और अधिकाधिक भारतीयों को आय कर जाल में लाना था जिसमें केवल 59.3 मिलियन करदाता शामिल हैं (कर भरने वाले और 2015-16 में जिनके कर की स्त्रोत पर कटौती की गई) ये अनुमानित गैर-कृषि कार्य बल के 24.7 प्रतिशत के समकक्ष है। क्या यह हुआ और किस हद हुआ है ? प्रथम दृष्टि में ऐसा लगता है कि नए करदाताओं की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। विमुद्रीकरण (नवम्बर 2016-नवम्बर 2017) 13 महिनों में नए कर दाताओं की कुल संख्या की तुलना पहले के 13 महिने के 13 महिने के समय से की गई। नवम्बर 2016 के बाद 10.1 मिलियन कर भरने वाले जोड़े गए जबकि पहले के छ: वर्षो में औसत 6.2 मिलियन थी। फिर भी विमुद्रीकरण के प्रभाव का पुरजोर साकलन नए कर दाताओं में पूर्व मौजूदा प्रवृत्ति में वृद्धि का ध्यान रखना होगा। इसका समाधान करने के लिए हम प्रतीपगमन विश्लेषण करते हैं। क्षेत्रीयता को हिसाब में लेकर हम पाते हैं कि नए करदाताओं में मासिक प्रवृत्ति में वृद्धि 0.8% हैं (वार्षिक 10% वृद्धि)। नवम्बर 2017 तक कर दाताओं का स्तर इस प्रवृत्ति से प्राप्त संकेत से 31% अधिक था, जो सांख्यिकीय रूप से बहुत अधिक अन्तर दर्शाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि विमुद्रीकरण-सह-जीएसटी के कारण अतिरिक्त करदाता मौटे तौर पर 1.8 मिलियन बैठते हैं, जो मौजूदा करदाताओं का 3% है।

* सहा. प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. राधाबाई शासकीय नवीन कन्या महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17 में विमुद्रीकरण के अधिकतम दीर्घकालीन लाभ और न्यूनतम अल्पकालीन प्रतिकूल प्रभाव को सुनिश्चित करने के लिए सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं -

1. ऐसी प्रणाली स्थापित की जाए जो अधिक आय को घोषित करें।
2. निगम कर को कम किया जाए।
3. अचल सम्पत्ति को जी.एस.टी. के दायरे में लाए जाए।
4. कर प्रशासन में कमी लायी जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.वी.सी. सिन्हा, व्यावसायिक पर्यावरण, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स
2. प्रतियोगिता दर्पण वार्षिकांक अर्थशास्त्र
3. रमेश सिंह , भारतीय अर्थव्यवस्था, मेक ग्रीव हील एजुकेशन
4. आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17
5. अतिराम, भारतीय अर्थव्यवस्था प्रतियोगिता दर्पण

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Share Buybacks: Benefit for Investors (Reliance Industries Ltd.)

Arpita Trivedi*

Abstract - A news flash announced that Reliance Industries has bought back shares worth over Rs 3,900 crore from public shareholders through an about year-long share repurchase programme, achieving just about 38 per cent of the target. The share buyback programme, the largest-ever by an Indian company.such share buybacks are happening in rapid succession among companies all over the world. There are many advantages to investors of a company when the company buys back its own share, generally known as treasury share. Share buybacks result in higher earnings per share (EPS), theoretically resulting in higher stock prices.Companies also resort to stock buybacks when they happen to have excessive cash balance. Cash rich companies are generally considered attractive targets for takeover possibilities. During times such as the present ones when returns on cash money market accounts do not yield attractive returns, companies usually implement stock buyback policies, thus earning better returns on excess cash while at the same time avoiding takeover possibilities. There are also some hidden advantages to senior management resulting from stock buybacks because of higher prices for their substantial stock options. There are also some disadvantages to investors resulting from stock buybacks.

Introduction - Buyback means repurchase of its own shares by a company. Before 1998 there was no buyback of share in India. After Companies Act 1999, Indian companies were started to buyback in company. The companies like Reliance Industries, Ashok Leyland and Bajaj these kind of big concerns are started their share repurchase in India. Companies believed that buyback will be financially benefited in many ways like if the company distributed excess cash and it maintains its operating efficiency and earning per share will increase. The share price will also be increase as P/E Ratio is expected the same after the buyback and another importance increased debit equity ratio due to reduced equity capital. A Company which has very low debt equity ratio may like to reduce equity capital through the buyback mechanism to achieve a higher target debt equity mix. The other reason for company buyback program like to use surplus cash, to buyback shares rather than pay large dividends, which they cannot maintain in the future years. In those countries, where dividends are taxed at a higher rate than the capital gains, companies may like to resort to shares buyback from time to time reduce shareholders tax burden.

There are several conditions for share repurchase in India :

1. A company buying back its shares will not issue fresh capital, except bonus issue, for next 12 months.
2. The company will state the amount to be used for the buyback of shares and seek prior approval of shareholders.
3. The buyback of shares can be affected only by utilizing the free reserves.
4. The company will not borrow funds to buyback
5. The shares bought under the buyback schemes will be extinguished and they cannot be reissued.

Why Stock Buybacks? - Evidently, RIL companies are buying back a whole lot of their own stock now more than ever before.What are some of the main reasons for this phenomenon? Many companies state in their annual reports that they plan to repurchase their stock in order to meet their bonus and stock option plan targets (RIL).However report, many of these companies buy back much more than they need tomeet their current and/or future stock options targets. Another reason for stock buybacks involves companies'Efforts to maintain a desirable capital structure. Many finance experts believe that there exists an optimal capital structure, a correct mix of debt and equity financing that is most conducive for a company. So, companies use purchasing of treasury stock to adjust and maintain such optimum balance of debt and equity levels.

Advantages Of Share Buybacks :

Increased Shareholder Value - There are many ways to value a profitable company but the most common measurement is Earnings Per Share (EPS). If earnings are flat but the number of outstanding shares decreases.A magical increase in period-to-period EPS will result.

Higher Stock Prices - An increase in EPS will often alert investors that a stock is undervalued or has the potential for increasing in value. The most common result is an

***Research Scholar, School of Studies in Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**

increase in demand and an upward movement in the price of a stock.

Increased Float - As the number of outstanding shares decreases, the shares remaining represent a larger percentage of the float. If demand increases and there is less supply, then fuel is added to a potential upward movement in the price of a stock.

Excess Cash - Companies usually buy back their stock with excess cash. If a company has excess cash, then at a minimum you can bank that it doesn't have a cash flow problem. More importantly, it signals that executives feel that cash re-invested in the corporation will get a better return than alternative investments.

Income Taxes - When excess cash is used to buyback company stock, in lieu of increasing or paying dividends, shareholders often have the opportunity to defer capital gains AND lower their tax bill if the stock price increases. Remember that dividends are taxed as ordinary income in the year they are received whereas the sale of appreciated stock is taxed when sold. Also, if the stock is held for more than one year the gain will be subject to lower capital gain rates.

Price Support - Companies with buyback programs in place use market weakness to buy back shares more aggressively during market pullbacks.This reflects confidence that a company has in itself and alerts investors that the company believes that the stock is cheap. Frequently you will see a company announce a buyback after its stock has taken a hit, which is merely an overt action to take advantage of the discount on the shares. This lends support to the price of the stock and ultimately provides security for long-term investors during rough times. Now that we've shown a few reasons to be bullish on "buyback stocks," should you go out and buy every buyback you can find? Definitely not. Not all buybacks are equal and some buybacks seem to be nothing more than an attempt to manipulate the stock price.

Conclusion - Over the past decade, stock buybacks or buying treasury stock by RIL companies has become an important method of managing their balance sheets. Stock buybacks reduce the number of outstanding shares, thereby increasing the EPS, shareholder value, leaning toward increasing stock prices. Buybacks are also used to distribute excess cash conveniently to stockholders. Buybacks are also used to avoid threats of possible hostile takeovers.However, not all buyback announcements are implemented since companies are not legally required to follow through on their announcements. Sometimes the increase in stock prices following a buyback announcement could be only temporary. Furthermore, senior managers tend to manipulate their EPS numbers through stock buyback announcements in order to meet their target EPS to receive a certain level of promised compensations linked to EPS.Investors need to be wary of buyback announcements to make sure that the stock buybacks do really bring about along-standing improvement in shareholder value before they make any investment decisions based on the stockbuyback announcements.

References :-

1. Albanesius, C. (2012). Apple uses part of cash hoard for dividends and share repurchases. *PC Magazine, march 2012*
2. Arends, B. (2012). How to tell when a stock buyback is good for investors. *Wall Street Journal,* December22-23, 2012, B7.
3. Baldwin, W. (2012). Cashing in on stealth dividends. *Forbes, 189*(1), 44-46.
4. Kai Li and William McNally "The information content of Canadian open market repurchase announcements"Managerial Finance Vol. 33 No. 1, 2007 pp. 65-80
5. Vermaelen, Theo (1981) "Common Stock Repurchases and Market Signaling-An Empirical Study". Journal of Financial Economic, 9, pp.139-183

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Comparative Analysis Of Indian Housing Finance Companies Based On Camel Approach

Dr. Khushbu Jain*

Abstract - One of the three important basic requirements which is considered by man to live a life is a house: it is not only a shelter of man but also his property in which he lives. It plays an important role in his life, so owning a house is a big dream and happiness for a man in which he lives in his family. Live a happy moment together. The number of new houses being built is a good index of countries to prosperity. As far as the common man is concerned, to obtain a dream house is a costly affair. Sensing this pecuniary problem facing the common man many financial institutions have embarked upon housing finance. The main aim of this research paper is to analyze the financial performance of the listed Five Housing Finance Companies (HFCs) in India, namely HDFC Housing Finance, ICICI Home Finance, LIC Housing Finance, Manipal housing finance, PNB Housing Finance , by using the CAMEL model (Capital Adequacy, Asset Quality, Management Efficiency, Earning Capability and Liquidity). On the basis of corporate governance practices & disclosures in the annual report for the year 2012-2013 to 2016-2017. For this purpose, corporate governance score (CG score) is calculated for each HFCs across the different parameters as per the Companies Act. These components are used to reflect financial performance, operating soundness and regulatory compliance of financial institutions.

Introduction - Housing is one of the basic needs of mankind in terms of safety, security, self-esteem, social status, cultural identity, satisfaction and achievement. Housing finance is a specific form of finance and efficiency of housing finance system in a Country is one of the basic indicators of the growth of its economy. The appearance of a formal institutional system for housing finance has been quite late in India, with the formation of National Housing Bank (NHB) in 1988, since then housing is being accorded high priority by the Government. Housing and housing finance activities in India have witnessed tremendous growth over the years. Some of the factors that have led to this growth are - tax concessions to borrowers, increase in disposable income levels, changing age profile of the borrowers, easy availability of loans, nuclear families and urbanization, etc. As per 11th Five Year Plan (2007-2012) the total number of houses that would be required cumulatively in the plan period is slated at 45 million units (7 million backlog plus 38 million additional units) which will require an investment of around Rs.10 trillion between 2007- 2012, i.e. Rs.2 trillion per year. Housing Finance Companies (HFCs) play an important role in the Indian housing finance market. They compete with banks in offering home loans and other related products. Apart from traditional home loans, other products offered by HFCs are Loans against Property, Builder Loans and others. Unlike the other nonbanking finance companies which are governed by the Reserve Bank of India (RBI), the housing finance companies are governed by the National Housing Bank (NHB). Housing Finance Companies (HFCs) that once dominated the market as the most prominent group are facing serious competition from the commercial banks (CBs). In respect of HFCs, apart from their gradually lowering market share year after year, there has been significant pressure on their profitability because of the thinning profit margins arising from competition and increased cost of funds. Hence, enhanced operational as well financial efficiency is necessary for survival and growth of HFCs in India. There is also a need to study the performance analysis of HFCs, especially in the present scenario of cut-throat competition thrown up by many organizations into housing finance industry. The present study put focus on the analysis of financial performance of the HFCs whose business is primarily housing finance. As per NCAER Study, housing sector accounts for 1% of the GDP as well as 6.9 % of the total employment. Housing was the fourth largest employment generation sector in the country. For every 1 lakh invested in the housing sector, 4 new jobs were created and 2.9 lakh got added to the GDP through multiplier effect (NHB Report on Trend &Progress of Housing, 2016).

The International Covenant of United Nations on Economic, Social and Cultural Rights, to which India is a signatory, upholds the right to adequate housing as a human right. Article 21 of the Constitution of India which defines the protection of life and personal property, encompasses the right to shelter and right to livelihood also, as they are integral to the dignified living of individuals.

*Assistant Professor (Commerce) M.B. Khalsa College, Indore (M.P.) INDIA

Housing Finance Industry in India - Consists of two sectors, the formal and informal. The formal sector refers to sources of institutional finance such as commercial banks, housing finance companies, cooperative banks, regional rural banks, agriculture and rural development banks (ARDBs) and the co-operative housing finance societies. The informal sector, which meets major part of the total housing finance needs, includes finance from money lenders, household savings, disposal of existing property and borrowings from friends and relatives. While banks are subject to regulation and supervision by the RBI, HFCs are regulated and supervised by NHB under the provision of the NHB Act, 1987.

Objectives Of The Study - To compare the financial performance of selected housing finance companies and standard them based on the CAMEL parameters.

Research Methodology - Purposive Sampling design has been followed wherein the HFCs for evaluation have been selected on the following criteria: Annual reports are used for data collection of the respective. Relevant information regarding the list of HFCs having registration are collected from the website of National Housing Bank (NHB). Category 1 is considered for the study. Having valid Certificate of Registration and permission to accept deposits.

Camel Approach:-

CAMEL Model

C : Capital Adequacy	Debt –Equity Ratio
A: Assets Quality	Return on assets
M: Management Efficiency	Return on Net Worth
E: Earning Quality	Net Interest Margin to Total Assets
L: Liquidity	Liquid Assets to Total Deposits

1) Capital Adequacy - A minimum amount of capital is necessary to maintain the safety and soundness of the financial institution. Capital adequacy acts as an important indicator to build and maintain the investors' confidence in the NBFCs. It helps the NBFCs to absorb the risk of potential losses in the adverse Economic conditions and provides a hedge against insolvency. It reflects the ability of the top management to raise the additional capital for the further needs. Following ratios are taken into consideration to judge the capital adequacy of the two NBFCs.

Debt-Equity Ratio - It is a tool to measure the leverage of a bank. It indicates how much of the bank business is financed through debt and equity. It is calculated as the proportion of total outside liability to net worth. Higher the ratio indicates less safety for the creditors and depositors in the banking system.

$$\text{Debt equity ratio} = \frac{\text{Total outside liabilities}}{\text{Net worth}}$$

Table 1 (see in last page)

Each industry has different Debt to Equity ratio benchmarks, as some firms tend to use more debt financing than others. A lower debt to equity ratio usually implies a more financially stable business. Companies with a higher debt to equity ratio are considered more risky to creditors and investors than companies with a lower ratio. In terms of Debt Equity ratio, HDFC secured top position with a lowest average value of 4.38 followed by Manipal housing finance and PNB Housing Finance with an average value of 5.63 and 7.84 respectively.

2) Asset Quality - Quality of the assets should be the parameter to assess the financial health of the financial institution rather than the quantity of the assets. It shows the pattern of employment of funds to generate the earnings for the NBFCs. To check the asset quality of the NBFCs generally gross and net NPAs (non-performing assets) are analyzed which are as follows.

Return on Assets - It is one of the important performance indicator for measuring the performance of the banks. Return on Assets is a profitability ratio and shows how profitable a bank is relative to its total assets.

$$\text{Return on Assets} = \frac{\text{Annual net income}}{\text{Average Total Assets}}$$

Table 2 (see in last page)

The Return on Assets Ratio measures how effectively a company can earn a return on its investment in assets. In case of Return on Assets, the above table shows that PNB Housing Finance is at the top position with a highest average of 9.56 that a higher ratio is more favorable to investors because it shows that the company is more effectively managing its assets to produce greater amounts of net income, followed by ICICI Home Finance .9.40 and Manipal housing finance 9.33, LIC Housing Finance was at the last position with lowest average of 1.28.

3) Management Efficiency - Efficiency of the management decides the future of the business. It is the management which takes all important decisions relating to capital structure, earnings and assets of the business on the basis of their risk perception. Management efficiency of the NBFCs can be ensured by proper planning, coping with changing environment, adherence with regulatory framework and generate the earnings by maximum utilization of available resources.

Return to Net Worth - It measures the profitability of equity shareholders.

$$\text{Return on Net worth} = \frac{\text{Annual Net Income}}{\text{Shareholders' Equity}}$$

Table 3 (see in last page)

The higher the ratio of return on net worth shows how better efficiency of the management and it helps to track a company's progress and ability to maintain a positive earnings movement, As per the above table HDFC Housing Finance secured 1st position with a highest average value of 19.57 followed by ICICI Home Finance with an average value of 19.18 it shows how effectively the banks are managing its shareholders equity and Manipal housing finance as a least position with an average value of 16.32.

4) Earning Quality - Sustained earnings provide the strong base to the NBFCs to grow in the future, to remain competitive and to increase the capital base internally. Quality of earnings is reflected in the form of higher profitability and continuous growth in earnings which shows better utilization of its assets.

Net Interest Margin (NIM) to Total Assets - Net Interest Margin being the difference between the interest income and the interest expanded as a percentage of total assets shows the ability of the bank to keep the interest on deposits low and interest on advances high. Interest income includes – Dividend income, Interest expanded includes – Interest paid on deposits, Loan from the RBI, Other short and long term loans.

$$= \frac{\text{Net Interest Margin}}{\text{Total Assets}}$$

Table 4 (see in last page)

A positive net interest margin indicates that the fund manager made good decisions to make a profit on his investments. From the above HDFC Housing Finance secured 1st position with a highest average value of 22.55 followed by Manipal Housing Finance with an average value of 17.04 it shows how effectively the fund manager in a banks are managing its investments and LIC Housing Finance as a least position with an average value of 13.60.

5) Liquidity - Adequate liquidity is required in any business to take the advantage of favorable investment Opportunities and to meet the short term obligations when they arise. Housing loan NBFCs in the category of not accepting public deposits, liquidity does not pose major challenge for them which are otherwise the greatest challenge for their banking counterpart.

Liquid Assets to Total Deposits - It measures the liquidity available to the deposits of a bank in a particular year. Total deposits include demand deposits, savings deposits, term deposits and deposits of other financial institution. Liquid assets include cash in hand, balance with the RBI, balance With other (both in India and abroad), and money at call and short notice.

$$= \frac{\text{Liquid Assets}}{\text{Total Deposits}}$$

Table 5 (see in last page)

It measures the short term liquidity position of a company by showing its ability to pay off its liabilities. If a firm has sufficient current assets to cover its total current liabilities, the firm will be able to pay off its obligations, otherwise company has to sell off any long-term or capital assets for payment. From the above ICICI Home Finance secured 1st position with a highest average value of 8.84 followed by Manipal housing finance with an average value of 0.70.

Table 6 (see in last page)

Graph 1 (see in last page)

Conclusion - The volatility in interest rates in India has affected borrowers of all types of loans. However, home loan borrowers are the most affected, as home loans are by far the biggest loans quantum-wise. HFCs main source of fund is Deposit for 2 to 5 years and even more, while typically the loans are extended for much higher tenure.

Discrepancy in interest rates between existing borrowers and new borrowers, porting of home loan, stringent rules by lenders and clauses on fixed rate home loans are some of the issues faced by home loan borrowers in the country.

In recent times, in view of the increasing incidence of customers switching banks to avail better rates, the existing borrowers are being offered an option to change to new rates in the same bank by paying a switch fee or a conversion fee. This can be on outstanding loan amount. This is a good way of availing interest rates offered to new customers. However, this scheme is not actively pushed by banks, and not all lenders offer this too.

In such a situation, most existing borrowers resort to porting their home loans to banks which offer lower interest rates In this study according to the CAMEL Model ranks were specified. By observing overall ranking positions it can be concluded that among the five housing financial institutions HDFC Housing Finance and ICICI Housing finance is showing dominant position with an average of 2.4 and LIC Housing finance stands least position with an average of 4.4 so they need to improve their overall performance.

References :-

1. Gupta, R. (2008), A CAMEL Model Analysis of Private Banks in India, Journal of Gyan Management, 2(1), pp.3-8.
2. Kaur, H.V. (2010), Analysis of Banks in India - A CAMEL Approach, Global Business Review, 11, pp.257- 280.
3. Siva, and Natarajan, P. (2011), CAMEL Rating Scanning of SBI Groups, Journal of Banking Financial Services and Insurance Research, 1(7), pp.1-17.
4. Srinivas, K. and Saroja, L. (2013), Comparative Financial Performance of HDFC and ICICI Bank, Scholars World-International Refereed Multidisciplinary Journal of Contemporary Research, 1(2), pp.107-112.
5. Prasuna, D.G. (2004), Performance Snapshot 2003-04, Chartered Financial Analyst, 10(11), pp. 6- 13.
6. Baral, K.J. (2005), Health Check-up of Commercial Banks in the Framework of CAMEL: A Case Study of Joint Venture Banks in Nepal, The Journal of Nepalese Business Studies, 2(1), pp.41-55.
7. Bodla, B.S. and Verma, R. (2006), Evaluating Performance of Banks through CAMEL Model: A Case Study of SBI and ICICI, The ICFAI Journal of Bank Management, 5(3), pp.49-63.
8. Chandrasekhar, V. (2010). Housing Finance and Housing – A view from India and beyond. Indu Centre for Real Estate and Infrastructure.
9. Kumara swami and Nayan, (2014). Marketing of Housing Finance - A Comparative Study of Public and

Private Sector Banks, Global Research Analysis, 3 (3), 116-120.

10. Manoj P K, (2008). Learning From Cross Country Experiences In Housing: A Micro Finance Approach For Inclusive Housing In India, Journal of Global Economy, 4(3), 208 -229.
11. Manoj, P. K, (2016). National Goal of a Housing for all by 2012 and the significance of scaling up priority sector housing credit by Banks in India: Some Empirical Evidence, International Journal of Advance Research in Computer Science and Management Studies,4(1),180-196).
12. Piyush Parishwang, Negi Himanshu, Singh Navneet, (2016). Study of Housing Finance In India with Reference to HDFC and LIC Housing Finance Ltd, International Journal of Management, 7(3), 39- 40.
13. Shaw, (2014). Increasing number of Registered Housing Finance Companies with National Housing Bank availed at http://india-financing .com. .
14. Tiwana, Jasmine and Singh, Jagpal, Regulatory Framework of Housing Finance Companies in India, VSRD International Journal of Business and Management Research, 2 (9), 488-495, 2012.
15. Abishek Narang; "Housing Sector: A Macro Perspective"; Keka Lahiri; "Housing Finance Industry-Global Scenario"; (ICFAI University Press; edited book-2006; p. 3-8)
16. Dhanndapani Alagiri; "Retail Banking-an introduction" (2007); ICFAI University Press.
17. Indian Institute of Banking & Finance; "Home Loan Counseling" (2012); Taxman Publication Pvt. Ltd., New Delhi.
18. "Innovations in Banking" (2008); ICFAI University Press.
19. National Building Organization; Ministry of Urban Affairs & Employment, GOI.

a. Singh G.B; "Indian Housing Scenario – Problems and Remedies"; (Speech of Singh G.B.; Chief consultant, System Building Technologies, New Delhi); Annual Report of NHB:2012-13.

20. Varghese K.V.; "Housing Problem in India"; Economics and social aspects"(1983); Eurekha Publication, New Delhi.
21. www.housing finance.org
22. www.google.com
23. mupha.gov.in./policies
24. www.nhb.org.in
25. www.soople.com
26. www. vanguardngr.com
27. www.icfaipress.org

Table 1 : CAMEL Debt-Equity Ratio

year	HDFCHousing Finance	ICICI Home Finance	LIC Housing Finance	Manipal housing Finance	PNB Housing Finance
2013	4.38	9.00	9.06	4.38	7.71
2014	4.03	10.26	9.49	4.03	6.69
2015	4.23	9.10	10.64	6.21	6.01
2016	4.42	8.56	10.51	5.98	9.98
2017	4.85	9.06	10.05	7.56	8.83
Average	4.38	9.19	9.95	5.63	7.84
Ranking	1	4	5	2	3

Source*:* Annual Reports of selected banks from 2013 to 2017

Table 2 : **CAMEL Return on Assets**

year	HDFCHousing Finance	ICICI Home Finance	LIC Housing Finance	Manipal housing Finance	PNB Housing Finance
2013	2.48	8.88	1.27	9.91	9
2014	2.4	9.5	1.37	8.42	9.82
2015	2.35	9.06	1.23	9.06	10.44
2016	2.45	9.49	1.27	9.49	9.5
2017	2.21	10.11	1.27	9.78	9.06
Average	2.37	9.40	1.28	9.33	9.56
Ranking	4	2	5	3	1

Source*:* Annual Reports of selected banks from 2013 to 2017

Table 3 : CAMEL Return to net worth

year	HDFCHousing Finance	ICICI Home Finance	LIC Housing Finance	Manipal housing Finance	PNB Housing Finance
2013	19.52	19.91	15.78	15.43	15.78
2014	19.46	18.42	17.48	15.97	16.01
2015	19.34	19.06	17.72	15.59	16.27
2016	20.78	19.49	18.15	17.01	16.66
2017	18.77	19.05	17.43	17.62	17.01
Average	19.57	19.18	17.31	16.32	16.73
Ranking	1	2	3	5	4

Source*:* Annual Reports of selected banks from 2013 to 2017

Table 4 : CAMEL Net Interest Margin to Total Assets

year	HDFCHousing Finance	ICICI Home Finance	LIC Housing Finance	Manipal housing Finance	PNB Housing Finance
2013	22.96	15.39	13.5	16.58	11.78
2014	22.53	15.64	14.34	15.78	14.23
2015	21.86	14.08	12.99	16.91	14.76
2016	22.95	14.23	13.39	17.14	15.39
2017	22.47	14.76	13.8	18.81	15.64
Average	22.55	14.82	13.60	17.04	14.36
Ranking	1	3	5	2	4

Source*:* Annual Reports of selected banks from 2013 to 2017

Table 5 : **CAMEL Liquid Assets to Total Deposits**

year	HDFCHousing Finance	ICICI Home Finance	LIC Housing Finance	Manipal housing Finance	PNB Housing Finance
2013	0.36	7.96	0.39	0.72	0.36
2014	0.30	5.12	0.47	0.44	0.30
2015	0.27	4.01	0.46	0.47	0.27
2016	0.26	13.14	0.44	0.32	0.44
2017	0.34	14.01	0.44	0.59	1.31
Average	0.30	8.84	0.44	0.70	0.53
Ranking	5	1	4	2	3

Source*:* Annual Reports of selected banks from 2013 to 2017

Table 6 : Overall Ranking of Selected HFC's as per 'CAMEL PARAMETER

CAMEL Parameter	HDFCHousing Finance	ICICI Home Finance	LIC Housing Finance	Manipal housing Finance	PNB Housing Finance
CapitalAdequacy	1	4	5	2	3
AssetsQuality	4	2	5	3	1
Management Efficiency	1	2	3	5	4
EarningsQuality	1	3	5	2	4
Liquidity	5	1	4	2	3
Average	2.4	2.4	4.4	2.8	3
OverallRanking	1.5	1.5	5	3	4

Graph 1

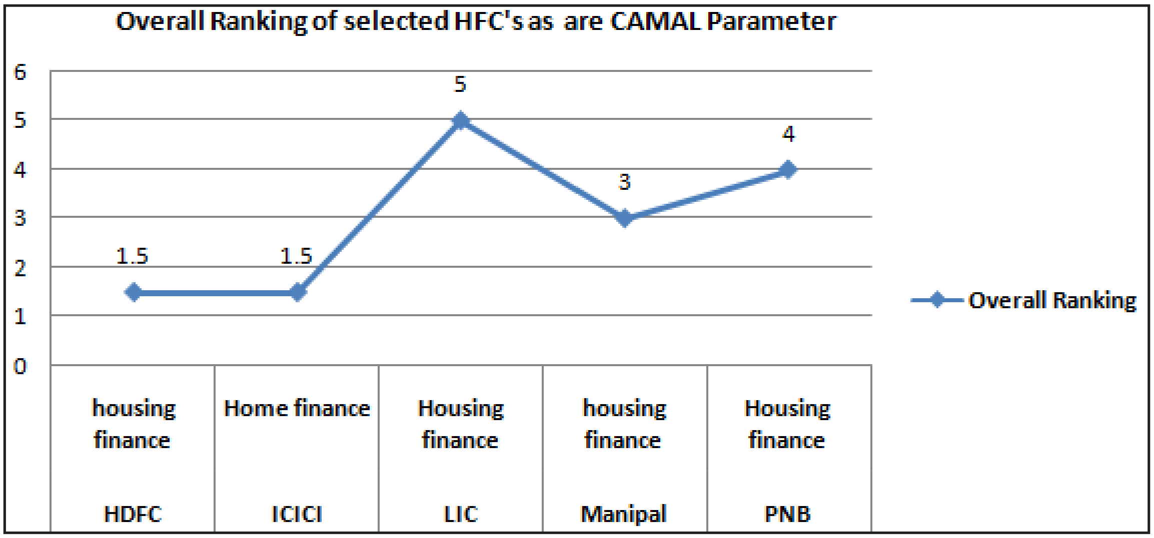
Overall Ranking of selected HFC's as are CAMAL Parameter
6
5
4
3
2
1
0
1.5
1.5
5
3
4
housing finance HDFC
Home finance ICICI
Housing finance LIC
housing finance Manipal
Housing finance PNB
Overall Ranking

****

Explosive Urbnisation: A by Product of Globalisation

Rachna Mathur*

Introduction - Urbanization implies the greater concentrat -ion and connectedness of people, which increases the speed at which new infections are spread. Globalization—the closer integration of the world economy—has facilitated pathogen spread among countries through the growth of trade and travel.

Globalisation, an increasing international interaction in economic, political and cultural aspects, is a highly uneven set of processes whose impact varies over space, through time, and between social groups. On one hand, as globalisation seems to be an inevitable reality, many developing countries are restructuring their economies to receive and reap the benefits of widening and deepening global economic interactions. On the other hand, there are regions, which are increasingly excluded, and 'structurally irrelevant' to the current process of globalisation. Moreover, cities are at the core of development strategy of globalisation. While cities in developed countries are becoming centres of globally integrated organisation of economic activity, cities in developing countries are usually at disadvantage positions due to weak financial bases, low levels of technology as well as lack of infrastructural facilities and institutional factors. The present paper, in the limelight of these contradictions, analyses the differential impacts of economic globalisation in cities and regions of India in general and Northeast India in particular. It is noted that the ushering of globalisation through structural adjustment of the economy during the 1990s has disparate impacts on various cities and regions of the country. The paper also examines the infrastructural constraints of cities of Northeast India as well as the existing institutional arrangements to 'globalise' the region through neoliberal reforms and investments.

Urban areas, as economic units, are supporting and are influenced by globalization. Since globalization was relying on different technological and economic drivers through time, each of its stages was associated with a different urban context, from the small city-states of the mercantilism era (from the 16th to 19th century), the industrial city (from the 19th to the mid 20th century), to the megalopolis of the early 21st century. Long distance sailing was a key technology of the mercantile era, enabling the setting of the first true global trade networks linking emerging European powers with Asia and the America. Several of these territories were incorporated into colonial empires. Emerging trade networks were complemented by advances in navigation (through cartography) and payments methods through the setting of banking systems. The increasing spatial reach of the main commercial cities and the beginning of a division of labour permitted a growth in their population and size

Globalization has become a strong driver of the contemporary era, a process supported by expanded transport and telecommunication systems as well as an environment favoring international transactions (e.g. trade liberalization). The scale and intensity of the mobility of capital, goods, people and information has been expanded. The urban region became a core organizational and competitive unit where multinational corporations thrive on their comparative advantages of costs and innovative capabilities. A complex lattice of metropolitan areas, global cities and gateways has been established and this lattice coordinate global production, distribution and capital accumulation. While large, competitive and innovative urban regions thrive, more peripheral areas face the challenge of finding a role and function within the global urban system.

Globalization has been driven by the falling costs of transport and communication ever since the introduction of steamships, railroads and the telegraph as described so vividly in Standage (1998) on the 'Victorian Internet'. To put it another way, the engine of globalization has steady reductions in the costs of moving goods, capital, people and ideas. Recent technology improvements have had huge measurable effects. The real costs of moving goods between US cities dropped by over 90 percent during the 20th century, according to Glaeser and Kohlhase (2004), when road transportation 3 started to replace water and railway transportation. During the second half of the same century the cost of air transportation has dropped as well (Hummel, 2008). During the two world wars and the Great Depression the ugly head of protectionism reared its head. Since World War II many trade barriers and the costs of transport have fallen with the advent of modern airlines and mass tankers. Most dramatically, with the extremely rapid development of email and the Internet, the costs of communication have fallen. This has prompted many to argue that the world has become a "global village" and to

*Lecturer (English) M. S. Govt. Girls College, Bikaner (Raj.) INDIA

argue with slogans like "the death of distance". Friedman (2007) has used it to fuel his metaphor of "The World is Flat". His views have become very influential in policy making circles and with the general public, but have been criticized at length by academic economists. Birdsall (2005) argues that the world is far from flat, since many unequal opportunities persist at the level of households within countries and at the level of nations and the forces of globalization seem to exacerbate these inequalities. The most detailed and coherent economic critique of Friedman's book is probably due to Leamer (2007). Leamer has some problems deciphering the blurb of Friedman's book: "..the convergence of technology and events that allowed India, China, and so many other countries to become part of the global supply chain for services and manufacturing, creating an explosion of wealth in the middle classes of the world's two biggest nations and giving them a huge new stake in the success of globalization? And with this "flattening" of the globe, which requires us to run faster in order to stay in the same place, has the world gotten too small and too fast for human beings and their political systems to adjust in a stable manner?" Just as Columbus' discovered the Indian natives in America,

Transport more shares the common goal of fulfilling a derived transport demand, and each transport mode thus fills the purpose of supporting mobility. Transportation is a service that must be utilized immediately since unlike the resources it often carries, the transport service itself cannot be stored. Mobility takes place using transport infrastructures of a fixed capacity, providing a transport supply. In several instances, transport demand is answered in the simplest means possible, notably by walking over a landscape that has received little or no modifications. However, in some cases, elaborate and expensive infrastructures and modes are required to provide mobility, such as for air transportation.

Transportation is a market composed of suppliers of transport services and users of these services. Well-functioning transport markets should allow the transport supply to meet transport demand so that transport needs for mobility are satisfied. An economic system including numerous activities located in different areas generates mobility that must be supported by the transport system. Without mobility, infrastructures would be useless and without infrastructures, mobility could not occur or would not occur in a cost-efficient manner.

Migration and urbanization must also be looked in the context of emergence of global cities, many of which have acquired vibrancy in recent years by establishing linkages with national and international market. It is argued that the process of urbanization in India, as in other developing countries, is being determined by macro economic factors at national and global levels and is not strongly linked to the developments in rural economy. The strategy of economic reform and globalisation has given a boost to growth of industries and business in these global cities, resulting in inflow of capital from outside the region or country as also investment by local entrepreneurs. Given this perspective, it would be important to consider policies to harness the potential of migration in these and other urban centres for promoting a balanced settlement structure, ensuring equity and sustainability in development process. It would be erroneous to restrict the analysis of urbanization and migration to a few mega cities and ignore the smaller towns in India as the data suggest that the latter report higher levels of poverty and greater deprivation in terms of quality of life. Furthermore, globalisation strategies have opened up possibilities of resource mobilisation for large cities by strengthening their internal resource base and enabling them to attract funds from global capital market and institutional sources. Unfortunately, most of these avenues have not opened up for smaller towns as their economic base is very low, offering little possibility to local government for internal resource mobilization with no business opportunity for the actors in capital market. Given this somewhat disturbing scenario, it would be a challenge, as stipulated by UNFPA (2007), to divert and promote "bulk of population growth in smaller cities and towns" that are seriously "underserved in housing, transportation, piped water, waste disposal and other services". These have "fewer human, financial and technical resources at their disposal" and their "capabilities for planning and implementation can be exceedingly weak". This indeed is an area of policy intervention in case the government is serious about its commitment to alleviate poverty and usher in a process of sustainable urban development.

"Urbanization refers to a process in which an increasing proportion of an entire population lives in urban areas" (Hodgson, 2006). Population migration is causing cities to grow in number and size. Two centuries ago, the percentage of population estimated to have been living in cities was only 5%. With advancements in transportation, production and communication, more and more people have come to live in the cities, as well as more and more rural areas became urban (Hodson, 2006). In the days before Industrial Revolution, people could not travel to distant places. Most of the jobs were based on agriculture. In the beginning of the 20th century, only 13% of the world's population was living in cities, but towards the end of that century 47% of the population was urban. Over the last few decades, the world has seen rapid increase in urbanization, more so in developing nations. It is estimated that by 2030, 61% of the world's population will be living in cities, and for every one person living in an urban area in a developed nation, there could be four persons living in an urban area in a developing nation (UNFPA, 2000). It is also expected that by 2015 there could be 26 mega cities with a population of over 10 million, a staggering rise from 17 in 1999. (There were only two mega cities in 1960.) Twenty-two of these will be in developing nations (UNFPA, 1999). It was only a few years ago when, for the first time in human history, the urban population outnumbered rural population, marking

the beginning of a new "urban millennium", and by the middle of this century, it is expected that 7 out of 10 people in this planet would live in urban areas.

References:-

1. American India Foundation (2006): Locked Homes, Empty Schools, A Zubaan Original, New Delhi
2. Beall, J. (2000) "From the Culture of Poverty to Inclusive Cities: Reframing Urban Policy and Politics", Journal of International Development Vol. 12.
3. Barker, D.J.P. 1994. Mothers, babies and disease in later life. London, BMJ Publishing Group. Barker, D.J.P. 1995. Fetal origins of coronary heart disease. British Medical Journal, 311: 171-174. Bruinsma, J., ed. 2003. World agriculture: towards 2015/2030. An FAO perspective. Rome, FAO and London, Earthscan. Delisle, H. 2002. Programming of chronic disease by impaired fetal nutrition.
4. Chaudary. J.R (2001) "An introduction to development and regional planning" orient logman publication Delhi.
5. UN (2011), United Nations, Development of Economic and Social affairs, Population Division (2011)
6. World population Prospects: The 2010 Revision. New York. 3. David Satterthwaite, (2007)
7. The transition to a predominantly Urban world and its under pinnings, International Institute for Enviornment and Development, Human settlements", Discussion paper series,
8. HDR (2000), Human Development Report. United Nations Development Programme, Newyork Oxford University Press.
9. Premit,M.R,(1991),"India's Urban scene and its future implications",Demography India, Vol.20, No.
10. G.S. Sastri, (2009) A model for sustainable urbanization, the case of Karnataka". Journal of social and Economic Development.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

A Descriptive Study of Various Financial Inclusion Schemes of Narmada Jhabua Gramin Bank From Year 2014 To 2017

Dr. Vijay Grewal* Prof. Deepali Gupta**

Abstract - Regional Rural Banks have made admirable growth in granting different types of loan to the weaker and under privileged section of the society Present study tried to study the financial inclusion initiatives taken by Narmada Jhabua Gramin Bank (NJGB) and financial inclusion status of bank, which is a regional rural bank of Madhya Pradesh which operates in 14 districts with network 406 branches and 6 regional offices in Madhya Pradesh. A detail Study of Various Financial Inclusion Schemes Of Narmada Jhabua Gramin Bank From Year 2014 To 2017" is attempted through the research paper. The objective was to assess the initiatives taken by NJGB. Study tries to highlight the efforts and growth done by NJGB in past 3 years.
Keywords - Financial Inclusion, Financial Inclusion Schemes, Awareness, Financial Literacy, Financial Products, NJGB.

Introduction - The World Bank (2017) has defined Financial Inclusion as "financial inclusion means that individuals and businesses have access to useful and affordable financial products and services that meet their needs – transactions, payments, savings, credit and insurance – delivered in a responsible and sustainable way." India, being a growing country, needs capital formation through saving and investment. In order to meet this objective there should be planned, promoted and channeled investment arrangement among the inhabitants. However, vulnerable sections, such as weaker section and low income groups continue to remain untouched from even the most basic convenience and services provided by the financial institution.

Financial institutions are like nerves of any nation and finance is like blood. A country grows up speedily only when financial system acts well. Healthy-functioning of financial system serve up not only a basic objective but also to people with payment, credit, offering savings and risk management products along with their changed needs.

A Bank is a financial institution that serves banking and other financial services to its customers. Banks, Micro finance and other financial institutions are contributing an important role along with government to make up this difference. To make available trouble-free credit is more imperative in the financial inclusion program so that the needy group could avail timely and adequate credit.

Narmada Jhabua Gramin Bank - A Regional Rural Bank which was established on 1st November, 2012 after amalgamation of two Regional Rural Banks (RRBs) namely Narmada Malwa Gramin Bank and Jhabua Dhar Kshetriya Gramin Bank.

Narmada Malwa Gramin Bank was financed by Bank of India while Jhabua Dhar Kshetriya Gramin Bank was financed by Bank of Baroda.

The amalgamated bank Narmada Jhabua Gramin Bank covered under Regional Rural Banks Act 1976 having its Head Office at Indore (M.P.) under the sponsorship of Bank of India. The Bank is serving in 14 districts of western MP namely Indore, Ujjain, Khandawa, Sehore, Burhanpur, Jhabua, Dhar, Alirajpur, Dewas, Shajapur, Agar Malwa, Khargone, Barwani and Rajgarh in the State of Madhya Pradesh with 406 Branches & 06 Regional Offices.

Various Schemes by Narmada Jhabua Gramin Bank - Bank has launched many cluster based schemes for agriculturists, traders, salaried persons and others. The main loan schemes are Kisan Credit Card, Star Mortgage, Dairy Entrepreneurship Development Schemes (DEDS), Grading/Branding and Packaging Loan Scheme, Loan against Ware-House Receipt, Education Loan, Rural Housing Loan Scheme, Rain water harvesting, Rural Godown/Grain Storage Scheme, Personal Loan, Auto Finance and Samriddhi Loan, etc.

Many new schemes have been introduced during the year 2013-14 and 2014-15 to diversify loan portfolio viz. Loan against Property, Consumer Vehicle Loan, Tantiya Bhil Scheme, NRLM Scheme, different state government schemes such as CM Yuva Swarojgar Yojna, CM Karigar Swarojgar Yojna, etc.

Several programs have also introduced during the year

*Assistant Professor, Shaskiya Mahavidhyalaya, Ranapur, Distt. Jhabua (M.P.) INDIA
**Assistant Professor, Softvision College, Indore (M.P.) INDIA

2015-16 to diversify loan portfolio viz. Loan against Silver Ornaments (Aabhooshan Taran Yojana), Mudra Yojna, Start-up India Schemes, etc.

Bank has also launched programs such as Agriculture Marketing Infrastructure, MUDRA Loans, Customer Hiring Centre, Stand up India Scheme, Pradhan Mantri Awas Yojana & Mukhyamantri Gramin Awas Yojana under Housing Loans, Auto Finance, etc. during the year 2016-17.

Kisan Credit Cards - Following table shows number of live Kisan Credit Cards issued by NJGB during the period of 2014 to 2017 along with an outstanding amount:

Table: Kisan Credit Cards Issuance Over Various Periods

S.	As on	No. of KCCs	%Increase in No. of KCCs	Outstand-ing Amount (Rs. in Lacs)
1	31.03.2014	159252	-	203641.82
2	31.03.2015	171142	7.47%	239955.89
3	31.03.2016	184901	8.04%	271964.03
4	31.03.2017	187586	1.45%	285087.73

The revised Kisan Credit Card Scheme is operational in Bank to serve trouble free production loan to agriculturist. The bank has taken up the scheme of issuing Kisan Credit Cards to all groups of eligible agriculturist of marginal, small and other categories of agriculturist connected with agriculture production and goal of delivering new cards had been fixed for every Rural and Semi-urban branch of the Bank. Every eligible agriculturist has been covered under Personal accidental Insurance Scheme. Bank has issued RuPay Kisan ATM cards to eligible KCC holders.

It is very clear from the above table that the issuance of number of Kisan Credit Cards is rising over the period of 2013-14 to 2016-17.

Self Help Groups (SHGs) - Micro Finance is the thrust area of the bank. To give a push to Micro Finance, prominence was given for the formation and linkage of SHGs. Following points clear the position of SHGs in NJGB for the period 2013-14 to 2016-17:

Table: SHGs Establishment During Various Periods

S.	As on	No. of SHGs	%Increase in No. of SHGs
1	31.03.2014	33641	-
2	31.03.2015	43466	29.21%
3	31.03.2016	40106	-7.73%
4	31.03.2017	44440	10.81%

Execution of MOA with NABARD on SHG Linkage Project - Both the erstwhile RRBs have executed MOA with NABARD for Bank Linkage Project on Self Help Group. In the project formation, promotion and linkage of 7200 SHGs is proposed during three years. Out of projected SHGs, 50% will be formed under Bank Model and remaining will be formed under NGO model. Formation of 3878 SHGs has been completed up to March 2014.

Formation and linkage of SHGs against the target has been completed during the financial year 2014-15 and 2015-16.

Annual Credit Plan (see in last page)

Keeping pace with its tradition of surpassing the Annual Credit Plan Target with substantial Margins, the bank has registered overall achievement during various years. The district-wise position of disbursement of loans under ACP was depicted in above table:

For Jhabua: For the period 2013-14 the achievement of credit is highest i.e. 3 times of the set target among listed periods.

For Burhanpur: For the period 2015-16 the achievement of credit is highest i.e. more than 2 times of the set target among listed periods.

For Khargone: or the period 2013-14 the achievement of credit is highest i.e. more than 2 times of the set target among listed periods.

Financial Literacy - To improve the quality life of the poor, neglected, weaker and downtrodden section of the society and also to ensure capacity building on sustainable basis, it is required to associate them with banking system. To meet out this goal bank has started educating the people of this section of society with regard to various financial products and services available from the formal financial sector as a mission, through agriculturist clubs, SHGs. Following activities were organized and performed by NJGB:

1. During 2013-14, top management of the bank has participated in financial literacy programs at different locations. In these programs participants have also been enlightened about the various loan schemes available to them, proper utilization of loan amount and significance of timely repayment of loan amount.
2. Members of Agriculturist Club and Self Help Group have also invited to attend these programs. NABARD provides subsidy under F.I.F. for financial literacy programs.
3. For the 2014-15 NJGB has organized 300 Financial Literacy programs.
4. Bank has executed School Champ Project of Government of India in an innovative manner during 2015-16. Bank has executed the project in a single day to cover 87074 students of 414 schools. Partnership approach with effective Time and Human Resource Management executed the project in a single day across M.P. State to create better citizens with basic financial understanding by targeting young minds at an early age.
5. In addition to above Regional Office, Dewas observed Literacy Camps exclusively for Self Help Groups (SHGs) to strengthen SHG movement within one week (8th to 14th March, 2016). They have covered 485 SHGs with participation of 3626 SHG families with 144 literacy programs involving 53 branches.
6. During the year 2016-17 bank has organized 205 Digital Financial Literacy Camps under special project of

NABARD through BCs.

Establishment of FLC - As per the guidelines of NABARD, NJGB has opened 05 Financial Literacy Centers (FLCs) at 12 locations for providing of Financial Literacy to the Cliental of the bank. The following table depicted the name of centers and allotted districts as well as number of financial literacy camps organized by NJGB during the period 2016-17 along with numbers of beneficiaries from these camps.

Table: Progress of FLCs (see in last page)

Every financial center of NJGB has organized more literacy camps in the year 2017 in comparison to literacy camps organized in the year 2016 which indicates that every center established by NJGB has put forward active and continuous efforts to educate about financial products and services to the population of rural and semi-urban regions of Indore district.

Joint Liability Group (JLG) - Bank has implemented the scheme for small, marginal, tenant agriculturist and similar economic groups in farm and non-farm sector by forming and financing JLGs.

For augmenting the credit flow to JLGs bank has signed MOU with NABARD for formation & linkages of 3000 JLGs within 03 years from 01.04.2014 to 31.03.2018. Under the project, bank has formed 726 JLGs of which 488 JLGs credit linked.

Table: Progress under Joint Liability Group

S.	As on	Joint Liability Group (No. ofCards/Account)	%
1	31.03.2014	936	-
2	31.03.2015	1020	8.97
3	31.03.2016	1288	26.27
4	31.03.2017	1519	17.93

Agriculturist' Club - To achieve the goal of development of rural mass through credit, awareness and capacity building, the bank has emphasized formation of vibrant and sustainable Agriculturist Club. These Agriculturist Clubs are helping the bank to get new business and also recovery in NPA & Written of Accounts. They are carrying out the Role of Business Facilitators.

NJGB has formed Agriculturist Clubs with the help of NABARD. Following activities were formed under agriculturist club:

1. These agriculturist clubs are also playing a vital role in eradication of alcoholic habits among the villagers, plantation, construction of ponds, organizing eye camps, vaccination camp for cattle etc. Officials of the bank regularly visit the meetings of the clubs and provide necessary assistance and guidance.
2. On 18.12.2014 in a first of its kind bank arranged exposure visit for 25 members of agriculturist club for The Soyabean Processors Association of India (SOPA), in association with NABARD.
3. Bank has organized a second exposure visit (16-18 March 2015) to Onion & Garlic Research Center Rajguru Nagar, Pune of Indian Council of Agriculture Research for 23 members of agriculturist club. The visit was sponsored by NJGB in association with NABARD. Agriculturist Club expressed that visits remain very beneficial for agriculturist.
4. Bank organized an exposure visit (17-19 March 2016) to NATIONAL RESEARCH CENTER ON SEED SPICES, AJMER, 16 members of agriculturist club. The visit was sponsored by us in association with NABARD.

Following table shows number of Agriculturist Club from 2013-14 to 2016-17:

Table: Progress on Agriculturist' Club

S.	As on	Agriculturist' Club	%
1	31.03.2014	1307	-
2	31.03.2015	1404	7.42
3	31.03.2016	1426	1.57
4	31.03.2017	1453	1.89

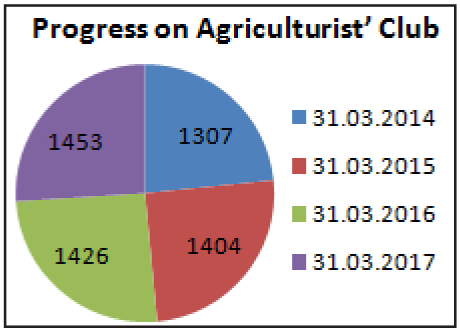

Loan Disbursement - The bank has played an effective role in disbursement of loan under different schemes. Either agriculture loan or priority sector loan or non-priority sector loan, it is increasing from the previous year which indicates that NJGB is giving aid to each sector for fulfilling their planning and contributes to the country's economy by achieving their objectives and short term and long term goals. The activity wise disbursement for the period 2012-13 to 2016-17 (see in last page)

Technical up gradation in NJGB

During Financial Year 2013-14

All branches of the bank are working on CBS platform. In the field of technical up gradation achievements are as under:

1. Bank has successfully completed technical amalgamation of erstwhile RRBs on 18.08.2013.
2. Bank has started participation in CTS 2010 clearing w. e. f. 18.01.2014 on western rid.

This participation has been started as a sub-member of Bank of India through NJGB service branch of Indore.

1. During this year 19 new branches under CBS environment have been opened,
2. RuPay ATM Card- NJGB has on boarded for RuPay ATM Card NPCI RuPay Network.

During Financial Year 2014-15 - In the field of technical up gradation achievements are as under:

1. Bank is on-boarded for ACH Debit/ NACH Credit on National Automated Clearing House.
2. Bank has launched Internet Banking for customers.

3. Bank started AEPS Transactions through Micro ATMs & Kiosks.
4. Bank is on-boarded with NPCI for Electronic Benefit Transfer (EBT).
5. Inter-operability of ATM cards commences during the year.
6. During this year 21 new branches under CBS environment have been opened.

During Financial Year 2015-16 - In the field of technical up gradation achievements are as under:

1. Bank is on boarded for ECS in contribution to ACH Debit/ NACH Credit & EBT through National Automated Clearing House.
2. Bank has been participating in CTS Clearing at Indore. Bank has started participation in CTS clearing at two more centers i.e. Ujjain and Dewas.
3. Bank provides inter operable ATM RuPay Cards with internet banking to customers.
4. Bank performance uninterrupted AEPS Transactions through Micro ATMs & Kiosks by its Business Correspondents (BCs).
5. Inter operable ATM RuPay Cards are available at E-Commerce Locations during the year.
6. Bank has taken initiatives to launch SHG dual authentication transaction module at BC location through Micro ATMs and Kiosks.
7. During this year 20 new branches under CBS environment have been opened.

During Financial Year 2016-17 - In the field of technical up gradation achievements are as under:

1. Bank is on boarded for ECS in contribution to ACH Debit/ NACH Credit & EBT through National Automated Clearing House.
2. Bank is participating in CTS Clearing at Indore, Ujjain and Dewas centers.
3. Bank provides inter operable ATM RuPay Cards with internet banking to customers.
4. Bank performance uninterrupted AEPS Transactions through Micro ATMs & Kiosks by its Business Correspondents (BCs).
5. Inter operable ATM RuPay Cards are available at E-Commerce Locations during the year.
6. Bank has launched SHG Account opening and transactions through dual authentication at BC location through Micro ATMs and Kiosks.
7. During this year 22 new branches under CBS environment have been opened.

Financial Inclusion

During Financial Year 2013-14

1. Bank has formulated financial inclusion plan 2013-16 for 4181 villages allotted by SLBC.
2. Due to back out of earlier TSP/ Corporate BC, FI project of NJGB had been help up.
   Alternatively it has appointed NICT Ltd. as Corporate BC for implementation of its FIP project. Bank has started Kiosk Banking at 108 locations through NICT Ltd. The progress as on 31.03.2014 for the same during the year is as under:

BC/BF Appointed for Kiosk	Total Villages (CSP) Covered	No. of Accounts with BC	Transaction details through Kiosk during the year 2013-14	
			No. of Tran.	Amt. in Thousands
108	865	57855	124	205

Government subsidy/benefit transactions have been successfully performing in the bank in "Aadhaar" enabled Accounts. Progress for the year under DBT scheme is as under:

Aadhaar No. enabled Accounts	DBT Transaction details during the year 2013-14	
	No. of Tran.	Amt. in Lacs
54775	31777	194.78

Establishment of FLC - As per guidelines of NABARD, bank has opened 05 Financial Literacy Centers (FLC) at following locations for providing of Financial Literacy to the Cliental of the banks:

S.	FLC Center	Allotted Districts
1	Chapda	Dewas, Shajapur andAgar Malwa
2	Kasrawad	Khargone, Khandwaand Burhanpur
3	Narsinghgarh	Rajgarh and Sehore
4	Jhabua	Jhabua, Alirajpur andBarwani
5	Rajgarh	Dhar

During Financial Year 2014-15

1. Bank has been allotted 4208 villages and 438 wards for PMJDY and Financial Inclusion by SLBC.
2. Bank has appointed NICT Ltd. and Red Craft as corporate BC for implementation of its FIP Project. It has started Kiosk Banking at 700 SSA through these corporate BCs. At 238 SSA and 438 wards branches of bank are providing banking facilities.

The progress as on 31.03.2015 for the same during the year is as under:

Total SSA/CSP	Total Villages (CSP) Covered	No. of Accounts with BC	Transaction details through Kiosk during the year 2014-15	
			No. of Tran.	Amt. in Thousands
938	4208	550707	191686	752711

DBT/ APBS scheme of Government of India has been launched in the bank. Government subsidy/benefit transactions have been successfully performing in the bank in "Aadhaar" enabled Accounts. The progress for the year under DBT scheme is as under:

Aadhaar No. enabled Accounts	DBT Transaction details during the year 2014-15	
	No. of Tran.	Amt. in Lacs
118734	66483	25274

During Financial Year 2015-16

1. Bank has been allotted 4208 villages and 438 wards for PMJDY and Financial Inclusion by SLBC. Bank has implemented FI Service in all these villages and wards through 767 BCs.
2. Corporate BCs NICT Ltd. and Red Craft Events are providing active participation in the bank's Financial Inclusion Project through 767 BCs.

The progress as on 31.03.2016 for the same during the year is as under:

Particulars	Total No. of Accounts	Total Outsta -nding	Total No. of Transa -ctions	Transac -tion Amount
BSBDA A/Cs	1929836	17570.57	6444366	112911.70

DBT/ APBS scheme of Government of India has been launched in the bank. Government subsidy/benefit transactions have been successfully performing in the bank in "Aadhaar" enabled Accounts. The progress for the year under DBT scheme is as under:

Aadhaar No. enabled Accounts	DBT Transaction details during the year 2015-16	
	No. of Tran.	Amt. in Th.
401531	199635	47207

During Financial Year 2016-17

1. Bank has been allotted 4208 villages and 438 wards for PMJDY and Financial Inclusion by SLBC. Bank has implemented FI Service in all these villages and wards through 767 BCs.
2. Corporate BCs NICT Ltd. and Red Craft Events are providing active participation in the bank's Financial Inclusion Project through 767 BCs.

The progress under BSBDA account as on 31.03.2016 for the same during the year is as under:

Particulars	Total No. of Accounts	Total Outsta -nding	Total No. of Transa -ctions	Transac -tion Amount
BSBDA A/Cs	2312736	3246908	10159602	18533465

Sakhi Samaveshan Project: A Jewel in the Crown - An ambitious, innovative FI project named as Sakhi Samaveshan Project was launched by NJGB in Indore District in July 2014. Partners in this project are GIZ-Germany and NABARD. The Pilot has been extended to Dewas district in October 2014. The objective of the project is to harness the potential of ordinary SHG women members to function as Business Correspondents (BCs) by offering various banking services to the rural and urban cluster customers like agriculturist, landless laborers, etc. especially unorganized sector Women Empowerment.

After a series of Capacity Building programs the bank Sakhis are introduced to the community. The Bank Sakhis provide a range of financial and non-financial services on behalf of the bank to the targeted communities. The federations of Madhya Pradesh State Rural Livelihood Mission/ NGO provide capacity development, training support to the Sakhis and also monitoring of the project on day to day basis and hand holding is ensured by all the stake holders. Sakhis are also engaged in creating financial awareness in the communities.

The bank has partnered with Priya Sakhi Mahila Sangh and Aprajita Mahila Sangh, who are engaged as Local Federations, NICT as corporate BC and TCS as a technology service provider.

The project has won two National Awards so far and has been nominated for a few International Awards.

Conclusion - The present research paper has studied about the detailed comparison of various schemes and their growth from 2014 to 2017. The highlights are as follows:-

1. NJGB has issued 159252 Kisan Credit card in 2014 which was increased to 187586.
2. Self Help Groups (SHGs) was 33641 as on 31.03.2014 which was increased to 44440 by 31.03.2017.
3. Targets of Annual Credit Plan achieved every year in every district.
4. Every financial center of NJGB has organized more literacy camps in the year 2017 in comparison to literacy camps organized in the year 2016.
5. Bank has formed 726 Joint Liability Groups of which 488 Joint Liability Groups credit linked.
6. NJGB has formed 1453 Agriculturist Clubs up to 2017.
7. During this year 19 new branches under CBS (Core Banking Solution) environment have been opened.
8. Bank has formulated financial inclusion plan in 4208 villages and 438 wards in financial year 2016 to 2017
9. The bank has partnered with Priya Sakhi Mahila Sangh and Aprajita Mahila Sangh, who are engaged as Local Federations, NICT as corporate BC and TCS as a technology service provider for its Sakhi Samaveshan Project.

From the above data it is very clear that NJGB has successfully achieved growth in its previous schemes and also started many new schemes. It helped in the overall economic development of the underprivileged population.

References :-

1. Narmada Jhabua Gramin Bank 2014-2017 annual report
2. Reserve Bank of India (2004): "Report of the Advisory Committee on Flow of Credit to Agriculture and Related Activities From the Banking System"
3. https://mpgb.co.in/
4. http://www.njgb.in/investor/annual.php
5. http://www.economicsdiscussion.net/essays/essay-on-regional-rural-banks-rrbs-of-india/17830

Annual Credit Plan

Table: Annual Credit Plan Description

S.	District	2013-14 (Amt. Rs. in Thousands)			2014-15 (Amt. Rs. In Thousands)		
		Target	Achievement	%	Target	Achievement	%
1	Dewas	3612215	7447419	103.74	3666660	4970142	135.55
2	Shajapur	1668315	1982647	118.84	2124055	2568552	120.93
3	Khargone	1671680	3435667	205.52	2010934	3028548	150.60
4	Khandwa	1223880	1727820	141.18	1614012	2138038	132.47
5	Burhanpur	493198	923391	187.23	616225	877955	142.47
6	Ujjain	4017600	2500004	62.23	5138946	3291384	64.05
7	Indore	1325230	1247181	94.11	1643253	1645638	100.15
8	Jhabua	502455	1552656	309.01	703000	518574	73.77
9	Dhar	3474661	3016071	86.80	4610580	3819682	82.85

S.	District	2015-16 (Amt. Rs. in Thousands)			2016-17 (Amt. Rs. In Thousands)		
		Target	Achievement	%	Target	Achievement	%
1	Dewas	4511013	5626449	124.73	5538406	6344447	114.55
2	Shajapur	2187736	2699129	123.38	2469650	2757385	11.65
3	Khargone	2051118	2898409	118.25	3322737	2780633	83.69
4	Khandwa	2077054	2395200	115.32	2529184	2397865	94.81
5	Burhanpur	735409	1515654	206.10	901095	962143	107.44
6	Ujjain	6277462	3603466	57.40	7067880	3633420	51.41
7	Indore	1955402	1473743	75.37	2754616	1837562	66.71
8	Jhabua	958360	853714	89.08	1107882	615996	55.60
9	Dhar	6979722	3244367	46.48	8462090	4222592	49.90

Table: Progress of FLCs

S.	FLC Center	Allotted Districts	No. of Literacy Camps organized As on31.03.2016	No. of Bene ficiaries 31.03.2016	No. of Literacy Camps organized 31.03.2017	No. of Beneficiar -ies 31.03.2017
1	Chapda	Dewas, Shajapur and Agar Malwa	67	4268	212	7593
2	Kasrawad	Khargone, Khandwa and Burhanpur	153	12852	341	20333
3	Narsinghgarh	Rajgarh andSehore	231	4648	420	11876
4	Jhabua	Jhabua, Alirajpur andBarwani	47	2228	136	6029
5	Rajgarh	Dhar	166	3985	290	7134

The activity wise disbursement for the period 2012-13 to 2016-17 is as follows:

1	AgricultureLoan					
	Crop Loan &KCC	20844245	22895008	28899260	28827103	31308695
	Agriculture &Term Loan	392271	557787	369623	336565	234118
	TotalAgriculture Loan	**21236516**	**23458795**	**29268883**	**29163668**	**31542813**
2	MSME	569022	673107	831772	2036804	1756247
3	Other PrioritySector	573836	1506576	1675397	2048729	1012512
	PrioritySector Total	**22379374**	**25632478**	**31776052**	**33249201**	**34311572**
4	Non PrioritySector	839704	965851	1246455	1386745	1455252
	Grand Total	**23219078**	**26598329**	**33022507**	**34635946**	**35766824**

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

भारतीय कूटनीति का बदलता स्वरूप : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

डॉ. रमा सिंह *

प्रस्तावना – अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भारतीय विदेश नीति अब पहले की अपेक्षा और ज्यादा मजबूत और सशक्त हुयी है। भारत पूरे विश्व में एक नयी छवि को लेकर उभर रहा है। भारत विश्व में बिना किसी भी दबाव के अपनी बात कहने की ताकत वर्तमान समय में रखता है। भारतीय कूटनीति का यह बदलाव सन् 2014 से देखने को मिलता है, जब माननीय श्री मोदी जी भारत के प्रधानमंत्री के रूप में शपथ लेते है और अपने शपथ ग्रहण समारोह में विभिन्न देशों के राष्ट्राध्यक्षों को आमंत्रित कर अपने सम्बन्धों को और मजबूती प्रदान करते है। उन्होने पड़ोसी देशो के साथ अपने सम्बन्धों को प्रगाढ़ किया और अपने विदेशी दौरे की शुरूआत सन् 2015 में भूटान जैसे छोटे देश के साथ किया। मंगोलिया जो भारतीय राजनायिकों के लिए अछूता था, उसके साथ सम्बन्धों को जोड़ने के लिए उन्होनें वहां का दौरा किया तथा मंगोलिया जाने वाले वह प्रथम भारतीय प्रधानमंत्री बने। बांग्लादेश को प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने एक स्वतंत्र आजाद राष्ट्र के रूप में जन्म दिया। परन्तु अपने जन्म के एक वर्ष बाद सन् 1973 में तीस्ता नदी के जल विवाद के साथ भारत के साथ युद्ध की स्थिति में आये भारत ने बांग्लादेश के साथ अपने सीमा विवाद को भी न केवल जल समझौता करके बल्कि बांग्लादेश के विकास के लिए आर्थिक सहयोग के माध्यम से समाप्त किया। पाकिस्तान के साथ सन् 2015 में ही आकस्मिक दौरा करके प्रधानमन्त्री मोदी जी ने राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ की माता के जन्म दिवस पर उन्हे साड़ी भेंटकर भारतीय संस्कृति का प्रचार भी किया वहीं पाकिस्तान के साथ मधुर सम्बन्ध बनाने के लिए हाथ भी बढ़ाया। साथ ही आतंकवाद के मुद्दे पर अपने कड़े तेवर को भी व्यक्त करते हुए भारत के नरम के साथ गरम रवैये को भी दर्शाया और भारत के इस रवैये का अमेरिका के साथ-साथ रूस तथा कई अन्य देशों ने भी समर्थन किया। 2001 में अमेरिका के यूनाइटेड टावर पर हुये आतंकी हमले के बाद अमेरिका आतंकवाद का कट्टर विरोधी हो गया और जब प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने आतंकवाद के मुद्दे को अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर रखा तो अमेरिका ने भारत के प्रयासों की प्रशंसा करते हुए भारत का साथ देने का निर्णय लिया। वहीं भारत ने अमेरिका तथा रूस के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूती देने के लिए दोनों देशों का दौरा ही नही किया वहॉ के राष्ट्राध्यक्षों को भी भारत आमंत्रित किया।

भारतीय इतिहास ने आजादी के बाद यह पहला अवसर था जब अमेरिका और रूस के साथ एक साथ भारत अपने सम्बन्धों को मजबूत करने की दिशा में आगे बढ़ रहा है। भारतीय प्रधानमंत्री ने 34 सालों के बाद यूएई का दौरा किया। यह किसी भारतीय प्रधानमंत्री का 34 सालों में प्रथम दौरा था। भारत संबंधों को सुधारने की कोशिश कर रहा है परन्तु हाल के कुछ वर्षों में चीन की विस्तारवादी नीति के कारण हस्तक्षेप और भारतीय सीमा के उल्लघंन से भारत की पकड़ कमजोर हुयी है। भारत सरकार ने अमेरिका, जापान तथा आस्ट्रेलिया के साथ मिलकर चतुष्कोणीय सुरक्षा संवाद को और अधिक बढ़ाया है। भारत सौर-गठबंधन में शामिल होकर सारी दुनिया का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। भविष्य में इस सौर-गठबंधन के अच्छे परिणाम आने की पूरी सम्भावना है। प्रधानमंत्री के 2016 के इजराइल और फिलिस्तीन दौरे ने भारत के इजराइल तथा फिलिस्तीन दोनों देशों के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूती प्रदान करने का प्रयास किया। भारत ने एक देश के साथ सम्बन्ध बनाने पर दूसरे देश की कुर्बानी नही दी है।

अमेरिका का भारत के प्रति एक सकारात्मक रवैया देखने को मिल रहा है। जब उन्होनें मोदी को अपना मित्र कहते हुए भारत को एशिया की ताकत के रूप में स्वीकार किया। अमेरिका ने भारत को एशिया-प्रशांत का एक उभरती महाशक्ति कहा और भारत के साथ रणनीतिक साझेदारी को मजबूत करने की बात कही। भारत के दक्षिण-पूर्व एशिया की लुक ईस्ट पॉलिसी ने एक्ट ईस्ट के साथ करवट ली। लुक ईस्ट पॉलिसी की शुरूवात नब्बे के दशक में हुयी परन्तु इसको कार्यान्वित करने पर भारत की तत्कालीन सरकार ने बहुत जोर दिया। सन् 2017 में भारत के प्रधानमंत्री ने दो अफ्रीकी देशों रवांडा तथा युगांडा का दौरा किया। यह अफ्रीका के गरीब तथा पिछड़े देश हैं। वहाँ जाने से भारतीय विदेश नीति को दशा तथा दिशा दोनों ही प्राप्त हुयी है।

फिलिस्तीन की यात्रा करने कोई पहली बार भारतीय प्रधानमंत्री गया। मालदीव के साथ भी भारत ने अपने संबंधों को मजबूत किया है। हाल ही में मालदीव मे मालद्धीवीय डेमोक्रेटिक पार्टी की सरकार बनी है। जिससे भारत तथा मालदीव के मध्य संबंध और मधुर हुये हैं।

भारतीय राजनीतिक चिंतक कौटिल्य कहता है कि किसी भी राष्ट्र को अपनी सम्प्रभुता अछुण्ण रखने के लिए पड़ोसी देशों से मैत्री भाव रखने चाहिए और भारतीय संस्कृति पर आधारित विदेश नीति का अनुसरण करते हुए नेपाल के साथ मैत्री भाव ही नही हमारे पूर्वज श्रीराम की ससुराल के रूप में उसका ख्याल भी रखा जाता है। यही कारण है कि नेपाल के आर्थिक विकास के लिए सन् 2016 में प्रधानमंत्री जी द्धारा विशेष सहयोग की घोषणा की गयी।

भारत ने विदेश नीति को मजबूती प्रदान करने के लिए अपनी कूटनीति में भी बदलाव किया है। भारत के लिए वर्तमान समय में राष्ट्रहित सर्वोपरि है। आज का भारत वर्तमान अन्र्तराष्ट्रीय दबाव में झुकने वाला नही है बल्कि अपने हितों की रक्षा करने वाला भारत है। भारत में पहले की अपेक्षा एक नई ऊर्जा का प्रवाह देखने को मिलता है। वैश्विक संदर्भो में कहा गया है कि जो

* एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) आर्य कन्या डिग्री कालेज, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

एशिया में शक्तिशाली होगा वह विश्व को दिशा देगा। चीन इस दिशा में तिब्बत, हॉगकांग को कब्जे में करने के बाद सन् 1960 से ही भारत पर कुटिल निगाह लगाये हुये है। सन् 1962 में भारत पर आक्रमण करके जीत जाने से उसका मन बढ़ रहा है और यही कारण है कि गलवान घाटी के क्षेत्र में सदैव घुसपैठ करता रहा है। पाकिस्तान समर्थित कश्मीर में सड़कों का निर्माण कर भारत में हिमाचल प्रदेश, अरूणांचल प्रदेश एवं सिक्किम पर सदैव उसकी नजर रही और उसपर कब्जा करना चाहता है। सन् 2014 के बाद भारत ने अपनी सामरिक शक्ति को बढ़ाकर स्पष्ट कर दिया कि वह चीन के गंदे मंसूबों को सफल नही होने देगा। भारत का पाकिस्तान की सीमा में घुसकर आतंकी अड्डों को खत्म करना इस दिशा में उठाया गया एक कदम था।

जिसके तहत भारत सरकार ने इस व्यापारिक समझौते से साफ इन्कार कर दिया है। भारत सरकार ने कहा कि भारत ऐसे किसी अन्तर्राष्ट्रीय संधि का हिस्सा नहीं बनेगा जो पक्षपातपूर्ण तथा एक तरफा हो। सरकार के इस फैसले ने भारत को विश्व-पटल पर एक सशक्त राष्ट्र का दर्जा दिलाया है।

भारत ने प्रधानमन्त्री मोदी जी के नेतृत्व में सन् 2016 के बाद लगातार पर्यावरण संरक्षण की दिशा में विश्व को राह दिखा रहा है। जलवायु और पृथ्वी सम्मेलनों में भारतीय प्रधानमन्त्री जी की स्पष्ट वकतृत्वता इस बात को कहती है। वहीं स्वच्छता आन्दोलन भारत को राष्ट्रीय एकता को मजबूत कर रहा है परन्तु विश्व में भी भारत की साफ-सफाई की तरफ बढ़ते कदम को भी सशक्त दिखा रहा है। जिसके कारण मृत्युदर में कमी आयी है। भारत अपने विदेश नीति को एक नया आकार तो प्रदान कर रहा है फिर उसके सामने चुनौतियां भी बहुत है भारत के पड़ोसी देशों में चीन का हस्तक्षेप लगातार बढ़ रहा है चीन का हाल के वर्षो में नेपाल की तरफ रूझान बढ़ रहा है। जिससे भारत तथा नेपाल के रिश्ते कमजोर हुए है। चीन अपनी साम्राज्यवादी नीति के तहत् बेल्ट एण्ड रोड इनिशिएटिव यानी बी0आर0 आई0 को पुरजोर विरोध कर रहा है क्योंकि इससे भारत के पड़ोसियों पर चीन को प्रभात बढ़ता जायेगा। चीन का विरोध करके निश्चित ही भारत अपनी बदलती दमदार विदेश-नीति का परिचय दे रहा है। आर्थिक रूप से पिछड़े देशों को भारत नवउपनिवेशवाद को शिकार होने से बचा रहा है। श्रीलंका ने अपना बंदरगाह चीन के हवाले करके भारत की चिंता को बढ़ा दिया है फिर भी भारत ने सियाचीन, गिलगित विवाद हो चाहे गलवान घाटी विवाद हो चीन को पीछे हटने पर मजबूर कर दिया निश्चित ही यह भारतीय विदेश-नीति का बदलता स्वरूप है।

भारत और अमेरिका के सम्बन्ध को मजबूत करने के लिए दोनों देशों ने एक सैन्य समझौता किया है जिससे दोनो देशों की सेनाओं के मध्य तकनीकी का आदान-प्रदान हो सकें। राष्ट्रपति बराक ओबामा के साथ ही राष्ट्रपति ट्रम्प ने भी भारत को इंडो पैसेफिक क्षेत्र में प्रमुख हितधारक के रूप में प्रतिष्ठित किया है परन्तु उसका नकारात्मक पहलू यह है कि अमेरिका ने वीजा नियमों के तहत प्रवासी भारतीयों के लिए मुश्किलें खड़ी कर दी है। अमेरिका का ईरान से टकराव होने का भी प्रभाव पड़ा है इसके साथ ही भारत के लिए पाकिस्तान का आतंकवाद जहां चिन्ता का विषय है वही चीन भी इस चिन्ता को बढ़ा रहा है क्योंकि वह दिन पर दिन पाकिस्तान मे मार्ग हवाई देश बनाकर एशिया के देशों पर अपना प्रभाव बढ़ाता जा रहा है। भारत की विदेश-नीति का अवलोकन करने पर पता चलता है कि 5-6 वर्षो से भारत की विदेश-नीति में बहुत बदलाव देखने को मिलता है। भारत का आतंकवाद जैसे मुद्दे पर पूरी दुनिया ने साथ दिया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत एक बड़ी शक्ति बनकर विश्व पटल पर उभरेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. केनेथ वाल्टज : मैन, द स्टेट एण्ड वार, 1959, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क।
2. हेनरी किंसीजर : डिप्लोमेसी, 1994, साइमन एण्ड सुस्टर पेपर बैक प्रकाशन, न्यूयार्क।
3. डेविड लेक, जेफरी फ्रिडेन एवं केनेथ ए0 शुल्ज : वर्ल्ड पॉलिटिक्स : इन्टरेस्ट, इन्टरैक्शन, इन्स्टीट्यूशन, 2009।
4. सैमुअल पी. हैटिंगटन : द क्लैश ऑफ सिविलाइजेशन, 1996, साइमन व शुस्टर प्रकाशन, न्यूयार्क।
5. हेंस जे0 मार्गेन्थाऊ एण्ड केनेथ डब्ल्यू थॉमसन : पॉलिटिक्स एमांग नेशन्स, 1948।
6. राजीव सिकरी : पैलेंज एण्ड स्ट्रेटजी : रिथिंकिंग इण्डियाज् फॉरेन पॉलिसी, सेज प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2009।

****

Migration and Urbanization in the City of Saharsa

Dr. Birendra Prasad Yadav*

Introduction - "Urbanization is the process whereby land and inhabitants become urban. It refers to a change in both place and people ".(Smailes, 1975,1). Demographic dynamics in aresion constitutes one of the most significant aspects of the population geography (Dube 1979,19). The growth of population is of vitai importance in the study of population geography of an urban center. Population growth in an area is an index of its economic development,social awakening, cultural background, historical events and and political ideology(Chandan and Sindhu, 1980,3)

The United Nations defines migration as the geo graphical mobility of persons between areas, generally involving a change of residence over a specific period of time.Every member of populations reside at some point space.A change in location of his residence, i.e. his movement in space is termed as 'Spatial mobility' or migration (Verma,1977,161).To migrate means to move from one place,country or town to another.It is not biological phenomenon,rather social,economic,political or cultural.

Migration and urbanization - Role of migration in urbanization has been studied by different scholars. "As compared to the role of natural increase in urban population is not considered to be very significient (Vaidanathan 1969,41-48).He measured the contribution of migration and natural increase in the 1951-61 census where migration as a factor pushing up urban growth was found more important than the natural growth. "Rural to urban migration is by far major component of urbanazition and is the chief mechanism by which all the world's great urbanization treands have been accomplished(Bogue and Zachariah, Barkley,2)The view is corroborated by the studies made by Crane and Davis (Crane 1955,467).

Auto -urbanization - A significant point related to the corelate of urban growth is that the natural increase in population makes a very significant contribution to the total urban growth in our country. This has been found true in the case of some other asian countries also (zachariah,1967).As compared to the rural areas, decline in the rate of mortility first occurred in the urban areas as a result of expension and acceptance of modern medical facilities, but no such change took place in the existing rate og fertility. Consequently, the rate of natural increase in urban population become faster than that of natural increase in rural one, compounding the impact of migration and speeding ups the process urbanization. The role of natural growth in rapid rise of urban population has also been stressed (Gore,1975,110-19).Growth in urban population as a result of natural increase in the population of towns has been conceptualized "as autourbanization".

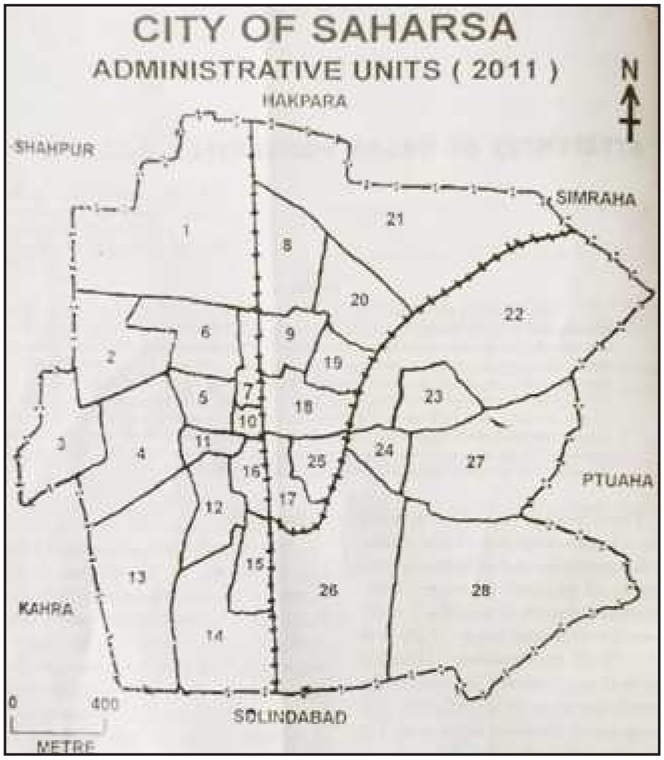

Saharsa City - The geographical perspective of the city of Saharsa is diverse due to its location in the flood ravaged belt of the KOSI river. Located on the eastern side of the Kosi river just 5. K.M. east & north of Telabi river the people in the city of Saharsa always felt happiness and hence, it is aplace of eternal peace and enjoyment amdist myriads of channels of the Kosi river.

So far as the areal extent is concerned the city of Saharsa extends over an area a of 35 km^2 and divided in to 28 wards(Fig. 1).According to 2001 census it has a population of 1,24,015 and the density population is 3543 persons per square kilometer. The latitudinal position of Saharsa is 25^{0}52'30"N whereas longitudinal position is 66^{0}E.

*M.A,Ph.D (Geo.), AT- Parmanpur, P.S-Ghelarh, Distt-Madhepura (Bihar) INDIA

The sphere of influene of Saharsa suffers from annual flooding as the surrounding area is lowland made of rivers, chaurs and wetlands formed in course of the unequal deposition of sand and silt in the flood plain of the Kosi river.

Factors Affecting Growth of Urban Population - In the city of Saharsa the factors affecting growth of population are varied in form and type.Among the factor fertility,mortality and migarations are the basic factors which help in increase or decline in population in the city of Saharsa. Besides these, the increase in agricultural and industrial productivity help in increasing the population in urban centre. The rise in trade and commerce is like pillar of all urban funcations which attract people from the far-flung place towards them.

Transportation lines are considered as life - line for the movement and increase of population.Thease days in the city of Saharsa the mushroom growth of colleges and schools have atteracted students in such a large number that the population size of urban center increased fast since 1971. The establishment of Block,Subdivision and the creation of district and divisional headquarters have attracted the officials for job and the to and fro of clients increased. Thid gives an impetus for the increases of population in urban centre of Saharsa (Fig.2).

Fig.02

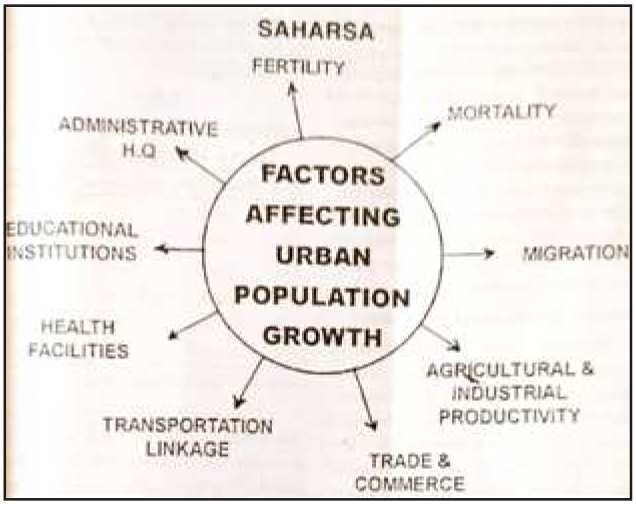

Urbanization Pattern - Urbanization is rapid and fast 'population growth'.The term 'growth of population' means 'a change in population numbers inhabiting a territory during a specific period of time,irrespective of the change is positive or negative.' This change or growth can be measured both in terms of absolute numbers and percentages. There are four ways in which the number if people has in an area can change (i) Someone may be born in the area, (ii) an inhabitant may die,(iii) and outsider may move into the area,(iv) a resident may move – out (Thomlinson,1976,1).Thus the population growth is not a unitary phenomenon, but it consist of "four major components – fertility,mortility,immigration and emigration(Ghosh,88).The balance between births and deaths is known as, natural increase or reproductive change." Population growth of an area is a combination of two factors – natural increase and net migration"(Verma,1967,121)

Decadal Variations of population - The variations of the growth of population in between two census periods is the outcome of economy performance in the city of Saharsa besides the administrative peace in the city. The urban centre like Saharsa where there is lack of industries, lack of good transportfacilities and the rise of anti-social elements or extremists are found and hence such areas are not conductive for the growth of population as no one wants to live in tension and turmoil.

Table – 1 :Percent Growth of Population in the city of Saharsa(1951 – 2011).

Year	Population	Variations	% growth.
1951	2,463	—	—
1961	14,803	2,340	18.77
1971	23,217	8,414	56.83
1981	57, 227	34,010	146.48
1991	80,011	22,784	39.81
2001	124,015	44,004	54.99
2011	156,540	32,525	20.78

Source: Census of India,Bihar.

The decadal growth of population has been calculated on the basis of the formula which gives and average arithmetic growth rate (Hommer and Rogoff,1966).

CITY OF SAHARSA DECADAL VARIATIONS OF POPULATION (1951 – 2011)

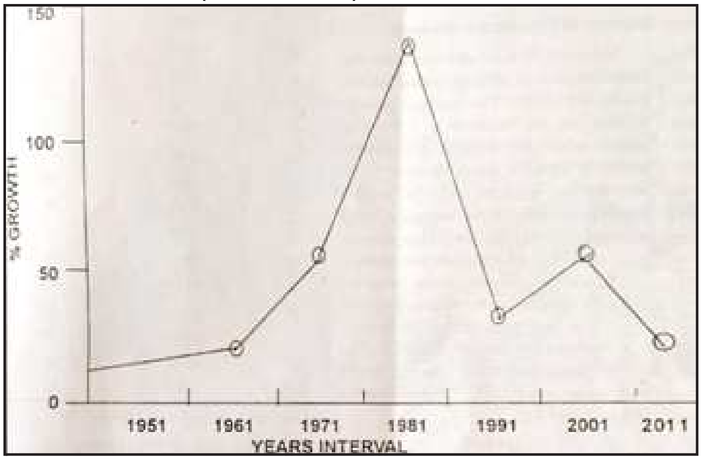

$$r = \frac{(p_2 - p_1)t}{(p_2 + p_1)\, t} ' 100$$

Where 'r' is the decadal growth rate.

p_1 is population of the city at one time.

p_2 is population of the city at another time and 't' is the time interval between p_2 and p_1.

In table 1 the absolute and percent variations of urban population in the city of Saharsa has been shown which represent high growth of population in between 1951 to 2001. This phenomenal growth was due to change in rank and file of the city of the Saharsa. The city has given the

status of district headquarter in 1951 and again Divisional headquarter n 1990. Inspite of the fact that the city of Saharsa lies in lowland surrounded by several rivulets and the area was suffering from Malaria, cholera, plague and Kalazar on massive scale even then the growth was slightly low due to the massive adoption of family planning programmes on the insistence of Sanjay Gandhi in almost all parts of India. In the decade 1971 – 81 the growth was phenomenal due to change in administrative satatus of the city. This has also been followed by the availability of better medical facilities to the people.

Patterns of Population Growth - The analysis has been made for the wardwise growth of population for the decade 1991 – 2001. The average growth for the city of Saharsa is 5.5% per annum while the highest percentage growth is found is ward number 1,6.8 percent per annum and the lowest growth is 4.5 percent per annum in ward number 19, 20 and 28. This clearly represents that all areas are not equally likely good but some are more tteractive from the economic development point of view or nearness to the city centre while others are less atteractive due to inferior siting,farther from the city centre and poor economic atteractiveness(Table 2 and Fig. 5)

Table – 2 : Growth of Population in the city of Saharsa (1951 – 2001)

Ward	Population No.	% Growth Variations
1.	2001	68
2.	1500	58
3.	1500	65
4.	1500	62
5.	1500	66
6.	1500	59
7.	1500	52
8.	2001	56
9.	1500	47
10.	1500	64
11.	1500	51
12.	1500	58
13.	1500	63
14.	1500	63
15.	1500	51
16.	1500	48
17.	1500	58
18.	1500	48
19.	1500	45
20.	1500	45
21.	1500	49
22.	1500	64
23.	1500	54
24.	2001	61
25.	1500	46
26.	1500	51
27.	1901	57
28.	1500	45
Average	44004	55

Source : Census of India 1991 & 2001.

Consequences of Population Growth - The high rate of population growth creates the problem of food shortage,shortage of residental house, improper clothing and the problem of unemployment. On the other hand,it has also created the problem of deplating the fertility and productivity of the soil in the surronding area. In the city of Saharsa due to mal – nutration several type of diseases have cropped up. Due to flood and high growth rate of populating(3%) the occupancy rate is 5 persons per room in urban areas. Per capita the lesser need of cloth is due to mild weathercondition. In the city of Saharsa 26% people are unemployed. Recently, the extremiss activities have grown up killing hundreds of people each year.

Immigration - The term 'Immigration'is used for imigration of rural population to the growing urban centre which may be categorized as "rural – urban migration." Of all types of migrations, this type of rural urban migration predominates. It is caused by several factors that may be categorized as'pull' and "push" factors.

Pull factor:

Pull factor include those factors which pull migratory population from outside. Pull factors operating in urban areas may include better employment opportunites, regular and highear wages, fixed working hours, good education,and social and cultural facilities. Again urban areas tends to be more atteractive and source (Chandana and Sindhu,1980,58). In Saharsa town besides the industrial eastablisments, good educational, medical facilities are also available, beside the district level officers which atteract people from the neighbouring countrysides as well as from distant places. Migration from rural to urban areas are generally the most imporatnat form of internal migration.

Push Factor - Push factors are those which motivates going outside from within.

Thease incorporate high natural rate of population growth creating population preassure on the existing resources,exhaustion of natural resources, droughts,floods, natural calamities, actual social religious or political upsurge etc. Push factors in rural areas include rural poverty, unemployment,low and irregular wages uneconomic holding resulting from continious subdivision and often poor facilities of education, health,recreation other services.

Emigration: The term 'emigration' is used for out migration from one country or region to another. In our case, this may be mainly from urban to urban. It is observed that people small urban centres move to bigger cities in search of better employment opportunities, education,medical facility and glamour of urban life etc but it is different to deduce the quantam of migration particularly emigration figure.

Measurement of Immigrantsto Saharsa - The data of immigrants of Saharsa may be computed with the help of the following formula:-

$$M = (Pt – Po) (B – D)$$

Where,

M the Immmigrants,

Pt the population at the time of later (Second)cencus,
Po the population at the earlier census,
B Births during the intercensal period,
D deaths during the intercensal period.

Thus of Saharsa,

M = (Pt – Po) - (B – D)

Or M = (2011 – 2001){(Births from 1991 to 2001) – (Deaths from 1991 – 2001)}

Or M = (156540 – 124015) - (Natural Increase from 2001-2011)

Or M = 31,725 – 5,675

Or M = 26,050 immigrants to Saharsa in 2011.

So, immigration(mainly rural – urban movement of population)is the main cause of urban growth of township.Such a feature of urbanization will give rise to several urban problems.

"With the dynamic of population growth, the urban areas are growing into bigger agglomerations with ever increasing influx of people, creating demand for support services,viz. water supply, transportation drainage/sewage, garbage collection and disposal etc.,i.e. for excedding supply of these services.

While taking up development activities, the assimilative capacitiesof the environment components, i.e. air, water and land to various pollution are rarely considered. Also lack f proper landuse compatiblity. The haphazard and uncontrol development development activities leading to overuse, congestion,incompatable landuse are creating high risk environment to the city residents in the form of deterioration of the natural and socio-economic living conditions which specifically include overcrowding, congestion.lack of sufficent water supply, unhygienic living conditions,air and noise pollution etc.(Yadav,1991).

Conclusion - The unabated rural – urban migration will lead to several urban problems. To check this immigration, facilities of urbanism should be developed in rural areas. In this context, the concept of urbanization is urgently to be developed which will go a way in lessening the urban deteriorating environmental conditions and make urban areas livable.

References:-

1. Bogue,D.J. and Zachariah,K.C.,Urbanization Migration In India in Turner, Roy(ed.)India's Urban Future, (Barklay and Los Angles:University of California Press), P.2
2. Clarke,John I (1972),Population Geography, (Oxford, Pergamon Press),P.131. Census of India, 1951, Vol. 5, Bihar General Pollution Table.
3. Dube, R.S.(1979), Population of the Rewa Plateau:Geographical Analysis, (Kanpur, Sahitya Ratnalaya),P.19.
4. Yadav,H.K.P.(1999) Urban Migration of Saharsa Town, An Unpublished Ph. D. Thesis, (Bodh- Gaya,Magadh University), PP.20-21.
5. Yadav,H.L., Environment Management Plan for Urban Poor Souvenir and Abastract of papers,National Conference of Environment, Deveploment and Quality of Life, Deptt. Of Geography D.D.U. Gorakhpur University,Gorakhpur.
6. Vidyanathan, K.E. Components of Urban Growth in India, 1951-61 in proceedings of the Geneva Conference of the International Union for Scientific Study of Population, Vol. II Londan, 1969,PP.41-48.

****

पर्यावरण सुरक्षा : हमारा दायित्व

डॉ. सन्ध्या श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी – ये जगत् के पाँच केन्द्रीय तत्व, पंच महाभूत, प्राणि जगत् को सब ओर से आच्छादित करने के कारण पर्यावरण कहलाते हैं।[3] पर्यावरण प्राकृतिक रूप से विद्यमान या स्थापित पारिस्थितिकी तालमेल हैं।[4] मानव पर्यावरण के साथ पूर्ण संतुलन करके ही पूर्ण विकास कर सकता है। आज मानव और पर्यावरण के सम्बन्ध सहज समन्वयात्मक न होकर शोषण, लोभ तथा आर्थिक व्यवसायिकता पर आधारित हो गए हैं। पहले यह समझा जाता था कि प्रकृति उपहार देती है अब प्रकृति से मनमाना उपहार लिया जाता है, अधिकाधिक शोषण किया जाता है।

पर्यावरणीय शोषण की विकृतियाँ, प्रचंड ताप, बेमौसम बरसात आदि हमें सचेत कर रही हैं कि प्रकृति और अधिक मानव हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकती। उसे ऐसी मर्यादित जीवनशैली विकसित करनी होगी जिसकी आकांक्षा विश्व के समस्त लोगों के लिए संभव है। औद्योगिक तकनीक में सुधार, महानगरों के विस्तार पर प्रतिबन्ध, वृक्षारोपण आदि विधियों की सफलता मूलत: मानव के आन्तरिक परिवर्तन पर सामाजिक दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। नैतिक, भौतिक और आध्यात्मिक शिक्षा द्वारा स्वयं को, अपने कर्तव्यों को, जीवन और प्रकृति के सम्बन्धों को समझते हुए, पर्यावरण को दुष्प्रभावित किए बिना मानव को अपनी प्राथमिकताओं का निर्धारण कर अपनी प्रबुद्धता का परिचय देना होगा।

जीवन के रहस्य को उद्घाटित करने के लिए, उसे सम्यक् रूप से संचालित करने के लिए विशेष रूप से संकट के क्षणों में मानव अपने अग्रजों एवं पूर्वजों के अनुभव के आधार पर अपने अस्तित्व की रक्षा कर आत्म स्वातंत्रय और शांति[1] का अनुभव करता है। भारतीय ऋषि ने नैसर्गिक स्वतंत्रता और शुद्धता की शक्ति लेकर जीवन की प्रयोगशाला में सत्यचेता बन सार्वकालिक धरोहर स्वरूप सत्यों को प्रकाशित किया। संसार सत्य का ही विकास है, जिसकी अभिव्यक्ति है चैतन्य। सत्यं शिवं सुन्दरम् की द्योतक भारतीय संस्कृति केवल भारत की ही नहीं, मानव मात्र की संस्कृति है। 'सर्वभूत हितेरत:' में ही है प्रकृति का सौन्दर्य और संस्कृति।

जगत् में, पर्यावरण में हमारे चारों ओर के आवरण में (परित: आवृणोति इति पर्यावरण, परि + आवरण) जो भी स्थावर या जंगम हैं, जैविक (समस्त सजीव प्राणी, वनस्पतियाँ, पशु तथा मनुष्य) और अजैविक (भौतिक और रासायनिक) घटक हैं सब ईशत्व[2] से आच्छादित हैं। सब ब्रह्ममय है – सर्व में ईशत्व के दर्शन की ललक ने इस संस्कृति की समष्टिपरक बना दिया है। वैदिक साहित्य दार्शनिक धरातल पर सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की बात करता है यह कल्याण भाव प्रच्छन्न रूप से पर्यावरण की शुद्धता से जुड़ा है।

आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी – ये जगत् के पाँच केन्द्रीय तत्व, पंच महाभूत, प्राणि जगत् को सब ओर से आच्छादित करने के कारण पर्यावरण कहलाते हैं।[3] पर्यावरण प्राकृतिक रूप से विद्यमान या स्थापित पारिस्थितिकी तालमेल हैं।[4] मानव पर्यावरण के साथ पूर्ण संतुलन करके ही पूर्ण विकास कर सकता है। आज मानव के और पर्यावरण के सम्बन्ध सहज समन्वयात्मक न होकर, शोषण, लोभ तथा आर्थिक व्यवसायिकता पर आधारित हो गए हैं। पहले यह समझा जाता था कि प्रकृति उपहार देती है अब प्रकृति से मनमाना उपहार लिया जाता है, अधिकाधिक शोषण किया जाता है।

प्रकृति के वशीकरण के प्रयास ब्रह्माण्ड को विघटन की ओर ले जा रहे हैं। प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने वाले, जीवन सामग्री देने वाले वन मरुस्थल बन गए हैं, और इसीलिए प्राणवायु अशुद्ध हो जीवनघातक हो रही है। कारखानों के अवशिष्टों से अमृत जल विष हो रहा है। रासायनिक खाद, कूड़ा करकट तथा वैज्ञानिक द्रव्य के कारण धरती उर्वरता खोकर बाँझ हो रही है। औद्योगिक कचरा, वाहनों से निकलता जहरीला धुँआ, आणविक विस्फोटों से निकली विषैली गैसों से पर्यावरण के पंच महाभूत प्रदूषित हुए है। ओजोन पर्त में छेद होने से सूर्य की जलती किरणें सीधी पृथ्वी पर आक्रमण कर रही हैं आज व्यक्ति के सम्मुख अस्तित्व का संकट उत्पन्न हो गया है।

मनुष्य यदि प्रकृति को अपनी ही तरह परमसत् का अंश मान लें, उसके प्रति मातृभाव रखें, कृतज्ञता का भाव रखें तो पर्यावरण असंतुलन और संकट से मुक्ति मिल सकती है। वेदों, उपनिषदों, महाभारत, मनुस्मृति, दुर्गासप्तशती आदि ग्रंथों में प्रकृति को अत्यन्त उच्च स्थान दिया गया है।

सूर्य को विश्व की आत्मा,[5] जल को देवी आप पृथ्वी को माता[6] का स्थान, कहीं-कहीं जल और वृक्ष को मित्र के रूप वृक्ष को मित्र के रूप में[7] माना गया है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा गया है जो चेतना जल में, अग्नि में, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में, औषधियों में एवं वनस्पति में संव्याप्त है उसको नमस्कार है।[8]

पर्यावरण शुद्धता की दृष्टि से जल में शौच करने का निषेध था। मनुस्मृति में भी कहा गया है कि हमें जल में मूत्र, रक्त या विषयुक्त पदार्थों को नहीं फेंकना चाहिए जिससे जल प्रदूषण के प्रति चिन्ता का आभास मिलता है। अथर्ववेद[9] में जल चिकित्सा की चर्चा है।

प्रकृति से तदाकारता उसे हमारी सहचारिणी बना देती है। प्रकृति के नियमों के विपरीत आचरण करने वाला अनेक विकारों से व्याधियों से ग्रस्त हो जाता है। वन्य प्राणी, अनेक जीवजन्तु पेड़ पौधों के फूल पत्तों जैसा ही रूप रंग आकार धारण कर प्रकृति से तदरूप होकर शत्रुओं से जीवन की रक्षा करते हुए अस्तित्ववान् रहते हैं। ये जीवन जन्तु भी हमारे सहयोगी हैं। हर जीव दूसरों के लिए वैसे ही उपयोगी और आवश्यक है जैसे उसके सजातीय

* एसोसिएट प्रोफेसर (दर्शन शास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कालेज, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

बन्धु-बांधव, कुटुम्ब-परिवार के छोटे बड़े साथी सहयोगी होते हैं। भूमि की उर्वरता इन्हीं सूक्ष्म जीवियों जैसे केंचुए पर निर्भर करती है वे वनस्पति के उगनें और बढ़ने में सहायता करते हैं संतुलन बनाए रखते हैं। यदि इनकी संख्या कम हो जाए तो प्रकृति विकृति में बदल जाती है। सम्भवत: इसीलिए अनेक वन्य प्राणी देवी-देवताओं के वाहन के रूप में पूज्य माने गए हैं।[10]

परमात्मा की सत्ता के अन्तर्गत प्रकृति अपना कार्य करती है। प्रकृति के नियम अटल एवं अटूट हैं। विश्व का संचालन करने वाला समष्टि रूप प्राकृतिक नियम ऋत[11] है यह सत्ता ईश्वरीय नैतिक जगत् में सत्य और धार्मिक जगत् में यज्ञ की अवधारणा के रूप में विद्यमान थी। प्रत्येक कर्म का फल तद्नुसार मिलेगा यह भी इसी सत्ता का अटल नियम है।

यजुर्वेद में वायु तेज, पृथ्वी, दिन रान सभी संतुलित रहते हुए सुख समृद्धि प्रदान करें इस प्रकार की प्रार्थना की गई है।[12]

पर्यावरण की इसी संतुलित अवस्था के लिए वैदिक ऋषि संकल्प करता है -

आयुर्यज्ञेन कल्पतां पशुभिर्यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मयज्ञेनकल्पतां
ज्योतिर्यज्ञेन कल्पतां स्वयंज्ञेन कल्पतां। यजु. 18/29/22/29

सम्पूर्ण संसार चक्र एक विराट यज्ञ है जिसमें सूर्य, चन्द्र, तारे, वायु, वरुण, पृथ्वी, औषधियाँ, वनस्पतियाँ, पशु-पक्षी सभी अपनी-अपनी आहुतियाँ दे रहे हैं। यह भाव ही संसार चक्र की धुरी है। व्यक्ति का कर्तव्य समस्त संसार के प्रति है। व्यक्तिगत अस्तित्व की रक्षा तभी संभव है जब समस्त संसार उसकी रक्षा की ओर वह समस्त संसार की रक्षा को समर्पित रहे।

आज कटते वन और बढ़ती जनसंख्या समूची सृष्टि के समक्ष प्रश्न चिन्ह लगा रहे हैं। ओजोन की पतली होती पर्त सिकुड़ते वन, मिटते पशु पक्षी सर्वनाश के सूचक हैं। वैदिक ऋषि सूर्य की किरणों से मृत प्राण शक्तिविहीन भूमि को पुन: उर्वर बनाने का अनुरोध करते हैं इन्हीं ऋभुगणों (सूर्य की किरणों) ने आकाश और पृथ्वी के बीच सुरक्षा कवच के रूप में अयनमंडल का निर्माण किया है। ये सुरक्षा कवच ओजोन पर्त या पृथ्वी की त्वचा रूपी ढाल के रूप में जाने जाते हैं। सूर्य जीवनदायी है पर रौद्ररूप धारण कर लेने पर इससे सौर विकिरण के भयंकर तूफान उठते हैं। हमारा चुम्बकीय क्षेत्र इन तूफानों को पृथ्वी से परे ढकेल देता है। आज पृथ्वी की आंतरिक पर्त के घूमने की गति धीमी होने से चुम्बकीय क्षेत्र ही कमजोर हो रहा है। इसमें जगह-जगह छेद होने लगते हैं। परिणामस्वरूप चुम्बकीय क्षेत्र से होकर सौर विकिरण और कौस्मिक किरणें सीधे धरती पर आकर प्रभावित अंगों में कैंसर जैसे रोग करेगी। अन्तरिक्ष यात्रियों को कॉस्मिक किरणों से बचाने के लिए एक विशेष प्रकार का स्पेस सूट पहनाया जाता है।[13]

अथर्ववेद में हम पाते हैं कि यज्ञ करने से यह पुष्ट हो सकता है। यह विस्तृत देवी स्वरूपा पृथ्वी शुभ संकल्पों से युक्त होकर चर्म रूपी ढाल अपने संरक्षण के लिए धारण करे यज्ञीय प्रक्रिया से इस सुरक्षा कवच को पुष्ट करने का संदेश दिया गया है।[14]

यज्ञ से सुगन्धित वातावरण होता है।[15] वायु शुद्ध होती है। ऋग्वेद में शुद्ध वायु सार्वभौमिक औषधि के रूप में वर्णित है।[16] अग्निहोत्र के धुएँ पर हुए शोधकार्य के अनुसार चार ऐसी गैसों की जानकारी मिली है जिनकी आज के दूषित पर्यावरण का परिष्कार करने हेतु एक विशिष्ट भूमिका है वे चार गैसे हैं -

1. एथिलीन आक्साइड
2. प्रौपलीन आक्साइड
3. फार्मेल्डिहाइड
4. वीटा प्रापिनोलेक्टोन

आहुति दिए जाने से गाय का घी एसिरिलीन में रूपान्तरित हो जाता है। हवन सामग्री में पाए जाने वाले सुगन्धित द्रव्य उसे शीघ्र ज्वलनशील बनाता है और वाष्पीय रूप से वह अधिक विस्तार पाता है। अमेरिका में प्रकाशित पत्रिका National Horticulture Society के सम्पादक डा. एन. मेक्केलिप्स ने यह निष्कर्ष दिया है कि यूरोपीय देशों में विद्यमान एसिड रेन से बचने का एकमात्र उपाय अग्निहोत्र ही है।

यज्ञ की सूक्ष्म ऊर्जा तरंगें प्रकृति के समस्त घटकों के भीतर तक पहुँच कर वहाँ विद्यमान प्रदूषण व विषाक्तता को मिटा सकती है और उसके स्थान पर उपयोगी तत्वों का संचार कर सकती है। आस-पास के क्षेत्रों में उत्पादक क्षमता में वृद्धि पाई गई है। विषैली गैसों के अनुपात में कभी आने से जन समुदाय ने सकारात्मक प्राण ऊर्जा का संचार होता है। यज्ञीय ऊर्जा से पोषित सूर्य किरणों को धरती पर विद्यमान जलीय स्त्रोत अच्छी तरह अवशोषित कर लेते हैं इससे प्रकृति की रिसाइक्लिंग प्रणाली संतुलित बनती है।

पर्यावरणीय असंतुलन को ठीक करने का एक महत्तवपूर्ण उपाय है - वनीकरण। जीव जगत और वनस्पति जगत एक दूसरे से एक श्रृंखला द्धारा जुड़े हैं - खाद्य श्रृंखला। प्राणि जगत आक्सीजन ग्रहण करता है, कार्बन डाईआक्साइड छोड़ता है। यह कार्बन डाईक्साइड पौधों द्धारा अपना भोजन बनाने में प्रयोग होती है और बदले में पौधे आक्सीजन छोड़ते हैं। इससे दोनों गैसों का सही अनुपात बना रहता है। मोटर वाहनों के धुँए की कार्बन मोनोआक्साइड रक्त में हीमोग्लोबिन को प्रभावित करती है। औद्योगिक संस्थानों और वाहनों के धुँए से प्राप्त नाइट्रोजन आक्साइड फेफड़े में कैंसर, निमोनिया, मसूड़ों में सूजन, खून बहना आदि बीमारियों को बढ़ावा देते हैं। अत: यदि वनों का कटना अनिवार्य है तो वृक्षारोपण भी जरूरी है। प्राचीन वैदिक संहिता में मानव जीवन के दीर्घायु होने के लिए लता, वनस्पति, वृक्ष व नदी का महत्व प्रतिपादित है। (नमोवक्षेम्य: युजु 16.17.16.20) श्वेताश्वर उपनिषद् में वृक्ष के साक्षात् ब्रह्मयोनि समझ कर उनकी पूजा की गयी है। स्कन्द पुराण में वृक्षों में विष्णु का वास माना गया है। (एकोहरि: सकल वृक्षगंता विभाति)। अनेक पुराणों और स्मृतियों में कहा गया है कि आदि काल में वृक्षों का कटना दंडनीय अपराध था। कौटिल्य ने प्रकृति के साथ खिलवाड़ करने वालों को दिए जाने वाले दंड का उल्लेख किया है (अर्थ 11.12)। वनों की कटाई से कार्बन डाई आक्साइड में वृद्धि से भूमंडल के तापमान में वृद्धि ही नहीं होती वरन् सल्फर डाई आक्साइड की भी उत्पत्ति होती है जो जल के साथ मिलकर गंधक का तेजाब बन जाती है और एसिड रेन होती है। कार्बन डाई आक्साइड की बढ़ने से जलवायु परिवर्तन होता है। कृषि प्रभावित होती है धरती पर वृद्धि से ध्रुवों की बर्फ पिघलने से समुद्र का तल उठेगा और खेती योग्य भूमि समुद्र के खारे पानी में डूब जाएगी उर्वरा शक्ति क्षीण होती अधिक लवण युक्त जल पीने योग्य नहीं रहेगा।

हिन्दू धर्म में वृक्षों का महत्वपूर्ण स्थान है। पीपल, नीम, बरगद की आज भी पूजा होती है। वृक्ष लगवाने से पुण्य की प्राप्ति का वर्णन भी मिलता है। संक्षेप में वैज्ञानिक आविष्कारों से बढ़ते हुए औद्योगिकरण व शहरीकरण के इस काल में वनों का महत्व और भी बढ़ गया है। वनों से वन्य प्राणियों के आवास की समस्या, ऋतु परिवर्तन, वायु, जल, भूमि, ध्वनि, प्रदूषण, बाढ़ नियंत्रण सूखे की समस्या, भूमि कटाव व मरूस्थलीकरण जैसी समस्याओं से मुक्त होकर पर्यावरणीय संतुलन को बनाया जा सकता है। सुरक्षित पर्यावरण पर ही मानव का अस्तित्व निर्भर है। अध्यात्मपरक भारतीय संस्कृति वृक्षों के शांत हरीतिमा भरे वातावरण में ही विकसित हुई है। मानव मात्र के सेवक औषधि रूप परोपकारी वृक्षों के ऋण से कोई उऋण नहीं हो

सकता है।[17]

पर्यावरणीय शोषण की विकृतियाँ, प्रचंड ताप, बेमौसम बरसात आदि हमें सचेत कर रही हैं कि प्रकृति और अधिक मानव हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकती। उसे ऐसी मर्यादित जीवनशैली विकसित करनी होगी जिसकी आकांक्षा विश्व के समस्त लोगों के लिए संभव है। औद्योगिक तकनीक में सुधार, महानगरों के विस्तार पर प्रतिबन्ध, वृक्षारोपण आदि विधियों की सफलता मूलत: मानव के आन्तरिक परिवर्तन पर सामाजिक दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। वर्तमान में मूल्यों का ह्रास शिक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती है। जीवन मूल्यों की जड़ें प्रत्येक प्राणी में बहुत गहरी होती है और इनका वास्तविकता से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। नैतिक, भौतिक और आध्यात्मिक शिक्षा द्वारा स्वयं को अपने कर्तव्यों को, जीवन और प्रकृति के सम्बन्धों को समझते हुए, पर्यावरण को दुष्प्रभावित किए बिना मानव को अपनी प्राथमिकताओं का निर्धारण कर अपनी प्रबुद्धता का परिचय देना होगा।[18]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यजुर्वेद में प्रार्थना की गई है कि आकाश, वायुमंडल, पृथ्वी, जल और पौधे शांतिमय हों। समस्त विद्वत्जन, ईश्वर, वेद तथा मैं स्वयं शांति से रहूँ। ॐ द्यौ शान्ति: अन्तरिक्ष शान्ति: पृथ्वी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति: वनस्पतय: शान्ति: ब्रह्म: शान्ति: सर्व शान्ति: शान्तिरेव शान्ति: सामा शान्ति: रेधि ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति: ।।
2. 'ईशावास्यम् सर्वभिद यत्किंच जगत्यां जगत्'
3. गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने पर्यावरण भूत प्रकृति के आठ अंगों से समग्र ब्रह्माण्ड को आच्छादित माना है।
   भूमिरापोनलो वायु: रवं मनोबुद्धिरेव च
   अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा। गीता 7/41
4. इनसाक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के अनुसार, पर्यावरण उन दशाओं, प्रणालियों और प्रभावों का योगफल है जो जीवों और उनकी प्रजातियों को विकास, जीवन, मृत्यु को प्रमाणित करता है।
5. सूर्य: आत्मा जगत: तस्थुष: च
6. नमो मात्रे पृथिव्यै आपो अस्मान् मातर: शुन्धयन्त
7. सुमित्रय: आप: ओषधयश्च न: 6.22
8. यो देवोऽग्नौ योऽप्सु यो विश्वं भुवनमाविवेश
   ओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमो नम:। श्वे.उप.
9. अप्सु भेषजम्, अपो याजामि भेषजम्।
10. हंस-सरस्वती, सिंह-महाकाली, बैल-शिव, गधा-शीतलादेवी, भैंसा-यमराज। पशु पूजा का मान अवतारों से सम्बन्धित है - मत्स्य, कच्छप, नृसिंह, वराह आदि।
11. ऋतं च सत्यं आभीद्धात्तापसाध्य जायत् ऋ 10/190/1
    सत्यं बृहद्रतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्मयज्ञ:
    पृथिवी धारयन्ति अथर्ववेद 12/1/1
12. शं नो वात: पवतां शं नस्तपतु सूर्य:
13. अगस्त 2006, सरिता पृष्ठ 35
14. इयं मही प्रतिग्रहणातु चर्मपृथिवी देवी सुमनस्यमाना
    अथ गच्छेम सुकृतस्य लोकम्। अथर्ववेद सं. 20 का। सू.-1-2994.8
15. यस्तेगन्थ: पृथिवि सम्वभूव विभ्रव्योषधयो यम आप। अथर्ववेद 12.23
16. आ वात् वाहि भेषजं निवात् वाहि यद् रच.....ऋ 137.2.3
17. जिस भूमि में वृत वनस्पतियाँ सदा खड़ी मानी हैं। वह विश्व के समस्त जनों का भरण-पोषण करने मं समर्थ होती है।
    यस्यां वृक्षा वनस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्व
    पृथिवीं विश्वश्वामसं धृतामच्छावदामसि। अथर्व 12.2.27
18. ऋग्वेद में कहा गया है बुद्धिमानों से अनुरोध है कि वे प्रकृतिगत दैवी नियमों की मर्यादा में रहें। अर्थात् प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ें नहीं।
    न तो भिन्नति मायिनो न धीराव्रतां देवाप्तसमा ध्रुवाणि।
    न रोहसी अद्रुहा वेधामिर्न विनमे तारिथ: वांस: ।।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

ललित कलाओं द्वारा तनाव प्रबन्धन

डॉ. इभा सिरोठिया *

प्रस्तावना – मैनेजमेन्ट अर्थात् प्रबन्धन आज की आवश्यकता बन गई है। प्रबन्धन का अर्थ है व्यवस्था और यह व्यवस्था अनेक प्रकार की होती है। अत: प्रबन्धन भी अनेक प्रकार का होता है। प्रबन्धन के इस युग में प्रत्येक वस्तु को उत्पादन बनाकर उसका समुचित भाग कैसे लिया जाये यह कुशलता प्रबन्धन सिखाता है अत: आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसकी बड़ी माँग है। प्रबन्धन एक सुव्यवस्था है, एक सुसामंजस्य है और जहाँ सामंजस्य होगा वहाँ स्वत: ही क्षमता और सौन्दर्य में अभिवृद्धि हो जायेगी।

आधुनिक औद्योगिकीकरण के युग में उद्योग धंधों के सफल संचालन के लिए केवल यंत्रों को समुचित रीति से संचालित व नियंत्रित करने वाले व्यक्तियों की मनोवृत्ति का अध्ययन तथा मनन आवश्यक है। औद्योगिक प्रबन्धन की कुछ अपनी मूलभूत समस्याएँ हैं। औद्योगिकीकरण ने समाज को, व्यक्ति को संपदा एवं प्रतिष्ठा तो प्रचुर मात्रा में प्रदान किया। परन्तु व्यक्ति के शरीर, प्राण एवं मन के प्रबन्धन को नजर अंदाज किया। परिणामत: शारीरिक स्वास्थ्य एवं मन अस्वस्थता की ओर अग्रसर होने लगा और तब यह विचार किया गया कि इस समस्या का निदान संगीत के द्वारा अत्यन्त सफलता पूर्वक किया जा सकता है। 'मानसिक दृष्टि से भी स्वस्थता प्राप्त करने का साधन संगीत को कह सकते हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाये तो यह कहा जा सकता है कि अभिव्यक्ति का सूक्ष्म एवं प्रभावी साधन संगीत है।'[1] उत्फुलित मन तथा स्वस्थ शरीर द्वारा संचालित उद्योग निश्चित रूप से और अधिक उन्नति कर सफलता के नये आयाम प्राप्त कर सकता है। 'अथर्ववेद में भी विविध व्यवसायी अवसर पर व्यवसायी जन मनोविनोद के लिए तत्सम्बन्धी गीत गाया करते थे।'[2]

मेरे विचार से औद्योगिक प्रबन्धन की निम्नलिखित समस्याएं हैं जिसमें संगीत की महत्वपूर्ण भूमिका है :-

1. मानवीय श्रम और थकान
2. वितरण एवं प्रचार की समस्या

मनुष्य का शरीर अपनी निश्चित क्षमता के आधार पर ही कार्य कर सकता है। देखा गया है एक प्रकार के कार्य को ही अधिक समय तक किया जाये तो नाड़ियों में शिथिलता उत्पन्न हो जाती है। श्रम से जो थकान होती है उसे दूर करने के लिए अनुकूल वातावरण एवं मानसिक शक्ति की आवश्यकता होती है। संगीत द्वारा आनन्द प्राप्त कर क्लांत श्रांत मन को स्फूर्ति प्रदान कर थकावट दूर किया जा सकता है। तथा मनुष्य में सकारात्मक शक्तियों का संचार किया जा सकता है। 'लगता है श्रम से ही संगीत का जन्म हुआ है जिस तरह कठोर पर्वत से निर्मल झरने का जल झरता आया है उसी तरह दिन भर के कठोर श्रम के पश्चात आज भी गाँवों के चौपाल से संगीत के स्वर गूँजते हैं।'[3] संगीत की मधुरता से वशीभूत होकर मनुष्य अपनी संपूर्ण क्षमता का उपयोग लंबी अवधि तक सफलता पूर्वक कर सकता है।

प्राचीन काल में भाषा के अभाव में जीविकोपार्जन तथा मनोरंजन हेतु शिकार नृत्य, युद्ध नृत्य, आदि का सहारा लिया जाता है। आरम्भ से ही मनुष्य अपने घरेलू उद्योग धंधों में संगीत की मधुर स्वर लहरियों की सहायता लेता रहा है। प्रचलित लोक गीतों में माँझी गीत –

ओ-ओ मांझी कितनी दूर किनारा
रैन अंधेरी नाव झीझरी
तेज बह रही धारा

श्रमिक गीत –

लैलो हाथ में कुदाल
माँ को करौ खुशहाल
बनके आओ न किसान
तुम खेतवा माँ

खेती के समय रोपनी गीत –

झमक झमक झमके हो सावन के बादरा
रोपी-रोपी धनवा निहाल हुए जियरा

आदि के माध्यम से श्रमिक अथवा कृषक अपनी थकान भूल कर नव ऊर्जा से परिपूरित होकर अपने अपने कार्य को शीघ्रता एवं कुशलता से सम्पन्न कर पाता है। कोल्हू गीत, चरखा गीत यहाँ तक की भिक्षा वृत्ति के गीत –

उठो लक्ष्मी करो सिंगार के जै गंगा।
उठो लक्ष्मी दे दो दान के हर गंगा।।
अरे लक्ष्मी ने देय दय दान के हर गंगा।
जुग जुग जियो अरे लक्ष्मी,
करदय पुन्न के हर गंगा।[4]

आदि यह सिद्ध करता है कि श्रम से उत्पन्न थकान को दूर कर संगीत श्रमिकों सुखद अनुभूति प्रदान करता है।

जीवन के प्रत्येक कार्य में यहाँ तक कि युद्ध अवसर पर भी प्राचीन काल से आज तक विभिन्न वाद्य यंत्रों एवं गीत संगीत का प्रयोग मनुष्य की वीरता, बलिदान एवं शक्ति संचार हेतु प्रयोग में लायी जाती रही है। नगाड़ा, दुंदर्भी, आदि का प्रयोग रामचरित मानस में इस प्रकार किया गया है :-

पनव निसान घोर रव बाजहिं,
प्रलय समय से धनजनु गाजहि।
भेरि न फीरि बाज सुहनाई,

* विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर (संगीत) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

मारू राग समुट सुखदाई।[5]

महाभारत में भी युद्ध के अवसर पर श्री कृष्ण द्वारा पांचजन्य शंख एवं अन्य वाद्यों का वर्णन मिलता है।

ततः शंखाश्च मेर्यश्च पववानक गोमुखाः।
सहसैवाम्य हन्यन्त स शब्दस्तु मुन्नोअमवत्।।[6]

आधुनिक काल में भी विभिन्न औद्योगिक प्रबन्धन संस्थानों में प्रबन्धन की शिक्षा के साथ सांगीतिक कार्यक्रमों एवं सांगीतिक प्रतियोगितायें नित्य प्रति सम्पन्न होती है ऐसी संचार माध्यमों, समाचार पत्रों से ज्ञात होता है। प्रबनधन की शिक्षा की अवधि में थकान और तनाव को इन्हीं सांगीतिक कार्यक्रमों द्वारा कम किया जाता है। साथ ही साथ विभिन्न औद्योगिक संस्थान एवं औद्योगिक घराने भी संगीत की इस क्षमता से भली भॉति परिचित हो चुके हैं।

कल कारखानों में तैयार माल के वितरण एवं प्रचार हेतु अधिक से अधिक लोगों को उत्पादन की विशेषता की ओर आकर्षित करने हेतु विज्ञापन के लिए संगीत द्वारा प्रचार आधुनिक समय में सर्वाधिक प्रचलित है। विज्ञापन के इस युग में संगीत किसी भी उत्पादन के विक्रय को प्रभावित कर बाजार मं उसकी उपस्थिति को सशक्त रूप से प्रस्तुत कर उकत उत्पादन को उद्योग को लाभ पहुँचा कर उसे गरिमा एवं धन संपदा प्रदान करवाने में सहायक सिद्ध होता है। संगीत वस्तुतः उद्योग को अथवा उत्पादन वस्तु से सीधा सम्बन्ध न रखते हुए भी उसकी खपत में, जन साधारण तक पहुँचाने में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आटोमोबाइल हो अथवा, वस्त्र उद्योग हो, खाने पीने की वस्तुएँ हो अथवा दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुएँ हों कहने का तात्पर्य है। साबुन से लेकर सीमेन्ट तक, आटोमोबाइल से लेकर मोबाइल तक, सिलाई मशीन से लेकर कम्प्यूटर तक प्रत्येक छोटे-बड़े उद्योगों के प्रचार प्रसार के विज्ञापनों में आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से प्रसारित विज्ञापनों में संगीत में निबद्ध विज्ञापनों की भरमार सी लगी है। एक्टिव व्हील, रथ वनस्पति, सेरेडॉन सिरदद की दवा, सर्वशिक्षा अाीयान (स्कूल चले हम), बबूल टूथपेस्ट, विको-सौन्दर्यवर्द्धक क्रीम, एयरटेल और नोकिया मोबाइल के विज्ञापन यहाँ तक की ट्रैफिक गाड़ी के नियम बताने वाले विज्ञापन भी निश्चित रूप से संगीत के सुरों से सज कर अथवा दूसरे शब्दों में कहीं तो संगीत की सुमधुर शक्ति से सम्पन्न होकर मनुष्य के चेतन एवं अवचेतन मन पर प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से ऐसा प्रभाव डालते हैं कि कभी-कभी वस्तु की पहचान विज्ञापनों से ही होने लगती है।

देश के लगभग सभी शहरों में आयोजित संगीत सम्मेलनों को प्रायोजित कराने में दूरदर्शन पर प्रसारित विभिन्न गीत, नृत्य के कार्यक्रमों को प्रयोजित करने अथवा नन्हें मुन्ने बच्चों की सांगीतिक प्रतियोगिताओं को प्रायोजित कराने में बड़ी-बड़ी कम्पनियों का यही ध्येय है। दूरदर्शन में सोनी चैनल पर सेन्सुई बुगी-वूगी, हीरो हांडा-सारेगामप, जी0टी0वी0, रिलायन्स आजामाही वे स्टार प्लस पर स्टार प्लस पर ही अमूल वायस ऑफ इण्डिया, एन0डी0टी0वी0 इमेजिन पर लक्स-जुनून, दूरदर्शन-1 पर म्यूजिक, मस्ती, धूम अथवा एयरटेल-देश की आवाज आदि, आदि, आदि इसी विचार को पोषित करते हैं कि संगीत जनमानस को किस हद तक प्रभावित करता है।

अतः यह सुस्पष्ट है कि संगीत श्रमिक, खेतिहर, वर्ग के साथ ही साथ उद्योगों को भी अत्यन्त प्रीाावित करता है। अतः इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि संगीत उद्योगों के प्रबन्धन के लिए तो महत्व रखता ही है साथ ही साथ स्वयं भी एक उद्योग के रूप में विकसित हो गया है जिसके आधार पर आधुनिक संगीत जीवी समाज सम्मान पूर्वक जीविकोपार्जन कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय संगीत एवं मनोविज्ञान श्रीमती व सुधा कुलकर्णी, पृ0सं0 15
2. 15, डॉ0 स्वतंत्र शर्मा
3. लोक साहित्य समग्र - पृ0सं0 11 श्री राम नारायण उपाध्याय
4. बुन्देलखण्डी लोकगीतों में सांगीतिक तत्व पृ0 सं0 17 श्रीमती वीणा श्रीवास्तव
5. रामचरित मानस - गोस्वामी तुलसीदास - लंका काण्ड पृ0 833
6. श्रीमद् भगवतगीता - प्रथम अध्याय - श्लोक - 13

****

छन्द एवं ताल

डॉ. इला मालवीय *

प्रस्तावना – छन्द का अर्थ है 'बन्धन', और बिना बन्धन के रचना गद्य की सीमा में आ जाएगी। पद्य बनाए रखने के लिए यति, गति, लय, मात्रा तथा तुकान्त के नियमों का पालन करना आवश्यक है। जिस रचना में वर्ण, मात्रा, लय, गति, यति और चरण सम्बन्धी नियमों का पालन हो उसे छन्द कहते हैं। लय के अधिक लचीले तथा विशिष्ट रूप को छन्द कहते हैं। छन्द में प्रमुखत: लय, मात्रा एवं वर्ण अपरा महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं और यह सभी अंग संगीत के अभिन्न अंग है अतएव छन्द–मुख्य रूप से संगीत से साथ जुड़ा है। वेद संसार का आदि साहित्य है। वेदों के छ: अंग माने गये हैं – शिक्षा, छन्द, व्याकरण, निरूक्त, ज्योतिष और कल्प। छन्द वेदांग के अन्तर्गत आते हैं। छन्द रचना अक्षर गणना तथा ध्वनि साम्य के आधार पर होती है। अक्षर गणना वास्तव में संगीत की दृष्टि से ताल या मात्राओं का स्वरूप हुआ और मात्राओं और ताल के सहयोग से स्वरों का सुन्दर संयोजन प्रस्तुत होता है। छन्द में भावों का आरोह और अवरोह है। ठीक इसी प्रकार संगीत में भी स्वरों के चढ़ते और उतरते क्रम आरोह अवरोह कहलाते हैं। आरोहावरोह पर ही छन्दों की गति निर्भर करती है। छन्दशास्त्र को पिंगल शास्त्र भी कहा गया है। पिंगल मुनि के नाम पर ही छन्दशास्त्र को पिंगल शास्त्र कहा गया है। भरत के नाट्यशास्त्र में भी छन्दों को संक्षिप्त निरूपण किया गया है। छन्दशास्त्र की अत्यन्त महत्वपूर्ण पुस्तक का नाम 'वृत रत्नाकर' है। जिसके रचयिता केदार भट्ट तथा गंगादास ने अपनी रचनाओं में एक निष्ठ शैली का प्रयोग किया है जिसमें लक्षण ही उदाहरण का भी काम करता है। सामान्यतया काव्यकार विषय के अनुरूप ही छन्द का प्रयोग करते थे (संगीत में भी तालों का प्रयोग राग, स्वर और गीत की प्रकृति के अनुसार ही होता है।)

'छन्द' धातु में असन्' प्रत्यव लगने से छन्द शब्द बना है। आरम्भ में इसका प्रयोग आच्छादन के अर्थ में हुआ। छन्दोव्योप–निषद् में लिखा है। –

'देवा व मृत्णयोर्विम्यस्त्रयीं विधां प्राविशस्ते छन्दोभिरंच्छादयन्य दोभिराच्छादयस्तच्छन्दसां छन्दस्त्वम्' अर्थात् मृत्यु से भयभीत होकर देवताओं ने अपने को छन्दों से आच्छादित कर लिया। आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक काव्य में छन्दों की अनिवार्यता स्वीकार की जाती रही है। छन्द की आत्मा लय एवं प्रवाह है। (यही लय और प्रवाह संगीत रूपी रथ के दो पहियों में से एक है।) आधुनिक युग की छन्द विहीन कही जाने वाली कविताएं भी लय एवं प्रवाह से रहित नहीं रहती। इनमें मात्रा और वर्ण के नियमों का पालन न होने पर भी प्रवाहमयता अवश्य विद्यमान रहती हैं इस प्रकार छन्द का काव्य के साथ अविच्छिन सम्बन्ध है।

छन्द उसे कहते हैं जिसका नाम श्रवण करते ही मन्त्र अथवा श्लोक की यथार्थ अक्षर संख्या का बोध हो जाए। लय, वर्ण, मात्रा के व्यवस्थित और सुनियोजित अनुपात का नाम छन्द है, जिसके द्वारा काव्य में स्थायित्व, प्रभाव और हृदयहारिता आती है। छन्दों का प्रयोग वैदिक साहित्य से ही होता था।

छन्द कविता में संगीतात्मकता नाद सौन्दर्य और लय का आधान करते हैं। कविता का स्वभाव है छन्द में लयमान होना। छन्द के माध्यम से कविता में एक विन्यास आ जाता है। उसमें राग की विद्युत धारा बहने लगी है। पन्त जी ने लिखा है–'छन्दों को अपनी अंगुलियों पर नचाने के पूर्व कवि को छन्दों के संकेतों पर नाचना पड़ता है। जिस प्रकार स रे ग म आदि स्वर तक होने पर भी पृथक्–पृथक् वाद्य यन्त्रों में उनकी पृथक् रूप से साधना करनी पड़ती है इसी प्रकार भिन्न–भिन्न छन्दों के तारों परदों तथा तन्तुओं से भावनाओं का राग जागृत करने के पूर्व भिन्न–भिन्न प्रकार से निहित प्रत्येक की स्वर योजना से परिचय प्राप्त कर लेना पड़ता है, तभी छन्दों की तंत्रियों से कल्पना की सूक्ष्मता, सुकुमारता उसके बोल तान, आलाप, भावना की मुरकियां तथा मीड़ें स्वच्छन्दता तथा सफलतापूर्वक झंकृत की जा सकती है।' छन्द विधान नाद सौन्दर्य की विशेषता पर अवलम्बित है। लय–सौन्दर्य के अनुरूप छन्द के बन्धन बनाये गये हैं।

ब्रह्मा से लेकर स्वामी दयानन्द सरस्वती पर्यन्त जितने भी ऋषि, मुनि और आचार्य हुए हैं उन सबका आदि मूल वेद है। इसलिए स्वयंभू मनु ने कहा है –सर्वज्ञानमयो हि स: अर्थात् वेद सब ज्ञान से युक्त है। छन्द शास्त्र का आदि मूल भी वेद ही है। वेद के अनेक मन्त्रों में छन्दों का वर्णन उपलब्ध होता है।

ऐसा माना गया है कि इन्द्र से पहले छन्द प्रस्त्रवित हुआ। एक ही छन्द बहुधा प्रकाशित हुआ। यही एक छन्द धीरे–धीरे चतुरक्षर वृद्धि से सात प्रकार का हो जाता है अथर्वश्रुति कहती है –

सप्त छन्दासि चतुरूचराण्यथाऽन्यस्मिन्न ध्यर्पितानि।819149

उक्त सात छन्दों के नाम–गायत्री, उष्णिक, अनुष्टुप, वृहती, पंक्ति (विराट), त्रिष्टुप और जगती। इन प्रधान सात छन्दों के नाम, वेद में अनेक्त: उपलब्ध होते हैं।

संस्कृत वाङ्मय में प्रधानतया दो प्रकार के काव्य ग्रन्थ हैं – एक वैदिक, दूसरे लौकिक। वेद उसकी शाखाओं के मन्त्र वैदिक काव्य के अन्तर्गत आते हैं। रामायण, महाभारत, पुराण तथा भास और कालिदास आदि की कृतियां लौकिक काव्यान्तर्गत। इन दोनों के अतिरिक्त जो प्राचीन आर्षशास्त्र पद्यबद्ध है, उनको कई विद्वान वैदिक विभाग में रखते हैं कई लौकिक विभाग में। इनमें मन्त्रों के समान अक्षर छन्दों का उपयोग नहीं होता। अत: इनकी गणना वैदिक काव्यों में नहीं हो सकती। इन शास्त्रों में लौकिक छन्दों का प्रयोग होने पर मैंने इनकी रचना लौकिक काव्यों के समान इतिवृत्त निदर्शनार्थ

*एसोसिएट प्रोफेसर (संगीत) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

अथवा प्ररोचनार्थ नहीं की, इसलिए इनको लौकिक काव्यों में भी नहीं गिना जा सकता, इस कारण ये अपने ढंग के निराले ही शास्त्र–काव्य हैं।

संस्कृत वाङ्मय में प्रयुक्त छन्दों के दो विभाग हैं – वैदिक और लौकिक। इसके अतिरिक्त छन्दों के दो विभाग और हैं – मात्रिक छन्द और अक्षर छन्द। अक्षर छन्द जिन छन्दों में केवल अक्षरों की इयश्त्ता ही आवश्यक होती है। (मात्राओं का विचार आवश्यक नहीं होता) वे अक्षर छन्द कहलाते हैं।

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य मतं अनेक छन्द प्रयुक्त हुए हैं जिनकी मनोहारी छटा से काव्य अपनी प्रभा बिखेर रहा है। उनमें से कुछ छन्दों के बारे में ही यहां उल्लेख किया गया है, प्राय: अधिकत्तर वे छन्द लिये गये हैं जिनकी उपयोगिता संगीत जगत में सर्वाधिक है।

छन्द लय के ही आधार पर टिका हुआ नाद विधान है। छन्दों में प्राण प्रतिष्ठा करने वाला यही (लय) तत्व है, अतएव छन्द और लय एक दूसरे के पूरक हैं। तात्पर्य है कि एक के बिना दूसरे की गति सम्भव नहीं। छन्द योजना अपने मूल में लयबद्ध है। छन्दों के नियम स्वत: लय में उतरते हैं। लय संगीत रूपी रथ के दो पहियों में से एक है, स्वर के बिना लय और लय के बिना स्पर की कल्पना ही नहीं की जा सकती। चूंकि छन्दों का लय से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है अतएव इनका सम्बन्ध संगीत से भी प्रगाढ़ है।

काव्य में जो छन्द हैं संगीत में वही ताल रूप है। छन्द जीवन में गति, काव्य में ध्वनि या भाषा का वैशिष्ट्य एवं संगीत में कण्ठ या वाद्य की ध्वनि का नियमित प्रवाह है। सौन्दर्य का क्रमिक विकास ही छन्द की क्रिया है। इसलिए छन्द शास्त्र में उल्लेख है कि जिसे सौन्दर्य बोध हो तो उसे छन्द बोध रहता है। सुस्वादु भोजन जिस प्रकार नमक के अभाव में अरूचिकर होता है, उसी प्रकार उत्कृष्ट काव्य छन्द के अभाव में एवं उत्कृष्ट संगीत, ताल केक अभाव में अप्रिय हो जाता है। यह तत्व काव्यात्मक अथवा सांगीतिक सौन्दर्य बोध से इतना घुला मिला है कि छन्द या ताल शास्त्र–सम्बन्धी ज्ञान न रखने वालों को भी उन तत्वों की परोक्ष अनुभूति होती है। इस प्रकार छन्द आवेग का वाहन है वह एक चित्त के अनुभव को अनेक चित्तों में अनायास संचरित करने वाला महान साधन है। छन्द के आवर्तन से कविता की प्रेषणीयता का सम्बन्ध है वह भाव को सहृदय के प्राणों में रमण कराने वाला समर्थ साधन माना गया है तथा इसके साथ ही एक प्रकार के लयात्मक प्रभाव की सृष्टि करता हुआ वह पाठक या श्रोता को रसविमुग्ध भी करता है। गीत का छन्द विधान मात्रिक होता है किन्तु उसके मात्रिक विधान का कोई निश्चित और एक रूप सम्भव नहीं होता तथा गीत का कोई निश्चित मात्राओं वाला एक छन्दर नहीं होता, संगीत की लय के आधार पर उसकी मात्राएं और रूप विन्यास निर्भर है। इस प्रकार भिन्न–भिन्न लयों के अनुसार भिन्न–भिन्न छन्द रूप अनाये जाते हैं।

अतएव जीवन में छन्द या लय का साधरणीकरण प्रतिदिन के कार्यो में सहज ही उपलब्ध है एवं यही उपलब्धि काव्य में छन्द एवं संगीत में ताल बनकर समाहित है। काव्य छन्द में अक्षरों का माप मात्राओं के द्वारा होता है। जो संस्कृत व्याकरण के अनुसार लघु एवं गुरू कहलाते हैं। संस्कृत काव्य में प्रत्येक श्लोक के चार पद अथवा चार चरण होते हैं। तालों में जिस प्रकार सम–अर्द्धसम एवं विषम मात्राओं के खण्ड होते हैं, तदनुरूप संस्कृत छन्दशास्त्र में सम, अर्द्धसम एवं विषम पदों का उल्लेख है। जिन श्लोकों के चारों पद समान अक्षरों द्वारा रचित हों उन्हें समवृत्त जिनका अर्द्धभाग दूसरे पद के अर्द्ध भाग के समान हो उन्हें अर्द्ध समवृत्त कहा जाता है। जिनमें चारों पद भिन्न प्रकार के हो उन्हें विषम वृत्त कहा जाता है। जिस प्रकार संगीत में मात्राओं द्वारा छन्द निरूपण होता है, उसी प्रकार काव्य में गणों के द्वारा छन्दों का निरूपण होता है। संस्कृत छन्द वृत्त और जाति भेद के अनुसार द्विविध हैं, अक्षर गणना नियम से निबद्ध का नाम वृत्त अथवा अक्षर वृत्त एवं मात्राओं की संख्या 2 के अनुसार रचे हुए छन्दों का नाम जाति अथवा मात्रा वृत्त होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रस अलंकार छंद – डॉ0 जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव
2. काव्य शास्त्र – डॉ0 बेनी बहादुर सिंह
3. कविता क्या है और रामचंद शुक्ल – अनुराधा जगधारी
4. हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति – सं0 लक्ष्मी नारायण गर्ग
5. निबन्ध संगीत – लक्ष्मी नारायण गर्ग

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

वर्तमान उच्च शिक्षा स्तर में गुणात्मक सुधार की आवश्यकता

डॉ. मधुरिमा वर्मा *

शोध सारांश – किसी भी देश की उच्च शिक्षा उस देश की प्रगति के मानक निर्धारित करती है। उच्च शिक्षा ही हमें वैश्विक पटल पर पहचान दिलाती है। वैदिक युग से आज तक उच्च शिक्षा का इतिहास साक्षी है कि भारत में उच्च शिक्षा की श्रेष्ठ व्यवस्था थी। वर्तमान समय में, जब वैश्वीकरण का युग है हमें उच्च शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की तथा उसमें गुणात्मक सुधार लाने की आवश्यकता है। नेहरू जी के शब्दों में विश्व विद्यालय का दायित्व मानवता, सहनशीलता, तर्क, विचारों के विकास तथा सत्य की खोज करना है। उच्च स्तर पर नवीन ज्ञान की खोज, चरित्र का विकास, राष्ट्रीय चेतना का विकास, आदि शिक्षा के उद्देश्य हैं। उद्देश्यों की प्राप्ति हम पाठ्यक्रम के माध्यम से करते हैं। पाठ्यक्रम परम्परागत विषयों के अतिरिक्त वह विषय भी शामिल हों जो आधुनिक औद्योगिक युग की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। जीविकोपार्जन से जुड़े व्यवसायिक विषयों को भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालय वस्तुत: सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि समस्याओं के समाधान की प्रयोगशालाएँ हैं।

उच्च शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए प्रवेश प्रक्रिया चयनात्मक होनी चाहिए। सत्र में कार्य दिवसों की संख्या बढ़ाई जाए ताकि शिक्षण व शिक्षणेत्तर गतिविधियाँ अच्छे से सम्पन्न हो सकें।

छात्रों को अधिक से अधिक मौलिक चिंतन के लिए प्रेरित किया जाए। उच्च शिक्षा के गुणवत्ता विकास के लिए अन्तर अनुशासनिक उपागम को महत्व दिया जाए। परीक्षा एवं मूल्यांकन के सुधार के लिए सत्रान्त में एक परीक्षा ली जाने के स्थान पर सतत् एवं आन्तरिक मूल्यांकन को महत्व दिया जाए। छात्रों तक ज्ञान का वाहक शिक्षक है। शिक्षक ईमानदारी से अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करें अपने ज्ञान का संवर्धन करते रहे। पुस्तक लेखन एवं प्रकाशन भी स्तरीय हो। प्रवेश प्रक्रिया में आरक्षण नीतिगत हो, राजनीतिगत न हो। परम्परागत व्याख्यान विधि के साथ-साथ आधुनिक तकनीकियों का भी प्रयोग किया जाए।

भौतिक संसाधनों एवं मानवीय संकलप की दृढ़ता के योग से उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार किया जा सकता है।
शब्द कुंजी – उच्च शिक्षा, गुणात्मकता, अन्तर अनुशासनिक उपागम, तकनीकी।

प्रस्तावना – किसी भी देश की उच्च शिक्षा उस देश की प्रगति के मानक निर्धारित करती है। देश के विकास और गुणवत्तापरक शिक्षा में अनिवार्य सम्बन्ध है। शिक्षा के गुणात्मक विकास के अभाव में प्रशासनिक, तकनीकी, बौद्धिक और सामाजिक प्रगति बाधित होने लगती है। हमारे देश में प्राचीनकाल से ही उच्च शिक्षा का गौरवशाली इतिहास रहा है। वैदिक काल में गुरूकुल तथा आश्रम और बौद्धकाल में मठ एवं विहार उच्च शिक्षा के प्रमुख केन्द्र थे। तक्षशिला, नालन्दा, ओदन्तपुरी, काशी, अवन्तिका, पाटलीपुत्र, गान्धार, श्रावस्ती तथा साकेत आदि विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के लिए प्रसिद्ध थे। इन विश्वविद्यालयों में बड़ी संख्या में विदेशों से लोग उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते थे। मध्य भारत में उच्च शिक्षा मदरसों में दी जाती थी। इन मदरसों में जौनपुर, फिरोजाबाद, आगरा, दिल्ली, फतेहपुर सीकरी इत्यादि उच्च शिक्षा के विश्व प्रसिद्ध केन्द्र थे।

शिक्षा राष्ट्र निर्माण की आधारशिला है। सभी प्रगतिशील देशों की प्रगति का श्रेय शिक्षा को ही है।

स्वतंत्रता के पश्चात् उच्च शिक्षा में मात्रात्मक के साथ-साथ गुणात्मक सुधार की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा के द्धारा ही हम अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर अपनी पहचान बनाते हैं। सन् 1947 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि 'विश्वविद्यालय का दायित्व मानवता, सहनशीलता, तर्क, विचारों के विकास तथा सत्य की खोज करना है।' नेहरू जी के इन शब्दों से विश्वविद्यालय शिक्षा के उद्देश्य स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। एच0हेदर्रिगटन ने अपनी पुस्तक 'दि सोशल फंक्शन ऑफ द युनिवर्सिटी' में विश्वविद्यालय का कार्य ज्ञान के उस व्यापक रूप का अन्वेषण करना बताया है जो मानव संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में विकास तथा उन्नति में सहायक हो सकें।

स्वाधीन भारत में उच्च शिक्षा के स्वरूप और दिशा को निर्धारित करने के लिए गठित प्रथम आयोग राधाकृष्णन आयोग के मुख्य सुझावों में उच्च शिक्षा का उद्देश्य ऐसे सुरक्षित नागरिक तैयार करना होना चाहिए जो विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्र का नेतृत्व कर सके। जनतांत्रिक मूल्यों, सांस्कृतिक मूल्यों, नैतिक मूल्यों, राष्ट्रीय एकीकरण के सहायक और अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना को बढ़ाये। कोठारी आयोग ने भी अपने प्रतिवेदन में कहा कि यदि राष्ट्र की प्रगति में गति लानी है तो ऐसी नीति की आवश्यकता है जो सत्य के परिप्रेक्ष्य में ज्ञान प्राप्त करने, पुराने ज्ञान को नई परिस्थितियों में प्रयोग करने, मूलयों के पोषण, सांस्कृतिक सामाजिक विषमताओं को कम कर राष्ट्रीय चेतना का विकास करें। न्यूमैन के अनुसार, कोरे ज्ञानार्जन के स्थान पर राष्ट्रीय आग्रहों को ध्यान में रखकर उद्देश्यों का अभिनवीकरण एवं ज्ञान की खोज बदलती सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुरूप हो, ज्ञान की सीमाओं को विस्तृत कर जन्मजात गुणों को खोजना और उनका विकास ही शिक्षा का उद्देश्य हो। वर्तमान समय में मूल्य परम्परा और संस्कृति के साथ साथ आधुनिकतम वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान भी प्रदान करना

* विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा शास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कालेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

आवश्यक है।

उद्देश्यों की पूर्ति हम पाठ्यक्रम के माध्यम से करते हैं। आज की वैश्विक व्यवस्था मतें अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर स्थान बनाने के लिए उच्च शिक्षा की गुणवत्ता का संरक्षण तथा उन्नयन अत्यन्त आवश्यक है। किसी भी स्तर की शिक्षा में गुणवत्ता के निर्धारण में तथा संवर्धन में पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण स्थान रहता है।

हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली का पाठ्यक्रम न केवल हमारी आवश्यकताओं से दूर है अपितु जीवन के केन्द्र बिन्दु से दूर है तथा राष्ट्रीय आदर्शो से भी अलग है। आज विमर्श रूपणी विद्या का स्थान रटन्त विद्या ने ले लिया है। वर्तमान परीक्षा प्रणाली ने छात्रों में सीमित पढ़ने की प्रवृत्ति को उत्पन्न किया है अत: शिक्षा एकांगी हो गयी है।

विद्यार्थियों की बढ़ती हुई संख्या के कारण छात्र और अध्यापकों के अनुपात में अंतर आया है। शिक्षकों के ऊपर अतिरिक्त शिक्षण का बोझ उनकी शिक्षण क्षमता को प्रभावित करता है। यद्यपि उच्च स्तर पर छात्रों का प्रवेश चयन के आधार पर होता है। इस बिगड़े हुए अनुपात पर ध्यान देने की आवश्यकता है ताकि शिक्षकों के शिक्षण की गुणवत्ता प्रभावित न हो।

वर्तमान समय की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिस्थितियाँ शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित कर रही है। शिक्षा के पुर्नगठन के प्रयास में एक ओर जो विशुद्ध ज्ञान की खोज शिक्षा के व्यक्तिगत संस्कार वाले गुणों पर आग्रह होना चाहिए, दूसरी ओर शिक्षा को राष्ट्रीय जीवन की बहुमुखी उन्नति का महत्वपूर्ण साधन बनाने की भी चेष्टा होनी चाहिए। औद्योगिक और व्यवसायिक शिक्षा की सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

विश्व विद्यालय प्रशिक्षण या उच्च शिक्षा समाज की बौद्धिक चेतना को विकसित करता है तथा मस्तिष्क का विकास करती है समय के साथ देश काल परिस्थिति के अनुसार शिक्षा विचारों में उदारता लाती है। वैयक्तिक शक्ति का विकास करती है तथा सामाजिक एवं राजनैतिक शक्ति को सुदृढ़ करती है। उच्च शिक्षा मात्र पुस्तकीय ज्ञान नहीं है। वह मनुष्य में अर्न्तदृष्टि विकसित करती है। अन्तर्दष्टि मात्र शिक्षा की ही समस्याओं को नहीं अपितु जीवन की समस्याओं को भी हल करने में सहायक होती है। डॉ0 राधाकृष्णनन के अनुसार अपने जीवन के सबसे ग्रहणशील समय में विद्यार्थी निर्माणाधीन प्रभावों को अनुभव करता है। जैसे एक मस्तिष्क का दूसरे के साथ सतत् संघर्ष विचारों का परस्पर आदान प्रदान, मतों और विचारों का परीक्षण आदि। व्यवसायिक और तकनीकी तथा प्रबन्ध की शिक्षा के मांग के कारण आज चरित्र, उदार और मानवीय शिक्षा की उपेक्षा हो रही है। विद्यार्थियों के सम्मुख महानता के द्रश्य समय-समय पर प्रस्तुत किये बिना नैतिक शिक्षा असम्भव है।

उच्च शिक्षा केन्द्र उच्चता, उन्मुक्तता और स्वतंत्र वातावरण की अपेक्षा करते हैं। उच्च शिक्षा के शिक्षक चिंतक तथा वैचारिक निर्देशक होते हैं। विश्वविद्यालय वस्तुत: सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि समस्याओं के समाधान की प्रयोगशालाएँ हैं। दलगत राजनीति से दूर रखने के लिए, ज्ञान की खोज के लिए उपयुक्त बनने के लिए उन्हें स्वतंत्रता प्रदान की जाए। विश्वविद्यालय में केन्द्र या राज्य का हस्तक्षेप सहयोग के रूप में हो।

शिक्षा के क्षेत्र में व्यक्ति जन साधारण से प्रथकता का अनुभव न करें इस लिए शारीरिक श्रम और समाज सेवा को भी पाठ्यक्रम का अंग बनाया जाए।

उच्च शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए प्रवेश प्रक्रिया चयनात्मक होनी चाहिए। इससे शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने में सहायता मिलेगी तथा उच्च शिक्षा स्तर पर अनावश्यक भीड़ भी कम होगी तथा हम शैक्षिक बेराजगारी को भी कुछ सीमा तक कम कर सकेंगे। कार्य दिवसों की संख्या बढ़ाकर हम शिक्षण एवं शिक्षणेत्तर गतिविधियों को गति दे सकेगें। शिक्षक के व्याख्यान के अतिरिक्त ट्यूटोरियल कक्षाएँ भी हों। यहाँ छात्र अपनी जिज्ञासाएँ शान्त कर सकेंगे तथा उन्हें आत्म अभिव्यक्ति का अवसर भी मिलेगा।

छात्रों को अधिक से अधिक मौलिक चिंतन और रचनात्मकता बढ़ाने के अवसर दिए जाएँ। शोध की प्रवृत्ति को विकसित किया जाए। शिक्षक अपने ज्ञान का संवर्धन करें तथा विषय से सम्बन्धित नवीनतम सूचनाओं को ज्ञात करें। तथ्यों की व्याख्या इस प्रकार हो कि छात्र उसे जीवन से जोड़ सके। स्थानीय पाठ्यक्रम के अतिरिक्त आवश्यकताओं पर आधारित राष्ट्रव्यापी पाठ्यक्रम लागू हो इससे ज्ञान व्यापक और विस्तृत होगा।

उच्च शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने के लिए अन्तर अनुशासनिक उपागम महत्वपूर्ण है। ज्ञान एक सम्पूर्ण इकाई है जिसमें विषयवार विभाजन सुविधा के लिए किया है। वर्तमान समय में इस बात की आवश्यकता है कि विभिन्न विषयों को आपस में जोड़ कर एक सम्बन्ध स्थापित किया जाए ताकि विभिन्न विषयों की एक सम्मिलित जानकारी छात्र को मिल सके।

उच्च शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए परीक्षा एवं मूल्यांकन पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। सत्रान्त में होने वाली एक परीक्षा के स्थान पर सतत् मतूल्यांकन एवं आन्तरिक मूल्यांकन को अपनाया जाए। सतत् एवं आन्तरिक मूल्यांकन छात्रों में अध्ययन की गम्भीरता को बनाये रखने में सहायक होगा। अध्यापकों के प्रशिक्षण में मूल्यांकन करने, प्रश्न पत्र बनाने एवं योग्यता के मापदंड पर विचार हो।

राधाकृष्णन आयोग ने यह संस्तुति की थी कि कुलपति वही होना चाहिए जो प्रभावी हो, विश्वविद्यालय की चेतना का संरक्षक हो। समस्त शिक्षकों के प्रति प्राचार्य का एक सा व्यवहार हो। पक्षपातपूर्ण वातावरण शिक्षकों में असंतोष उत्पन्न करता है जो उनके शिक्षण की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है।

छात्रों तक ज्ञान का वाहक शिक्षक है। शिक्षक की भूमिका अह्म है। उच्च शिक्षा से प्राप्त ज्ञान को दूसरी पीढ़ी तक केवल पहुंचाना ही नहीं है अपितु उस ज्ञान को और विकसित करना है जिससे आने वाली पीढ़ी वर्तमान पीढ़ी का योगदान समझे। विश्वविद्यालय भी अपने कर्त्तव्य को तभी पूरा कर सकता है जब उसके अध्यापक किसी विशेष क्षेत्र के विशेषज्ञ हों और वे दत्त चित्त होकर उस विषय के अग्रिम अनुसंधान में संलग्न हो। प्रतिभा, अन्तर्द्रष्टि और विशिष्ट अध्ययन, ये सभी शिक्षण व्यवसाय की विशेष आवश्यकता है। उन्नति के लिए स्तरीय ज्ञान के लिए चिन्तन आवश्यक है। छात्रों को चिंतन के लिए प्रेरित करना चाहिए। प्लेटो ने भी तर्क और चिन्तन को महत्व दिया है। वह कहता है कि विश्वास करने से खोज करना अधिक अच्छा है। शिक्षक छात्रों ने शोध की प्रवृत्ति को विकसित करें।

पुस्तक लेखन एवं प्रकाशन पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। शोध प्रपत्र एवं पुस्तकें स्तरीय लिखी जाए। प्रकाशक भी इस बात का ध्यान रखें कि कम स्तर वाली पुस्तकों का प्रकाशन न करें।

प्रवेश प्रक्रिया में आरक्षण की नीति को इस तरह से रोपित किया जाए कि शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित न हो।

वर्तमान समय विज्ञान और तकनीकी का है। परम्परागत केवल व्याख्यान विधि पर ही निर्भर न रहें बल्कि आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी का भी प्रयोग करें। हमें छात्रों को 21वीं सदी की माँग के लिए तैयार करना है।

इस सन्दर्भ में उनमें सूचना एवं प्रोद्योगिकी के नवीनतम संसाधनों की भूलभूत जानकारी और उनके प्रयोग का कौशल विकसित करना होगा, जिससे वैश्विक परिवेश में छात्र नई सदी की मांग के अनुरूप तैयार हो सकेंगे।

एकेडिमिक स्टाफ कॉलेज के माध्यम से अभिविन्यास कार्यक्रम तथा विषय विशेष के लिए पुनश्चर्या कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं जिससे शिक्षक अपने विषय का नवीनतम ज्ञान प्राप्त कर सके। उच्च शिक्षा के गुणात्मक विकास की दशा में यू.जी.सी. ने (NAAC) की स्थापना की है जो गुणात्मक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है। इसका मुख्य कार्य उच्च शिक्षा संस्थाओं में गुणवत्ता के प्रति जागरूकता को प्रोन्नत करना तथा गुणवत्ता को सुनिश्चित करना है।

भौतिक संसाधनों और विशेष प्रयासों के साथ–साथ मानवीय संकल्प की दृढ़ता और ईमानदारी, कर्त्ताव्यिनिष्ठा और लगन की आवश्यकता है तभी हम उच्च शिक्षा में गुणवत्ता के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे तथा वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान बना सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्ता एस0पी0 एवं अलका गुप्ता, आधुनिक भारतीय शिक्षा की समस्याएँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद –148–188
2. मालती सारस्वत एवं एस0एल0 गौतम,भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक समस्याएं आलोक, प्रकाशन लखनऊ, इलाहाबाद – 260–300
3. नीता सिन्हा एवं मदन मोहन, भारतीय शिक्षा की समसामयिक समस्याएँ, न्यू कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद– 119–162
4. पाण्डेय राम शकल एवं करूणा शंकर मिश्र, भारतीय शिक्षा की सम सामयिक समस्याएँ, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा –143–174

****

Internet Usage in Rural Madhya Pradesh

Dr. Krishnakant Sharma*

Abstract - Access to information and, most importantly, the Internet is not evenly distributed in this country. But if they have, would rural India want to use the Internet? How would they use it and benefit from it? How will the Internet influence culture and how can communities be prepared when the Internet enters their territory?

To support the rollout of Internet connectivity in rural areas of Madhya Pradesh and to improve ICT performance in rural areas, a clear vision on the adoption and use of ICT and services was needed. This study aims to provide this information.

Domestic conversations in Madhya Pradesh have taught us how people use the internet and the benefits they receive. We also talked about their expectations and what they think is necessary when the internet is introduced to the public.

The study revealed that individuals and rural communities in Madhya Pradesh are benefiting from social and economic ICT. Basically, they use the Internet for the same purposes as people in other countries, such as communication, information search and shopping. However, the internet is especially important in rural areas due to the lack of other means, such as telecommunications, libraries, newspapers, decent roads and public transportation.

When introducing the internet to a new community, for the first time, excitement has to happen. After that training is required on how to use the computer and the internet. Next to this, proximity is important, having internet at home or at work can allow more people to use the Internet more often and benefit more. Many participants feel that the Internet can have a positive impact on their culture.

This paper does not discuss the technical aspects of introducing internet in rural areas. It's about real-life events and how the Internet has changed their lives. The Internet has empowered them and helped them build a stable future with better education, easier communication and new economic activities.

Introduction - "I am now witnessing that my life has changed a lot because I have full access to the Internet. Before the Internet started working I was in a dark world but now I am in the light because of the Internet. I say that because I want to know what is happening around the world so that I can update my students on current issues. I now have all the information in my hands". (Teacher from rural Ujjain)

This paper describes research on the use of ICT in rural Madhya Pradesh. A qualitative study, based on a series of interviews conducted between the people of Ujjain, Indore, Dewas and Ratlam in the state of Madhya Pradesh.

Research questions and hypotheses

The research questions in this study to be answered are:

1. How do people use the internet in their daily lives in rural Madhya Pradesh?
2. What are some of the benefits that people experience online and in Rural Madhya Pradesh?
3. Will the internet help to preserve or destroy Madhya Pradesh culture?
4. In what ways can it promote the use of the Internet?

The hypotheses are:

a. People in rural areas benefit from the Internet in their daily lives.
b. Rural people are coming up with new ways of using ICT and services that are not yet known in the western and urban areas, due to their unique nature.

Background - The roll-out of telecommunications and ICT in rural Madhya Pradesh will enable people to communicate both inside and outside their towns, create new jobs for local people, and establish rural institutions (e.g. schools and hospitals) for their communication needs. In addition, the Internet facilitates learning, which lacks the ability to bridge the learning gap that exists in society and to promote the lives of millions of people in the developing world who do not enjoy the same opportunities as those in rich, developed countries (Pais A., 2007).

Technical, practical and political issues have to be overcome when introducing the Internet to the rural community, such as computer literacy, lack of telecom infrastructure, the high cost of small satellite communications, the lack of electricity and the rapidly disappearing equipment due to difficult terrain. Although the author acknowledges that a multinational approach

*Director, Shriji Takniki Evam Vanijyik Prashikshan Sansthan, Ujjain (M.P.) INDIA

involving local people, technical skills and organization is essential to successfully present ICT, there are some papers that cover such issues, such as those presented at the IST India and E India Conferences. Small and relevant psychosocial studies are conducted on how people use the internet in rural India and what it means for their daily lives.

Method: Conversations - Semi semi-structured interviews were conducted, most of them in Hindi because Hindi is the local language in Madhya Pradesh. Participants were interviewed in their homes, workplaces or at school. A total of 38 interviews took place with 23 male participants and 15 female participants. Most were in one discussion and participants were selected from different parts of the community to create different ideas (see Table 1). Students from schools and colleges were interviewed; those conversations take place in small groups to make these young people feel more comfortable. A complete list of questions used can be found in the appendix.

Tabel 1 (See in last page)

Results - The results of the interviews are summarized for each topic that interests us; no translation was made by the author other than adding results from other studies where appropriate. Participant ratings were added to show results. All quotations in this paper are anonymous as agreed with the participants

Use of the Internet

Initial use of the Internet - The discussions started by asking people to tell us their stories for the first time online. In the Indian culture where people are used to telling stories this method works very well. Participants who used the Internet started using it between 2012 and 2015. Most participants started using the Internet at the MP Online kiosk. Some people are helped to start with their friends, children and other relatives; some were assisted by people working at the MP Online kiosk. The desire to send emails and messages through watsapp to relatives or friends was a strong incentive to start using the Internet.

Study is another important reason to start using the Internet. Most of the participants want details of their assignments and vacancies for example for Madhya Pradesh Professional Examination Board and Staff Selection Commission etc.

Others are pursuing e-learning courses at institutions outside Madhya Pradesh.

Keep using the Internet - After their first introduction to the Internet, all participants continued to use the Internet. Some do. They browse websites for academic information, how to use computer applications (e.g., Windows or Linux), how to fix cars, gardening, news and weather reports. People buy books, school supplies and even look at the prices and buy two Wheelers by hand. Next to information, they are developing new contacts around the world, not only for entertainment purposes, but also for exchanging information and consulting experts on specific topics. Also, some use the Internet to send reports to donors and school supporters in other countries.

"Since then, I've been using the Internet twice a week; I do this after I leave my job".

"Apart from reading on line, I also use the internet to communicate with my kids For Outdoor Use in Madhya Pradesh and with friends across the country".

"I still use the Internet daily; this gives me the opportunity to interact with my friends in Mumbai".

Some do not use the Internet regularly, mainly because of the distance between the MP Online kiosk or the Internet parlour or any other place where they can use the Internet. All these participants expressed a desire to have internet access in their homes or workplaces.

How the Internet is changing lives in rural areas - In unison, participants asserted that the Internet has changed their lives. For some the impact is young, but for others the internet has changed a lot in their lives for the better.

"For me, the internet has changed my lifestyle because I wouldn't be the way I am now without it. I can now read online and communicate with friends around the world".

"The Internet has changed my life in terms of communication because before the Internet came to rural Ujjain, I was using text messages; this took time to get an answer if information was urgently needed".

What is more interesting is that the Internet also contributes to the lives of those who do not use it, such as when students receive high-quality information from their teachers and farmers who learn new things from one another:

"In 2012 I was looking for the conditions needed to grow a sunflower. I found information on the internet. So I went to buy seeds and planted sunflowers. Last year I had a successive harvest and this year I'm looking forward to the next harvest. It changed me as a person, but also a community. One of my friends and teachers has started growing sunflowers and others have started growing sunflowers, following in my footsteps".

In this case, internet access should be stopped from the introduction of sunflower farming and was a good way to make money.

On the other hand, some participants are concerned about the negative impact the internet can have on local culture. Because so much of the content comes from the West, people will accept things from western culture. (More on the impact of the Internet on culture is found later in this paper).

The benefits of the internet

Social benefits: communication, information and education - Many social benefits are gained by participants when using the Internet. Being able to communicate with friends and relatives around the world is a great benefit to all. Also, being able to get the information you need is a very important benefit. For example to read the news and know what's going on in the world, get business information and get property prices and technical details like car repairs.

"As a mechanic and driver, the internet has helped me to look for information on how to fix a car in case of a crash."

Next to this, sending and receiving information quickly solved many of the problems that people face in the rural area, such as announcing weddings and funerals, knowing when salaries, people and goods arrive.

"As a person, I found help on the internet for information that I was doing earlier."

Education is another topic where people get huge benefits. Getting information on writing assignments is much easier in an area where books are scarce. Unfortunately, online schools are still very poor in rural areas. All the participants working in the schools said that access to the internet or more access to the internet would improve education.

Women who do not finish high school get a new opportunity to study online. Being able to study online is a very important benefit and many participants do so.

"The Internet has helped me to seek a better education".

People who do not use the internet themselves can benefit. This can be explained by the Madhya Pradesh culture as being a unifying culture (such as applying to a private culture). In a cohesive society, people are born into strong and resilient groups that contribute to the universal protection of unconditional loyalty (Hofstede, 1991). This is loyalty to the team and means sharing ideas with community members:

"Even if certain groups of people in India are illiterate, the information can be passed on to the illiterate, which is why everyone in the community benefits from it."

"If the older, less educated generation is younger, the younger generation can contribute to the old knowledge".

On the other hand, major cultural changes may arise when young people become more aware than adults.

Economic benefits: save time and money, bring new opportunities - The Internet offers many economic benefits such as efficiency, but this may be at Western prices. Can people in rural India consider them benefits too? According to the participants, the answer is yes, they receive many economic benefits. The most important economic benefit is that the internet saves a lot of money and travel time. It enables people to buy goods, such as books and textiles, without having to go their own way. In addition it saves a lot of money on travel and doing things because people know when to pick them up, instead of going and finding out where they are and when they should return, which is usually the case in rural Madhya Pradesh.

The Internet has boosted the economy in rural areas because people are getting more information on how to use new farming methods and how to sell their products. The Internet does small jobs that generate income for women, such as extracting soap from Jatrophe. Nearby, opening an internet kiosk is seen as a way to make some money.

Also, the internet is seen as enabling in some cases:

"I have a strong feeling that without technology some development would be born in rural areas and so through these developments people would be able to run their lives".

"The Internet will make people the masters of their destiny. Once they are presented online, they will be able to search for information. Not for me to tell them what to do, but for themselves. "

Information from the internet directly contributes to their economic and social development by teaching them how to do their job and negotiating better market prices.

Internet and Culture in Madhya Pradesh - The Internet is shaping Indian culture but it is changing too.

Like all new things introduced to the public, the Internet can have an impact on culture. It is rooted in the notion of different people having values, beliefs and intentions (Singh, Nirvikar (2004). Information technology and rural development in India. Because people are changing the way they communicate, learn and do business, for example.

"I thought I had a dream," because there are no resources to do it yet (…). When… ..When they launched the internet in rural Madhya Pradesh, things started to change. "(Shukla, Sarabh. (2005).

When asked about the impact on culture, participants in particular felt that the Internet had a positive impact on culture. Being able to communicate very easily, access information, improve yourself and achieve many benefits.

"The Internet can build our Indian culture because communication is smart, our society has changed for the better, because people can communicate in minutes as opposed to long-range beats, smoking fire and trumpeting were the only means of communication."

On the other hand, some people have mixed feelings about the impact that the Internet can have on culture, since many western websites and Indian content remain scarce. Especially young people are influenced by Western music, dress and dance styles, which may not be appropriate in Indian culture.

"… It can undermine Indian culture because young people are exposed to western culture, which has a negative impact on daily behaviour. An example is to expose abortions and wear miniskirts, which is a taboo in India. "

"The Internet will in some ways create or destroy our culture because of its powerful influence on people's lives. In fact, most of the online content comes from western countries and very little is from India. I don't want to lose my culture".

How can the internet maintain Indian Culture? - Currently, most of the content online is about things happening in the West and in websites produced in the West. To give an example, a simple Google search found 41.000.000 sites in the .nl domain (websites in the Netherlands) and only 154.000 sites in the.in domain (Indian websites). The Internet may be a way to maintain Indian culture but more Indian websites are needed. Most participants feel that Indian websites are necessary for Indians themselves, in order to learn about their culture and not just others. And Indian websites are needed for people all over the world, to learn about how Indians live,

believe in and behave.

"We can maintain culture by building websites and making all cultural information available online. So Madhya Pradesh around the world can use this information to teach their children where they come from".

"To make sure that there are details of Indian culture and culture, I feel that we should publish certain websites ... so that people in other parts of the world can see what is happening in our country of India".

Expectations and prospects about the Internet - People who have never used the Internet already have something to expect. Some expect to be able to improve the quality of their education, and to know more about what is happening around the world. Some just wait for information and share it for the benefit of all. Students hope to receive pen pens from other parts of the world that will help them to understand other people's lives. And communication between students and parents will be easy. This is especially important if schools are boards on schools where students stay in schools. The captain expects life to be cheaper, since he can send information via email instead of leaving. This means that caring for more people will be easier. Also, teachers have to reach long distances to collect their salaries and sometimes find that their money is no longer available. Through the Internet they will know that money is available. Some expect to get ideas on new crops to try and ideas on what to do with their villages. Students also expect the Internet to bring as many things as equality as everyone in the community will have access to, first-hand information and projects on other communities. Sellers expect to receive prices on goods such as cars and game.

"I also hope to educate women who are illiterate at school, as the materials will be downloaded online and will reduce the number of illiterate people in the community."

"Personally I think we live in an age of change, it's the world of computers, so we have to keep up with that change. We must not fall behind".

"If the internet is used in our area, I take it to my next king until we have completed the development cycle."

Introducing the Internet to the New Community

Sensitivity - When introducing the internet to a new community, there are many things that need to be done. In the technical, practical and political challenges some papers have been published such as Joseph, K. and Andrew, T (2006), Pais, A. (2006-2) and Pais A. (2007). This paper focuses on the social and psychological aspects that need to be done in order for people to start using the Internet. The first step is to raise awareness of the Internet, which means letting people know what the Internet is, and what it can do for them and how people can benefit from it.

"Before using the Internet, it is important to get the public educated so that you know where the Internet is and how it will be used because it will become part of our lives soon."

Training - After hearing skills training is required on how to use the computer and use the Internet afterwards. It can be a formal training, but it can also be for community members who show others how to use the Internet. This is also found by Joseph, K. and Andrew, T (2006), who set up computer information kiosks in rural areas for children to access the Internet. Unlike the old day trainers will have a small role in informing people to use computers or mobile phones, the agenda should be left to users. It is amazing how often uneducated people, especially children, can start working on it during the first week itself.

Not mentioned by participants because they do not know but more importantly they are training people about the dangers of the Internet, such as security and privacy.

Easy access - Easily accessing the internet is an important starting point and to promote the use of the Internet. On the other hand, this means cheaper access to computers in areas without computers. On the other hand it is about distance. Of course, participants who have a computer and the Internet in their homes or work use the Internet greatly. And participants who had to travel to an online restaurant (such as a 30-minute walk) had to use the Internet sparingly. Not surprisingly, research on the availability of ICT in Senegalese cities found similar results. Most ICT-based households are using (e.g. taking advantage) of that access. City dwellers have great access and take advantage of that opportunity. While those in rural areas have limited access, they nonetheless clarify what opportunity exists (Batchelor and Scott, 2007).

So, after the sensitivity and training, and with easy access to the internet, people can start using the Internet. Surprisingly, nobody said money was a problem. Maybe it's because most people are not aware of the cost of using the Internet. When you work out often it is a particular technical problem that prevents people from using the internet, such as no electricity.

"To make communication more effective in rural areas, it is necessary for technicians to develop solar computers for use in rural areas where there is no electricity so that the Internet can be accessed in those areas and thus expand their workplaces".

Conclusions and Recommendations - As for the first hypotheses: Rural people benefit from the internet in their daily lives, we have concluded that people and rural communities in Madhya Pradesh are benefiting from social and economic ICT. The Internet enables them to access and become masters of their destiny.

Based on our study, the most important social benefits are:

1. The Internet enables people to maintain their network and expand it by connecting with friends, family and others
2. The Internet expands the world of rural people by providing access to information
3. The Internet provides information and supports education

The most important economic benefits are:

1. Reduced travel time
2. Saving money in many different ways, such as travel-

ing to pick up something when you know it's there rather than coming back many times

3. Creating new opportunities and taking advantage of them, such as learning new farming techniques or opening an internet kiosk for money.

Internet users benefit themselves but many others in the community benefit as information is shared.

As for the second hypotheses "Rural people are coming up with new ways of using ICT and services that are not yet known in western and urban areas, due to their unique nature", there is no evidence to be found in this research on new ways of using the internet. People are basically using the Internet to do the same things as people in the Western world, such as communication, information seeking and shopping.

However, the internet is especially important in rural areas due to the lack of other means, such as the use of phones, libraries, newspapers, good roads, and public transportation.

In addition, the Internet can have a positive impact on the rural culture of Madhya Pradesh; however, more Indian content should be developed and placed online. For example, Indian institutions, schools, universities, government and businesses should create their own websites. In that way, Indians will respect the content of their culture, country, and background. This is important to ensure that the Internet will not be seen as a technology of the West and the West, but as something for everyone.

When introducing the internet to a new community, there are three important steps:

1. Sensitivity should occur, by telling the public about the Internet and what it can do for them.
2. After that training is required on how to use the computer and use the Internet afterwards. It can be a formal training, but it can also be for community members who show others how to use the Internet. An important recommendation here is to educate people about the dangers of the Internet, such as security and privacy, because they don't know about them yet.
3. Ultimately, having easy access to the Internet at home or at work, will give more people the opportunity to use the Internet more often and benefit more from it.

References :-

1. Batchelor, S. and Scott, N. (2007), DFID – Catalysing Access to ICTs in India Senegal Household Survey Analysis. Annex to i-team report
2. Singh, Nirvikar (2004). Information technology and rural development in India.,University of California, SantaCruz, USA
3. Sharma, Aravind Kumar. (2007). Information needs and sharing pattern amongruralwomen;a study. IASLICBulletin,
4. Senevira,Wathmanel(2007). Behavioral pattern of the rural citizens in seeking community information and its impact in calculating the channel dependency rate. Informationstudies,
5. Sharma,AravindK.(2006).RoleofSarvaShiksha Abhiyan in Promotion of literacy and rural library development in Madhya Pradesh.Library herald.
6. Shukla, Sarabh. (2005). Information communication technology as a tool for quality rural development. Library and information networking; NACLIN 2004, edby H.K. Kauland S.K.Patil.NewDelhi:DELNET
7. Chief Chikanta, His Royal Highness and Mweetwa, F. (2007). The need for information and communication technologies in rural areas. Link Net and Vision Community Radio Macha. http://www.link.net.zm/
8. Hofstede, G. (1991), Cultures and organisations, Software of the mind.
9. Joseph, K. and Andrew, T (2006), An Overview of Information and Communication Technology (ICT) Initiatives in Rural India Towards Empowerment, IST-India 2006 Conference Proceedings
10. Kozma, R.B. (2007) Toward an Indian knowledge network: ICT, ruraldevelopment and the green revolution. E-learning India 2007 ConferenceProceedings
11. Pais A., (2006, 1) about Macha, http://www.privaserve.org/images/AboutMacha.pdf
12. Pais A., (2006, 2), Mechanisms to bridge the digital divide by bringing connectivity to underserved communities. http://www.itu.int/osg/spu/youngminds/2006/essays/essay- adrian-pais.pdf
13. Pais A. (2007), eLearning for rural communities,
14. Segall M.H., Dasen P., Berry J.W., Poortinga Y.H. (1990) human behaviour in global perspective, Pergamum general psychology series, 213
15. Van Stam, G., (2006).Communications for rural Madhya Pradesh.
16. Van Stam, G. (2007), Case: Sunflower farming. Internet changes Rural India. http://drupal.vanstam.net/?q=node/713

Appendix: questionnaire - To people who are already using the internet, the questionnaire was based on:

1. When did you first useinternet?
2. Who helpedyou?
3. What did you use itfor?
4. How have you benefited from using internet as anindividual?
5. What are the social and economic benefits of usinginternet?
6. Can internet help preserve Indianculture?
7. How is it going to preserveculture?
8. Can internet destroy relationships amongfamilies?
9. Why do you use internet?
10. Would you know the steps that are needed before internet isimplemented?

To those who have not yet used internet, but are expected to do so in a short period of time, the questionnaire was based on:

1. What have you heard aboutinternet?
2. What do you expect from theinternet?

3. How are you going to useinternet?
4. What benefits is it going to bring in yourlife?
5. Will it have social and economicbenefits?
6. Will it help preserveculture?
7. Would you know the steps that are needed before internet isimplemented?

Tabel 1 : participants and topic of interviews

	People who are already using the internet	**People who have not used the internet yet** (but are expected to do so in a short period of time)
Topics of the interview	1. How they use the internet 2. What made them start usinginternet 3. The benefits they experience 4. Impact of internet on Madhya Pradesh culture	1. What they know about the internet 2. Their expectations 3. What they think is needed when the internet is introduced in their community 4. Impact of internet on Madhya Pradesh culture
Participants	School TeachersCollege Professors, Patwari,Gram RojgarSahayak, Sarpanch, Businessman,Student,Shop Keeper Internet kiosk	Farmer,School Teacher,Housewives, Shop Keeper

****

Multimedia in Different Disciplines

Shweta Warring* Dr. Rakesh Katara**

Introduction - Educational institutions over the recent times underwent significant change, as it encounters the quest of modernity from all aspects, starting from sociopolitical, cultural and economic transformations, the country has witnessed. Besides the major concern due to inflation in population, rapid growth of knowledge, philosophy, educational development and the roles of teacher and the quest for bridging the gap of illiteracy has greatly influenced in relying on the technological development as well as in incorporating mass media for education (Aloraini, 2005).

This massive transformation in education has driven the teaching staffs to rely on modern methods of teaching students for coping with some of the major issues concerning with encountering educational aspects as well as in increasing the net productivity. This in turn has eventually aided in increasing the overall learning level, which is quite feasible upon providing an equivalent opportunities for people while taking efforts for imparting education for the learners under equal terms.

For improving the overall educational productivity, there are certain educational institutions and teaching staffs who give much importance towards mainstream technology which is instilled along with education. This in turn induces in development of traditional techniques via incorporating it through newer methods and approaches relying partly on mass media (Ellis, 2004).Apart from the traditional form of education, multimedia based learning technology has evolved in the recent years. Multimedia systems, which are computer-based tools for generating and displaying textual, graphic, animated and pictorial material, have diverse potential roles within education.

The term “multimedia” was used to mean a collection of media undertaking from desperate presentation devices such as learning packages, consisting of printed materials, slides and audio tapes (Chuck Henderson,2003). In the 1990s, the term refers to a class of computer driven for active communication systems which create, store, transmit and retrieve, textual, graphic and auditory networks of information.

Elements Of Multimedia System - A multimedia system is a group of workable elements combined together to achieve a presentable format. These elements are familiar from the worlds of video, broadcast television, music and telecommunications as well as computing. The elements are:

1. A microphone
2. A processor, typically a personal computer or workstation that has been enhanced to handle audio and video
3. A screen that can display high quality still images and moving video as well as computer generated text, graphics and animations
4. A variety of methods by which the user can interact with the system, such as key board, mouse, joy stick or touch screen.
5. A way to playback pre-recorded source material, usually from some form of optical disk, such as a compact disk.
6. Speakers to allow speech and music to be output.

Multimedia system can be made applicable in a wide range of fields, the various components of multimedia systems which make the applications in a more presentable manner include

1. Audio application
2. Video applications
3. Text and image database
4. Computer Graphics
5. Hypertext and hypermedia
6. Animation
7. Image applications

Multimedia in Different Disciplines - Multimedia provokes radical changes in the teaching process in the coming decades particularly as smart students discover that they can go beyond the limit of traditional teaching methods. Indeed, in some instances, teachers may become guides and mentors along a learning path. Many teacher send technologists advocate the need for the greater utilization of multimedia in teaching and learning different subjects. Multimedia thus has greater potential for learning the following subjects:

Physics - The Education Group publishes the Video Encyclopedia of Physics demonstration. It consists of 25 videodiscs that present 600demonstrations of basic physical principles. Most segments have narration(written scripts are

*Research Scholar, Govt. Institute of Advanced Studies in Education, Ajmer (Raj.) INDIA
** Research Guide & Former Reader, Govt. Institute of Advanced Studies in Education, Ajmer (Raj.) INDIA

included), and many segments feature slow motion photography or computer animations. Topics include mechanics, waves, sound, fluid dynamics, heat, thermodynamics, electricity, magnetism, optics, and modern physics. An extensive 1500 page companion explains how to use the videos.

Chemistry - One of the complicated problems in teaching chemistry is that the students do not get enough time in the laboratory to conduct experiments. Many schools cannot provide the quantity or quality of lab experience needed for a good education in chemistry. Students are no longer permitted to handle some important chemicals that have been found to cause cancer. Other experiments are too dangerous, expensive, or time-consuming. The multimedia CDROM "Exploring Chemistry" published by Falcon Software is a comprehensive introductory chemistry course covering both inorganic and organic topics. Its 150 lessons provide 180 hours of instruction.

Biology - Biology teachers are taking advantage of the ability of multimedia to bring classrooms to animations, full motion video clips, and stereo sound. For example, multimedia based Audubon's Mammals features the complete text of the 1840 edition of Audubon's Qudrepeds of North America published by CMC Research; it includes 150 full color mammal lithographs and CD audio of animal sound.

Geography - The highly visual nature of geography makes it natural for multimedia. Picture Atlas of the World is a CD-ROM produced by the National Geographic Society. Covering both physical and cultural geography, it includes world, continental and regional maps, in addition to high resolution interactive political and topographical maps. More than 1200 captioned full screen photographs, 50 video clips and dozens of vocal and musical audio clips bring human and natural geography to life. Animations, illustrations and diagrams en liven map projections and show the earth's rotation.

History - There are many ways multimedia brings history to life. Al most all recorded video history of the twentieth century is available on interactive video discs. History text books on CD-ROMs have audio clips with full text research; multimedia has inspired the creation of new history resources on CDROM for which no prior book exists.

Music - The music and film industries have been totally transformed by multimedia technology. Midi softs' Music Mentor with Recording Session is an example of the powerful new learning environment that the multimedia provides. Students can experiment by varying the melody, rhythm, orchestration, tempo and accompaniment. It is widely used in music colleges to impact training.

Art - Multimedia computers offer art educators all the advantages of multimedia. A Survey of Western Art presents more than a thousand full color photographs of western painting, sculpture and architecture than span art history from ancient Egypt of modern America. Hypertext descriptions of the art work are linked to detailed data cards and audio commentary on the extraordinary art images. This method provides a powerful teaching, learning and research tool for scholars, teachers, students and art lovers.

Foreign Language - Multimedia helps in a natural way for teaching language. Digital audio promotes pronunciation capabilities and full motion video can put students in real life situation. Exploiting these factors, Syracuse Language System has published the award winning, playing with language series on CDROM. Available in Spanish, French, German, Japanese and English, the ideas include introductory Games, Goldilocks and the three bears, and the simple play.

Conclusion - Multimedia is considered an important tool for developing understanding about different discipline. The challenge for teachers is to use multimedia in various waysthat promote thinking and concept development of a student . Multimedia enhances the quality of instruction in the classroom. Multimedia components such as graphics, animation and sound increase the learning process through visualization. In fact, multimedia is changing the nature of reading itself. Instead of limiting to the linear presentation of text as printed in books, multimedia makes reading dynamic by giving words an important new dimension. Many studies have found that students learn as much or more from multimedia as from traditional methods, generally with approximately a 30 percent reduction in instructional time. It becomes a redeemable element in the case of multimedia as it is pivotal as a communication tool fulfilling the primary aim of educational system which is under the verge of seeking knowledge and also in enhancing the students' skills.

References :-

1. Abdullah Mohamed Abdullah Al Yateem and Sameer Alsayadi. (2015) "Designing educational blog effect on the students' knowledge acquisition in the secondary stage- Case study of KSA Schools". International Conference on Communication, Management and Information Technology (ICCMIT).
2. Agarwal, N. & Liu, H. (2008) "Blogosphere: research issues, tools, and applications".SIGKDD Explorations, 10(1), 18-31.
3. Alejandro Valencia Arias et al., (2015). "Individual Factors that Encourage the Use of Virtual Platforms of Administrative Sciences Students: A Case Study." The Turkish Online Journal of Educational Technology. 14 (3), 81- 87.
4. Alhaji Mohammed Haroon(2009) "The introduction of ICT into Ghanaian Educational curriculum; success, failure and the way forward." Northen ICT4D series- July 2009
5. Antwi, V., Anderson, I.K., and Sakyi-Hagan, N. (2014). "Effect of Computer Assisted Instruction on Students' Performance in some selected concepts in Electricity and Magnetism: A Study at Winneba Senior High School in Ghana." Advances in Scientific and Technological Research (Astr), 1(4), 161- 176

छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन

राकेश कुमार गिरि*

शोध सारांश – हमारी सभ्यता और संस्कृति का वन वृक्षों से अत्यंत घनिष्ट सम्बंध है। वन हमारी सभ्यता और संस्कृति के जन्मदाता और हमारी आध्यात्मिक और भौतिक समृद्धि के उन्नायक है; कहा जाता है कि वृक्ष ही जल है, जल ही अन्न है और अन्न ही जीवन है। देश की आर्थिक समृद्धि के लिए भी वनों के संरक्षण की तीव्र आवश्यकता है। अतिवृष्टि, अकाल, बाढ़, रेगिस्तान आदि विषम समस्याओं पर काबू पाने के लिए वनों के संरक्षण के हर संभव प्रयास करने होंगें। पर्यटन की दृष्टि से भी वनों का विकास एवं संरक्षण होने चाहिए क्योंकि इससे विदेशी मुद्राएं प्राप्त होती है। लघु वनोपज का उपयोग अनेक उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है इनसे अनेक लघु तथा कुटीर उद्योग चलाये जाते हैं वनों से पशुओं के लिए चारा भी मिलता है जिससे वन्य पशु-पक्षियों का पालन-पोषण होता है। यहां कुछ ऐसी वनस्पतियॉ तथा जड़ी-बूटियां वृक्षारोपण के साथ-साथ वृक्षों की रक्षा तथा उनकी उचित देखभाल के लिए चेतना उत्पन्न करने पर ही देश की खुशहाली एवं सुंदरता निर्भर है।

शब्द कुँजी – पर्यटन, विकास एवं संरक्षण, अराष्ट्रीयकृत वनोपज, रायल्टी, लघु वनोपज एवं प्राथमिक वनोपज समितियाँ।

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ राज्य के वन क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की अकाष्ठीय वनोपज बहुतायत में उपलब्ध हैं। राष्ट्रीयकृत वनोपज के सम्बन्ध में लघु वनोपज संघ के पास विस्तृत जानकारी उपलब्ध है, परन्तु अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी न होने के कारण संग्रहण अपनी इच्छानुसार किसी को भी विक्रय का संग्रहण कर स्थानीय ग्रामीणों द्वारा वर्ष के विभिन्न समय में इन वनोपजों का संग्रहण कर स्थानीय हाट बाजारों में छोटे व्यापारियों को विक्रय किया जाता हैं। ये छोटे व्यापारी राज्य की मुख्य लघु वनोपज बाजारों के व्यापारियों को माँग के अनुरूप वनोपज उपलब्ध कराकर अपना कमीशन या मूल्य प्राप्त करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा उपरोक्तानुसार संग्रहित वनोपज को आवश्यकतानुसार ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय किया जाता है। प्रत्येक वर्ष राज्य में संग्रहित किए जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा इस प्रकार अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगों हेतु भेजी जाती है क्योंकि राज्य के अंतर्गत लघु वनोपज आधारित उद्योगों का विकास अपर्याप्त है। अकाष्ठीय वनोपज संग्राहकों को उचित मूल्य दिलाने हेतु छत्तीसगढ़ शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ की स्थापना की गई है। छत्तीसगढ़ लघु वनोपज संघ द्वारा राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज जैसे- तेन्दूपत्ता, साल बीज, हर्रा, गोंद वर्ग 1 एवं 2 को प्राथमिक वनोपज समितियों के माध्यम से संग्रहण कर निविदा/नीलाम के द्वारा विक्रय किया जाता है। इसके अतिरिक्त लघु वनोपज अराष्ट्रीयकृत होने के कारण, ग्रामीण बिना रायल्टी के संग्रहण कर स्थानीय बाजार में विक्रय करने हेतु स्वंतत्र है।

सरकारी नियंत्रण की दृष्टि से वनोपज को दो प्रकार से बाँटा जा सकता है-

राष्ट्रीय वनोपज – इस प्रकार के वनोपजों का सरकार द्वारा नियंत्रण रखा जाता है अर्थात् राष्ट्रीकरण कर दिया जाता है तथा संग्रहण एवं बिक्री का कार्य स्वयं शासन करती है इस प्रकार की वनोपज में सागौन, साल, बीजा, तीन्सा, शीशम आदि वनोपज आती है। राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज में महुआ के फल एवं फूल ,सालबीज आदि आते हैं।

गैर राष्ट्रीयकृत योजना – इस प्रकार के वन उपजों में सरकार का निंयत्रण नहीं रहता अर्थात् इसमें वे सभी उपजें शामिल रहती है जिनका राष्ट्रीयकरण हुआ हो इसकों भी दो भागों में बाँटा जा सकता है-

मुख्य वनोपज – इसमें साजा, हल्दू, मूठी, धावड़ा, हर्रा, बहेरा, तेन्दू, महुआ, आंवला, जामुन, कहवा, सेमर, चार, नीलगिरी, खैर आदि प्रजातियां सम्मिलित है।

लघु वनोपज – इसमें माहुल पत्ता, लाख, चिरौंजी, कुसुम, सवई घास, तिखुर, सफेद व काली मूसली, आंवला, बहेड़ा, जड़ी बूटियों की वृहद् प्रजातिया सम्मिलित है जिनका संग्रहण एवं विक्रय नि:शुल्क है।

अध्ययन का उद्देश्य – नवगठित राज्य में प्रशासनिक सुविधाओं की उत्कृष्टता के लिए जिलों का पुनर्गठन करते हुए 27 जिलों में विभाजित किया है। प्रस्तुत शोधपत्र अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ :

1. छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज के विकास एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज के विकास एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

अध्ययन की शोध प्रविधि – अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य का 43.85 प्रतिशत भू-भाग प्राकृतिक वनों से आच्छादित है जिसमें विभिन्न प्रकार की लघु वनोपज पाई जाती है। राज्य शासन द्वारा औषधीय तथा अन्य लघुवनोपज के स्थानीय ग्रामीणों,

* शोधार्थी एवं अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र) किरोड़ीमल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायगढ़ (छ.ग.) भारत

विशेषकर आदिवासियों के खाद्य औषधि तथा जीविकोपार्जन में महत्व को ध्यान में रखते हुए राज्य को हर्बल राज्य घोषित किया गया है। राज्य की नवीन वन नीति में भी अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज के विनाशविहीन विदोहन की प्रक्रिया को अपनाकर इनकी सतत् उपलब्धता बनाए रखते हुये स्वास्थ्य सुरक्षा तथा ग्रामीण अंचल में नियमित आय सुनिश्चित करने के लिए वनौषधियों तथा अन्य लघुवनोपजों के उत्पादन, संग्रहण, प्रसंस्करण एवं विपणन को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है। छत्तीसगढ़ प्राकृतिक वनसम्पदा के लिए अनादि काल से प्रसिद्ध रहा है तथा इसके विविध अंचलों का रामायण, महाभारत, पुराण, काव्य या अभिलेखों में दण्डकारण्य, नागवन, झाडेशवन, महाटवी या महाकान्तार आदि नामों से पुकारा जाता रहा है। छत्तीसगढ़ राज्य का 56,772 वर्ग कि.मी. (अर्थात् 59285.27 हेक्टेयर) भूभाग वनों से आच्छादित है, जो प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 43.85 प्रतिशत है। दण्डकारण्य क्षेत्र (प्राचीन बस्तर) में अभी भी सबसे अधिक भूमि वनों के अन्तर्गत है। यहाँ की उष्णकटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वनस्पति शाल वृक्षों के लिए अपचानी जाती है। यही स्थिति प्राचीन झारखण्ड की है और वनों के आधिक्य में इसका दूसरा स्थान है। यहाँ भी साल वृक्षों की अधिकता है। जशपुर के एक तिहाई भाग में उष्ण कटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन मिलते हैं। इसीलिए यहाँ मिश्रित वन की बहुलता है। महानदी बेसिन प्रमुखतया मिश्रित वनों का क्षेत्र है, यहाँ की वनसम्पदा को तृतीय क्रम में रखा जा सकता है। रायपुर, राजनांदगाँव तथा रायगढ़ में महानदी का बेसिन वनविहीन है और यहाँ दस प्रतिशत से कुछ ही अधिक भूमि वनों के अन्तर्गत है। सबसे कम वन दुर्ग जिले (3.2 प्रतिशत) में हैं सबसे अधिक वन अबुझमाड़ (50 प्रतिशत से अधिक) में हैं। छत्तीसगढ़ की प्रचुर वनसम्पदा की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं :-

1. देश के सम्पूर्ण वनों में से 12 प्रतिशत छत्तीसगढ़ में हैं।
2. राज्य के वनों का कुल क्षेत्रफल 69,772 वर्ग किलो मीटर अर्थात् कुल क्षेत्रफल के 44 प्रतिशत भाग पर वन हैं।
3. जैव विविधता से समृद्ध, दो सौ से अधिक प्रकार की लघु वनोपज, विलक्षण एवं बहुमूल्य वन-संसाधनों के साथ ही यह क्षेत्र वन्य प्राणियों से परिपूर्ण हैं। यहाँ 03 राष्ट्रीय उद्यान तथा 11 अभ्यारण्य हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज – छत्तीसगढ़ वास्तव में लघु वनोपज का गढ़ है। छत्तीसगढ़ सरकार ने वनोपजों के व्यापार में वनवासियों और ग्रामीणों को भागीदार बनाते हुए उन्हें ज्यादा से ज्यादा लाभ पहुंचाने की रणनीति अपनाई हैं। लघु वनोपज संग्राहकों की आर्थिक, सामाजिक समस्याओं के निदान के लिए जितना अधिक कार्य छत्तीसगढ़ सरकार कर रही है उतना कोई और राज्य सरकार नहीं कर रही है। अराष्ट्रीयकृत वनोपज के कारोबार को जितना अधिक बाजार से जोड़ा जाएगा, उतना अधिक लाभ संग्राहकों को होगा।

छत्तीसगढ़ राज्य के विकास का प्रयास बैगर वनवासी के विकास के सोचना कोरी कल्पना होगी। यदि हम सोचे कि आखिर किस प्रकार से वनों के समीप रहने वालों की आयु वृद्धि की जावें, तो एक सशक्त विकल्प लघु वनोपज से जुड़े कार्य है। इस हेतु लघु वनोपज का विनाशविहीन विदोहन, संग्रहण के उपरांत सही प्राथमिक उपचार तथा प्रसंस्करण किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक लघु वनोपज का प्रसंस्करण नहीं किया जाता, तब तक संग्राहकों को उनकी वनोपज के सही मूल्य दिलाने का सोच क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक जिला यूनियन में लघु वनोपज आधारित एक बड़ी प्रसंस्करण इकाई तथा अनेक छोटी इकाइयों की स्थापना की जानी चाहिये।

अकाष्ठीय वनोपज संग्राहकों को उचित मूल्य दिलाने हेतु शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ की स्थापना की गई है। राज्य लघु वनोपज संघ द्वारा राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज जैसे की तेंदू पत्ता, साल बीज, हर्रा, गोंद वर्ग 1 एवं 2 को प्राथमिक वनोपज समितियों के माध्यम से संग्रहण कर, निविदा/नीलाम के द्वारा विक्रय किया जाता है। इसके अतिरिक्त शेष लघु वनोपज अराष्ट्रीयकृत होने के कारण,ग्रामीण बिना किसी रायल्टी के संग्रहण कर स्थानीय बाजार में विक्रय करने हेतु स्वतंत्र है। अराष्ट्रीयकृत वनोपज को वनौषधीय एवं गैर-वनौषधीय लघु वनोपजों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ द्वारा अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार के संबंध में प्राथमिक बाजार अध्ययन एवं लघु वनोपज परिवहन अनुज्ञा पत्र की जानकारी के आधार पर लघु वनोपज विपणन से संबंधित प्राथमिक जानकारी तालिका 1 में है :-

तालिका 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

राज्य के अधिकांश राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज औषधीय व गैर-औषधीय रूप में उपयोग में आते हैं। इन लघु वनोपजों के गुणवत्ता मापदंड किसी भी संस्था द्वारा निर्धारित किए गए हैं। इस शोध के माध्यम से छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज के व्यापार को बढ़ावा देने तथा संग्राहको को उचित मूल्य दिलाने की दिशा में एक प्रयास है। आशा है कि इस शोधपत्रके माध्यम से संग्राहकों, प्राथमिक वनोपज सहकारी समितियों, वन समितियों, व्यापारियों तथा उद्योगपतियों को उचित दिशा निर्देश मिल सके। इस शोध को तैयार करने में छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ, रायपुर द्वारा संपूर्ण राज्य के बाजारों के सर्वेक्षण को आधार बनाकर तथा इन बाजारों में अकाष्ठीय वनोपज का व्यापार करने वाले व्यापारियों से जानकारी एकत्र की गई एवं इन क्षेत्रों में स्थापित प्रसंस्करण इकाईयों से भी जानकारियाँ एकत्र की गई।

मुख्य वनौषधियों की मात्रा एवं मूल्य – राज्य के वन क्षेत्रों से संग्रहित की जाने वाली मुख्य वनौषधियाँ, उपयोग किये जाने वाले भाग, उनकी मात्रा एवं अनुमानित मूल्य दिए गए हैं। दर्शायी गई वनौषधियों की उपलब्ध वार्षिक मात्रा अनुज्ञा पत्र के आधार पर है परन्तु वास्तविक उत्पादन दर्शायी गई मात्रा से कहीं अधिक है। इससे यह स्पष्ट होता है कि राज्य में विक्रय की जाने वाली वनौषधियों में कुछ की मात्रा अधिक एवं शेष की मात्रा कम है। प्रत्येक प्रजाति के उपयोगी भाग को उनके औषधीय गुणों के आधार पर विभिन्न प्रकार की दवाओं एवं अन्य उपयोग में लिया जाता हैं। उपयोग के आधार पर राज्य की व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण वनौषधियों का विवरण तालिका 2 में है :-

तालिका 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

शोधार्थी ने अपने लघु शोधपत्रपत्र में दो परिकल्पनाओं को आधार बना कर अध्ययन किया है – शोधार्थी ने अध्ययन के दौरान पाया कि वास्तव में छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज के उत्पादन में धनी राज्य है किन्तु वनोपज उत्पादन की संपूर्ण मात्रा का विदोहन करने में छत्तीसगढ़ राज्य को और बेहतर उपाय करने होंगे।

अध्ययन से यह स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ एक वन विपुलता वाला राज्य है। छत्तीसगढ़ में लघु वनोपज का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है साथ ही वह क्षेत्र जो मिश्रित एवं अवर्गीकृत वन है यदि वहां औषधीय एवं गैर औषधीय वनों का उत्पादन करके उचित देखभाल की व्यवस्था की जाए।

शोधार्थी का अध्ययन पूर्णत: द्वितीयक आंकड़ों पर अवलंबित रहा है जिसमें छत्तीसगढ़ राज्य की मुख्य अराष्ट्रीयकृत औषधीय एवं गैर औषधीय लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की दशा एवं दिशाओं का अध्ययन

किया गया।

शोधार्थी द्धारा प्रस्तुत अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य सरकार एवं विद्धान नीति निर्माताओं के लिए यदि आंशिक पूर्ति भी कर पाती है तो यह छत्तीसगढ़ राज्य के लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की दशा में सुधार की एक पहल होगी साथ ही लघु वनोपज के विपणन हेतु उपयुक्त बाजार का चयन कर इसकी सही दिशा को निर्देशित करने में सफल होगी, यदि ऐसा होता है तो शोधार्थी के अध्ययन की यही सार्थकता होगी और तभी शोधार्थी द्धारा किये गये अध्ययन की उपादेयता सिद्ध होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खन्ना लक्ष्मण सिंह, वन विज्ञान
2. खन्ना लक्ष्मण सिंह, वन उद्योग
3. डी.एन., वन आदिवासी एवं पर्यावरण
4. सिन्हा वी.सी.,श्रम अर्थव्यवस्था
5. डॉ. जथार एवं बैरी, श्रम अर्थशास्त्र

तालिका 1. छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज संपदा

क्र.	अकाष्ठीय प्रजाति के प्रकार	महत्वपूर्ण प्रजाति उत्पाद	व्यावसायिक लघु वनोपज संख्या	अनुमानित वार्षिक व्यापार (रू. करोड़ में)
1	राष्ट्रीयकृत वनोपज	तेंदू पत्ता, साल बीज, हर्रा तथा कुल्लू, धावड़ा बबलू एवं खैर गोंद आदि	7	225
2	अराष्ट्रीयकृत औषधीय	बायबिडिंग, कालीजीरी, कालमेघ, आंवला, शहद आदि	42	50
3	अराष्ट्रीयकृत गैर-औषधीय	महुआ लाख, माहुल पत्ता, इमली, चिरौजी आदि	30	250
	योग		79	525

तालिका 2 छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण वनौषधियाँ

क्र.	प्रजाति	उपयोगी भाग	वानस्पतिक नाम	मात्रा(क्विं में)	दर(प्रति क्विं.)	राशि(लाख में)
1	आंवला	फल	Emblica cfficinalis	31,000.00	3,000.00	930.00
2	शहद	शहद	Honey	3,750.00	5,000.00	187.50
3	बायबिडिंग	फल	Embelia pjericottam	11,300.00	3,000.00	339.00
4	बेल	गुदा	Aegle marmelos	15,600.00	700.00	109.20
5	कालीजीरी	बीज	Vernonia anthelmintica	6,800.00	2,400.00	163.20
6	धवई	फूल	Woodfordia fruticosa	26,250.00	400.00	105.00
7	सतावर	जड़	Asparagus racemosus	2,600.00	3,000.00	78.00
8	कालमेघ	पंचांग	Andrographis paniculata	13,950.00	500.00	69.75
9	नागरमोथा	जड़	Cyperus esculetus	14,800.00	550.00	81.40
10	बेहड़ा	फल	Terminalia bellerica	29,700.00	250.00	74.25
11	मालकांगनी	बीज	Celastrus paniculatus	3,200.00	2,300.00	73.60
12	भेलवा	बीज	Semecarpus anacardium	12,250.00	250.00	30.63
13	मरोड़फली	फल	Helicteres isora	3,900.00	400.00	15.60
	योग			**75100.00**		**2,257.13**

छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण वनौषधियाँ

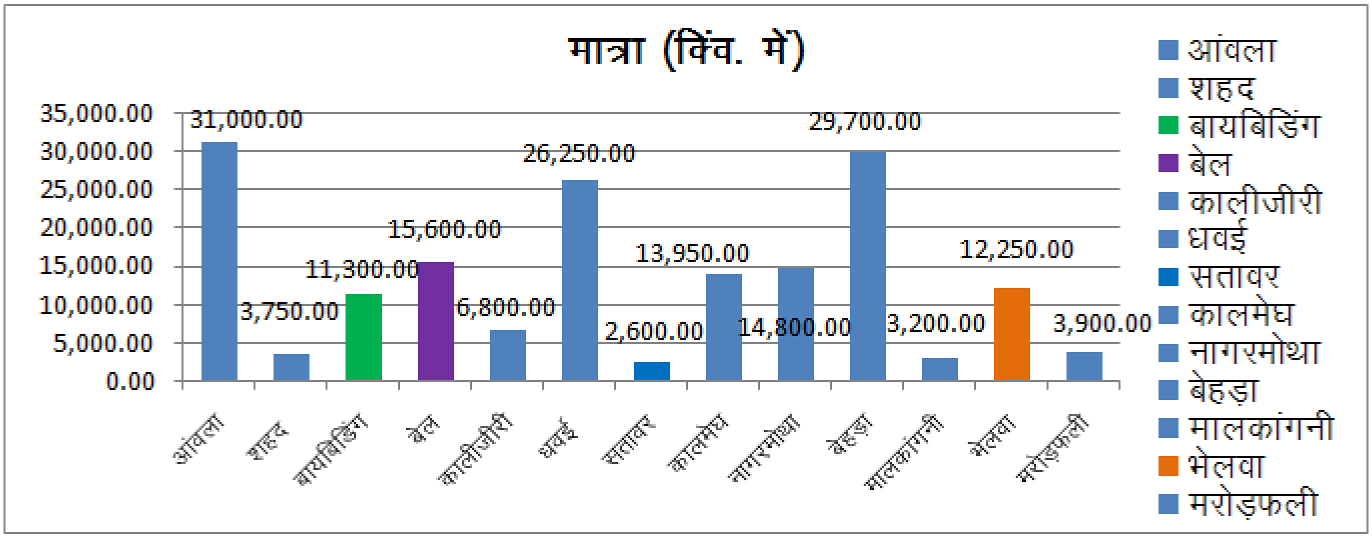

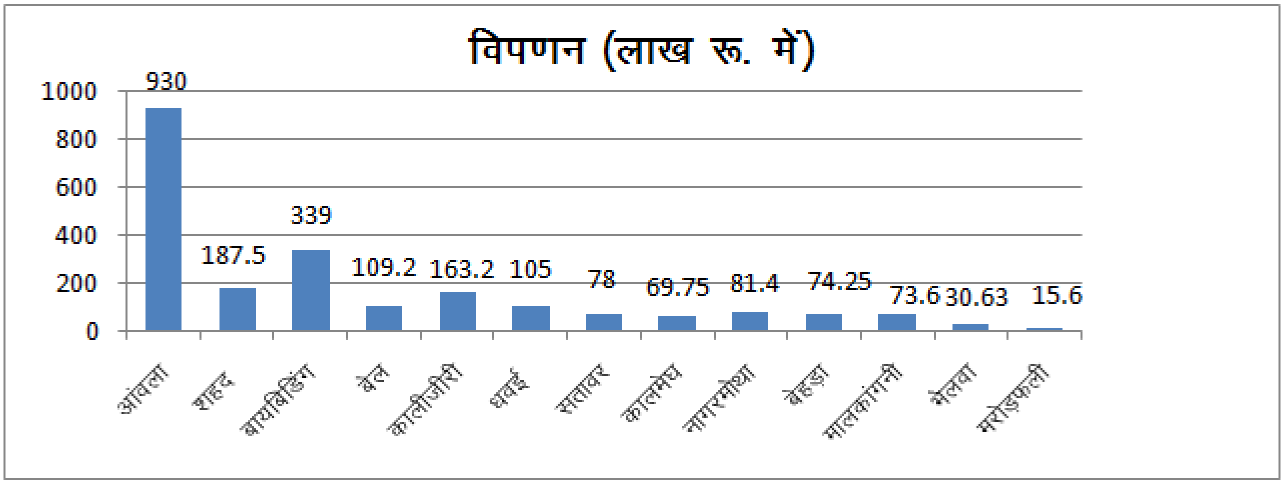

****

पंचायती राज एवं 73 वां संविधान संशोधन

डॉ. तहसीलदार तमोली *

प्रस्तावना - 73वां संविधान संशोधन 1992 के द्वारा ग्रामीण स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं का बहुमुखी विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है। यह प्रयास त्रिस्तरीय संस्थाओं को एक नवीन स्वरूप प्रदान किया। पंचायती राज संस्थाओं का स्वरूप संवैधानिक हो गया। इसमें शक्तियों एवं कार्यों का पृथक और स्पष्ट निर्धारण कर दिया गया है। यद्यपि पंचायती राज संस्थाएं भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही विद्यमान है। यह संस्थाएं भारत की ही मूल संस्था है। प्राचीन कालीन पंचायत संस्थाओं के निर्णय को शासन एवं जनता दोनों ही बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। कालांतर में मुगल काल एवं ब्रिटिश कालीन भारत के समय इन पंचायत संस्थाओं को कमजोर करने का प्रयास किया। मुगल कालीन भारत में इसका स्वरूप ही बदल दिया गया जबकि ब्रिटिश कालीन भारत में पंचायती संस्थाओं का पहले पतन एवं बाद में इसके महत्व को समझे जाने के कारण पुन: इसके सुदृढ़ करने का भी प्रयास ब्रिटिश सरकार द्वारा लगातार किया गया। सन 1992 मैं संविधान के 73 वें संशोधन में पंचायती राज संस्थाओं की यथास्थिति समाप्त करने और उनके अधिक सुदृढ़ करने तथा उनकी प्रभावी भूमिका सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया। इन संशोधन के अनुसार अब जनतांत्रिक विकेंद्रीकरण के कारण इन संस्थाओं को संवैधानिक स्तर प्राप्त हो गया है। अब राज्यों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि यह पंचायत संस्थाओं का गठन करें। संशोधन में पंचायतों की संरचना को विवेकपूर्ण बनाने की व्यवस्था है। पंचायती राज संस्थाओं में प्रभुता और वर्ग विशेष के नेतृत्व में वर्चस्व को भी यथासंभव कम करने का प्रयास किया गया है।इनके लिए यह व्यवस्था की गई है कि उसमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों के लिए स्थान सुरक्षित किया गया है।

संविधान के इस संशोधन में महिलाओं पर विशेष ध्यान दिया गया है। इसके अनुसार हर वर्ग के लिए आरक्षित पदों की एक तिहाई संख्या पर आरक्षण उस वर्ग में महिलाओं का हो गया है।

विगत 50 वर्षो के बाद जिस पंचायती राज व्यवस्था का विकास भारत ने किया है वह पूरी तरह तार्किक और विस्तृत नहीं है।73वें संविधान संशोधन के पूर्व तक तो पंचायती राज संस्थाओं का अस्तित्व नहीं के बराबर था परंतु 73वें संविधान संशोधन के बाद इससे संविधान के अनुच्छेद 243 के तहत स्थान देकर संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया।

73 वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992

देश में 73 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 पंचायती राज संस्थाओं अर्थात ग्रामीण स्थानीय शासन से संबंधित है। यह अधिनियम 1992 में संसद में पारित हुआ। 20 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति ने स्वीकृति प्रदान की और 24 अप्रैल 1993 को तीन राज्य- मिजोरम मेघालय नागालैंड को छोड़कर संपूर्ण देश में लागू किया गया। संक्षेप में इस अधिनियम में मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं।

1. पंचायती राज संस्थाओं को प्रथम बार संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया।
2. सभी राज्यों में पंचायती राज को त्रिस्तरीय पद्धति लागू की गई लेकिन जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से कम थी वहां बीच में स्तर भी की गई। संस्था गठित करने की स्वतंत्रता राज्य के ऊपर छोड़ दी गई है।
3. ग्राम पंचायत स्तर पर ग्राम सभा को वैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है।
4. सभी पंचायती राज संस्थाओं को निश्चित 5 वर्ष में चुनाव कराना अनिवार्य है।
5. पंचायती राज के सभी स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव एक राज्य निर्वाचन आयोग करवाएगा।
6. ग्राम पंचायतों की तरह पंचायत समिति व जिला परिषद के सदस्य भी मतदाताओं द्वारा सीधे प्रत्यक्ष मतदान द्वारा चुने जाएंगे।
7. पंचायती राज में सभी स्थानों पर महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण सुनिश्चित किया गया अर्थात 33% महिला पंचायत प्रधान, प्रमुख बन सकेगी।
8. अनुसूचित जाति एवं जनजाति को भी उसकी जनसंख्या के अनुपात में पंचायती राज संस्थाओं के सभी स्तरों पर पद आरक्षित करने की व्यवस्था होती है।
9. अन्य पिछड़ी जाति के लिए भी सरकार ने आरक्षण का प्रावधान किया है।
10. संसाधनों को ध्यान में रखकर पंचायती राज संस्थाओं को राज्य सरकार के करों को आप का हिस्सा दिलाने राज्य वित्ता आयोग गठित होगा जो अंश के निर्धारण हेतु सिफारिश करेगा।
11. सभी जिलों में जिलाआयोजना समिति गठित की जाएगी जो संबंधित जिले में सर्वागीण विकास हेतु योजनाएं बनाने का कार्य करती है।

73 वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान में एक नया अध्याय 9 जोड़ा गया। अध्याय 9 द्वारा संविधान मैं 16 अनुच्छेद और एक अनुसूची अर्थात एक 11वीं अनुसूची जोड़ी गई है।

73 वें संविधान संशोधन के बाद अब 1000 की जनसंख्या पर ग्राम सभा का गठन किया जाएगा। यद्यपि पूर्व में ढाई सौ की जनसंख्या पर ग्राम सभा का गठन किया जाता था इससे ग्राम सभाओं की संख्या घट गई।

73 वें संविधान संशोधन के द्वारा शासन, प्रशासन एवं जनता के

* असिस्टेंट प्रोफेसर (राजनीति शास्त्र विभाग) एस. बी. एस. पी.जी.कॉलेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

अधिकारों में व्यापक बदलाव देखने को मिला। जर्जर व्यवस्था में पहुंच चुकी प्राचीन गणतंत्र संस्थाएं जीवित हो उठी। नई पंचायती राज संस्था का उदय हो गया। अब संस्था को नए कार्य शक्तियां सौंप दी गई। कार्य क्षेत्र का स्पष्ट हस्तांतरण की प्रक्रिया प्रारंभ की गई। राज्य सरकार एवं नौकरशाही की मनमाने पर अब विराम लग चुका था। अंतरराष्ट्रीय,पारदर्शी , समावेशी और उन्नतशील संस्था का उदय हुआ।

73 वें संविधान संशोधन के बाद भी पंचायती राज संस्थाओं में विभिन्न तरह की कमियां हैं। यदि इन्हें दूर कर लिया जाए तो पंचायती राज संस्थान अधिक प्रभावी परिणाम दे सकती है उक्त कमियां निम्नलिखित है:-

1. यद्यपि ग्राम सभा को 73 वें संविधान संशोधन के द्वारा संवैधानिक स्थिति प्रदान की गई लेकिन फिर भी उस में भूमिका कार्यों में इत्यादि के संबंध में राज्य विधायिका के द्वारा विभिन्न प्रावधान बनाया जाना और यहां विभिन्न राज्य विधान में असमानता ।
2. स्थानीय सरकारों के संबंध में कोई प्रभावी शिकायत निवारण व्यवस्था का ना होना और यदि वहां राज्य प्रशासनिक क्षेत्र को ज्यादा शक्तियां दी जाए तो उनके द्वारा हस्तक्षेप की ज्यादा संभावना है और शक्तियों ना दी जाए तो प्रश्न यह है कि शिकायत निवारण के संबंध में प्रभावी विकल्प क्या है।

पंचायती राज संस्था का विषय क्षेत्र परिवर्तनशील है, इस कारण से इस संस्था को सदैव परिवर्तन को स्वीकार करके कार्य करना है। 73वें संविधान संशोधन 1993 के द्वारा इस संस्था को सैद्धांतिक, कानूनी और औपचारिकता आदि आधारों पर काफी मजबूती प्रदान किया है। इससे संस्थाओं को व्यापक स्वीकार्यता प्राप्त हुई है। पंचायत संस्थाओं की उपयोगिता बढ़ाने हेतु जन स्तर पर भी व्यापक सुधार की आवश्यकता है। ग्रामीण स्तर का नागरिक आज भी बेहतर शिक्षा, स्वास्थ्य, सूचना, ज्ञान आदि से वंचित है। पंचायत संस्थाओं के द्वारा संचालित किए जाने वाले कार्यक्रम का समुचित लाभ नागरिक तक तभी पहुंच सकता है, जब ग्रामीण समाज का नागरिक जागरुक, आधुनिक सोच वाला, प्रगतिशील एवं संरचनात्मक मानसिकता वाला हो। जन स्तर पर सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक , सांस्कृतिक रहन-सहन के स्तर में परिवर्तन लाकर ही पंचायती संस्थाओं को सुदृढ़ किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉक्टर सिंह, निशांत पंचायती राज और महिलाएं सुनील साहित्य दिल्ली 110045, पृष्ठ161
2. वही पृष्ठ 37
3. मीना,लक्ष्मी नारायण, पंचायती राज तथा जन प्रति निधेत्व, दशा एवं दिशा, लिटेरी सर्किल, जयपुर मुद्रक शीतल प्रिंटर्स पृष्ठ 28,29
4. कुरुक्षेत्र, अगस्त 2007 पृष्ठ 12
5. डॉ. सिंह, निशांत सिंह, पंचायती राज और महिलाएं, सुनील साहित्य, दिल्ली 110045 पेज 114
6. वही पेज 115
7. भारत में पंचायती राज, केके शर्मा, नॉलेज बुक डिपो, जयपुर 2012
8. भारत में पंचायती राज, आरती जोशी एवं रूपा मंगलानी, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
9. पंचायती राज और महिलाएं, डॉ, विमला आर्य,राजस्थानी ग्रंथा-गार, जोधपुर
10. पंचायती राज चुनौतियां एवं संभावनाएं, महिपाल, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
11. योजना
12. ग्रामपंचायत संदर्भ साहित्य,पंचायती राज निदेशालय,उत्तर प्रदेश

****

भारतीय लोकतन्त्र का वर्त्तमान परिदृश्य

डॉ. विनोद कुमार सिंह*

प्रस्तावना – प्राचीन काल से लेकर आज तक लोकतन्त्र चर्चा का विषय बना हुआ है। प्लेटो से लेकर अब तक विभिन्न विद्वानों ने लोकतन्त्र पर किसी न किसी रूप में अपने विचार व्यक्त किये है। लोकतन्त्र के अंग्रेजी पर्यायवाची शब्द 'डेमोक्रेसी' की उत्पत्ति ग्रीक मूल के शब्द 'डेमोस' से हुई है। जिसका अर्थ है– 'जनसाधारण'। इस प्रकार लोकतन्त्र शब्द का मूल अभिप्राय ही 'जनसाधारण' या जनता का शासन है। अब्राहम लिंकन के द्वारा दी गई परिभाषा इसके शब्दार्थ के बहुत निकट है। उनके अनुसार– लोकतन्त्र 'जनता के लिए, जनता द्वारा, जनता का शासन है।' सीले की परिभाषा का भावार्थ भी इससे मिलता जुलता है। वह कहते है कि लोकतन्त्र – 'वह शासन व्यवस्था है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति भाग लेता है।'[1] इस प्रकार लोकतन्त्र मे शासन व सत्ता का अंतिम सूत्र जनसाधारण में निहित रहता है और सार्वजनिक नीति का निर्धारण जनता की इच्छा के अनुसार उसके हित साधन के उद्देश्य से होता है अर्थात् लोकतन्त्र में सम्पूर्ण समाज को अन्तिम सम्प्रभु शक्ति प्राप्त रहती है और वह शासन सम्बन्धी सभी मामलों पर अंतिम नियन्त्रण रखता है।

लोकतन्त्र केवल शासन की एक पद्धति एवं राज्य का एक प्रकार ही नहीं है अपितु यह समाज की एक व्यवस्था व जीवन दर्शन भी है। लोकतान्त्रिक सरकार के लिए लोकतान्त्रिक राज्य का होना आवश्यक है क्योंकि लोकतान्त्रिक राज्य के बिना लोकतान्त्रिक सरकार नहीं हो सकती है। लोकतान्त्रिक राज्य के लिए एक लोकतान्त्रिक समाज का होना अत्यन्त आवश्यक है। जिसमें समानता, स्वतन्त्रता व बन्धुत्व की भावना प्रधान होती है।[2] स्वतन्त्रता, समानता व बंधुत्व ऐसे मूल्य हैं जो लोकतन्त्र को सफल व सार्थक बनाते हैं।

आज लोकतन्त्र को विश्व की सबसे आदर्श शासन प्रणाली के रूप में देखा जाता है। यहाँ तक की जो देश लोकतान्त्रिक नहीं हैं, वे भी अपने आपको सबसे बड़ा लोकतान्त्रिक देश होने का दावा करते हैं। इसी लोकतन्त्र के लिए संसार को सुरक्षित रखने हेतु प्रथम विश्व युद्ध लड़ा गया और संसार में लोकतन्त्र को सुरक्षित बनाये रखने के लिए दूसरा विश्वयुद्ध।

भारत में भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकतान्त्रिक शासन प्रणाली को अपनाया गया और संविधान के माध्यम से जनता को अन्तिम संप्रभु बनाया गया। जिसमें जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन संचालन के गुरूतर दायित्व का निर्वहन करती है। भारत में लोकतन्त्र को बड़ी आशा व विश्वास के साथ अपनाया गया ताकि सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक विषमता का अन्त किया जा सके। साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को राजनीतिक व सामाजिक रूप से शिक्षित व जागरूक करते हुए शासन कार्यों में सहभागी बनाया जा सके। स्वतन्त्रता, समानता व बंधुत्व पर आधारित एक पंथनिरपेक्ष राज्य का निर्माण किया जा सके। लोकतन्त्र की जड़े मजबूत हों व ग्रास रूट स्तर पर इसको प्राप्त किया जा सके, इसके लिए पंचायती राज व्यवस्था की त्रि-स्तरीय संरचना को अपनाया गया। पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से जनता को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय सहभागी बनाने का प्रयास किया गया ताकि वास्तविक लोकतान्त्रिक व प्रतिनिध्यात्मक समाज का निर्माण हो सके। जनमानस राजनीतिक रूप से शिक्षित व जागरूक हो सकें व उनमें समानता, स्वतन्त्रता व बंधुत्व के साथ ही साथ स्वावलम्बन की भावना का भी विकास हो सके।

भारतीय संविधान निर्माताओं ने भी लोकतान्त्रिक मूल्यों व आदर्शो को संविधान में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है ताकि इनकी उपेक्षा अपने निहित स्वार्थों एवं हितों की पूर्ति हेतु किसी के भी द्वारा न किया जा सके। भारतीय समाज का एक बड़ा भाग सदियों तक अमानवीय यातनाओं, वर्णगत और जातिगत विषमताओं, जातीय अहंकार एवं जातिगत उच्चता एवं निम्नता के जाल में जकड़ा रहा है। आजादी के बाद भी समाज का यह बड़ा हिस्सा राष्ट्र की मुख्य धारा में नहीं जुड़ पाया। समाज की मुख्य धारा से अलग इस वर्ग को मुख्य राष्ट्रीय धारा में जोड़ने व सामाजिक समानता को स्थापित करने हेतु भारत के संविधान निर्माताओं ने इन्हें संसद एवं राज्य विधान सभाओं व पंचायती राज संस्थाओं के साथ ही साथ सरकारी नौकरियों एवं शिक्षण संस्थाओं में भी इनके लिए आरक्षण की व्यवस्था की। ताकि देश के प्रत्येक नागरिक के लिए विकास के समान अवसर उपलब्ध हो सकें और सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विषमता की खाई में पड़े लोगों की प्रगति के लिए कुछ विशेष अवसर प्रदान किए जा सकें। जिसका लाभ भी इन वर्गों को हुआ। आरक्षण की सुविधा के कारण इन वर्गों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ। सरकारी नौकरियों में प्रवेश मिला और संसद एवं राज्य विधान मण्डलों में इनका राजनैतिक नेतृत्व भी विकसित हुआ।

भारत में लोकतन्त्र एक राजनीतिक व्यवस्था के रूप में अपनी निरंतरता बनाये हुए है, किन्तु यह उन मूल्यों को पूर्ण रूप से विकसित करने एवं एक लोकतान्त्रिक समाज व जीवन दर्शन को विकसित करने में अभी भी मीलों दूर है। क्योंकि भारत में जिस लोकतान्त्रिक व्यवस्था को अंगीकार किया गया वह भारतीय जनमानस की मूल प्रवृत्तियों, जीवन शैली व संस्कृति से मेल नहीं खाता था। प्रजातन्त्र के लिए कुछ विशेष आदतों, मनोभावों व अभिवृत्तियों का होना आवश्यक है। इन्हें धीरे-धीरे ही विकसित किया जा सकता है। सर्व सत्ताधारी व्यवस्था के स्थान पर लोकतान्त्रिक व्यवस्था को तो रातों-रात स्थापित किया जा सकता है। ऐतिहासिक व संवैधानिक दृष्टि से भले ही एक निश्चित तिथि पर यह परिवर्तन संभव हो जाये, किन्तु व्यवहार में इस प्रकार के परिवर्तन में अनेकों वर्ष लग जाते हैं क्योंकि लोगों की सोंच

* असिस्टेंट प्रोफेसर (राजनीति शास्त्र विभाग) जवाहरलाल नेहरू मेमो0 पी0जी0 कालेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

एवं प्रवृत्ति बदलने में समय लगता है।[3] यही कारण है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकतन्त्र की सफलतापूर्वक प्रतिस्थापना के बावजूद भारत में सभी तरह के लोकतान्त्रिक मूल्यों को व्यवहारिक रूप से लागू नहीं किया जा सका है। जिसका प्रमुख कारण भारत की सामाजिक संरचना एवं मूल्यों में अन्तर है।

भारत में लोकतान्त्रिक व्यवस्था भले ही ऊपर से पूर्णरूप से स्वस्थ दिखायी पड़ती है परन्तु वह अन्दर ही अन्दर पूर्णत: खोखली होती जा रही है। आज आम चुनाव केवल एक मखौल बनकर रह गये हैं, क्योंकि राजनैतिक दल अपना नैतिक आधार खोते जा रहे हैं और वह सत्ता प्राप्ति को ही अपना एक मात्र लक्ष्य बनाकर अपनी गतिविधियों को संचालित कर रहे हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में अनेक दशकों तक कांग्रेस पार्टी का एक छत्र राज रहा है। विगत तीन दशकों से इस स्थिति में आमूल चूल परिवर्तन आया है। वर्तमान समय में देश बहुदलीय राजनीतिक व्यवस्था के युग में प्रवेश कर गया है और भारत में अनेक राजनीतिक दलों का आविर्भाव हुआ है। इन राजनैतिक दलों में अधिकांश का आधार जातिवाद, सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद एवं अगड़ा–पिछड़ावाद है। फलस्वरूप भारतीय राजनीति जातिवाद, क्षेत्रवाद, संप्रदायवाद व अगड़े–पिछड़े के विवाद में फंसकर भारतीय लोकतन्त्र को पूर्णत: खोखला करती जा रही है और उसके लिए आवश्यक आदर्शों एवं मानकों को स्थापित करने के बजाय उन्हें क्षतिग्रस्त करती जा रही है। परिणामस्वरूप जातीय हिंसा, साम्प्रदायिक दंगे, उपद्रव, अनैतिक राजनीति, साम्प्रदायिकता व जातीय तुष्टीकरण की राजनीति का बोलबाला है।[4] इन समस्याओं की प्रमुख जड़ निम्नस्तरीय दलीय नीतियां है। अधिसंख्यक राजनीतिक दल इन्हीं भेदभावमूलक नीतियों को बढ़ावा देकर सत्ता में बने रहना चाहते हैं। फलस्वरूप उनका झुकाव निरंतर जातिवाद एवं धार्मिक विवादों की ओर होता जा रहा है। जाति का राजनीतिकरण एवं राजनीति का जातीयकरण हो गया है। यही कारण है कि आरक्षण की व्यवस्था केवल दस वर्षों के लिए की गई थी। वह आज कई वर्षों के बाद भी हटाई नहीं जा सकी है।

संविधान द्धारा प्रदत्त आरक्षण की सुविधा में से उपजे अपेक्षाकृत सबल वर्ग ने अपनी स्थिति का लाभ अपने समाज के विशाल वर्ग को शिक्षित एवं जागरूक करने व उन्हें पिछडेप़न की खाई से बाहर निकालने, जातिगत भेदभाव से ऊपर उठने व एक समरस समाज का निर्माण करने के लिए नहीं किया। वह त्याग का मार्ग अपनाने की अपेक्षा अपने लिए अधिक सुख–सुविधाएं बटोरने और सत्ता के गलियारे में प्रवेश पाने की कोशिशों में लग गया। एक प्रकार से वह स्वयं भी इन वंचित एवं पिछड़े वर्गो के बीच एक अभिजात वर्ग बन गया है, जो अपने ही जाति एवं वर्ग से दूर रहना चाहता है। आरक्षण की सीढ़ी से ऊपर चढ़ते हुए छोटे से शक्तिशाली वर्ग ने आरक्षण नीति में निहित स्वार्थ पैदा कर लिया है और अपने ही जाति के दीन–हीन लोगों को वह उसका लाभ उठाने से वंचित रखना चाहती है। यदि ऐसा न होता तो एक पीढ़ी में आरक्षण की सुविधा लेने, आरक्षण की सीढ़ी से पदोन्नति न पाने और क्रीमीलेयर को आरक्षण की सुविधा से वंचित रखने के प्रयत्नों का इतना कड़ा विरोध न होता। अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग का आज के वोट गणित में महत्वपूर्ण स्थान है। जिसके कारण राजनैतिक आरक्षण की इस सुविधा को हर दस वर्ष बाद संविधान में संशोधन करके बढ़ाया जाता रहा है और जिस तरह से संसद के सदनों में कोई भी राजनैतिक दल इस आरक्षण के विरोध में नहीं खड़ा हुआ। उससे यह स्पष्ट है कि सभी दल आरक्षण को लेकर राजनीति कर रहे हैं। उन्हें समानता के मौलिक अधिकार से वंचित अधिसंख्यक जनता की कोई चिंता नहीं है। भारत को यदि एक लोकतान्त्रिक राष्ट्र के रूप में अपने अस्तित्व को बनाये रखना है और एक समतापूर्ण समाज के लक्ष्य को प्राप्त करना है तो हमें आरक्षण नीति के हानि एवं लाभ का वस्तुपरक मूल्यांकन करना होगा और इसको वोट एवं सत्ता की राजनीति के दलदल से बाहर कर उसको सामाजिक एवं राजनीतिक प्रयासों से हल करने के उपाय खोजने होंगे।

भारतीय लोकतन्त्र में मतदाताओं ने मताधिकार के महत्व को समझा है और बढ़ चढ़कर अपने मताधिकार का प्रयोग कर रहे हैं। जो कि भारतीय लोकतन्त्र के लिए एक अच्छा संकेत है। लेकिन इसके साथ ही साथ धनबल एवं बाहुबल का प्रयोग तेजी से बढ़ा है और राजनीति का अपराधीकरण हुआ है।[5] सत्ता प्राप्ति के लिए दल परिवर्तन, राजनीतिक दलों की आन्तरिक गुटबन्दी आदि ने भारतीय लोकतन्त्र को कमजोर किया है। सभी राजनीतिक दल जातिगत भेदभाव को समाप्त करने एवं स्त्री पुरूष समानता की बात बढ़चढ़कर करते हैं परन्तु जब बात उनके वास्तविक लाभ की आती है तो अपने–अपने राजनैतिक हित देखते हैं। यहां तक की उम्मीदवारों का चयन भी जातिगत एवं वर्गगत समीकरणों को ध्यान में रखकर किया जाता है, जो कि भारतीय लोकतन्त्र के लिए एक अच्छा संकेत नहीं है। संसद एवं विधानसभाओं में राजनैतिक दल अपने नफे एवं नुकसान को ध्यान में रखकर विभिन्न प्रकार की बहसों में भाग लेते हैं। सत्ता पक्ष में रहने पर उनका रवैया दूसरा होता है और विपक्ष में रहने पर उन्हीं मुद्दों पर ठीक उसके विपरीत। प्रजातान्त्रिक व्यवस्था को मजबूत एवं सुदृढ़ करने की बजाए वे जातिगत, साम्प्रदायिक, भाषागत एवं क्षेत्रीयता के आधार पर अपने जनाधार को सुदृढ़ करने और उसे बढ़ाने पर अधिक बल देते हैं। इन सभी हानिकारक तत्वों ने भारतीय प्रजातन्त्र को और अधिक कमजोर किया है तथा अपनी जड़ों को और अधिक गहराई तक जमाती जा रही है। इस प्रकार भारतीय लोकतन्त्र भ्रष्टाचार, अपराध, भाई–भतीजावाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, सम्प्रदायवाद आदि ऐसी अनेक बुराइयों का गढ़ बनता जा रहा है जिन्हें जड़ समेत उखाड़ फेंकने के लिए लोकतान्त्रिक व्यवस्था स्थापित की गई थी।

बेरोजगारी, मंहगाई, गरीबी, भ्रष्टाचार जैसी अनेक समस्याओं का निराकरण न कर पाने के कारण लगभग प्रत्येक निर्वाचन के पश्चात अधिसंख्यक राज्यों में सरकारें अपदस्त कर दी जाती हैं। इसके बावजूद ये समस्याएं अनवरत बनी हुई हैं। लोकतन्त्र बहुमत का शासन है और जो राजनैतिक दल बहुमत प्राप्त करता है वह बहुमत के बल पर विपक्षी राजनैतिक दलों की उचित बातों पर भी ध्यान नहीं देता है और मनमाने ढंग से शासन सत्ता का प्रयोग करता है। आज प्रजातन्त्र का चौथा आधार स्तम्भ माना जाने वाला प्रेस तथा मीडिया भी लोकतन्त्र की जड़े खोदने का कार्य कर रहे हैं। वे भी भ्रष्टाचार में लिप्त होते जा रहे हैं। पैसों की लालच में पार्टी विशेष के पक्ष में समाचार प्रसारित करने का चलन बढ़ रहा है।[6] इसका भारतीय लोकतन्त्र पर बहुत ही नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है क्योंकि राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था का तानाबाना या जाल माना जाता है। विशेष रूप से लोकतान्त्रिक व्यवस्था में विभिन्न विचारों एवं सूचनाओं के प्रवाह का और भी अधिक महत्व एवं उपयोगिता रहती है।[7]

इन तमाम प्रमुख समस्याओं के बावजूद भारत में लोकतन्त्र का भविष्य उज्जवल है। भारतीय लोकतन्त्र में लगभग 70 वर्षों से अनेक दबावों व विरोधाभासों के बावजूद सदैव स्थायित्व एवं निरन्तरता बनी हुई है। इसका राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पहलू एक ओर आशा व विश्वास तो दूसरी ओर निराशा व अविश्वास के बीच निरन्तर

झूलता रहा है। लेकिन भारतीय लोकतान्त्रिक व्यवस्था के बारे में निराश एवं हताश होने की कोई आवश्यकता दिखाई नहीं देती है।[8]

भारतीय लोकतन्त्र में उपर्युक्त बुराईयां केवल उसकी अपरिपक्वता के कारण है और अनुभव बढ़ने के साथ ही साथ ये दूर हो सकेंगी। लोकतन्त्र का सबसे बड़ा महत्व नैतिक और शैक्षिक है। भारतीय लोकतन्त्र में जो भी दोष दिखाई पड़ रहे हैं वे ऐसे दोष नहीं हैं जिन्हें दूर न किया जा सकता हो। लोकतान्त्रिक शिक्षा, चिन्तन, अनुभव एवं जागरूकता के द्वारा जनता इन दोषों को स्वयं ही दूर कर सकती है।[9] जागरूक एवं स्वस्थ जनमत ही एक स्वस्थ सरकार का निर्माण कर सकती है और राजनीतिक व्यवस्था के दोषों को दूर कर सकती है। लोकतन्त्र के लिए यह आवश्यक है कि जनता में अपनी सच्चाई व ईमानदारी के लिए गर्व हो, आत्मनिर्भरता का संकल्प हो और आत्मगौरव की विनम्र भावना हो। प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान अधिकार, समान कानून और समान अवसर एवं स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

भारतीय लोकतन्त्र में भी जनमानस में उपयुर्वत गुणों का तेजी से विकास भी हो रहा है। यही कारण है कि कांग्रेस पार्टी के एक–छत्र राज को जनता ने समाप्त किया। मिली जुली सराकारों के दोषों को देखते हुए पूर्ण बहुमत वाली सरकारों का गठन हो रहा है और जो भी राजनीतिक दल जनमानस की उम्मीदों पर खरा नहीं उतर रहा है उसे सत्ता से हटाकर अन्य राजनीतिक दलों को मौका दिया जा रहा है। जातिवाद व क्षेत्रवाद के बंधन ढीले पड़ रहे है और भ्रष्टाचार एवं अपराधमुक्त राजनीति की बात हो रही है। विकास एवं रोजगार के मुद्दे आम चुनावो में महत्वपूर्ण होते जा रहे है। सह समस्त लक्षण भारतीय लोकतन्त्र की परिपक्वता व उज्जवल भविष्य का संकेत है।

अतः हम कह सकते हैं कि भारत में लोकतन्त्र परिपक्व हो रहा है और इसका भविष्य उज्जवल और सुदृढ़ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सीले, इन्ट्रोडक्शन टू पॉलिटिकल साइन्स, पृ0–324
2. आशीर्वादम्, एडी एवं मिश्र, कृष्णकान्त, राजनीति विज्ञान, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी लि0, रामनगर, नई दिल्ली, 2001, पृ0–603
3. गुप्ता, आशा, तुलनात्मक शासन एवं राजनीति : समकालीन प्रवृत्तियाँ, गीतांजलि पब्लिशिंग हाउस, आनन्दलोक, दिल्ली, पृ0–595
4. एस0एम0 सईद, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, संशोधित संस्करण 2002, पृ0 338–339
5. भांभरी, सी0पी0, भारत में लोकतन्त्र, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत तृतीय संस्करण 2015, पृ0 24
6. चौधरी, बी0एन0, कुमार युवराज, भारत मे राजनीतिक प्रतिक्रियाएं, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, डी0यू0, प्रथम संस्करण 2013, पृ0–64
7. गेना, सी0बी0, तुलनात्मक राजनीति, विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृ0–435
8. नारंग, ए0एस0, भारतीय शासन एवं राजनीति, गीतांजलि पब्लिशिंग हाउस, आनन्द लोक, नई दिल्ली, संस्करण 2010–11, पृ0–452
9. आशीर्वादम्, एडी एवं मिश्र, कृष्णकान्त, उपर्युक्त पृ0–623

****

भारत में रोजगार सृजन के रूप में लघु उद्योगों की भूमिका

जुनेद नागौरी*

प्रस्तावना - लघु उद्योग भारत की औद्योगिक संरचाना का एक महत्वपूर्ण भाग है। इसमें न केवल सकल घरेलु उत्पाद बल्कि विदेशों में निर्यात की जाने वाली वस्तुओं से प्राप्त होने वाली आय के दृष्टिकोण से भी लघु उद्योगों की देश में महत्वपूर्ण भूमिका है। इसका महत्व इस बात से स्पष्ट होता है कि हमारे देश में लघु उद्योगों के माध्यम से देश के करोड़ो लोगो को रोजगार प्राप्त हुआ है।

लघु उद्योग की परिभाषा - 7 फरवरी 2017 को सरकार ने अति लघु, लघु व मध्यम क्षेत्र के उद्यम को परिभाषित करने के लिए नवीन परिभाषा दी है। इस परिभाषा के अनुसार, जिन उद्यमों की बिक्री से वार्षिक आय 5 करोड़ रूपये तक होगी उन्हे अति लघु उद्यम माना जाएगा, जिनकी बिक्री से वार्षिक आय 5 करोड़ रूपये से 75 करोड़ रूपये के मध्य होगी उन्हे लघु उद्यम माना जाएगा तथा जिनकी बिक्री से वार्षिक आय 75 करोड़ रूपये से 250 करोड़ रूपये के मध्य होगी उन्हे मध्यम उद्यमों की श्रेणी में शामिल किया जाता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों की भूमिका :- भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगो की विशेष भूमिका है। महात्मा गाँधी जी के शब्दों में 'भारत का कल्याण उसके कुटीर उद्योगो में निहित है।'

1. **देश में बेरोजगारी की समस्या के समाधान में सहायक :-** लघु उद्योग की भूमिका को इस बात से स्पष्ट किया जा सकता है कि इसके माध्यम से देश के हजारों व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होता है। भारत में बेराजगारी और अर्द्ध बेरोजगारी की समस्या का समाधान करने में देश के लघु उद्योगों का विशेष योगदान है।
2. **आयात पर निर्भरता में कमी :-** बडे पैमाने के उद्योगो की स्थापना करने के पर उत्पादन की नवीन तकनीक तथा मशीनो का विदेशों से आयात करना पड़ता है। जबकि देश में लघु उद्योगों की स्थापना के कारण विदेशों पर निर्भरता में कमी आ जाती है।
3. **लघु उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए उपयुक्त :-** एक अनुमान के मुताबिक भारत की लगभग 60 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या कृषि पर निर्भर रहती है। कृषकों को वर्षभर कार्य नहीं मिल पाने के कारण लघु उद्योगों का उनके लिए अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है।
4. **लघु उद्योग व्यक्तियों में निहित प्रतिभा के विकास में सहायक :-** लघु उद्योग व्यक्ति में छिपी प्रतिभा को निखारने में अत्यंत सहायक सिद्ध होते है। देश में लघु उद्योगों की सहायता से व्यक्तियों को अपना कला कौशल दिखाने का मौका मिलता है। इस प्रकार देश में लघु उद्योगों का प्रमुख लाभ यह भी होता है कि इसकी सहायता से विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है।
5. **बडे उद्योगों के लिए सहायक या पूरक की भूमिका के रूप में :-** लघु उद्योग देश के बडे उद्योगों के लिए सहायक या पूरक की भूमिका निभाते है। लघु उद्योगों में अर्द्ध निर्मित माल का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार इस अर्द्ध निर्मित माल को बडे उद्योगों में भेजकर निर्मित माल के रूप में तैयार किया जाता है।
6. **लघु उद्योगों हेतु कम तकनीकी ज्ञान की जरूरत :-** लघु उद्योगों की स्थापना का प्रमुख लाभ यह होता है कि इसमें कम पूँजी के साथ - साथ कम तकनीकी ज्ञान की जरूरत होती है। इसके साथ ही कर्मचारियों को विशेष प्रशिक्षण की भी आवश्यकता नहीं होती है।
7. **औद्योगिक समस्या का न्यूनतम होना :-** बडे उद्योगों की स्थापना में कागजी खानापूर्ति की अधिकता के साथ-साथ अनेक प्रकार की औद्योगिक समस्याएँ भी विद्यमान रहती है जैसे श्रमिकों की हड़ताले, तालाबन्दी, श्रमिकों द्धारा बोनस की माँग इत्यादि समस्याओं से बडे पैमाने के उद्योग घिरे रहते है। लघु उद्योगों में इस प्रकार की समस्याएँ नहीं होती है।
8. **लघु उद्योगों में निर्मित वस्तुओं को विदेशों में निर्यात से विदेशी मुद्रा की प्राप्ति :-** भारत में लघु उद्योगों में निर्माण की जाने वाली वस्तुओं का विदेशों में निर्यात किये जाने से देश को बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होती है। वर्तमान में लघु उद्योगों की वस्तुओं को देश के कुल निर्यात में लगभग 40 प्रतिशत हिस्सेदारी है।

तालिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि वर्ष 2001-02 की अवधि के दौरान देश में लघु औद्योगिक इकाइयों की संख्या 105.2 लाख थी। इसी प्रकार आगे तालिका का अवलोकन करने पर यह पाया गया कि अगले पाँच वर्ष में लघु औद्योगिक इकाइयों की संख्या 123.4 लाख हो गई है। मध्यम, लघु एवं अति लघु जिसे MSME कहा जाता है। इन इकाईयों की संख्या वर्ष 2006-07 के दौरान 361.8 लाख थी। इसके साथ ही अगले पाँच वर्षो पश्चात् 2010-11 में इनकी संख्या 428.7 लाख थी। जबकि वर्ष 2014-15 में इनकी संख्या देश में बढ़कर 510.6 लाख तक हो गई। उपरोक्त तालिका में इन उद्यमों में उत्पादन की स्थिति को भी समझाया गया है। जिसके अनुसार वर्ष 2001-02 में इन उद्यमों का उत्पादन 2,82,270 करोड़ रू. मूल्य आँका गया। वर्ष 2005-06 में उत्पादन 4,97,842 करोड़ रू. मूल्यांकित किया गया। वर्ष 2006-07 में 11,98,818 करोड़ रू था। वर्ष 2010-11 में 16,53,622 करोड़ रू. था।

आगे तालिका में देश में रोजगार के अवसरों के सृजनर्त्ता के रूप में लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थिति को भी दर्शाया गया है। जिसके अनुसार वर्ष 2001-02 में 249.3 लाख व्यक्ति तथा वर्ष 2005-06 में 294.9 लाख

* सहायक अध्यापक, श्री गुरू सांदीपनी इन्सट्ीट्यूट ऑफ मैनेजमेन्ट, उज्जैन (म.प्र.) भारत

व्यक्तियों को देश में लघु एवं कुटीर उद्योगों की सहायता से रोजगार प्राप्त हुआ है। मध्यम, लघु व अति लघु क्षेत्र में 2006-07 की अवधि के दौरान 805.2 लाख तथा वर्ष 2014-15 के दौरान 1,171.3 लाख लोगो को रोजगार प्राप्त हुआ। इस प्रकार अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि देश में भारत कृषि प्रधान देश होने के साथ-साथ देश में कृषि के बाद रोजगार प्रदान करने में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विशेष योगदान है। भारत में बढ़ती जनसंख्या के बीच बेरोजगारी की समस्या को दूर करने के लिए देश में लघु एवं कुटीर उद्योगो के विकास किये जाने की आवश्यकता है।

लघु उद्योगों की भूमिका - भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों का महत्पूर्ण स्थान है। लघु उद्योग की भूमिका स्वीकार करते हुए महात्मा गाँधी जी का यह कथन 'भारत का कल्याण लघु एवं कुटीर उद्योगों में निहित है।' यह कथन लघु उद्योगों की भूमिका को प्रमाणित करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि देश में लघु उद्योग का विशेष स्थान है।

1. बेरोजगारी की समस्या के समाधान में सहायक :- बडे उ़द्योगों में करोडो ऱूपये की पूँजी को निवेश करने के पश्चात् ही कुछ व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध हो पाता है। जबकि इसके विपरित लघु उद्योगों में बहुत कम मात्रा में पूँजी निवेश करके कई व्यक्तियों को रोजगार प्रदान किया जा सकता है। भारत में बेरोजगारी पर्याप्त मात्रा में देखी जाती है। जिसको दूर करने लिए लघु उद्योग एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। क्योकि लघु उद्योग में कम पूँजी निवेश करके अधिक लोगो को रोजगार देने की विशेषता पाई जाती है। इस तरह लघु उद्योग बेरोजगारी में कमी करनें सहायक सिद्ध होता है।

2. औद्योगिक विकेन्द्रीकरण को प्रोत्साहन :- लघु उद्योगों के द्वारा राष्ट्र के औद्योगिक क्षेत्र में विकेन्द्रीकरण में सहायता प्राप्त होती है। बडे उ़द्योगों में विशेष बातो को ध्यान में रखते हुए एक ही स्थान पर केन्द्रीकृत रहते है। परन्तु लघु उद्योग छोटे शहरों एवं गाँवों में स्थापित रहते है। इससे निम्नलिखित लाभ होता है।

1. लघु उद्योग कच्चे माल को खरीदकर छोटे गाँवों के व्यक्तियों को रोजगार की सुविधा देते है।
2. विदेशी आक्रमण के समय यह उद्योग पूर्णत: सुरक्षित रहते है।
3. लघु उद्योगों से किसी एक जगह पर भीड़ एकत्रित नहीं होती है।
4. लघु उद्योग मूलत: प्रादेशिक असमानता कम करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

3. ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अनुकूल :- भारत की लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है लेकिन ग्रामीण जनसंख्या को वर्षभर रोजगार नहीं मिल पाता है। अत: ऐसी स्थिति में लघु उद्योग उनके लिए अति महत्वपूर्ण है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए अनुकूल भी है। ग्रामीण जनसंख्या लघु उद्योग संचालित कर अपनी आय में वृद्धि कर सकते है और देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है

4. आयात पर अल्प निर्भरता को प्रोत्साहन :- बडे उ़द्योग स्थापित करने में अधिक तकनीकी एवं मशीनरी की आवश्यकता होती है एवं कच्चे माल के लिए विदेशों पर आश्रित रहना पड़ता है एवं कच्चा माल विदेशों से आयात करना पड़ता है। जबकि लघु उद्योगों को स्थापित करने के लिए न ही विस्तृत तकनीक और बडे प़ैमाने पर मशीनरी की आवश्यकता होती है। एवं कच्चा माल आयात विदेशों से नहीं करना होता है।

5. आय के समान वितरण में महत्वपूर्ण योगदान :- लघु उद्योगों का संचालन लाखों व्यक्तियों एवं परिवारों के द्वारा होता है। जिसके परिणामस्वरूप आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण नहीं होता है। तथा आय के एक समान वितरण में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है तथा इन लघु उद्योगों में किसी भी व्यक्ति का शोषण नहीं हो पाता है।

6. व्यक्तित्व एवं कला के विकास में सहायक :- लघु उद्योग व्यक्ति एवं कला का विकास करने में महत्पूर्ण भूमिका निभाते है। इससे श्रमिकों को संतोष एवं सुख प्राप्त होता है। जबकि बडे उ़द्योगों में श्रमिक मशीन की तरह कार्य करता है। जहां उसको अपनी कला एवं व्यक्तित्व को दिखाने का अवसर नहीं मिलता है। इसके विपरित लघु उद्योगों में व्यक्ति के व्यक्तित्व एव कला का सर्वागीण विकास होता है।

7. वृहद उद्योगों के विकास में सहायक :- लघु उद्योग वृहद उद्योगों के लिए सहायक उद्योग या पूरक उद्योग के रूप में कार्य करते है। उदाहरण के लिए अर्द्ध निर्मित वस्तु लघु उद्योग बनाते है। तथा इन्ही अर्द्ध निर्मित वस्तुओं वृहद उद्योग कच्चे माल के लिए उपयोग करते है।

8. अल्प तकनीकी ज्ञान की जरूरत :- लघु उद्योगों को स्थापित करने में अल्प पूँजी के साथ-साथ अल्प तकनीकी जरूरत होती है तथा श्रमिको को अल्प मात्रा में प्रशिक्षण दिया जाता है। इस प्रकार यह एक सर्वोपरि एवं भारतीय अर्थव्यवस्था में सर्वोत्तम सहायक होते है।

9. औद्योगिक समस्याओं का उन्मूलन :- वृहद उद्योगों में कई प्रकार की औद्योगिक समस्याएँ बनी रहती है। जो राष्ट्र में उत्पादन को कम करने में अपनी भूमिका निभाती है। उदाहरण के रूप में कर्मचारियों की हड़ताल, श्रमिकों की अनुचित माँगे, श्रमिकों की तालाबंदी, वेतन में वृद्धि की माँग करना, अनुचित बोनस की माँग करना इत्यादि। जबकि लघु उद्योगों में इस प्रकार की समस्याएँ नहीं देखी जाती है तथा लघु उ़द्योगों के कुछ समस्याएँ होती भी है तो उनको आपस में सामजस्य बनाकर निपटा लिया जाता है।

10. निर्यात में सहायक होना :- भारत में विगत कई वर्षो में यह देखा गया है कि लघु उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुओं का निर्यात अधिक बढ़ रहा है। जो राष्ट्र को विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सहायक हो रहा है। भारत के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों से बहुत सी वस्तुएँ जैसे साड़ी, वस्त्र, मूर्तियाँ, सौंदर्य प्रसाधन की वस्तुएँ, इलेक्ट्रानिक उपकरण आदि वस्तुओं को विदेशों में निर्यात किया जा रहा है। वर्तमान में लघु उद्योगों की वस्तुओं का देश के कुल निर्यात में एक बहुत बड़ा हिस्सा है।

निर्ष्कष - वर्तमान परिप्रेक्ष्य में लघु उद्योग वृहद् उद्योगों की अपेक्षा अधिक रोजगार प्रदान करते है एवं देश या राष्ट्र के अत्मनिर्भरता में भी लघु उद्योग अति आवश्यक है। लघु उद्योगों का मुख्य उद्देश्य रोजगार के अवसरों में वृद्धि करते हुए बेरोजगारी और अर्द्ध बेरोजगारी की समस्या का समाधान करना हैं। भारत में लघु उद्योगों के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग हो रहे है। नये विचारो द्वारा लद्यु उद्यम स्थापित हो रहे है। विश्व का कोई सा भी देश हो उसकी सफलता उद्योगों से ही संभव है। देश का भविष्य इसी पर टिका हुआ है। किसी भी राष्ट्र की उन्नति तभी संभव हो सकती है। जब देश औद्योगिकरण की दृष्टि से समपन्न हो, तथा वहा रोजगार के साधन उपलब्ध हो और यह सब लघु उद्योगो के विकास से ही संभव है। लघु उद्योगो के विकास से ही देश को विकास के पथ पर अग्रसर किया जा सकता है। एक और नये रोजगार के अवसरों का सृजन किया जा सकता है वहीं दूसरी और अनेक युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्यमिता एवं लघु व्यवसाय पेज नं 192
2. भारतीय अर्थव्यवस्था मिश्रा एवं पुरी पेज नं 336
3. पेज न. 192 उद्यमिता एवं लघु व्यवसाय

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

तालिका 1 – भारत मे वर्ष 2001–2015 तक लघु उद्योगों की स्थिति का अध्ययन

वर्ष	MSMES की संख्या लाख में	स्थिर परिसंपत्तियों का बाजार मूल्य (करोड़ रूपये)	उत्पादन का कुल मूल्य (करोड़ रूपये)	रोजगार (लाख में)
2001–02	105.2	154349	282270	249.3
2002–03	109.5	162317	314850	260.3
2003–04	114.0	170219	364547	271.4
2004–05	118.6	178699	429796	282.6
2005–06	123.4	188113	497842	294.9
2006–07	361.8	868544	1198818	805.2
2007–08	377.4	920460	1322777	842.0
2008–09	393.7	977115	1 375589	880.8
2009–10	410.8	1038546	1488352	921.8
2010–11	428.7	1105934	1653622	965.2
2011–12	447.6	11 82758	1788584	1011.7
2012–13	467.5	1268764	1809976	10 61.4
2013–14	488.5	1363700	Nil	1114.3
2014–15	510.6	1471913	Nil	1171.3

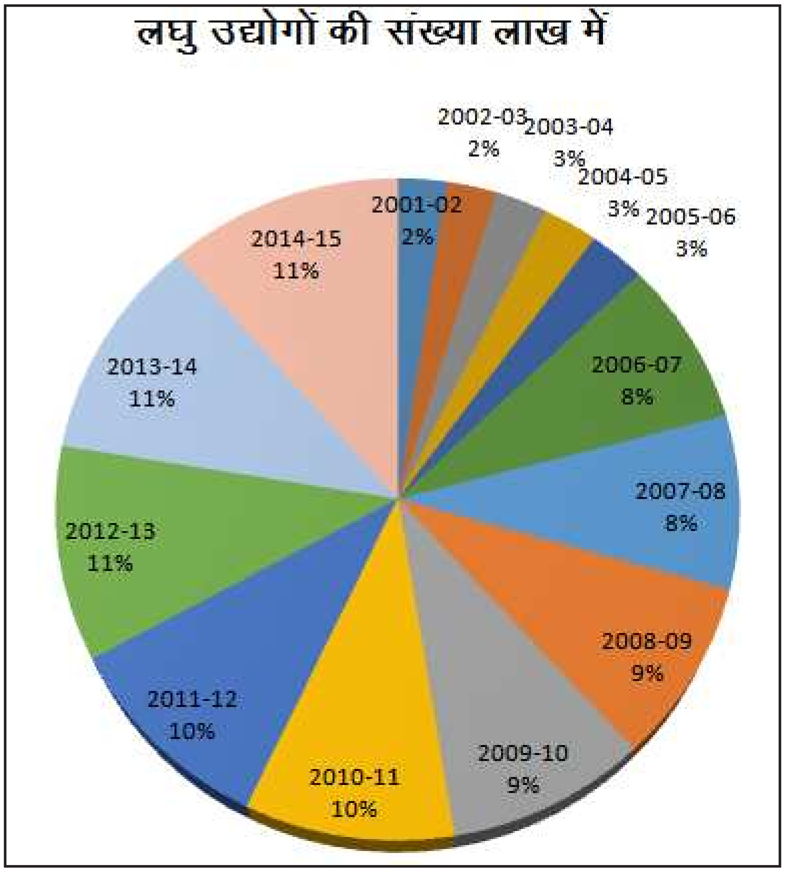

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

अनुसूचित जाति के चर्मकारो की स्थिति एवं परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तनशीलता की प्रवृत्ति का अध्ययन - छत्तीसगढ़ विशेष संदर्भ में

डॉ.के.एल.टाण्डेकर* डॉ. आर.आर. कोचे**

प्रस्तावना - म.प्र. का पूर्वान्चल नवगठित छत्तीसगढ़ जिसमें वर्तमान में 28 जिले आते है। जहॉं कुल आबादी का 12.20 प्रतिशत अनुसूचित जाति का निवास करता है। जिनका 10 प्रतिशत भाग ग्रामीण अंचल में निवास करता है जिसका मुख्य व्यवसाय एक फसली और अनुत्पादक स्वरुप वाली कृर्षि है। अनुसूचित जाति की कुल जनसंख्या का 3 प्रतिशत भाग चर्म व्यवसाय में लगा हुआ है, जबकि छत्तीसगढ़ प्रदेश में सर्वाधिक पशुपालन अर्थात कच्चे चमडे की सामग्री का स्त्रोत विद्यमान है, इस क्षेत्र में कुल चर्म शिलपियों का 10.91 प्रतिशत भाग चर्म शवच्छेदन में 31.90 भाग चर्म शोधन में एवं 32.31 प्रतिशत भाग शवच्छेदन एवं चर्मशोधन दोनो कार्यो में लगा हुआ है, शेष भाग चर्मनिर्मित सामग्री में लगा हुआ है अर्थात स्पष्ट है कि यहॉं चर्म शिलपियों का अधिकांश भाग कच्चे चमडे के उत्पादन कार्य में लगा हुआ है जबकि बहुत कम भाग चर्म निर्मित सामग्री का उत्पादनकर्ता है। यहॉं से कच्चा चमडा बडी मात्रा में पडोसी राज्यो महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश के प्रमुख प्रमुख जिले कानपूर, आगरा, लखनउ, उडीसा, बिहार, गुजरात, आंध्रप्रदेश, कलकत्ता की ओर भेज दिया जाता है, इसका मुख्य कारण यह है कि इस अंचल में चर्म शिल्पी, निर्धन, अशिक्षित, अकुशल एवं परम्परागत स्थिति में विद्यामान है, जिनसे उनकी आर्थिक स्थिति को प्रभावित किया है और आज ये चर्म शिल्पी गरीबी एवं शोषण के शिकार बने हुए है, इनकी स्थिति एवं परिवर्तनशीलता का अध्ययन करना इस शोध आलेख का प्रमुख लक्ष्य है।

चर्म व्यवसाय में लगे चर्म शिल्पी विचैलियों के माध्यम से थोडी सी राशि में यहॉं की पर्याप्त कच्ची चर्म सम्पदा का जो कि मध्यप्रदेश के कुल चर्म सम्पदा का 1/3 भाग है बाहर भेज दिया जाता है इसके अलावा यहॉं प्रदेश का सर्वाधिक खच्ची खालो का उत्पादन किया जाता है जितनी खालो का यहॉं उत्पादन होता है उसके दो गुने जीवित पशु पडोसी राज्यो को भेज दिये जाते है इस जरह यहॉं चर्म शिल्पी एवं कच्ची चर्म सामग्री की पर्याप्तता के कारण चर्म उद्योग विकास की जो संभावनाऍं विद्यमान है उन विद्यमान संभावनाओं की व्यवहारिक परिणिति संभव नही हो पा रही है इस क्षेत्र में जबकि चर्म निर्मित वस्तुओं का बाजार भी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है विशेष कर लौहस्पात उद्योग, आयरन स्पंज, सीमेंट उद्योग, रसायन उद्योग, जैसे उद्योग यहॉं विद्यमान है जिसमें जुते, ग्लोब का बडी मात्रा में उपयोग किया जाता है ये सामग्री बाहर के बाजारो में मंहगे दामों में हमे प्राप्त होती है किन्तु यदि इसका उत्पादन स्थानीय स्तर पर ही किया जाये तो इसकी लागत 75 प्रतिशत से भी कम आएगी किन्तु छत्तीसगढ़ में इस उद्योग के विकास न होने का प्रमुख कारण यहॉं पर पूंजी का अभाव, अकुशल मानव प्रबंधन, अप्रशिक्षित चर्म शिल्पी, विरादरी पंचयतो का विरोध, एवं व्यवस्था को सामाजिक रुप से घृषित माना जाने के कारण दिन प्रतिदिन इस व्यवसाय की अवनति होते जा रही है।

20वीं शताब्दी के प्रारंभिक चरणों तक परम्परागत रुप से लगे ये चर्म शिल्पी स्थानीय ग्रामीण आवश्यकताओं कृर्षि उपकरण आदि की पूर्ति कर अपना जीवन यापन करते थे, किन्तु वैज्ञानिक प्रगति, बढती फैशन उपभोक्ता की आय, आदत, रुची, फैशन में परिवर्तन जैसे तथ्यों ने ग्रामीण क्षेत्र में विद्यमान चर्म शिल्प व्यवसाय को अवनति की गर्त में ठकेल दिया है, परिमाणत: चर्म शिल्प व्यवसाय में लगे चर्मकर अन्य उद्योग की ओर आकर्षित हो रहे है क्योकि अनार्थिक व्यवसाय, पीढी दर पीढी व्यवसाय में रुची न होने, विरादरी पंचायतो का विरोध जैसे कारण इस परिवर्तन शीलता की प्रवृत्ति को गहन स्वरुप प्रदान करते जा रहा है।

पीढी दर पीढी परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन शीलता की प्रवृत्ति को ज्ञात करने के लिए छत्तीसगढ़ क्षेत्र के प्रमुख जिलों से न्यादर्श सर्वेक्षक पद्धति के माध्यम के कुल चर्म शिल्पियों का 10 प्रतिशत संमक एकत्र किया गया प्राप्त संमको के विश्लेषण से जो स्थिति सपष्ट हुई वह निम्न प्रकार की है।

तालिका 1 **(अगले पृष्ठ पर देखे)**

तालिका 1 के विवरण से स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ में पेशेवर चर्म शिल्पि अपने पेशे से हटकर भूमिहीन कृषक या अन्य रोजमर्रा के व्यवसाय की ओर संलग्न होते जा रहे है, जिसका परिणाम परम्परागत चर्म शिल्प व्यवसाय का नष्ट होना तथा बड़ी मात्रा में पलायन की प्रवृित्तयॉं दिखाई पड रही है। सर्वेक्षण से यह स्पष्ट हुआ है कि इस व्यवसाय में परिवर्तन के पश्चात् 10 प्रतिशत चर्म शिल्प अपने स्थानीय निवास को छोडकर बाहरी क्षेत्र की ओर पलायन कर गये है। छत्तीसगढ़ में इस कार्य के पलायन के पीछे मुख्य रुप से सामाजिक उपेक्षा, सामाजिक बहिष्कार, सामाजिक संगठनो द्वारा प्रतिबंध की कार्यवाही प्रमुख रही है, वही सामाजिक सम्मान प्राप्त करने शिक्षा का विकास ऐसे कारण रहे है, जिन्होने चर्म शिल्पियों को पेशेवर व्यवसाय छोडने के लिए बाध्य किया साथ ही साथ धार्मिक, सामाजिक एवं सास्कृतिक परिवर्तनों ने परंपरागत व्यवसाय परिवर्तनशीलता को जन्म दिया है, बिरादरी पंचायतो को विरोध के परिणाम स्वरुप सर्वाधिक व्यवसाय के परिवर्तनों की प्रवृत्ति मोची/सतनामी समाज को जो छत्तीसगढ़ का बहुसंख्यक के अनुसूचित जाति वर्ग का है में दिखाई दे रही है।

* प्राचार्य, शासकीय डॉ. बाबा साहब भीमराव आम्बेडकर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगांव, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ़, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत

मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के कारण वह समाज से अलग नही रह सकता किन्तु परम्परागत व्यवसाय के स्थान पर वह व्यवसाय मजदूरी, बीडी बनाना, किराना जैसे अन्य सहायक व्यवसाय की ओर आकृष्ट हुआ, किन्तु परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन ने बेरोजगारी, आर्थिक असंतुलन, सामाजिक असुतुलन, जैसे हानिकारक प्रभाव को जन्म दिया है, ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक संघर्ष आर्थिक अनिश्चिता, पलायनवादी, शहरीकरण में वृद्धि गंदी बस्ती का निमार्ण जैसी अनेकों असुंतलनकारी प्रवृत्तियों को जन्म दिया है।

छत्तीसगढ़ क्षेत्र में परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन का जो उल्लेखनीय तथ्य रहा, वह यह है कि पूरे छत्तीसगढ़ में चर्म व्यवसाय छोड़ने के बाद यहॉ प्रतिस्थापनी व्यवसाय के रुप में बीडी. उद्योग का तेजी से विकास हुआ किन्तु बस्तर में परिवर्तन की गति थोडी धीमी रही। छत्तीसगढ़ में परिवर्तन के संबंध में काफी भिन्नताऍ विद्यमान रही जहॉ एक ओर राजनांदगांव जिले में चर्म व्यवसाय के स्थान पर कृषि एवं बीडी. उद्योग श्रमिक के रुप में आकर्षण बढा वही दुर्ग जिले में यह आकर्षण औद्योगिक मजदूर के रुप में सामने आया किन्तु रायपुर में यह प्रवृत्ति मिश्रित रुप में रही, जबकि बिलासपुर में सतनामी बाहुल समाज होने के कारण विरादरी पंचायतों का कठोर प्रतिबंध चर्म व्यवसाय को परिवर्तन में काफी सहायक सिद्ध हुआ और अधिकांश चर्म शिल्पी ने कृषक या कृषि मजदूर एवं उत्खनन मजदूर के रुप में व्यवसाय परिवर्तनशीलता की प्रवृत्ति रही जबकि बस्तर में व्यवसायिक परिवर्तन-शीलता की गति धीमी रही।

अध्ययन के दौरान पीढी दर पीढी चर्म व्यवसाय में चर्म शिल्पियॉ के बच्चों, चर्म व्यवसायिक परिवर्तनशीलता के दृष्टिकोण का भी अध्ययन किया गया जिसके निम्नलिखित परिणाम आऍ।

तालिका 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

इस तरह अध्ययन से सपष्ट होता है कि 15.8 प्रतिशत बच्चे ऐसे है जो परम्परागत व्यवसाय को पसंद करते है जबकि72.8 प्रतिशत बच्चो ने अपने पैतृक व्यवसाय को नकार दिया है और 11.4 प्रतिशत बच्चों के विचार अस्पष्ट है, परम्परागत व्यवसाय के प्रति नकारात्मक सोच बच्चों में पैदा होने को मुख्य कारण आर्थिक रहा है ऐसे बच्चो का प्रतिशत 61.26 प्रतिशत है जबकि मात्र 5.77 प्रतिशत ऐसे है जो सामाजिक और आर्थिक दोनों कारणो को इसके लिए जिम्मेदार मानते है।

चर्म व्यवसाय से परिवर्तन के पश्चात् चर्म शिल्पियों का झुकाव किन क्षेत्रों में सर्वाधिक रहा इस बात के अध्ययन के लिए विभिन्न क्षेत्रों में व्यवसाय प्रारंभ करने वाले चर्मकारों की प्रवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन तालिका द्वारा स्पष्ट है।

तालिका 3 : परम्परागत चर्म शिल्प व्यवसाय को छोडकर अन्य व्यवसाय की ओर जाने की प्रवृत्ति प्रतिशत में

क्र.	व्यवसाय क्षेत्र	परम्परागत चर्म शिल्प व्यवसाय को छोडकर अन्य व्यवसाय में जाने की प्रवृत्ति का प्रतिशत
1	कपड़ा	07
2	मनिहारी	03
3	कृषि	10
4	मजदूरी	32
5	पशुपालन	03
6	बीड़ी मजदूरी	20
7	अन्य	25
	योग	100

उपरोक्त तालिका विवरण से स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ में परम्परागत चर्म शिल्प व्यवसाय को छोडकर अन्य व्यवसायों में सर्वाधिक मजदूरी, बीड़ी मजदूरी एवं अन्य क्षेत्रों में मजदूरी के रुप में स्थपित हुए है कृषि एवं अन्य क्षेत्रों का प्रतिशत अपेक्षाकृत कम रहा इसका मुख्य कारण यह रहा कि चर्म व्यवसाय में लगे चर्म शिल्पी आर्थिक रुप से विफल होने के कारण अन्य पूंजीगत व्यवसाय प्रारंभ करने में असक्षम है।

परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन को रोकने के लिए यद्यपि चर्म व्यवसाय के विकास में कार्यरत विभिन्न वित्तीय एवं प्रेरक संस्थाऍ यथा, म.प्र. लेदर डेव्हलपमेंट कार्पोरेशन लिमिटेड भोपाल, छत्तीसगढ़ राज्य लघु उद्योग निगम, छ.ग. खादी ग्रामोद्योग बोर्ड, खादी ग्रामोद्योग आयोग बम्बई, हाथकरघा विभाग, जिला उद्योग केन्द्र म.प्र. एवं छ.ग. हस्तशिल्प विकास निगम, छ.ग. अन्तयव्यसायी विकास निगम एवं अन्य बैंकिंग संस्थाऍ कार्य कर रही है किन्तु इन संस्थाओं से चर्म शिल्पियों को पर्याप्त आर्थिक सहायता नही मिल पाती कि वे अपने व्यवसाय को लाभदायक व्यवसाय के रुप में परिवर्तित कर सके, आवश्यकता इस बात की है कि यदि परिवर्तनशीलता की प्रवृत्ति को यदि रोकना है तो सस्ती पूंजी प्रशिक्षण, शिक्षा का प्रसार, सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन के लिए जागरुकता निर्माण जैसे ठोस कदम उठाकर इस व्यवसाय को एक छत के नीचे संगठित व्यवसाय का स्वरुप देना होगा, तभी इनको गरीबी और शोषण से बचाया जा सकेगा और इनकी आर्थिक स्थिति को बेहतर करके छत्तीसगढ़ के इस परम्परागत उद्योग को बचाय जा सकेगा जो आज कृषि के पूरक व्यवसाय क रुप में विकसित हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्यमिता म.प्र. लैदर जन. 1991 डेव्हलपमेंट कारपोरेशन लिमिटेड भोपाल।
2. शोध उपक्रम छ.ग. शोध संस्थान रायपुर।
3. योजना 1954 - सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पटियाला हाउस नई दिल्ली।
4. शोध उपक्रम 2009- छ.ग. शोध संस्थान रायपुर।

तालिका 1 : पेशे में परिवर्तन की स्थिति

क्र.	स्थान /क्षेत्र	जाति समूह	पारिम्परिक व्यवसाये	व्यवसाय मे परिवर्तन
1	मध्यप्रदेश	चमार/वैश्वा रैदास जाटव/महार/मैहर/ कुरील/ अहरवार/मोची	चमडे का काम	चमडे की सफाई छोड दिया गया, जुते बनाने एवं कृर्षि कार्य में प्रवृत्ति
2	छत्तीसगढ़			
1	राजनांदगांव	महार /चमार/मोची/जाटव /सतनामी/मेहर	चमडे का काम एवं हड्डी संग्राहक	कृर्षि एवं बीड़ी बनाने का व्यवसाय
2	दुर्ग	सतनामी/महार /चमार	चमडे का काम	मजदूरी औद्योगिक क्षेत्र में
3	रायपुर	चमार/जाटव/मोची/मेहर	चमडे का काम	चमडे की सफाई तथा जूता बनाना छोड दिया, कृर्षि अथवा व्यवसाय में प्रवृत्त
4	बिलासपुर	मेहर/महार /चमार/मोची	चमडे का व्यवसाय	अन्य व्यवसाय एवं कृर्षि धन्धे
5	रायगढ़	मोची/आदिवासी/मेहर	हड्डी संग्रहण एवं चर्म व्यवसाय	अन्य व्यवसाय एवं कृर्षि
6	सरगुजा	चमार/मोची/आदिवासी	चमडे का काम	मजदूरी
7	बस्तर	महार/चमार/आदिवासी	चमडा उत्पादन उवं चमडा संबंधी कार्य	अन्य व्यवसाय और आंशिक परिवर्तन धीमा गति से

तालिका 2 : चर्म उद्योग में लगे चर्मशिल्पियों के बच्चों का चर्म व्यवसाय के प्रति दृष्टिकोण

व्यवसाय वर्ग	कुल चर्म शिल्पियों की संख्या	चर्मव्यवसाय में लगे चर्म शिल्पियों के आगामी पीढी का निरंतर इस व्यवसाय में लगे रहने के संदर्भ में दृष्टिकोण			ऋणात्मक सोच की दृष्टिकोण के कारण		
खाल संग्रहण	11	03	08	-	05	-	03
चर्म शोधन	126	09	107	10	90	-	17
फुट वियर निर्माण	119	30	75	14	60	-	15
चर्म निर्मित वस्तुएें	28	10	15	03	08	-	07
चर्मशोधक एवं	166	07	1033	26	40	21	72
फुट वियर निर्माण							
अन्य	50	20	26	04	20	-	06
कुल	500	79 15.8%	364 72.8%	57 11.4%	223 61.26%	21 5.77%	120 32.97%

****

The Effect of Education System on Spiritual Intelligence and Psychological Well-being of music Students: A comparative study of Gurukul and Government School

Dr. Sunita Shrimali*

Abstract - School students today deal with many challenges, such as gaining better academic success and maintaining psychological well-being. In dealing with these challenges, one of the factors that might predict school studies academic success and psychological well-being is spiritual intelligence. Therefore, a study was conducted to examine the impact of school culture on spiritual intelligence and psychological well-being on music students of gurukul and government schools of Hathras. The present study was conducted on a sample of 100 students studying in Gurukul and Government schools of Hathras. The students of class 6th to 8th were selected for this study.
Keywords - academic success, psychological well-being, spiritual intelligence, school students, etc.

Introduction - Adolescence is when a young person's life goes over significant physical, mental, and emotional changes. It shapes the personality of an individual by developing life-long habits that build one's character. They learn responsibilities, relationship, roles, and to set goals. Adolescents have a tendency and willingness to adapt to the environment; they also posses the flexibility to adapt physically, mentally and spiritually during adverse situation and adjust with surroundings as in this age they still in their growing and learning stage. Though Education in India is vastly influenced by British nevertheless there are Gurukul as well that provide value-based Education within a cultural frame. Fivefold education pattern was followed in Gurukuls and comprised of religious education, spiritual education, cultural education, occupational educational and physical education.

Operational Definitions

1. Spiritual intelligence: Spiritual Intelligence has been defined as "the ability to act with wisdom and compassion, while maintaining inner and outer peace, regardless of the circumstances".
2. Psychological Well-being: Psychological well-being consists of positive relationship with others, personal mastery, autonomy, a feeling of purpose and meaning in life and personal growth and development.

Need of the Study - Youth are considered as the pillars of any nation's development. As per the statistics and findings revealed by various researches, it can be concluded that children are drifting towards stress, depression, anxiety disorders that may lead to mental diseases and suicidal thoughts. It affects their development negatively in the long run.

Statement of the Problem - "The Effect of Education System on Spiritual Intelligence and Psychological Well-being of music Students: A comparative study of Gurukul and Government School."

Objective of the Study - The specific and primary objectives of the study are :

1. To study the impact of education system (Gurukul & Government) on the spiritual intelligence of the music students.
2. To study the impact of education system (Gurukul & Government) on the psychological well-being of the music students.

Hypothesis - The present study aimed to test the following hypotheses:

- **H1** : There will be no significant difference in spiritual intelligence of those music students who study in Gurukuls and Government schools at the entry level.

Alternative Hypothesis: Gurukul education significantly enhances spiritual intelligence of music students after intervention.

- **H2** : There will be no significant difference in psychological well-being of those music students who study in Gurukuls and Government schools at the entry level.

Alternative Hypothesis: Gurukul education significantly enhances psychological well-being of music students after intervention.

Limitations of the Study

1. The sample investigated students of secondary schools.
2. The data was collected only districts Hathras.
3. Due to the low strength of new admissions in Gurukuls, only 50-50 new-admitted students from both the groups were sampled for the intervention.
4. The duration of intervention was only for two months.

*Associate Professor, Rajasthan Sangeet Sansthan, Jaipur (Raj.) INDIA

5. This study is centered only on students of age range 10-15 years studying in class 6-8th.

Research Design - The present research is a combination of Pre-test Post-test experimental-control group design. The Experimental Group (students who study in Gurukul) will have to practice yoga and chant mantras daily as a part of their routine curriculum. The Control Group (students who study in Government schools) will not be exposed to yoga practice and mantra chanting.

Table 1 (see in last page)

Sample: The researcher collected data of 100 students studying in Gurukul and Government schools of Hathras. The students of class 6th to 8th were selected for this study.

Table 2: Sample of the present study

Group	Name of School	No. of Students	Class
Experimental Group	Gurukul, Hathras	50	6th – 8th
Control Group	Inter College, Hathras	50	6th – 8th

Tools

1. Spiritual Intelligence Self-Report Inventory (SISRI-24) Was Developed By David B King.
2. Psychological Well-Being Scale (PWBS-50) Developed By Dr. Devendra Singh Sisodia And Pooja Choudhary (2012).

Statistical Analysis - The hypotheses were tested against the independent 't' test and Paired 't'-Test at .05 level of significance with IBM SPSS 24 Version software. The table reports the baseline comparison of mean, SD, 't', and 'p' values of spiritual intelligence and psychological well-being amongst the music students of Gurukul & Government schools. The results show that there is no significant difference in the spiritual intelligence and psychological well-being of Gurukul & Government School students at the entry-level.

1. Pre-Test Analysis

Table 3 (see in last page)

The table 3 reports the pretest-posttest comparison of mean, SD, 't', and p values of spiritual intelligence and psychological well-being amongst the music students of Gurukul and Government schools. The results show that there is no significant difference in the Spiritual Intelligence and Psychological Well-being of Gurukul & Government School students at the entry-level.

Figure 1 (see in last page)

2. Post-Test Analysis (after intervention)

Table 4 (see in last page)

The table 4 reports the post-test comparison of mean, SD, 't' and 'p' values of spiritual intelligence and psychological well-being among the students of Gurukul & Government schools. The results show that there is a significant difference in spiritual intelligence and psychological well-being of music students who have been exposed to Gurukul Education System as a part of intervention.

Figure 2 (see in last page)

3. Pretest-Post Test Results

Table 5 (see in last page)

The table 5 reports the pretest-posttest comparison of mean, SD, 't' and 'p' values of spiritual intelligence and psychological well-being among the new-entrants of Gurukuls. The results indicate that the education of Gurukuls plays a significant role in enhancing spiritual intelligence and psychological well-being.

Figure 3 (see in last page)

Table 6 (see in last page)

The table 6 reports the pretest-posttest comparison of mean, SD, 't' and 'p' values of spiritual intelligence and psychological well-being among the new-entrants of Government schools. The results show that Government schools do not play an important role in developing spiritual intelligence and psychological well-being.

Figure 4 (see in last page)

Conclusion

Pre-test Results

1. (HO1) There was no significant difference in the spiritual intelligence among the new entrants of Gurukuls and Government schools at the entry level.
2. (HO2) There was no significant difference in the components of psychological well-being among the new entrants of Gurukuls and Government schools at the entry level.

Post-test Results

1. (H1) There was a significant difference in the psychological well-being scores among the new entrants of Gurukuls and Government schools after intervention. The hypothesis was supported since the spiritual intelligence scores were found enhanced among the new entrants of Gurukuls.
2. (H2) There was a significant difference in the components of psychological well-being among the new entrants of Gurukuls and Government schools after intervention. The hypothesis was supported since the components of psychological well-being were found enhanced among the new entrants of Gurukuls.

Application of the Study - This study recommends that the Values of Gurukul Education be enforced in schools to help students develop spiritual intelligence and psychological well-being to evolve as a superior human being.

References :-

1. Agarwal, S., Kumar, V., Agarwal, S., Brugnoli, M. P., & Agarwal, A. (2018). Meditational spiritual intercession and recovery from disease in palliative care: a literature review. *Ann Palliat Med*, *7*(1), 41-62.
2. Bryman, A. (2001). The nature of qualitative research. Social Research Methods, 264-288.
3. Burke, C.A. (2010). Mindfulness-based approaches with children and adolescents: A preliminary review of current research in emergent field. Journal of child and family studies, 19(2): 133-134.

4. Buzan, T. (2001). *The power of spiritual intelligence: 10 ways to top into your spiritual genius*. New York: Harper Collin Publishers Ltd.
5. Cohen, J., & Miller, L. (2009). Interpersonal mindfulness training for well-being: A pilot study with psychology graduate students. The Teachers College Record, 111(12), 2760-2774.
6. Dash, B.N. (2003). History of Education System in India. New Delhi: Dominant Publications & Distributions, pp. 26.
7. Deal & Peterson (2011). Shaping School Culture, Jossey-Bass (e-book).
8. Emmons A.R. (2000). Spirituality and intelligence: Problems and prospects. The International Journal for the Psychology of Religion. 10(1), 57-64.
9. Emmons, R.A., & McCullough, M.E. (2003). Counting blessings versus burdens: an experimental investigation of gratitude and subjective well-being in daily life. Journal of personality and social psychology, 84(2), 377.

Table 1: Research Design of the present study

Group	Pre-test(DV)	Intervention	Post-test(DV)
Experimental Group (Gurukul)	● Spiritual ● Intelligence ● Psychological ● Well-being	● Practicing Yoga ● Chanting Mantras (for two months)	● Spiritual ● Intelligence ● Psychological ● Well-being
Control Group (Government Schools)	● Spiritual ● Intelligence ● Psychological ● Well-being	**No Intervention**	● Spiritual ● Intelligence ● Psychological ● Well-being

Table 3: Baseline Mean comparison of Spiritual Intelligence and Psychological Well-being in Gurukul & Government Schools

S.	Area of study	Gurukul Mean(SD)	Government School Mean (SD)	't' value	P value
1.	Spiritual Intelligence	47.44(1.580)	47.68(1.133)	0.873	0.751 (NS)
2.	Psychological well-being	68.32(2.065)	68.14(1.874)	0.457	0.649 (NS)

N=100 (Gurukul Students=50, Government Student=50)

Figure 1: Baseline Mean comparison of Spiritual Intelligence and Psychological Well-being in Gurukul & Government Schools.

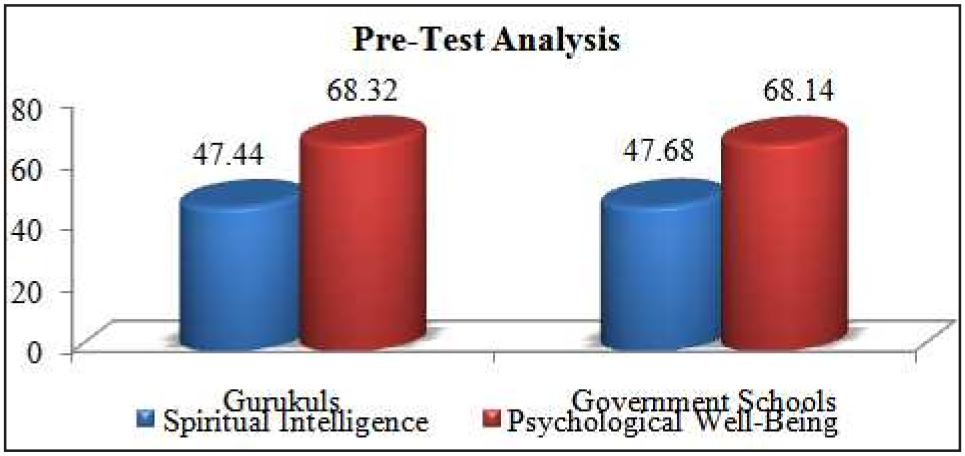

Table 4: Post-test mean comparison of spiritual intelligence and psychological well-being in Gurukul & Government schools.

S.	Area of study	Gurukul Mean(SD)	Government School Mean (SD)	't' value	P value
1.	Spiritual Intelligence	57.65(1.175)	47.35(1.672)	50.398	.000*
2.	Psychological well-being	79.63(1.631)	68.37(1.358)	45.045	.000*

N=100 (Gurukul Students=50, Government Student=50)

Figure 2: Post-test Mean comparison of Spiritual intelligence and psychological well-being in Gurukul & Government schools

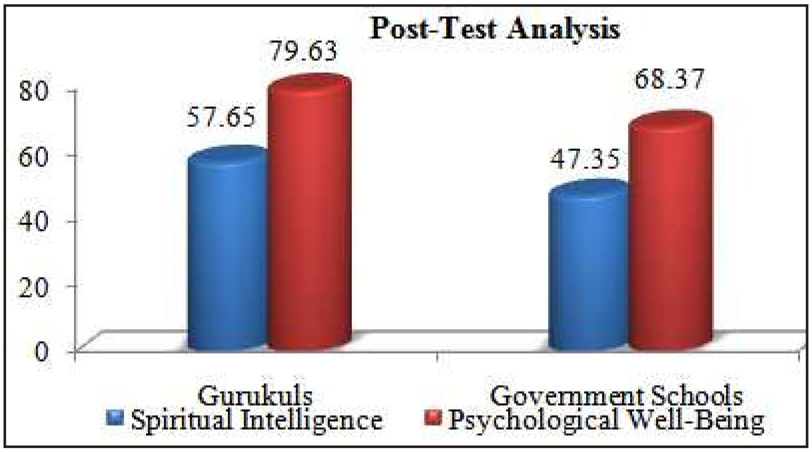

Table 5: Pretest-posttest Mean comparison of spiritual intelligence and psychological well-being in Gurukuls

S.	Area of Study	Pre-test Mean (SD)	Post-test Mean (SD)	't' value	P value
1.	Spiritual Intelligence	47.44(1.580)	57.65(1.175)	58.732	.000*
2.	Psychological Well-being	68.32(2.065)	79.63(1.631)	47.018	.000*

N=50

Figure 3: Pretest-Posttest Mean comparison of Spiritual Intelligence and Psychological Well-being in Gurukuls

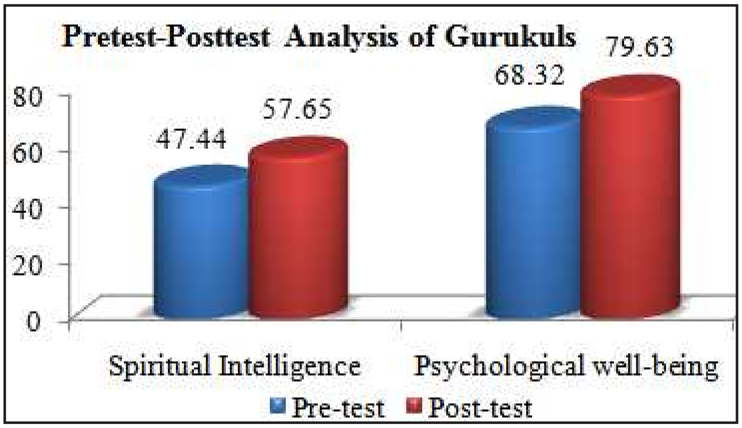

Table 6: Pretest-posttest mean comparison of spiritual intelligence and psychological well-being in Government schools.

S.	Area of study	Pre-test Mean (SD)	Post-test Mean (SD)	't' value	P value
1.	Spiritual intelligence	47.68(1.183)	47.35(1.672)	.537	.593-NS
2.	Psychological well-being	68.14(1.874)	68.37(1.357)	.473	.637-NS

N=50

Figure 4: Pretest-posttest mean comparison of spiritual intelligence and psychological well-being in Government schools.

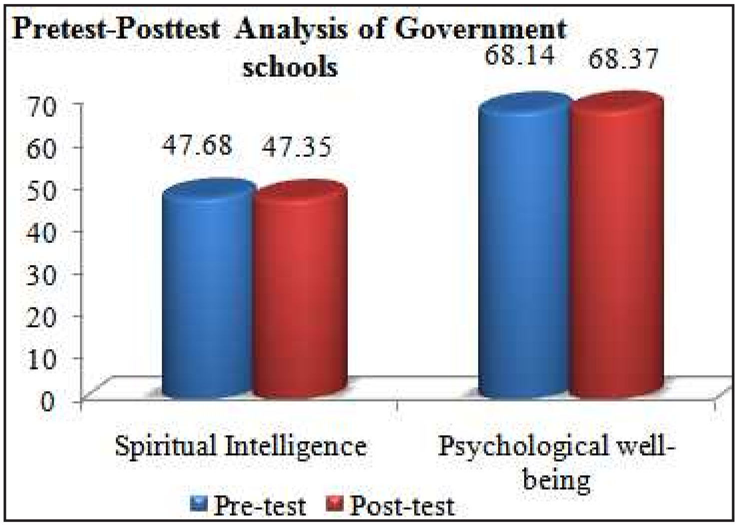

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

भारतेन्दु की भाष्य दृष्टि

संजीव मिश्र*

प्रस्तावना - 'भारतेन्दु युग में मुख्य संघर्ष हिन्दी की स्वीकृति और प्रतिष्ठा को लेकर था, फारसी के स्थान पर हिन्दी को प्रतिष्ठा दिलाने के लिए किए गए प्रयत्न ही जागरण के आधार बने। इस युग के दो लेखक - पहला राजा लक्ष्मण सिंह ने विशुद्ध संस्कृतनिष्ठ हिन्दी का समर्थन किया और राजा शिव प्रसाद ने हिन्दी का गँवारूपन दूर करते-करते उसे उर्दू-ए-मुअल्ला बना दिया। इन दोनों के बीच सर्वमान्य खड़ी बोली हिन्दी की प्रतिष्ठा कर महिन्दी साहित्य की विविध विधाओं की भाषा संबंधी विकास का ऐतिहासिक कार्य स्वयं भारतेन्दु ने पूरा किया।'[1]

भारतेन्दु के समय में मौलवी शिष्टाचार का प्रधान्य था। उठना, बैठना, बोलना, हँसना, फारसी अदब के अधीन था। अदालतों की भाषा उर्दू थी, उर्दू पठन-पाठन के प्रति सारे लोग विवश थे चूँकि वही पेट या जीविका की समस्या हल करती थी। उधर अँग्रेजी शिक्षित समुदाय भी हिन्दी को हीन दृष्टि से देखते थे। अँग्रेजी - शिक्षा का माध्यम थी, इससे हिन्दी भाषा साहित्य का पठन-पाठन नष्ट हो गया था। अपनी भाषा के प्रति सरकारी नौकरी के चक्कर में पड़कर भारतवासी उदासीन हो गए थे। भारतेन्दु को उर्दू या अँग्रेजी किसी भाषा से विरोध नहीं था। वे स्वयं 'रसा' नाम से उर्दू में काव्य रचना करते थे, अँग्रेजी उन्होंने स्वाध्याय से सीखा था। ज्ञान वृद्धि के लिए वे किसी भी भाषा का अध्ययन आवश्यक समझते थे। वे अपनी मातृ-भाषा हिन्दी का ज्ञान-कोष भरना चाहते थे। वे दूसरी भाषाओं का खजाना लूटकर भी अपनी भाषा का खजाना भरना चाहते थे। हिन्दी का अपमान, उनकी दृष्टि में राष्ट्र का अपमान था। हिन्दी भाषी क्षेत्र में हिन्दी का अपमान देखकर वे मर्माहत थे। हिन्दी मातृभाषा थी और मातृभाषा का अनादर माता के अनादर से बढ़कर था। राष्ट्रप्रेम की भावना से आविल (व्यग्र-बेचैन) होकर ही उन्होंने उर्दू समर्थक राष्ट्रीय सरकारी नीति का विरोध किया था और उनलोगों की अच्छी खबर ली थी, जो भारतवासी होकर अँग्रेजीदाँ बनकर हिन्दी को हीन दृष्टि से देखते थे। हिन्दी आंदोलन जो पहले से चला आ रहा था, भारतेन्दु ने 1884 ई0 में 'उर्दू का श्यापा' लिखकर, इस आंदोलन को तीव्र गति दी। सन् 1877 में उन्होंने हिन्दी कोष की वृद्धि के लिए, हिन्दी की उन्नति पर व्याख्यान दिया। यह व्याख्यान पद्यात्मक भाषण था। उन्होंने हिन्दी मातृभाषा का हमेशा पक्षग्रहण करने के लिए सरकारी नीति का विरोध किया। उन्होंने राजा शिव प्रसाद को हिन्दी का गला घोंटने वाला बताया। हेनरी पिनकॉट ने राजा शिवप्रसाद से लड़ाई लेने में भारतेन्दु का साथ दिया। उर्दू विदेशी जामा पहने हुए थी और हिन्दी से उसका टकराव चल रहा था। उन्होंने स्फुट कविताओं में एक सवैया रचा, जिसमें उन्होंने हिन्दी की दुर्गति पर आँसू टपकाए। यह सवैया द्रष्टव्य है -

'भोज भरे अरू विक्रमहु किनको अब रोई कै काव्य सुनाइये।
भाषा भई उरदू जग की अब तो इन ग्रंथन नीर डुबाइये।।
राजा भये सब स्वारथ पीन अमीरहू हीन किन्हैं दरसाइये।
नाहक देनी समस्या अबै यह ग्रीसमैं प्यारे हिमन्त बनाइये।।'[2]

हिन्दी साहित्य के इतिहास में 19वीं सदी भाषा की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। इसी शताब्दी में खड़ी बोली ने गद्य और पद्य पर समान रूप से अपना अधिकार जमाया। इसलिए हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल को 'गद्य काल' की अपेक्षा 'खड़ी बोली काल' कहना अधिक उपयुक्त है। लेकिन भारतेन्दु इस बात पर अडिग थे कि खड़ी बोली लिखने की भाषा अर्थात गद्य की भाषा है, यह कविता की भाषा नहीं हो सकती। भारतेन्दु ने कविता के लिए 'ब्रजभाषा' को ही सर्वोचित मान्यता प्रदान की। उन्होंने खड़ी बोली में कुछ कविताएँ लिखनी चाही तो वे भोंडी बन गई। संभवत: इसी को लक्ष्य कर आचार्य शुक्ल ने 'आधुनिक काल' को 'गद्य काल' के नाम से पुकारा। भारतेन्दु की इस भाषा दृष्टि पर यदि गंभीरतापूर्वक विचार किया जाए तो यह मानना पड़ेगा कि उन्होंने ब्रजभाषा को हिन्दी का रूप मानकर जो अपनी दृष्टि दी, उसी के अंतर्गत हिन्दी को एक भाषा मानकर जो रूप दी, उसी के अंतर्गत अवधी, भोजपुरी, मैथिली, छत्तीसगढ़ी आदि हिन्दी में समाविष्ट हो गई। उन्होंने 'हिन्दी भाषा' नाम से एक वृहत लेख लिखा, इस लेख में इन्होंने हिन्दी भाषा के 3 भेद किए हैं -

(क) घर में बोलने की भाषा।
(ख) कविता की भाषा।
(ग) लिखने की भाषा।

घर में बोलने की भाषा के अंतर्गत इन्होंने खड़ी बोली ओर बनारसी को रखा है, खड़ी बोली के बारे में लिखते हैं - 'अब पश्चिमोत्तार देश में घर में बोलने की भाषा कौन है, यह निश्चित नहीं होता, क्योंकि दिल्ली प्रांत के व अन्य नगरों में भी खत्रियों व पछाही अगरवालों व पछाही जातियों के अतिरिक्त घर में हिन्दी कोई नहीं बोलते, वरन यहाँ पर तो कोस-कोस पर भाषा बदलती है। .... ऐसी ही पश्चिमोत्तर देश में अनेक भाषा है, पर उनमें ऐसे नगर थोड़े हैं, जिनमें आबाल, वृद्ध, बनिता खड़ी बोली बोलते हों - इसी पश्चिमोत्तार देश में कई नगर ऐसे हैं, जहाँ यखड़ी बोली' मातृभाषा है।

पुन: बनारसी के संबंध में वे लिखते हैं कि '..................जो हो, यह सिद्धान्त है कि जो यहाँ के शिष्ट लोग बोलते हैं, वह परदेशी भाषा है और यह पश्चिम से आई है। काशी के उस पार ही रामनगर में ययहाँ की बोली बोली जाती है और यह मिर्जापुर की भाषा से बहुत मिलती है ....अतएव यद्यपि काशी ऐसे पूर्व प्रदेशों की मातृभाषा व घर में बोल-चाल की भाषा हिन्दी है, यह तो हम कह नहीं सकते।'[3]

कविता की भाषा, भारतेन्दु के अनुसार ब्रजभाषा है। इस काव्य भाषा

* सहायक प्रोफेसर (हिन्दी विभाग) सूरत पाण्डेय डिग्री कॉलेज, गढ़वा, नी.पी.विश्वविद्यालय, मेदिनीनगर (झारखंड) भारत

की परंपरा पर इन्होंने प्रकाश डालते हुए कहा है – 'पश्चिमोत्तर देश की कविता की भाषा ब्रजभाषा है, वह निर्णीत हो चुकी है और प्राचीन काल से इसी भाषा में कविता करते आते हैं, परंतु यह कह सकते हैं कि यह नियम अकबर के समय के पूर्व नहीं था क्योंकि मलिक मोहम्मद जायसी और चांद की कविता विलक्षण ही है, और वैसे ही तुलसीजी ने ब्रजभाषा का नियम भंग कर दिया है।'[4] ब्रजभाषा के अतिरिक्त इन्होंने बुंदेलखंडी, पंजाबी, मारवाड़ी और नई भाषा की चर्चा की है। इन्होंने कहा है कि जैसे ब्रजभाषा में कविता होती है, वैसे ही उपर्युक्त सभी भाषा में कविता लिखी जाती है। लेकिन पूरब में कवियों की वृद्धि है इसलिए एक नयी भाषा चल पड़ी है। बंगभाषा हिन्दी से बिल्कुल विलक्षण है, लेकिन बंगभाषा का पुराना स्वरूप ब्रजभाषा ही है। बंगाली विद्वानों में इस विषय में मतभेद है, किन्तु 'हमको ऐसा निश्चित होता है कि उन कवियों ने ब्रजभाषा में ही कविता करने की चेष्टा की हो तो क्या आश्चर्य है।'[5] वे आगे लिखते हैं – 'प्राचीन कविगण की भाषा वर्त्तमान ब्रजभाषा और मैथिली से बिल्कुल मिली हुई है। भारतेन्दु ने खड़ी बोली हिन्दी कविता का नाम 'नई भाषा' दिया है और इसे भोंडी कविता की भाषा भी कहा है। भारतेन्दु के अनुसार लिखने की भाषा खड़ी बोली है, यह खड़ी बोली उनके अनुसार पश्चिम से आई है, पंजाबी, ब्रजभाषा इत्यादि भाषाओं से बिगड़ कर बनी है। वे लिखने की भाषा – खड़ी बोली हिन्दी के संबंध में टिप्पणी करते हैं कि 'इसमें बड़ा झगड़ा है, कोई कहता है कि उर्दू मिलने चाहिए कि कोई संस्कृत शब्द होने चाहिए, अपनी-अपनी रूचि के अनुसार सब लिखते हैं और उस हेतु कोई भाषा अभी निश्चित नहीं हो सकती।'[6] भारतेन्दु ने इसी निबंध में घर में बोलने की भाषा, बनारसी के दो भेद किए हैं –

(क) मुख्य बनारसी।

(ख) अमुख्य बनारसी।

मुख्य बनारसी के 2 भेद किए – शिष्ट लोगों की भाषा व अशिक्षितों की भाषा। शिष्ट लोगों के भाषा का भी 2 भेद – पूरबियों से प्रभावित व पुराने कशेरों लोगों की भाषा, और अमुख्य बनारसी के भी 2 भेद किए हैं – बदमाशों की भाषा व डोमों की भाषा।

भारतेन्दु ने लिखने की भाषा की 12 शैलियों का विवेचन किया है, वे इस प्रकार हैं –

1) जिसमें संस्कृत के शब्द बहुत हैं।
2) जिसमें संस्कृत के रूप बहुत थोड़े हैं।
3) जो शुद्ध हिन्दी हैं।
4) जिसमें किसी भाषा के शब्द मिलने के नेम नहीं हैं।
5) जिसमें फारसी के शब्द विशेष हों।
6) जिसमें अँग्रेजी शब्द हिन्दी ही के मिलते हैं।
7) जिसमें पूरबियों की बोली व काशी जी की देशभाषा है।
8) जो काशी के अर्द्धशिक्षित बोलते हैं।
9) दक्षिण के लोगों की हिन्दी।
10) बंगालियों की हिन्दी।
11) अँग्रेजों की हिन्दी।
12) रेलवे की भाषा।

भारतेन्दु ने उक्त सभी शैलियों का अपनी रचनाओं में प्रयोग किया है। उन्होंने 'कालचक्र' में लिखा है कि हिन्दी नए चाल में ढली सन् 1873 ई0 में इस बात को लक्ष्य कर कहा जाता है कि भारतेन्दु ने 'विद्या-सुंदर' की रचना करके एक नई भाषा का प्रचलन किया, इस शैली को 'हरिश्चंद्री हिन्दी' की संज्ञा दी। भारतेन्दु ने अपने इस निबंध के अंत में लिखा है – 'हम इस स्थान पर बात नहीं करना चाहते कि कौन भाषा उत्तम है और वही लिखनी चाहिए, पर हाँ मुझसे कोई अनुमति पूछे तो मैं कहुँगा कि नंबर 2 और नंबर 3 लिखने योग्य है। डॉ0 वार्ष्णेय ने भारतेन्दु के इस कथन को लक्ष्य करके लिखा है कि यवास्तव में तीसरा अवतरण की शैली ही, हिन्दी की जातीय शैली है। भारतेन्दु ने अपने गद्य की भाषा का यही रूप ग्रहण किया है ....बन गए थे।'[7] लेकिन प्रो0 डॉ0 ब्रजकिशोर पाठक ने भारतेन्दु की निम्नलिखित पंक्तियों को उद्धत किया है – 'बड़ा झगड़ा है, कोई कहता है कि उर्दू के शब्द मिलने चाहिए, कोई कहता है कि संस्कृत के शब्द होने चाहिए और अपनी रूचिनुसार सब लिखते हैं और इस हेतु कोई भाषा अभी निश्चित नहीं हो सकती। प्रो0 डॉ0 पाठक जी ने इस पर अपनी टिप्पणी देते हुए आगे लिखा है – इसे भारतेन्दु की अपनी भाषा शैली संबंधी निर्णय नहीं समझना चाहिए। सच्ची बात तो यह है कि उन्होंने आवश्यकता महसूस की थी, कि हिन्दी खडी बोली की शैली निश्चित हो जानी चाहिए।'[8] ऐसे इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्त्ति और निर्देश के लिए यह लेख लिखा था।

निष्कर्ष – डॉ0 राम विलास शर्मा ने यभारतेन्दु की हिन्दी भाषा को देन पर अपना मंतव्य देते हुए लिखा है – 'भारतेन्दु ने खड़ी बोली के हिन्दी रूप को सँवार कर हमारी जाति की सांस्कृतिक आवश्यकताएँ पूरी की। इस हिन्दी के कारण यहाँ की जनता भी अन्य प्रदेशों के साथ, संस्कृति की एक सामान्य दिशा में बढ़ने में समर्थ हुई। भारतेन्दु के साहित्य में परंपरागत सांस्कृतिक धाराओं के साथ नए युग की राष्ट्रीय और जनवादी संस्कृति की धाराएँ आ मिलीं। उनके विचारों में असंगतियाँ हैं, लेकिन जो लोग हिन्दी-उर्दू साहित्य का विकास, हिन्दू और मुस्लिम राष्ट्रवाद से संबद्ध करते रहे हैं और वैज्ञानिक दृष्टि के नाम पर सूर और तुलसी का नाम ही हिन्दी साहित्य के इतिहास से काट देने पर तुले हुए हैं, उनके विचारों की 'तारतम्यता' के मुकाबले में भारतेन्दु युग की असंगतियाँ नगण्य हैं।'[9]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नागेन्द्र, पृ.सं. 456
2. स्फुट कविताएँ – भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ.सं.-866
3. भारतेन्दु की गद्य भाषा – डॉ0 ब्रजकिशोर पाठक, पृ.सं. 338
4. भारतेन्दु की गद्य भाषा – डॉ0 ब्रजकिशोर पाठक, पृ.सं. 339
5. हिन्दी भाषा भारतेन्दु हरिश्चंद्र – भारतेन्दु की गद्य भाषा – डॉ0 ब्रजकिशोर पाठक, पृ.सं. 340
6. हिन्दी भाषा – भारतेन्दु हरिश्चंद्र, उद्धत – भारतेन्दु की गद्य भाषा – डॉ0 ब्रजकिशोर पाठक, पृ. 341
7. भारतेन्दु हरिश्चंद्र – डॉ0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, पृ.सं. 193-94
8. भारतेन्दु की गद्य भाषा – डॉ0 ब्रजकिशोर पाठक
9. भारतेन्दु हरिश्चंद्र – डॉ0 राम विलाश शर्मा, पृ.सं.-144

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

ग्रामीण विकास में 'नवा अंजोर' परियोजना - एक अध्ययन (छत्तीसगढ़ राज्य के विशेष संदर्भ में)

डॉ.ई.व्ही.रेवती* डॉ.के.एल.टाण्डेकर**

प्रस्तावना - 1 नवम्बर सन 2000 को पूर्ववर्ती मध्यप्रदेश से गठित छत्तीसगढ़ राज्य में कुल 19720 आबाद ग्राम है, जिसमें से 48% अर्थात 9500 गांवो में आधे से अधिक आबादी अनुसूचित जाति/जनजाति की है। ग्रामीण जनता की आबादी 82% से अधिक है। राज्य में सुदृढ़ प्रशासन एव कानून व्यवस्था और पंचायती राज्यव्यवस्था है, फिर भी नागरिको की आर्थिक, सामाजिक दशा में सुधार के लिए ढेर सारे कार्य किये जाने की आवश्यकता है। वर्ष 1997 को गरीबी रेखा सर्वेक्षण के अनुसार छ.ग. राज्य में 1428748 परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते है। जहाँ आज भी मूलभूत सुविधाओं में बिजली 46%, स्वच्छ पेयजल 65%, शौचालय एवं उक्त तीनो सुविधा 52.7% ग्रामो में ही उपलब्ध है। छ.ग. राज्य की बडी आबादी विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रो में आज भी विकास की दौड़ में पिछडी हुई है। प्रदेश को प्रगति पथ पर लाने एवं विकास को तेज गति देने के लिए जरूरी है कि गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगो को आर्थिक स्थिति के आधार पर मजबूत किया जाये। ग्रामीण भाई-बहनो की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए राज्य में छ.ग. ग्रामीण गरीबी उन्मूलन योजना 'नवा अंजोर' की शुरूआत की गई है।

हमारा प्रदेश गांवो का प्रदेश है, सामान्यत: गांवों की सामाजिक व्यवस्था में बड़ा किसान मालगुजार, मध्यम किसान, सीमांत किसान, भूमिहीन मजदूर पलायन करने वाले मजदूर दिखाई देते है, इनमें से अधिकांश व्यक्ति अपने नियमित काम-काज के बारे में चितित रहते है। गांव में रहने वाले किसान मजदूर अनु जाति, अनु.जनजाति परिवारो, कमजोर गरीब परिवारों का आर्थिक सामाजिक स्तर में सुधार आवश्यक है, वास्तव में इनके पास अपनी आमदनी बढ़ाने की सोच तो है, परंतु आवश्यक पंजी एवं साधनो की कमी रहती है। ग्रामीणजन प्राय: जादू टोना, टोनहीं प्रथा, झाड-फूक आदि अंधविश्वास, बाल-विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियों में जकड़े होने तथा आपसी वाद-विवाद, जमीन-जायदाद, न्यायालयीन प्रकरणों के कारण उधारी में जकडे हुए है। ग्रामीणो को प्राय: आवश्यकता पड़ने पर अपने पड़ोसी रिश्तेदार साहूकार, मालगुजार, नौकरी पेशा वालो से एवं व्यापारी वर्ग आदि से ऊंचे व्याजदर पर ऋण लेना पड़ता जिन्हें आज पर्यन्त ऋण के बदले में जमीन, जेवर गिरीवी रखने पड़ते है। ग्रामीणो को ऋण के बदले में जमीन, जेवर गिरवी रखने पड़ते है। यही ग्रामीणों की निर्धनता का महत्वपूर्ण कारण है। साथ ही बुरी आदते भी इन्हे आर्थिक रूप से सक्षम बनाने में बाधक है।

प्रदेश के आर्थिक विकास को मजबूती देने में ग्रामीण क्षेत्रो में आर्थिक गतिविधियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। ग्रामीण क्षेत्रों के पिछड़ेपन एवं गरीबी दूर करने के लिए यह जरूरी है कि ग्रामीण जनो के परंपरागत व्यवसाय को सुनिश्चित रखते हुए आज की जरूरतो के मुताबिक आवश्यक बदलाव लाएं एवं इन्हे आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभकारी बनाये। इसी परिप्रेक्ष्य में छ.ग. राज्य में गरीबी उन्मूलन परियोजना का शुभारंभ किया गया।

छ.ग. प्रदेश की कुल जनसंख्या 2,0833803 है जो देश की जनसंख्या का 2.03 प्रतिशत है। इसमें पुरुष 10474218 एवं महिला 10359585 की संख्या है, प्रदेश में कुल 20796 ग्राम तथा 9810 ग्राम पंचायते है। कुल ग्रामों में 48 प्रतिशत से अधिक ग्राम में अनुजाति, जनजाति की आबादी है। 1997 के सर्वेक्षण अनुसार राज्य में 1428748 परिवार गरीबी रेखा से नीचे गुजर बसर कर रहे। आज पूरे देश के सामने गरीबी उन्मूलन एक चुनौती है । छ.ग. सरकार ने इस चुनौती से निपटने 'नवा अंजोर' परियोजना को हाथ में लिया है। यह परियोजना समाज से गरीबी दूर करने गांवों की क्षमता का विकास स्थानीय स्तर पर ही आय के अवसर की उपलब्धता, भूमिहीन, गरीब, साधनहीन के जीवनस्तर में सुधार लाने गरीबो को विशेषकर महिलाओं को ऐसे अवसर उपलब्ध कराना जिससे की वे अपना विकास कर सके एवं सतत् रूप से इनकी स्थिति में सुधार हो सके जैसे उदेश्यों को ध्यान में रखकर योजना का सवाल किया जा रहा है। परियोजना की रणनीति के तहत साधनहीन लोगो का समूह गठित कर राशि खाते में उपलब्ध कराई जाती है, परियोजना में पुरूषों के, महिलाओं के अथवा पुरा गांव का गांव भी समूह बन सकता है। किन्तु समूह में कम से कम 5 परिवारो का होना आवश्यक है। समूह के अन्दर सदस्य को अधिकतम 30 हजार रूपये के मान से राशि देय होती है। यह राशि समाजिक गतिविधियों का लिए प्रदान की जाती है। इस राशि का उपयोग समूह द्वारा 5 वर्ष के भीतर किया जा सकेगा।

समाहित समूह कामकाज को अपनी जरूरती के आधार पर करेंगे समूह प्राय: कृषि कार्य उदारी राजमिस्त्री, फीचर कार्य, टयूबवेल, कुंआ एवं पंप मत्स्य पालन, फोटोग्राफी, किराना दुकान, बोकशाला, बैण्ड पार्टी, हालर मिल, अगरबत्ती निर्माण, वनोपज से संबंधित कार्य खपरा निर्माण, ढेड-डबलरोटी निर्माण, ईटभट्टा, खदान, मुर्गीपालन, बकरी पालन गतिविधियां के अतिरिक्त ग्राम पंचायत अधोसंरचना विकास जैसे कार्य कर सकते है।

परियोजना का कार्यक्षेत्र - नवा अंजोर परियोजना प्रदेश के आर्थिक-सामाजिक रूप से पिछडे एवं संसाधनों की कमी वाले चयनित विकासखंडों के अंतर्गत गांवो में संचालित की जा रही है, ताकि वहां के लोगो को भी

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ़, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
** प्राचार्य, शासकीय बाबा साहब भीमराव आम्बेडकर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगांव, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत

मुख्यधारा में आने का अवसर प्राप्त हो सकें। नवा अंजोर परियोजना मुख्यत: सहभागिता, सशक्तिकरण, विकेन्द्रीकरण, पारदर्शिता और परस्पर सहयोग पर आधारित है। इसमें अनुसूचित जाति, जनजाति, पलायन करने वाले, सीमान्त-भूमिहीन किसान परिवार एवं महिलाओं पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया है।

जिले का नाम	परियोजना क्षेत्र में शामिल विकासखंड	कुल ग्राम पंचायते
रायपुर	धरसींवा, तिल्दा, आरंग, छुरा	209
धमतरी	धमतरी, कुरूद, मगरलोड	183
महासमुंद	महासमुंद, बसना, सरायपाली	150
दुर्ग	दुर्ग, गुण्डरदेही, डौण्डीलोहारा, नवागढ़	212
राजनांदगांव	डोंगरगांव, अम्बागढ़ चौकी, छुरिया	171
कबीरधाम	कवर्धा	62
बिलासपुर	बिल्हा, कोटा, मस्तुरी, पेण्ड्रा	183
कोरिया	बैकुंठपुर	50
कोरबा	करतला	50
जांजगीर चांपा	सक्ती	50
रायगढ़	रायगढ़, तमनार, धरमजयगढ़	150
सरगुजा	वाड्रफनगर, रामचन्द्रपुर, ओडगी, कुसमी	196
जशपुर	जशपुर, बगीचा, फरसाबहार	141
बस्तर	बस्तर	55
कांकेर	भानुप्रतापपुर, चारामा, अन्तागढ़	141
दंतेवाड़ा	दंतेवाड़ा	31

छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा विश्व बैंक के सहयोग से माह जून 2004 में योजना प्रारंभ की गई। लगभग 617.25 करोड़ रूपये की योजना जिसमें 558 करोड़ रूपये विश्व बैंक से और शेष 59.25 करोड़ रूप में राज्य शासन द्वारा लगाया जाएगा। परियोजना का क्रियान्वयन प्रथम चरण के तहत प्रदेश के 16 जिलो के 40 विकासखण्डो के 2000 ग्राम पंचायतों में किया जा रहा है। पांच वर्ष की योजना अवधि में 1 लाख गरीब परिवारों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। परियोजना अवधि वर्ष 2005 से 2010 तक है।

परियोजना की कुल लागत का विभिन्न मदो में व्यय का विवरण निम्नानुसार है -

कार्य का नाम	राशि (लाखो में)	प्रतिशत
ग्राम निवेश	50351.73	81.57
मानव संसाधन विकास	2133.18	3.45
ग्राम पंचायतो का सुदृढ़ीकरण	3268.18	5.29
परियोजना क्रियान्वयन	3180.57	5.15
प्रचार-प्रसार	740.31	1.79
मानिटरिंग लर्निंग	586.31	0.94
परियोजना प्रशासक	1464.16	2.37
कुल -	61725.01	100.00

स्त्रोत - कार्यालय छ.ग. ग्रामीण गरीबी उन्मूलन परियोजना रायपुर

परियोजना की 81 प्रतिशत राशि समुदाय और समुहो की उपयोजनाओ के लिए शेष 19 प्रतिशत राशि परियोजना के संचालन, प्रशिक्षण, मानिटरिंग तथा वतावरण तथा निर्माण के लिए व्यय का प्रावधान रखा गया है।

प्रदेश में नवा अंजोर परियोजना क्रियान्वयन में प्रारंभिक स्तर पर कठिनाईयां आई किन्तु इससे उबरकर यह तेजी से अपने निर्धारित लक्ष्यों की ओर बढ़ रही है। जून 2004 में न्यूनतम मैदानी अमले के साथ योजना शुरू तो हुई किन्तु अब विभिन्न पदो पर प्रतिनियुक्ति एवं संविदा नियुक्ति के माध्यम से अमले का पदस्थापना की जा चुकी है। परियोजना के विभिन्न मदो में अब तक कई उपलब्धियां हासिल की गई है। कुल 2784 समहित समूह का गठन कुल 15375 परिवारों को आर्थिक गतिविधि संचालन के लिए राशि उपलब्ध कराई गई इन परिवारों में 5215 अनु.जनजाति तथा 2100 अनु.जाति 6441 अन्य पिछड़ा वर्ग तथा 1619 सामान्य वर्ग के लोग है। इन समूह को अब तक आर्थिक सहायता के रूप में वर्ष 2004-05 मे 355.06 लाख, वर्ष 2005-06 में 1892.74 लाख इस प्रकार कुल 2247.80 लाख रूपये स्वीकृत किए गये। ग्राम पंचायत अधोसंरचना विकास एवं उपयोजना मद में 2329.85 लाख की लागत के 1562 निर्माण कार्य स्वीकृति दी गई जिनमें 863 गली क्रांकिटीकरण 162 पुलिया निर्माण, 99 पचरीकरण, 79 पंचायत भवन निर्माण, 79 पम्प हाऊस, 50 खेल मैदान समतलीकरण, 56 नाली निर्माण, 50 मुक्तिधाम शामिल है। यह निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के प्रति परियोजना की सार्थकता को स्पष्ट करता है। आज प्रदेश में कुल 580 महिला समहित समूह गठित हुए है, जिनमें 77 अनुजाति, 188 अनु जनजाति, 102 अन्य पिछड़ा वर्ग और 219 सामान्य वर्ग की महिलाओं के समूह है। इनमें कुल 3708 महिला सदस्य है।

प्रदेश में नवा अंजोर परियोजना के क्रियान्वयन से ग्रामीण विकास में वृद्धि के साथ साथ लोगो की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति में भी परिवर्तन परिलक्षित हुआ है। शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण, स्वच्छता के प्रति लोगों की सोच सकारात्मक हुई है। इतना ही नहीं परियोजना की मंशा के अनुरूप ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक उन्नयन का वातावरण निर्मित हुआ है। प्रदेश की सबसे बडी पलायन की समस्या का समाधान इसी योजना में निहित प्रतीत होता है। सहभागिता, समानता और विकेन्द्रीकरण को बल मिलेगा, प्रदेश के आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक परिदृश्य में बदलाव आएगा।

योजना के क्रियान्वयन में लोगो की अशिक्षा, रूढ़ीवादिता, आपसी अलगाव व्यवसायिक ज्ञान की कमी परस्पर सद्विश्वास का अभाव प्रशिक्षण, तकनीकी ज्ञान का अभाव तथा योजनामद के दुरूपयोग जैसे कारक इसे सफल होने में बाधक हो सकते है। अत: योजना शेष सभी विकासखण्डों में भी प्रारंभ की जावे उचित प्रशिक्षण मानिटरिंग, मूल्यांकन सतत् प्रक्रिया के तहत संम्पादित किया जावे, उत्पादित वस्तुओं के विपणन की समुचित व्यवस्था ग्राम स्तर पर ही किया जाए एवं आर्थिक सहयोग की राशि वर्तमान परिवेश को ध्यान रखते हुए बढ़ाना उचित होगा। तभी छ.ग. प्रदेश आर्थिक सामाजिक रूप से सक्षम बन सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नवा अंजोर बढ़ते कदम - छ.ग. ग्रामीण गरीबी उन्मूलन परियोजना पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग विभाग
2. छ.ग. स्वप्न से यथार्थ की ओर देशबंधू विशेषांक अप्रेल 2006
3. योजना विशेषांक - 2008 अगस्त व्यापार व्यव्स्थापक (प्रसार एवं विज्ञान) प्रकाशन विभाग नई दिल्ली
4. State Credit Plan 2009-10, Finance Department, Mantralaya Campus Raipur (C.G.)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

मानवाधिकार की अवधारणा : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना*

प्रस्तावना - जब एक बच्चा इस संसार में जन्म लेता है तो उसका यह हक है कि वह अपना सांसारिक जीवन संतोष जनक ढंग से, सुरक्षा से, बिना भेद भाव के और आनन्द पूर्वक बितायें। इस प्रकार किसी मनुष्य को ये सभी बुनियादि सुविधायें प्राप्त होगीं तो उसका उचित विकास होगा तथा अच्छे समाज का निर्माण होगा साथ ही सामाजिक न्याय के उद्देश्य की प्राप्ति भी होगी। समाज मनुष्य की आपसी सहयोग सम्बन्धी आवश्कताओं की पूर्ति करता है। राज्य अनेक कानून, नियम एवं संहिताओं के माध्यम से मनुष्यों के जीवन के लिये आवश्यक आधारभूत अधिकारों की सुरक्षा, शान्ति एवं सद्भाव की प्राप्ति के लियें यथा सम्भव व्यवस्थायें स्थापित करता है। इस प्रकार जब मानव राज्य द्वारा स्थापित संहिता से व्यवस्थित जीवन व्यतीत करता है तो उसका कर्तव्य भी हो जाता है कि अपने को उन नियमों के अधीन रखे जो उसके व्यवहार को नियन्त्रित करते है, इससे एक अच्छे समाज व कल्याणकारी राज्य का निर्माण होगा। राज्य का उद्देश्य भी अच्छे समाज का निर्माण करना ही होता है। प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि उसे अपनी मौलिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, एवं सांस्कृतिक उन्नति करने के लिये समान अवसर प्राप्त हों। राज्य का भी यह कर्तव्य है कि वह अधिकतम जन कल्याण सम्बन्धी कार्य करें। इस प्रकार राज्य द्वारा कल्याणकारी व्यवस्थायें स्थापित करने में ही सामाजिक न्याय के उद्देश्य की प्राप्ति निहित है, और जब सामाजिक न्याय की व्यवस्था स्थापित होगी तो स्वत: ही मानवाधिकारों की प्राप्ति हो जायेगी।

मानवाधिकार का सामान्य अर्थ - वैसे मानवाधिकार की अर्थ व्याप्ति को लेकर कई तरह के विवाद हैं, फिर भी सामान्यत: हम कह सकते हैं कि मानवाधिकारों का अभिप्राय उन उन 'नैतिक अधिकारों' से है जिनके बिना मनुष्य मनुष्य नहीं रह जाता है और जिनसे युक्त होकर ही वह अन्य प्राणियों से भिन्न होता है परन्तु यहाँ एक बात बिल्कुल स्पष्ट है कि अभी जिस मानवाधिकार की बात हम कर रहे हैं उसमें उतनी व्यापकता नहीं है, उनकी राजनीतिक व्याख्या ही अधिक है।

मानवाधिकारों एवं सामान्य अधिकारों में अन्तर है कि जहाँ सामान्य अधिकारों के तहत मनुष्य को कानून द्वारा उसकी सुरक्षा एवं उसके अनुपालन के लिए उसे भावात्मक एवं निषेधात्मक दोनो प्रकार के अधिकार दिये जाते हैं, वहीं 'मानवाधिकारों' में उसके भावात्मक पहलू पर ही अधिक बल दिया जाता है अर्थात कानून के अनुपालन से अधिक कानून के सुरक्षा-दायित्व को अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है। पहले प्रकार की स्थिति में अधिकार देने वाली संस्था अर्थात् सरकार महत्वपूर्ण होती है और दूसरे प्रकार की स्थिति में अधिकार ही ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

'मानवाधिकार' एक ऐसा विषय है जिसके संरक्षण के लिए न केवल सरकार का एक अंग अर्थात् कार्यपालिका ही उत्तरदायी होती है, बल्कि कार्यपालिका एवं अन्य संगठनों के ऊपर निगरानी रखने एवं व्यक्तियों के अधिकारों के राज्य द्वारा अतिक्रमण से बचाने के लिए न्यायपालिका द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका अदा की जा रही है।

'प्रत्येक मनुष्य जन्म से समान व मौलिक अधिकारों एवं सम्मान से युक्त है। वे विवेक एवं तार्किकता से सम्पन्न हैं और इसलिए उन्हें एक-दूसरे के साथ भातृत्व की भावना से पेश आना चाहिए।' मानवाधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन (1948) की घोषणा में मानवाधिकारों की मूल-भावना को अभिव्यक्त करते हुए इन्हीं शब्दों के साथ घोषणापत्र का प्रारूप तैयार किया गया था।

मानवाधिकार की अवधारणा विश्व मानव की अवधारणा को मूर्त रूप देने की अवधारणा है। मानवाधिकारों का मानव सभ्यता से सदैव निकटतम सम्बन्ध रहा देने की अवधारणा मानवाधिकारों का मानव सभ्यता से सदैव निकटतम सम्बन्ध रहा है। जब भी यह अवधारणा पल्लवित तथा पुष्पित हुई है और यहां तक कि वर्तमान में भी इसका पल्लवन मानव सभ्यता की परिपक्वता का मापदण्ड है। परन्तु इतिहास हमें इस पहलू पर निराश करता है, जब हम यह पाते हैं कि मानव व्यवहार, शासन प्रणाली तथा मानवाधिकारों की अवधारणा के बीच की विभाजक रेखा अत्यन्त चौड़ी रही है। विद्वान लेखक के अनुसार यदि मानव को गूंगे-बहरे व्यक्ति के रूप में नही जीना है, तब यह आवष्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति को सोचने, बात करने तथा कार्य करने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाय। यदि विचार की अभिव्यक्ति तथा प्रेस एवं सम्पत्ति स्वतंत्रता को मूल्यवत्ता प्रदान करनी है, तो उन्हे प्रतिभूतित करना होगा। बिना उसके जीवन अनिश्चय तथा अन्धकार की गोद में चला जायेगा। मानव के अस्तित्व की रक्षा के लिए तथा मानव सभ्यता के पल्लवन के लिए मानवाधिकारों की रक्षा एक प्राथमिक शर्त है।

भारतीय संविधान में मानवाधिकारों को नई भावभूमि प्रदान की गई है। मानवाधिकार मानव गरिमा के पर्याय हैं। माननीय न्यायाधिपति सीकरी के अनुसार भारतीय संविधान के मूल तत्व के नींव के पत्थर मानव की स्वतंत्रता है। इसी बात को आगे बढ़ाते हुए माननीय न्यायाधिपति कृष्णा अय्यर ने यह कहा था कि हमारी सांविधानिक व्यवस्था का आध्यात्मिक आधार मानव गरिमा तथा सामाजिक न्याय है। विद्वान न्यायाधीश के अनुसार मानव गरिमा हमारे संविधान का मधुरतम मूल्य है जिसे दूर फेंका नही जा सकता। वस्तुत: मानवाधिकार संसार के सर्वोत्कृष्ट प्राणी मानव को समाज में गरिमा एवं मानव के रूप में प्रस्थिति दिलाने के प्रबल सम्बल हैं। अधिकार मानव के उस विश्वास की भावभूमि पर अवतरित होते हैं जो यह स्पष्ट करती है कि व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार जीने और जीवन के

* व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

पथ के संचालन का अधिकार है और इस अधिकार पर राज्य या समाज तभी नियंत्रण लगा सकते हैं जब एक व्यक्ति का अधिकार दूसरे के ऐसे ही अधिकार में हस्तक्षेप कर रहा हो। अत: वैयक्तिक अधिकार एवं सर्वजन कल्याण में सन्तुलन बनाये रखना मानवाधिकार का व्यवहारिक पहलू है। यह स्मरणीय है कि विधि और समाज अस्तित्व में आने के पहले भी मानव एक महत्वपूर्ण सामाजिक इकाई रहा है। विधियों का निर्माण मनुष्य के लिए ही किया जाता है। न्यायिक सम्बन्ध भी दो व्यक्तियों के बीच के सम्बन्ध है इसलिए अनेक अधिकार, कर्तव्य, दायित्व एवं दावा मिलकर मानव की अवधारणा को पुष्ट करते है और मानव समाज की एक इकाई बन जाता है। इस प्रकार मानवाधिकार देश काल की सीमा को पा कर जाते हैं और यदि किसी भी राष्ट्र का कानून मानव को मानव के रूप में व्यवहृत, नही करता तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यूरोपियन कोर्ट ऑन ह्यूमन राइट, संयुक्त राष्ट्र संघ, रेड क्रास एवं अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं देश काल की सीमा को छोड़कर मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए आगे आ जाती हैं। डायस इसे ही 'सुपर नेशनल कन्ट्रोल' की संज्ञा देते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति को समान स्वतंत्रता का प्राथमिक अधिकार प्राप्त है इसका केन्द्रीयकृत भाव यह है कि 'आत्मन: प्रतिकूलानि परेशां न समाचरेत' समान स्वतन्त्रता का अधिकार यह रेखांकित करता है कि हमें जिस कार्य से क प्रसन्नता होती है, हम जो चाहते है उसे करने का हमें अधिकार हो, परन्तु यदि दूसरों को अपनी पसन्द या इच्छानुसार आचरण करने में हमारी स्वतन्त्रता बाधक बनती है तो वह स्वतन्त्रता नियम की सीमा में आ जाती है। इसीलिए संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा यह उद्घोष करती है कि 'अधिकार और स्वतन्त्रता को सर्वजन कल्याण की सीमाओं में बांधा जा सकता है।' अनेक अन्तर्राष्ट्रीय घोषणाओं तथा राष्ट्रीय संविधानों में अधिकार पर ऐसी सीमाओं के स्पष्ट उल्लेख है। यह पहलू मानवाधिकार का उपयोगितावादी निर्वचन है।

डवार्किन मानवाधिकारों को विधिक एवं नैतिक दोनों सन्दर्भो में एक विशेष प्रस्थिति प्रदान करते है। नैतिक सन्दर्भ अधिकारों की श्रेणियों को स्पष्ट करता है जबकि विधिक सन्दर्भ हमें अधिकारों के उद्गम के स्त्रोतों को बताते है। अत: दोनों सन्दर्भ में यही बात स्पष्ट हुई है कि प्रत्येक नैतिक या राजनीतिक सिद्धान्त की अवधारणा व्यक्तिगत अधिकारों की भावभूमि पर अवलम्बित की जानी चाहिए। डवार्किन इस आधार पर मानवाधिकारों को पृष्ठभूमीय अधिकार कहते है और प्रवर्तन के आधार पर विधिक अधिकारों को संस्थागत अधिकार की संज्ञा देते है।

अमर्त्यसेन इन्हे 'मेंगा राइट' की संज्ञा देते है जो मूलभूत अधिकारों की प्राप्ति के सोपान का कार्य करते है। हेमिसफायर इन नैतिक दावों को दो भागों में बांटते है प्रथम भाग को वे सार्वभौमिक मानवीय आवश्यकता की संज्ञा देते है जबकि दूसरे भाग को एक निश्चित प्रकार के जीवन जीने की पद्धति से सम्बोधित करते है, ऐसी जीवन शैली जिसे देश विशेष की विधिक प्रणाली वैध मानती है।

जब हम मानवाधिकारों के प्रचार-प्रसार और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इनके संरक्षण की प्रबल भावना को देखते है तो इसके पीछे अधिकारों के महत्व की धुरी स्पष्ट दिखाई पड़ती है। यद्यपि बेंथम अधिकतम सुख के सिद्धान्त पर अडिग है और उनका यह उपयोगितावादी सिद्धान्त व्यक्तिगत अधिकारों के प्रयोग की कसौटी का कार्य करता है तथापि नील मैकार्मिक का यह कथन अत्यन्त समीचीन है कि सर्वजन हिताय कि दृष्टि से भी व्यक्तिगत अधिकारों को संरक्षण आवश्यक है। अत: ये उपयोगितावादी सिद्धान्त से असंगत नही है।

मानवाधिकार की संकल्पना सदियों से वैयक्तिक स्वतंत्रता को महात्वांकित करते रहने की राजनीतिक दर्शन की बीसवी सदी का नया अध्याय है और अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों द्वारा मानवाधिकारों के संरक्षण को रेखांकित करना और राज्यों की उसमें सहमति मानवता को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नया उपहार है। एक सूत्र के रूप में मानवाधिकार वैयक्तिक स्वतंत्रता का न्याय की सर्वोपरि कसौटी मानता है इसलिए विधिशास्त्र मानवाधिकारों की व्याख्या पर अत्यधिक जोर देकर उनके प्रवर्तन पर अधिक ध्यान देता है। सम्भवत: इसलिए हिर्ट ने हमें यह याद दिलाया है कि 'विधि की अवधारणा इतनी महत्वपूर्ण है कि इसे मात्र अधिवक्ताओं के ऊपर ही नही छोड़ा जा सकता।'

संविधानिक ढांचे में इनके प्रवर्तन का कार्य मुख्य रूप से न्यायपालिका का है और स्पष्टत: भारतीय न्यायपालिका अपनी इस भूमिका का गंभीरता से निर्वहन कर रही है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार के प्रवर्तन एवं उल्लंघन को रोकने के अनेक उपाय किये गये है। यूरोपियन कन्वेन्शन ऑफ ह्यूमन राइट्स ने कोर्ट ऑफ ह्यूमन राइट्स का गठन किया है जहां व्यक्तिगत स्तर पर भी मानवाधिकारों के उल्लंघन की याचिका प्रस्तुत की जा सकती है। फर्म नोल्ड बनाम इ.सी. कमिशन में यह स्पष्ट अवधारित किया गया है। 4 नवम्बर 1950 के यूरोपियन कमिशन फॉर दी प्रोटेक्शन ऑफ ह्यूमन राइट तथा 20 मार्च 1952 के एडिशनल के अन्तर्राष्ट्रीय तन्त्रों ने इसी बात की पुष्टि की है कि सदस्य देश अपनी सांविधानिक परम्परा में संधियों के सन्दर्भ में इन अधिकारों की रक्षा के लिए बाध्य है।

मानवाधिकार उन आत्यंतिक अधिकारों की अवधारणा है जिन्हे ईश्वर ने मानव के जन्म के साथ उसे प्रदान किया है ये शोश्वत है और किसी भी देश के संविधान, राजनीतिक दल, शैक्षणिक व्यवस्था या अन्य सामाजिक व्यवस्थाओं से भी पुराने है। इनका आशय मानव गरिमा को संरक्षित बनाये रखता है इसीलिए फेडरल रिपब्लिकन ऑफ जर्मनी के संविधान के अनुच्छेद एक में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि मानव की गरिमा अनाक्रमणीय है तथा इसकी रक्षा एवं सम्मान करना समस्त राज्य प्राधिकारों का कर्तव्य है।

टी.एच.ग्रीन, हेरोल्ड लॉस्की अधिकारों को वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ माना है, जिनके बिना व्यक्ति प्रगति नहीं कर सकता। विश्व-स्तर पर मानवाधिकारों के तहत जिन अधिकारों पर आम सहमति है, उन्हें इस प्रकार से वर्गीकृत किया है- 1जीवन का अधिकार 2स्वतन्त्रता का अधिकार 3विश्वास एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता 4संघ अथवा समूह के निर्माण का अधिकार 5सम्पत्ति का अधिकार 6सामाजिक एवं आर्थिक अधिकार।

संयुक्त राष्ट्र संघ की मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा ने मानवाधिकारों को गरिमा, योग्यता एवं उपयोगिता से जोड़ दिया और यह स्पष्ट किया कि मानवाधिकार उस गरिमा को रेखांकित करते है जो मानव के व्यक्तित्व के विकास के लिए अन्तर्निहित तत्व है और प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान से देखे जाने का अर्थ प्रदान करते है। अत: जब हम इन सिद्धान्तों का विश्लेषण करते है तो यह स्पष्ट होता है कि मानव को मानव के रूप में देखे जाने, सम्मानित होने और समान भावभूमि पर प्रस्थिति के अनुसार व्यवहित किये जाने का वातावरण ही मानवाधिकारों की धुरी है।

वेदों में 'समानों मंत्र:, समिति समाने मन:' कह कर एक समता का सिद्धान्त रेखांकित किया गया है और 'सहनावतु सहनौ भुनक्त' भी इसी वृहद मानवता का सन्देश देता है। समाज में प्रत्येक व्यक्ति का अपना मूल्य

है जिस दिन यह बात महत्वांकित हो जायेगी मानवाधिकारों की रक्षा कोई समस्या नही रह जायेगी। हमें ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिसमें अपने स्यवं का और जिसके साथ व्यवहार किया जा रहा है उसके सम्मान एवं गरिमा की रक्षा हो सके। वे मानवाधिकारों को नैतिक सिद्धान्तों पर आधृत करने के पक्षपाती है जहा प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने की ऐसी दषायें प्राप्त हो जहां उसकी स्वयं की गरिमा दूसरों की गरिमा के साथ मिलकर परस्पर सम्मान और एक दूसरे के सम्मान की रक्षा की प्रवृत्ति को बलवती कर सकें।

यूरो-अमेरिकन सांविधानिक पृष्ठभूमि : 1974 में फर्मनाल्ड के मामले में यूरोपियन कमीशन के कोर्ट ऑफ जस्टिस ने इस बात को रेखांकित किया था कि मानवाधिकार सदस्य देशों को उस सांविधानिक परम्परा से उत्सृजित हुए है जो सभी सदस्य देशों में समभाव से प्रचलित है। यूरोपीय देशों की सांविधानिक परम्परा मानवाधिकारों के स्पष्ट: मूल्यांकन पर जोर देती है। सर्वप्रथम यदि हम इंग्लैण्ड की परम्परा का अध्ययन करें तो वहां लिखित संविधान न होते हुए भी शासन के नाम पर वहां अनेक स्वतंत्रताओं एवं अधिकारों को मानवाधिकारों का स्वरूप दे कर प्रत्याभूतित कर दिया गया है। जहां कानून नही है वहां लोप के सिद्धान्त का अवलोकन कर न्यायालय स्वंय कानून बना देते है। 1760 में समर सेट के मामले में लार्ड मेसफिल्ड ने गुलामी प्रथा के समापन का कानून न होने पर भी गुलामों के व्यापार को प्रतिबन्धित करने के सन्दर्भ में प्रत्यर्थी द्धारा यह तर्क प्रस्तुत करने पर कि इग्लैण्ड में वह कानून कहां है जिसका उल्लंघन किया गया है यह कहां था कि यह कानून इंग्लैण्ड के उस वातावरण में है जहां गुलाम भी स्वतंत्र वातावरण में सास ले सकता है। गुलामी प्रथा पर प्रतिबन्ध कानून की पुस्तक में भले ही न हो परन्तु इंग्लैण्ड के विधिक एवं राजनीतिक वातावरण की यह देन है कि सब को सम्मान के साथ जीने का अधिकार है और गुलामी प्रथा वहां नही होगी। यहां तक की लार्ड ढ्रूरो ने इगरटन बनाम ब्राउनलो में अभिनिर्धारित किया है कि कोई भी व्यक्ति ब्रिटिश विधिक परम्परा में विधिपूर्वक भी ऐसा कोई कार्य नही कर सकता जो सामान्य हित और सर्वजन कल्याण के विपरीत हो।

जर्मनी के बेसिक लॉ और फ्रांस के संविधान में भी मानव गरिमा एवं मानवाधिकार के पहलू को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है और वहां के न्यायालय इन अधिकारों के प्रवर्तन के सन्दर्भ में किसी थी न्यायालय से पीछे नही है।

कनाडा के 1960 का बिल ऑफ राइट्स की धारा 1 में विधि के समक्ष समता तथा विधि के संरक्षण पाने का व्यक्ति का अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्याभूतित किया गया है और धारा 2 में किसी भी दशा में ऐसे अधिकारों के समापन संक्षिप्तीकरण या उसमें हस्तक्षेप करने की वर्जना की गयी है। आर. बनाम ड्राईबोन्स में द इण्डियन एक्ट 1932 को इस आधार कठोर दण्ड देने का प्रावधान था, जो समता के मानवाधिकार का उल्लंघन था।

अमेरिका के बिल ऑफ राइट्स में मानवाधिकारों को स्पष्ट: प्रतिभूति कर दिया गया है और प्रथम तृतीय चतुर्थ एवं पंचम् संषोधनों ने उन सभी अधिकारों को सम्मिलित कर लिया है जो मानव को मानव के रूप में बने रहने के लिए आवष्यक है। मानव की निजता पर सरकारी आक्रमण को मानवाधिकार का हनन बताया गया है और निजता बनाए रखने, संगठन बनाने, स्वतंत्र मत व्यक्त करने, सम्मान सहित जीने, अपने अधिकारों को प्राप्त करने तथा एक लेकर चौदह संशोधनों तक में वर्णित अधिकारों की रक्षा एवं उनके प्रवर्तन के लिए अमेरिकी न्यायालयों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है अमेरिकी न्यायालयों ने इस बात को रेखांकित किया है कि मानव की गरिमा एवं शिक्षा दिलाने, वितरण करने एवं वितरण का लाभ पाने, एवं अन्य सभी प्रकार के वे लाभ जो मानव को मानव कहलाने के लिए आवश्यक है वे आदर्श सिद्धान्तों पर टिके है, अमेरिकी न्यायिक व्यवस्था की प्राकृतिक विधि एवं विधि की सम्यक् प्रक्रिया सूत्र के अंग है अमेरिकी समाज के लिए अनिवार्य है वे 1776 की अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा, 1796 की मानव के अधिकारों की घोषणा, 1991 की अमेरिकी संविधान के बिल ऑफ राइट्स के समन्वित रूप है इसीलिए पेनसुत्वानिया बनाम बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज में गोरे गरीब अनाथ बच्चों के प्रवेश की मनाही को मानवाधिकारों को उल्लंघन से जोड़ कर उसे रद्दर कर दिया गया। अमेरिकी न्यायालयों की मानवाधिकारों के संरक्षण में अमेरिकी जन चेतना को शाश्वत बना देने की इस प्रक्रिया को रिबिल 'कूटनीतिक पुजारीवाद' की संज्ञा देते है।

भारतीय सांविधानिक परम्परा: भारत के संविधान में मूल अधिकारों के अध्याय में मानवाधिकार शब्द का प्रयोग नही किया गया है परन्तु संविधान की उददेषिका भ्रातृत्व एवं व्यक्ति की गरिमा शब्द का प्रयोग करती है। गरिमा ही मानव को मानव बनाती है। गरिमा का स्पष्ट तात्पर्य है सम्मान सहित जीना। अनुच्छेद 21 मूलाधिकारों का भी मूलधिकार है। राज्य के नीति-निर्देशक तत्व समस्त आधारभूत सुविधाओं को प्रदान करना राज्य का उत्ताढायित्व मानते है। इस प्रकार उद्देशिका एवं भाग 3 व भाग 4 की त्रिवेणी का संयुक्त वाचन मानवाधिकारों की परिकल्पना स्पष्ट कर देता है। उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट अभिनिर्धारित किया है कि मूलाधिकारों ने सम्मिलित न होने से ही किसी अधिकार को मूलाधिकार की प्रस्थिति से वंचित नही किया जा सकता। अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज के नये आयामों तथा नव राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक सन्दर्भ नये अधिकारों को जन्म देते है। मानवाधिकार इसी श्रेणी के अधिकार है और इन्हे मूल अधिकारों की श्रेणी में रखा जा सकता है। 'ओल्गाटेलिस' में जीविका पाने का अधिकार, 'शान्ति स्टार बिल्डर' में आवास पाने का अधिकार, पश्चिम बंग खेत मजदूर समिति में स्वस्थ जीवन व्यतीत करने का अधिकार, परमानन्द कटारिया में चिकित्सकीय सहायता पाने का अधिकार, एम.एच. हार्सकोट में विधिक सहायता एवं त्वरित विचारण का अधिकार, खड्ग सिंह तथा मधुकर नरायण माडिकर में गरिमा एवं निजता बनाये रखने का अधिकार, नीलवत्ती बहेरा में क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार, एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ में प्रदूषण मुक्त पर्यावरण में रहने के अधिकार को, न्यायालय ने उन मानवाधिकारों के श्रेणी में रखा है जिनके बिना अनुच्छेद 21 की जीवन और वैयक्ति स्वतंत्रता का कोई तात्पर्य ही नही रह जाता।

भारतीय विधिशास्त्र बंदियों के मानवाधिकारों को रेखांकित करने में अग्रगण्य रहा है। बंदियों को क्षतिपूर्ति दिलाने, उनके प्रति मानवीय व्यवहार करने, मनमानी ढंग से रोकने, पीटने या उनके विचारण को ठीक ढंग से न कराने को, उनके मानवाधिकार का उल्लंघन माना गया है। जाहिराशेख बनाम गुजरात राज्य में कैदियों के ऋजुतापूर्ण विचारण, जगमोहन सिंह में अस्वाभाविक एवं क्रूर दण्ड न पाने का अधिकार, बंधुवा मुक्ति मोर्चा में बुंधुआ मजदूरों की मुक्ति एवं पुनर्वास के अधिकारों को 21 के मूल अधिकारों से जोड़ा गया है। बन्दी मानव है और मानव की तरह व्यवहरित होने का पात्र है। इस पर न्यायालय ने विशेष जोर दिया है। हुसैन आरा खातून, उपेन्द्र बक्शी प्रभारक पांडुरंग, सुनील बत्रा इत्यादि में बंदियों को मानवाधिकारों से वंचित न करने का मंत्र न्यायालय ने दिया है।

अत: स्पष्ट है कि मानवाधिकार आज जीवन, स्वतंत्रता तथा सम्पत्ति के अधिकारों की त्रिवेणी के केंचुल को छोड़कर बहुत आगे निकल गये है वे

जनता की प्रशासनिक सहभागिता के अंग बन गये है। इसीलिए फ्रीडमैन उन्हे वैयक्तिक अधिकारों का नया आयाम मानते है जो मानवाधिकारों के पूंजभूत रूप है। व्यक्ति के निजी व्यक्तित्व की मान्यता, उनका संरक्षण, वैयक्तिक स्वतंत्रता एवं विकास का समान अवसर, लोक प्रशासन में सहभागिता और ऐसी विधिक व्यवस्था की संरचना जहां व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह अपने को विधि से ऊपर न समझे, विद्धान प्रोफेसर के अनुसार ये मानवाधिकार के मूल स्तम्भ है। अत: स्पष्ट है कि मानवाधिकार कोई नया सिद्धान्त नही है न ही इसकी नवीन व्याख्या की आवश्यकता है। ये सभी प्रकार की व्यवस्था के पहले के अधिकार है सर्व सामान्य की प्रसन्नता अधिकतम लोगों लकी अधिकतम संतुष्टि, व्यक्ति के मनमानीपन पर सांविधिक दबाव से रोकने की स्वतंत्रता पर बल देना इन अधिकारों की विधिशास्त्रीय पृष्ठभूमि है। ये अधिकार मानव को केन्द्र मानकर चलते है और 'मानवता विजयिनी हो जाय' इसका मूल आधार है। आज आवश्यकता इस बात की है कि अधिकतम लोगों को अधिकार भावना से ओतप्रोत किया जाये। न्यायमूर्ति, वी. आर. कृष्णा अय्यर ने यह अत्यन्त समीचीन राय व्यक्त की है कि न्याय की सर्वोत्कृष्टता, परिमार्जित न्यायिक प्रक्रिया एवं सस्ती न्यायिक पहुंच ही मानवता को सुखी, प्रसन्न, सन्तुलित रखती है और देश के लोगों को स्वर्गीय आनन्द की अनुभूमि कराती है। परन्तु जब यह व्यवस्था अत्यधिक व्ययशील हो जाती है, न्यायाधीशों एवं अधिवक्ताओं की सामाजिक सोच धनिक वर्ग के साथ हो जाती है, न्याय का द्वार अकिंचनों के लिए बन्द हो जाता है, श्रेष्ठ अधिवक्ता धनिकों तक ही सीमित रह जाते है तो गरीबों, अकिंचनों एवं शोषितों के मानवाधिकारों की रक्षा कैसे होगी यह एक विचारणीय प्रश्न है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इन्दर सिंह बनाम राज्य, ए.आई.आर., 1978 एस.सी. 1091
2. इन्फोरसमिन्ट ऑफ ह्यूमन राइट्स 1996 पृं. 1
3. सुभाषित रत्नागार, प्रथम अध्याय, पृं. 13
4. किशोर सिंह बनाम राजस्थान राज्य, ए.आई.आर., 1981, एस.सी. 625.
5. वाइड बनाम बूनाइटेड स्टेट, 116 बनाम 616
6. ग्रिसवर्ल्ड बनाम कनैक्टिक्ट 318, यू. एस. 479
7. मार्टिन बनाम स्ट्रेटिर्स 319 यू. एस. 141
8. वाईमैन बनाम उपडग्राम 344, यू.एस. 183
9. स्वीजे बनाम न्यूहेमिसफासर 354, यू.एस. 234.
10. नैक्प बनाम अलबामा 357, यू.एस. 449
11. नैक्प बनाम वरन 371, यू.एस. 415
12. इष्यूवारे बनाम बोर्ड ऑफ बार इक्जामिनेशन 353, यू.एस. 232
13. बियर्ड बनाम अलैक्जेनइरिया 341, यू.एस. 322
14. फ्रेन्क बनाम मेरीनैन्ड 354, यू.एस. 360
15. नैक्प बनाम अलबामा 372, यू.एस. 288
16. पॉलिगी मेकिंग पावर ऑफ सुप्रीम कोर्ट एण्ड द पोजिशन ऑफ द इंडिविजुअल, 14 वाशिंगटन एण्ड ली रिव्यू ली लॉ रिव्यू 167, 184, 185, (1957)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

चालुक्य वंश की उत्पत्ति एवं उनका मूल निवास स्थान

डॉ. सुनीता मीना *

शोध सारांश – सातवी शताब्दी में के अनुगामी राष्ट्रकूट अभिलेखो मे चालुक्य सेना का कर्नाटक सेना के रूप मे उल्लेख आया है। बादामी के चालुक्य अभिलेखों मे उन्हे स्पष्ट रूप से क्षत्रीरू कहा गया है। उन्होंने श्रौतरिधान के अनुसार अश्वमेध, पौण्डरीक, वाजपेय आदि अनेक यज्ञो का सम्पादन किया। चालुक्य नरेशों के समकालीन अनेक उच्च राजवंशो से वैवाहिक सम्बन्ध थे उन्होने ब्राह्मण नरेश कदम्बो तथा उत्तर भारत के भारत के क्षत्रिय नरेश कल्चुरियों के साथ के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये था। चालुक्य क्षत्रीय जाति के तथा दक्षिणापथ के समकालीन सातवाहनों कदम्बो तथा राष्ट्रकूटो की ही भांति कर्नाटक प्रदेश के मूलनिवासी थे।

शब्द कुंजी – विकेन्द्रीकरण, चलक्य, इक्ष्वाकुवंशीयए, दिवाकरम, चलुक्कै वेदरष, बादामी अभिलेख, अनुश्रुति, अश्वमेध।

प्रस्तावना – 550 ई. के आसपास संपूर्ण भारतीय प्रायद्वीप में राजनीतिक विकेन्द्रीकरण का महत्वपूर्ण सिलसिला प्रारम्भ हो गया था। यह वह समय था जब उत्तर भारत में गुप्त साम्राज्य का पतन हो चुका था और इसी के साथ भारत की राजनीति का केन्द्र रहे मगध की दीर्घकालीन शक्ति के ह्रास के साथ क्रमश: मौखरी, परवर्ती गुप्त वर्धन आदि राजवंशों के अभ्युदय के रूप में तथा दक्षिण भारत मे वातापि (बादामी) के चालुक्य तथा कांची के पल्लव राजवंशों के उदय तथा उनके बीच शक्ति विस्तार की क्रमिक कश्मकश से आंकी जा सकती है। 550 ई से 750 ई के मध्य दक्षिण भारत के राजनीतिक इतिहास की गतिविधिया चालुक्य राजवंश की चर्चा के बिना अपूर्ण है।

चालुक्य राजवंश का नाम – चालुक्य अभिलेखों में इस राजवंश का पारिवारिक नाम कई रूप में जैसे– 'चलक्य'[1] 'चलिक्य'[2] 'चलुक्य'[3] एंव 'चालुक्य'[4] मिलते है। पुलकेशिन द्वितीय के लौहनेर अनुदान पत्र मे 'चालुकिक' नाम भी मिलता है। परवर्ती चालुक्य अभिलेखों मे 'चालुक्य' चौलुक्य तथा कभी –कभी 'चलुकिक' एंव 'चालुकि' रूप भी मिलता है। जे एफ फ्लीट ने चालुक्य तथा 'चलुक्य' शब्दों में अन्तर बताया है उनके अनुसार 'चालुक्य' शब्द परवर्ती नरेश तैलप द्वितीय के समय से प्रयोग मे आया तथा पूर्वकालीन चालुक्य राजाओं के लिए इसका प्रयोग नहीं हुआ। किन्तु सुक्ष्म अध्ययन से ज्ञात होता है कि 'चालुक्य' शब्द न केवल परवर्ती चालुक्यों ने वरन बादामी के पुर्वकालीन चालुक्यों से भी सम्बन्धित था।[5] इसका उल्लेख समकालीन प्रारम्भिक अभिलेखों में मिलता है एन बी उत्गिर ने इस पारिवारिक नाम को स्थानीय प्रभावयुक्त माना है जिसका प्रयोग संस्कृत मे भिन्न – भिन्न रूपो मे किया गया हैं सरकार का मत है कि सम्भवत; 'चालुक्य' नाम इस वंश के पूर्वजों मे किसी व्यक्ति के नाम पर पड़ा होगा जिसको 'चल्क्य' 'चलिक' अथवा 'चालुक्य' कहा जाता था[6] निलकण्ठ शास्त्री के अनुसार इस राजवंश का मूल नाम 'चलक्य' था तथा इसी में श्रुतिमसधुर्य के लिए एक स्वर जोड़ देने से 'चालुक्य' नाम बना। बाद में इसी के 'चालुक्य' एवं 'चौलुक्य' रूप हो गये।[7]

चालुक्य वंश का प्राचीनतम उल्लेख सम्भवत; आंध्रप्रदेश के गुण्टूर जिले से प्राप्त नागार्जुनीकोण्डा अभिलेख मे हुआ है इक्ष्वाकुवंशीय प्राकृत भाषा के अभिलेख मे 'चालिकि' शब्द का उल्लेख मिलता है किन्तु यहाॅ पर इन्हे हिरण्यक कुल का वासिष्ठी पुत्र कहा गया है जब कि चालुक्य हारीतिपुत्र थे। इस असंगति के कारण यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि इसी 'चलिकि' शब्द से चालुक्य बना है अथवा अन्य से 8वीं शताब्दी के लगंभग तमिल के एक शब्द कोष 'दिवाकरम' मे चालुक्य शब्द का उल्लेख मिलता है दिवाकरम का यह उल्लेख साहित्य में इनके प्राचीनतम उल्लेखों में से है जिसमे 'चलुक्कै वेदर' (चालुक्य राजाओं) को वेलपुलम का राजा कहा गया है इनका प्रतीक वराहध्वज था किन्तु वर्तमान मे इस वेलपुलम का अर्थ स्पष्ट नहीं होता है।

चालुक्यों की उत्पत्ति विषयक अनुश्रुतियां–दक्षिणापथ के तत्कालीन अन्य राजवंशो के समान ही चालुक्यो की उत्पत्ति का प्रश्न विवादास्पद है। चालुक्य अभिलेखों मे अभी तक प्राप्त प्रमाण इनकी उत्पत्ति के विषय मे कोई निश्चित धारणा प्रस्तुत नही करते। इस विषय मे मंगलेश का 578 ई का बादामी अभिलेख[8] सबसे प्राचीन लिखित प्रमाण है। इसमे कहा गया है कि 'वे स्वामी (कार्तिकिय–जैसा कि बाद के अभिलेखो से स्पष्ट हैं) के चरणों मे ध्यान करने वाले,मानव्य गोत्र के हारीतिपुत्र, जो अग्नियष्टोम, वाजपेय, पौडरीक बहुसुवर्ण और अश्वमेद्य आदि यज्ञों की पूरी पदावली पूर्व मे इनके लिए प्रयुक्त हुई थी, उसके पच्चीस वर्ष के बाद महाकुट अभिलेख मे वंश के प्रथम महान राजा पुलकेशिन के लिए इसी उपाधि का प्रयोग किया गया है।' बाद मे इस अनुश्रुति का आकार बढ़ता गया और इसने एक जटिल रूप धारण कर लिया। महाकूट स्तम्भाभिलेख (602ई.) इस विषय में कई दृष्टियो से उल्लेखनीय है। इसमे वंश की प्रशस्ति मे कालिदास के रघुवंश लेखों मे इसका उल्लेख नही मिलता हैं। इस लेख मे वंश के राजाओ की उर्जा, बुद्धि, बल, साहस, पितृभक्ति,दानशीलता तथा सौदार्य की प्रशंसा की गयी है।

वातापी काल की प्रशस्ति का प्रामाणिक रूप सर्वप्रथम पुलकेशिन द्वितीय के हैदराबाद अनुदान पत्र (612ई,) मे मिलता है जिसमे चालुक्यवंश का उल्लेख इस प्रकार हुआ है–'समस्त भुवन वंध मानक गोत्र के हारीतिपुत्र,सप्तलोकों की जननी सप्तमातृओं द्धारा पालीत,कार्तिकिय की कृपा से निरन्तर धनधान्य से परिपुर्ण रहने वाले नारायण की कृपा से प्राप्त जिनके वराहध्वज को समस्त राजा देखते है।समस्त राजाओ ने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली। यह उल्लेखनीय है कि ब्राह्मणवंशी कदम्ब एवं उनके पूर्व

* व्याख्याता (इतिहास) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

सातवाहन भी स्वयं को मानव्य गोत्र के हारीतिपुत्र कहते थे। कदम्ब राजागण भी भगवान कार्तिकेय के उपासक थे। कुल के विषय में एक ही तरह की अनुश्रुति इस बात के स्पष्ट प्रमाण है कि इन राजवंशो मे सातवाहन काल से ही निश्चित रूप से ऐतिहासिक सम्बन्ध रहे होंगे।[9]

उपर्युक्त अनुश्रुतियों में इस वंश के राजाओं को कार्तिकेय और विष्णु दोनो के प्रति भक्ति प्रदर्शित करते हुए पाते है। जैसे वराह के रूप में विष्णु भगवान ने नरक से पृथ्वी का उद्धार किया था उसी प्रकार चालुक्य राजा दुष्ट राजाओ के उपद्रवों से पृथ्वी की रक्षा करने का दावा करते थे। प्रारम्भिक चालुक्य अभिलेखां मे वराहलक्षण के साथ विष्णु को कुल देवता माना गया है। यद्यपि वे जैन एवं शैव धर्मो के प्रति भी उदार थे तथा बाद के कुछ शासको ने इन धर्मों का अनुसरण भी किया। यह वह समय था जब कि दक्षिण भारत के सभी राजवंशो ने अपनी प्रतिष्ठित वंशावलियां अपने राजकवियों की सहायता से बनवायी। जहां तक चालुक्यो का प्रश्न है, इन अनुश्रुतियो की दो धाराएं मिलती है। इनमे एक पश्चिमी और दुसरी पूर्वी धारा। दोनो धाराओ मे आपसी एकता न थी।

कल्याणी के उत्तरकालीन पश्चिमी चालुक्यों द्वारा उद्धृत शाखा का प्रारम्भ विक्रमाद्धित्य पंचम के कौठेम अनुदान पत्र 1009 ई. से होता है। इसमे कहा गया है कि चालुक्य वंश के 59 राजाओं ने उत्तर कौशल की राजधानी अयोध्या में राज्य किया तथा बाद मे 16 राजाओं ने दक्षिणापथ पर राज किया। जयसिंह नामक राजा ने इस वंश का पुन: उद्धार किया। विक्रमाद्धित्य षष्ठ के समय के कुछ प्रलेखों से ज्ञात होता है कि चालुक्य सोमवंशी तथ ब्रह्मा के पुत्र अत्रि की आंख से उद्भूत थे अनुश्रुतियो की पूर्वी शाखा का सम्वन्ध वेंगी के चालुक्यों से था। इस शाखा का प्रारम्भ विमलादित्य 1011 ई. के रणस्तिपुण्डि के अनुदान पत्र से होता है। इसमे पहले से कुछ अधिक विस्तार से जानकारी दी गई। इसमे आदिपुर्वज ब्रह्मा को बताया गया है। इसमें 59 राजाओं को जो अयोध्या पर राज कर रहे थे अपना पूर्वज बताया गया है। इसके बाद इस वंश का एक राजा विजयादित्य दक्षिण की विजय को निकला जहां वह त्रिलोचन पल्लव से युद्ध करता हुआ मारा गया। इसकी रानी जो कि गर्भवती थी उसने पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम विष्णुवर्धन रखा गया अभिलेख में आगे कहा गया है कि बडा होकर माता द्वारा अपने वंश के विषय में जानकारी प्राप्त करने के बाद विष्णुवर्धन ने चालुक्य पहाडों की गौरी की पूजा की, जिसकी कृपा एवं अपनी बुद्धि तथा रणकौशल से गंग कदम्ब एवं अन्य राजाओं परास्त करके सम्पूर्ण दक्षिणापथ पर अधिकार कर अपने वंश की राजलक्ष्मी को पुन: प्राप्त किया।[10]

साहित्यक उल्लेख- तत्कालीन साहित्य में भी चालुक्यों की उत्पति विषयक उल्लेखक मिलते है। विल्हण विरचित विक्रमांक देव चरित के अनुसार प्राचीन काल में जब लोगों का विश्वास देवताओं पर नहीं रहा तब इन्द्र की प्रार्थना पर ब्रह्मा ने अपने चुलुक (चुल्लू) से एक पुरूष की सृष्टि की जिसका नाम चुलुक हुआ तथा उसकी सन्तान चालुक्य कहलायी।[11]

तत्कालीन दूसरी साहित्यिक अनुश्रुति का उल्लेख उत्तकालीन कल्याणी के चालुक्य नरेश एंव कवि सोमेश्वर कृत विक्रमांकाभ्युदयम मे मिलता हैं इसमे वंशक्रम का उल्लेख करते हुए कवि ने पुराणो मे वर्णित परम्परा का निर्वाह किया है। इसमे चालुक्य पर्वत पर अपनी राजधानी स्थापित कर राज्य करने वाले सत्याश्रय तथा उसके पुत्र जयसिंह का उल्लेख है। जयसिंह को रणक्षेत्र मे राष्ट्रकुट राजा इन्द्र तथा पॉच सौ क्षत्रियो को मारकर विजय अर्जित करने वाला कहा गया है। जयसिंह को कुछ अन्य साहित्यिक लेखो मे विष्णुवर्धन भी कहा गया है। इसके एक वंशज ने राष्ट्रकुट राजाओ को हराकर दक्षिण मे चालुक्य सत्ता को स्थापित किया। अयोध्या से भी चालुक्यो का सम्बन्ध साहित्य में जोड़ा जाता रहा है।

उपर्युक्त अनुश्रुतियो में आयी अयोध्या सम्बन्धी चालुक्य उत्पत्ति का उल्लेख चालुक्य वंश की स्थापना के बहुत बाद जोड़ा गया जब कि इनका उल्लेख बादामी काल में नही मिलता अत: इन्हे पूर्णत काल्पनिक कहा जा सकता है। डॉ.सरकार तथा नीलकंठ शास्त्री दोनो हि विद्धान चालुक्यों की उत्पत्ति के विषय में इन वर्णनों को अस्पष्ट और मूल्य ही पौराणिक कथाएं मानकर अस्वीकार करते है।[12]

मूलनिवास स्थान एवं जाति – चालुक्यों के मूल निवास स्थान एवं जाति के विषय मे विद्धानों में मतैक्य नही है। इन्हे दक्षिणापथ तथा कुछ उत्तर भारतीय क्षत्रिय मानते है जबकि कुछ इन्हें विदेशी उत्पत्ति एवं कुल से सम्बन्धित मानते हैं।

1. **उत्तर भारतीय –** परावर्ती चालुक्य अभिलेख एवं साहित्यिक अनुश्रुतियों ने एक मत से उन्हे अयोध्या से सम्बन्धित क्षत्रिय राजा माना हैं। किन्तु यदि इस मत को सत्य मान लिया जाय तो प्रश्न उठता है कि ऐसे गौरवपूर्ण उत्तर भारतीय सम्बन्ध का उल्लेख प्रारम्भिक चालुक्यों ने क्यों नही किया चालुक्य संज्ञा को उत्तरापथ के चुलिक से जोड़ा जाता है। रायचौधरी इसी मत को मानने वाले है। इसकें विपरीत डॉ. सरकार इस मत का खण्डन करते है तथा कहते है कि चालुक्यो से इनका कोई सम्बन्ध नही।[13]

2. **विदेशी मूल से उत्पत्ति–** डॉ. स्मिथ के अनुसार[14] चालुक्य विदेशी थे तथा उनका सम्बन्ध यचापय या 'गुर्जर' जाति से था। बाद में ये राजस्थान के दक्षिण में जाकर स्थायी रूप से बस गये। इसी प्रकार का मत ईश्वरीप्रसाद[15] तथा भण्डारकर का भी है। चालुक्यो के गुजरात पदार्पण के कारण ही लाट प्रदेश का नाम गुजरात पड़ा। पर विदेशी उत्पत्ति का यह मत निराधार एवं अप्रमाणित है। जैसा कि रायचौधरी आर सी मजुमदार का मानना है कि इनके आदि पूर्वज चलुक थे एवं उसकी सन्तान चालुक्य कहलायी। कालीशंकर दत्त का मत है कि यह केवल कल्पना के आधार पर अनुमान किया जाता है कि वे चाप जाति के थे और उनका गुर्जरो से सम्बन्ध था।

3. **कन्नड़मुलक क्षत्रिय –** कुछ विद्धानों नें चालुक्य वंश का उल्लेख इक्ष्वाकुवंशीय नागार्जुन के अभिलेख में आये चलिकि शब्द को चलुक्य अथवा चालुक्य का रूप मान कर इस अभिलेख के आधार पर चालुक्यों का मूल स्थान दक्षिण आंध्र प्रदेश माना है।तथापि अधिकांश विद्धान इसे स्वीकार नहीं करते ।

नीलकण्ठ शास्त्री के अनुसार चालुक्य परवर्ती सातवाहनों एवं उनके उत्तराधिकारीयों के शासनकाल में उनकी सेवा में थे, जहां से धीरे-धीरे उन्नति करते गये। वे कर्नाटक के थे।[16] इसे ही कभी-कभी कुंतल कहा गया है। उनकी मातृ भाषा कन्नड़ थी। डॉ. डी. सी. सरकार भी उन्हें कन्नड़जातीय मानते है। लक्ष्मीनारायण राव ने भी वेत्विक्कुदि दान लेख में मदुर करूनाटक नामक उपाधि के आधार पर चालुक्यो को कन्नड़मूलक घोषित किया हैं। राव कृष्णशास्त्रि ने भी अपने तर्को के आधार पर चालुक्यो को मूलत कन्नड़ माना है।

उपर्युक्त मतों की विवेचना के आधार पर स्पष्ट होता है कि सातवी शताब्दी में कर्नाटक में केवल प्रसिद्ध के चालुक्यो के अनुगामी राष्ट्रकूट अभिलेखो मे चालुक्य सेना का कर्नाटक सेना के रूप मे उल्लेख आया है। बादामी के चालुक्य अभिलेखो मे उन्हे स्पष्ट रूप से क्षत्रीरू कहा गया है। उन्होंने श्रौतरिधान के अनुसार अश्वमेध, पौण्डरीक, वाजपेय आदि अनेक यज्ञो का सम्पादन किया। चालुक्य नरेशों के समकालीन अनेक उच्च राजवंशो

से वैवाहिक सम्बन्ध थे उन्होने ब्राह्मण नरेश कदम्बो तथा उत्तर भारत के भारत के क्षत्रिय नरेश कल्चुरियों के साथ के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये था। अत: निष्कर्ष रूप में यह प्रमाणित होता है कि चालुक्य क्षत्रीय जाति के तथा दक्षिणापथ के समकालीन सातवाहनों कदम्बो तथा राष्ट्रकूटो की ही भांति कर्नाटक प्रदेश के मूलनिवासी थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 चल्कयवंशाम्बरपूर्णचन्द्र: इण्डियन ऐण्टीक्केरी भाग 6, पृ.363

2 वही पृ.73

3 वही पृ.76

4 जे. एफ. फलीट – डायनेस्टीज ऑफ द दकनारीज डिस्ट्रिक्ट्स, बम्बई 1896

5 रेणुका कुमारी – चालुक्य और उनकी शासन व्यवस्था वाराणसी- 1986 पृ.1

6 आर., मजुमदार(सं) – क्लासिकल एज पृ. 227

7 जी याजदानी(सं) – अर्ली हिस्ट्री ऑफ डक्कन अवश्नप लंदन 1960 पृ. 204

8 इण्डियन ऐण्टीक्केरी भाग उ पृ. 304

9 सी. बी. वैध – हिस्ट्री ऑफ मेडिवल हिन्दू इण्डिया खण्ड 1 पृ. 266 पूना –1921

10 रेणुका कुमारी – चालुक्य और उनकी शासन व्यवस्था वाराणसी- 1989 पृ. 5

11 विल्हन – विक्रमांकदेव चरित्र 1/55 मद्रास 1893

12 जी. याजदानी(सं) – अर्ली हिस्ट्री ऑफ डक्कनलंदन 1960 पृ. 206

13 आर.सी. मजुमदार(सं) – क्लासिकल ऐज पृ. 227

14 अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, अवश्न4 पृ. 440

15 नीलकण्ठ शास्त्री – दक्षिण भारत का इतिहास , पटना 1972

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

ईश्वर का स्वरूप एक दार्शनिक चिन्तन

राकेश कवचे *

प्रस्तावना – ईश्वर ही इस सृष्टि का कर्ता–धर्ता संहार करने वाला है। उसकी शक्ति से अन्न, जल, वायु, अग्नि और आकाश आदि का अस्तित्व विद्यमान है। इस प्रकार से ईश्वर के अस्तित्व का वर्णन मिलता है। वैसे वेदों में ईश्वरीय नियम की व्यवस्था से सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न हो रहा है। ईश्वर की अवज्ञा मानव की सबसे बड़ी नादानी माना जाता है। व्यक्ति में हमेशा से स्नेह पूर्ण व्यवहार करने से ईश्वर उसे साथ देते हैं। यहाँ तक मानव के विकास का आयाम इस प्रकृति से प्रदत्ता सम्पूर्ण वस्तुओं में निहित है। वैसे तो सामाजिक व्यवस्था ही आवश्यकताओं पर निर्भर करता है। ऐसी विचारधारा के परिणाम स्वरूप स्व जीवन और पर जीवन के प्रति मानव का चिन्तन एक उत्कृष्ठ कार्य कहा जा सकता है। जब व्यक्ति किसी पड़ोसी या अनजान व्यक्तियों को हानि पहुँचाने आदि की कोशिश करता है। उसका ईश्वर स्वयं नुकशान करता है। इस संसार में सही और गलत कार्यो का निर्धारक ईश्वर ही है। इन्हीं सूक्तियाँ भी वेदों में[1] मानव जीवन की सफलता हेतु नित्यकर्म यथार्थ जीवन का वर्णन किया गया है। ईश्वर विद्या अध्ययन और अध्यापन का केन्द्र बिन्दु है। इस प्रकार से कुछ विद्वान ईश्वर की व्याख्या बौद्धिक कुशलता के आधार पर करते हैं। कुछ दार्शनिकों ने दार्शनिक दृष्टि से ईश्वर की मीमांसा किया है। ईश्वर मीमांसा के सम्बन्ध में दर्शन की आस्तिक परम्परा मोक्ष की अवस्था को ईश्वरीय कृपा का परिणाम मानती है। इसी कारण धार्मिक मान्यताएँ और नियम ईश्वर की कृत है।[2] इस संसार के आन्तरिक और बाह्य तथ्यों में आत्मा का अस्तित्व विद्यमान है। यह शरीर प्रस्तर कालीन समाज में सृष्टि के सूक्ष्म और मूर्तिरूप ढ़ाल लेती है, जिसका कोई न आदि है और न कोई अंत ही दिखाई देता है।[3] फिर भी ईश्वर का स्थान ढूढ़ते है, तो महर्षि कणाद के सूत्रों में ईश्वर का कहीं भी प्रमाण नहीं मिलता है।

उद्देश्य – परमाणु और आत्म में सामंजस्य के कारण आदृष्ट रूप में दिखाई देती है।[4] कभी–कभी ऐसा होता है कि वैशेषिक दर्शन में ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण मिलता है,[5] किन्तु इस मत को स्वीकार करना कठिन है।[6] वैशेषिक दर्शन का दृष्टिकोण प्रत्यक्ष और अनुमान पर आधारित है। फिर भी ज्ञान प्रत्यक्ष और अनुमान के द्वारा सम्भव नहीं है, जबकि ईश्वर के को जानने का विषय अन्तर्ज्ञान में निहित है। अन्तर्ज्ञान का मतलब है कि मन से स्मरण करने पर ईश्वर की उस दृश्य शक्ति का आभास मात्र होता है।

नित्य वायु के अस्तित्व को वैशेषिक दर्शन में सिद्ध किया गया है। इसी सम्बन्ध में कुछ विद्वानों ने विरोध दर्ज किया है। अस्तित्व प्रत्यक्ष और अनुमान का विषय नहीं है। अन्तर्ज्ञान का विषय बोध हमें प्राचीन ऋषियों की ज्ञान परम्परा से मिलता है। कणाद विश्व को अदृष्ट तत्व के रूप में समझाकर स्वयं संतुष्ट हो गयें। उनके अनुयायी इस बात का गहन चिन्तन कर अदृष्ट रूप स्वत: अस्पष्ट और धर्म विहीन है। इसी कारण इनके अनुयायी ईश्वर की इच्छा पर निरूपित स्वीकार करते हैं।

न्याय दर्शन में ईश्वर के अस्तित्व की सत्ता को बहुत ही बारीकी से चिन्तन किया गया है। यहाँ तक ईश्वर का कोई शरीर नहीं है। फिर भी उसमें उगमे इच्छा शक्ति, ज्ञान और प्रयत्न ये सभी भी गुण वर्त्तमान में भी विद्यमान दिखाई देते हैं। क्योंकि गति और लय दोनों में सर्वशक्तिमान ईश्वर है। यहीं अनन्त ज्ञान के सागार के समान विद्यमान दिखाई देता है। यहीं इस संसार को बनाने वाला और संहार करने वाला है। आत्मा, मन, दिक्, काल और भौतिक परमाणुओं की सहायता से सृष्टि करने वाला है। यहीं परमाणु आदि और नित्य के रूप में सम्पूर्ण जग में विद्यमान है।

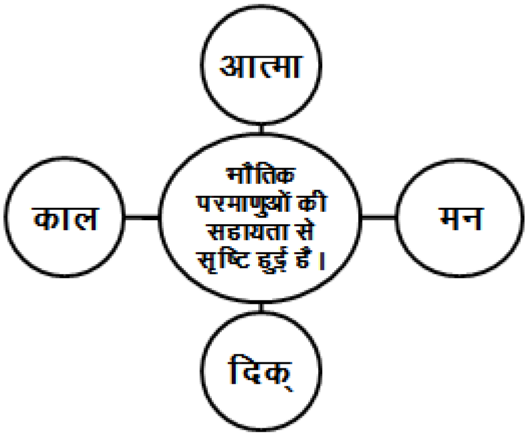

इस प्रकार की सभी सत्ताएँ इस जगत् में विद्यमान है। फिर भी परिर्तनीय है। इस प्रकार से वेदान्त दर्शन के सिद्धान्तों के आधार पर यह ईश्वर एक मकड़ी की भाँति अपने उदर से सृष्टि की उत्पत्ति नहीं करता है। वो तो कुम्भकार की भाँति नित्य परमाणुओं के उपादनों के द्वारा ही निर्मित करता है। इसीकारण इस सृष्टि के निर्माण में उसे निमित्तकारण माना गया है। उसे उपादान कारण नहीं उसे जो विश्वकर्मा आदि नामों से विभूषित किया गया है।

यहाँ तक अधिकांश भाष्यकारों ने सांख्य को निरीश्वरवादी दार्शनिक के नाम से स्वीकार करते हैं। जो सनातन सांख्य दर्शन को स्वीकार करने वाले दार्शनिक है। उनमें से ईश्वर के अस्तित्व के विरूद्ध निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किया है।

इस संसार में सम्पूर्ण वस्तुएँ मूल रूप से कार्य रूप में परिवर्तित होती रहती है। जिसका न आदि है और न ही अन्त है। फिर भी उसका आदि कारण भी होना आवश्यक है। इस प्रकार के आदि कारण ईश्वर पर नहीं टिका हुआ है। ईश्वर तो नित्य एवं निर्विकार है। ईश्वर स्वयं अपरिणामी है। वह किसी वस्तु का निमित्ताकारण नहीं बन सकता है। जबकि प्रकृति नित्य होकर भी

*शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

परिणाम स्वरूप दिखाई देती है। अत: यहीं जगत् का आदि कारण होगा।

सांख्य दार्शनिकों ने प्रकृति को जड़ माना है अर्थात् उसकी गति को निरूपित करने वाली चेतना की सत्ता ही आवश्यक होती है। फिर भी ऐसे कार्य जीवात्माओं के द्वारा ही सम्भव नहीं हो सकते हैं। यहाँ तक उनका ज्ञान सीमित है। जब तक उसकी प्रकृति का संचालन करने के लिये एक ईश्वर प्रकृति की संचालन की क्रिया को कैसे निरूपित कर सकता है। क्योंकि ईश्वर को प्रकृति का नियामक माना गया है। उसने अनेक प्रकार की कठिनाईयों को उत्पन्न किया है। फिर भी सृष्टि रचना में अपना अतृप्त मनोरथ रहना किसी भी व्यक्ति के लिए असम्भव होता है। उसी प्रकार से एक तो अपने किसी स्वार्थ के बिना कोई व्यक्ति दूसरे के हितों को व्यवस्थित नहीं कर सकता है। यहाँ तक एक-दूसरे को इस संसार में मानव को पाप और कष्ट सहन करने पड़ते हैं। इस सृष्टि की रचना जीवों के हित साधनार्थक नहीं प्रतीत हुई है। फिर भी भारतीय दार्शनिक चिन्तन के लिए सांख्य की सबसे अच्छी देन तीनों गुणों को कहा जा सकता है, जो गुण की अपेक्षा बहुत कुछ निर्माण साधक अग बन गये हैं। फिर भी पुरूष और प्रकृति में समान रूप से अभिव्याप्त रहता होगा।[7]

ईश्वर में विश्वास करने आदि से जीवों की स्वतंत्रता से अमरत्व की भावना विखण्डित होने लगती है। यहाँ तक जीव ईश्वर का अंश मात्र होता है तो उसमें ईश्वरीय शक्ति उत्पन्न होती है।

इस प्रकार से यदि जीव ईश्वर की सृष्टि है तो वे नश्वर भी होगा। क्योंकि इस प्रकार के प्रमाणों से व्यक्ति को यह ज्ञान होने लगता है कि ईश्वर की सत्ता नहीं है। अर्थात् पुरूष और प्रकृति के कल्याण के लिये जगत् का निमार्ण हुआ है।

यह सम्पूर्ण विश्व की समस्त वस्तु स्वतंत्र और परतंत्र, सीमित एवं सापेक्ष होती है। विश्व का कारण सीमित एवं सापेक्ष पदार्थ को नहीं माना जा सकता। इसलिए विश्व स्वतंत्र, असीम और निरपेक्ष होती है। यही सत्ता प्रकृति को निरूपित भी करती है।

ईश्वरोऽयं निराकार: सर्वज्ञ: सर्वशक्तिमान्।
अनाविरविकारी चानन्त सर्वगतो विभु।।
सच्चिदानन्द रूपोऽपि दयालुन्ययितत्पर:।
सर्गे स्थितौ लये हेतु: नित्यतृप्तो निराशय:।।[8]

इस संसार में सांख्य दर्शन को छोडकर सम्पूर्ण आस्तिक दर्शन ईश्वर की अस्तित्व को स्वीकार करता है। न्याय दर्शन में ईश्वर की सत्ता को प्रमाणित करने के लिए लोगव्यावहार की दृष्टि से अनेक युक्तियाँ प्रस्तुत की गई है। जो समाज की दृष्टि से बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगी।

इस जगत् की सम्पूर्ण वस्तुएं अनेकानेक रूपों में सभी जगह विद्यमान हैं, फिर भी वे किसी न किसी रूप में मान्य है। यह विश्व की विभिन्न वस्तुओं का विश्लेषण किया जाना परम आवश्यक होता है। जब विश्व की अनेक वस्तुओं का विश्लेषण किया जाता है। उसमें मूल रूप से सुख-दु:ख और उदासीनता के बीज उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार से सिद्ध होता है कि सम्पूर्ण जगत् की वस्तुओं का कारण एक ऐसा कारण भी है। जो सम्पूर्ण सुख-दु:ख आदि में सामिल है। यहाँ तक सम्पूर्ण जीवन की परम्पराओं का परिणाम की व्याख्या भी निश्चित रूपों में की जाती है। इस प्रकार से सम्पूर्ण उदासीनता का भाव वर्तमान में स्थित है।

यह विश्व कार्य है उसका भी कोई न कोई कारण होगा है। सत्कार्यवाद के अनुसार कार्य अव्यक्त रूप से कारण में अन्तर्भूत होता है। विश्वरूपी कार्य का कारण ऐसी वस्तु को जिसमें सम्पूर्ण विश्व अव्यक्त रूप दिखाई देता है। वह प्रकृति का कारण मात्र है। इससे सम्पूर्ण पृथ्वी का प्रकृति चक्रों में इस संसार का निरूपण होता दिखाई दे रहा है।

इस विश्व की ओर दृष्टिपात करने की शक्ति सम्पूर्ण विश्व में दिखाई देती है। उनका संगठित होना। एक प्रकार का मूल प्रकृति का गुण माना जा सकता है। वास्तव में यहीं प्रकृति के कारणतावाद के विशेष गुणों पर निर्भर करता है।

इस सृष्टि में एक कार्य है जो कारण की ओर संकेत करता है। सृष्टि का कारण स्वयं विश्व नहीं हो सकता है। फिर भी उसका भी कोई न कोई कारण अवश्य होगा। यदि विश्व का कारण एक पदार्थ को स्वीकार किया जाय तो उससे पदार्थ आदि गुणों के परिणामों को 'अनवस्था दोष' के बीज उत्पन्न होगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ऋग्वेद, 5/85/7, पृष्ठ 350
2. प्रशस्तपादकृत पदार्थ धर्म, संग्रह, पृष्ठ 7
3. न्यायभाष्य, 1/1/19, न्यायवर्तिक , 4/1/10/3/1/19/22-25-27
4. वैशेषिक सूत्र, 2/1/18, पृष्ठ 9
5. वैशेषिक सूत्र, 2/1, 19, पृष्ठ 9
6. वैशेषिक सूत्र, 2/1/9-14, पृष्ठ 8
7. डॉ. ए.बी. कीथ, अनु. डॉ. मग्लदेव शास्त्री, संस्कृत साहित्य का इतिहास, मोतीलाल बनारसीदास,1986, पृष्ठ 615
8. वाचस्पति गैरोला, भारतीय दर्शन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1966, पृष्ठ 245

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Integrated Impact of Land Use and Transport System on Environment of Indore Metropolis

Hemant Mandloi*

Abstract - Integration of land use and transport decision to achieve sustainable travel behaviour has been considered and integral element for sustainable urban development. However, before the popularity of urban sustainability concept, land use and transport interaction had been scrutinized as strictly separate entities in the urban planning and development domains.

Impact of fast growth of population has been observed on pattern and intensity of transport system. It has never been thought of consequences that develop from the negligence of environment to meet the needs of fast-growing urban population such as housing, industries and basic infrastructure for transportation. In order to achieve sustainable development, it is essential to take care of various aspects related to pollution, namely air, sound, industrial and other type of pollution. It is prerequisite to understand the linkgage and interaction exists between different components. Baic need is to aggregate systemactic, detailed, reliable, timely and accurate information on various factors of urban environment according to natural, administrative and hierarchical units.

The Indore city of Madhya Pradesh known as financial capital of state; center coordinate of city is 23^0 43' N & 76^0 42'E. Area of city is 530 sq. KM. Population of city is 1960631 (census 2011).

Data source include both primary and secondary sources. Secondary data has been collected from the office of the Central Pollution Control Board (CPCB), Indore, Road, Transport office and Municipal Corporation. Prmiary data is based on personal observation at selected location of the city. The study is supported by graphical representations of the time series data; assessment of exceedance factor based on air quality standards for different land use location in the city. In this context timely periodic data are supplement to primary data and methods of integration of spatial and non-spatial data of generate planning scenario for environmental management of Indore Metropolis.
Keywords - Transport, Land Use, Environment, Climae change, Sustainable urban development.

Introduction - Integration of land use and transport decision to achieve sustainable travel behaviour has been considered and integral element for sustainable urban development. However, before the popularity of urban sustainability concept, land use and transport interaction had been scrutinized as strictly separate entities in the urban planning and development domains.

The process of urbanization starts from minor settlement to major encroaching upon a rich environment. Impact of fast growth of population has been resulted on traffic pattern and intensity of transport network which depletes the natural environment and pollutes the environment. It has never been thought of results develops from the negligence of environment to meet the needs of fast-growing urban population and its basic infrastructure such as transportation, housing, industries. In order to achieve sustainable development, it is essential to take care various aspects related to air pollution along with surface and ground water pollution, solid waste desposal, slums and industrial pollution because Pollutants directly affect the population lives in city.

The prime objective is to study the quality of air and discuss the plan to mitigate the pollution. It is prerequisite to understand the linkage and interaction exists between different components of urban land use and pollution. Basic need is to aggregate systematic, detailed, reliable, timely and accurate information on various facts of urban environment according to natural, administrative and hierarchical units. In this context remote sensing data GIS techniques play major role by providing reliable, accurate, timely periodic data supplement to primary data and methods of integration of spatial and non-spatial data to generate planning scenario for environmental management of Indore Metropolis.

Study Area - The Indore city of Madhya Pradesh knows as financial capital of state; centre coordinate of city is $23^0$43' N & $76^0$42'E. Area of city is 530 sq. KM. & MSL height is 550.30 meters. Population of city is 1960631 (census 2011). City is divided into 85 wards for better administration.

Objective of the study: The main objectives of this study are:

1. To review the state of ambient air on a special –

*Research Scholar, Shri Atal Bihari Vajpayee Govt Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

temporal scale.

2. To take into consideration the growth tends master vehicle in the city.
3. To evaluate peak hour traffic volume and exceedance factor of pollutant major locations of the city.
4. To suggest some planning measures to improve the quality of urban environment.

Database and Methodology - The available air quality data at major location of Indore for a span of twelve year serve as the major data source in this study. Data source include both primary and secondary sources. Secondary data has been collected from the office of the Central Pollution Control Board (CPCB), Indore, Road Transport office and Municiapl Corporation. Primary data is based on personal observation at selected location of the city. The study is supported by graphical representations of the time series data; assessment of exceedance factor based on air quality standards for different land use locactions in the city. In this context timely periodic data are supplement to primary data and methods of integration of spatial and non spatial data to generate planning scenario for environmental management of Indore Metropolis.

Discussion

Transport sector – The major cause of pollution in Indore - The main sources of particulate matter emission are linked with the road transport. As of late technologies continue to penetrate the market and emission sector is believed to be a large contributor to air pollution level in Indore, particularly to that of particulate matter.

Travellers formulate their preferences based on differences in performance, convenience of travel, quality, economics, safety and other factors. However, few travel choices are motivated by level of resource consumption, pollution control or local climate change concerns. The rising trend in motor vehicle ownership in the city, particularly that of two wheelers. Diesel operated cars, support this segment.

Private vehicles consist of cars, scooters/motorcycles/ mopeds. Commercial vehicles are a mix loaded vehicles, taxi, three-wheeler. Buses and others like tractor, etc. According to standard norms, Public Transport (PT) in the city is expected to cover substantially higher vehicle km. than private vehicles. But in Indore as the graph has pictured, the number of private vehicles is quite high compared to public transport. It can be easily ascertained that the pollution load contributed per vehicle by the city private transport is the major contributor of pollutants load. As the total number of PT is quite low, so must be its share in over all auto emission load. However, the number and density of PT varies at different zones of Indore. In the central areas, Agra-Mumbai road, PT including public buses, nagarsewa has quite frequent runs particularly during the peak traffic hours.

Traffic Mix/Minute at Some Selected Location in Indore Metropolis - At different location of the city, the volume of autos, tempos and other buses vary in different proportion. The numbers of two wheelers have superseded (in terms of road spaceconsumption) other modes variedily at all the commercial areas. This is particularly true at Kothari Market and Palasia square, where the cars, mini buses, auto, tempos have largely outnumbered by two wheelers. The per minute traffic mix estimated (through personal observation) manually provides a first hand evidence to this effect.

The Pollutants of concern in Indore - The Central Pollution Contraol Board has notified the National Ambient Air Qaulity Standards (NAAQS) for various pollution. Annual and 24 hourly average standars are fixed for SO_2, NO_2, SPM, RSPM (Size less than 10 microns), lead (Pb), ammonia (NH_3). One and 8-hourly standards are fixed for CO_2. Some additional parameters like CO_2, Polyclinic Aromatic Hydrocarbon (PAH), Ozone, benzene, trace metals are additionally monitored in Delhi and some other cities. Different sets o standards are prescribed for industrial areas, residential, rural ad other areas, sensitive areas, which are based on land use pattern.

In Indore, TSPM and RSPM were parameters of air quality till year 2009 but after changed norms by pollution control borad specific particles SO_2, NO_2, PM10 are measured. There are many circumstances it is desirable to have a means of describing air pollution at one overall equity, rather than in term of series of concentration of several individual pollutants. This should be done in term of more familiar to the public or in term that incorporated the significance of concentration in term of effects. These indirect methods of expressing pollutant concentration or levels in one from are knows as 'Air Pollution Index (API)'. When only two parameters were used it is easy to understand the fluctuation and causes associated with it till 2009. So in last three years (2010-2012) measuremen of more than two parameters of air gives the liberty to go with API to get present status and its expected effect on population.

Determination of Air Pollution Index (API) & expected impact :

*API = $\sum$ (Sum of all pollutant parameters/standard value of parameters) *(1000/no. of parameters)*

API Values	Pollution Status	Expected Impact
0-25	Low	Not expected
26-50	Medium	Not expected for general population
51-100	High	Acute health effect is not expected but chronic effect may be observed if one is persistently exposed to such levels.
101-200	Very High	People with existing heart or respiratory illness may notice miled aggravation of their health condition. Generally healthy individuals may also notice some discomfort.
201-500	Severe	People with existing heart or

		respiratory illness may experience significant aggravation of their symptoms in the healthy population as Irritation, wheezing, phlegm, coughing & sore throat)

Table no. 1 (see below)

Air Pollution Index (API) in different land use pattern in between year 2010-2012

Station	2010	2011	2012
Polo Ground (Industrial)	104.76	96.71	100.32
Kothari Market (Commercial)	92.6	103.87	112.43
Vijay Nagar (Residential)	72.27	96.15	102.32

API change in last three years (2010-2012) for different Land use pattern in Indore.

Above mentioned table clearly shows a growth in pollutants and API in commercial and residential monitoring station. In such areas pollutants are directly controlled through transport emission and new construction. So it can be minimise through control of transport related emission. The major reduction in emission of NO_2 occurs in the combustion process in energy and road transport sectors. An increase in level of NO_2 in commercial and residential areas of Indore is also clear indication of rising growth of traffic volume and a greater level of auto emission.

Plan for pollution mitigation - To exactly identify the cause of rise in pollutants in selected areas, the air quality monitoring program need to be improved. In Indore, transport sector is the most threatening source of air pollution. To overcome the transport related problems, some associated aspects need special attention of planners. Public transport as the most viable mode, need to be facilitated by road segregation. Separate lanes for fast moving vehicles which has been partially done through BRTS needed to be expand in city as whole. Proposed Metro & Mono rail project done through BRTS needed to be expand in city as whole. Proposed Metro & Mono rail project will be helpful in this regard so they eed to implement soon. Two wheelers including cycling paths; road widening and declaration of one ways to easy traffic flow, some can be declare as No Vehicle Zone to avoid mash up in the central parts of the city; construction of the flyovers in major squares; installation of red lights control accordinging to traffic volume at several intersection could of immense help in easing out traffic snarls at selected points. Moreover, people's participation and road awareness level need to be improved in these directions.

Conclusion - In indore tighter emission standards and better fuel quality are responsible for much reduction of pollutants. However, the constant rise of traffic volume keeps the emission rate at high level. This is particulary observed in API data, reveals continuous increase in commercial from 92.6 to 100.32 and residential 72.27 to 102.32 respectively just in three years. Data also shows indication of rising growth of traffic volume and a greater level of auto emission. The study is supported by level of exceedance of pollutants above the defined standards.

The study seeks to find the possible impact in city environment for change in pollution level in each of the land use areas study and put forward some proposal for pollution mitigation. According to one of 2005 news report Indore was fourth polluted city in India; While taking steps to reduce the pollutants it is continuously tending towards very high pollution level. This condition leads to respiratory illness, mild aggravation of health condition even in healthy individual's API suggests the condition is getting more intense in residential and commercial sectors in which transport sector is mainly involed.

References : -

1. Colls Jeremy; "Air Pollution", Spon Press, 2002 (2nd edition)
2. Rao, M. and Rao, H.V.N.; "Air Pollution", McGraw Hills Education, New Delhi, 2004.
3. Currie & Donya; "WHO:Air Pollution a Continuing Health Threat in World's Cities, (The Nation's Health Vol. 42 No. 01, February 2012.
4. Master Plan 2011, 2021

Table no. 1 : Annual average TSPM & RSPM concentration (micro-gm/m^3) in different land use Areas in Indore 2000-2009.

Area	Value	2000	2001	2002	2003	2004	2005	2006	2007	2008	2009
Industrial	TSPM	536	497	433	258	289	307	209	226	343	371
	RSPM	42.88	42.19	33.52	34.89	29.38	34.05	127	148	237	229
Commercial	TSPM	432	416	328	308	302	300	191	207	321	307
	RSPM	42	41.9	32.23	29.45	29.36	33.83	116	116	214	198
Residential	TSPM	315	290	220	191	143	138	153	155	214	200
	RSPM	42.07	43.03	33.69	31.38	34.08	35.39	95	92	136	107

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

गरीबी को बेचने वाले सौदागरों की कथा नरक मसीहा

संदीप कुमार यादव *

प्रस्तावना – स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद समाज में सरकार के लिए कार्य करने वालों की एक ऐसी दुनियाँ, जिसमें समाज की उन बुराइयों को मिटाने के लिए गाँधी तथा अम्बेडकर के नाम पर संस्थाएँ खड़ी की जाती हैं। संस्थाओं का उद्देश्य सरकार द्वारा मिलने वाले अनुदान से अपनी झोली भरना है। व्यक्तिगत हितों के लिए काम करने वाले लोग न ही सरकार के और न ही आम आदमी के हितैषी होते हैं, बल्कि ये लोग अनुदान से मिलने वाले हिस्से के लिए काम करते हैं। ऐसी संस्थाओं को गैर सरकारी संगठन तथा इनके मालिकों को सरकार के एजेन्ट कह सकते हैं। भगवानदास मोरवाल का उपन्यास नरक मसीहा इन्हीं मालिकों की कथा कहता है। गैर सरकारी संगठन की इस व्यवस्था को स्पष्ट करते हुए कथाकार लिखता है कि – 'एनजीओ यानी ग्रासरूट एक्टिविस्टों को नौकरी देने की एजेंसी .... आमजन की लामबंदी और उनके आंदोलनों को छिन्न–भिन्न कर देने वाला संगठन ..... सत्ता की हर दरार में अपनी घुसपैठ बनाने वाला गिरोह .... एनजीओ यानी लुटेरे साम्राज्यवादियों के हित साधने और पूँजीवाद के दामन पर लगे खून के धब्बों को धोने वाले रिटायर्ड क्रांतिकारियों का भर्ती केन्द्र।'[1] स्पष्ट है कि संगठन के नाम पर व्यक्तिगत हितों की पूर्ति करने वाले लोग जो समाज के आम आदमी को मिलने वाले अनुदान से अपनी झोली भरते हैं।

भगवानदास मोरवाल का उपन्यास नरक मसीहा साहित्य जगत का पहला उपन्यास है, जिसमें गैर सरकारी संगठनों की कारगुजारियों को उजागर किया गया है। कामरेड सोहनलाल प्रचंड तथा गंगाधर आचार्य समाज को बचाने के लिए लड़ रहे है तो दूसरी ओर कबीर, सानिया पटेल, अमीना खान, बहन भाग्यवती समाज की व्यवस्था को कुचलकर अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं की पूर्ति के लिए गैर सरकारी संगठनों को धारण करती हैं। इन्हीं दो ध्रुवीय व्यक्तियों के बीच गैर सरकारी व्यवस्था को समझाया गया है।

गाँधी और अम्बेडकर के नाम पर गैर सरकारी संगठनों का निर्माण कर लाखों, करोड़ो का गमन करने वाले लोगों के लिए अब इनकी कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि इनके नाम का उपयोग बहुत हो चुका। गंगाधर आचार्य से बहन भाग्यवती इनकी सार्थकता को स्पष्ट करते हुए कहती है कि –'आचार्य जी, बापू या गांधी का हमने बहुत तेल निकाल लिया। इनके नाम पर लोगों को बहुत ठग लिया। बहुत खा–कमा लिया। कुछ नहीं बचा है अब इनमें। वैसे भी अपने बापू अब कुलीन बैठकों की शोभा और सरकारी दफ्तरों की डिस्टेंपर उखड़ी दीवारों पर टाँगने–भर की वस्तु बनकर रह गये हैं।'[2] यह दुर्दशा उन दलालों के लिए मायने नहीं रखती जो सिर्फ कमीशन के लिए गाँधी और अम्बेडकर का प्रयोग करते हैं।

समाज में महिलाओं के खिलाफ होने वाले अत्याचार को लेकर एक आंदोलन चलाया जाता है जिसमें महिलाओं की समान भागीदारी की बात होती, लेकिन क्या यह भागीदारी कभी मिली ? नहीं। इसी अधिकार की लड़ाई नरक मसीहा में रिजर्वेशन एक्सप्रेस या कारवाँ अधिकार यात्रा नाम से शुरु होती है और इसमें देश के विभिन्न हिस्सों में होने वाले अत्याचार से पीड़ित महिलाओं को बुलाया जाता है। भँवरी देवी, सुल्ताना शेख, संपत पाल प्रमुख है। समाज विज्ञानी डॉ. वंदना राव कहती है कि – 'और अगर इसमें भँवरी देवी, सुल्ताना शेख, मुशरत जहाँ, रूखसाना कौसर, संपत पाल, इरोम शर्मिला शानू को आमंत्रित करे।'[3] यहाँ रिजर्वेशन एक्सप्रेस के माध्यम से उपर्युक्त महिलाओं को सम्मान दिलाने की बात नहीं कही जा रही है, यहाँ तो गैर सरकारी संगठनों के लिए माहौल बनाया जाता है कि जितनी इसकी लोकप्रियता बढ़ेगी कमीशन भी उतना ही बढ़ेगा।

गैर सरकारी संगठनों द्वारा भीड़ जुटाने के लिए एक सार्थक प्रयास यह किया जाता है कि महिलाओं और पुरुषों को प्रति व्यक्ति के हिसाब से कुछ रूपये दिये जाते है, जिससे कार्यक्रम में लोगों के खालीपन को भरा जा सके और ये लोग गैर–सरकारी संगठनों के लिए हथियार की तरह है। 'कित्ते में सौदा तय हुआ मिसेज मौर्य ? आते ही सरला बजाज ने वही सवाल किया जो बहन भाग्यवती समेत सब के अंदर कुलबुला रहा था।'[4] पूँजीवादी ताकतों के लिए गरीबी उस भेड़–बकरी की तरह है जिसकी गरदन जब चाहो दबोच लो। हकीकत से इनको कोई फर्क नहीं पड़ता। गरीबी का विभत्स रूप उस समय सामने आता है जब एक चैनल आईडी महिला की हकीकत को उजागर करने के लिए उससे बात करता है – 'फिर इस मिर्ची पाउडर का क्या करोगी, जिसे यहाँ से ले जा रही हो ? अगर दो घंटे के दो सौ रूपये, आधा सेर पिसी मिरच और बाल बच्चेन कू कछु खाबे–पीबे कू मिल रो है।'[5] किसी भी समाज के लिए गरीबी की यह विडम्बना उसके उन्नत होने में बाधक है, लेकिन गैर सरकारी संगठनों की दुनियाँ के लिए गरीबी दूर करने के लिए गरीब से कोई सहानुभूति नहीं रखता है। यहाँ बैठे लोग कभी नहीं चाहेंगे कि इस समाज से गरीबी दूर हो, क्योंकि गरीबी से ही इन संगठनों की दुनियाँ स्थिर है। जिस दिन समाज में जागरूकता आयेगी गैर सरकारी संगठनों की दुकान बंद हो जायेगी।

समाज की आधी आबादी कही जाने वाली स्त्रियों की हकीकत को राहत फाउंडेशन के माध्यम से उजागर करते हुए यह दिखाया गया है कि 'मेवात में एक भैंस की कीमत में बिकती है चार औरतें।'[6] इसकी हकीकत यह है कि पश्चिम बंगाल, झारखंड, असम और बिहार आदि राज्यों से लोग औरतें लाकर मेवात में बेचते हैं और यह खरीद–फरोख्त एक से दूसरे और दूसरे से तीसरे व्यक्ति तक होती है अर्थात् यदि एक व्यक्ति को कोई महिला पसंद नहीं आयी तो वह दूसरे को बेच दी जाती है। यह क्रम और भी आगे बढ़ता है। इस व्यवस्था को रोकने के लिए हरियाणा तथा राजस्थान सरकारें

* शोधार्थी (हिंदी) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कुछ कार्यक्रम चलाती है। राहत फाउंडेशन इसी का हिमायती है, लेकिन संगठन के लोगों को इनकी अच्छाई से कोई मतलब नहीं है। फाउंडेशन के नाम पर मिलने वाली राशि का बटवारा कैसे हो इसकी वास्तविकता आप को सन्न कर देगी कि गरीबों के पैसों को किस तरह संगठनों में बैठे लोग आसानी से हस्तगत कर लेते हैं। बहन भाग्यवती के माध्यम से इसको समझ सकते है – 'मैंने पूरी निष्पक्षता के साथ जो बँटवारा किया है, उसके अनुसार ग्रासरूट और राहत फाउंडेशन के हिस्से में तीस–तीस और सर्वहारा फाउंडेशन के हिस्से में चालीस प्रतिशत आयेगा।'[7] गैर सरकारी संगठनों का यही निकृष्ट कार्य समाज के उन गरीबों के लिए किसी कुठाराघात से कम नहीं है, क्योंकि यह उनकी जरूरतों को पूरा करने के लिए था। साम्राज्यवादी ताकतों की बढ़ती मानसिक विकलांगता से गरीबों को राहत नहीं मिलने वाली और यह व्यवस्था समाज में मुट्ठी भर लोगों में हस्तांतरित होकर रह जायेगी।

प्रस्तुत व्यवस्थाओं को उजागर करने वाले कामरेड सोहन लाल प्रचंड अपने बेटे तथागत को स्पष्ट रूप से गैर सरकारी संगठनों की यथार्थता को बताता है –'एनजीओ नहीं बाबूजी ट्रस्ट है। उलझाना चाहा बेटे तथागत ने पिता को। चलिए ट्रस्ट सही। यह तो और भी अच्छी बात है। ट्रस्टी भी तुम दोनों पति–पत्नि रहोगें, क्यों ?' आगे फिर 'प्रचंड' कहता है कि 'माना इस आर्थिक विषमता और जातिवादी समाज में ऐसा करना कोई बुराई नहीं है। मगर संघर्ष और कुर्बानी के जरिए हक दिलाने के लिए लोगों को इकट्ठा करने के बजाय उसमें मुफ्त में मिली खैरात से जीने की आदत डालना बुराई है। बुराई है इन साम्राज्यवादी शोषण और मुनाफे की दुकानों का सेल्समैन बनने में।'[8] प्रचंड का प्रहार स्पष्ट है कि संगठनों के नाम पर होने वाले लूटपाट और पूँजीवादी ताकतों के हाथ की कठपुतली बनने से अच्छा है कि खुद की मेहनत से जीविकोपार्जन किया जाय और गरीबों को मेहनत करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

संगठन में होने वाले लूटपाट और गरीबों के शोषण से जितनी राशि मिलती है उसका ज्यादातर हिस्सा लोग मनोरंजन और अपनी जरूरतों को पूरा करने में खर्च करते है। गंगाधर आचार्य के लिए यह असहनीय है, क्योंकि गाँधीवादी विचारों के पोषक आचार्य जी को सरकारी कागजों को पूरा करने और उसमें कमीशन के लिए उकसाया जाता है तो गंगाधर साफ मना कर देता है – 'मेरा सामर्थ्य और मेरी हिम्मत अब जबाव दे चुकी है ..... बहन जी, कृपया मुझे इस सबसे अब मुक्त करिए।'[9] गंगाधर की स्पष्टता संगठनों में बैठे सरकारी दलालों के गाल पर तमाचा है, लेकिन इस तरह संगठन की व्यवस्था को बदला नहीं जा सकता है।

स्पष्ट है कि गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से सरकार और आम आदमी के बीच दिवार खड़ी करने वाले लोग अपनी जरूरतों के अनुसार लोगों को भ्रमित कर अपनी झोली भर रहे हैं। इन संगठनों को मिलने वाली राशि कर मुक्त होती है, जिसका हिस्सा बनने में संगठनों और सरकार में बैठे लोगों को कोई परेशानी नहीं होती है। यदि स्पष्ट शब्दों में कहे तो यह सरकार प्रायोजित एजेंसियाँ है जो जरूरत के हिसाब से खड़ी की जाती है और कागजों की खानापूर्ति कर पैसे का हस्तांतरण कर लेती है। यही प्रक्रिया गरीब बस्तियों में राहत के नाम पर विदेशी संस्थाओं से भी पैसे लूटे जाते है। देश की गरीबी का निवारण न कर गरीबी बेचने वाले सौदागरों का काला चिट्ठा नरक मसीहा का एक हिस्सा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भगवानदास मोरवाल, 'नरक मसीहा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 142.
2. वही, पृ. 11.
3. वही, पृ. 19.
4. वही, पृ. 45.
5. वही, पृ. 81.
6. वही, पृ. 148.
7. वही, पृ. 150.
8. वही, पृ. 126.
9. वही, पृ. 286.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

The Relevance of Human Rights in the Indian Constitution

Mr. Bijay Kumar Yadav* Dr. Gurpreet Singh**

Introduction - The provisions of Part III of our Constitution which enumerate the fundamental fights are more elaborate than those of any other existing written constitution relating to fundamental rights, and cover a wide range of topics.

The Constitution itself classifies the fundamental rights under seven groups as follows:

(a) Right to equality (b) Right to freedom (c) Right against exploitation (d) Right to freedom of religion (e) Cultural and educational rights (f) Right to property (g) Right to constitutional remedies. Of these the Right to Property has been eliminated by the 44th Constitutional Amendment Act (1978) so that only six rights now remain as fundamental rights.

1. **Equality before law -** Article 14 of the Constitution provides that "the state shall not deny to any person equality before the law or the equal protection of the laws within the territory of India.

2. **Prohibition of discrimination on grounds of Religion, race, caste or place of birth -** Prohibition of discrimination on the grounds of Religion, Race, Caste, Sex or Place of Birth : According to the Article 15, "The state shall not discriminate against any citizen on grounds only of religion, race, caste, sex place of birth or any of them. Further, on the basis of any of these grounds a citizen cannot be denied access to shops, pubic restaurants or the use of wells, tanks, bathing ghats. roads and places of public resort maintained wholly or partly out of state funds or dedicated to the use of the general public."

3. **Equality of opportunity in Matters of Pubic Employment -** Article 16 guarantees equality of opportunity in matters of public employment. The state is prohibited from showing any discrimination against any citizen on grounds of religion, caste, race, sex, descent, place of birth or residence.

4. **Abolition of Untouchability -** Article 17 abolishes 'untouchability' and its practice in any form is made an offence punishable under the law. Parliament is authorized to make a law prescribing the punishment for this offence (Article 35).

5. **Article 19(1) -** In the original Constitution, there were seven freedoms in Articles 19(1) but that one of them, namely, 'the right to acquire, hold and dispose of property' has been omitted by the Constitution (44th Amendment) Act, 1978, leaving only six freedoms in that article. These are:

(a) Freedom on Speech and Expression (b) Freedom of Assembly (c) Freedom of Association (d) Freedom of Movement (e) Freedom of Residence and Settlement (f) Freedom of Profession, Occupation, Trade of Business.

6. **Freedom of Press -** There is no specific provision in our constitution guaranteeing the freedom of the press because freedom of the press is included in the wider freedom of 'expression' which is guaranteed by Article 19(1). Freedom of expression means the freedom to express not only one's own views but also the views of others and, any means, including printing.

7. **Protection in respect or conviction for offences -** Article 20 affords protection against arbitrary and excessive punishment to any person who commits an offence.

8. **Protection of life and liberty -** Article 21 of our Constitution provides that "No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to the procedure established by law".

9. **Protection against Arrest and Detention -** Article 22 guarantees three rights: First, it guarantees the right to every person who is arrested to be informed the cause of his arrest; Secondly, his right to consult and to be defended by a lawyer of his choice; Thirdly, every person arrested and detained in custody shall be produced before the nearest Magistrate within a period of twenty-four hours and shall be kept in continued custody only with his authority.

10. **Preventive Detention -** Preventive Detention means detention of a person without trial. The object of Preventive detention is to prevent a person from doing something and the detention in this case takes place on the apprehension that he is going to do something wrong which comes within any of the grounds specified by the Constitution.

11. **Right against exploitation -** Article 23 and 24 deal with right against exploitation. This right seeks to ban traffic in human beings, beggar or any other form of forced labor. Employment of children below 14 years of age in any factory or mine or other risky occupation is also prohibited by law.

12. **Right to freedom of Religion -** India is a secular

*Research Scholar (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

state, a state which observes an attitude of neutrality and impartiality towards all religions. The attitude of impartiality is secured by the Constitution by several provisions (Articles 25-28).

13. Cultural and educational rights - The Constitution provides that a minority shall have the right to conserve its own language, script, literature and culture. Admission to any state aided educational institution shall not be refused to anybody on grounds of religion, race, caste or language (Article 29). Article 30 provides that all "minorities whether based on religion or language, shall have the right to establish and administer educational institutions of their choice".

86th Amendment Act 2002 - By 86th Constitutional Amendment Act, 2002 for Article 45 of the Constitution, the following Article is substituted:

"45. The state shall endeavor to provide early childhood care and education for all children until they complete the age of six years" (Fadia 2007: 114-123).

Status of Human Rights in Independent India - We got freedom. We framed our own Constitution and system of administration. Most of the human rights listed in the Universal Declaration of Human Rights by the United Nations on December 10, 1948 are incorporated in Part III of the Constitution of India. This part on fundamental rights declares that all laws inconsistent with them are void and these fundamental rights are enforceable in courts of law. Some important rights are enforceable in courts of law. Some important rights of India citizens are - right to equality (Articles 14-18), right to freedom (Articles 19-22), right against exploitation (Articles 23-24), right to freedom of religion (Articles 25-28), cultural and educational rights, of religion (Articles 25-28), cultural and educational rights, protecting the interests of minorities (Articles 29-30). Our Constitution incorporates a vast range of political, social, economic, cultural and religions rights of citizens. For ensuring the rights of all citizens, our Constitution allows for some special provisions for scheduled castes, scheduled tribes and other weaker and backward classes of society through the policy of reservation and other means. Untouchability is banned and is an offence. Primary education is free and secondary and higher education is subsidized and is being made progressively free. Physical and mental health is recognized as one of the social rights. India has recognized that human rights and democracy are inseparable and we cannot secure one without the other.

In the region of civil liberties, some tangible improvements have been brought about. The judiciary, free press and voluntary non-governmental organizations have succeeded to a considerable extent in protecting and promoting the fundamental rights (civil liberties) of the people. The broader interpretation given by the Supreme Court of Article 14 (equality before law) and Article 21 (liberty of the person and of the life of individuals) and the system of public interest litigation have succeeded to a noticeable extent in establishing the rule of the rule of law and checking the arbitrary behavior of politicians and public authorities. The role of the judiciary in the protection and promotion of civil liberties and human rights is impressive. Notable achievements have been made in science and technology, economic development, attainment of self-sufficiency in food, and improvements in health parameters - all leading to better human conditions.

The fruits of development have not been shared equitably. Poverty still remains a formidable challenge, with about 40% of the people living below the poverty line. Along with this this, the basic amenities of the like health, education and drinking water are not available to one and all. Child labour and bonded labor exist in many areas, despite laws having been bonded labour exist in many areas, despite laws having been passed to prevent them. Children are engaged in many hazardous industries. Women do not enjoy equal rights with men. There are many instances of violation of human rights of dalits, tribes, and ethnic and religious minorities. The right to information is a right only on paper and legislation in that regard is yet to be passed. Legislation is also necessary for protecting the right only on paper lation is also necessary for protection the right to privacy.

Moreover, there are instances of violation of human rights by the state machinery itself. During the emergency period, there was widespread violation of human rights by the state itself. There are many instances of police torture during investigation into offences, sometimes resulting in custodial deaths. The Terrorism and disruptive Activities (Prevention) Act (TADA) was misused. In many cases, TADA was used against the members of the weaker sections of the society such as adivasis and Muslims. In September 1989, one-third of those facing prosecution under TADA in Andhra were adivasis. In Gujarat, the Act was also used against trade unionists and agitating landless labourers.

Reference:-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

डिण्डौरी जिले में भौतिक पर्यावरण : एक भौगोलिक अध्ययन

किशोर कुमार श्याम *

प्रस्तावना – भौतिक पर्यावरण भौतिक, रासायनिक और जैविक विविधताओं का विशेष योग है। जिसकी अनुभूति कोई भी व्यक्ति या प्राणियों को होती है। इसके अन्तर्गत जलवायु, मिट्टी, जल, वनस्पति, स्वप्रजाति और अन्य प्राणि जगत से की जा सकती है। इसमें पर्यावरणीय दशाओं में देश, काल, दिन के समय, मौसम (ऋतु) आदि अन्य कारकों के अनुसार मुख्य रूप से कई प्रकार की भिन्नता पायी जाती है।

भौतिक और सांस्कृतिक दशाओं के रूप में सभी प्रकार के योग जो मानव के चारों ओर दिखाई देता है। इस प्रकार से उसे प्रभावित भी किया जा सकता है। यहाँ तक भौतिक पर्यावरण में उच्चावच, जलवायु, मिट्टी, वनस्पति, संरचना और विभिन्न प्रकार के जीव-जंतु भी सामिल होते हैं। यहाँ तक सांस्कृतिक एवं मानवीय पर्यावरण में सम्पूर्ण मानवीय क्रियाओं, दशाओं और जनजातीय सांस्कृतिक के भूमिगत दृश्यों को भी शामिल किया जाता है।

पर्यावरण किसी क्षेत्र विशेष की भौतिक व जैविक स्थिति या परिवेश जो किसी जीव या प्रजाति को प्रभावित करती हो। वर्तमान जिला डिण्डौरी 25 मई 1998 से पूर्व मंडला जिले की तहसील में स्थिति था। इसका 25 मई 1998 को जिला बनाया गया है। वर्तमान में यह मध्यप्रदेश के 51 जिलों में डिण्डौरी भी एक जिला के रूप में अपने सौन्दर्य और सांस्कृतिक एकता को प्रदर्शित करता है। फिर भी इस जिले का बहुत बड़ा भाग पहाड़ी और पठारी मालुम पड़ता हैं जो यहां की पर्वत श्रेणियां दूर-दूर तक फैली हैं। यहां आवागमन के साधनों की अपर्याप्तता बनी रहती है। यह जिला मध्यप्रदेश के पूर्वांचल भाग का एक हिस्सा बना हुआ है। यह जिला पुराने समय से ही पिछड़ा रहा और जनजनतीय बहुल्य रहा है। यहां पर सड़क, पानी, बिजली आदि की समस्याएं प्राचीन समय से ही विद्यमान हैं। यहां की धरातलीय बनावट बहुत विषम है। कुछ मैदानी क्षेत्रों को छोड़कर सम्पूर्ण जिला वन क्षेत्र से आच्छादित है प्राचीन समय से निवास करने वाली जन-जातियां अपनी संस्कृति की पहचान प्रदेश ही नहीं देश में भी बनाई हुई है। यहां पर गोंड, बैगा, कौल जैसी आदिम जन जातियां निवास करती हैं जो विषम परिस्थितियों में भी अपनी संस्कृति एवं जीवन यापन की विशेषताओं को कायम रखे हुए हैं। डिण्डौरी जिले में प्राचीन कालीन सभ्यता और संस्कृति के अवशेष आज भी विद्यमान हैं। इस प्रकार सतपुड़ा पर्वत और मेकल पहाड़ियों के मध्य भाग में स्थित जिले का भौतिक पर्यावरण अत्यंत जटिल एवं विषम है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीय शोध सामाग्री के रूप में अध्ययन किया गया है, जिसका मतलब है कि जनजातीय बाहुल्य क्षेत्र डिण्डौरी जिलें के सांस्कृतिक एकता और अखण्डता को बनाये रखना महत्वपूर्ण माना जाता है। इस शोध पत्र की विधि है प्राथमिक एवं द्वितीय शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकालय में उपलब्ध शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है।

शोध समस्या – भौतिक पर्यावरण वास्तव में आज सबसे बड़ी कठिनाई को झेल रहा है। जिसकी मार जनता, वनस्पति, जीव जगत् आदि को झेलनी पड़ रही है। इससे सामाजिक वातावरण भी दूषित हो रहा है। यहाँ तक समाज में होने वाले असीम परितर्वन के परिणाम स्वरूप आज तनाव एक सबसे बड़ी समस्या ह। जो सम्पूर्ण देश की बड़ी समस्या के रूप में उभरकर सामने आ रही है।

उद्देश्य :

1. भौतिक पर्यावरण मानव की सांस्कृतिक विविधताओं को प्रदर्शित करता है।
2. भौतिक संसाधन की प्रधानता को प्रदर्शित करता है।
3. भौतिक पर्यावरण डिण्डौरी जिले की एकता और अखण्डता को प्रदर्शित करती है।

वर्तमान डिण्डौरी जिला मध्यप्रदेश के पूर्वोत्तार भाग में स्थित मण्डला जिले का अभिन्न अंग है जो कि शहडोल सम्भाग के अन्तर्गत कार्यरत है। यह जिला मध्यप्रदेश की भौगोलिक यह जिला मेकलपर्वत श्रृंखला से आच्छादित है जिले की समुद्रतल तल से अधिकतम उचाई 1100 मीटर के लगभग है। प्रशासनिक दृष्टिकोण के आधार पर उत्तार दिशा में उमरिया, उत्तार-पश्चिम जबलपुर, दक्षिण-पश्चिमी मण्डला और पूर्व दिशा में अनूपपुर, बिलासपुर, कवर्धा जिले की सीमारेखा को स्पर्श करती है। जिले का क्षेत्रफल 6128 वर्ग किलोमीटर के लगभग में स्थित है। इस प्रकार से मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या का 25.317 प्रतिशत है।

डिण्डौरी जिला मुख्यालय मध्यप्रदेश व छत्तीसगढ़ को जोड़ने वाली स्टेट हाईवे क्रमांक 22 पर स्थित है जो कि जबलपुर से 145 किलोमीटर तथा मंडला से 104 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। डिण्डौरी मुख्यालय से 88 किलोमीटर की दूरी पर ही जबलपुर-बिलासपुर मार्ग पर अमरकंटक एक प्राचीन ऐतिहासिक एवं धार्मिक स्थल है जो नर्मदा नदी के उद्गम स्थल के कारण हिंदू धर्मावलंबियों की आस्था का केंद्र बिंदु है। यह जिला अपनी प्राचीन ऐतिहासिक धरोहोरों के लिए विख्यात है जिसमें यह घुघवा जीवाष्म राष्ट्रीय पार्क, लक्ष्मणमण्डवा, कुकर्रामठ में कल्चूरी काल का प्राचीन मंदिर भी स्थित है।

जिले की भौगोलिक स्थिति एवं विस्तार इत्यादि प्रस्तुत करने के पूर्व यह ज्ञात करना आवश्यक है कि संबंधित क्षेत्र एवं विवेचित विषय का चयन

*भूगोल विभाग, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

क्यों किया गया है। अध्ययन क्षेत्र एक एकाकी तथा ग्रामीण प्रदेश है। यहां की जनसंख्या तथा अर्थतंत्र संक्रमण की अवस्था से गुजर रहा है। ऐसी स्थिति में अर्थ तंत्र के निर्धारण में विपणन केंद्रों एवं केंद्र स्थलों की स्थानिक एवं आर्थिक व्यवस्था का अध्ययन जो अब तक अछूता है न केवल एक अभिनव प्रयास होगा वरन् अर्थतंत्र के नियोजन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होगा। जिला कृषि एवं उद्योगों की दुष्टि से पिछड़ा हुआ है फिर भी आवृत्ति विपणन केंद्र एवं केंद्र स्थल क्षेत्रों की आवश्यकता की पूर्ति कर रहे हैं। जिले का प्रभाव ग्रामीण क्षेत्र के आर्थिक क्रियाकलापों पर पड़ रहा है साथ ही यह क्षेत्र बड़ी तेजी से विकसित हो रहा है। जिले के ग्रामीण विपणन केंद्र एवं केंद्र स्थल न केवल बदल रहे हैं अपितु नए केंद्र स्थलों का जन्म भी हो रहा है। इन्हीं उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर अपने अध्ययन का क्षेत्र जिला डिण्डौरी चुना है जो स्थानिक एवं आर्थिक आयामों के अध्ययन हेतु आवश्यक है।

भौतिक पर्यावरण प्राकृतिक संरचना की दृष्टि से जिला डिण्डौरी मध्य भारत के सतपुड़ा और मैकल पहाड़ियों के मध्यभाग की पथरीली उच्च-सम भूमि तथा लगभग पूर्ण रूप से नर्मदा नदी के जलक्षेत्र में स्थित है। यहां पर पाए जाने वाली धारातल उबड़-खाबड़ जंगली क्षेत्र कहलाती है। यहां पर मुख्यत: में कल और सतपुड़ा की विभिन्न श्रंखलाएं विभिन्न नामों से दूर-दूर तक फैली हैं। इनके बीच बीच में कहीं छोटे और कहीं बड़े पठार भी फैले हैं। समुद्र तल से ऊंचाई अधिकतम एवं न्यूनतम 1100 से 885 मीटर है। जिले के धरातलीय बनावट को निम्न भागों में बांटा जा सकता है-

इस पठार का विस्तार उत्तर में फैला है। यह पठार नर्मदा नदी के उत्तर व जोहिला नदी के दक्षिण के मध्य क्षेत्र में स्थित है। इसका पूर्वी भाग अमरकंटक से लेकर पश्चिम में ग्वारा, दुहनिया तक फैला है। कृषि की द्रष्टि से यह क्षेत्र अच्छा नहीं है। यहां पर असमतल एवं कंकरीली पथरीली मिट्टी पाई जाती है जो कृषि के लिए उपयुक्त नहीं मानी जाती है। इस पठार के पश्चिम में ढांगा पहाड़ है यहां के अन्य पहाड़ों में करिया पहाड़, सारसताल का पहाड़, सुक्कुम गढ़ी पहाड़ तथा अमरकंटक में नर्मदा की उत्तरी तटीय पर्वत श्रेणियां प्रमुख हैं। इसका ढलान दक्षिणी है। इस कारण यहां से निकलने वाली नदियां दक्षिण की ओर प्रवाहित होकर जोहिला नदी में मिल जाती हैं।

यह भौतिक पर्यावरण की दृष्टि से अधिक स्मृद्धशाली है। जो विशेष रूप से यहाँ की धार्मिक परम्पराओं को संजोये हुए है। यह भाग अमरकंटक से लेकर दक्षिण-पश्चिम में राई की पहाड़ियों तक फैला है। यहां के ऊंचे-ऊंचे पर्वतों के शिखर एवं उनकी श्रृंखलाएं दूर-दूर तक फैली हुई है। उनमें अमरकंटक में स्थित धमगढ़, खन्नात, सिंगनगढ़, चन्द्रागढ़, निगवानीगढ़, बन्दीछोर तथा घोड़ा खुरी पहाड़ प्रमुख श्रेणियां हैं। इस पहाड़ी क्षेत्र का पूर्वी भाग बहुत ऊंचा है। यहां स्थित धमगढ़ की औसत ऊंचाई 1100 मीटर है, जबकि अन्य पहाड़ों की ऊंचाई अपेक्षाकृत कम है। खरमेर एवं बुढनेर यहां की प्रमुख नदियां हैं। दोनों नर्मदा की सहायक नदियां हैं। इस क्षेत्र का धरातल ऊबड़-खाबड़ तथा कंकरीली-पथरीली है।

इस पठार का विस्तार जिले में पश्चिम की ओर है। इस पठार की धरातलीय संरचना ऊबड़-खाबड़, असमतल, कंकरीली पथरीली, मिट्टी से निर्मित है। कहीं-कहीं पर हल्की पीली, दोमट मिट्टी पाई जाती है। शहपुरा-मेंहदवानी के पठार की पूर्वी सीमा नर्मदा व जोहिला नदी के मध्य भाग से प्रारम्भ होती है। इसकी उत्तरी सीमा उमरिया जिले को छूती है। इसके उत्तार-पूर्व में राई की पहाड़ियां स्थित हैं। इन्हीं के मध्य मेंहदवानी का पठार स्थित है। यह डिण्डौरी को मण्डला जिले से अलग करता है। इसकी ऊंचाई औसतन कम है। इसकी ढलान दक्षिण की ओर है। यहां से निकलने वाली नदियों का प्रवाह दक्षिण की ओर है। यहां की प्रमुख नदी सिलगी है जो रानीदादर पहाड़ से निकलकर दक्षिण में नर्मदा नदी में समाहित हो जाती है। यहां की धरातलीय संरचना असमतल है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह. जे., 1985, कान्सेप्ट ऑफ इन्टीग्रेटेड रीजनल डवलपमैन्ट, रूरल डवलपमैन्ट, इन इंडिया, संपादक-सिंह, के. एन. तथा सिंह, डी. एन., एन. एस. आई., वाराणसी, पृष्ठ 52
2. सिंह, राम लोचन : Banaras' A study in urban geography Tara Pub., Varansi 1955, PP 63
3. सिंह, उजागर : Cities of gang plain. Their problems and planning urban geography in Developing centuries. 342-350, PP 4
4. सिंह, कामेश्वर नाथ, 1985, ग्रामीण विकास पर सिंचाई का प्रभाव-बरैबोझ गाँव का प्रतीक अध्ययन, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, गोरखरपुर, पृष्ठ 6
5. सिंह, जगदीश, 1988, वातावरण नियोजन एवं संविकास, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ठ 12

****

साक्षरता का अभियान एवं उसका प्रबंधन

डॉ. मनोज कुमार मिश्रा *

शोध सारांश – कुछ समय पूर्व समाज शिक्षा के शायद ही कोई औपचारिक अभिकरण (विकास की प्रक्रिया) होते थे। यदि कोई प्रयास किए भी गए तो केवल व्यक्तिगत प्रयास थे। चूंकि ये प्रयास व्यक्तिगत थे इसलिए वे व्यक्ति के साथ ही समाप्त हो गए। इस क्षेत्र में कार्य करने वाले कुछ महत्वपूर्ण व्यक्तियों के नाम और कार्य निम्नानुसार है सर्वप्रथम मैसूर के महान इन्जीनियर श्री विश्वेश्वरैया जो एक गहान मानव प्रेमी थे, उन्होनें प्रौढों की शिक्षा के क्षेत्र में बहुत अधिक कार्य किया। दूसार प्रयास रबीन्द्रनाथ टैगोर ने शान्ति निकेतन में किया था। सन् 1927 से 37 तक प्रौढ़ शिक्षा में उल्लेखनीय कार्य किया गया। इस समय में इलाहाबाद के डॉ. जे.जे. लैंका समाज शिक्षा के एक महान व्याख्याकार ने प्रौढ शिक्षा पर अनुसंधान किया और उस पर लेख भी लिखें। डॉ. जे.एच. लारेन्स ने मणिपुर में प्रौढ शिक्षा पर पर्याप्त कार्य किया और लोगों को देवनागरी लिपि में हिन्दी सिखाई। इसी समय में बम्बई में 180 प्रौढ शिक्षा विद्यालयों की स्थापना की गई स्वतंत्र भारत में प्रथम शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने प्रौढ शिक्षा को एक नई अवधारणा प्रदान की। सन् 1947-50 की अवधि में प्रौढ़ शिक्षा पर अखिल भारतीय प्रतिवेदन प्रकाशित हुआ।

शब्द कुंजी – साक्षरता, प्रौढ़ शिक्षा , राष्ट्रीय साक्षरता मिशन, स्वैच्छिक संस्थाएं, चयन, प्रशिक्षण, प्रेरणा।

प्रस्तावना – सन् 1950 के बाद कोठारी आयोग इस बात के लिए उत्सुक था कि प्राथमिक स्तर तक सभी भारतीयों को शिक्षित किया जाए या कम से कम साक्षर तो अवश्य बनाया जाए। कोठारी आयोग की इच्छा थी कि समाज शिक्षा के देशव्यापी कार्यक्रम को शक्तिशाली बनाया जाए। आयोग ने यह भी अनुशंसा की कि जो अपना नियमित अध्ययन जारी नहीं रख सकते, उनके लिए आगे अध्ययन की व्यवस्था हेतु विश्वविद्यालयों को पत्राचार पाठ्यक्रम आरम्भ करना चाहिए। सन् 1971-72 में सरदार तारा सिंह जी ने पंजाब में प्रौढ़ शिक्षा के विस्तार की एक योजना प्रस्तुत की, परन्तु इस योजना पर कोई कार्यवाही नहीं हुई। इसके उपरान्त दो दृश्यधार्मी योजनाएं सामने आई प्रथम एक सूत्रीय कार्यक्रम और दूसरी पाँच सूत्रीय कार्यक्रम। इन दोनों कार्यक्रमों का एक सूत्र यह था कि प्रत्येक भारतीय को साक्षर बनाया जाए। प्रत्येक साक्षर दूसरे को साक्षर करने वाला पुराना नारा फिर गूंजा परन्तु यह योजना सफल नहीं हो सकी। 15 जून, 1977 को केन्द्रीय शिक्षा मंत्री पी.सी, चन्दर ने राज्य सभा में केन्द्र शासन के इस निश्चय की घोषणा की कि प्रौढ़ शिक्षा के राष्ट्रीय बोर्ड को पुनर्जीवित किया जाएगा। इस प्रकार भारत में प्रौढ शिक्षा की परम्परा काफी पुरानी है। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा मंत्रालय के ढाँचे के भीतर शिक्षा पद्धति के नियमित अंश के रूप में प्रौढ़ शिक्षा-शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। शिक्षा मंत्रालय ने प्रौढ शिक्षा के प्रचार के लिए अनेक योजनाएं प्रायोजित की। इस क्षेत्र में आधुनिक प्रयासों में से एक प्रयास था 2 अक्टूबर, 1978 को व्यापक राष्ट्रीय प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम का शुभारम्भ। इसका मुख्य लक्ष्य 15-35 वर्ष वर्ग के निरक्षरों को साक्षर कर उन्हें राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया से जोड़ना था। प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम में तेजी लाने की दृष्टि से 05 मई, 1988 को भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का प्रारम्भ किया गया। 15-35 वर्ष वर्ग के 8 करोड निरक्षर प्रौढों को सन 2010 तक कार्यात्मक साक्षरता प्रदान करना राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का लक्ष्य रखा गया। साक्षरता के साथ-साथ प्रौढों को राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूक बनाना तथा उनका जीवन स्तर ऊँचा उठाना इसके पाठ्यक्रम में शामिल है। प्रौढ शिक्षा के विकास से प्राथमिक शिक्षा में बच्चों की उपस्थिति आश्चर्यजनक ढंग से बढ़ जाती है। बाल मृत्यु दर कम हो जाती ह। इससे जन्म दर में भी कमी आती है। लोगों में आत्मविश्वास पैदा होता है। प्रौढ शिक्षा द्वारा प्रौढ़ व्यक्ति केवल लिखने-पढ़ने योग्य ही नहीं बनता, बल्कि इसके माध्यम से वह अज्ञान, पूर्वाग्रह, रूढ़िवादिता, अंधविश्वास आदि से मुक्त होकर समाज हित में रचनात्मक कार्य की ओर अग्रसर होता है। प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ समयानुसार बदलता रहा है। बहुत से लोग निरक्षर लोगों को साक्षर बनाना ही प्रौढ़ शिक्षा समझते हैं। वास्तव में इस समय प्रौढ़ शिक्षा के दो पहलू हैं। (1) उन प्रौढ़ों को शिक्षा देना जिन्होनें किसी विद्यालय में शिक्षा प्रापत नहीं की है (2) साक्षर प्रौढों की अनवरत शिक्षा। कोठारी कमीशन के अनुसार प्रजातंत्र में प्रौढ़ शिक्षा का कार्य प्रत्येक प्रौढ़ नागरिक को इस प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने का एक अवसर प्रदान करना जिस प्रकार की शिक्षा को वह चाहता है तथा जो उसकी व्यक्तिगत समृद्धि, व्यावसायिक उन्नति तथा सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्रों में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए उसे मिलनी चाहिए 1949 तक निरक्षर वयस्कों की शिक्षा प्रौढ़ शिक्षा के नाम से ही प्रचलित रही, किन्तु केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने 1949 में इसके स्थान पर समाज शिक्षा का नाम सुझाया। यूनेस्को के तत्वाधान में आयोजित एक गोष्ठी में मौलाना अबुलकलाम आजाद (1949) ने समाज शिखा की व्याख्या करते हुए कहा था, 'समाज शिक्षा से हमारा तात्पर्य है पूर्ण मानव की शिक्षा। यह उसको साक्षरता प्रदान करेगी, जिससे कि विश्व का ज्ञान उसे उपलब्ध हो सके।

यह उसको बतायेगी प्राकृतिक दशाओं में वह निवास करता है, उनका सर्वोत्ताम प्रयोग किस प्रकार करे।' जन-जन को साक्षर बनाने के लिए 5 मई, 1988 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी द्वारा राष्ट्र स्तर पर राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का शुभारम्भ नई दिल्ली में किया गया। इसी दिन राज्य स्तर पर इस मिशन क प्रारम्भ राज्य की राजधानियों में हुआ। मिशन का मुख्य उद्देश्य 15 वर्ष से 35 वर्ष के आयु वर्ग के तीन करोड़ निरक्षरों को

* सहायक प्राधयापक (इतिहास विभाग) पारसनाथ महाविद्यालय, इसरी बाजार, गिरिडीह (झारखण्ड) भारत

1990 तक तथा अन्य 5 करोड़ निरक्षरों को 1995 के अन्त तक साक्षर बनाना है। इस प्रकार इस मिशन के तहत 1995 के अन्त तक कुल 8 करोड़ निरक्षर लोगों को साक्षर करने का संकल्प है जिसमंक अत्यधिक ध्यान महिलाओं तथा अनुसूचित जाति तथा जनजाति के निरक्षरों पर दिया जा रहा है। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की कार्यनीति प्रेरणा जगाना, जन सहयोग पाना, स्वैच्छिक संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करना, वर्तमान कार्यक्रमों में सुधार करना, जन आन्दोलन प्रारम्भ करना, सतत शिक्षा की व्यवस्था करना, अध्ययन की सुविधाएं उपलब्ध कराना, शिक्षा की सुविधाएं उपलब्ध कराना। इसके मुख्य सिद्धांत केन्द्रीयकृत नियंत्रण के साथ विकेन्द्रीकरण तथा काम करने में स्वायत्तता देना, लोगों का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करना, सहयोगी संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करने के लिए उचित ढंग अपनाना, कार्यकर्ताओं में आवश्यक व्यावसायिक क्षमता उत्पन्न करना, महिलाओं को व्यापक स्तर पर कार्यक्रमों में सम्मिलित करना, विभिन्न स्तरों पर निर्णय लेने, उत्तरदायी होने तथा जवाबदेही का स्पष्ट उल्लेख करना, कार्यक्रमों में आवश्यकतानुसार लचीलापन, कार्यकर्ताओं के चयन, प्रशिक्षण तथा प्रेरणा के नये तरीके अपनाना, नवाचारों तथा प्रयोगों की उचित व्यवस्था करना, अध्ययन सामग्री के विकास कार्यक्रमों के आयोजन व प्रबन्ध तथा नौकरशाही को दूर करने में कम्प्यूटर तथा अन्य निरक्षरों की संख्या ही अधिक रही ती देश के लोकतंत्र का भविष्य खतरे में पड़ जाएगा। दु:ख की बात है कि भारत में शिक्षा का सामान्य रूप से अभाव है। स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद भारत में सिर्फ पन्द्रह प्रतिशत लोग ही साक्षर थे। यह बात सही है कि निरक्षरता–उन्मूलन कार्यक्रम के परिणामस्वरूप ही साक्षरों के प्रतिशत में वृद्धि हुई है। परन्तु अभी भी स्थिति उत्साहवर्द्धक नहीं है। जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ निरक्षरों की संख्या भी बढ़ती चली जा रही है। 1981 ई0 की तुलना में 1991 ई0 की स्थिति सुधारती नजर आई है। 1981 ई. में भारत में साक्षरों का प्रतिशत 36,27 था। 1991 ई. की जनगणना के अंतिम आँकड़े के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या के सिर्फ 52.21 प्रतिशत लोग ही साक्षर हैं। शेष 47.79 प्रतिशत लोग निरक्षर हैं। देश की महिलाओं में तो शिक्षा का और भी अभाव है। जहाँ साक्षर पुरुषों का प्रतिशत 64.13 है वहाँ महिलाओं का प्रतिशत सिर्फ 39.29 है। निरक्षरता की समस्या के समाधान के लिए ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। इस बात का प्रयास होना चाहिए कि विद्यालयों में अधिक–से–अधिक बच्चों का नामांकन हो। इस बात को भी ध्यान में रखा जाना आवश्यक है कि कम–से–कम बच्चे पढ़ाई के बीच पाठशाला छोड़कर जाएँ। जो निरक्षर पाठशाला नहीं जा सकते हैं उन्हें साक्षर बनाने के लिए अन्य ठोस कदम उठाने की भी आवश्यकता है। उनके शिक्षित होने से ही विद्यालयों में बच्चों का नामांकन अधिक होगा और उनके बच्चे बीच में ही स्कूल छोड़कर नहीं जाएँगे। साक्षरता अभियान को जन–आन्दोलन बनाने की आवश्यकता है। भारत में निरक्षरता–उन्मूलन के लिए अनेक कदम उठाए जा रहे हैं। पंचवर्षीय योजनाओं में इस पर विशेष ध्यान दिया गया है। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत विद्यालयों की संख्या बढ़ाने, छात्र–छात्राओं का अधिक–से–अधिक संख्या में विद्यालयों में प्रवेश और प्रौढों के लिए रात्रि यूनेस्को के अनुसार, विश्व में लगभग 90 करोड़ व्यक्ति निरक्षर हैं। एशिया तथा अफ्रीका के देशों में निरक्षरता चरम सीमा पर है। अफगानिस्तान, पाकिस्तान, सोमालिया, सूडान, बांग्लादेश, जिम्बाब्वे और भारत में साक्षरता का प्रतिशत अपेक्षाकृत बहुत ही कम है। ऐसे देशों में साक्षरता की अलख जगाने तथा निरक्षरता के अभिशाप से इन देशों को मुक्त करने हेतु ही वर्ष 1990 को अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता वर्ष के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया। 8 सितम्बर, 1965 को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहली बार तेहरान में शिक्षा मंत्रियों का विश्व सम्मेलन आयोजित किया गया था। सम्मेलन में निरक्षरता की जटिल समस्या सुलझाने हेतु अनेक महत्वपूर्ण, किन्तु व्यावहारिक निर्णय लिए गए थे। विश्व में निरक्षरों की संख्या वर्ष–प्रति–वर्ष घटाते रहने की अनेकानेक योजनाएं लागू हैं। शिक्षा किसी भी व्यक्ति, समाज तथा देश के समग्र विकास का प्रमुख आधार होती है। इसके बिना विकास की कल्पना करना, एक दिवास्वप्न जैसा है। धार्मिक ग्रन्थों में भी शिक्षा के महत्व को प्रमुखता दी गई है। कुरान शरीफ में भी कहा गया है कि 'क्या पढ़े–लिखे और अनपढ़ एक बराबर हो सकते हैं?' स्वत: ही उत्तर मिलता है, कदापि नहीं। फिर निरक्षरों को तो संस्कृत साहित्य में भी पशु समान बताया गया है। आज सोवियत संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस और जापान की चहुंमुखी प्रगति का मुख्य आधार, वहां की जनता की सुशिक्षा ही है। भारत, इन्डोनेशिया, भूटान, बांग्लादेश, पाकिस्तान, वियतनाम और नेपाल आदि विकासशील देश कहलाते हैं, उसका प्रमुख कारण भले ही आर्थिक विपन्नता कहलाती हो, किन्तु उसका प्रमुख आधार तो अशिक्षा ही है। विश्व में लगभग 90 करोड निरक्षरों की संख्या, विश्व जनमत के प्रति एक चिन्ता का विषय है, तभी 1965 के तेहरान सम्मेलन में विश्व के शिक्षा मंत्री निरक्षरता उन्मूलन अभियान के प्रति एकमत थे। विश्व कांग्रेस के परामर्श पर यूनेस्को ने 1966 की अपनी आमसभा में प्रतिवर्ष 8 सितम्बर को 'अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस' मनाने का निर्णय लिया था। तब से विश्व में यह दिवस निरन्तर मनाया जा रहा है। यूनेस्को के तत्कालीन महा–निदेशक श्री अमाद–महतार अम्बो ने 23 फरवरी, 1987 को नई दिल्ली में आयोजित एशिया प्रशान्त कार्यक्रम के उद्घाटन भाषण में कहा था 'यह सब जानते हैं कि सम्भवत: इसी क्षेत्र में वर्णमाला का आविष्कार हुआ है और हजारों वर्ष तक इस क्षेत्र ने आध्यात्मिकता, कला, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया है। इस क्षेत्र के यशस्वी अतीत के संदर्भ में क्या यह विरोधाभास नहीं है कि समस्त विश्व के 88 करोड़ 90 लाख निरक्षरों में 66 करोड़ 80 लाख तो एशियावासी हैं ?' इथोपिया, क्यूबा, दक्षिण कोरिया, मलेशिया, फिलीपीन, थाइलैण्ड, चीन, श्रीलंका और तंजानिया आदि–आदि देशों ने अपने सुनियोजित कार्यक्रमों तथा कार्यनिष्ठा के बल पर अपने देश में साक्षरता का प्रतिशत आशातीत ढंग से बढ़ा लिया है, किन्तु भारत इस क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं कर सका, क्यों? यह एक चिंतनीय विषय है। 1981 की जनगणनानुसार, भारत में साक्षरता का प्रतिशत 36.23 है। विश्व बैंक के एक पूर्वानुमान के अनुसार, इस शताब्दी के अन्त तक विश्व में सबसे अधिक निरक्षर तथा 15 से 19 वर्ष के आयु–वर्ग में विश्व की निरक्षर आबादी के 54.8 प्रतिशत लोग तो भारत में ही होंगे। स्वतंत्रता के 42 वर्ष पश्चात् भी देश में 10 में से 6 व्यक्ति अभी भी निरक्षर ही हैं, 4 में से 3 महिलाएं अनपढ़ हैं, 10 में से 9 आदिवासी निरक्षर हैं और 10 में से 8 अनुसूचित जातियों के व्यक्ति निरक्षर हैं। उत्तर प्रदेश में निरक्षरता का प्रतिशत तो और भी शोचनीय है। उत्तर प्रदेश में साक्षरता का प्रतिशत 27.16 है। इसमें से पुरूषों की साक्षरता का प्रतिशत 38.76 और महिलाओं की साक्षरता का प्रतिशत 14.04 है। ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता का प्रतिशत मात्र 9.49 है। भारत सरकार ने देश को निरक्षरता के अभिशाप से मुक्त कराने हेतु प्रारंभ से ही अनेकानेक कार्यक्रम एवं योजनाएं लागू की है। साक्षरता मिशन बनाया गया, जिसके अन्तर्गत प्रौढ़ शिक्षा को वरीयता प्रदान की गई। यही कारण है कि स्वतंत्रता के समय देश की साक्षरता का जो प्रतिशत 16 था, वह सरकार के सद्प्रयासों से वर्ष

1981 में बढ़कर 36.23 प्रतिशत हो गया। साक्षरता का यह बढ़ता प्रतिशत आशाप्रद भले ही कहा जाए, किन्तु इस पर संतोष तो व्यक्त नहीं किया जा सकता। कारण...? एक ओर जहां साक्षरता के प्रतिशत में वृद्धि हुई है, तो दूसरी ओर दिनोंदिन बढ़ती जनसंख्या के कारण निरक्षरों की संख्या में भी अभिवृद्धि हुई है। पिछली सरकार ने इस विकट स्थिति से निबटने हेतु निरक्षरता उन्मूलन अभियान को 20 सूत्री कार्यक्रम में भी सम्मिलित किया था। प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा को जहां बढ़ावा दिया गया, वहां बाल विकास परियोजना तथा अनौपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत बाल शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा को योजनाबद्ध ढंग से प्रारम्भ किया गया। इसके लिए प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, नेहरू युवा केन्द्र, श्रमिक विद्यापीठ, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय या स्वैच्छिक संस्थाओं को माध्यम बनाया गया। फिर भी निरक्षरता की समस्या किसी समुचित समाधान की प्रतीक्षा में है। इसे एक विडम्बना कहा जाए अथवा ? कि देश के विभिन्न राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में साक्षरता के प्रतिशत में भारी असमानता है। केरल, दिल्ली, चंडीगढ़, तमिलनाडु तथा कर्नाटक में जहां साक्षरता का प्रतिशत काफी ऊंचा है, वहां बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश तथा आन्ध्राप्रदेश राज्यों में साक्षरता का प्रतिशत अपेक्षाकृत बहुत नीचा है। देश का दुर्भाग्य अथवा ? कि देश की जनसंख्या के लगभग 2/3 भाग के निवास क्षेत्र उत्तरी तथा मधय भारत का साक्षरता का प्रतिशत, राष्ट्रीय साक्षरता प्रतिशत से भी काफी कम है। बढ़ती निरक्षरता के मुख्य कारणों में बढ़ती जनसंख्या, निर्धानता, सरकारी कार्यक्रमों की आपाधापी, अज्ञानता और निजी उदासीनता प्रमुख है। परिवार कल्याण मंत्रालय के आंकड़े बतलाते हैं कि निरक्षरों में साक्षरों की अपेक्षाकृत जन्मदर अधिक होती है। इसके पीछे निरक्षरों की कुछ ऐसी मानसिकता ही है, जो वे परिवार-वृद्धि को आर्थिक एवं राजनीतिक सुदृढता का साधन मानते हैं। निरक्षरता का एक बड़ा कारण निर्धानता भी है। प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ रहे लगभग 68 प्रतिशत विद्यार्थी मात्र परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण ही आगे नहीं पढ़ पाते हैं। महाविद्यालयी एवं विश्व विद्यालयी कक्षाओं तक पहुंचने वाला प्रतिशत तो बहुत ही कम होता है। लोगों की अज्ञानता तथा सरकारी मशीनरी की आपाधापी के कारण ही निरक्षरता उन्मूलन के कार्यक्रमों की जानकारी प्रथम तो लोगों तक पहुंच ही नहीं पाती है और यदि पहुंच भी गई, तो उन्हें उसका लाभ नहीं मिल पाता। सरकारी कार्यक्रमों की आर्थिक नीति ही कुछ इस प्रकार की बन चुकी है कि बिचौलिए बीच में ही सहायता को हड़प लेते हैं। निरक्षर व्यक्ति जब साक्षरता का प्रत्यक्ष लाभ नहीं देखता है, तो फिर वह इसके प्रति उदासीन ही हो जाता है। शिक्षित बेरोजगारी उसे साक्षरता के प्रति उदासीन बनाने में निर्णायक भूमिका निभाती है। इस अवधारणा से अछूते तो साखर भी नहीं रहते हैं, फिर भी साक्षरता के महत्व को नकारा तो नहीं जा सकता है। यह हमारे सामाजिक एव राष्ट्रीय जीवन की विडम्बना है कि अभी भी श्रम का गौरव जैसे पवित्र भावना को हम समाहित नहीं कर पाए हैं। निरक्षर व्यक्ति तो जीवनयापन हेतू कोई भी श्रमसाधय कार्य कर ले, किन्तु साक्षर एवं शिक्षित व्यक्ति मानसिक तथा शारीरिक कारणों से पहले तो ऐसा-वैसा कार्य कर ही नहीं पाता है और यदि वह करना भी चाहे, तो लोग उसे यबेचारा करार देते हुए, नि:संकोच रूप से कह देते हैं कि क्या लाभ मिला इतना पढ़ने-लिखने का? इससे तो अनपढ़ या फिर कोई काम जानने वाला ही भला, जो कम से कम अपनी दो जून की रोटी तो कमा लेता है। आदि-आदि। जगे देश की क्या पहचान, पढ़ा-लिखा मजदूर किसान। शिक्षित बेरोजगारी की इस करूण दशा से भयभीत निरक्षर, साक्षर बनने की दिशा में सरकारी-गैरसरकारी सद्प्रयासों के बावजूद आज भी उदासीन ही बने रहते हैं। उनकी मानसिकता भी कुछ वैसी ही बनी हुई है कि वे शिक्षा के महत्व को समझते ही नहीं है। ऐसे लोगों को समझाना ही होगा कि उच्च शिक्षा ही नहीं, बल्कि साक्षरता भी उनके निजी एवं व्यावसायिक जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकती है। संक्षेप में, साक्षरता की सार्थकता इस प्रकार अधिक जागरूकता बेहतर जीवन-स्तर बेहतर मानव-संबंधा बेहतर नागरिकता समस्याओं का उन्मूलन उत्पादकता में बढ़ोत्तरी आय में वृद्धि गरीबी का उन्मूलन शिशु मृत्युदर में कमी असमानता को पाटना राष्ट्रीय संगठन बढ़ाना राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति में सहयोग श्रमिकों से बेहतर संबंधा नियोक्ता से बेहतर संबंधा विकास कार्यो में बेहतर भागीदारी सामाजिक न्याय की प्राप्ति स्व-रोजगार के अवसर महिलाओं का विकास वैज्ञानिक एवं तकनीकी रूचि मानव-प्रतिष्ठा में वृद्धि राष्ट्रीय धारा में सक्रियता बच्चों तथा युवाओं को देश का भविष्य कहा गया है। इसी कारण पिछली इंका सरकार ने 18 वर्ष के युवाओं को मतदान का अधिकार प्रदान करके उन्हें राष्ट्रीय धारा में सक्रिय रूप से जोड़ने का सद्प्रयास किया था, किन्तु निरक्षरों की बड़ी संख्या इस उद्देश्य में कितनी सफल हो सकेगी, इसके प्रति अनेकानेक आशंकाएं हैं। भारत में 15 से 35 आयु-वर्ग के लोगों को युवावर्ग माना जाता है। 1981 की जनगणनानुसार, इस आयु-वर्ग में 22,12,21,830 व्यक्ति थे, जिनमें 11,36,46,361 पुरूष तथा 10,75,75,469 महिलाएं थीं। कुल जनसंख्या में युवाओं का औसत अनुपात 32 प्रतिशत से थोड़ा अधिक है। विभिन्न राज्यों में स्थिति भिन्न-भिन्न है। ग्रामीण युवाओं की संख्या शहरी युवाओं से ढाई गुना अधिक है, जो एक विचारणीय तथ्य है। 1981 में निरक्षर युवाओं की संख्या लगभग 10.7 करोड़ थी, जिनमें 15 से 35 आयु-वर्ग की कुल जनसंख्या का 49.99 प्रतिशत निरक्षर हैं। इस बड़े प्रतिशत को साक्षर बनाए बिना देश की युवाशक्ति को राष्ट्रीय धारा में समाहित करने की योजना की सफलता पूर्णत: संदिग्ध है। यहां यह उल्लेख करना उचित ही होगा कि 15 से 35 आयु-वर्ग की युवा महिलाओं की संख्या लगभग 10.8 करोड़ है अर्थात् युवा जनसंख्या का लगभग 48.63 प्रतिशत। अरूणाचल, बिहार, राजस्थान तथा दादर एवं नगर हवेली में 15 से 19 आयु-वर्ग में 75 प्रतिशत से भी अधिक बालिकाएं निरक्षर हैं और 20 से 24 आयु वर्ग में 80 प्रतिशत से भी अधिक बालिकाएं निरक्षर हैं, पहले तीन राज्यों में । अत: 5 मातृशक्ति को साक्षर बनाए बिना निरक्षरता उन्मूलन अभियान को सफल कैसे बनाया जा सकता है ? निरक्षरों के इतने बड़े प्रतिशत को साक्षर बनाने की प्रक्रिया में साक्षरता की परिभाषा अत्यन्त सुगम की गई है। किसी भी भाषा को समझते हुए, पढ़ने और लिखने की योग्यता को साक्षरता की परिभाषा के अधीन मान लिया गया है। अर्थात् यदि कोई व्यक्ति केवल पढ़ सकता है, किन्तु लिख नहीं सकता, तो उसे साक्षर नहीं माना जाता है। साथ ही साक्षर कहलाने के लिए कोई औपचारिक शिक्षा अथवा कोई न्यूनतम शैक्षिक योग्यता का स्तर होना आवश्यक नहीं माना गया है

निष्कर्ष - स्वतंत्रता के साथ ही सरकार ने समाज शिक्षा, किसान-साक्षरता और अनौपचारिक शिक्षा के नाम से अनेक कार्यक्रम प्रारम किए। प्रौढ शिक्षा का कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत 15 से 35 आयु-वर्ग के निरक्षरों को साक्षर बनाकर उन्हें राष्ट्रीय विकास में समाहित किया जाना ही, प्रमुख लक्ष्य निर्धारित किया गया है। प्रौढ़ शिक्षा को प्राय: प्रौढ़ों (वृद्धों) को साक्षर बनाने की योजना समझा जाता है, जबकि वास्तविकता यह है कि इस योजना के अन्तर्गत मात्र 35 वर्ष तक के युवाओं को साक्षर बनाने का प्रावधान है। प्रौढ़ शिक्षा का प्रसार मुख्यत: सरकारी परियोजनाओं, स्वैच्छिक

संस्थाओं तथा विश्वविद्यालयों के माध्यम से किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम का संचालन सरकारी योजनाओं तथा स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा किया जाता है, जबकि नगरीय क्षेत्रों में स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ विश्वविद्यालय भी अपने महाविद्यालयों के द्वारा करते हैं। प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों पर महिलाएं दिन में तथा पुरूष रात्रि में शिक्षा ग्रहण करते हैं। विद्यार्थियों को कापी, पेन्सिल, स्लेट, बत्ती, साहित्य तथा पाठ्यक्रम पुस्तिका प्रवेशिका आदि नि:शुल्क प्रदान की जाती है। कुल 12 माह के सत्र में 8 माह पूर्व साक्षरता तथा 4 माह पश्चात् साक्षरता का पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है। शिक्षण को तीन चरणों में पूर्ण किया जाता है साक्षरता, चेतना जागरण तथा व्यावहारिक दक्षता। विद्यार्थियों को पढ़ने-लिखने, देश, प्रदेश, गांव की जानकारी, स्वास्थ्य नियम, परिवार कल्याण के साथ ही व्यावसायिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक दक्षता प्रदान की जाती है, ताकि निरक्षर, मात्र साक्षर ही नहीं, अपितु निजी एवं व्यावहारिक जीवन में भी सफल होने का आधार प्राप्त कर सके। 5 मई, 1988 को भारत सरकार ने प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को नई दिशा प्रदान करने हेतु 'राष्ट्रीय साक्षरता मिशन' अभियान प्रारम्भ किया। इसका उद्देश्य वर्ष 1995 तक 15 से 35 आयु-वर्ग के 8 करोड़ निरक्षरों को कार्यात्मक साक्षरता प्रदान करना, निश्चित किया गया है। निरक्षरों को साक्षर बनाने के साथ-साथ राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूक बनाकर उनका जीवन-स्तर ऊँचा बनाना भी इसी मिशन के अधीन सम्मिलित किया गया है प्रौढ़ शिक्षा के संबंध में यह अनुभव किया गया कि साक्षरता के लिए उचित वातावरण, उत्तर साक्षरता तथा सतत् शिक्षा के लिए कोई प्रभावी कार्यक्रम होना चाहिए। राश ने फरवरी, 1988 में देश के प्राय: सभी राज्यों में जन-शिक्षण निलयम स्थापित करने का निर्णय लिया। निलयम की योजना के मुख्य उद्देश्य है - कार्यात्मक साक्षरता को बनाए रखने, उसे काम में लाने और शिक्षा को जारी रखने के लिए आवश्यक व्यवस्था करना। विकास कार्यक्रम से संबंधित सधना का प्रसार करना, ताकि परम्परासे पिछड़े वर्ग के लोग इन कार्यक्रमों में सक्रिय भागीदारी कर सकें। राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति लोगों को जागरूक बनाकर उनके निराकरण में भागीदारी करने को तैयार करना। आर्थिक स्थिति, सामान्य जीवन तथा उत्पादकता में सुधार करना। मनोरंजन के साथ स्वस्थ जीवन बिताना। योजना के अधीन कुछ विकास खण्डों की प्रत्येक न्याय पंचायत में पुस्तकालय, वाचनालय तथा सधना केन्द्रों की व्यवस्था की गई है। ग्रामीणों को खेलकूद तथा सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रति भी उत्साहित किया जा रहा है। गांवों में पारस्परिक सहयोग, प्रेम तथा जागरूकता लाने हेतु जो कार्यक्रम बनाए गए हैं, उनसे जीवन-स्तर ऊंचा उठाने के प्रयास किए जा रहे हैं। सरकारी परियोजनाओं, स्वैच्छिक संस्थाओं तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा निरन्तर किए जा रहे प्रयासों के बावजूद भी निरक्षरों की संख्या में भी निरक्षरों की संख्या में कमी कम ही है, और इस अभियान के केन्द्रों पर शोचनीय उपस्थिति, धनाभाव, कार्य एवं ध्येय-निष्ठा के प्रति परोक्ष उदासीनता और निरक्षरों को प्रलोभित करने के सीमित उपायों के कारण निरक्षरता उन्मूलन की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति नहीं हो पा रही है। नगरीय निरक्षर तो एक औपचारिकता तथा बदलाव के लिए कार्यक्रमों में थोड़ा-बहुत भाग ले भी लेते हैं, महाविद्यालयी संगठन तथा स्वैच्छिक संस्थाएं उन्हें प्रलोभित भी कर लेती है, किन्तु ग्रामीण निरक्षर तो कार्यक्रमों से कोई प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ न पाने की दृष्टि से मुख्यत: उदासीन ही रहते हैं। रोटी-रोजी की समस्या और बाबू न बनने की उनकी मानसिकता उन्हें वैसा करने के प्रति बाध्य अवश्य करती है। यही कारण है कि योजनाएं व्यवहार में कम और सरकारी बाध्यता के कारण कागजों पर कहीं अधिक तेजी से दौड़ रही है। अब, जबकि अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है, तो स्वत: ही यह प्रश्न उठता है कि देश की स्वतंत्रता के पश्चात् भी बढते निरक्षरों की भीड़ आखिर कब तक और कैसे साक्षर होगी? इसके लिए सरकारी बाध्यता तथा आंकड़ों की प्रगति को बलाए ताक रखते रखते हुए, पहले अब तक के कार्यक्रम एवं परियोजनाओं की पुन: पुन: समीक्षा करते हुए, पिछली विफलताओं के मूल कारणों को जानकर, उनका योजनाबद्ध ढंग से निराकरण करना होगा, अन्यथा यह साक्षरता का ज्वलन्त प्रश्न 21वीं सदी में और भी उग्र हो जाएगा। पढ़ी-लिखी गर घर की नारी, हो कुटुम्ब की शिक्षा सारी। सरकारी कार्यक्रमों से जुड़े व्यक्तियों को पहले से कहीं अधिक सक्रियता, ईमानदारी तथा ध्येयनिष्ठा से अपना दायित्व निभाना होगा। इसके लिए कड़े अनुशासन तथा नियंत्रण की आवश्यकता है। यदि राजनीति से जुड़े लोग साक्षरता के कार्यक्रम को अपना लें, तो निरक्षरता उन्मूलन की दिशा में एक क्रान्ति आ सकती है। देश में स्वैच्छिक संस्थाओं की भारी संख्या, जिनमें रोटरी क्लब, लॉयन्स क्लब, जेसीज, जायन्ट्स आदि प्रमुख हैं, यदि गांवों में साक्षरता कार्यक्रम चलाए, तो निश्चय ही वर्ष 2021 में होने वाली जनगणना में निरक्षरता के आंकड़े कम हो सकेंगे। स्मरण रखें, भारत आज भी गांवों में बसता है और ग्रामीण निरक्षरता को समाप्त किए बिना न तो पूज्य बापू का 'ग्रामीण स्वराज्य' का सपना साकार हो सकता है और न गांवों की पूर्व की गरिमा ही पुन: प्रतिष्ठित हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विरेन्द्र शुक्ल राजनीतिशास्त्र भारती भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पटना - 1994, पृ0 - 37
2. इण्डिया टुडे, 15 सितम्बर 1989, पृ0 - 20
3. जवाहरलाल कौल, दिनमान, 13-19 जनवरी 1995, पृ0-29
4. सुभाष काश्यप एवं विश्वप्रकाश गुप्ता, राजनीति कोश, पृ.- 24-25
5. इंडिया टुडे, 15 नवम्बर 1994, पृ0 द 56
6. सुदिप्त कविराज - हमारा शासन कैसे चलता है, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, 1989, पृ. - 44
7. सिंह प्र. प्रभुनाथ - राजनीति विज्ञान एवं भारतीय संविधान स्टूडेण्ट्स फ्रेण्ड्स प्रकाशन, पटना 2005 - पृ.- 310
8. सुखिया एस.पी. विजातम प्रशासन संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर प्रकाशन, आगरा -2005, पृ. - 167

****

ग्रामीण विकास आधुनिक सन्दर्भ में एक नीतिगत तत्व

डॉ. सुरेन्द्र कुमार * डॉ. अजय कुमार **

शोध सारांश – स्वतन्त्रता के पश्चात् राष्ट्रीय सरकार ने ग्रामीण विकास के दृष्टि से जमींदारी – प्रथा का उन्मूलन कर भूमि सुधार के कई कारगर उपायों को लागू किया। ग्रामीण गरीबों एवं समृद्धों के बीच की खाई को पाटने के लिए विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के तहत ग्रामीण विकास परियोजनाओं के रूप में सामुदायिक विकास योजना, गहन कृषि योजना, पैकेज प्रोग्राम के साथ कृषि विकास की कई योजनाएं लागू की गयी। उस रागय तक ग्रामीण विकास का अर्थ कृषि विकास के साथ अधिक जोड़ा जाता था, परन्तु इसका परिणाग उल्टा ही हुआ। उन्नत बीज, खाद एवं गहन कृषि के तहत बड़े कृषक और बड़े होते गये और छोटे कृषक और छोटे होते गये। साथ ही कृषि श्रमिकों की स्थिति बदत्तर होती गयी। इसको दृष्टि में रखकर पुन: एस. एफ0 डी0 ए0, एम. एफ0 ए0 एल0, एन0 आर0 ई. पी. तथा समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम जैसी कई रोजगार युक्त योजनाएँ शुरू कर ग्रामीण गरीबों में अतिश: पिछड़े वर्ग को उठाने का प्रयास किया गया और आर्थिक समानता कायम कर समाजवादी समाज की संरचना पर बल दिया गया।
शब्द कुंजी –ग्रामीण विकास, पंचवर्षीय योजना, तकनीकी ज्ञान, रोजगार, उत्पादन एवं उत्पादकता।

प्रस्तावना – किसी भी विद्या के अध्ययन का केन्द्रबिन्दु मानव है जो कि एक सामाजिक प्राणी है। मानव–जीवन के कई पहलु हैं, जैसे – सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं नैतिक आदि। इन सभी पहलुओं का विकास अबाध गति से होता रहता है जिनका अध्ययन सम्बन्धित विषयों के माध्यम से होता है। अत: विकास का आयाम काफी विस्तृत एवं व्यापक है। इन विविध आयामों में आर्थिक विकास का आयाम इतना महत्वपूर्ण एवं मूलभूत है कि इसके विकास के क्रम में अन्य आयाम भी प्रभावित होते रहते हैं। अर्थात इसकी गति ही दूसरों को गति प्रदान करती है। विकास एक गतिशील प्रक्रिया है जो उत्तरोत्तर एवं सतत् वृद्धि का अवसर प्रदान करती है। यह कोई स्थापित बिन्दु या लक्ष्य नहीं है जहाँ पहुँचकर इसकी प्राप्ति हो जाती है। बल्कि तकनीकी ज्ञान में वृद्धि एवं सामयिक स्थिति में परिवर्तन के फलस्वरूप इसकी मान्यताएँ, स्थापित बिन्दु एवं लक्ष्य भी बदलते रहते हैं। दूसरे शब्दों में, वृद्धि सतत् गतिशील प्रविधि है जिसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न तो होते रहते हैं, परन्तु उसकी प्राप्ति नहीं होती, क्योंकि वहाँ पहुँचते–पहुंचते वह बिन्दु आगे की ओर बढ़ता जाता है। उसकी प्राप्ति गति परिवर्तन को अवरुद्ध कर देगा, तकनीकी ज्ञान एवं विकास को सीमित कर देगा। इस तरह कहा जा सकता है कि गति परिवर्तन ही विकास है। यहाँ विकास का सम्बन्ध गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों तरह के परिवर्तनों से है। विकास की उपर्युक्त अवधारणा के आलोक में ही ग्रामीण विकास के स्वरूप को चित्रित करना है। ग्रामीण विकास एक पुराना विषय है, परन्तु इसकी विषय –सामग्री एवं सम्बन्धित सन्दर्भ समय समय पर बदलते रहे हैं। राजनैतिक गति, पूर्व परियोजनाओं के परिणामों एवं उनसे उत्पन्न परिस्थितियों के कारण ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में भी बदलते रहे हैं। उदाहरण स्वरूप भारत में रॉयल कमीशन ऑन एग्रोकल्चर 1928 के अनुसार ग्रामीण विकास का सम्बन्ध कृषि विकास से ही है। यही धारणा बहुत दिनों तक बनी रही। करीब 60 वर्षों के बाद भी योजना आयोग की, एक सम्यक ग्रामीण विकास से सम्बन्धित समिति ने 1972 में कहा कि बहुत ध्यान पूर्वक विचार करने के बाद हमलोग इस निर्णय पर पहुंचते हैं कि सीमित अर्थ में ग्रामीण विकास कृषि विकास के बराबर ही है। विस्तृत अर्थ में इसमें फसल उगाने के अतिरिक्त कृषि की सभी सम्बद्ध क्रियाएँ भी सम्मिलित की जाती है। ग्रामीण विकास की उपर्युक्त व्याख्या इस मान्यता पर आधारित थी कि गाँवों में सब कुछ सामान्य है और सभी लोग एक तरह के हैं, लेकिन इस गलत विश्वास का रहस्योद्घाटन प्रथम ग्रामीण विकास परियोजनाओं को लागू करने के बाद हुआ, क्योंकि इन परियोजनाओं का लाभ गाँव के बड़े भू- स्वामियों को ही मिला और वहाँ के कमजोर वर्ग- छोटे एवं सीमान्त किसान, भूमिहीन श्रमिक, ग्रामीण शिल्पकार एवं अन्य गरीबों की दशा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। इतना ही नहीं बहुतों की स्थिति तो और बिगड़ गयी। फलस्वरूप ग्रामीण समाज के विभाजित चरित्र का दरार और गहरा हो गया तथा स्पष्ट दिखने लगा। अत: ग्रामीण विकास की अवधारणा एवं उसके विषय वस्तु में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस होने लगी। 1970 के बाद इसकी व्याख्या बिल्कुल ही बदल गयी। बदलाव पर जोर देते हुए विश्व बैंक ने ग्रामीण विकास को एक नीतिगत योजना की संज्ञा दी एवं उसे इस तकनीकी से बनाने को कहा कि ग्रामीण समाज के विशेष–वर्ग गरीबों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में सुधार हो सके। इसके लिए उसने कहा कि विकास का लाभ ग्रामीण क्षेत्र के उन गरीबों को जाना चाहिए जो गाँवों में जीवन–यापन करते हैं। विश्व बैंक के अनुसार ग्रामीण विकास एक ऐसी संगठित कार्य पद्धति को व्यक्त करता है जिसके द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के व्यक्तियों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार का प्रयास किया जाता है। ग्रामीण विकास में राष्ट्रीय विकास के लाभों को ग्रामीण अंचलों में रहने वाले गरीब व्यक्तियों तक पहुँचाने की प्रकिया सम्मिलित होती है। विश्व बैंक द्वारा ग्रामीण विकास पर प्रकाशित एक पत्र के अनुसार 'ग्रामीण विकास के किसी राष्ट्रीय कार्यक्रम को अनेक कार्यों का मिश्रण होना चाहिये जिसमें कृषि उत्पादन बढ़ाने वाली, नई रोजगार योजनायें उत्पन्न करने वाली, स्वास्थ्य एवं शिक्षा में सुधार लाने वाली, संचार का विस्तार करने वाली तथा आवासीय स्थिति सुधारने वाली परियोजनाओं को सम्मिलित होना चाहिये।

* प्रभारी प्राचार्य, भद्रकाली महाविद्यालय, इटखोरीचतरा (झारखण्ड) भारत
** विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र विभाग) आर0पी0एस0 डिग्री महाविद्यालय, मदनपुर, चन्द्रपुरा, बोकारो (झारखण्ड) भारत

इस प्रकार ग्रामीण विकास ऐसे समन्वित कार्यक्रमों, क्रियाकलापों एवं नीतियों का समन्वित आधार है जिनके द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि एवं उसके सम्बन्धित चलाये जाने वाले कार्यों कृषि, वानिकी, मत्स्य पालन, ग्रामीण शिल्प और उद्योग, सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे का निर्माण की पद्धति के लिए जिसका कि अन्तिम उद्देश्य है—उपलब्ध भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का पूर्ण उपयोग, ग्रामीण क्षेत्र के जन सामान्य विशेष कर ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबों के लिए उच्चत्तर आय तथा बेहतर जीवन–यापन सुविधायें और विकास प्रकिया में उनकी प्रभावी भागेदारी। समानता एवं सामाजिक न्याय की दृष्टि से ग्रामीण धनी और गरीब के बीच खाई को कम करना ही विकास की प्रकिया है। ग्रामीण विकास के कुछ विशेषज्ञों ने इसे अपने–अपने ढंग से प्रकाशित करने का प्रयास किया है। किसी ने गाँवों के गरीबों के जीवन–स्तर में सुधार के लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास की बात कही है। तो किसी ने परम्परागत पुरानी ग्रामीण संस्कृति की जगह पर विज्ञान एवं तकनीकी पर आधारित परिवर्तित विकास को स्वीकारने और अपनाने को कहा है। कुछ विद्वानों ने ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं को उपलब्ध कराने की प्रक्रिया को ही ग्रामीण विकास कहा है। वास्तव में शहरों में औद्योगीकरण के माध्यम से रोजगार की सुविधा के अतिरिक्त स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, यातायात, संचार, पीने के शुद्ध पानी एवं बाजार इत्यादि की विशेष सुविधायें उपलब्ध रहती है। फलस्वरूप शहरी लोगों की आय अधिक होती है एवं उनका जीवन स्तर ऊँचा होता है। सामाजिक दृष्टि से भी रागानता होती है। इसी तरह यदि गॉवों में कुटिर एवं लघु उद्योगों की सुविधा प्रदान कर उन्हें रोजगार दिया जाय जिसरो उनके आय में वृद्धि हो और एक स्तरीय जीवन जीने की सुविधाएँ प्रदान की जाय तो ग्रामीण विकास सम्भव हो सकेगा। इसीलिए संक्षेप में कहा जाता है कि गाँवों का शहरीकरण ही ग्रामीण विकास का सही प्रकिया है। उपर्युक्त परिभाषाओं का यदि विश्लेषण किया जाय तो ग्रामीण विकास से सम्बद्ध निम्नलिखित तथ्य प्रकाश में आते हैं ग्रामीण व्यक्तियों के रहन–सहन के स्तर में सुधार जिसमें रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान, स्वच्छ वातावरण एवं अन्य सामाजिक सुविधाएँ सम्मिलित हैं। ग्रामीण क्षेत्रों का संतुलित विकास और बढ़ती हुई ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों की असामानताओं में कमी करना। उत्पत्ति के साधन भौतिक एवं मानवीय का पूर्ण उपयोग सुनिश्चित करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में उपयुक्त तकनीकी ज्ञान का प्रसार। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में आर्थिक संसाधनों के संग्रहण और संगठन के लिये आवश्यक संस्थानिक ढांचे का निर्माण जिसमें बैंकिंग संस्थाओं का विकास सम्मिलित है। ग्रामीण व्यक्तियों में विकास की नीतियों को अपनाने की इच्छा विकसित करना तथा समाज में न्यायिक वितरण सम्भव बनाना। इस प्रकार ग्रामीण विकास ग्रामीण जनता की गरीबी पर सीधा आघात करने का एक ऐसा समन्वित कार्यक्रम है जिसमें क्षेत्रीय संसाधनों का अधिकतम प्रयोग सम्भव करते हुए ग्रामीण जनता की रहन–सहन की दशाओं में सुधार करना है। संक्षेप में, ग्रामीण विकास से आशय ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले निम्न आय वर्ग के लोगों के जीवन–स्तर में सुधार लाना और उसके विकास के को आत्म पोषित बनाने से है। ग्रामीण विकास क्षेत्रीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग के उद्धेश्य पर आधारित है। ग्रामीण विकास के उद्देश्यों में निम्नलिखित बिन्दुओं को सम्मिलित किया जा सकता है ग्रामीण क्षेत्र के भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का पूर्ण उपयोग। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि पर आधारित उद्योगों का विकास करके रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना। ग्रामीण क्षेत्र में उत्पादन एवं उत्पादकता वृद्धि के लिये ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अनुरूप तकनीकी ज्ञान का प्रयोग करना। क्षेत्र विकास के लिये आरम्भ किये गये अनेक सामाजिक, आर्थिक कार्यक्रमों में स्थानीय व्यक्तियों को सम्मिलित करके क्षेत्रीय विकास के लिये प्रयास करना। ग्रामीण अर्थव्यवस्था और शहरी अर्थव्यवस्था के आर्थिक अन्तराल को कम करना। सभी ग्रामीण व्यक्तियों को एक समान आर्थिक कल्याण देने के लिए वितरण प्रणाली पर बल देना। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाना। ग्रामीण विकास के उपर्युक्त सभी उद्धेश्यों का आपस में सह–सम्बन्ध है। स्पष्ट है कि ग्रामीण विकास का विचार कृषि विकास की तुलना में विस्तृत है और कृषि विकास ग्रामीण विकास का एक आंशिक क्षेत्र मात्र है ग्रामीण विकास के आधारभूत तत्वों को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। ग्रामीण विकास के लिये उन संसाधनों का एकत्रीकरण किया जाता है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में निर्बल वर्ग में उपयुक्त दक्षता और योग्यता का विकास किया जाता है और उन समस्त साधनों को जुटाने का प्रयास किया जाता है, जिनमें इस योग्यता व दक्षता का प्रयोग हो सके। ग्रामीण विकास में निम्न आय वाले क्षेत्रों और वर्गो को पर्याप्त साधन उपलब्ध 13 कराने की व्यवस्था की जाती है और इस बात की उचित प्रबन्ध किया जाता है कि विभिन्न उत्पादकता और कल्याण सम्बन्धी सेवाएँ इस वर्ग को उपलब्ध हो जाए। इस प्रकार ग्रामीण विकास में उन समस्त कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जाता है जो मानव जीवन के विभि कराने की व्यवस्था की जाती है और इस बात की उचित प्रबन्ध किया जाता है कि विभिन्न उत्पादकता और कल्याण सम्बन्धी सेवाएँ इस वर्ग को उपलब्ध हो जाए।

निष्कर्ष – ग्रामीण विकास में उन समस्त कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जाता है जो मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं से जुड़े होते हैं, यथा — कृषि एवं सम्बन्धित क्रियाएँ, सिंचाई, पूरक रोजगार, शिक्षा, प्रशिक्षण, दूर – संचार, आवास एवं सामाजिक कल्याण आदि। ग्रामीण विकास एक अविरल प्रविधि है। इसकी परियोजनाओं की आंशिक सफलता से भी ग्रामीण समाज आगे की ओर बढ़ता है, परन्तु विकास की प्रविधि के आयाम बदल जाते हैं, जिससे विशेष तरह की समस्याएँ खड़ी हो जाती है और उनके निवारण के लिए नये कदम उठाने पड़ते हैं। इस प्रकार ग्रामीण विकास आधुनिक सन्दर्भ में एक नीतिगत तत्व बन गया है, जिसके अर्न्तगत गाँवों के गरीबों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में सुधार की बात आवष्यक है। छठी पंचवर्षीय योजना में कहा गया है कि ग्रामीण गरीबी का उन्मूलन ही छठी पंचवर्षीय योजना का मुख्य उद्देश्य है। इसी तथ्य को ग्रामीण– विकास – मंत्रिमंडल ने भी प्रधानता देते हुए कहा है कि छठी पंचवर्षीय योजना का ग्रामीण गरीबी उन्मूलन मुख्य उद्देश्य है और इस विभाग को इसके लिए मुख्य भूमिका निभानी है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में लिखा गया है कि ऊँची दर से औद्योगिकरण के बाद भी ग्रामीण जनसंख्या के अधिक भाग को संगठित उद्योगों में पूर्णत: रोजगार नहीं दिया जा सकता। अतरू ग्रामीण क्षेत्रों में ही अतिरिक्त रोजगार का निर्माण करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 अब्दुल रशीद : आलेख – ग्रामीण विकास क्या है ? कुरुक्षेत्र मार्च 2002
2. के0 विजय राघवन : रूरल्स डेम्लपमेन्ट टाइम्स इण्डिया, 26.11.2005 टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली
3. मजुमदार, वी. पी. : दी ग्रेट मैन ऑफ शाहाबाद
4. डॉ. दुबे, गिरीजा प्रसाद : ए0 डी0, सासाराम, रोहतास ग्रामीण महिला

विकास हेतु शिक्षा की आवश्यकता कुरुक्षेत्र, अप्रैल 1993 प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली

5. कृष्ण स्वरूप शर्मा : समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम कितना व्यवहारिक कुरुक्षेत्र, अप्रैल 2002.

6. हिन्दुस्तान (दैनिक) हिन्दुस्तान (दैनिक) सक्सेना हरि मोहन : 20. 11. 2005

7. भारत में मण्डी नियम का विकास, योजना (हिन्दी) 16 मार्च 2002 प्रकाशसन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली

****

Human Resource Accounting Practices in Indian Industries

Dr. Sanjeev Kumar Bansal*

Abstract - Human Resource Accounting is a process of classifying, budgeting, and conveying the investment and cost of human resources incurred in the organization including wages & salaries and training expenses that are presently not included in or disregarded in the calculation or accounting practices.

Human resource accounting has very high significance not only for the management, but also for analyst and even for employees. It helps management in better utilization, planning management of human resources in the organization while for analyst, Even today, when a good deal of work has been done in this field, it is very much unfortunate that there is not only set pattern or generally accepted method either for valuation of human resource or for their recording in books of accounts or for the disclosure of information by means of different statements. The study focuses on the calculation of the value of human resources at different levels of organization & to determine the human resource efficiency quotient. Five Public Sector Undertakings are examined in the study. The present study based on the primary data related to the reporting of human resources. The incorporation of the value of HR is very expensive and not easy to calculate the value of HR and if they calculate it, then the value will not indicate the true position of human resource

Key Words - Human Resource Accounting, Indian Human Resource Practices, Human Assets, Human Efficiency.

Introduction - Human resource is the most fundamental part of any organization, as it makes sure that there exists an interaction between financial and all other physical resources towards the accomplishment of organizational objectives and goals.

Human Resource Accounting gives information regarding inner strength of organization and helps in making decisions regarding long-term investment in that organization. The employee's bargaining power and performance are also affected by this. But, in spite of having such importance, study of human resource of an organization had not been given required attention by management thinkers for years. Under the constraints the financial statements are prepared pursuant to the Company Law in India. There is no scope for showing any significant information about human resources in financial statements except the remuneration paid to them and the number of employees getting compensation beyond certain amount per annum.

But there is nothing to prohibit the companies to attach information about the worth of human resources and the results of their performance during the accounting period in notes or schedules.

The following are the general considerations in the working of the HR concept by organizations:

1. Only internal human organization (employees) is considered. External organizations like customers are not considered.
2. All categories of employees are included. The value of employee potential services is considered.
3. HR value is worked out on certain standardized formula developed by experts.
4. A 12% discount rate is adopted.
5. Employees are classified according to age and pay scales under six categories i.e. executives, supervisors, supporting technical staff, skilled artisans, unskilled and semi-skilled workers and clerical staff.
6. Weighted average is calculated for each group on information of total number of employees at each incremental stage and in each grade.
7. Future number of employees is worked out on the basis of general promotion policy.
8. Employee considerations include direct and indirect benefits.

HRM and HRA is now followed by most of the medium and large scale companies in India as there is awareness of the benefits in terms of Revenue, productivity, flexibility in skill development and so on. What used to be a designation like Personnel Management is now Human Resources Management and the manager can grow up to Director level in some companies. That is the importance bestowed by companies for the Human Resources function.

Research Methodology - For pursuing any research there should be a proper research methodology. A detailed plan

*Sr. Lecturer, Department of A.B.S.T., S.N.D.B. Govt. P.G. College, Nohar (Raj.) INDIA

of the research methodology is provided below:

Research Problem - The research problem of the study is "Human Resource Accounting Practices in Indian Industries"

Objective of the Study - The main objective of the study is to measure the value of human resources in the corporate financial statements. However, the specific objectives are as follows:

1. To study the value of human resources at different levels of organization.
2. To calculate per capita value of human resources.
3. To study hierarchical per capita HR.
4. To study per capita HR v/s per capita sales
5. To determine the human resource efficiency quotient.

Scope of the Study - The study is confined to 5 Indian Companies for reporting of present human resources. The units selected for the study of reporting are:-

1. Bharat Heavy Electricals Ltd.(BHEL)
2. Minerals and Metals Trading Corporation (MMTC)
3. Oil and Natural Gas Ltd. (ONGC)
4. Cement Corporation of India Ltd. (CCIL)
5. Hindustan Zinc Ltd., Udaipur (HZL)

Sample of Study - Initially, Researcher referred the concept of Human Resource Accounting thoroughly. The next phase was to refer the existing Review of Literature. Research methodology includes need, research problem, and objectives, scope of the study and profiles of the sample companies. The Study consists of reporting of human resources in selected 5 organizations.

Sources of Data Collection -The data used for this study is primary data. Questionnaires sent to selected companies and on that basis data is collected and analyzed.

Data Analysis - To process the data scientifically and to make it easily understandable statistical method of tabulation is used. Compilation of data was done with the aid of computers. MS-Excel was used for data processing and presentation.

Limitation of the Study - Every research conducted has certain limitations. The limitations of this study are as follows:

1. Although 5 Companies are being taken into consideration, still data collected is about the present number of employees working in organization. There is no information of past employees.
2. The study being corporate sector or company specific cannot be generalized.

Data Collection & Interpretation - In India, the financial statements of the companies are prepared as per the provisions of the Companies Act, 1956. The act does not provide for disclosure of any significant information about human resources employed in a company except that the companies have to give by way of a note to the profit and loss account. However, there is nothing in the act which prevents a company from giving details about its human resources by way of supplementary information attached with its financial statements. A number of people have contributed to the development of models for the purpose of evaluating the human resource. They do not deal with the mode of recording and reporting of accounting information relating to human resource on the books of accounts of financial statements of a firm. This has been left to the description of the accounting bodies that have got to develop a generally accepted basis for valuation, recording and reporting of human resources information.

Prof. Chakraborty has also suggested that the recruitment, hiring, selection, development and training cost of each employee should be recorded separately. This should be treated as deferred expenditure and may be written-off over the expected average stay of the employee in the organization. The deferred portion, not written-off, should be shown in the balance sheet of the organization. If there is premature exit of an employee on account of death, retirement etc. the balance of the deferred revenue expenditure attribution to that person should be written-off against the income of the year of the exit itself.

As regards disclosure of accounting information relating to the human resources, Prof. Chakraborty has suggested that 'human assets' should be shown under the heading "investment" in the balance sheet of an organization. He has not favored its inclusion under the heading " fixed assets " since it would cover problem of depreciation, capital gains and losses in the event of their exit. Similarly, he has not favored their inclusion in current assets on the ground that this will not be in conformity with the general meeting of the terms.

HR Reporting Practice - Very few companies in India, particularly in the public sector, are at present reporting human assets valuations. Most significant among them are: Bharat Heavy Electricals Ltd.(BHEL), Minerals & Metals Trading Corporation(MMTC), Oil & Natural Gas Commission Ltd.(ONGC), Cement Corporation of India Ltd. (CCIL) and Hindustan Zinc Ltd, Udaipur(HZL).

Bharat Heavy Elecricals Ltd.(BHEL) - BHEL was set up in Nov. 1956 at Bhopal to cover conversion, transmission, utilization and conservation of energy in core sector of the economy like power industry and transportation and fulfils vital infrastructure needs of the country. Today, the company has 14 manufacturing divisions of service centre and 4 power sector regional centers spread all over India and abroad to provide prompt and effective service to customers. Human resources have been valued on the model based on Lev and Schwartz with the following assumptions:

1. Present pattern in employee compensation, including direct and indirect benefits, including the effect of provision for wage division.
2. Normal career growth as per the present policies with vacancies filled from the levels immediately below.
3. Weightage for changes in efficiency due to age, experience and skill.
4. Application of a discount factor of 12% per year on the future earnings to arrive at the present value

MINERALS AND METALS TRADING CORPORATION (MMTC) - It was incorporated in 1963 and has grown as India's premier company in the field of international trade to export the minerals and to import the raw material for the domestic industry with the expansion and diversification of its trade portfolio. It has a corporate head quarter in Delhi and regional offices and 44 sub-regional offices spread all over the country to carry out its business.

In MMTC, human resources have been evaluated by working out the present value of the anticipated future earnings of the employees after taking into account the present pay scales and the promotional policies. For arriving at the present value of future earnings of the employees, a discount factor of 12% per ann. has been applied. The computation has been based on the guidelines and principles enunciated in Lev and Schwartz model. The present value of human earnings per employee amounted to Rs.1.153million and the value added per employee of human capital is Rs.0.870million.

OIL AND NATURAL GAS COMMISSION LTD. (ONGC) - ONGC was established as a statutory corporation on 23June, 1993 at New Delhi and its corporate headquarter at Dehradun with project centre office located throughout the country. Intellectual capital is considered one of the most valuable assets of this organization. It is the key to its success. Development of human resources facilitates an organization to meet the challenges of the ever changing business scenario. For valuation of human assets, SAIL has adopted the ECONOMIC VALUATION MODEL METHOD and the basic model as conceived by Lev and Schwartz. Minor modifications have been made to suit special requirements. Discounting has been done at 15%. SAIL has classified human assets into following categories i.e. managers, executives, supervisors, semi-skilled and unskilled workers. ONGC has always given the highest priority to human resource development by formulating enlightened personal policies from time to time in order to achieve its goal objectives.

CEMENT CORPORATION OF INDIA LTD. (CCIL) - It was set up in January 1965, with the objectives of exploration and providing limestone reserves and getting up sufficient manufacturing capacity of cement so as to help in achieving targets of domestic diamond. CCIL is fully conscious towards human activities and gives almost attention and priority to maintain the human assets in the fine fertile. The procurement, development, compensation, integration and maintenance of human resources are thoughtfully planned, skillfully organized, carefully controlled and directed so that individual's needs, organizational goals and social objectives are successfully accomplished. Balance sheet of CCIL says, "In the absence of clear cut, well-defined and universally accepted model for evaluation of the economic worth of human assets of a company, an attempt has been made to assess the same by working out the present value of the anticipated future earnings of the employees taking into account the present pay scales and the promotional policies followed". The computation has been based on the guidelines and principles enunciated in the economic models developed by Lev and Schwartz, Eric Flamholtz and Jaggi and Lew with appropriate modifications.

HINDUSTAN ZINC LTD., UDAIPUR (HZL) - It is one of India's leading base metal producers. HZL was incorporated on 10January, 1966 after takeover of erstwhile Metal Corporation of India to develop mining and melting capacities to substantially meet the domestic demand of zinc and lead metals. HZL does human resource accounting and uses Lev and Schwartz model with the following assumptions:

The present pattern of employee compensation has been taken into account.

Career growth has been projected as per present policies with vacancies filled from the level immediately below.

Present value of future earnings is calculated assuming a discount factor of 12%.

Findings - All the organizations have applied basically Lev and Schwartz Model for assigning value to their human resource. A number of organization adopted HRA practice and started reflecting the value of human resources in their annual accounts as supplementary information or as a part of social accounts. All the organizations are more conscious and elaborative in regard to HRA.

The forms of accounting and various components of accounting are not uniform in all the organizations. All the enterprises follow someone similar practice evolved out of the synthesis of the three approaches based on economic value as advocated by Lev and Schwartz, Flamholtz and Jaggi and Lew may appear to be an improved version. The present value approach to HRA is still in the experimental stage. But, it is already required in valuing some specific under general accepted human accounting standards. HR value may reflect the present value of future liability of an organization towards employer wage payment. It does not reflect the value of HR as an asset, nor does it facilitate to manage the same as an asset as against expense in the traditional accounting practice. The cost of the wages may have to be judged in relation to the services they render to access their value and improve organizational productivity. Besides the wages as a servicing cost of employees, the cost of manpower acquisition may be no less relevant.

Formulation of generally accepted human accounting standard is essential at this juncture. It may not represent the value of the HR as proposed in the historical cost based HRA, but the same cost elements may have to be recognized while judging the extent of the services, the employees render to the organization to reflect their value. The value assigned by Indian companies to their human resources just denotes the present value of the costs with respect to remaining service life of an employee in the organization rather than their contribution that it will receive from HR. It appears that the organization have stressed

more upon the Human capital Accounting rather than Human Asset Accounting.

Until now, the efforts made are to value human resources and to integrate and present their value in the conventional financial statements. But, if the reality of HRA is to be derived, the concept of preparing financial statements has to be changed. Financial statements have to be prepared with a view which is based on human beings. Instead of the present view based on capital, the financial statements so prepared to show the human resources as assets to be termed as human based financial statements. Now, it is required under law for undertakings to maintain a separate item in their balance sheet about such HR activities undertaken by them. So, undertakings must implement HRA with vigor and clear directions.

He present study based on the primary data related to the reporting of human resources. It can be inferred on the basis of different information that the value of human resources not depend upon the number of persons employed or in other words, it is not necessary that if the number of persons are higher than value will be more. The reason for higher value may be the amount paid to the employees. The manufacturing companies are paying fewer amounts to their employees so their value of human resource is less in spite they employed large number of workforce. The value of IT Companies is higher because the salaries at higher level and middle level are higher in relation to lower level. On the other hand, technical companies having the less worth at lower level in comparison to the manufacturing companies because these companies employed more work-force at top and middle level, that is why they have highest value at the top level.

It can also be inferred that value of employees is higher than sales per employee. If there is reverse situation, companies need not pay much amount to their employees because they are not much efficient to receive such a large amount. Employees should try to improve themselves to increase the profit of the companies, otherwise it will effect negatively not only to the organization but also to the employees.

Employee efficiency plays a very important role to increase the production, sales and profits of the company. Employee efficiency means how effectively and efficiently employees are working. If employee works properly with caliber and interest, it will be profitable for any organization and if they will not work properly then it leads to failure of the organization. Human capital is the most important asset for any organization because all other resources of production directed by human resources. So, success or failure of any organization depends upon the efficiency of employees.

On the basis of response of questionnaire, it can be inferred that companies want to report human resources in their financial statements but according to them the incorporation of the value of HR is very expensive and not easy to calculate the value of HR and if they calculate it, then the value will not indicate the true position of human resource. The annual reports of the companies each from the public and private sector were reviewed to find the organizations reporting HRA information in their annual reports.

These organizations mainly apply Lev and Schwartz Model for valuation of HR. This model calculates the value of HR in terms of the present value of future earnings of HR. The model has calculated the potential costs associated with HR rather than worth of investment in HR.

The HRA information in the annual reports of these organization forms a part of supplementing information. It lacks authenticity since it is unedited. Moreover, the organizations do not disclose in their annual reports all variable which have been considered by an organization in the valuation of HR.

Obstacles in HRA - Although, the theory of HRA appears to be useful, there is still lack of adequate standards for the valuation of HR. The mere process of putting number to things can easily be taken outside the context of their proper use. It is likely that managers will treat human quantitative data not different from quantitative data regarding the physical plant and machinery.

The managers may use HRA as a means of manipulating the employee. She/he may decrease the value of an employee as a form of punishment or control. This may be done by altering the variables like the probability of an employee being promoted to the next state, future increments etc., determining the value of HR. The employee's bargaining power might be increased if his/her value was known. However, power might be increased if his/her value was known.

Conclusion - HRA being an emerging area in accounting has greater potential for further research. The model devised so far, for the valuation of HRA, has been developed in USA keeping into consideration the environments prevailing there. There is a great need to review their applicability in India, a country which is substantially facing different environments.

The special studies needed periodically to calculate cost of turnover, cost-benefit analysis of training and the cost of labor etc., must be a joint effort since many value judgments and assumptions must be made and understood by the prepares of data as well as the user. HRA has a promise; it has not yet met the test of usage. Much more research is necessary before HRA can possibly be useful to operating managers.

References :-

1. Das Hari - Refining Human Resource Management. The Management Accountant, July 1998.
2. Jaggi B and Lau - Towards a Model of Human Resource Valuation, Accounting Review October, 1974.
3. Rensis Likert, Human Organization, its Management and Value, McGraw Hill, New York 1967.
4. Raul, R.K. - 'A Behavioural Approach to Human Resource Accounting' , The Management Accountant,

July 1996

5. Tomassini L.A - Assessing the Impact of Human Resource Accounting. An Experimental Study of Managerial Decision. Preferences The Accounting Review 1972, pg.904-914.
6. Verma Siwalia Bihari - Human Resource Accounting Practices in Public Undertakings in India - The Management Accountant - August 1998.
7. Jena R.K - Some Aspects of Human Resource Accounting, The Indian Journal of Commerce, March 75, pg.44- 51.
8. Porwal, L.S. Accounting Theory, Tata McGraw Hill, Company, New Delhi.
9. Sharma, R.K., Gupta Shashi K., Management Accounting, Kalyani Publishers.
10. Kothari, C.R.(1990), Research Methodology; methods and Techniques, Wishwa Prakashan, New Delhi.
11. Ahmed, A. “Human Resource Accounting: Techniques & Accounting Treatment, DU website: http: ssrn. Com / author Ibid.
12. Palanivelu VR (2007). Accounting for Management. Lakshmi Publishing (P) Limited. New Delhi: 399-403
13. Kamal Gosh Ray (2010). Mergers and Acquisitions. prentice -Hall of India private limited, New Delhi: 203-210
14. Tyagi CL, Madhu Tyagi (2003). Financial And Management Accounting. Atlantic Publishers and Distributors. New Delhi: 441

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

माध्यमिक स्तर पर (ALM) शिक्षण प्रविधि तथा परंपरागत शिक्षण द्वारा कक्षा के वातावरण, विद्यार्थियों की सहभागिता तथा छात्रों की उपलब्धि पर पडने वाले प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन

श्रीमती धर्मिष्ठा शेरवाल शर्मा *

शोध सारांश – The paper uses a survey of existing education policy and plans. Development of the child is not only a precondition but also a product of education. **What is active learning and why is it important?** Research and anecdotal evidence overwhelmingly support the claim that students learn best when they engage with course material and actively participate in their learning. Yet the traditional teaching model has positioned student as passive receptors into which teachers deposit concepts and information. The model has emphasized the delivery of course material and rewarded students adept at reflecting the course content in assessments. The spoils have tended to go to students with good short-term memories and reading skill.

प्रस्तावना – मानव अपने अनुभवों से ही सीखता आया है, लेकिन कुछ अच्छे या बुरे अनुभव उसने अपने साथियों या अपने से बड़ों अथवा छोटों को इस उद्देश्य से बाँटने चाहे कि, गलतियों का दोहराव न हो या अपने अनुभव से उसने जो कुछ अच्छा सीखा है, उसे ज्ञान रुप में संचित किया जा सके तथा जिन तथ्यों को वह जान चुका है, आने वाली पीढ़ी उन्हें जानने में अपना समय नष्ट करने की बजाय नये तथ्यों को जानने का प्रयास करे। इस प्रकार सीखे गये ज्ञान को स्थानान्तरित करने की आवश्यकता के साथ ही शिक्षण का जन्म हुआ। जैसे–जैसे मानव सभ्यता का विकास होता गया वह अपने प्रयासों से इन अबूझ पहेलियों को सुलझाता गया,साथ ही साथ अपनी बुद्धी द्वारा अर्जित ज्ञान को वह आने वाली पीढ़ी को उपहार स्वरुप भेंट करता रहा, इससे उसमें सिखने के साथ–साथ सीखाने की भी नई प्रेरणा का विकास हुआ। 'सीखाने की व्यवस्थित प्रक्रिया ही शिक्षण है।'

शिक्षण और सीखने का घनिष्ठ सम्बन्ध है। वर्तमान में विद्यालय के सीमित वातावरण में शिक्षकों के सामने सदैव यह प्रश्न रहता है कि– 'बालकों को किस प्रकार सीखायें कि उनका सर्वांगिण विकास संभव हो सके।' आज शिक्षा को क्रियाशीलता से ओत प्रोत होना चाहिये, ऐसी शिक्षा जो मानव को अनुकरण करने वाला न बनाए,बल्कि उसे रचनाकार बनाये, जिससे उसकी कृति को सराहनीय बिन्दुओं के आधार पर देखा जा सके और यह तभी संभव है जब शिक्षा में क्रियाशीलता का आगमन हो।

'शिक्षण की ऐसी विधि जिसमें बच्चे स्वयं सक्रिय होकर सीखते हैं।'

सक्रिय अधिगम प्रविधि द्वारा शिक्षण कार्य सर्वप्रथम देश के तमिलनाडू राज्य में 'सर्व शिक्षा अभियान' के अन्तर्गत the school,Krishnamurti foundation India [KFI school] Channai के सहयोग से सत्र 2007–08 में प्रारम्भ किया गया था। इसके सकारात्मक परिणामों को देखते हुवे इस प्रविधि को मध्य प्रदेश में 'सर्व शिक्षा अभियान' के तहत 500 पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में सत्र 2009–10 में लागू किया गया था। अब इसे और अधिक विद्यालयों में लागू किया गया है।

A.L.M. क्या है ?

A.L.M. एक ऐसी प्रविधि है जो छात्रों को मौका देती है।

TIGER प्रारुप :–

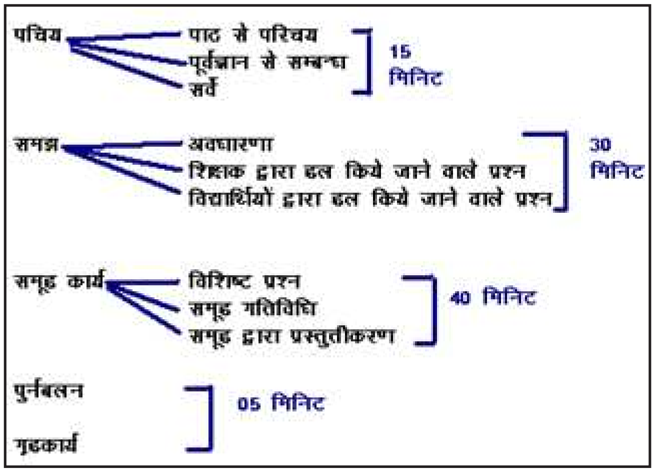

अध्ययन की आवश्यकता महत्व :

* शोधार्थी (शिक्षा) विक्रम विश्वविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

1. वर्तमान में यह योजना पायलेट प्रोजेक्ट के रूप में चयनित विद्यालयों में लागू है। शोध के परिणामों पश्चात् राज्य के समस्त माध्यमिक विद्यालयों में छात्र क्रियाशीलता पर आधारित इस योजना को जारी किया जा सकेगा।
2. माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में 'छात्र क्रियाशीलता' के सिद्धान्त अनुरूप शिक्षण कराने की शैक्षिक रणनीति का निर्माण सम्भव है।
3. शाला का वातावरण विद्यार्थियों की सक्रियता एवं उनकी शैक्षणिक उपलब्धि की जानकारी से शालाओं में उत्साहजनक शिक्षण की योजना निर्मित की जा सकेगी।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. ALM योजना तथा परम्परागत शिक्षण व्यवस्था में अध्ययनरत् बच्चों की सक्रियता (छात्र सहभागिता) का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. ALM तथा परम्परागत शिक्षण व्यवस्था में संचालित कक्षा के वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. ALM योजना तथा परम्परागत शिक्षण व्यवस्था अन्तर्गत अध्ययनरत् विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना :

1. ALM तथा परम्परागत शिक्षण व्यवस्था में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की सक्रियता (छात्र सहभागिता) में कोई सार्थक अन्तर प्राप्त नहीं होगा।
2. ALM तथा परम्परागत शिक्षण व्यवस्था में संचालित कक्षाओं के वातावरण में कोई सार्थक अन्तर प्राप्त नहीं होगा।
3. ALM योजना तथा परम्परागत शिक्षण व्यवस्था में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर प्राप्त नहीं होगा।

अध्ययन का क्षेत्र (परिसीमन) – शोधकार्य का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होता है, परन्तु शोध कार्य में समय व साधन दोनों ही सीमित होते हैं।

अध्ययन की प्रकृति – अध्ययन की प्रकृति सर्वेक्षणात्मक है।

न्यादर्श (Sample) चयन – 4 माध्यमिक शालाऐं (ALM चयनित शालाऐं) बड़नगर विकासखंड की 4 परम्परागत शिक्षण व्यवस्था से संचालित शालाओं द्वारा – यादृच्छिक आधार पर 15–15 विद्यार्थियों को लिया गया है।

अनुसंधान के उपकरण :

1. अवलोकन सारणी।
2. प्रश्न पत्र द्वारा जांच परीक्षण।

अनुसंधान की प्रविधि – अवलोकन सारणी का निर्माण ,छात्र सहभागिता हेतु , कक्षा के वातावरण हेतु, परीक्षण प्रश्न पत्र का निर्माण भाग-8 के हिन्दी एवं गणित हेतु पृथक – पृथक प्रश्न पत्र तैयार किए गए।

प्रयुक्त सांख्यिकी तकनीक – समान्तर माध्य (M) , प्रामाणिक विचलन (sd) , t या CR परीक्षण तथा स्वतंत्रता अंश df का प्रयोग किया गया है

प्रदत्तों का विश्लेषण

परिकल्पना 1–

df	0.05	0.01
22	2.07	2.82

गणना द्वारा प्राप्त t का मान **4.72** जबकि 22 df (degree of freedom) का सारणी में 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर पर मान क्रमश: 2.07 तथा 2.82 है। अत: 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर पर स्पष्ट है कि दोनों शिक्षण पद्धतियों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर है।

परिकल्पना 2 –

df	0.05	0.01
22	2.07	2.82

गणना द्वारा प्राप्त t का मान **6.98** जबकि 22 df (degree of freedom) का सारणी में 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर पर मान क्रमश: 2.07 तथा 2.82 है। अत: 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर पर स्पष्ट है कि दोनों शिक्षण पद्धतियों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर है। प्राप्तांकों का ALM आधारित शिक्षण अन्तर्गत मध्यमान 21.1 तथा परम्परागत शिक्षण अन्तर्गत मध्यमान 12.1 है।

परिकल्पना 3 –

df	0.05	0.01
118	1.98	2.62

118 df पर t का मान 0.05 सार्थकता स्तर पर 1.98 एवं 0.01 सार्थकता स्तर पर 2.62 है। अत: 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर के ALM आधारित शिक्षण अन्तर्गत मध्यमान 18.45 तथा परम्परागत शिक्षण अन्तर्गत मध्यमान 10.25 है। स्पष्ट है कि दोनों शिक्षण पद्धतियों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर है। **गणित** विषय के लिये परीक्षण प्राप्तांकों का ALM आधारित शिक्षण अन्तर्गत मध्यमान 18.5 तथा परम्परागत शिक्षण अन्तर्गत मध्यमान 16.8 है। स्पष्ट है कि दोनों शिक्षण पद्धतियों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर है।

शोध कार्य के निष्कर्ष –

1. ALM शिक्षण विधि से अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों की छात्र सहभागिता, जिसमें गतिविधि में सहभागिता, सहपाठी संग सीखना, सृजनात्मकता, स्वयं करके सीखना आदि सम्मिलित है, परम्परागत शिक्षण की तुलना में अधिक पाई गई है।
2. ALM शिक्षण विधि से अध्यापन किए जाने वाले विद्यालयों में कक्षा का वातावरण, जिसमें बैठक व्यवस्था, स्व अनुशासन, विद्यार्थियों में समन्वय, अध्ययन में रूचि आदि सम्मिलित हैं, परम्परागत शिक्षण की तुलना में अधिक बेहतर पाया गया है।
3. ALM शिक्षण विधि से अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि परम्परागत शिक्षण प्रक्रिया से अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों की तुलना में समस्त विषयों में उच्च पाई गई है।

शैक्षिक उपादेयता पर आधारित सुझाव –

1. बच्चों की अध्यापन में सक्रिय सहभागिता एवं बाल केन्द्रित शिक्षण पर आधारित अन्य योजनाओं पर अध्ययन किया जाना चाहिए जो बच्चों की उच्च शैक्षणिक उपलब्धि हेतु लाभकारी हो।
2. प्रस्तुत शोध कार्य बड़नगर विकासखंड के संबंध मे किया गया है। ALM शिक्षण व्यवस्था के परिणामों का अध्ययन अन्य जिलों के परिपेक्ष्य में या संपूर्ण राज्य के परिपेक्ष्य में भी किया जाना चाहिए।
3. माध्यमिक विद्यालयों में ALM के भरपूर प्रयोग पर जोर दिया जाना चाहिए और इस हेतु शिक्षकों को पृथक से प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। यह प्रशिक्षण पूर्णत: ALM सामग्रियों के उपयोग, प्रचालन एवं निर्माण पर केद्रित होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 1985 डॉ. एम. एस. माथुर, – शिक्षा के सामाजिक दार्शनिक तथा

आधार विनोद पुस्तक मंदिर आगरा
2. 1985-86 आर. ए. शर्मा - अनुसंधान परिचय, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ
3. 1991 सुरेश भटनागर आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ
4. 1995-96 डॉ. गुरूचरण दास त्यागी - उदीयमान भारत में शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा
5. आर. ए. शर्मा - शिक्षा अनुसंधान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
6. 1997-98 पारसनाथ राय, - अनुसंधान परिचय लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा
7. 2001 डॉ. प्रीति वर्मा, - आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मंदिर-आगरा-2,3
8. 2007 नीरजा आर्य,पी.नारंग,अंजली जैन, - शिक्षा जोश खंड-II के.एस.के. पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स
9. 2008 डॉ. महेन्द्र कुमार मिश्रा, - शिक्षा विश्वकोष अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस भाग-III,भाग-II,भाग-I
10. 2009 प्रीति वर्मा - मनोविज्ञान और शिक्षा में सांख्यिकी विनोद पुस्तक मंदिर,
11. 2009 पी. डी. पाठक, - शिक्षा मनाविज्ञान -विनोद पुस्तक प्रकाशन
12. Website of ALM Google : Internet

****

आधुनिक कविता और धर्मवीर भारती का अंधायुग एक विवेचन

डॉ. सूर्यप्रकाश नापित *

प्रस्तावना – आधुनिकता कए जीवन मूल्य है, जिसमें समसामयिकता का ऐतिहासिक संदर्भ तो होता ही है, साथ ही परंपरा की अवहेलना, प्रयोगधर्मिता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, यान्त्रिक सभ्यता, बौद्धिक जटिलता, धर्म-निरपेक्षता, अन्तर्राष्ट्रीयता, व्यक्तिवादी जीवनपद्धति, मनोविश्लेषणवाद, प्रकृतिवाद, युग-संत्रास, अस्तित्ववादी विचारणा, आदिम जीवन स्थिति, नये नैतिकमूल्य- निम्नमध्यवर्गीय जीवन बोध और विभिन्न क्रिया-प्रतिक्रियात्मक ऊहापोह भी सम्मिलित है। अत: आधुनिकता वह प्रक्रिया है जो समाज और साहित्य की विभिन्न विधाओं में स्वत: जन्म लेने वाली परिस्थितियों को आत्मसात करने के लिए प्रयत्नशील है एवं सतत् क्रियाशील नवीन जीवन दृष्टिरूप में जीवन की सार्थकता और मानवीय सम्प्रेषणीयता को साहित्य में अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए नवीन भावभूमि और शिल्प को खोजती है।

द्वितीय महायुद्ध के भीषण परिणाम और मूल्य संकट ने विभिन्न नवीन उद्‌भावनाओं को जन्म दिया। प्रयोगवादी कवि ऐसी ही भावभूमि का परिणाम है। हिन्दी साहित्य में प्रयोगवाद का आविर्भाव तार सप्तक के प्रकाशनकाल सन् 1943 से माना जाता है। तार सप्तक के सात कवि थे- मुक्तिबोध, नेमिचन्द जैन, भारतभूषण अग्रवाल, डॉ. प्रभाकर माचवे, गिरिजा कुमार माथुर, रामविलास शर्मा, और श्री अज्ञेय। इसी काव्यधारा में दूसरा सप्तक 1951 में प्रकाशित हुआ, इस काव्य संकलन की भूमिका में भी अज्ञेय ने स्पष्ट लिखा है कि वे प्रयोगवादी नहीं है, मात्र प्रयोग उनका लक्ष्य भी नहीं है। प्रयोग का कोई वाद नहीं है हम वादी नहीं रहे। न प्रयोग अपने आप में इष्टसाध्य है। ठीक इसी तरह कविता का कोई वाद नहीं है, कविता भी अपने आप में इष्ट या साध्य नहीं है।[1]

प्रयोगवाद स्पष्टत: पुरानी मान्यताओं के प्रति विद्रोह, काव्य रूढियों एवं मार्क्सवादी काव्यधारा की संकीर्ण विचारधारा के विपरीत एक आंदोलन था जिसमें प्रयोगवादी भी अहंवादिता, पलायन प्रवृत्ति, विदेशी प्रभाव, बुद्धिवादिता एवं भावहीनता का शिकार हो चला था और 1956 तक आते-आते नए कवियों ने नयी कविता के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया जिससे नयी कविता की अनेक किस्में आगे चलकर प्रस्फुटित हुई।

डॉ0 भारती नयी कविता के समर्थकों में से एक है जिनके अनुसार 'नयी कविता' प्रथम बार समस्त जीवन को व्यक्ति या समाज, इस प्रकार के तंग विभाजनों के आधार पर न मानकर मूल्यों की सापेक्ष स्थिति में व्यक्ति और समाज दोनो को मापने का प्रयास कर रही है।'[2] डॉ0 भारती को अज्ञेय द्वारा सम्पादित तार सप्तकों में 'दूसरा सप्तक' में स्थान प्राप्त हुआ और यहीं से उनकी साहित्य साधना पाठकों के मध्य प्रस्तुत हुई। नयी कविता के माध्यम से डॉ0 भारती नयी पीढी पर छा गये। अंधायुग औश्र कनुप्रिया के कुछ अंश पहली बार नयी कविता में प्रकाशित हुए तथा बहुसंख्यक कवियों पर देखते ही देखते भारती का व्यक्तित्व छाय गया।'[3]वस्तुत: डॉ0 भारती का कविरूप तारसप्तक एवं नयी कविता के माध्यम से ही विकसित हुआ और अल्पावधि में ही महत्वपूर्ण ख्याति प्राप्त हुई।

डॉ0 भारती की अंग्रेजी काव्य में बचपन से ही रूचि रही, फलस्वरूप उनका स्वयं का व्यक्तित्व रोमानी भावबोध से परिपूर्ण हो गया। छाया-वाद की वायवीयता और निर्जीवता का विरोध कर भारती ने भी चाहा कि वे कविता में यथार्थ जिन्दगी भर दें। कविता की मुख्य कसोटी प्रभाव डालने की शक्ति को स्वीकृत कर भारती इस साध्य हेतु साधन रूप को स्वीकृति प्रदान करते हैं। किन्तु प्रयोग मात्र न हो, उसके लिए अर्थपूर्ण होना अत्यावश्यक है।[4]

भारती ने कविता लेखन के लिए किसी भी विषय को वंचित नहीं रखा, सभी विषयों पर लिखा। डॉ. भारती की कविताएं दो संग्रहों- ठंडा लोहा और सात गीत वर्ष में संकलित है। जिनमें प्रथम संग्रह की कुछ कविताएं जनवादी भावभूमि पर प्रभाव डालती है। कवि ने इस भावभूमि की खोज अपने बाहर की सच्चाई हृदयंगम करके ही परिलक्षित की है। कुछेक ही ऐसी कविताएं है जिनमें बाहर की व्यापक सच्चाई की अपेक्षा निजी अनुभूति एवं आंतरिक पीडा को उद्धृत किया है।

काव्य साहित्य – प्राय: सभी कविताओं में रोमानी भावबोध की स्पष्ट झलक प्राप्त होती है एवं कविताओं में स्मृति निर्भर उदास रस-बेहद झलकता हुआ लक्षित होता है। इस रस में स्वयं को मुक्त कर लेखक ने जनवादी स्वर अपनाने का प्रयास किया है। कविताओं में स्वचिन्तन को भी महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करते हुए नवीन भावबोध स्पष्ट किया जिससे प्रमुख चेतना जागृत हो उठी-

तुम अभी सुकोमल
बहुत सुकोमल अभी न सीखो प्यार।[5]

डॉ0 भारती की कविताओं में बातचीत की सहजता स्वत: ही प्राप्त हो जाती है।

'पर यह क्या पागलपन
मै बेहतर हूं, सुख से हूं
फिर इसमें कौन-सी बात है रोने की?
जाने दो
लो, यह चाय पियो।'[6]

आधुनिकता युगीन सत्यता से साक्षात्कार कर कवि यथार्थ भावभूमि को अपना विषय बनाकर कविताएं करता है, उनके अनुसार 'मैं अपना पथ बना रहा हूं, जिंदगी से अलग रहकर नहीं जिंदगी के संघर्षो को झेलता हुआ, उसके दु:ख दर्द में एक अर्थ ढूंढता हुआ और उस अर्थ के सहारे अपने को जनव्यापी सच्चाई के प्रति अर्पित करने का प्रयास करता हुआ। कवि का

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय महाविद्यालय,झालावाड (राज.) भारत

जीवन, कवि को वाणी, अर्पित जीवन और अर्पित वाणी होते हैं।'[7] इसी आधार पर डॉ0 नन्ददुलारे वाजपेयी ने कहा है कि भारती में निराला को शृंगारिक और कोमल भावनाएं आभासित होती है।....... 'भारती अधिक एकांतजीवी है, निराला की शृंगारिक भास्वरता उनके पास नहीं है।'[8]

भारती ने प्रयोग के लिए प्रयोगवादी रचनाओं का निर्माण नहीं किया अपितु उन्होने अर्थवत्ता और संप्रेषणीयता की कसौटी पर ही आवश्यकतानुसार प्रयोग अपनाया है। उनकी कविताएं विभिन्न शैलियों लोकगीतात्मक, प्रतिध्वनि आदि में लिखी हुई है और पूर्णत: सफल भी है। अत: स्पष्ट है कि भारती काव्य सप्तकीय कवियों में अपनी विशिष्ट विचार शृंखला तो बनाए ही रखते हैं साथ ही स्वतंत्र काव्य में भी आधुनिकता की स्थापना भी करते हैं और परंपरा निर्वाह भी करते चलते हैं।

ठंडा लोहा संग्रह की तुलना में सात गीत वर्ष संग्रह की कविताओं का कथ्यपक्ष और अभिव्यक्ति पक्ष अधिक सशक्त औश्र समृद्ध तथा विकासोन्मुख दिखाई देता है साथ ही प्रभावी भी बन पडा है। भाषा भावों की पूर्णत: अनुगामिनी बनकर प्रयुक्त हुई है और उसमें पर्याप्त रूप से सहजता भी विद्यमान है। प्रणय और प्रेम की कविताओं के साथ युगीन समस्याओं का भी आकलन प्रस्तुत किया गया है एवं महत्वपूर्ण प्रश्नों के साथ-साथ सामाजिक एवं अन्य समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत किया, जिससे कवि का चिन्तन बोध परिलक्षित होता है। पराजित पीढी का गीत, प्रमथ-युगाथा, टूटा पहिया, आदि कविताएं पौराणिक मिथकों के आधार पर आधुनिक युगीन संत्रास, भय, अनास्था, अंधकार और विषमतापूर्ण परिस्थितियों की ओर संकेत प्रदान करती है।

'लघु मानव' और महामानव विषयक धारणा में डॉ0 भारती जन-नायक में नहीं अपितु साधारण जन मे विश्वास करते हैं और अपनी आस्था केन्द्रित करते हैं। जिज्ञासा शीर्षक कविता में उन्होने व्यक्ति की शंकाकुल मन: स्थिति का चित्रण स्पष्ट किया है। यदि नायक की कोई छोटी सी भूल सहसा अभियानों को पथभ्रष्ट कर दें एवं सामूहिकता भी छलसिद्ध हो तब अपनी वैयक्तिकता को हार कर क्या सामान्य जन को प्राप्त हो सकेगा? 'प्रमथ-युगाथा' इसका स्पष्ट निराकरण प्रस्तुत करती है। व्यक्ति की शंकाकुल मन: स्थिति का कारण इतिहास के महायुद्धों एवं सात्यवादी व्यवस्था की स्थापना हेतु घटित रक्त रंजित क्रांतियों की नृशंसता एवं सैनिक तानाशाही की स्थापना घटनााओ के माध्यम से मानव व्यक्तित्व की सीख है। प्रत्येक व्यवस्था मानव विवेक और निर्णय को कुंठित करती है। इसकी भारती अंधायुग में जाकर स्पष्ट कर पाते हैं। इतिहास सामान्य जन की गाथा नहीं लिखता अपितु इस तथ्य की उपेक्षा भी नहीं की जा सकती कि नायक के असफल हो जाने पर सत्य का झंडा सामान्यजन के हाथों में आकर विजय की ओर अग्रसर हो। सामान्य जन ही वास्तविक अर्थो में इतिहास के निर्माता है, भारती इसी लघु मानव की महत्ता रथ के पहिए के आधार पर प्रतिपादित करते हैं, यथा-

'मैं रथ का टूटा पहिया हूं
लेकिन मुझे फेंको मत
इतिहास की सामूहिक गति
सहसाझूठी पड जाने पर
क्या जाने
सच्चाई टूटे पहियों का आश्रय लें

डॉ0 भारती की कविताओं में सबसे महत्ती उपलब्धि पाठकों का कवि से सीधा साक्षात्कार होना है। हालांकि कवि की आस्था सदैव डगमगायी हुई प्रतीत होती है। उसमें अस्थिरता का भाव नहीं आ पाया है। कभी वह ईश्वरीय सत्ता के प्रति आकृष्ट होकर उसे स्वीकार करता है तो कहीं आज के युग के साथ तादात्म्य स्थापित करता हुआ अनास्था के भाव परिलक्षित करता है। जबकि कई स्थानों पर तटस्थ रहकर प्रभु का प्रयोग दिव्य सत्ता के लिए कम अतीत के लिए अधिक सार्थक मानता हुआ कवि मन के मूल में नवीनता के प्रति आग्रहप्रस्तुत करता है। कहीं-कहीं विरोधी वक्तव्यों से असंतुलित भी होने लगता है औश्र उसकी संवेदना टूटती हुई प्रतीत होती है। वस्तुत: कवि आत्मानुभूति में इतना तल्लीन हो जाता है कि केन्द्रीय कथ्य का निर्वाह कहां तक हो ऐसी अपेक्षा की जाती रहती है। कभी कभी समष्टिगत कविताएं करते-करते भावी उद्भावनाएं प्रस्तुत करता है। लेकिन क्या कवित की कल्पना साकार होगी आवश्यक नहीं। प्राय: इनकी कविताओं में समष्टिबोध की व्यापक चर्चा की गयी है किन्तु कवि एक सामाजिक प्राणी है और इस कारण उसमें निजी भावनाओं का आत्मसात अवश्य हो जाता है। कवि स्वयं स्पष्ट कर चुका है कि एक लंबे अंतराल के कारण कविताओं में बिखराव अवश्य है लेकिन सृजन के महत्व को उद्घाटित करते हुए विविध आयामों की ओर स्पष्ट संकेत करने का प्रयास है।

कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से संपूर्ण कवितायें अपना नवीन उद्घोष प्रस्तुत करती है जिसमें लेखक ने परंपरा निर्वाह के साथ नवीन बिम्ब, प्रतीक, उपमान आदि प्रस्तुत करते हुए काव्य साहित्य को नया मोड दिया।

छायावादी एवं प्रगतिवादी कवियों के प्रवृति चित्रण एवं मानवीयकरण की परंपरा को आगे बढाते हुए रोमानी भावबोधपूर्ण कविताएं लिखकर कविता में अपना स्थाना निर्धारित किया है और साहित्य को नवीनतम उपलब्धि प्रदान की। साथ ही अछूते संदर्भो को अपने कथ्य का विषय बनाकर नवीनता प्रस्तुत करने में लेखक बहुत अधिक सफल हुआ है। यथा-

'मस्तक इतना खाली
लगता जैसे
जो कोई लडा हुआ नारियल।'

एवं-

देखा नहीं
बौर लदी नाजुक टहनी सी इस देह की
हलकी गरमाई को, केवल महसूस किया
जाता नहीं।'[10]

प्रकृति को मानवीयकरण रूप में प्रस्तुत कर छायावादी परिकल्पना को साकार रूप प्रस्तुत किया-

'अपने हल्के फुल्के उडते स्पर्शो से मुझकों छू जाती है।
जार्जेट के पीले पल्ले सी यह दोपहर नवंबर की
आई गई ऋतुएं पर वर्षो से ऐसी दोपहर नहीं आई
जो क्वारेपन के कच्चे छल्ले-सी
इस मन की उंगली पर कस जाये और फिर कसी ही रहे।'

आधुनिक मानव की स्थिति के वास्तविक चित्र को स्पष्ट करते हुए उसकी घुटन, टूटन, मायूसी, आहत अहम्, कुंठा आदि को चित्रित करते हुए नीरसता की स्थिति स्पष्ट करते हैं और आस्थावादी दृष्टि प्रदान करते हैं।

'इतनी अजीब किस्मत लेके
पैदा हुए क्यों हम तुम।

शायद वह कोई और था
उसने तो प्यार किया रीत गया, टूट गया
पीछे में छूट गया।'[12]

और–

'मैं जनपथ हूं
मैं प्रभुपथ हूं, मैं हूं जीवन
प्रभु! तुम तो केवल पथ हो
चलना तो हमको ही होगा।

याद करो प्रभु
जब तुमने पीठ पर
धरती उठायी थी
सबका बोझ
अपने पर लेने की
ताकत कहां पायी थी।'[13] के साथ कर्म की महत्ता प्रतिपादित करते हुए परंपरा निर्वाह की स्थिति भी स्पष्ट करते हैं। मनुष्य के अहं की और आधुनिक व्यक्ति की मनोवृत्ति को स्पष्ट करने के लिए लेखक नवीन शब्दजालों के माध्यम से उपयुक्त कथ्य प्रकट करने में सफल हुए हैं। यथा–

'वात पित्त कफ के बाद
चौथे ढोष अहं से पीडित है
बस्ती बस्ती में
नये अहं के अस्पताल खुलवाओं
वे सब बीमार है
डरो मत तरस खाओ।'[14] के माध्यम से आधुनिक निर्माण योजना पर दृष्टिपात किया है और नवीन संदेष प्रतिपादित किया है। रोमानी भावबोध पूर्ण कविताओं में ऐसे उदाहरण है जिनमें अछूते संदर्भो की ओर कवि ने ध्यान आकृष्ट किया है तथा नवीन उद्‌भावनाएं प्रतिपादति की है–

'तुम्हारे स्पर्श की बादल धुली कचनार नरमाई
तुम्हारे वक्ष की जादू भरी मदहोश गरमाई
तुम्हारी चितवनों में नरगिसों की प्रांत शरमायी
किसी भी मोल पर मैं आज अपने को लूटा सकता
सिखाने को कहा
मुझसे प्रणय के देवताओं ने
तुम्हें आदिम गुनाओं का अजब सा इन्द्रधनुषी स्वाद
मेरे जिन्दगी बरबाद।'[15]

वस्तुत: लेखक ने छायावादी कवियों की लोक पर चलते हुए अपनी कविताओं में नयापन प्रस्तुत किया। जब सभी लेखक एवं कवि प्रस्तुति के माध्यम से मूलभूत समस्याओं एवं तथ्यों को उद्घाटित कर रहे थे और उनका प्रकट करने का तरीका प्रकृति का मानवीकीकरण एवं रोमानी भाव बोध था। डॉ. भारती ने भी रोमानी भावबोध के आधार पर प्रकृति के माध्यम से ही कविताओं के बिम्ब, प्रस्तुत उपमान, प्रतीक आदि प्रस्तुत होते हैं। उन्होने उन्हीं संदर्भो एवं स्थलों को अपनी कविताओं का विषय चुना जिनकी ओर अन्य समकालीन कवियों का ध्यान नहीं गया था। जैसे प्लेटफॉर्म, नवम्बर की दोपहर, शाम दो मन: स्थितियां ठंडा लोहा, कोहरे भरी, सुबह सम्पाती, पंख पहिये और पट्टियां आदि स्थलों के माध्यम से युगीन भाव प्रस्तुत किए हैं।

नारी को रीतिकालीन स्थिति से हटाकर नवीन रूप प्रस्तुत करने में वे सफल हुए हैं। जिसमें एक ओर कनुप्रिया में विरोधी स्वर प्रकट करते हैं। तो दूसरी ओर स्फुट कविताएं ठंडा लोहा मे नारी के पूज्य रूप की कल्पना प्रस्तुत की है। यथा–

'प्रात: सद्य: स्नात
कन्धों पर बिखेरे केश
आंसुओं में ज्यो धुला
वैराग्य का संदेश
चूमती रह रह
बदन को अर्चना की धूप
यह सरल निष्काम
पूजा सा तुम्हारा रूप।'[16]

इसी प्रकार संपूर्ण कविताएं नए भाव, नये शब्द बिम्ब रूपों से परिपूरित दिखाई पडती है। साथ ही प्रयोगवादी कविताओं में अपना एक अलग और विशेष महत्व रखती है। फलस्वरूप भारती नयी कविता और प्रयोगवादी कविताओं में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुके हैं। इनकी गणना प्रमुख कवियों की अग्रणी पंक्ति में की जाने लगी है।

अंधायुग : एक नवीन उपलब्धि – हिन्दी साहित्य में काव्य नाटक का इतिहास आधुनिक युग से ही शुरू हुआ है। अत: आज भी नाटक अपने स्वरूप एवं विधि की दृष्टि से निर्माण की ही अवस्था में दिखाई पडता है। आज भी उसकी धारणा अनिर्णीत एवं अनिश्चित देखी जाती है। आज भी विभिन्न लेखक अलग–अलग काव्य नाटक या गीतिनाट्य लिखते रहे हैं तथा नाटक का नित्य नवीन स्वरूप निर्धारित करते रहते हैं। 'प्रसाद के करूणालय से लेकर पंत के सौवर्ष तक की यात्रा में एक बात साफ हो जाती है। कि इन रचनाओं में काव्य नाट्य रूप ग्रहण करे की प्रक्रिया से गुजर रहा लेकिन इसका बाह्य रूप या शैली भले ही नाटक की हो मूल प्रकृति काव्यात्मक है। नाट्य रूप इस काव्य की अनिवार्य परिणति नहीं लगती, वह तो सुविधा या उपचारवष ग्रहण कर लिया गया है।

'इसमें कोई शक नहीं है कि हिन्दी नाट्य परम्परा में अंधायुग पहला नाटक है जिसमें पांचों तकनीकी विशेषताओं–संवादों का मुक्त छंदों में होना, आवश्यकतानुसार लय परिवर्तन, ग्रीक कोरस के निम्नवर्ग के पात्रों की भांति दो प्रहरियों को पेश करना, अन्तराल में वृत्तगन्धी पद्य का प्रयोग और कथानक में कुछ उत्पाद्य तत्वों का समावेश– को एक जगह काम में लाया गया है किन्तु यह भी सच है कि कालिास से रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक और रवीन्द्रनाथ ठाकुर से मोहन – राकेश तक भारतीय नाट्य परंपरा में हम एक भी ऐसा नाटक नहीं पाते, जिसमें इन पांचों शिल्पगत विशेषताओं को एक साथ प्रयोग में लाया गया हो। जाहिर है कि अंधायुग हिन्दी और भारतीय नाट्य परंपरा की कडी नहीं है इसके प्रकाशन से लगभग 30 वर्ष पूर्व अंग्रेजी में एक ऐसा नाटक रचा गया था, जिसमें पहली बार इन पांचों तकनीकी विशेषताओं को काम में लाया गया है वह है टी.एस.इलियट का मर्डर इन दी केथीड्रल 1934 दोनों में शिल्प सगम्य इतना स्पष्ट है कि यह निष्कर्ष निकालना नितान्त गलत नहीं होगा कि अंधायुग का पूर्वगामी न अभिज्ञान शाकुंतल है न विसर्जन और न चित्रांगदा बल्कि मर्डर इन द केथीड्रल है।'[18] लेकिन इतना अवश्य निर्धारित किया जा सकता है कि डॉ. भारती इसके अनुकर्ता है अपहर्ता नहीं। अनुकरण के आधार पर लिखा गया अंधायुग मर्डर इन दा केथीड्रल से विलग भावभूमि एवं बिम्बात्मकता के साथ प्रस्तुत हुआ है।

अत:पौराणिक एवं आधुनिक मिथकीय पद्धति में लिखा गया यह काव्य नाटक हिन्दी साहित्य में नितान्त नवीन है। इसी प्रकार के कुछ अन्य प्रबंध काव्य भी है जैसे उर्वशी, संशय की एक रात, एक कंठ विषपायी, आत्मजयी,

आदि जो इस तरह के साहित्य में प्रस्तुत होते रहे हैं किन्तु 'अंधायुग' एक विशेष पद्धति और संरचना के आधार पर प्रस्तुत हुआ है। जो साहित्य में नितान्त नवीन रूप प्रस्तुत करता है। महाभारत के अठारह दिनों के युद्ध के बाद की संध्या और कौरव नगरी की उजडती हुई वास्तविक स्थिति तथा गिरती दशा को मुखरित करने की लेखक ने सफलतापूर्वक कोशिश की है।

युद्धोत्तरकालीन घटनाओं, समस्याओं एवं मूल्यंधता के प्रश्नों की व्याख्या प्रस्तुत काव्यनाटक में हुई है जो अपना एक अलग महत्व रखती है। साथ ही लेखक के चिन्तनशील व्यक्तित्व के अनुसार तृतीय विश्वयुद्ध की आषंका, पृष्ठभूमि, संभावना एवं परिणाम प्रस्तुत करने में कृति पूर्णत:सफल हुई है। अश्वत्थामा का ब्रह्मास्त्र और अर्जुन का पाशुपति असत्र आधुनिक हाइड्रोजन बम की हो तो भूमिका अदा करते हैं। वस्तुत: अंधायुग में आधुनिक गीतिनाट्य की तकनीकी का सफलतापूर्वक निर्वाह हुआ है। इसकी तकनीकी पद्धति वेस्टलेण्ड और मर्डर इन दा केथैड्रिल के अनुकरण के आधार पर उद्धृत हुई है। इसकी कथापद्धति अवश्य अनुकरण के आधार पर रखी गयी है किन्तु उसे नये ढंग से प्रस्तुत किया गया है। यह लेखक का अपना स्वयं का नया विचार है, नया प्रयोग है।

'अंधायुग' कई दृष्टियों से हिन्दी गीतिनाट्य परंपरा में एक नया मोड उपस्थित करता है। इसके पूर्व के सभी गीतिनाट्य एक प्रकार से एकांकी नाटक कहे जा सकते हैं। जबकि अंधायुग हिन्दी का प्रथम पूर्ण गीति नाट्य कहा जा सकता है। पांच अंकों में विभाजित गीति नाट्य में अतुकान्त छन्द के प्रयोग की अपेक्षा मुक्तवृत्त पद्धति को अपनाकर रंगमंच के लिए उपयुक्त भावाभिव्यंजना प्रस्तुत करने में समर्थ एवं सफल बनाई गयी है। अंधायुग से पूर्व के गीति नाट्यों में कथावस्तु में इतनी व्यापकता विद्यमान नहीं थी, उनकी संकीर्ण सीमाओं में किसी लघुकथा का ही समायोजन सम्भव हो सकता था जबकि डॉ0 भारती ने अंधायुग में कथ्य की व्यापकता समाहित की है। कथा प्रख्यात तथा मार्मिक रूप में अभिव्यक्त हुई है। कथा में प्रतीकात्मकता, भावाभिव्यंजना तथा रूप विन्यास लेखक की सामर्थ्यानुसार प्रविष्ट हुए है।

कथागायन या कोरस तथा प्रसंगानुसार बदलता हुआ टोन या लय का लेखक ने कथावस्तु में गतिशीलता लाने के लिए प्रयोग किया है। 'अंधायुग' में कथागायन वस्तुसंघटन का एक अत्यन्त आवश्यक उपकरण है। कथागायन का दूसरा कार्य है, एक और यह कथा की पृष्ठभूमि तैयार करता है और रंगमंच पर अभिनीत न होने वाली घटनाओं की सूचना देता है तो दूसरी और दृष्य परिवर्तन को इंगित करता है। कथागायन समयानुसार अपना रूप परिवर्तित करता रहा है। प्रथम खण्ड के अंत में और दूसरे खंड के शुरू में कथागायन लगभग एक ही सा है।[19]

गीतिनाटकों की अभिनेय सफलता नाटकों के छनद विधान, लय, भाषा आदि पर पूर्ण रूप से निर्भर होती है। मानसिक संघर्षो का सफलतापूर्वक चित्रण ही उनका प्रमुख लक्ष्य होता है। मानसिक स्थितियों एवं विसंगतियों के द्वारा ही गीतिनाट्यों में पात्रों का चरित्र चित्रण प्रस्तुत किया जाता है तथा पात्रों की सफलता एवं असफलता भी इसी आधार पर आंकी जाती है। अंधायुग में अश्वत्थामा, धृतराष्ट्र, संजय युयुत्सु, गांधारी आदि का चित्रण ही इसी आधार पर प्रस्तुत हुआ है। ध्यान देने योग्य बात इतनी ही है कि पात्रों के मानसिक संघर्ष और क्रिया व्यापार का तारतम्य टूटने न पाये। साथ ही लेखक अपना मन्तव्य भी भलीभांति प्रस्तुत कर सकें। अंधायुग में युगीन चित्रण इसी आधार पर स्पष्ट हुआ है।

द्वितीय महायुद्ध के बाद जो युग आया है वह महाभारतयुगीन अमर्यादो और अनैतिकता से किसी भी प्रकार से कम नहीं माना जा सकता है, जो समस्याएं उस समय विद्यमान थीं लगभग वे ही समस्याएं आज के युग में भी मानव के समक्ष उसी रूप में विद्यमान है। आज दुनिया को रक्तपात, कुरूपता, भयंकर निराशा और अन्धापन बुरी तरह घेरे हुए है। गूंगे सैनिक की मार्मिक व्यथा आज के परमाणु युग पर कितना मार्मिक व्यंग्य है। तत्कालीन कथा-वस्तु को आज की समस्याओं से जोडने का कार्य मुख्य रूप से दोनो प्रहरी करते हैं। वे कहीं आज के शस्त्रों की होड और हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं तो कहीं निम्नवर्ग की अपरिवर्तित स्थिति की ओर।' [20] युधिष्ठिर के शासन के संबंध में प्रहरियों का वार्तालाप आज के युग पर पूर्णत: लागू होता है-

'शासक बदले
स्थितियां बिल्कुल वैसी ही है,
इससे तो पहले ही के शासक अच्छे थे
अंधे थे
लेकिन शासन तो करते थे
ये तो संत ज्ञानी हैं
शासन करेंगे क्या?'[21]

अन्तत: इतना ही कहना युक्तियुक्त होगा कि डॉ0 भारती का अंधायुग गीति नाट्य परंपरा में एक नया और स्वस्थ मोड लेकर उपस्थित हुआ है और हिन्दी का सर्वप्रथम पूर्ण गीतिनाट्य होने का स्थान प्राप्त करने में समर्थ हुआ है। इससे नाट्य परंपरा निर्वाह और विकास की नई दिशाएं खुलने लगी है। विचार एवं शैली की दृष्टि से निरसंदेह 'अंधायुग' गीति नाट्य में अपनी अहं भूमिका प्रस्तुत करता है और नवीन मार्ग प्रचलित करता है। डॉ0 भारती का योगदान सराहनीय है। उनका यह साहसिक कदम नये कवियों के मार्ग निर्देशन के लिए महत्वपूर्ण होगा। 'अंधायुग' में शैल्पिक दृष्टि है प्राचीन पद्धति का समावेश अवश्य हुआ है किन्तु वह अपने तरीके का नया है। इसमें विभिन्न महत्वपूर्ण नाटकीय रूप विद्यमान हुए हैं, क्रमश:- रंगमंचीय अभिनीत न होने वाली घटनाओं की सूचना ने पथ्य से कथागायन द्वारा या विभिन्न संकेतों के माध्यम से स्पष्ट की गई हैं, जैसे-

'युद्धोपरान्त
वह अंधायुग अवतरित हुआ
जिसमें स्थितियां, मनोवृतियां, आत्माएं सब विकृत है
है एक बहुत पतली डोरी मर्यादा की
पर वह भी उलझी है दोनो पक्षों में
सिर्फ कृष्ण में साहस है सुलझाने का
वह है भविष्य के रक्षक, वह है अनासक्त
पर शेष अधिकतर है अंधे
पथभ्रष्ट,आत्महारा,विगलित
अपने अंतर की अंध गुफाओं के वासी
यह कथा उन्ही अंधों की है
क्या कथा ज्योति की है अंधों के माध्यम से।' [22]

सूचना के साथ-साथ गायन पद्धति का काव्य नाटक में तारतम्य, गतिशीलता एवं प्रभावात्मकता बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान है।

2. गायन या कोरस पद्धति का प्रयोग दृष्य परिवर्तन या अंक परिवर्तन या अंक परिवर्तन के समय अधिकांशत: किया गया है। जैसे लोकनाट्य परंपराओं में यह पद्धति प्रयोग में लायी जा रही है।

3. वातावरण में मार्मिक एवं संवेदनात्मक उत्कर्षता के लिए गायन पद्धति उपयुक्त बन पडी है-

'अन्त:पुर में मरघट की सी खामोषी
कृष गांधारी बैठी है शीष झुकायें
सिंहासन पर धृतराष्ट्र मौन बैठे हैं
संजय अब तक कुछ भी संवाद न लायें।'[23]

4. प्रतीकात्मकता स्पष्ट करने एवं बिम्ब चित्र उपस्थित करने के लिए गायन की उपयोगिता महत्वपूर्ण है।

अष्वत्थामा- वाणी तो सत्य धर्मराज की
मेरी इस पसली के नीचे
दो पंजे उग जायें
मेरी ये पुतलियां बिना दांतों के चौथ खायें।[24]

संकाय- पंजों से गला दबोच लिया
आंखों के कोटर से दोनो साबित गोले
कच्चे आमों की गुठली जैसे उछल गए
खाली गड्डों में काला लोहू उबल पडा।[25]

प्रहरी- अंधें राजा की प्रजा कहां तक देखें?
दीख नहीं पडता कुछ
हां, शायद बादल हैं।'[26]

5. कल्पना मिश्रित अभिव्यंजना शैली प्रस्तुत करने और दृष्य परिवर्तन के लिए भी कोरस पद्धति का महत्वपूर्ण योगदान रहा है तथा प्रस्तुत काव्य नाटक में नाटक के सभी तत्वों - पात्रों के कथोपकथन द्वारा पात्रों का चरित्रोंद्घाटन, नाटककार का उद्देश्य, कथानक की गाम्भीर्यता एवं लेखक के उद्देश्य के साथ नाटक में आरोह-अवरोह की स्थिति, नाटक का पांच अंकों में विभाजित होना और प्रत्येक अंक में विभिन्न दृष्यों का होना आदि का होना अंधायुग की सफलता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। साथ ही काव्य नाटक या गीतिनाट्य परंपरा में अंधायुग नाटक को अग्रणी पंक्ति में पहुंचाने में भी अहं भूमिका प्रस्तुत करते हैं। लेखक का हिन्दी नाट्य साहित्य के लिए अंधायुग प्रेषित करना महत्वपूर्ण नवीन उपलब्धि के साथ महत्वपूर्ण योगदान भी रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दूसरा सप्तक !!सं. अज्ञेय!! भूमिका भाग, पृ. 6
2. डॉ0 धर्मवीर भारती- मानवमूल्य और साहित्य, पृ. 176
3. डॉ0 जगदीष गुप्त- नयी कविता: स्वरूप और समस्याएं, पृ.2
4. दूसरा सप्तक !!सं. अज्ञेय!! वक्तव्य,पृ. 166-67
5. डॉ. धर्मवीर भारती-ठंडा लोहा, पृ. 25
6. वहीं पृ. 74
7. वहीं,पृ.3 !!भूमिका!!
8. डॉ. नन्ददुलारे वाजपेयी-नयी कविता,पृ.50
9. डॉ0 धर्मवीर भारती - सात गीत वर्ष, पृ.155
10. वहीं पृ0 129
11. डॉ0 धर्मवीर भारती -ठंडा लोहा, पृ. 27
12. डॉ. धर्मवीर भारती-सात गीत वर्ष, पृ. 59
13. वहीं,पृ. 41-42
14. वहीं,पृ.70
15. डॉ0 धर्मवीर भारती-ठंडा लोहा, पृ. 18
16. वहीं पृ. 5
17. धनंजय वर्मा- आस्वाद के धरातल, पृ. 159
18. डॉ0 प्रेमपति !!सं. लक्ष्मणदत्त गौत्तम!!- धर्मवीर भारती, पृ. 167
19. डॉ0 बच्चनसिंह-हिन्दी नाटक, पृ. 195
20. वहीं, पृ. 200-200।
21. डॉ0 धर्मवीर भारती-अंधायुग, पृ. 107
22. वहीं पृ. 10
23. वहीं, पृ. 16
24. वहीं पृ. 36
25. वहीं, पृ. 79
26. वहीं, पृ. 14

****

''कवि की प्रेयसी'' उपन्यास का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

डॉ. विनीता कौशिक *

प्रस्तावना – 'कवि की प्रेयसी' श्री इलाचन्द्र जोशी के ऐतिहासिक परिवेश से अवगुंठित उपन्यास है। उपन्यास की प्रस्तावना में ही लेखक ने इसके लिखे जाने के पूर्व की स्थिति चित्रित की है – ''प्राचीन महानगरों में उज्जयिनी ही मेरे मन के अनुकूल बैठ सकती थी। उसको केन्द्र बनाकर नाना प्रकार की कल्पनाएँ मन में उठी और अन्त में एक फैन्टेसी के भीतर सभी कल्पनाएँ केन्द्रित हो गई।''[1]

सोमिल्लक लेखक का प्रिय पात्र है। सोमिल्लक के घर में यवनी कनिष्ठा माता का प्रवेश उसके तथा परिवार की सभी स्त्रियों के व्यवहार को बदल देता है। जहां सोमिल्लक का बालक मन उसके प्यार से आप्लावित होकर उसे ही अपनी सगी माता के रूप में स्वीकारता है, वहीं उसकी अपनी कही जाने वाली माता व अन्य स्त्रियों के मन में घृणा व ईर्ष्या के भाव भर देता है।

सोमिल्लक आरंभ से ही स्वतंत्र प्रकृति का बालक था। उसे अपने पितामहों द्वारा साधारण व निम्न वर्ग के बच्चों के साथ खेलने से रोका जाता था लेकिन वह उन्हीं के साथ खेलता और यहां तक कि यदि कोई सुन्दर बच्चा होता तो उसे अपने अंक में भर लेता था। उसका यह कार्य समलिंगी आकर्षण ही था। यदि उसके पितामह, चचेरे भाई की प्रशन्सा उसके सम्मुख कर देते तो वह ईर्ष्या करने लगता और अपने किसी भी कार्य को उस चचेरे भाई की अपेक्षा अधिक लगन से करता था। यहाँ बाल मनोविज्ञान को लेकर फायड़ का प्रभाव देखा जा सकता है। बाल मनोविज्ञान की इन पंक्तियों में शेखर एक जीवनी के शेखर के बाल वर्णन में अज्ञेय द्वारा उद्घाटित मन स्पष्ट हुआ है। बालक सोमिल्लक अपनी जिज्ञासा शांति अपनी स्वयं की तीव्र कल्पनाओं के माध्यम से करता है तो अज्ञेय का शेखर यथार्थ धरातल पर पुस्तकें पढ़कर या बहिन के बाते करके करता है।

सोमिल्लक शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् अनुभव प्राप्त करने देशाटन पर निकलता है और वहीं इन्दौर में उसकी भेंट राजकुमारी वेश में छिपी शिरीषा से होती है। यद्यपि शिरीषा के अवचेतन मन के किसी कोने में सोमिल्लक की पूजा हैं, लेकिन वह अपने घोर अहंकार के कारण उसे डांट देती है। शिरीषा को देखते ही सोमिल्लक की दमित–बास कामना उग्र रूप धारण कर लेती है। वह कहता है–

''कुछ ही घड़ियों के लिए निकट सम्पर्क में आकर उसने मुझे मेरे अंतर को बुरी तरह झकझोर दिया था। अपने जीवन का प्रथम प्रेम मैं उसी के चरणों में अर्पित करने के लिए उतावला हो उठा था ....''

इस अनिरूद्ध आकर्षण के विरूद्ध मेरे मन की कोई नियंत्रक शक्ति कारगर नहीं हो पा रही थी।[2] लेखक के द्वारा यहां काम–मूलक ग्रंथि का सफल अंकन किया गया है।

बहुत दिनों प्रवास पर रहने के पश्चात् सौमिल को अपनी कनिष्ठा माँ 'इज्जा' के पास जाने की इच्छा हुई तब उसने शिरीषा को अपने मित्र प्रहर्ष वर्मा के यहाँ छोड़ा जहाँ प्रहर्ष की बहन रत्नप्रिया भी थी। रत्नप्रिया के भी अवचेतन में सोमिल्लक का निवास था लेकिन जब उसने देखा कि सोमिल्लक शिरीषा के प्रति आकर्षित है तब वह न ईर्ष्या ही करती है और न ही कोई कटु वचन बोलती है, बल्कि दोनों के विवाह को तत्पर होती है। यहाँ रत्नप्रिया के मनोभाव लेखक जोशी जी के भारतीय आदर्श की भूमि पर आते हुए दिखाई पड़ते हैं। यहीं पर जोशी जी की दृष्टि पाश्चात्य मनोविज्ञान से अलग हुई है। पूर्व जन्म के संस्कारों का वर्तमान जीवन में प्रभाव डालने का विश्वास, लेखक का इस उपन्यास में जिन्दा है। रत्नप्रिया के निम्न वाक्य भी लेखक के इन विचारों को पुष्ट करते है –

''प्रतिभा की कोई वय नहीं होती। वह जन्म–जात होती है। पूर्व जन्म की देन छुटपन में ही अधिक विकसित होती है, अनुभवी विद्वान परीक्षकों ने बड़ी सूक्ष्म खोज के बाद इस स्वयं सिद्धि का पता लगाया है।''[3]

सोमिल्लक ने जब भी कभी अपने प्रेम का प्रदर्शन शिरीषा के सम्मुख करना चाहा, तभी शिरीषा ने अपने अहंवादी स्वभाव के कारण समुदाय तक में उसका अपमान कर दिया। इसी से कुंठित होकर सोमिल्लक ने अपने सोचने की राह बदल ली। अब वह शिरीषा के लिए केवल इतना ही सोचता था कि वह नाट्य–क्षेत्र में प्रसिद्धि पाए। यवनी कनिष्ठा माता जिसे वह 'इज्जा' कहता था उससे पुनर्मिलन होने पर वह इज्जा के नाट्य संबंधी संस्मरण भी सुनता है। इज्जा भी अभिनेत्री बनने की इच्छुक रहती थी और जब मंच पर सुन्दर–सुन्दर स्त्रियों को अभिनय करते देखती थी तो उसके मन में उनके प्रति ईर्ष्या की भावना जागृत हो जाती थी। इस दयित–इच्छा की पूर्ति वह घर पर अभिनय करके ही पूजा करती थी।

सोमिल्लक का नाटक का मंचीयकरण शिरीषा ने किया, उसे देखने के पूर्व की सोमिल्लक के मनोविश्लेषण को लेखक ने लिखा ''गर्मी के बावजूद भी हिमालय सी बर्फीली ठंड लगने लगी थी। देह प्रकंपित हो रही थी।''[4]

अंत में आते–आते शिरीषा का दमित प्रेमोद्वेग फट पड़ता है और वह सभी के उपस्थित रहने पर भी सोमिल्लक से लिपट कर क्षमा–याचना करती है। स्वप्न मनोविज्ञान की भी एक झलक मिलती है जिसमें भविष्य में घटने वाली घटना का पूर्व ज्ञान प्राप्त हो जाता है। ''कवि की प्रेयसी'' उपन्यास का अंतिम सोपान है – ''रात्रि के स्वप्न में सोमिल्लक ने देखा वह एक नाव पर बैठा जा रहा है और उसके पार्श्व में एक स्त्री बैठी है जो निश्चय ही शिरीषा थी।''[5] यही स्वप्न प्रतीक रूप में उसके भविष्य का यथार्थ बना।

वस्तुत: जोशी जी की कृति ''कवि की प्रेयसी'' पढ़ने पर उसका पूर्व भाग अज्ञेय के मनोवैज्ञानिक उपन्यास ''शेखर : एक जीवनी'' की याद दिलाता है तो मध्य भाग तथा अंतिम भाग डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के

* सह आचार्य (हिंदी) राजकीय महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

उपन्यास ''बाण भट्ट की आत्मकथा'' की सहज स्मृति जगाता है, वहीं ऐतिहासिक नाम तथा मनोविश्लेषण के सूक्ष्माधार पर लेखक एक बार फिर से सामाजिक पर्दे के भीतर छिपे हुए सत्य का उद्घाटन करने में सफल हो पाए है।

''विवेचना'' में एक स्थान पर वे लिखते है .... मेरे सभी उपन्यासों का उद्देश्य व्यक्ति के अहं भाव की एकान्तिकता पर निर्भय प्रहार करने का रहा है। सामाजिक पर्दे के भीतर छिपे हुए इसी सत्य का उद्घाटन मनोवैज्ञानिक उपायों से करने का प्रयास मैंने किया है।''[6]

अत: कहा जा सकता है कि ''कवि की प्रेयसी'' में श्री इलाचन्द्र जोशी के मौलिक चिंतन, जिसमें अवचेतन संबंधी बात को पूर्व-जन्मों से प्रभावित मानते थे, स्पष्ट होती है। साथ ही उनके 'संस्कार' संबंधी विचार जहाँ 'कवि की प्रेयसी' में पात्रों के मनोभावों को देशति हैं वहीं उनकी मौलिक अवधारणा आध्यात्मिक मनोविज्ञान अपने अन्दर 'फायड़' के ''मनोविश्लेषण'' तथा 'कार्ल युग' के 'सामूहिक अवचेतन' सिद्धान्तों को भी समाहित कर लेती है। ''कवि की प्रेयसी'' में मनोविज्ञान के सूत्र 'अहं' और 'काम' संबंधी ग्रन्थी, प्रेरक घटनाएँ, संस्कार तथा अवचेतनमन सभी बिन्दुओं के धरातल पर लेखक ने पात्रों की मानसिकता एवं चरित्र पर प्रकाश डाला है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री इलाचंद्र जोशी, 'कवि की प्रेयसी' उपन्यास - पृष्ठ सं. 16
2. श्री इलाचंद्र जोशी, 'कवि की प्रेयसी' उपन्यास - पृष्ठ सं. 59
3. श्री इलाचंद्र जोशी, 'कवि की प्रेयसी' उपन्यास - पृष्ठ सं. 16
4. श्री इलाचंद्र जोशी, 'कवि की प्रेयसी' उपन्यास - पृष्ठ सं. 16
5. श्री इलाचंद्र जोशी, 'कवि की प्रेयसी' उपन्यास - पृष्ठ सं. 16
6. श्री इलाचंद्र जोशी - विवेचना - पृष्ठ सं. - 102, 123

****

गैर सरकारी संगठन एवं मानव अधिकार

डॉ. सुनीता शर्मा*

प्रस्तावना – समाज में मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए कतिपय अधिकारों की आवश्यकता होती है, जिसके अभाव में उसके व्यक्तित्व का विकास समाज में असम्भव है, इन्हीं को मानव अधिकार कहा जाता है। मानवाधिकार एक ऐसा विषय है जो किसी क्षेत्र, समाज एवं राष्ट्र को ही नहीं बल्कि पूरे विश्व को समुदाय के रूप में देखता है, क्योंकि मनुष्य इस विश्व समुदाय का ही एक अंग होता है। मानवाधिकारों से तात्पर्य मनुष्य के ऐसे अधिकारों से होता है, जो कि उसे इस विश्व समुदाय का एक अंग होने के कारण स्वत: ही प्राप्त हो जाते हैं। किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता और गरिमा से संबंधित अधिकार ही मानवाधिकारों की श्रेणी में आते हैं।

मनुष्य के स्वतंत्रता और गरिमा के साथ जीवन यापन करने में धार्मिक, भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक इत्यादि बहुत से अवरोध होते है और इन्हें दूर करने के लिए अनेकानेक प्रयास किये जाते रहे हैं। मानवाधिकार शब्द की विश्व में कोई एक स्वीकृत परिभाषा नही मानी जा सकती है। यद्यपि यह संकल्पना उतनी ही पुरानी हैं, जितनी की प्राकृतिक विधि पर आधारित प्राकृतिक अधिकारों का प्राचीन सिद्धान्त तथापि 'मानव अधिकारों' की अवधारणा के नये रूप में उत्पत्ति द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय चार्टरों से हुई। सर्वप्रथम, अमरीकन तत्कालीन राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने 16 जनवरी, 1941 में कांग्रेस को सम्बोधित अपने प्रसिद्ध संदेश में 'मानव अधिकार' शब्द का प्रयोग किया था, जिसमें उन्होंने चार मूलभूत स्वतंत्रताओं पर आधारित विश्व की घोषणा की थी। इनको उन्होंने इस प्रकार सूचीबद्ध किया था – (1) वाक् स्वातंत्र्य (2) धर्म स्वातंत्र्य (3) गरीबी से मुक्ति और (4) भय से स्वातंत्र्य।

हालांकि मानवाधिकारों की कोई स्पष्ट परिभाषा देना सम्भव नहीं है, परन्तु मानवाधिकारों से तात्पर्य व्यक्ति में अन्तर्निहित गरिमा, सभी क्षेत्रों में समानता एवं जीवन के अधिकार को मिलाकर मानवाधिकारों की संज्ञा दी गई है। इसकी आगे व्याख्या करते हुए भारतीय मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 की धारा 2 (घ) में कहा गया है कि मानवाधिकारों से तात्पर्य 'संविधान द्वारा गारण्टीकृत तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में सम्मिलित एवं भारतीय न्यायालयों द्वारा प्रर्वतनीय व्यक्तियों के जीवन, स्वतंत्रता एवं गरिमा से है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि मानवाधिकारों की सार्थकता एवक मनुष्य को स्वतंत्रता एवं गरिमा के साथ जीवन यापन सुनिश्चित कराना है और इनकी प्राप्ति के मार्ग अवरोधों को दूर करने के लिए गैर सरकारी संगठनों द्वारा प्रारम्भ से ही प्रयास किए जाते रहे है। वर्तमान समय में भी अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर विभिन्न गैर सरकारी संगठन कार्यरत है।

गैर सरकारी संगठन – गैर सरकारी संगठन निम्न स्तर पर कार्यकर्त्ताओं द्वारा एक साथ कार्य करने हेतु संगठित किय गया एक समूह होता है, जिसके अन्तर्गत जनसमूह, स्वैच्छिक संगठन, स्वैच्छिक एजेन्सी, समाज कल्याण समूह आदि सभी आते हैं अर्थात् एक ऐसा संगठन, जिसका संचालन एक स्वायत्त बोर्ड द्वारा किया जाता है। इस बोर्ड द्वारा ही मिटिंगों का आयोजन किया जाता है। संगठन द्वारा किए जाने वाले कार्यो हेतु कोल इकट्ठा किया जाता है, जो जनता को निजी संगठनों की अपेक्षा कम कीमत पर सुविधाएँ प्रदान कराता है। गैर सरकारी संगठनों की शुरूआत स्वैच्छिक संगठनों के रूप में हुई, जिसके अन्तर्गत स्थानीय लोगों के समूहों द्वारा स्वयं की इच्छा से प्रोत्साहित होकर जनता की भलाई के लिए कार्य करना शुरू किया गया। बाद में धीरे-धीरे इन समूहों को व अन्य ऐसे संगठनों को बाहरी रूप से प्रोत्साहन व वित्तीय सहायता प्राप्त होने लगी और इन स्वैच्छिक संगठनों का आकार एवं कार्य क्षेत्र बढ़ता गया।

गैर सरकार संगठनों की स्थापना जनता की भलाई हेतु की जाती है तथा इन पर किसी प्रकार का राजनीतिक व अन्य प्रकार का नियंत्रण नहीं होता है। यही कारण है कि मानवाधिकार के क्षेत्र में गैर सरकारी संगठनों का योगदान सराहनीय रहा है। ये संगठन निजी संगठनों के लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य के स्थान पर समाज कल्याण के उद्देश्य के कार्य करते हैं। गैर सरकारी संगठन मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए स्वयं प्रयास करते है और सरकारी मानवाधिकार व्यवस्था को सूचना प्रदान कर, कानूनों को लागू करने के लिए दबाव डालकर, मध्यस्था की भूमिका निभाकर आदि रूपों में भूमिका निभाते हैं। गैर सरकारी संगठनों द्वारा राज्य ही नहीं बल्कि देश व विश्व में मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता लाने के लिए प्रयास किये जाते रहे है।

मानवाधिकार क्षेत्र में कार्यरत प्रमुख गैर सरकारी संगठन – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत गैर सरकारी संगठनों में सन् 1843 में स्थापित रेडक्रास सबसे पुराना संगठन है, जो कि युद्ध एवं अन्य आपदाओं के समय प्रभावित व्यक्तियों को चिकित्सकीय सुविधा उपलब्ध कराता है। सन् 1961 में स्थापित ऐमनेस्टी इन्टरनेशनल का मुख्यालय लन्दन में है, जो कि राजनीतिक रूप से बन्दी बनाये गये व्यक्तियों के मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए कार्य करता है। पीपल्स यूनियन फोर सिविल लिबर्टिज की स्थापना सन् 1976 में जनता के सामान्य अधिकारों के संरक्षण हेतु की गई। पीपल्स यूनियन फोर डेमोक्रेटिक राईट की स्थापना जनता के लोकतांत्रिक अधिकारों को बढ़ावा देने के लिए की गई। इसी प्रकार क्षेत्रीय आधार पर भी बहुत से गैर सरकारसंगठनों की स्थापना की गई, जिससे एशिया वॉच, अमेरिका वॉच, यूरोपियन वॉच, अफ्रीका वॉच आदि ऐसे संगठन है, जो कि अपने क्षेत्र की जनता के मानवाधिकारों की सुरक्षा के लिए कार्य करते है।

1. सेव द चिल्ड्रन कमीशन फॉर लन्दन

*व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

2. इन्टरनेशनल कमीशन फॉर ज्यूरिस्ट्स
3. ऐमनेस्टी इन्टरनेशनल, लन्दन
4. माइनारिटी राइट्स ग्रुप, लन्दन

मानव अधिकार संवर्द्धन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका: राजस्थान के संदर्भ में – गैर सरकार संगठनों द्वारा ग्रामीण जनता में अधिकार के प्रति जागरूकता लाने के लिए नाटकों का आयोजन, स्थानीय भाषा के गीत तैयार कर, कॉमिक्स किताबों, पोस्टर प्रतियोगिताओं, वाद-विवाद प्रतियोगिताओं आदि का आयोजन किया जाता है। एस.डब्ल्यू.आर. सी, तिलौनिया, उरमूल सेतू लूणकरणसर नाटकों के लिए स्थायी मंच बना रखते है। उदयपुर जिले की आस्था संस्था द्वारा आदिवासी ग्रामीणों के अधिकारों के लिए उन्हें संगठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस संस्था द्वारा इस क्षेत्र के लोगों के गिरवी रखे जेवरों को मुक्त कराने में, तेजपत्ते से बीड़ी बनाने की मजदूरी दर को बढ़ाने में, सीमेन्ट फैक्ट्री लगाने से होने वाले नुकसान को ध्यान में रखते हुए फैक्ट्री लगाने का विरोध करने आदि कार्यो में सहायता प्रदान कर उन्हें अपने अधिकारों की सुरक्षा में योगदान दिया।

इसके अतिरिक्त गैर सरकारी संगठनों की भूमिका अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय व राज्य सभी स्तरों पर मानवाधिकारों के मानक स्तर पर निश्चित करने में निभाई जाती है। बाल शिक्षा को अनिवार्य करने व शिक्षा के नये तरीकों के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए बीकानेर जिले में कार्यरत संस्था उरमूल ट्रस्ट से सरकार द्वारा समय-समय पर विचार-विमर्श किया जाता है। इसी संस्था के सहयोग से राज्य में लोक जुम्बिश परियोजना व शिक्षाकर्मी योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। गैर सरकारी संगठनों द्वारा सरकार को मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए नये-नये कानून बनाने के लिए दबाव डाला जाता है। इसका अच्छा उदाहरण राज्य में कार्यरत किसान मजदूर शक्ति संगठन अधिकार के लिए किया गया आन्दोलन को देखा जा सकता है।

गैर सरकारी संगठनों द्वारा मानवाधिकार संरक्षण के लिए स्थानीय स्तर के संगठन के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है। इन संगठनों द्वारा स्थानीय स्तर पर कार्यरत संगठनों को सभी प्रकार की सहायता प्रदान की जाती है। राजस्थान के अजमेर जिले की मदनगंज तहसील के गांव तिलौनिया में कार्यरत गैर सरकारी संगठन एस.डब्ल्यू.आर.सी.द्वारा विभिन्न स्थानों पर इस प्रकार के संगठनों का संचालन किया जा रहा है, जो कि जनता के जीवन स्तर को उठाने में सहायक है।

इस प्रकार गैर सरकारी संगठन जनता की आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं को सरकार तक पहुँचाते है और उन्हें पूरा करने के लिए सरकार के प्रयासों में सहायता प्रदान करते है।

गैर सरकारी संगठन एवं मानव अधिकार : भारतीय परिप्रेक्ष्य – भारत में गैर संगठनों की संख्या एंव गुणवत्ता में वृद्धि मुख्यत: सन् 1979 के बाद ही आ पायी। स्वैच्छिक संगठनों द्वारा अधिक से अधिक जनता की सहभागिता प्राप्त करने हेतु विकास कार्यो को विभिन्न क्षेत्रों में विभाजित किया गया, जिसमें स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, निरक्षता आदि प्रमुख है। अस्सी के दशक में स्वैच्छिक संगठनों द्वारा ग्रामीण विकास के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी सेवाएँ देना प्रारम्भ कर दिया। अब इनका दायरा प्रशिक्षण देने, शोध कार्य करने, वैधानिक सहायता प्रदान करने, महिला विकास करने, पर्यावरण संरक्षण संबधित कार्य तक विस्तृत हो गया। पर्यावरण संरक्षण से संबंधित प्रमुख आन्दोलनों में चिपको आन्दोलन, उत्तर, सूचना के अधिकार हेतु आन्दोलन, केरल आदि प्रमुख है। इसी के साथ सूचना के अधिकार हेतु आन्दोलन, मानवाधिकारों की प्राप्ति हेतु प्रयास एवं महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण हेतु प्रयास भी गैर सरकारी संगठनों द्वारा किए जाने लगे है।

वर्तमान समय में देश में गैर सरकारी संगठनों की संख्या अधिक तेजी से बढ़ी है। इसके पीछे कई कारण रहे है, जिनमें जनता में जागरूकता आना, गरीबी में वृद्धि, सरकारी मशीनरी का कमजोर होना, लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास होना तथा अधिक से अधिक वित्तीय सहायता प्राप्त होने के पीछे प्रमुख कारण भारतीय आयकर अधिनियम, 1977 की धारा 35 सी.सी.व 35 सी.सी.ए. में परिवर्तन किया जाना है, जिसके माध्यम से ऐसे धन को जो कि सीधे व अन्य किसी एजेन्सी के माध्यम से ग्रामीण विकास के कार्यो में लगाया जाता है। भारत में मानवाधिकारों के संरक्षण के क्षेत्र में कार्य कर रहे है, कुछ प्रमुख संगठन :-

1. आन्ध्र प्रदेश सिविल लिबर्टीज कमेटी।
2. पीपल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राईट, दिल्ली।
3. कमेटी फॉर दी प्रोटेक्शन ऑफ डेमोक्रेटिक राईट, मुम्बई।

इनके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के गैर सरकारी संगठन जैसे रेडक्रास, ऐमनिस्ट इन्टरनेशनल, एशिया वॉच कार्यशील है। इनमें से ऐमनेस्टी इन्टरनेशनल द्वारा जम्मू-कश्मीरी, पंजाब, आसाम व आन्ध्र प्रदेश आदि राज्यों मे प्रमुख रूप से राजनीतिक बन्दियों के अधिकारों के लिए कार्य किया गया है। रेडक्रास द्वारा समय-समय पर आने वाली राष्ट्रीय विपदाओं के वक्त पीड़ित लोगों की रक्षा व उन्हें भोजन कपडे रहने आदि की व्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण कार्य किए है, जबकि एशिया वॉच द्वारा देश में सम्पूर्ण मानवाधिकारों की स्थिति से संबधित अध्ययन कर सरकार को उचित सुझाव एवं सिफारिशें देती है।

उपसंहार – मानव अधिकार मनुष्य को मनुष्य रूप से स्वतंत्र रहने का अधिकार देती है, जिसमें गैर सरकारी संगठन के सहयोग को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। गैर सरकारी संगठन मानवाधिकार संरक्षण के मशीनरी के रूप में क्रियाशील है। साथ ही साथ गैर सरकार संगठन मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता लाने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करती है। इन गैर सरकारी संगठनों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक है कि इनके कार्यो का दायरा सीमित किया जाए तथा कार्यो में निष्पक्षता रखी जाए, जिससे इनके कार्यो को विशिष्ट महत्व प्राप्त हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानव अधिकार नई दिशाएँ 2007, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग फरीदकोट हाउस, नई दिल्ली
2. डॉ.वीरेन्द्र सिंह यादव (2010) : नई सहस्त्राबदी में मानव अधिकार के विविध संदर्भ –ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
3. डॉ.एच.ओ.अग्रवाल (2014), मानव अधिकार सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स
4. Lawani BT (1999), NGOs in Development Rawat Publications Jaipur, Delhi
5. Bhatia A (2000), Women's Development and NGOs, Rawat Publications, Jaipur
6. Claude E. Welch (2000) NGO and Human Rights : Promise and Performance, University of Pennsylvania Press.
7. W. William Korey (2001): NGO and the Universal declaration of Human Rights Springer

****

Impact of Performance Appraisal System on Employees Competencies of an Organization

Aditya Kothari* Dr. Pallavi Pattan**

Abstract - Performance Analysis of an individual is known as appraisal . It involves the measurement of the individual's present and past work performance and because of it only an employee becomes High Performers from Average and under Performers.

Today's working atmosphere demands a great deal of assurance and exertion from Employees. Performance Appraisal must be observed and analyzed as an fundamental part of a Manager's responsibility and not an annoying and time- consuming addition to them. It is all about increasing the performance and definitive efficiency.

Appraisal of Performance is widely used across society. Parents appraise their children. Teachers appraise their students, bankers appraise the performance of their creditors and employers appraise their employee's performance. People are different in their capacities and their talents.

Keywords - Performance Appraisal and Management Appraisal , Competencies, Employee Appraisal, Employee Competencies and Human Resource.

Introduction - Appraising the performance of individuals, teams, institutions and organizations is a common and best practice. Although in some instances these appraisals processes are structured and formally sanctioned, in other instances they are an informal and integral part of daily Activities, and all of us, intentionally or without thinking evaluate our own procedures from time to time.

Appraisal of Performance is widely used across society. Parents appraise their children. Teachers appraise their students, bankers appraise the performance of their creditors and employers appraise their employees performance. People are different in their capacities and their talents. There is always some dissimilarity between the quantity and quality of the same work on the same place being done by different people. Employee's Performance appraisal is essential for understanding each employee's potential, competencies, comparative analysis and worth for the organization. Performance appraisal measure the employee in terms of their performance. Performance appraisals are widely used in every working field of the social order. The latest mantra being followed by organizations and institutions across the world being-get paid according to what you have done for the growth of the organization from your side.

Employee Competency - Employee competencies are a listing of skills, behaviors and acts that are detailed and clear and are used to lay out an organization's performance. Employee's competencies are those qualities, skills or attributes that employees require to perform their jobs most effectively.

Literature Review - There has been large number of researches in past several decades on performance appraisal and employee competencies

Cummings(1973)in an research article entitled, ¯A Field Experimental Study of the Effects of Two Performance Appraisal Systems , reported the results of a field experiment planned to test the effects of manipulating elements of an operative level performance appraisal structure. First, the multi purposive nature of appraisal in formal organizations is discussed than it was compared by the motivational approach of employees. This is followed by a brief overview of the literature on performance appraisal.

Durga Rao and Ramudu (2006)in their research study on motivation of employees, concluded that the motivation is very important factor in any manufacturing company. If the employees are motivated for their accomplishment of the work assigned the production capacity will automatically increased and it will affect the overall growth of the company.

Rajagopalan (2009) developed a new 'Performance Scoring Multiplier Model' to analyze performance and tested the model by taking India Cements Limited as a case by identifying different models to measure the performance. He concluded that in spitefulness of having increase in critical inputs; the company got better score in direct operational indicator in the form of performance appraisal and competency of employees. When there is a appraisal for any type of work or any type of task employees get motivated to do the task with double efforts and ability.

Woehr and Huffcutt (2011) in their article titled, Rater

*Research Scholar, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA
** Asst. Prof. (Commerce) D A V V, Mateshwari Sugani Devi Girls College, Indore (M.P.) INDIA

training for performance appraisal: A quantitative review state that a substantial amount of research in the performance appraisal literature has focused on rater training as a means of improving performance ratings. Unfortunately the value of this research is somewhat equivocated by a lack of organization and integration. The present study provides an integration and a quantitative review of the rater training literature. A general framework for the evaluation of rater training is presented in terms of four rating training strategies (rater error training, performance dimension training, frame- of reference training, and behavioural observation training) and four dependent measures (halo, leniency, rating accuracy and observational accuracy). Finally, a metaanalytic review is presented to assess the effectiveness of the rater training strategies across the four dependent measures.

Shweta Talesara (2018) in her study A Study on the Performance of employees of Ramco Cements Limited has mentioned that the company has shown improvisation in the calculated the payment of current employees. Company needs to improve its current system to motivate the employees in a better way.

Employee Competency and Appraisal System - In the recent period of fast increase in globalization, imagine ready for quick action employees. The competitiveness can be calculated by employee's ability to perform the work by utilizing the competency. At this stage it is essential to know the about competency. Competencies are the skills and abilities which are highly required for most wanted point of performance. Exact competencies are the way for better performance. A competency is any individual quality or characteristic that is used in proper ways to effectively complete one or more output expected from them.

Competencies are techniques that an individual use for winning performance without them, performance is not achievable. Competences are explained behavioral skills collective with technological knowledge, practice that present as indicators of achievement in a situation.

However, an employee's competencies are enduring and are more readily transferred across work assignments. In summary, competencies are the tools that individuals use for successful performance without them, performance is not possible.

Competencies to be included in performance appraisal system - Competencies that must be included in the performance appraisal system are as follows:-

1. Motivation and Commitment
2. Communication and personal development
3. Management of change
4. Customer orientation
5. Advancement
6. Conciliation
7. Analysis, interpretation and Decision making
8. Results orientation
9. Teamwork.

Hypothesis of the Study - Null hypothesis is used for testing. It is a statement that no difference exists between the parameter and statistics being compared to it and also alternatively hypothesis is the logical opposite of the null hypothesis in a present study pertaining to development as stated.

Hypotheses1: There is the significant relationship exist between performance appraisal and employees Competency.

Hypotheses2: Competency positively affects the relationship of performance appraisal and employees performance.

Results & Discussion - Performance appraisal system positively effects competency of employees. Employees get motivated through the fair performance appraisal and work with full efforts and skills for organization. Performance appraisal decreases the turnover of employees. It improves the style and efficiency of employees. A systematic and proper Performance appraisal should be there in every organization for growth and success of the organization as well as its employees.

Conclusion - The study shows that when the competency is measured in the performance appraisal system, there is an significant influence on the employee competency.

The analysis also proves that when the competency is measured in the performance appraisal system, it helps to develop the competency of the employee.

The research shows that there is a deep association that exists between the performance appraisal system and the competencies considered for assessment in the performance appraisal system. Majority of the employees are well aware about the competency of employees.

Suggestions :

1. 360 Degree Feedback system for Performance Appraisal should be implemented.
2. Criteria of appraisals should be less.
3. Self-Appraisal must be given more weightage.
4. Proper communication of Appraisal report to all.
5. Lengthy appraisal forms must be avoided.

References:-

1. Langridge, D. (2004) "Performance appraisal and development renovate Rother Homes
2. Leila Najafi, Y. H., Mohammad Ghiasi, Reza Shahhoseini, HasanEmami (2011). "Performance Evaluation and its Effects on Employees Job Motivation in HamedanCity Health Centers." Australian Journal of Basic and Applied Sciences5(12): 1761-1765. Management."Human Resource Management Journal. Vol 12, no.1, pp 8-9.
3. Panatika, S. A. B. (2012). "Impact of Work Design on Employee Psychological Strain
4. Selena, U. (2011). "Measuring Employee Expectations in a Strategic Human
5. Shubhangi Sharma, S. S., Priyanka Singh and Pratibha Singh (2012). "Performance Appraisal and Career Development." International Journal of Business and Management 2(1): 8-16.
6. Usage, criteria and observations."The Journal of Management Development. Vol 20, no.9,

अच्छी आदतों के निर्माण में शैक्षिक अभिप्रेरणा का महत्व

राजेश कुमार बंशीवाल* डॉ. मीनू अग्रवाल**

प्रस्तावना – हमारे जीवन में आदतों का अत्यंत महत्व है। हमारे अधिकांश कार्य आदतों द्वारा प्रेरित और सम्पादित होते है। जीवन की सफलता सकारात्मक आदतों के निर्माण से ही सम्भव है। अच्छी आदतों से हमारा जीवन सुखमय व सरस बनता है। जीवन में अच्छी आदतों से कार्य सरल, सुगम तथा शीघ्र होने लगते हैं और व्यक्ति की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है। व्यक्ति का व्यवहार उत्तारोत्तार उच्च बनने लगता है, परन्तु प्राय: यह देखने में आता है कि यदि अच्छी आदतें बचपन में ही डाली जायें तो वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति होती है। अधिक आयु में वांछित आदतों का निर्माण एक कठिन कार्य है। अत: बचपन में ही सही प्रकार की आदतों की बुनियाद रखी जाये। क्योंकि बालकों का मस्तिष्क लोचदार एवं सीखने के लिए तत्पर होता है। कुछ आदतें बालक जन्मजात लेकर आता है और कुछ आदतें अनुकरण की प्रवृत्ति के कारण बनती है। इस प्रवृत्ति के सहारे वह बहुत सी अच्छी व बुरी आदतें सीख जाता है। जब बालक वातावरण के सम्पर्क में आता है तो कुछ आदतों को बिना प्रयत्न के सीख जाता है। कुछ आदतों के निर्माण में बहुत प्रयत्न करना पड़ता है। समय पर कार्य करना एक ऐसी आदत है इसके लिए बहुत परिश्रम करना पड़ता है। कुछ आदतें बालकों में अन्य लोगों द्वारा डाली जाती है। जैसे :- शिष्टाचार की आदत, परिवारजन एवं शिक्षक डालते है। चूंकि बालक शिशु रूप में पशुवत् पैदा होता है। अत: धीरे-धीरे सीखी गयी इन्हीं आदतों से उसका चरित्र निर्माण होता है। **जेम्स** के अनुसार 'आदत प्राणी के पूर्वकृत व्यवहारों की पुनरावृत्ति है'।

आदतों से तात्पर्य स्वचलित मानसिक और आंगिक प्रक्रियाओं से है, जो सीखने की स्थितियों में निरन्तरता से अर्जित और प्रकट होती है, इन प्रक्रियाओं का सम्बन्ध नये ज्ञान (कौशल) की प्राप्ति से या प्राप्त ज्ञान और कौशल के प्रयोग दोनों से होता है।

आदतों का निर्माण – आदतों का बनना शैशवावस्था से ही प्रारम्भ हो जाता है। शैशवावस्था की आदतें व्यक्ति में जीवनपर्यन्त बनी रह सकती है, यद्यपि विकास में विभिन्न अवस्थाओं में कुछ न कुछ नयी आदतों का निर्माण होता रहता है। सामान्य और समायोजित जीवन व्यतीत करने के लिए बालकों में अच्छी आदतों का निर्माण होना आवश्यक है। अच्छी आदतें उन्हें जीवन में सफल बनाती है और बुरी आदतों से वह पतन की ओर जा सकता है। बालकों में अच्छी आदतों के निर्माण के सम्बन्ध में सामान्यतया निम्नलिखित अभिप्रेरकों का प्रयोग किया जाता है :-

1. बालकों में दृढ **संकल्प** विकसित कीजिए।
2. जेम्स के अनुसार 'नवीन आदतों को **क्रियाशीलता** की संलग्नता से प्रारम्भ कीजिए।'
3. आदतों के सम्बन्ध में कार्यो को करने के लिए प्रबल **इच्छाशक्ति** की आवश्यकता होनी चाहिए।
4. उन्हें कार्य का **निरन्तरता** से **अभ्यास** करवाया जाए।
5. अच्छी आदतों के लिए **पुरस्कार** व बुरी आदतों के लिए **दण्ड** की व्यवस्था होनी चाहिए।
6. अच्छी आदतों का **प्रशिक्षण** देना आवश्यक है।
7. बालकों में आदतों के विकास के लिए उन्हें **अनुकरण** के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

आज सभी शिक्षाविद् इस बात पर जोर दे रहें हैं, कि बालकों की रूचियों, इच्छाओं, क्षमताओं आदि का ध्यान रखते हुए विकास के मार्ग खोले जाए। अत: शिक्षकों को बालकों के साथ व्यवहार करते समय उनकी मनोवैज्ञानिक विशेषताओं की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। बालकों के सम्मुख उत्तम गुणी व्यवहार प्रदर्शित कीजिए। विविध क्रियाऐं जिन्हें आप करे, वे उत्ताम एवं पूर्ण विधि द्वारा की जानी चाहिए। कार्य करने की अवस्थाओं की उत्तामता को बनाये रखने की ओर ध्यान देना चाहिए, जिससे कि बालक अनुकरण कर लाभान्वित हो सके।

गाँधी जी ने कहा है कि 'अध्यापकों को बालकों के सम्मुख सदैव प्रसन्न मुद्रा में उपस्थित होना चाहिए, यदि एक अध्यापक क्रुद्ध अथवा चिड़चिड़े स्वभाव को लेकर शाला में आता है, तो वह बालकों के प्रति अपने उत्तम व्यवहार को तो खराब कर ही रहा है, इसके अतिरिक्त उनके जन्मसिद्ध अधिकार- 'प्रसन्नता को भी ठेस लगाने का यत्न भी कर रहा है' ऐसे अध्यापक को बालक प्रेम या सम्मान नहीं देंगे। **गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर** बालक को क्रियात्मकता की प्रेरणा से भरकर हँसने, गाने, चहचहाने के लिए उत्सुक चिड़िया के रूप में चित्रित करते हैं। प्रसिद्ध जर्मन शिक्षा शास्त्री **फ्रोबेल** उसे स्वयं विकासोन्मुख होने वाला पौधा मानते है। इसलिए अध्यापकों का व्यवहार कोमल, सरस व अभिप्रेरणात्मक हो बालक परस्पर शिष्ट व सौम्यतापूर्ण भाषा का प्रयोग करे।

विद्यालय का वातावरण भयमुक्त एवं स्वछंदतायुक्त होना चाहिए, जिससे की बालक अपना समुचित विकास कर सके। अच्छी आदतों को सीखना बड़ा कठिन होता है। उनके सीखने के लिए नित्यप्रति अभ्यास की आवश्यकता होती है। जब अभ्यास छूट जाता है तो भी आदतें नष्ट हो जाती है। आदत डालने के लिए निश्चित विशेषताओं का होना आवश्यक है। सामान्य बातों में आदत नहीं डाली जा सकती। माता-पिता या शिक्षक अपने बालकों से यदि नित्यप्रति यह कहते रहें कि 'अच्छे बालक बनो' या 'अच्छे चरित्र का निर्माण करो' तो बालक अच्छे बालक या अच्छे चरित्र की ओर

* शोधार्थी, शिक्षा विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
** वरि. व्याख्याता, श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय केशव विद्यापीठ जामडोली, जयपुर (राज.) भारत

उन्मुख नहीं हो पायेगा। क्योंकि ये बातें इतनी व्यापक एवं अस्पष्ट हैं कि इनका कोई विशेष अर्थ नहीं है। इसलिए हमें चाहिए कि व्यापक नियमों को विशिष्ट सिद्धांतों में विभक्त कर दें और एक निश्चित बात का ही अभ्यास कराए। हम यह देखतें हैं कि जो व्यक्ति व्यस्त रहता है वह अपना काम आसानी से कर लेता है। जो व्यक्ति प्रात: तड़के उठता है वह नियमित जीवन व्यतीत कर सकता है। दिये गये कार्य को पूर्ण तन्मयता व परिश्रम से पूरा करना जीवन में सफलता प्राप्त करने की कुंजी है। बालकों को इसकी आदत शुरूआत से ही पड़ जानी चाहिए। अन्यथा बालकों की शिक्षा यथोचित रूप से पूर्ण न हो सकेगी।

कभी–कभी माता–पिता का अशिक्षित होना, बड़ों का व्यभिचार, माता–पिता अथवा भाई–बहिनों का आपसी सम्बन्ध बुरी आदतों का कारण बनता है, तो कभी–कभी बालक पर अत्यधिक प्रेम या प्रेम का अभाव बुरी आदतें उत्पन्न कर देता है। सृजनात्मक कार्यो का अभाव, उचित आदर्शों का अभाव बुरी आदतों को जन्म देता है। इसलिए माता–पिता एवं शिक्षकों द्धारा बालकों को इस प्रकार की अभिप्रेरणा दी जाए या ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न की जाए कि वे बुरी आदतों से दूर रहें। प्राय: यह देखने में आता है कि बालक शौक ही शौक में या जोश में किसी कार्य का उत्तरदायित्व ले लेते हैं, परन्तु बीच में ही छोड़ देते हैं अथवा उसमें ढील देने लगते हैं। अस्थिर इच्छाशक्ति के कारण ऐसा होता है। यदि बालकों को यह आदत पड़ गयी तो प्रत्येक कार्य सुस्ती से या खराबी से होगा। अत: बालकों में निरन्तर प्रेरणा व उत्साहवर्धन की आवश्यकता होती है। अन्य बालकों के उत्ताम कार्यो से उनके कार्यो की तुलना करवायी जाए, जिससे कि बालक अभिप्रेरित हो सके।

बालकों को सामाजिक जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि वे समाजसेवी बनें। उनके हृदय में एक–दूसरे के प्रति नि:स्वार्थ सेवा की उत्कंठा निरन्तर बनी रहे। प्रारम्भ से ही उन्हें नि:स्वार्थ कार्यो को करने की यथोचित प्रेरणा व अवसर दिये जाने चाहिए। पर्याप्त समय तक प्रतिदिन कार्यो के लिए अभ्यास के अवसर दिये जाने चाहिए। बालकों के सामने स्वयं क्रियात्मक रूप से उस कार्य को करके दिखाए। अपने व्यवहार में उन गुणों का समावेश कीजिए, जिन्हें आप बालक में देखना चाहते हैं। इसमें भी बालकों की शक्तियों, इच्छाओं तथा रूचियों का सदैव ध्यान रखना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Chouhan, S.S. (1987) Advanced Educational Psychology, Vikas Publishing House Pvt. Ltd. New Delhi.
2. Hurlock, E.B. (1978) Child Development, Mc Graw Hill Book Co., Newyork.
3. माथुर, एस.एस.: उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शरद पुस्तक भवन, इलाहाबाद 2006।
4. डॉ. श्रीवास्तव, डी.एन. एवं वर्मा, प्रीति : बाल मनोविज्ञान एवं बाल विकास, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 2006।
5. वर्मा, शेख और संगीता, 'किशोरावस्था में छात्रों के अध्ययन आदत एवं शैक्षिक प्रेरणा परीक्षा चिन्ता में सम्बन्ध पर अध्ययन' सारकोर्लिग्मुआ वाल्यूम – 27।
6. wwww.wikipedia.com
7. wwww.teachersofindia.com
8. wwww.shodhganga.inflibnet.ac.in

****

अहमदाबाद नगर में जनसंख्या वितरण एवं घनत्व का स्थानिक-सामयिक विश्लेषण

डॉ. पुष्पेंद्र कुमार कलाल*

शोध सारांश – नगर भूगोलवेत्ताओं के लिए प्रारम्भ से ही आकर्षण के केन्द्र रहे हैं।वर्तमान समय में नगरीय जनसंख्या वृद्धि एवं जनसंख्या घनत्व ना केवल भारतीय नगरों में अपितु विश्व के विशालतम नगरों के संदर्भ में भी एक ज्वलंत मुद्दा बना हुआ है। देश के अन्य नगरों की तरह अहमदाबाद नगर भी जनसंख्या वृद्धि की समस्या से ग्रसित है। यहां की जनसंख्या वृद्धि का एक कारण शिक्षा एवं रोजगार की तलाश में बड़ी जनसंख्या में व्यक्तियों का आवागमन भी है। नगर की जनसंख्या 2001 में 35 लाख में थी जो 2011में बढ़कर 55.7 लाख हो गई, बढ़ती हुई नगरीय जनसंख्या एवं घनत्व के कारण नगरीय पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, साथ ही अन्य समसामयिक समस्याएं भी उत्पन्न हो रही है। प्रस्तुत शोध में अहमदाबाद जिले की जनसंख्या वृद्धि एवं जनसंख्या घनत्व का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना – जनसंख्या वृद्धि दर किसी दो निश्चित समय के बीच कृषि क्षेत्र में रहने वाले लोगों की संख्या में बुद्धि का दर है जबकि जनसंख्या घनत्व भूमि तथा आबादी के अनुपात को दर्शाता है। चीन के बाद भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा आबादी वाला देश है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की आबादी 1210 मिलियन थी एवं औसत जनसंख्या घनत्व प्रति वर्ग 382 व्यक्ति था एवं गुजरात की जनसंख्या 2011 में 604.40 लाख थी एवं औसत जनसंख्या घनत्व 308 व्यक्ति वर्ग किलोमीटर था है। अहमदाबाद गुजरात का मुख्य नगरीय केंद्र है।2001 में नगर का क्षेत्रफल 190.84 वर्ग किलोमीटर एवं जनसंख्या 35 लाख के आँकड़े को पार कर गई। 2011 के जनगणना के अनुसार नगर की जनसंख्या बढ़कर 55,77,940 हो गई। साथ ही नगरीय क्षेत्र का विस्तरण होने से नगर का क्षेत्रफल बढ़कर 464.19 वर्ग किलोमीटर हो गया। नगर में क्षेत्रफल की वृद्धि के साथ जनसंख्या की वृद्धि दर्ज की गई परंतु पिछले दशक की तुलना में जनसंख्या घनत्व में कमी हुई जिसका एक कारण नगरीय क्षेत्रफल में वृद्धि था।

अनुसंधान का भौगोलिक क्षेत्र – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए अहमदाबाद नगर की म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन की सीमा (*A.M.C. Limit*) को आधार माना गया है। अहमदाबाद गुजरात का सबसे बड़ा नगर है, जो 22° 55' उत्तरी अक्षांश से 23° 08' उत्तरी अक्षांश तथा 72° 30' पूर्वी देशान्तर से 72° 42' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।समुद्र सतह से नगर की ऊँचाई 53 मीटर है।नगर की जलवायु सामान्यत: गर्म और सुखी (शुष्क) है। नगर में प्रमुख भौतिक प्रतिक के रूप में साबरमती नदी ही है, जो नगर को दो भागों में विभाजित करती है। यह गुजरात का मुख्य औद्योगिक एवं व्यापारिक नगर है।यह नगर गुजरात की राजधानी गांधीनगर से 24 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। जनगणना वर्ष 2001 के अनुसार नगर कुल पाँच जोन व 43 वार्डो में विभाजित था। साथ ही नगर की जनसंख्या 2001 की जनगणना के अनुसार 35,20,085 थी।वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार नगर की कुल जनसंख्या बढ़कर 55,77,940 हो गई।

शोध उद्देश्य व विधितन्त्र – प्रस्तुत शोध के मुख्य उद्देश्य- 1.अहमदाबाद नगर में जनसंख्या वितरण एवं वृद्धि का विश्लेषण करना एवं 2. नगरीय इकाई में जनसंख्या घनत्व के बदलते प्रारूप का तुलनात्मक अध्ययन करना।अध्ययन में उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अहमदाबाद नगर को मुख्य ईकाई मानकर द्वितीयक आँकड़ों की प्राप्ति की गई। द्वितीयक आँकड़ों की प्राप्ति जनगणना रिपोर्ट, म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन, नगरीय विकास संस्थान व गुजरात राज्य की सामाजिक-आर्थिक समीक्षा के रिपोर्ट आदि स्त्रोतों से प्राप्त किये गये।आँकड़ों के तथ्यात्मक विश्लेषण के लिए सांख्यिकी विधियों में समांतर माध्यव प्रतिशतता का प्रयोग किया गया है।आँकड़ों के प्रस्तुतीकरण सारणीयनएवं अर्थघटन के लिए GIS तकनीक द्वारा मानचित्रों का निर्माण किया गया।

जनसंख्या संरचना – अहमदाबाद नगर में जनसंख्या संरचना का विश्लेषण मुख्य रूप से 2001 एवं 2011 की जनगणनाओं का तुलनात्मक दृष्टिकोण से किया गया है। मुख्य तत्वों में जनसंख्या आकार,वृद्धि, वृद्धि की प्रवृत्ति, घनत्व, आदि का विश्लेषण किया गया है।2001 में नगर का क्षेत्रफल 190.84 वर्ग किलोमीटर एवं जनसंख्या 35 लाख के आँकड़े को पार कर गई। 2011 के जनगणना के अनुसार नगर की जनसंख्या बढ़कर 55,77,940 हो गई। साथ हीनगरीय क्षेत्र का विस्तरण होने से नगर का क्षेत्रफल बढ़कर 464.19 वर्ग किलोमीटर हो गया।

जनसंख्या का आकार – नगर की जनसंख्या के आकार के अन्तर्गत नगर में निवास करने वाली जनसंख्या को आधार माना जाता है। जनसंख्या आकार के विश्लेषण के लिए 2001 एवं 2011 की जनगणना की जनसंख्या को आधार मानकर अलग-अलग पहलुओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।2001 में अहमदाबाद नगर में 43 वार्ड थे व नगर 5 जोन में विभाजित था, परन्तु नगर के क्षेत्रफल में वृद्धि के फलस्वरूप नये रिहायशी क्षेत्र के विस्तरण से नये पश्चिम जोन का विकास हुआ, इसके साथ वार्ड की संख्या बढ़ाकर 64 हो गई। परन्तु 2011 की जनगणना 57 वार्डो के आधार पर हुई, जनसंख्या की दृष्टि से क्षेत्रीय वितरण देखा जाये तो नगर में कुल 35,20,085 (2001) की जनसंख्या थी, जिसमें सबसे कम जनसंख्या

* अतिथि संकाय सदस्य (भूगोल विभाग) एल.डी.आर्ट्स कॉलेज, अहमदाबाद (गुजरात) भारत

पश्चिम एवं मध्य जोन में तथा सबसे ज्यादा जनसंख्या पूर्व एवं उत्तर जोन में थी। 2001 के अनुसार नगर 5 जोन में विभाजित था जो 2011 के अनुसार 6 जोन में विभाजित है।

तालिका 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

जनगणना वर्ष 2011 के अनुपात में देखा जाये तो सबसे अधिक जनसंख्या नगर के नये पश्चिम जोन में विद्यमान है। नया पश्चिम जोन पूर्ण रूप से रिहायशी क्षेत्र है। पिछले दशक की तुलना में देखा जाये तो नगर के मध्य जोन की जनसख्या में-2.05 प्रतिशत की गिरावट आई, जिसका मुख्य कारण नगर का मध्य जोन खुदरा व थोक विक्रेता केन्द्र है। साथ ही पर्यावरणीय प्रदुषण एवं वाहनों के घनत्व के कारण जोन के रिहायशी नगर बाहरी क्षेत्र की तरफ प्रयाण कर रहे है। 2011 में नये पश्चिम जोन के विकास से नगर की जनसंख्या में काफी वृद्धि दर्ज की गई। 2001 के वर्ष की तुलना में नगरीय जनसंख्या में 58.4 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई।

जनसंख्या वृद्धि – अहमदाबाद नगर की जनसंख्या 1872 ई. में 1,19,672 थी, जो 1881 में बढ़कर 1,27,621 व्यक्ति हो गयी। इन नौ वर्षों में नगरीय जनसंख्या में 7,949 व्यक्ति की वृद्धि हुई। 1891 में नगर की जनसंख्या 1,48,412 हो गई जो तीव्र गति से बढ़ती हुई 1901 में 1,85,889 व्यक्ति हो गई। नगर की जनसंख्या में उत्तरोत्तार वृद्धि के फलस्वरूप भारत की आजादी के बाद के वर्ष 1951 की जनगणना के अनुसार यह बढ़कर 8,37,163 हो गई। 1872 से 1951 तक के 80 वर्ष के अन्तराल में नगरीय जनसंख्या लगभग सात गुनी हो गई थी। इसी प्रकार 1961, 1971, 1981 एवं 1991 में यह तीव्र गति से बढ़ती हुई ,2001 की जनगणना के अनुसार नगर की जनसंख्या बढ़कर 35 लाख के आँकड़े को पार कर गई। यही नहीं 2011 के वर्ष तक नगर की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ती हुई 55,77,940 तक पहुँच गई।

जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्तियाँ – अहमदाबाद नगर में जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति देखी जाये तो स्पष्ट होता है कि 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशकों में नगर की जनसंख्या वृद्धि दर 1881 में 6.64 प्रतिशत रही। 1901 में नगरीय जनसंख्या में पिछले दशक से 25.25 प्रतिशत की वृद्धि हुई। क्योंकि इसी समय गांधीजी द्वारा कोचरब आश्रम का निर्माण व स्वदेशी वस्त्रों के बहिष्कार करने की सोच से सूती वस्त्र उद्योग का काफी विकास हुआ। 1921 में जनसंख्या वृद्धि दर बढ़कर 26.40 प्रतिशत हो गई जो पिछले दशक की तुलना में 10 प्रतिशत ज्यादा थी। 1931 में नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हुई परन्तु वृद्धि दर में गिरावट आई जो घटकर 13.14 प्रतिशत रही। 1931-41 के दशक में जनसंख्या वृद्धि तीव्र गति से हुई। लेकिन अगले ही दशकों में वृद्धि दर में गिरावट आई, जहाँ 1991-2001 के मध्य वृद्धि दर पिछले दशक की तुलना में कम रही। 2011 में वृद्धि दर बढ़कर 58.4 हो गई। 1872 से 2011 के वर्षो तक सिर्फ 1941 एवं 2011 के वर्ष में वृद्धि दर 50 प्रतिशत से ज्यादा दर्ज की गई है। इसका मुख्य कारण यह है कि इन वर्षों में नगरीय क्षेत्र का तीव्र गति से विस्तार व विकास हुआ देखा जा सकता है।

आरेख-1(अगले पृष्ठ पर देखे)

***जनसंख्या घनत्व* –** किसी प्रदेश की जनसंख्या का घनत्व उस प्रदेश में प्रति वर्ग किलोमीटर पर निवास करने वाली जनसंख्या के आधार पर ज्ञात किया जाता है। अहमदाबाद नगर में जनसंख्या घनत्व 1872 में 21,977 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था, जो 1971 में घटकर 17,053 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गया। पिछले दशकों की तुलना में 1971 में जनसंख्या घनत्व घटकर -28.87 प्रतिशत हो गया, जबकि 1981 में पिछले दशकों की तुलना में +18.73 प्रतिशत की वृद्धि हुई, परन्तु 1991 में एक बार फिर जनसंख्या घनत्व घटकर 15,074 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गया। 2001 एवं 2011 में नगर में जनसंख्या घनत्व क्रमशः 18,445 व 12,016 रहा है। 2001 की तुलना में 2011 की जनसंख्या घनत्व में -34.86 प्रतिशत की गिरावट आई। इसका मुख्य कारण नगरीय क्षेत्रफल में तीव्र गति से वृद्धि है। 1872 से 2011तक नगरीय घनत्व का विवरणइस प्रकार है:-

आरेख – 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

वर्ष 2001 व 2011 के आँकड़ों के तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि2001 में नगर के जनसंख्या घनत्व 18,445 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था, जिसमें सबसे ज्यादा घनत्व मध्य जोन में तथा सबसे कम घनत्व दक्षिण जोन में था। वार्ड की दृष्टि से देखा जाये तो सबसे ज्यादा दरियापुर वार्ड में 85,245 तथा सबसे कम गांधी ग्राम वार्ड में 10,033 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर रहा।

मानचित्र संख्या-1 & 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

इसी प्रकार 2011 की जनगणना के अनुसार सबसे ज्यादाघनत्व मध्य वउत्तर जोन मेंएवं व कम घनत्व दक्षिणएवं नया पश्चिम जोन में रहा।मध्य जोन खुदरा व थोक विक्रेता संबंधी प्रवृत्तियों का केन्द्र है जबकि पश्चिम जोनएवंनया पश्चिम जोनअधिकांश रूप से रिहायशी क्षेत्र है व क्षेत्रफल की दृष्टि से विस्तृत भाग है।

निष्कर्ष – अहमदाबाद नगर के क्षेत्रफल की तीव्र गति से वृद्धि एवं मुख्य व्यापारिक, शैक्षणिक केन्द्र होने के परिणाम स्वरूप नगरीय जनसंख्या की वृद्धि हुई है।पुरातन परकोटे वाला नगर सकड़ी गलियों एवं मार्गो की घनता का क्षेत्र है।वहाँ उच्च घनत्व के साथ ही मुख्य व्यापारिक प्रवृत्तियों का केन्द्रीकरण है।पिछले दशक की तुलना में नगरीय जनसंख्या एवं क्षेत्रफल दोनों ही में तीव्र गति से वृद्धि दर्ज की गई है।नगरीय जनसंख्या घनत्व के दृष्टिकोण से देखा जाये तो यह स्पष्ट होता है कि पिछले दो दशकों की तुलना में नगरीय जनसंख्या घनत्व में गिरावट हुई है। नगर के कुछ वार्डो में जनसंख्या घनत्व के संबंध में काफी अन्तर पाया गया है।नगर की वृद्धि एवं विकास के साथ औद्योगिक ईकाईयो की वृद्धि हुई फलस्वरूप बेरोजगार पलायितो के आगमन से नगरीय जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि दर्ज की गई।2011 के अनुसार नया पश्चिम जोन में जनसंख्या अधिक है जबकि जनसंख्या घनत्व सबसे कम है यह जोन अधिकांश रूप से रिहायशी क्षेत्र है क्षेत्रफल की दृष्टि से विस्तृत भाग है एवं उत्तर एवं मध्य जोन में जनसंख्या कम परंतु जनसंख्या घनत्व अधिक पाई गई है बदलते नगरीय स्वरूप में जनसंख्या का आवासीय दृष्टिकोण से झुकाव उत्तर जोन की तरफ बढ़ रहा है, जिससे उत्तरजोन में जनसंख्या घनत्व अधिक पाई गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Alam S.M. (1965); “Hyderabad-Seconderabad - A Study of Twin Cities”, Allied Publication, Bombay.
2. Bansal Suresh Chandra (1991); “Urban Geography”, Minaxi Publication, Meerut.
3. Johnston, R.T. (1971); “Urban Residential Pattern”, Pracger, New York.
4. Kulkarni K.M. (1985); “Geography of Crowding and Human Response”, Concept Publication, New Delhi.
5. Verma L.N. (2009); “Urban Geography”, Rawat

Publication, ISBN 81-316-0042-4.

6. Breese, G. (1963); "Urban Development Problem in India", Annals of the Association of American Geographers, Washington, Vol. 53, Pp. 253-265.
7. Seema Rai (1996): Pattern of Population Density in an Indian City. National Geographical Journal of India, Vol. 42, (3 & 4), pp. 237-247.
8. Singh R.L. (1956); "Ballia - A Study in Urban Settlement", National Geographical Journal of India, Vol. 2, Pp. 1-6.

तालिका: 1जोन (मण्डल) अनुसार जनसंख्या का स्वरूप

	2001			2011		
जोन का नाम	वार्डो की संख्या	कुल जनसंख्या	घनत्व (प्रति वर्ग कि.मी.)	वार्डो की संख्या	कुल जनसंख्या	घनत्व (प्रति वर्ग कि.मी.)
मध्य	8	577797	35018	8	565914	34297
उत्तर	9	779742	24223	9	859713	26707
दक्षिण	8	702950	9720	9	1060973	7933
पूर्व	8	784234	28507	9	912713	22949
पश्चिम	10	675362	15958	12	846023	14614
नया पश्चिम 2011				10	1332604	7238
कुल	43	3520085	18445	57	5577940	12016

Source : Statistical Outline of Ahmedabad City 2006-2007& Census of India 2001 & 2011

आरेख-1*अहमदाबाद नगर में जनसंख्या एवं क्षेत्रफलकी वृद्धि (1872-2011)*

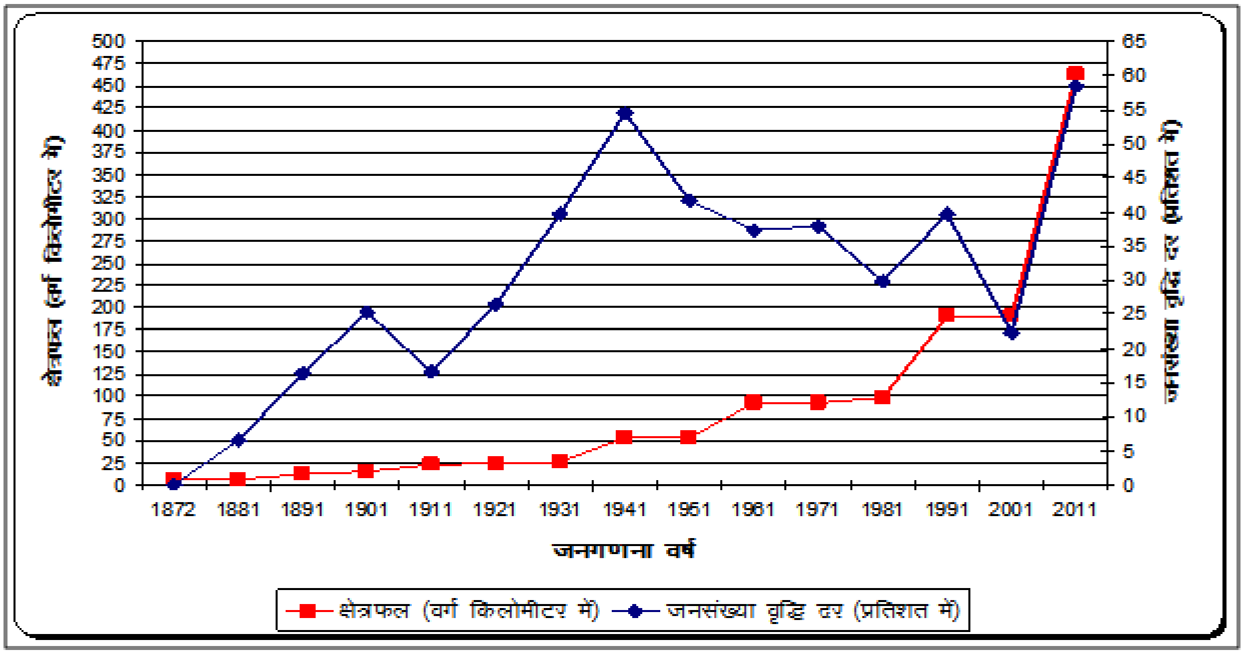

Source : Census of India 2001 & 2011; Statistical Outline of Ahmedabad City 1998-1999, 2006-2007.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

आरेख – 2.अहमदाबाद नगर में जनसंख्या घनत्व (1872–2011)

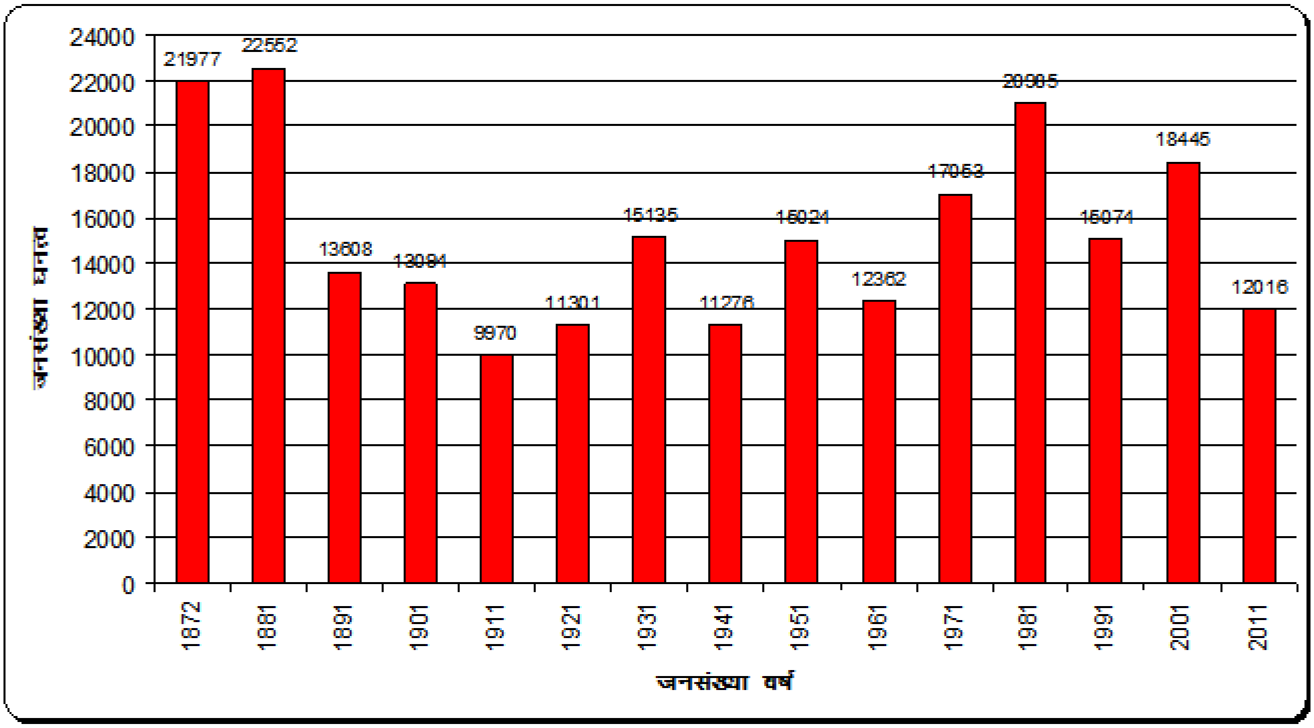

Source : Statistical Outline of Ahmedabad City (2006-2007); Census of Gujarat, GandhiNagar - 2011.

मानचित्र संख्या–1 & 2

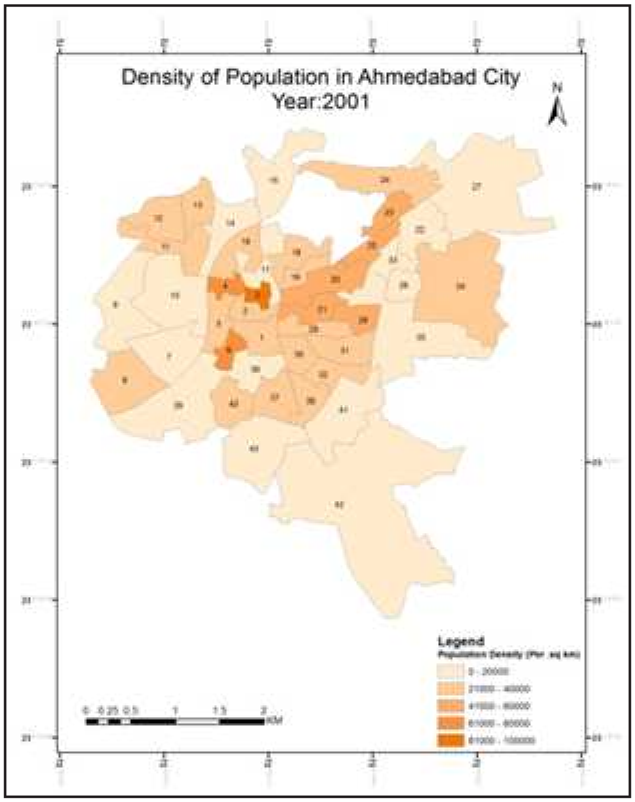

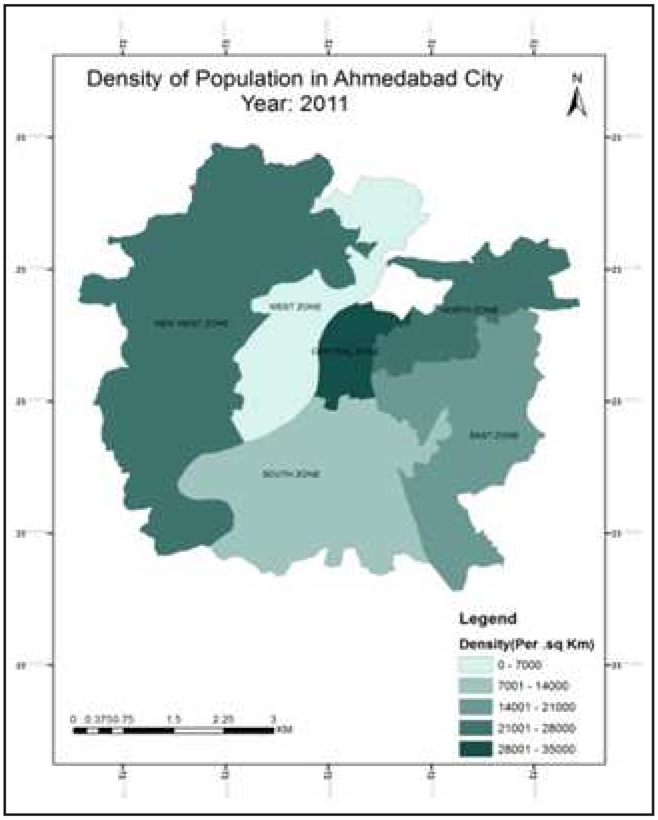

****

मानवाधिकार और वैश्वीकरण

श्रीमती पूनम दत्ता* डॉ. संजीव कुमार बंसल**

प्रस्तावना – मानव अधिकारों की आधुनिक अवधारणा द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विकसित हुई। प्रथम ठोस प्रयास जो मानवाधिकारों की सुरक्षा के प्रति देखने को मिलता है वह है, 1215 ए.डी. में इंग्लैण्ड का मैग्नाकार्टा विधान, जो कि सम्राट या उसके श्रेष्ठतम अधिकारों के सापेक्ष मानवाधिकारों या मानव के मूल हितों को सुरक्षित करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका की 4 जुलाई, 1776 की घोषणा तथा 1789 की फ्रांसीसी घोषणा, मानवाधिकारों की रक्षा एवं इनके महत्त्व को प्रस्थापित करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम थे।

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान हुए मानवाधिकार हनन के पश्चात् जून 1915 में 'शान्ति स्थापना लीग' नामक संस्था का गठन किया गया। इसी क्रम में 1920 मे राष्ट्रसंघ का गठन हुआ। इसके बावजूद द्वितीय विश्वयुद्ध में मानवाधिकारों की अनदेखी हुई। 1941 में 'अटलांटिक चार्टर' द्वारा सभी देशों के नागरिकों के समान अधिकारों की बात कही गई। 1945 के सेनफ्रांसिस्को सम्मेलन में भी मानवाधिकारों की रक्षा की बात उठाई गई। इन सब प्रयासों के फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शांति स्थापना एवं मानवाधिकारों की रक्षा के लिए 24 अक्टूबर, 1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ नामक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का उद्‌भव हुआ। 1946 में संयुक्त राष्ट्र संघ की धारा 68 के अन्तर्गत 'आर्थिक एवं सामाजिक परिषद्' निकाय ने श्रीमती एलोनोर रूजवेल्ट की अध्यक्षता में मानव अधिकारों के प्रारूप की रचना के लिए मानवाधिकार आयोग गठित किया गया जिसने जून 1948 में मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा तैयार की, जिसे संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 10 दिसम्बर, 1948 के प्रस्ताव क्रमांक 217 (अ) 115 द्वारा स्वीकार किया 'मानव अधिकार दिवस' के रूप में प्रतिष्ठापित किया।

'मानवाधिकारियों ने प्रारम्भ में आदिवासियों के अधिकारों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। इसी कारण मानवाधिकार की संयुक्त राष्ट्र की घोषणा में उनका कोई उल्लेख नहीं मिलता लेकिन बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कथित विकास की प्रक्रिया में आदिवासियों के हितों पर किए गए कुठाराघातों ने ही मानवाधिकारवादियों को इस दिशा में सचेष्ट किया।'

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसम्बर 1986 में विकास का घोषणा-पत्र स्वीकार करते हुए उसे ऐसा अधिकार माना जिससे किसी भी व्यक्ति या समूह को वंचित नहीं किया जा सकता। उसी घोषणा पत्र के अनुच्छेद दो में कहा गया है कि विकास का केन्द्रीय विषय मानव है, वह विकास की प्रक्रिया का सक्रिय सहभागी और उसके लाभों का भोक्ता होना चाहिए। यही बात विशिष्ट समूहों पर लागू होती है। मानवाधिकार कहता है कि मानव की भावी पीढ़ियों के हित को विकास की प्रक्रिया में समाहित किए बिना आदिवासी समूहों के अधिकारों का अतिक्रमण होता है, तो इसे उनके साथ अन्याय समझा जाना चाहिए। इसी अवधारणा को इन्टरजेनरेशनल- जस्टिस अर्थात् सनातन न्याय कहा जाता है।

एक लोकतांत्रिक राज्य का कार्य मानव को प्रकृति से प्राप्त अधिकारों के समुचित प्रयोग द्वारा उसके सर्वांगीण विकास के लिए अग्रसर करने के अवसर प्रदान करना है। कुछ वर्ष पहले विश्व स्तर पर इंडिजीनस ईयर मनाया गया। भारत सरकार संयुक्त राष्ट्र संघ को सीधे लिख दिया कि 'भारत में इंडिजीनस लोग न होने के कारण ऐसा कोई वर्ष नहीं मनाया जाएगा और न ही वहाँ कोई प्रतिनिधिमण्डल जाएगा।' लेकिन ऐसे आंतरिक उपनिवेश और वर्चस्ववाद के कारण आदिवासी समूह विकास के नाम पर विस्थापित होकर अपने मानवाधिकारों को प्राप्त करने में असफल रहे।

सरकार ने 1998 में कई प्रकार के बिल पेश कर भूमि अधिग्रहण संशोधन द्वारा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को मनमानी जमीन प्राप्त करने के अवसर प्रदान किए। 'भूमि अधिग्रहण व छोटा नागुपर टेनेंसी एक्ट जैसे कानूनों के तहत आदिवासी की जमीन लेने पर रोक लगी हुई थी। इसके प्रावधानों से मुक्ति पाने के लिए सरकार ने इस पर मनमाने संशोधन किए। सरकार की इस नीति के कारण 1991 और 1995 की अवधि के बीच केवल झारखण्ड में पचास एकड़ भूमि पर पन्द्रह लाख लोग विस्थापित हुए, जिसमें 41.27 प्रतिशत आदिवासी हैं।' इसके अतिरिक्त रक्षा परियोजनाओं में 89.7 प्रतिशत और जल संसाधन परियोजनाओं में 75.2 प्रतिशत आदिवासी विस्थापित हुए।

सरकार की वित्ताधारित विकास की नीतियों ने 'कोल बियरिंग एरिया एक्ट-1957' द्वारा आदिवासियों की हजारों एकड़ जमीन को खदानों, रेल की पटरियों और ईंट भट्ठों में परिवर्तित कर दिया। अन्य समूहों के समान योग्यता और हैसियत उपलब्ध करवाना तो दूर उनकी प्राकृतिक सम्पदा को नष्ट कर उन्हें रोजगार और समान अधिकार की अनुपलब्धता द्वारा मानवाधिकार से वंचित कर दिया। अन्य समूहों के विकास की कीमत पर आदिवासियों का विस्थापन मानवीय विकास और कल्याण की उपेक्षा या दमन को दर्शाता है।

जबकि पर्यावरण और विकास पर केन्द्रित संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में यह तथ्य स्वीकार किया गया कि वैश्विक पर्यावरण की चुनौतियों का सामने करने के लिए आदिवासी समूहों और उनके पारम्परिक ज्ञान की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इसलिए विकास की किसी भी प्रक्रिया विशेषतया उनके प्रदेशों से सम्बन्धित विकास प्रक्रिया में इन समूहों की सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित किया जाना चाहिए लेकिन पूंजीवाद विकास ने आदिवासियों

* वरिष्ठ व्याख्याता, राजनीति विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, श्रीकरनपुर (राज.) भारत
** वरिष्ठ व्याख्याता, लेखा एवं सांख्यिकी, श्रीमती नर्बदा देवी बिहाणी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,नोहर, हनुमानगढ़ (राज.) भारत

के पारम्परिक ज्ञान की अनदेखी कर उनके वनों, नदियों, तालाबों, पहाड़ों और वनस्पतियों के प्राकृतिक स्वरूप को विनष्ट कर पारिस्थितिक असंतुलन की स्थितियाँ पैदा कर दी हैं। आदिवासियों को सभ्य बनाने के लिए चलाई जाने वाली सरकारी तथा गैर सरकारी योजनाएँ उन्हें उनके टापुओं से खदेड़कर मानवाधिकार से वंचित करती है। आदिवासी कविता जब इक्कीसवीं सदी में पृथ्वी की असीमित धड़धड़ाहट से आदिवासियों के आदिम कवच को असुरिक्षत देखती है तो पूंजी एवं बाजार के प्रति विद्रोही तेवर दिखाकर उन्हें मानवाधिकारों के प्रति सचेत करती हैं, 'कि देखो तुम्हारे पेड़ गिर रहे हैं/समुद्र मैला हो रहा है/तटों पर प्लास्टिक की थैलियाँ बिखर रही हैं/मछलियाँ दूर चली गई है/ऑक्टोपस छुप गए हैं/शैल टूट गए हैं और तुम चुप हो।' यह कविता सभ्य समाज द्वारा आदिवासियों के प्रकृति प्रदत्ता अधिकारों को छीन कर विकास की प्रक्रिया में उनकी भागेदारी को सिरे से खारिज करने की योजनाओं के परिणाम को दर्शाती है।

अनैतिकता से अर्जित ऐसे विकास पर आदिवासी साहित्य विरोध दर्ज करवाकर अपने नैतिक कर्त्तव्य को परिपूर्ण किया है। डी.डी.कोशाम्बी, डी.पी. चट्टोपाध्याय, भगवती शरण उपाध्याय एवं राहुल सांकृत्यायन जैसे साहित्यकारों ने जहाँ अस्तित्व और पहचान के संकट से जूझते आदिवासियों को स्थापित करने का कार्य किया वहीं महाश्वेता देवी रमणिका गुप्ता, परदेशी राम वर्मा, हरिराम मीणा, वाहरु सोनवणे, रूपचंद हांसदा, निर्मला पुतुल मुन्नी सिंह, विपिन विहारी, कैलाशचन्द जैसे साहित्यकारों ने आदिवासी विर्मष को अंजाम तक पहुंचाया है। 'युद्धरत आम आदमी', 'अरावली उद्घोष', 'दस्तक', 'समकालीन जनमत' इत्यादि पत्रिकाओं ने आदिवासी विशेषांकों के माध्यम से आदिवासी जीवन की वेदना, विद्रोह और व्यवस्था के प्रति नकार द्वारा आदिवासियों को उज्ज्वल परम्परा का आधारभूत प्राणी होने का अहसास दिलाया।

आदिवासी समाज के प्रतिनिधि को समाज की मुख्यधारा से दूर हटाकर अपने अनिवार्य, सामाजिक और प्राकृतिक दायित्व की अवहेलना करने वाले शोषकों पर इन आदिवासी साहित्यकारों की कलम के तीव्र प्रहार हुए हैं।

सदियों से प्रस्थापित समाज, धर्म और शास्त्रो द्वारा किए जा रहे आदिवासियों के विरूपीकरण को समाप्त कर उनके मौलिक स्वरूप को प्रतिष्ठापित करने का प्रयास आदिवासी साहित्य के माध्यम से किया जा रहा है। 'ग्लोबल गांव के देवता' उपन्यास इन्हीं संदर्भो में आदिवासियों की निर्भीक, जुझारू, लोकतांत्रिक और संघर्षषील प्रकृति को उजागर कर मानवाधिकारों का पक्षधर बना है।

इस उपन्यास में चिंता व्यक्त की गई है कि दुनिया के ग्लोबल गाँव में तब्दील हो जाने पर उसकी अस्मिता का संकट न केवल बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से है बल्कि ऐसी राष्ट्रीय सरकार से भी है, जिसकी शक्ति वैश्विक है, जिसके नेता लोकतंत्र का दम्भ भरकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आश्रय में बैठे हैं। ग्लोबल गांव के देवता की ताकत के समक्ष उन सभी आदिवासियों तथा नागरिकों को खतरा है जो जमीन और अपने श्रम पर आश्रित हैं। इन देवों की दृष्टि किसानों की भूमि, आदिवासियों के जंगलों और श्रमिकों के सस्ते श्रम पर टिकी है, ये नेताओं और ब्यूरोक्रेटस को मोटी थैलियाँ चढ़ाकर मिल-जुल कर शोषण की प्रक्रिया को सम्पन्न करते हैं। इस प्रकार 'ग्लोबल गाँव के देवता' की असीम शक्ति के सामने, अपने हक के लिए संघर्षरत आदिवासियों की कम कीमत आंक कर कुछ विशेष लोगों को सशक्त करना प्रकारान्तर से उस विशिष्ट समूह के अधिकारों का हनन है, जिन्हें घुसपैठिए मानकर भेड़ियों का अभ्यारण्य बनाने के लिए सैंतीस गाँव खाली करने का आदेश दिया जाता है। ऐसे अन्याय से रक्षा के लिए संविधान में मौलिक अधिकारों और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों की संकल्पना की गई है। यह संकल्पना सर्वहित के नाम पर आदिवासी समूहों पर होने वाले अत्याचारों से बचाने के लिए अत्यावष्यक है।

आदिवासी साहित्य में प्रौद्योगिकी आधारित व्यवस्था में सर्वसत्तावादी होते जा रहे राज्यों और आर्थिक तौर पर एकाधिकारवादी संस्थाओं को आदिवासी नवचेतना के अवरोध के रूप में देखा गया है। यह व्यवस्था आदिवासियों के अस्तित्व, अस्मिता और उनकी सम्पूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक संरचना में हस्तक्षेप द्वारा समतामूलक समाज की अवधारणा और मानवीय मूल्यों को नष्ट कर रही है। सभ्यता के विस्तार के नाम पर 'वीरान घोटुल, उजड़े हाट, उमंगहीन पर्व थके मांदल और सिसकती बांसुरी थामे।' आदिवासी समाज आंतरिक और बाह्य षड्यन्त्रों में उलझकर सत्ता के विकेन्द्रीकृत विकास के साथ धनात्मक सम्बंध बनाने में असफल हो रहे हैं। समाप्त होती प्राकृतिक सत्ताओं, आदिवासी नस्लों, पुश्तैनी दावों, टूटती आस्थाओं तथा संक्रान्तिकालीन दशाओं जैसे विशिष्ट संदर्भो में आदिवासी मानवाधिकारों की प्राप्ति, आदिवासी साहित्य का मुख्य ध्येय रहा है। वैश्वीकरण के प्रभाव स्वरूप उत्पन्न शोषण के अनेक प्रश्नों से जूझती आदिवासी कविता जब कहती है कि 'पंथराई आँखों के सहारे/अपने हरे-भरे आँगन में/जीवन अवलम्ब ढूँढता कोई/कैसे बचे वैश्विक वात्याचक्र से/ दिक्कू और देसी दलालों के षड्यन्त्रों से वैश्विक वात्याचक्र यहाँ पूरे वेग के साथ आदिवासी मानवाधिकारों के संरक्षण एवं संवर्द्धन के उपक्रम को धराशायी करता प्रतीत होता है। इस प्रश्न के उत्तर में वैश्विक वात्याचक्र की विध्वंसकारी प्रकृति आदिवासियों की सुरक्षा, समानता, स्वतन्त्रता और साँस्कृतिक गरिमा में जीने के अधिकार को छीनने वाले खतरनाक राजनैतिक निहितार्थ को संकेतित करती है।'

वैश्विक विकास की गति के साथ कदम मिलाने की आकांक्षा में आदिवासी समूहों के भीतर दलालों और बिचौलियों का पनपना यह दर्शाता है कि वैश्विक बहेलिए आदिवासियों को जाल में फंसाने के लिए अत्यन्त सक्रिय हैं। उनकी बाजारवादी प्रकृति, उपभोगपरक मुनाफावादी आधार ग्रहण कर मानवाधिकार संरक्षण व्यवस्था को बाधित करती है। रणेन्द्र की 'बस वह धूल थी' कहानी की सीमा कजूर और उसका समाज आदिवासियों में ही उत्पन्न दलाल बी.डी.ओ. अनिल लकड़ा की स्वार्थी एवं भ्रष्ट प्रकृति के कारण समाज का शोषण करते हैं। 'ग्लोबल गांव के देवता' उपन्यास की आजीविका हेतु खटती युवतियाँ खदान के मेठ मुंशी, क्लर्क और अफसरों की उपभोग की वस्तु बनकर शोषण की चक्की में पिसती है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण की विकास योजनाओं के फलस्वरूप आदिवासी समाज के भीतर पनपने वाली यह शोषण की नकारात्मक प्रक्रिया आदिवासियों के बुनियादी अधिकारों पर प्रश्न चिह्न लगाती है। इसी प्रकार 'शिलवन्ती' जैसी स्त्रियों को दलाली में उतारना आदिवासी स्त्री को उसके मूल स्वभाव से भटकाकर आदिवासी समाज की जड़ों को खोखला करने का उपक्रम है। बाजारवाद की इस जटिल एवं समाज को विखण्डित करने वाली भूमिका से बेखबर स्त्री का मानवाधिकारों की प्रभावी दृष्टि से चूकना आदिवासी साहित्य में सख्त तेवर क साथ विद्यमान है। आदिवासी कविता प्रश्न पूछती है कि 'कैसा बिकाऊ है/तुम्हारी बस्ती का प्रधान/जो सिर्फ एक बोतल विदेशी दारू में/रख देता है/पूरे गांव को गिरवी/और ले जाता है/लकड़ियों के गट्ठर की तरह/ लादकर अपनी गाड़ियों में/तुम्हारी लड़कियों को/' शिक्षा के

अधिकार से वंचित आदिवासी स्त्री की यह दासता ही है, जो उसे निम्न स्तरीय प्रतिनिधित्व के लिए विवश कर उसके समक्ष चुनौतियाँ खड़ी करती हैं। षिलवन्ती जैसी स्त्रियां पैदा करने वाले लोग आदिवासियों की स्थिति को सुधारने के लिए प्रतिबद्ध मानवाधिकार के समक्ष एक बड़ी चुनौती हैं जो, उन्हें मुख्यधारा से जोड़ने की मुहिम का हिस्सा बनाने की आड़ में शोषण का यंत्र बनाते हैं। बाजारवाद की यह प्रकृति दलालों के माध्यम से आदिवासी समूहों के लिए आंतरिक खतरा बनकर समानता और न्याय की प्रक्रिया को बाधित करती है।

इस प्रकार वैश्वीकरण और बहुराष्ट्रीय अर्थसत्ता आदिवासी मानवाधिकारों के पक्षधर प्रतीत नहीं होते। मानवाधिकारों से आषय वंचितों के अधिकारों की सुरक्षा से है। वे वंचितों के संरक्षक बनकर उन्हें शिक्षा, स्वतन्त्रता, समानता, जीवन-रक्षा, शोषण- विरोध और न्यायगत-समता के जन्मसिद्ध अधिकार से संयुक्त करते हैं लेकिन अनेकों कानूनों के बावजूद पंजीवाद के सौदागर जाल फैलाकर, योजनाएँ एवं साजिशें बलवती कर आदिवासी की भूमि का अधिकार छीन कर उसे अषक्त बना देते हैं। आदिवासी साहित्य में आदिवासी के भूमि अधिकार हनन को लेकर आवाज उठाई गई है। वह बिना विक्रय किए, अपनी भूमि पर मालिकाना हक खोकर पूंजीवादी शक्तियों का शिकार हो जाता है। वैश्वीकरण यहां परम्परा से बंधे आदिवासी की जमीन को ब्यूटी पार्लर, एस.टी.डी. बूथ, किराना स्टोर, ऑटोपार्ट्स, रेडीमेड गारमेंट, दवाखाने, रेस्टोरेंट, प्रसाधन सामग्रियों से लेकर, ब्लू फिल्मों की सी.डी. एवं डी.वी.डी. स्टोर में परिवर्तित कर आदिवासी की विचारधारा में सेंध लगाकर उनकी चेतना की दशा को परिवर्तित करने में सफल हो जाता है।

'लकड़बग्घे' कहानी में भी सरकार द्वारा राजस्थान के बारां व कोटा जिले और इनसे सटे मध्यप्रदेश के निवासियों के लिए घोषित सरकारी बजट को हड़पकर विकास के नाम पर आदिवासी समूहों के सामाजिक और आर्थिक जीवन को छिन्न-भिन्न करना भी संयुक्त राष्ट्र के विकास के प्रतिमानों का उल्लंघन है। इस क्षेत्र के आदिवासियों का सारा पैसा कुछ लकड़बग्घों, पुलिस, स्थानीय पत्रकार, पटवारी, बी.डी.ओ., स्थानीय नेताओं आदि द्वारा अपनी जेब में डालना शोषण की पराकाष्ठा है जो मानवाधिकारों की मूल आत्मा के विरुद्ध है। इस कहानी में आदिवासियों के जीवन स्तर को उन्नत बनाने वाली योजनाओं की अनुपालना हेतु प्रतिबद्ध सरकारी प्रतिनिधियों की विश्वसनीयता का संदेहास्पद होना किसी भी राष्ट्र या समाज की नैतिकता को कटघरे में खड़ा करता है।

निष्कर्षत: आदिवासी साहित्य वंचित आदिवासी समूहों को उपभोक्तावाद और बाजारवाद जैसी विध्वंसक शक्तियों से टकराने का साहस प्रदान कर उनके रक्षार्थ प्रयासरत है। वह अपनी चेतना की प्रतिरोधात्मक शक्ति के बल पर आदिवासियों को न केवल आर्थिक विकास की गति में साझेदार बनाना चाहता है बल्कि उन शोषणवादी शक्तियों से लड़ना भी सिखाता है जो आदिवासियों के लिए निर्मित विशेष योजनाओं और प्रावधानों को मानवाधिकारों की संकल्पना के अनुरूप प्रतिपादित करने में बाधा उपस्थित करती है।

वैश्वीकरण के समय में आधुनिक विकास की गति के साथ आदिवासियों की प्रकृति, संस्कृति और इतिहास को उसकी मौलिकता के साथ जीवित रखने के लिए आदिवासर साहित्य संकल्पबद्ध है। ऐसे समय में सामाजिक मूल्यों एवं सामुदायिक जीवन शैली पर अवलम्बित वर्गरहित, जातिरहित समाज की परिकल्पना को अपनी आत्मा में संजोए मानवाधिकारों को पुष्ट करने वाली विकास प्रक्रिया की ओर अनिवार्य कदम बढ़ाना आदिवासी साहित्य की विशिष्टता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानवाधिकार, संघर्ष, संदर्भ एवं निवारण-कैलाश नाथ गुप्त, डॉ. सरिता शाह, पृ.सं. 14
2. मानवाधिकार की संस्कृति, नंद किशोर आचार्य, पृ. सं. 63-64
3. युद्धरत्त आम आदमी, अखिल भारतीय आदिवासी विशेषांक, पृ.सं. 49
4. युद्धरत्त आम आदमी, अखिल भारतीय आदिवासी विशेषांक, पृ.सं. 17
5. भारतीय नियम इतिहास और आदिवासी, हरिराम मीणा, वक्तव्य
6. आदिवासी कहानियाँ (संपादक केदार प्रसाद मीणा), शहर के दाग का दान, रूपलाल बेदिया, पृ.सं. 116
7. आदिवासी कहानियाँ (संपादक केदार प्रसाद मीणा), बस वह धूल थी, रणेन्द्र, पृ.सं. 68-77
8. समकालीन आदिवासी कविता (संपादन हरिराम मीणा) चुड़का सोरेन, निर्मला पुतुल, पृ. सं. 28
9. आदिवासी कहानियां (संपादक केदार प्रसाद मीणा), लकड़बग्घा, पुन्नी सिंह, पृ.सं. 128
10. मानवाधिकार की संस्कृति, नंद किशोर आचार्य, पृ.सं. 64

****

हिन्दी व्याकरण में निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण की उपादेयता

राजेश कुमार फुलवारिया* डॉ. संध्या शर्मा **

प्रस्तावना – मानव जीवन में भाषा का विशेष महत्व है। भाषिक योग्यता के आधार पर व्यक्ति अन्य जीव जन्तुओं से श्रेष्ठ है। मानव जीवन में शरीर मन और भाषा के सम्मिलित योग द्वारा ही व्यवहारों का सम्पादन होता है। भाषिक व्यवस्था के द्वारा ही मानव सभ्यता और संस्कृति का आदान–प्रदान होता है भाषा के माध्यम से ही कोई व्यक्ति शिक्षित या अशिक्षित के रूप में जाना जाता है। भाषा के अन्तर्गत व्याकरण वह विधा हैं जिसमें शुद्ध बोलना पढ़ना और लिखना सीखने में सहायता मिलती है।

भाषा मानव जीवन में एक महत्वपूर्ण उपकरण है। जिस प्रकार प्रत्येक कार्य की सम्भावना के लिए सामाजिक जीवन की सुविधा और सरलता के लिए मानव व्यवहार को कुछ नियमों में आबद्ध कर दिया जाता है। उसी प्रकार भाषा के भी आवश्यकतानुसार कुछ नियम और सिद्धान्त बना दिये गये हैं। ये नियम व्याकरण के अन्तर्गत आते हैं।

व्याकरण की शाब्दिक व्युत्पत्ति वि+आ+कृ(धातु)+ल्युट (अन्) प्रत्यय के रूप मे हुई है इसका अर्थ है व्याक्रियन्ते (व्युत्याद्यन्ते) शब्देनेति व्याकरणम् अर्थात जिसके द्वारा अर्थ स्वरूप से शब्द सिद्धि हो।

शुद्ध भाषा का प्रयोग एक कला है कोरा किताबी ज्ञान ही पर्याप्त नही, क्योंकी नियम कंठस्थ होने पर अभ्यास न होने से अशुद्ध प्रयोग करते हुए बालक देखे गये हैं। अत: शुद्ध भाषा सिखाने के लिए व्याकरण का सैद्धान्तिक ज्ञान उतना आवश्यक नही जितना व्याकरण के नियमों का व्यावहारिक उपयोग। भाषा कि शुद्धता तथा स्पष्टता के लिए कुछ व्यक्तियों के मतानुसार व्याकरण भाषा शिक्षण का आवश्यक अंग है। अशुद्ध प्रयोग द्वारा व्यक्ति अपनी शैक्षिक मानसिक सामाजिक सांस्कृतिक अक्षमता का परिचय अनायास ही दे देता है। भाषा के स्वरूप को आदर्श मानक बनाये रखने के लिए व्याकरण का शुद्ध प्रयोग आवश्यक है।

प्राय: देखा जाता है, कि केवल छोटी कक्षा के विद्यार्थी ही नही बल्कि बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थी भी भाषा लिखते समय विभिन्न व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियाँ करते हैं। इन अशुद्धियों के कई कारण हो सकते हैं। अगर समय पर इन व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियों के उचित कारण ढूँढकर छोटी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए उचित उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था नवीन शिक्षण पद्धति द्वारा की जाए तो विद्यार्थियों की व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियों पर काफी नियन्त्रण किया जा सकता है। इसके लिए निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।

निदानात्मक – परीक्षण – निदान शब्द का प्रयोग साधारणतया डॉक्टरी विद्या में किया जाता है जब कोई भी मरीज डॉक्टर के पास जाता है तो वह रोग का निदान करने के उपरान्त ही उसका इलाज करता है इसी प्रकार अध्यापक भी यदि किसी विद्यार्थी की कमजोरियों के कारणों का पता लगाने में भूल कर जाये तो उसके शैक्षिक परिणाम भी उतने सफल नही होंगे। उपचारात्मक शिक्षण हेतु पहले निदानात्मक परीक्षण आवश्यक है किन किन छात्रों के समक्ष अधिगम समस्याएँ आती है और किन किन स्थलों पर इनकी कठिनाईयाँ है इनका निदान हो जाने पर उपचारात्मक शिक्षण संभव होता है।

शैक्षिक निदान का अर्थ – शिक्षार्थियों की शिक्षण के सम्बन्ध में व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर कठिनाईयों एवं समस्याओं को ज्ञात करने की प्रक्रिया शैक्षिक निदान कहलाती है। शैक्षिक निदान की प्रक्रिया में शिक्षक शिक्षार्थियों की उपलब्धि में कमियों के कारणों का अध्ययन उनके व्यक्तिगत स्तर पर करता है। उपयुक्त वातावरण उपलब्ध करवा कर शिक्षार्थियों को उनकी स्वाभाविक गति देकर उन्हें शैक्षिक क्षमताओं के विकास के अवसर प्रदान करता है।

शैक्षिक निदान शिक्षार्थियों को मात्र परीक्षा में अच्छे अंक दिलाने के उद्देश्य से नही किया जाता अपितु सुधारवादी दृष्टिकोण होता है। जिसके द्वारा सृजनात्मकता की भावना का उदय करने का प्रयास किया जाता है जिसमें शिक्षार्थी का व्यक्तित्व उच्च श्रेणी का बन सकें। शैक्षिक निदान के द्वारा विभिन्न स्तर पर उत्तम पाठ्यक्रम का निर्माण किया जा सकता है।

शैक्षिक निदान की प्रक्रिया – शिक्षा का मापन तथा मूल्यांकन करना परमावश्यक है। इसके अभाव में शिक्षण प्रक्रिया कदापि प्रभावशाली नही हो सकती। यह ज्ञात करने के लिए शैक्षिक निदान परीक्षण की आवश्यकता होती है जब तक बालकों का तथा शिक्षण प्रक्रिया का

निदान नही कर लिया जाता तब तक एक सफल शिक्षण–अधिगम की कल्पना नही कर सकते हैं अत: शैक्षिक निदान की प्रक्रिया निम्नलिखित चरणों में सम्पन्न की जाती है –

1. उन छात्रों की पहचान करना जिन्हे अधिगम में कठिनाइयॉ आ रही है।
2. अधिगम में निहित कमजोरी (कठिनाई) की पहचान करना।
3. अधिगम की कठिनाई में निहित कारणों को खोजना।
4. कारणों को खोजकर उचित उपचार करना।
5. परिणाम ज्ञात करना।

निदानात्मक परीक्षण की परिभाषाएँ :

रॉस – एक निदानात्मक परीक्षण किसी क्षेत्र में होशियार या कमजोरी का एक विस्तृत आलेख उपलब्ध कराता है यह विस्तृत विश्लेषण सामान्य कमियों

* शोधार्थी, शिक्षा विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
** प्राचार्य, आकाशदीप महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, मानसरोवर, जयपुर (राज.) भारत

के कारणों का सुझाव देता है और उपचारात्मक प्रक्रिया के लिए दिशा प्रदान करता है। वह विधि जिसमें हर व्यक्ति पर अलग –अलग परीक्षण किये जाये और विभिन्न व्यक्तियों की अनुक्रियाओं का अलग– अलग मूल्यांकन करके सामान्य निष्कर्षों तक पहुँचा जाए निदानात्मक परीक्षण कहलाता है।

इस प्रकार कि परीक्षाएँ कमजोर छात्रों के कारणों का पता लगाने के लिए ली जाती है अत: इन परीक्षाओं को लेने से पूर्व यह ज्ञात करना नितान्त आवश्यक है कि कक्षा में कमजोर छात्र कौन–कौन से है इसके लिए पहले योग्यता की परीक्षा लेना आवश्यक है। इसके पश्चात उन छात्रों की कमजोरी के कारणों का पता लगाने के लिए निदानात्मक परीक्षा ली जा सकती है।

शैक्षिक निदान की प्रक्रिया :

निदान के लिए उपयुक्त छात्रों का चयन – शैक्षिक निदान के लिए सर्वप्रथम उन छात्रों की खोज की जाती है जो विद्यालय में समायोजन कर पाने में कठिनाई अनुभव करते हैं । ये वे छात्र है जो किसी एक या अधिक विषय में कमजोर है तथा विद्यालय की कुछ अन्य क्रियाओं में ठीक से समायोजन नही कर पाते हैं। ऐसे बालको का पता लगाने के लिए निम्न विधियों का प्रयोग किया जाता है।

1. बहुत से विद्यार्थियों द्वारा स्वयं कमजोरी के कारणों को जानने के लिये आगे आने की इच्छा की पहचान की जा सकती हैं।
2. जिन छात्रों की उपलब्धि असंतोष जनक है उन्हें उपलब्धि परीक्षण तथा बुद्धि परिक्षाएँ लेकर छाँट लिया जाये।
3. जिन बालकों को निदान की आवश्यकता है उनका चयन अध्यापक वर्ग अपने अनुभव के आधार पर भी कर सकता है।
4. विद्यालय में हुई विभिन्न परीक्षाओं के परीक्षाफलों के आधार पर भी ऐसे छात्रों का चयन किया जा सकता है।
5. ऐसे छात्रों में साक्षात्कार प्रविधी कॉफी सहायक सिद्ध हो सकती है।

उपचारात्मक प्रक्रियाएँ – बालक की कमजोरी का निदान हो चुकने के बाद उन कमजोरियो को दूर करने के उपाय किये जाते हैं। बालक की कमजोरियों एवं त्रुटियों को दूर करने के उपायों का भी विवरण रहता है।

उपचारात्मक शिक्षण – यह निदानात्मक प्रक्रिया का अन्तिम चरण भी है। उपचारात्मक शिक्षण में सभी विद्यार्थियों को सामान्य रूप से शिक्षण कार्य करवाया जाता हैं। समस्याग्रस्त शिक्षार्थियों को निदानात्मक परिक्षण के आधार पर उपचारात्मक शिक्षण दिया जाता है। उपचारात्मक शिक्षण का प्रमुख कार्य उन कमजोर शिक्षण अधिगम प्रभावो को सुधारना है जो उत्तम शिक्षण में बाधक है इस प्रकार के शिक्षण द्वारा पूर्ण सावधानी से पिछडेपन के कारण एवं त्रुटियों को पहचान कर कारणो का निवारण कर त्रुटियों को दूर करना है जिनके कारण शिक्षार्थी अध्ययन क्षेत्र में पिछड रहा है। विद्यालय में ऐसे भी विद्यार्थी होते है जिनकी क्षमता को विकसित करने के लिए तत्काल कुछ आदतों में सुधार करने की आवश्यकता होती है। जैसे वचन में व्यवधान उच्चारण दोष,वर्तनी त्रुटि विषय विशेष में अरूचि या पिछड जाना आदि। इसके लिए पुन: शिक्षण या बार–बार विभिन्न विधियों के प्रयोग द्वारा शिक्षण कर वांछित कौशलों को विकसित करने की आवश्यकता होती है।

उपचारात्मक कार्यक्रम की तैयारी – उपचारात्मक कार्यक्रम सम्पन्न करने के लिए आई.के.डेविस नें चार चरणों में कार्यक्रम का सुझाव दिया है।

प्रथम चरण–कमजोर शिक्षार्थियों का चयन करना – सर्वप्रथम उन कमजोर शिक्षार्थियों का चयन करना होता है जिनके लिए उपचारात्मक शिक्षण किया जाना है। इन विद्यार्थियों के चयन के लिए उपलब्धि परीक्षण, साक्षात्कार, शिक्षण द्वारा अनुभव पर निदानात्मक परीक्षण एवं शिक्षार्थीयों के क्रियाकलापों का अध्धयन करके उचित निर्णय पर पहुँचा जा सकता है।

द्वितीय चरण– निदानात्मक परीक्षण का प्रयोग – इस चरण में निदानात्मक परीक्षण का प्रयोग करके शिक्षार्थियों की कमजोरी के विशिष्ट क्षेत्रों का निर्धारण किया जाता है। साथ ही उस क्षेत्र विशेष में कमजोरी के विभिन्न कारणों को पूर्णत: विश्लेषित किया जाता है ज्ञातव्य है की इन्ही कारणों के आधार पर उपचारात्मक शिक्षण को प्रभावशाली बनाया जा सकता है अर्थात शिक्षक जितने सही कारणों को पहचान सकेगा उतना ही उपचारात्मक शिक्षण का कार्यक्रम तैयार कर सकेगा।

तृतीय चरण :

उपचारात्मक कार्यक्रम का प्रारूप निर्धारण – इस चरण में शिक्षक द्वारा उपचारात्मक कार्यक्रम का प्रारूप निर्धारित किया जाता है। शिक्षक निदानात्मक परीक्षण द्वारा ज्ञात किसी क्षेत्र विशेष की कमजोरी को पहचान कर उसे दूर करने लिए विद्यालय वातावरण,समयावधी तथा उपलब्ध संसाधनो के आधार पर उपचारात्मक कार्यक्रम का निर्माण करता है। उदाहरण के लिए शिक्षक उच्चारण सम्बन्धी दोषों को दूर करने के लिए उचित अभ्यास की व्यवस्था, क्षेत्रीय भाषा के कारण होने वाले दोष पर ध्यान देने का निर्देश देने की व्यवस्था, शिक्षार्थियों द्वारा लापरवाही न करने के उचित निर्देश देने की व्यवस्था को ध्यान में रखकर निश्चित व कम से कम समयावधि का कार्यक्रम निर्धारित कर सकता है।

चतुर्थ चरण– उपचारात्मक शिक्षण का क्रियान्वयन व मूल्यांकन – इस चरण में शिक्षक द्वारा निर्मित उपचारात्मक शिक्षण को क्रियान्वित किया जाता है क्रियान्विति के पश्चात् शिक्षक संपूर्ण कार्यक्रम की सफलता या असफलता को जानने के लिये मूल्यांकन का कार्य भी इसी चरण में करता है। मूल्यांकन हेतु उसे मौखिक या लिखित परीक्षा का उपयोग करना होता है। विद्यार्थियों की कमजोरियों को दूर करने में सफलता प्राप्त होती है। इस कार्यक्रम को उन्हीं परिस्थितियों में फिर से या अन्य जगह पर लागू करने का सुझाव दिया जाता है और यदी असफलता प्राप्त होती है तो कार्यक्रम की कमियों का अवलोकन किया जाता है व शिक्षक द्वारा नये कार्यक्रम का निर्माण किया जाता है।

त्रुटियों की रोकथाम के उपाय – यदी हम चाहते हैं, की छात्र विषय को सीखने में भविष्य में बिल्कुल ही गलती न करे तो हमे उसके विद्यालय तथा घरेलू वातावरण में ऐसे परिर्वतन करने है ताकी उसकी समायोजन की समस्या का स्थायी हल निकल सके। इसके लिए हमें अतिरिक्त बहुमुखी योजना भी तैयार करनी पड़ती है, जिससे बालक को अपेक्षित वातावरण मिल सके जैसे – विद्यालय परिस्थितियों में सुधार, पाठ्क्रम संशोधन परीक्षा पद्धति में सुधार अभियोग्यता परिक्षा का उचित निर्माण व्यवहार परिवेश में सुधार आदि।

निदानात्मक परीक्षण प्रशासित करके यह देखना होता है कि बालक अधिक सुक्ष्म विषय को सीखने के लिए तैयार है अथवा नही ! इस प्रकार व्याकरण शिक्षण मे निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण का अत्यधिक महत्त्व है।

अन्त में अपने अनुभव के आधार पर मैं यह कहना चाहूँगा कि व्याकरण शिक्षण में निदानात्मक परीक्षण कर छात्रों की व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियों का पता लगाकर उच्च प्राथमिक स्तर पर उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाये तो छोटी आयु में ही उनका व्याकरण का ज्ञान मजबूत होगा। और इसका प्रभाव अन्य विषय पर भी सकारात्मक पडेगा। प्राय: देखा जाता है कि विद्यार्थी बी.ए. एवं एम.ए. करने के बाद भी न तो शुद्ध लिख सकते हैं। न

ही शुद्ध बोल सकते हैं। इसका प्रमुख कारण उनकी व्याकरण की नीव का कमजोर होना हैं। जिस प्रकार नींव कमजोर वाली इमारत कभी भी धराशायी हो सकती है उसी प्रकार व्याकरण के ज्ञान के अभाव में भी छात्र जीवन में कई क्षेत्रों में पिछड़ जाता है अत: व्याकरण शिक्षण मे समय पर ही शैक्षिक निदान कर उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। ताकि व्याकरण शिक्षण में शैक्षिक निदान एवं उपचारात्मक शिक्षण की उपादेयता बनी रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रसाद कामता गुरू हिन्दी व्याकरण पापुलर बुक डिपो,जयपुर संस्करण नवीन
2. बाबू श्याम सुन्दरदास,भाषा-विज्ञान दृश्य प्रकरण
3. मेक्स, मूलर, भाषा विज्ञान, दूसरा -प्रकाशन,
4. गौड ,राधेश्याम शर्मा, हिन्दी शिक्षण, अरहिन्त प्रकाशन
5. पांडेय रामशकल ,हिन्दी शिक्षण ,आगरा पब्लिकेशन
6. शर्मा शिवचरण स्वामी विष्णु, शैक्षिक प्रौधौगिकी एवं शिक्षण विधियॉ।
7. बेल, जे.ई. निदान प्रक्रिया (प्रोजेक्ट टेक्निक) गीन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क
8. शर्मा,शिवचरण स्वामी विष्णु शैक्षिक प्रौधौगिकी एवं शिक्षण विधियॉ
9. आर एल थार्नडाइक,उपचारात्मक तकनीक, जो वैली एण्ड सन्स-न्यूयार्क

****

नवम् राजस्थान विधानसभा में सामाजीकरण की प्रक्रिया का विश्लेषण

गोपाल सिंह*

प्रस्तावना – सामान्य शब्दों में राजनीतिक संस्कृति एक निरंतर व अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में समाहित होने की संक्रिया राजनीतिक समाजीकरण है।

समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति समूह या समाज व्यवस्था के मूल्यों को स्वीकार करता है इस रूप में सामाजीकरण एक व्यापक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यवस्था के मूल्यों को जनता द्वारा स्वीकार कराया जाता है तथा जनता के मूल्यों को जनता द्वारा स्वीकार कराया जाता है तथा जनता के मूल्यों से जोडा जाता है इससे दोनो के बीच निकटता तथा सामान्य इच्छा का समावेश किया जाता है।

लोगो के राजनीति संबंधी विचार आस्थाएं और प्रतिबद्धताएं राजनीतिक कहलाती है और यह इसे घनिष्ठ रूप से जुडे होते हैं राजनीतिक संस्कृति का संबंध मनुष्य की संपूर्ण राजनीतिक आस्थाओं व धारणाओं से होता है और इसी पर यह निर्भर करता है कि लोगो की राजनीति में कितनी सहभागिता और कैसी भूमिका रहेगी? हर राजनीतिक व्यवस्था को अपना एक विशेष 'रंग' अपनी अलग पहचान व उसके व्यवहार का एक विशिष्ट प्रति–मान राजनीतिक संस्कृति से ही मिलता है। राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक संस्कृति ही विचित्रता व विशेषपन लगती है और उनके कार्य करने की शैली का निर्धारण करती है। राजनीतिक स्वीकृति हर राजनीतिक व्यवस्था में अलग–अलग प्रकार की होती है क्योंकि इसके अभिकरण और नियामक हर देश में एक से नहीं होते। इसका विकास भी अलग–अलग होता है। अत: हर राजनीतिक समाज की राजनीतिक संस्कृति विशिष्ट ही होती है राजनीतिक संस्कृति को विशिष्ट बनाने वाले अनेक तत्व और कारण होते हैं इनमे सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण राजनीतिक समाजीकरण ही माना जाता है। जो राजनीतिक संस्कृति के निर्माण में ही महत्वपूर्ण नहीं होता है यह इसे एक पीढी से दूसरी पीढी में पहुंचने का कार्य भी करता है।

हर राजनीतिक समाज में राजनीतिक समाजीकरण ही इस बात का नियामक होता है कि लोग राजनीति के बारे में कैसे विचार बनायेंगे और राजनीतिक व्यवस्था में कैसी भूमिका निभायेंगे इस तरह, राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक संस्कृति और राजनीतिक व्यवस्था दोनो ही की प्रकृति को आधारभूत नियामक बन जाता है यही इन दोनो को विशिष्ट और दूसरी व्यवस्थाओं व राजनीतिक संस्कृतियों से अलग तरह का बनाता है।

सामान्यतया राजनीतिक समाजीकरण को एक प्रक्रिया के रूप में ही परिभाषित किया जाता है। राजनीति के बारे में लोगो की अभिवृत्तियों विचारों और आस्थाओं के बनने की प्रक्रिया को ही राजनैतिक समाजीकरण कहते हैं हर राजनीतिक व्यवस्था के बारे में उस माज के लोगो के विचार होते हैं। संपूर्ण राजनैतिक व्यवस्था के बारे में उस समाज के लोगो के विचार होते हैं। संपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था, उसकी विभिन्न संस्थागत संरचनाओं, उसके नेताओं व उसको संचालित करने वाले अभिजनों के बारे में लोगो का अपना रूख व रवैया होता है। यह लोगो का राजनीति संबंध रूख और इस रूख के बनने की प्रक्रिया ही राजनीतिक समाजीकरण कही जाती है। यह लोगों की राजनीति के बारे में ऐसी वृत्ति है जिससे उनमें राष्ट्र और राजनीतिक व्यवस्था के बारे में विचार बनकर उनके इनमें भूमिका का नियमन होता है।

ग्रेबियल आमण्ड और पावले– 'राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियों का अनुरक्षण व उनमें परिवर्तन किया जाता है इस कार्य के माध्यम से व्यक्तियों को राजनीतिक संस्कृति में सम्मिलित किया जाता है तथा राजनीतिक वस्तुओं के प्रति उनके अभिमुखीकरण का निर्माण किया जाता है।' [1]

रॉबर्ट लेवाइन– 'राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति की राजनीतिक व्यवस्था में सहभागिता के लिए मूल्यों आदर्शो और प्रेरणा का साधन है।' [2]

पीटर एच. मर्कल– 'राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक व्यवस्था के द्वारा व्यवहार प्रतिमान और राजनीतिक अभिवृत्तियां प्राप्त करना है।'[3]

राबर्ट सीडगेल– 'राजनीतिक समाजीकरण का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों का प्रषिक्षण व विकास करना है जिससे वे राजनीतिक समाज के सुकार्यकारी सदस्य बन सके' [4]

माइकल रशव फिलिप अलताफ 'समाजीकरण व राजनीतिक व्यवस्थाओं के बीच राजनैतिक समाजीकरण एक अत्यंत महत्वपूर्ण कडी है लेकिन अलग–अलग व्यवस्थाओं के अनुसार इसमें परिवर्तन आ सकता है। राजनीतिक दृष्टिकोण में एक प्रक्रिया के रूप में राजनीतिक समाजीकरण अत्यंत महत्वपूर्ण है जिसे व्यापक राजनीतिक व्यवस्था राजनीतिक सहभागिता में लोग लिप्त हो सकते हैं।' [5]

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया किसी न किसी रूप में आजीवन चलती रहती है। यह प्रक्रिया राजनीतिक स्थिरता में योगदान देती है और दबावों को आसान करके परिवर्तनों को संभव बनाती है।

डॉ. सुरेन्द्र गुप्ता ने सिटिजन इन दी मैकिंग में विभिन्न आयु वर्गो में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया का विस्तृत विश्लेषण किया है। [6]

संकल्पना के रूप में राजनीतिक समाजीकरण अभी बहुत नई धारणा ही है मनोवैज्ञानिक ने ही इसे संकल्पना के रूप में विकसित किया और इसको सुनिश्चित अर्थ प्रदान किया है। संकल्पना के रूप में राजनीतिक समाजीकरण को राजनीतिकरण की प्रक्रिया के रूप में नहीं लिया जाता है यहां इसे राजनीति संबंधी मूल्यों मान्यताओं और आस्थाओं से जोडा जाता

* व्याख्याता, राजनीति विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, शिवगंज, सिरोही (राज.) भारत

है। एलेन बाल राजनीतिक व्यवस्था के संबंध में कुछ धारणाओं का होना और उनका विकास तथा व्यवस्था से संबंधित विश्वास ही राजनीतिक समाजीकरण है।[7]

राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति के राजनीतिक संबंधी मूल्यों, विष्वासों, अभिवृत्तियों व विचारों का समुचय है इनसे व्यक्ति की राजनीतिक व्यवस्था में भूमिका का निर्धारण और नियमन होता है राष्ट्र और व्यवस्था के प्रति निष्ठा और विशिष्ट मूल्यों को पनपाने में इसका यह अर्थ सहायक रहता है इसी में व्यवस्था के लिए समर्थन या दुराव उत्पन्न होते हैं समूहों तथा व्यक्तियों से किस अंश तक राजनीतिक जीवन में भाग लेने की आशा की जा सकती है। समाजीकरण का ही एक विशिष्ट रूप है जब व्यक्ति के सीखने की प्रक्रिया का संदर्भ समाजीकरण का नाम दिया जाता है और जब इसका संदर्भ राजनीतिक व्यवस्था से जोड दिया जाता है तब इसे राजनीतिक समाजीकरण कहा जाता है। एक ने व्यक्ति समाज के प्रति उन्मुखी रहता है और दूसरे में समाज की एक उप व्यवस्था राजनीतिक व्यवस्था की ओर उन्मुखी होता है।

डेविड इस्टन जिसे राजनीतिकरण कहते हैं इसमें व्यक्ति राजनीतिक भूमि का अदा करना सीखता है और भूमिका अदा करना सीखने की प्रक्रिया में उचित राजनीतिक अभिवृत्तियों को आत्मसात कर लेता है। राजनीतिकरण में मूल्यों व आस्थाओं के उचितपन की बात नहीं आती राजनीतिक समाजीकरण की व्याख्या से इसकी प्रकृति का संकेत मिलता है।

राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति – राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति का राजनीतिकरण, उसकी राजनीतिक सहभागिता और राजनीतिक भर्ती से कहीं अधिक व्यापक संकल्पना है। इसमे व्यक्ति की राजनीतिक अभिवृत्तियों, राजनीति संबंधी उसके विष्वासों व मान्यताओं का निर्माण और

राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति का राजनीतिकरण, उसकी राजनीतिक सहभागिता और राजनीतिक भर्ती से कही अधिक व्यापक संकल्पना है इसमें व्यक्ति की राजनीतिक अभिवृत्तियों, राजनीति संबंधी उसके विश्वासों व मान्यताओं का निर्माण और इनके आधार पर उसका राजनीतिक अभिमुखीकरण सम्मिलित रहता है। यह वह प्रक्रिया है जिससे यह मूल्य मान्यताएं, आस्थाएं और विचार न केवल बनते हैं परंतु एक पीढी से दूसरी पीढी को हस्तांतरित होते हैं इस कारण ही राजनीतिक समाजीकरण राष्ट्र के प्रति निष्ठा तथा विशिष्ट मूल्यों को पनपाने में सहायता देता है यह राजनीतिक व्यवस्था के लिए समर्थन जुटाता है या उससे दुराव में वृद्धि कर सकता है।

समूहों तथा व्यक्तियों से किस अंश तक राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण प्रभाव पडता है। राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने समाज में राजनीतिक जीवन के प्रति अनुकूल दृष्टिकोण बनाता है जिसके माध्यम से समाज अपने राजनीतिक मानकों और आदर्शो, मान्यताओं और विश्वासों को एक पीढी से दूसरी पीढी तक पहुंचाता है। इसी प्रक्रिया से व्यक्ति अपने समाज, राष्ट्र या राज्य के प्रतिनिष्ठा और सत्ता के प्रति लगाय का भाव विकसित करता है।

आमन्ड और कोलमैन के अनुसार राजनीतिक समाजीकरण के दो रूप होते हैं यह प्रकरण और अप्रकट दोनो प्रकार का हो सकता है। जब राजनीतिक व्यवस्था संबंधी जानकारी, अभिमुखीकरण और मूल्यों का स्पष्ट रूप से जानबूझकर सम्प्रेषण या संचरण होता है तो यह राजनीतिक समाजीकरण का प्रकट रूप होता है जब समाजीय राजनीति के संदर्भ में राजनीतिक संबंधों के बारे में मनोवृत्तियां बनती जाती है तो यह प्रकट राजनीतिक समाजीकरण है इसमें स्वयं राजनीतिक सत्ता के धारक व व्यवस्था ही जानबूझकर खुले में ऐसा करती है परंतु यहां स्वत: ही अन्य सामाजिक संरचनाओं जैसे परिवार व स्कूल आदि से बनती और एक पीढी से दूसरी पीढी तक पहुंचती रहती है तो यह राजनीतिक समाजीकरण का गुप्त रूप होता है। राजनीतिक अभिमुखीकरणों, प्रतिमानों और सत्ता संबंधों के प्रति अभिवृत्तियों का जब स्वत: ही निर्माण होता है तो यह अप्रकट रूप से हुआ राजनीतिक समाजीकरण कहा जाता है इसमें समाजातीय राजनीतिक का संदर्भ नहीं रहता है अर्थात् राज्यतंत्र या राजनीतिक सत्ता धारक ऐसे समाजीकरण, समाजीकरण की प्रक्रिया के साथ-साथ चलता है जबकि इसके फलस्वरूप में यह राजनीतिकरण के साथ संचालित होता है। राजनीतिक समाजीकरण के प्रकट के रूप में छल योजन, जोड-तोड द्वारा लोगों को राजनीतिक व्यवस्था के संबंध में ऐसी या वैसी मान्यताएं मूल्य और विचार पनपाये जाते हैं राजनीतिक व्यवस्थाओं का इच्छित दिषाओं में विकास करने या उनमें विशेष प्रकार के मूल्यों का आरोपण करने के लिए ऐसा किया जा सकता है। संपूर्ण समाज व्यवस्था का पुन: निर्माण करने के लिए सरकारें ऐसे राजनीतिक समाजीकरण का सहारा लेती है। यह राजनीतिक मूल्यों की स्थापना को प्रभावित करने के सरकार द्वारा जानबूझकर किये जाने वाले प्रयासों से संबंधित होता है। ऐसा राजनीतिक समाजीकरण साम्यवादी देशों या तानाशाही व्यवस्थाओं में ही होता हो ऐसी बात नहीं है लोकतंत्र में भी इसका सहारा लिया जाता है। राजनीतिक व्यवस्थाओं संबंधी विचारों, मूल्यों व मान्यताओं का ऐसा छल योजना है जिसमें व्यक्ति को बार-बार ऐसे विचार व मूल्य अपनाने के लिए प्रेरणा दी जाती है।

राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण – हरबर्ट एच हाइमैन[8] ने सर्वप्रथम राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरणों की भूमिका का विवेचना के विभिन्न प्रमुख अभिकरण बतायें हैं-

1. परिवार
2. शिक्षण संस्थाएं
3. स्वैच्छिक समूह
4. जन संपर्क माध्यम
5. सरकार
6. साहित्य
7. राजनीतिक दल व हित समूह

राजनीतिक समाजीकरण एक जटिल प्रक्रिया है जिसका विकास विभिन्न चरणो में होता है-

1. सत्ता का आभास राजनीतिक समाजीकरण का प्रथम चरण है।
2. सत्ता के संबंध निश्चित रूप से जानकारी।
3. सत्ता के विविध रूपों में भेद करने की क्षमता।
4. चयनात्मक क्षमता।
5. राजनीतिक गतिविधियों के विश्लेषण की क्षमता व राजनीतिक भर्ती व स्वरूप का निर्धारण तदनुरूप
6. राजनीति प्रक्रिया में आवेदन व भागेदारी।

राजनीतिक समाजीकरण और राजनीतिक व्यवस्था – आमण्ड यह मानता है कि मांगों व समर्थनों के आकार-प्रकार की निर्णायक राजनीतिक संस्कृति होती है लोगों की राजनीतिक अभिवृत्तियों से इनका संबंध होता है। यहां आमण्ड निवेशों की आधार भूमिका तैयार करने में राजनीतिक संस्कृति की भूमिका विशेषकर राजनीतिक समाजीकरण को महत्वपूर्ण मानता है

उसका अभिमत है कि राजनीतिक व्यवस्था में उठने वाली मांगें किस प्रकार की होती तथा समर्थनों में जनता की सक्रियता की मात्रा कितनी होगी इसका नियामक राजनीतिक सामाजीकरण ही होता है।

राजनीतिकरण समाजीकरण स्वयं में राजनीतिक व्यवस्था का निवेश नहीं है यह तो निवेशों की प्रकृति उनकी तीव्रता और मात्रा का नियामक है राजनीतिक समाज में व्यक्तियों का जितना समाजीकरण घट या बढ जायेगी तथा उसी के अनुसार मांगों की प्रकृति में परिवर्तन आ जाएगा। उदाहरण किसी राजनीतिक समाज में बेहूदा मांगे बहुसंख्या में पेश होती है तथा दूसरे समाज में ऐसा नहीं होता है तो इसको समझने के लिए राजनीतिक समाजीकरण के आधार पर ही समझा जा सकता है। यह प्रक्रिया राष्ट्र और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति निष्ठा और विशिष्ट मूल्यों को अपनोन या पनपने में सहायता देती है और इससे राजनीतिक व्यवस्था के लिए समर्थन या उससे दुराव बढ या घट सकता है समूहों और राजनीतिक समाज के व्यक्तियों से किसी अंश तक राजनीतिक जीवन में भाग लेने की आषा की जाती है। राजनीतिक समाजीकरण जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है इसलिए यह राजनीतिक सक्रियता की बराबर नियामक बनी रहती है और इस तरह इसका राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति उसकी क्रियात्मकता और विकास में महत्वपूर्ण स्थान बना रहता है।

राजनीतिक समाजीकरण ही व्यक्ति 'राजनीतिक प्राणी' बनाता है इस प्रक्रिया से व्यक्ति के मानस में राजनीतिक के ज्ञानात्मक नक्शें बनते हैं। राजनीति के संबंध में बने इस विचारों के आधार पर व्यक्ति राजनीतिक घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है और राजनीतिक समाजीकरण, व्यक्ति और व्यक्तियों के समूहों की राजनीतिक मनोवृत्तियों तथा मूल्यों का निर्धारण करता है और इसी से व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था में निवेशक की भूमिका निभाने के लिए तैयार होता है।

राजनीतिक समाजीकरण, राजनीतिक संस्कृति के निर्माण, उसके एक पीढी से दूसरी पीढी तक हस्तान्तरण उसके विकास तथा उसकी सजीवता में महत्वपूर्ण कारक होता है 'राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति को राजनीतिक संस्कृति में दीक्षित करना है।' जो राजनीतिक संस्कृति को अपनी विशेष पहचान उपलब्ध करता है और राजनीतिक संस्कृति के निर्माण के अभिकरणों में तालमेल बनाये रखने का माध्यम होता है। राजनीतिक समाजीकरण से ही राजनीतिक संस्कृति को तत्व और अत: वस्तु प्राप्त होती है इससे ही राजनीतिक संस्कृति, राजनीतिक व्यवस्था की क्रियात्मकता में निर्णायक स्थान बना पाती है अत: राजनीतिक संस्कृति और राजनीतिक समाजीकरण में घनिष्ठता और पारस्परिकता ही बनी रहती है।

राजनीतिक समाजीकरण, राजनीतिक व्यवस्था, राजनीतिक संस्कृति, राजनीतिक विकास व आधुनीकरण के लिए आधार वस्तु राजनीतिक मानव का निर्माण करने में सहायता करता है यह व्यवस्थाओं के नव निर्माण से लेकर राजनीति की सार्थकता तक में सहायक है। यह एक विशेष धारा है जिससे राजनीतिक अनुप्राणित रहती है यह व्यक्ति का राजनीतिकरण, उसकी भर्ती वह सहभागिता का प्रवेश द्वार है यह व्यक्ति को राजनीति से जोडने वाली प्रक्रिया है यह व्यक्ति की राजनीति के प्रति उदासीनता को समापत कर उको राजनीति रंग में रंगने का काम करती है। राजनीतिक समाजीकरण व्यवस्था के आधार सम्य व्यक्ति को सही एंग से राजनीति में दीक्षित कर उसको बराबर राजनीति के सही रास्ते पर अग्रसर करना है।

भारत में राजनीतिक संस्कृति व सामाजीकरण का स्वरूप? – भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का निकट का अध्ययन यह प्रमाणित करता है कि यहां की व्यवस्थाओं से भिन्न अपना विशिष्ट स्वरूप लिए हुए हैं इसमें भारतीय परम्पराओं, ऐतिहासिक अनुभवों व राष्ट्र की आवश्यकताओं की झलक देखी जा सकती है। मॉरिस जोन्स ने पश्चिमी अध्येताओं को सचेत किया है कि वह ऐसे में किसी भ्रम का शिकार न हो। [9]

नए राष्ट्र का पद पाने वाली पुरानी सभ्यताओं के विकास या परिवर्तन की प्रक्रिया बडी व्यापक दूरगामी और विषझम है, जिन नये विचारों, सिद्धांतों और नई संस्थाओं को नए राष्ट्र के विधान द्वारा स्थापित किया गया है उनके फलितार्थ को स्पष्ट रूप से समझना और स्वीकार करना होगा।

भारत में इतिहास के लंबे क्रम में ऐसे सामाजिक धार्मिक आंदोलन हुए हैं जिसे यहां विशिष्ट भारतीय परंपरा का निर्माण हुआ है। राजनीतिक स्थिरता की कुंजी सामाजिक व्यवस्था थी। अब यह सामाजिक व्यवस्था विखण्डित हो रही है और बदल रही है। भारत जैसे नवस्वतंत्र राष्ट्र में राजनैतिक विकास का अर्थ यह होता है कि प्राचीन देश अपनी पुरानी परंपरा व विविधता को बनाए रखते हुए आधुनिक युग की सबसे अच्छी बातों को ग्रहण करने की कोषिष करता है। इस प्रकार भारत ने लोकतंत्र कके आदर्श को ग्रहण किया है।

यदि राष्ट्रीय आंदोलन इतना लंबा न चला होता और जनता में इसके बडे इतनी गहरी न हुई होती तो स्वतंत्रता के समय नई और पुरानी परम्परा में यह सामंजस्य न हो पाता। किसी भी देश में लोकतंत्र कितना सफल होता है कि उसकी परम्परा क्या रही है उसकी समाज व्यवस्था और आदर्शो व विचारों में नई बातों को ग्रहण करने की कितनी शक्ति है उस पर बाहर के क्या प्रभाव पडे हैं और इतिहास की किन परिस्थितियों में उसने नए प्रभावों को ग्रहण किया है।

भारत के वर्तमान राजनीतिक स्वरूप की संरचना के तीन सहायक तत्व है [10] ये हैं–

1. हिन्दू समाज, जो भारतीय जीवन की आधारशिला व उसकी एकता का सूत्र है।
2. अंग्रेजी राज्य जिसकी कानून व शासन व्यवस्था सारे देश को एक केन्द्रीय सत्ता के अधीन ले आई। यहीं नहीं इसने हमारी राजनीतिक विचारधारा और पद्धति पर भी गहरा प्रभाव डाला है।
3. स्वतंत्रता से पहले का सारा रचनात्मक राष्ट्रवाद यह राष्ट्रवाद विदेशी शासन के प्रभाव और द्वारा सम्प्रेषित नए युग की चुनौतियों से उत्पन्न हुआ। इस राष्ट्रवाद का उद्देश्य लोकतंत्रीय व्यवस्था के अंतर्गत देश की राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति और समाज का सुधार था।

आर्यो या हिन्दुओं के प्रभुत्व की लंबी अवधि में ज्यादा महत्व की बात हिन्दू समाज व्यवस्था का विकास है न कि देश के विभिन्न भागों में राजवंशों का उत्थान व पतन इस प्रक्रिया में भारत एक राष्ट्र भले ही न बन सका हो किन्तु उसने एक समाज और सभ्यता का निर्माण अवश्य किया। इस गहरी एकता व आत्म बोध के अस्तिमता के बिना अंग्रेज शासकों व राष्ट्रीय नेताओं के लिए देश की राजनैतिक एकता की स्थापना आसान न होती। दूसरी ओर एकता की इस भावना के बावजूद और इसके विशिष्ट स्वरूप के कारण पूरे हिन्दू युग के दौरान समाज व राजनीति का पार्थम्य बना रहा। साम्राज्यों का उत्थान व पतन होता रहा, लेकिन भारतीय समाज का अधिकांश भाग उसके रास्ते पर चलता रहा।

एक केन्द्रीय सत्ता की स्थापना का काम मुस्लिम शासनकाल में हुआ। मुस्लिम प्रभुत्व से हिन्दू सामाजिक व्यवस्था को धक्का भी लगा परंतु भारत में एक केन्द्रीय सत्ता व राष्ट्रीय एकता की जडें मजबूत हुई।

राजनैतिक संस्कार व सामाजीकरण – रजनी कोठारी ने कहा है कि 'भारत शायद एक मात्र देश है जिसने बिना किसी विशिष्ठ राजनीतिक व्यवस्था का सहारा लिए अपनी सांस्कृतिक परंपरा को कायम रखा है भारत की आत्म राजनैतिक नहीं सांस्कृतिक रही है। वे कौन से ऐतिहासिक तत्व है जिनके कारण लगातार राजनैतिक उथल पुथल के बावजूद भारत की संस्कृति अविच्छिन रही।'

भारत में व्यापक निष्ठा राजनैतिक नहीं सांस्कृतिक थी इस कारण ही नई राजनैतिक व्यवस्था को जड जमाने में आसानी हुई।[11]

भारतीय राजनीति की प्रकृति से सम्बद्ध विकास का यह रेखाचित्र एक ऐसी बिखरी हुई सामाजिक संरचना का चित्र है जो राजनीतिक स्वरूपों, मूल्यों व विचारधाराओं के माध्यम से समाज का राजनीतिकरण हो रहा है। राजनीतिक तटस्थ समाज की पृष्ठ भूमि में एक सशक्त राजनीतिक केन्द्र समाज के विभिन्न वर्गो को राजनीति में सक्रिय बनाने का कार्य कर रहा है। 1977, 1980, 1985 व 1990 के आम चुनावों में भारतीय मतदाता के विवेक को स्पष्ट करके परंपरागत खाई को पाटने की प्रक्रिया भी प्रारंभ की जो विभक्त ग्राामीण समाज व राज व्यवस्था में रहती आई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गेब्रियल आमण्ड एण्ड सी.बी. पावैल, कम्पेरेटिव पोलिटिक्स, ततैव, पृष्ठ 89.
2. राबर्ट लैकहन का लेख पढिए–क्लीफर्ड ग्रीवज (सं.) ऑल्ड साइटीज एन्ड न्यू स्टेट्स, नई दिल्ली, अमेरिन्ड, पृष्ठ 200
3. पीटर एच. मर्कल, मॉडर्न कम्परेटिव पॉलिटिक्स, न्यूयॉर्क होल्ट, राइन हार्ट एण्ड विन्स्टम 1970, पृष्ठ 91
4. कार्बर्ट सीगल, अजम्पशन्स, अबाउट टि लर्निम आवै पॉलिटिक्ल कैल्यूज, पॉलिटिक्ल साइन्स एण्ड सेशल साइन्सेज, फिलोडेलाफिया, एण्ड 361, सितम्बर 1965, पृष्ठ 2
5. देखिए– एन इन्ट्रोडक्शन टू पॉलिटिक्ल सोशिओलालजी, लंदन मेलसन, 1971, पृष्ठ 13–14
6. आषा कौशिक ने उन्हे अपने लेख 'राजनीतिक व्यवस्था तथा राजनीतिक सामाजीकरण की समस्या' राज्यशास्त्र समीक्षा, जनवरी 1977) में उर्द्धत किया है।
7. ए.आर.बाल. मॉडर्म पॉलिटिकल एण्ड गवर्नमेन्ट, लंदन, मेकमिलन, 1971 पृष्ठ 68
8. हरबर्ट एच. हाइमैन, पॉलिटिकल सोशिओलजी, नई दिल्ली, अमेरिन्ड, 1969
9. मॉकिस जोन्स, एच. पार्लियामेन्ट इन इण्डिया, फिलाडेल्फया, यूनिवर्सिटी ऑफ पैनसिलवेनिया प्रेस, 1957 तथा देखिए दि गवर्नमेन्ट एण्ड पॉलिटिक्स इन इंडिया, लंदन, हचिनसन यूनिवर्सिटी लाईब्रेरी, 1967।
10. माइरन वीनर, पार्टी पॉलिटिक्स इन इण्डिया, प्रिन्स्टन, प्रिन्स्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1957 तथा देखिए माइरन वीनर, दि पॉलिटिक्स ऑव स्केर्सिटी, शिकागो, यूनिवर्सिटी आवै शिकागो प्रेस, 1962।
11. रजनी कोठारी, पॉलिटिक्स इन इण्डिया, तत्रैव।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728) 596
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Human Resource Management In Indian Defence Services

Saurabh Dubey*

Abstract - Administrations Satisfaction depicts how content an individual is with his or her activity. The more joyful individuals are inside their activity, the more fulfilled they are said to be. Employment fulfillment isn't equivalent to inspiration, in spite of the fact that it is unmistakably connected. Administrations configuration means to improve work fulfillment and execution; strategies incorporate occupation revolution, work expansion and employment advancement. Different effects on fulfillment incorporate the administration style and culture, worker association, strengthening and self-ruling work gatherings For better Human Resource Management in Indian armed forces. Employment fulfillment is a vital quality which is much of the time measured by associations. Components that are definitive, all things considered, in guaranteeing high Job fulfillment and consequently better.
Key Words - Administration , Human Resource Management, Armed Forces.

Introduction - Staff the executives systems of the past incorporated into abundance of 1100 procedures that were essentially squat pencil, work concentrated activities that were intended to include faculty experts at each dimension, just as the hierarchy of leadership at each dimension until the predetermined activity achieved the suitable endorsement specialist. In addition to the fact that it took a phenomenal time span to get choices, the endorsed strategies superfluously requested time from various people. The procedures were not productive and frequently not compelling. Under PT, all these business forms have been, or are in effect, altogether audited so as to dispense with those that are redundant, streamline others to remove superfluous contacts, and to apply web innovation where conceivable. So far, the outcome has been a substantially more responsive HR framework that is quicker (customarily prompt/continuous), and increasingly precise in light of the fact that there are less advances and people dealing with the activity. Frequently, troopers and officers are engaged to interface with the highest point of the framework without direct inclusion with work force pros. It is where we understand that the equalization originates from a great deal of sharing ofcommon errand, of sharing duties and of sharing seeing the greater part of all.The time requests actualizing inflexible adaptability. A few difficulties and issues as being looked by the HR Managers in the Defense Forces today are:(a) Large Workforce Dealing with a workforce running into a couple of millions isn't simple from any standards.(b) Changed Expectations Employees request strengthening and anticipate balance with the mangement. Past ideas about administrative expert are offering approach to representative impact and inclusion alongside instruments for upward correspondence and fair treatment. There is have to redraw the profile of the specialist and find new techniques for preparing, enlisting, compensating and propelling employees.(c) Balancing Work-life Balancing work and life accept importance when both a couple are utilized. Travails of a working housewife are in excess of a working spouse, in this manner adjusting it is turning into a noteworthy test for HRM. (d) Managing Diversity This issue has been of fundamental significance since the very commencement of the Armed powers. The Services utilize people from various social, instructive and financial foundations, talking distinctive dialects, following diverse societies and customs, celebrating diverse celebrations and brandishing distinctive convictions. Dealing with this sort of decent variety is one of the greatest test in Human Resource Management in the Defense Services of India.(e) Communication Concentrating on setting up powerful correspondence all through the association and to guarantee that formally dressed men have what it takes and roads to share data and organize exercises successfully.

An individual person is overseen independent from anyone else. Be that as it may, bunches comprising of beyond what one individual can achieve a reason, in the event that they are composed and remotely oversaw and that is the manner by which the board assumes its job. An association is basically structured keeping in view execution, rivalry and expenses. The executives begins with separating work among people and their gatherings, by isolating work exercises so complete work should be possible to accomplish the motivation behind an association. Be that as it may, the division requires

*Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

coordination of exercises. An association must be adaptable to oblige inner changes inside it coming about into qualities and shortcomings and outside changes coming about into dangers and openings which are all unique in nature. This coordination is set up by weaving specialist structure, correspondence, data, frameworks, methodology and assets stream.

Arranging of assets is an essential piece of sorting out. The assets are human and specialized. Thought the human part commands in an association, They can't perform without specialized assets, and sorting out includes making condition individuals to encourage execution. Social relationship inside an organized association bring forth casual association. Since no valuable work should be possible without a system of relationship, The formal association is casually stretched out to associations which are not inside its administration and today we oversee what can be called as an all-inclusive organization, acquuistions, technical cooperation and so on. Since human exercises are firmly tied up with association based exercises, there is requirement for a more extended life span of an association so it can offer a similar life span to individual subject to it. Subsequently, an association works for commencement, development and solidness and in this way, must be a live wonders.

Conclusion - The main role of the MHRM framework is to fulfill substantial resistance administrations necessities and, seeing that practicable, oblige the authentic needs of its individuals. The framework is a mind boggling, dynamic, multifaceted mosaic of cooperating subsystems, which interface in an assortment of routes with all other significant guard administrations frameworks. Protection administrations Transformation will be a noteworthy arrangement of occasions for the future, and the Defense administrations HR framework by means of Personnel Transformation will bolster that change. It must stay aware of the rate of progress happening in the barrier benefits so fighters are appropriately bolstered, and authorities have opportune, important data on which to base operational choices. The procedures intended to structure, gain, train, instruct, circulate, continue, expertly create, and separate troopers must be consistently assessed and refined to guarantee they bolster present and future protection administrations necessities. The subsystems inside these procedures must have the adaptability to address the issues of the guard administrations. Regardless of whether the resistance administrations is lessening or growing, there are a couple of basic working standards to direct leaders as they pick between troublesome, testing alternatives in either situation: keep up power availability at the recommended dimensions; keep up quality in enrolling, maintenance, and advancement programs; make changes in a decent and methodical path all through all evaluations and fortes, both officer and enrolled; keep up current board choice capacities to keep on expanding on the best; depend on RC; secure prosperity; and, at long last, so as to decrease vulnerability, guarantee there is a justifiable, exhaustive arrangement.

References :-

1. www.tc.gc.ca
2. http://www.shrm.org
3. http://www.chforum.org
4. K. Aswathappa, human resource & personal management (3rd edition) TMH (2002), 39-50.
5. Principals and practices of management SCDL,pune

****

Estimation of Breeding Value of the Sires in White Leghorn Strain 'B' Flock

Bhagat Singh*

Introduction - Poultry production is one of the best available sources for the production of high biological value animal protein in terms of egg and meat.Commercial hybrids,both broilers and layers are being propagated for meat and egg production throughout the world.Many economically important traits cannot be determined by usual appraisal alone. Using EBVs is the proven method of accurately predicting if bird will pass on important traits.such as body weight at 20 weeks of age(g),body weight at 34 weeks of age (g),age at first egg (days),egg weight(g)at 40 week of age,egg production(no.) upto 250days of age,egg mass(kg) upto 250 days of age, and rate of lay(%).

Materials and Methods - The data used in the present study was generated on 'B' strain of white leghorn maintained at the poultry farm CVAS,RAU,Bikaner.

Breeding values of each sire was estimated using two procedures viz, sire indexes (SI) and best linear unbiased prediction (BLUP) procedure.

1. Calculations of Sire indices - The formaula given by Johansson and Rendel (1969) was used to calculate single trait sire indices from the information of their progenyperformance.

Here, the expected breeding values of the sire for the trait is

$$EBV = \frac{2n}{n+\sigma^2_e/\sigma^2_s}(X_0 - X_p)$$

Where,

n = number of progenies of that sire

σ^2_e = residual variance component

σ^2_s = sire variance component

X_o = Mean of the progenies of that sire

X_p = Mean of progenies hatched in the same year

2. Best Linear Unbiased Prediction (BLUP) - Best Linear Unbiased Prediction (BLUP) procedure developed byHenderson (1973) was used to estimate breeding values of sires.

The model for BLUP included generation as fixed effect and sires within generation as a random effect. The model was as follows.

$$Y_{ijk} = \mu + G_i + S_{ij} + e_{ijk}$$

Where

Y_{ijk} = observation on k[th]progeny of j[th] sire belonging to i[th] generation

μ = overall population mean

G_i = fixed effect of i[th] generation

S_{ij} = random effect of j[th] sire within i[th] generation

e_{ijk} = random error associated with k[th] progeny of j[th]sire within i[th] generation

In matrix notations the Henderson model can be written as

Y=Xb + Zu + e

Where,

Y is a vector of observations on progeny of sires in u

b is a vector of fixed generation effects in the model

u is a vector of random sire effects

e is a vector of residual effects

X and Z are known design matrices relating observations (Y) asfixed generation effect and random sire effects, respectively

$Var(u) = 1\sigma^2_s$

$Var(e) = 1\sigma^2_e$

$Var(y) = ZGZ' + R$

The solution to b and u were obtained from mixed model equations given below

$$\begin{bmatrix} X'X & X'Z \\ Z'X & Z'Z+k \end{bmatrix}\begin{bmatrix} b \\ u \end{bmatrix} = \begin{bmatrix} X'Y \\ Z'Y \end{bmatrix}$$

Where k = ratio of residual to sire variance components.

The sire and residual variance components obtained by Henderson method-3 previously were used for BLUP.

The estimates of breeding value of the sires were calculated by followingformula:

Estimated breeding value

$EBV = 2(G_i + S_{ij})$

Where G_i = Solution for i[th] generation effect

S_{ij} = Solution for j[th] sire effect within i[th] generation

Results and Discussions - The ranking of estimated breeding values of 26 sires in generation - I and 28 sires in generation II for all the seven traits in present study viz., body weight at 20 and 34 weeks of age, age at first egg, egg production upto 250 days of age, egg weight at 40 weeks of age, egg mass and rate of lay by two different methods. SI and BLUP were obtained in present study.

Table-1 (see below)

In the present study the range of estimated breeding

*Lecturer, Animal Husbandry and Dairy Science, S.C.R.S. Govt College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

values was smaller for SI as compared to EBVS obtained by BLUP for all the traits. Contrarily. Nayee (1999) reported smaller range of estimated breeding value, obtained by BLUP as compared to SI for all traits in both strains. The highest (T) and lowest (L) ranking sires for different traits along with their estimated breeding value are tabulated in Table 1 for both generations. From the Table 1 it was observed that the ranking of sires was same/similar for the highest (T) and the lowest (L) ranked sires except for age at first egg in generation II and rate of lay in both generations for BLUP and SI. An overview of this Table 1 revealed that the ranking for best (T) and least (L) sires for various traits, is the same by both SI and BLUP methods in generation I, except rate of lay. This may be due to the fact that this trait has been derived by dividing egg number with laying period. These results (Generation 1) are in accordance with Nayee (1999), who also reported same ranking and EBV by both the methods. Veering the values in the table it is observed that there is no general pattern, in other words it was not necessary that the values of EBV were higher for all trait by any one of the two methods. The values for 34 weeks bodyweight. age at first egg and egg weight were lower by SI method than BLUP. Contrarily. 20 week body weight EBV values were higher by SI method. Whereas, for egg production, egg mass and rate of lay the values varied between the two methods, either for highest (T) or for least (L) ranking sires. Repugnant to these Nayee (1999) reported EBV to be higher by SI than BLUP for all traits.

In generation II also the ranking for best (T) and least (L.) sires for all traits studied is the same, as in generation -I. by both SI and BLUP methods, except age at first egg and RL for top ranked sires, Surprisingly, the EBV for top ranked sires was low by SI method than BLUP, for all traits.

It may thus be concluded from the above results that selection by BLUP as compared to sire index might give more information of genetic worth of individual, thus bringing more/faster genetic improvement.

References:-

1. Henderson, C.R. 1973. Sire evaluation and genetic trends. Proceeding of the Animal Breeding and Genetics Symposium in Honor of Dr. J.L. Lush. American Society of Animal Science, Champaign, Illinois, USA. pp. 10-41.
2. Johansson, I. and Rendel, J. 1969. Genetics and animal breeding. W.H. FreemanCo., San Francisco, California, U.S.A.
3. Nayee, N. 1999. Genetic evaluation of two strains of egg type chicken. M.V.Sc.Thesis. CCS, HAU, Hisar.

Table-1 : The top ranking(T) and lowest ranking(L) sires along with estimated breeding value (EBV) from sire index(SI) and best linear unbiased prediction (BLUP) procedure.

Trait	Rank	Sire No.	EBV(SI)	SIRE No.	EBV(BLUP)
			GENERATION I		
BW 20(g)	T	502	282.456	502	271.728
	L	523	-277.859	523	-293.827
BW34(g)	T	503	312.481	503	327.645
	L	501	-246.635	501	-239.878
AFE(days)	T	502	-15.46	502	-18.511
	L	518	10.697	518	13.378
EP(egg no.)	T	502	7.306	502	11.198
	L	518	-9.391	518	-13.497
EW(g)	T	526	4.086	526	4.733
	L	509	-3.079	509	-3.067
EM(kg)	T	513	0.355	513	0.569
	L	518	-0.573	518	-0.772
RL(%)	T	503	0.816	505	8.395
	L	518	-0.771	518	-6.729
			GENERATION II		
BW20(g)	T	608	322.76	608	375.896
	L	627	-274.514	627	-281.077
BW34(g)	T	608	316.474	608	318.897
	L	625	-281.376	625	-317.322
AFE(days)	T	605	-8.946	612	-11.349
	L	622	7.635	622	9.321
EP(egg no.)	T	612	6.538	612	7.835
	L	619	-5.562	619	-8.429
EW(g)	T	627	2.475	627	2.658
	L	625	-3.231	625	-5.110
EM(kg)	T	614	0.393	614	0.428
	L	625	-0.280	625	-5.505
RL(%)	T	627	1.813	609	4.551
	L	608	-2.184	608	-8.279

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Analysis of the Third Question Paper of Education Subject of UGC-NET on the Basis of Certain Selected Criteria

Sandesh Acharya*

Abstract - The study aimed at an analysis of UGC-NET third question paper of Education subject on the basis of content coverage and type of question. Last five years' NET question papers (2012 to 2017) and prescribed syllabi of Education subject for third question paper were collected from the UGC website. Every question was screened on the basis of content/area/unit of prescribed syllabus and types of question also. Proformas were developed for Question Paper Analysis. These were used to find out the percentage weightage and average number of items on the basis of content coverage and types of question. Average numbers of items with percentage weightage were calculated on the basis of content coverage and level of cognitive objective it covered. The data were analyzed by weightage and Mean. The results of study were: (1) The Types & Process of Researches is extremely focused area in the III question paper with 9.3% coverage. 'Growth & Development' and 'Curriculum Development' have lowest weightage of 4.4%. Each remaining eight areas weightages range from 5.1% to 8.5%. Areas related to Philosophy and Sociology has weightage of 7.1% & 7.7% respectively. Unit III to Unit VI are related to Psychological aspects of Education. After merging these units, the total weightage of this area becomes 24%. Methodologies of Educational Research have total weightage of 14.7%. 'Comparative Education' has only 6.4% weightage.(2) Educational Measurement & Evaluation' is the highest focused area with approximate 9% weightage and 'Educational Administration' area is the last in that sequence with only 5.3% weightage. The remaining other three elective areas' weightages range from 5.7% to 8% in the third question paper. (3) The weightage of Core Group Content is 64.5% and weightage of Elective / Optional part is 35.5% in the third question paper of subject Education. (2) The Knowledge level question weightage was 56.3% while weightage for Understanding level questions was 35.2%. Only 8.5% weightage has been given to Application level question in third question paper of subject education of UGC-NET.
Key Words - Question Paper, Measurement & Evaluation & UGC-NET.

Introduction - Evaluation is a part of life. Even in small things, like which dress to wear for work, what gift to buy or when to cross the road, evaluation has to be made. In education, evaluation is all the more important because only through evaluation can teacher judge the growth and development of students, the changes taking place in their behaviour, the progress they are making in the class and also the effectiveness of his/her own teaching in the class.

According to Tyler (1950) Evaluation is the process of determining to what extent the educational objectives are actually being realized. Scriven (1991) define Evaluation is the process of determining merit, worth, or significance; an evaluation is a product of that process

The University Grants Commission (UGC) was conducting a test for determining the eligibility for the award of Junior Research Fellowships (JRF) since 1984 in order to ensure greater comparability as well as higher degree of validity and reliability in the field of research. In order to maintain a uniform standard of teaching and research in the country, the Government of India, as per its New Education Policy (1986) envisaged that "only those candidates who, besides fulfilling the minimum academic qualifications prescribed for the post of lecturer, have qualified in a comprehensive test to be specifically conducted for the purpose will be eligible for appointment as Lecturers".

There are three papers in UGC-NET. All these are objective in nature. Paper I & II have 50 questions with 50 & 100 marks respectively. Paper III has 75 questions of 150 marks. Time duration for Paper I & II is 75 minutes and for Paper III, 150 minutes. Paper I is common for the candidates of all subjects. Paper II & III are related to Post Graduation Subjects of the Candidates. There is no provision of negative marking in the test. UGC-NET has been conducted twice every year in the months of June/ July and December/January (of the subsequent year).

Rationale of the Study - Malhotra, Bedi & Tulsi (1990) found that the question papers did not fully cover the prescribed content and did not seem to be appropriate in terms of instruction, equal weightage, language of questions, etc. Mukherjee (1991) concluded that the difference between the boys group and the total group and

*Assitant Professor, Arihant College, Indore (M.P.) INDIA

for that matter, for each of the other groups with the total group were not significant at any level of confidence. Omirin (2006) found that the contribution of blind guessing to test was not directly related to the discrimination and difficulty indices. Torke, Asha & Ramnarayan (2006) concluded that the multiple true-false items are not boosting student's performance in written examinations. Chandrasekhar (2007) found that the question paper in English did not contain any unseen reading comprehension. The question paper is largely knowledge based. Only the map questions in History and Geography test the skill. Bandyopadhyay (2003) found that the role of Research Fellowships and demand of JRF/SRF. Patil (2005) focused a need of CSR/ UGC NET Examination. Mungekar (2009) recommended that NET should be retained as compulsory requirement for appointment of lecturer for both under graduate and post graduate level, irrespective of candidate possessing M.Phil. or Ph.D. degree. Inderpal, Saini and Luthra (2011) explore the demographic variations in basic science education across the country on the basis of the CSIR-UGC National Eligibility Test (NET). A brief resume of the studies conducted so far reveals that there has been no research on analysis of the third question paper of Education subject of UGC-NET. Thus, the area deserves research efforts.

Objectives - The objectives of study were.

1. To evaluate the third question paper of education subject of UGC-NET for last five years on the basis of content coverage.
2. To evaluate the third question paper of education subject UGC-NET for last five years on the basis of type of questions.

Methodology - The two criteria were fixed by the researcher for analysis of the UGC-NET question papers. The first criterion was content coverage and the second one was the level of questions. Mainly three levels were defined for it namely-Knowledge Level, Understanding Level and Application level. Analysis and Evaluation level questions merged in understanding level. Similarly, synthesis level questions merge into application level. Last five years' UGC-NET question papers and prescribed syllabi of question paper II were collected from the UGC website. Every question was screened on the basis of content/area/unit of prescribed syllabus and types of question also. Proformas were developed for Question Paper Analysis. It was used to find out the weightage (%) and average number of items on the basis of content coverage and types of question. Average numbers of items with percentage weightage were calculated on the basis of level of questions. The details of selected question papers analyzed are: June-2012, December-2012, June-2013, December-2013, June-2014, December-2014, June-2015, December-2015, June-2016 & January-2017. The data were analyzed by Percentage weightage and Mean.

Results and Interpretation - The first objective of the study was to evaluate the third question paper of education subject of UGC-NET for last 5 years on the basis of content coverage. The analysis of the question paper has been done by the researcher with the help of developed question paper analysis proforma.

Area and Weightage wise Summary of UGC-NET Question Paper-III

The syllabus of third question paper of Education subject is divided into two parts. The first part (Part A) possesses Core Group Content while the second part (Part B) is Elective/Optional. Average number of items with percentage weightage in each area in both parts were analysed by the researcher. The results are presented below.

Area and Weightage wise Summary of NET Question Paper-III: Education Part (A)-Core Group Content

Area and Weightage wise Summary of NET Question Paper-III: Education, Part (A) Core Group Content is given in following table.

Table: 1-Area and Weightage wise Summary of NET Question Paper-III:Education, Part (A)-Core Group Content

Area / Content / Unit	Average Number of Items	Percentage Weightage
Unit-I: Philosophy of Education	5.8	7.7%
Unit-II: Sociology of Education	5.3	7.1%
Unit-III: Growth & Development	3.3	4.4%
Unit-IV: Intelligence, Learning & Motivation	6.4	8.5%
Unit-V: Personality, Mental Health & Adjustment	3.8	5.1%
Unit-VI: Guidance & Counselling	4.5	6%
Unit-VII: Sample, Hypothesis &Tools	4.1	5.5%
Unit-VIII: Types & Process of Researches	7	9.3%
Unit-IX: Comparative Education	4.8	6.4%
Unit-X: Curriculum Development	3.3	4.4%
Total	48.3	64.4%

It is evident from the table 1 that the area 'Types & Process of Researches' enjoys maximum focus. It carries 9.3% weightage in all. 'Growth & Development' and 'Curriculum Development' area have lowest percentage weightage respectively with weightage of 4.4% only. Remaining eight area's weightages range from 5.1% to 8.5%. Areas related to Philosophy and Sociology has weightages of 7.1% & 7.7% respectively. Unit III to Unit VI are related to Psychological aspects of Education. After merging these units, the total weightage of this area becomes 24%. Similarly, Unit VII and VIII are related to 'Methodology of Educational Research'. After merging these units the total weightage of this area is 14.7%. The area 'Comparative Education' has only 6.4% weightage in the

third question paper of education subject of UGC-NET.

Area and Weightage wise Summary of NET question Paper-III: Education Part (B)-Elective/Optional

The average number of items with weightage of percentage for NET Question Paper-III: Education, Part (B) is given in following table.

Table: 2-Area and Weightage wise Summary of NET Question Paper Paper-III: Education Part (B)-Elective / Optional

Area / Content / Unit	Average Number of Items	Percentage Weightage
Elective-I: Educational Administration	3.9	5.3%
Elective-II: Educational Measurement & Evaluation	6.7	8.9%
Elective-III: Educational Technology	6	8%
Elective-IV: Special Education	4.4	5.8%
Elective-V: Teacher Education	5.7	7.6%
Total	26.7	35.6%

It is evident from table 2 that'Educational Measurement & Evaluation' area is the most favoured with nearly 9% weightage and 'Educational Administration' area is last in the sequence with only 5.3% weightage. The remaining other three elective areas' weightages range between 5.7% to 8%.

Area and Percentage Weightage wise Summary of NET Question Paper-III: Education Part (A)-Core Group Content & Part (B)-Elective / Optional

The average number of items with weightages in percentage for NET Question Paper-III: Education Part (A) and Part (B) are given in following table.

Table: 3- Area and Weightage wise Summary of UGC-NET Question Paper-III: Education, Part (A)-Core Group Content & Part (B)-Elective / Optional

Paper III Classification	Total Number of Items	Percentage Weightage
Paper-III: EducationPart (A)-Core Group Content	48.3	64.4%
Paper-III: EducationPart (B)-Elective / Optional	26.7	35.6%
Grand total	75	100%

It is clear from table 3 that the weightage of Core Group Content is 64.4% and weightage of Elective/Optional part is 35.6%. The Core Group Content is divided into total ten units but Elective/Optional part divided into only five area/ units.

Level of Question and Weightage wise Summary of UGC-NET Question Paper-III - The second objective of the study was to evaluate the third question paper of education subject UGC-NET for last 5 years on the basis of type of questions. The analysis of question paper has been done by the researcher with the help of developed question paper analysis proforma. Level of Question and Weightage wise Summary of UGC-NET Question Paper-III was given in fallowing table.

Table: 4 (See in next page)

It is clear from table 4 that Knowledge level question weightage was 56.3% while weightage for Understanding level questions was 35.2%. Only 8.5% weightage has been given to Application level question.

Findings and Discussions - The findings of study were: (1) It was found that in that in question paper III (Part-A), Unit III to Unit VI are related to Psychological aspects of Education. After merging these units, the total weightage of this area becomes 24%. Similarly Unit VII & VIII are related to Educational Research aspect of Education the total weightage of this aspect is 14.8%. It may be became the UGC-NET examination plays a most important role in the admission procedure of for M.Phil./Ph.D. These both aspects are also prescribed in the syllabus as a compulsory paper of M.Ed. in all Universities. Psychological aspect is also important content at B.Ed. level. At master level course, candidates learn about Research aspect in theory as well as practical level in form of their dissertation work. 'Curriculum Development' and 'Comparative Education' have lowest weightage of 4.4% and 6.4% respectively. This may be because both areas are not prescribed as compulsory papers of M.Ed. Candidates opt these papers as a specialization. (2)The 'Educational Measurement & Evaluation' is the highest focused area in NET question paper III (Part-B) with approximate about 9% weightage, the reason behind this finding may be the knowledge of Educational Measurement & Evaluation is deemed necessary for researchers or lecturers. Through good measuring instruments, researcher can obtain accurate results. This area focuses on the tool development method and interpretation of test scores which are necessary equipments for researchers and teachers. 'Educational Administration' area is the lowest with only 5.3% weightage. The reason behind for this finding is the same, which researcher has already discussed in previous paragraph. 'Educational Administration' is a special paper of M.Ed. The candidates have option to choose other paper as well. (3) The Knowledge level question weightage was 56.3% while weightage for Understanding level questions was 35.2%. Only 8.5% weightage has been given to Application level question in third question paper of subject education of UGC-NET. Application level question weightages are quite low in the paper. The reason for this finding may be that the writing question related to Application level is difficult as compared to the other two levels. Application level questions are mostly related to the Practical & skill work which is not possible to assess in multiple choice type items easily.

References :-

1. Bandyopadhyay, M.: Quality Control of Doctoral Research: Role of Research Fellowships, University News 41 (29), JULY 21-27, 2003.
2. Buch, M.B. (ed.): Fifth Survey of Research in Education, National Council of Educational Research and Training, New Delhi, 1988-92.

3. Chandrasekhar, K.: A Critical Analysis of Class X English and Social Science Question Papers Indian Educational Review Volume 43, Number 2, pp 36-47, July 2007.
4. Criven, M.: Evaluation Thesaurus (IVthEd.), Sage Publication, Newbury Park, 1991.
5. Inderpal, Saini, A.K., & Luthra, R.: Demographic variations in basic science education in India: A Case Study of CSIR–UGC National Eligibility Test, Current Science, Vol. 101, No. 5, 10 September 2011.
6. Mungekar, B.: Report of the Review Committee on National Eligibility Test of University Grants Commission, MHRD, Department of Higher Education, Government of India, New Delhi, 2007.
7. Patil, R. : The need for NET Exams, Current Science, Vol. 89, No. 7, 10 October 2005.
8. Omirin, M.S.: Difficulty and Discriminating Indices of Three-Multiple Choice Tests using the Confidence Scoring Procedure, Educational Research and Review, Vol. 1(2) pp. 014-017 January, 2007.
9. Torke, S., Asha, K. and Ramnarayan, K.: Impact of Multiple True–False Questions on Student Performance in Written Examinations, Indian Educational Review Vol.42, No.2,pp.71-80, 2006.
10. Tyler, R. W.: Basic Principles of Curriculum and Instruction, University of Chicago Press, Chicago, 1950.
11. Tyler, R.W.: Educational Evaluation, Kluwer Academic Publishers, Boston, 1989.
12. http://www.ugc.ac.in

Table: 4-Level of Questions wise, Weightage Distribution in UGC-NET Paper-III : Education

Level of Question						Total Application	
Knowledge		Understanding		Application			
Average Number of Items	Percentage Weightage	Average Number of Items	Percentage Weightage	Average Number of Items	Percentage Weightage	Number of Items	Percentage Weightage
42.2	56.3	26.4	35.2	6.4	8.5	75	100

****

Comparison Between Two Methods (SI And BLUP) of Sire Evaluation In 'B' Strain Of White Leghron

Bhagat Singh*

Introduction - There is urgent need to increase the production in order to meet the demand of animal protein (egg and meat) for the exploding population. This could be achieved by applying various modern methodologies in selection and breeding of poultry. The purpose of this study was to compare, two methods (SI and BLUP) of sire evaluation in 'B' strain of white leghorn.

Materials and Methods - The data collected from two generations (1998-1999) in the month of march-april hatched in four hatches every year on white leghorn strain 'B' Flock maintained at the poultry farm CVAS, RAU, Bikaner.

Calculation of standard error, coefficient of skewness and kurtosis for the EBVs by two methods.

The standard error of the EBVs of a trait were calculated for both methods using following formula

$$SE = \frac{\sqrt{\sigma^2 x}}{\sqrt{n}}$$

$\sigma^2 x$: variance of EBV for the trait by one method
n = number of sires

Pearson's coefficient of skewness was calculated using the following formula

$$\text{Coefficient of skewness} = \frac{\text{Mean} - \text{Mode}}{\text{Standard deviation}}$$

The coefficient of kurtosis was calculated by the formula given below

$$\beta_2 = \frac{\mu_4}{(\sigma^2 x)^2}$$

Where β_2 = measure of kurtosis
μ_4 = 4th moment coefficient for EBV of the trait
$\sigma^2 x$ = variance of EBVs for the trait

$$\mu_4 = \frac{\sum (X - \bar{X})^4}{N}$$

X = EBV of ith sire for the trait
$\bar{X}$ = mean EBV
N = number of observations

Product moment and rank correlation between EBVs of same traits obtained by two methods were calculated as per standard formula given earlier.

Result and Discussion - Table 2 depicts the relationship between the two methods of product moment and rank correlations. From the values of the table it is quite evident that BV for both methods (SI and BLUP) are highly correlated and hence the ranking of sires for all the traits. Almost all the correlations can be said as almost perfect correlation because body weights in generation I are unity and the rest nearly approaching unity. This indicates that the ranking of sires, for all traits, by both the methods are same and the same was visible in Table 1.

When the rankings are similar. exactly the same sires will be selected for the traits concerned. This will yield the same genetic progress. In such a situation the choice of estimating BV depends upon the facility of computational methods available or whichever is easily computed.

The accuracy of any estimate depends upon their respective standard errors. coefficient of skewness and kurtosis. Whenever the coefficient of kurtosis and skewness are nearer to 3 and 0, respectively, it is an indication of normal distribution

The standard errors, coefficient of kurtosis and skewness are presented in Table 3. The results of the table reveals that the standard errors of estimate of breeding value by SI is comparatively lower than BLUP for all traits in both the generations, indicating SI to be better than BLUP.

Table-1 (see in last page)

Trait wise, the estimated breeding value of body weights at 20 and 34 weeks in generation I are almost similar in skewness, while in generation II the estimated breeding value is better by BLUP than SI method. Here the value of 20 weeks by BLUP indicates perfect normal distribution. The coefficient of kurtosis for both body weights in generation I, were nearly the same by both the methods. Whereas, in generation II, BLUP method estimates were better over SI method. The coefficient of skewness for age at first egg was better by BLUP than SI in both generations, whereas, the kurtosis indicated reverse condition i.e. better by SI generation 1 and II.

Table 2 (see in last page)

***Lecturer, Animal Husbandry and Dairy Science, S.C.R.S. Govt College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA**

The skewness for estimated breeding value of egg production revealed conflicting results between generations. SI was superior over BLUP in generation I and vice versa in generation II. The kurtosis for this trait indicated superiority of BLUP over SI in both generations. For egg weight, skewness was almost similar by both methods in generation I, but in generation II SI was found to be superior over BLUP. The results of kurtosis for egg weight were nearly similar by both methods in generation 1, but BLUP was found to be better than SI method in generation II. Since egg mass is a derived trait of egg production, its estimated breeding value was same as egg production, both in skewness and kurtosis, except kurtosis in generation II. where SI was superior to BLUP. Similarly, rate of lay which is also a derived trait, BLUP is found to be better over SI both in terms of skewness and kurtosis in generation I. In generation II skewness of BLUP is better than SI, but kurtosis is almost same.

Veering the results of Table 3 it can be visualized that SI is superior to BLUP for estimating BV if the standard errors for all the traits are concerned. However, if we consider both coefficient of skewness and kurtosis, for majority of the traits BLUP method is superior over the conventional SI method for EBV. Among the three parameters viz. S.E., coefficient of skewness and kurtosis are concerned, statistically SE is the most important because the lesser the SE for any estimate. it indicates better reliability of the estimate. As far as coefficient of skewness and kurtosis are concerned, they are the properties of normal distribution, which are always assumed for any valid analysis of data in the model itself that the data is normally and independently distributed.

Table 3 (see in last page)

However, to account for inbreeding effect BLUP model can also accommodate additive genetic relationship among the sires. With the development of multi trait mixed models and individual animal models etc. the BLUP can provide more easy and accurate way to estimate breeding values.

Reference :-

1. Personal Research.

Table-1 The top ranking(T) and lowest ranking(L) sires along with estimated breeding value (EBV) from sire index(SI) and best linear unbiased prediction (BLUP) procedure.

Trait	Rank	Sire No.	EBV(SI)	SIRE No.	EBV(BLUP)
			GENERATION I		
BW 20(g)	T	502	282.456	502	271.728
	L	523	-277.859	523	-293.827
BW34(g)	T	503	312.481	503	327.645
	L	501	-246.635	501	-239.878
AFE(days)	T	502	-15.46	502	-18.511
	L	518	10.697	518	13.378
EP(egg no.)	T	502	7.306	502	11.198
	L	518	-9.391	518	-13.497
EW(g)	T	526	4.086	526	4.733
	L	509	-3.079	509	-3.067
EM(kg)	T	513	0.355	513	0.569
	L	518	-0.573	518	-0.772
RL(%)	T	503	0.816	505	8.395
	L	518	-0.771	518	-6.729
			GENERATION II		
BW20(g)	T	608	322.76	608	375.896
	L	627	-274.514	627	-281.077
BW34(g)	T	608	316.474	608	318.897
	L	625	-281.376	625	-317.322
AFE(days)	T	605	-8.946	612	-11.349
	L	622	7.635	622	9.321
EP(egg no.)	T	612	6.538	612	7.835
	L	619	-5.562	619	-8.429
EW(g)	T	627	2.475	627	2.658
	L	625	-3.231	625	-5.110
EM(kg)	T	614	0.393	614	0.428
	L	625	-0.280	625	-5.505
RL(%)	T	627	1.813	609	4.551
	L	608	-2.184	608	-8.279

Table 2: Correlation among the estimates of breeding value of same trait obtained by two different methods in both generations.

TRAITS	PRODUCT MOMENT CORRELATION		SPEARMAN'S RANK CORRELATIONS	
	GENERATION I	GENERATION II	GENERATION I	GENERATION II
BW20	0.9999	0.9996	1.0000	0.9994
BW34	0.9999	0.9998	1.0000	0.9994
AFE	0.9990	0.9988	0.9993	0.9950
EP	0.9971	0.9984	0.9979	0.9972
EW	0.9996	0.9970	0.9986	0.9994
EM	0.9973	0.9971	0.9986	0.9970
RL	0.9795	0.9956	0.9788	0.9896

Table 3 : Standard error (SE), coefficient of skewness and coefficient of kurtosis estimates of breeding value obtained by BLUP and SI for both generations.

BLUP					SI	
	GENERATION I					
	SE	Coeff. Of Skewness	Coeff. Of Kurtosis	SE	Coeff. Of Skewness	Coeff. Of Kurtosis
BW20	32.95	-0.207	-0.868	27.041	0.000	1.141
BW34	28.78	0.672	-0.144	24.82	0.299	1.024
AFE	1.44	-0.345	0.115	1.121	-0.423	-1.024
EP	1.071	-0.518	0.662	0.769	0.594	-0.059
EW	0.381	0.209	-0.108	0.271	-0.541	0.572
EM	0.064	-0.62	0.308	0.044	0.528	0.303
RL	0.722	-0.033	-0.298	0.522	-0.231	1.286
	GENERATION II					
BW20	32.549	-0.204	-0.862	24.249	0.038	1.120
BW34	28.212	0.671	-0.134	23.558	0.335	0.970
AFE	1.189	-0.443	0.345	0.958	-0.448	-0.938
EP	0.735	-0.243	0.209	0.602	0.678	-0.090
EW	0.347	0.214	-0.101	0.258	-0.324	-0.060
EM	0.045	-0.445	-0.151	0.032	0.714	0.317
RL	0.084	0.428	-0.728	0.162	0.857	1.297

****

साहित्य मीमांसा के तत्त्व

डॉ. रचना बिमल*

प्रस्तावना – 'साहित्य' मनुष्य की रागात्मक अनुभूतियों की लिखित अभिव्यक्ति का माध्यम है। मनुष्य अपने आस-पास जो घटित होता है उसका देश, काल, परिस्थिति के अनुरूप समाज पर क्या प्रभाव इंगित हो सकता है? जैसे प्रश्नों के उत्तार जब सहृदयों तक पहुँचाना चाहता है तो उसके भीतर साहित्याभिव्यक्ति की जमीन तैयार होती है। अपनी रूचि के अनुसार साहित्यकार कविता, कहानी, उपन्यास, निबन्ध आदि में से किसी एक विधा का चयन करता है। विधा चाहे कोई भी हो, उसकी उपयोगिता तब सार्थक होती है जब वह पाठक के मर्म को छू जाती है। यह साहित्यकार के सामर्थ्य पर निर्भर करता है कि वह कम शब्दों में पाठक को छूने में समर्थ होता है या लम्बी दास्तान के द्वारा और 'छूना' यानि संवेदना को जाग्रत करना ही साहित्य का उद्देश्य होता है। सृष्टि में कुछ भी स्थायी नहीं होता जो आज सृजित हुआ वह कल पुराना हो जाएगा। साहित्य भी पुराना हो जाता है पर फिर से उसमें कुछ नया भी जुड़ जाता है, उसका कारण है साहित्यकार एवं समाज के दृष्टिकोण में परिवर्तन।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'साहित्य को देश की जनता की चित्तावृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब' कहा था। जनता की चित्तावृत्ति अपने प्रदेश की राजनीतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक परिस्थितियों से निर्मित होती है या बदलती है। साहित्यकार जनता की चित्तावृत्तियों को समझ, कभी उसमें कल्पना की छौंक लगाकर तो कभी यथारूप चित्रण कर अपने समय को सौन्दर्यमयी बनाकर लिपिबद्ध करता है जो भविष्य में साहित्यिक सांस्कृतिक निर्माण और परिवर्तनों का भी कारक बनता है। डॉ. अशोक वाजपेयी का कथन है कि– 'साहित्य अपनी विशिष्ट संस्कृति भी विकसित करता है। यह साहित्यिक संस्कृति साहित्य में सक्रिय शक्तियों और दृष्टियों के बीच संवाद का शील निरूपण करती है, सीमाएं निर्धारित करती हैं, खेल के नियम बनाती हैं ताकि कुछ सीमाओं का अतिक्रमण न हो सके।'[1] साहित्यिक संस्कृति के खेल के नियम अतीत, वर्तमान, भविष्य, परम्परा आदि के विश्लेषण से उपजते हैं। इस प्रक्रिया में शुक्ल जी के अनुसार-'शब्दों द्वारा अन्त:करण के गुप्त रहस्य प्रकट किए जाते हैं, चित्त वेदना को शांति दी जाती है, दया उत्पन्न की जाती है और बुद्धि चिरस्थायी बनायी जाती है, यदि बड़े ग्रंथकारों द्वारा बहुत से मनुष्य मिलकर एक बनाये जाते हैं, जातीय लक्षण स्थापित होता है, भूत और भविष्य तथा पूर्व और पश्चिम एक-दूसरे के सम्मुख उपस्थिति किये जाते हैं और यदि लोग मनुष्य जाति में अवतार स्वरूप माने जाते हैं– तो साहित्य की अवहेलना करना और उसके अध्ययन से मुँह मोड़ना कितनी बड़ी कृतघ्नता है।'[2] आचार्य शुक्ल यहाँ वेदना को शांत करने, मानव को उदात्त बाने की जिस साहित्यिक प्रक्रिया की ओर संकेत कर रहे हैं दरअसल वही साहित्यिक मीमांसा के तत्त्व है जिन्हें हम 'मूल्य' कहते हैं। मूल्य ही किसी रचना को काल पर विजय दिलाकर कालजित् बनाते हैं। पूर्व अर्थात् भारत और पश्चिम यानि यूरोप के सामाजिक चिंतन की भिन्नता ही दोनों संस्कृतियों के साहित्य में 'कुछ मूल्य परक भिन्नता' भी प्रदान करती है जिसकी ओर शुल्क जी संकेत कर रहे हैं। इस भिन्नता को समझने के लिए दोनों पक्षों की मूल्यपरक अवधारणा को समझना जरूरी है क्योंकि मूल्यपरक अवधारणा ही संस्कृति निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

भारतीय संस्कृति मानव मूल्यों, मान्यताओं, परम्पराओं के उन आदर्शात्मक गुणों का समुच्चय है जो प्रकृति से निसृत होते हैं। 'मूल्य' ही किसी कृति को अर्थवत्ता प्रदान करते हैं। चाहे वह मनुष्य हो या वस्तु। मूल्य शब्द का निर्माण संस्कृत की मूल धातु में यत् प्रत्यय लगाने से बना है जिसका अर्थ-लागत, मजदूरी, मोल, वेतन या पूंजी से लिया जाता है किन्तु मानवीय संदर्भों में मूल्य का अर्थ उन उच्च आकांक्षाओं, आदर्शों, धारणाओं, मान्यताओं से गृहित किया जाता है जो मुनष्य को पशु योनि से विलग कर उसे 'मानव' होने का दर्जा प्रदान करती है। इनके माध्यम से मनुष्य जहाँ अपने जीवन को गौरवशाली बनाता है वहीं मूल्य ही किसी संस्कृति को उन्नत बनाते हैं। इसी कारण मूल्य शब्द आज 'अर्थशास्त्र की सीमा से निकलकर दर्शन, मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र के क्षेत्र में प्रवेश कर गया है।'[3] मूल्यों की उत्पत्ति न तो व्यक्ति करता है ना ही ईश्वर बल्कि देश, काल, परिस्थिति त्रय के अनुभवों से गुजरते हुए कोई 'समाज' इन्हें सृजित और स्वीकृत करता है। सुप्रसिद्ध साहित्यकार और चिंतक अज्ञेय इस पर टिप्पणी करते हैं कि 'जिस समाज में कोई ऐसे मूल्य नहीं है जिनके लिए जिया जाता है और जिनके लिए मरा भी जा सकता है वह समाज अपने मन के साथ बलात्कार की स्थिति स्वीकार चुका है। समाज को पुलिस, सरकार या संसद नहीं बचाती, समाज को अपनी शक्ति बचाती है जो उन मूल्यों से मिलती है जिनके लिए वह जीता है।'[4] अत: मानव मूल्यों को ही किसी समाज और संस्कृति की अर्थवत्ता निरूपित करने का श्रेय दिया जा सकता है और इनका विकास मानव सभ्यता के विकास के साथ जुड़ा हुआ होता है।

मनुष्य ने जब से आत्मसाक्षात्कार के द्वारा उचित, अनुचित पर विचार कर अपने जीवन को सभ्य और सुसंस्कृत बनाने का विचार किया तभी से मूल्य उसके जीवन का अंग बन गए। इसी गुणसूत्र धर्मिता ने 'मानवता' को जन्म दिया जो देश, काल, धर्म, समाज आदि के विभेदों के ऊपर उठकर सार्वभौमिक होता है। यही मानवता 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के भाव की जननी है जो समस्त चराचर जगत की मंगलकामना से जुड़ा हुआ है। जहाँ आत्म से सर्वात्म तक की यात्रा सर्वजन हिताय का पाथेय लेकर पूर्ण की जाती है। जीवन मूल्यों की इस महत्ता पर हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवियित्री महादेवी वर्मा कहती हैं कि– 'वास्तव में थोड़े से सिद्धान्त में जो मनुष्य को मनुष्य बनाता

* स. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय (दिल्ली) भारत

है, हम उन्हीं को जीवन-मूल्य कहते हैं।'[5] आगे चलकर मानवीय मूल्य ही मानव को गरिमा प्रदान करते हैं। मूल्यों को धारण करने वाला व्यक्ति ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अधिकारी बन पाता है, क्योंकि मूल्य एक ऐसी अघोषित आचार संहिता है, जिसका अनुपालन करने वाला समाज ही सभ्य, शिष्ट और सुसंस्कृत समाज कहलाता है। मूल्य चिंतकों ने मूल्यों के अनेक आयामों, प्रकारों, दशाओं आदि का विवेचन करते हुए उनका वर्गीकरण किया है, जिनमें प्रमुख है- शाश्वत मूल्य और परिवर्तनशील मूल्य, व्यैक्तिक मूल्य और सामाजिक मूल्य, भौतिक मूल्य और आध्यात्मिक मूल्य, नैतिक मूल्य और सौंदर्यात्मक मूल्य इत्यादि।

शाश्वत मूल्यों को ही कालजयी मूल्य कहा जाता है। इन मूल्यों पर किसी भी स्थिति में परिवर्तन स्वीकार नहीं होगा। दया, ममता, करूणा, परोपकार, सात्विक प्रेम जैसे मूल्य शाश्वत मूल्यों की श्रेणी में आते हैं, जिन पर समय घर्षण प्रभाव नहीं डाल पाता। इन मूल्यों की आदर्शात्मक आभा को धारण करने पर ही सामान्य मानव भी महापुरुषों की श्रेणी में आ सकता है। भारतीय दर्शन में जीवात्मा इन्हीं मूल्यों को अंगीकृत कर परमात्मा का अंग बन मोक्ष की प्राप्ति करती है। वैदिक काल के आख्यानों श्रीराम एवं श्रीकृष्ण जी के जीवन चरितों, भक्तिकाल के संतो, आधुनिक काल के महापुरुषों को प्रतिष्ठा के सर्वोच्च शिखरों पर शाश्वत मूल्य धर्मिता ने ही पहुँचाया।

पश्चिमी चिंतन के अनुसार मूल्य सामाजिक विषय के अंग है। Values are the part of the subject matter of sociology[4] अरस्तु, प्लेटो, प्रोतागोरस, कांट आदि विचारकों ने मानव-मूल्यों को दर्शन के साथ जोड़ते हुए यह माना है कि मनुष्य सदैव परम सत्य की खोज में संलग्न रहते हुए आत्मा का बौद्धिक विकास करता है जो उसे विवेक सम्पन्न बनाता है। विवेक से मूल्य की उत्पत्ति होती है और मूल्य उसी परम सत्य का अंष होता है। प्राचीन पाश्चात्य चिंतकों के विपरीत आधुनिक चिंतक आत्मा के बौद्धिक विकास के स्थान पर मूल्यों को समाज के साथ जोड़ते हैं। नीत्शे जैसे विचारकों के लिए ईश्वर मर गया तो भौतिकावादी चिंतकों की दृष्टि में मूल्यों का सम्बन्ध भौतिक योगक्षेम में जुड़ा है। मार्क्सवादी विचारधारा तो सामाजिक हित को व्यैक्तिक हित से अधिक महत्त्व देती है। समाज के हित में यदि व्यक्ति की बलि चढ़ाना पड़े तो इन्हें उससे भी गुरेज नहीं है। 'अर्थ' भौतिक विकास का केन्द्र बिन्दू है और अर्थ की प्राप्ति के लिए समाज व्यक्ति को भी प्रतिस्थापित कर सकता है। आर्थिक मूल्य मनुष्य के भौतिक विकास में सहायक होते हैं इसीलिए आज भौतिक मूल्य यदि नैतिकता से सम्बन्धित नहीं होते वे किसी भी समाज में अराजकता की स्थिति उत्पन्न कर देते हैं। नैतिक मूल्यों के विघटन से समाज में भी विघटन आरम्भ हो जाता है। इसीलिए वर्तमान विश्व अपने ही हाथों घायल हो रहा है। मानव मूल्यों का सम्बन्ध जब तक व्यक्ति की अन्तरात्मा से रहा तब तक वे व्यक्ति को व्यक्ति से, समाज से, राष्ट्र से यहाँ तक कि उसे सम्पूर्ण विश्व से जोड़ने वाली शक्ति के रूप में बल देता रहा।

आधुनिक युग में अन्तरात्मा का स्थान सूचना और प्रौद्योगिकी ने ले लिया है जबकि मूल्य मानव की अनुभूति पर आश्रित होते हैं और अनुभूतियाँ परिस्थितियों पर आधारित होती है। परिस्थितियाँ समयानुरूप बदलती रहती है यही कारण है कि मूल्य भी सदैव एक जैसे या जड़ नहीं रह सकते। डॉ. रामदरश मिश्र इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि- मूल्यों का बोध सर्जक को तात्कालिक जीवन संदर्भों से प्राप्त होता है। बहुत सी मान्यताएँ, मूल्य किसी युग में आकर पुरानी पड़ जाती है। बहुत-सी मान्यताएँ, मूल्य सारहीन सिद्ध हो जाते हैं। युग नए मूल्यों की खोज करता है, नए जीवन दर्शन बनते हैं। जागृत संवेदना और विश्लेषण शक्ति सम्पन्न बुद्धि इन मूल्यों की संक्रातियों को चेतना का अनुभव कराती है, नए मूल्यों की खोज करती है।'[6] प्रश्न यह है कि 'सूचना क्रांति' के युग और उपभोक्तावादी संस्कृति के दौर में मानवीय मूल्यों के लिए स्थान कहाँ बचा है? नूतन आधुनिक सभ्यता की ओर उन्मुख समाज में मूल्यों का निरन्तर ह्रास हो रहा है। आज का मनुष्य भी जीवन की चकाचौंध में खो गया है। भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति की कामना ने दया, ममता, प्रेम, सौहार्द्ध, त्याग, परोपकार जैसे मूल्यों को भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, विश्वासघात जैसे अवगुणों से प्रतिस्थापित कर दिया है। जीवन के विविध क्षेत्रों को प्रभावित करने वाली सूचना क्रांति मीडिया के माध्यम से भौतिक और वैचारिक सम्पदा की लूट हेतु तीसरा विश्वयुद्ध छेड़ चुकी है। दौड़ती-भागती दुनिया में शब्द को 'ब्रह्म' के स्थान पर 'देवता' मानने वाले प्रिंट मीडिया यानि समाचार पत्र-पत्रिका को भी पढ़ने का समय कहाँ है? इलैक्ट्रोनिक चैनलों की बाढ़ ने बुद्धि को वैचारिक कीच में लिपटाकर ऐसी पटखनी दी है कि उसके भार तले मानवता कराहने लगी है। लाभ, प्रतिस्पर्धा और वर्चस्व इस नई बन रही दुनिया के नए मूल्य के तौर पर उभरने लगे हैं। बाजार और उससे जुड़ा धन सम्बन्धी लाभ प्रतिस्पर्धी को नीचे गिराकर बाजार पर अपनी पकड़ मजबूत करना, नए मूल्य बोध का प्रतीक है। मानव-मूल्य हाशिये पर है तो बाजार जीवन के केन्द्र में है। सबका कल्याण चाहने वाले साहित्य का स्थान भी पापुलर कल्चर ने ले लिया है। धर्म खोटे सिक्के की भाँति प्रयुक्त हो रहा है। आज हम सच में डॉ. धर्मवीर भारती के अंधायुग में जी रहे हैं जहाँ जीवित, अंधे और दृष्टा-मुर्दे एक साथ पड़े हैं। पुराने मूल्यों की शाश्वतता जहाँ खतरे में आ पड़ी है वहीं नए मूल्यों को आत्मसात करना चेतनशील मनुष्य के लिए अत्यन्त कठिन कार्य है। भूख, गरीबी, बेरोजगारी के फैलते आसमान के नीचे मानवीय गरिमा को गिराकर, हाशिये पर खड़े मनुष्य को धकेल कर, चमक, खनक और धमक के साथ सफलता की सीढ़ी चढ़ते कुपात्रों ने 'वंदनीय' और 'अवंदनीय' की विभाजक रेखा मिटाकर रख दी है। पर मानव-समाज मात्र एक युग का समाज नहीं होता। देश-काल की भावना अभिव्यक्त करने वाले लोकाचारों, मुहावरों, कविताओं, कहानियों यहाँ तक कि मानवीय सम्बन्धों की गहराई में भी मानव समाज की एक दूसरी पहचान मिल जाती है जो युगातीत होती है, जिसका यथार्थ सामाजिक यथार्थ-भर न होकर मानवीय यथार्थ होता है। मानवीय यथार्थ किसी भी क्षेत्रफल की परिधि यानि देश, काल की सीमाओं को लाँघकर सार्वभौमिक होती है। निर्मला पुतुल ने शायद इसीलिए लिखा था-

'धरती के इस छोर से उस छोर तक
मुट्ठी भर सवाल लिए मैं
तलाश रही हूँ सदियों से निरन्तर
अपनी जमीन अपना घर
अपने होने का अर्थ'[7]

यह अपनी 'जमीन' और 'अस्तित्व' की खोज ही साहित्यिक मीमांसा की पृष्ठभूमि होती है जिसके मानव तत्त्व ही 'मूल्य' कहलाते हैं। आलोचक मूल्यों की खोज भले ही पूर्व और पश्चिम की दृष्टि से करे पर आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार साहित्य की सृष्टि (उसका प्रयोजन) लोकमंगल ही होना चाहिए और सारे 'मूल्य' लोक के मंगल के लिए गढ़े जाते हैं। यही मूल्यपरक साहित्य 'कालजित्' यानि शाश्वत साहित्य होता है, जिसकी द्युति सदियों बाद भी धूमिल नहीं पड़ती।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समकालीन हिन्दी आलोचना-डॉ. नामवर सिंह, साहित्य अकादमी, पृ. 161
2. साहित्य मनीषी आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- श्री पवन कुमार मिश्र, उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृ. 78
3. साहित्य का समाजशास्त्र- डॉ. नगेन्द्र, पृ. 15
4. नई कविता का आत्मसंघर्ष और अन्य, निबन्ध, मुक्तिबोध, पृ. 45-46
5. हिन्दी कहानी में जीवन-मूल्य- डॉ. रमेश चन्द्र लावनिया, पृ. 1
6. माध्यम जुलाई 1964, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. 36
7. नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द- निर्मला पुतुल, भारतीय ज्ञानपीठ, पृ. 07

****

तबला वादन प्रस्तुतीकरण में प्रौद्योगिकी (उस्ताद ज़ाकिर हुसैन के संदर्भ में)

ज्योति *

प्रस्तावना – उत्तर भारतीय संगीत के ताल वाद्यों में तबले का स्थान सबसे प्रमुख है। तबला वाद्य फारसी भाषा के 'तब्ल' से लिया गया है। अवनद्ध श्रेणी का यह वाद्य अति प्राचीन है। गायन की सभी विधाओं में प्रमुख तंत्र वाद्यों एवं नृत्यों के साथ संगत करने के लिए प्रयोग में लाया जाता था। इस वाद्य में अनेक ऐसे गुण हैं जिनकी वजह से यह अपने वर्ग के सभी वाद्यों से अधिक उपयोगी और लोकप्रिय हो गया है।

तबला वादन से अभिप्राय– संगीत में सांगीतिक रचनाओं अथवा बंदिशों को किसी वाद्य यंत्र पर पेशेवर प्रहार एवं घर्षण द्वारा कर्णप्रिय ध्वनि उत्पन्न करने की क्रिया को वादन कहा जाता है, एवं तबला वादन का अर्थ तबला बजाने से है। तबला वाद्य को हाथों की सहायता से बजाया जाता है। तबला वाद्य दो भागों में बटा होता है 1. दायॉ तबला एवं 2. बांया तबला। तबला पर बजाने हेतु बोलों का प्रयोग किया जाता है जो विभिन्न वर्णो के संयोजन से बनते हैं। तबले के मूलभूत दस वर्ण होते हैं।किसी ताल के वजन के अनुकूल उसकी विभिन्न मात्राओं में तबले पर बजाये जाने योग्य बोलों को गूँथ कर जो बोल रचना निर्मित होती है उसे अमुक ताल का ठेका कहते हैं। इसी ठेके के ताल खाली, विभाग के अनुरूप अन्य बन्दिशों का निर्माण किया जाता है।

तबला वाद्य का साहित्य आज बहुत विस्तृत हो गया है जिसके फलस्वरूप तबला वाद्य संगत वाद्य से उपर उठ कर स्वतन्त्र रूप में जन मानस द्वारा बहुत सराहा जा रहा है। स्वतन्त्र वादन में कलाकार अन्य किसी वाद्य या कलाकार का अनुसरण ना कर स्वच्छन्द रूप में सृजनात्मकता, साधना, रचनाकौशल, प्रतिभा के तहत प्रस्तुत किया जाता है उसे तबला स्वतन्त्र वादन कहा जाता है।

प्रस्तुतिकरण से तात्पर्य– प्रस्तुतिकरण को अंग्रेजी में presentationकहा जाता है। जिसका अर्थ है प्रस्तुत करना। अपनी कला को जनसमूह के समक्ष कुशलतापूर्वक प्रदर्शित या प्रस्तुत करना प्रस्तुतिकरण कहलाता है। तबला वादन में प्रस्तुतिकरण से तात्पर्य तबला वाद्य वादन के सभी पक्षों को उत्तम रूप से दक्षतापूर्वक श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत करना। स्वतन्त्र तबला वादन का मुख्य ध्येय कलाकार का तबला वादन कौशल को जनता के समक्ष प्रस्तुत करना एवं श्रोताओं का मनोरंजन है। इस प्रदर्शन को प्रौद्योगिकी द्वारा और अधिक प्रभावी बनाया जा रहा है।

वर्तमान युग वैज्ञानिक युग है प्रौद्योगिकी एक व्यापक शब्द है जिसके संदर्भ में कोई स्पष्ट परिभाषा दे सकना चुनौतीपूर्ण है। प्रौद्योगिकी ज्ञान अनुभव तकनीकों का भंडार है जिसके द्वारा मानव विभिन्न सेवाओं उपकरणों आदि का उपयोग करते हैं। प्रौद्योगिकी का सबसे सरलतम एवं बुनियादी उपकरणों तथा साधनों के विकास का उपयोग है। प्रौद्योगिकी को अंग्रेजी में टेक्नोलॉजी कहते हैं, जिसे लोगों द्वारा तकनीकी शब्द के रूप में भी अपनाया जाता है यद्यपि तकनीकी शब्द पर दृष्टिपात करें तो हमें ज्ञात होगा कि जिस चीज के कारण किसी कार्य को करने में सरलता हो उसे टेक्नोलॉजी या तकनीकी अथवा प्रौद्योगिकी कहते हैं। पैन के पॉइंट से लेकर कंप्यूटर माइक आदि सभी इसी प्रौद्योगिकी का ही प्रतिफल है।

तकनीकी का प्रभाव प्रत्येक क्षेत्र पर पड़ा है जिससे संगीत क्षेत्र भी अछूता नहीं रहा है। संगीत गायन वादन व नृत्य तीनों से मिलकर बनता है तथा नाद तत्व प्रमुख रूप से विद्यमान रहता है। संगीत एक प्रदर्शनत्मक कला है जिसे देखा व सुना जाता है आज से करीबन 50 वर्ष पूर्व संगीत क्षेत्र में बैठक हुआ करती थी जिसमें कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन किया करते थे। कलाकारों को अपनी कला का प्रदर्शन करने के लिए काफी मेहनत करनी पड़ती थी एक पंक्ति से चौथी पंक्ति में बैठे व्यक्ति को वाद्य की ध्वनि पूर्ण रूप से सुन सकने में कठिनाई हुआ करती थी। जिसके फलस्वरुप कलाकार की कला भी श्रोताओं तक पूर्ण रूप से नहीं पहुंच पाती थी। समय परिवर्तनशील है तथा परिवर्तन के साथ साथ वह बैठके मंच प्रदर्शन के रूप में परिवर्तित हो गई। प्रौद्योगिकी का हस्ताक्षेप हुआ जिसके फलस्वरूप माइक अथवा साउंड सिस्टम का विकास हुआ संगीत में तकनीकी के सहयोग द्वारा यह मुश्किल भी सरल होने लग गई तथा नाद की गुणवत्ता भी उत्तम होने लगी व कम प्रयास में अधिक व अच्छे परिणाम मिलने लगे।

माइक से तात्पर्य – माइक को ध्वनि वर्धाक यंत्र भी कहा जाता है। माइक वह इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है जिसके माधयम से ध्वनि को इलेक्ट्रोनिक सिग्नल में परिवर्तित किया जाता है वर्तमान में माइक का प्रयोग बड़े जन–समुदाय को संबोधित करने के लिए एक विशेष यंत्र के रूप में किया जाता है। माइक के साथ अन्य उपकरण भी मुख्य सहयोगी रूप में भूमिका का निर्वहन किया करते हैं ध्वनि वर्धक यंत्र अथवा माइक या माइक्रोफोन एवं पिकअप को एंपलीफायर या ध्वनि विस्तारक यंत्र के इनपुट टर्मिनल से जोड़ा जाता है और लाउड स्पीकर को आउटपुट टर्मिनल से संलग्न कर दिया जाता है, जिससे माइक ध्वनि तरंगों को विद्युत धारा में परिवर्तित कर एंपलीफायर में भेज देता है। एंपलीफायर एक प्रकार का इलेक्ट्रॉनिक यंत्र होता है जो माइक से भेजी गई विद्युत धाराओं को विस्तारित करता है। यह विस्तारित विद्युत धारा ध्वनि तरंगों के अनुरूप कम या अधिाक होती रहती हैं। जब यह विस्तारित विद्युत धाराए लाउडस्पीकर में प्रवेश करती हैं तब ध्वनि की तरंगों में परिवर्तित हो जाती है जिस कारण हमें स्पीकर या लाउडस्पीकर से बढ़ी हुई या तेज आवाज सुनाई पड़ती है इस प्रक्रिया को पूर्ण होने में मात्र कुछ सेकंड का

* शोधछात्रा, संगीत विभाग, दयालबाग शिक्षण संस्थान, दयालबाग, आगरा (उ.प्र.) भारत

समय लगता है। एंपलीफायर को क्रियान्वित करने के लिए विद्युत की आवश्यकता होती है जो या तो शुष्क बैटरी या आद्र बैटरी अथवा एसी या डीसी पावर सप्लाई से प्राप्त की जाती है। वर्तमान में मंचप्रदर्शन में माइक के प्रयोग का प्रचलन बहुत बढ़ गया है। एक कलाकार द्वारा माइक की आवश्यकता व महत्व को समझा जा रहा है। मंच प्रदर्शन में माइक का कार्य आवाज को बढ़ाकर श्रोताओं तक पहुंचाना होता है अर्थात कार्यक्रम में हजारों की संख्या में उपस्थित श्रोताओं को कलाकार की या वाद्य की आवाज साफ-साफ सुनाई देती है। कलाकारों द्वारा दी गई ध्वनि अथवा वाद्य की ध्वनि की बारीक हरकतों को सभी श्रोताओं तक समान रूप से पहुंचाने में आसानी हो गई है।तबला एक ऐसा वाद्य है जिसमें निरर्थक बोलो कि समूह द्वारा नाद की सृष्टि की जाती है। तबले के नादात्मक सौंदर्य आनंदात्मक व कर्णप्रिय ध्वनि द्वारा ही नई पीढ़ियों द्वारा हाथों हाथ लिया जा रहा है। तबले की नाद प्रियता को और अधिक किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है इस संदर्भ में अनेक कलाकारों द्वारा कई प्रयास किए जा रहे हैं जिसमें पंजाब घराने के सुप्रसिद्ध तबला वादक उस्ताद जाकिर हुसैन का नाम मुख्य रूप से दृष्टिगोचर होता है।

प्रौद्योगिकी द्वारा संगीत पर प्रभाव के संदर्भ में उस्ताद जाकिर हुसैन जी एक साक्षात्कार में बताते हैं कि 'प्रौद्योगिकी का संगीत पर असर पड़ना शायद 1950 के दशक में शुरू हुआ था। भारत में पहला प्रभाव रिकॉर्डिंग स्टूडियो में देखा गया जहां उस दौर के संगीतकार समझ गए थे कि प्रौद्योगिकी उनके संगीत को श्रोताओं तक पहुंचाने में मददगार साबित होगी और ध्वनि 10 गुना बढ़ जाएगी। उस्ताद फैयाज खां साहब, मुनीर खान साहब, ओमकारनाथ ठाकुरजी आदि जैसे उस्तादों की पुरानी पीढ़ी के बाद की पीढ़ी ने प्रौद्योगिकी के फायदों को समझा, जिनमें अमीर हुसैन खान साहब, बड़े गुलाम अली खां, बेगम अख्तर, रविशंकर जी, अली अकबर खां एवं मेरे पिताजी उस्ताद अल्ला राखा साहब थे।' एक इंटरव्यू में उस्ताद जाकिर हुसैन जी माइक की महत्ता व प्रयोग के नजरिए को बताते हुए कहते हैं कि 'जैसे 800 हट्ज को ग्राफिक इक्विलाइजर पर ऊंचा करके तबले की गूंज की लंबाई को बढ़ाया जा सकता है। बांऐं में 120 हट्ज जोड़कर बांस (बेस) की आवाज को और अधिक गोल तथा गहरी बना सकते हैं। इनमें अधिक भार पैदा कर सकते हैं।' उस्ताद जाकिर हुसैन जी अपना अनुभव बताते हुए कहते हैं कि 'मैंने महसूस किया कि मुझे ज्यादा कड़ी मेहनत नहीं करनी पड़ती थी मैं वह वॉल्यूम कीफ्रिक्वेंसी और स्ट्रैन्थ का इस्तेमाल यंत्र की कुछ बारीकियों को उठाने में तथा अधिक मधुर और मीठे स्वर पैदा करने में कर सकता था। मैं परिष्कृत हो सकता था और कम से कम प्रयास के साथ सर्वाधिक संभव सुर निकालने में साउंड सिस्टम का इस्तेमाल कर सकता था।' उस्ताद जाकिर हुसैन जी साउंड सिस्टम के साथ-साथ उसे ऑपरेट करने वाले साउंड इंजीनियर का महत्व बताते हुए कहते हैं कि 'जब आपको पता हो कि आप अपनी यंत्र की आवाज किसी कंसर्ट हॉल में कैसी लगेगी और आप मंच पर हो तो आप उम्मीद कर रहे होते हैं कि आपके पास ऐसा साउंड इंजीनियर हो जो इलेक्ट्रॉनिक जगत को, साउंड सिस्टम, साउंडबोर्ड को समझता हो और जो परिवेश को अच्छी तरह से जानता हो। इसके साथ ही कलाकारों की तबले की आवाज का विश्लेषण कर सके और जिसे यह भी सटीक ढंग से पता हो कि अलग-अलग संगीतकारों की नाद की गुणवत्ता को बाहर निकालने के लिए क्या करना चाहिए।' एक कलाकार को भी साउंड सिस्टम इस्तेमाल करना आना चाहिए। उस्ताद जी कहते हैं कि 'मैंने यह सीखा कि माइक्रोफोन क प्लग कैसे लगाते हैं और कैसे साउंड बोर्ड का इस्तेमाल करते हैं। उस कार्य में मैंने नई आर्वत्तियों की खोज की जो भारतीय यंत्रों के लिए सबसे ज्यादा अनुकूल थी और यह भी पता किया कि इक्विलाइजिंग ग्राफिक्स के इस्तेमाल से उन्हें कैसे बेहतर बनाया जाए। इस तरह से कुदरती तौर पर मैंने उस जानकारी को इंजीनियरों तक पहुंचाया जो भारत में कंसर्ट हॉल में पीछे बैठकर आवाज बढ़ाते रहे थे और जब यह होने लगा तो मुझे यंत्र को अलग तरीके से बजाने का मौका मिलने लगा।

अतः हम निष्कर्ष रूप में यह कह सकते हैं कि उस्ताद जाकिर हुसैन द्वारा तबला वादन प्रस्तुतीकरण क्षेत्र में नाद की महत्ता को समझा गया। तकनीकी की सहायता से तबला वादक निरर्थक वालों को नाद की कोमल गुणवत्ता की सार्थकता प्रदान करतबला क्षेत्र में उस्ताद जाकिर हुसैन द्वारा क्रान्तिकारी कार्य किया गया है। उस्ताद जाकिर हुसैन का स्वतंत्र तबला वादन इतना कर्णप्रिय मधुर होता है जिससे श्रोतागण आध्यात्म की अनुभूति करने लगते हैं। एक साउंड इंजीनियर के रूप में उस्ताद जाकिर हुसैन द्वार नई आवृत्तियों की खोज की गई तथा यह भी पता किया गया की इक्विलाइजिंग ग्राफिक्स के इस्तेमाल से ध्वनि को और अधिक कैसे बेहतर बनाया जाए। तबला वादन क्षेत्र में एक शोधात्मक दृष्टिकोण उस्ताद जाकिर हुसैन जी को अलग मुकाम पर ले गया है जो संगीत क्षेत्र को और अधिक समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तबले के घराने, वादन शैलियाँ एवं बन्दिशें - डॉ0 सुदर्शन राम
2. उस्ताद ज़ाकिर हुसैन एक संगीतमय जीवन - नसरीन मुन्नी कबीर (नसरीन मुन्नी कबीर के साथ संवाद)
3. मंच प्रदर्शन में कलाकार एवं श्रोता -हरीश कुमार तिवारी
4. भारतीय संगीत कलाकार (वंशानुक्रम और पर्यावरण) - डॉ0 निशि माथुर
5. हिन्दुस्तानी संगीत शास्त्र(द्वितीय भाग) - भगवत शरण शर्मा

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Goat Milk : Nutritional and Medicinal Value

Dr. Sumitra Meena*

Abstract - Consumption of Goat milk increasing world- wide due to the nutritional and medicinal Value of it. Goat milk has unique nutritional values superior other animal milk.It is easy to digest, good consumption of fatty acids, proteins and bioactive compounds Makes it more nutritional and medicinal values than other mere food.Goat milk is rich in Calcium, magnesium and phosphorus than cow and human milk.It is also rich in triglycerides (MCT). Goat milk is a rich source of fat, protein, lactose,VitaminB6. It contains 25% more vitamin b6, 47% more vitamin A and 13% more calcium than cow milk. Goat milk is vital in the management of allergies, gastro-intestinal disorders, osteoporosis, Hypertension and colic.This review paper is focused at creating awareness of the nutritional medicinal values Goat milk.

Introduction - The domestic goat or simply goat (Capra aegagrus hircus) is a subspecies of C. aegagrus domesticated from the wild goat of South-West Asia and Eastern Europe. The goat is a member of family Bovidae and the subfamily Caprinae. There are over 300 distinct breeds of goat. It is one of the oldest domesticated species of Animals, according to archaeological evidences that its earliest domestication occurred In Iran at 10,000 calibrated calendar years ago. Female goats are referred to as does or nannies, intact males are called bucks or billies, and juvenile goats of both sexes are called kids.

Goats have been used for milk, meat, fur and skins across much of the world. Milk from is also turned in to goat cheese. The world-wide increase in the consumption of goat milk due its organoleptic Great nutritional and medicinal properties.

Nutritional and Medicinal Values - Goat milk is the most complete food known which is highly compatible and nourishing natural food . It is so highly nutritious that it can actually serves as substitute for a meal.It is also preferred due to its low fat content and its capability to neutralized the acids and toxins present in our body. Goat milk has unique nutritional and medicinal values superior to other milk. It is easy to digest , good composition of fatty acids, proteins and its contents of bioactive compounds makes it more nutritional and medicinal values.

Goat milk and its products are nutritionally important as diet supplements and provide components necessary for human growth.Goat milk is not only non-mucus forming, actually helps to neutralize mucus.The milk contains vitamins, minerals ,electrolyte, trace elements, enzymes, proteins, fatty acids and amino acids (specially tryptophan) that are utilize by human body with ease and our body can digest goat milk just in 20 minutes.Goat milk is more digestible because the fat molecules are smaller size than those from cow milk, It contains more chlorine and fluorine. The gastro-intestine problem, vomiting, colic, diarrhoea, constipation and respiratory problems can be eliminated when goat milk is fed to the infant. Regular intake of goat milk significantly improves the body weight gain.

Conclusion - Goats are important components of livesock. The contribution of goats in supply milk and milk products is high and it has significant role in rural economy and health. Goat milk has unique nutritional and medicinal properties superior to other milks.

Goat milk contains higher amount of Calcium, Magnesium and phosphorus than cowAnd human milk.Goat milk is recommended for infants, old and convalescent people. Three fatty acids viz., caproc, caprylic and capric have great medicinal values for patients Suffering from variety of ailments, Fermented goat milk incorporating live probiotic cells represent a group of products With regards to their nutritive and medicinal properties.

References:-

1. Almaas, H., Cases, A.L. Devold, T.G., Holm, h., Langsrud, T., Aabakken, L., Aadnoey, T. and Vegarud, G. E. (2006) In- vitro digestion of bovine and caprine

*Lecturer, Department of Zoology, Govt. PG College, Gangapur City (Raj.) INDIA

milk by human gastric and duodenal enzymes. International Dairy Journal, 16: 961-968.

2. Pal U.K., Mandal P.K. Rao V.K. and Das C. D .(2011). Quality and Utility of Goat Milk with Special reference to India: Asian Journal of Animals Science., 5:56-63 .
3. Anonymous (1998) Goat milk can Prevent Bacterial diseases: Case study . Science Express NewYork
4. Baur, L. A. and Allen, J. R., (2005). Goat milk for infants: Journal of Paediatrics and Child Health.
5. Chandan, R.C., Attaie, R. and Shahani, K. M.(1992), In : Proceeding of 5th International Conference on Goats, vol. II, PP. 399-420.

****

Study Attenuation Coefficients of Leaves (Ficus religiosa)

M. D. Sharma*

Abstract - In this paper, the count with the applied voltage of GM counter is studied. The leaves of Ficus religiosa is used as scatter to study attenuation coefficient for beta particle. The investigation is further extended to find attenuation coefficient for fresh leaves and dried leaves. The aim is to study the attenuation coefficient for various materials used in our daily life beside the metal which is well known as good attenuator.

Introduction - Photons and particles emitted in the reaction of nucleus of atom are known as nuclear radiation. Nuclear radiation also refers as ionizing radiation [1]. Alpha particles, beta particles, neutrons, muons, mesons, positrons, and cosmic rays etc. emitted in nuclear reaction, which are some of the examples of nuclear radiations. The device used to detect these nuclear radiations are known as nuclear detector [2-3]. Nuclear detectors are many based on ionization and excitation of atoms by charged particles.

The distance travel by the radiation depends on the type of radiation, which is defined as the ability to penetrate. Alpha and beta particles can be easily blocked due to less penetration power. While gamma rays, x-rays, and neutrons can travel a large distance [4]. There are so many application of radiations in various field such as weapon, power generation, medicine etc. In medical or other constructive application, the control travel of radiation is required. Therefore, the study to fine the material with high attenuation and low cost is more interest.

In this paper, the count with the number of leaves (Ficus religiosa) is study in GM with CS137 source. The attenuation coefficient of fresh and dry leaves of Ficus religiosa are obtained using GM counter.

Material and Method - Geiger-Müller (GM) [5] counter is nuclear detector based on ionization of atom. In GM counter, the electric field between cathode and anode is still greater, which increases the ionization current due to secondary ionization of gas molecules. The amplitude of output pulse is independent to the energy of incident radiation particle, due to high secondary ionization of gas molecule. Because of the simple design, GM counters are widely used for detecting alpha and beta particles and gamma photons. CS 137 radiation source is used for the present study.

Ficus religiosa or sacred fig is a species of fig native to the Indian subcontinent [6] that belongs to Moraceae, the fig or mulberry family. Leaves of Ficus religiosa are used as scatter to find the attenuation coefficient for fresh and dry cases.

Result and Discussions - First, the count with applied voltage is plotted as shown in figure 1. It is clearly seen from figure 1 that GM counter starts counting after a certain value i.e. the threshold voltage. The threshold value for this case is about 330V. After the threshold voltage, there is constant count in certain region which is known as platue region of GM counter. The mid voltage of this region is taken as operating voltage to get actual errorless count for various study. The operating voltage (V_{op}) is taken as $V_{op} = (V_1+V_2)$, where V_1 and V_2 are initial and end point of platue region. Form figure 1, the voltage V_1 and V_2 are 350V and 670V, respectively. Therefore, the operating voltage (V_{op}) is equal to 510V, which is used for the further study.

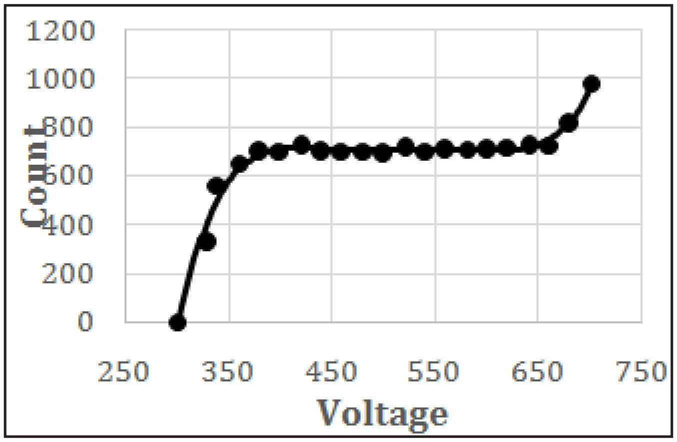

FIGURE 1. The count with applied voltage

Next, the leaves of ficus religiosa (Peepal) is used as scatter to study the attenuation coefficient. For this study, the fresh leaves and dry leaves of ficus religiosa are used for the further study. The count with the number of fresh leaves of ficus religiosa is plotted at operating voltage 510V, which is as shown in figure 2.

*Department of Physics, Govt. Dungar College, Bikaner (Raj.) INDIA

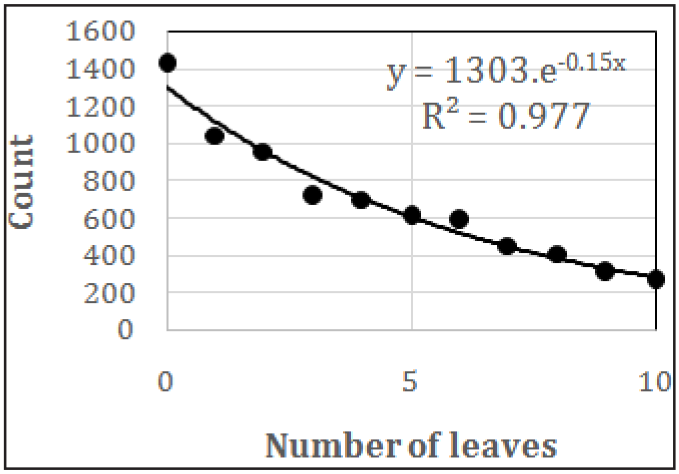

FIGURE 2. The count with number of fresh leaves

From figure 2, it is clearly seen that the count decreases with the number of fresh leaves of ficus religiosa. With the curve fitting it is achieved that the variation is exponential decreasing with the number of leaves. The attenuation coefficient is 0.155/leave. The thickness of fresh leaves (ficus religiosa) is 0.02 cm used for the study. Therefore, the attenuation coefficient of fresh leaves (ficus religiosa) is 7.75/cm^{-1}. After that the leaves of ficus religiosa is dried about one week and the studied further the count with number of dry leaves (ficus religiosa), which is plotted in figure 3.

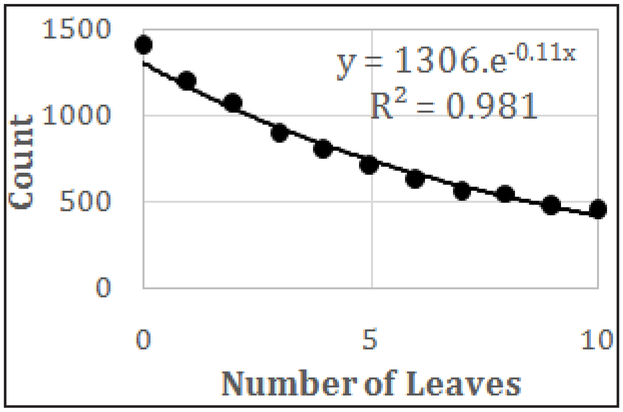

Figure 3. The count with number of dry leaves

From figure 3, it is clearly seen that the variation of count with the number of dry leaves (Ficus religiosa) is similar figure 2. With the curve fitting, it is achieved that the variation is exponential. The attenuation coefficient is achieved as 0.115/leave. But the thickness of dry leave is remained as 0.012cm. Therefore, the attenuation coefficient is achieved as 9.583 cm^{-1}. As the leaves are dried that the water contain removed and density increases. So, the attenuation coefficient of dry leave is higher than the fresh leaves. The dry leaves of Ficus religiosa shows better attenuation compared to fresh leaves. Dry leaves can be used for better results.

References :-

1. G. Woodside, Environmental, Safety, and Health Engineering. John Wiley & Sons, US (1997).
2. K.S. Krane, Introduction to Nuclear Physics, Wiley, USA (1987).
3. B. Martin, G. Shaw, Nuclear and Particle Physics, Wiley, USA (2019).
4. Jones, R. Clark, A New Classification System for Radiation Detectors, Journal of the Optical Society of America. 39(5), 327–341, (1949).
5. P. B. Moon, Recent developments in Geiger-Muller counters, J. Sci. Instr. 14, 189 (1937).
6. H. Chisholm, “Peepul”. Encyclopedia Britannica. 21 (11th ed.). Cambridge University Press (1911).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

छत्तीसगढ़ प्रदेश के राजनांदगांव जिले की ऐतिहासिक, पुरातात्विक संपदा (धरोहर) के संरक्षण संवर्धन में जिला पुरातत्व संघ की भूमिका - एक अध्ययन

डॉ. के. एल. टाण्डेकर* डॉ. श्रीमती आशा चौधरी**

प्रस्तावना - भारत के हृदय स्थल में स्थित नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य को समृद्ध सांस्कृतिक, धार्मिक, पुरातात्विक विरासत एवं ऐतिहासिक पृष्ठिभूमि अत्यंत प्राचीन है, इसका विस्तृत भू-भाग के प्राचीनकाल से जहाँ विध्यवाद, महाकालांतर कौसल दक्षिण कौशल दण्डकारण्य आदि विविध नामों से जाना जाता है वही आर्य और आर्योत्तर दो विभिन्न संस्कृतियों के संगम स्थल भी ऐतिहासिक गरिमा से परिपूर्ण है, छत्तीसगढ़ प्राचीन स्मारकों, दुलर्भ नक्काशीदार मंदिरों, बौद्ध स्थलों, राजमहलो, गुफाओं एवं शैलचित्रों से परिपूर्ण हैं। यहां अनेकों पुरातात्विक, धार्मिक, प्राकृतिक तथा ऐतिहासिक स्थल विद्यमान है, जो गौरवशाली लोक संस्कृति का अद्वितीय उदाहरण है, छत्तीसगढ़ का पूर्वांचल एवं प्रवेश द्वार राजनांदगांव जिला पूरा संपदा से परिपूर्ण संस्कारधानी के नाम से विख्यात राजनांदगांव जिला भी ऐतिहासिक, पुरातात्विक धरोहर से परिपूर्ण है, जिला पुरातात्विक अवशेषों, स्मारक स्थल एवं कलाकृतियों की बहुलता के लिए प्रदेश के अन्य जिलो की भांति प्राचीनकाल से ही प्राकृतिक एवं पुरासभ्यता से आप्लाविद रहा है। समृद्ध सांस्कृतिक विरासत में तत्कालीन शिल्पियो की कला प्रियता एवं शिल्प संधारण की तकनीक अद्भूत एवं बेमिसाल है। बहुमूल्य पुरातात्विक एवं ऐतिहासिक संपदा के संवर्धन संरक्षण की महति आवश्यकता है। समग्र पुरातात्विक धरोहर की सुरक्षा के प्रति जनजागरण एवं अभिरूचि उत्पन्न करने के लिए जनभागीदारी की नितांत आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए छत्तीसगढ़ शासन के संस्कृति एवं पुरातत्व संचालनालय के दिशा-निर्देशों के परिपालन में राजनांदगांव जिला पुरातत्व संघ अपने स्थापना वर्ष से ही सांस्कृतिक सर्जनशीलता एवं कलात्मक अभिव्यक्ति का परिचय देते हुए इसे साकार स्वरूप प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

राजनांदगांव जिले में ऐतिहासिक पुरातात्विक संपदा, संरक्षण, संवर्धन - राजनांदगांव छत्तीसगढ़ अंचल के पश्चिमी भाग में स्थित राज्य का सबसे बड़ा जिला है, जो वर्तमान में दुर्ग संभाग के अंतर्गत आता है, 26 जनवरी 1973 को दुर्ग से पृथक होकर राजनांदगांव जिला अस्तित्व में आया है। 1973 में जिले का क्षेत्रफल 11127 वर्ग कि.मी. था वर्तमान में कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 80225 वर्ग कि.मी. है, राजनांदगांव जिले का विस्तार $20^{0}70^{0}$ से $22^{0}29^{0}$ अक्षरी अक्षांश तथा 80^{0} 23^{0} से 81^{0} 29^{0} पूर्वी देशांतर के मध्य है समुद्र तल से औसतन ऊँचाई 330.78 मीटर है, यह छत्तीसगढ़ के मैदानी भाग का पश्चिमी हिस्सा है इसकी उत्तर दक्षिण लंबाई 148.4 कि.मी. तथा पूर्व पश्चिम चौडाई 89.5 कि.मी. इसके अलावा राजनांदगांव जिले की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि राजनांदगांव रियासत जिला निमार्ण का इतिहास अम्बागढ़ चौकी जमींदारी ऐतिहासिक व पुरातात्विक स्थल भौगोलिक स्थिति सीमाएँ, भू-संरचना, जलवायु, तापमान, मिट्टी व जिले की जनांकिकीय स्थिति के तहत् जनसंख्या जनगणना वर्षो की तुलना वृद्धि दर विभिन्न तहसील आदि जिले के विस्तृत क्षेत्र की स्थिति को दर्शाता है।

राजनांदगांव जिला का सु-विस्तृत भू-भाग प्राकृतिक संपदा तथा धन-धान्य से परिपूर्ण है। इस क्षेत्र की प्राचीन, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक विरासत अत्यंत समृद्धशील है, प्रगैतिहासिकाल से लेकर अद्यतन इस अंचल का श्रृंखलाबद्ध इतिहास रहा है, महानदी तथा शिवनाथ आदि नदियों के तटवर्ती क्षेत्रों से प्रगैतिहासिक काल के पाषाण उपकरण तथा शैलचित्र मिले है, महानदी के अतिरिक्त छत्तीसगढ़ की बड़ी नदियों में शिवनाथ है, डोंगरगढ़ स्थित मां बम्लेश्वरी देवी मंदिर एवं वहां के पहाड़ी की प्राकृतिक सौंदर्य घाटियारी की शिल्पकला एवं गंडई में शिव मंदिर परिसर का विकास किया जा सकता है। एशिया का एकमात्र संगीत एवं ललित कलाओं को समर्पित इंदिरा कला एवं संगीत विश्वविद्यालय संग्रहालय खैरागढ़ की कलाकृतियां महत्वपूर्ण स्थान रखती है, जिले में दो संग्रहालय यथा खैरागढ़ विश्वविद्यालय तथा जिला पुरातत्व संग्रहालय राजनांदगांव में क्षेत्र की बहुमूल्य कलाकृतियों को संग्रहित, संरक्षित एवं प्रदर्शित किया गया है। राजनांदगांव जिले का पुरातात्विक, ऐतिहासिक रियासत कालीन संग्रहालय में गौरवपूर्ण स्थान रहा है, राजनांदगांव जिले के अंतर्गत डोंगरगढ़ में चिचोला, कन्हारगांव, कोहकट्टा, खम्पुरा, राजनांदगांव में अंजोरा, छुरिया, घुमका, सिंगारपुर, भेजराजटोला, गंडई, छुईखदान, घाटियारी की भड़भड़ी नर्मदा,खैरागढ़ के शेरगढ़, पांडादाह, कुकुरपाठा, बनबोड़, डोंगरगांव में अर्जुनी, अम्बागढ़ चौकी, मोहला, मार्डिग पिडिंग जैसे अनेक अनन्य कला केन्द्र विद्यमान है, इसमें प्रमुख रूप से शैष, वैष्णव, शक्तिसूर्य, गणेश, काविकेय के अलावा बौद्ध, जैन धर्मो से संबंधित अनेक कलाकृतिया सर्वेक्षण से प्राप्त हुई है, राजनांदगांव के प्राचीन कलाकेन्द्र में इसवीं 14 वीं से 16 वीं शताब्दि के मध्य निर्मित यौद्धाओ की कलात्मक प्रतिमाओं की बाहुल्यता है, जिले में प्राचीन मंदिर, घटियारी गंडई के शिव मंदिर स्थापत्यकला के अनुठे उदाहरण है, राजनांदगांव जिले का अविभाजित क्षेत्र कवर्धा के भोरमदेव परवर्ती स्थापत्य कला की झलक के लिए विद्यमान है।

* प्राचार्य, शासकीय बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर महाविद्यालय, डोंगरगांव (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय नेहरु स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ़ (छ.ग.) भारत

राजनांदगांव जिले के प्रमुख धार्मिक, ऐतिहासिक, पुरातात्विक स्थल एवं अन्य स्थलों पर विद्यमान कलाकृतियों का विवरण निम्न तालिकानुसार है -

ऐतिहासिक, पुरातात्विक, धार्मिक, सांस्कृतिक धरोहर

क्र.	स्थान	श्रेणी	स्थल
1	डोंगरगढ़	धार्मिक,ऐतिहासिक	बम्लेश्वरी देवी, बुद्ध प्रतिमा
2	खैरागढ़	ऐतिहासिक, शैक्षणिक, पुरातात्विक	इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय
3	गंडई	धार्मिक, ऐतिहासिक	प्राचीन शिव मंदिर
4	अम्बागढ़ चौकी	धार्मिक, प्राकृतिक	आम्बादेवी मंदिर
5	मां भवानी करेला	धार्मिक, प्राकृतिक	पहाड़ी पर स्थित मां भवानी का मंदिर प्राकृतिक सौंदर्य
6	साकरदाहरा	धार्मिक, प्राकृतिक	रायपुर स्थित सतबहिनी मंदिर, विभिन्न मंदिर, एनीकट मोंगरा बैराज, जलदहरा सूखा बैराज, मोक्षधाम
7	जय डोगेश्वर महादेव चौडराधाम	धार्मिक, प्राकृतिक	मंडीप खोल, पैलीमेटा नर्मदा कुंड, शिव एवं गंगई मंदिर, घटियाडी का प्राचीन पुरातात्विक शिव मंदिर

स्रोत - छत्तीसगढ़ शासन पर्यटन विभाग रायुपर (छ.ग.)

राजनांदगांव जिले के छपकी गांव के पास सतपुड़ा की पहाडी के बीच भोरमदेव का प्राचीन मंदिर बना है। पास ही बड़ा सा जलाशय है, 1058 ईसवी सन में बना यह मंदिर सबसे पुराना मदिर है, जो वास्तुकला का उत्कृष्ट नमूना है, इसके अलावा मडवा महल, छेरकी महल एवं डोंगरगढ़ में माता बम्लेश्वरी देवी का मंदिर भी दूर-दराज के पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करने में सक्षम है। 14 वीं शताब्दी का बना विराट दूल्हादेव या मांडवा महल पूरी तरह पत्थर का बना है, भारत में संगीत का अपनी तरह का एकमात्र विश्वविद्यालय इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ जिला राजनांदगांव में स्थित है, इस विश्वविद्यालय में कला के विविध अंगो यथा संगीत, नृत्य, चित्रकला का इतिहास आदि से संबंधित विभाग है, प्राकृतिक संसाधन इस अंचल के लिए अद्वितीय उपहार है, यहां के ऐतिहासिक, पुरातात्विक, धार्मिक धरोहर हमारे गौरव के प्रतीक इन सभी की विलक्षण सम्बद्धता इस लोकांचल को विशिष्टता प्रदान करती है, इन सभी के सतत् संरक्षण, संवर्धन, प्रमाण को बनाये रखने जागरूकता आवश्यक है। इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय संग्रहालय में प्राचितमतो की प्रतिमाएॅं संग्रहित है, परन्तु क्षेत्र की जैन प्रतिमाएॅं अपनी शिष्य कला तथा स्थानीय प्रभाव के कारण विशिष्ट बन पडी है, प्राचीन दक्षिण कोसल में वैसे तो शवमत या शक्तमत को मानने वालो का बाहुल्य था परन्तु इन सबके अतिरिक्त अहिंसा के सिद्धांत को लेकर चलने वाले जैन धर्म का प्रचार भी इस भूमी पर कम नही था इनकी पुष्टि संग्रहालयों में संग्रहित एवं प्रदर्शित जैन प्रतिमाओं से होती है, डोंगरगढ़ से प्राप्त 23 वें तीर्थकर पार्श्वनाथ की प्रतिमा लगभग बारहवीं सदी ई. की है व ध्यान मुद्रा में सिंह अंकित आसन पर विद्यमान है उनके मस्तक के अहर्व में अलंकृत प्रभा मण्डल, तीन छत्र तथा उसके नीचे सत्तकन वाला नागराज विद्यमान है पादपीठ के नीचे नौ ग्रहो की मुख्याकृति के रुप में उनके अधीन बताया गया है, परिकार के शीर्ष में मृदंगवादक उसके दोनो ओर हस्तिद्वय, नीचे उडते हुए निद्याधरो का अंकन है।

राजनांदगांव जिले में बौद्ध धर्म जाति विधियों बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में अग्रणि स्थान रखता है, यहां के विभिन्न स्थानो में अनेक बौद्ध प्रतिमाएं विद्यमान हैं। डोंगरगढ़ प्रज्ञागिरि बौद्धो का प्रसिद्ध तीर्थस्थल के रूप में विकसित हो रहा है, बौद्ध धर्म की कुछ विशिष्ट अलौकिक ऐतिहासिक प्रतिमाएं संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ एवं राजनांदगांव संग्रहालय में संरक्षित एवं सुरक्षित रखी गई है, जिनमे भूमि स्पर्श मुद्रा में बुद्ध, बौद्ध देवी तारा, बौद्ध द्वार पाल (शूलपानी बोधीसत्व), ध्यानी बुद्ध, प्रतिमाएं, बैतालरानी (बौद्धदेवी तारा) तारादेवी (साल्हेवारा), बीजलदेवी प्रतिमा, (ब्रजदेही) बौद्ध तांत्रिकाचार्य नागार्जुन की प्रतिमा प्राप्ति से निश्चय ही क्षेत्रीय स्तर पर बौद्ध धर्म को एक दिशा मिलती है। पूर्वकालीन समाज के इस धर्म के प्रति अटूट आस्था भी प्रदर्शित होती है, निश्चय ही यह जिला बौद्ध उपासकों, विद्वानों, भिक्षुओं व तांत्रिकों से परिपूर्ण रहा है, जिसकी पुष्टि इन मूर्तियों एवं प्रतिमाओं से होती है।

राजनांदगांव क्षेत्र मात्र प्रतिमाओं, नायिका भेद एवं मिथुन दृश्यों का आश्रयस्थल ही नही अपितु तत्कालीन जीवन के विभिन्न पक्षो के दृश्यों का भी आधार है, यह क्षेत्र की न्यूनाधिक मात्रा में इस झंझावत से अप्रभावित नही रह सका, अत: मूर्ति शिल्प भी इसका अंकन स्वभाविक तथा समीचिन था।

उपासक स्मारक मूर्तिया की राजनांदगावं क्षेत्र में प्रचुरता है, शिलपचराही बोड़ला से लेकर मांडिग पीडिंग (मोहला) तक स्मारक मूर्तियां जमीन के उपर तथा सतह के कुछ नीचें पडी हुई मिलती है, इन मूर्तियों को स्मारक मूर्तियों के नाम से संबोधित किया गया है, ये देवी-देवताओं की मूर्ति आभूषणों से सुसज्जित है, छुरिया में एकांकित पोट्रेट मूर्तियों की विपुलता ग्रामीण अंचल में विद्यमान है। यौद्धा स्मारक मूर्तियां इस क्षेत्र की कलाधार की एक शाखा है, जिसका उद्गम वीर पूजा भावना में निहित है, पश्चिम दक्षिण कोसल राजनांदगांव में अनेक स्थानो में यौद्धा स्मारक मूर्तियां प्राप्त हुई है, खजरी (करेला) से प्राप्त रेवन्त मूर्ति गातापार स्थित रेवंत की मूर्ति उल्लेखनीय है। मुढीपार के तालाब किनारे प्रहारत, अश्वारोही योद्धा मूर्ति का अंकनकला की दृष्टि से सूक्ष्म आरेखण एवं उत्कृष्ट कोटी की सज्जा लिये हुए है, इनमें से अनेक धरोहरो को वर्तमान में इंदिराकला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ के संग्रहालय में संग्रहित कर रखा गया है। जिले के प्रमुख यौद्धा मूर्तियां (1.) यौद्धा मूर्ति (ग्राम महुआढार-लछना), (2.) योद्धा एवं स्त्री मूर्ति (ग्राम महुआढार), (3.) मुर्गे पर सवार योद्धा (ग्राम कुकरापार पुल-गातापार) (4.) योद्धामूर्ति (साल्हेवारा), (5.) योद्धामूर्ति (आको छुरिया) (6.) योद्धामूर्ति (कलकसा पहाड़ी डोंगरगढ़) (7.) युद्ध के अस्त्र-शस्त्र एवं युद्ध दृश्य - असि-खडग (तलवार), दुधारी अवक खडग , कुल्हाडी छोर के आकार का खडग, संहारक तलवार, मुडा हुआ खडग, मौष्टिक या खज्जर, गदा, धनुष, ढाल, धूरी, आदि दिखायी देता है।

घटियारी गण्डई से लगभग 5 किमी. की दुरी पर पश्चिम में स्थित है यह कलचुरीकालीन का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था, जहाॅं से अनेक कलात्मक प्रतिमाएॅं प्राप्त हुई प्राप्त अवशेषो से ज्ञात होता है कि यहाॅं पर पंचायतन शौली में मदिर निर्माण की योजना थी।

जिला पुरातत्व संघ राजनांदगांव की भूमिका - राजनांदगांव जिले का सुविस्तृत भु-भाग प्राकृतिक ऐतिहासिक, धार्मिक, पुरातात्विक धरोहर (संपदा) तथा धन-धान्य परिपूर्ण है जिले के विभिन्न स्थानो पर उत्खनन सं प्राप्त एवं यत्र तंत्र बिखरी हुई प्राचीन कला कृतियों, मूर्तियों, स्मारको तथा

मंदिरो के संर्वधन, संरक्षण, उचित रखरखाव, सुरक्षा तथा अनुरक्षण से बचाव को ध्यान में रखते हुए संचालनालय छत्तीसगढ़ संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के प्रयासो को साकार स्वरुप देने उवं जन-जागरण समितियों का गठन कर स्थानीय निकायों की अपेक्षित सहभागिता सुनिश्चित हो इसे ध्यान में रखते हुए जिला प्रशासन राजनांदगांव द्वारा जिला पुरातत्व संघ की स्थापना 31.08.1977 में की गई जिसका पंजीयन क्रमांक 44/दिनांक 07.08.1980 है। राज्य में गठित पुरातात्विक संस्थाओं में एक वरिष्ठ संस्था है आयुक्त पुरात्तव एवं संग्रहालय तत्कालीन म.प्र. शासन भोपाल द्वारा अनुमोदित निर्देशित एवं अनुदान प्राप्त महत्वपूर्ण संगठन है।

जिला पुरातत्व संघ एवं संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ के संयुक्त प्रयास से पुरातत्व संग्रहालय की स्थापना की गई , इस संग्रहालय में जिले के विभिन्न स्थानो से प्राप्त पुरावशेष एवं कलाकृतियों का संग्रहण किया गया है। इस संग्रहालय में विशेष रुप से कलचुरी-कालीन एवं गोंड-कालीन, वैषणव, शैव शक्त, बौद्ध एवं जैन धर्म एवं संप्रदायों की अनूठी मूर्तिया उल्लेखनीय है, सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर 14वीं स्राती तक कला की अनुकृतियॉ भारतीस संस्कृति की अमुल्य धरोहर के रुप में सुरक्षित एवं संरक्षित है।

जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में गठित जिला पुरातत्व संघ राजनांदगांव में सचिव प्रभारी अधिकारी तथा सदस्यों का भी मनोनयन किया गया है जो इस प्रकार है-

जिला पुरातत्व संघ राजनांदगांव के सदस्यो की सूची -

1. कलेक्टर - अध्यक्ष
2. विभागाध्यक्ष भारतीय कला का इतिहास एवं इं.क.से.नि.व. खैरागढ़ - सचिव
3. डिप्टी कलेक्टर - प्रभारी अधिकरी
4. कुलपति इं.क.सं.वि.वि. खैरागढ़ - सदस्य
5. पुलिस अधिक्षक - सदस्य
6. कार्यपालन यांत्रिकी लो.नि.वि. राजनांदगांव/खैरागढ़ - सदस्य
7. उपसंचालक लोक शिक्षण - सदस्य
8. अनुविभागीय अधिकारी अभिलेखागार एवं संग्रहालय रायपुर - सदस्य
9. उपसंचालक पुरातत्व अभिलेख संग्रहालय रायपुर - सदस्य
10. पुरातत्ववेत्रा पुरातत्व अभिलेखागार संग्रहालय रायपुर - सदस्य
11. सहायक संचालक, जनसंपर्क विभाग राजनांदगांव - सदस्य
12. विधायकगण जिला राजनांदगांव - सदस्य
13. व्याख्याता भा.का.का.ई.इ.क.स. वि.वि. खैरागढ़ - सदस्य
14. विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग भा.का.का.ई.इ.क.स. वि.वि. खैरागढ़ - सदस्य
15. डॉ. सीताराम शर्मा पूर्व विधायक भा.का.का.ई.इ.क.स. वि.वि. खैरागढ़ - सदस्य
16. श्री गणेश शंकर शर्मा प्राचार्य शा.उ.मा.विद्यालय सोमनी - सदस्य
17. डॉ. कु. अर्चना कनौज जमातपारा राजनांदगांव - सदस्य

जिला पुरातत्व संघ राजनांदगांव ने अपने अस्तित्व में आने के बाद पुरातत्व संग्रहण संरक्षण एवं संवर्धन की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है, समिति के अध्यक्ष एवं सदस्यों, विद्धान इतिहासकारो, साहित्यकारो एवं कलानुराजियों के सतत् प्रसास से ही राजनांदगांव जिले की विभिन्न कलाकृतियों को संवारने एवं एकत्र कर स्थापित करने की दिशा में सार्थक पहल की गई। राजनांदगांव जिले के पुरातत्व संघ के द्वारा विभिन्न कलाकृतियों को एकत्रित कर एक समृद्ध संग्रहालय का विकास किया गया जों वर्तमान में (सत्र 1978 जिला मुख्यालय) जिला कार्यालय भवन में स्थित था, उसे नव निर्मित वृहत संग्रहालय भवन में हस्तांतरित कर दिया गया है। इस संग्रहालय में पुरातात्वीय स्थलों से 113 मूर्तियॉ संग्रहित की गई है, जिला पुरातत्व संघ के संग्रहालय के विकास की अपर संभावनाऍ को ध्यान में रखते हुए जिला पुरातत्व संघ ने विभिन्न योजनाऍ प्रस्तावित की है। जिसको मुख्य रुप से नए भवन को अधिक विकसित एवं सुरक्षित स्वरुप प्रदान करना मूर्तियों के रख-रखाव सुधार आदि के लिए पक्के स्थल का निर्माण करना कलात्मक मूर्तियों के अवशिष्ट एवं यत्र-तत्र बिखरी हुई मूर्तियों स्मारको का सर्वेक्षण कर सूचीकरण करना, इस पुनित कार्य में समाजसेवी संस्थाओं की सहभागिता हेतु प्रोत्साहित करना, मूर्तियों के छायाचित्र (रंगीन) बनाकर उन्हे प्रदर्शित करने की योजना तथा मूर्तियों का कालोनीकरण करते हुए उनका पूर्ण विवरण सचित्र एवं ग्रंथालय को समृद्ध बनाना जैसी कार्य-योजना पर जिला पुरातत्व संघ ने साहसिक कार्य किया है।

जिला पुरातत्व संघ के माध्यम से भारतीय कला का इतिहास एवं संस्कृति विभाग इं.क.स.वि.वि. खैरागढ़ द्वारा सर्वेक्षण दल गठित कर जिले का खैरागढ़, छोंगरगढ़, छुईखदान एवं अन्य तहसीलों के अंतर्गत अनेक कला केन्द्रों का सर्वेक्षण कराया गया सर्वेक्षण दल ने इस दिशा में सराहनीय कार्य किया, विवेचन पुरातात्विक सर्वेक्षण के फलस्वरुप कई कला केन्द्रों से विविध देवी-देवताओं की पाषाण कलाकृतियॉ तथा स्थापत खंडों की नवीन जानकारी प्राप्त हुई, इनके छायाचित्रों सहित विस्तृत विवरण संकलित कर जिला कलेक्टर के माध्यम से संचालनालय संस्कृति एवं पुरातत्व छ.ग. शासन को प्रेषित किया गया। जिला पुरातत्व संघ ने आगामी कार्य-योजना के संबंध में पुरातत्व संघ को गतिशील बनाने की आवश्यकता पर बल दिया अर्थात् जिला पुरातत्व संघ निरंतर आपके उद्देश्य की प्राप्ति हेतु विकास के पथ पर अग्रसर है।

सुझाव - राजनांदगांव जिले के विभिन्न क्षेत्रो से उत्खनन में प्राप्त मूर्तियों, शिलालेख, अवशेषों तथा यत्र तत्र बिखरी हुई ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, पुरा संपदा को एकत्रित कर स्थान विशेष में संग्रहित करने उनके संरक्षण, संवर्धन, रख-रखाव में जिला प्रशासन द्वारा अनेक प्रयास किये जा रहे है उसके बाद भी इन बहुमूल्य एवं दुर्लभ कलाकृतियों के र्प्याप्त संवर्धन की दिशा से कार्य किये जाने की आवश्यकता है, जिससे यह जिला प्रदेश एवं राष्ट्रीय स्तर पर अपनी अलग पहचान बन सके इसके लिए सुझााव दिये जा रहे है।

1. संचालनालय संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग छ.ग. शासन रायपुर द्वारा विशेष रुप से निमित्त आर्थिक सहयोग उपलब्ध कराया जाना आवश्यक होगा।
2. पुरा सम्पदा के प्रति संगोष्ठी, परिचर्चा, मेले, प्रदर्शनी का आयोजन किया जाना ताकि लोगो को जानकारी हो सके।
3. इतिहास पुरातत्व साहित्य एवं संस्कृति से संबंधित आलेख, शोध, अनुसंधान कार्यो का समावेश के लिए प्रयास किये जाने चाहिए।
4. पुरा-संपदा (धरोहर) के संरक्षण की दिशा में जन-जागरण के लिए जन समितियों का गठन कर स्थानीय निकायों के साथ संबद्धता स्थापित कर जन सहभागिता स्थापित की जा सके तथा साहित्यकारों, आंचलिक पत्रकार बंधु, जनप्रतिनिधियों, प्रशासनिक अधिकारी तथा गणमान्य नागरिकों की सहभागिता नितांत आवश्यक है।

5. सभी पुरातात्विक, धार्मिक स्थलो को पर्यटन स्थल के रुप में पर्यटको के लिए विकसित कर इनका सौंदर्यीकरण किया जाना जिससे की पर्यटको का आकर्षण बढ़ सके।
6. जिला स्तर पर वृहत् संग्रहालय की स्थापना हो ताकि शोधार्थी जनमानस विशेषज्ञो द्धारा निरंतर अवलोकन अध्ययन की दिशा में पहल की जा सके तथा इनके ऐतिहासिक काल से अवगत हो सके।
7. संचार माध्यमों, दूरदर्शन, पत्रकारिता तथा अन्य माध्यमों में व्यापक प्रचार-प्रसार किया जाना सम-सामयिक होगा।

सारांश -राजनांदगांव जिले का अतीतकालीन सांस्कृतिक ऐतिहासिक, धार्मिक पुरा- संपदा समन्वय अपने समीपवर्ती जिलो के भोगोलिक परिवेश आर्थिक समृद्धि, कलात्मक अभिव्यक्ति भाषाई सन्निवेश के अंतसंवर्धनो को आत्मसाध करते हुए आदिवासी वनांचल क्षेत्र अपनी निजी पहचान रखती है, राजनांदगांव जिले के पुरातत्विय अवशोषो में स्मारक-स्थल एवं कलाकृतियॉ की बाहुलता है किन्तु इन ऐतिहासिक पुरा संपदा स्थलो की उपेक्षा और अव्यवस्था के चलते इन स्थलो स्मारको को पर्याप्त पहचान नही मिल पाई जबकि इनके सर्वांगीण विकास संरक्षण एवं संवर्धन की आवश्यकता को देखते हुए इनके नव निर्माण की दिशा में उचित कदम उठाते हुए इन्हे प्रमुख पर्यटन स्थल के रुप में विकसित कर नई पहचान दी जा सके यह कार्य जिला पुरातत्व संघ जन सभिागिता के माध्यम से पूरा करने में सतत् प्रयत्नशील रहा है। हम इन पुरा-संपदा से जिला ही नही बरन् छत्तीसगढ़ को राष्ट्रीय गौरव के रुप में तो स्थापित कर ही सकते है। साथ ही पर्यटन उद्योग की बेहतर संभावनाए भी तलाश सकते है इस दिश में कल्पना श्रम एवं प्रतिबद्धता की जरुरत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रशासकीय प्रतिवेदन पर्यटन विभाग 2018-19 छ.ग. शासन रायपुर।
2. छत्तीसगढ़ पर्यटन, दैनिक भास्कर 2001 प्रेस काम्पलेक्स रजबंधा मैदान जी.ई.रोड रायपुर।
3. सबका विकास सबका विश्वास छत्तीसगढ़ जन समर्थ विभाग रायपुर।
4. छत्तीसगढ़ का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास दिव्य प्रकाशन, कांकेर बस्तर।
5. जिला पुरातत्व संघ राजनांदगांव स्मारिका 2004 जिला प्रशासन, राजनांदगांव।
6. डॉ. द्धिजेन्द्र नाथ शुक्ल भारतीय स्थापत्य।
7. आर्ट ऑफ दि कल्चुरिज (कमिश्नर आर्कालांजी एण्ड म्युजियम) म.प्र. भोपाल।
8. डॉ. रामानाथ मित्र भारतीय मुर्तीकला।
9. संचालनालय संस्कृति एवं पुरातत्व छ.ग. शासन रायपुर।

****

Assessment on Video Display Terminal and Its Impact on Health on Users

Jyoti Wadhwa*

Introduction - In an age dominated by technology, computers have become most influential to keep pace with time and progress as it is a meta source. In the last few years, computers have come up into our lives in a big way. It began with work like railways reservation and desktop publishing, now we have Internet and E-mail. Today, no aspect like business, leisure, health education etc. Has been left untouched by the computer revolution. Even a child of 8-9 years is looking for net information just for completion of his/her school assignments. The increasing use of personal computers in homes has become an integral part of life.

India is a developing country and is trying to stand against unemployment and people are looking for white collar jobs as unemployed segment of people are mostly young and literate. It is an emerging field and is providing a wide variety Unemployment with positive social status. Therefore it is becoming a major attraction and attention catching aspect for them. The other important factor is liberalizing policy of government for electronics, science and technology. Now computers are easily accessible even to a middle class family. Not only banks and government office but private bodies, autonomous institutions and almost even organization are being computerized for smooth and faster flow of data and information.

As technology and increased productivity have demanded workers to spend more time on computers, there has been an increased frequency of ergonomic injuries and illness in the workplace. There is increasing research available that points to poor computer workstation design causing both physiological and psychological problems for the employees. This is a lot to draw attention to the dire need for conducting ergonomic studies on computer or VDT stations.

The increasing use of computer awareness and information technology is positive sign of glittering future but there is also a dark side of coin. People are spending many and many hours in front of computer screen. They are using fingers as mouse operating machine and even eyes as senseless mechanical device.

Review of Literature

Comprehensive review of literature is a must is any Research and endeavour as it provides a sound theoretical framework for Research and base for developing tool. It further provides insight into the method and procedures to be used to reach the objective of the research and finally to work out a basic for interpretation of findings.

Effect of faulty ergonomic parameters on VDT user health -Faulty ergonomics parameters result in various ill effect on health of computer users.These are posture and musculoskeletal problems, computer vision syndrome, carpal tunnel syndrome etc.

Grant et.(1995) conducted a search on preschool workers and indicated that back pain/discomfort was common musculoskeletal complaint reported by 61% of respondents. Neck and shoulder pain, lower extremity pain and hand/wrist pain were reported by 11% of the respondents. Modification of the work-place and changing the organisation for reducing or eliminating these risk was recommended in the study.

Computer vision syndrome - This is one of the most common complaints of people working with monitors. This problem is with eyes on vision. The Complaints include strain, burning sensation etc. Most of the problems are due to fatigue caused by combination of factors.

Hedge (1992) reported that in national survey, 85% of US workers used personal computers at work, 92% of work rated proper lighting as being very important but only 64% had proper lighting, 47% reported eye strain as a serious problem.

Ergonomic recommendation and their importance for computer users - It referred to the various recommendation made by different specialists after long experience and Research. By making use of these recommendation the users can avoid many health problems resulting from inappropriate V.D.T.workstation design.

Pheasent (1991) reported that people who work with computer have shown an increased output from 20 to 25% because of ergonomic improvement in workstation layout.

Rajabi- Vardanjani, Hassan; Habibi, Ehsanollah; Pourabdian, Siyamak; Dehghan, Habibollah; Maracy, Mohammad Reza (2014) Background: along with the rapid growth of technology its related tools such as computer, monitors and video display terminals (VDTs) grow as well. Based on the studies, the most common complaint reported is of the VDT users. Methods: This study attempts to the design a proper tool to assess the visual fatigue of the VDT users.

*Assistant Professor, Shri Aatm Vallabh Jain College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Giahi, Omid; Shahmoradi, Behzad; Barkhordari, Abdullah; khoubi, Jamshid(2015) Visual Display Terminals(VDTs) are equipments in many workplaces which their use may increase the risk of visual, muscoskeletal and mental problems including insomnia. To determine the relationship between duration of daily VDT use and insomnia among the Iranian bank tellers. We randomly selected 382 banks tellers working with VDT. Quality of sleep and stress information were selected by Athens insomnia scales(AIS) and Demand-control model (DCM) model respectively. Out of 382 participants 127(33.2%) had sleep complaints and 255 (66.8%) had no sleep disorders.

Thus, on the basis of comprehensive review on literature it can be concluded that computer is a marvelous tool and the only solution to the information need. Now these days increasing use of it has given rise to many health related issues like occupation overuse syndrome, straight spine syndrome, repetitive strain injuries and cumulative trauma disorders.

Objective of Studies :

1. To access the workstation design of video display terminals(VDT) in selected organizations as per principles of ergonomics related to human and machine interface.
2. To take feedback of computer workers on health problems related to VDT workstation design.
3. To suggest ergonomic guidelines for efficient work station design layout for VDT users.

Results and Discussions

Impact of VDT workstation design on health of users - The section deals with the health problems and musculoskeletal disorders of computers user working on computer for longer hours is one of the most important factors responsible for musculoskeletal problems. The computers user is constrained to remain in the same position for extended period of time, with repetitive small moments of the eyes, head, arms and fingers.

Table extrapolates the various health problems experienced by VDT workers as a result of working on computers. It was elicited that a roaring majority of respondents experienced eye related trouble viz. Strain, itching, burning or irritation in eyes which can be attributed to long hours of continuous work and insufficient or in appropriate light source resulting in glare or reflection on computer screen. This was supported by response of 26 per cent of respondents that they 'always' suffered from glare on the screen.

A vast majority (86%) reported that they suffered from shoulder pain and headache as a result of working on computer. A high majority that is 83% felt discomfort while working on computers white 76.6 percent felt mental stress and equal person suffer from back pain and 66.7% got body pain after computer work. More than half of the respondents felt muscular fatigue while about 50% got intense pain in wrist. These health problems are attributed to mismatch between human machine interface and long hour working on computer. Though the intensity of these have problem concentrated between 'some time to often' category. Through interaction of Investigators with respondents it emerged that VDT users were not very conscious and sensitized to the causes of their health problems which were due to design of their workstation which in long run might result into serious health problems.

Summary and Conclusion - In an age dominated by technology, computer have become most influential to keep pace with time and progress as it is a meta source. Today no aspect like Business and leisure health education etc has been left untouched by the computer Revolution. Not only banks and government offices, private bodies, autonomous Institutions and almost every organisation are being computerized for smooth and faster flow of data and information. As technology and increased productivity have demanded workers to spend more time on computers, there has been an increased frequency of ergonomic injuries and illnesses in the place. There is increasing research available that points to poor computer workstation design causing both the physiological and psychological problem for the employees. Numerous operator complaints of a wide range of symptoms including headache, eye strain and other visual/musculo-skeleton problems.

Thus, assessment of computer workstation design elicited that there were shortcoming/limitations pertaining various parameters under study which resulted in many health problems experienced by VDT users. Moreover, it was seen that 90% of the VDT workstation design fall in 'average' category based on scoring in various parameters. This indicated that there was a lot of scope and need for improvement in the workstation layout on economic parameters for improving health and efficiency of VDT users. With the aim a set of ergonomics guidelines for efficient VDT workstation design was suggested by the investigators.

References :-

1. Anonymous (1999) . www.pesil.com<instruction manual>
2. Anabel(2001). www.eye2eye.com<f.about.htm/>
3. Ashok (2001). Netra Chikitsa parishisht. Danik bhaskar, 11 April,p4.
4. Banks, Kuldeep (2001). Take the pain out of computer. The Turbine 18 June.
5. Belge and krieger (2000) occupational health and safety. National safety Council USA 285-289.
6. Bergqvist, U.(1995) visual display terminal work a prospective on long-term changes and discomforts. International journal of industrial ergonomics 16:201-209.
7. Braganza (1994)ergonomic process management edited by James P kohn, CSP.CIH CPE East Carolina University p 74-76.
8. Chapin and Anderson .G. occupational biomechanics John wiley & sons New York,p 254-260.
9. Rajabi- Vardanjani, Hassan; Habibi, Ehsanollah; Pourabdian, Siyamak; Dehghan, Habibollah; Maracy, Mohammad Reza (2014) .
10. Giahi, Omid; Shahmoradi, Behzad; Barkhordari, Abdullah; khoubi, Jamshid(2015).

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

मुरादाबाद मण्डल में प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा की स्थिति: एक अध्ययन

डॉ. अनुराग यादव*

शोध सारांश – स्त्री का किसी भी देश की प्रगति में प्रमुखस्थान होता है। स्त्री का स्वास्थ्य, साक्षर व अग्रसर होना किसी भी सभ्य समाज के लिए परमावश्यक है। स्त्री का शिक्षित होना समाज के हर अंग को प्रभावित करता है। चाहे वह विकास हो या विनाश। प्रस्तुत शोध **'मुरादाबाद मण्डल में प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा की स्थिति: एक अध्ययन'** में प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा की स्थिति, प्राथमिक शिक्षा में प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा में आने वाली समस्याओं का अध्ययन व बालिका शिक्षा के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रहीं योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन तथाबालिका शिक्षा में सुधार हेतु सुझाव का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र अध्ययन में मुरदाबाद मण्डल के पांच जिलों मुरादाबाद, रामपुर, बिजनौर, अमरोहा तथा संभल जनपदों के प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा से सम्बन्धित द्वितीय आंकड़ों का प्रयोग किया गया है।

प्रस्तावना –शिक्षा को अपने आप में साध्य तथा अन्य वांछनीय लक्ष्यों की पूर्ति का साधन समझा जाता है। शिक्षा के कारण समाजीकरण की प्रक्रिया को गति मिलती है और समाज में गतिशीलता आती है। वैसे तो समाज के प्रत्येक व्यक्ति और वर्ग के लिए शिक्षा आवश्यक है लेकिन स्त्रियों के लिए शिक्षा का महत्व अत्याधिक है। शिक्षा एक ऐसा सशक्त माध्यम है जो नए सामज का सृजन करने के लिए स्त्रियों को सक्षम बनाती है। मनु ने मनुस्मृति में कहा है **'यत्र नार्मस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तब देवता:'** अर्थात देवगण ऐसे स्थान पर वास करते हैं जां स्त्रियों का सम्मान होता है।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री नेहरू के अनुसार 'एक पुरूष को शिक्षित करना एक व्यक्ति को शिक्षित करना है लेकिन एक महिला को शिक्षित करना एक परिवार को शिक्षित करना है।' राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के अनुसार 'लड़कियों को केवल इस वजह से शिक्षित करना महत्वपूर्ण नहीं है कि उन्हें सामाजिक न्याय मिल सके बल्कि वे समाज में बदलाव को गति प्रदान कर सके।'

किसी भी राष्ट्र की सामाजिक और आर्थिक विकास में स्त्रियों के विकास को नजर–अंदाज नहीं किया जा सकता है। स्त्री और पुरूष समाज के दो पहिये है जो समाज को प्रगति की ओर अग्रसर करते है। दोनों को समाज में समान भूमिका को देखते हुए ये आवश्यक है कि उन्हें शिक्षा तथा अन्य सभी क्षेत्रों में समान अवसर प्रदान किये जायें। क्योंकि यदि कोई भी एक पक्ष कमजोर होता है तो सामाजिक व आर्थिक प्रगति संभव नहीं है। भारत ने सभी को शिक्षा प्रदान के के लिए अपनी प्रतिबद्धता दिखाई है। बावजूद इसके भारत में महिला साक्षरता की दर काफी कम है। जनगणना 2011 के अनुसार 65.46 प्रतिशत महिलाएं ही साक्षर है। यदि भारत में जनसंख्या परिदृश्य पर एक नजर डालें तो ज्ञात होता है कि वर्ष 1951 में स्त्री साक्षरता 8.86 थी तथा वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार महिलासाक्षरता दर 65.46 प्रतिशत तक ही पहुंच पाई है। महिला साक्षरता दर में उल्लेखनीय वृद्धि की है। परन्तु पुरूष साक्षरता दर की तुलना में 16.68 प्रतिशत कम है।

संख्या– 1

भारत में साक्षरता दर (प्रतिशत में) (1951–2011)

वर्ष	पुरूष	महिला	कुल	अन्तर
1951	27.16	8.86	18.33	18.30
1961	40.4	15.35	28.3	25.05
1971	45.96	21.97	34.45	23.98
1981	56.38	29.76	43.57	26.62
1991	64.13	39.29	52.21	24.62
2001	75.26	53.67	6483	21.59
2011	82.14	65.46	74.04	16.68

स्रोत: भारत की जनगणना 2011

2011 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता की दृष्टि से उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, जम्मू कशमीर, अरूणाचंल प्रदेश, राजस्थान, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ जैसे बड़े एवं महत्वपूर्ण राज्य तथा दादर तथानागर हवेली संघीय प्रदेश काफी पिछड़े हुए है। इसनिम्न स्तरीय साक्षरता का नकारात्मक प्रभाव सिर्फ महिलाओं के जीवन स्तर पर नहीं बल्कि उनके परविार एवं देश के आर्थिक विकास पर भी पड़ता है। महिला की निरक्षरकता का प्रभाव उनके बच्चों के स्वास्थ्य पर भी पड़ता है। जो कि देश के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते है। प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा और अधिक महत्वपूर्ण होती है और वह उसके भविष्य के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति में प्राथमिक शिक्षा महत्वपूर्ण है। क्योकि वह भविष्य की पीढ़ियों का निर्माण करती है। प्राथमिक स्तर से ही शिक्षा पर ध्यान देकर हम शिक्षित समाज और आदर्श राष्ट्र की ओर अग्रसर होने का प्रयास कर सकते हैं। इस स्तर पर जीवन के विकास की आधारशिला रखी जाती है। प्राथमिक शिक्षा देश की भावी पीढ़ी को ज्ञान प्रदान करने तथा उसके चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है।

यूनिसेफ की एक रिपोर्ट के अनुसार बच्चों की संख्या भारत में विश्व में सबसे अधिक है। विश्व में 12 करोड़ बच्चे स्कूल नहीं जाते है। जिनमें से अधिकांशत: केवल बालिकाएं है। भारत में 6 से 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चें की संख्या 37.5 करोड़ है जिसमें से 3 करोड़ बच्चे अभी स्कूल नहीं नहीं जा पाते हैं।

* असि. प्रोफेसर (बी0एड0 विभाग) अब्दुल रज्जाक डिग्री कालेज, जोया अमरोहा (उ.प्र.) भारत

उद्देश्य :

1. प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा से सम्बन्धित सरकार द्वारा संचालित योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा की स्थिति का अध्ययन करना।
3. प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा में सुधार हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध समस्या का सीमांकन-प्रस्तुत शोध पत्र मे मुरादाबाद मण्डल के 5 जनपदो से सीमित है प्रस्तुत शोधपत्र में प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा से सम्बन्धित द्वितीय आंकडों का विश्लेषण एवं विवेचना की गई है।

विश्लेषण एवं विवेचना - प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा से सम्बन्धित सरकार द्वारा संचालित योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।

- **सर्वशिक्षा अभियान** - यह कार्यक्रम 2001 में शुरू किया गया था यह भारत की सबसे बडी परियोजना में से एक है। यह पूरे देश में समान रूप से लागू किया गया है और राज्य सरकारों के साथ साझेदारी में काम करता है। इसमें सभी सामाजिक वर्गो के 6 से 14 आयु वर्ग के बच्चों को शामिल किया गया है। इस कार्यक्रम के निम्न उद्देश्य है।

1. जो बालिकाएं किसी भी विद्यालय में नहीं पढ़ रही हैं उन्हें नजदीकी विद्यालय में प्रवेश दिलाना।
2. बलिका के नामांकन, उपस्थिति तथा शैक्षिणक उपलब्धियों का सतत रूप मूल्यांकन करना।
3. नियमित रूप से विद्यालय न आने वाली बालिकाओं को चिन्हित करना तथा उन्हें विद्यालय आने व उनके अभिभावकों को अपनी बालिकाओं को विद्यालय भेजने के लिए प्रेरित करना।सर्वशिक्षा अभियान से बालिका शिक्षा के विकास में वृद्धि हुई है। सर्वशिक्षा अभियान में नामांकन और प्रवेश प्रक्रिया में सुधार के साथ ही बालिकाओं की शिक्षा पर अधिक बल दिया जा रहा है।

- **बालिकाओं को प्राथमिक शिक्षा देने के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम**- इस कार्यक्रम को जुलाई 2003 में शुरू किया गया। इस कार्यक्रम का प्रारम्भ उन बालिकाओं के लिए किया गया जिनका नामांकन किसी भी विद्यालय में नहीं हुआ है। यह कार्यक्रम एसएसए का एक महत्वपूर्ण घटक है। यह कार्यक्रम बालिकाओं की शिक्षा में सुधार के लिए अतिरिक्त सहायता प्रदान करता है और यह सुनिश्चित् करता है कि बालिकाओं को प्राथमिक स्तर पर एक अच्छी शिक्षा मिले।
- **मध्यान्ह भोजन योजना** - इस योजना को 1995 में प्राथमिक स्तर में पढ़ने वाले बच्चों को पौष्टिक मध्यान्ह भोजन प्रदान करने के लिए शुरू किया गया था। इस योजना का उद्देश्य विद़्यालयों में बच्चें की उपस्थिति और नामांकन में वृद्धि करना था तथा सभी जातियों और धर्मो के बच्चों के मध्य परस्पर सम्बन्ध तथा सद्भाव में सुधार करना भी है। यह योजना प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं में नामांकन में वृद्धि तथा उनके पोषण में सुधार के साथ उन्हें भावानात्मक और सामाजिक रूप से विकसित करने में सहायता प्रदान करती है।
- **शिक्षा का अधिकार अधिनियम** - शिक्षा का अधिकार अधिनियम अप्रैल 2010 में लागू किया गया था। इस अधिनियम से 6 से 14 साल के प्रत्येक बच्चे के लिए शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया गया। शिक्षा का अधिकार कानून लागू होने से 6 से 14वर्ष तक के बच्चों को न स्कूल फीस देनी होगी, न ही यूनिफार्म, बुक, ट्रांसपोरेशन या आदि पर खर्च करना होगा तथा इसके अन्तर्गत आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के बच्चों के लिए निजी स्कूलों में 25 प्रतिशत आरक्षण अनिवार्य कर दिया गया है।
- **बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ** - यह योजना केन्द्र सरकार द्वारा 2015 में शुरू की गयी।इस योजना का मुख्य उद्देश्य कन्या भ्रूण हत्या की रोकथाम और बालिकाओं की सुरक्षा कर उनकी सहायता प्रदान करना था। यह योजना बालिकाओं की सुरक्षा और उनके अस्तित्व को सुनिश्चित् करती है और यह तय करती है कि बालिकाएं बालकों के साथ सभी शैक्षिक गतिविधियों में भाग लें और उनके साथ किसी भी प्रकार का कोई भेदभाव न हो।
- **कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय** - कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना 2004 में शुरू की गयी। यह योजना गरीबी रेखा से नीचे आने वाले परिवारों की बालिकाओं को 25 प्रतिशत और एस.सी./एस.टी., ओ.बी.सी. और अन्य अल्पसंख्यक समुदायों की बालिकाओं को 75 प्रतिशत आरक्षण प्रदान करती है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य है कि आवासीय विद्यालयों की स्थापना द्वारा समाज में वंचित समुहों की बालिकायें भी गुणवत्तायुक्त शिक्ष प्राप्त कर सकती हैं।

2. प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा की स्थिति

सारिणी संख्या-2 : भारत में प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं के नामांकन की स्थिति

	2005-06	2009-10	2013-14
प्राथमिक स्तर	47.8	48.5	48.7
उच्च प्राथमिक स्तर	45.8	48.1	48.7

प्राथमिक स्तर पर भारत में वर्ष 2005-06 में बालिकाओं के नमाांकन का प्रतिशत 47.8 था जो कि वर्ष 2013 में यह प्रतिशत बढ़कर 48.7 हो गया। वर्ष 2005-06 में उच्च प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं के नमाांकन का प्रतिशत 45.8 था जो कि वर्ष 2013-14 में बढ़कर 48.7 हो गया। वर्ष 2013-14 में प्राथमिक व उच्च प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं का नामांकन बराबर है।

अध्ययन क्षेत्र मुरादाबाद मण्डल में प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं के नामांकन को सारिणी संख्या-3 में प्रदर्शित किया गया है-

सारिणी संख्या-3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सारिणी 3 पर दृष्टिपात करें तो स्पष्ट होता है कि मुरादाबाद मण्डल में प्राथमिक स्तर पर जनपदवार बालिकाओं के नमाांकन में भिन्नता लिए हुए है। अध्ययनक्षेत्र में वर्ष 2011-12 में सर्वाधिक बालिकाएं 47.89 प्रतिशत बिजनौर जनपद में जबकि सबसे कम बालिकाएं 42.2 प्रतिशत अमरोहा जनपद में है। वर्ष 2014-15 में अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक बालिकाएं 49.18 प्रतिशत रामपुर जनपद में जबकि सबसे कम बालिकाएं 42.45 प्रतिशत अमरोहा जनपद में है। मुरादाबाद मण्डल में वर्ष 2011-12 से 2014-15 तक प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं के नामांकन की स्थिति पर दृष्टिपात करें तो पांचों जनपदों में बालिकाओं के नामांकन में किंचित वृद्धि देखने को मिलती है।

उच्च प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं के नामांकन की स्थिति को अग्रसारिणी में दर्शाया गया है-

सारिणी संख्या-4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सारिणी संख्या 4 पर दृष्टिपात करें तो स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में वर्ष 2011-12 से वर्ष 2014-15 तक प्राथमिक स्तर पर जनपद मुरादाबाद व रामपुर में बालिकाओं के नमाांकन में वृद्धि देखने को मिलती है। जबकि बिजनौर, अमरोहा तथा सम्भल जनपदों में बालिकाओं के नामांकन में कमी देखने को मिलती है।

4. प्राथमिक स्तर बालिका शिक्षा में सुधार हेतु सुझाव:

1. शैक्षिक अवसरों की समानता स्थापित करने के लिए विशेष प्रयास किये जायें बालक और बालिकाओं का शिक्षा के समान अवसर प्रदान किये जायें तथा उनके साथ किसी भी तरह का लैगिक भेदभाव न किया जाये।
2. बालिकाओं की शिक्षा के प्रति समाज में उचित दृष्टिकोण विकसित किया जाये इसके लिए विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रमों, शिक्षा आंदोलन, प्रौढ शिक्षा का प्रसार व जन संचार के साधनों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
3. बालिकाओं की संख्या के आधार पर बालिका विद्यालयों की स्थापना कीजाये। जिससे वह अभिभावक जो सहशिक्षा पसन्द नहीं करते वह भी अपनी बालिकाओं को विद्यालय भेज सकें।
4. सह शिक्षा वाले विद्यालयों में महिला अध्यापिकाओं की नियुक्ति की जानी चाहिए। जिससे बालिकाओं में अधिक विश्वास की भावना उत्पन्न होती हो और अभिभावक बालिकाओं को स्कूल भेजने के लिए प्रेरित हों।
5. सह शिक्षा विद्यालयों में लड़कियों की दैनिक जीवन की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए तथा इसके लिए बुनियादी संरचना का विकास किया जाना चाहिए।
6. पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सुधार किया जाना चाहिए। इसमें खेलकूद, गर्ल्स गाइडिंग, अभिनय समाज सेवा आदि की व्यवस्था हो ताकि बालिकायें भी बालकों के समान पाठ्य सहग्रामी क्रिया कलाओं में भाग ले सके।
7. सरकार द्वारा बालिकाओं की शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए अलग से धन की व्यवस्था करनी चाहिए। जिसे केवल बालिकाओं की शिक्षा पर व्यय किया जाये।
8. विद्यालयों में माता-पिता, अध्यापक संगठन स्थापित किये जाने चाहिए। इससे समाज और स्कूल का सीधा सम्बन्ध स्थापित हो सकेगा।यह बालिका शिक्षा को बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

निष्कर्ष - साक्षरता एवं नामांकन से सम्बन्धित विभिन्न आंकड़ों से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राथमिक स्तर पर लिंग के आधारित भेदभाव धीरे-धीरे कम हो रहा है तथा बालिका शिक्षा में वृद्धि हो रही है। लेकिन बालिका शिक्षा में हुई यह वृद्धि उत्साहजनक नही है क्योंकि जनसंख्या के हिसाब से बालिका शिक्षा अभी भी कम है। भारत के कुछ राज्यों में बालिका शिक्षा की स्थिति बहुत दयनीय स्थिति में है। बालिका शिक्षा के लिए समाज तथा सरकार के स्तर पर और अधिक प्रयास करने होंगे। जिससे बालिका शिक्षा में वृद्धि हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत की जनगणना 2011
2. सांख्यिकीय पत्रिका मण्डल मुरादाबाद।
3. नॉमस पी0 (1964) युगों से भारतीय महिलायें एशिया पब्लिशिंग हाउस मुम्बई।
4. प्राथमिक शिक्षक, शैक्षिक संवाद की पब्लिकेशन्स सर्व शिक्षा अभियान और बालिका शिक्षा: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद नई दिल्ली।
5. त्रिपाठी, मधुसूदन (2006) बालिका शिक्षा, विद्यावती प्रकाशन नई दिल्ली।

सारिणी संख्या-3 : मुरादाबाद मण्डल: जनपदवार प्राथमिक स्तर पर कक्षा 1-5 बालिकाओं के नामांकन की स्थिति (2011-12 से 2014-2015)

जनपद	2011-12			2012-13			2014-15		
	कुल विद्यार्थी	बालिकाएं	बलिकाओं का प्रतिशत	कुल विद्यार्थी	बालिकाएं	बलिकाओं का प्रतिशत	कुल विद्यार्थी	बालिकाएं	बलिकाओं का प्रतिशत
बिजनौर	427530	204755	47.89	422978	207003	48.93	381247	184334	48.35
मुरादाबाद	443944	209400	47.16	451777	215259	47.64	717027	343640	47.92
रामपुर	274048	129949	47.41	236013	102582	43.46	401751	197598	49.18
अमरोहा	330416	138873	42.02	330676	139075	42.05	337227	143173	42.45
सम्भल	346187	158081	45.66	349143	159396	45.65	198494	93488	47.09

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका मण्डल मुरादाबाद वर्ष 2013 व वर्ष 2015 तालिका 40 से संकलित

सारिणी संख्या-4 : मुरादाबाद मण्डल: जनपदवाद उच्च प्राथमिक स्तर पर कक्षा 6-8 बालिकाओं के नामांकन की स्थिति (2011-12 से 2014-2015)

जनपद	2011-12			2012-13			2014-15		
	कुल विद्यार्थी	बालिकाएं	बलिकाओं का प्रतिशत	कुल विद्यार्थी	बालिकाएं	बलिकाओं का प्रतिशत	कुल विद्यार्थी	बालिकाएं	बलिकाओं का प्रतिशत
बिजनौर	220851	104973	47.53	232466	110276	47.43	226274	101028	44.64
मुरादाबाद	156218	76268	48.80	166130	81833	49.25	2017.78	148569	49.23
रामपुर	86518	42419	49.02	142988	73913	51.69	113100	57357	50.71
अमरोहा	110968	50392	45.41	111366	50749	45.50	115566	51130	42.24
सम्भल	103532	47114	45.50	101645	47458	46.68	65524	29798	45.47

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका मण्डल मुरादाबाद वर्ष 2013 व वर्ष 2015 तालिका 40 से संकलित

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

नेहरू और कृषि

डॉ. जोगेन्द्र सिंह*

शोध सारांश – पंडित जवाहरलाल नेहरू उन महान व्यक्तियों में हैं जिनका आधुनिक भारत के निर्माण में अद्वितीय योगदान रहा। नेहरू की आर्थिक विचारधारा और नीतियां भारतवर्ष की परिस्थितियों यथा गरीबी, निरक्षरता आदि के परिप्रेक्ष्य में हुई थी। इसलिए पंडित नेहरू ने इन समस्याओं का निराकरण वैज्ञानिक एवं समाजवादी ढंग से किया। नेहरू जी ने एक आर्थिक दर्शन दिया। भारतवर्ष को नियोजित विकास की दिशा में अग्रसर करने के लिए देश-विदेश की अर्थव्यवस्थाओं के सूक्ष्म अध्ययन, भारतीय जनता के मनोविज्ञान, संस्कार, विश्वास को ध्यान में रखकर एक खाका अपने मन में बनाया। जवाहर लाल नेहरू मूलत: अर्थशास्त्री नहीं थे फिर भी भारत की आर्थिक प्रगति एवं विकास में उनका योगदान महत्वपूर्ण है। वह जानते थे कि भारत एक कृषि प्रधान देश है इसलिए कृषि की उन्नति के बिना देश तरक्की नहीं कर सकता।

प्रस्तावना – किसी भी देश की प्रगति विकास एवं समृद्धि के पीछे श्रम और कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जिस प्रकार श्रम द्वारा देश को मजबूत बनाया जाता है उसी प्रकार कृषि देश की जड़ों को मजबूत करती है। जिन देशों में श्रम एवं कृषि की पूजा हुई है वे देश विकास के मार्ग पर तेजी से चलते चले गए। कृषि के क्षेत्र में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने जो कार्यकुशलता दिखाई उसके परिणाम आज भारत में चारों ओर दिखाई दे रहे हैं। हरित क्रान्ति, श्वेत क्रान्ति ने भारत को संसार के महान देशों में लाकर खड़ा कर दिया है।

'भारत एक कृषि प्रधान देश है भारत के जिन नायकों ने कृषि को आधुनिक बनाने के लिए कदम उठाए थे उनमें पंडित जवाहरलाल नेहरू का नाम सर्वोपरि है।'[1] उन्होंने भारत का भविष्य कृषि की मजबूत स्थिति के बीच देखा था। जवाहरलाल नेहरू कृषि के विकास के लिए उतने ही सजग थे जितना उन्हें भारी उद्योगों के लिए माना जाता है। उनका कहना था कि यदि हमने कृषि के विकास को पीछे छोड़ दिया तो देश पिछड़ जाएगा। भारत के लिए चिंता का कारण यह था कि भारत कृषि प्रधान देश कहलाता है लेकिन दुर्भाग्यवश वह अपनी आबादी के लिए पर्याप्त अन्न पैदा नहीं कर पा रहा था।

'कृषि विकास में जवाहरलाल नेहरू के विचार प्रसिद्ध अर्थशास्त्री लेविस के 'प्रेरणा द्वारा नियोजन' लेख से मेल खाते हैं। उनका विचार था कि भारत जैसे विशाल कृषि प्रधान देश में सरकार का पहला कदम भूमि सम्बन्धी सुधारों का है। यह कदम जमीदारी उन्मूलन के लिए है। दूसरा कदम कृषि में मशीनीकरण को महत्व देना है। कृषि से अधिक उत्पादन के लिए और कृषि को व्यवसाय बनाने के लिए कृषि उपकरणों का अधिक से अधिक प्रयोग करने पर बल दिया।'[2] उन्होंने वैज्ञानिकों को दिशा निर्देश दिए कि वे नए कृषि यन्त्र, उन्नत किस्म के बीज तथा उर्वरक बनाने पर ध्यान केन्द्रित करें जिससे उत्पादन बढ़ सके। भारत में अधिकतर ग्रामीण जनता के विकास और उन्नति के लिए उन्होंने बहुउद्देशीय सरकारी समितियां खोलने का सुझाव दिया। जवाहर लाल नेहरू के सहकारिता सिद्धान्त की जबर्दस्त आलोचना हुई लेकिन कृषि के विकास के लिए उन्हें बहुत सफलता मिली।

'सन 1920 के पहले जवाहर लाल नेहरू किसानों के सम्पर्क में नहीं आए थे। सर्वप्रथम चंपारण और खेड़ा सत्याग्रह के समय उनका ध्यान किसानों की ओर आकर्षित हुआ जिसके कारण वे किसानों के आर्थिक सुधार कार्यक्रम और कृषि के विकास के संदर्भ में दिलचस्पी लेने लगे।'[3] किसानों के निकट आना उनकी समस्याओं का समाधान करना तथा भारत में कृषि की ठोस नीव रखना नेहरू के लिए संयोग की बात नहीं थी, उन्होंने स्वयं मेरी कहानी में **'मेरा निर्वासन और किसानों में भ्रमण'** नामक अध्याय में वर्णन किया है। नेहरू का किसानों के प्रति कितना लगावा था, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि वे किसानों के आग्रह करने पर तुरन्त उनके साथ जाने को तैयार रहते थे।'[4] गाँव-गाँव घूमकर पंडित जवाहरलाल नेहरू ने किसानों की समस्याएं देखी, उनकी झोपड़ियों में ठहरे तथा घंटो बातें की।

'नेहरू ने किसानों और कृषि के लिए जो सुधारात्मक कार्य किए उनमें मुख्य रूप से जमीदारी प्रथा का अन्त था। जमीदार प्रजा एवं किसानों का शोषण करते थे उनसे बेगार वसूलते थे और उनके कठोर परिश्रम का हिस्सा हड़प लेते थे। उन्होंने जमींदारी प्रथा को समाप्त कर जमीन का वास्तविक हक किसानों को दिलवाया एवं किसानों को ऐसे संसाधनों का उपयोग करने को कहा जिससे अधिकाधिक उत्पादन हो।'[5]

नेहरू ने भारत में कृषि को आधुनिक बनाने और उसके द्वारा अधिक उत्पादन के लिए रासायनिक खादों के प्रयोग पर बल दिया। 'संविधान लागू होते ही पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 1950 में योजना आयोग का गठन किया। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि के पुनर्निर्माण के लिए नेहरू ने सामुदायिक योजनाओं के प्रारंभ करने पर जोर दिया।'[6] प्रथम पंचवर्षीय योजना में उनका ध्यान गांव, किसानों और कृषि की तरफ आकर्षित हुआ। उनका कहना था कि भारत का भविष्य भी कृषि अर्थव्यवस्था पर निर्भर करेगा। किसान देश की आत्मा है और आत्मा के बिना शरीर मृत समान है। कृषि प्रधान होने के कारण यहां औसत आय तभी बढ़ेगी जब खेती का उत्पादन बढ़ेगा।

'नेहरू ने किसानों को आधुनिक कृषि उपकरणों के प्रयोग करने पर बल दिया। उन्होंने किसानों से कहा था कि हर युग का अपना अलग धर्म होता है यदि आप उस युग के धर्म का पालन नहीं करते हैं तो आप कमजोर हो जायेगें और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ जाएंगे। कृषि हमारी प्रत्येक समस्याओं का समाधान कर सकती है भले ही समस्या भूख, गरीबी, या अंधविश्वास से ही क्यों न सम्बन्धित हो। उन्होंने अपने कार्यकाल में श्रेष्ठ

* असिस्टेट प्रोफेसर (इतिहास विभाग) अब्दुल रज्जाक (पी0जी0) कॉलिज, जोया अमरोहा (उ.प्र.) भारत

किसानों को सम्मानित करने के लिए **'कृषि पंडित'** जैसी उपाधियां देने की परम्परा शुरू की। राज्यों को कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए **'विजय कलश'** दिए जाने लगे।'[7]

पंडित नेहरू के द्वारा कृषि की ठोस नींव रखने के कारण आज भारत का नाम कृषि क्रान्ति करने वाले देशों की श्रेणी में रखा जाता है। उन्होंने कृषि के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाओं को माध्यम बनाया और कृषि विकास के प्रत्येक क्षेत्र में उन सभी प्रभावशाली तरीकों को अपनाया।

'वास्तव में आजादी से पहले ही नेहरू के मन में एक सपना चल रहा था कि भारत का कोई भी निवासी भूखा ना रहे। प्रत्येक मेंहनत मजदूरी करने वाले को 2400-2800 कैलोरी वाला भोजन मिले, प्रत्येक आदमी को हर साल 30 गज कपड़ा एवं एक परिवार को कम से कम 100 वर्ग फुट प्रति व्यक्ति की दर से घर बनाने के लिए जमीन मिले, स्वास्थ्य के लिए भी 1000 की आबादी के लिए कम से कम एक डॉक्टर एवं डिस्पेन्सरी अवश्य हो। 18 जनवरी 1948 को आकाशवाणी से प्रसारित संदेश में उन्होंने अन्न उपजाओ कार्यक्रम की घोषणा करते हुए कहा था: दर असल एक भूखे इंसान के लिए या एक गरीब मुल्क के लिए आजादी का कोई मतलब नहीं रह जाता जब तक उसके पास बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करने का साधन न हो इसलिए हमें भारत के लोगों की प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कृषि पर ध्यान देकर अनाज उत्पादन को अधिक बढ़ाना चाहिए।'[8]

आज हमारे देश में लगभग 26 कृषि विश्वविद्यालय हैं। देश का पहला कृषि विश्वविद्यालय उत्तराखण्ड के नैनीताल जिले के पंतनगर में खोला गया था। 'उन्होंने विश्वविद्यालय के बारे में कहा कि यह किसानों के घर जैसा होना चाहिए।'[9] खेती में पैदावार बढ़ाने के लिए उन्होंने बड़ी बड़ी सिंचाई परियोजनाओं की नींव रखी तथा दूसरी ओर रासायनिक खाद के कारखाने खोलने को भी वरीयता दी। भाखड़ा नांगल बांध, गांधी सागर, गंडक, कोसी, नागार्जुन सागर, हीराकुण्ड, तुंगभद्रा, घटप्रभा बांध जैसी विशाल सिंचाई परियोजनाओं ने 'हर खेती को पानी हो' के सपने को पूरा किया उसी के कारण आज हम इतना बड़ा सपना देखने की हिम्मत कर सके।

नेहरू ने औद्योगिकीकरण को बढ़ावा देने के साथ साथ कृषि की कभी उपेक्षा नहीं की। उनका कहना था कि कृषि औद्योगिकी का आधार है और इस पर उद्योगों का भविष्य निर्भर करता है। अच्छी कृषि के लिए आज बिजली, मशीन, रासायनिक खाद तथा आधुनिक कृषि यंत्रों की आवश्यकता है। इसलिए कृषि व उद्योग में चोली दामन का साथ है। सिंदरी में रसायनिक खाद का पहला कारखाना पंडित नेहरू के प्रयासों से ही खुला था। किसानों को नई जानकारी देने के लिए उन्होंने आकाशवाणी पर कृषि कार्यक्रमों को प्रसारित करने की नींव रखी तथा कृषि मेलों का आयोजन कराया।

'कृषि में सहकारी आन्दोलन भी नेहरू की देन मानी जाती है। नेहरू ने ऐतिहासिक भाषण में कहा था कि 'बाकी सब रूक सकता है मगर खेती नहीं।' सब कुछ इंतजार कर सकता है मगर कृषि नहीं। इसलिए नेहरू ने कृषि अनुसंधान के लिए राष्ट्रीय संस्थान खोलने को वरीयता दी।'[10] अधिक उत्पादन के लिए नेहरू जानते थे कि खेती भी वैज्ञानिक तरीके से करनी होगी यह नेहरू की ही देन थी कि आज भारत नाईट्रोजन व फास्फोरस से बनी रसायनिक खादों के उत्पादन में आत्म निर्भरता के मार्ग पर अग्रसर हो गया है। नेहरू ने सत्तारूढ़ होते ही भारत के माथे से इस कलंक को धो दिया कि वह एक भिखारी व गरीब लोगों का देश है जो हर देश से खाद्यान्न मंगाता है। नेहरू द्वारा देश को अनेक परिसम्पत्तियां मिली-

1. खाद्यान्न का भंडार, आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर देश।
2. रासायनिक खादों के उत्पादन में आत्मनिर्भर।
3. निरंतर विस्तृत हो रही सिंचाई व्यवस्था।
4. सामुदायिक विकास तथा पंचायती राज की संरचना।

नेहरू जी ने कृषि अर्थव्यवस्था क ऐसा आधार बनाया था कि वह अपने आप विकसित हो सके और प्रगति कर सकें। उनके प्रयासों से ही भारत कृषि से उत्पन्न होने वाले माल का दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक देश बन गया। ग्रामीण कृषि अर्थव्यवस्था की दिशा में उनका महत्वूपर्ण कदम सहकारी खेती को प्रोत्साहन देना था उनका विचार था छोटे-छोटे खेत अन-आर्थिक हैं तथा इन पर कृषि की वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रयोग नहीं किया जा सकता।'[11] उनका कहना था कि भारत की भूमि समस्या का सहकारी खेती से सुंदर हाल हो ही नहीं सकता। खेती पर कार्य करने वाला व्यक्ति ग्राम में सबसे बड़ी मशीन है। यदि भारत में खेती में मशीन का प्रयोग किया जाए तो श्रम शक्ति का क्या होगा? इसलिए जब तक उद्योग में पूर्ण उपयोग के लिए हम उपयुक्त औद्योगिक ढांचा तैयार नहीं कर ले तब तक कृषि का मशीनीकरण लाभप्रद नहीं होगा। सहकारी खेती ही भारत की तमाम आर्थिक समस्याओं का हल हो सकती है इससे उत्पदन और अधिक बढ़ सकता है। पंडित नेहरू ने सदैव किसानों के हित की बात कही थी। उन्होंने भारत में जो हरित क्रांति का सपना देखा था वह आज पूरा होने के कगार पर है उन्होंने भारत के किसानों को आत्मनिर्भर बनाने और कृषि के विकास पर बल दिया। आज भारत खाद्यान्न में आत्मनिर्भर है और देशों की खाद्य जरूरतें भी पूरी कर रहा है इसका श्रेय पंडित नेहरू जी को ही जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. शरद चंद्र जैन, नेहरू ही क्यों, किताब महल प्राईवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, 1963।
2. भारत (वार्षिक संदर्भ ग्रंथ) पब्लिक डिवीजन, मिनिस्ट्री ऑफ इंफॉर्मेशन एंड बॉडकास्टिंग, भारत सरकार नई दिल्ली, 1954।
3. शुकदेव प्रसाद, नेहरू और विज्ञान, पराग प्रकाशन दिल्ली, 1989।
4. रामबदन बरवां, आधुनिक कृषि के स्वप्न द्दष्टा, पराग प्रकाशन, शाहदरा दिल्ली 1989।
5. सुभाष कश्यप, जवाहरलाल नेहरू, जीवन कृति एवं कृतित्व, एस चंद कंपनी, रामनगर नई दिल्ली-1987।
6. सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल, मई 2005।
7. विज्ञान प्रगति, सिफर से शिखर तक, भारतीय विज्ञान के 60 वर्ष 2007।
8. रमेश दत्त शर्मा, नेहरू का स्वप्न हरित क्रान्ति पंडित जवाहरलाल नेहरू एक बहु आयामी व्यक्तित्व से उद्धृत 1962।
9. रतन लाल जोशी, नेहरू योजनाबद्ध आर्थिक विकास के जन्मदाता, कांग्रस वर्णिका, अकबर रोड नई दिल्ली, 1988।
10. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का चुनाव घोषणा पत्र 1962।
11. नीलरत्न धर, भूमि का सुधार नेहरू अभिनंदन ग्रंथ, आर्यव्रत प्रकाश ग्रह कोलकाता 1972।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

Growth of Decentralized Powerloom Sector in India

Yasmeen Bano* Dr. Arvind Prakash**

Abstract - The research paper entitled as "Growth of Decentralized Powerloom Sector in India" is focusing on the content relatively concern with growth in the powerloom sector, cloth production and Government Policy and schemes for supporting and promoting powerloom sector in India. The powerloom sector, which is decentralized, is one of the most important sectors in the Indian textile industry. In view of production and employment of powerloom sector in India, it provides around employment to 60.86 lacs persons and on the other side it contributes around 58.26 percent to total cloth production in India. Government of India, Ministry of Textiles is always trying to implement sound policies for the growth of powerloom sector.
Key Words - Decentralized powerloom sector, Government Policy and Scheme.

Introduction - The Indian Textile Industry plays vital role in economic life of the country. Such as contribution to industrial output, export and most important employment generation. There are approximately 5.38 lakh powerloom units with 24.34 lakh powerloom as on 30.11.214. The technology level of this sector varies from plain loom to high shuttleless looms. There are approximately 1.25 lakh shuttleless looms in this sector. It is estimated that more than 75 percent of the shuttle looms are absolute and outdated with a vintage of more than 15 years and have virtually no process or quality control devices / attachments. However, here has been significant up-gradation in the technology level of the powerloom sector during the last 7-8 years. More than 60 percent of cloth in India contributes to country's export. Now a days the powerloom sector have been recognized as a major sector in Indian textile industry. Government of India is taking initiative to promote various schemes for overall growth powerloom sector. Indian should be more on technological up gradation of powerloom sector with compare to other countries like U.S.A., China, Europe, Bangladesh, Taiwan etc.

Historical perspective of Textile Industry in India - The record of ancient and medieval Indian textile exists mostly in literature and sculpture. There is archaeological evidence of a cotton textile industry at Mohenjo-Daro in the Indus Valley around 3000 B.C. and a few fragments survive from much later periods. Most of the extant textiles are dated after the seventeenth century, because the monsoon climate has been very destructive to early specimens. The Greeks with Alexander the Great wrote of the fine flowered Muslims and robes embroidered in guld they had seen in India. They may also have seen the cotton fiber that grew on trees.

Indian textile were more important to the Dutch and the English than to the Portuguese. The Dutch East India Company was chartered in 1597, the East India Company in 1600. Their ships went first to India with bullion to exchange for the cotton textile that could be bartered for spices in the Malay Archipelago. Eventually, the Dutch gained a monopoly in Indonesians with trade centered in Java, and the English withdrew to India to establish trading stations known as 'Factories'. One of the intentions of the East India Company was to sell English woolens in Asia, but broad cloth was never more than a novelty in India. By 1649 the British were sending chintz and cheap cotton calico to England. Much was for re export to America, the Near East, West Africa, and the slave plantations in the West Indies. A four – cornered trade developed. The East India Company shipped calicos to London where they were sold to the Royal Africa Company. The latter shipped them in turn to West Africa as guinea – cloth to be bartered for people. These slaves, and any remaining cloth, were shipped to the West Indies and exchanged for sugar, cotton, and tobacco – all cargoes bound back for England.

Research Methodology - The researcher would like to present some information about the methodology adopted for obtaining research objectives and data collection.

Objectives of the Research Study - This research paper deals with the objectives are given below:

a. To study the decentralized powerloom sector of India.
b. To study the growth of powerloom sector in India.
c. To understand the government initiatives for supporting and promoting powerloom sector in India.

Data Collection - This paper was fully based on secondary sources of data. The secondary data have been collected from various annual reports of Ministry of Textile, Government of India Foreign Trade Statistics of India,

*Research Scholar, Feroze Gandhi P.G. College, Raebareli, C.S.J.M.University, Kanpur (U.P.) INDIA
** Associate Professor, Feroze Gandhi P.G. College, Raebareli, C.S.J.M.University, Kanpur (U.P.) INDIA

Journal Magazines, books and websites.

Decentralized Powerloom Sector - The decentralized powerloom sector is one of the most important segments of the Textile Industry in terms of fabric production and employment generation. It provides employment to 60.86 lakh persons and contributes 58.26 percent to total cloth production in the country. 60 percent of the febrics produced in the powerloom sector are of manmade. More than 60 percent of fabric meant for export is also sourced from powerloom sector. The Readymade garments and home textile sectors are heavily dependent on the powerloom sector to meet their fabric requirement. There are approximately 5.38 lakh. Powerloom unit with 24.34 lakh powerlooms as on 30.11.2014. The technology level of this sector varies from plain loom to high tech shuttleless looms. There are approximately 1.25 lakh shuttleless looms in this sector. It is estimated that more than 75 percent of the shuttle looms are obsolete and outdated with a vintage of more than 15 years and have virtually no process or quality control devices / attachments. However, there has been significant up-gradation in the technology level of the powerloom sector during the last 7 to 8 years.

Growth Of Powerloom Sector - The growth of powerloom sector can be measured in terms of year-wise growth in number of powerlooms installed in India and cloth manufactured in India. The following table will enlighten us about the growth of powerloom sector in India. The powerloom installation in India for the given period (2007-08 to 2014-15) shows the growth percentage of powerloom sector is not much better with compare to other sector service sector.

Table 1 : Showing Growth of Powerloom Sector in India

Year	Number of Powerloom	Growth percentage
2006-07	19,90,308	-
2007-08	21,06,370	5.88%
2008-09	22,05,352	4.70%
2009-10	22,46,474	1.90%
2010-11	22,82,744	1.61%
2011-12	22,98,377	0.68%
2012-13	23,47,249	2.08%
2013-14	23,67,594	0.86%
2014-15 (upto Nov. 2014)		

Source: Annual Report 2014-15, Ministry of Textiles, Government of India.

The above table indicates that year 2007-08 had maximum growth percentage of powerloom installation in India, whereas from 2009-2010 the powerloom installation growth is fluctuated in nature and not satisfactory considering the base year 2007-2008. As a result of TUFS Scheme growth percentage is increased upto 2.74 percent in year 2014-15.

Table 2 : Showing Growth of Cloth Production in India.

Year	Total Production (mn.sq.mtr.)	Production on Power loom (mn.sq.mtr.)	Percentage of Powerloom over total cloth production
2008-09	54,966	33,648	61.22%
2009-10	60,333	36,997	61.29%
2010-11	62,759	38,015	60.77%
2011-12	60,453	37,445	61.94%
2012-13	62,792	38,038	60.57%
2013-14	63,500	36,790	57.93%
2014-15 (upto Nov.2014)	33034(P)	19247(P)	58.26%

Source: Annual Report 2014-15, Ministry of Textiles, Government of India.

The above table indicates the 58.26 percent is average percentage of powerloom cloth production over total cloth production in India. The other means of cloth production are handloom, shuttleless looms and handicraft etc.

Government Initiatives for Supporting and Promoting Powerloom Sector in India - Government of India has separate ministry for textile industry, which is responsible for formulating implementing and executing the policy decisions related to textile industry. Ministry of textiles is always taking initiatives for supporting and promoting powerloom sector in India. Following are the some initiatives taken by Ministry of Textile about powerloom sector.

Group Insurance Scheme for Powerloom Workers (GIS) - Government of India launched this scheme for the welfare of Powerloom workers in association with LIC, from 1st July 2003. In accordance with the XIIth Five Year Plan the scheme was modified w.e.f. 1st September, 2012. As per the modified Scheme, the total premium is Rs. 470/- out of which, Rs. 290/- is to be borne by Government of India and Rs. 100/- is being paid by the LIC from the social security fund of Government of India. A premium of Rs. 80/- is to be paid by the powerloom weaver for getting the benefits under scheme. The coverage of benefit under this scheme is as given below:

Natural Death	Accidental Death	Total Permanent Disability	Partial Permanent Disability
Rs. 60,000/-	Rs. 1,50,000/-	Rs. 1,50,000/-	Rs. 75,000/-

Under the Group Insurance Scheme, 75,978 powerloom workers have been insured during the period 01.04.2014 to 30.11.2014 involving GOI share of premium to the extent of Rs. 2.20 crores. During this period approximately 290 claims have been settled with an amount of Rs. 1.81 crores.

Group Workshed Scheme (GWS) - The Government of India introduced a Group Workshed for Powerloom Sector on 29.07.2003, during the Xth five-year plan. The scheme aims at setting up of Powerloom Parks with modern weaving

machinery to enhance their competitiveness in the Global Market. Under the Scheme, 102 projects have been approved upto November, 2014, providing Government subsidy on eligible construction area of 32.02 lakh square feet. A total subsidy of Rs. 29.74 crore has been released as on 30.11.2014.

Integrated Scheme for Powerloom Sector Development (ISPSD) - In order to achieve the overall development of the powerloom sector, Govt. had announced the Integrated Scheme for Powerloom Sector Development during 2007-08. The scheme has the following components:

a. Marketing Development Programme for Powerloom Sector (BSM and Seminars / Workshops).
b. Exposure visit by powerloom weavers to other clusters.
c. New components launched in October under ISPSD.
i. Common Facility Centre (CFC)
ii. Corpus for Yarn Bank
iii. Pilot Scheme of Tex-Venture Capital Fund

Newly Launched Schemes

(a) Pilot Scheme of In-Situ Upgradation of Plain Powerlooms - The scheme aims to improve quality and productivity of the fabric being produced by upgradading their existing plain loom with certain additional attachments and enable them to face the competition in domestic and international markets. It aims at covering 90,000 looms during 12th Plan.

(b) Health Insurance Scheme for Powerloom weavers - The scheme provides the powerloom weavers and ancillary workers comprehensive (IPD and OPD) Healthcare assistance for a wide range of ailments including all pre-existing/new diseases. The Health insurance scheme for powerloom weavers has been approved for implementation in the 12th plan period.

(c) Hire-Purchase Scheme for Powerloom Sector under TUFS - Under the Scheme, the hirer (SPV) would procure the machines and then provide them on hire-purchase basis to the weavers. The risk and rewards incidental to the ownership of the asset is transferred to purchaser but not the actual ownership until end of the period. Ultimate ownership will transfer only at the end of the term of hire-purchase.

Coverage of Powerloom Sector in other ongoing schemes:

(i) 20% Margin Money Subsidy Scheme under TUFS - The Govt. has implemented 20 percent Credit Linked Capital Subsidy Scheme under the TUFS, especially to help the powerloom. Under the scheme, an amount of Rs. 17 crore subsidies has been disbursed towards 113 claims for the period April, 2014 to Nov. 2014.

(ii) 15% Margin Money Subsidy Scheme under TUFS - Govt. has introduced 15 percent CLCS (MMS) - TUFS applicable to Textile MSME Sector on 01.04.2007. Under the Scheme, an amount of Rs. 22.74 crores subsidy has been disbursed to 442 claims for the period April, 2014 to November, 2014.

(iii) 30% MMS under RR-TUFS - The TUFS has been continued for the 12th five year plan with major modification. Main focus has been on installation of high speed shuttleless loom for which increased margin moneys subsidy of 30 percent is provided w.e.f. 1st April, 2013 under RR-TUFS. Imported second hand shuttleless looms with the less than 10 year vintage are also considered with 8 percent margin money subsidy. The disbursement made under 30 percent MMS during the period from April, 14 to Nov, 14 is Rs. 3.43 crore against 15 claims.

Comprehensive Powerloom Cluster Development Scheme - The Comprehensive Powerloom Cluster Development Scheme was formulated in the year 2008-09 to enable implementation of the announcement made by the Finance Minister in his Budget Speech of 2008-09 to develop Powerloom Mega Clusters at Bhiwandi (Maharashtra) and Erode (Tamil Nadu). Subsequently, the Finance Minister in his budget speeches of 2009-10 and 2012-13 announced development of Powerloom Mega Clusters at Bhilwara (Rajasthan), Inhalkaranji (Maharashtra) and Surat (Gujarat) respectively. The guidelines/principles underlying the design of clusters is to create world-class infrastructure and to integrate the production chain in a manner that caters to the business needs of the local Small and Medium Enterprises (SMEs) to boost production and export. The broad objective of the Mega cluster approach Scheme is to enhance the competitiveness of the clusters in terms of increased market share and to ensure increased productivity by higher unit value realization of the products. The Scheme provides requisite support/linkages in terms of adequate infrastructure, technology, product diversification, design development, raw material banks, marketing and promotion, credit, social security and other components that are vital for sustainability of weavers engaged in the decentralized powerloom sector. The modified Comprehensive Powerloom Cluster Development Scheme (CPCDS) was approved by the Cabinet Committee on Economic Affairs (CCEA) in October, 2013 for implementation during 12th Plan period with a Budget Outlay of Rs. 110 crore. Under the modified scheme, Government assistance for a Mega Cluster is limited to 60% of the project cost subject to a maximum of Rs. 50 crore.

Other Activities –

All India Powerloom Board (AIPB) - All India Powerloom Board was first constituted as an Advisory Board to the Government of India in November, 1981 with the aim to advise the Government generally on matters concerning the healthy development of Powerlooms within the power operated weaving sector including measures to be taken to achieve better productivity, increased efficiency, improve welfare of workers and locational dispersal of Powerlooms. The present AIPS was reconstituted for a period of two years w.e.f. 23.12.2013. It has representatives of the Central and State Govts., Powerloom Federation/Associations of

Powerloom/Textile Industry, as its members and is headed by Union Minister of Textiles as the Chairman.

Conclusion - The research paper concluded that the Indian Powerloom sector works with a decentralized working environment. It is most important segments of the Textile Industry in terms of fabric production and employment generation. It provides employment to 60.86 lakh persons. Because of Government of India and Ministry of Textile initiatives the growth is reached at remarkable height. Even though there is scope for improvement with compare to other countries. The statistical data indicates that year 2007-08 had maximum growth percentage is 5.8 percent of powerloom installation in India, whereas from 2009-2010 the powerloom installation growth is fluctuated in nature when we considered the base year 2007-2008. 58.26 percent is average percentage of powerloom cloth production over total cloth production in India. The other means of cloth production are handloom, shuttleless looms and handicraft etc. Ministry of Textile is always taking initiatives for supporting and promoting powerloom sector in India.

References :-

1. Arun Jariwala, (2007) Powerloom Sector in India – An overview of the present development and shape of things to come Textile Review, Vol. 2(6) P. 19.
2. Dhanapal Tara (1993), “Prospects for Powerloom Sector in Textile Exports Challenges and Opportunities”, Journal of the Textile Association, July, page no. 81-82.
3. Government of India. (2014-15). Annual Report of Ministry of Textiles, New Delhi, page no. 62-74.
4. Karthikeyan G.R. (1995), Growth of Indian Textile Industry, The Textile Industry and Trade Journal, September – October, page no. 35.
5. Mishra Sanjiv (1993), India’s Textile Sector : A Policy Analysis, Sage Publication, New Delhi.
6. Saksena, K.D. (2002). “Dynamics of Indian Textile Economy Towards A Pragmatic Textile Policy”, Shipra Publications, New Delhi.
7. Uchikawa, S. (1998) Indian Textile Industry – State Policy, Liberalization and Growth, Manohar Publishers and Distributors, New Delhi.
8. Verma and Pritan Chandra H.K., Indian Textile Industry, (1998), Dhanapalraj and Sons Publications.
9. Muthu. N. (2015), “Performance of Decentralized Powerloom Sector in India”, Asian Journal of Multidisciplinary Studies, Vol. 3(3) P. 69-73.

****

सामाजिक विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

डॉ. हरिचरण मीना*

शोध सारांश – देश की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र मे निवास करती है गॉवो के विकास हेतु अनेक सरकारी योजनाओं की क्रियान्विति सरकारी मशीनरी द्धारा की जाती रही है। इन सरकारी योजनाओ के सफलतापूर्वक क्रियान्वयन में सरकारी मशीनरी के साथ–साथ स्वैच्छिक संगठनों एवं गैर–सरकारी संगठनों की भूमिका भी उल्लेखनीय रही है। 1970 के दशक से आगे विकासपरक गैर सरकारी एवं स्वैच्छिक संगठनों का प्रसार इस बात का संकेत करते है कि ग्रामीण विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों को बढ़ावा देने और सरकार की नीतियों को क्रियान्वित करने में उनका महत्व है। यदपि इसका अभिप्राय यह कतई नही है कि सम्पूर्ण सामाजिक विकास गैर–सरकारी एवं स्वैच्छिक संगठनों के बलबुते पर ही हुआ है।इस समय देश मे लगभग डेढ़ लाख गैर–सरकारी संगठन अस्तित्व मे है जो कि ग्रामीण विकास हेतु कार्य कर रहे है। गैर सरकारी संगठनों ने बढ़ती संख्या में इनके सकारात्मक व नकारात्मक पक्ष पर बहस को भी बढाया है। जैसा की नाम से ही विदित होता है कि गैर सरकारी संगठन वे संगठन होते है जो सरकार के अंग नही होते तथा गैर सरकारी स्तर पर स्वास्थ्य, शिक्षा, पर्यावरण, विकास आदि क्षेत्रों मे रचनात्मक कार्यो को अंजाम देकर समाज की भलाई करते है। जनकल्याण के कार्यो को सम्पादित करने के लिए इन्हें साधन और अर्थ की आवश्यकता पड़ती है, जो इन्हे देश विदेशों की सरकारों से अनुदान द्धारा कतिपय संगठनों द्धारा उपलब्ध करवाया जाता है। सामाजिक विकास मे स्वैच्छिक संगठनों की महती भूमिका रही है। इसलिए इस विषय पर शोध पत्र की आवश्यता महमुस होती है।

शब्द कुंजी – विकासपरक, एन.जी.ओ., स्वैच्छिक–संगठन, सरकारी मशीनरी, नीतियां, क्रियान्विति, आबादी, योजनाए, मिनी सचिवालय, अनुदान, सहायता, एजेन्सी, पंजीयन, शोषण, कल्याणकारी, आन्दोलन, स्वास्थ्य, पर्यावरण, सम्पादित, कतिपय, जनसंख्या, विकराल, निस्तारण, घनीभूत, सिलसिला, समर्पण, आस्था, दानी सज्जनों, विकासशील, मुद्दा, सामाजिक शक्ति, पंगु, काल्पनिक स्वप्न, आशावादी, उत्साहित विकेन्द्रीकरण, प्रजातन्त्र, नजरअन्दाज, मॉडल।

प्रस्तावना – देश की 70 प्रतिशत से भी अधिक आबादी गॉवों मे निवास करती है। गॉवों के विकास में सरकारी योजनाओं की क्रियान्विति सरकारी मशीनरी द्धारा की जाती है। इन सरकारी योजनाओं के सफलतापूर्वक क्रियान्वयन में सरकारी मशीनरी के साथ साथ स्वैच्छिक संगठनों एवं गैर–सरकारी संगठनो की भूमिका भी उल्लेखनीय रही है।

स्वैच्छिक संगठन कुछ व्यक्तियों द्धारा गठित एक ऐसा संगठन है जो किसी क्षेत्र विशेष में व्याप्त समस्याओं के समाधान हेतु लगातार अनेक वर्ष तक कार्य करने पर उस संगठन का पंजीयन मिनी सचिवायलय में होता है तथा सरकार द्धारा मान्यता प्राप्त होती है। उसे राज्य एवं केन्द्रीय सरकार द्धारा समस्याओं के समाधान हेतु अनुदान सहायता मिलती है। विदेशों से अनुदान का पंजीयन विदेश मंत्रालय मे होता है। स्वैच्छिक संगठन सरकार के लिए एक एजेन्सी के रूप में कार्य करते है। सरकार द्धारा निर्धारित नियमों का पालन नही करने पर स्वैच्छिक संगठन की अनुदान सहायता रोक दी जाती है तथा उसका पंजीयन भी समाप्त करदिया जाताकिया जाता है।

स्वैच्छिक संगठनों ने बहुत बड़े पैमाने पर राजनीतिक आन्दोलनो को मदद दी है। पश्चिमी समाजो में स्वैच्छिक संगठनो ने ही शोषण के विरूद्ध आवाज उठाकर कल्याणकारी राज्य को जन्म दिया है। महात्मा गांधी ने भी स्वैच्छिक संगठनों द्धारा ही अपने आन्दोलन को आगे बढ़ाया। सी.पी. भाम्मरी के अनुसार 'स्वैच्छिक संस्थाए पश्चिम मे लोक–कल्याणकारी संस्थाओ को जन्म दे रही है।' वर्तमान समय मे पश्चिमी राज्यो में स्वैच्छिक संस्थाएं तेजी से फैल रही है। भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में लोक कल्याण एवं विकास की काफी आवश्यकता है। जो सामाजिक परिवर्तन मे मदद कर सके और सरकारी प्रशासन मे प्रमुख भूमिका निभा सके।

इस समय देश मे लगभग डेढ़ लाख गैर–सरकारी संगठन अस्तित्व मे है जो कि ग्रामीण विकास हेतु कार्य कर रहे है। गैर सरकारी संगठनों ने बढ़ती संख्या में इनके सकारात्मक व नकारात्मक पक्ष पर बहस को भी बढाया है। जैसा की नाम से ही विदित होता है कि गैर सरकारी संगठन वे संगठन होते है जो सरकार के अंग नही होते तथा गैर सरकारी स्तर पर स्वास्थ्य, शिक्षा, पर्यावरण, विकास आदि क्षेत्रों मे रचनात्मक कार्यो को अंजाम देकर समाज की भलाई करते है। जनकल्याण के कार्यो को सम्पादित करने के लिए इन्हें साधन और अर्थ की आवश्यकता पड़ती है, जो इन्हे देश विदेशों की सरकारों से अनुदान द्धारा कतिपय संगठनों द्धारा उपलब्ध करवाया जाता है।

जहाँ तक एन.जी.ओ. के उदय का प्रश्न है तो सामाजिक विकास और बढती जनसंख्या से न सिर्फ विभिन्न क्षेत्रों की समस्याएं ही बढ़ी हैं, बल्कि उनका स्वरूप भी विकराल हुआ है। नई–नई समस्याएं भी जन्मी है। जाहिर है, उनका निस्तारण अकेली सरकार के बूते की बात नही हैं। घनीभूत सामाजिक समस्याएं ही गैर सरकारी संगठनों के उदय का कारण बनी है। देश के ग्रामीण क्षेत्र मे विभिन्न गैर–सरकारी एवं स्वैच्छिक संगठन समर्पण व आस्था के भाव से समस्याओं के निस्तारण में आगे आना शुरू हुए और फिर यह सिलसिला बढ़ता गया। यदि ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे देखा जाए तो भारत मे पहला एन.जी.ओ. सन 1871 में 'भील सेना संगठन' के नाम से अस्तित्व मे आया था।

* समाजशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

भारत मे योजना आयोग ने छठी पंचवर्षीय योजना में स्वैच्छिक संगठनों के लिये काफी कुछ कहा है। योजना आयोग ने युवा संगठनों पर जोर दिया है। स्वैच्छिक संगठनों को सामान्यत: विकास के कार्यो में लगाया जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक इत्यादि और इसमें महत्वपूर्ण सफलता मिली हैं। स्वैच्छिक संगठन अपना धन प्रमुखत: दानी सज्जनों से, सरकारी अनुदान से, विदेशी दानदाताओं से एवं विश्व बैंक से धन प्राप्त करते है।

जिसमे राष्ट्रीय सुरक्षा के हित को भी देखा जाता है कही ऐसा ना हो कि हम विदेशी दानदाताओं के हाथ की कटपुतली बन जाए जैसे अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे जो विकासशील राष्ट्रो के लिये एक समस्या है। समानता का अधिकार भी एक मुद्दा है जिसमे फ्री सर्विसेज, सोशल वर्क्स, कानुनी समस्याएं जो कि इन्कम टैक्स, कानुन, श्रम औद्योगिक विवाद कानुन, विदेशी अनुदान एक्ट इत्यादि।

क्या स्वैच्छिक संगठन सामाजिक परिवर्तन का कारण है ?

क्या स्वैच्छिक संगठन सामाजिक परिवर्तन मे महत्वपूर्ण भूमिका नही निभाते है ?

यहॉ दो प्रमुख विचार है विकासशील देश भारत मे पिछड़ेपन, गरीबी या इसके ढॉचे में परिवर्तन, बेरोजगारी या इसके ढॉचे मे परिवर्तन इत्यादि। भाम्मरी के अनुसार 'ये सामाजिक शक्ति व ढॉचे में परिवर्तन नही करते जबकि राज्य सरकारे ही शक्ति मे परिवर्तन करती है।'

विभिन्न विद्धानों ने स्वेच्छिक संगठनों के बारे मे अलग-अलग विचार व्यक्त किये है। मोहित भट्टाचार्य के अनुसार ये संस्थाएं अपने आप मे पंगु है और इनके बारे मे सोचना एक काल्पनिक स्वप्न देखना है। जबकि रजनी कोठारी के विचार इससे अलग है। वह आशावादी व उत्साहित है और स्वैच्छिक संगठनों में पूरी आस्था रखते हैं और सामाजिक परिवर्तन में इन संगठनों में पूरी आस्था रखते हैं और सामाजिक परिवर्तन में इन संगठनों की भूमिका को प्रमुख मानते है। उनका विचार है कि संगठन को पूरा अधिकार है कि संगठन सरकार की नीतियों की आलोचना करे और विकास के लिये अपने विचारो को सरकार को बताए। 'जब यह संगठन सरकार से मिलकर कार्य करेंगे तभी पूर्ण विकास हो सकेगा।'

भारत में 28 प्रतिशत लोग अशिक्षित और 26 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे है। इन दोनो समस्याओं का हल सरकार और संगठन दोनों मिलकर करें। इस प्रकार ये संगठन अलग-अलग क्षेत्रों मे सरकार के सहयोग से राष्ट्र व समाज का विकास कर सकते। उपलब्धियॉ केवल सहयोग से प्राप्त की जा सकती है। राज्य और जनता दोनों सामूहिक रूप से मिलकर राष्ट्र का निर्माण करते है। स्वैच्छिक संगठन विकेन्द्रकरण और प्रजातन्त्र को सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है।

टी.एन. चतुर्वेदी स्वैच्छिक संगठनों के कार्यो को औपचारिक रूप से लेते हैं और वह शंका करते है कि भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास मे क्या ये भूमिका निभा पाऐंगे ?

डॉ. उपेन्द्र बख्शी उन संस्थाओं को एक मॉडल के रूप में प्रस्तुत करते है जिसमें व्यक्ति रूचि लेंगे और इन्हे अपने लाभ के लिए प्रयोग करेंगे। भारत जैसे देश मे ज्ञान के प्रति अभिरूचि बढे। इस तरफ भी ध्यान देते है कि सुधार बनाम क्रान्ति, हिंसा बनाम अहिंसा, जवान बनाम वृद्ध, क्रिया बनाम कानुन इत्यादि के माध्यम से वह यथार्थ और विचारों की अभिव्यक्ति करते हैं।

डॉ. इलेन हन्स के अनुसार विकासशील राष्ट्रो मे स्वैच्छिक संगठनों के विचारों को खास अहमियत नही दी जाती है। क्योंकि अयोग्यता, भ्रष्टाचार, प्रजातन्त्र की जड़ो तक जम गया है। भ्रष्टाचार ने प्रजातंत्र व राजनीतिक नेतृत्व को प्रभावित किया है। रहने की समस्या, दृढ़ निश्चय की कमी, विकास के उद्देश्यों को प्राप्त करने की कमी के कारण तीसरी दुनिया के देशों मे स्वैच्छिक संगठनों को असफल कर दिया है। लेकिन विपरीत विचार होने के बाद भी इनकी उपलब्धियों को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता।

श्रीमती पदमा सेठी के अनुसार स्वैच्छिक संगठन विकास के हर क्षेत्र में पूरी तरह सफल है चाहे वह पब्लिक सर्विस सेक्टर हो या तकनीकी। 25 प्रतिशत श्रेय इन स्वैच्छिक संगठनों को जाता है। यह बात महत्वपूर्ण नही है कि सरकार क्या करती है ? इन संगठनों को सभी के लिए समान न्याय व औरतों के विकास के लिये उपयुक्त बनाती है।

सुशीला कौशिक के अनुसार स्वैच्छिक संगठन एक सीमा से बढ़कर कार्य कर रहे है परन्तु इन संगठनों ने प्रमुख मुद्दे को नजर अन्दाज कर दिया है। डॉ. इन्द्रजीत कौर के अनुसार स्वैच्छिक संगठनों ने हर क्षेत्र मे बढ़कर कार्य किया है कौर ने स्वैच्छिक संगठनों के सन्दर्भ में कुछ कमियां व सुझाव बताये है।

प्रो. के.डी. गंगाधर ने स्वैच्छिक संगठनों के दो मॉडल बताये है प्रथम गांधीवादी मॉडल और दूसरा अगांधीवादी मॉडल। गांधीवादी मॉडल अपने खुद के विचारों से अपना विकास चाहता है इस मॉडल ने अपनी आवश्यता के अनुसार अपने अधिकारों को प्राप्त किया है और अपने विचारों से ही सत्ता परिवर्तन लाए है। जबकि दूसरा मॉडल योजनाबद्ध तरीके से विकास और परिवर्तन को लाना चाहते है।

प्रो. आर.वी. जैन आपातकाल स्थिति, चरित्र निर्माण, स्वैच्छिक संगठनों की व्यक्तिगत समस्याओं को मुख्य बिन्दु बनाती है और वे आर्थिक स्वतंत्रता तथा स्वैच्छिक संगठन, सरकार एवं स्वैच्छिक संगठन को योजना बनाने में एक दूसरे के प्रभाव को बनाती है। एस.एन.मिश्रा व चेटाली बाल का मानना है कि स्वैच्छिक संगठन ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक सुधार व विकास की बात करते है जहॉं सरकार असफल हुई है वहा स्वैच्छिक संगठन सफल रहे है।

डॉ. लिप्जी मुखो उपाध्याय अपने लेख 'रोल ऑफ वॉलेण्टरी ऑरगनाइजेशन वीथ वूमैन डवलपमेन्ट' में औरतों की समस्याओं को उठाती है कि औरते न केवल पुरूषों के समान कार्य करती है बल्कि उनको परिश्रम भी कम दिया जाता है और उनके साथ सौतेला व्यवहार किया जाता है। शक्ति मोहली चन्द्रा स्वैच्छिक संगठनों के योगदान को विकास और सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण मानती है।

प्रो. गंगाधर और डॉ. सूरी ने केरल के विकास में स्वैच्छिक संगठनों की एक स्टेडी प्रस्तुत की जिसमे उन्होंने बताया है कि सातवी पंचवर्षीय योजना में वहां की जनता व स्वैच्छिक संगठनों ने केरल का काफी विकास किया है और सरकार ने स्वैच्छिक संगठनों के कार्यो में बहुत बढ़ चढ़कर हस्तक्षेप किया साथ ही 10 प्रतिशत का प्रावधान अपने बजट में रखा जिसने सिद्ध कर दिया कि सरकार स्वैच्छिक संगठनों के साथ मिलकर अनेक महत्वपूर्ण कार्यो को उचित अन्जाम दे सकती है। यह भी बताया गया है कि स्वैच्छिक संगठन आर्थिक मदद के लिए सरकार पर निर्भर रहते है। वही सरकार उन्हें बहुत कम मदद देती है। डॉ. नूरजहॉं बाबा का कहना है कि सामाजिक विज्ञानों मे सामाजिक तथा विकास के तथ्यों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। साथ ही विकास के क्या तरीके होंगे ? समाज, सरकार एवं बाजार में इनकी क्या भूमिका हो ? इसके बारे मे आशावादी और इनका भविष्य विकासशील देशों में उज्जवल होगा। डॉ. बाबा का कहना है कि स्वैच्छिक संगठनों को पूरे विश्व में अपनी सेवाओं के द्वारा सामाजिक

कार्य करना चाहिए। राष्ट्र निर्माण में योजनाबद्ध तरीके से सामाजिक व आर्थिक विकास हर जगह करना चाहिए। खास कर भारत जैसे देश में इसकी आवश्यकता है जब तक जनता विकास में खुद पूर्ण योगदान नही देगी तब तक सरकार अकेली कुछ नही कर सकती और न ही अज्ञानता, गरीबी व अशिक्षा को हटा सकती है।

स्वैच्छिक संगठन सामाजिक सुधार और नया सामाजिक आन्दोलन तीसरी दुनिया में कर सकते है जो गरीबी में परिवर्तन करते है और कृषि क्षेत्र में आर्थिक विकास बढ़ाते है साथ ही सीमान्त जनसंख्या द्वारा स्वैच्छिक संगठन सेक्टर को ऊँचा उठा सकते है और दानदाताओं के बीच में जो कार्य है जिनसे वह धन प्राप्त करते है। स्वैच्छिक संगठन और सिविल सोसाइटी दोनों ही धन को बढ़ाए, श्रम शक्ति बढ़ाए और राज्य से मिलकर आर्थिक कार्य करें क्योंकि दोनों में अभी तक पूर्णत: समझौता नही हुआ है।

स्वैच्छिक संगठनों के अभिलक्षण – जिन संस्थाओं का निर्माण स्वैच्छिक प्रयासों के आधार पर होता है, उन्हे सामान्यत: स्वैच्छिक संगठन कहा जाता है। संयुक्त राष्ट्र की शब्दावली में इन संगठनों को गैर–सरकारी संगठनों के नाम से जाना जाता है। संभव है कि प्राय: हम मे से बहुत लोग इन दो शब्दों का प्रयोग एक दूसरे के लिये करते रहने के आदि है यह बात सच है कि स्वैच्छिक संगठन और गैर–सरकारी संगठनों के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उनमें स्वैच्छिकता का अंश हो ही। स्वैच्छिक संगठनों के विशिष्ट अभिलक्षण इस प्रसार है।

1. स्वैच्छिक सदस्यता
2. उसका उद्देश्य लाभ कमाना न हो
3. इन संगठनों का निर्माण ऐसे लोगों की पहल से होता है, जो समाज के पिछड़े/दलित/निर्धन वर्ग/आदिवासी के कल्याण के लिए सामाजिक चेतना की भावना से प्रेरित होते है।
4. इन संगठनों के अपने नियम विनियम होते है और ये सरकार के प्रशासनिक नियंत्रण से बाहर होते है।
5. पंजीकृत स्वैच्छिक संगठन सरकारी अनुदान प्राप्त करने के हकदार होते है। इन्हें सरकारी अनुदान की व्यवस्थाओं के अन्तर्गत निर्धारित शर्तो को भी स्वीकार करना पड़ता है।

प्राय: यह माना जाता है कि अधिकांश स्वैच्छिक संगठन आधारभूत सामाजिक समस्याओं से परिचित है, इसलिये वे लोगों से ज्यादा नजदीक है। इसके अलावा, यह भी माना जाता है कि वे सरकार की नौकरशाही व्यवस्था की उपेक्षा उत्साही और समर्पित है। इस कारण से यह भी समझा जाता है कि स्वैच्छिक संगठन नौकरशाही निकायों से अधिक मितठी होंगे।

स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका – स्वैच्छिक संगठन राजनीति या अराजनैतिक दोनों प्रकार से प्रभावित हो सकते है। भारत मे आजादी से पूर्व स्वैच्छिक कार्यो के लिए किये जाने वाले प्रयास राजनैतिक दृष्टि से प्रेरित कार्य होते थे। खादी और ग्रामीण उद्योग जैसे बहुत से अर्द्ध सरकारी अभिकरण है जो सरकारी मार्गदर्शन के अन्तर्गत कार्य करते है। आज भारत में बहुत बडे स्तर पर स्वैच्छिक संगठन कार्य करते है। इनमें से कुछ तो प्रत्यक्ष रूप में राजनैतिक समूह है, जबकि कुछ अन्य संगठन सरकारी निर्देशों के अन्तर्गत कार्य कर रहे है। शेष संगठन गैर–राजनैतिक की कोटि में आते है। स्वैच्छिक संगठन विभिन्न क्षेत्रों में भूमिका निभा रहे है–

1. पर्यावरण के क्षेत्र में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका
2. ग्रामीण विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका
3. अनुसूचित जाति/ जनजाति के विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका
4. महिला एवं बाल विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका
5. राजनीति एवं अन्य क्षेत्रों में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

स्वैच्छिक संगठन की गांधीवादी धारण – गांधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों की क्रियान्विति के लिये अनेक स्वैच्छिक संगठनों की स्थापना की ये संगठन पूरी तरह गांधीवादी मूल्यों पर आधारित थे जिनमें प्रमुख है अखिल भारतीय चरखा संघ, रामकृष्ण मिशन, कृष्ण निवारण संघ, मारवाड़ी रिलीफ संघ, सर्व सेवा संघ, सेवाग्राम वर्धा (महाराष्ट्र) गांधी स्मारक निधि, गांधी शक्ति प्रतिष्ठान भण्डार वर्धा, मंगल संग्रहालय वर्धा, सेवा समिति दत्तपुर, महिला आश्रम वर्धा।

गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम का मन्तव्य पूरी तरह स्वैच्छिक संगठनों पर आधारित था। उपर्युक्त संस्थाओं ने गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम को व्यावहारिक रूप दिया एवं साथ ही आजादी को नई दिशा भी दी। इन संगठनों ने अपने श्रम व योग्यता के आधार पर कार्य किया। गांधीजी का मानना था कि स्वैच्छिक संगठनों के कार्यकर्ता सेवक के रूप में अपनी भूमिका निभाऐंगे। वे सरकारी तंत्र और राजनीतिज्ञों पर अंकुश रखेंगे और जनता को संगठित करेंगे। गांधीजी ने जीवनभर अर्थव्यवस्था में विदेशी घुसपैठका विरोध किया था। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि रचनात्मक कार्यकर्ता जनता के बीच रहे और जनता से एक रूपये लेकर अपना पेट पाले। उन्होंने कभी भी यह नहीं कहा कि विदेशियों से पैसा लेकर या फिर अपनी ही सरकार से पैसा लेकर जीवन यापन करने वाले भारत सरकार पर नियंत्रण रखे। जयप्रकाश नारायण गांधीपन विचारधारा के स्वैच्छिक संगठन के मॉडल से इतने प्रभावित हुए की गांधीयन मॉडल को जीवन मे ढाला और सामूदायिक विकास के लिए कार्य किया।

निष्कर्ष – सारांश रूप में कह सकते है कि विकास तभी संभव है जब हर क्षेत्र में राज्य, केन्द्र एवं गैर सरकारी व स्वैच्छिक संगठन मिलकर कार्य करें। वह न केवल प्रमुख भूमिकाए निभाए वरन् योजनाओं के क्रियान्वयन में भी प्रमुख भूमिका निभाए। स्वैच्छिक संगठन संवैधानिक नियमों के अनुसार राष्ट्र के विकास के लिये कार्य करें और एकता बनाये रखें। अपने आपको एक रक्षक के रूप में सिद्ध करे और विदेशी दानदाताओं के हाथ की कठपुतली न बने। स्वैच्छिक संगठन अपने आपको अप्रमाणिक विचारों से बचाएं और सरकार भी प्रजातन्त्र का विकास करे तभी स्वैच्छिक संगठन प्रजातन्त्रत्मक राज्यों के केन्द्र बिन्दु बन सकेंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. आलोकनाथ, 'गांवो का निर्माण' नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद 1990 पृ.स. 112
2. कुमारप्पा,जे.सी., 'इकॉनामी ऑफ परमानेन्स' सर्व सेवा प्रकाशन, वाराणसी 1995 पृ.स. 71
3. कृपलानी,कृष्ण, 'हम सब एक पिता के बालक' नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद 1996 पृ.स. 59
4. केथलीन,जी.ए. एवं शर्मा,एच.जी., 'इम्पीयरलिज्म एण्ड रिवोल्यूशन इन साउथ एशिया' न्यूयार्क मन्थली रिव्यू प्रेस 1973 पृ.स.15
5. कृष्णामाचारी,वी.टी., 'कम्यूनिटी डवलपमेंन्ट इन इंडिया' गवर्नमेंट ऑफ इंडिया पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1958 पृ.स. 27
6. गांधी,एम.के., 'ग्राम स्वराज्य' नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद 1993 पृ.स. 36

7. गांधी,एम.के., 'गांवों की मदद'(अनुवादक सोमेश्वर पुरोहित) नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद 1994 पृ.स. 48
8. गिरधारी,जी.डी., 'ग्रामीण विकास के महत्वपूर्ण' चैंजिंग विलेजेज रूरल न्यूज नई दिल्ली 1971
9. चतुर्वेदी,रामजानम, 'अरावली का सिंहनाद' तरूण भारत संघ, अलवर 1995 पृ.स. 25
10. टण्डन,रंजिश एवं जैन,अभी, 'मैनेजमेंट डवलपमेंट ऑरगेनाइजेशन इन इंडिया' प्रिया प्रकाशन, नई दिल्ली 1996 पृ.स. 72
11. सिद्दीकी,एम.एच., 'एग्रेरियन अन्रैस्ट इन नार्थ इंडिया: द यूनाइटेट प्राविसेज' विकास पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली 1978 पृ.स. 89
12 भाम्मरी,सी.पी. 'द मॉडर्न स्टेट एण्ड वालैंटरी सोसाइटी' दी इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन xxxiii(3) 395-398

****

कोयला श्रमिकों की श्रम कल्याण का अध्ययन (कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. कृष्णकुमार शर्मा* राकेश कुमार गुप्ता**

शोध सारांश – औद्योगीकरण आधुनिक युग की अनिवार्य मांग हैं। औद्योगिक विकास के बिना देश का विकास संभव नही हैं औद्योगिक विकास को प्राप्त कर कोई भी राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी भूमिका का भली–भाँती निर्वाह कर सकता हैं उद्योगों के विकास के लिए जहाँ प्राकृतिक संसाधनों का होना आवश्यक होता है, वहीं मानव संसाधन की भूमिका कम नहीं आंका जा सकता अतएव श्रम उत्पादन का सक्रिय साधन होता है जो उत्पादन के प्रमुख साधनों में से एक है। देश के भावी आयोजित विकास एवं आर्थिक उन्नति के लिए श्रम के महत्व को सभी ने स्वीकारा है। किसी भी औद्योगिक इकाई की सफलता सेवारत श्रमिकों के उचित नियोजन समन्वय तथा नेतृत्व पर निर्भर करता है।
शब्द कुँजी – औद्योगीकरण, मानव संसाधन, सेवारत श्रमिक, उचित नियोजन एवं श्रम कल्याण।

प्रस्तावना – आदिवासी जाति बाहुल्य राज्य, खनिज एवं वन सम्पदा से संपन्न 'धान का कटोरा' नाम से विश्वविख्यात नवोदित राज्य छ.ग. मूलत: एक ग्रामीण प्रदेश है। छ.ग. राज्य का कोरबा जिला औद्योगिक संभावनाओं को समाहित किए हुए एन.टी.पी.सी. बालकों तथा विभिन्न प्रकार के उद्योगों के मध्य कोयला उद्योग खदानों की अपनी एक अलग विशेष पहचान है। कोयला श्रमिक एक ऐसा श्रमिक है जो धरती के गर्भ में छिपे काले हीरे को निकालने में अपना जीवन दांव पर लगा देता है, कभी वर्षा का पानी खदान में घुसकर उसकी जीवन लीला समाप्त कर देता है, तो कभी खदान धंस जाती है और श्रमिक की कब्र बन जाती है। ऐसी आकस्मिक दुर्घटनाओं की अनेक कहानियाँ घटती रहती है और संचार माध्यमों की सुर्खियाँ भी बनती है। इस ओर शायद अर्थशास्त्रियों अध्येताओं एवं समाज सुधारकों ने सीमित ध्यान दिया है, फिर अन्य संचार माध्यमों को दोषी ठहराना निर्मूल है।

कोयला श्रमिक जब अपनी युवावस्था समाप्त कर खदान से अयोग्य होकर निकलता है, तो प्राय: वह महसूस करता है कि उसके हाथ उस बीमारी के सिवाय जो औद्योगिकरण की भेंट है, उसके हाथ कुछ नही लगा है। यह एक अत्यंत दुखद स्थिति है, जो दीर्घकाल में हमारे औद्योगिक विकास में बाधक हो सकता है। प्रस्तुत अध्यनन में कोयला श्रमिकों की श्रम कल्याण की सुविधा एवं सामाजिक सुरक्षा की वस्तु–स्थिति का मूल्यांकन करते हुए उन्हें समाज एवं राष्ट्र में प्रतिष्ठित एवं लब्ध स्थान प्रदान करने के उपाय ढूंढ निकालने का प्रयास किया गया है। जिससे समस्या के पहलुओं को अध्येताओं एवं श्रम कल्याण में रूचि रखने वाले पक्षों, नीति–निर्धारकों एवं समाज के संचेतकों तक पहुँचाया जा सके।

उद्देश्य – प्रत्येक शोध कार्य किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शोध पत्र कोयला श्रमिकों की श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा का अध्ययन (कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में) के अग्रांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये है–

1. श्रमिकों को प्रदत्त श्रमकल्याण की सुविधाओं का विवरण ज्ञात करना।
2. श्रम कल्याण पर की जाने वाली व्यय एवं उत्पादकता के बीच सह संबंध की माप करना।

शोध परिकल्पनाएँ – शोधार्थी द्वारा सत्यान्वेषण एवं किसी तथ्य के निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए अवधारणाओं का होना आवश्यक है, ताकि अध्ययनकर्ता इस बात की जानकारी प्राप्त कर लेवे कि उसकी परिकल्पना कहाँ तक उचित थी, साथ ही परिकल्पनाओं का होना इसलिए भी आवश्यक होता है कि वह अपने अध्ययन की दिशा निर्धारित कर उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हो सके। इसी सन्दर्भ में शोधार्थी द्वारा निम्न परिकल्पनाएँ की गई है–

1. कोयला उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप क्रियान्वयन हुआ है जिससे श्रम कल्याण में वृद्धि हुई है।
2. श्रमिक कल्याण व्यय एवं उत्पादन में धनात्मक संबंध है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र :

शोध उपकरण–सांख्यिकीय उपकरण– प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन के लिए विषय से संबधित तथ्यों के संकलन के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार शोध पत्र में प्राथमिक आँकड़ों के लिए मुख्य रूप से कोयला उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पर केन्द्रित किया गया है। इसके लिये निम्न रीतियों का अनुप्रयोग किया गया है–

1. प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान
2. अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसन्धान
3. स्थानीय स्त्रोतों और उत्तरदाताओं से सूचना–प्राप्ति
4. लाभार्थी परिवारों के सूचना देने वाले सूचकों द्वारा अनुसूची भरवाकर सूचना प्राप्त करना

शोध व्याख्या– कोरबा कोयला प्रक्षेत्र में निहित श्रम कल्याण की सुविधाओं का अध्ययन के दौरान प्राप्त जानकारी को इस प्रकार रखा जा सकता है –

शिक्षा सुविधायें – शिक्षा बुनियादी आवश्यकताओं में से एक है। शिक्षा भावी समान तथा हमारे जीविकोपार्जन का मुख्य आधार है। शिक्षा से मनुष्य

* सह प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी.पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ.सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, कोटा, जिला बिलासपुर (छ.ग.) भारत

का मानसिक, आर्थिक, सामाजिक अर्थात सर्वांगीण विकास संभव है। शिक्षित व्यक्ति अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति पूर्ण सजग होता है। शिक्षित व्यक्ति को शीघ्र कार्य मिलने व उचित योग्यता के कारण उनकी मजदूरी अथवा वेतन अपेक्षाकृत अधिक होता है अधिक वेतन के फलस्वरूप अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद जीवनस्तर के उपर उठने की संभावनायें बढ़ जाती है। शिक्षित व्यक्ति अपने भावी जीवन को सुखमय बनाने के लिये सदैव प्रयत्नशील होता है परिणामस्वरूप उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि होने लगती है, जो कि व्यक्ति के आर्थिक जीवन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर उसे एक अच्छा आधार प्रदान करती है इस प्रकार शिक्षा व्यक्ति की आर्थिक स्थिति में सुधार करके उचित आय तथा आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण एवं सराहनीय कार्य करती है। शिक्षा विकास की आधारशिला है। जो भी राष्ट्र विकास के उच्च स्तर को प्राप्त किये है, वहां साक्षरता का प्रतिशत उच्च है। शिक्षा मानव पूंजी का आधार है। शिक्षा व्यवस्था सुलभ कराना राज्य सरकार का दायित्व माना गया है किन्तु श्रमिकों के बच्चों की शिक्षा व्यवस्था उपलब्ध कराना औद्योगिक श्रम कल्याण प्रावधानों के अंतर्गत सेवा योजक की जिम्मेदारी सुनिश्चित की गई है। अत: कोयला उद्योग में श्रमिकों के उनके बच्चों एवं आश्रितों को समुचित शिक्षा व्यवस्था का भार श्रम कल्याण की दृष्टि से कोल इण्डियां लिमिटेड (C.I.L.) का है। यह इसलिए भी आवश्यक है कि कोयला उत्पादन कार्य–क्षेत्र दुर्गम जगह में संचालित होता है। राष्ट्रीयकरण के समय कोयला उत्पादक क्षेत्रों में शिक्षा सुविधाओं की स्थिति निम्नानुसार है –

चिकित्सा सुविधायें – नियोजित श्रमिकों के सामने सबसे बड़ी चुनौती स्वास्थ्य सुरक्षा है। यद्यपि कोयला उद्योग इसके लिए निरन्तर प्रयासरत है। श्रमिक स्वस्थ रहे एवं कार्य के योग्य रह सके यह पूरे कोल इण्डियां के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। कोल इण्डियां को अस्पताल एवं चिकित्सा का आधार भूत संरचना सुविधा– कोल माइन वेलफेयर आर्गेनाइजेशन से उत्तराधिकार में प्राप्त हुई है। राष्ट्रीयकरण के पहले की सुविधा की तुलना में आज चिकित्सीय स्थिति बेहतर है।

निष्कर्ष– 'श्रमिक कल्याण व्यय एवं उत्पादन में धनात्मक संबंध है।' एस.ई.सी.एल. कोरबा कोयला प्रक्षेत्र में सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों जैसे:– शिक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन, सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेलकूद, क्लब एवं अन्य मदों पर किये गए व्ययों में हुई वृद्धि के साथ उत्पादकता स्तर में वृद्धि पाई गई। यह तथ्य प्रमाणित करता है कि शोध परिकल्पना के द्वितीय बिंदु **सामाजिक कल्याण व्यय (श्रमिक कल्याण) एवं उत्पादन में धनात्मक संबंध है, पुष्टि होती है।**

इन दोनों चरों के बीच संबंध ज्ञात करने के लिए कार्लपियर्सन के सहसंबंध गुणांक (Co-relation) के आधार पर विश्लेषण किया गया है।

उत्पादन एवं सामाजिक कल्याण कार्यों के बीच संबंध

चरों के बीच संबंध जानने के लिए प्रयोग की गई सह–संबंध	सह–संबंध परिणाम
कार्लपियर्सन सह–संबंध गुणांक	r = + 0.78

कार्लपियर्सन सह–संबंध गुणांक r = + 0.78 बताता है कि इन दोनों चरों उत्पादन एवं सामाजिक कल्याण व्यय के बीच उच्च स्तर का धनात्मक सह–संबंध है। स्पष्टत: कोयला उत्पादन में सामाजिक कल्याण कार्यक्रम का प्रत्यक्ष सीधा संबंध है। अतएव परिकल्पना बिंदु क्रमांक दो स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि श्रमिक कल्याण व्यय में धनात्मक संबंध है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

Books :

1. भगोलीवाल, टी.एन. (1983),'श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध' मेरठ संजीव प्रकाशन।
2. भगोलीवाल, टी.एन. (1995),'श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध', प्रकाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा.
3. मामोरिया एवं जैन (2005) 'भारतीय अर्थशास्त्र', प्रकाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा
4. मिश्र, पुरी (2006)'भारतीय अर्थव्यवस्था', प्रकाशन हिमालया पब्लिशिंग हाउस
5. सिन्हा, वी.सी. (1988) –'श्रम अर्थशास्त्र', नई दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस.
6. पाटनी, आर.एल. (1983) – 'सेवीवर्गीय प्रबंध एवं औद्योगिक संबंध', मेरठ संजीव प्रकाशन.

Journals, Magazines & Reports:

1. Coal Mines Welfare Organisation, Annual Report 1992-93.
2. Coal India Corporate Journal, Calcutta.
3. Economic Survey India, Govt. (2006-07)
4. Indian Economic Association Annual, A profile (2012).
5. Indian Journal of Economics (2012-13).
6. Indian Mines Geological Survey of India, Calcutta.

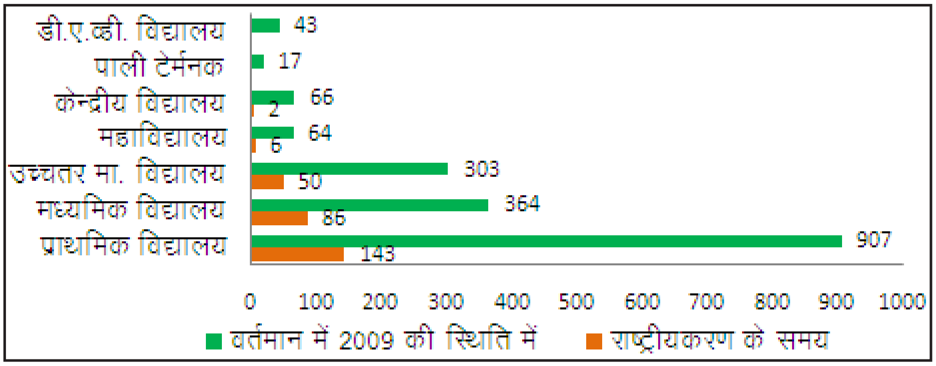

****

यौद्धिक अर्थव्यवस्था व सुरक्षा - परस्पर निर्भरता

डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा*

शोध सारांश - विश्व के किसी भी राष्ट्र की स्थायी सुरक्षा और उसका विकास इस बात पर निर्भर करते है कि वह प्राकृतिक संसाधनों के मामले में कितना धनी है। तथा वह अपने प्राकृतिक संसाधनों का कितना दोहन (उपयोग) करने में सक्षम हैं।

विश्व सैन्य इतिहास का अध्ययन करने से यह पूर्णत: स्पष्ट हो जाता है कि वे सभी प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर राष्ट्र जो कि अपने संसाधनों का उपयोग करने में सक्षम नहीं थे वे सदैव उन राष्ट्रों के उपनिवेश के रूप में रहे जो उनके संसाधनों का उपयोग करने के लिये आवश्यक विज्ञान और तकनीकी का उपयोग करने की क्षमता रखते थे।

भारतीय सैन्य इतिहास भी इसका एक उदाहरण है जिसमें ब्रिटेन ने भारत को अपनी विज्ञान और तकनीकी की उन्नत शैली के कारण ही अपने उपनिवेश के रूप में लम्बें समय तक बनायें रखा।

प्रस्तावना - युद्ध ने मानवजाति के समक्ष अनेकानेक समस्याओं को जन्म दिया है। युद्ध के प्रभाव से जन और धन दोनों ही जुड़े हुये हैं। युद्ध राष्ट्रो के अर्थतन्त्र को हड़प लेता है। यहाँ तक कि युद्ध में कई बार बड़े राष्ट्र छोटे राष्ट्रों के इतिहास को भी निगल जाते हैं फिर भी युद्ध के इतिहास की कहानी कभी समाप्त नहीं होती। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि आज भी अनेक बुराइयों के बावजूद युद्ध तकनीकी और औद्योगिक विकास का प्रेरक बना हुआ है। ईसा से करीब पाँच शताब्दी पूर्व यूनानी दार्शनिक हिंरेक्लिटस का युद्ध के महत्व के सम्बन्ध में विचार था कि यह सभी वस्तुओं का जनक है।

आर्थिक साधन ही युद्ध के शक्ति स्त्रोत हैं और प्रौद्योगिकी के उतपाद ही युद्ध के अस्त्र-शस्त्र हैं। मिथकीय युद्धों में भी आर्थिक साधन ने किसी न किसी रूप में अपनी भूमिका निभाई है। भूमि का सीधा सम्बन्ध अर्थ से है जो कि काल विशेष के सम्बन्धित समूह या कबीला या समाज और राज्य व्यवस्था के चरित्र निर्धारण में महत्वपूर्ण या निर्णायक भूमिका निभाता आया है।

इतिहासकार आर्नल्ड टायनवी ने भी स्वीकार किया है कि युद्ध उत्पाद के बगैर सम्भव नहीं है। दूसरे शब्दों में जब कोई देश अतिरिक्त उत्पाद करने में असफल होगा ता वह न तो युद्ध कर सकता है और न ही किसी दूसरे की सहायता कर सकता है। टायनबी के शब्दों में यह निस्सन्देह सत्य है कि पिछले पाँच हजार वर्ष के दौरान युद्ध मानवजाति के प्रमुख कार्यकलापों मे से एक रहा हैं। हमने अपने अतिरिक्त उत्पादन का अर्थात केवल जीवन निर्वाह के लिए या अपने आप को जीवित रखकर अपनी प्रजाति को विलुप्त होने से बचाये रखने के लिए जितना व्यय करना आवश्यक है उससे अधिक जो कोई उत्पादन हम करते हैं उसका एक बहुत बड़ा भाग युद्धों पर व्यय किया है। किन्तु निश्चित रूप से अतिरिक्त उत्पादन किये बिना युद्ध नहीं किया जा सकता क्योंकि युद्ध के लिए काम के घण्टों, खाद्य प्रदाथों, कच्ची सामग्री और शस्त्रों और दूसरे सैनिक साज-सामान में परिवर्तित किया जा सके।

युद्ध न केवल विनाशक है बल्कि अपने साथ और पीछे समस्याओं की एक लम्बी कतार छोड़ जाता है। इसी को ध्यान में रखते हुए फ्रेडरिक बेनहम ने यह माना कि 'विश्व संस्कृति की समस्त विपदाओं में युद्ध से बड़ी कोई विपदा नहीं हैं।' जाहिर है कि युद्ध में न केवल जन और धन का विनाश होता है बल्कि आने वाली पीढ़ियों को भी युद्ध के शारीरिक, मानसिक और आर्थिक प्रभावों को झेलना पड़ता है। युद्ध के बाद असीमित मूल्य वृद्धि का भार देश की जनता को लम्बे समय तक झेलना पड़ता हैं। जी ग्रोथर ने ठीक ही कहा है कि आज का युद्ध चाहे व परम्परागत हो, वैज्ञानक हो या तकनीकी हो सभी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों ही तरीके से प्रभावित अवश्य करते है। अत: दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि आज के युद्ध का मनोविज्ञान अन्य विज्ञानों की अपेक्षा अर्थशास्त्र के विज्ञान से सबसे अधिक प्रभावित होता है।

विश्व इतिहास का अध्ययन करने पर हमें ज्ञात होता है कि युद्धों में हुये व्यय और जन धन की असीमित हानि ने मानवता को ऐसे दौराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है जहाँ से उसे विनाश और विपत्ति के अलावा कोई दूसरा मार्ग सामने नहीं दिखाई देता।

आज युद्ध में भाग लेने वाले राष्ट्र युद्ध के सिद्धान्तों का अनुकरण करते हुये मात्र विजय प्राप्त करना ही नहीं चाहते बल्कि एक -दूसरे की सम्पति के अधिकारों को भी झपटते हैं। यदि राष्ट्र की अर्थव्यवस्था दुर्बल हे तो वह एक पल भी शक्तिशाली राष्ट्रों के सामन नहीं टिक सकता और उसकी पराजय निश्चित है। टैंक, विमानभेदी तोपें रॉकेट, पनडुब्बियाँ, रासायनिक, नाभिकीय व रेडियालॉजिकल शस्त्र इतने व्यय साध्य हो गये है कि प्रत्येक राष्ट्र की आर्थिक क्षमता इसे सहन नहीं कर सकती। ऐसी व्यवस्था में कोई विकल्प उसे अपनी सुरक्षा के लिए चुनना ही पड़ता है। यदि राष्ट्र की आर्थिक क्षमता सुद्दढ़ हैं तो वह अपनी आर्थिक शक्ति को बौद्धिक शक्ति में बदलकर शस्त्रों के उत्पादन की ओर अग्रसर होता है। अन्यथा इन्हें उन देशों पर निर्भर रहना पड़ता है जो इन शस्त्रों के निर्माणकर्ता व निर्यातक देश है।

युद्धकालीन व शान्तिकालीन अर्थव्यवस्था एक ही सिक्के के दो पहलू है। युद्धकालीन अर्थव्यवस्था का प्रमुख उद्देश्य युद्ध जीतना होता है, जबकि शान्तिकालीन अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्र के नागरिकों के सुख समृद्धि के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अर्थतन्त्र और संस्कृति के विकास पर बल दिया जाता है। इसके साथ ही कुछ सीमा तक सभी देश शान्तिकाल में सभी

* सहायक प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड(म.प्र.) भारत

प्रकार की युद्ध सामग्री तथा हथियार का भी निर्माण करते है जिससे युद्ध शुरू होने के प्रारम्भिक चरण में इसे उपयोग में लाया जा सकें। यह अति आवश्यक है, क्योकि इनके अभाव में कोई युद्ध लड़ा ही नहीं जा सकता। सैनिक व असैनिक दोनों का युद्धों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। खेतों से लेकर खानों तक सभी असैनिक, सैनिकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अपने-अपने क्षेत्र में युद्ध स्तर पर कार्य करते है। अत: यह कहा जा सकता है कि आधुनिक युद्ध युद्ध-क्षेत्र में नहीं बल्कि खानों और कारखानों मे लड़ा जाता है।

'वास्तव में युद्ध के तैयारी करने के समय को वास्तविक युद्ध काल समझा जाना चाहिए, क्योंकि जय-पराजय तो इन शान्तिकालीन तैयारियों पर ही आधारति होती है।' युद्धकालीन अर्थव्यवस्था को क्रियाशील बनाये रखने के लिये कुछ साधनों की आवश्यकता अनिवार्य होती है। ये साधन हैं, राष्ट्र का चरित्र, जनशक्ति, वैज्ञानिक व तकनीकी उन्नति, खाद्य पदार्थो का बाहुल्य, उच्चनुशासन इत्यादि।

युद्ध कालीन अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ

1. साधारणतया लाभ का उद्देश्य, प्रतियोगिता, माँग व पूर्ति का सिद्धान्त, जो साधारण अर्थव्यवस्था के सामान्य लक्षण हैं, को विशेष महत्व नहीं दिया जाता हैं। एक ही तथ्य को ध्यान में रखा जाता है कि युद्ध को कम से कम समय में जीत लिया जाए। इसके लिए चाहे क्यो नहीं महत्वपूर्ण आर्थिक सिद्धान्तों को त्यागना ही पड़े।

2. युद्ध की अपरिमित आवश्यकता की पूर्ति के लिए यौद्धिक प्रणाली को अंशत: या पूर्णत: रोक दिया जाता है और अर्थव्यवस्था के लिए धन प्राप्ति हेतु निम्न वित्तीय साधनों का सहारा लिया जाता है-

(क) करो की मात्रा में वृद्धि।

(ख) सरकार द्वारा सार्वजनिक नियन्त्रण।

(ग) घाटे की वित्ता व्यवस्था या स्फीतिकारी वित्ता व्यवस्था को अपनाना।

(घ) अधिक मुद्रा छापना।

3. युद्धकालीन अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत अधिकाधिक संख्या में स्वस्थ एवं कुशल व्यक्तियों को सेना के तीनो अंगो (स्थल, जल व नभ) में कार्य करने के लिये प्रेरित करना, तकनीकी ज्ञान से सम्बधित व्यक्तियों व सामान्य नागरिकों को औद्योगीकरण में लगाना होता है। कच्चे माल (Raw Material) का आयात युद्ध के समय विभिन्न कारणों से बन्द हो जाता है कभी-कभी शत्रु आर्थिक नाकेबन्दी (Economic Blocdkade) भी कर देता है। ऐसी स्थिति में अपने देश के उपलब्ध कच्चे माल का नियोजित ढंग से वितरण करना आवश्यक हो जाता है। जनशक्ति एवं कच्चे माल पर नियन्त्रण और मांग व पूर्ति के अनुसार उनका उचित वितरण भी अत्यन्त आवश्यक हैं।

4. सरकार सभी संस्थानों (सरकारी व गैर-सरकारी) को कड़ी चेतावनी देकर, हड़ताल, धरना, प्रदर्शन इत्यादि पर रोक लगाकर उत्पादन की वृद्धि पर जोर देती है।

उत्पादन बढ़ाने के लिए इस दिशा में कुछ अन्य प्रयास भी लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं।

1. व्यवस्थित श्रम व साधनों को कार्यरूप में परिवर्तित करना।
2. कार्य करने की निर्धारित अवधि को बढ़ाकर रात के समय कार्य करने की व्यवस्था करना।
3. ऐसे सैनिक व अधिकारियों की सहायता लेना जो सेवा निवृत हो चुका हो, किन्तु शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ हो।

युद्धकालीन अर्थव्यवस्था के समक्ष कुछ समस्याएँ भी है; क्योंकि वस्तुओं और सेवाओं को सामान्य नागरिकों के उपभोग से हटाकर सैनिक कार्यो में प्रयुक्त करना होता है; किन्तु यदि नियोजनबद्ध रूप से यह कार्य किया जाये तो इन समस्याओं का प्रभाव दीर्घकाल तक नहीं होता हैं। आन्तरिक यातायात नियमानुकूल चलता है, राशनिंग व्यवस्था स्थिर होती है, मूल्य नियन्त्रण का विकास होता है, अनुशासनबद्धता एवं त्याग की भावना पनपती है, किन्तु इसके लिए आवश्यक है कि देश के नागरिकों को यह आभास करा दिया जाये कि यह युद्ध उनका है और यह राष्ट्रीय हित में हैं।

युद्ध जहाँ तनावपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का परिणाम है वहीं युद्ध में अपार जन और धन की क्षति होती है। असंख्य नर-नारी, वृद्ध-बच्चे युद्ध की बलि चढ़ जाते हैं। अरबों-खरबों रूपये युद्ध में स्वाहा हो जाता है। शहर के शहर उजड़ जाते है और फिर से नई व्यवस्था के निर्माण में असीमित जन और धन की आवश्यकता होती है।

युद्ध का निरन्तर भय राष्ट्रों को आर्थिक रूप से अपने संसाधनों को शान्तिकालीन अर्थव्यवस्था से युद्धकालीन अर्थव्यवस्था की ओर हस्तान्तरित करने के लिए सदैव विवश करता है। इस प्रकार राष्ट्र के संसाधनों का एक बड़ा हिस्सा जो देश के नागरिकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में लगाया जाना चाहिए वह भविष्य की युद्धकालीन तैयारी के लिए झोंक दिया जाता है।

राष्ट्रीय सुरक्षा सभी राष्ट्रों के जीवन का एक अभिन्न अंग है। युद्ध हो या न हो लेकिन राष्ट्रीय सुरक्षा अनिवार्य हैं। इस सुरक्षा की अखण्डता को कायम रखने कि लिये रक्षा तैयारी राष्ट्रों की पहली आवश्यकता है। इस प्रकार अतीत के युद्धों को ध्यान में रखते हुए तथा भावी युद्ध की प्रकृति और भयानकता को देखते हुए राष्ट्र अपने रक्षा-व्यय में बेतहाशा वृद्धि करने को विवश होते हैं।

यौद्धिक अर्थव्यवस्था तथा सुरक्षा दोनों ही एक दूसरे के पूरक है क्योंकि चाहे सैन्य संसाधन हो, विभिन्न प्रकार की सेनायें हो सभी का गठन करने तथा संचालन करने के लिये बड़ी अर्थव्यस्था की आवश्यकता होती है। युद्ध के समय राष्ट्रीय सुरक्षा की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये ही राष्ट्र के विभिन्न आय के स्त्रोतो को तत्कालिन मुख्य आवश्यकता युद्ध की ओर परिवर्तन करना अनिवार्य हो जाता है तथा युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिये समस्त आर्थिक शक्तियों को सैन्य शक्ति के साथ मिलाकर ही स्थायी सुरक्षा अर्थात विजय प्राप्त की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Thomas Moddy : The war economy.
2. A. J. Toynbee : A Study of economic warfare.
3. X. Smith : Power of country.
4. Jatin Mishra : Economic power and security
5. J. Thomson : The world economic crisis.

****

ग्वालियर जिले का भौगोलिक पर्यावरण

डॉ. कौशलेन्द्र सिंह*

शोध सारांश – ग्वालियर जिला मध्य प्रदेश के उत्तरी सीमांत क्षेत्र में स्थित हैं। ग्वालियर जिलें की जलवायु कुछ इस प्रकार की है कि वर्ष भर के मौसम सदैव अधिकता को लिये रहते हैं। जैसे ग्रीष्म काल में अधिकतम तापमान 48 डिग्री तक हो जाता हैं। तो वही शीतकाल में तापमान 1 और 2 डिग्री तक ही रह जाता है इसके बावजूद भी वर्षा अधिकता में नहीं होती हैं। फलस्वरूप भू-जल स्तर की समस्या ग्वालियर जिलें में निरन्तर बढ़ रही हैं। किन्तु इस सबके बावजूद भी ग्वालियर जिले की सम्पर्क क्षमता बहुत ही अच्छी हैं। यह इस प्रकार की भौगोलिक रेखा पर स्थित है। जिससे कि भारत में कहीं भी आसानी से आवागमन किया जा सकता हैं।

प्रस्तावना – ग्वालियर जिला मध्य प्रदेश राज्य के उत्तरी भाग में स्थित है। यह 25.43 उत्तरी अक्षांश से 26.21 अक्षांश एवं 77.34 पूर्वी देशान्तर से 78.39 देशान्तर के मध्य स्थित है। जिले के उत्तर पूर्व में भिण्ड जिला, उत्तर पश्चिम में मुरैना जिला, पूर्व में दतिया जिला तथा दक्षिण में शिवपुरी जिला स्थित हैं। समुद्र की सतह से इस जिले की उँचाई 205 से 212 मीटर है। यह जिला कई छोटी-बड़ी पर्वत श्रृंखलाओं, मनोरम घाटियों व वनों से आच्छादित है। जिले का सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्रफल 4565 वर्ग कि.मी. है। जिले में तीन तहसीलें – गिर्द, डबरा तथा भितरवार तथा चार विकासखण्ड – घाटीगाँव, मुरार, डबरा और भितरवार है।

ग्वालियर जिले की जनसंख्या वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार 16,32,109 है, जबकि वर्ष 1991 में 14,15,948 थी। वर्ष 2000 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जाति की जनसंख्या 18.91 प्रतिशत थी, जबकि अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का प्रतिशत 3.49 प्रतिशत है। जिले की जनसंख्या का धनतव 357 प्रति वर्ग कि.मी. है।

ग्वालियर जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल 454649 हैक्टेयर है, जिसमें से वन क्षेत्र 109549 हैक्टेयर है और कृषि योग भूमि 24034 हैक्टेयर है, जिले में कुल बोया गया क्षेत्रफल 264409 हैक्टेयर में से 57402 हैक्टेयर द्विफसली है। सिंचाई का मुख्य साधन नहरें कुएँ तथा नलकूप है।

जिले की प्रमुख अनाज फसलें गेहूँ, चना, चावल, जवार, बाजरा, मक्का आदि हैं। दाल फसलों में अरहर, मूंग, चना, मटर आदि तथा तिलहन फसलों में सरसों, मूंगफली, तिल, सोयाबीन आदि प्रमुख है। जिले में मवेशी पालन, कुक्कुट पालन, बकरी पालन आदि की अच्छी संभावनाएँ हैं।

यह जिला दक्षिण-पश्चिम में मालवा के पठार और उत्तर तथा पूर्व में गंगा के विशाल मैदान के संगम पर स्थित है। प्राकृतिक रचना के अनुसार इसके चार नाम, जिनमें पश्चिम में पठारी भाग, मध्यवर्ती पहाड़ी क्षेत्र, दक्षिण पूर्वीय मैदान तथा उत्तर पूर्वीय मैदान है। जिले में 6-7 नदियाँ है, जिनमें मुरार, वैसाली, सिन्ध, पार्वती, नून, छछून्द तथा आसन नदियां प्रमुख हैं, किन्तु अधिकांश नदियाँ वर्ष में सूख जाती है।

जिले में अधिकतम वर्षा जुलाई-अगस्त एवं सितंबर माह में होती है तथा इसकी औसत मात्रा 934 मि.मी है। जिले में सबसे कम तापमान दिसंबर-जनवरी माह में औसत 4 डिग्री तथा अधिकतम तापमान मई-जून माह में औसतन 45 डिग्री सेल्सियस रहता है।

जिले का खनिज भण्डार व्यवसायिक रूप से महत्वपूर्ण है। यहाँ पर खनिज पत्थर तथा फर्सी पत्थर अधिक मात्रा में पाया जाता है। खनिज पत्थर की खदानें 43 हैं तथा फर्सी पत्थर की संख्या 42 है। इसके अतिरिक्त रेत, मुरम तथा खड़िया भी पाई जाती है। यह सहरिया आदिवासियों के रोजगार का साधन यही खदाने हैं। जिले में वन संपदा यत्र-तत्र बिखरी हैं। देशी औषधियों का यहां विपुल भण्डार है।

उद्योगों की दृष्टि से संपूर्ण जिला महत्वपूर्ण है। जिला उद्योग के माध्यम से स्थापित उद्योगों की संख्या 95 है। खादीग्राम उद्योगों की संख्या 116 है तथा ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत स्थापित उद्योगों की संख्या 65 है। इस प्रकार कुल लघु उद्योगों की संख्या 276, मध्यम उद्योग की संख्या 04 तथा वृहद उद्योगों की संख्या 02 है। इस प्रकार ग्वालियर जिले में कुल 282 उद्योग हैं। उपलब्ध साधनों को दृष्टिगत रहते हुए वन संपदा, कृषि संपदा व खनिज संपदा पर आधारित उद्योगों की प्रचुर संभावना हैं।

ग्वालियर जिला मध्य प्रदेश का एक प्रमुख जिला है। यहां का ग्वालियर शहर एक उद्योगिक केन्द्र है। यह शहर राष्ट्रीय राज्य मार्ग क्रमांक-3 पर स्थित है। यहां परिवहन के साधनों में हवाई जहाज, रेलमार्ग तथा बस मार्ग होने के कारण यातायात के साधनों का जाल बिछा हुआ हैं।

जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में परिवहन का मुख्य साधन मोटर गाड़ियां है। जिले में हवाई मार्ग दिल्ली से मुंबई जाते हुए यहाँ से गुजरता है। इसके अतिरिक्त रेलमार्ग दिल्ली से झांसी, मुंबई तथा नक्सी जाने वाली गाड़ियां यहां से गुजरती है। इसके अतिरिक्त संभाग के समस्त जिलों में सड़क द्वारा बसों का साधन हैं। ग्वालियर जिले में पक्की सड़कों की लंबाई 883 कि.मी. है जबकि कच्ची सड़कों की लंबाई 1748 कि.मी. है। जिले में परिवहन के उत्तम साधन उपलब्ध हैं।

ग्वालियर जिले में व्यापारिक बैंक, राष्ट्रीयकृत बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा अन्य विदेशी बैंक वित्तीय कार्यो का संपादन कर रहे हैं। इस बैकों की संख्या कुल 34 हैं, जबकि इन बैकों की शाखाओं की संख्या कुल मिलाकर 130 है, जो जिले में कार्यरत हैं तथा जिले के विकास में भागीदारी निभा रही हैं। यह शाखाएँ ग्वालियर मुख्यालय एवं नगरीय क्षेत्रों में व ग्रामीण तथा तहसील क्षेत्रों में पृथक-पृथक हैं। नगरीय क्षेत्रों में 73 बैकों की शाखाएँ तथा

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड (म.प्र.) भारत

ग्रामीण क्षेत्रों में 57 बैकों की शाखाएँ कार्यरत है।

जिले की निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या एवं उसकी बढ़ती हुई आवश्यकताओं तथा औद्योगीकरण होने के कारण उर्जा की आवश्यकता को बहुत अधिक बढ़ा दिया है। ग्रामीण क्षेत्र में भी बिजलीकरण के कार्यक्रमों के अंतर्गत गाँवों में घरेलू प्रकार की सिंचाई नलकूप तथा पंपिंग सेटों के कारण विगत् वर्षो में उर्जा की मांग बढ़ी है। इसके अतिरिक्त दैनिक जीवन में भी यंत्रों के बढ़ते हुए प्रयोग से उर्जा की खपत पिछले दस वर्षो से बढ़ी है।

जिले में कुल विधुत उपभोग 420179 हजार कि.वा.हा. है, जबकि कुल उपभोक्ता 204433 हैं। इस प्रकार प्रति व्यक्ति उपभोग 0.257 हजार कि.वा.हा. है। जिले में गत् दस वर्षो में विधुत उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई हैं।

ग्वालियर जिले का आर्थिक विकास भी प्रमुख तीन घटकों कृषि, उद्योग एवं सेवा क्षेत्र के बढ़ने के कारण ही हुआ है। यह जिला संभाग के अन्य जिलों से आर्थिक विकास की दृष्टि से संपन्न है, किन्तु इन तीनों क्षेत्रों के विकास से जिले का पर्यावरण प्रभावित हुआ है। गत् दस वर्षो में दशा और भी गंभीर हो गई है।

मिटटी की गुणवत्ता में हास मिट्टी प्रदूषण द्धारा ही होता है। प्राय: भूमि पर प्रदूषित जल विभिन्न रसायनों से मिश्रित कीचड़ अथवा कूड़ा फैक दिया जाता है। इसके अतिरिक्त अधिक फसल उत्पादन के लिये विभिन्न उर्वरकों का अधिक प्रयोग किया जाता है, जो जल के साथ निचली परतों में पहुंचते हैं, जो कीचड़ या प्रदूषित जल मिट्टी पर फैलता है, उसमें नाइट्रोजन तत्वों के साथ भारी धातु या जहरीले रसायन भी मिले रहते हैं। इनसे मिट्टी की उर्वरा शक्ति नष्ट होती है। फिर मिट्टी से होते हुए ये जहरीले पदार्थ भूमिगत जल को भी प्रदूषित करते हैं।

प्रदूषित मिट्टी से जहरीले कचरे को निकालना कठित होता है। वायु अथवा जल के माध्यम से प्रविष्ट अवांछित अथवा विषाक्त तत्व मिट्टी में शोषित होने के पश्चात् दीर्घकाल तक बने रहते हैं। कुल तत्वों के विषाक्तता में परिवर्धन भी हो सकता है। उदाहरणार्थ डी.डी.टी. डी.डी.ई. में परिणित होकर अधिक जहरीला बन जाता है। अब कुछ दिनों से अधिकतर ट्रेक्टर, हारवेस्टर आदि भारी मशीनों का उपयोग बढ़ रहा है। इन मशीनों के दबाब से मिट्टी कठोर हो जाती है, इस कारण मिट्टी की उर्वरता पर बुरा प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण ग्वालियर जिले की मृदा प्रदूषित हो रही हैं।

कृषि उत्पादन में कृषि की पैदावार में और अधिक बढ़ोत्तरी करने के लिये खेतों में रसायनिक खादों, जैसे-कीटनाशी एवं कवक नाशक रसायनों का प्रतिदिन प्रयोग बढ़ रहा है, जिससे जिले की भूमि में हारिकारक तत्वों की मात्रा बढ़ने से भूमि प्रदूषित हो रही है। इसी प्रकार सोडियम नाइट्रेड से क्षारीय विकास पैदा हो रहा है। भूमि में कीटों को नष्ट करने के लिये डी.डी.टी. बी.एच.सी. जैसे अधिक हानिकारक विषों का अधिक मात्रा में प्रयोग किये जाने से भूमि में रसायनों की मात्रा का अंश कई वर्षो तक रहता है और मृदा प्रदूषित हो रही है।

इसी प्रकार जिले में खेती के लिये खदानों के लिये वन काटे जा रहे हैं, जिससे जिले के पर्यावरण पर प्रभाव पड़ रहा है। जिले की नदियां मौसम के कारण, गर्मियों में अधिकांश सूख जाती है तथा कूड़ा एवं मल आदि अन्य गंदगी गिरने से प्रदूषित हो जाती हैं। यही हाल झील एवं तालाब के जल का हो रहा है, जिससे वह प्रदूषित हो रहे हैं।, क्योंकि कृषि उत्पादन आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है, किन्तु उससे जिले की मृदा प्रभावित हो रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गंभीर, संजय कुमार - वायु एवं जल प्रदूषण हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 2003
2. मुखर्जीए डॉ. रवीन्द्र नाथ - पर्यावरण प्रदूषण, एवं डॉ. भरत अग्रवाल साहित्य भवन, आगरा 1987
3. नौटियाल, शिवानंद - पर्यावरण समस्या और समाधान, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली 2004
4. सुखलाल, घनश्याम - पर्यावरण प्रदूषण हिन्द बुक सेन्टर नई दिल्ली, 1999
5. प्रो. जगदीश सिंह - पर्यावरण एवं संविकास राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2001

****

रासायनिक युद्ध ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में

डॉ. गिरीश शर्मा * डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा **

शोध सारांश – प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के समरतंत्र के सूक्ष्म विश्लेषण से यह पूर्णत: स्पष्ट होता है कि रासायनिक युद्ध कर्म के अंतर्गत आक्रमण का मुख्य केन्द्र बिन्दु शत्रु के अधिक जनबल के जमाव वाला स्थान (सार्वजनिक स्थान) होता है। यह सेना के लिए खतरा न होकर आम नागरिकों के लिए खतरा होता है एवं इससे सुरक्षा के लिए व्यापक राष्ट्रीय सुरक्षा प्रबंध (आपातकालीन प्रबंध) करना होते हैं। इस प्रकार के प्रबंध विशाल क्षेत्रफल एवं विशाल जनबल वाले राष्ट्र के लिए सुरक्षा व्यवस्था करना बहुत ही बड़ी चुनौती होते हैं।

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के उद्‌भव से ही युद्ध का एक मात्र उद्देश्य विजय प्राप्त करना अर्थात शत्रु को अपनी बात मनवाने के लिए बाध्य करना रहा है। युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिये सदैव एक ही आधारभूत सिद्धांत रहा है और वह है शत्रु को विस्मित (आश्चर्यचकित) कर देना। यही वह साधन है जिसके द्वारा कम समय तथा परिश्रम के विजय प्राप्त की जा सकती है और इस सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए ही प्राचीनकाल से वर्तमान अत्याधुनिक युग तक सभी सेनानायकों ने शत्रु को विस्मित करने के लिए नवीनतम शस्त्रास्त्रों एवं सामरिकी का उपयोग करते हुए शत्रु को आसानी से कम समय में पराजित होने के लिए बाध्य किया है।

यहाँ यह बात सर्वाधिक उल्लेखनीय है कि सेनानायकों ने रासायनिक पदार्थों का यौद्धिक उपयोग काफी विस्तृत रूप से किया है।'किसी भी प्रकार से शत्रु पर किसी गैस, तरल अथवा ठोस रासायनिक अवयवों का उपयोग करके शत्रु को स्थाई अथवा अस्थाई हानि पहुँचाते हुए युद्ध में विजय प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है, तो यह प्रयास रासायनिक युद्ध की श्रेणी में आता है।'

प्रथम विश्वयुद्ध में विभिन्न राष्ट्रों द्वारा उपयोग में लाये गये विभिन्न रसायनों का संक्षिप्त विवरण (अगले पृष्ठ पर देखे)–

प्रथम विश्व युद्ध के अंतर्गत औद्योगिक क्रांति चूंकि प्रारंभ ही हुई थी। अत: समस्त विश्व में रासायनिक उद्योग अपनी आरंभिक अवस्था में थे। इसके बावजूद भी सभी युद्धरत राष्ट्रों द्वारा कुल मिलाकर 1,80,000 टन रासायनिक एजेंटों का उत्पादन किया गया और उल्लेखनीय बात यह है कि इसमें से लगभग 1,20,000 टन रासायनिक एसेंटों का उपयोग प्रथम विश्वयुद्ध में कर लिया गया था, जो कि बहुत बड़ा प्रतिशत है। आंकड़ों के अनुसार प्रथम विश्वयुद्ध में रासायनिक एजेंटों द्वारा प्रभावित व्यक्तियों में जर्मनी से लगभग 2 लाख प्रभावित हुए 9 हजार मारे गये। फ्रांस से 1 लाख 90 हजार प्रभावित हुए 8 हजार मारे गये ब्रिटेन से 1 लाख 89 हजार प्रभावित हुए 8 हजार 1 सौ मारे गये। सोवियत संघ के 4 लाख 75 हजार प्रभावित हुए 56 हजार मारे गये तथा अमेरिका के 73 हजार प्रभावित हुए तथा 15 सौ मारे गये।

प्रथम विश्वयुद्ध की भांति ही द्वितीय विश्वयुद्ध में भी रासायनिक शस्त्रास्त्रों का बड़े पैमाने पर उपयोग किया गया। स्पेन के युद्ध में खुलकर क्लोरीन और मस्टर्ड गैस का उपयोग किया गया और एक अनुमान के अनुसार इस युद्ध में कुल मारे गये सैनिकों में से 35 प्रतिशत रासायनिक आक्रमण से ही मारे गये। द्वितीय विश्वयुद्ध में ही जापान ने चीन पर भारी संख्या में रासायनिक बमों का उपायेग किया। जर्मनी ने पौलैण्ड के विरूद्ध मस्टर्ड गैस का उपयोग किया। सोवियत संघ के विरूद्ध भी मस्टर्ड गैस का उपयोग किया। जर्मनी के द्वारा युद्ध बंधियों के लिए बनवाए गए बडे बडे कैम्पों मई 1940 से लेकर दिसम्बर 1943 तक लगभग 25 लाख कैदियों को गैस के चैम्बरों में दम घोंट कर मौत के घाट उतार दिया गया और प्राप्त आंकड़ों के अनुसार इस गैस चैम्बर को बनाने में कार्बन मोनोऑक्साइड और नाइट्रोजन साइनाइड नामक रासायनिक एजेंटों का उपयोग किया गया। सिंगापुर में भी मस्टर्ड गैस का उपयोग 1941 में किया गया। वहीं मिस्त्र के सैनिकों पर इजराइल द्वारा ही नाइट्रोजन साइनाइड का उपयोग किया गाय। ग्रीस के गृह युद्ध में भी गंधक के धुऐं का उपयोग किया गया तो अमेरिका ने उत्तरी कोरियायी ठिकानों पर नांपों नगर में बी–29 बम वर्षक वायु यानों द्वारा नाइट्रोजन साइनाइड का उपयोग किया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Menon, Raja (2004) Weapons of Mass destruction; options for India.
2. Jonathan R. (2018). Indian Ancient Military History : New Delhi.
3. Khanwilkar, M. (1983) Ancient Military History of India.
4. Robinson. J. Perry, Chemical and Biological Welfare
5. The Problem of Chemcial and Biological Warfare : SIPRI. Vol 2 :

* प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड(म.प्र.) भारत

जर्मनी द्वारा उपयोग में लाये गये रसायन

रसायन	प्रयोग की विधि	प्रयोग की दिनांक	रसायन का प्रभाव
जायलाइल बोनाइड	तोप के गोले में भरकर	31 जनवरी 1915	साधारण अश्रु उत्पाद पदार्थ
बेंजाइल ब्रोमाइड	तोप के गोले में भरकर	मार्च 1915	साधारण अश्रु उत्पाद पदार्थ
ब्रोनो मेथिल एथिल कीटोन	तोप के गोले में भरकर	जुलाई 1915	साधारण अश्रु उत्पाद पदार्थ
ब्रामोएसोटोन	तोप के गोले में भरकर	जुलाई 1915	विषाक्त शुद्ध उत्पादक पदार्थ
फिनाइल कार्बिल एमीन क्लोराइड दैहिक विष	तोप के गोले में भरकर	मई 1916	विषाक्त शुद्ध उत्पादक पदार्थ
मस्टर्ड गैस लिवीसाइड	तोप के गोले में भरकर	12 जुलाई 1917	फफोला उत्पादक पदार्थ
एथिल डाइक्लोअर्साइन	तोप के गोले में भरकर	मार्च 1918	फफोला उत्पादक पदार्थ
फेनिल कार्बिलअमीनफ्लोराइड		मई 1917	दैहिक विष (सिस्टेमेटिक टाक्सिस एजेंट)
फेनिल डाइक्लोआर्साइन	तोप के गोले में भरकर	सितम्बर 1917	फेफड़ो को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (विषाक्त)
रसायन	प्रयोग की विधि	प्रयोग की दिनांक	रसायन का प्रभाव
एथिल डाइफ्लोआर्साइन	तोप के गोले में भरकर	मार्च 1918	फेफड़ो को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (विषाक्त)
फेनिल डाइब्रोमोआर्साइन	मोर्टार बम	सितम्बर 1918	फेफड़ो को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (विषाक्त)
क्लोरीन	सिलेन्डर स्प्रे	22 अप्रैल 1915	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
मेथिल सल्फ्यूरालूल फ्लोराइड	गैस बादल ग्रिनेड	मई 1915	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
डाई मेथिल सल्फेट	तोपे के गोले में भरकर	अगस्त 1915	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
फास्जीन	गैस बादल	19 दिसम्बर 1915	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
ट्राइक्लोरोडाइमेथिल फ्लोरोफार्मेट	तोप के गोले में भरकर	19 मई 1916	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
डाइक्लोरोडाइमेथिल ईथर		जनवरी 1918	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
डाईफिनिल क्लोरो आर्साइन		जुलाई 1917	श्वसन तंत्र को हानि पहुँचाने वाले एजेन्ट (सामान्य)
डाइफेनिल सायनार्साइल		मई 1918	श्वसन तंत्र को हानि पहुँचाने वाले एजेन्ट (सामान्य)
इथाइल कार्बोजोल	तोप के गोल में भरकर	जुलाई 1918	श्वसन तंत्र को हानि पहुँचाने वाले एजेन्ट (सामान्य)
फेनिल डाइक्लोर्साइन	तोप के गोले में भरकर	सितम्बर 1917	विषाक्त
एथिल डाइक्लोर्साइन		मार्च 1918	विषाक्त
एथिल डाइब्रोमार्साइन		सितम्बर 1918	विषाक्त

फ्रांस द्वारा उपयोग में लाये गये रसायन

रसायन	प्रयोग की विधि	प्रयोग की दिनांक	रसायन का प्रभाव
एथिल ब्रोमोएसीटेट	राइफल ग्रिनेड	अगस्त 1914	अश्रु उत्पादक
बेन्जाइल आयोडाइड		नवम्बर 1915	अश्रु उत्पादक
ब्रोमो बेनाइल साइनाइड		जुलाई 1918	अश्रु उत्पादक
क्लोरोएसीटोन	राइफल गैस ग्रेनेड	नवम्बर 1914	विषाक्त अश्रु उत्पादक पदार्थ
आयोडोएसीटोन	तोप के गोले में भरकर	अगस्त 1915	विषाक्त अश्रु उत्पादक पदार्थ
एक्रोलीन	गैस ग्रेनेड, तोप गोले	जनवरी 1916	विषाक्त अश्रु उत्पादक पदार्थ
हाइड्रोसाइनिक अम्ल		जुलाई 1916	दैहिक विष (सिस्टेमेटिक टाक्सीक एजेन्ट)
साइनोजन क्लोराइड		अक्टूबर 1916	दैहिक विष (सिस्टेमेटिक टाक्सीक एजेन्ट)
ऐथिल सल्फ्यूराइडक्लोराइड	तोप के गोले में भरकर	जून 1915	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
मोनोक्लोरो ऐथिल क्लोरोफार्मेट	प्रोजेक्टर बम	18 जून 1915	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)
परक्लोरो मेथिल मरकप्टेन	गैस के गोले	सितम्बर 1915	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)

ब्रिटेन द्वारा उपयोग में लाये गये रसायन

रसायन	प्रयोग की विधि	प्रयोग की दिनांक	रसायन का प्रभाव
ऐथिल आयोडोएसीटेट	राइफल, तोप के गोल	24 सितम्बर 1915	अश्रु उत्पादक पदार्थ

रूस द्वारा उपयोग में लाये गये रसायन

रसायन	**प्रयोग की विधि**	**प्रयोग की दिनांक**	**रसायन का प्रभाव**
क्लोरोपिक्रिन		अगस्त 1916	विषाक्त अश्रु उत्पादक पदार्थ
क्लोरोपिक्रिन	गैस के बादल	अगस्त 1916	फेफड़ों को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ (सामान्य)

आस्ट्रिया द्वारा उपयोग में लाये गये रसायन

रसायन	**प्रयोग की विधि**	**प्रयोग की दिनांक**	**रसायन का प्रभाव**
साइनोजन ब्रोमाइड		सितम्बर 1916	फफोला उत्पादक पदार्थ (वेसीकेन्ट)

****

भारत में एकीकृत शिक्षा नीतियाँ और कार्यान्वयन

डॉ. अशोक कुमार त्यागी *

प्रस्तावना – प्रत्येक बच्चे को शिक्षा का अधिकार है, चाहे वह किसी भी जाति पंथ, लिंग और नस्ल का क्यों न हो। सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठनों के लिये नि:शक्तजनों की शिक्षा प्राथमिक मुद्दा बन गया है। सब के लिये शिक्षा (EFA) का लक्ष्य प्राप्त करने के लिये सरकार का संवैधानिक दायित्व एवं प्रारंभिक शिक्षा का सर्वव्यापीकरण ही इसका मूल कारण है। अब तक शिक्षा से वंचित वर्ग विशेष रूप से नि:शक्त बच्चों को सामान्य शिक्षा व्यवस्था में जहां तक संभव हो, शामिल करना ही समेकित शिक्षा का उद्देश्य है।

विकसित देशों में भिन्न भारत में नि:शक्त जनों की जनसंख्या (लगभग 60 मिलियन/6 करोड़ P.R. Ramanujam-2000) सर्वाधिक है। जबकि पिछले कुछ दशकों में भारत ने आर्थिक क्षेत्र में प्रभावशाली प्रगति की है। शक्ति समानता की क्रयशीलता के संदर्भ में विश्व की चौथी अर्थव्यवस्था है। इसके बावजूद भारत में 260 मिलियन/26 करोड़ से ज्यादा लोग निर्धनता का जीवन यापन कर रहे है। निर्धनता से विकलांगता और विकलांगता के परिणाम स्वरूप निर्धनता (Rao, 1990) का पैदा होना भी भारत में समेकिता शिक्षा के लिये चुनौती बन रहा है।

भारत में विशेष शिक्षा का संक्षिप्त इतिहास तथा एकीकृत शिक्षा के प्रावधान की दिशा में भारत सरकार द्वारा कानूनों और नीतियों में लिये गये परिवर्तन का भी इस शोध पत्र में विश्लेषण एवं मूल्यांकन किया गया है। नीति निर्माताओं शिक्षा प्रशासकों, शिक्षाविदों के समक्ष एकीकृत शिक्षा की चुनौतियों को ध्यान में रखकर कुछ ऐसे (Strategies) नीतियों को भी प्रस्तुत किया गया है। नीतियों के कार्यान्वयन हेतु बनाये गये विभिन्न कार्यक्रमों और उनके परिणामों का विश्लेषण भी इस शोध पत्र में दिया गया है।

एकीकृत एवं समेकित शिक्षा – संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा द्वारा सन् 1982 में नि:शक्तजनों के लिये विश्व कार्यक्रम घोषित किया और 1983–1992 को संयुक्त राष्ट्र का विकलांग के लिये दशक घोषित किया गया, उसके पश्चात् सदस्य देशों द्वारा विकलांगता उन्मूलन तथा नि:शक्तजनों के लिये अवसरों की समानता और पुर्नस्थापना के विभिन्न साधनों/तरीकों पर ध्यान दिया जाने लगा। ESCAP एशिया और प्रशान्त क्षेत्रों के लिये गठित आर्थिक सामाजिक आयोग द्वारा 1993–2002 को एशिया प्रशान्त क्षेत्रों का विकलांगों के लिये दशक घोषित किया, तदुपरान्त इस क्षेत्र में तथा भारत द्वारा नि:शक्तजनों की शैक्षिक सुविधाओं और पुर्नस्थापना की दिशा में कदम उठाये गये।

यूनस्को द्वारा 1994 'विशेष आवश्यकता शिक्षा के लिये विश्व सम्मेलन' (UNESCO & "World Conference on Special Needs Education") के पश्चात सलामान्सा घोषण पत्र (Salmanca Statement-1994) जारी किया गया, इसके पश्चात ही विकासशील देशों द्वारा बड़ी संख्या में अपनी नीतियों में परिवर्तन किया गया और उन्हें पुन: निर्धारित करते हुए यह व्यवस्था की गई कि नि:शक्त बच्चे सामान्य विद्यालयों में ही शिक्षा ग्रहण करे। अधिकांश विकसित देशों में (ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिक, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि में) पहले से ही इस प्रकार के कानून अथवा नीतियाँ थी जिनके द्वारा 'समेकित शिक्षा' (Inclusive Education) दी जा रही थी। किन्तु विकासशील देशों द्वारा इन बच्चों को अलग विद्यालयों "Segregated School" में शिक्षा व्यवस्था थी। 'समेकित शिक्षा' आ आशय है कि 'नि:शक्त बच्चों की मुख्य रूप से सामान्य शिक्षा के अन्तर्गत सामान्य कक्षा अध्यापक के द्वारा ही शिक्षा प्रदान करना किन्तु जहाँ आवश्यक एवं न्यायसंगत हो वहाँ नि:शक्त बच्चों की मुख्यरूप से सामान्य शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत सामान्य कक्षा अध्यापक के द्वारा ही शिक्षा प्रदान करना किन्तु जहाँ आवश्यक एवं न्यायसंगत हो वहाँ नि:शक्त बच्चों को दूसरी व्यवस्था के अन्तर्गत रिसोर्स रूम (Resources Room) में कुछ सिखाया जाये। (Mastroprier and Scruggs, 2004 p- 7) ऐतिहासिक रूप से यदि देखें तो हम पायेगें कि कुछ शिक्षा व्यवस्थाओं में समेकित शिक्षा की दिशा में एकीकृत शिक्षा मॉडल (Integrated Education Model) को अन्तरिम अवधारणा के रूप में अपनाया गया था। 'एकीकृत शिक्षा' मॉडल में 'जहाँ तक भी संभव हो नि:शक्त बच्चे सामान्य विद्यालय में ही जाते है।' तथा इस बात पर ध्यान दिया जाता था कि सामान्य विद्यालय की व्यवस्था से नि:शक्त छात्र तालमेल बिठाये बजाय बच्चे की शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुरूप उनकी पूर्ति कर व्यवस्था से तालमेल बनाये। भारत में आंशिक रूप से विकलांगता से ग्रस्त बच्चों (Mild Disabilities) को (जिन्हें आसानी से सामान्य विद्यालय में शामिल किया जा सकता है) ही एकीकृत शिक्षा प्रदान की गई जो बच्चे गंभीर विकलांगता (Severe Disabilities) से ग्रस्त है उन्हें शिक्षा व्यवस्था नहीं मिली अथवा दुर्लभ स्थिति में वे बच्चे विशेष (Special School) में शिक्षा ग्रहण करते हैं।

विशेष शिक्षा से एकीकृत शिक्षा की ओर – 'वृद्ध बीमार एवं नि:शक्त जनों की देखभाल करना भारत की सांस्कृतिक विरासत का भाग रहा है। (Karna, 1999) प्राचीन समय से ही निर्धन और निराश्रित व्यक्तियों की मदद करना भारत की सांस्कृतिक विरासत रहा है। हिन्दु धर्म के मूल्य करूणा, दया, मानवप्रेम और एक दूसरे की मदद करना रहा है। समुदाय व्यवस्था (Guild System) प्राचीन भारत में होती थी जिससे समाज के वंचित वर्ग की उन्नति में योगदान किया जाता था। संयुक्त परिवार और रक्त संबंधों की प्रथा द्वारा भी इस तरह का समर्थन एवं सहयोग किया जाता रहा है। एम. माईल्स (Mils M., 2000) के अनुसार 'नि:शक्त बच्चों को शिक्षित करने

* 26, छतरपुर, नई दिल्ली-74, भारत

के प्रारंभिक प्रयास भारत में यूरोप से बहुत पहले प्रारम्भ हो चुके थे। उदाहरण स्वरूप तक्षशिला की खुदाई में बच्चों के जिस प्रकार के खिलौने पाये गये, वह विशेष पाठ्यपुस्तक अनुकूल (Specially Adapted Curricula) है। भारत की शिक्षा की गुरूकुल व्यवस्था जो अनेक शताब्दियों तक रही है। वह बच्चों एवं उनके परिवारो की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती रही तथा बच्चे की क्षमताओं को पहचान कर उनको जीवन कौशल की शिक्षा प्रदान करती रही। (Singh, R 2001) हालांकि औपनिवेशिक काल में ये शैक्षिक एवं पुर्नस्थापना की व्यवस्थायें समाप्त हो गई।

भारत में नि:शक्त बच्चों की औपचारिक शिक्षा 1869 में बनारस में जेने लुईपोट (Jane Lupot) द्वारा एक सोसायटी की मदद से प्रारंभ किया गया। सन 1885 में मुम्बई में श्रवण बाधितों के लिये तथा 1887 में अमृतसर में दृष्टि बाधित लोगों के लिये प्रारंभ किया गया। मानसिक एवं शारीरिक विकलांगों के लिये 1918 में कुर्सियांग (पूर्वी भारत) में औपचारिक विद्यालय प्रारंभ किया गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी नि:शक्त बच्चों के लिये शिक्षा व्यवस्था अलग विद्यालयों में की जाती रही। विभिन्न गैर सरकारी संगठनों (NGOs) की मदद से इनकी शिक्षा की जिम्मेदारी बढ़ती गई। 1966 तक भारत में विशेष विद्यालयों की स्थिति इस प्रकार रही– (Aggarwal R] 1994)दृष्टि

बाधित विद्यार्थियों के लिये	–	115 विशेष विद्यालय
श्रवण बाधित विद्यालयों के लिये	–	70 विशेष विद्यालय
अस्थि विकलांग विद्यार्थियों के लिये	–	25 विशेष विद्यालय
मानसिक विकलांग विद्यार्थियों के लिये	–	27 विशेष विद्यालय

पाण्डेय एवं अडवानी, 1997 के अनुसार 1991 तक भारत में 1200 विशेष विद्यालय थे–

सन् 1974 में भारत सरकार द्वारा सर्वप्रथम 'एकीकृत शिक्षा' को बढ़ावा देने के लिये विकलांगों के लिये एकीकृत शिक्षा (IEDC) का कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। यह कार्यक्रम कोठारी आयोग (1964–66) की रिपोर्ट पर आधारित शिक्षा के लिये राष्ट्रीय नीति–1968 के अनुरूप था। इस कार्यक्रम के द्वारा नि:शक्त बच्चों को सामान्य विद्यालयों में प्रवेश को बढ़ावा दिया गया। इन बच्चों को पुस्तकों, लेखन सामग्री, स्कूल यूनिफार्म परिवहन, विशेष उपकरण एवं यंत्र के रूप में वित्तीय सहायता प्रदान की। इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन में राज्य सरकारों द्वारा 50 प्रतिशत वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी गई। किन्तु इस कार्यक्रम को बहुत ही कम सफलता प्राप्त हुई। 1983 में महाराष्ट्र में ए. राने द्वारा किये गये शोध के अनुसार निष्कर्ष इस प्रकार रहा– (1) प्रशिक्षित एवं अनुभवी अध्यापकों की अनुपलब्धता (2) सामान्य विद्यालयों के अध्यापकों एवं स्टाफ में नि:शक्त बच्चों की विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं की समस्याओं की जानकारी का न होना है। (3) कार्यक्रम की असफलता का मुख्य कारण शैक्षिक सामग्री एवं उपकरणों की अनुपलब्धता। इस योजना के क्रियान्वयन में संबंधित विभिन्न विभागों के मध्य समन्वय का अभाव रहा। (आजाद– 1996, पाण्डेय एवं अडवानी 1997 द्वारा)। मनी– 1988 की रिपोर्ट के अनुसार 1979–80 तक इस योजना से पूरे देश में भाग 81 विद्यालयों में 1981 बच्चे शिक्षा से लाभान्वित हुए।

अनेक कमियों के कारण इस कार्यक्रम की 1992 में समीक्षा की गई और पुन: निर्धारित योजना के अनुसार एकीकृत शिक्षा की इस योजना को लागू करने वाले विद्यालयों के लिये 100 प्रतिशत वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जाने लगी विभिन्न गैर सरकारी संगठनों को भी पूर्ण वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जाने लगी। मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग की 1999 की वार्षिक रिपोर्ट के आधार पर 17 राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में 17040 सामान्य विद्यालयों में 55,271 नि:शक्त बच्चों ने प्रवेश लिया। सूचना और प्रसारण मंत्रालय के अनुसार सन् 2000 तक इस योजना का कार्यान्वयन केरल में सर्वाधिक सफलता से किया गया, यहां पर 4487 विद्यालयों में 12961 नि:शक्त बच्चों का प्रवेश था।

सन् 1987 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने यूनिसेफ (Unicef) एवं राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) के सहयोग से 'विकलांगों' के लिये एकीकृत शिक्षा की परियोजना (PIED) विकसित की। इस परियोजना को मुख्य उद्देश्य 'विकलांगों की एकीकृत शिक्षा' (IEDC) की योजना को सुदृढ़ करना था। यह योजना किसी एक विद्यालय अथवा संस्थान के लिये कार्यक्रम न होकर 'संयुक्त क्षेत्र अवधारणा' के आधार पर लागू की गई। उस निर्धारित क्षेत्र के अन्तर्गत आने समस्त सामान्य विद्यालयों में इस योजना (PIED) को लागू कर उस ब्लॉक को एकीकृत विद्यालय में परिवर्तित किया गया। इन विद्यालयों को अब विशेष उपकरण शिक्षण सामग्री और विशेष शिक्षा के अध्यापक की व्यवस्था करनी होती थी। इस योजना का मुख्य पक्ष शिक्षकों का प्रशिक्षण। प्रत्येक विद्यालयों के शिक्षकों के लिये उस चयनित ब्लॉक में तीन स्तरीय प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई। यह इस प्रकार से थी –

1. सामान्य विद्यालयों के समस्त शिक्षकों के लिये पांच दिवसीय ओरिएन्टेशन/उन्मुखीकरण कार्यक्रम
2. 10 प्रतिशत शिक्षकों के लिय 6 सप्ताह का तीव्र प्रशिक्षण कार्यक्रम।
3. आठ से दस सामान्य स्कूलों के शिक्षकों के लिये एक वर्षीय बहुवर्गीय प्रशिक्षण कार्यक्रम। एक वर्षीय प्रशिक्षण के उपरान्त शिक्षक को रिसोर्स शिक्षक के रूप में कार्य करना होता था।

इस परियोजना के काफी सकारात्मक परिणाम आए। जंगीरा एवं अहूजा 1993 के अनुसार, शिक्षकों को अब पहले की तुलना में ज्यादा अच्छी कार्यक्रम योजना और प्रबंध कौशल उपलब्ध होने लगा। अनेक राज्यों ने इस नई एकीकृत कार्यक्रम की अपनी क्षमता को बढ़ावा। सामान्य विद्यालयों के शिक्षक एवं छात्रों के लिये अब नि:शक्त बच्चे स्वीकार्य होने लगे। इस परियोजना की सफलता शिक्षा विभाग की वचनबद्धता के कारण संभव हो सकी।

1993 में 'भारतीय पुर्नवास परिषद्' के गठन के उपरान्त एक और ऐतिहासिक कार्य भारत सरकार द्वारा 1996 में 'नि:शक्त जन अधिनियम 1995'बनाकर किया गया। यह अधिनियम (Persons with Disabilities [Equal Opportunities Protection of Rights and Full Participation) Act of 1995, पुर्नवास की दृष्टि से प्रतिबंधात्मक एवं प्रगति मूलक है। यह अधिनियम विकलांगता की प्रारंभिक स्तर पर पहचान उसका उन्मूलन, शिक्षा रोजगार, भेदभाव समाप्ति, शोध और मानव शक्ति का विकास, सुरक्षात्मक उपाय सामाजिक सुरक्षा और शिकायत निवारण आदि का प्रावधान व्यापकता से करता है। दृष्टिहीन, अल्पदृष्टि, कुष्ठरोगी, श्रवण बांधित, अस्थि विकलांगता, मानसिक अविकसित ओर मानसिक अस्वस्थ। इस अधिनियम के द्वारा यह प्रावधान किया गया है कि भारत सरकार, राज्य सरकारें और केन्द्र शासित प्रदेशों की सरकारें यह सुनिश्चित करें कि '18 वर्ष तक आयु के नि:शक्त बच्चों को नि:शुल्क और उचित शिक्षा मिलें।' शासन के तीनों स्तरों पर एकीकृत शिक्षा को बढ़ावा दिया जाये। यह

अधिनियम विशेष आवश्यकता बाले बच्चों की शिक्षा की व्यापक योजना का प्रावधान करता है तथा परिवहन सुविधा, बाधारहित भवन, नि:शुल्क पुस्तकें एवं अन्य अध्ययन सामग्री, छात्रवृत्ति, पाठ्यक्रम की पुर्नरचना, परीक्षा प्रणाली में परिवर्तन इनकी विशेष आवश्यकतानुसार करने की सुविधा प्रदान करता है।

भारत जैसे देश में जहाँ विकलांगता की समस्या इतनी अधिक जटिल हो तथा संसाधनों का नितांत अभाव एवं उदासीन सामाजिक दृष्टिकोण हो। वहाँ केवल एक मात्र आशा की किरण-यह अधिनियम/कानून ही है, जो इस परिस्थिति में आमूल परिवर्तन ला सकता है, हालांकि बहुत कम समय में समाज के रूख में क्रांतिकारी परिवर्तन लाना संभव नही है। किन्तु नि:शक्तजनों के लिये शिक्षा, रोजगार, सार्वजनिक भवनों, बाजारों, परिवहन एवं संचार की उपलब्धता संभव हो सकेगी।

यदि यह अधिनियम पूर्ण ईमानदार एवं इच्छा शक्ति से लागू कर दिया जायें तो 3 करोड़ नि:शक्त बच्चों की शैक्षिक परिस्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन हो जायेगा, जो अभी शिक्षा की सुविधा से वंचित है। हालांकि विश्व के दूसरे सबसे बड़ी जनसंख्या वाले इस देश में इतनी बड़ी संख्या में बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के लिए अनेक चुनौतियों एवं मुद्दे का समाधान भारतीय समाज में लघु एवं वृहद स्तर पर किया जाना है।

वर्तमान में समेकित शिक्षा के कार्यान्वयन में चुनौतियों इस प्रकार है-

1. **विकलांगता और निर्धनता के पारस्परिक संबंध -** भारत की जनसंख्या लगभग 1 अरब 2 करोड़ से अधिक है जो विश्व की जनसंख्या का 17 प्रतिशत है तथा विश्व मे विद्यालय न जाने वाले बच्चों में 20 प्रतिशत बच्चे भारत में है। कनाडियन इन्टरनेशनल डेवलपमेंट एजेन्सी (CIDA-2003) के अनुसार यद्यपि भारत ने पिछले कुछ दशकों में प्रभावशाली प्रगति की है और वह आज विश्व की 11वीं औद्योगिक शक्ति है फिर भी भारत में 26 करोड़ व्यक्ति निर्धनता का जीवनयापन करते हैं। अधिकांश नि:शक्त बच्चे निर्धन परिवारों में है। राव (1990) के अनुसार निर्धनता का कारण विकलांगता है, पर भारत जैसे देश में विकलांगता का कारण निर्धनता भी संभव है। निर्धनता और विकलांगता के इस मेल से अभावग्रस्तता पैदा हो रही है। तथा इस सामूहिक लक्षण के कारण नि:शक्तजनों का समुदाय की सामान्य दिनचर्या एवं गतिविधियों तथा सामान्य विद्यालय जाने की प्रक्रिया में बाधा खड़ी हो रही है। बी.एल. शर्मा (2001) के अनुसार वर्तमान में ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार द्वारा नि:शक्त बच्चों के परिवारों को लक्ष्य बनाकर गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम पर 3 प्रतिशत निधि प्रदान की है। यद्यपि बच्चों को विद्यालय भेजने के लिये इनके निर्धन परिवारों को प्रेरित करना एक बहुत बड़ी चुनौती है।

2. **प्रचलित अभिवृत्ति में परिवर्तन की चुनौती -** नि:शक्तजनों के सामाजिक एकीकरण में सबसे बड़ी बाधा सामान्य व्यक्ति की विकलांगों के प्रति सोच/अभिवृत्ति है। अत्याधिक गंभीर विकलांगता एंव दिखाई देने वाली विकलांगता के प्रति अछूत एवं अलगाव की भावना देखने को मिलती है। सामान्य विद्यालयों में इन बच्चों के जाने के प्रयासों पर इस प्रकार की भावना एवं सोच को धार्मिक संस्थानों द्वारा भी प्रबलता प्रदान की जाती है। हिन्दुओं (जो भारत की कुल जनसंख्या का 85 प्रतिशत है) का विश्वास है कि विकलांगता पूर्व जन्म में किए गये पापों का परिणाम है। अक्सर कर्म के सिद्धान्त का उल्लेख कर दिया जाता है। इसी तरह मुस्लिम भी विकलांगों के जीवन में सुधार के प्रयास को 'अल्लाह की इच्छा की अवज्ञा अथवा व्यक्ति के कर्म में हस्तक्षेप मानते है।' (राव-1999, हेरीकस व्हाईट-1996)।

आलुर (2001) के अनुसार भारत में विकलांगता को सामान्य स्वभाविक अथवा प्राकृति नहीं मानते है बल्कि इसे बुरी नजर से देखा जाता है। विकलांगता ग्रस्त परिवारों में भी इसे एक दोष, पाप एवं लांछन के रूप में देखने का भय भी पाया जाता है। हालांकि भारतीय समाज में विभिन्न मूल्यों को समाहित, स्वीकार एवं एकीकृत करना रहा है। किन्तु विकलांगता के मामले में सामाजिक भूमिका बड़ी नकरात्मक, भेदभाव मूलक और अलगाववादी रही है।

यह 3 करोड़ नि:शक्त बच्चों की इतनी बड़ी क्षमता पर कुठाराघात है। विकलांगता के संबंध में पूर्वाग्रह, मानसिक एवं अविवेक पूर्ण कहावतों को जड़ से उखाड़ना होगा।

3. **सार्वजनिक शिक्षा के बारे में जागरूकता के अभाव की चुनौती** -वर्तमान अधिनियम के बारे में अधिकांश व्यक्ति, संरक्षक विद्यालयीन कार्मिकों आदि को जानकारी नहीं है। सामान्य विद्यालयों में नि:शक्त बच्चों को शामिल करने पर वित्तीय सहायता की उपलब्धता की जानकारी ही नही है। यद्यपि इस बात के प्रमाण भी है कि जहां पर कुछ शिक्षाविदों को शासन की नीतियों एवं कानूनों की जानकारी है वहां पर एकीकृत शिक्षा के कार्यान्वयक में उनकी दृष्टि सकारात्मक है। (शर्मा 2001) तथा जहाँ पर सरंक्षकों (माता-पिता) को इस बारे में ज्ञान है और वे एकीकृत शिक्षा का समर्थन करते है वहाँ इसका सकारात्मक प्रभाव विद्यालयीन कार्मिकों पर देखने को मिलता है। जब तक लोगों को विशेष रूप से नि:शक्त बच्चों के माता-पिता एवं विद्यालय में कार्यरत कार्मिकों को इस अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों की जानकारी न हो जाये तक भारत सरकार तथा राज्य सरकार की एकीकृत शिक्षा के प्रति वचनबद्धता व्यर्थ ही है। बी.एल. शर्मा (2001) यद्यपि निरूशक्तजन अधिनियम के बारे में माता-पिता, सरकारी अधिकारियों के अनुसार गैर सरकारी संगठनों आदि को जानकारी देने का प्रयास किया गया है किन्तु विस्तार की दृष्टि से यह काफी सीमित ही रहा है। (चटर्जी-2003) 'राष्ट्रीय विकलांगता संसाधन केन्द्र' की अत्यधिक आवश्यकता है जो विकलांगता के विभिन्न पक्षों की जानकारी एकत्रित एवं प्रदान करने का कार्य करें एवं सूचना प्रौद्योगिकी, दूर संचार की तकनीक का प्रयोग करते हुए इनके विभिन्न साधनों- टी.वी., रेडियों एवं इंटरनेट आदि का प्रयोग किया जाए। जनसंचार के विभिन्न साधनों से कार्यक्रम प्रसारित किये जाये। मनोरंजनात्मक कार्यक्रम, डाक्यूमेन्टरी प्रोजेक्ट, विडियो कार्यक्रम आदि भारत के विभिन्न भागों में इस केन्द्र द्वारा प्रस्तुत किये जाये। इन कार्यक्रमों का शिक्षाविदों पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा जो यह समझते है कि एकीकरण केवल पश्चात्य अथवा विकसित देशों में ही संभव है।

4. **मूल कार्मिकों/शिक्षकों को पर्याप्त प्रशिक्षण की चुनौती -** भारत के सामान्य विद्यालयों में इन बच्चों के शिक्षा कार्यक्रम के प्रकार एंव उनके कार्यान्वयन करने वाले व्यक्ति अधिकांशत: अप्रशिक्षित है। अधिकांश शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में विकलांगता अध्ययन शमिल नहीं है। मेरेठी एंव नारायण (2000) के अनुसार जिन विश्वविद्यालयों ने अपने यहां विशेष शिक्षा को पाठ्यक्रम में रखा भी है वे एकीकृत व्यवस्था में शिक्षकों को पर्याप्त व्यवहारिक प्रशिक्षण उपरान्त विशेष अथवा एकीकृत विद्यालय में नियुक्ति बहुत ही कम दी जाती है।

पूरे देश में ही विषयवस्तु, प्रक्रिया और परीक्षा आदि में अत्याधिक भिन्नता पायी जाती है यद्यपि वर्तमान के कुछ वर्षों में भारतीय पुर्नवास परिषद् द्वारा समय बद्ध तरीके से विशेष शिक्षा के कार्यक्रमों का मूल्यांकन कर उनका एक न्यूनतम स्तर निश्चित किया है, इन बच्चों की आवश्यकता

अनुरूप न केवल विशेष शिक्षा के प्रशिक्षित शिक्षक नितांत ही कम है। बल्कि प्रशिक्षित शिक्षाविदों का भी अत्याधिक अभाव है। इसी कमी को देखते हुए परिषद् ने भविष्य में अधिक संख्या में शिक्षकों को प्रशिक्षण की अनुशंसा की है। विशेष शिक्षाविदों के वर्तमान प्रशिक्षण कार्यक्रम को परिषद् पुन: निर्धारित कर एकीकृत शिक्षा पर ज्यादा ध्यान देगी। सामान्य विद्यालयों में एकीकृत शिक्षा को कार्यान्वित करने के लिये शिक्षकों को प्रशिक्षण देने का कार्य ये विशेष शिक्षाविद ही केन्द्रीय मूल संसाधन के रूप में करेगें। और अपने अनुभवों के आधार पर इन्हें व्यवहारिक मुद्दों पर सलाह देगें।

5. अपर्याप्त संसाधन की चुनौती – भारत के अधिकांश विद्यालय का डिजाईन एवं निर्माण निम्न स्तर का है जिनमें बहुत ही कम नि:शक्त बच्चों की आवश्यकता को पूरी करते है। चटर्जी (2003) के अनुसार, सामाजिक पूर्वाग्रह एवं नाकारात्मक सोच/अभिवृत्ति की तुलना में विकलांगों के अनुकूल परिवहन सेवा, भवन की पहुँच/उपयोगिता आदि का अभाव बड़ी समस्या है। विद्यालयों में शिक्षा की इस एकीकृत व्यवस्था के क्रियान्वयन की सफलता हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकारों को अधिक संसाधन प्रदान करने होगें।

भारत को इन चुनौतियों से अधिक एवं आगे जाकर इन कठिन शैक्षिक सुधारों को लागू करने हेतु अन्य विकासशील देशों की भिन्न विशेषताओं को बाँटना होगा। भारत एक बहुभाषी एवं बहुपंथी राष्ट्र है जिसके निवासी कठोर सामाजिक आर्थिक एवं जातीय आधारों पर विभाजित है। इसलिये चुनौतियों को सावधानी पूर्वक पहचान कर उनका निराकरण व्यवस्थित तरीके से किया जाये अन्यथा एकीकरण की नीति मात्र कागजों पर ही रह जायेगी। यहाँ आगामी भाग में भारत के नीति निर्माताओं द्वारा एकीकृत शिक्षा के कार्यान्वयन हेतु कुछ उपयोगी नीति योजना प्रस्तुत है।

चुनौतियों का समाधान हेतु संभावित नीति–

1. शिक्षकों का प्रशिक्षण– वास्तव में भारत में यदि एकीकृत शिक्षा लागू करनी है तो शिक्षकों के प्रशिक्षण को उच्च प्राथमिकता देनी होगी। शिक्षा अधिकारियों को प्रत्येक विद्यालय से या कुछ विद्यालयों के समूह से एक अध्यापक को प्रशिक्षित करने की नीति अपनानी होगी। विभिन्न विकलांगताओं के बच्चों के साथ काम करने के गहन प्रशिक्षण के उपरान्त इस शिक्षक को किसी एक विद्यालय अथवा आस–पास के दायरों में स्थित कुछ विद्यालयों में एकीकरण विशेषज्ञ या एकीकरण सुगामी (Integration Specialist or Inclusion Facilitator) के रूप में कार्य करना होगा। अनेक शोधकर्ताओं ने भी ऐसे अनुशंसा की है। और भारत में अनेक भागों में कुछ मात्रा में यह कार्यक्रम–1987 योजना के द्वारा चल भी रहा है। इसी प्रकार का प्रशिक्षण सेवारत शिक्षकों को भी दिया जाये, जिसे वे अपने ज्ञान एवं कौशल को वर्तमान स्तर का रख सके। इस प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम की विषयवस्तु की पहचान भी एक महत्वूपर्ण कार्य रहेगा। भारत की विभिन्नता (सामाजिक– आर्थिक, भाषायी एवं धार्मिक आदि) के कारण भविष्य में निरन्तर शोध की आवश्यकता रहेगी। कुछ शोध कार्यों द्वारा यह निष्कर्ष पाया गया कि मूल कौशल, व्यावसायिक ज्ञान, संचार और वार्तालाप कुशलता, मूल्यांकन की तकनीक, संसाधन प्रबंध, बहुस्तरीय शिक्षण का ज्ञान, निर्देशात्मक तकनीक, समकक्षों का शिक्षण और सहयोगात्मक सीखने की तकनीक आदि की नि:शक्त बच्चों की नियमित कक्षाओं में आवश्यकता रहती है, इनका प्रयोग किया जाये।

2. प्रशिक्षण की नवीन विधियों एवं तकनीक की आवश्यकता– भारत में सामान्य विद्यालयों के शिक्षकों को व्यापक स्तर पर प्रशिक्षण दिये बिना एकीकृत शिक्षा के कार्यक्रम कर सफलतापूर्वक लागू नहीं किया जा सकता। प्रशिक्षित होने वाले शिक्षकों की बड़ी संख्या को देखते हुए यह निश्चित है कि वर्तमान परपंरागत प्रशिक्षण पद्धति हमारी आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर पायेगी। इसलिये शिक्षकों के व्यापक स्तर पर प्रशिक्षण के लिये कुछ नवीन विधियों एवं तकनीक की आवश्यकता है।

पी.आर. रामानुजम (2001) के अनुसार इतनी बड़ी संख्या में शिक्षकों को शिक्षित करने हेतु दूरस्थ मुक्त अधिगम Distance Open Learning & DOL का प्रयोग किया जा सकता है। चूंकि (IGNOU) इग्नू ने बड़ी संख्या में विद्यार्थियों हेतु इस (DOL) पद्धति सफलता पूर्वक पाठ्यक्रम चला रहा है। इग्नू RCI के सहयोग से नि:शक्त बच्चों को संरक्षक, प्रशिक्षक एवं शिक्षकों हेतु विभिन्न पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने की योजना बना रहा है। जिसमें एक सात दिवसीय पाठ्यक्रम इन बच्चों के माता पिताओं हेतु सत्र 2006 से प्रारंभ किया जा चुका है। यद्यपि इस प्रकार के समस्त पाठ्यक्रमों में महत्वपूर्ण व्यवहारिक प्रयोग ही है।

3. विभिन्न मंत्रालयों के बीच समन्वय की आवश्यकता– विभिन्न मंत्रालयों द्वारा निशक्तजनों हेतु कई प्रकार की सेवाएं प्रदान की जा रही है। 'एकीकृत शिक्षा' का उत्तरदायित्व मानव संसाधन विकास मंत्रालय का है एवं विशेष विद्यालयों में शिक्षा देने का उत्तरदायित्व सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय का है। इससे सीमित संसाधनों की बर्बादी ही होती है। तथा भारत की क्षमता इस प्रकार के प्रशासनिक प्रबंध को वहन करने की नहीं है। नि:शक्तजनों के कल्याण हेतु निधि का प्रभावी एवं उचित उपयोग करने हेतु इस प्रकार के प्रशासनिक प्रबंधों को छोटा करने की आवश्यकता है।

4. एकीकृत शिक्षा के क्रियान्वयन में गैर सरकारी संगठनों को शामिल करना– कनाडा अर्न्तराष्ट्रीय विकास एजेन्सी–2003 के अनुसार भारत में दस लाख से ज्यादा गैर सरकारी संगठन कार्यरत है। सभी संगठन शिक्षा के क्षेत्र में कार्य नहीं करते फिर भी बड़ी संख्या में गैर सरकारी संगठन नि:शक्त बच्चों को शिक्षा प्रदान करने का कार्य कर रहे है। ये ही संगठन एकीकृत शिक्षा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं चूंकि ये सम्पूर्ण भारत में शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा समुदाय में पहले से ही कार्यरत है। परन्तु यह आश्चर्यजनक बात है कि अधिकांश ये संगठन नि:शक्त बच्चों को अलग ही विशेष शिक्षा की व्यवस्था को ही अच्छा मानते है। इसलिये यह आवश्यक है कि इन संगठनों के प्रमुखों को एकीकृत शिक्षा एवं उसके व्यवहारिक पक्ष की जानकारी और प्रार्थना दिया जाये। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में इन संगठनों को अधिक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया जाये चूंकि नि:शक्त बच्चों की संख्या ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है।

5. वैकल्पिक परीक्षा प्रणाली की स्थापना– अधिकांश विद्यालयों के शिक्षकों को यह मानना है कि एकीकृत शिक्षा से विद्यालय के स्तर में कमी आती है। तथा नि:शक्त बच्चे परीक्षा उत्तीर्ण करने के योग्य नहीं होते। इससे शिक्षकों की प्रोन्नति भी प्रभावित होती है। अत: नि:शक्त बच्चों के लिये वैकल्पिक परीक्षा प्रणाली की आवश्यकता है। अमेरिका में इस प्रकार की व्यवस्था पहले से ही है जिसमें विद्यार्थियों को अयोग्यता की बजाय योग्यता दिखाने अथवा प्रदर्शित करने को कहा जाता है। यदि भारत में भी यही परीक्षा प्रणाली प्रारंभ की जाये तो शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों ही ज्यादा सुविधा का अनुभव करेगें।

6. विद्यालय–विश्वविद्यालय सहभागिता– भारत की बहुभाषी एवं बहुधर्मी प्रकृति होने के कारण किसी भी प्रकार के शिक्षा सुधार के कार्यान्वयन में चुनौती रहती है। संघ शासित क्षेत्रों एवं राज्यों में स्थिति स्थानीय

विश्वविद्यालयों की भूमिका इस प्रकार की चुनौती का सामना करने में महत्वपूर्ण हो सकती है। इन विश्वविद्यालयों द्वारा स्थानीय विद्यालयों को शामिल कर प्रोजेक्ट बनाकर प्रत्येक क्षेत्र हेतु उपयोगी नीतियों को लागू किया जाए। प्रत्येक राज्य में शिक्षाविदों द्वारा सामान्यत: बोली जाने वाली भाषा में व्यवहारिक नीतियों की विषयवस्तु अथवा पाठ्यक्रम बनाया जाये।

पाश्चात्य देशों के अनेको उदाहरणों से स्पष्ट है कि इस प्रकार के सामूहिक प्रोजेक्ट अथवा प्रयोगों से काफी सकारात्मक परिणाम सामने आए है। उदाहरण स्वरूप आस्ट्रेलिया के मेलबोर्न में मोनाश विश्वविद्यालय एवं कैथालिक शिक्षा आयोग विक्टोरिया के मध्य लर्नि इमप्रूव इन नेटवर्किंग कम्युनिटिज (LIM) नामक प्रोजेक्ट सफलतापूर्वक चला। इस प्रोजेक्ट के द्वारा विद्यालय के वातावरण में ऐसे कारकों की पहचान करना जो सफलता पूर्वक एकीकृत अभ्यास, सीखने वाले समुदाय का निर्माण, सीखने के अवसरों एवं परिणामों का विद्यार्थी पर सकारात्मक प्रभाव आदि में योगदान कर सकें। 45 प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों से विशेष शिक्षा के स्नातकोत्तार डिप्लोमा में अध्ययन के समय एक सामूहिक पूछताछ अवधारणा का प्रयोग (A Collaborative Inquiry Approach) किया गया। विद्यालय आधारित व्यावसायिक विकास को केन्द्र बिन्दु शिक्षकों के अनुभव के आधार पर विद्यार्थियों के परिणाम देखे गये। इन परिणामों में विशेष आवश्यकता हेतु पूर्ति की अवधारणा के स्थान पर सहयोगात्मक संकटपूर्ण प्रतिबिम्बित और स्पष्ट एकत्रित अवधारणा संगठनात्मक अभ्यासों अथवा निर्देशात्मक सूचनाओं हेतु अपनायी गई। सभी विद्यालयों में विद्यार्थियों के परिणामों में सुधार हुआ किन्तु मूल्य आधारित विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि दो विद्यालयों में वहां की परिस्थितियों के संदर्भ में अपेक्षा से ज्यादा अच्छे परिणाम आए।

निष्कर्ष – भारत में भारतीय पुनर्वास परिषद् की स्थापना विकलांगों के कल्याण के कल्याण की दिशा में उठाया गया एवं महत्वपूर्ण कदम था। नि:शक्तजन अधिनियम 1995 के द्वारा भारत एकीकृत शिक्षा को बढ़ावा देने वाले और इस हेतु कानून बनाने वाले देशों में शामिल हो गया। प्रमुख कानूनी बाधा को पार कर भारत ने एक ऐतिहासिक कदम उठाया है। अधिनियम के प्रमुख उद्देश्यों क प्राप्त करने हेतु इसमें उल्लेखित विभिन्न प्रावधानों को लागू करना अभी भी चुनौती बना हुआ है। सामान्य जनों एवं शिक्षकों के विकलांगता के प्रति रूझान अथवा सोचने के तरीकों (जो प्राचीन समय से प्रचलित रहे है।) को शिक्षा कार्यक्रमों के द्वारा ही परिवर्तित किया जा सकता है। विश्वविद्यालयों द्वारा शोध आधारित प्रयासों, सहभागिता और समर्थन की तथा राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय शिक्षाविदों के वित्तीय एवं सामूहिक प्रतिबद्धता की इस प्रकार के शिक्षा कार्यक्रमों की आवश्यकता रहेगी। भारत में एकीकृत शिक्षा की सफलता इस देश की विविधता की संस्कृति में भारती शिक्षाविदों और शिक्षा व्यवस्था के सामूहिक प्रयासों पर ही निर्भर है। सामान्य जनों में विकलांगता के प्रति जागरूकता और भारत की शुद्ध होती अर्थव्यवस्था भी नि:शक्त बच्चों के लिये एकीकृत शिक्षा कार्यक्रम को उपलब्ध एवं सुचारू बनायेगी। एकीकृत शिक्षा की सफलता से एक बड़ी मानव शक्ति इस तेजी से विकसित होते राष्ट्र के निर्माण में योगदान कर सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Adams, Fred (1991) ed. Special Education in 1990s, Longman, Essex.
2. Alur, Mithu,(1997), Scoial Extegration of Disabled People in India, The Spastic Society of India, Mumbai.
3. Alur Mithu (2001), Inclusion in the Indian Context, Humanscape.
4. Azad, Y.A. (1996), Integration of disabled in common schools: A Survey study of IEDC in the countrry, New Delhi, NCERT. 5. Baquer, Ali and Sharma, Anjali (1997). Disability; Challanges VS Responses New Delhi CAN Publishers.
6. Canadian International Devlopment Agency (CIDA).(2003). India Country Program Framwork (2002-2007) from www.acdi.gc.ca
7. Chatterjee, G (2003). The globle movement for inclusive education.from:http//www.indiatogether.org/2003/apr/eduinclusive.htm.
8. Das, A.K. and Pillay A.N. (1999, December). Inclusivge education for disabled students, Challenges for teacher education.
9. Jangira, N.K. & Ahuja, A. (1993), Special India. Asia Appraiser (Oct. -Dec.), 6-11
10. Jha, M.M. (2002), Bariers to access and success: In inclusive education an answer? 29 July-02 Aug. 2002 16p. Duraban South Africa.
11. Karna, G.N. (1999). United Nations and rights of disabled persons. A study in Indian perspective, New Delhi A.P.H. Publishing Corporation.
12. Mastropieri, M.A. & Scruggs. T.E.(2004). The inclusive classroom: Stradegies for effective instruction .NY Pearson.
13. Miles, M. (2002) Disability in South Asia- Millennium to millennium Asia Pacific Disability Rehabilitation Journal. 11(1), 1-10.
14. Ministry of Law Justice and Company Affairs (1996). The Persons with Disabilities Act -1995.
15. Pandey R.S & Advani, L. (1997) Perspectives in disabilities and rehabilitation, New Delhi.
16. Ramanujam P.R. (2001)DOL and disability studies. Retrieved July 10, 2003.
17. Rehabilitation Council of India. (1996) Report on Manpower Development,
18. Sharma K. (1992) Integrating children with special needs. Agra.
19. Sharma U. & Desai, I. (2002) Measuring concerns about integrated education in India. Asia and Pacific Journal on Disability, 5(1), 2-14.
20. UNESCO. Salamanca Statement, 1994.
21. Website http/portal.unesco.org./education/en/ev.php.
22. http://www.dsq-sds.org/articles html/2005/winter/sharma_deppler.html.

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कार्यशील महिलाओं की दोहरी भूमिका : एक अध्ययन

मोनिका आमारे*

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र कार्यशील महिलाओं की दोहरी भूमिका पर आधारित है। वर्तमान समय में शिक्षण तथा सेवा क्षेत्र ने महिलाओं को अत्यधिक आकर्षित किया है। लेकिन कार्य की अनुकूलता और आकर्षण वेतन के साथ-साथ महिलाओं से जुड़ी शिक्षा का स्वर और पारिवारिक पृष्ठभूमि आदि कारक महिलाओं के समक्ष कार्य और परिवार का दोहरा दबाव उपस्थित करते हैं अर्जित एवं प्रदत्त भूमिका के बीच की कामकाजी महिला किस प्रकार सामंजस्य करती हैं? प्रस्तुत अध्ययन इसी तथ्य के उत्तर की खोज करने का प्रयास है।

प्रस्तावना – आज वैश्वीकरण के दौर में जब सम्पूर्ण विश्व एक छोटे से गाँव में तबदील होता जा रहा है और प्रत्येक देश अपनी क्षमताओं को विकसित कर उपलब्धियों को प्राप्त करने के क्षेत्र में अग्रसर हो चुका है तब प्रत्येक देश अपनी आधी जनसंख्या अर्थात् महिलाओं को इस विकासात्मक प्रक्रिया का अंग मानकर प्रत्येक क्षेत्र में सहभागिता देने लगा है।

भारत के प्रत्येक मध्यमवर्गीय स्त्री सुशिक्षित है। दिन-प्रतिदिन की आर्थिक समस्याओं को पूरा करने के लिए दफ्तरों ओर इत्यादि जगहों पर जाकर काम करती हैं। पुराने दिनों की तरह लड़कियाँ अब अशिक्षित नहीं रही हैं। महिलाएँ पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सर्वत्र जगह चल रही है और कामयाब भी हो रही है।

'जिसके हाथ में पालने की डोरी, वही जगत की उद्धारी।' अर्थात् वह माता जो पालने की डोरी हाथ में पकड़कर व लोरी गाकर बच्चे को सुलाती है, उसका पालन-पोषण करती है, वही उसमें अच्छे संस्कार डालकर उसके व्यक्तित्व का निर्माण करती है। वही संसार का उद्धार करने वाली होती है।

महिलायें आज एक सफल इंजीनियर है, डॉक्टर या शिक्षक या दफ्तरों के अफसर, ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहाँ महिलाओं ने अपनी कावलियत को प्रमाण न किया हो। सुबह से लेकर शाम तक दफ्तरों में बैठकर कार्य करना फिर अपने परिवार के लिए खाना बनाना, बच्चों और पति की छोटी-बड़ी जरूरतों का विशेष ध्यान देना महिलाएँ बखूबी करती है। पुरूषों के पास दफ्तरों से आकर आराम करने का विकल्प होता है लेकिन महिलाओं के लिए ऐसा नहीं है। चाहे वह कितनी भी थकी हो उन्हें घर पर अपना कर्तव्य प्रत्येक दिन पालन करना पड़ता है। पूरे विश्व और कई छोटे महाद्वीपों में औरतों ने अपनी प्रतिभाओं से सबको चकित कर दिया है। हर क्षेत्र में जैसे सेना, परिवहन, ड्राइवर जैसे कार्यो में पुरूषों की तरह जिम्मेदारी और हिम्मत के साथ काम किया और अपने आपको साबित किया। अंतर्राष्ट्रीय खेलों में भी औरतों ने कई मैडल जीते। इसके साथ ही उन्होंने अपना और अपने देश का नाम रोशन किया।

उद्देश्य :

1. कार्यशील महिलाओं की व्यावसायिक भूमिका का मूल्यांकन एवं विश्लेषण करना।
2. कार्यशील महिलाओं के निजी एवं व्यावसायिक जीवन के समायोजन को ज्ञात करना।
3. उत्तरदाताओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि को ज्ञात करना।
4. परिवार में कार्यशील महिलाओं की स्थिति का अध्ययन करना।

कार्यशील महिलाओं के समक्ष चुनौतियाँ :

1. कानूनी प्रतिबंध – अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के एक अध्ययन के अनुसार, 143 अर्थव्यवस्थाओं में से लगभग 90 प्रतिशत में कम से कम एक महत्वपूर्ण, लिंग आधारित कानूनी प्रतिबंध विद्यमान है।

2. पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण – 2011 के NSSO डेटा के अनुसार उच्च जातियों तथा उच्च आय वाले परिवारों की महिलाएँ घर के बाहर कम कार्य करती है।

श्रम कानूनों में नारी संरक्षण :

1. मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961
2. बीड़ी तथा सिगार कर्मचारी अधिनियम, 1966
3. बीड़ी वर्कर्स वेल फेयर एण्ड रूल्स, 1978
4. कारखाना अधिनियम, 1948
5. कान्ट्रेक्ट लेबर एक्ट, 1970
6. समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976
7. चिकित्सकीय गर्भपात अधिनियम, 1971

कार्यशील महिलाओं की समस्याएँ :

1. घर में सम्मान पाते, घरेलू हिंसा से बचने, एवं परिजनों के अपमान से बचने के लिए जब एक महिला आत्मनिर्भर होने के लिए घर से बाहर निकलती है, तो उसे समाज और पुरूष सत्तात्मक सोच रखने वालों से सामना करना पड़ता है, अनेक लोगों की टीका टिप्पडियों, अर्थात् तानाकशी, घूरती निगाहों से सामना करना पड़ता है।
2. उदंड व्यक्तियों की छेड़कानियों से बचने के लिए उपक्रम करने होते है, कभी- कभी तो बलात्कार और प्रतिरोध स्वस्थ हत्या का शिकार भी होना पड़ता है।
3. जब वह अपने कार्यस्थल पहुँचती है तो उसे अपने सहयोगियों और बॉस की दुर्भावनाओं का शिकार होना पड़ता है।
4. कार्यस्थल से शाम को लौटते समय भी उसे अनेक अनहोनी घटनाओं की आशंका से ग्रस्त रहना पड़ता है उसके मन में व्याप्त असुरक्षा की

*शोधार्थी, स्कूल ऑफ सोशल साइन्स, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भावना आज भी उसके जीवन को कष्टदायक बनाये हुए है।

5. महिलाओं को अपने वेतन के मामले में भी शोषण का शिकार होना पड़ता है, जब उन्हें पुरूषों के मुकाबले कम वेतन के लिए कार्य करना पड़ता है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन में कार्यरत महिलाओं की भूमिका और उनमें सामंजस्य स्थापित करती महिलाओं के वर्णन से संबंधित प्रश्न के उत्तर में पाया कि कामकाजी महिलाओं की सबसे बड़ी समस्या है ढोहरी जिम्मेढारील का बोझ। वर्तमान में महिलाएँ संयुक्त परिवारों से निकलकर, एकाकी परिवार में रहना चाहती है। वे पारिवारिक मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना चाहती है। संक्षिप्त रूप से कहा जा सकता है कि महिलाओं का स्थान पुरूषों के समान महत्वपूर्ण है, अत: उनकी प्रत्येक क्षेत्र में उपस्थिति को नकारा नहीं जा सकता है।

सुझाव :

1. कामकाजी महिलाओं की स्थिति में गुणात्मक सुधार करने की दिशा में प्रयास किए जाने चाहिए, जैसे प्रत्येक क्षेत्र में उनकी हिस्सेदारी व महिलाओं की नेतृत्वकारी भूमिका में वृद्धि करना।
2. महिलाओं को अपने कार्यक्षेत्र एवं समाज में होने वाली असुविधा को स्वयं दूर करना होगा। इसके लिए उसे संविधान में वर्णित सभी अधिकारों को प्रयोग में लाना होगा।
3. सार्वजनिक तथा निजी प्रतिष्ठानों में महिला सुरक्षा और आत्म सम्मान से जुड़ी आधारभूत प्रणाली का विकास किया जाए तथा कार्यशील महिलाओं के व्यवसायिक संतुष्टि के लिए उन्हें उनके श्रम के अनुरूप वेतन दिया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, डॉ. मनोज कुमार, (2000), **भारत में सामाजिक परिवर्तन,** आदित्य पब्लिशर्स बीना (म. प्र.)।
2. शर्मा अनुपम तथा वार्षणेय संगीता, (2013), **इक्कीसवीं शताब्दी में महिला समस्याएँ एवं सुभावनाए,** अल्फा पब्लिकेशन नई दिल्ली।
3. सिंह वी.एन. (2010), **आधुनिकता एवं महिला सशक्तिकरण रावत पब्लिकेशन्स,** जयपुर।
4. भार्गव, नरेश, (2014), **वैश्वीकरण समाजशास्त्रीय परिपेक्ष्य**, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
5. बोरकर हेमलता (2011), बोरकर हेमलता, **कार्यशील महिलाओं की सामाजिक भूमिका एवं संघर्ष,** सिंघई पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, रायपुर।
6. गुप्ता पंकज, (2014), **मानवाधिकार और महिलाएं,** साहित्यकार प्रकाशन, जयपुर।
7. गप्ता सुभाष चन्द्र, (2004), **कार्यशील महिलाएं एवं भारतीय समाज,** अर्जुन पब्लिशिंग हाउग्स, नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

उत्तर आधुनिकता का मानव जीवन पर प्रभाव

डॉ. अशोक कुमार त्यागी *

प्रस्तावना – विभिन्न विधाओं में उत्तर आधुनिकता से परिवर्तन आता है। दर्शन में पहले, दर्शन, न्याय, कानून एवं कर्त्तव्य क्या है? की चर्चा होती थी। उत्तरार्द्ध दर्शन में भी कहीं-न-कहीं व्यावहारिकता है। हम मनुष्य की प्रकृति को बेहतर कैसे बना सकते है? यही हमारा उद्देश्य होना चाहिए। हम बेहतर कैसे बना सकते हैं यही समकालीन चिन्तन है। हमें लगता है कि राजनीतिक चिन्तन एक सीधी दिशा में चलते चला जाता है जबकि उत्तर आधुनिक विचारक इसको बीच-बीच में टूटा हुआ मानते हैं एवं परत पड़ गया है। चिन्तनों की सतह-पर-सतह के बीच जगह बची है। चिन्तनों पर एक प्रकार का चिन्तन ही उत्तर आधुनिकता है। आधुनिक चिन्तन असीमित विकास में विश्वास करता है। रूसो, हीगल, मार्क्स मानते हैं कि उन्नति असीमित की जा सकती है विज्ञान हर समस्या का समाधान दे सकता है एवं इसकी सीमा नहीं है। जबकि उत्तर आधुनिकता कहते है कि असीमित विकास साधारण नहीं है। यह एक विकास नही बल्कि प्रगति में बदल जाती है। आधुनिक काल में माना जाता था कि हर समस्या की समाधान विज्ञान में है। उत्तर आधुनिकता विचारक हाइजनवर्ग की अनिश्चित का विज्ञान को मानते हैं। धीरे-धीरे आध्यात्मिकता आ गयी। विज्ञान की भी सीमा है। उत्तर आधुनिकता मानते हैं कि उत्तर आधुनिकता किसी तरह के बीच के दरार, महत्वहीन विचार को ढूढ़ने का प्रयास करते हैं।

संरचनावादी मानते हैं कि संचरना के परत के अन्दर सारी संरचना आ जाती है। सारे अंग एक दूसरे से जुड़े होते हैं तब संरचना हो जाता है। आदमी का शरीर एक व्यवस्था है। व्यवस्था शरीर संरचना है। बाल, नाक, कान जुड़े हैं। सबकी उपयोगिकता है। कोई भी चीज बेकार नही है। जनजातियों की गीत, छप्पर ढंग सब कुछ जनजातीय संस्कृति से जुड़ा है। कोई भी मिथक जो खत्म हो जाती है उसकी कुछ-न-कुछ अर्थ है। उत्तर आधुनिकता मानते हैं कि संरचना में कुछ ढीले पार्ट को जानने की जरूरत है संरचना 'टाइट' नही है इन्हें समझने की जरूरत है। डेरिडो, 'विखण्डन' का सिद्धान्त देता है। विखंडनवाद का अभिप्राय है कि संरचना में कुछ बिखराव है उसमें सृजनात्मकता की जगह है जिसको जानने की जरूरत है। ये सब भाषा विज्ञानी है। Sassure says that "The whole structure define a particular world. Structure defines by word". डेरिडा जरूरत मानता है कि हम शब्द को ही समझे।

मेरी भव बाधा हरो।
राधा नागरी सोय।।
जा तन की झाइ पड़े।
श्याम हरित द्धति होय।।

इसमें कृष्ण एवं राधा की लौकिक ज्योति की पूजा की है। श्याम कृष्ण एवं गोरी राधा दोनों मिलकर आये।

डेरिडा कहते हैं कि श्याम वर्ण एवं हरा वर्ण मिलकर एक तीसरा रंग की उत्पत्ति करते हैं। ये विखण्डन की बात करता है। डेरिडा विभेद शब्द का भी इस्तेमाल करता है वह कहता है कि उच्चारण एक ही है परन्तु कहने का अर्थ अलग-अलग होता है सुनने वाला कोई भी अर्थ निकाल सकता है। व्यक्ति को शब्द सुनने के बाद सोचना चाहिए कि कितने शब्द है। शब्दों की अर्थ बदलते रहते है। वह विभेद शब्द की आवश्यकता मानता है। उत्तर आधुनिक कला एवं संस्कृति में नये एवं पुराने दोनों की नकल लेकर बनाया गया एवं विभिन्न सुविधायें अपनायी गयी। ये बिखरा हुआ होता है। उत्तर आधुनिकता में सामान बिखरा हुए जगहों पर पैदा किया जाता है। सारे पार्ट-अलग-अलग जगह बनाये जाता है।

1950 में पेरिस में अपार्टमेंट बना था यदि किसी को इलाहाबाद में घर बनवाना है तो जमुना एवं गंगा के बीच में बनवाना पड़ता है। आज बड़े-बड़े शहरों मे नौकरों का भी बायोडाटा देना पड़ता है। ड्रग ट्रैफिकिंग, काला बाजार में बदल गया। 1920 में अपार्टमेंट को गिराना पड़ा था। किसी भी घर की कोई खास पहचान नही होती थी। अत: इसको उत्तर आधुनिकता माना गया। सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो गया है। दैनिक भोग पर भी व्यवस्था की जा रही है। उद्योगों एवं संगठनों में भी सारी व्यवस्था भाड़े पर है। उत्तर आधुनिकता में सत्ता विकेन्द्रीत है। आदिम समाज में पहले तीन-चार पीढ़ियों के लोग एक ही जगह रहते थे। वर्तमान में परम्परागत परिवार छोटे-छोटे परिवार आ गयी, शहर आ गये। उत्तर आधुनिकता में सारे लोग अलग-अलग रहते हैं। एक ही परिवार के लोग अलग-अलग जगह पड़े हुए हैं। उत्तर आधुनिकता में कोई सत्य नहीं है कोई सार्वभौमिकता नहीं है।

	घटक	**आधुनिक**	**उत्तर-आधुनिक**
1.	विनिर्माण	कार्यात्मक	पुन: संग्रहीत
2.	उत्पादन का तरीका	जन उत्पादन /कारखाने	असंगठित उत्पादन/ उत्पादन पर ध्यान /उत्तर फोर्डिज्म
3.	संगठन	वेबरीयन पदानुक्रम	तदर्थ सेवा/अधिवस्तावाद एवं पुनर्निर्माण
4.	समाजशास्त्र	संगठित परिवार	बिखरे घर/बिखरा व्यक्तिवाद
5.	विज्ञान का दर्शन	मूल्य निरपेक्ष अध्ययन	मूल रहित अध्ययन/प्रणाली की अराजकतावाद/ व्याख्यावाद एवं विचारात्मकता
6.	दर्शनशास्त्र	सर्वव्यापकता की खोज	प्रति-स्थापनात्मकता
7.	मनोविज्ञान	समग्रित वास्तविक	विखण्डित व्यक्ति

* 26, छतरपुर, नई दिल्ली-74, भारत

		व्यक्ति	
8.	नीतिशास्त्र	दोहरा दर्शन	परिस्थितिजन्य
9.	मीडिया	प्रिन्ट में समीपता	वीडियो, चैनल में अलगाव एवं एम0टी0वी0
10.	समस्यात्मक	आधुनिक, वृहद् सार	उत्तर आधुनिकता/ बिखरा अध्ययन
11.	विज्ञान	न्यूटन	हाइजेनबर्ग

डेरिडा ने 'स्लीपेज' का सिद्धान्त दिया है जैसे कोई व्यक्ति सारी बात वाक्य में नही कहा हो। अलगाव में शब्दों में साम्यता नहीं है सारे अर्थ अनिश्चित है। कुछ भी अर्थ हो सकता है। यही कारण है कि डेरिडा कहते हैं कि अर्थ एक तैरते हुए कारक है जो अपने स्वरूप में लगातार बदलाव करते रहते हैं। तत्वमीमांसा की उपस्थिति में हमें नये अर्थ से परिचित होना है। डेरिडा कहता है कि विद्धानों की बातें अनकही रह गयी। सारे शब्द का अर्थ अलग हो गये है। शब्द को हमें विखण्डन से देखना चाहिए। विपरीत शब्द इस्तेमाल किये जाने चाहिए। पुरुष/महिला हो सकता है कि बीच की अर्थ होगी। जिसे वह 'शब्दिक अचेतना' कहता है यही दार्शनिकों को जानने का प्रयास करना चाहिए। यही तरीका वह द्धिअर्थी विरोध में भी प्रयोग करता है। पूर्व-पश्चिम में बीच का भी भाव हो सकता है। डेरिडा का मानना है कि कुछ दशाओं में इसका विरोध भी किया जा सकता है।

फूको एक नए तरह का चिन्तन देता है। यह 'डिस्कोर्स का सिद्धान्त' देता है। वह कहते है कि हमारा समाज विभिन्न 'डिस्कोर्स' से संचालित होता है। एक 'डिस्कोर्स' खत्म होने पर दूसरा बना दिया जाता है। चिन्तन का सतत् विकास नहीं हुआ है। बीच-बीच में दरार है। राजनीतिक चिन्तन का इतिहास टूटा हुआ, बिखरा हुआ, असतत् एवं निरन्तर नहीं है। वह कहता है कि भू-गर्भीय पद्धति अपनायी जानी चाहिए जैसे भूगर्भशास्त्र का अध्ययन है। एक पत्थर के ऊपर दूसरी चट्टान है बीच में दरार होता है। इसी तरह चिन्तन भी अलगाव रखता है। यह मजबूत नहीं है। फूकों के अनुसार, शक्ति सत्य के साथ जुड़ी है, शक्ति सत्य का निर्माण करती है, ज्ञान ही शक्ति है। शक्ति ही ज्ञान है। शक्ति एक प्रकार का सम्बंध है। यदि क, ख के ऊपर नियंत्रण रखता है तो वह शक्तिशाली है। शक्ति सत्य को बनाती है जैसे शरीर का खराब होना है तो हमारी स्वतंत्रता खत्म हो जाती है तो हम डाक्टर के हिसाब से चलते है तब हम सिर्फ शरीर रह जाते है एक चिकित्सकीय डिस्कोर्स में व्यक्ति सिर्फ एक शरीर रह जाता है। शिक्षा में ज्ञान धारी शिक्षक बच्चे को जो बताता है वही सत्य है। फूको ज्ञान को शक्ति मानता है। समाज में तरह-तरह के अलग-अलग लोग है उनके पास भी अधिकार होना चाहिए। जो जेल में है उनकी भावनाओं की भी कद्र की जानी चाहिए। वह मानता है कि वर्तमान समय में उतनी स्वतत्रंता नही है जितनी ग्रीस में थी। फूकों 'होमोसेक्सुअल' की भी बात करता है। गोल्टारी और डेलेग भी कहते हैं कि ओडिपस काम्पलेक्स ठीक है। व्यक्ति को इतनी स्वतंत्रता होनी चाहिए।

लियोटार्ड अल्जीरिया के समाजवादी पार्टी के प्रवक्ता थे। यह मार्क्स से भिन्न विचार रखता था। वह कहता है कि जो कट्टर मार्क्सवादी है वह मानते हैं कि क्रान्ति औद्योगिक क्षेत्र मे आयेगी एवं मजदूर इसके प्रवाहक होगे। लियोटार्ड कहता है कि अल्जीरिया एक कृषि प्रधान देश है क्रान्ति के लिए कृषक को लाना पड़ेगा। अन्य लोग इससे सहमत नहीं थे। मार्क्सवादी मानते थे कि पूँजीवादी व्यवस्था पूँजी पर आधारित होती है। लियोटार्ड कहते हैं कि पूँजी महत्वपूर्ण नही है। आज ज्ञान पर आधारित समाज है। बिल गेट्स आई0टी0 में सबसे धनी है। पूँजीपति वही होगा जिसके पास ज्ञान होगा वही सम्प्रभू होगा। मार्क्स के दर्शन को गलत साबित करता है लियोटार्ड परम्परागत मार्क्सवाद में सुधार की बात है। वृहद सार की बात करता है। यह छोटे-छोटे विचारों को पनपने नहीं देते हैं। मार्क्स के विचारों के सामने लियोटार्ड के विचार नहीं सुने गये। लियोटार्ड चाहता है कि छोटे-छोटे विचारों में सत्यता की खोज की जानी चाहिए। लियोटार्ड एक प्रति मौलिकवादी विचारक हैं।

बुडिलार्ड कहते है कि आधुनिक समय में नकल एवं सही के बीच अन्तर खत्म हो गया हैं। वह सिमुलाक्रा शब्द का इस्तेमाल करता है। उदाहरण के लिए अमरीकी डिजनीलैण्ड को लोग वास्तविक मानने लगे हैं। लोग अप्राकृतिक को वास्तविक समझने लगते हैं। मीडिया सिर्फ दुर्घटना को ही दिखाता है। इराक युद्ध को लोग वीडियोगेम की तरह मानने लगे थे। इसमें संवेदना नही होती है। जबकि पहले ऐसा नहीं था। यह मीडिया के कारण ही हुआ है। वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर किस तरह धुआ निकल रहा है। यह एक मनोरंजन का भाग है। यह फिल्म की तरह हो गयी है। यही सिमुलाका है। कई विद्धान मार्क्स के परम्परागत सिद्धान्तों में बदलाव चाहते हैं। मार्क्स शोषण समाप्त करना चाहता है। वह भले ही विभिन्न रूपों में है। अलगाव ही मार्क्स का निचोड़ है।

उत्तर आधुनिक कहते हैं कि यह नारीवाद में भी है इसमें मार्क्सवाद, पर्यावरण हरित आन्दोलन को भी जोड़ना चाहिए। रिचर्ड रोरटी (अमरीकी) ने उत्तर दर्शन दिया है। दार्शनिक बताता है कि लोग कानून का पालन क्यों करें? ईश्वर कैसे हैं? तरह-तरह की समस्याओं पर मनन करना है। (Philo + Sophy - Love of Knowledge) मनुष्य की प्रकृति क्या है? मनुष्य की उत्पत्ति कैसे हुई रिचर्ड के अनुसार यह नहीं है। मनुष्य की प्रकृति को बेहतर कैसे बनाया जा सकता है रिचर्ड के अनुसार यही मनन होना चाहिए।

उत्तर नारीवादी में सारी नारियों की जगह स्थान के अनुसार बदलती रहती है। पूरी दुनिया में महिलायें शोषित है यही नारीवादी मानते हैं। परन्तु उत्तर नारीवादी मानते हैं कि सारी महिलाओं की समस्या सार्वभौमिक नहीं है सारी महिलायें अलग-अलग है। अमरीका की सफेद महिला एवं अफ्रीका की काली महिला की समस्या अलग-अलग है। अमरीकन क्लब में जाने की छूट ड्रीक की छूट चाहती है जबकि एशिया की महिला रोटी, कपड़ा एवं मकान के लिए संर्घरत है।

डेरिडा मानते हैं कि प्लेटो से मार्क्स तक का अर्थ निश्चित नहीं है। उसे हमें विखण्डित करके ही पढ़ना चाहिए। डेरिडा एक उत्तर संरचनावादी है। सरंचनावादी बताते हैं कि किसी भी भाषा के एक मतलब होता है। इनकी एक व्यवस्था होता है। डेरिडा कहता है नये सिरे से देखना ही विखण्डन है। भाषा एक व्यवस्था नहीं है। तमाम भागों का एक दूसरे से कुछ लेना-देना नहीं है यह अनिश्चित है। पहले सत्य को खोजा जाता था। न्यूटन, आइंसटीन मानते हैं कि कुछ शाश्वत् नियम है जिसे विवेक द्धारा हम ढूढ़ सकते हैं। विज्ञान के सिद्धान्त को लोगों ने विभिन्न विषयों से जोड़ा था। उन नियमों को ढूढ़ कर हम सत्य खोजते थे। उत्तर संरचनावादी मानते हैं कि सत्य गढ़ा जाता है इसको खोजा नही जा सकता है। सत्य विश्वव्यापी नहीं वरन् गढ़े हुए व्यक्ति के हिसाब से होता है। सत्य उत्तर आधुनिकता से जुड़ा है। विद्धान मानते हैं कि मानसिक सुख जुड़ा हुआ है। सत्य समय-समय पर स्थान-स्थान पर बदलता रहता है। डेरिडा कहता है कि प्लेटों से मार्क्स तक जो कहा है वह एक-दूसरे से जुड़ा है परन्तु ऐसा नहीं है। जो कुछ लिखा गया है वह लिखने वाले के दिमाग की उपज था इसको डेरिडा 'Mataphysic of Presence' कहता है।

डेरिडा कहते हैं कि ऐसा नही है क्योंकि जब कोई बात कहता है कि सुनने वाला अलग-अलग अर्थ निकालता है। इसका कोई सही नही है कि

सुनने वाला एक ही बात समझे क्योंकि शब्द अलग-अलग अर्थ बताते हैं। शब्दों के अर्थ स्थिति, समय एवं स्थान के साथ बदलते रहते हैं। टेक्स्ट का कोई एक निश्चित अर्थ नहीं है। जितने भी उत्तर आधुनिक विचारक है। उनका काम है कि समय, स्थान के हिसाब से अलग-अलग अर्थ निकाले। जैसे- ब्राह्मण शब्द का अर्थ मनु के समय में अलग था, आज बसपा के लिए ब्राह्मण अलग हैं। संरचनावादी मानते हैं कि सारा अर्थ स्पष्ट है। डेरिडा ने द्वन्द्वात्मक विरोध या मूल्य पदानुक्रम का विरोध किया। जैसे-गण् बनाम् अराजकता, पश्चिमी बनाम् पूर्वी, महिला बनाम् पुरुष, मूल्य पदानुक्रम को हम एक को दूसरे की अपेक्षा बेहतर मानते हैं परन्तु डेरिडा कहते हैं कि यह आवश्यक नहीं है। हो सकता है कि महिलाएं पुरुषों से बेहतर हो सकती है एवं इसका विरोध किया जाना चाहिए। न्यूटन कहता है कि कुछ तर्कसंगत कानून है एवं इसमें महिलायें विवेकपूर्ण नही है। डेरिडा को कुछ हद तक नारीवादी माना जाता है।

अमरीका की सफेद महिलाओं की समस्याओं को अलग-अलग करके देखना पड़ेगा। यह एक वर्ग नही है। उत्तर नारीवादी मानते हैं कि हमें समय एवं स्थान के अनुसार अलग-अलग देखना होगा। 16 से 60 साल की महिला की समस्या अलग-अलग बचपन में पिता, युवा में पति एवं वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में अलग है। यह विभिन्नता एवं पहचान पर निर्भर करते हैं। कहीं-कहीं पर महिलायें पुरुषों से बेहतर स्थिति में है यह जनजातियों में पायी जाती है। सार्वभौमिकता नहीं पायी जा सकती है। उत्तर आधुनिक विचार में उत्तर औपनिवेशिक विचार भी है। औपनिवेशिक युग में विषय मनुष्य था। जबकि बाद में उपनिवेश विषय हो गये। जो इतिहास में दिखाया गया कि जो शासन कर रहे हैं वे विकसित हैं। जिन पर शासन किया जा रहा है वे असभ्य हैं। भारतीयों को असभ्य के रूप में दिखाया गया है। जो आधा मनुष्य आधा हब्शी दिखाया गया है। भारतीयों की शक्ल अमरीका में सपेरों की तरह दिखाया जाता है। यूरोप के साहित्य शासन को दिखाया जाता है जो कि पश्चिम की तरफ मुडे भी माना जाता है। इडवर्ड सईद मिस्र ने खतरे में उत्तर औपनिवेशिक चिन्तन लिखा। मिस्र की प्रगति, विकास दिखाया गया है। आर्किटेक्चर में कुछ कल्पना एवं वास्तविकता भी जोड़ी गयी है। उपन्यास एवं विभिन्न साहित्य में वास्तविक कहानी दिखाया जाता है। पहले सारांश दिखाया जाता था। आज पुनर्निर्मित बनाया जाता है। पहले परम्परागत संगीत था आज दोनों को मिश्रित करके सुनाया जाता है। जितने भी मूल्य, नैतिकता है उनके आधार नहीं है। समय-समय पर बदलता रहता है। नैतिकता वस्तुनिष्ठ है बदलाव करती रहती है यह सार्वभौमिक नही है यह संस्कृति से संस्कृति तक बदलती रहती है। इसका कोई मौलिक आधार नहीं है।

विशेषताएं :

1. यह संदेह व्यक्त करता है। आधुनिकतावाद के विचार से संदेह व्यक्त करता है। आधुनिक चिन्तन यह विश्वास करता है कि असीमित विकास किया जा सकता है। जबकि उत्तर आधुनिक मानते हैं कि सीमित विश्वास संभव नही है। आधुनिक विज्ञान से सारी समस्या का समाधान मानते थे जबकि उत्तर आधुनिक इसे संभव नही मानते। उत्तर आधुनिक कहते हैं कि सभी तरह के विचारों को महत्व दिया जाय। मार्क्सवाद एक ऐसा विचार है जो हजारों विचारों के मध्य में खुद को स्थापित करता है। जो उत्तर आधुनिक विचारक है वे बड़ी विचारों की अवहेलना करते हैं। फांसीवाद, मार्क्सवाद के ये विरोधी है।
2. उत्तर आधुनिक विचार मीडिया से संबंधित है।
3. वे धार्मिक पुनरूत्थान की बात करते हैं।
4. उदारवादी लोकतंत्र का समर्थन करते हैं। ये सार्वजनिक एवं निजी के अन्तर को समाप्त करने में विश्वास रखते हैं।
5. ये सांस्कृतिक सापेक्षता में विश्वास रखते हैं। इसीलिए लिप्से कहता की सभी मूल्यों की पुन: मूल्यांकित करनी चाहिए।

उत्तर आधुनिकता की आलोचना निम्नलिखित है-

1. यह राजनीतिक यथास्थिति वाद रखने में विश्वास रखता है। ऐसा विचारक जेम्सन मानते हैं।
2. ईगल्टन कहता है कि यह समाजवाद के विरूद्ध कार्य करता है।
3. नोरिस कहता है कि बुडिलार्ड का जो खाड़ी युद्ध की वास्तविकता को नकारना एक तरह से सांस्कृतिक सिद्धान्त के खोखलेपन को दर्शाता है।
4. हैबरमास कहता है कि उत्तर आधुनिकता विचारधारा के स्तर पर यह संदेह के घेरे में आता है।
5. उत्तर आधुनिकता यह अपने आप में एक बड़ा सिद्धान्त हो गया जबकि यह सिद्धान्त का विरोध करता है।
6. लियोटार्ड कहता है कि उत्तर आधुनिकता एवं आधुनिकता एक दूसरे की हमेशा प्रतिवादित करते रहते हैं।यह सर्किल की तरह चलता रहता है। क्योंकि हम उत्तर आधुनिक युग में हैं।
7. क्रोकर एवं कुक कहता है कि यह एक पैनिक संस्कृति है। यह पैनिक किताब, सेक्स, कला, विचारधारा, शरीर एवं आवाज का सिद्धान्त है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि उत्तर आधुनिकता ने अपने चिंतन से मानव जीवन को प्रभावित किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. फ्रेडरिक जेम्सन : पोस्ट मार्डनिज्म ऑर, द कल्चरल लॉजिक ऑफ लेट कैपिटलिज्म, 1991, ड्यूक यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, ISBN-0-978-8223-0929-1।
2. जीन फ्रांकोस लियोटार्ड : द पोस्ट मार्डन कन्डीशन, 1979 यूनिवर्सिटी ऑफ मिनीसोटा प्रेस, फ्रांस।
3. क्रिस्टोफर बटलर : पोस्ट मार्डनिज्म : ए वेरी शार्ट इन्ट्रोडक्शन, 2002 ऑक्सफोर्ड यूनिवसिटी प्रेस, ब्रिटेन।
4. लिंडा हचेन : ए पोएटिक ऑफ पोस्ट मार्डनिज्म, 1988, रूटलेज प्रकाशन, लन्दन, ISBN-0-203-35885-61।
5. जीन बुडीलार्ड : सिमुलाक्रा एण्ड सिमुलेशन, 1994, मिशीगन यूनिवर्सिटी प्रकाशन, अमरीका, ISBN-0-472-09521-81।
6. थॉमस डोचटी : पोस्ट मार्डनिज्म : ए रीडर, 1993, रूटलेज प्रकाशन, न्यूयार्क, ISBN-0-7450-1243-81।
7. क्रिस्टोफर बटलर : पोस्ट मार्डनिज्म, 2010, स्टर्लिंग प्रकाशन, ISBN-9781402768804।
8. स्टीफेन हिक्स : इक्सप्लेरिंग पोस्ट मार्डनिज्म : स्पेक्टिसिज्म एण्ड सोशलिज्म फ्राम रूसो टू फूको, 2004, स्कालर्गी पब्लिशिंग हाउस, अमरीका, ISBN- 1-59247-642-2।
9. पेरी एंडरसन : द ओरिजिन्स ऑफ पोस्ट मार्डनिटी, 2002, वर्सो प्रकाशन, लंदन, ISBN-1-85984-222-4।

****

धार्मिक नगरी उज्जैन में स्थित मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम की होटल क्षिप्रा रेसिडेन्सी के आय - व्यय का तुलनात्मक अध्ययन (वर्ष 2010-11 से 2012-13 तक)

टीना यादव* डॉ. कृष्णकांत शर्मा **

प्रस्तावना - भारतीय संस्कृति में पर्यटन का महत्तव अनादि काल से है। प्राचीन काल से ही भारत में धार्मिक पर्यटन का अस्तित्व रहा है। मध्यप्रदेश भारत का हृदय स्थल है, यह सम्पूर्ण भूभाग धार्मिक, ऐतिहासिक, प्राकृतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं चिकित्सकीय पर्यटन के लिये जाना जाता है। यहाँ सुदूर क्षेत्रों से पर्यटकों का आगमन होता रहता है। इतना ही नहीं खजुराहो, साँची, बाँधवगढ़, उज्जैन, भोपाल एवं ग्वालियर में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यटकों का आगमन होता रहता है।

मध्यप्रदेश में पर्यटन स्थलों के प्रचार-प्रसार को देखते हुए, राज्य शासन द्वारा पर्यटन संचालनालय की स्थापना सन् 1961 में की गई, तत्पश्चात् सन् 1972 में सचिवालय स्तर पर पर्यटन विभाग को स्वयं का अस्तित्व स्वतंत्र रूप से प्रदान किया गया। 24 मई 1978 को मध्यप्रदेश शासन के संस्कृति मंत्रालय ने पर्यटन विकास निगम का गठन किया। सन् 1997 में मध्यप्रदेश शासन द्वारा पर्यटन संचालनालय को समाप्त कर आयुक्त पर्यटन कार्यालय का गठन किया गया। मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम का गठन 1 करोड़ की मूल पूँजी से प्रारंभ हुआ था। पर्यटन के नये आयाम प्रदर्शित करने के लिए मध्यप्रदेश शासन द्वारा 10 अप्रेल 2017 को मध्यप्रदेश टूरिज्म बोर्ड के नाम से प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी का निर्माण किया गया, जिसकी अधिकृत अंश पूँजी 10 करोड़ है। मुख्य रूप से अब इसका कार्य शासन द्वारा प्रदान की जाने वाली सामाजिक सुरक्षा गतिविधियों की वित्तीय सहायता एवं प्रबंधन करना है।

मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम द्वारा मध्यप्रदेश के विभिन्न स्थलों पर पर्यटन विकास निगम के 64 से अधिक होटलों एवं रेस्टोरेंट का संचालन किया जाता है, प्रस्तुत आलेख में धार्मिक नगरी उज्जैन में स्थित मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम की होटल क्षिप्रा रेसीडेंसी के आय व्यय का तुलनात्मक अध्ययन (वर्ष 2010-11 से 2012-13) प्रस्तुत किया है।

होटल शिप्रा रेसिडेन्सी उज्जैन - मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम द्वारा संचालित होटल शिप्रा रेसिडेन्सी (3 स्टार) प्रीमियम रेसिडेन्सी होटल है। इसकी स्थापना मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम द्वारा सन् 1992 में की गई थी। यहाँ लगभग 45 कर्मचारी व अधिकारी कार्यरत हैं। होटल शिप्रा रेसिडेन्सी उज्जैन के केन्द्र में स्थित है, तथा यह महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग मंदिर से सिर्फ 3.1 कि.मी. दूर देवास रोड़, माधव क्लब के पास फ्रिंगज क्षेत्र में स्थित है। यहाँ पर पर्यटकों के लिए बेहतरीन आवास सुविधा के साथ-साथ एक भारतीय रेस्टोरेंट सुविधा व मयशाला की सुविधा भी उपलब्ध है। यहाँ पर 10 सुईट रूम, 20 डीलक्स रूम व 18 एसी रूम इस प्रकार कुल 48 रूम हैं। सभी कमरों में एसी, टी.वी. और अटेच बाथरूम है। यहाँ एक बगीचा, निजी पार्किंग एवं एक सुसज्जित सम्मेलन हॉल स्थित हैं जोकि मीटिंग, कॉर्पोरेट कार्यक्रम और शादियों के लिए एक आदर्श स्थान है, यहाँ पर डॉक्टर सुविधा भी ऑन कॉल उपलब्ध है।

शिप्रा रेसिडेन्सी बेहतरीन होटलों में से एक हैं जो रेस्टोरेंट व बार संचालन के साथ-साथ अपने अतिथियों की इच्छाओं की पूर्ति करता है। उज्जैन शहर धार्मिक महत्तव के लिए जाना जाता है, इसलिए यहाँ सामान्य रूप से सभी होटलों में मयशालाएँ न होकर कुछ ही होटलों में यह सुविधा उपलब्ध होती हैं। यह होटल 24 घंटे फ्रंट डेस्क और मेहमानों के लिए रूम सर्विस प्रदान करता है। होटल से रेल्वे स्टेशन की दूरी 2 कि.मी. है, व निकटतम हवाई अड्डा 58.2 कि.मी. दूर इन्दौर में है। होटल की निजी वेबसाईट - shipraresidency@mp.gov.in है।

मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम की होटल शिप्रा रेसिडेन्सी, उज्जैन के तीन वर्षों 2010-2011 से 2012-2013 तक का आय व्यय विवरण

तालिका क्रमांक - 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 का प्रतिशत चालू वर्ष का आधार वर्ष 2010-2011 में भाग देकर एवं 100 से गुणा करके निकाला गया हैं।

Current year / Base year X 100

आय विवरण - तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि होटल शिप्रा रेसिडेन्सी, उज्जैन में सर्वाधिक आय बियर एवं लिकर के विक्रय से हुई है। आलोच्य अवधि की आय का प्रतिशत ज्ञात करने हेतु वर्ष 2010-2011 को आधार वर्ष मान कर बाकी वर्षों का प्रतिशत ज्ञात किया गया है। वर्ष 2011-2012 में 124.27 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में लगातार बढ़ते हुए 148.88 प्रतिशत हो गया। वहीं लिकर के विक्रय से वर्ष 2011-2012 में 111.98 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में अपेक्षाकृत वृद्धि करते हुए 138.8 प्रतिशत रहा। साथ ही ट्रान्सपोर्ट आय में भी लगातार वृद्धि देखी गई, वर्ष 2011-2012 में 136.74 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में लगातार बढ़ते हुए 147.45 प्रतिशत हो गई। इनमें होने वाली वृद्धि का मुख्य कारण इकाई में पर्यटकों का निरन्तर आगमन रहा है। केटरिंग इनकम

* शोधार्थी, शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** ग्रंथपाल, शासकीय महाविद्यालय, कायथा, जिला उज्जैन (म.प्र.) भारत

में भी आलोच्य अवधि में लागातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2011-2012 में 95.84 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में बढ़ते हुए 105.77 प्रतिशत हो गई। जिसका मुख्य कारण शादी, पार्टियाँ, कॉन्फ्रेन्स मीटींग आदि का आयोजन निरन्तर बने रहना है। स्टॉफ मिल में कमी व वृद्धि दृष्टिगोचर हुई, जो वर्ष 2011-2012 में 151.23 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 122.11 प्रतिशत रही।

लॉजिंग इनकम मे भी अपेक्षाकृत रूप से वृद्धि देखी गई, जो वर्ष 2011-2012 में 97.06 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में बढ़ते हुए 102.26 प्रतिशत हो गई। जिसका कारण होटल द्वारा पर्यटकों को दी गई छूट रहा जिससे पर्यटको के आवागमन मे वृद्धि हुई।

कुछ आय की मदों में कमी भी देखी गई जैसे कोल्ड्रिंक्स इनकम में कमी देखी गई। वर्ष 2011-2012 में 69.94 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में कम होते हुए 56.15 प्रतिशत हो गई। जिसका मुख्य कारण पर्यटकों द्वारा कोल्ड्रिंक्स की मांग मे कमी बताई गयी। ग्रेन एडवान्स इन्टरेस्ट एवं विविध आय में भी कमी देखी गई। ग्रेन एडवान्स इन्टरेस्ट वर्ष 2011-2012 में 90 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 80 प्रतिशत रहा। विविध आय वर्ष 2011-2012 में 81.95 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 40.03 प्रतिशत रही। प्रचार सामग्री की बिक्री पर भी कमी हुई, वर्ष 2011-2012 में मात्र 17.91 प्रतिशत थी जो वर्ष 2012-2013 में 90.47 प्रतिशत हो गई। जिसका मुख्य कारण यह है कि प्रचार प्रसार एवं प्रोत्साहन पर व्यय अनुदान राशि में से ही किया जाता है, और अनुदान बाद के वर्षों में नहीं मिला इस हेतु प्रचार तथा प्रोत्साहन में कमी हो गई साथ ही पर्यटकों का रूझान कम देखा गया।

व्यय विवरण – उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है होटल शिप्रा रेसिडेन्सी, उज्जैन में होटल एवं रेस्टोरन्ट से आय के साथ-साथ व्यय में भी लगातार वृद्धि हुई है।

इनके द्वारा सर्वाधिक राशि नियमित कर्मचारियों के चिकित्सा प्रतिपूर्ति पर खर्च की गई है। जो वर्ष 2011-2012 में 70.35 प्रतिशत रही, वहीं वर्ष 2012-2013 में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि करते हुए 717.03 प्रतिशत हो गई। इसके अलावा कर्मचारियों की वर्दी पर भी अधिक खर्च किया गया जो वर्ष 2011-2012 में 154.69 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में निरंतर बढ़ते हुए 314.84 प्रतिशत हो गया। लेबर चार्जेस (मजदूरी) पर व्यय वर्ष 2011-2012 में 103.92 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 108.97 प्रतिशत हुआ। इसके अतिरिक्त अन्य व्यय की मदों में भी निरन्तर वृद्धि हुई है। कोल एवं फ्यूल पर वर्ष 2011-2012 में 121.44 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में निरंतर बढ़ते हुए 135.87 प्रतिशत व्यय हुआ। इलेक्ट्रिक गुड्स पर व्यय वर्ष 2011-2012 में 108.76 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में पुन: बढ़कर 171.94 प्रतिशत हो गया। इलेक्ट्रिक चार्जेस पर व्यय वर्ष 2011-2012 में 90.34 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 100.35 प्रतिशत हो गया। मनोरंजन व्यय में अत्यधिक उतार चढ़ाव देखा गया वर्ष 2011-2012 में 639.86 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 100.8 प्रतिशत रहा। फ्रेश सप्लाई पर व्यय वर्ष 2011-2012 में 105.28 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में बढ़कर 116.74 प्रतिशत रहा। होटल खर्च अपेक्षाकृत रूप से वृद्धि करता रहा जोकि 2011-2012 में 148.44 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में होटल व्यय लगातार बढ़ते हुए 154.34 प्रतिशत हो गया। लिनन खर्च वर्ष 2011-2012 में अप्रत्याशित रूप से घटते हुए -1.13 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में पुन: बढ़कर 128.64 प्रतिशत हो गया। वेतन और भत्तो पर व्यय वर्ष 2011-2012 में 96.12 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में बढ़ते हुए 113.57 प्रतिशत हो गया। प्रोविजन सप्लाई पर खर्च में भी अपेक्षाकृत वृद्धि देखी गई जो वर्ष 2011-2012 में 111.1 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में बढ़ते हुए 119.29 प्रतिशत हो गई। मरम्मत रखरखाव और अन्य पर व्यय वर्ष 2011-2012 में 134.36 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में लगातार बढ़ते हुए 205.45 प्रतिशत हो गया। परिवहन पर विभिन्न खर्च में प्रारम्भिक वर्षों में वृद्धि देखी गई, जिसके अनुसार वर्ष 2011-2012 में 155.46 प्रतिशत रही किंतु वहीं वर्ष 2012-2013 में कम होकर 6.44 प्रतिशत हो गई। इन सभी व्ययों के मदों मे कमी की अपेक्षा वृद्धि देखी गई।

निम्न मदों के व्यय में होने वाली कमी को दर्शाया गया है -

बैंक चार्जेस में कमी देखी गई है। जो वर्ष 2011-2012 में 91.22 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 64.52 प्रतिशत हो गई। बीयर खरीद व्यय में तुलनात्मक रूप से आलोच्य अवधि में कमी देखी गई है। वर्ष 2011-2012 में 59.69 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 65.43 प्रतिशत हो गया। जिसका मुख्य कारण शिप्रा होटल का उज्जैन में स्थित होना है, जोकि एक धार्मिक नगरी है। इस कारण यहाँ धार्मिक पर्यटकों का आगमन ज्यादा होता है। जिसकी वजह से बीयर की माँग मे कमी देखी गई है। पुस्तकें और पत्रिकाएँ में भी तुलनात्मक रूप से कमी दृष्टिगत हुई जो वर्ष 2011-2012 में 78.36 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 74.65 प्रतिशत हो गई। जिसका कारण पर्यटकों द्वारा पुस्तकों के प्रति रूझान में कमी को दर्शाया है।

इसके अलावा निम्न मदों के व्ययों में कमी इस प्रकार है :- सफाई सामग्री पर व्यय वर्ष 2011-2012 में 99.26 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 87.97 प्रतिशत रहा। कोल्ड्रिंक्स की खरीद पर भी तुलनात्मक रूप से कमी देखी गई, जोकि वर्ष 2011-2012 में 84.76 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में कम होते हुए 71.65 प्रतिशत रह गया। जनरेटर खर्च पर भी अपेक्षाकृत रूप से कमी देखी गई जिसके अनुसार व्यय का प्रतिशत वर्ष 2011-2012 में 100.32 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 69.51 प्रतिशत हो गया। मकान का किराया मद में भी कमी देखी गई जिसका व्यय प्रतिशत 2011-2012 में 98.32 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 95.19 प्रतिशत हो गया। स्टेशनरी और प्रिंटिंग पर व्यय में भी कमी दृष्टिगोचर हुई जिसके अनुसार व्यय का प्रतिशत वर्ष 2011-2012 में 28.36 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 63.58 प्रतिशत रहा। टेलीफोन व्यय में भी कमी दृष्टिगत हुई जिसके अनुसार व्यय का प्रतिशत वर्ष 2011-2012 में 58.35 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 72.44 प्रतिशत हो गया। यात्रा भत्ता में प्रारम्भिक वर्षों में वृद्धि देखी गई जिसके अनुसार व्यय का प्रतिशत 2011-2012 में 123.52 प्रतिशत रहा किंतु वर्ष 2012-2013 में अत्यधिक घटते हुए -17.39 प्रतिशत हो गया। डाक तार की मद में वर्ष 2011-2012 में 37.15 प्रतिशत एवं वर्ष 2012-2013 में 39.05 प्रतिशत रह गया। इस प्रकार कई अन्य मदों में भी व्यय में कमी को दर्शाया गया है, जो कि सामान्य खर्चो के अन्तर्गत आते हैं।

मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम के होटल क्षिप्रा रेसिडेंसी के आर्थिक विश्लेषण के अध्ययन से ज्ञात होता है कि होटल शिप्रा रेसिडेन्सी उज्जैन को वर्ष 2010-2011 में रू.9454758.79/- का लाभ हुआ वहीं वर्ष 2011-2012 में रू.8248442.36/- का लाभ हुआ एवं वर्ष 2012-2013 में रू.9454452.37/- का लाभ प्राप्त हुआ। इसप्रकार विश्लेषण से स्पष्ट होता हैकि होटल क्षिप्रा रेसिडेंसी में आलोच्य अवधि में लाभ में कमी

दृष्टिगत हुई है जिसका मुख्य कारण पर्यटकों के आगमन में कमी होना एवं होटल की सुविधाओं में सुधार की आवश्यकता होना है। पर्यटन विकास निगम अपनी कमियों को दूर करने का प्रयास कर रहा है, जिससे भविष्य में धार्मिक नगरी उज्जैन में स्थित होटल शिप्रा रेसिडेंसी पर पर्यटकों के आगमन में वृद्धि हो एवं इसके द्वारा निगम की आय में भी वृद्धि हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाटिया, ए.के (1991) टूरिज्म मेनेजमेंट एण्ड मार्केटिंग स्टर्लिंग पब्लिकेशन, प्रा. लि., नई दिल्ली।
2. नेगी सिंह, जगमोहन (1982) टूरिज्म एण्ड होटलरिंग, कॉन्सेप्ट एण्ड प्रिंसिपल्स गीतांजली पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
3. दैनिक भास्कर (उज्जैन, मध्यप्रदेश)
4. बिजनस भास्कर (उज्जैन, मध्यप्रदेश)
5. वर्षिक प्रतिवेदन मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम, भोपाल।
6. विभागीय प्रशासकीय प्रतिवेदन, मध्यप्रदेश शासन, पर्यटन विभाग 2015-2016
7. वार्षिक रिपोर्ट, पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार, 2013-2014.
8. जन संपर्क विभाग मध्यप्रदेश उज्जयिनी एवं सिंहस्थ पुरा वैभव-नव आलोक।
9. http://www.mptourism.in
10. http://www.mptourism.com
11. www.tourism.gov.in

मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम की होटल शिप्रा रेसिडेन्सी, उज्जैन के तीन वर्षों 2010-2011 से 2012-2013 तक का आय व्यय विवरण

तालिका क्रमांक - 1

S.	Head Name	2010-11	%	2011-12	%	2012-13	%
	Income						
1	Beer Income	619279	**100**	769582	**124.27**	922030	**148.88**
2	Catering Income	7530882	**100**	7217939	**95.84**	7966005	**105.77**
3	Cold drink Income	823964	**100**	576358	**69.94**	462670	**56.15**
4	Commission Received	127298	**100**	101348	**79.61**	152950	**120.15**
5	Grain advance Interest	1400	**100**	1260	**90**	1120	**80**
6	House Rent Deduction	28847	**100**	1530	**5.30**	16992	**58.90**
7	Liquor Income	2855312	**100**	3197404	**111.98**	3763559	**131.80**
8	Misc. Income	603433	**100**	494562	**81.95**	241607	**40.03**
9	Sale of publicity Material	8400	**100**	1505	**17.91**	7600	**90.47**
10	Staff meal Income	50570	**100**	76480	**151.23**	61755	**122.11**
11	Transport Income	273570	**100**	374095	**136.74**	403400	**147.45**
12	Lodging Income (old)	13203303	**100**	12887566	**97.60**	13501900	**102.26**
13	Interest on FDR	0	**100**	7678	**124.27**	0	**0**
14	Laundry Income	0	**100**	5390	**0**	0	**0**
15	Lodging Income	0	**100**	42746	**0**	0	**0**
	(Non taxable)						
	TOTAL	**26126258**	**100**	**25755443**	**98.58**	**27501588**	**105.26**
	Expenditure						
1	Bank Charges	85493.71	**100**	77990.84	**91.22**	55164.25	**64.52**
2	Bar Expences	870	**100**	89123	**10244.02**	760	**87.35**
3	Bar Licence Fees	235000	**100**	235000	**100**	350000	**148.93**
4	Beer Purchase	463520	**100**	276685	**59.69**	303290	**65.43**
5	Books & Periodicals	27296	**100**	21390	**78.36**	20377	**74.65**
6	Cleaning Material	258685	**100**	256773	**99.26**	227584	**87.97**
7	Coal & Fuel	374216.70	**100**	454458	**121.44**	508467	**135.87**
8	Cold drink purchase a/c	346134	**100**	293399	**84.76**	248033	**71.65**
9	Commission Paid	29610	**100**	19750	**66.70**	15600	**52.68**
10	Discount	3816	**100**	6124	**160.48**	322	**8.43**
11	Electric Goods	152805	**100**	166191	**108.76**	262733	**171.94**
12	Electricity Charges	1693273	**100**	1529788	**90.34**	1699259	**100.35**
13	Entertainment Charges	50270	**100**	321659	**639.86**	50676	**100.80**
14	Fcc	17650	**100**	21598	**122.36**	21515	**121.89**
15	Fresh Supply	1304844	**100**	1373794	**105.28**	1523342	**116.74**
16	Furnishing Material	63000	**100**	2500	**3.96**	89200	**141.58**
17	Generator Expences	265781	**100**	266648	**100.32**	184770	**69.51**
18	Hotel Expences	1049077.74	**100**	1557296	**148.44**	1619170	**154.34**
19	House Rent	114156	**100**	112242	**98.32**	108672	**95.19**

20	Incentive A/C	9400	**100**	-	**0**	1675	**17.81**
21	Labours Charges	1668296	**100**	1733729	**103.92**	1818085	**108.97**
22	Laundary Charges	148334	**100**	143613	**96.81**	118327	**79.77**
23	Legal Fees	5000	**100**	7000	**140**	4494	**89.88**
24	Linen Ecpenditure	45820	**100**	-520	**-1.13**	58944	**128.64**
25	Liquor Purchase	1291757	**100**	982417	**76.05**	1219898	**94.43**
26	Liveries to staff	23574	**100**	36468	**154.69**	74221	**314.84**
27	Medical Reimbursment	29767	**100**	20942	**70.35**	213440	**717.03**
28	Misc. Expences	177213	**100**	2599	**1.46**	-	**0**
29	Package Tour Expences	811632	**100**	962806	**118.62**	121972	**15.02**
30	Pay & Allowance	3391967	**100**	3260440	**96.12**	3852313	**113.57**
31	Postage, Telegram & Telephone	83623	**100**	31071	**37.15**	33037	**39.50**
32	Provision supply	1522740.56	**100**	1691902	**111.10**	1816529	**119.29**
33	Publicity Expences	2680	**100**	129722	**4840.37**	-	**0**
34	Repair & Maintanance of others	534450	**100**	718106	**134.36**	1098029	**205.45**
35	Stationary & Printing	18123	**100**	5140	**28.36**	11523	**63.58**
36	Telephone Expences	16181	**100**	9443	**58.35**	11722	**72.44**
37	Telephone & Trunk Call	0	**100**	3371	**0**	265468	**0**
38	Transport Misc. Expences	162390	**100**	252467	**155.46**	10459	**6.44**
40	Travelling Allowance	17245	**100**	21302	**123.52**	-3000	**-17.39**
41	Vehicle Hire charges	19850	**100**	-1075	**-5.41**	-	**0**
	TOTAL	**16515541**	**100**	**21375984**	**129.42**	**18016070**	**109.08**

स्रोत – होटल शिप्रा रेसिडेन्सी, उज्जैन मध्यप्रदेश पर्यटन विभाग।

****

उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि का अध्ययन

श्रीमती विजय पाराशर *

प्रस्तावना – उच्च माध्यमिक शिक्षा वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की महत्वपूर्ण कड़ी है। उच्च माध्यमिक शिक्षा का यह स्तर ऐसा मंच है जो कि एक और जो उच्च शिक्षा में प्रवेश लेने के लिए और दूसरी और रोजगार एवं जीवन यापन के प्रवेश के लिए रास्ता खोलती है क्योंकि इस शिक्षा से राष्ट्र के लक्ष्य निर्धारित होते हैं। हमारे देश की समृद्धि सफलता और प्रकाश में भविष्य माध्यमिक शिक्षा पर अवलंबित है।

शिक्षा के आदान-प्रदान की प्रक्रिया में शिक्षक का स्थान प्रमुख है मानव को मानव तथा संस्कारों की पूंजी बनाकर देश को एक जिम्मेदार नागरिक बनाने में शिक्षकों का अथक प्रयास होता है।

एच जी वेल्स ने शिक्षकों के महत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है शिक्षक इतिहास का निर्माता होता है राष्ट्र का इतिहास विद्यालयों में लिखा जाता है और विद्यालय अपने शिक्षकों की गुणवत्ता से बहुत भिन्न हो सकते हैं हमारे राष्ट्र को विरासत में मिली शिक्षा परंपरा विश्व में सबसे प्राचीन है देश के संस्कार संप्रदाय संस्कृति एवं बौद्धिक संपदा का चिंतन पूर्वक समन्वय करके हमारी शिक्षा पद्धति का जन्म हुआ जिसमें शिक्षक महत्वपूर्ण घटक है।

यदि शिक्षक का शारीरिक स्वस्थ है और मस्तिष्क स्वस्थ नहीं है तो शिक्षक को हम स्वस्थ नहीं कह सकते क्योंकि शरीर की प्रक्रिया पर संवेगो का प्रभाव पड़ता है। संवेग हमारे मानसिक स्वास्थ्य को अच्छा व बुरा दोनों बना सकते हैं संवेग शरीर व मन को उत्तेजित करता है और एक शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने क्रियाकलापों विचारों के बीच संबंध को समझें तथा इनको पहचान करें प्रतिक्रिया करें संवेगात्मक बुद्धि व्यक्ति में परानुभूति व्यवसाय में दृढ़ता, आवेश नियंत्रण, स्पष्ट एवं प्रभावी संप्रेषण विचारात्मक निर्णय तथा दूसरों के साथ समायोजन करने की क्षमता विकसित करता है अत: स्पष्ट रूप से कहा जाता है कि संपूर्ण शिक्षा की व्यवस्था एवं अस्तित्व को बनाए रखने के लिए शिक्षक में संवेगात्मक बुद्धि का होना अति आवश्यक है।

संवेगात्मक बुद्धि का तात्पर्य संवेगो के प्रत्यक्ष नियंत्रण एवं मूल्यांकन से माना जाता है कुछ अनुसंधान का मत है कि संवेगात्मक बुद्धि का अधिगम भी किया जा सकता है और इसे प्रबल बनाया जा सकता है जबकि अनुसंधानकर्ता इसे एक जन्मजात विशेषता मानते हैं।

भारतीय संदर्भ में संवेगात्मक बुद्धि से तात्पर्य समजातीय शीलगुण अथवा दूसरों के प्रति सम्मान प्रकट करने तथा अपने कर्तव्य निर्वाह करने की मानसिक योग्यता के रूप में नहीं की जाती है वरन संवेगिक परिस्थिति में व्यक्ति के व्यवहार एवं उसके स्वरूप के रूप में की जाती है।

इसी प्रकार **डेविड वेशलर** (1940) के अनुसार बुद्धि के भावात्मक तत्व जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है उन्होंने बुद्धि को एक सार्वभौमिक योग्यता के रूप में माना है जिसके कारण मनुष्य वातावरण के प्रति प्रभावपूर्ण अनुक्रियाएं प्रकट करता है जिसमें व्यक्ति के उद्देश्यपूर्ण कार्य करने,तर्कपूर्ण ढंग से सोचने और वातावरण के साथ भली प्रकार व्यवहार करने की क्षमताओं के समुच्चय के रूप में परिभाषित किया है।

सुनील कुमार(2014) में माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि के संबंध में प्रभावशीलता के संबंध में एक प्रायोगिक अध्ययन किया अध्ययन के निष्कर्ष में पाया गया कि कक्षा शिक्षण के दौरान प्रयोग में लाई गई शिक्षण सामग्री शिक्षकों के व्यवहार में परिवर्तन में सहायक होती है **चतुर्वेदी विजिट** (2015) **'ए स्टडी ऑफ इमोशनल इंटेलिजेंस ऑफ मैनेजमेंट'** फैकेल्टीज ऑफ एनसी आर पर अध्ययन किया अध्ययन के निष्कर्ष में पाया कि प्रबंधन संस्थानों में कार्य कर रहे संकायों संवेगात्मक बुद्धि लिंग के आधार पर स्वतंत्रता पाई गयी। **रेजा मोहम्मद** (2015) सेरवान शहर के शिक्षकों के मध्य आत्मप्रभावकारिता एवं संवेगात्मक बुद्धि के मध्य संबंध का अध्ययन किया अध्ययन के निष्कर्ष में पाया कि प्रभाव व कार्य का आत्मप्रभावकारिता एवं संवेगात्मक बुद्धि के मध्य भावनाओं के आधार पर 95 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थक संबंध पाया गया। **अग्रवाल श्वेता** (2016) ने सरकारी एवं गैर सरकारी अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों कि संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया अध्ययन के निष्कर्ष में पाया कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि निम्न स्तर की पाई गयी और गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि मध्य स्तर की पाई गयी।

उपरोक्त शोध से स्पष्ट है कि शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि के विभिन्न संदर्भ में अध्ययन किए गए हैं परंतु उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि के संदर्भ में अध्ययन प्राप्त नहीं हुए हैं इसलिए शोधकर्ता ने इस शोध का विषय उच्च माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों विद्यालय शिक्षकों की समीक्षात्मक बुद्धि के आयामों के संदर्भ में अध्ययन किया।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – उच्चतर माध्यमिक स्तर पर राजकीय एवं गैर राजकीय शिक्षकों के संदर्भ में अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पना – प्रस्तुत शोध अध्ययन में निर्मित परिकल्पना इस प्रकार है।

गोंण शोध परिकल्पना :

1. उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों

* शोधार्थी, वनस्थली विद्यापीठ, निवाई (राज.) भारत

की स्वयं एवं अन्य के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर पाया जाता है।

2. उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों का व्यवसायिक उन्मुखीकरण में सार्थक अंतर पाया जाता है।

शोध विधि – इस शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या – प्रस्तुत शोध अध्ययन में इंदौर एवं उज्जैन संभाग के राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय शिक्षकों को लिया गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के उच्चतर माध्यमिक स्तर के 600 शिक्षकों को न्यादर्शन विधि द्वारा न्यादर्श के रूप में चयन किया गया है।

गौण शोध परिकल्पना – शोध परिकल्पना उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों की स्वयं एवं अन्य के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर पाया जाता है के परीक्षण हेतु उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों की स्वयं एवं अन्य के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता रूपी शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया।

राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय विद्यालय शिक्षकों की स्वयं एवं अन्य के प्रति जागरूकता का मध्यमान मानक विचलन एवं टी का मान।

तालिका संख्या 1

क्र.	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्रता	टी– मान
1	राजकीय	300	121.07	54.87	598	4.926
2	गैर–राजकीय	300	142.68	52.58		

उपर्युक्त तालिका संख्या 1 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों की स्वयं के अन्य के प्रति जागरूकता के मध्यमान का मान क्रमश: 20 0.55 तथा 23 5.37 है तथा मानक विचलन का मान क्रमश: 86.17 तथा 8 3.80 है एवं टी परीक्षण का मान 5.018 है जो की 0.05 के विश्वास के स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक तालिका मान से अधिक है अत: शून्य परिकल्पना उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों की स्वयं एवं अन्य के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है अस्वीकृत होती है तथा गोण शोध परिकल्पना उच्च माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों की स्वयं एवं अन्य के प्रति जागरूकता में सार्थक अंतर पाया जाता है स्वीकृत होती है।

(2) गौण शोध परिकल्पना – उच्च माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों का व्यवसायिक उन्मुखीकरण में सार्थक अंतर पाया जाता है के परीक्षण हेतु उच्च माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों का व्यवसायिक उन्मुखीकरण में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है रूपी शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया है।

तालिका संख्या 2 : राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों के शिक्षकों का व्यवसायिक उन्मुखीकरण का मान मानक विचलन एवं टी का मान

क्र.	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्रता	टी– मान
1	राजकीय	300	121.07	54.87	598	4.926
2	गैर–राजकीय	300	142.68	52.58		

उपर्युक्त तालिका संख्या 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों का व्यवसायीक उन्मुखीकरण के मध्यमान का मान क्रमश: 121.07 तथा 142.68 है मानक विचलन का मान क्रमश: 54.87 तथा 52.58 एवं टी परीक्षण का मान 4.926 है जो कि 0.05 के विश्वास स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक तालिका मान से अधिक है।

अत: शून्य परिकल्पना उच्च माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों का व्यवसायिक उन्मुखीकरण में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता अस्वीकृत होती है तथा गौण शोध परिकल्पना उच्च माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों का व्यवसायीक सार्थक अंतर पाया जाता है स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष – प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि उच्चतर माध्यमिक राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालय के शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि के आयाम स्वयं एवं अन्य के प्रति जागरूकता एवं व्यवसायिक उन्मुखीकरण में सार्थक अंतर पाया गया इसका कारण हो सकता है कि दोनों प्रकार के विद्यालयों के शिक्षकों में स्वयं के संवेगो की अभिव्यक्ति दूसरों के संवेगो को समझने की योग्यता में समानता नहीं पाई गई जिसके कारण वह एक दूसरे की भावनाओं को समझने तथा उसके साथ तारतम्य संबंध स्थापित करने में असमर्थ होते हैं साथ ही दोनों विद्यालयों के शिक्षकों के सृजनात्मक कार्य प्रतिक्रिया में भी समानता नहीं पाई गई।

शैक्षिक निहितार्थ – कक्षा में शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया की सफलता शिक्षक पर निर्भर करती है यह शिक्षण हेतु आव्यहु रचना निर्मित करता है यह तो महत्वपूर्ण है साथ ही संवेगात्मक रूप से कितना सफल है यह भी आवश्यक है। शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि उसकी कार्य संतुष्टि एवं मानसिक स्वास्थ्य को भी प्रभावित करती है।

भावी शोध हेतु सुझाव – प्रस्तुत शोध का भविष्य निम्न प्रकार से विस्तार कर सकते हैं।

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन छोटे न्यादर्श पर बड़े न्यादर्श पर अध्ययन किया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों को ही लिया गया है आगामी शोध हेतु अन्य प्रकार के विद्यालयों को भी शामिल किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **भटनागर सुरेश एवं संजय कुमार** (2009) भारत में शिक्षा का विकास मेरठ आर लाल बुक डिपो।
2. **भार्गव महेश** (2009) आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण मापन आगरा भार्गव बुक हाउस इन भटनागर एम.बी.(2007)शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली मेरठ लाल बुक डिपो।
3. **चरण माधव** (2007) भारत को शिक्षा भारत को शिक्षा नई दिल्ली योजना प्रसाद एवं विज्ञापन प्रकाशन।

****

लोकगीत : संरक्षण व नवीन प्रयोग (एक विवेचनात्मक अध्ययन)

लीना प्रकाश शाक्या* डॉ. रश्मि श्रीवास्तव **

प्रस्तावना – साहित्य के क्षेत्र में **'वेद'** और **'लोक'** दोनो ही ऐसे शब्द है, जिन पर संपूर्ण विश्व का प्राचीनतम् एवं समग्र साहित्य निर्भर है। हिन्दी के महान कवि सुमित्रानन्दन पंत ने लिखा:–

नाद ही जीवन का उन्मेश, नाद ही सृष्टि नाद ही वेद

अर्थात यहीं हम संगीत की महत्ता को स्पष्ट रूप से समझ सकते है जहाँ विद्वानों की रूचि वेद शास्त्र पुराणों में होती है, वहीं एक ओर जन सामान्य की अभिव्यक्ति जिस रूप में होती है उसे लोक साहित्य, लोक सभ्यता या लोक संस्कृति के नाम से संबोधित किया जा सकता है। भारतीय संस्कृति में लोक को सदैव सर्वोच्च स्थान मिला। लोक शब्द की सौन्दर्यता का परिलक्षित रूप लोक गीतों में सहज ही देखा जा सकता है।

'लोक शब्द संस्कृत के **लोक दर्शने** धातु से **धञ** प्रत्यय लगाकर बना इस धातु का स्पष्ट व सरल अर्थ है देखना जिसका लट् लकार के अन्य पुरूष के एक वचन का रूप लोकते है।' अत: **लोक शब्द का अर्थ** हुआ **देखने वाला।**

लोक शब्द से ही हिन्दी के लोग शब्द की व्युत्पत्ति मानी जाती है जिसका तात्पर्य है सर्व साधारण जनता अत: लोक शब्द का अभिप्राय उस समस्त जन समुदाय से है जो किसी देश में निवास करता है। चूँकि शोध प्रपत्र लोक गीतों के संरक्षण, प्रयोग व नवीनता से सम्बन्धित है। इसलिये हम यहाँ लोक गीत से सम्बन्धित चर्चा करेंगें। लोक गीत जन समुदाय में जन्म लेते हैं जिसमें मानवीय भावनाएँ, आकांक्षाएँ, निहित होती हैं।

लोक में गाये जाने वाले ऐसे गीत जिनके रचनाकारों का कोई पता नही होता और जो मौखिक परम्परा में पीढ़ी दर पीढ़ी चलते आ रहे हैं वे ही लोकगीत कहलाये। लोकगीत प्रकृति के उद्गार हैं जिनमें अलंकरण, रस, छन्द, लय, लालित्य, माधुर्यता तो होती ही है वहीं प्रकृति जब तरंग में आती है तब वह पौधों के माध्यम से हवाओं के झोंको का गान करती है।

आज के परिवेश में लोकगीतों की स्थिति पर दृष्टिपात किया जाये तो आज संस्कृति का संरक्षण अनिवार्य हो गया है। आज के वैश्वीकरण के युग में हमारी युवा पीढ़ी अपनी संस्कृति से वांछित होती जा रही है, मेरा विचार है,कि हम अपनी संस्कृति को इतना उज्ज्वल, प्रबल बना सकते हैं कि पाश्चात्य लोग हमारी संस्कृति की ओर अवश्य ही आकर्षित होंगे।

जिस प्रकार आज हम लोकगीतों के लिये भारतीय लोक वाद्यों का ही नहीं वरन् पाश्चात्य लोक वाद्यों का भी प्रयोग कर रहे हैं। इसके माध्यम से हम नवीनता ला रहे हैं व लोकगीत को उन्नत बना रहें हैं। आज किसी भी मांगलिक कार्य को करने के लिए पंडित या शास्त्री लोगों द्वारा ऐसी मंडलियाँ तैयार की गयी हैं, जिनमें लोक गीतों के गायन के साथ पाश्चात्य वाद्यों का प्रयोग बखूबी किया जा रहा है।

आज सम्पूर्ण भारत में देवी जागरण, माता की चौकी, रामायण गाथा, सुन्दरकाण्ड जैसे मांगलिक अवसरों पर अनेक सांगतिक टोलियों कार्य कर रही है और टैक्नोलौजी का प्रयोग कर अपने कार्य में कुशलता ला रहे हैं। टैक्नोलौजी से अभिप्राय: नवीन तकनीकियों से है, आज संगीत में सौन्दर्यात्मकता को बढ़ाने के लिये हम ड्रम पैड, सिन्थेसाइजर, कैशियो व इलैक्ट्रोनिक वाद्य यंत्रों की सहायता ले रहे हैं, जिससे लोकगीतों की महत्ता अधिक बढ़ गयी है।

आज लोकगीतों को स्वर लिपि लेखन द्वारा सुरक्षित किया जा सकता है। आज हम लैपटाप का प्रयोग लेखन कार्य के लिए अधिकांश रूप से कर रहे हैं और आज यदि हम अपनी संस्कृति की धरोहर को लिखित रूप में सोफ्ट व हार्ड कापी रखने हेतु सक्षम हैं इसलिए आज इस ओर ध्यान देना अति आवश्यक है, वर्तमान समय में हमारी सरकार लोकगीतों के संवर्धन हेतु अनेक योजनाओ का निर्माण कर रही है। अनेक रंगमचों पर कलाकारों द्वारा विविध कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं तथा लोक कलाकारों को पुरूस्कृत एवं सम्मानित किया जा रहा है जिससे लोक कलाकरों का उत्साहवर्धन भी हो रहा है।

सरकार द्वारा लोकगीत एवं संस्कृति को यथा संभव बढ़ाने व जीवित रखने का प्रयास निरन्तर आपेक्षित रहेगा जिससे हमारे देश के विभिन्न प्रान्तों की अमूल्य धरोहर लोकगीतों को संरक्षित रखने के लिए कार्य किया जाये, हमारी सरकार को इस तरह का बढ़ावा देना चाहिये कि लोकगीत आगामी पीढ़ी हेतु संरक्षित हो सकें।

लोक गीतों की ऐसी कई विधायें हैं जिनका संरक्षण बहुत आवश्यक है। लोकगीतों में कई रागों की छाया व आभास दिखाई देता है। एवं एक से अधिक रागों के स्वरों का आभास भी दिखता है। इसके अतिरिक्त ऐसी स्वर संगतियां हैं जिनसे भावनात्मक प्रेरणा जुड़ी रहती है। लोकगीतों की लोकप्रियता का प्रमुख कारण उसमें लोक जीवन की संपूर्ण संवेदना तथा अनुभूतियों सरल व स्वाभाविक अभिव्यक्ति होती है। लोकगीतों की यह विशेषता है, कि वे संक्षिप्त, सरल, स्पष्ट, स्वाभाविक, सुन्दर और संगीतमय होते हैं। शायद ही ऐसा लोकगीत हो जो संगीत से अनुप्राणित न हो उसका संगीत भी लोकजीवन का उतना ही सफल परिचायक होता है जितनी कि काव्य कि कविता।

लोकगीत की नवीनता में आज लोकगीतों के विषय से संबन्धित सैमिनार,संगोष्ठियां, मंच प्रदर्शन, संगीत मंडलियां आदि का निर्माण किया जा रहा है। लोकसंगीत मे कम से कम दो या दो से अधिक 9 स्वरों का प्रयोग

* शोधार्थी (संगीत विभाग) दयालबाग एजूकेशनल इस्टीटयूट, आगरा (उ.प्र.) भारत
** शोध निर्देशिका (संगीत विभाग) दयालबाग एजूकेशनल इस्टीटयूट, आगरा (उ.प्र.) भारत

होता है लोकगीत में अधिकतर सात शुद्ध स्वरों दो विकृत कोमल गंधार व कोमल निषाद स्वरों का प्रयोग मिलता है। अर्थात उनमें मुख्यत: विलावल, काफी, खमाज थाटों के स्वर लगते है।

वर्तमान में हम विभिन्न सांस्कृतिक आयोजनों द्वारा प्रान्त की संस्कृति के करीब पंहुच चुके हैं। हर प्रान्त के लोकल चैनल हमें उस प्रान्त की संगीत परम्परा से अवगत कराने में अपना योगदान दे रहे है। लोककलाओं, लोकगीतों व लोक साहित्य से परिचित कराने में इन चैनलों ने अपनी अहम भूमिका निभाई है।

लोकोत्सव द्वारा लोक गीतों का प्रचुर मात्रा में प्रचार प्रसार हो रहा है। आकाशवाणी, दूरदर्शन, प्राईवेट एलबमों के द्वारा लोकगीत विश्व भर में लोकप्रिय हो रहे है। शोधार्थी लगातार शोध प्रक्रिया में संलग्न है एवं संगीत कि लोक धारा को प्रवाहमान बनाने हेतु अपना विशिष्ट योगदान दे रहे हैं वहीं लोकसंगीत को अध्ययन उपयोगी बना रहे हैं। भविष्य में अपनी संस्कृति को संरक्षित रखने हेतु रीति- रिवाज, धार्मिक मूल्यों की महत्ता को एकत्रित करने हेतु शोध क्षेत्र में अनेक कार्य हो रहे है।

आज हम डॉ0 वीणा श्रीवास्तव जी के शब्दों में कह सकते है। 'आज हमारे पास लेखनी है, भाषा है, लिपि है, ध्वनि विस्तारक यंत्र हैं व अन्य कई ऐसे संसाधन हैं जिनके द्वारा गीतों को उनके रचनाकारों को, उनकी धुनों आदि को संरक्षित कर सकते हैं तथा अपनी परम्परा को और अधिक सुदृढ़ व समृद्ध बना सकते है। आज हमारे पास साधनों की कमी नहीं है और इसी कारण लोक गीतों को जन जन तक पंहुचाना आसान है किन्तु आवश्यकता है तो इन साधनों का उपयोग करने की व उनका निर्वाह करने की अत: प्रत्येक प्रान्त के समाज को व शासन को इसकी ओर विचार करना चाहिये तभी अपने देश की कलाओं को व लोकगीतों को सुरक्षित रखा जा सकता है।'

लोकगीतों के विषय में यह समझना अति आवश्यक है कि क्षेत्र बदलने पर बोली में अंतर अवश्य आता है परन्तु प्रत्येक क्षेत्र के पृथक पृथक बोलियों में लोकगीत होते हैं। लोकगीतों के तीन अंग माने गये है, भाव शब्द एवं स्वर। भाव उसका आन्तरिक रंग है तथा शब्द और स्वर उसके बाहरी स्वरूप है। लोकगीतों के यह तीनों अंग एक दूसरे पर पूर्ण रूप से आश्रित है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आज का समय इन्फोर्मेशनल टैक्नोलौजी का है जहां टैक्नोलौजी का प्रयोग नवीनता का विकास करने में सहायक सिद्ध है शिक्षा के क्षेत्र में टैक्नोंलौजी का पूर्ण रूप प्रयोंग किया जा रहा है जिससे संगीत विषय भी अछूता न रहा, इलैक्ट्रोनिक वादय यंत्रों ने समय की बचत व आने ले जाने में सुलभता प्रदान की है जिसे नकारा नहीं जा सकता वहीं साउन्ड प्रोडक्शन में नवीन बदलाव, विद्यार्थियों के लिए स्वर पेटी, तबला पेटी, लोकगीतों को सुनकर रिकार्ड करके संरक्षित रखने के लिए जो नवीन डिवाइज़ें हमारे पास उपलब्द हैं वह नवीनता ही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोक संस्कृति की रूपरेखा- कृष्णदेव उपाध्याय
2. भारतीय लोक संगीत-वीणा श्रीवास्तव
3. भारतीय लोक संगीत-वीणा श्रीवास्तव
4. भारतीय संस्कृति शाश्वत जीवनदृष्टि एवं संगीत- डॉ0 रूचि गुप्ता
5. हिन्दी नाटक और रंगमंच में लोकतत्व- डॉ0 स्वामी प्यारी कौड़ा
6. भारतीय संगीत और संगीतज्ञ-रामलाल माथुर
7. जनजातीय लोकगीत एक अध्ययन-डॉ0 सत्यनारायन व्यास

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

ग्रामीण आर्थिक विकास में खादी ग्रामोद्योग की भूमिका का अध्ययन (छ.ग. के राजनांदगांव जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ.के.एल. टाण्डेकर * डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा ** सुश्री ममता देवांगन ***

शोध सारांश – 'भारत ग्रामों का देश है और ग्राम भारत की आत्मा' ग्रामों का विकास होगा तो राज्यो का विकास होगा तो देश का विकास होगा, देश के विकास में ही प्रत्येक मानव मात्र का विकास निहित है भारत की कुल जनसंख्या का 85 प्रतिशत भाग लगभग 5.89 लाख गावों में निवास करता है यही ग्रामीण जनता के यहां अर्थ तंत्र का मेरूदण्ड है इसलिए आवश्यकता है कि कृषि कार्य के साथ साथ अन्य ऐसे आर्थिक कार्य अपनाएं जाए जिनसे वहां रहने वाले लोग की आय बढ़ सके और वे उचित आर्थिक लाभ प्राप्त कर सके भारत को लघु एवं कुटीर उद्योगो का जनक कहा जाता है खादी ग्रामोद्योग लघु एवं कुटीर उद्योग का ही एक अंग है खादी ग्रामोद्योग का विकास भारत में ही नही वरन छ.ग. में भी होने लगा है, यहां खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के माध्यम से क्षेत्र के विकास करने के प्रयास किए जा रहे है गांधी जी के प्रयासो को साकार करने के लिए सरकार द्वारा प्रयास किया जा रहा है कि ग्रामीण आर्थिक विकास विशेषकर ग्रामीण जनता अनुसूचित जाति, जन जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग का विकास किया जा सके राजनांदगांव जिले में भी खादी ग्रामोद्योग की प्रबल संभावनाए विद्यमान है यहां पर्याप्त कच्चा माल लघु एवं कुटीर उद्योग के लिए पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है इस उद्योग के प्रति कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा था किन्तु वर्तमान में खादी ग्रामोद्योग बोर्ड छ.ग. शासन के माध्यम से ग्रामीण विकास के लिए चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं कार्यक्रमो के सफल क्रियान्वयन से इस क्षेत्र में रोजगार सृजन, उद्योग का व्यापक फैलाव हो सका है जिले में लघु एवुं कुटीर उद्योग कृषि के पूरक उद्योग के रूप में विकसित कर क्षेत्र की प्रमुख समस्या श्रम पलायान का समाधान किया जा सकता है।

प्रस्तावना – ग्रामोद्योग की बात करने पर अनायस ही आंखो के सामने परम्परागत व्यवसाय में लगे लोगो की तस्वीर उभरने लगती है महात्मा गांधी के शब्दो 'ग्रामोद्योग की योजना के पीछे मेरी कल्पना तो यह है कि हमें रोजमर्रा की आवश्यकताएं गांव की बनी चीजों से पूरी करनी चाहिए इससे गांव आत्मनिर्भर होकर खुशाल बनेंगे' वास्तव में खादी और ग्रामोद्योग गांधी जी की इसी विचार धारा की उत्पत्ति है, आयोग के माध्यम से जहां ग्रामीणो, दस्तकारो और शिल्पकारो को रोजगार उपलब्ध काराया जाता है, तथा केन्द्र सरकार की कोशिश हमेशा से रही है कि ग्रामीणो को पर्याप्त रोजगार के साधन उपलब्ध कराया जाए इसके लिए खादी ग्रामोद्योग बोर्ड भी ग्रामीण उद्योगो को प्रोत्साहित करने का प्रयास कर रही हैं।

खादी का अर्थ है भारत में कपास, रेशम या ऊन के हाथकरधा, सूत अथवा उनमें दो या सभी प्रकार के सूत के मिश्रण से जो भारत में हाथकरधा पर बुना गया कोई भी वस्त्र इसके अंतर्गत शामिल किया जाता है वही खादी ग्रामोद्योग का अर्थ है ऐसा कोई भी उद्योग जो ग्रमीण क्षेत्र (जिसकी आबादी 20 हजार से अधिक न हो) में स्थित हो तथा जो विद्युत के उपयोग या बिना उपयोग के कोई माल तैयार करता हो या कोई सेवा प्रदान करता हो तथा जिससे (संयत्र तथा मशीनरी एवं भूमि भवन में) निवेशित स्थायी पूंजी जो प्रति कारीगर या कर्मी 50 हजार रूपये से ज्यादा न हो। खादी ग्रामोद्योग विभाग के अधीन संचालित खादी ग्रामोद्योग बोर्ड छ.ग. राज्य की आर्थिक वृद्धि के साथ सामाजिक आर्थिक रूपातंरण को जोड़ने की महत्वपूर्ण कड़ी है खादी ग्रामोद्योग आयोग ने देश में लाखो पारम्परिक कारीगरो लघु उधमियो और बेरोजगार युवको को आधारित स्तर पर दीर्घकालिक रोजगार के अवसर प्रदान करने प्रशंसनीय भूमिका निभाई है।

जिला राजनांदगांव जिसे अध्ययन का केन्द्र माना गया है में भी इस उद्योग की प्रबंध संभावनाएं विद्यमान है राजनांदगांव जिला क्रषि भूमि एवं वन क्षेत्रो के द्वारा ही निर्मित हुई है यहां खादी ग्रामोद्योग एवं लघु एवं कुटीर उद्योग के लिए पर्याप्त मात्रा में कच्चा माल उपलब्ध है किन्तु इस उद्योग के विकास की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा है जबकि राजनांदगांव जिला के साथ – साथ पूरे छ.ग. में यह उद्योग कृषि के पूरक उद्योग के रूप में विकसित हो सकता है।

उद्देश्य – किसी भी शोध कार्य को सम्पन्न करने के लिए उसके उद्देश्य का निर्धारण आवश्यक है इस शोध कार्य के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है –

1. राजनांदगांव जिले में खादी ग्रामोद्योग के विकास तथा रोजगार श्रृजन में विद्यमान स्थिति का मूल्यांकन करना।
2. राजनांदगांव जिले में खादी ग्रामोद्योग विभाग के विकास एवं संभावनाओं के साथ योग्य वस्तुओ का उत्पादन करने राज्य स्तरीय अर्थव्यवस्था के विकास पर होने वाले प्रभावो का परीक्षण करना।
3. ग्रामीण जन समुदाय में आत्मनिर्भरता एवं मिलने वाले लाभ व आर्थिक सुद्दढता का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना – प्रस्तुत शोध राजनांदगांव जिले के ग्रामीण आर्थिक विकास हेतु खादी ग्रामोद्योग विभाग के कार्यक्रमो का मूल्यांकन करने महत्वपूर्ण परिकल्पनाए निम्नानुसार है।

1. शोधकर्ता द्वारा यह प्रतीत हो है कि खादी ग्रामोद्योग विभाग के कार्यक्रम सुचारूरूप से चल रहे है।

*प्राचार्य, शासकीय डॉ. बाबा साहब ऑम्बेडकर महाविद्यालय, डोंगरगांव, जिला- राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय रानी सूर्यमुखी देवी महाविद्यालय, छुरिया, जिला- राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
*** अतिथि व्याख्याता (वाणिज्य) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय डोंगरगढ, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत

2. विभाग की विभिन्न योजनाओ के क्रियान्वयन से ग्रामीणो की आर्थिक, सामाजिक, व्यवहारिक स्थिति में सुधार हुआ है।
3. जिले में ग्रामोद्योग की अपार संभावनाएं विद्यमान है।
4. राजनांदगांव जिला वन वाहुल्य क्षेत्र है तथा क्षेत्र के आर्थिक, विकास, गरीबी निवारण तथा रोजगार के अवसरो की वृद्धि ग्रामोद्योग के स्थापना से ही संभव है।

शोध प्रविधि – छ.ग. खादी ग्रामोद्योग विभाग एवं छ.ग. ग्रामोद्योग बोर्ड व्दारा संचालित विभिन्न योजनाओं का ग्रामीण आर्थिक विकास में भूमिका का अध्ययन किया गया है इसके तहत प्राथमिक एवं व्दितियक संमको का प्रयोग किया गया है व्दितियक संमको के लिए खादी ग्रामोद्योग विभाग छ.ग. एवं जिला राजनांदगांव से प्राप्त वार्षिक प्रतिवेदन, जनगणना, प्रकाशन, सांख्यिकीय प्रकाशनो रोजगार संमको जिला योजना एवं सांख्यिकीय पुस्तिका के माध्यम से आंकड़ो को व्दितियक संमको के रूप में प्रयोग कर उनके सारणीयन विश्लेषण एवं सांख्यिकी विधियो के आधार पर प्रतिशत, विकास दर, पृवृत्तिमान जैसे विधियो का उपयोग किया गया है प्रश्नावली अनुसूचित और साक्षात्कार आदि के माध्यम से प्राथमिक आंकड़ो का संग्रहण भी किया गया है ताकि अध्ययन की गुणात्मकता सिद्ध हो सके।

अध्ययन क्षेत्र एवं सीमाएं – प्रस्तुत शोध में ग्रामीण आर्थिक विकास में खादी ग्रामोद्योग विकास का अध्ययन (राजनांदगांव जिले के विशेष संदर्भ में) राजनांदगांव जिलो को लिया गया है चूंकि छ.ग. राज्य के पश्चिम भाग में स्थिति प्रदेश का सबसे बड़ा जिला है इसके अंतर्गत 09 विकासखण्ड राजनांदगांव, डोंगरगढ़, खैरागढ़, छुरिया, छुईखदान, डोंगरगांव, चौकि मोहला मानपुर आते है प्रस्तुत शोध प्रबंध में अध्ययन राजनांदगांव जिले तक सीमित है किंतु तथ्यो का स्पष्टीकरण एवं तुलनात्मक विवेचना हेतु भारत एवं छ.ग. के आंकड़ो का भी सहारा लिया गया है अध्ययन की विवेचना को स्पष्ट करने हेतु व्दितियक समंको के साथ प्राथमिक समंको का भी उपयोग किया गया है।

छ.ग. एवं राजनांदगांव जिले का भौगोलिक क्षेत्र एवं विस्तार – नवगठित छ.ग. राज्य देश का 26वां राज्य है जिसका निर्माण 01 नवम्बर 2000 को हुआ ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक पहचान रखने वाला छ.ग. क्षेत्र 36गढ़ो का गढ़ राज्य का दर्जा प्राप्त कर विकास की ओर अग्रसर हो रहा है, भारत की कुल धरा का 4.14 प्रतिशत यह भाग 1 लाख 37 हजार 788 वर्ग कि.मी. में विस्तारित है 20 हजार 308 गांवो में 2 करोड़ से अधिक आबादी वाला यह क्षेत्र छ.ग. नवप्रांत अपनी अध्ययन सांस्कृतिक अस्मिता के ताने वाने से रच बसा है वही राजनांदगांव जिला 1973 में दुर्ग जिले से विभाजित होकर अस्तित्व में आया, यह जिला संभवत: मध्यप्रदेश में ही नहीं वरन सम्पूर्ण भारत में सर्वाधिक पिछड़ा एवं अविकसित जिले की श्रेणी में आता है, राजनांदगांव जिला $20^{0}50'$ से $21^{0}22'$ तक उत्तरी अक्षांश व $80^{0}26'$ से $81^{0}13'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है जो समुद्र सतह से 330.71 मीटर की उंचाई पर है इसका कुल क्षेत्रफल 8022.55 वर्ग किलोमीटर है इसकी उत्तर दक्षिण लम्बाई 177 कि.मी. तथा चौड़ाई 80 कि.मी. है, 2001 की जनगणना में कुल जनसंख्या 1283224 थी जो वर्ष 2011 की जनगणना से 20.25 प्रतिशत अधिक है सबसे अधिक जनसंख्या राजनांदगांव में तथा सबसे कम आदिवासी अंचल मोहला ब्लाक की है।

ग्रामीण आर्थिक विकास में खादी ग्रामोद्योग की भूमिका – खादी मात्र एक कपड़े का टुकड़ा ही नहीं हैं अपितु जीने का एक साधन है सन् 1918 में महात्मा गांधी ने भारत के ग्रामीण क्षेत्रो में रहने वाली जनता के लिए सहायता कार्यक्रम के रूप में अपना खादी आंदोलन शरू किया था, कढाई और बुनाई में आत्मनिर्भरता आई स्वशासन की एक विचारधारा का स्थान ले लिया है खादी ग्रामोद्योग विभाग छ.ग. शासन विकास हेतु संचालित विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन छ.ग. खादी ग्रामोद्योग बोर्ड प्रदेश के सभी 27 जिला मुख्यालयों के माध्यम से ग्रामीण जीवन को बेहतर बनाने के लिए एवं गांवो की आर्थिक स्थिति के स्तर को सुधारकर जीवन स्तर को उठाने गांव में रोजगार साधन उपलब्ध कराने के उद्देष्य से प्रत्येक जिला मुख्यालयों में खादी ग्रामोद्योग विभाग कार्यक्रमों को संचालित कर रहा है राजनांदगांव जिला छ.ग. का औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा जिला है, जिले में अधिकांश अनुसूचित जाति अनुसूचित जन जाति के लोग ग्रामीण क्षेत्र में निवास करते है ये लोग अपनी परम्परागत पैतृक व्यवसाय को ही अधिक महत्व देते है, राजनांदगांव जिले में कृषि का एक फसली उत्पादन होने के कारण अधिकांश समय ग्रामीण जनसंख्या रोजगार की तलाश में भटकते रहते है अधिकांश लोग पलायन की ओर उन्मुख हो रहे है खादी ग्रामीण उद्योग राजनांदगांव जिले में तहसील एवं विकासखण्डो में शासन की विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन कर ग्रामीणों की आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। खादी ग्रामोद्योग बोर्ड छ.ग. शासन के निर्देशन पर जिले में स्थापित ग्रामोद्योग विभाग व्दारा निम्नलिखित योजनाओं के तहत ग्रामीण क्षेत्रो में निवासरत लोगो की जीवन स्तर को बेहतर बनाने के लिए प्रयास किए जा रहे है।

1. प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम – प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम योजना को वर्ष 2008–09 (सितम्बर 2008) के दौरान आरम्भ किया गया जिसे तत्कालीन तौर पर खादी और ग्रामोद्योग आयोग व्दारा जिला उद्योग केन्द्रो के माध्यम से प्रधानमंत्री सृजन क्रार्यक्रम एवं प्रधान मंत्री रोजगार योजना को एक साथ मिलाते हुए किया गया था ग्रामीण क्षेत्रो के साथ–साथ शहरी क्षेत्रो में सूक्ष्म उघमो की स्थापना के माध्यम से रोजगार के अवसरो का सृजन करने हेतु यह एक क्रेडिट सहबद्ध योजना है, इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिए खादी ग्रामोद्योग आयोग राष्ट्रीय स्तर पर नोडल अभिकरण है, प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम को अधिक लाभान्वित श्रेणी क्षेत्र सामान्य श्रेणी के लाभार्थी व्दारा स्वयं का अंशदान 10 प्रतिशत परियोजना लागत पर सब्सिडी की दर 15 प्रतिशत शहरी एवं 25 प्रतिशत ग्रामीण तथा विशेष श्रेणी यथा अनुसूचित जाति, जन जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक महिलाएं, भूतपूर्व सैनिक, शारिरिक रूप से विकलांग पूर्वीवर्ती क्षेत्र पहाड़ी और सीमा वर्ती क्षेत्र आदि के लाभार्थी का अंशदान परियोजना लागत पर 5 प्रतिशत सब्सिडी दर शहर 25 प्रतिशत तथा ग्रामीण 35 प्रतिशत निश्चित की गई है।

2. परिवार मूलक योजना – यह योजना राज्य शासन व्दारा प्रायोजित योजना है इसके अंतर्गत रू. 1.00 लाख तक लागत की छोटी इकाईयां स्थापित कराई जाती है जो अनु.जाति, अनु.जन जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग तथा सामान्य वर्ग के गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापक करने वाले हितग्राहियों को लाभान्वित कराया जाता है इसके तहत् 50 प्रतिशत अधिकतम रूपये 13500/– बतौर अनुदान प्रदान किया जाता है।

3. कारीगर प्रशिक्षण योजना – वर्तमान समय में देश के ग्रामीण क्षेत्रो के विकास हेतु खादी तथा ग्रामोद्योग विभाग व्दारा कारीगर प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाया जा रहा है जिससे न केवल ग्रामीण बेरोजगारी एवं निर्धनता उन्मूलन हेतु व्यक्तियो को आर्थिक सहायता या रोजगार उपलब्ध कराया

जाता है बल्की ग्रामीण जनता को प्रशिक्षण एवं तकनीकि ज्ञान की जानकारी भी उपलब्ध कराई जाती है, कारीगर प्रशिक्षण के तहत् रोजगार हेतु प्रशिक्षण देकर स्वरोजगार को प्रोत्साहित किया जाता है कारीगर प्रशिक्षण योजना के अंतर्गत लाभार्थियों की चयनित सूची तैयार करके उन्हें विभिन्न प्रकार से उद्यम लगाने हेतु आर्थिक सहायता के साथ ही साथ प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती हैं। इस प्रकार परिवार मूलक योजना कारीगर प्रशिक्षण योजना प्रधानमंत्री रोजगार सृजन योजना का तुलानात्मक विश्लेषण शोध प्रबंध में किया गया है।

राजनांदगांव जिले में प्रधानमंत्री रोजगार सृजन योजना परिवार मूलक योजना कारीगरी प्रशिक्षण योजना परिवार मूलक योजना कारीगरी प्रशिक्षण योजना की वर्षवार स्थिति (वर्ष 2011 से वर्ष 2017 तक)-

तालिका 1 (निचे देखे)

तालिका 1 के आंकड़ो से स्पष्ट होता कि प्रधानमंत्री रोजगार सृजन योजना में वर्ष 2011 में वितरित राशि 127.57 लाख रूपये है जो वर्ष 2013 में कम रही लेकिन आने वाले वर्षो में क्रमश: वृद्धि हो रही है उसी प्रकार रोजगार में भी लगातार वृद्धि को दर्शाता है परिवार मूलक योजना में वितरित राशि 2011 में 12.96 लाख है जो आगे 2 वर्षो तक वृद्धि हो रही है रोजगार में भी वर्ष 2011 में 86 थी जो आगे वर्षो में बढ़ती हुई दर्ज की गई कारीगर प्रशिक्षित योजना में भी उतार चढ़ाव की स्थिति रही वर्ष 2012 में रोजगार संख्या सबसे अधिक रही अत: कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री रोजगार सृजन योजना अंतर्गत हितग्राहियों को रोजगार उपलब्ध हुआ व उनके आर्थिक विकास में बढ़ोतरी हुई इसी प्रकार कहा जा सकता है कि राजनांदगांव जिले में खादी ग्रामोद्योग के परिवार मूलक योजनाओं का रोजगार दिलाने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

समस्या – खादी ग्रामोद्योग बोर्ड छ.ग. द्वारा राजनांदगांव जिले में खादी ग्रामोद्योग विभाग की स्थापना जिला उद्योग केन्द्र राजनांदगांव में किया गया है, अपने निरंतर प्रयास की ओर अग्रसर यह उद्योग अपनी उतनी प्रगति नहीं कर पाया है जितनी अपेक्षाए थी इस क्षेत्र की प्रमुख समस्या निम्न है :

1. क्षेत्र में व्यवसाय के लिए कच्चा माल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध न होना तथा अच्छी किस्म के कच्चे माल का न मिलना।
2. पूंजी की लागत अधिक होना।
3. इंजीनियर उद्योग के लिए लौह धातु एवं अलौह धातु संबधी कच्चे माल की अनुपलब्धता का होना।
4. वित्तिय साधनो का अभाव भी इन व्यवसायो के विकास में बाधा बना रहना।
5. कुशल प्रबंधन का अभाव शक्ति की अपर्याप्तता संरचनात्मक सुविधा की कमी सूचना एवं परामर्श का आभाव।
6. परम्परागत व्यवसाय में आधुनिकरण का अभाव।
7. उचित प्रशिक्षण न मिलने से कारिगरो द्वारा उत्पादन क्षमता एवं किस्म में सुधार न होना।
8. उत्पादित वस्तुओं के लिए बाजार की समस्या का होना।
9. ग्रामीण अशिक्षित व्यक्ति योजना के क्रियान्वयन की अपेक्षा मजदूरी करना या साहूकारो से ऋण लेना बेहतर समझते है।
10. ग्रामीणों में व्यवसायिक अवरोध की जानकारी व्यवसायिक कार्य के प्रति रूचि और व्यवसाय संचालक करने में आवश्यक ज्ञान का अभाव होना।

सुझाव :

1. खादी ग्रामोद्योग विभाग द्वारा हितग्रहियों को दिए जाने वाले ऋण की राशि में वृद्धि करना चाहिए ताकि इच्छानुसार उद्योग स्थापित करने में रूचि बढ़ाई जा सके।
2. कच्चा माल की उपलब्ध सुनिश्चित होने से व्यवसाय प्रगति व विकास की ओर अग्रसर होगा।
3. कुशल प्रबंधन एवं प्रशिक्षण पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।
4. हितग्राहियों को योजनाओ की जानकारी उपलब्ध हो सके इस हेतु व्यपाक प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए।
5. उत्पादक वस्तु के लिए बाजार की सुनिश्चिता।
6. परम्परागत विधियो के स्थान पर तर्क तकनीकि विधियो का उपयोग हेतु हितग्राहियो को जागरूकता लाना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत में ग्रामीण विकास- रामजी यादव
2. इकोनॉमिक सर्वे रिपोर्ट
3. भारत का आर्थिक विकास- रामनारायण दुबे
4. कुरूक्षेत्र समाचार पत्र 2014
5. खादी ग्रामोद्योग विभाग जिला पंचायत भवन राजनांदगांव छ.ग.
6. छ.ग. खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड शंकर नगर रायपुर
7. वार्षिक प्रतिवेदन खादी ग्रामोद्योग बोर्ड
8. योजना पत्रिका
9. जिला सांख्यिकी पुस्तिका जिला राजनांदगांव
10. ग्रामोद्योग विकास वार्षिक प्रशासकीय प्रतिवेदन 2015-16
11. छ.ग. में खादी ग्रामोद्योग का विकास एवं संभावनाएं एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, शोध प्रबंध

वर्ष	योजना का नाम		राशि लाख रूपये में				योग	
	प्रधानमंत्री योजना		परिवार मूलक वितरण योजना		कारीगर वितरण योजना		वितरण	योजना
2011	113.76	130	12.96	86	0.791	11	12.51	227
2012	223.23	195	31.35	89	2.262	23	265.84	307
2013	-	-	72.5	407	1.57	16	74	423
2014	207.8	195	70.56	267	1.533	15	279.89	477
2015	172.28	170	81.31	481	1.964	20	255.56	671
2016	147.66	155	104.1	572	1.48	15	253.2	742
2017	162.18	195	94.82	871	2.015	20	259.05	886

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र राजनांदगांव/खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड जिला पंचायत राजनांदगांव

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

उज्जैन तहसील की ग्रामीण बस्तियों में नियोजन एवं प्रबन्धन

रविराज सिंह गोरास्या*

शोध सारांश – जब किसी प्रदेश के आर्थिक संसाधनों का प्रयोग किन्ही पूर्व निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विवेकपूर्ण तथा तर्कसंगत ढंग से किया जाता है और इसके लिए नीति का निर्धारण स्वयं सरकार करती है तो उसे आर्थिक नियोजन कहते हैं। आर्थिक नियोजन के लिए सरकारी हस्ताक्षेप अनिवार्य होता है, क्योंकि वहीं नीति निर्धारित करती है और विकास की योजनाएं एवं कार्यक्रम बनाती है। भारतीय योजना आयोग के अनुसार नियोजन समस्याओं के तार्किक समाधान और साधनों एवं साध्यों को समन्वित करने का प्रयास है। इस प्रकार स्पष्ट है कि एक निर्धारित उद्देश्य और उसी के अनुरूप निर्धारित साधन मुख्यत: प्रत्येक योजना का आधार होता है। ऐसी समस्त अर्थव्यवस्थाओं में नियोजन उद्देश्यपरक होता है। जो नियोजन विकास प्रक्रिया को अपनाती है। नियोजन विकास प्रक्रिया आर्थिक प्रगति के साथ ही सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि उद्देश्यों के लिए भी स्वीकार की जाती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अप्रैल 1951 में भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत नियोजित विकास हो रहा है, परन्तु वर्ष 2014 के पश्चात योजना आयोग को समाप्त कर उसके स्थान पर नीति आयोग की स्थापना की गई।

प्रस्तावना – भारतीय ग्रामों की आर्थिक-सामाजिक दशाएं नगरों से भिन्न है। अत: ग्रामीण नियोजन एवं नगर नियोजन में उल्लेखनीय अन्तर पाया जाता है। भारत एक लोकतांत्रिक देश होने के कारण यहां नियोजन के कुछ सामान्य उद्देश्य होते हैं, जिनमें रोजगार प्रदान करना, आर्थिक विषमता को कम करना क्षेत्र का सन्तुलित विकास, अल्प प्रयुक्त संसाधनों का प्रयोग करना, आत्मनिर्भर बनाना, आर्थिक स्थिरता लाना, अधिकतम सामाजिक कल्याण की प्राप्ति आदि प्रमुख हैं।

अर्थ एवं परिभाषा – नियोजन वांछित परिवर्तन लाने का एक तरीका है, नियोजन भविष्य में देखने की विधि अथवा कला है, इसमें भविष्य की आवश्यकताओं का पूर्वानुमान लगाया जाता है, ताकि लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले प्रयासों को उनके अनुरूप ढ़ाला जा सके। नियोजन परिवर्तन का ऐसा स्वरूप है, जिसमें तार्किक ढंग से लक्ष्य और साधनों के संयोजन से वांछित परिवर्तन लाया जाता है। यह एक चेतन प्रयास है, जो समाज की समस्याओं को पहचान कर प्राथमिकता के आधार पर चरणबद्ध तरीके से लागू किया जाता है। इस प्रक्रिया से समस्याओं के हल खोजने के लिए लक्ष्य निर्धारण सांस्कृतिक मूल्यों के अनुरूप किया जाता है। जॉन ई बलियट के अनुसार 'नियोजन क्रिया स्वयं में एक सोउद्देश्य क्रिया है, किन्हीं पूर्व निश्चित उद्देश्यों के अभाव में नियोजन की कल्पना करना कठिन है। नियोजन वह साधन है, जिसे किसी निश्चित लक्ष्य के सन्दर्भ में किया जाता है।' हार्ट के अनुसार 'नियोजन कार्यों की श्रृंखला का अग्रिम निर्धारण है, जिसके द्वारा निश्चित परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।'

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध में द्वितीयक स्त्रोतों से प्राप्त तथ्यों को शामिल किया गया है।

नियोजन एवं विकास के प्रमुख उद्देश्य **(ESCAP के अनुसार) :**

1. सम्पूर्ण ग्रामीण श्रम को आर्थिक क्रियाकलाप की मुख्य धारा से जोड़ना।
2. ग्रामीण लोगों की रचनात्मक ऊर्जा को रचनात्मक रूप देना।
3. ग्रामीण जनसंख्या का नगरों की ओर पलायन को रोकना।
4. विकास प्रक्रिया में महिलाओं व युवकों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
5. विकास एवं पर्यावरण के बीच समन्वयन द्वारा जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना।
6. मानव शक्ति का सम्पूर्ण विकास करना।

इस प्रकार समग्र रूप में ग्रामीण विकास में निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति को सम्मिलित किया जाता है :

अ) प्रबन्ध का प्राथमिक कार्य – योजना बनाना, प्रबन्धन का पहला कार्य यह है, अन्य कार्यों में योजना का पालन करना है। यदि योजना का निर्माण उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया गया है तो क्षेत्र विशेष के विकास में उसका महत्वपूर्ण योगदान होगा। इसलिए योजना निर्माण करते समय क्षेत्र की आवश्यकताओं को ध्यान देना अति आवश्यक है।

ब) पर्यावरण के अनुकूल – नियोजन एक सतत् प्रक्रिया है। नियोजन निर्धारण के समय नियोजन समिति को पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए नीतियां बनानी चाहिए, जिससे ग्रामीण पर्यावरण में लागू करने में आसानी हो।

स) भविष्योन्मुखी – नीतियां बनाते समय भविष्य के परिवर्तनों को ध्यान में रखा जाना चाहिए, जिससे नीति लम्बे समय तक कारगर तरीके से काम करती रहे। भविष्य की आवश्यकताओं के पूर्वानुमान के लिए वैज्ञानिक तरीके अपनाने चाहिए।

द) लक्ष्योंन्मुखी – ग्रामीण बस्तियों के नियोजन के लिए इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं के अनुसार नीति नियोजन किया जाए। जिससे लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

ध) बौद्धिक क्षमता – नियोजन एवं प्रबन्धन बनाते समय लोगों की बौद्धिक क्षमता को ध्यान में रखा जाना चाहिए। बौद्धिक क्षमता के अनुसार नीतियां बनाने से लागू करने में आसानी होगी।

सुझाव – नियोजन नियंत्रण की निकटता से सम्बन्धित है। नियोजन भविष्य की क्रियाओं को निर्दिष्ट करता है और उन कार्यों को नियंत्रित एवं सुनिश्चित करता है। योजनाओं को बनाते समय लोगों की शिक्षा को ध्यान में रखना चाहिए।

* शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

निष्कर्ष – संसाधन सीमित हैं, नियोजन संसाधनों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। किसी भी क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों पर किन–किन तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है, इसके आधार पर ही नियोजन की रणनीति बनानी चाहिए। उज्जैन तहसील में नियोजन एवं प्रबंधन के माध्यम से स्थानीय ग्रामीण लोगों को अधिक आत्मनिर्भर एवं स्वरोजगार

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. मौर्य, एस.डी., (2013), अधिवास भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 114–115।
2. राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी समाधान (2008)।
3. विभिन्न वेबसाइट।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

मेवाड़ राज्य का भोगोलिक-ऐतिहासिक परिचय

डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत*

प्रस्तावना – भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी-पश्चिमी भाग में स्थित राजस्थान का दक्षिणी-पश्चिमी भू-भाग मेवाड़ है।[1] मेवाड़ राज्य समय के साथ-साथ कई विभिन्न नामों से अभिहित किया जाता रहा है। द्वितीय शताब्दी ई. पू. में यह 'शिबि' जनपद (मज्झमिका या मध्यमिका) के नाम से प्रसिद्ध था तो बाद में 'प्राग्वाट' नामकरण से।[2] संस्कृत शिलालेखों एवं पुस्तकों में इसे 'मेदपाट' नाम से भी सम्बोधित किया गया है, जिसका अर्थ मेव या मेरों का देश होता है। मेवाड़ राज्य की पूर्व-मध्यकाल व मध्यकाल में नागदा, आहाड़ (आघाटपुर)[3] और चित्रकूट या चित्तौड़गढ[4] भी राजधानी के रूप में रही। तत्पश्चात् उत्तर मध्यकाल एवं आधुनिक काल में उदयपुर राजधानी रहने के कारण यह उदयपुर राज्य कहलाया।[5] यह 'मेदपाट' मेवाड़ राज्य राजस्थान में विलीनीकरण से पूर्व राजस्थान के दक्षिण में 23°49' से 25°28' उत्तर अक्षांश तथा 73°1' से 75°49' पूर्व देशान्तर के मध्य में स्थित है। भारतीय संघ में विलिनीकरण से पूर्व इसका क्षेत्रफल 12691 वर्गमील (2043.626 वर्ग कि.मी. या 22032.92 वर्ग किमी) था।[6]

राजनीतिक राज्य के रूप में मेवाड़ का विकास छठी शताब्दी ई. के उत्तरार्द्ध में गुहिल या गुहिलोत वंश की स्थापना से होता है जिसका संस्थापक गुहिल था।[7] गुहिल अपने को सूर्यवंशी मानते हैं और अपनी वंशावली अयोध्यापति रामचंद्र के ज्येष्ठ पुत्र कुश के वंश से जोड़ते हैं।[8] अयोध्या में कुश की परम्परा का अंतिम शासक सुमित्र था।[9] सुमित्र की कुछ पीढ़ियों पश्चात् कनकसेन ने काठियावाड़ में वल्लभी साम्राज्य स्थापित किया जिस पर उसके वंशजों ने 524 ई. तक शासन किया।[10] इसके बाद 568 ई. में मेवाड़ में इसी वंश का उक्त गुहादित्य या गुहिल नाम का राजा हुआ जिसके नाम से उसका वंश 'गुहिल-वंश' अथवा 'गहलोत/गुहिलोत वंश' कहलाया।[11] इस वंश का अन्य महत्वपूर्ण शासक 'काल-भोज' या 'बापा' था जिसने मोरी वंश (मौर्य) के मानसिंह से 734 ई. में चित्तौड़ का दुर्ग छीन लिया और रावल की उपाधि धारण की।[12]

मेवाड़ राज्य की सीमाएँ तथा आकार समय-समय पर बदलते रहे हैं और अपने उत्कर्ष काल में महाराणा कुम्भा (1433-1468 ई.) ने राजपूताने के अधिकांश (मारवाड़, नागौर, सिरोही) का भाग सहित गुजरात, मांडू (मालवा) और दिल्ली सल्तनत के (सैय्यद एवं लोदी शासक) राज्यों के कुछ इलाके छीनकर मेवाड़ को महाराज्य बना दिया।[13] महाराणा सांगा (1507-1527 ई.) के काल में इस राज्य की सीमाएँ पूर्व में भिलसा, कालपी, गागरौन, चन्देरी एवं चम्बल पार से लेकर (मालवा) दक्षिण में रेवाकांठा एवं माहीकांठा (गुजरात), पश्चिम में अरावली पर्वतमाला के पार गोड़वाड़, सिरोही क्षेत्र व पालनपुर, पश्चिमोत्तर में मण्डोर (मारवाड़), उत्तर में बयाना (भरतपुर), मेवात तथा पूर्वोतर में रणथम्भौर और बयाना, आगरा के निकट पीलाखाल या पिल्याखाल (पीलियाखाल) तक फैली थी। इस प्रकार महाराणा सांगा के काल में दिल्ली सल्तनत, गुजरात और मालवा के मुस्लिम राज्यों के भागों पर भी मेवाड़ ने आक्रमणकारी नीति अपनाकर अधिकार कर लिया था।[14] डूँगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, कोटा, बूंदी, अजमेर और ब्यावर के क्षेत्र भी महाराणा सांगा के अधीन थे।

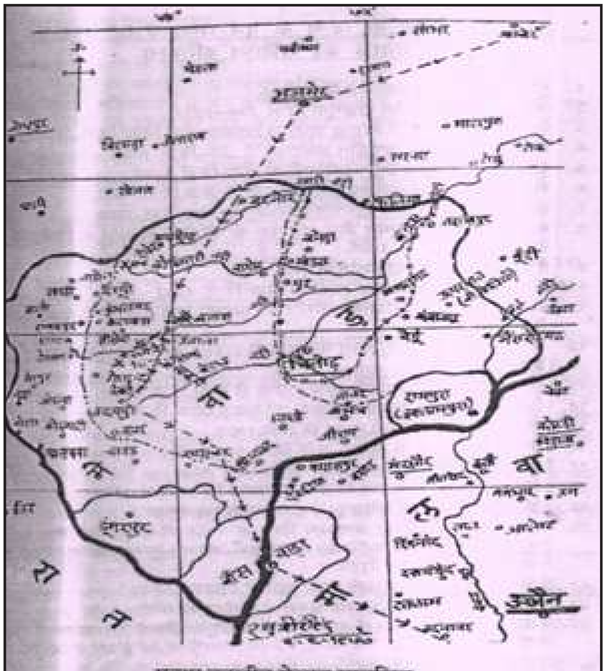

प्रताप कालीन मेवाड़ मानचित्र

महाराणा प्रताप व महाराणा अमरसिंह के युग में ऐसा भी समय आया कि मेवाड़ के अधीन चावण्ड के आस-पास का छप्पन-भोमट का क्षेत्र ही रह गया था[15] परन्तु 1615 ई. में सम्पन्न हुई मेवाड़-मुगल संधि की शर्तो के अनुरूप जहाँगीर ने मेवाड़ राज्य के सभी पुराने प्रदेश (1568 ई. के पूर्व मेवाड़ के अधीन थे) वापस लौटा दिये।[16]

मेवाड़ महाराणा राजसिंह प्रथम (1652-1680 ई.) के सन्तुलित शासन काल में सन 1680 में मेवाड़ राज्य की सीमाएँ विभिन्न दिशाओं में निम्नलिखित राज्यों की सीमाओं से मिलती थी-

उत्तर- अजमेर सुबा तथा शाहपुरा राज्य
दक्षिण- डूंगरपुर, बांसवाड़ा तथा देवलिया राज्य
पूर्व-कोटा एवं बूंदी का राज्य
पश्चिम-जोधपुर एवं सिरोही राज्य
नैऋत्य-ईडर राज्य[17]

* अतिथि व्याख्याता, इतिहास सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय (1710-1734 ई.) के समय मेवाड़ की सीमा पुन: बढ़ती रही। इस समय मेवाड़ राज्य उत्तर-पूर्व में देवली, उत्तर में नसीराबाद के पास तक, पश्चिम-उत्तर तथा पश्चिम में जोधपुर व सिरोही, पश्चिम-दक्षिण में ईडर राज्य के कुछ भाग, दक्षिण में डूँगरपुर, बांसवाड़ा, और प्रतापगढ़ राज्य, दक्षिण-पूर्व और दक्षिण में भानपुरा, बूंदी, कोटा तथा उत्तर-पूर्व में जयपुर राज्य की सीमा तक फैला हुआ था।[18] परंतु 18 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से मेवाड़ पर मराठा उपद्रव, चौथ व सहायता के बदले में मेवाड़ के कई गाँव एवं परगने देने पड़े जिससे मेवाड़-क्षेत्र में कमी आना स्वाभाविक ही था जैसे-महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय ने 1729 ई. में मेवाड़ के पूर्वी-पश्चिमी भाग में स्थित रामपुरा(मालवा) का परगना मेवाड़ महाराणा अमरसिंह द्वितीय के दौहित्र व अपने भाणेज और जयपुर महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय के द्वितीय पुत्र माधोसिंह (जयपुर) को जागीर के रूप में दिया था किन्तु माधोसिंह ने 8,56,997 रुपये वार्षिक आय का यह परगना मल्हार राव होल्कर को सहायता के बदले में दे दिया।[19] महाराणा राजसिंह द्वितीय (1754-1761 ई) ने चम्बल के समीप स्थित कणजेड़ा, जारडा, हिंगलाजगढ़, जामुनिया व वुडसु (बुडसा) के 60 लाख रुपये वार्षिक आय वाले परगने होल्कर के गिरवी रखे परन्तु ऋण की राशि चुकता न होने से 1763 ई. में होल्कर ने महाराणा अरिसिंह के काल में इन परगनों पर स्थायी रूप से अधिकार कर लिया।[20]

महाराणा अरिसिंह (1761-1773 ई.) के काल में कोटा के मुसाहिब झाला जालिमसिंह को चीताखेड़ी की जागीर व जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को राज्य के उत्तर-पश्चिम में स्थित 80 लाख रुपये वार्षिक उत्पादन का गोडवाड़ परगना प्रदान किया जो कभी भी मेवाड़ में पुन: सम्मिलित नहीं हो सका।[21] महाराणा हमीरसिंह (1773-1778 ई.) के काल में माधवराव सिंधिया (महादजी सिंधिया) ने 1774 ई. में 13,725 रुपये वार्षिक उत्पादन के 48 गाँव बेगूँ जागीर से, 31,451 रुपये वार्षिक उत्पादन के 36 गाँव सिंगोली परगने से तथा 3651 रुपये वार्षिक उत्पादन के 18 गाँव भिंचोर परगने से ले लिये थे। इसी भांति अहिल्या बाई होल्कर ने भी इसी काल में 10,000 रुपये वार्षिक आय वाले 29 गाँवों के मोरवण व नन्दवास नामक दो परगनों के साथ 1774 ई. में निम्बाहेड़ा परगने को चौथ की बकाया राशि के बदले में स्थायी रूप से ले लिया था।[22] महाराणा भीमसिंह ने (1778-1828 ई.) राज्य के दक्षिण-पूर्व स्थित जावद व जीरण नामक क्षेत्र 1788 ई. में सिंधिया को फौज खर्च के बदले में दिये थे।[23]

सन् 1774 ई. में अहिल्या बाई होल्कर द्वारा अधिकृत[24] एवं 1809 में अमीर खां पिण्डारी को अपने मालिक जसवंतराव होल्कर से मिला निम्बाहेड़ा परगना अंग्रेजी शासनकाल में 1817 ई. की संधि के अन्तर्गत विधिवत् रूप से टोंक राज्य में मिला दिया गया।[25] टोंक नवाब अमीर खां के टोंक राज्य के अन्तर्गत स्थित निम्बाहेड़ा परगना तीन तरफ से मेवाड़ से और एक तरफ ग्वालियर राज्य से मिला हुआ था। सिन्धिया का भिंचोर का परगना चारों ओर मेवाड़ से घिरा हुआ था, ऐसे ही होल्कर का नंदवास और सिन्धिया के जाट (जाठ) सिंगोली और खेड़ी परगने के इलाके अधिकतर मेवाड़ के भीतर आ गये थे। ये सब इलाके पहले मेवाड़ के ही थे परन्तु पीछे समय के हेरफेर में मेवाड़ से छूट गये।[26]

मेवाड़ राज्य के कुल रकबे में से 1/4 जमीन पीवल थी। इस प्रदेश का उत्तरी व पूर्वी भाग खुला हुआ मैदान और उपजाऊ रहा है परन्तु दक्षिण-पश्चिम बहुत सी पहाड़ियों और घने जंगलो से आच्छादित है। दक्षिण में डूंगरपुर की हद से लेकर पश्चिम में सिरोही की सीमा तक सारा प्रदेश पहाड़ी होने के कारण मगरा कहलाता है। मेवाड़ का राज छोटे-मोटे 15 जिलों में बंटा हुआ था, जहाँ एक-एक हाकिम रहता और उन जिलों में मातहत छोटे-छोटे परगनों में नायब हाकिम व थानेदार रहते थे। इन जिलों में से दस में तो पैमाइश होकर मालगुजारी का पक्का बंदोबस्त हो गया अर्थात् वहाँ से जमीन का राजस्व (हासिल) रुपयों में लिया जाता था और शेष जिलों में पुराने ढंग का प्रबन्ध होने के कारण वहाँ लाटा-कूंता होता था अर्थात् पैदावार का हिस्सा लिया जाता था। गिरिवा (गिरिवाह/गिर्वा) के दो विभाग हैं, अंदरूनी, देबारी के पहाड़ी सिलसिले के भीतर का भाग अंदरूनी और बाहरी का बेरूनी गिरिवा कहलाता है। अंदरूनी गिरिवा में कच्ची तहसील है।[27] मेवाड़ राज्य-प्रबन्ध के लिये मेवाड़ के सोलह भाग किये गये थे जो जिले या परगने कहलाते थे। इन जिलों या परगनों का तहसील सहित वर्णन निम्नानुसार है[28] -

1. गिरवा-इस जिले का मुख्य स्थान उदयपुर है और इसके दो भाग, भीतरी गिरवा (उदयपुर के आस-पास का अरावली पर्वतमाला से घिरा हुआ भाग) और बाहरी गिरवा (उक्त अरावली पर्वत श्रेणी से बाहर का समतल प्रदेश) है। इसके अन्तर्गत गिरवा (भीतरी गिरवा) ऊंटाला, लसाड़िया और मावली की तहसीलें हैं। .
2. छोटीसादड़ी-209 गाँवों सहित मुख्य कस्बे छोटीसादड़ी वाले इस जिले में दो तहसीलें थी, करजू और छोटी सादड़ी।
3. कपासण-इसमें जासमा, आकोला एवं कपासन तहसीलें थी।
4. चितौड़-इस जिले में नंगावली, कणेरा एवं चित्तौड़गढ़ तहसीलें थी।
5. राशमी-इस जिले में राशमी एवं गिलूंड की तहसीलें थी।
6. भीलवाड़ा-इसके अन्तर्गत भीलवाड़ा एवं मांडल की तहसीलें थी।
7. सहाड़ा-इस जिले में रायपुर, रेलमगरा और सहाड़ा की तहसीलें थी।
8. मांडलगढ-इसमें कोटड़ी एवं मांडलगढ़ की तहसीलें थी।
9. जहाजपुर-इसमें जहाजपुर और रूपान की तहसीलें थी।
10. राजनगर-मेवाड़ के पश्चिमी भाग में स्थित इस परगने में 123 गाँव थे।
11. सायरा-मेवाड़ के पश्चिमी क्षेत्र में अरावली पर्वत श्रेणी में स्थित इस परगने में 56 गाँव रहे।
12. कुंभलगढ़-इस पगरने में 165 गाँव थे।
13. मगरा-इस जिले में 4 तहसीलें-सराड़ा, खेरवाड़ा, कल्याणपुर एवं जावर थी।
14. बागोर-इस परगने में 64 गाँव थे।
15. आसींद-यह परगना आसींद के कृष्णावत चूण्डावत जागीरदार से खालसा कर लिया गया।
16. कुआखेड़ा-जहाजपुर जिले के ही इस एक भाग को फिर अलग परगना बनाया गया।

प्रत्येक जिले या परगने में हाकिम और प्रत्येक तहसील पर उसकी मातहती में नायब हाकिम नियुक्त रहते थे। वर्तमान समय में भीलवाड़ा, उदयपुर, राजसमंद एवं चित्तौड़गढ़ जिलों के भू-भाग मेवाड़ के रूप में सुज्ञात है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 99-100 महाराणा मेवाड़ हिस्टोरिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट ,उदयपुर 2016 ; ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 1-2 राजस्थानी ग्रंथागार ,जोधपुर 2015 ई.; अहमद शाहिद, मध्ययुगीन

राजपूताने की शासन प्रणाली, पृ.38 अपोलो प्रकाशन, जयपुर, 2006

2. ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ.1-2, पाद टिप्पणी, क्र.स. 1; भटनागर डॉ. राजेन्द्र प्रकाश, मेवाड़ का राज्य प्रबंध एवं महाराणा राजसिंहकालीन दो बहियाँ, पृ. 1-2 सूर्य प्रकाशन संस्थान, उदयपुर, 1987 ई. ; सं. सिंह रोहित कुमार, संदर्भिका राजस्थान सुजस, पृ. 805 सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, राजस्थान सरकार ; जुगनू डॉ. श्रीकृष्ण, मेवाड़ का प्रारम्भिक इतिहास, पृ. 43, 60-61, इसमें प्राग्वाट का विवरण प्राप्त नहीं होता है। आर्यावर्त प्रकाशन, दिल्ली
3. ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ.1-2, पाद टिप्पणी, क्र.स1 एवं पृ. 31-34 मेदपाट का विवरण मिलता है; ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, ओझा निबन्ध संग्रह, द्वितीय भाग, पृ. 187; व्यास कैलाशनाथ, गहलोत देवेन्द्रसिंह, राजस्थान की जातियों का सामाजिक एवं धार्मिक जीवन, पृ. 78; दलपति विजय कृत खुम्माण रासो, लेखक श्रोत्रिय कृष्णचन्द्र, सं. जावलिया ब्रजमोहन, पृ. संपादकीय XIV–XVIII नागदा (एकलिंगजी) मेवाड़ की पूर्व मध्यकाल में राजधानी रही महाराणा प्रताप स्मारक समिति, उदयपुर, 2001 ई.; टॉडकृत राजपूत जातियों का इतिहास, अनु. सं. पालीवाल देवीलाल, पृ. 150; जुगनू डॉ. श्रीकृष्ण, मेवाड़ का प्रारम्भिक इतिहास, पृ. 70-71, 76, 78- 79 आर्यावर्त प्रकाशन ,दिल्ली ; गुर्जर के. आर., गुर्जर क्षत्रियों की उत्पत्ति एवं गुर्जर-प्रतिहार साम्राज्य, पृ. 306, 313 आहाड़ या आघाटपुर (वर्तमान आयड़) मेवाड़ की राजधानी रही।
4. शास्त्री शोभालाल, वीरभूमि अथवा श्री चित्रकूट-गुण-मालिका, पृ. 10-11 ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ.1-2, पाद टिप्पणी, क्र.स. 1; पिन्हे, ए.एफ., हिस्ट्री ऑफ मेवाड़, पृ. परिचियात्मक अध्याय, 1-25 ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ.45-54;The Journal of the numismatic society of India, Vol. XXV, 1963, Part-I, Chief editor H.V. Trivedi, Editors A.K. Narain, P.L. Gupta, p.no. 81-86, JNSI-XXV, plate-VI-VII, मेवाड़ स्टेट के सिक्कों पर चित्रकूट व चित्तौड़ का अंकन प्राप्त होता है।
5. टॉडकृत राजपूत जातियों का इतिहास, अनु. सं. पालीवाल देवीलाल, पृ. 16-17, 150, पाद टिप्पणी, क्र.सं. 12; गहलोत जगदीश सिंह, राजस्थान के राजवंशों का इतिहास, पृ. 24,26; ओझा, गौरीशंकर हीराचंद, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ.1;The Journal of the numismatic society of India, Vol. XXV, 1963, Part-I, Chief editor H.V. rivedi, Editors A.K. Narain, P.L. Gupta, p.no. 81-86, JNSI-XXV, plate-VI-VII, मेवाड़ स्टेट के सिक्कों पर उदयपुर का अंकन प्राप्त होता है। ; सं. गुप्ता, के.एस., मेवाड़ के कलाविद्, पृ. 42; राठौड़ भूपेन्द्रसिंह, मध्यकालीन राजस्थान के प्रमुख पर्यटन स्थल, पृ. 31 राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, 2013 ई.
6. Compiled by Erskine, Major K.D. Imperial Gazetteer of India,Provincial Series Rajputana, Pg. no. 107; ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 2; मेनारिया, डॉ. शिवनारायण, उत्तर मुगलकालीन मेवाड़, पृ. 9 संघी प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण ,1986
7. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 248-250; ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 65-66
8. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 230-232; ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 65; भण्डारी सुख सम्पत्ति राय, भारत के देशी राज्य, पृ. 5
9. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 232; ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 65, 90-91 एवं पाद टिप्पणीयाँ
10. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 239
11. ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 65-66, 96-98
12. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 250-254; ओझा गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 100-110
13. भट्ट राजेन्द्र शंकर, महाराणा कुंभा, पृ. 131प्रथम संस्करण, 2008, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
14. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-2, पृ. 239-247; ओझा उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 385-386; राणावत, डॉ. ईश्वरसिंह, राजस्थान के जल संसाधन, पृ. 2; के.एस. गुप्ता, गोपाल व्यास, जे.के. ओझा, मध्योत्तर आधुनिक राजस्थान का इतिहास, पृ0 26, 29, 48, इसमें मेवाड़ की आक्रमणकारी नीति व राज्य विस्तार का उल्लेख है।
15. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-2, पृ.156-159, 217-218, 223; ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 448-451, 489-491; राणावत, डॉ. ईश्वरसिंह, राजस्थान के जल संसाधन, पृ. 2
16. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-2, पृ.239-249 ;ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 497-507; राणावत डॉ. ईश्वरसिंह, राजस्थान के जल संसाधन, पृ. 2-3 चिराग प्रकाशन, उदयपुर, 2004
17. मेनारिया, डॉ. शिवनारायण, उत्तर-मुगलकालीन मेवाड़, पृ. 9-10; राठौड़, डॉ.भूपेन्द्र सिंह, मध्यकालीन राजस्थान के प्रमुख पर्यटन स्थल (मेवाड़ के संदर्भ में), पृ. 15-16
18. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-2, पृ. ;ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 30-40; गुप्ता, डॉ. के.एस., मेवाड़ एण्ड दी मराठा रिलेशन्स, पृ. 20-26,29, इसमें 18 वीं शताब्दी में मेवाड़ पर मराठों के द्वारा किये गये आक्रमणों का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है (पृ. 20-49); व्यास, डॉ. गोपाल, मेवाड़ का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन, पृ. 2 राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 1989 ई.
19. गुप्ता, डॉ. के.एस., मेवाड़ एण्ड दी मराठा रिलेशन्स, पृ. 63-65 इसमें पृ. 51 व 52 पर विवरण प्राप्त होता है कि Hence in 1729, Maharana Sangram Singh-II, granted the Paragana of Rampura to Madho Singh giving him the ranked and status of a Sardar of the first sixteen nobles.; ओझा, डॉ. जे.के. मेवाड़ का इतिहास, पृ. 7-10; व्यास, डॉ. गोपाल, मेवाड़ का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन, पृ. 2 पाद टिप्पणी, क्र.स. 3

20. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-2, पृ. 645, 648; गुप्ता, डॉ. के.एस., मेवाड़ एण्ड दी मराठा रिलेशन्स, पृ. 73-74
21. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-2, पृ. 660 मेवाड़ का गोडवाड़ का परगना जोधपुर महाराजा विजयसिंह (1752-1797 ई.) के अधिकार में चला गया ; ओझा, डॉ. जे.के. मेवाड़ का इतिहास, पृ. 155-156, 192-194एस. चांद एण्ड कं. नई दिल्ली, 1980 ई.
22. गुप्ता, डॉ. के.एस., मेवाड़ एण्ड दी मराठा रिलेशन्स, पृ. 110-112, भिंचोर वर्तमान में गुलाब जामुन के लिए प्रसिद्ध है।
23. व्यास, डॉ. गोपाल, मेवाड़ का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन, पृ. 3
24. होल्कर मधुसूदन राव, होल्करों का इतिहास पृ.सं.294 होल्कर एकीकृत संघ, इंदौर, 2009
25. खान, अर्ब्दुल मोईद, रियासत टोंक के हुक्मराने जीशान, भाग-द्वितीय, पृ. 25 मौलाना अबुल कलाम आजाद अरबी फारसी शोध संस्थान, टोंक, 2011 ;अहमद एजाज, निम्बाहेड़ा का इतिहास, कल आज और कल, पृ. 21 बज्मे सागर, निम्बाहेड़ा, 2009
26. श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 100-102, पृ. 100 की पाट टिप्पणी, क्र.स. 1; ओझा गौरीशंकर हीराचंद, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 2, पृ. 17 की पाद टिप्पणी, क्र.स. 1
27. श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 100-102, पृ. 100 की पाट टिप्पणी, क्र.स. 1; ओझा गौरीशंकर हीराचंद, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 2, पृ. 17 की पाद टिप्पणी, क्र.स. 1; दुग्गड़ रामनारायण, मेवाड़ राज्य का इतिहास, पृ.2-3
28. श्यामलदास, वीर विनोद, भाग-1, पृ. 149-168; ओझा गौरीशंकर हीराचंद, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, पृ. 17-19

****

वर्ष 2010-11 से 2014-15 तक उज्जैन जिले में महिला एवं बाल विकास द्वारा संचालित लाडली लक्ष्मी योजना द्वारा महिला आर्थिक विकास में योगदान : एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. हेमलता ललावत*

प्रस्तावना - भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार विकास करना है तो, महिलाओं का उत्थान करना होगा क्योंकि महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वत: ही हो जाएगा। प्राचीन काल से ही समाज पुरुष प्रधान रहा है। प्रत्येक युग में नारी ने महत्वपूर्ण भूमिका अपनाई है। अपने विशिष्ट गुणों के कारण कठोर सामाजिक प्रतिबंधों के चलते विपरीत परिस्थितियों में अपना रास्ता खोज कर आगे बढ़ती जा रही है। लगभग आधी आबादी स्त्रियों की है किंतु फिर भी स्त्रियों को उपेक्षित, दयनीय, पिछड़ा और दोयम दर्जे की स्थिति प्राप्त है। सब को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार एवं अन्य राज्य सरकार द्वारा कई कानून और योजनाएं बनाई गई है। महिला एवं बाल विकास विभाग की स्थापना 1985 में मानव संसाधन मंत्रालय के एक भाग के रूप में महिलाओं एवं बालकों के विकास एवं कल्याण के लिये हुई। यह विभाग उनकी उन्नति के लिये राष्ट्रीय स्तर पर योजनायें बनाता तथा नीति निर्धारण करता है। इस कल्याणकारी कार्य करने के लिये महिला एवं बाल विकास विभाग कुछ कार्यक्रम लागू करता है, जिसमें आय प्राप्ति के साधनों की जानकारी, रोजगार संबंधित जानकारी, साधनों की जानकारी तथा दूसरे विकास कार्यों के रूप में शिक्षा, स्वास्थ्य, ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जाता है। बालकों के संपूर्ण विकास के अंतर्गत पोषण, आहार, स्वास्थ्य जांच एवं परामर्श सेवाएं, पूर्व स्कूली शिक्षा से कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

महिला एवं बाल विकास के हितग्राही समाज के कमजोर वर्ग, महिलायें और बच्चे हैं, जिनके विकास व कल्याण का कार्य आसान एवं अल्प अवधि में पूरा होने वाला नहीं है। विभाग की कई योजनाओं का विस्तार हुआ है, वही लाडली लक्ष्मी योजना, मंगल दिवस योजना, लाडो अभियान जैसी नई योजनायें भी संचालित की जा रही है। गतिशील रहते हुए विभाग ने विकास के लिये प्रत्येक चुनौती को स्वीकार किया है। उपलब्धि के आंकड़े बड़े नहीं है किन्तु समाज में महिलाओं की स्थिति में निरंतर सुधार हुआ है, महिलाओं में अपने अधिकारों व हितों के प्रति जागरूकता आई है, बच्चों के कुपोषण में कमी आई है।

महिला एवं बाल विकास की योजनाएं निम्न है -

1. लाड़ली लक्ष्मी योजना
2. फास्टर केयर योजना
3. दत्ताक ग्रहण योजना
4. लाडो अभियान
5. शौर्य दल योजना
6. मंगल दिवस योजना
7. मुख्यमंत्री महिला सशक्तिकरण योजना

लाड़ली लक्ष्मी योजना - बालिकाओं के जन्म के प्रति सकारात्मक सोच, लिंगानुपात में सुधार, बालिकाओं के शैक्षणिक स्थल तथा स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार तथा उनके अच्छे भविष्य की आधारशिला रखने के उद्देश्य से मध्य प्रदेश लाडली लक्ष्मी योजना 1 अप्रैल 2007 से लागू की गई है योजना के तहत बालिकाओं को रू. 118000/- का बचत पत्र जारी किया जाता है तथा बालिका के कक्षा छठवीं में प्रवेश पर रु. 2000/-, 9वी में रु. 4000/- तथा 11वीं एवं 12वीं में रु. 6000/- दिए जाने का प्रावधान है तथा बालिका को 21 वर्ष के उपरांत एक लाख से अधिक की राशि प्रदान की जाती है। इस योजना के अंतर्गत लाभ की राशि भुगतान के माध्यम से प्रदान की जाती है।

इस राशि का अंतिम भुगतान रुपये एक लाख बालिका की आयु 21 वर्ष होने पर तथा कक्षा 12वीं परीक्षा में सम्मिलित होने पर भुगतान किया जाता है, किंतु शर्त यह होती है कि बालिका का विवाह 18 वर्ष की आयु से पहले नहीं होना चाहिए अगर इससे पहले बालिका का विवाह हो जाता हैं तो शेष राशि प्रदान नहीं की जाती है।

निम्नलिखित तालिका में उज्जैन जिले की लाडली लक्ष्मी योजना के संबंध में जानकारी प्रदान की गई वर्ष 2010-11 से 2014-15 तक 5 वर्षों में महिलाओं को मिलने वाली आर्थिक जानकारी का उल्लेख है -

क्र.	वर्ष	स्वीकृत प्रकरणों की संख्या
1	2010-11	7807
2	2011-12	11282
3	2012-13	10074
4	2013-14	4216
5	2014-15	10064

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वित्तीय वर्ष 2010-11 स्वीकृत प्रकरणों की संख्या 7807 है। इसी प्रकार 2011-12, 2012-13, 2013-14 एवं 2014-15 में क्रमश: 11282, 10074, 4216 तथा 10064 प्रकरणों की संख्या है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि लाडली लक्ष्मी योजनाओं का सर्वाधिक लाभ महिलाओं को 2011-12 में हुआ जिसमें स्वीकृत प्रकरण की संख्या 11282 है।

कारण एवं सुझाव - प्रकरणों की संख्या में यथोचित वृद्धि न हो पाने के

* 7/3 किशनपुरा मैक्सी रोड,उज्जैन (म.प्र.) भारत

कारण निम्नलिखित हैं :

1. **अशिक्षा –** हितग्राही महिलाओं का कम पढ़ा होना अथवा अनपढ़ होना जिसके कारण उन्हें योजनाओं की पूर्ण जानकारी नहीं होती।

2. **कागजी कार्यवाही –** योजना के अंतर्गत कागजी कार्यवाही अत्यधिक होती है।

3. **प्रचार प्रसार –** प्रचार प्रसार का अभाव होने के कारण बहुत सी योजनाओं की जानकारी समय पर नहीं मिलती।

4. **सामाजिक एवं पारिवारिक परिवेश –** गांव में सामाजिक पारिवारिक बंधन और रूढ़िवादी सोच के कारण महिलाएं आगे नहीं बढ़ पाती है।

5. **प्रशिक्षण का अभाव –** आँगनवाड़ी कार्यकर्ता एवं सहायिका को उचित प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन की बहुत आवश्यकता है।

6. **परिवहन की असुविधा –** संचालकों को कार्य करने हेतु गाँव या शहर में संपर्क करना होता है। यातायात के साधनों के अभाव के कारण कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

7. **वेतनमान कम होना –** आँगनवाड़ी कार्यकर्ता और सहायिका के दायित्व अधिक होते हैं उसके अनुसार उनका वेतन मान कम होता है। तथा समय पर वेतन भी नहीं मिलता है।

8. **राजनैतिक हस्तक्षेप –** राजनैतिक हस्तक्षेप के कारण कार्यकर्ताओं, कर्मचारियों और अधिकारियों को परेशानी का सामना करना पड़ता है।

समस्या निराकरण हेतु सुझाव निम्नलिखित हैं :

1. **आंगनवाड़ी भवन निर्माण –** प्रत्येक आंगनबाड़ी केंद्र के पास स्वयं की आंगनवाड़ी भवन हो, यह व्यवस्था होनी चाहिए। जिससे महिलाओं और बच्चों को संपर्क करने में सुविधा हो।

2. **न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता निर्धारित करना –** आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को कम से कम हाई स्कूल पास होना चाहिए पढ़ी-लिखी कार्यकर्ता और अच्छे से कार्य कर सकें।

3. **विज्ञापन की सुविधा –** योजना को और सुचारु रुप से चलाने के लिए टीवी, इंटरनेट के जरिए प्रचार प्रसार हो।

4. **उचित मानदेय वेतन के रूप में देना –** कार्यकर्ताओं को जो मानदेय प्राप्त होता है उनके दायित्व की तुलना में कम है तथा समय पर भुगतान नहीं होने के कारण बेहतर परिणाम की आशा नहीं की जा सकती है। अत: उचित भुगतान एवं समय पर भुगतान प्राप्त होना चाहिये।

5. **शिक्षा के स्तर में सुधार हेतु जागरूकता लाना –** शिक्षा के स्तर को बढ़ाना आवश्यक है जिसमें महिलाओं के साथ साथ पुरुषों को भी जागरूक होना आवश्यक है।

6. **यातायात –** कार्यकर्ता तथा अधिकारियों को परिवहन संबंधित समस्या सेना जूझना पड़े। उचित यातायात की सुविधा हो जिससे गांव और शहरों में आपस में संपर्क बना सकें।

7. **राजनैतिक हस्तक्षेप नहीं होना चाहिये –** राजनीतिक हस्तक्षेप बंद होना चाहिए जिससे कर्मचारी, अधिकारी स्वतंत्रता पूर्वक अपने कर्तव्य का निर्वहन कर सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉक्टर बंशीलाल – महिला एवं बाल कानून
2. जसमीत लॉरेंस – महिला श्रमिक- सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं
3. आशु रानी – महिला विकास कार्यक्रम
4. एम ए अंसारी – महिला और मानव अधिकारी
5. डॉ रितु गुप्ता – महिला सशक्तिकरण एवं मध्य प्रदेश की योजनाएं
6. इंदिरा मिश्र – गरीब महिला, उधार एवं रोजगार
7. प्रशासनिक प्रतिवेदा – 2013-14 पृष्ठ क्रमांक 79.
8. मासिक प्रपत्र – महिला एवं बाल विकास विभाग, उज्जैन
9. आंगनवाड़ी समाचारीका – महिला एवं बाल विकास विभाग, भोपाल मध्य प्रदेश
10. दैनिक भास्कर
11. प्रतियोगिता दर्पण
12. www.wed.nic.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

उज्जैन जिले में भारतीय जीवन बीमा निगम के पेंशन प्लान के व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन - वर्ष (2010-11से 2014-15)

डॉ. राजेन्द्र ललावत*

प्रस्तावना – परिवार का मुखिया अपनी पत्नी एवं संतान की आर्थिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उत्तरदायी रहता है। यदि दुर्भाग्यवश उसकी मृत्यु हो जाए तो इस अचानक मृत्यु पर अपने परिवार के स्वप्न इच्छाएं एवं योजनाएं धराशाई हो जाती है। ऐसे समय में जीवन बीमा अहम भूमिका निभाता है, जो दुखी परिवार के मुखिया के आर्थिक योगदान की कमी को पूरा करता है। भारत में पॉलिसी धारक के हितों की रक्षा करने हेतु एवं बीमा उद्योग का क्रमबद्ध विनियमन, संवर्धन तथा संबंधित व आकस्मिक मामलों का कार्य करने हेतु बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण का संगठन किया गया है। जीवन बीमा एक लिखित करार है जो किसी व्यक्ति (बीमाधारी) एवं बीमा प्रदाता के बीच में किया जाता है। इस करार में बीमा प्रदाता, बीमाधारी की मृत्यु या कोई दुर्घटना होने पर उसे कोई पूर्व स्वीकृत राशि देने का करता है। इस वादे के बदले में बीमाधारी व्यक्ति को एक निर्धारित राशि किसी निर्धारित समयान्तराल पर किसी निर्धारित अवधि तक देते रहने के लिये सहमत होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि जीवन बीमा एक ऐसा अनुबंध है, जिसमें किसी व्यक्ति के जीवन का बीमा किया जाता है।

भारतीय जीवन बीमा निगम भारत की सबसे बड़ी जीवन बीमा कंपनी है और देश की सबसे बड़ी निवेशक कंपनी भी है। यह पूरी तरह से भारत सरकार के स्वामित्व में है, इसकी स्थापना सन 1956 में हुई। इसका मुख्यालय मुंबई में है। भारतीय जीवन बीमा निगम के 8 आंचलिक कार्यालय और 101 संभागीय कार्यालय भारत के विभिन्न भागों में स्थित है। इसके लगभग 2048 कार्यालय देश के कई शहरों में स्थित है और इसके 10 लाख से ज्यादा एजेंट भारत भर में फैले हैं।

भारतीय जीवन बीमा निगम के संचालित प्लान निम्नलिखित हैं

1. पेंशन प्लान
2. चाइल्ड प्लान
3. एंडोरमेंट प्लान
4. सिंगल प्रीमियम प्लान
5. ट्रेडिशनल प्लान

1. पेंशन प्लान – पेंशन प्लान आज की दुनिया की जरूरत बन गई है। यह एक स्थिर और सुखद रिटायरमेंट की पूरी स्वतंत्रता देता है। वरिष्ठ नागरिकों को अपना भविष्य आसानी से सुरक्षित करने के लिए पेंशन प्लान प्रभावी है। इस प्रभावी पेंशन प्लान के साथ उन्हें सेवानिवृत्ति के बाद के जीवन के दौरान भविष्य की जरूरतों के साथ समझौता नहीं करना पड़ता है। पेंशन प्लान लेने से व्यक्ति अपने परिवार के साथ रिटायरमेंट के बाद भी अपने जीवन का आनंद ले सकते हैं। भारतीय जीवन बीमा निगम पेंशन प्लान लेने से पेंशन में निवेश की गई राशि बीमित व्यक्ति को उसकी बदलती और विकसित होती जरूरतों को पूरा करने के लिए वृद्धावस्था में सहायता करती है। अर्थात यह प्लान वृद्ध लोगों के लिए एक महत्वपूर्ण प्लान है, इसके अंतर्गत वृद्धजनों को एक सतत नियमित आय मिलती है।

पेंशन प्लान के प्रकार – भारतीय जीवन बीमा निगम के कई पेंशन प्लान हैं जो निम्नलिखित है –

1. प्रधानमंत्री वय वंदन योजना – वरिष्ठ नागरिकों के लिए यह भारतीय जीवन बीमा निगम पेंशन योजना 10 वर्षों में 8% प्रतिवर्ष देय मासिक (प्रतिवर्ष 8.3% के बराबर) की रिटर्न का आश्वासन देती है। यह योजना मासिक/त्रैमासिक/अर्द्धवार्षिक या पेंशन के वार्षिक भुगतान की अनुमति देती है।

2. न्यू जीवन निधि – यह एक पारंपरिक प्रॉफिट पेंशन योजना है। यह सुरक्षा और बचत सुविधाओं का एक संयोजन है। यह योजना मृत्यु की अवधि और मृत्यु की तिथि के दौरान जीवित रहने की तिथि प्रदान करती है।

3. जीवन शांति – यह योजना एक एकल प्रीमियम पेंशन योजना है, जिसके तहत बीमित व्यक्ति के पास तत्काल या आस्थगित एन्युरी चुनने का विकल्प होता है। इस योजना में तत्काल और आस्थगित वार्षिकी दोनों के लिए पॉलिसी की शुरुआत में गारंटीकृत दरें और एन्यूटी जीवनकाल के लिए देय है। इसे ऑफलाईन के साथ-साथ ऑनलाईन भी खरीदा जा सकता है।

पेंशन प्लान का तुलनात्मक अध्ययन – निम्नलिखित तालिका में उज्जैन जिले की पेंशन योजना व्यवसाय के संबंध में जानकारी प्रदान की गई है, जिसमें वर्ष 2010-11 से अब वर्ष 2014-15 तक जीवन बीमा निगम की जानकारी दी गई है साथ ही 5 वर्षों के कुल व्यवसाय में से पेंशन योजना का प्रीमियम एवं उसका प्रतिशत भी दिया गया है –

तालिका क्रमांक 1.1

क्रं	वर्ष	भारतीय जीवन बीमा निगम		
		कुल प्रीमियम (लाख रू)	प्रीमियम (लाख रू)	प्रतिशत
1	2010-11	5837.06	291.85	5.0
2	2011-12	3493.75	209.63	6.0
3	2012-13	3451.43	241.60	7.0
4	2013-14	3603.57	172.57	5.0
5	2014-15	2794.22	167.65	6.0

स्त्रोत – भारतीय बीमा निगम से प्राप्त जानकारी।

* 7/3 किशनपुरा मैक्सी रोड,उज्जैन (म.प्र.) भारत

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वित्तीय वर्ष 2010 11 में भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा 5837.06 लाख का कुल प्रीमियम प्राप्त किया गया जिसमें से 291.85 लाख रूपये का पेंशन योजना के अंतर्गत कुल प्रीमियम प्राप्त हुआ। जिसका प्रतिशत 5.0 है। इसी तरह वर्ष 2011-12, 2012-13, 2013-14, 2014-15 में क्रमश: 3493.75, 3451.43, 3603.57, 2794.22 लाख रूपये कुल प्रीमियम (व्यवसाय) प्राप्त हुआ जिसमें से 209.63, 241.60, 172.57 व 167.65 लाख रू का पेंशन योजना के अन्तर्गत कुल प्रीमियम प्राप्त हुआ जिसका प्रतिशत क्रमश: 6.0, 7.0, 5.0 व 6.0 है।

इसमें स्पष्ट होता है कि पाँच वर्षो में पेंशन योजना के अर्न्तगत वर्ष 2010-11 से वर्ष 2014-15 के कुल व्यवसाय के प्रतिशत के आधार पर निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि वर्ष 2010-2011 व वर्ष 2013-14 में पेंशन योजना का व्यवसाय सबसे कम है जो 5.0 प्रतिशत है तथा वर्ष 2012-2013 का व्यवसाय सबसे श्रेष्ठ है जो 7.0 प्रतिशत है।

अग्रलिखित तालिका में उज्जैन जिले की पेंशन योजना दावों के संबंध में जानकारी प्रदान की गई है जिसमें वर्ष 2010-2011 से वर्ष 2014-15 तक भारतीय जीवन बीमा निगम की जानकारी दी गई है। साथ ही पाँच वर्षो के कुल पॉलिसियों की संख्या में से दावों प्रतिशत दिया गया है।

तालिका क्रमांक - 2 : पेंशन योजना दावों की संख्या एवं प्रतिशत

क्र.	वर्ष	भारतीय जीवन बीमा निगम		
		पालिसियों की संख्या	दावों की संख्या	प्रतिशत
1.	2010-11	2466	2441	99.0
2.	2011-12	2750	2733	99.30
3.	2012-13	3411	3393	99.00
4.	2013-14	2112	2703	99.60
5.	2014-15	1342	1336	99.60
पाँच वर्षो का दावों का औसत प्रतिशत				99.40

स्त्रोत - जीवन बीमा निगम से प्राप्त जानकारी

पेंशन योजना दावों के उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि वित्तीय वर्ष 2010-11 में भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा पेंशन योजना के अंतर्गत 2466 पॉलिसियाँ की गई जिसमें से 2441 दावों का भुगतान निगम द्वारा किया गया जिसका प्रतिशत 99.0 है। इसी तरह वर्ष 2011-12, 2012-13, 2013-14 व 2014-15 में क्रमश: 2750, 3411, 2112 व 1342 पेंशन योजना के तहत पॉलिसियाँ हुई जिसमें से 2733, 3393, 2103 तथा 1336 दावों का भुगतान भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा किया गया जिसका प्रतिशत कुल पॉलिसियों का क्रमश: 99.3, 99.5, 99.6 एवं 99.6 है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय जीवन बीमा निगम का वर्ष 2013-14 व वर्ष 2014-15 का पेंशन योजना का दावा भुगतान श्रेष्ठ है।

पेंशन योजना के व्यवसाय कम होने के कारण - भारतीय जीवन बीमा निगम के पेंशन योजना के व्यवसाय कम होने के निम्नलिखित कारण है -

1. भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा पेंशन योजना का व्यापक प्रचार-प्रसार नहीं किया गया।
2. इस योजना के अंतर्गत किसी प्रकार का कोई मैच्योरिटी लाभ नहीं मिलता है।
3. इसमें बीमा धारकों को एकमुश्त राशि का भुगतान नहीं मिलता बल्कि उनको किस्तों के रूप में एक निश्चित राशि मिलती है।
4. बीमा धारकों को इस योजना की विस्तृत जानकारी नहीं दी जाती है।
5. निगम द्वारा पेंशन प्लान का पॉलिसी प्रपत्र अस्पष्ट होता है।
6. भारतीय जीवन बीमा निगम को पेंशन प्लान की प्रीमियम दरों में कमी करना चाहिए।
7. अभिकर्ताओं को ग्रामीण क्षेत्रों में भी इस योजना की जानकारी दी जाना चाहिए।
8. कागजी कार्यवाहियों की अधिकता होना।
9. निगम अपने पॉलिसी धारकों से ऋण पर अधिक ब्याज लेता है।
10. भारतीय जीवन बीमा निगम के व्यवसाय की प्रमुख समस्या दावों के भुगतान में कठिनाइयां है।

पेंशन योजना के व्यवसाय की वृद्धि हेतु समाधान - भारतीय जीवन बीमा निगम की पेंशन योजना के व्यवसाय में आई कमी के समाधान हेतु सुझाव -

1. पेंशन प्लान का व्यापक प्रचार-प्रसार होना चाहिए जैसे मल्टीमीडिया द्वारा, होल्डिंग्स फ्लेक्स द्वारा, समाचार पत्र द्वारा आदि।
2. इस योजना के तहत किसी भी प्रकार में शीघ्र लाभ मिलना चाहिए।
3. अभिकर्ताओं द्वारा इस योजना की विस्तृत जानकारी बीमा धारकों को दी जानी चाहिए।
4. निगम द्वारा प्लान का पॉलिसी प्रपत्र स्पष्ट अर्थात सरल किया जाना चाहिए।
5. भारतीय जीवन बीमा निगम को अपने प्लान के प्रीमियम दरों को थोड़ा कम करना चाहिए।
6. अभिकर्ताओं द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में पेंशन प्लान की जानकारी अधिक से अधिक लोगों को दी जानी चाहिए।
7. निगम द्वारा दावे-भुगतान की प्रक्रिया को सरल एवं सुगम करना चाहिए।
8. निगम अपने पॉलिसी धारकों से ऋण पर ऊंची दर पर ब्याज लेता है अत: उसे ऋण पर लेने वाले ब्याज को कम करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बीमा के तत्व - आर के विश्नोई
2. लाइफ इंश्योरेंस - ह्युम्बनर
3. एल. आई. सी. प्लान्स - निपुण रेडी
4. Life insurance India - A. N. Agrawal
5. Problems of India life Insurance – P.C. Vasu
6. योगक्षेम - मासिक पत्रिका भा. जी. बी. नी.
7. निगम की वार्षिक रिपोर्ट - पब्लिकेशन डिपार्टमेंट
8. भारतीय जीवन बीमा निगम - वार्षिक डायरी
9. www.licindia.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

A Study on Indore's Housing Development by Financial Management of Chief Minister Rural Housing Mission

Pawan Tiwari*

Abstract - Housing is one of the fundamental necessities for the survival of human beings. Possession of a house provides important economic security and social position for a citizen in the society. MP has about 37 lac rural poor who are either houseless or live in semi-pucca houses. The gap between the demand and supply is too huge to be addressed by existing schemes like IAY. In view of this the Govt. has launched 'CM GraminAwas Mission" to facilitate housing to rural poor. Chief Minister Rural Housing Mission (CMRHM) was launched by The Minister of Rural Housing Mission on 22th Feb 2011. This mission by provide housing facilities for all rural poor families and CMRHM has eradicated the poor families in rural area for making housing facilities. The state government provide finance throw bank for BPL and APL families etc.The attempt in this paper is made to evaluate the financial management of CMRHM with special reference to Indore district. The study based on secondary source of information collected from Article, journals, websites etc.
Keywords - Rural Housing, Housing Shortage, Houseless, Demand and Supply, Financial Management.

Introduction - Housing is one of the basic requirements for the survival of human beings. Ownership of a house provides significant economic security and social status for a citizen in the society. The identity and social recognition associated with ownership of a house provides an individual with immense confidence to get involved into many social activities. Stable, affordable and accessible housing is directly and indirectly linked to human wellbeing. One can easily understand the socio-economic status of a family just by watching physical attributes of their housing. Good housing and its surroundings indicate the standard of living of the family, it provides facilities for education, recreation and many other facets of life. A person deprived of this basic need faces all odds of life and remains discriminated and marginalized in the society. Housing contributes significantly towards the configuration of cultured human existence. Around one third of the human populations in urban as well as rural areas in the country are deprived of adequate housing facilities. Out of the estimated 200 million families in India, approximately 65 to 70 million families do not have adequate housing facilities. They are not able to procure a house for want of financial resources. The situation of the Scheduled Tribes, Scheduled Castes and the other socially and economically backward class families is worst affected by poor housing conditions. Hence, fulfilling the need for rural housing and tackling housing shortage particularly for the poorest is an important task to be undertaken as part of the poverty alleviation efforts of the government.

Introduction of Chief Minister Rural Housing Mission - In Indira awasYojana approximately 70000 loans for housing got distributed in rural areas of Madhya Pradesh .This is very low, when compared with the number of people in those area. Hence, it is felt that there is requirement of a mission to provide housing for the poor people of rural areas. Thus, chief minister rural housing mission scheme started. This scheme is based on "on-Request-On-Demand-Loan". In this scheme, the beneficiary will be provided help from different departments, to built his own house. Depending on the beneficiary CIBIL, and loan re-payment, the bank may provide loan for 10,12 and 15 years.Mission is executed in a systematic way in all district of the state . In the first year the scheme is executed in one third of gram panchayat for each janpadpanchayat ,for all districts in state, keeping in mind all administrative and realistic situation as of now , areas under najool outer region shall not be covered under this scheme.

Amount Required to built House

1. The unit constructed under this mission will cost Rs. 120000/- . the beneficiary will pay Rs. 20000/- and remaining amount Rs. 100000/- will be paid by bank in form of loan out of that Rs, 50000/- along with interest will be repaid by state government in form of monthly installment.
2. Selected beneficiary will be provided a loan unto Rs. 50000/- from bank on demand and beneficiaries repayment condition, an extension of Rs. 30000/- loan amount can be provided. But there will be no role for state government for this extension .The state government is responsible to pay Rs. 50000/- for each unit.

Size of housing unit.

***Asst. Prof., K.K. College, Indore (M.P.) INDIA**

Proposed Rs.120000/- a minimum of 225 sq.ft. housing unit will be constructed. The unit will consist **Objectives of Research -** The researcher has determined the following objectives for his/her research work:

1. To analyze the financial management of state government for Chief Minister Rural Housing Scheme.
2. To make a comprehensive study of the solution of housing problems of the selected families in Chief Minister Rural Housing Scheme.

Introduction of Financial Management of CMHRM - The financial aspects of CMHRM scheme for Indore District. It is considered number of cases being submitted and cases being admitted by the bank. Also it covers the total amount being given by bank. Also it covers the total availability and utility of the fund.

Total Amount Spend in Construction of Houses - For constructing houses under CMHRM scheme, the total amount spend by the Bank during 2011- 17 is about 268.24 Lacs.

From the table 1, it is clear that the total amount spend of Rs. 1,440,000/- for construction of 24 houses (Rs. 60,000/- for each house) was released by Bank in the year 2011-12. . This was done keeping in mind the guideline and necessary construction work done. This is considered to be as index 100 with base year 2011-12.

Also, it is clear that the total amount spend of Rs. 16,860,000/- for construction of 281 houses (Rs. 60,000/- for each house) was released by Bank in the year 2012-13. . This was done keeping in mind the guideline and necessary construction work done. The index calculated is 1170.83 , which is 1070.83 more than the base year.

Also, it is clear that the total amount spend of Rs. 50,940,000/- for construction of 849 houses (Rs. 60,000/- for each house) was released by Bank in the year 2013-14. This was done keeping in mind the guideline and necessary construction work done. The index calculated is 3537.5 , which is 3437.5 more than the base year.

Also, it is clear that the total amount spend of Rs. 91,600,000/- for construction of 916 houses (Rs. 1,00,000/- for each house) was released by Bank in the year 2014-15. This was done keeping in mind the guideline and necessary construction work done. The index calculated is 6361.11 , which is 6261.11 more than the base year.

Also, it is clear that the total amount spend of Rs. 79,100,000/- for construction of 791 houses (Rs. 1,00,000/- for each house) was released by Bank in the year 2015-16. This was done keeping in mind the guideline and necessary construction work done. The index calculated is 5493.06 , which is 5393.06 more than the base year.

Also, it is clear that the total amount spend of Rs. 28,300,000/- for construction of 283 houses (Rs. 1,00,000/- for each house) was released by Bank in the year 2016-17. This was done keeping in mind the guideline and necessary construction work done. The index calculated is 1965.27, which is 1865.27 more than the base year.

Findings :

1. Chief Minister Rural Housing Mission is fruitfully implemented in the Indore District.
2. Total 3144 house to the implemented to the beneficiaries through the scheme.
3. Rs. 268,240,000 has been Finance for providing housing facility to the houseless in Indore district during the study period.
4. Beneficiaries are not aware of this scheme, are unable to build a house for most beneficiaries.

Conclusion - The Chief Minister Rural Housing Mission has been renamed as Pradhan ManrtiGrameenAwasYojana on 20th November 2016. The main objective of the scheme is to provide a finance aid to the members of BPL and APL families etc. below the poverty line for the construction of their dwelling units by providing a lump sum amount as financial assistance. In Indore district APL and BPL are more benefited and got assistance from Bank for having their own house. Housing Authority and other local administration educated and helped people in constructing their own house. With the help of local administration, “sachhuagharkasapna , pakkagharhaiabapna”.

References :-

1. Chief Minister Rural Housing Mission, Indore District, Scheme Guidelines& user _manual, Feb,2011, Ministry of Housing &Rural Poverty Alleviation, Government of MP
2. http://mmgam.mp.nic.in/Public/mmgam_Info.aspx?ID=8
3. http://seekhe.com/yojana/mp-mukhyamantri-gramin-awas-yojana/

TABLE 1 :Total Amount Spend in Construction of Houses

Year	Distribution	Loan Amount	Total Loan Amount	Amount Spend on Construction(in lacs)	Index
2011-12	24	60000	24X60000	14.4	100
2012-13	281	60000	281X60000	168.6	1170.83
2013-14	849	60000	849X60000	509,4	3537.5
2014-15	916	100000	916X100000	916	6361.11
2015-16	791	100000	791X100000	791	5493.05
2016-17	283	100000	283X100000	283	1965.27
Grand Total			**26824**		

Source :- Yearly Report of District Panchayat ,Indore

****

राष्ट्रीय सुरक्षा की बदलती अवधारणा

डॉ. रितेश सिंगारे *

प्रस्तावना – राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा से पहले यह समझना आवश्यक है कि राष्ट्र क्या है? जिसकी हमें सुरक्षा करनी है। आधुनिक राष्ट्र-राज्य व्यवस्था कोई स्थिर संकल्पना न होकर एक विकास अवस्था है जिसमें निरंतर बदलाव आ रहा है। आधुनिक राष्ट्र-राज्य व्यवस्था एक निरंतर क्रमिक विकास का फल है। पश्चिम में आधुनिक राज्यों का जन्म 17वीं शताब्दी में 1648 की वेस्टफेलिया की संधि से समझा जाता है।

राष्ट्र-राज्य की अवधारणा को समझने के लिए आदर्श रूप में 'राष्ट्र' एवं 'राज्य' दोनों के मध्य मूल भेद को जानना जरूरी है। 'राष्ट्र' शब्द जिसका प्रयोग बहुधा 'राज्य' के स्थान पर भी कर लिया जाता है, एक ऐसा शब्द है जिसके सांस्कृतिक निहितार्थ है। इसका संबंध जनता के उस समूह से हाता है जो एकात्मकता एवं आपसी मूल्यों की भावना से संगठित होते है। यह समूह कुछ सांस्कृतिक कारकों पर आधारित होता है, जैसे समान इतिहास, समान भाषा, समान धर्म, समान जातीयता एवं समान प्रथाएँ आदि। दूसरी और 'राज्य' शब्द का संबंध राजनीतिक विचार और कानूनी सत्ता दोनों से होता है। तथापि, संयुक्त रूप से 'राष्ट्र-राज्य' शब्द का संबंध 'राष्ट्र' के रूप में एक ऐसी सांस्कृतिक इकाई से होता है जिसकी सीमायें 'राज्य' की राजनैतिक-कानूनी सीमाओं के समान होती है।

अंतर्राष्ट्रीय कानून के अंतर्गत आधुनिक राज्य निम्नलिखित चार लक्षणों पर आधारित होता है:-

(i) स्थाई जनसंख्या (Permanent Population);
(ii) निश्चित प्रदेश (Cartain Territory);
(iii) संगठित सरकार (Organised Government);
(iv) प्रभुसत्ता (Sovereignty).

वास्तव में पश्चिमी विद्धवानों की राष्ट्र की अवधारणा में मौलिक ख़ामिया है क्योंकि जब राष्ट्र की नीव ही धर्म, भाषा, जाति और-संप्रदाय पर रखी जाती है तो यह कहना सही होगा कि राष्ट्र एक सांप्रदायिक संस्था है। यदि राष्ट्र एक सांप्रदायिक संस्था है तो राष्ट्रवाद भी एक साम्प्रदायिक भावना ही मानी जाएगी। पश्चिमी जगत के अनुसार जातीय विभिन्नता को समाप्त करके एक जाति और एक संस्कृति के लोगों के अस्तित्व के अलावा अन्य को समाप्त करना ही राष्ट्रवाद है। यही कारण है कि कुछ विद्धान भारत को राष्ट्र नही मानते क्योंकि उनका मानना है कि भारत कई राज्यों का राष्ट्र है जिसके लिए वे राज्य-राष्ट्र शब्द का प्रयोग करते हैं। उनके अनुसार भारत कई राष्ट्रों (जिनको हम राज्य कहते है) से मिलकर बना है। इन क्षेत्रों की अलग-अलग भाषाएँ, संस्कृति और इतिहास है।

यदि उनके इस तथ्य को स्वीकार किया जाए तो विभिन्न क्षेत्रों में समय-समय पर होने वाले आंदोलन जैसे खालिस्तानी आंदोलन, असम आंदोलन, नक्सलवादी आंदोलन, जिनको हम उपराष्ट्रवादी आंदोलन या अलगाववादी आंदोलन कहते है, वे आंदोलन राष्ट्रवादी आंदोलन हो गए। ऐसा इसलिए क्योंकि इनका संचालन उस राष्ट्र के निवासी अपनी राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत होकर कर रहें है। इस रूप में तो राष्ट्र के रूप में हमारा अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा। इसलिए हमें पश्चिमी राष्ट्रवाद का चोला उतार कर फेंक देना चाहिए तथा देशभक्त बनना चाहिए। देश लोगों से मिलकर बनता है इसलिए देश से प्रेम करने से पहले देश के लोगों से प्रेम करना चाहिए।

कई पश्चिमी विद्धान यह मानते है कि ब्रिटिश लोगों के कारण ही भारत में राष्ट्रवाद की भावना ने जन्म लिया, राष्ट्रीयता की चेतना ब्रिटिश भारत की देन है और इससे पहले भारतीय इस चेतना से अनभिज्ञ थे, पर यह सत्य नहीं है।

वस्तुत: भारत की राष्ट्रीय चेतना वैदिककाल से अस्तित्वमान हैं। अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में धरती माता का यशोगान किया गया है। माता: भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या: (भूमि माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ।)

विष्णुपुराण में भारत का यशोगान पृथ्वी पर स्वर्ग के रूप में किया गया है। वायुपुराण में भारत को अद्धितीय कर्मभूमि बताया है। रामायण में रावणवध के पश्चात् राम, लक्ष्मण से कहते है:- अपि स्वर्णमयी लङ्का न मे लक्ष्मण रोचते।

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।

(अर्थ-हे लक्ष्मण! यद्यपि यह लंका स्वर्णमयी है, तथापि मुझे इसमें रूचि नहीं है। जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है। वास्तव में हमारे देश के संदर्भ में सारी पृथ्वी हमारा परिवार है (वसूधैव कुटुम्बकम्ब) की भावना और अंग्रेजों की बांटो और राज करोय की नीति के विरोधाभाष को समझना आवश्यक है। हमारे देश की नीव रामराज्य अर्थात् सब के उद्धार और ट्रस्टिशिप की अवधारणा और मानव सेवा ही माधव सेवा के आधार पर रखी गई है।

अत: राष्ट्रीय सुरक्षा को हम केवल भू-भाग की सुरक्षा तक सीमित नहीं रख सकते बल्कि प्रत्येक देशवासी के सर्वांगिक विकास ही राष्ट्रीय सुरक्षा का मूल है। वास्तव में राष्ट्रीय सुरक्षा की दो अवधारणायें प्रचलित है-

(i) पारंपरिक अवधारणा
(ii) गैर-पारंपरिक या आधुनिक अवधारणा।

(i) पारंपारिक अवधारणा के सैन्य विचारक वाल्टर लैपमैने के अनुसार- 'कोई राष्ट्र केवल उस सीमा तक सुरक्षित है, जितनी दूर तक उसे, यदि वह युद्ध से बचना चाहता है तो अपने आधारभूत मूल्यों को कुर्बान करने के लिए मजबूर होने का खतरा नहीं है और यदि उसे चुनौति दी जाये तो जितनी दूर तक वह ऐसे युद्ध में विजय द्वारा उन्हें कायम रखने में समर्थ है।' इस तरह लिपमैन शक्ति के संचय से भयमुक्त वातावरण के सृजन को राष्ट्रीय सुरक्षा

* अतिथि विद्वान (सैन्य विज्ञान) शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

मानते है। अत: लिपमैन की अवधारणा में शक्ति राष्ट्रीय सुरक्षा का पर्याय बन जाती है। शक्ति साध्य या मूल्य बन जाती है।

आसगुड के अनुसार:- 'राष्ट्रीय-हितों की सुरक्षा ही सुरक्षा है।' यहाँ आसगुड राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा का अर्थ प्रादेशिक अखण्डता, सम्प्रभुता और राजनीतिक स्वतंत्रता से लगाते हैं। इस तरह आसगुड भी राष्ट्रीय-सुरक्षा को शक्ति का पर्याय मानते हुए वाल्टर लिपमैन का ही समर्थन करते है।

बर्कोविट्ज के अनुसार:- 'सुरक्षा किसी राष्ट्र की वह क्षमता है जिसके द्वारा वह वाह्य आक्रमणों से अपने आंतरिक मूल्यों को बचाने की कोशिश करता है।' यहाँ आंतरिक मूल्यों का अर्थ सम्प्रभुता, एकता, अखण्डता इत्यादि से लगाते है। इस तरह बर्कोविट्ज भी सुरक्षा को शक्ति के रूप में ही देख रहे है।

राबर्ट मैकनमारा के अनुसार:-'जो विकसित है वही सुरक्षित है।' इस तरह मैकनमारा की परिभाषा केवल विकसित देशों के संदर्भ में है एवं यह निश्चित रूप से कहना कि विकसित राष्ट्र सुरक्षित है, तथ्यों को झूठलाना होगा।

उपरोक्त परिभाषायें विकसित राष्ट्रों के संदर्भ में है जो बाह्य आक्रमण का डर दिखाकर शक्ति संचय पर बल देते है। वे विकासशील और अल्पविकसित राष्ट्रों के आंतरिक खतरों की कोई चिन्ता नहीं करते क्योंकि विकसित राष्ट्र आर्थिक रूप से सम्पन्न है तथा उनके यहाँ हमारे आंतरिक खतरे जैसे जातिवाद, सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद, नक्सलवाद, अलगाववाद जैसी सामाजिक उप-विभाजन की सुरक्षा समस्यायें नहीं है। साथ ही जनसंख्या विस्फोट, भय, भूख, भ्रष्टाचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, भ्रष्टाचार इत्यादि खतरे भी नहीं है। लेकिन जसजीत सिंह, के. सुब्रमण्यम जैसे प्राच्य विचारकों की परिभाषा में ऐसी चिन्तायें दिखाई देती है।

(ii) गैर-पारंपरिक अवधारणा:- एअर कोमोडोर जसजीत के अनुसार:- 'बाह्य और आंतरिक खतरों से मार्मिक मूल्यों की सुरक्षा की सुरक्षा है।' के. सुब्रमण्यम के अनुसार:-राष्ट्रीय सुरक्षा का अर्थ केवल क्षेत्रीय अखण्डता की सुरक्षा से नहीं है, इसका तात्पर्य यह भी सुनिश्चित करना है कि देश तीव्र औद्योगिकीकरण की तरफ बढ़ रहा हो। उसके पास एक शक्तिशाली सुसंगठित, समतावादी और औद्योगिकीय समाज के निर्माण की क्षमता हो।

इस तरह पश्चिमी विचारक सैन्य तत्वों को प्रमुखता देते है वहीं प्राच्य विचारकों की सुरक्षा अवधारणा में सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक सशक्तिकरण का विशेष महत्व रहा है।

कुछ अन्य विचारक राष्ट्रीय सुरक्षा को अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा का अंग मानते है तथा यूएनओ (UNO) जैसे संगठन एवं सामुहिक सुरक्षा की अवधारणा पर बल देते है। वहीं कुछ विचारक राष्ट्रीय सुरक्षा को क्षेत्रीय सुरक्षा का अंग मानते है तथा सार्क, आसियान, यूरोपीय यूनियन जैसे क्षेत्रीय संगठनों के माध्यम से सामाजिक आर्थिक सहयोग बढ़ाकर क्षेत्रीय राष्ट्रों के मध्य विश्वास बहाली पर बल देते है। वही नाटो जैसे संगठन के माध्यम से क्षेत्रीय स्तर पर सुरक्षा स्थापित करके राष्ट्रीय सुरक्षा एवं शक्ति संतुलन बनाये रखना चाहते है।

किन्तु गौर से देखें तो प्रत्येक राष्ट्र की अपनी विशिष्ट सुरक्षा चिंतायें है। मालद्वीप जैसे राष्ट्र के लिए ग्लोबल वार्मिग जैसी समस्या राष्ट्रीय-सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा है। वहीं अफगानिस्तान एवं मध्य एशिया के देशों के लिए आपसी संघर्ष सबसे बड़ी चुनौति है।

इस प्रकार सुरक्षा की अपारंपरिक धारणा न केवल सैन्य खतरों से संबंध रखती है बल्कि इसमें मानवीय अस्तित्व पर चोट करने वाले अन्य व्यापक खतरों और आशंकाओं को भी शामिल किया जाता है।

सुरक्षा की पारंपरिक धारणा में भू-क्षेत्रों और-संरस्थानों सहित राज्यों को संदर्भ माना जाता है लेकिन सुरक्षा की अपारंपारिक धारणा में सिर्फ राज्यों नहीं व्यक्तियों और संप्रदायों या कहें कि संपूर्ण मानवता की सुरक्षा पर बल दिया जाता है।

निष्कर्ष- राष्ट्रीय सुरक्षा का अभिप्राय केवल बाह्य आक्रमण से नहीं हो सकता न ही राष्ट्रीय सुरक्षा केवल शक्ति के संचय द्वारा संभव है। आज आंतकवाद, पर्यावरण संकट, ऊर्जा संकट, वैश्विक महामारी जैसी सामुहिक चुनौतियाँ है। वहीं विकासशील व अल्पविकसित राष्ट्रों में खाद्यान्न संकट, गरीबी, भूखमरी, जनसंख्या विस्फोट, गृहयुद्ध जैसी समस्यायें विकराल होती जा रही है। अब आवश्यक है कि मानवता की सुरक्षा और राज्य की सुरक्षा एक-दूसरे के पूरक होने चाहिए। इसके अलावा मानवता का विदेशी सेना के हाथों मारे जाने के साथ-साथ स्वयं अपनी ही सरकारों के हाथों से भी बचाना जरूरी है और यह समावेशी विकास द्वारा ही संभव होगा तब ही कोई राष्ट्र सुरक्षित रह सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रामकृष्ण सिंह एवं डॉ. राकेश सिंह, राष्ट्रीय सुरक्षा, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद वर्ष 2013 पेज नं.1 से 11
2. प्रोफेसर (डॉ.) लल्लन जी सिंह, राष्ट्रीय-रक्षा और सुरक्षा (2013) प्रकाश बुक डिपो बरेली पेज 1-5
3. प्रोफेसर हरवीर शर्मा, भारत की सुरक्षा समस्या, 1998 पेज नं.-1-22
4. अजमेर सिंह मलिक कृष्ण कुमार, 'संघात्मक व्यवस्था में आंतरिक सुरक्षा' (भारतीय लोक प्रशासन संस्थान नई दिल्ली की अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका) जुलाई-दिसम्बर, 2012) पेज नं. 443-450
5. समकालीन विश्व में सुरक्षा (समकालीन विश्व राजनीति, एनसीईआरटी कक्षा 12वीं) पेज नं. 99-113
6. डॉ. अशोक कुमार सिंह, राष्ट्रीय सुरक्षा-2014, प्रकाश बुक डिपो बरेली पेज नं.-1 से 7
7. डॉ. अशोक कुमार सिंह, रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन 2013, प्रकाश बुक डिपो बरेली, पेज नं.-7 से 68

****

Recent Trends in Training and Developments in India

Dr. Sanjay Patni*

Abstract - Training and Development is a continuous process for improving the caliber and competence of the employees to meet the current and future performances. Training in addition to imparting requisite skills to all levels of employees, executives and managers also aims at changing the behavioural patterns of the employees in a direction which is congenial to achieve the organizational effectiveness, sustainability and growth. In this era of fast changing economic scenario and throat- cutting competitions, it is not enough for any organization just to have solid financial foundations, state of the art technology, automated systems, since the cutting edge of competitive survival is now the quality of the human resources which decides that which organization would ultimately survive in the long run. Training and Development, On the Job Training, Training Design and Delivery style are four of the most important aspects in organizational studies. The focus of the study is to understand the effect of Training and Development on Organizational performance. The back bone of this study is the secondary data comprised of comprehensive literature review. Hypothesis is developed to see the Impact of all the independent variables on the overall Organizational Performance. The hypothesis shows that all these have significant effect on Organizational Performance. On the Job Training, Training Design and Delivery style have significant affect on organizational Performance and all these have positively effect the Organizational Performance. It means it increases the overall organizational performance.
Keywords - Training and Development, On the Job Training, Training Design, Delivery style, Organizational Performance.

Introduction - Training and Development is an integrated sub-system of any modern organization destined to survive the throat–cutting global competitions having the inherent potentials to grow faster and faster in almost all services sectors. To keep pace with the changing needs of the highly talented and sophisticated human resources, training and development strategies have also changed dynamically from its traditional models to the latest ultra-modern and contemporary models having its focus on the overall and al round developments of all ranks and files, shifting from the fundamental concepts of various skill acquirements to that of competency building with added importance of behavioural and attitudinal modifications in the multi–cultural environments of team building and leaderships. To be frank, the routine functions like recruitments, selections, trainings, developments and compensations of the Human Resources Departments have been long taken over by modern functions of talent acquisitions, talent and knowledge managements, competency profiling and mapping gradually re-designating the Human Resources Manager as the Chief People Manager, whose main responsibility becomes enhancing the real and net worth of the human assets to provide the company its competitive edge over its thousands of competitors spread all over the world.

Now a day's training is the most important factor in the business world because training increases the efficiency and the effectiveness of both employees and the organization. The employee performance depends on various factors. But the most important factor of employee performance is training. Training is important to enhance the capabilities of employees. The employees who have more on the job experience have better performance because there is an increase in the both skills & competencies because of more on the job experience. The organizational performance depends on the employee performance because human resource of organization plays an important role in the growth and the organizational performance. So to improve the organizational performance and the employee performance, training is given to the employee of the organization. Training & development increase the employee performance which is an important activity to increase the performance of organization. On the other hand Employee performance is the important factor and the building block which increases the performance of overall organization. Employee performance depends on many factors like job satisfaction, knowledge and management but there is relationship between training and performance. This shows that employee performance is important for the performance of the organization and the training and development is beneficial for the employee to improve its performance.

Objective of the Study - The main objective of this study is to make a comparative study of the changing needs of the Training and Developments of the organizations in

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

general and services sector in particular in view of the post economic liberalization of the country specially with the advent of M N C s Sectors in India.

Review of Literature - With increasing importance of the human resources and mounting demands of the well educated, trained, knowledgeable and talented employees all over the world as a competitive advantage for the corporate houses and industries to face the global challenges and competitions, management scientists and researchers went on exploring the various ways and means to improve the quality of human resources and trying to integrate the training and developments systems into the organizational systems for its survival, sustainability, growth and prosperity. The first set of research findings in this direction came from Cooper et. al. who stated that - there is a always a direct positive correlation between the training programmes and employees enhanced job involvement and performance. He further suggested that - there should be some recognition and financial benefits for the high performers at the training programmes which is likely to reflect in the form of employee's high performance and enhanced level of motivations to learn and acquire new skills, knowledge and competencies essential for organizational growth and prosperity.

Differences between Training and Development - Employee training is different from management development or executive development. While the former refers to training given to employees in the operational, technical and allied areas, the latter refers to developing an employee in the areas of principles, and techniques of management, administration, organization and allied ones.

Table 1

Area	Training	Development
Content	Technical skills and knowledge	Managerial Behavioural skills and knowledge
Purpose	Specific and Job related	Conceptual and General Knowledge
Duration	Short term	Long term
For Whom	Technical and non-managerial personnel	Managerial personnel

Who Is Responsible For Employee Training And Development?

Employee training is the responsibility of the organization. Employee development is a shared responsibility of management and the individual employee. The responsibility of management is to provide the right resources and an environment that supports the growth and development needs of the individual employee. For employee training and development to be successful, management should:

1. Provide a well-crafted job description.
2. Provide training required by employees to meet the basic competencies for the job. This is usually the supervisor's responsibility.
3. Develop a good understanding of the knowledge, skills and abilities that the organization will need in the future.
4. Look for learning opportunities in every-day activity.
5. Explain the employee development process and encourage staff to develop individual development plans.
6. Support staff when they identify learning activities that make them an asset to your organization both now and in the future.

Emerging Trends In Training & Development

- **Active Learning -** Learning is better experientially and mostly by doing. Gives teams or work groups an actual problem, give them time on solving it and committing to as action plan, and then holds them accountable for carrying out the plan.
- **Influence of e-Learning -** Almost all major companies are using some form of online learning to train their employees.

Unlike past where they used to focus more on mandatory trainings or highly focused trainings that address their pressing business problems /challenges, organizations are now investing more and more in personal development programs to increase employee productivity.

- **Adaptive Learning -** Companies may want to consider breaking traditional learning methods by introducing aspects of adaptive learning, it is a methodology that breaks traditional models and allows employees to learn at their own pace.
- **Integrating learning and development into organizational strategy -** Most organizations aspire to make the best use of their people (their 'human resources', 'human capital' or any other term they use to describe the flesh and blood that drives their enterprise). Without learning, organizations and individuals simply repeat old practices, change is cosmetic and improvements are either fortuitous or short-lived
- **Behavioral Changes -** More companies are focusing on building 'how to' skills that are highly relevant and immediately applicable to the jobs people do. Research shows that more people act themselves into a new way of thinking rather than think themselves into new ways of acting. Therefore it is the training that produces measurable results in terms of behavioral change that is more likely to make a real difference in the long term.
- **Real use of training experts -** Training specialists are those in the organization who can provide a performance consulting service whereby all training interventions are geared towards the real needs of managers, staff and the business. To do this well, those working in the training area need to understand the business strategy of the organization.

Research Methodology - Present research paper is of descriptive type and based on primary data collected through questionnaire filled by the bank employees. The secondary data includes reference books, journal, research papers and internet. Random sampling of 40 respondents from employees from different banks like SBI, Oriental Bank

of Commerce and Punjab National Bank located in urban area of Indore.

Analysis and Findings

Statements	% Response of employees
Induction training is given adequate importance.	86% Very Good
Training programmes are wellplanned	89% Very Good
Norms and values of the organization are clearly explained to new employ -ees during induction training.	71% Very Good
Training programmes are periodically reviewed and improved.	90% Very Good
Employees acquired technical knowledge and skill through training.	80% Good
Training and development is based on genuine needs.	79% Good
Employees participate in determining the training needs.	65% Good
Training and development (T&D) increase the skill of employees.	89% Very Good
T&D enhance the quality of services being performed by employees.	76% Very Good
T&D enhance the quality of services being performed by employees.	76% Very Good
T&D satisfy the ego of employees.	79% Very Good
T&D enhance the efficiency and effectiveness of the work being performed by employees.	78% Very Good
T&D minimize the faults in operations.	81% Very Good
T&D improve the leadership and managerial skills.	79% Very Good
T&D reduce the stress level of employees.	73% Very Good
Training and development stabilize the organization.	78% Very Good
T&D help employees in promotion and other monetary benefits.	72% Very Good

Conclusion - There is enough evidence to show that employees who were trained on a regular basis are the ones who provide a higher quality services to the customers. To develop an integrated and proactive training and development strategy there is requirement of coherent corporate culture rather than ad-hoc programs. In a service oriented industry, people are among the most important assets and must efficiently manage its employees during every phase of employment in this competitive arena. It is concluded that public sector organizations undertake training and development programmes for their employees to increase their efficiency. Organization provide training programmes to enhance their knowledge and skills to satisfy the customers. Growth of Corporate sector in India is the result of skilled manpower which is the outcome of training and development.

The evolution of training trends throughout the years has continued help organizations reduce costs, motivate its workers increase productivity and ultimately increasing profits. There are a variety of training trends. No one training trend is best for every situation or company's mission. Often mixes of training trends are most effective such as using YouTube videos in a traditional lecture or as part of an online learning class. Technology is transforming training much like other areas of our society. In general they are cheap and as or more effective than traditional training methods. Moreover, the younger generations embraces them and are motivated to learn via these techniques, in particular, those that involve social interaction.

Suggestions and Recommendations :

1. On review of the available literature and various research findings, based on the field survey, pilot studies, results of the structured interview and opinion poll of the experts in the field, the following suggestions are recommendations are made :
2. Training and development of all human resources is a continuous process and it should be into the imbedded in to the organizational systems.
3. Human assets are the most vital and important amongst all assets and hence it should be controlled and groomed by the top experts and professional in the field and never by less competent persons.
4. Training and development activities should not be treated as none - productive activities and should not be therefore ignored any further.

References :-

Books :-

1. Kunjukunju Benson (2008), "Commercial Banks in India" New Century Publication, New Delhi.
2. Jankiraman B. (2009),"Training and Development" Biztantra.
3. Sangwan D. S. (2009),"Human Resource Management in Banks" National Publishing House.
4. Jyothi P. and Venkatesh D.N. (2006),"Human Resource Management" Oxford University Press.
5. Pande Sharon and Basak Swapalekha (2012), "Human Resource Management" Pearson.

Journals :-

1. Jadhav Ajit (2013),"A Study on Training and Development in Indian Banks", *ABHINAV National Monthly Refereed Journal of Research in Commerce & Management,* Vol.1, No.1, pp34-39.
2. Ramakrishna G., Kamleshwari, Kumar, M. Girdhar, Krishnudu CH. (2012),"Effectiveness of Training and Development Programmes- A Case Study of Canara Bank Employees in Kurnool District", International Journal of Multidisciplinary Research, Vol.2 No 4. Pp 150-162.
3. Purohit Manisha (2012), "An Evaluation of HRD Practices Followed in Co-operative Banks in Pune Region", ACADEMICIA: An International Multidisciplinary Research Journal, Volume 2, Issue 8, pp 186-195.

4. Srimannarayana M. (2011), "Measuring Training and Development", *The Indian Journal of Industrial Relations*, Vol.47, No.1, pp. 117-125.
5. Sthapit Arhan (2012), "Strategic factors in evaluation of Induction Training Effectiveness an exploratory study of Nepali bank managers" EXCEL International Journal of Multidisciplinary Management Studies, Vol.2. Issue 8, pp.16-32.

Websites :-

1. www.iba.org
2. www.rbi.org
3. www.bis.org

****

A Study of Academic Leadership Styles at Private Management Institutions

Dr. Nilesh Gnagwal*

Abstract - After a careful study of administration in higher education, it has been observed that the academic standards are dwindling, the causes of which can be attributed to many factors like administrative mismanagement, paucity of qualified directors and faculty, political interference and maneuvering in matters of appointments and administration, financial sleaze, apathy of students and teachers, inadequate resources and lack of strategic leadership at the institutional level. With a clear indication of such flaws, there is a need to study and understand the impediments in the development of higher education in India. It all starts with assessing the existing leadership practices at such management institutions and further understand how effective leadership contributes to institutional effectiveness. This paper assesses the leadership styles at different management institutions, which include autonomous as well as university affiliated colleges, with regard to important academic and administrative activities like placements, results, attendance, faculty appraisals, accreditation, monthly payments, infrastructural facilities, computerization, facilities provision, and faculty-student ratio. The proposed research enables in establishing the actual relationship between different leadership styles and the institutional effectiveness. The paper concludes with suitable suggestions and recommendations.

Introduction - The concept of leadership carries many different connotations and is often viewed as synonymous with other equally complex concepts such as power, authority, management, administration, and supervision. Northouse (2001) defined leadership as a process whereby one individual influences a group of individuals to achieve a common goal. Placing this definition in the context of school management, it is possible to see its application to the principals of vocational technical institutions. These individuals would influence the activities of organized groups, such as the staff, student, policy makers and employers, towards the goals of success and economic viability, all within the unique atmosphere of academia. Many leadership theorists have found that ineffective leadership in any organization seems to be the major cause of diminishing organizational productivity (Yukl, 1994). Effective leadership therefore becomes an asset if any organization including the school wants to achieve productivity.

As leadership and leadership development became an important and long-standing concern in many disciplines and fields of practice, vocational and technical education was not an exception (Wonacott, 1998). The issue of leadership and leadership development in vocational technical education arise from the fact that there are series of changes that are rapidly and significantly altering the educational and economic environment in which vocational technical education exists. The nature of work is changing; technology keeps changing rapidly; there is increased public demand on vocational technical education system to produce individuals with more opportunities for present and future prospects in multiple industries, and offer the individuals with enough skills for personal development and success in the changing society (Moss & Liang, 1990)

Private institutions of higher education are particularly dependent upon three primary areas of revenue for solvency and persistence – enrolment, development funds, and endowment investment returns. During the first quarter of 2001, financial analysts pointed to signs of a national recession and suggested a "significant downturn would be hardest on those private institutions below the top tier, those with large sticker prices, but less-than-mammoth endowments". A primary reason for this concern was based on research showing for every revenue, "tuition supplies 55% at private research universities, 76% at liberal-arts colleges, and 85% at private universities that are less research-intensive". Since tuition revenue is directly linked to enrolment levels, such a predicted "economic slowdown would reduce the number of full-pay students, whether by leading them to less-expensive institutions, bypassing higher education altogether, or being eligible for more institutional financial aid as a result of their lower incomes", adversely affecting the tuition revenue at private colleges and universities.

The leader should be highly visible, courageous, visionary, innovative, creative, willing to take risks, recognize and nurture talents of individuals and maintain high ethical standards.

*PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

There are many general definitions of leadership:

1. The ability to get the work done from the followers without force.
2. Organizing a group of people to achieve a common goal and getting the work done effectively.
3. Influencing people by providing purpose, direction and motivation while operating to accomplish the mission and improve the organization.
4. The process of influencing the behavior of other people toward group goals in a way that fully respects their freedom.
5. A function of knowing oneself, having a vision that is well communicated, building trust among colleagues, and taking effective action to realize ones own leadership potential.
6. Process of social influence in which one person can enlist the aid and support of others in the accomplishment of a common task.
7. Enabling a group to engage together in the process of developing, sharing and moving into vision and then living it out.

Corporate leadership - In the corporate world, leadership is the capability and practice of elevating the performance of employees to a desired level (above normal) in favor of the organization. The way companies conduct business locally and globally, are changing rapidly and hence there is a critical need for managers and leaders to change their style of functioning (Charan, 2007; Hamel, 2007). In order to be successful in the corporate world, a leader is required to be equipped with a set of specific skills and qualities. Some of these are:

1. Passion for dynamism and entrepreneurship.
2. Loyalty, integrity, honesty, accountability and trustworthiness.
3. Capabilities of developing sustained growth strategies.
4. Providing opportunities for expansion of domestic/ global operations.
5. Providing scope for improving the organizational culture.
6. Maintaining a healthy balance between organizational culture, values and ethics and growth and profitability.
7. Having desire and adaptability for change, desire and capability of handling risks.
8. Clear and consistent communication skills including good receptive skills.
9. Empowerment, engagement and retention of employees.
10. Improving loyalty of employees towards the organization, particularly when there is no job guarantee.
11. Keeping employees motivated and satisfied in order to improve effectiveness.
12. Providing opportunities for employee development & growth – training, career succession, mentoring.
13. Respect for employees and concern for their well being.
14. Creating space for leadership to grow at all levels.
15. Understanding and practicing social responsibility.
16. Improving brand image of the organization and customer loyalty.

Indian Leadership - There is hardly any country in the world having social, economic, cultural and lingual diversity as complex as in India (Chattopadhyaya, 1975; Spencer Stuart, 2010). For any organization of large or moderate size in this country, the background, mental abilities and working capabilities of employees are quite heterogeneous. Influencing such a diverse profile of employees, members, partners, stakeholders and customers using specific style of leadership is a real challenge. In addition to this aspect, rapid economic developments in India and other parts of the globe are introducing changes in the corporate environment much faster than expected. From government controlled and family owned companies, corporate India is fast moving towards privatization, globalization and innovation. Emergence of new business environments and customer segments, inflow of a large number of multinational companies, expansion, modernization and diversification of Indian companies, improvement in infrastructure and communication facilities in this country and acquisition and mergers have together generated an environment of dynamism, competition and corporate professionalism.

Corporate India still benefits from availability of labor in abundance, experienced and qualified manpower, low cost of raw materials and liberal policies of the Indian Government for conducting business. With the current focus of attention of the entire world towards specific countries including India, its leadership should commensurate with its economic growth and unique style of functioning. India has mainly witnessed the directive style of leadership (Bennis & Nanus, 1986) in the business circles. The leader is in charge of the team or the organization and issues orders and gives instructions to subordinates to carry out specific tasks. His main motive is to get the work done that helps him to derive certain benefits, improve his image or win against his competitors. This style makes the entire workforce dependant on the leader. The employees normally do not think much beyond the order of the boss nor do they get motivated to outperform. The leader is busy with the most redundant and routine activities and does not get time for creativity or out-of-box decision making.

This slows down the organizational response, strategic decision making and future developments in the organization (Chattopadhyay, 1975). Domination as a style of steering an organization is very common in India. Some of the other styles observed in the corporate circles are enlisted below:

1. Action-oriented leadership - The leader is active, assertive, determined, hard task master, performance-oriented, energetic, demanding and possesses persuasive and coaching skills. He keeps the team members active and on their toes.

2. Dynamic leadership - The leader is fast acting, self

confident, inspiring and has quick grasping power. He has the ability to acquire knowledge rapidly, to understand the environment, to adapt himself and lead the team accordingly.

3. **Transactional leadership -** The leader is clear about the objectives and goals of the organization. He decides what the employees are required to do for achieving these objectives. The main focus here is getting out the product / service in time. Such leaders have short or medium term goals and are bent upon achieving these within the deadlines.

4. **Transformational leadership -** In addition to achieving certain organizational goals, the leader helps to transform the character of the organization. The leader is committed, dedicated, humane and motivating and develops organizational values for his employees. He also believes in long term success of the business.

5. **Visionary leadership -** The leader is broad minded, inspirational, knowledgeable, conceptual, good communicator and listener, pragmatic, has presence of mind and is strategically sound. He leads by inspiration and can evoke emotional commitment for his employees.

6. **Innovative leadership -** The leader is imaginative, creative, future oriented, empathetic, strategic thinker, a good communicator and listener. He is ready to take suggestions from employees at all levels and encourages them to debate on corporate issues.

7. **Knowledge-based leadership -** The leader is conceptual, decisive, flexible and self confident. He believes in relationship/partnership for achieving the final goals. He empowers individuals, nurtures talents and uses cognitive and analytic skills.

8. **Empowering leadership -** The leader is creative, flexible, emotional oriented, relationship oriented and a team builder. He encourages employees to think, take decisions and act independently. He believes in well being and fulfillment of the employee. He creates space for growth of leadership and encourages employees to feel and act like leaders themselves.

9. **Participative leadership -** The leader is confident, magnanimous, compassionate, humble, supportive, open, flexible, delegative and people oriented. He is friendly, unprejudiced and a relationship builder.

10. **Executive style leadership -** The leader is disciplined, professional, strong minded, rule driven, assertive, decisive, organized and goal oriented. He is also a strategist, demanding, cautious, formal, focused, fact-oriented and result oriented. He uses his authority and gives instructions to employees. He normally uses power and fear to get the work done.

11. **Charismatic leadership -** The leader has unique personal style, has excellent communication skills, is motivating, jubilant, graceful/charming and inspirational. He is trusted blindly by his followers due to his unique influencing style.

12. **Sharing leadership -** The leader distributes power more evenly to his subordinates. He encourages employees to contribute to new ideas and develop necessary skills. He is hospitable, encourages team work and fosters better interaction between the team members.

13. **Hi-tech leadership -** The leader is intelligent, dynamic and extensively uses IT, high-tech devices and the Internet for improving the work efficiency of the organization. He expects others to acquire these skills and follow the same trends.

14. **Spiritual leadership -** The leader is ethical, morally principled, unprejudiced, simple minded, informal, a good orator, down to earth and cool minded. He uses spiritual values and ethical principles to lead the organization.

15. **Green leadership -** The leader is humane, environment friendly and adopts greener practice for the organization. He has the courage to challenge and change existing practices that lead to environmental damage or degradation.

The Leadership styles are either based on behavioral approach or situational approach of Leadership.

Based on the Behavioral Approach:

1. Power Orientation
2. Leadership as a continuum
3. Employee-production Orientation.
4. Likert's Management System
5. Managerial Grid.
6. Tri-Dimensional Grid.

Based on Situational Approach:

1. Fiedler's Contingency Model
2. Hursey and Blankard's Situational Model.
3. Path-goal Theory.

Daigram (see in last page)

Managing The Sea-Saw At Equivalence

Work-life balance, in its broadest sense, is defines as a satisfactory level of involvement or fit between the multiple roles in a person's life.

In totality, there are six elements of work-life balance: **Technology Management** can be said as Using the technology for human advancements. An approach for transitioning oneself or your team is called as **Change Management.** Directing oneself towards achievement of the desired objectives is known as **Self Management**

whereas improving the productivity is called as **Time Management. Stress Management** is maintaining the balance between the work-life balance, fighting the work and issues of personal life. When we work, we tent to see relaxation as an equally important issue therefore; **Leisure Management** can be understood as realizing the importance of rest and relaxation in one's life.

Role of Leadership on Staff Retention

1. The role of leadership and a superior is crucial in staff retention, and argues that at employees leave managers and not the Organizations.
2. Leaders who understood the business, communicated the goals of an organization, and showed empathy towards employees were leaders who promoted job satisfaction.
3. The quality of an relationship an employee has with his or her immediate manager elongates employee's stay in an organization.
4. Incompetent leadership results in poor employee performance, high stress, low job commitment and turnover.
5. Leadership styles, especially lack of involvement in decision making and inadequate communication were some of the issues that caused dissatisfaction.

Good Leadership Provides :

1. Better vision & insight
2. Offers a new learning each day
3. Respects privacy at the workplace
4. Follows participatory decision making process.
5. Inculcates discipline
6. Inspires, trusts, empower employees.
7. Communicates the ground realities.
8. Works towards providing others with job satisfaction

Conclusion - This paper explored leadership qualities and styles that are emerging in India due to the rapidly changing corporate scenario in this region and around the world. The fast economic growth is demanding corporate leadership styles specific to this country that has diversity beyond imagination. However, we understood that a set of general qualities are required for any corporate leader and specific styles are effective as per the nature of business, market conditions and employee profile of the team or the organization. There are different ways in which we feel this research can be improved further. We are well aware of the limitations of the sample size for both types of respondents. Interviews with a larger group of corporate leaders would help to widen our understanding and obtain suggestions on specific issues with which they are directly involved. We are also interested in seeking opinion from corporate leaders outside India regarding how universal leadership styles may be borrowed to improve India's position in the Asian and world economy. Deeper quantitative analysis is also requiredas this work focused mainly on qualitative analysis by discussing different issues related to leadership qualities and styles with leaders and employees. After this study, we are interested in further carrying out quantitative analysis to answer specific questions on Indian leadership styles. Exploring leadership aspects in e businesses, virtual organizations and geographically distributed companies are also areas of our interest. We also feel there is a need to focus on leadership aspects related to specific industries, size of business, cultures, stages of corporate development and demographic profile of employees. We reserve some of these themes for our future work in this area.The apparent differences between the leadership requirements of traditional and R&D environments suggest that traditional measures of leadership may not be applicable to R&D work environments. In this study, we extend the behavioral leadership theories to R&D context and develop a leader behavior scale that can be used to gauge the effectiveness of R&D managers and leaders. The leader behaviours that are found to be important are task-oriented, recognising and inspiring, empowering, team-building and developing, and leading by example. The identified behaviours can be useful to practitioners who often wrestle with the task of identifying appropriate behaviours that can ensure leader effectiveness in R&D departments. Studies that evaluate comprehensive view of these behaviours and where subordinates are provided an opportunity to rate many leader behaviours will yield information on the behaviours that are most desirable to employees, and therefore most likely to encourage creative behavior in R&D contexts. This is the first study of its type and promises to provide significant insights into the management of R&D professionals.

References :-

1. Chaminade B (2007). A retention checklist: how do you rate? www.humanresourcesmagazine.co.au. Accessed, 28 November, 2007.
2. Hays S (1999). Generation X & Y and the art of the reward. Workforce. 78(11): 44-48.
3. Edwards, J. R., & Rothbard, N. P. (2000). Mechanisms linking work and family: Clarifying the relationship between work and family constructs. Academy of Management Review, 25, 178–199.
4. Fisher, A. (2001). Is your business taking over your life? Fortune Small Business, 11(9), 32–40.
5. Friedman, S. D., & Greenhaus, J. H. (2000). Work and family—allies or enemies? What happens when business professionals confront life choices. New York: Oxford University Press.
6. Greenhaus, J. H., Parasuraman, S., & Collins, K. M. (2001). Career involvement and family involvement as moderators of relationships between work–family conflict and withdrawal from a profession. Journal of Occupational Health Psychology, 6, 91–100.
7. Gwavuya, F. (2011). Leadership Influences on Turnover Intentions of Academic Staff in Institutions in Zimbabwe. Academic Leadership Journal, 9 (1), 1-15.

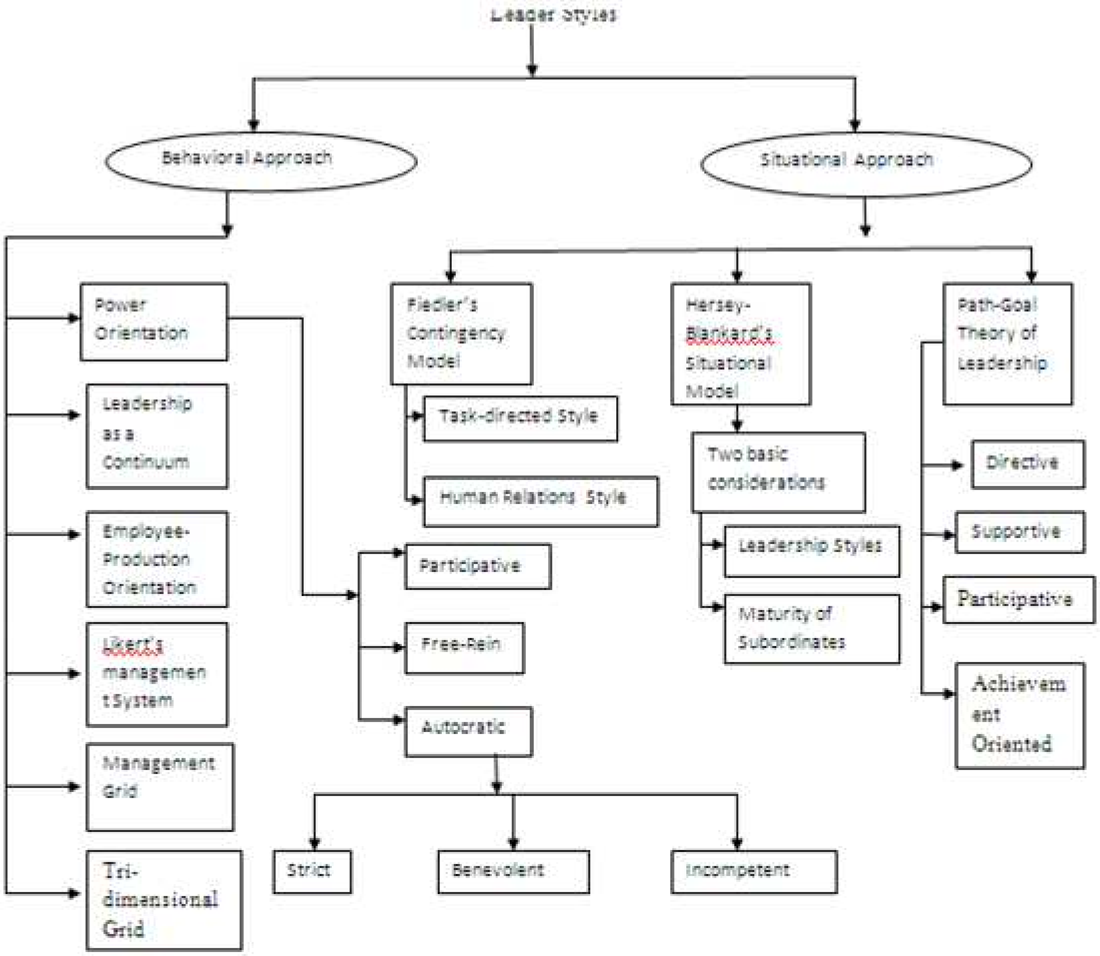

Leadership Styles And The Leadership Focus:

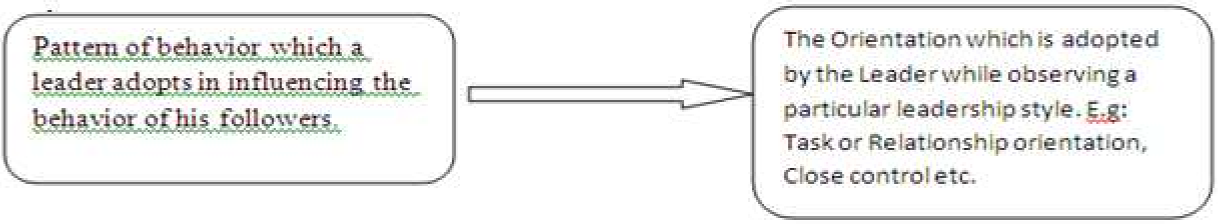

Traits That Identify Leadership Focus

Trait: "A characteristic feature or a quality distinguishing a particular person or thing".

Effective Leadership-Employee Retention-Work Life Balance: A Cyclical Continuum

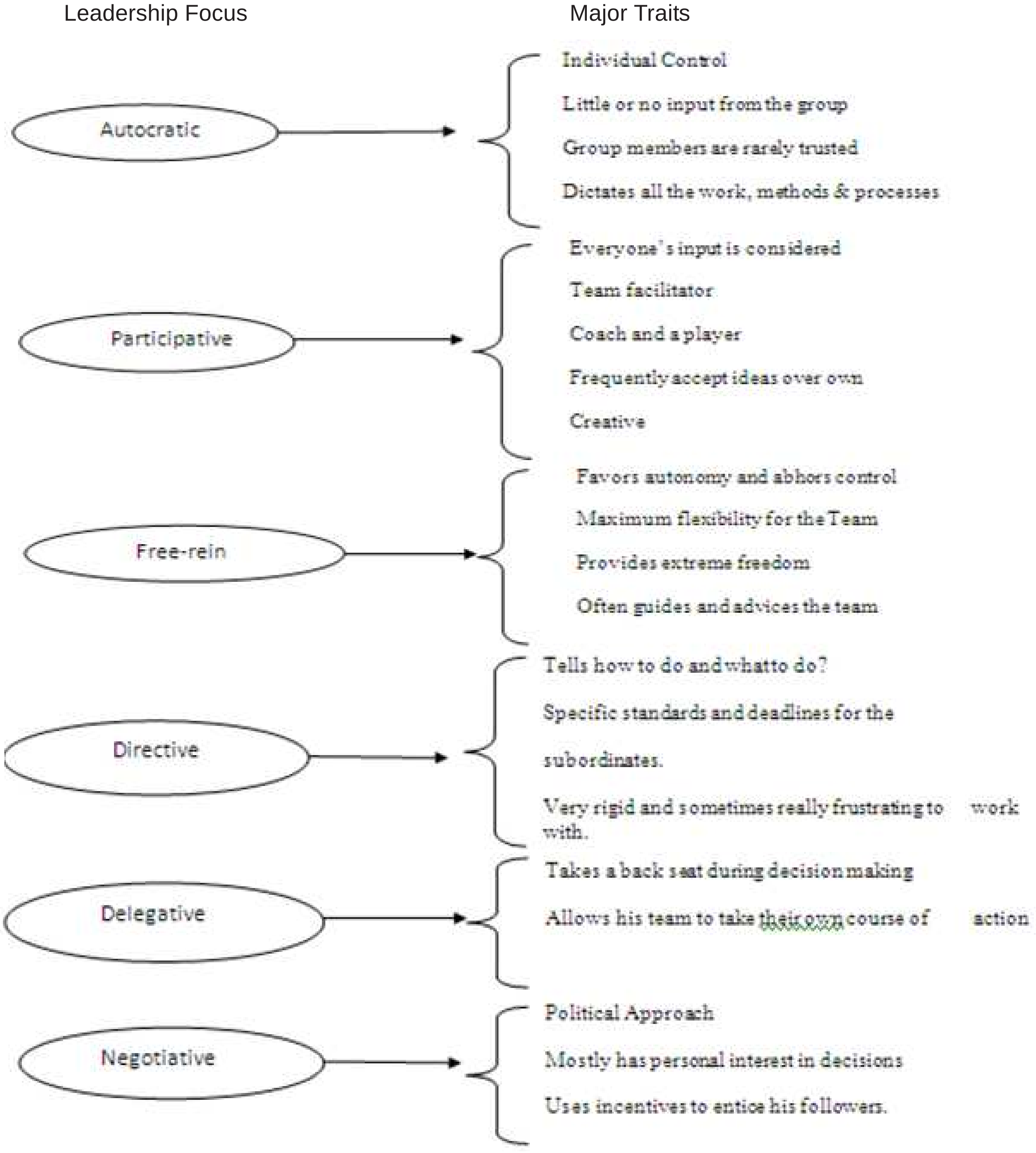

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) Oct. to Dec. 2017, E-Journal,Vol. IV, Issue XX

A Study on Quality of Worklife Among Women Employees in Private Sector Banks

Kuldeep Agnihotri*

Abstract - Banking is where the teaching of ladies workers in on-going period is high. Taking everything into account, ladies are being given Centre duty and this is the business like training where the work and vocation openings are high. Ladies in nature have the type of talking and serving to individuals with care and compassion. The quality work life incorporates the workplace, condition, disposition, relationship, competency, uphold from family and society. At the point when ladies feel great pretty much every one of these characteristics, their compelling quality work life will affect their own, word related, social and family viewpoints. Every one of these effects convincingly lead to expand work fulfilment and viable job execution in the given work and which thus help the banks to show consistency execution as far as activity, development, benefit and client maintenance. In this angle, , the analyst has outlined the exploration paper in the title of value work life of ladies representatives working in private area saves money with extraordinary reference to Madhya Pradesh.
Keywords - life balance and work fulfilment. Work life balance, Personal Environment, climate, seen work.

Review of Literature - According to Priyanka Das &Alok Kumar Srivastav (2015), "A Study on Stress among Employees of Public Sector Banks in Asansol" clarified about Organization must start to oversee individuals at work in an unexpected way, improve actual workplace, approach them with deference and worth their commitment. In the event that we upgrade the mental prosperity and wellbeing of the representatives, the authoritative income will increment and there will be worker maintenance also.

According to Biswakarma (2016),"Organizational Career Growth and Employees' Turnover Intentions: An exact proof from Nepalese Private Commercial Banks" inspected the connection of turnover goal with vocation development in an example of 290 representatives in private business banks of Nepal. The examinations asserted that advancement speed and compensation development have more noteworthy impact in turnover expectations of representatives.

According to Dr. M. SelvakumarMarimuth& D. Manjula (2014), "Examination Of Quality Of Work Life Of Employees In Private Sector Commercial Banks – Application Of Discriminate Analysis" in their investigation applied the segregate examination to discover which factor totally predicts work fulfilments of representatives. For that reason the factor investigation was applied and the factor scores were treated as autonomous variable in separate examination. The examination depends on both essential and optional information. The essential information have been gathered from the representatives of private area business banks in Virudhunagar District with the assistance of survey.

Statement Of The Problem - At present ladies are similarly gifted and having more abilities like men, the profession open doors for ladies representatives are expanding step by step. All the while the Demands and difficulties are additionally expanding in their work places. Greater part of the workingwomen is extending them to release their functions in their office and in home and this will prompt the work life adjusts of ladies representatives. So its tends us to choose the subject of work life equilibrium of ladies representatives, yet in this examination especially we have picked the financial area, where the number ladies representatives favour their positions in financial area for the explanation of employer stability, comfort, significant compensation and for pride.

Objective of the Study :

1. To investigate the authoritative Environment and its effect on Quality of work life of ladies representatives in financial area
2. To recognize the worker fulfilment towards Quality of work life.

Sample Design - The scientist has received Stratified helpful examining device to choose 4 private banks among 100 branches in Madhya Pradesh. Further it characterized the 4 layers, for example, East, West, North, and South. Basic irregular strategy is embraced the select 50 respondents from 4 Private bank. The pilot study was under taken prior to beginning the primary investigation to evade premise in the last examination. For the possibilities of present investigation, an example 65 was haphazardly chosen.

*Assistant Professor (Commerce) Maa Narmada Mahavidhyalay, Dhamnod, Dhar (M.P.) INDIA

Data Collection Method

Primary data - The essential information for the presents study is gathers through survey technique. An all-around organized and shut finished survey utilized.

Secondary data - Optional information identifying with this investigation nature of work life specifically bank were gotten from significant examinations from paper; Indian distributed records, books, magazines, diaries and web sources.

Statistical Analysis - The scientist completed of the discriminant examination measurable instruments,

Limitations of the study - Coming up next are the constraint recognized by the scientist while gathering information:

1. The study is restricted to the labourers of private bank in Madhya Pradesh, and in this way the discoveries of the investigation can't be surpassed to other banks.
2. The time accessible for the investigation was restricted which additionally gives to be a rear race in discoveries the precision of the employee's information.

Data Analysis And Interpretation - Breaking Down The Influence Of Demographic Profiles On Time Spent With Family Daily – Prediction Using Discriminant Analysis

Table 1 : Impact of Age, Experience, Monthly Income, and Traveling time to work environment on Time Spent with the Family

H1: Age, Experience, Monthly Income, and Traveling time to workplace influences the Time went through with family day by day

Wilks' Lambda

Test of Function(s)	Wilks' Lambda	Chi-square	Degree of freedom	Sig.
1 through 3	.5369	5.7297	11	.000
2 through 3	.7824	2.6693	5	.000
3 through 3	.7758	.5682	2	.000

1. Least wilkslamda esteem (0.5369) shows up in capacity 1, henceforth it is picked for
2. Investigation
3. Lower the wilkslamda, better the intensity of the model
4. Wilkslamda ranges between 0 to 1

Which variable impacts more?

Standardized Canonical Discriminant Function Coefficients

	Function		
	1	2	3
Age	-0.6469	0.6427	0.1367
Monthly Income	1.6109	0.7908	-0.1025
Experience	0.3367	-0.1665	0.0504
Travelling time to workplace	0.8708	.0438	0.9848

- Values -0.6469, 1.6109, 0.3367 and 0.8708 under capacity 1 of normalized coefficients table designates, "Month to month Income" impacts more than Age, Experience, and heading out an ideal opportunity to working environment which uphold the theory.

Discriminant Model / Equation

Canonical Discriminant Function Coefficients

	Function		
	1	2	3
Age	-0.0848	0.0868	0.0189
Monthly Income	0.0000	0.0000	0.0000
Experience	0.2307	-0.1209	0.0366
Travelling time to workplace	0.1506	0.0349	0.8787
(Constant) Unstandardized coefficients	2.0908	-5.3187	-2.6748

- Discriminant condition utilizing the qualities in Function 1 of the above table:

Time went through with family0.2965

- = 2.0908 - 0.0848 (Age) + 0.000 (Monthly Income) +0.2307 (Experience) + 0.1506 (Travelling time to working environment)

PREDICTING THROUGH THE MODEL

Functions at Group Centroids

Time spent with the family	Function		
	1	2	3
Less than 6 hours	1.043	-.033	.021
8 hours – 10 hours	-.057	-.061	-.056
10 hours – 12 hours	.071	.119	-.029
More than 12 hours	-.291	.055	.030

Unstandardized canonical discriminant functions evaluated at group means 2.0908

- Time went through with the family = 2.0908 - 0.0848 (Age) + 0.000 (Monthly Income) + 0.2307 (Experience) + 0.1506 (Travelling time to working environment)
- If a respondent Age = 41, Monthly Income = 41,000, Experience = 13 years, Traveling time to work environment = over 1.5 hours
- Time went through with the family = 2.0908 - 0.0848(41) + 0.000 (41,000) + 0.2307 (13) +0.1506 (1.5)
- 1.765 is near 1.043 of Time gone through with the family

Hence respondents age, month to month pay, insight and heading out an ideal opportunity to working environment is in above detail signifies "The time spent with the family is less than 6 hours only"

Accuracy Of The Model (see in next page)

- Footnote under the grouping results table shows, the outcomes acquired through the model has 76% exactness.

Conclusion: The function of ladies in current business situation is unavoidable. The inactive arrangement of capacities and information on women staffs can convey better outcomes and advantages to the association they have a place. In this angle, the job and the participating in ladies work in private area banks are basic in the present financial industry. The financial business convey the logo of administration and which is to be given better client contact and that is conceivable simply by the serving backing of ladies workers at all levels in banks. It is inferred that the increasing position function of ladies in financial industry need better workplace and backing for them to make them ever gainful representatives and which thus help the banks to contend successfully on the lookout for both authoritative and client benefits. For bring this the quality work life among the ladies representatives in private

area banks should be renewed in years to come.

References :-

1. Inthiyaz, K. (2017). A Study on Quality of Worklife of Employees in Andhra PragathiGrameena Bank with Special Referennce to YSR District. Worldwide Journal of Engineering and Management Research (IJEMR), 7(2).
2. Dr v. Seetha and s. Aruna (2020) "a study on quality of worklife among women employees" ,wutanhuatanji suanjishu; volume xvi, issue x, oct,2020.
3. Sadique, Z (2003), "Nature of Work Life among White Collar and Blue Collar Employees", Journal of the Institute of Bangladesh Studies, Vol. 26. Pp.
4. Sirgy, M. J., Efraty. D., Siegel, P and Lee, D. (2001). "Another Measure of Quality of Work Life dependent on Need Satisfaction and Spillover Theories", Social Indicators Research, Vol.55.

Accuracy Of The Model
Classification Results

		Time spent with the family	Predicted Group Membership				Total
			Less than 6 hours	Less than 6 hours	Less than 6 hours	Less than 6 hours	
Original	Count	Less than 6 hours	55	64	111	85	107
		8 hours – 10 hours	27	28	27	37	93
		10 hours – 12 hours	21	23	32	26	82
		More than 12 hours	23	25	21	36	65
	%	Less than 6 hours	17.69	20.91	35.81	27.62	100.0
		8 hours – 10 hours	21.68	23.74	27.34	33.61	100.0
		10 hours – 12 hours	19.88	21.33	39.73	22.14	100.0
		More than 12 hours	20.41	18.62	29.11	34.21	100.0

a. 75.7% of original grouped cases correctly classified.

****